

हिन्दी विष्वकोष

बंगला विष्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वार्तिधि, शब्दरत्नाकर, तत्त्वचिन्तामणि, पद्म, चार, व, एष

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित ।

एकादश भाग

[द्वादशमासकर्मन्-निर्द्दाबोल]

THE

ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. XI.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, *Prāchyavidyāmahārṇava*,

Siddhānta-vārtidhi, *Śabda-ratnākara*, *Tattva-chintāmaṇi*, M. R. A. S.

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of *Banglā Sāhitya Parīṣad*

and *Kāyastha Patrikā*; author of *Castes & Sects of Bengal*, *Mayura*

bhaṅja *Archæological Survey Reports* and *Modern Buddhism*;

Hony. *Archæological Secretary*, *Indian Research Society*,

Member of the *Philological Committee*, *Asiatic*

Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by P. C. Bose, at the *Visvakosha Press*

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9, *Visvakosha Lane*, *Baghbazar*, *Calcutta*

1926.



हिन्दी

विष्वकोष

(एकादश भाग)

द्वादशमासकर्मन् (स० लो०) द्वादशमास मासेषु कर्त्तव्यं कर्म । विष्णुसंहितोक्तं वारह महीनेको तिथिके भेदमे दानहोमादि कर्मभेदः । कल्पतत्त्वमे द्वादशमास कर्मो- के समस्त विषय सविस्तरं वर्णितं है ।

द्वादशमासिक (स० लो०) मासिभवं ठञ् मासिकः । नृत्तदिनावधि द्वादशसंख्याके पूरण मासमे कर्त्तव्यं प्रेतो- हेशक आहर्भेदः यद्वाह जो किसीके मरनेके वारहवें महीनेमें किया जाता है । नृत्तके बादवे प्रतिमास प्रेतो- हेशक जो आह किया जाता है उसको मासिक आह और वारहवें महीनेमें दान तरफका जो आह किया जाता है उसे द्वादशमासिक आह कहते हैं ।

द्वादशयात्रा (स० लो०) द्वादशमास मासेषु द्वादशविधा यात्रा । स्कन्दपुराणोक्तं देवोत्सवमे मासविशेषे यात्रा- भेदः । इसका विषय स्कन्दपुराणमें इस प्रकार लिखा है— एक दिन इन्द्रपुत्रने जैमिनिसे कहा, 'हे सुने ! वैशा- खादि वारही महीनेमें द्वादशविध यात्रा और पूजादिको जो विधि है, यह आप कृपाया सुझसे कहिये, क्योंकि यह विषय जाननेको सुनि विशेष उत्कृष्ट है ।'

इन्द्रपुत्रके इस प्रश्न पर जैमिनिने इस प्रकार उत्तर दिया था, 'हे इन्द्रपुत्र ! देवदेव चक्रपाणि कृष्णं द्वादश मासमे जो द्वादश यात्राका विधान है, उसे आप ध्यान दे कर सुनिये । वैशाखमासमें श्रीकृष्णको चन्दनो यात्रा, व्यंछमासमें स्नापनी, आपाढ़में रथ, आषाढमें

शयनयात्रा, भाद्रमे दक्षिणपार्श्वपरिवर्त्तन, आश्विनमें वामपार्श्वपरिवर्त्तन, कार्तिकमें उत्थान, अषाढाश्वमे छादनो, पौषमें पुष्याभिषेक, माघमें श्राव्योदनो, फाल्गुनमें दोलयात्रा और चैत्रमें मदनभस्त्रिका ये छे वारह प्रकारकी यात्राएँ हैं । इसका एक एक यात्रोत्सव करने- से धर्म, धन्य, काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं ।

द्वादशराजमण्डल (स० लो०) द्वादशानां राज्ञां मण्डलं, उत्तरपदद्विगुः । द्वादशविध राजाओंके मण्डल । इसका विषय भग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा है—राजा अपने कल्याणके लिये वारह प्रकारके राजमण्डलके विषय पर विचार कर सकते हैं । अरि, मित्र, अरिमित्र, मित्र-मित्र, अरिमित्रमित्र, विजिगौषपुर, पार्ष्णिपाद, आश्वत्थ, आसार, अनल, विजिगौषमण्डल और अरि तथा विजि-गौषका भूम्यन्तर मध्यम मण्डल ये वारह राजमण्डल हैं ।

(भग्निपुराण १७७ अ०)

द्वादशरात्र (स० पु०) द्वादशभिः रात्रिभिर्निर्दिष्टाः तर्हि-तार्थद्विगुः अथ समासान्तः । १ द्वादशदिनमात्र द्वादशरात्र नामक महीन यागभेद । वारह दिनोंमें होनेवाला यज्ञ । २ रात्रिसप्तमेद, यह यज्ञ प्रजा और सृष्टिकी कामना-के लिये किया जाता है । द्वादशानो रात्रोषां समाहारः समाहारद्विगुः अथ समासान्तः । ३ समाहृता रात्रि-भेद ।

(मं० पु०) दादगाना लोचनानि यस्य । काशि-

मं० लो०) दादगाना वर्गानां समाहारः
लोचोप । लोचकण्ठलाजिकोत्पत्त्यर्थकानामे-
वाक्यनिकालनके नियमे वर्गों की समष्टि । इस-
ताजकमें इस प्रकार लिखा है—

धोरा, द्वेकाय, चतुर्थांग, पञ्चमांग, षष्ठांग,
सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश और द्वादशांग
दादगवर्ग कहते हैं । इन बारह वर्गोंमें
प्रथम षष्ठमांगमें प्रथमफल होता है । विषम
म होराके अधिपति रवि और द्वितीय होराके
शुक्र हैं । समरागिक प्रथम होराके अधिपति
द्वितीय होराके अधिपति रवि हैं । चैत्राधिपति
यही प्रथम द्वेकायके अधिपति है और उसे
प्रथमरागिक अधिपति यह द्वितीय द्वेकायके
या लक्ष्मणरागिक अधिपति यह तृतीय द्वेकायके
है ।

रागिक अधिपति यह प्रथम चतुर्थांगके अधि-
पति समरागिक चतुर्थरागिक अधिपति द्वितीय
म, समरागिक अधिपति तृतीय चतुर्थांगके
रागिक अधिपति चतुर्थ चतुर्थांगके अधिपति
विषमरागिक प्रथम पञ्चमांगके अधि-
पति, द्वितीय पञ्चमांगके अधिपति शनि, तृतीय
अधिपति बृहस्पति, चतुर्थ पञ्चमांगके अधिपति
प्रथम पञ्चमांगके अधिपति शुक्र है । समरागि-
क पञ्चमांगके अधिपति शुक्र, द्वितीय पञ्चमांगके
अधिपति, तृतीय पञ्चमांगके अधिपति मङ्गल है । जिस
द्वादशांग अधिपति का निर्णय करना हो, उस रागि-
क प्रथम द्वादशांगके अधिपति, उसकी द्वितीय-
अधिपति की द्वितीय द्वादशांगके अधिपति और उस
तृतीयरागिक अधिपति की तृतीय द्वादशांगके
अधिपति रूपमें चतुर्थांग द्वादशांगके अधिपति
होते हैं ।

जो रागिक पद्धति चंग बना कर उसे चंग
होना और पीछे मुकाबकी १० गुणा करना
काद गुणफलमें १०० भाग दे कर जो भाग-

फल निकले उसमें १ जोड़ना चाहिये । यह योगफल और
मेष पक्षधिकी गणना करके जो रागि पाई जायगी उस
रागिक अधिपति पद्धति पद्धति के अधिपति समझना
चाहिये । यदि १०० भाग देनेसे न्यूनता यह १२०
अधिक हो, तो उसे फिर १२० भाग दे कर शेष यह
ब्रह्मण करके काम करना चाहिये । इसी तरह यदि
अष्टम चंगदि के अधिपति का निर्णय करना हो तो स्फुट-
ता रागिक पद्धति चंग बना कर उसे चंगमें जोड़ना
और पीछे ३० गुणा करना चाहिये । षष्ठमांगअधिपति
निर्णय करनेमें उसे, दशमांगअधिपति १०० भाग और एका-
दशांगअधिपति १०० गुणा करना पड़ता है । और दूसरे
सभी कार्य पूर्व यत् अर्थात् पञ्चमांगअधिपति को नाई करके
होते हैं ।

यहाँ के वसमाधनके नियमे इस तरह दादगवर्ग का
निर्णय करना पड़ता है—जिस पक्षका दादगवर्ग गिर
करना हो, वह पक्ष यदि पक्षमें चैत्रादिमें या शीतवर्गमें
पक्षया मित्रवर्गमें पक्षया शुभवर्गमें हो, तो वह पक्ष अच्छा
अर्थात् शुभफलप्रद है । फिर, जो पक्ष शीत चैत्रादिमें या शुभ
वर्गमें हो वह पक्ष शुभफल देता है । दादगवर्ग निर्णय
करके दो श्रेणीका निर्णय करना चाहिये और शीत
विचार कर यह देख लेना चाहिये कि यदि दादगवर्गों-
में शुभपक्षके वर्ग अधिक हों, तो दशफल और भाग-
फल शुभ होगा । यदि प्रथमपक्षके वर्ग अधिक हों, तो
दशफल और भागफल प्रथम समझा जाता है ।

किन्तु यावत्तक यदि अधिक शुभपक्षके हो, तो वह
शुभफल और यदि शुभपक्ष अधिक शुभवर्गमें हो, तो वह
पक्ष शुभफल देता है । शुभपक्ष भी यदि अधिक प्रथम
पक्षके वर्गमें हो, तो प्रथम ही फल होता है और प्रथम-
पक्ष यदि अधिक प्रथम वर्गमें हो, तो वह पक्ष शुभ
फलप्रद माना गया है ।

काम और पन्थाय भाव यदि शुभपक्षके अधिक वर्ग-
गुण हो, तो शुभफल और यदि प्रथमपक्षके अधिक वर्ग-
गुण हो, तो लम्ब तथा पन्थाय भावोंके प्रथमफल होते
हैं । इसी तरह काम और पन्थाय भावोंके अधिपति यदि
शीत चैत्रादिवर्गमें रह जाय तो मित्रचैत्रादिवर्गमें पक्षया
शुभपक्षके अधिक वर्गमें हो, तो शुभफल एवं शुभ-

क्षेत्रादिमें अशुभग्रहकी अधिक वर्गस्थ हो, तो अशुभफल होता है। इसी तरह द्वादशवर्गकी गणना करके शुभाशुभफल स्थिर करना पड़ता है। (नीलकण्ठोक्त तांत्रिक) द्वादशवार्पिक (सं० वि०) द्वादशवर्षानु अर्धोष्टः श्रुतो भूतो वा उत्तरपदवृद्धिः। १ द्वादशवर्ष तक अर्धोष्ट, जो बारह वर्ष तक किसी सत्कार्यमें लगाया गया हो। २ द्वादश वर्ष पर्यन्त श्रुत, जिसने बारह तक नौकरी की हो। ३ भूतकर्म कर, जिसने पहले काम किया हो। (पु०) ४ ब्रह्महत्यानाशक व्रतमेव, बारहवर्षका एक व्रत जो ब्रह्महत्या लगने पर किया जाता है। इसमें छठारको वनमें कुटी बना कर सब वासनाओंको त्याग करके रहना पड़ता है। संवत्तमें लिखा है, कि ब्रह्महत्याकारी महापातकी होता है। उसे बख्कल पहन कर मस्तक पर जटा धारणपूर्वक कोई विशेष-चिह्न ले कर वन जाना पड़ता है। इस तरह वनमें रहते समय सब वासनाओंको त्याग करना पड़ता है, केवल वन्यफलमूल खा कर जीवन धारण करना पड़ता है। यदि वन्यफलोंसे निर्वाह न हो, तो कोई विशेष चिह्न धारण कर बस्तीमें केवल चार वर्षोंके घरमें भिचा मांगने पड़तो है। भिचाव्रय भक्षण करके वनमें पुनः लौट आना पड़ता है और मैने ब्रह्महत्या की है, इस तरह सबके सामने अपना दोष स्वीकार करना पड़ता है और सर्वदा निरालस्य भावसे व्यतीत करना तथा सब इन्द्रियोंको निग्रह कर बारह वर्ष तक इसी तरह व्रतानुष्ठान करना पड़ता है, इसीका नाम द्वादशवार्पिक व्रत है। इस व्रतमें ब्रह्महत्याजनित पाप नाश हो जाते हैं। किन्तु जो अशक्त हैं, उन्हें बारह वर्ष तक गाय दान करने पड़ती है।

द्वादशशुद्धि (सं० स्त्री०) द्वादशगुणिता शुद्धिः। तन्त्र-सारीक्त वैष्णवोंकी काविकादि द्वादश शुद्धिमेव, वैष्णव सम्प्रदायमें तन्त्रोक्त बारह प्रकारकी शुद्धि। विष्णुभक्ति-परायण व्यक्तियोंके द्वादशशुद्धिका विषय तन्त्रसारमें इस प्रकार लिखा है—देवगृह परिष्कार, देवगृह गमन, भक्तिपूर्वक प्रदक्षिण ये तीन प्रकारकी पद शुद्धि हैं। पूजाके लिये फूल पत्ते तोड़ना, भक्तिपूर्वक प्रतिमाउत्तोलन (स्पर्शआदि) यह दशशुद्धि हुई जो सभीमें श्रेष्ठ है। भक्तिपूर्वक भगवान्का नाम और गुणानुकीर्तन वाक्-

शुद्धि है। हरिकथायवण और उसके उत्सवादि दर्शन-की श्रेष्ठ और नेत्रशुद्धि कहते हैं। विष्णुपादोदक और निर्माल्य धारण तथा देवताके सामने प्रणाम शिर-शुद्धि है। निर्माल्य गन्धपुष्पादि आवाण धारणशुद्धि है। जो सब पद पुष्पादि श्लोक्षणके दोनों चरणोंमें बढ़ाये जाते हैं, वे सभीकी शुद्धि-प्रदान करते हैं। ललाटमें गदा और मस्तकमें चाप, शर और मन्दक, हृदयमें शङ्ख, चक्र और दोनों भीमें मो वक्त्र-चिह्न धारण करनेसे सब प्रकारकी शुद्धि होती है। इस पूर्वोक्त द्वादशशुद्धिसम्पन्न शङ्खचक्रान्वित विप्रको यदि ज्ञानानन्दमें स्थित हो, तो, प्रयागतीर्थमें गन्धु होनेसे जो गति लिखी है, वही गति इसमें होती है। इसलिए वैष्णवोंकी द्वादशशुद्धि विशेष यत्नसे सम्पादन करनी चाहिये।

द्वादशमोक्षित (सं० स्त्री०) द्वादश व्ययस्थानं ग्रहराहित्येन मोक्षितं। व्ययस्थानमें ग्रहराहित्य द्वारा शुद्धियुक्त, लग्नस्थानसे बारहवें स्थानमें यदि कोई ग्रहादि न हो तो, उसे द्वादशमोक्षित कहते हैं।

द्वादशसंग्राम (सं० पु०) द्वादशविध संग्रामः। देवतार्था-के साथ असुरोंके बारह प्रकारके युद्ध। अग्निपुराणमें लिखा है कि देवता असुरोंसे बारह बार लड़े थे। पहला नारसिंह, दूसरा वामन, तीसरा वराह, चौथा अमृतमयन, पांचवां तारकामय, छठा भानुवक्त्र, सातवां त्रैपुर, आठवां अम्बकवध, नवां ह्रस्ववध, दशवां जित, ग्यारहवां हलाहल और बारहवां कोलाहल।

द्वादशसप्तमोव्रत (सं० स्त्री०) भविष्यपुराणोक्त माघादि विष द्वादशमासमें सप्तमीके दिन कर्षेय्य चर्यका व्रत-विशेष, सूर्यका वह व्रत जो माघसे ले कर पूष तकके बारह महीनेकी सप्तमी तिथिमें किया जाता है। उमाद्वि व्रतखण्डमें इस व्रतका विषय इस प्रकार लिखा है—द्वादश सप्तमो व्रत माघमहीनेकी शुक्ला सप्तमीके दिन पहिले पहले पारश्व किया जाता है। जिस वर्ष कालशुद्धि रहती है उस वर्ष माघ मासकी शुक्लपक्षीके दिन संयत हो कर सप्तमीके दिन यह व्रत करना पड़ता है। सुवेरे सङ्कल्प आदि करके पीछे पूजा करते हैं। माघ मासमें वरुण नामक सूर्यकी पूजा की जाती है। अष्टमीके दिन भिन्न भिन्न प्रकारके उपकरणोंसे ब्राह्मणको भोजन

करते हैं। इसमें समग्र चन्द्रिणीय यज्ञका फल होता।
 फागुन मासमें तपन नामक सूर्यकी पूजा की जाती है,
 इसमें वाजपेययज्ञका फल होता है। चैत्र मासमें बेटाद्य
 नामक सूर्यकी, यथाचमासमें पाताकी, ज्येष्ठमासमें
 इन्द्रकी, भाद्रमासमें दिवाकरकी, आश्विनमासमें
 पर्यमाकी, भाद्रमासमें रविकी, पार्विनमासमें सविताकी,
 कार्तिकमासमें समानकी, प्रपदायनमासमें भातुकी
 और पोषमासमें भास्कर नामक सूर्यकी पूजा की जाती
 है। इस विधानसे जो दादमासतमोक्त करते हैं, उन्हें
 चतुर्वेदाध्ययनका और सूर्ययोगका फल मिलता है।
 अन्यथा विधान पूर्वकृत है। प्रचल १२ महीनेमें दादमा-
 दित्यके नाम से कर पूजा करनी पड़ती है।

दादमाहस्र (मं० वि०) दादम साहस्रानि परिमाण-
 मस्य पच, उत्तरपदवृद्धिः। दादमसहस्रमव्यायुक्त,
 जिसमें १२ हजारकी संख्या हो।

दादमाद्य (सं० पु०) दादम पंचमी यस्य। उद्वहति।
 दादमाद्य (सं० पु०) दादश पंचोपि यस्य, ततो पच,
 ममावाता। १ कार्तिकेय, दादम मनोवृद्धिर्दत्त
 शान्तिश्चिदापोनि पचिषीव यस्य। २ कुह। ३ कुमारानु
 धर मातृभेद।

दादमाधर (सं० पु०) दादम पचरात्रि यस्य। दादमा-
 धरयुक्त मन्त्रभेद, विष्णुका एक मन्त्र जिसमें बारह
 पञ्चर है, जैसे—‘धो नमो भगवते वासुदेवाय’। धो कौं
 गोपीजनवत्प्रभाव प्राप्ता। ओक्तयत् दादमाधर मन्त्र।
 त्रिषा गोपद्विवात् कोप। ३ मन्त्रविषयक दादमा-
 धरयुक्त मन्त्र मन्त्र। (को०) ४ दादमाधरवादक
 जततो हन्तः। इसमें प्रतिपदमें बारह पञ्चर होते हैं।

दादमाद्य (सं० पु०) दादम प्रागर्कमेंन्द्रियमनोवृद्धि
 रूपाः पञ्चासीः पूजनीयत्वेन पार्यायति पा-प्या-क। कुह।
 दादमाद्य (सं० वि०) १ दादम पञ्चविंशति, जिसमें
 बारह पंचमा पचपच है। २ जैनेका वध यन्त्रमसृज
 क्रिये से मन्त्रधरो वा इत्यादि मानते हैं। इसमें बारह
 भेद हैं—पादराह, सुवहमाह, व्याग्राह, समपायाह,
 मगवतीयुक्त, प्रागधर्मकथा, दशमहदमाह, पच-
 कदाह, अनुसारीगणिकाह, मन्त्रभास्कर, विपक्ष
 सून और दृष्टिदाह—नेत्र और दृष्टिदाह हैं। ३ धृ-
 वियेय, एक प्रकारकी धृव जो निम्नलिखित बारह मन्त्र
 द्रष्टव्यकी योगसे बनार जातो है—गुग्गुल, चन्दन, पद्म,
 कुङ्कुम, चण्ड, कुङ्कुम (केसर), आनीकोप, खपूर, जटामांसी,
 वायक, त्वक् और वयो। धृ देवो।

दादमाहो (सं० को०) दादमाहो पञ्चानां समाहारः
 कोप। दादमाह देवो।

दादमाहस्र (सं० पु०) दादम पञ्चलपः प्रमाचमस्य
 वर्धितार्थं द्विगु, पच समावाता। वितति परिमाण-
 भेद, एक वितति, १२ पंचमी।

दादमाहस्र (सं० पु०) दादम पाकनो मूर्तयो यस्य।
 १ सूर्यसिद्धान्तमें सूर्यकी बारह मूर्तिका उल्लेख है।
 २ पञ्चसप्त, पाकका पैड़। आदित्य और सूर्य देवो।

दादमादित्य (सं० पु०) १ धाता प्रभृति दादम सूर्ये। २
 कामोस दादम सूर्यभेद। इसका विषय कामोपलब्धिमें
 इस प्रकार लिखा है—कामोर्ध्व प्रभावप्र और समस्त
 निमिरनामक सूर्य पण्येकी बारह रूपमें विभक्त कर
 कामोर्ध्व और पण्ये की। लोकार्क, उत्तरार्क, मागदादित्य,
 द्वुदादित्य, मध्यदादित्य, पञ्चोत्तरादित्य, उत्तरादित्य,
 केयवादित्य, विमलादित्य और गम्यादित्य ये हो बारह
 सूर्यके नाम हैं। ये हो दादमादित्य कामोर्ध्व १४ कर
 पाणिपिंडे प्रायमे मर्चदा कामोर्ध्वकी रक्षा करते हैं।

(काशीय ४८ नं०)
 दादमाध्यापो (सं० को०) दादमाहो पञ्चावातां समाहारः
 कोप। १ जैमिनिने गृहपद दादमस्यको। इसमें
 तन्त्रोक्त पचपचमसृज हाग धर्म हो एक मात्र व्यापाद-
 माय है। धर्म प्रतिपादन कानेके क्रिये मन्त्र लपच
 रिनिरेगित रूप है। २ मनुवर्धिता, मनुके बारह
 पञ्चाय है, इसीमें इसको दादमाध्यापो कहते हैं।

दादमानिक (सं० वि०) दादम पचये पचपाभूता पचपादा
 जाता पच इति ठप्। आतदाः माय पाठक कुञ्जिताभ्यन्त-
 कर्त्तृभेद, जो बहुत कुञ्जितरूपमें पड़ता हो।
 दादमादम (सं० को०) दादमिधं पाथतम्।
 जैमिनिने दत्तोने पनुधर दोष शान्तिधियो, दोष कर्म-
 श्रियो तथा मन्त्र और वृद्धिका समुदाय।

दादमाध (सं० पु०) वेद्योक्त पौषभेद। इसकी
 प्रकृत प्रकारी—सप्तमासिक, द्विगुण, कोष, पारद,

वह्न, गन्धक, ताम्ब, चम्प, समुद्रफेन, गेरुमिटो, स्वर्ण, सीधा, चितामूल, हिरण्य, त्रिकटु, त्रिफला, सहजलका बीज, वनयवायन, यवायन, पोपरका मूल, लहसुन, जीरा और क्षुण्णजीरा इन सबको एकमें मिला कर चन्द-रखड़े रससे घोटते हैं। बाद १ रत्तोको गोली बनानी पड़ती है। इसके सेवन करनेसे वातरक्त, कुष्ठ, कण्डू, और अन्यन्त्र समस्त वेदनाएं जाती रहती हैं।

द्वादश्यासु (सं० पु०) द्वादश वर्षों प्रायः कालो यस्य। कुक्षुर, कुत्ता। यह बारह वर्ष तक जीता है इसीसे इसका नाम द्वादश्यासु पड़ा है।

द्वादश्या (सं० स्त्री०) द्वादश भरा रथाङ्गावयवमेव यस्य। १ द्वादशकोष रथचक्रादि। २ तन्मोक्ष सुषुम्णा नाड़ोके मध्य द्वादशस्थित द्वादशदल पद्म।

द्वादशायन (सं० स्त्री०) द्वादशविधं भयम्। सुश्रुतके भनुसार अधिकांशके भेदसे बारह प्रकारके आहार।

सुश्रुतमें बारह प्रकारके भक्ष्य सेवनके नियम कहे गये हैं। यथा—शीतल, उष्ण, क्षिप्त, रुच, द्रव, शुष्क, एक-कालिक, द्विकालिक, भोपधयुक्त और मात्राहीन। ये सब दोष शान्तिके लिए प्रयुक्त हैं। दृष्ट्या, उष्णता, मंद एवं दाहप्रोहित, रक्तपित्त तथा विषरोग, स्त्रोसमा-गममें क्षोष रोगियोंके लिए शीतल भक्ष्य; कफवातरोग, विरेचनात्ममें खेदपायी और क्रिबदेहीके लिए उष्ण-भक्ष्य; वातिक, रुचदेह, व्यायामकार्यित एवं व्यायाममोक्ष-के लिये क्षिप्तभक्ष्य; मेदुर, स्थूल, मेहरोग वा श्लेष्मल देह-के लिये रुच भक्ष्य; शुष्कदेह, पिपासात्त वा दुर्बलके लिये द्रवभक्ष्य; मेहरोग तथा वृषसे शरीर क्षिप्त होनेमें शुष्क भक्ष्य; दुर्बलान्नि व्यक्तिके लिये एकाग्र भोजन; समान्नि व्यक्तिके लिए दिवारात्रिमें द्विभोजन; भोपध-हीनके लिये भोपधके साथ भक्ष्य तथा दुर्बलान्नि रोगोके लिये मात्राहीन भर्थात् बहुत पल्प भक्ष्य प्रयुक्त है। उक्त नियमसे भोजन करनेसे दोषकी शान्ति होती है।

द्वादश्या (सं० पु०) द्वादशभिरहोभिर्निवृत्तः ठक्, तस्य लुक, द्वादश वर्षः कर्मधारय वा द्वादशानां अङ्गं समाहारः टच्, समासान्तः। १ द्वादशदिनसंख्य याग-भेद, भाषीनशासका एक यज्ञ जो बारह दिनोंमें किया जाता था। २ द्वादश दिनसमाहार, बारह दिनोंका

समुदाय। ३ द्वादश दिन, बारह दिन। ४ द्वादश दिन पर्यन्त सत्कर्ममें नियोजित, वह जो बारह दिनों तक सत्कर्ममें लगा हो। ५ भूल कर्मकर, वह जिसने पहले काम किया हो। ६ बारह दिनों तक रहनेवाला ज्वर। ७ वह ग्राह जो किसीके निमित्त उसके मरनेसे बारहवें दिन किया जाय।

द्वादशी (सं० स्त्री०) द्वादश टित्वात् ङोप्। तिथिविशेष, प्रत्येक पक्षको बारहवो तिथि।

वामनपुराणमें लिखा है, कि द्वादशोतिथि काम-रूपिणी और लक्ष्मोखरूपा है। इस तिथिमें जा स्त्री वा पुरुष द्वादशोत्तपरायण हो कर घो खाता है, वह स्वर्गको जाता है।

भगवन् महीनेको शुक्लाद्वादश्याका नाम मकरद्वादशी, पूस महीनेको शुक्लाद्वादश्या कूर्मद्वादशी, माघ महीनेकी वराहद्वादशी, फागुन महीनेकी वृषद्वादशी, चैत महीनेकी वामनद्वादशी, वैशाख महीनेको कामदेव्य-द्वादशी, तथा जेठ महीनेकी रामद्वादशी, यह बारह द्वादश शुक्लपक्षकी द्वादश्या हैं। भाद्रपद महीनेकी क्षुण्णद्वादश्या, सावन महीनेकी बुधद्वादशी, भादो महीनेकी कल्कि-द्वादशी, पार्श्वन महीनेकी पद्मनाभद्वादशी और कार्तिक महीनेकी नारायणद्वादश्याका क्षुण्णपक्षकी द्वादशी सम-भन्नी चाहिये।

उक्त द्वादशीका व्रत धरणीव्रत कहलाता है। यह व्रत बहुत फलदायक माना गया है। सोभाग्यकामोके लिये यह एक उत्कृष्ट व्रत है। (वराह०)

वैशाख मासके शुक्लपक्षकी द्वादश्या तिथिको पिपेतक-द्वादशी कहते हैं। इस द्वादश्या तिथिमें केवल शीतल जलसे वेश्यको स्नान करानेसे मनुष्य पवित्र होता है।

अवधानचक्रयुक्ता शुक्लद्वादश्याका नाम अवध-द्वादश्या है। यह तिथि पापनाशक मानी गई है। भारद्वाजकी शुक्लद्वादशी तिथिमें अवधान चक्रका योग होता है और उस दिन यदि वृषवार पड़े, तो शतशुभ फल प्राप्त होती है। उस दिन संप्रवास करनेसे सब प्रकारके फल मिलते हैं। यह द्वादश्या यदि दो दिन तक रहे, तो जिस दिन एकादशीयुक्ता होगी, उस दिन निष्क्रान्त वचनानुसार संप्रवास करना चाहिये। जैसे—

“श्राद्धो य एवमेव्या एकादशीया रिषोः ।
 एकादशी य विद्वद्भिर्भुज्यते मानवेः ॥”
 (स्कन्दपुराण)

श्राद्धशोकयोग यदि एकादशीके साथ हो, तो विष्णुसम मानवोंको एकादशीके दिन हो उपवास करना चाहिये। श्राद्धशोक दिन उपवासचक्रका योग न हो कर यदि एकादशीके ही दिन हो, तो उस तिथिकी विजया कहते हैं और वह भक्तोंके लिये विजयपट्टा है। जहाँ तिथि और नक्षत्रके योगसे उपवास होता है, वहाँ किसी एकका सब कुछ बिना भोजन नहीं करना चाहिये और यदि उपवासचक्रकी वृद्धि पाँच जाय, तो भी तिथिसे सब होतमे हो भोजन करनेका विधान है पर्याप्त एकादशीतिथि सब होतमे श्राद्धशोकमें पारण करना चाहिये।

(तिथिपत्र)

यदि एकादशीके उपवास दिन उपवासचक्रका योग न हो कर श्राद्धशोक दिन हो, तो दोनों दिन उपवास करना चाहिये।

एकादशीके दिन उपवास करके फिर श्राद्धशोक दिन उपवास करनेका विधान है; क्योंकि दोनों तिथिके देवता हरि हैं। यदि इसमें कोई पापसि करे, तो एक व्रत पारस्य करके जब तक वह समाप्त न हो, तब तक दूसरा व्रत करना उचित नहीं है। एकादशीके व्रतानुसार एकादशीके दिन उपवास किया गया है, उसका पारस्य नहीं करनेसे एकादशीका व्रत समाप्त नहीं होता है। यमोक्तिमत्तरूप श्राद्धशोकका व्रत हो सकता है, किन्तु उसमें विषय वचनानुसार एकादशी और श्राद्धशोक दोनों ही दिन उपवास करना होगा, इसमें विधिका कोप देना जाता है। क्योंकि शिवशोक वचनोंका तात्पर्य यह है—जो दोनों दिन उपवास करनेमें समर्थ हो उन्हें श्राद्धशोक दिन भोजन न करके एकादशीके दिन ही भोजन कर लेना चाहिये। इस तरह श्राद्धशोकमें उपवास करनेसे एकादशीभक्ति समस्त पुण्य भी निःशब्द मिल सकती है। इस श्राद्धशोक उपवासको काम्य समर्थना चाहिये। क्योंकि मातृपुत्रपुत्रपुत्र वचनानुसार देखा जाता है, कि जो श्राद्धशोक दिन उपवास करके पुत्रप्राप्त्य रहते हैं वे अक्षयवर्षा और पुत्रप्राप्ति कर रहे हैं।

कार्तिकमासकी शुक्लश्राद्धशोक मन्त्रांश है और उपवासचक्रमासकी शुक्लश्राद्धशोक नाम उपवासचक्रमास है। विष्णुपदकी कामना करके उपवास करना चाहिये।

इस दिन उपवासमास में सब करके विष्णुको पद्मद्वारा स्नान करा का गया प्रति उपचारसे पूजा करनेका विधान है। पोलि की ओर धानसे पूर्ण एक पात्रकी ले कर इस मन्त्रसे जपे देन करना चाहिये। मन्त्र—

“श्रीं वसुधैव कुटुम्बकम् इत्येवम् ॥”

भगवत्स्वरूपगदेन तद्वत्कुटुम्बिनाम् ॥

यथा पशुं जगत्पदं ॥ इमेन उपवासान् ॥

ततोऽस्मिन्मन्त्रादस्मिन्मन्त्रि जपे जपे ॥

इस मन्त्रसे प्राथम्य करके दक्षिणा देनी चाहिये।

(श्राद्धशोक)

भोजन एकादशीके बाद जो एकादशी हो पर्याप्त मासमासकी शुक्लश्राद्धशोक दिन पट, तिलाचरण करना होता है।

तिनरत्नान्, तिलपत्रम्, तिलहोम, तिलकी जलमें निःसीप, तिलदान और तिलभोजन यद्येवः तिलाचरण है। जो इसे करते थे सब प्रकारके पापोंमें शुभ होते तथा तीन गो यद्येव तब स्वर्गमें प्राप्त करते हैं। (तिथिपत्र)

गोविन्दश्राद्धशोक—काव्यनुमानसे शुक्लश्राद्धशोक उपवासचक्रमास श्राद्धशोक गोविन्दश्राद्धशोक कहते हैं। उस दिन गङ्गास्नान प्रतिपत्त उपवासचक्रमास है। गङ्गास्नानका मन्त्र—

‘महापद्मं शिवं शक्तिं पापानि हरिष्यते ॥’

गोविन्दश्राद्धशोक श्राद्धशक्ति में हर शक्ति, (तिथिपत्र)

श्राद्धशक्तिमें निम्न वारस प्रकारके द्रव्य यज्ञम करना चाहिये, यथा—कासा, मांस, दूध, खीर, मोम, मिषाकण्ड, मेघुन, दिवागिदा, दधन, मिषादि द्रव्य और मद्य।

जो श्राद्धशक्ति व्रताचरण करना चाहते, उनके श्राद्धशक्तिमासकी शुक्लश्राद्धशोक या पूर्णिमाके दिन व्रताचरण और कार्तिकमासकी शुक्लश्राद्धशोक दिन व्रताचरण करना चाहिये।

श्राद्धशोक पारस्यके विषयमें श्राद्धशोक व्रतमास की ओर यदि पारस्य करनेका विधान है। क्योंकि श्राद्धशोक

प्रथम भागका नाम हरिवासर है। अतः उस समय पारथ कदापि नहीं करना चाहिये। (तिथितत्त्व)

द्वादशीके दिन पूतिका (बोईका साग) भक्षण विज्ञातियोंके लिये निषिद्ध है। फिर भी यहां पर विशेष कारके निषेध करने पर भी अधिक दोषजनक समझा जाता है।

द्वादशोत्थिमें तुलसी नहीं तोड़नी चाहिये। जो उस दिन तुलसी तोड़ते हैं वे मानो विष्णुका शिरच्छेद करते हैं।

आश्रितकत्वमें लिखा है, कि मंजान्ति, घमावस्या, पूर्णिमा, द्वादशी, रात्रि और सन्ध्याके समय तुलसी तोड़न मानो विष्णुका शिरच्छेद करना है।

द्वादशीके दिन सायंकालमें गायसन्ध्या नहीं करना चाहिये और जो करते हैं वे ब्रह्महा होते हैं।

स्मृतिमें लिखा है कि द्वादशो, घमावस्या, पूर्णिमा और जिस दिन ग्राह किया जाता है उस दिन सायंकालमें सन्ध्योपासना करना मना है, केवल गायत्रीका जप किया जा सकता है।

जो द्वादशोत्थिमें मैथुनकर्म करते, वे तिर्यग्-योनिमें जन्म लेते हैं और कभी विष्णुलोकको नहीं जा सकते।

हेमाद्रिव्रतखण्डमें दशवतार द्वादशोका विषय इस प्रकार लिखा है—अथ द्वादशोत्थिमासकी शुक्लाद्वादशोत्थि भगवान् विष्णुरूपो मत्स्यकी अतिशय प्रिया है; इसीसे एकादशीके दिन उपवास कारके द्वादशीके दिन सुवर्णमय मत्स्य ब्राह्मणको देना चाहिये। 'विष्णुर्मे श्रेयतामस्यः' इती मन्त्रसे दान देना होता है। जो इस तरह व्रताचरण करते वे सब प्रकारके सुख प्राप्त कर अन्तमें विष्णुलोकको जाते हैं। (हेमाद्रिव्रतख०)।

पोषमासकी शुक्लाद्वादशी तिथि जूमकी अतिशय प्रिया है। उस दिन सुवर्णमय जूम तैयार कर जूमों वतराका मांझात्यादि धुन करके उसे ब्राह्मणको दान देना चाहिये। जो इस तरह दान करते हैं वे समस्त सौभाग्य प्राप्त कर विष्णुलोककी जाते हैं। एसी प्रकार बिंभाभारुसार माघमासकी शुक्लाद्वादशीमें वराह, फाल्गुन की शुक्लाद्वादशीमें नारसिंह, चैत्रमासकी शुक्लाद्वादशीमें जामदग्न्याराम, ज्येष्ठमासकी शुक्लाद्वादशीमें दाम्भरि राम

और सौता, आषाढमासकी शुक्लाद्वादशीमें रोहिण्याराम, श्रावणमासकी शुक्लाद्वादशीमें श्रीकृष्ण, भाद्रमासकी शुक्लाद्वादशीमें कल्कि आदि सुवर्णमय मूर्तियां बना कर उन्हें उक्त अवतारोंके गुणादि कोर्त्तन पाठ करनेके बाद ब्राह्मणको दान देना चाहिये। जो इस दशवतार द्वादशी व्रतका अनुष्ठान करते हैं, वे सब प्रकारके सुख भोग कर विष्णुलोकको जाते हैं। (हेमाद्रिव्रतख०)।

विविध द्वादशोव्रत—इसका विषय पद्मपुराणमें इस प्रकार लिखा है—चैत्रमासकी शुक्लाद्वादशीमें मदन और हरिको पूजा करना चाहिये, इसे मदनद्वादशोव्रत कहते हैं। जो इस व्रतका अनुष्ठान करते हैं, वे सब प्रकारके दुःखोंसे छुटकारा पाते हैं। माघमासकी शुक्लाद्वादशीमें भीमद्वादशोव्रत करना पड़ता है। उस दिन विष्णुकी पूजा करनेसे सर्वसिद्धि प्राप्त होती है। फाल्गुनमासके शुक्लपक्षका गोविन्दद्वादशोव्रत करनेसे गोविन्द सर्वदा प्रसन्न रहते हैं। आश्विनमासकी शुक्लाद्वादशीमें व्रत करके भगवान् नारायणको पूजा करनेसे पड़ती है, इसे विष्णोद्वादशोव्रत कहते हैं। यह व्रत करनेसे सब शोक जाते रहते हैं। अथ द्वादशोव्रतमासकी शुक्लाद्वादशीमें नारायणको पूजा कर नमक दान करनेसे सब प्रकारके धनदानका फल मिलता है। भाद्रमासकी शुक्लाद्वादशीमें गोवत्सकी पूजा करने चाहिये, इसका नाम गोवत्सद्वादशोव्रत है। माघमासकी श्रवणमासतत्तुष्ठा कृष्णद्वादशीकी तिलद्वादशी कहते हैं। इस दिन तिलस्नान, तिलहोम, तिलनैवेद्य, तिलमोदक, तिलदोय, तिलोदक और तिलदान करके ब्राह्मणोंको भर्चना करनी चाहिये। बाद यथाविधि होम और उपवास कर 'भोम नमो भगवते वासुदेवाय' इस मन्त्रसे वासुदेवको पूजा करनेका विधान है। जो यह पटु तिल द्वादशीव्रत करते हैं, वे कुल मज्जित स्वर्गलोकको प्राप्त होते हैं। फाल्गुनमासके शुक्लपक्षमें मनोरथद्वादशीव्रत करके भगवान्को धाराधना करनी चाहिये। वैशवादि बारह नाम हारा द्वादशीव्रत कर एक वर्ष तक भगवान् नारायणको पूजा करने पड़ती है। जो यह व्रताचरण करते वे कभी नरकमें नहीं जाते हैं, उन्हें सर्वदा स्वर्ग-सुख मिलता है। फाल्गुनमासके शुक्लपक्षमें सुमतिद्वादशीव्रत करनेसे सुमति लाभ होती है।

भाद्रमासकी गङ्गादादगोके दिन जो चमत्तादादगोव्रत करते, वे सब कीर्तियों विभूत होते हैं। माघमासमें गङ्गादादगोके दिन यदि मूषा पचवा चलेयामचल पड़े, तो 'छप्पाय नमः' कह कर तिन द्वारा होम करके भगवान्‌को चाराधाना करनी चाहिये। इसीकी तिन्-दादगो कहते हैं। पोषमासको गुरूदादगोका नाम मध्याह्निक है। इसी मधुच यथाविधान यह व्रत करते, उन्हें किसी चीजको कमो नहीं रहती है। भाद्रमासके गुरूपक्षको अमवास्यामचल गङ्गादादगो सबसे अच्छे है, इसका नाम अमवास्यादादगो व्रत है। इस दिन उपवास करने में पचयफल मिलता है। ज्येष्ठमासदि पुष्यतीर्षा में खानादि करनेमें जो फल मिलता है इस दादगोमें भी वही फल मिलता है। बुधवार और अशुभ गङ्गादादगो-में जो कोई पुण्यकार्य किया जाता है, उसीमें महाफल प्राप्त होता है। जो यथाविधान इस व्रतका अनुष्ठान करते, उन्हें परीयफल मिलता है। चमत्तादादगोके गुरू-पक्षकी दादगो तिथिमें अमवास्यादादगोव्रत करना चाहिये। मध्यरात्रिमें उपवास, पक्षगव्य जलसे स्नान और पक्षगव्य भक्षण कर भगवान्‌ विष्णुकी पूजा तथा ब्राह्मणोंको जो धोर धानगुल प्राप्त दान करनेका विधान है। बाद भगवान्‌का इस प्रकार स्नान करना पड़ता है, 'हे भगवन् ! हमने मास जन्ममें जो कुछ उपद्रवत किया है, वह पाप के प्रसादसे हमसे पचपल हो जावे। हे पुण्योत्तम ! जिस तरह पाप हो यह समझ पचपल जगत् है, उसी तरह हमारा मन भी पचपल हो जावे। प्रतिमास दादगोके दिन इसी तरह विष्णुको पूजा करनी चाहिये। जो सब प्रकारसे विष्णुकी पूजा करते हैं, उनको पाप, चारोग, लोभादय और राज्यभोगादिको हर्ष होतो है।

(क्षीरसु. १२४-१२६ व.)

दापर (मं. पु.) दो पौ प्रहारे विषयो यस्य, द्योद-
शदित्वा मायुः । १ मंगल । शार्ङ्ग मरुतं ताम्बां परः
पौदरा मायुः । २ मरुतं ताम्बांश्वर युगं द,
शरङ्ग युगं तोमरा युगं । भाद्रमासकी छप्पा-
मयोदसी शुद्धशिवारकी दापरयुगकी अवधि हुई
हो। यह युग ८६४०० वर्षका माना गया
है। इस युगमें जीवन्ध और बुद्धका चरनार,

बाधे पुत्र और बाधे पापमें हुआ था। राजा मानव,
मिराट, हंभलन, कंभ, मयूरभञ्ज, चम्पूनाहन, हम्मा-
दद, दुर्गोवन, कुम्भिर, परीकित, जन्मिन्ध, विचरुधिन,
मिगुपान, जरासन्ध, छयमेन और कंभ इसी युगमें हो
गये हैं। इस युगमें मनुष्योंकी परमायु एक हजार वर्ष
हो और उनके शरीरका परिमाण मात्र हाथ था। प्रायः
कधिरगत चर्मात् जब तक देखने लक्ष रहता, तब तक
जीवन नाम नहीं होता था। यशुवंदका अधिकार
चर्मात् काय कलापादि यशुवंदके अनुसार था। ताव-
पावका व्यवहार होता था और सभी मनुष्य चर्मा-
रत, प्रलापो, सर्वदाचलन, शान्तिन, लपट और मास-
क्रमत थे।

दापरयुगके धर्ममें दादिका विषय मत्स्यपुराणमें इस
प्रकार लिखा है—

येता युगका काल जब भीष होने लगा, तब दापर-
में धीरे धीरे पचना प्रभुत्व जमा हुआ। येतायुगमें
प्रजाको जो सब सिद्धि थी, वह दापर युगमें जगने लगे
जातो रहने। प्रजा मरुत लोभी हो चली, अविश्वग-
पापमें विबाध करने लगी। सभी तत्त्वोंका निषेध कार्य-
के लिये कीर्तन हो गये। सब वर्णोंका नाम धोर कर्मका
विषय बान्धव हुआ। रोगीगुण धोर तमोगुणके कार्य
धीरे धीरे बढ़ने लगे। जिनके करनेमें येतामें पाप नहीं
जगता था, वे सब कर्म पाप समझने लगे। वच-
धर्म, पर्वधर्म आदि महोत्सव होने लगे। पद्मानके
कारण दूति स्मृति आदिका यथायं बोध लुप्त होने
लगा। मनुष्य पचमी पचमी ममभक्त अनुसार चर्मा
जगने लगे। सब धर्मतत्त्वकी ऐसी मङ्गलकी लक्षित
हुई, तब पापमें धर्मके प्रकारके मतभेद चलने लगे।
दापरमें धर्मादि व्याकुलित हो कर कर्ममें एक दम भट
हो गये। इसी मनुष्य इस प्रकार धर्मके तरहके विषय-
में एक कर व्याधिये सबहीन तथा लक्ष्मीन हो गये
और क्रोध उनके चर्मा धोर धोर पाये। इस सबकी
मति काम हो जानेसे दैत्येदादिके चरकोचके लिये
देका दिव्यकी होने लगी जिसमें धर्मके प्रकारके मतभेद
चलने लगे, जोई कुछ भी बिचार कर न सके। इस समय
मर्त्यके मनुष्यका समय लटकर ज्ञान घटने लगा। प्रायः

किंवोकि मनमें शान्ति न थी। इस तरह द्वार भस्मी तरह अपना निम्न प्रकाश कर धीरे धीरे जोर लगा। तब कलिन आ कर द्वारके राक्षस अपना अधि-कार जमा लिया। (मस्यपु० १४४ व०) कलि देखो। दामुल्यायण (म० पु०) दामुल्यायण प्रयोदरादित्वात् साधुः। १ यह पुरुष जो दो मनुष्योंका पुत्र हो। २ महाक गौतम मुनि। ३ वह पुरुष जो दो ऋषियोंके गोत्रमें उत्पन्न हुआ हो।

द्वार (म० स्त्री०) द्वारयति-क्लिप्। १ गृहनिर्गमन-स्थान, घरमें जाने के लिये दीवारमें खुला हुआ स्थान, दरवाजा। २ उपाय, तरकीब।

द्वार (स० स्त्री०) द्व-प्णिच्-अच। १ गृहनिर्गमन-स्थान, दरवाजा। २ किसी घोट करनेवाली या रोकनेवाली वस्तुमें वह छिद्र या खुला स्थान जिससे हो कर कोई वस्तु पार पार या भीतर बाहर जा सके, सुख, सुखाना। ३ इन्द्रियोंके मार्ग वा छिद्र। ४ उपाय, साधन, जरिया। सांख्यकारिकामें चतःकरण ज्ञानका प्रधान स्थान कहा गया है और ज्ञानेन्द्रिय उसकी द्वार बतलाई गई हैं। ५ शेष और भूख।

द्वार—भासामकी साठ अधीनके दो द्वार हैं, एक पूर्वद्वार, दूसरा पश्चिमद्वार।

पूर्वद्वार—यह अभी ग्वालपड़ा जिलेमें शामिल है। इसके उत्तरमें भूटान गिरिमाता, पूर्वमें मानस नदी जो इस भूभागकी कामरूप जिलेसे विभक्त करती है। दक्षिणमें पश्चिम ग्वालपड़ा जिला और पश्चिममें गङ्गाधर वा खर्बकोथी नदी है जो पश्चिम द्वारसे इस भूखण्डको पृथक् करती है। यह अक्षा० २६° १८' से २८° ५४' व० और देशा० ८८° ५५' से ८९° पू० तक विस्तृत है। भूपरिमाण १५६८८२ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ६० हजार है। इसका प्रधान शहर विजनी है, किन्तु यहाँके सुकदमें आदि धुधड़ो अदालतमें किये जाते हैं।

पूर्वद्वारकी भूमि पहाड़के नीचे होने पर भी अधिकांश समतल है। यहाँकी जैनी जमीनके मध्य केवल ४०० फुट उच्च भूमि पहाड़ देखा जाता है। इस विस्तृत समभूमिमें कहीं कहीं गावकी वन हैं; और

असंख्य नदियाँ बहती हैं जिनमेंसे मानस, जनानो, पाक-जनी, आर्द्र, कानामाकरा, चम्पामनो, गौराङ्ग, मरल-भाङ्गा, गङ्गिया, गुरुपाला और गङ्गाधर। गङ्गाधरमें बाढ़ों महीने नौबें आदि चलती हैं। अन्यान्य नदियोंमें केवल वर्षाकालमें ही नौबें आती आती हैं। यहाँकी सभी नदियाँ भूटान गिरिमातासे निकल कर ब्रह्मपुत्रमें गिरती हैं।

यहाँके जङ्गलमें मूल्यवान् काष्ठ पाये जाते हैं। इसी कारण जङ्गल-विभाग गवर्मेण्टके अधीन है। जङ्गलमें दाख, पीपर और भास नामक सालवर्षीयपादक सुगम पाये जाते हैं। जङ्गलो जन्तुओंमें हाथी, भैंडा, भैंस, बाघ, भालू, सूअर और हरिण प्रधान हैं।

इस पश्चलके लोग धान और सरसोंको खेती करते हैं। प्रत्येक गृहस्थके घरके चारों ओर बांस और बेलके पनैक पेड़ देखे जाते हैं।

१८६४-६५ ई०में भूटान-युद्धके बाद यह भूभाग ब्रिटिशोंमें हुआ।

१६वीं शताब्दीमें वर्तमान कोचबिहारके राजाके आदिपुरुष विष्णु सिंघ इस पश्चलमें रहते थे और यहाँसे उन्होंने भायोराण्यका सुवपात किया। पोहे उत्तराधि-कारियोंमें पायसमें गृह-विवाद हो जानेसे यह भूभाग कई खण्डोंमें विभक्त हो गया और छरएक भूभाग राजकुमारोंमें बाँट दिया गया। इनमेंसे विजनी, सिदलीद्वार और दरङ्गके राजाओंमें अपने अधिपत्य वर्तमान सम्पत्ति प्राप्त की।

सुगलोंने जङ्ग भासाम पर चढ़ाई की तब इस भूभाग का पश्चिमांग सुगलोंके अधिकारभुक्त ग्वालपड़ाके अधीन हुआ। उस समय प्रहोम राजगण ब्रह्मपुत्रके तीरवर्ती प्रदेश पर राज्य करते थे। पूर्वद्वारमें बहुत दिनों तक भूटियाका अधिपत्य रहने पर भी आर्य है कि यहाँके अधिवासियोंमें भूटिया लोगोंके बोद्धधर्माका चिह्नभाव भी देख नहीं पड़ता। किन्तु मुसलमान धर्मका प्रभाव अब भी प्रत्यक्ष है। १७७२ ई०में भूटिया लोग कोचबिहार पर बहुत अत्याचार करने लगे। कोच-बिहारके राजाने, इष्ट-इन्द्रिया-कम्पनीको कर दे कर उसकी शरण ली। तत्पश्चात् अंगरेज गवर्मेण्टने राजाकी

भूटियां पत्थाचारमि बसावा। शीचरिहार दीवो।

१८६६ ई०में हटिय-राजदुत भूटानराज्यमें पय-
मानिग हुए। इसका बदला चुकानेके लिये १८६४ ई०में
दिनम्बर महीनेमें पंगरंगो मेला मेजो गये। १८६६
ई०में भूटियाके राजा मन्त्रि करनको राजा हुप जिमके
अनुसार पुर्वद्वार और पश्चिमद्वार हटिय गवर्मेण्टको
दे दिये गये। हटिय गवर्मेण्ट भी भूटानराजको प्रति
वर्ष २५००० रुपये देनेमें स्वीकृत हुई। इसके पनावा
यह भी मर्त ठहरि कि हटियगवर्मेण्ट अपने इच्छानु-
सार ५० हजार रुपये तक भोटे सकतो है। तभीमे यहाँ
कोई गृहयुद्ध न हुई। यमो नारी भूमागमें शान्ति विराजती
है। किन्तु ई० १८८० सालके पावाड़ मासके भूमि-
कम्पमे द्वार भूभागके नाग। आगोमें मडती कति हुई है।

मन्त्रि होनेके बादमे भूटानद्वार दो भागोमें विभक्त
हुवा—पुर्वद्वार और पश्चिमद्वार। पुर्वद्वारको सोमा पक्षमे
वा। लिंगो ला चुको है। पक्षमे पक्ष यह भूभाग एक
हिपुटो-कमिश्नरके शासनधीन हुआ और दक्षिण पक्षमे
इसका मदर बनाया गया। १८६६ ई०के दिनम्बर
महीनेमें द्वारका पश्चिमार्ध बङ्गमें और पुर्वार्ध बांग्लाधममें
सिवा दिया गया। १८०४ ई०में पनाम एक चीफ-
कमिश्नरके अधीन एक सतम्बर प्रदेशके जेवा गिना जामि
लग और पुर्वद्वार बङ्गमे पक्ष कर लिया गया। किन्तु
शान्तिपक्षा और पुर्वद्वारका शासनकार्य एक राजपुत्रपक्ष
अधीन होमे पर भी यहाँकी शासन प्रणाली नारी वो।
१८६८ ई०को १५वो भाराके अनुसार यहाँकी स्थावर
सम्पत्ति, राजस्व, सत्तगुजारो पादिका सुकदमा कीबानी
पदाकतके चकमर्त नही किया गया। यहाँका भूभाग
सात गवर्मेण्टके अधीन है।

यहाँ कोच, भेव, बङ्गाली और राजाजातिक
जात है। यहाँ हिन्दुधर्ममें कौलिनाकी सङ्का हो पवित्र
है। यहाँके हिन्दुधर्म पवित्राङ्ग केवल और सिवामाके
विश्व है।

यह पक्षमे सोम बङ्गाके नाम होमे है पक्ष
होती और बाज्ज वा ईसमिक।

वाचिज्जमें ईकोका तैल, कपास, रबर और पाय
आमक रंग प्रभाग है।

पश्चिमद्वार—हिमालयके लोचि बङ्गासके माउके
अधीन एक पक्ष भूभाग, द्वार प्रदेशका पश्चिम पक्ष कक्ष
जाता है। अजगद्गुहो जिनेमें भी इस भूभागके पक्ष-
गत हिमालय पक्षतः। कोई कोई पक्ष है। पश्चिमद्वार
का समस्त भूभाग अजगद्गुहो है। कोच योचमे भोटे वक्ष
गई है जिसमे शाबाटमे बहुत नाम पक्ष जाता है।
भूटान-गुहके बाद १८६४-६५ ई०में यह भूभाग पंगरंगो-
के पश्चिमार्धको हो कर बङ्गासके दोटे माउके पक्षोक्त हो
गया है। १८८१-८४ ई०में पायको रोगो करमेके लिये
अनेक लोग यहाँकी जमीन खरीदने लगे। आज कम
यहाँ पायको रोगी बहुत होती है। यहाँका जलवायु
पक्षारपक्ष है। पायके रोगोके लिये यहाँ पक्ष प्रतिवर्ष
समावे जाते हैं जतने हो देशका पनाम्य भो दूर होता
जाता है। पश्चिमद्वार प्रदेशकी पुर्व सोमा लक्ष्मीगो नदी
और पश्चिम सोमा तिप्ता नदी है। यह पक्ष भो दर-
गमें विभक्त है, (१) मानका ११८ वर्गमील, (२)
भाटिवाडो ११८ वर्गमील, (३) बङ्गा १०० वर्गमील,
(४) चकाल-पक्षि ११८ वर्गमील, (५) मदारो १८५
वर्गमील, (६) लक्ष्मीपुर १६५ वर्गमील, (७) मराघट
१५२ वर्गमील, (८) मयनागुहो १०८ वर्गमील और (९)
चेङ्गमरो १५६ वर्गमील।

द्वारक (सं० बलो०) द्वारक प्रमर्तग लायति के०।
द्वारकापुरो।

द्वारकण्डक (सं० पु० लो०) द्वारक कण्डक-१५। जघाट,
कियाड़।

द्वारका—१ बरोदाराजके पक्षमें सोमासके दोवामण्डल
तःसुक्का एक बन्दर और हिन्दुधर्मों। यह पक्ष २१'
२३' व० और दूरा ६८' ५' पू० पक्षगदाघटमे २१५
मोल दक्षिण-पश्चिम तदा बरोदा महरमे २०० मोल पश्चिम-
में पक्षिगत है। लाज्जमे पक्ष दावा ०१३१ ई। यह
बरोदाराज गावकबाहुके पक्षोक्त है। यहाँ एक नल
बन्दर प्रदेशके देसोय पक्षान्त बर्तन है, यहाँके पनावा
यहाँ दोवामण्डल-केटनियन नामक सोमासके भी है।

यहाँ द्वारकानामका एक मन्दिर है जहाँ दक्षिण
पक्षः दक्षिण पक्षो सोमासके जोमे है। हिन्दुधर्म
विश्व है कि यह मन्दिर दक्षिण पक्षमे एक

रात्रिमें निर्माण किया गया था। मन्दिर १०० फुट ऊँचा और पाँच खण्डोंमें विभक्त है। इसके सामने एक नाट्यमन्दिर है जिसको कृत ६० स्तम्भोंके ऊपर स्थापित है और जिसकी त्रिकोणाकार छूड़ा १७१ फुट ऊँची है। मन्दिर के यात्रीमें प्रायः २ हजार रुपये वार्षिक भाग्य होती है।

मन्दिरको प्रतिभाका नाम रणछोड़जी है। प्रायः छः सौ वर्ष पहले रणछोड़जीको मूलप्रतिमाको चुरा कर पुरोहितोंने गुजरातके अन्तर्गत ठाकुर नामक स्थानमें ले जा रखा। तमोसे वहाँ पहुँच गए हैं। पौछे हारका-में जो दूसरी प्रतिमा बनाई गई, वह भी आज लगभग २०० वर्ष हुए इसी तरह अपहृत हो कर एक खाड़ीके दूसरे किनारे बटहाय वा शङ्खुड़ होपमें प्रतिष्ठित हुई। इसके पश्चात् हारकाके मन्दिरमें वसन्तमान तीसरी प्रतिमा प्रतिष्ठित हुई है। हिन्दू लोग इसे चार धामोंमें मानते हैं। हारकामें यात्रियोंकी सबसे पहली गोमतो नामक पुष्कलिला नदीमें स्नान करना पड़ता है। स्नानके बाद वे हारकाके सामन्तोंकी ४० रुपये और पुरोहितोंकी ३० रुपये दक्षिणा दे कर देवदर्शनको जाते हैं। वहाँ यात्री लोग यथासाध्य पूजादि दे कर ब्राह्मण भोजन कराते हैं। हारकामें यात्री बहुत अहासे जाप लेते हैं। परमेश्वर नामक स्थानमें ब्राह्मण लोग जाप देते हैं। लौह-वलय और लौहपद्मकी धर्मिमें उत्सव कर यात्रोके धर्मिल-मित अन्न पर जाप दी जाता है। साधारणतः यात्रो लोग बाहु पर ही जाप लेते हैं। सभी यात्रोको जाप नहीं लेनी पड़ता है। माताके इच्छानुसार छोटे बच्चोंकी देह पर भी जाप दो जाता है। मनुष्यान्ध और भ्राम्याय स्त्रजनोंके लिये भी अपने शरीर पर जाप लेनेकी प्रथा है। प्रत्येक जाप देनेकी दक्षिणा १०० रुपये है। इसके अनन्तर वह होपके रणछोड़जीका दर्शन करनेकी जाते हैं। वहाँ पहुँच कर प्रत्येक यात्रोको ५ रुपये देने पड़ते हैं। यात्रो लोग यहां रणछोड़ देवताकी बहुतमूल्य परिच्छद प्रदान करते हैं। परिच्छद बाजारमें खरीदना पड़ता है। देवताको चढ़ाये जानिके बाद पंजा लोग उसे बाजारमें पुनः बेच हातते हैं। इसतरह एकही कपड़ा जब तक वह सड़ पच न जाय तब तक कई सौ बार खरीदी और बेचा जाता है।

पंजाबीोंका कहना है कि प्रति वर्ष एक निर्दिष्ट समयमें विशेष लक्षणाकान्त एक पक्षी समुद्रगर्भसे बाहर निकलता है। इनके मानवर्ण और लक्षणादि देख कर वे उसे मोक्षम-वायुकी गति स्थिर करते हैं। यह कथा अनुसुप्तजल में उल्लेख कर गये हैं। बाद वह पक्षी देवमन्दिरमें या कर देवप्रसादो तण्डुल खाता और देवताके सामने नाचता और काकलीमें गान करता है। कुछ समयको बाद वह उसी जगह मर जाता है।

हारकामें श्रीकृष्णकी राजधानी थी। पुराणोंमें लिखा है कि श्रीकृष्ण देहत्यागके पौछे प्राचीन हारकानगरा समुद्रमें मग्न हो गई। पौरवन्दरसे १० मील दक्षिण समुद्रमें इस पुरोका अवस्थान लोग अब तक बतलाते हैं। पण्डा लोग कहते हैं कि पूर्वार्ध पक्षी इसी स्थानसे निकलता है।

हारकाका दूसरा नाम कुम्हल्यो है। यहां पानस देवकी राजधानी थी। परशुराम कर्तृक यहां प्रथम भार-हलादि द्रव्योवाय ब्राह्मणोंका वास था। श्रीकृष्णने यहां राजधानी स्थापित कर नगरकी गोमा खूब बढ़ा दी थी।

महाभारतमें समापवमें जहां शीघ्र युधिष्ठिरकी तीर्थादिका इतिहास सुनाते हैं, उस जगह उन्हें अध्ययन हारका सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—

“उस प्रदेशमें (सुराष्ट्रमें) पुष्कलिला नदी द्वारावता तीर्थ है जहां साक्षात् पुरातन देव मधुसूदन विराजमान हैं। वे ही श्रीबाल्मीकि और परमात्मा हैं, यतः उन्हें व्याध्यात्मा और ध्वज्यात्मा भी कह सकते हैं। इस तरहकी ध्वज्यात्मा मधुसूदन हवि उन द्वारावतीमें परिष्ठित हैं।” इससे जान जाता है कि श्रीकृष्णके पनस्थानकालसे ही यह तीर्थमें गिना गया है—वह नहीं, उसके पहले भी इसकी प्रसिद्धि थी। द्वारवती, कुम्हल्यो और प्रमास देखो।

हारकामाहात्म्यमें हारकाकी उत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

शर्वाति नामक एक वैष्णवी राजा थे। उनके उत्तान-वर्हि, पानस और भूरिवेन नामक तीन पुत्र हुए। राजा बहुत ही क्षीण और शोकमग्न प्रिय थे। एक दिन

अर्थात् पानसर्प ने कहा, 'हे राजन् ! इस समय राज्य में पापका कुछ भी नहीं है, सभी भगवान् योजनका है ।' यह सुन कर गयीतिने कुछ ही कर चढ़े । राज्य में बाहर निकलवा दिया । मन्त्रों के किनारे या कर पानसर्प ने वे कुप्टपानकी मार दी । तब वे कुप्टपान ने वे कुप्टपान को योजन भूयण्ड टापाटन करके भोगमाटी सागर पर घटगनवज्ज के ऊपर उसे स्थापित किया । सभी भूयण्ड पर पानसर्प ने पुत्रपोतादि क्रमसे राज्य किया । उनमें रैवत नामक एक पुत्र हुए जिनमें रैवतगिरिकी उत्पत्ति हुई । रत्नने ही कुगल्पनी वा हारावनीपुत्री निर्मात्र की । २ कर्मांग, कर्मांग ।

हारकादास—गोवाक्षने के एक राजाका नाम । ने पत्नी-राज गिरिधरगाह के बड़े पुत्र थे । पिताके मरनेके बाद ये सन्तति सिंहासन पर अधिष्ठित हुए । परन्तु उनके सिंहासना-रुद्ध होनेके दोहों को दिन-बाद रत्ने एक बड़ी विपत्तिका सामना करना पड़ा । गोवाक्षत मन्त्रदायक पादिपुत्रक मूलक-पथ थे । उन्होंने रैवतधर को इस समय मनीषापुरके पञ्चाक्षर थे, उन्होंने अपनी व्यामिश्रक ओषधिका-यमवर्षी को कर रत्ने उन विपत्तिमें फँगाया था । दिनोंके बाद-गाह एक मित्र पकड़ लाये । प्रचलित रीतिक अनुसार उन्होंने इस मित्रके शुद्ध करनेके लिये विद्यापन निकाला । इस विद्यापनके निरूपण के मनीषापुरके राजाके बाद-गाहने कहा—हमारी जातिके रायमनीत हारकादास को प्रसिद्ध हो । ताहरमि-दके गिराई है वे ही इस मित्र-के लक्ष्य मन्त्र हैं । बादगाहने मित्रके लक्ष्यके लिये हारकादासकी पाछा दी । हारकादास मनीषापुरगति को पाना ही ताड़ तो गए, परन्तु उन्होंने बादगाहकी पाछाका बड़े धारतामें पालन किया । सैदान दमकी ने भर गया, हारकादास भी स्नान करके चोर पूजाकी मामलों में जा-वही उत्पन्न हुए । हारकादासने जा-कर मित्रको पकड़ टोका लता दिया और उसको अपने-माला पहना दी ; तदनन्तर अपने पासन पर और मान-में बैठ कर वे पूजा करने लगे । हारकादासके पाप-रत्नको देण्ड को गिराते ही रत्ने ही मनीषापुरके राजा मन को मन कलक-ही रहने । वही समय बि-ह हारका-दासके पक्षक कर चढ़ाया और खुश हो गया । पुनः

कब बादगाहने बुलायो, तब हारकादास वहीने तट-कोर बादगाहके समीप चले गए । बादगाहने समझा कि पक्षक को यह देखागिसे मन्त्रवन्त है । प्रत्यक्ष ही कर बादगाहने हारकादासने रत्नानुसार मानिके लिये कहा । हारकादासने यही मांगा, कि पात्रमें गिरीही पिकी विपत्तिमें न फँसना ।

अन्तमें हारकादास योजनानुके हाथमें मारे गए । कहते हैं, योजनानु चोर हारकादास दोनों परम मित्र थे । एक समय बादगाह किसी कारणसे योजनानुमें भ्रमपक्ष हुए चोर हारकादासको अपने में कहना भिन्न कि योजनानुकी जीता दूपा या मार कर मरे वही से चाची । इस पात्राको सुन कर हारकादासको बड़ा कष्ट हुआ । अपने में योजनानुमें कहना भिन्न कि इस एवित कार्यको सम्भव करनेका भार मुझ पर रखा गया, अतएव पाप पक्ष बादगाहने यही जा-का पान-ममपक्ष करे या वहीमें करी भाग जाय । योजनानु-ने ऐसा करना अनुचित समझा । दोनों चोर संवास-सितमें जा कर लड़ने लगे, एक दूसरेको मर्दासे दोनों की पक्षक की मार हुए ।

हारकाधीय (मं० पु०) १ योजनपक्षक । २ ज्ञानको वह मूर्ति को हारकाधे है ।

हारकागाय (मं० पु०) हारकागीत गेयो ।

हारकागाय ठाकुर—कमलके के एक मान्यगण जमी-दार । १८८४ ई० में इनका जन्म हुआ था । शिरोचर्मा माहवके कृतके ही इनका घरने पक्षक पक्षकी लिखना सीमा । योद्धे को दिनांक मन्त्र चंगरेजी, बहना चोर पक्षकी भाषामें इनका पक्षक प्रथम को गया । योद्धे कुपत्तापक्ष कर के जितने राजाओं चोर जमी-दारोंके विद्यामभाजन की गए । पिताके मरने पर अपने-दारोंके देख रैव रत्नकी करना पड़ना था । सुपार्ति मि-रत्नने लू-ह दयव कमाल । धीरे धीरे रत्ने में बोध, कहना चोर पक्षकी-विद्यापक्षकी दावामें भी पाई थी । इस प्रकार प्रचुर पक्ष पक्षकी कर चोरीमन पक्षक पक्षका करमिने रत्नेके १८९४ ई० में इनमें 'हार-काकुर' नामक एक पापिपक्षक स्थापित किया । १९०९ ई० में बादगाहने पापिपक्षकी बंगाली दारा मि-स्थापित

हुई, तो सबसे पहली यही। इनकी प्रशंसा करते हुए उस समयके गवर्नर जनरल विलियम बेण्टिन्ने इन्हें एक पत्र लिखा था। इनकी उत्साह वाणिज्यकी ओर दिनों दिन बढ़ता गया और कई एक गण्यमान्य शंकरजी के साथ मिल कर इन्होंने 'इयुनियन बैक' नामक एक तिजारती कारवार खोला। इस समय बङ्गाल बैक के पलावा "कमर्सियल बैक" और "कलकत्ता बैक" नामक दो और भी बैक थे। इयुनियन बैक के साथ कमकत्ता बैक मिला दिया गया। १८२६ ई० में कमर्सियल बैक ने दिवासा निकाल दिया। द्वारकानाथ ठाकुर इसके एक मात्र व्यवस्थापन धनी शंशे थे, इस कारण इन्होंने बैक की कुल देन चुकानी पड़ी थी।

'कार-ठाकुर कम्पनी' बङ्गाल और विहारके जगहा स्थानोंमें कोठियां स्थापन कर नील, रेशम और अन्य पण्य द्रव्योंका अन्तर और वहिर्वाणिज्य चलाने लगे। उस समय अन्यान्य वाणिज्य-कोठियोंमें यही कोठी सबसे बड़ी चढ़ी थी। इसको भायसे द्वारकानाथने राजसाही, पावना, रङ्गपुर, यशोर आदि जिलोंमें जमींदारी खरीद की थी। इन्होंने उत्साह से हिन्दू-कालेज, मेडिकल कालेज और जमींदारसभा (Land-holders' society) का स्थापन, डेपुटी मजिस्ट्रेट के पदकी सृष्टि, सुदृढ़ स्वाधीनता, सतीदाहनिवारण और यूरोपीय तथा देशीयके बीच निमन्त्रणामन्त्रणादि द्वारा सद्भावकी स्थापन आदि कार्य हुए थे। इन सब कार्यामिषे कितनेकी तो आप ही नेटल थे और कितनेकी परिपोषकत्वमें कार्य करते थे। इन्होंने चेष्टासे १८३६ ई० में टाउन-हालमें साधारण सभा हुई जिसमें "ब्लैक ऐक्ट" (Black act) (१८३६ ई० का ११वां आइने) के सम्मत् पर और प्रतिवाद किया गया। इन सब कार्यों के फलसे आप जस्टिस-भाव-दि पोसे के पद पर नियुक्त हुए। द्वारकानाथ गवर्नर जनरल लार्ड बालक्रीके निकट जनताके सुखपाद रूपमें परिचित थे और सर्वदा परामर्शके लिये गवर्नर जनरलसे जुलाए जाते थे।

१८४१ ई० में जब इन्होंने विलायत जानेकी इच्छा प्रकट की, तब शंकरजी समाजने प्रत्यन्त आकाङ्क्षित हो टाउन-हालमें एक सभा करके उन्हें एक अभिनन्दन-पत्र

भेज दिया। १८४२ ई० ८ जनवरीको द्वारकानाथने विलायतकी यात्रा को और १० जूनको वहां पहुंच गये। इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके डाइरेक्टर द्वारकानाथको तारीफ पहचसे ही सुन चुके थे। अतः उन्होंने द्वारकानाथको एक भोज दिया। १६ जूनको भाप भारतेश्वरीके दरबारमें उपस्थित हुए और एक सभाके बाद राजपरिवारके साथ एकत्र भोजन करनेके लिये बकिंघम-प्रासादमें निमन्त्रित हुए। ऐसा सम्मान और किसी बङ्गालीका नहीं किया गया था। भोजन कर चुकनेके बाद महाराष्ट्रोंने उनी दिनको सुदृष्टि तोन स्वर्णसुत्रा उपहारमें दीं। इसके पलावा प्रिंस एडवर्ड और महाराष्ट्रों विक्टोरियाको बड़े आकारकी दो तसबोरे कलकत्तावासीको उपहार देनेके लिये द्वारकानाथकी मिलीं। वह तसबोरे आज भी टाउन-हालमें विद्यमान हैं। दोष्टि स्काटलैण्ड होते हुए भाप १८४२ ई० के अन्तमें कलकत्ता वापिस आए। इन्होंने साथ भारतकी राजनीति-पान्दोलनके आदिभिचक जार्ज टामसन भी भारतवर्षमें पधारि थे।

१८४५ ई०को ८वीं मार्चकी आपने दूसरी बार विलायतकी यात्रा की। इस बार इनके छोटे सड़के नगेन्द्रनाथ ठाकुर, छोटी बहनके पुत्र नवीनचन्द्र सुखोपाध्याय, डा० राले और उनके सेक्रेटरी मि० वेफ आपके साथ हो लिए थे। कायेरा तथा फ्रांस होते हुए आप २४ जूनको लण्डन पहुंचे। १८४६ ई०के जून मासमें ये कठिन रोगसे आक्रान्त हुए और १ तौ पगसुकी लण्डन नगरमें हो इस धराधामकी छोड़ परलोकको सिधार गए। ईसाइयोंके देशमें किस प्रकार हिन्दूकी स्तुतिहका सत्कार किया जायगा, यह तर्क उठा। अन्तमें स्थिर हुआ कि केनसलघोन नामक गिर्जाके जिस भूशमें ईसाकी समाधि नहीं होती, उसी स्थान पर बिना कोई धर्म-नुष्ठान किये शवदेह गाड़ो जायगो, वैसा हा हुआ भी। पुत्र, भागिनिय और वस्तुआश्रयवादिके पलावा महाराष्ट्रोंके आदेशसे द्वार राज-भगवतारोही शैनिक स्तुतिहके साथ गए थे।

कलकत्तमें जब यह शोकसमाचार पहुंचा, तब सर पीटर ग्राण्टके सभापतित्वमें टाउन-हालमें २ दिसम्बरकी शोक सभा की गई।

हारकानायक—बहालके एक प्रविष्ट व्यक्ति । १८१३ ई०—
 में दूधो त्रिभिन्ने अगुनमो घाममें दनका अण दूधो दा ।
 मधुमन ही दनका घमाधारण प्रतिभा मधुमन भगो
 दा । धार ययको घमयामें हो दनोने घर पर पड़ना
 जिलना भोग निदा दा । १८१४ ई०में जब दनको
 एमर दात वयको दूरे, तब दूधमो घेय दूधममें भर्ती
 दूध । इस समयमें मे कर जिनमो घरोपाए दूधमें घाम
 यो, मगमें दूधें हलि, मिलनो गई हो ।

घाव दूधें इतिहासप्रिय थे । पड़नेको घामता भो
 घावमें दनका यो कि घनमनुषीत यरोधें इतिहास-
 का एक एक पण्ट घाव एक हो दिनों पड़ सेंने हो ।
 दनको म्मरययति भा मे भो हो प्रत्य यो । पण्ट दन-
 में हो दूधनि घनमनका उल इतिहास सुपय कर
 निदा दा । पिताके मरने पर दूधें भोकरो करनको विरोध
 दूधो दूध । वयपुल भोकरो कहीं नहीं मिलने पर दूधनि
 दूधमंकर कर निदा, कि लय तक मकालत घाम न कर
 सें तब तक पण्ट घोइदेको भोकां भो कों न मिल
 जाय, तो भो नहीं कर सकता । यह बिना दनके हृदय-
 में दात दिन लादत रहो । घर पर भो दूधोंने पाईन
 पड़ना पारध कर दिया घोर उषम येभीमकालत
 घाम कर हो भो ।

तमनार घाव मरर होमनो घदामन मकालत
 करनके अण प्रविष्ट दूध । घेरे घेरे दनको मकालत मधु
 यमो, घांके दिनोंमें लापो दूधमें उपात्रन कर निवे ।
 १८१५ ई०में "हार-कोट" स्थापित हुआ । मर धर्मम
 पाकक प्रथम विचारति दूध । हारकानायक भोमनि
 घर दुर्बला प्रवरता देव मे दोता" जगती काठ कर
 रह गए ।

मधु घोर व्यापकितता दूधोंने मरने समय तक भो
 नहीं हाड़ा । दनको दानमोमता घोर उदरता भा
 ममंमनोय दा । दूधि विदुको बिना कुछ निवे हो
 घनके सुन्दर को घेरा करन हो ।

१८१० ई० १ जूनको हारकोटके दनक मरर होमो
 विचारति तब मधु लायके मरने पर हारकानायक हो
 उदर मरर घामम दूध । दन मरर दूधको घमय
 मरर ११ वर्षको हो ।

१८०१ ई०में मधुमर मायामें ये मधुमर होमो घाका
 दूध घोर दूधो रोग घामो मधु कर दनका मधुका
 कारन दूधो घाकादिने घाव दूधें मिय हो ।
 अयो मधुमर रोगका घाकमय दूध, तबमें दूधनि मधु
 पाधारदिका विमल मयिपार कर दिया । ये मधुमे
 हो, कि दन लोमने निवे दूधोय प्रकावा घाकादि हो
 दवापण्डर हो, दनका कातिम म करनमें निवे हो
 घाकमय-माय होमा । एक दिन कदामनमें हारका-
 नायने कडा घा, "मानमधुमंमाकने प्रयता मधुका
 कदना हो, कि मानमिक घोर मायिक उषमके निवे
 घाममधुमें घमिकारा हो नहीं सकता । मे भो दनका कद
 भोग रहा म" तब मधुम मधुमें निवेमादि घममका निवे-
 मय जम हो । यदि दन घातामे बिना तब दवा मिल
 जाय, तो मे दूध मधुमका हो घममयन मधुमा ।"
 इसी घावा पर मोममधुमने एक पत्र निवे मा, "मूरो-
 में भो घाका पण्टो घोने" हो मधुमे भो, मिकन घो-
 घोय मत मनो । तुम भोग मधुके मधुम हो, मधुमनिना
 भारतको मकाल हो, मधुममधुम, हो, मधु मिक
 ईमरको मका करन हो, तुम मधु भो मधुके मधुम
 हो, तो फिर मधु मधु मधु मधु मधु मधु मधु मधु
 हो । तुम भोग हो हो मधु पर पाकट रहो ।"

१८०४ ई०को २५वीं मररको दिनके घार मने
 बहालको मधुममधुके एक घम मधुममधु हारकानायक
 करनका मधु मधुम मधुम दूध ।

हारकानायक विचारमधुम—बहालके एक प्रविष्ट मधुम
 विदाम । १८१२ मधुमे दानिघाव मधुमे घाका
 मधुममधुमे दनका मधु दूधो दा । ये मधुमधु विचा-
 मधुमे मधुममधुमे मधु । दोनो दन हो मधुममधु मधु
 करन हो । दूधोंने मधुममधुका इतिहास, मधुममधु
 मधुम बहाल मधुमधु घोर विवे मधुममधु मधुम एक
 मधुममधुको मधुम हो हो । "मधुममधु" मधुम एक
 मधुममधु मधुममधुका भो घाव मधुममधु करन हो ।
 १८१२ ई०को २५वीं मधुममधु घाव दन मधुममधुको
 मधु मधुममधुको विचार मधु ।

हारकम (मधु मधु) हारकानायक : मधुमे, हारका-
 मधु ।

द्वारगोप (स० पु०) द्वारं गोपायति गुप-अण् । द्वार-पाल ।

द्वारचार (स० पु०) विधाहको एक रीति जो बरातके लड़कीवालेके दरवाजे पर पहुँचने पर होती है ।

द्वारद्विकारि (हि० स्त्री०) १ विवाहमें एक रीति । जब विवाहका वर वधू समेत अपने घर आता है, तब कोह-बरके दरवाजे पर उसकी बहन उसकी राहकी रोकती है । ऐसे समय जब वर उसे कुछ नेम दे देता है, तब वह राह छोड़ देती है । २ द्वारद्विकारिमें दिये जानेका नेम ।

द्वारदातु (स० पु०) द्वारं ददाति दा-तुन् । भूमिसहृद्वत् ।

द्वारदाह (स० पु०) १ शाकहल । २ भूमिसहृद्वत् ।

द्वारप (स० पु०) द्वारं पाति पा-क । १ द्वाररक्षक । २ विष्णु ।

द्वारपण्डित (स० पु०) वह प्रधान पण्डित जो किसी राजाके दरबारमें रहते हो ।

द्वारपति (स० पु०) द्वारस्य पतिः इ-तत् । द्वारपाल ।

द्वारपाल (स० पु०) द्वारं पालयतीति पालि-अण् । १ द्वाररक्षक । इसका पर्याय—प्रतीद्वार, दास्य, दास्यित, दमक, द्वेजधारक, दीर्घाधिक, वसक, गवाँट, दण्डवाही, द्वारस्य, चत्ता, द्वारपालक, दोवारिक, पैता, उत्तारक और दण्डी है । दौवारिक देखो ।

२ तन्त्रोक्त देवताभेद, द्वाररक्षक, देवता । इन देवताओंकी पूजा पहले को जाती है । ३ तोर्थभेद । महाभारतमें इन चरित्रोंके किनारे लिखा है । इसमें स्नान दानादि करनेसे पवित्र होम यज्ञका फल होता है ।

द्वारपालक (स० पु०) पालयतीति पालि-अण् । द्वारपालक द्वारपाल-स्वार्थे कन् । द्वारपाल ।

द्वारपालिक (स० पु०) द्वारपाल्या अपत्यं द्वारपाली रैवत्यादित्वात् ठक । द्वारपालीका अपत्य, द्वारपालकी सन्तति ।

द्वारपिण्डी (स० स्त्री०) द्वारस्य पिण्डी पिण्डिकेव । देहसो, लोढ़ी, दहलोज ।

द्वारपूजा (हि० स्त्री०) १ विवाहमें एक कृत्य । जब बरातके साथ वर पहने पहन आता है, तब कन्यावाले के द्वार पर यह कृत्य किया जाता है । इसमें कन्याका

पिता द्वार पर स्थापित कलश आदिका पूजन करके अपने दृष्ट मित्रों सहित वरकी उतारता और मधुपर्क देता है । २ जैनियोंको एक पूजा ।

द्वारवलिभुज (स० पु०) द्वारदत्तं वलिं भुंक्ते भुज-क्तिङ् ।

१ वक, बगला । २ काक, कौवा ।

द्वारयन्त्र (स० स्त्री०) द्वारयन्त्रकं यन्त्रं मन्त्रलो० कर्मधा० । तानक, ताना ।

द्वारवती (स० स्त्री०) द्वाराणि सन्त्यत्र, या चतुर्वर्णानां मोक्षद्वाराणि सन्त्यत्र द्वारा मतुप. मस्य वः । द्वारका । इसका पर्याय—द्वारका, द्वारवती, वनमालिनी, द्वारिका, पवित्रनगरी और द्वारकपुरी है । इस पुरीके विषयमें ब्रह्मवैवर्तपुराणमें श्रीकृष्णके जन्मखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

श्रीकृष्णने समुद्रके पास पहुँचकर उसने कहा था, 'हे समुद्र ! मैं यहाँ एक पुरी बनाना चाहता हूँ, इसलिये तुम एकसौ योजन विस्तृत एक स्थल प्रदान करो, पीछे मैं तुम्हें प्रत्यर्पण कर दूँगा ।' इस तरह समुद्रके किनारे स्थल पा कर श्रीकृष्णने विम्बकर्मको प्रत्यस्त प्रायश्चर्य-जनक यथा सुदृढ़ पुरी बनानेकी आज्ञा दी । इस पर विम्बकर्मने श्रीकृष्णसे कहा, 'हे भगवन् ! किस प्रकारकी पुरी निर्माण करूँगा ।' श्रीकृष्णने कहा, कि एक ऐसा समनोहर पुरी बनाओ जो एक सौ योजन विस्तृत हो और जिसमें पद्मगादि मणि जड़ों हुई हों । कुबेरके भेजे हुए ० लाख यज्ञों और ग्रन्थके भेजे हुए वेतालको सहायतासे विम्बकर्मने एक पूर्व पुरी निर्माण की । स्वर्ग वा मर्त्यमें इस तरहकी मनोहर नगरी और कहीं नहीं थी । इस पुरीके तेजसे सूर्य भी पराजित हुए थे । यह तोर्थमें एक प्रधान तोर्थ है ।

इस द्वारका-पिण्डतोर्थके जैसा और दूसरा कोई तोर्थ नहीं है । यह सभी तोर्थोंसे श्रेष्ठ तथा पुण्यप्रद है । इस पुरीमें प्रवेश करनेसे ही सब प्रकारके जन्मबन्धन खण्डन हो जाते हैं । यह तोर्थ दान, देवतापूजा तथा गन्नादि तोर्थोंसे चतुर्गुण फलदायक है ।

हरिवंशके ११६वें अध्यायमें द्वारकापुरीका विषय विशेष रूपसे वर्णित है । हरिवंशमें एक जगह लिखा है, कि जहाँ चारों वर्षोंके समस्त द्वार विद्यमान हैं, जहाँ

जानेने भारा वन मोचलास करीत है। ऐसी पुरीका नाम लखवेटो पन्थिनेने चतुर्वर्षके मोच दार समभ कर दारवती वना है।

यह पुरी घोटलानेमिने एक है। यही भगवती हस्तिनोके कथने विराजती है। (देवीभाग-२४॥८)। पुरी पर ओ ७ मोचटाविका पुरी है जमनेने दारका एक है।

“शवीषा ययुः माता दार्वा कागो भवमिका।

पुरा शावरती चैव गते ता मोचलाविका।

एतच्छ्रुत्वा वीर्यं मयै न तावदेते ददायनः॥

पुरी शावरती विष्णोः पापज्योतिर्विनिगा।

मुक्तिदा एताः पद्मं एकं गणिताः श्रुतेः॥”

(भृगुविरचय)

देवतायेने पयोधरा, मधुरा, दारवती पादिको मयगा मोच चैवमि को है। इनमि शावरती पुरी यो कथ्य पापज्योति गहके ऊपर धारय किये हुए है।

शाका देवी।

दारवर्धन (मं० पु०) दार, घाटक।

दारहल (मं० पु०) कथ्यविष्णो, कागो घोषल।

दारगाथा (मं० स्त्री०) दारव्य गाथा ६-तत्। दारका पचवच, दरवर्धिका भाग।

दारमसुद्ध—महिषुरा शब्दके चलागंत वसन त्रिलोका एक प्राचीन महर। इसका धर्मात्मान नाम हनेविदु है। यह चला० ११°१२' उ० पोर देशा० ७१°०' पू० मालावर देशमे ८-तमने १८-मोल दक्षिण-पश्चिममे चमलित है। लोक-मं-द्वारा चला० ११२४ है। १०४० ई० मे ले कर १३१० ई० तक इस लहरने “कोयमल वल्लभ” नामक देवमिरियादय-बंसीय एक दायामे प्रभुत पाकज्योति शब्द किया था। इसी लहरने एक लोकोकी शाखामो दो। दक्षिण मे लखवेटो या चेदि राजाकीके चलीन दो मो लख लोकी-का प्रभाव कम लही था। रोदक वल्लभ हैको। मघाट है। कि इस बंसेके प्रतिकरना राजा दल का कोयमलमे इस लहरको लापिन किया। चेदवामल कायकाल नामक लापिन दक्षिणमि इसका शाखकाल ८८६ ई० मे १०४१ ई० तक चला हुआ है। १३१० ई० मे लोकी-का लोकी-का नामका इस बंसेके १० ई० राजाके इस लहरका

कोय बंसेका किया। इसी काय दलके लहरके लकोके मिलानेचने दकोकी लहरके लोकोके लोकोके लोकोके है। लोकी-लहरमे इस लहरमे एक लहरा पोर चलि दलक मिथ्याकार्यमिदित मिथ पोर चलि दल मन्दिर लोकोके किया जिनमेने कोयामेयर का मन्दिर मयमे लहरा है। मा-मीय चालिका-मिथ्यके इतिहासमेयर का मुंमनमे इस मन्दिरके काककायको विमिर मयमा को है। मन्दिरको लम्बाई २०० फुट पोर लम्बाई २५ फुट है। इनके लमी पयव मयम-पयव मयोवे लमकोने पोर चलिमे है। मन्दिरके एक कटिबममे दो हजार हावा मोटे हुए है। यह ८०० फुट लम्बा है। छोटे मन्दिरमे लोकीमेयर नामक विष्णुकी प्रतिमा है। इनके ऊपर एक पादि मे लम्बा को जानने छोड़े दिन हुए यह लहर लहर को गया है। १३१० ई० मे दिओमराट-चलादको विमजोके मेलावति मानिक कापुर पोर क्षाता प्राचीने दारमसुद्ध पर पाकमल किया था पोर ११मे वरमे लोकी-मिहर किया था। कोयमल वल्लभामे मयमे लोकी वरमे लोकीमोदामुव लहरमे लहरामो लापिन को। इनके निवट लोके चाम पोर चालिकाकीके लोकोके लोकोके विचलान है।

दारव्य (मं० पु०) दारव्य दारका ६-तत्। दारव्य-लुथ, दरवर्धिका पारका चंभा।

दारव्य (मं० पु०) दारि निजमोनि व्या-व। १ दारव्य।

(नि०) १ दारव्य नाम, जो दारव्य पर चेका है।

दार (दि० पु०) १ दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

दार (दि० पु०) दार, दरवाजा, घाटक। २ दार, दार।

हारिक (मं० पु०) हारि पाण्यत्वेनास्यस्य ठन् । हारि-
पाण्य, दरवान ।

हारिका (सं० स्त्री०) प्रशस्तानि हाराणि सन्ध्यायां ठन्-
टाप्, च । हारकापुरी ।

हारिकादास—एक हिन्दी-कवि । इन्होंने मम्बत् १८२१-
के पूर्व माधयनिदानभाषा नामक एक वैद्यक ग्रन्थकी
रचना की ।

हारिकामसाद—१ हिन्दीके एक कवि । ये ब्राह्मण-जातिक
थे । इन्होंने चौमालवाटिका नामक एक पुस्तक
लिखी है ।

२ हिन्दीके एक कवि । ये खटवारा जिला बांदाके
निवासी तथा कायस्थजातिके थे । इनका जन्म संवत्
१८२४में हुआ था । ये स्वरसम्बोधिनौ और रेखता-
रामायण नामक दो ग्रन्थ लिख गये हैं ।

हारिकेश—एक हिन्दी कवि । इनकी कविता सुमधुर
तथा सराहनीय होती थी । उन्होंने 'हारिकेशजीकी
भावना' नामक एक ग्रन्थ लिखा है ।

हारिन् (सं० त्रि०) हारि पाण्यतया भस्यस्येति इनि ।
-१ हारिपास । (त्रि०) २ हारयुत, जिसमें दरवाजा हो ।
हार्य (सं० त्रि०) हारि भवः यत् । हारिभव, जो दर-
वाजे पर है ।

हार्वती (सं० स्त्री०) हारवती ।

हाल (हि० पु०) इवाक देखो ।

हानवन्द (हि० पु०) इवाकबंद देखो ।

हालो (हि० स्त्री०) इवाकी देखो ।

हाविंश (सं० त्रि०) हाविंशतिः पूरणः ङट् । हाविंशति
संख्याका पूरण, बाईसवा ।

हाविंशति (मं० स्त्री०) हाधिका विंशतिः होच विंश-
तय इति वा भान्, बहुल्येऽपि एकवचनं । १ दो अधिक
विंशति, बाईसकी संख्या, २२ । २ तत् संख्यायुक्त, जो
संख्यामें बीस और दो हो, बाईस ।

हाविंशतितम (सं० त्रि०) हाविंशत्याः पूरणः पूरणे
तमप् । हाविंश संख्याका पूरण, बाईसवा ।

हाविंशतिधा (मं० प्रथ०) हाविंशति विधाधे-धा ।
हाविंशति प्रकार, बाईस तरहका ।

हापटि (मं० त्रि०) हापटि पूरणे ङट् । हापटि संख्या-
का पूरण, बासठवा ।

हापटि (सं० स्त्री०) हाधिका पटिः । १ दो अधिक पटि,
बासठकी संख्या, ६२ । २ तत् संख्यायुक्त, जो गन्तीमें
साठ और दो हो, बासठ ।

हापटितम (सं० त्रि०) हापट्याः पूरणः पूरणे तमप् ।
द्विपटि संख्याका पूरण, बासठवा ।

हासप्रति (सं० त्रि०) हासप्रतिः पूरणः ङट् । हासप्रतिका
पूरण, बहत्तरवा ।

हासप्रति (मं० स्त्री०) हाधिका सप्रतिः । १ बह संख्या
जो सत्तरसे दो अधिक हो, बहत्तरकी संख्या, ७२ ।

(त्रि०) हासप्रति प्रमाणमस्य ठन्, हासप्रत्याः पूरणः
पूरणे तमप् । २ हासप्रतितम, बहत्तरवा ।

हास्य (मं० पु०) हारि तिष्ठतीति ह्या-क खपरे शरि वा
विसर्गलोपे वक्तव्यः । पा ८।१।३६ । इति विकल्पो
विसर्गलोपः । हारिपास, दरवान ।

हासित्य (सं० पु०) हारि स्थितः विसर्गस्य पाक्षिकलोपः ।
हारिपास ।

हासित्यदर्शक (सं० पु०) पश्यतीति दृश्यन्तु, स, हासित्यः
सम् दर्शकः । दीवारिक, हारिपास ।

हि (मं० त्रि०) हित्व संख्या, दो । दो वाचक शब्द ये हैं,—
पच, नदीकुल, पचिधारा, रामपुत्रः पचु, हस्त, स्तन,
सहचर, इन्द्राग्नि, नारदपर्वत, पश्चिमीकुमार और
भार्यापति ।

दिक (सं० त्रि०) हाभ्यां कायतोति कौ-क । १ हय, दो ।
द्वितीयेन रूपेण यद्वयमिति कन् पूरणप्रत्ययस्य च लुक् ।

२- द्वितीयक, दूसरा । ३- द्वयोरवयवः दो अवयवों का
यस्य कन् । ३- हित्व, दो बार, दोहरा । ४- जिसमें
दो अवयव हों । (पु०) दो को ककारो यत् । ५- काक,
कौवा । ६- चकवाक, चकवा ।

दिककार (सं० पु०) दो ककारो ककारवर्धौ वत् ।
१ काक, कौवा । २ कोक, चकवा ।

दिककुद (सं० पु०) दो ककुदो यस्य । कट्ट, कंट ।

दिकर (सं० त्रि०) दो करोति ङट् । १ हित्व संख्या-
न्वितकारक । दो कर्त्तों यस्य । २ दिभुज, दो भुजा । ३-
करद्वय, दो हाथ ।

दिकमक (सं० त्रि०) जिसके दो कर्म हो ।

दिकस (सं० पु०) हन्दिःशस्त्रं वा पिशुनं दो मात्राचौका

द्विगुणाकृत (स० त्रि०) द्विगुणं कर्षणं कृतं डाचं ।
(संख्यायाश्च गुणान्तायः । पा ५।४।५८) वारत्रयकर्षित
तेन, जो जमीन दो बार जोतो गई हो ।

द्विगुणाकर्ष (स० त्रि०) द्विगुणो कर्षो लक्षणमस्य
'कर्षो लक्षणस्य' इति कर्षं शब्द परे पूर्वस्य दोषः । दो
हारा गुणित, दोसे गुणा किया हुआ ।

द्विगुणित (स० त्रि०) द्वाभ्यां गुणितः । १ दोसे गुणा
किया हुआ, जिसे दुगना किया हो । २ दुना, दुगुना ।

द्विघटिका (स० स्त्री०) दो घड़ियोंके हिसाबसे निकला
हुआ सुहरत । यह सुहरत होराके अनुसार निकाला जाता
है । रात दिनको साठ घड़ियां दो दो घड़ियोंमें विभक्त
की जाती हैं और पुनः शुभाशुभका विचार किया जाता
है । इस सुहरतमें दिनका विचार नहीं होता, सब दिन
सब औरको यात्रा हो सकती है । यह सप्त जगह काममें
लाया जाता है, जहां कई दिन ठहरने या रुकनेका
समय नहीं रहता ।

द्विचक्र (स० पु०) १ दानवमंद, एक भस्त्रुरका नाम ।
(त्रि०) २ दो चक्रयुक्त, जिसमें दो चक्र या पहिये
हों ।

द्विचत्वारिंश (स० त्रि०) द्विचत्वारिंशतः पूरणः षट् ।
जिस संख्या द्वारा ४२ संख्या पूरण हो, बयालीसवा ।
द्विचत्वारिंशत् (स० स्त्री०) द्वाधिका चत्वारिंशत् । १
दो अधिक चत्वारिंशत्, बयालीसकी संख्या, ४२ । (त्रि०)
द्विचत्वारिंशत्तम, बयालीसवा ।

द्विचरण (स० त्रि०) दो चरणो यस्य । १ द्विपादशुक्र, जिसके
दो पांव हों । (स्त्री०) २ राशिमंद, एक राशिका नाम ।
३ पादद्वय, दो पांव ।

द्विज (स० पु०) द्विजायते सृजते ह्यसौ द्विशब्दः जन-ड
(अथैषधि दृश्यते । पा ३।२।१०१) १ संस्कृत ब्राह्मण,
वह ब्राह्मण जिसका संस्कार हुआ हो ।

ब्राह्मण, चतुर्विध और वैश्य जब यथाविधि संस्कृत
हो जाते अर्थात् जब उनके उपनयनादि संस्कारकार्य
सम्पन्न हो जाते, तब उन्हें द्विज कहते हैं ।

याज्ञवल्क्यमें लिखा है, कि पहले मातापितासे
उत्पन्न, पोछे मोक्षवन्धनसे दितोय जन्म होता है ।
(उपनयन संस्कारको मोक्षवन्धन कहते हैं ।) यह

संस्कार हो जानेसे ब्राह्मण, चतुर्विध और वैश्य द्विज
कहलाते हैं । २ सत्युक्त ब्राह्मण । एक समय प्रस्युरोपनी
वशिष्ठदेवसे पूछा था, 'हे ऋषि ! कैसे ब्राह्मणको दान
देना चाहिये और किस तरह वह दानदाताके उद्धारका
कारण होता है, वह कृपा कर हमें बतालाइये ।' इस
पर वशिष्ठने कहा था कि, 'जिन्हें जाति, कुल, वृत्त
अर्थात् सदाचार, स्वाध्याय और शास्त्रका ज्ञान हो उन्हें
द्विज कहते हैं । हे राजन् ! केवल जाति, कुल और
शास्त्रज्ञानादि द्विजत्वके प्रतिकारण नहीं होते, उपरोक्त
समस्त गुण जिनमें पाये जाय उन्हेंको द्विज कहते हैं ।'
३ दन्त, दांत पहले दांतके गिर जानेसे उसकी जगह
दूसरा दांत निकल जाता है । इसीसे दांतको द्विज कहते
हैं । ४ चण्डज प्राणी । ५ तुल्य वृद्ध, नेपाली धनिया । ६
पक्षी, चिड़िया । ७ चन्द्रमा । पुराणमें लिखा है, कि चन्द्रमा-
की दो बार जन्म हुआ था । एक बार ये पति ऋषिके
पुत्र हुए थे और दूसरो बार समुद्र-मंथनके समय समुद्रसे
निकले थे । ८ सर्प, शीप । (त्रि०) ९ द्विजातमात्र, जो दो
बार उत्पन्न हुआ हो, जिसका जन्म दो बार हुआ हो ।
द्विज—१ हिन्दूके एक कवि । इन्होंने सन् १८३६में
सभाप्रकाश नामक एक पुस्तक लिखी ।

२ एक हिन्दू-कवि । इनका जन्म सन् १८६०में
हुआ और कविता-काल १८८८के लगभग समझना
चाहिए । इन्होंने राधानाथगिरि नामक एक उत्कृष्ट
यन्त्र प्रतुप्राप्त एवं भावपूर्ण बनाया है । इनकी कविता
सच्ची होती थी, उदाहरणार्थ एक गीत देते हैं—

"अमल कमल रम्भ खम्भसे उलटि परे,
गुजर शुभ्र देखी कैरी नवत है ।

सुधा रस पैर कापि सर मचल लारी,
धीकल गुणल कम्बु शोभा वरसत है ।

शुभन गुलाब विम्ब मदन मुकुट कीर,
संवन कमल वंशमा न परसत है ।

द्विज कवि जान कदा रक्षिषा मुजान छपि,
मेरे जान चंद दिग नागिनि छवत है ॥"

द्विजकवि मन्नालाल—एक हिन्दू कवि । ये बनारसके
निवासी थे । इन्होंने प्रमत्तरङ्गस्यंद नामकी एक पुस्तक
लिखी है ।

द्विजवाहन (मं० पु०) द्विजः गन्धुवाहनं यस्य । नारा-
यण, विष्णु ।

द्विजव्रण (सं० पु०) द्विजस्य दन्तस्य व्रणः । दन्तार्बुद,
दांतका एक रोग ।

द्विजशम (सं० पु०) द्विजैः शमः इ-तत् । राजमाय,
बर्बट, भटवर्म । ब्राह्मण इमे नही खाते ।

द्विजयेष्ठ (मं० पु०) द्विजेषु यैष्ठः उत्तम । ब्राह्मणयेष्ठ ।

द्विजसेवक (सं० पु०) द्विजानां सेवकः इ-तत् । १ शूद्र ।

(त्रि०) २ द्विजमेविमात्र, द्विजोको सेवा करनेवाला ।

द्विजनक्षम (सं० पु०) द्विजेषु सक्षमः । द्विजयेष्ठ ।

द्विजच्छेद (सं० पु०) पन्थायहृत्, टाकका पेड़ ।

द्विजा (सं० स्त्री०) द्विर्जायति जन-उ, टाप् । १ ऐणका
नामक गन्धद्रव्य, संभान्का बोज । इसका पर्याय—

ऐणका, राजमुत्री, नन्दिनी, कपिला, टिला, मल्लगन्धा,

पाण्डुपत्री, कौन्ती घोर इऐणकाइ है । २ भार्गी, भारङ्गे ।

३ पालङ्गो, पालकका शाक । यह एक बार काटि जाने

पर फिर होता है, इसीसे इसका नाम द्विजा पड़ा है ।

स्त्रियां टाप् । ४ द्विजपत्नी, ब्राह्मण या द्विजकी स्त्री ।

द्विजाग्रज (मं० पु०) ब्राह्मण ।

द्विजाग्र (सं० पु०) द्विजेषु अग्रः । विप्र, ब्राह्मण ।

द्विजाङ्गिका (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी ।

द्विजाङ्गो (सं० पु०) द्विजस्य पक्षिणोऽङ्गमिव अङ्गं यस्य,

डीप, कटुका, कुटकी ।

द्विजाति (सं० पु०) द्वे जाते यस्य । १ ब्राह्मण । २ ब्राह्मण,

अत्रिय घोर वैश्य । ३ अष्टज । ४ दन्त, दांत । ५ पक्षी ।

द्विजातिमुख्य (सं० पु०) द्विजातिषु मुख्यः । ब्राह्मण-
येष्ठ ।

द्विजानि (सं० पु०) द्विजाया यस्य, बहुव्रीहि जायायाः

जादेः । द्विभार्यका, वह पुरुष जिसके दो स्त्रियां हों ।

द्विजायनी (मं० स्त्री०) द्विजः अय्यते प्रायतेऽनयेति चय

कारणे व्युट् । स्त्रियां डीप् । यज्ञोपवीत ।

द्विजालय (सं० पु०) द्विजानां पक्षिणां पालयः । १ तरु-

कोटर, पेड़को खोखली जगह जिसमें चिड़ियां अपना

धामला बनाती हैं । २ ब्राह्मणोंका घर ।

द्विजिह्व (मं० पु०) द्वे जिह्वे यस्य । १ सर्प, साँप । २

सूचक, सुगन्धधर । ३ खल, दुष्ट । ४ घोर, घोर । ५

दुःसाध्य । ६ रोगविशेष, एक रोग । (त्रि०) ७ द्विजिह्वा-
विशिष्ट, जिसमें दो जीभें हों ।

द्विजिन्द्र (सं० पु०) द्विज इन्द्र इव उपमित समासः ।

१ द्विजयेष्ठ, ब्राह्मण । द्विजानां इन्द्रः इ-तत् । २ चन्द्रमा ।

३ कपूर, कपूर । पलोन्द्र, गन्ध ।

द्विजिन्द्रक (मं० पु०) निम्ब, वृक्ष, नौबूका पेड़ ।

द्विजिश् (मं० पु०) द्विजानां ईशः इ-तत् । १ गरुड़ । २

चन्द्रमा । ३ कपूर । ४ द्विजेश्वर, ब्राह्मण ।

द्विजोत्तम (सं० पु०) द्विजेषु उत्तमः । ब्राह्मण ।

द्विजोपासक (सं० पु०) द्विजसुपासोः उप-पास-ण्डुल,

द्विजसेवक, शूद्र ।

द्विट्सेवा (सं० स्त्री०) द्विषो सेवा । शत्रुकी सेवा ।

द्विट्सेवो (सं० त्रि०) द्विट्सेवा विद्यतेऽस्य द्विनि । राज-

शत्रुसेवा जो राजाके शत्रु से मिला हो या मित्रता

रखता हो । मनुने ऐसे मनुष्यका टंङ वध लिखा है ।

द्विट (मं० पु०) द्वे ठशरो नेत्रनाकारो यस्य । १

विभय । २ शङ्किताय, खाका । (स्त्री०) ३ दो ठकार ।

द्वित (मं० पु०) १ देवभेद, एक देवताका नाम । २

अपिभेद, एक श्रष्टिका नाम । इनके तीन भाई हैं,

एकत, द्वित और त्रित ।

द्वितय (सं० स्त्री०) द्वे अवयवो यस्य द्विपवयवे तयप, ।

१ हय, दोकी संख्या । (त्रि०) २ द्वित्वसंख्याविशिष्ट,

जो दोसे मिल कर बना हो । ३ दोहरा ।

द्वितीय (सं० त्रि०) द्वयोः पूरणं द्वि-तायं (द्वेतीयः ।

पा ५।२।५४) १ हय, दूसरा । (पु०) २ पुत्र, बेटा ।

आत्मा ही पुत्र रूपसे जन्मग्रहण करती है, इसीसे

द्वितीय शब्दका अर्थ पुत्र हुआ है ।

द्वितीयक (मं० स्त्री०) द्वितीयेन रूपेण प्रथमं कन् । १

वैवादिक द्वितीयरूप द्वारा ग्रहण । द्वितीयेऽङ्कि भवः

कन् । २ द्वितीय दिनभय रोग, वह रोग जो प्रत्येक

दूधरे दिन होता हो । (त्रि०) ३ हय, दूसरा ।

द्वितीयत्रिकला (सं० स्त्री०) द्वितीया त्रिकला । गाभारी,

एक बड़ा पेड़ ।

द्वितीया (सं० स्त्री०) द्वितीय-टाप् । १ गेहिनो, स्त्री । २

तिथिविशेष, प्रायश्चित्त पक्षकी दूसरी तिथि, दूज । अश्विनी-

कुमारका जन्म द्वितीया तिथिमें हुआ था, इसीसे यह

दिनवाहन (स० पु०) दिजः गरुडवाहनं यस्य । नारा-
यण, विष्णु ।

दिजधन (स० पु०) दिजस्य दन्तस्य धनः । दन्तार्बुद,
दाँतका एक रोग ।

दिजशम (स० पु०) दिजैः शमः ३-तत् । राजमाप,
बर्नट, भटवाम । ब्राह्मण इमे नहीं खाते ।

दिजयेष्ठ (स० पु०) दिजेषु यैष्ठः ७-तत् । ब्राह्मणयैष्ठ ।

दिजसेवक (स० पु०) दिजानां सेवकः ६-तत् । १ शूद्र ।
(त्रि०) २ दिजसेविमात्र, दिजोंको सेवा करनेवाला ।

दिजसत्तम (स० पु०) दिजेषु सत्तमः । दिजयैष्ठ ।

दिजस्त्रेष्ठ (स० पु०) पलायस्त्रेष्ठ, टाकका पेड़ ।

दिजा (स० स्त्री०) दिजायते जन-उ, टाप- । १ रेणुका
नामक गन्धद्रव्य, संभानूका बोज । इसका पर्याय—
रेणुका, राजपुत्री, नन्दिनी, कपिला, दिजा, भस्मगन्धा,
पाण्डुपत्नी, कीमती चीर हरणकाष्ठ है । २ भार्गी, भारङ्गी ।

३ पालङ्गो, पालकका शक । यह एक बार काटे जाने
पर फिर होता है, इसीसे इसका नाम दिजा पड़ा है ।
स्त्रियां टाप- । ४ दिजपत्नी, ब्राह्मण या दिजकी स्त्री ।

दिजायज (स० पु०) ब्राह्मण ।

दिजाय (स० पु०) दिजेषु भयः । विप्र, ब्राह्मण ।

दिजाङ्गिका (स० स्त्री०) कट्टकी, कुटकी ।

दिजाङ्गी (स० पु०) दिजस्य पक्षिणोऽङ्गमिव बह्वं यस्या,
डीप- , कट्टका, कुटकी ।

दिजाति (स० पु०) द्वे जाती यस्य । १ ब्राह्मण । २ ब्राह्मण,
त्रिविध चीर वैश्य । ३ ऋजुज । ४ दन्त, दाँत । ५ पक्षी ।

दिजातिमुख्य (स० पु०) दिजातिषु मुख्यः । ब्राह्मण-
यैष्ठ ।

दिजानि (स० पु०) दिजाया यस्य, बहुव्रीहि जायायाः
आदेशः । हिमार्क, वह पुरुष जिसकी दो स्त्रियां हों ।

दिजायनो (स० स्त्री०) दिजः अय्यते जायतेऽनयेति भय
कारणे लुप्त- । स्त्रियां डीप- । यत्रोपवीत ।

दिजास्य (स० पु०) दिजानां पक्षिणां चालयः । १ तर-
कोटर, पेड़की खोखली जगह जिसमें चिड़ियां अपना
धामला बनाती हैं । २ ब्राह्मणोंका घर ।

दिजस्र (स० पु०) द्वे जिह्वे यस्य । १ सर्प, साँप । २
सूचक, चुगलखोर । ३ खन्न, दुष्ट । ४ चीर, चीर । ५

दुःसाध्य । ६ रोगविशेष, एक रोग । (त्रि०) ७ दिजिह्वा-
विशिष्ट, जिसे दो जीभें हों ।

दिजेन्द्र (स० पु०) दिज इन्द्र इव उपमित मत्तमः ।

१ दिजयेष्ठ, ब्राह्मण । दिजानां इन्द्रः ६-तत् । २ चन्द्रमा ।
३ कपूर, कपूर । पञ्चोन्द्र, गरुड ।

दिजेन्द्रक (स० पु०) निम्ब-वृक्ष, नौवृका पेड़ ।

दिजेश (स० पु०) दिजानां ईशः ६-तत् । १ गरुड । २
चन्द्रमा । ३ कपूर । ४ दिजेश्वर, ब्राह्मण ।

दिजोत्तम (स० पु०) दिजेषु उत्तमः । ब्राह्मण ।

दिजोपासक (स० पु०) दिजमुपास्यो लप-पास-वृक्ष, ।
दिजसेवक, शूद्र ।

दिट् सेवा (स० स्त्री०) दिटो सेवा । शत्रुकी सेवा ।

दिट् सेवो (स० त्रि०) दिट् सेवा विद्यतेऽस्य इति । राज-
शत्रु सेवो, जो राजाके शत्रु से मित्र हो या मित्रता
रखता हो । मनुने ऐसे मनुष्यका दण्ड बध लिखा है ।

दिट (स० पु०) द्वे टकारौ लेखनाकारौ यस्य । १
विभर्ग । २ चञ्जिजाया, खाना । (स्त्री०) ३ दो ठकार ।

दित (स० पु०) १ देवभेदः, एक देवताका नाम । २
ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम । इनके तीन भाई हैं,
एकत, दित घोर त्रित ।

दितय (स० स्त्री०) द्वे भवयवो यस्य द्विषयध्वे तयप- ।
१ हय, दोकी संख्या । (त्रि०) २ द्वित्वसंख्याविशिष्ट,
जो दोसे मिल कर बना हो । ३ दोहरा ।

द्वितीय (स० त्रि०) द्वयोः पूर्णं द्वितीयः (द्वेतीयः)
पा ३।२।१४ । १ हय, दूसरा । (पु०) २ पुत्र, वेदा ।
भाष्या ही पुत्र रूपसे लक्ष्यकरण करती हैं, इसीसे
द्वितीय शब्दका अर्थ पुत्र हुआ है ।

द्वितीयक (स० स्त्री०) द्वितीयेन रूपेण ग्रहणं कन् । १
चंद्रादिके द्वितीयरूप दाग ग्रहण । द्वितीयेऽङ्गि भवः
कन् । २ द्वितीय दिनभव रोग, वह रोग जो प्रत्येक
दूसरे दिन होता हो । (त्रि०) ३ हय, दूसरा ।

द्वितीयविकला (स० स्त्री०) द्वितीया विकला । माधारी,
एक बड़ा पेड़ ।

द्वितीय (स० स्त्री०) द्वितीय-टाप- । १ गेहिनो, स्त्री । २
तिथिविशेष, प्रत्येक पक्षकी दूसरी तिथि, दूज । पश्चिमो-
त्तुमारका अन्य द्वितीया तिथिमें हुआ था, इसीसे यह

इय कर्पितचेतः, वद, खेत जो दो बार जोता गया हो ।

द्वितीयामा (स० स्त्री०) द्वितीया हरिद्रावत् भामातीति भामा-क । दाहहरिद्रा, दाहहन्दी ।

द्वितीयायम (म० पु०) द्वितीयः आयमः । गाहस्य आयम । मनुने लिखा है कि जीवितकालके द्वितीयभागमें विवाहादि करके घरमें रहें, इसी अवस्थाका नाम द्वितीयायम है । यह द्वितीयायम भयानक प्रलोभनका स्थान है । जो इस आयममें निर्लिप्त भावसे आयमधर्मका प्रतिपालन करते हुए कालव्यतीत करते हैं वे ही श्रेष्ठ हैं । भविष्यत्में वे दूसरे दूसरे आयमको सज्जमें उत्तीर्ण कर संचारवन्धनसे मुक्त हो सकते हैं । इस आयममें वनिष्ठ इन्द्रियां तरह तरहके उत्पात भजाने लगती हैं । आत्मा-सुखार आयमधर्मे प्रतिपालन करनेसे-सब प्रकारके पुण्य काम होते हैं । जिस दिनसे हम आयमधर्मका व्यतिक्रम हुआ है, उसी दिनसे भार्य जातिको प्रकृत भवननि धारभ हुई है । ब्रह्मचर्यायममें जो शिष्टा प्राप्त होती है, द्वितीयायममें उसके कार्यक्षेत्रमें जो सम्यक् रूपसे उत्तीर्ण हो सकते हैं, वे ही प्रकृत मनुष्य हैं ।

शास्त्र और ऋषिवाक्यमें भविष्यलित भक्ति रख कर उमका अनुष्ठान करनेसे ही आयमधर्मका प्रतिपालन हो सकता है ।

द्वितीयं (स० त्रि०) द्वितीयो भागो याज्ञतयाऽप्युत्तरा हनि । पहिलभागयाहक ।

द्वि (स० त्रि०) हो वा त्रयो वा विकल्पायै डव् । (बृहन्मोक्षो संक्षेपे भजवद्गुणपाद । पा ५।४।७१) नित्यवह्वचनान्तोऽयं । दो वा तीन ।

द्वि (स० स्त्री०) द्वयोर्भावः । १ दोका भाव । २ दोहरी होनेका भाव ।

द्विदण्डि (स० चय०) दो दण्डो यस्मिन् प्रहरणे इव समासान्तः । दण्डद्वययुक्त, प्रहरण, मिले हुए दो छँडोंका प्रहार ।

द्विदण्डादि (स० पु०) पाणिन्युक्त गणविशेष । ग्रहणार्थका बोध होनेसे अव्ययोभाव समासमें द्विदण्ड आदि कर इव-समासान्त होता है । द्विदण्डि, द्विसुपलि, उभाश्चलि, उभायाश्चलि, उभादण्डि, उभायादण्डि, उभाहस्ति, उभायाहस्ति, उभाकर्णि, उभायाकर्णि, उभापाणि, उभायापाणि,

उभावाह, उभायावाह, एकपदि, मोक्षपदि, चात्वादि, सणदि, निरुचकचि, संहतपुच्छि और पन्तेवासि ये ही द्विदण्डादि गण हैं ।

द्विदत् (स० त्रि०) दो दत्तो यस्य, दन्तदण्डस्य दट आदेशः (धवसि दन्तस्य दट । पा ५।४।१४१) दन्तद्वय-युक्त छपादि, वक्ष वक्ष्हाके केवल दा दाति निकले हों ।

द्विदल (स० त्रि०) द्वे दले यस्य । १ द्विधाछायायुक्त, जिसमें दो दल वा पिंड हों । २ द्विपत्रयुक्त कमल, जिसमें दो पत्र हों । ३ जिसमें दो पटल या पखड़ियां हों । (पु०) ४ वक्ष चक्ष जिसमें दो दल हों, दाक्ष ।

द्विदय (स० त्रि०) द्वाधिका द्विसहिता वा दयसंख्या येषां छप् समासान्तः । द्विसहित दय संख्यायुक्त, जो संख्यामें दयसे दो अधिक हों, बारह ।

द्विदाम्नी (स० स्त्री०) द्वे दामनी चक्षुःसाधने यस्याः ततो हौय । रज्जुद्वययुक्ता गाम्नी, वक्ष गाय जो दो रखियोंसे बंधी हो । इस तरहकी गाय नटखट होती है ।

द्विदिव (स० पु०) द्वाभ्यां दिवा दिनभ्यां निवृत्तादि तद्वि-तार्थे द्वियुः । द्विदिन साध्य द्विरात्र यागभेद, वक्ष यज्ञ जो दो दिनोंमें समाप्त होता हो ।

द्विदेवत (स० त्रि०) द्वे देवते यस्य । १ द्विदेवताक चर्च-प्रभृति, दो देवताओंसे सम्बन्ध रखनेवाला चर्च आदि । २ जिसके दो देवता हों । (पु०) ३ इन्द्राग्नी देवताके विशाखानक्षत्र ।

द्विदेह (स० पु०) द्वाभ्यां देहोऽस्येति, गजाननत्वादेवान्य तथात्वं । गणेश । इनका सिर एक बार कट गया था, फिर हाथीका सिर जोड़ा गया था । इससे द्विदेहसे गणेश समझा जाता है ।

द्विहादय (म० पु०) १ द्वितीयः हादयश्च । यर और कन्याकी द्वितीय और हादय राशिभेद ।

ज्योतिष्मत्त्वमे लिखा है, कि जब बरके जन्मनमन्वे कन्याका जन्मलग्न दूसरे पड़ने और कन्याके जन्मलग्नसे बरका जन्मलग्न बारहवें पड़ने, तो वह अत्यन्त निन्दनीय है । इस हादयरश्मिमें यदि विवाह हो तो वह बहुत अशुभ होता है । (स्त्री०) २ द्वितीय और हादय, दूसरा धनस्थान और बारहवां व्ययस्थान ।

द्विधा (स० चय०) द्वि-प्रकारे धाव् । १ द्वि प्रकार, दो तरहसे । २ दो खण्डोंमें, दो टुकड़ोंमें ।

तिथि शुभकर मानी गई है। इस तिथिमें जो पुण्यकार मे कर भगिनोकुमारके उद्देश्यसे एक वर्ष तक व्रत करते हैं, वे भगिनोकुमार सरोजके रूप और गुणसम्पन्न होते हैं।

रघुदत्तोपा—आषाढमासको शुक्रदत्तोपाको रघुदत्तोपा कहते हैं। इस तिथिमें पुण्यानन्तका योग होनेसे शुभ होता है। यदि नक्षत्रका योग न हो, तो केवल तिथिमें ही यह उत्पन्न करना चाहिये। इसमें भद्राके साथ राम और लक्ष्मणकी रथ पर विराते हैं और पीछे धनैक ब्राह्मणोंकी घिनाते घिसाते हैं। रथवाजा देखो।

मनोरघु-दत्तोपा—आषाढमासको शुक्रादत्तोपाका नाम मनोरघु दत्तोपा है। इस तिथिमें दिनमें वायुदेवकी पूजा और रातमें चन्द्रोदय होने पर अर्घ्य देना चाहिये। पीछे ब्राह्मणादिको भोजन करा कर पाप भोजन करना चाहिये।

भाद्रदत्तोपा—कार्तिकमासकी शुक्लदत्तोपाका नाम भाद्रदत्तोपा है। इस दिन बहलकी भाईकी पूजा करनी चाहिये। जो नहीं करते, वे सात लक्ष तक भाद्र-हीन रहते हैं। भाई प्रफुल्ल घिसने बहलके हाथसे भोजन करते हैं। इस दिन यम, विजयगुप्त और यम-दूतका पूजन करनेका विधान है। यमकी अर्घ्य देना चाहिये। पूजा और अर्घ्यदान भाई तथा बहल दोनोंकी करना चाहिये।

अर्घ्यमन्त्र—

“ओ एते हि मातंग्यस्त वाहकस्त वामानास्तेष्वहारास्त ।

मातृदत्तोपा इत्यहैरस्मै शरणं कार्यं भगवन् नमस्ते ॥”

प्रक्षाममन्त्र—

“क्षीं धर्मराज ममस्तुभं वसन्ते यमुनामय ।

वाहिनीं किङ्करीं तर्द्धं शृङ्गुष नमोऽस्तु ते ॥”

यमुनाकी पूजा कर नमस्कार करना चाहिये—

“क्षीं यमराज वसन्तेऽस्तु यमुने ओहस्त्रिते ।

वराह भव मे मितं शृङ्गुषि नमोऽस्तु ते ॥”

भाईकी विधवासे समग्र बहल यही मन्त्र पढ़ कर चप देती है—

“मन्त्रागस्तुनामार्द्रं शुद्धं भस्मिहं शुभं ।

श्रीगुरु प्रसादमयं यमुनाया मितेवरा ॥”

बहल यदि बड़ो हो, तो केवल ‘भ्रातृसत्पापनाशार्द्र’ यही कहना चाहिये। (सिद्धिचर) माघमासकी दाना पक्षीको दत्तोपा तिथि सन्तोष है। (सिद्धि देवी)।

दत्तोपा व्रतका विषय चम्पुपुराणमें इस प्रकार लिखा है—दत्तोपा व्रत करनेसे स्वर्गादि फल प्राप्त होता है। पुण्याहारी हो कर दत्तोपा तिथिमें भगिनोकुमारकी पूजा करनेसे रूप, मोभाग्य और नग्नसाध होता है तथा कार्तिकमासकी शुक्रदत्तोपामें यमकी पूजा करनेसे स्वर्गसाध और गरल परिहार होता है। आषाढमासकी शुक्रादत्तोपामें परमेश्वरका अनुष्ठान करना चाहिये। इस व्रतमें विष्णु और लक्ष्मीको एक वर्ष तक पूजा कर प्रतिमाममें शय्या, फल और मोमके उद्देश्यसे समस्त अर्घ्यदान तथा मोमरूपी हरि और लक्ष्मीका पूजन करना पड़ता है। पीछे रातमें घोड़े कोम कर ब्राह्मणकी शय्या, दीपाचमाजन मदन चासन, हथ, पादुक, जलकुम्भ, प्रतिमा और पाव देनेका विधान है। जो छोके साथ इस व्रतका अनुष्ठान करते वे मुक्ति पाते हैं। कार्तिकमासकी शुक्रदत्तोपा तिथिमें कार्ति-व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये। इस तिथिमें गन्नाहाई हो कर व्रतका अनुष्ठान और रामका पूजन करना पड़ता है। वर्ष भर इस प्रकार करनेसे कान्ति, धन्य और पारो-ग्यादि लाभ होता है। वीर्यमासकी शुक्रादत्तोपामें से कर बार दिन तक विष्णुपूजा करना चाहिये। पहले दिन मिठायां, दूसरे दिन लक्ष्मिलक्ष्मी, तीसरे दिन बचने और चौदें दिन सर्वोपपन्न जलसे स्नान करना पड़ता है। लक्ष्म, पद्म, चमत्ता ह्रींकेम इत्यादि नामसे पूजा कर यथाक्रम गंगो, चन्द्र, श्यामल और दन्त इस नामसे पद, नाभि, चक्षु और मस्तकका यथा-क्रम पूजन करना चाहिये। जय तन्म चन्द्रमा उदित रहै, तमो तन्म रातमें भोजन करते हैं। इस प्रकार व्रत करने-से छः मासमें सब पाप दूर हो जाय और वर्षभर फलमें अभीष्ट कामना सिद्ध होती है। पूर्व समयमें देवताधानि यह व्रत किया जा। अन्तः सभीको यह व्रत करना चाहिये। (अमृत ० ११२ अ०)।

दत्तोपाव्रत (अ० ११०) दत्तोपा अर्घ्यमन्त्र हस्त टा. (इति दत्तोपा व्रतवर्णनं इति । वा १११ इति) भार-

‘હય કરિ’ તલ્લે, વહ, હેત જો દો બાર જોતા ગયા હો !

द्वितीयाभा (स० स्त्रो०) द्वितीया हरिद्रावत् अमातीति
आभा-क । दारुहरिद्रा, दारुहृन्दो ।

द्वितीयायम (मं० पु०) द्वितीयः आयमः । गार्हस्थ्य आयमः । मनुने लिखा है कि जीवितकालके द्वितीयभागमें विवाहादि करके घरमें रहे, इसी षयस्थाका नाम द्वितीयायम है । यह द्वितीयायम भयानक प्रलोभनका स्थान है । जो इस आयममें निर्लिप्त भावसे आयमधर्मका प्रतिपालन करते हुए कास व्यतीत करते हैं वे ही यो ठ हैं । भविष्यतमें वे दूसरे दूसरे आयमको सहजमें उत्तीर्ण कर सारवम्भनसे मुक्त हो सकते हैं । इस आयममें वलिष्ठ इन्द्रिया तरह तरहके उत्पात भवानि लगते हैं । श्राव्या-शुभार आयमधर्मे प्रतिपालन करनेसे-सब प्रकारके पुण्य काम होते हैं । जिस दिनसे इस आयमधर्मका व्यक्तिगत हुआ है, उसी दिनसे आर्य जातिको प्रकृत चवननि आरम्भ हुई है । ब्रह्मचर्यायममें जो शिक्षा प्राप्त होती है, द्वितीयायममें उससे कार्यक्षेत्रमें जो सम्यक् रूपसे उत्तीर्ण हो सकते हैं, वे ही प्रकृत मनुष्य हैं ।

शास्त्र और ऋषिवाक्यमें अविवक्षित भक्ति रख कर
‘ससत्का’ अनुष्ठान करनेसे ही आश्वमेधमंका प्रतिपालन
ही सकता है।

द्वितीयम् (स० त्रि०) द्वितीयो भागो याज्ञतयाऽस्तस्य
इति । अर्धभागयाज्ञकः ।

द्वि (स० त्रि०) दो वा त्रयो वा विकल्पाय^१ ङच् ।
 (बहुमीदौ सद्यप्ये भजवहुगणार । पा ५।४।७३) नित्यवद्-
 वचनान्तोऽयं । दो वा तोन ।

‘द्वित्व (स० स्तो०) द्वयोर्भावः । १ दोका भाव । २ दोहरे
होनेका भाव ।

दिदिष्टि (स० अथ०) हो दण्डो यस्मिन् प्रहरणे इव
समासान्तः । दण्डइययुक्तप्रहरणं, मिले हुए दो ढ'लो-
का प्रहार ।

हिदण्डादि (मं० पुं०) पाणिन्युक्त गणविशेष । यदन्त्य-
का बोध होनिषे अन्त्ययोभाव समासमे हिदण्ड पादि कर
इच. समासास्त होता है । हिदण्डि, हिमुषलि, उभाक्षलि,
उभयाक्षलि, उभादण्डि, उमयादण्डि, उभाहस्ति, उभया-
हस्ति, उभाकर्ण, उभयाकर्ण, उभापाणि, उभयापाणि,

उभावाङ्, उभयावाङ्, एकपदि, प्रोहपदि, भाष्यदि,
सपदि, निङ्कुञ्जकणि, संज्ञतपुच्छि शोर भन्तेवासि ये द्वौ
हिदण्डादि गण हैं ।

हिदम् (सं० त्रि०) हो दन्तो यस्य, दन्ताग्रादस्य दृष्ट
आदेयः (वयसि दन्तस्य दृष्ट । पा ५।४।१४१) दन्तदय-
युक्त एवादि, यद् वक्ष्यते केवलम् । दातं निरुक्ते हो ।

हिंदल (स० त्रि०) हे दले यस्य । १ दिमाखायुल, जिसमें दो दल या पिंड हों । २ दिपत्रयुल कमल, जिसमें दो पत्रे हों । ३ जिसमें दो पटल या पल्लवियां हों । (पु०)
४ वक्षःपत्र जिसमें दो दल हों, दास ।

द्विदश (सं० त्रि०) द्वाचिन्ता दिसहिता वा दशसंख्या येषां
 षड्-समासास्तः । दिसहित दश संख्यायुक्त, जो संख्या-
 में दशसे दो अधिक हों, बारह ।

हिदाम्नो (स० स्त्रो०) हे दामनी वत्सलसाधने यस्याः
ततो ङीप् । रज्जुद्वययुक्ता गाम्भो, वह गाय जो दो
रस्त्रियोंसे बंधी हो । इस तरहकी गाय नष्ट होतो है ।

हिदिव (सं० पु०) द्वाभ्यां दिवा दिनाभ्यां निष्ठं तादि तद्धि-
 तार्थं हिगुः । हिदिन साध्य हिरात्र यागभेदे, वक्ष्य यज्ञ
 जो दो दिनेमि समाप्त होता हो ।

हिदेवत (स० त्रि०) ह० देवते यस्य । १ हिदेवताया चर-
प्रभृति, दो देवताओं से सम्बन्ध रखनेवाला चर पादि ।
२ जिसके दा देवता हों । (पु०) ३ इन्द्राग्नी देवताके
विशाखानक्षत्र ।

हिंदेह (सं० पु०) हाभ्यां देहोऽस्येति, गजाननत्वादेवाभ्य
तयात्वं । गणेश । इनका सिर एक बार कट गया था।
फिर हाथीका सिर जोड़ा गया था । इसीसे हिंदेहसे
गणेश समझा जाता है ।

द्विदादश (मं० पु०) १ द्वितीयः द्वादशश्च । वरः चोरः
कन्याकी द्वितीयः चोरः द्वादशः राशिभेदः ।

व्योतिष्मत्त्वमे लिखा है, कि जब वरुणे जन्मलग्नदे कन्याका जन्मलग्न दूसरे पड़े और कन्याके जन्मलग्नसे वरुणा जन्मलग्न बारहवें पड़े, तो वह भाव्यत्त मिन्दुमाय है। इस दादयगणितमें यदि विचार हो तो वह बहुत अशुभ होता है। (को०) २ दितोय और दादय, दूसरा धनस्थान और बारहवां श्रयस्थान।

द्विधा (सं० प्रत्य०) द्वि-प्रकारे धाध् । १ द्वि प्रकार, दो तरहसे । २ दो खण्डोंमें, दो टुकड़ोंमें ।

दिवागति (मं० पु०) दिवा दिवकारा गतिर्यस्य । १ कुशोर, चट्टियाम् । २ गिरुमार । (ति०) ३ दिवकार गतियुक्त, जिसकी चान दो प्रकारकी हो ।

दिधातु (मं० पु०) दि धातु यस्य देवगजदेववत्वादेवास्व तथात् । १ गदग । दिधातु तास्मादि धातुद्रव्ये यत् । (कुं०) २ धातुद्वय, दो धातुओं के मिलने से बनी हुई मिलित धातु । (ति०) ३ जो दो धातुओं के संयोगसे बना हो ।

दिधात्मक (मं० पु०) दिधा धाता यस्य कप् । जाति-कोप, लायकम् ।

दिधान्त्य (मं० पु०) दिधा लिख्यते यत् लिप्य धातौ ध्यात् । १ दिक्षाम् वृष, एक प्रकारका पेड़ । (ति०) २ दिवकार लिट्प्रत्यय, जो दो तरहसे लिखा जा सके ।

दिधन्वक (मं० पु०) दि दितीथो जन्मक इय । हुयर्मा, मरु पुत्र जिसकी लिट् लिट्प्रत्यय के मुख पर टाकनेवाला चमड़ा लम्बकानसे हो न हो ।

दिगति (मं० स्त्री०) द्यधिका गतिः । १ दो अधिक गति संख्या, मरु संख्या जो जन्मे से दो अधिक हो, बालकेकी संख्या, ८२ । (ति०) २ तत्संख्यायुक्त, जिसमें बायेंकी संख्या हो ।

दिनिष्क (मं० स्त्री०) द्यध्या निष्काभ्यां क्रीतं तत्रिमायं द्विगुः । १ दो निष्क द्वारा क्रीत, जो दो निष्कमें खरीदा गया हो । दो निष्को परिमाणस्य चत्वारः तस्य सुदृ । २ तत् परिमाणयुक्त, दो निष्क तोनका ।

द्विप (मं० पु० स्त्री०) द्यध्या शृङ्गमुष्णाम्ना विवर्ति पाकः । १ हथौड़ी, शमी । यह शूङ्ग खोर सुदं दोनोंमें पायी जाती है, दूनोंमें इसका नाम द्विप पड़ा । (पु०) २ भागद्वार ।

द्विपद (मं० पु० स्त्री०) दो पदो यस्य । १ पक्षिमाय, बहिर्या । (पु०) २ एक भाग, दो पदोंमें एक सही भा होता है, इसमें द्विपदका पद एक भाग रखा गया है । (ति०) ३ जिसके दो पद हो । ४ जिसमें दो पद हो ।

द्विपदगुण (मं० स्त्री०) दिधा पदगुणो । दशगुण ।

दशगुण द्विपदी ।

द्विपदाम् (मं० स्त्री०) द्यधिका द्यधाम् । १ दो अधिक पदाम्, मरु संख्या जो पदोंमें दो अधिक हो, बालके की संख्या । (ति०) २ तत् संख्यान्वित, बायन ।

द्विपदाम् (मं० स्त्री०) दि पदाम्, पुरे तमम् । १ दो अधिक पदाम् संख्याका पुरा, बायनम् ।

द्विपल (मं० स्त्री०) द्यध्या पलाभ्यां क्रीतं ततो यत् । दो पद द्वारा क्रीत, जो दो पदोंमें खरीदा गया हो ।

द्विपत्रक (मं० पु०) द्वे पत्रे यस्य । संख्यायां कन् । १ पञ्चालकम् । २ टिटन कमल ।

द्विपद (मं० स्त्री०) द्वयोः पदोः समाहारः । ततो समा-मान् (५६ पुराण्ट पचमानये । या १४४०४) १ पद-द्वय, दो पद, यह स्थान जहाँ दो पद या कर मिलते हैं । इसका पर्याय—पादपत्र है । दो पदानी यत् । (ति०) २ मार्गद्वययुक्त देगादि ।

द्विपद (मं० पु०) द्वे पदे यस्य । १ मनुष्य । २ पत्नी । ३ द्विपद चरित्तमाम्, जहाँ दोनों पदोंमें समान हो, जैसे द्विपद कहते हैं । ४ ज्योतिषके अनुसार मियुग, तुला, कुम्भ, ब्रह्मा खोर धनु मन्मत्ता पूर्व भाग । (स्त्री०) द्वयोः पदयोः समाहारः । ५ पदद्वय, दो पैर । ६ बाहु मण्डलको क्रीडभेद, बाहु मण्डलका एक कोड़ा ।

द्विपदा (मं० स्त्री०) दो पादो यस्य, टाव, पादस्य पदावः । द्विपदगुणा श्रद्धा, यह चरणा जिसमें केवल दो पाद हैं ।

द्विपटिका (मं० स्त्री०) द्वा पादो दृग्गी यत् द्वुः । १ यह जिसमें दो पाव हो । द्विपदो-स्थाप कन् कृत्वा । २ गीति-भेद, गृधरागका एक भेद ।

द्विपदो (मं० स्त्री०) दो पादो यस्याः पादः पदानीये कुम्भपद्यादित्वात् स्त्रीय, ततो पदावः । १ धनु, भिन्न द्विपदयुक्त गीतिभेद, दो पदोंका गीत । २ मातागुल-भेद, यह धनु जिसमें दो पद हो । ३ एक प्रकारका विलकाय । इसमें किसी दोहे पादिको कोटो को तोन पंक्तियोंमें इस प्रकार लिखते हैं—दोहेके पहले पदका पाद पदपर पहले कोटिमें, पुनः एक एक पदपरके बाद पदको पंक्तिमें कोटिमें भरते हैं । इससे बाद दृष्टे हुए पदपर दूसरी पंक्तिमें कोटिमें एक एक करके रख दिये जाते हैं । इसी तरह सोमों पंक्तिमें कोटिमें दोहेके दूसरे पदपरके बाद एक एक पदपर कोटिमें हुए भरते हैं । इसी तोन कोट पंक्तियोंसे पूरा होता पद भिन्न जाता है । पदगुणा नाम यह चीज चाहिये कि पहले कोटिमें पदपरको पदपर पहले कोटिमें कोटिमें पदपरको पद ।

बाद पक्षी पंक्ति के दूसरे अक्षरकी पद कर उसके नीचे के कोठेके अक्षरकी पद । तीसरी पंक्ति के कोठे के अक्षरों-
की नीचेमे ऊपर इस क्रमसे पढ़े, जैसे

प	दे	न	दे	ग	प	श	र	म	धा
म	च	र	व	ति	ग	ध	न	ट	रि
वा	दे	गु	दे	ग	फ	र	ड	धा	

रामदेव नरदेव गति परशु धरन मद धारि ।

वामदेव गुरुदेव गति पर कुधरन हृद धारि ॥

द्विपवला (स० स्त्री०) । १ नागवला । २ शतावरी मेल ।

द्विपमद (स० पु०) १ करिमद जल, हाथीके मदका पानो । २ गन्धद्रव्यमैद ।

द्विपर्णी (स० स्त्री०) हे हे पक्षे यस्याः ङोप् । १ वन-
कोलो, एक प्रकारके जङ्गलों के रका पेड़ । २ शास्त्रपर्णी ।
३ छत्रिपर्णी, पिठवन । (त्रि०) ४ पर्ण द्वय युक्त, जिसमें
दो पर्ण हों ।

द्विपाख्य (स० पु०) नागकेशरहक, नागकेशरका पेड़ ।

द्विपात्र (स० स्त्री०) द्वयोः पात्रयो समाहारः समाहार-
द्वयो पात्रादित्वात् न ङोप् । पात्रद्वय, दो बरतन ।

द्विपाद (स० पु०) द्वौ पादौ वेदे भाष्यलोपः । १ पादद्वय-
युक्त मनुष्यादि, मनुष्य, पक्षी आदि दो पैरवाले जन्तु ।
२ यष्टमैद, एक प्रकारका यष्ट । (त्रि०) ३ जिसके दो
पैर हों । ४ जिसमें दो पद या चरण हों ।

द्विपाद्य (स० क्ली०) द्वौ पादौ परिमाणं यस्य यत् (पञ्च
पादमापयत्वा यत् । पा ३।१।३४) १ द्विपाद परिमाणयुक्त
दण्डप्रायश्चित्तादि, वह प्रायश्चित्त जिसमें द्विपाद परिमाण-
यत् दण्ड हो । २ द्विगुण खण्ड ।

द्विपाधिप (स० पु०) द्विपाला अधिपः । १ पेशावत । २ गज-
पेड ।

द्विपायिन् (स० पु०) द्वभ्यां सुखशृङ्गाभ्यां पियति पा-
यिनि । गज, हाथी ।

द्विपाय्य (स० पु०) द्विपाय्य आस्यमेव भास्यं यस्य ।
गणेश । इनका मुख हाथीके मुखके समान है, इससे
इनका नाम द्विपाय्य हुआ ।

द्विपुट (स० पु०) द्वे पुटे यस्य । सुगन्धि श्वेतपुष्पक हृत्-
मैद । (Impatiens Balsamina)

द्विपुत्री (स० स्त्री०) मल्लिका, चमेली ।

द्विपुरुष (स० त्रि०) द्वौ पुरुषौ प्रमाणमस्य तद्वितीयं
द्विगु, ततो मावचो लुक् । पुरुषद्वय प्रमाणयुक्त, जो
दो मनुष्यकी लम्बाईके समान हो ।

द्विपृष्ठ (स० पु०) द्वौ पृष्ठा यस्य । राजमैद, जैना के
नव वासुदेवों मेंसे एक । इसका पर्याय मद्रासश्व है ।

द्विभ्रु (स० पु०) द्वयोर्लोकयोर्बभ्रुः । दो लोकोंके
बभ्रु, अग्नि ।

द्विबाहु (स० पु०) द्विबाहु यस्य । १ दो हस्तयुक्त मनु-
ष्यादि, मनुष्य आदि दो पैरवाले जीव । (त्रि०) २
द्विभुज, जिसके दो बाहु हों ।

द्विबाह्वी (स० स्त्री०) ऊल दोचं नाह्वो ह्य, छोटी चोर
बहो दोनों नाह्वो ।

द्विभाग (स० पु०) दो भाग, दो अंश ।

द्विभाव (स० त्रि०) द्वौ भावौ यस्य । द्विस्वभावयुक्त,
जिसमें दो भाव हों, बुरे स्वभावका, कपटो ।

द्विभाषो (स० पु०) वह पुरुष जो दो भाषाएँ जानता
हो, दुभाषिया ।

द्विभुज (स० त्रि०) द्विबाहु, दो हाथवाला ।

द्विभूम (स० पु०) द्वे भूमी धन, अर्ध, समानागतः । भूमि-
द्वययुक्त प्रासादादि, दो तलावर ।

द्विमातृ (स० पु०) द्वे मातरौ यस्य समानान्त विवेर-
नित्यत्वात्, न कथं । द्विमातृक जरात्मन्, दो माताओंके
गर्भ से उत्पन्न जरात्मन् ।

द्विमातृज (स० पु०) द्वभ्यां मातृभ्यां जायते जन-ङ ।
१ गर्भेश । २ राजा जरात्मन् ।

द्विमात्र (स० पु०) द्वे मात्रौ उच्चारणकान्मैदो यस्य ।
दोहस्वर 'भा ई' इत्यादि । जिसके उच्चारण करनेमें
अधिक समय लगे उसे द्विमात्र कहते हैं ।

द्विमाप्य (स० त्रि०) द्वौ मापौ प्रमाणमस्य यत् । माप-
द्वय परिमाणयुक्त, दो मापे तोलका ।

द्विमास्य (स० त्रि०) द्वौ मासौभूतः 'दिनोयं प' इति
यप् । १ जो दो महीने तक हो । २ जिसकी उमर दो
महीनेकी हो ।

द्विमोड़ (मं० पु०) द्विमोड़पुरकारक द्विमोड़पुरसुमिद,
द्विरिमोड़के पदुमार द्विमोड़पुर बसानेवासे मकाराज
द्विमोड़का एक पुत्र । ये यजमोड़के भाई थे ।

द्विमुग (मं० पु० स्त्री०) द्वे सुवि यस्या । १ मुखद्वययुक्त
राजमर्ष, दो मुँहवाला सोय, गूँगी । (त्रि०) २ मुख
द्वययुक्त, त्रिमूर्ति दो मुँह हो । स्त्रियों मातृत्वात् न डोष ।
(पु०) ३ कृत्स्न रोगमिद, एक प्रकारका बनावटी रोग ।
द्विद्वय्याः स्वयत्समुपे यस्याः डोष । ४ धेनु, गाय ।

गाय जन चर्षप्रसूतावस्यामि रहतो ऐ, नव वर्षका मुँह
लगाने पर लमके दो मुँह हो जाते हैं, इसीसे गायका
नाम द्विमुग पड़ा । कामीराजमें लिखा है, कि इस
तरहकी चर्षप्रसूता गाय जो दान करता है, उसे कविता-
दानके समान फल होता है । यह दान अत्यन्त पुण्य-
जनक है । शिवाय टाप् । ५ द्विमुग जलोका, यह जोक
त्रिमूर्ति दो मुँह हो ।

द्विमुखादि (मं० पु०) द्विमुखे चक्षिः मयः । मयविशेष,
एक प्रकारका मांस । इसका पर्याय—चक्षीवनि, राजादि,
राजमर्ष, द्विमुख और मयभुक् ।

द्विमुनि (मं० चय०) दो मुनी पाणिनिकात्याययो र्भगो
'संख्यामशिन' इति मुनेष चययीभावः । तुल्यविद्या-
युक्त मुनिद्वय, समान विद्यावाले दो मुनि ।

द्विमुपौ (सं० चय०) द्वे सुपले यत्र प्रवरपे वषापो-
भावः इत्युत्पत्त्यात् । सुपनद्वययुक्त प्रवरप, दो सुपनो-
का प्रहार ।

द्विमुई (मं० त्रि०) द्वौ मुईगो यस्या यच्च समानात् ।
मोयद्वययुक्त, त्रिमूर्ति दो छिर हो ।

द्विद्विप (मं० स्त्री०) द्वे यद्विपो लपयानि यस्याः ।
१ इहकामिद, एक प्रकारकी ईंट जो पथोंमें यजकुण्ड-
मण्डप आदिमें बसानेमें काम आती थी । द्वे यद्विपो
इव शरीरे यस्य । (पु०) २ यजमान ।

द्विद्विप (मं० चय०) द्वयोर्विपमुनयोः समाहारः । दो
यजमानोंका समाहार, दो यजमानोंका भेग ।

द्विर (सं० पु०) द्वौ रो रेषो वाचकमर्थे दस्य । मधुकर,
भ्रमर, भोरा ।

द्विरा (मं० पु०) द्वौ रदां रक्षो प्रधानतया दस्य । १
रक्षो, राक्षस । २ दुर्गपक्षका एक भाई । (त्रि०)
३ दो दस्ययुक्त, दो दानवाना ।

द्विरात्मा (मं० पु० स्त्री०) द्विरात्मा द्विरात्मा यमात्रः ।
मिह, मीर ।

द्विराशानि (मं० पु०) द्विराशानि यमात्रः १-मत् । १ गाय,
एक प्रकारका जन्तु जिसके पाठ पर हीने हैं । २ मिह ।
द्विराशानि (मं० पु० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

द्विराशानि (सं० स्त्री०) द्विराट् अशानि चम भोजन
स्य । १ मिह । २ चमयवृत्त, वीर्यका पेट ।

‘सोम और बुधवार तथा चन्द्र और तारा विरुद्ध होने पर कन्या, मिथुन, मीन, तुला और मकर लग्नमें हिरागमन प्रशस्त है। प्रकालमें हिरागमन नहीं करना चाहिये। उक्त माममें यदि मलमास पड़े तो भी हिरागमन निषिद्ध है। किसी किसीके मतमें बुधवारमें हिरागमन प्रशस्त नहीं है। (नरहरचमुखावली)

शुद्धिदोषिकामें इस प्रकार लिखा है—

विवाहके बाद पिताके घरसे बधू जो स्वामीके घरमें दूसरे वार आतो है उसीको हिरागमन कहते हैं। स्त्रीके रवि शुद्ध होने पर अष्टमहाशय, फाल्गुन और वैशाख इन तीन महीनोंमें किसी एक महीनेके शुद्धकालमें प्रति-लोमग शुक्ल और मङ्गलान्तिका दिन छोड़कर यात्रा-प्रकर-णोक्त एवं गृहप्रवेशोक्त शुभदिनमें नववधू का आगमन अत्यन्त प्रशस्त है। एक ग्राममें एक घरमें अर्थात् एक घरसे दूसरे घर जानमें प्रतिशुक्लके लिए दोष नहीं लगता। यात्रा-प्रकरणोक्त शुभ दिनमें विरुद्धहोने यात्रा और गृह-प्रवेशोक्त शुभदिनमें स्वामीगृहमें प्रवेश प्रशस्त है।

ज्योतिःसारसंग्रहमें इस प्रकार लिखा है—

विवाहके बाद दूसरी वार स्वामीके गृहमें आगमन करनेका नाम हिरागमन है। यह यदि विवाहमासमें न हुआ हो, तो शुभमघादिका विचार करना पड़ता है। अशुभमघमें वैशाख, अष्टमहाशय और फाल्गुनमासमें, रवि, शुक्र और चन्द्रशुद्धिके शुद्धकालमें; कन्या, मिथुन, तुला, मीन वा वृषभलग्नमें शुभमघशुक्ल वा उससे देखे जानमें; सास, बुध, बृहस्पति और शुक्रवारमें; शुक्रपक्षमें; मृगशिरा, पुष्या, अश्विनी, ज्येष्ठा, स्वाती, मुनर्वसु, अश्लेषा, धनिष्ठा, गतमिघा, उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरभाद्र-पद, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवतीनक्षत्र-की यात्रा-शूलोक्त तिथिमें हिरागमन प्रशस्त है। किन्तु अस्तगत और अशुभ खल्य शुक्ल होने पर कामों नहीं होता। आठवें वर्षमें हिरागमन होनेसे मासको, दशवें वर्षमें ससुरको और बारहवें वर्षमें पतिको मृत्यु होतो है। एक ग्राममें अथवा एक घरमें अथवा दुर्भिक्ष वा राक्ष-प्रियवादि के समय स्वामीके माथ पानिसे सफाई शुद्धादि-का दोष नहीं लगता है। पण्डित स्वामीके घरमें जानके समय जो पिताके घरमें भोजन नहीं करके यदि स्वामी-

के घरमें आ कर भोजन करे, तो उसका दुर्भाग्य होता है। (ज्योतिःसारसंग्रह)।

ये सब नियम बारह वर्ष तक लागू हैं। बारह वर्ष बीत जाने पर यद्योक्त शुभ दिन देव कर हिरागमन किया जा सकता है।

हिरात्र (सं० त्रि०) द्वाभ्यां रात्रिभ्यां निर्जन्तः तद्विधाय-
द्विगौ ठक्, तस्य तुक्, चच, समाभान्तः। १ रात्रिद्वय-
माध्य यागभेद, दो रातमें होनेवाला एक यज्ञ। (श्लो०)
द्वयोरारव्यो समाहारः। २ रात्रिद्वय, दो रात।

हिरात्रौण (सं० त्रि०) द्वाभ्यां रात्रिभ्यां निर्जन्तादि ख,
तस्य न तुक्, रात्रिद्वय माध्य, दो रातमें होनेवाला।

हिराप (सं० पु०) हिदिं वारं सुवृण्णाभ्यां असम्यक्
पिबति पाक। हस्तो, दायो। यह पहले सुँड़ेसे पो कर
पीछे मुखसे पीता है, इसीसे इसका नाम हिराप पड़ा।

हिरापाद (सं० पु०) हिः पायादः। मिथुनस्थित रविसे
लेकर शुक्ल प्रतिपदादि समावस्थान्त मासद्वय, मिथुनके
सूर्यसे लेकर शुक्ल प्रतिपदादि समावस्थान्त के अन्त तक दो
महीने। पायाद मासमें मङ्गलमास होनेसे ऐसा होता है।

ज्योतिस्तत्त्वमें लिखा है, कि जब सूर्य मिथुन राशिमें
हो और उस महीनेमें दो समावस्था हों, तो उसे हिरा-
पाद कहते हैं। बाद यावत् मासमें विष्णुका मयन
होता है। २ गारुडोक्त मासभेद, गरुडपुराणके अनुसार
एक प्रकारका महीना।

द्विरक्त (सं० त्रि०) हिदिं वारं यथा तथा उक्तः। दो
वार कथित, जो दो बार कहा गया हो।

द्विरक्ति (सं० श्लो०) बच-क्तिर् हिदिं वारं उक्तिः। दो
बार कथन।

द्विरुद्धा (सं० श्लो०) उद्भूयते इति बह्वर्थात्। हिः
रुद्धा विवादिता, वह स्त्री जिमका एक बार एक पतिसे
और दूसरे वार दूसरे पतिसे विवाह हुआ हो। इसका
पर्याय—दिधिपु और पुनर्भू है।

हिरेतस (सं० पु०) हिरेतसो हारणं यस्य। पञ्चतर,
दो मिस भिन्न पद्य बोधे उत्पन्न पद्य, जैसे गढ़ई और
घोड़ेसे उत्पन्न खबर। २ गाय और बकरेसे उत्पन्न पद्य।
३ दोगला।

द्वित्रय (मं० पुं०) द्विविधो ब्रणः कर्मधा० । सुप्तुतोक्त शरीर और भागान्तुक द्विविध ब्रण, शरीर और भागान्तुक नामके दो प्रकारके घाव । इसका विषय सुप्तुतमें हम प्रकार लिखा है—

ब्रण दो प्रकारका है शरीर और भागान्तुक । जो घाव वायु, रक्त, पित्त और कफसे फीड़े आदिके रूपमें होता है, उसे शरीरभग्न और जो किसी मनुष्य, पशु, पक्षी, हिंस्र जन्तुके काटनेसे घाववा पतन, पीड़न, प्रहार, अग्नि, चार, विष, तीक्ष्ण औषध सेवन करनेसे कापालखण्ड, मृद्, चर्म, परम, शक्ति आदि शास्त्रादिके आघातसे हो, उसे भागान्तुक ब्रण कहते हैं । ये दोनों प्रकारके ब्रण एकसे होते हैं । भिन्न-भिन्न कारणोंसे इसकी उत्पत्ति होनेसे इसे द्विविध कहते हैं । विशेषता यह है, कि अभी प्रकारके भागान्तुक ब्रणमें शरीरसे जो शोणित निकला करता है, उसे रोकनेके लिये पित्तके प्रतिकारको नाई शीतल क्रियाको आवश्यकता है और उसे जोड़नेके लिये मधु और छतका प्रयोग करना कर्तव्य है । द्वित्रय अर्थात् दो प्रकारके ब्रणोंका भेद करनेका यह कारण है । पक्षि दोनों प्रकारके ब्रणके दोषके अनुसार शारीरिक ब्रणकी नाई प्रतिकार करना होता है । दोषका उपद्रव कर्मसे काम पन्द्रह प्रकारका है । कोई कहते हैं, कि ब्रणकी शुद्धावस्था से कर यह दोष मोलह प्रकारका है ।

ब्रण शब्द देखो ।

ब्रणका लक्षण दो प्रकारका है, सामान्य और विशेष । शरीरके विचूर्णित होनेसे चतुर्धा होना सामान्य लक्षण और इससे वातपित्तादिका लक्षण प्रकाश होना विशेष लक्षण है । वायुसे जो ब्रण निकलता है वह छोटा, मोम जैसा, चरण वर्णविशिष्ट और दृढ़ होता है तथा उससे सड़ चढ़ मृद्व करता है, वेदना भी बहुत होती है और शीतल तथा सिन्धु पीप निकलती है ।

पित्तसे उत्पन्न ब्रण—यह घाव पौला होता तथा उससे चारों तरफ पीली पोली फुंभी निकल आती है । यह घाव बहुत जल्द बढ़ जाता है और इससे लाल रंगका उष्ण रस हमेशा निकला करता है । कफसे जो घाव निकलता है, उसमें बहुत खुजली होती है, रंग पाण्डु-वर्ण होता है, वेदना कम होती है और उससे सफेद, शीतल तथा गाढ़ी पीप निकलती है ।

रक्तसे उत्पन्न ब्रणका रंग मृंगेमा होता है, इससे वेदना अधिक होती है, गन्ध आम्रियसे आती है और शोणितस्त्राव होता है । वायुपित्तजन्य ब्रण तीव्र, दाह और उष्ण उद्दानविशिष्ट, पीत और चरण वर्ण तथा पीप वर्णका आस्त्रावयुक्त होता है ।

वातरक्तजन्य ब्रण—काण्डयन और तीव्रविशिष्ट तथा कठिन होता है । इसमें हमेशा पाण्डु वर्णका आस्त्राव निकलता रहता है ।

पित्तक्षोभाजन्य ब्रण—भार, दाह और उष्णतायुक्त तथा पीतवर्ण होता है । इससे जो पीप निकलती है, उसका रंग कुक लाली लिये पोला होता है ।

वातरक्तजन्य ब्रण—सुदृढ़, दृढ़, चतुर्ध्व तीव्रविशिष्ट, अम्लरहित और रक्तवर्ण होता तथा उससे रक्त वर्णका आस्त्राव निकलता है ।

पित्तरक्तजन्य ब्रण—छतमण्डके अंश वर्ण और मत्स्य-घीत जलकी तरह गन्धविशिष्ट, कोमल और प्रसारण होता है और उससे क्लृप्तवर्ण की पीप निकलती है ।

वातपित्त शोणितजन्य ब्रण—स्फूर्ण, ताद, दाह और उष्णस्त्रावविशिष्ट, पीतवर्ण, सुदृढ़ और रक्तस्त्रावी होता है ।

जिध ब्रणका रंग जिह्वा तलके जैसा हो, मृदु, सिन्धु, सुप्प, वेदना और आस्त्रावयुक्त तथा सुख्यस्थित हो वह शुद्धब्रण समझा जाता है ।

वातपित्त क्षोभाजन्य ब्रण वातपित्तक्षोभासे उत्पन्न वेदनाविशिष्ट होता तथा उससे तीन वर्णके आस्त्राव निकलते हैं ।

द्वित्रय रोगका उपद्रव दो प्रकारका है, एक रोगका और दूसरे रोगका । मृद्व, अर्घ्य, रूप, रस और गन्ध ये पाँच ब्रणके उपद्रव हैं तथा ज्वर, पतिभार, मूर्च्छा, हिक्का, वमन, अर्धवि, स्नाय, अजीर्ण और क्षया ये सब रोगोंके उपद्रव हैं । विशेष विवरण हममें देला ।

द्विगत (सं० स्त्री०) द्विगुणं गतं । १ गतद्वय, दो से ।

२ तत् संख्याका पूरण, दो से संख्याका पूरण ।

द्विगतक (सं० वि०) द्विगतेन कृतं कन् । द्विगत द्वारा कृत, जो दो नोमें खरीदा गया वस्तु ।

द्विगततम (सं० वि०) द्विगत पूरणे तमप, दो से संख्याका पूरण ।

दियतिका (मं० स्त्री०) दै दियते ददाति मुन् । दो बार
दो मो दान ।

दिमो (मं० स्त्री०) दयो मन्मथोः ममाहारः डीव् । मत-
दय ममाहार, दो मोका मन्मथ ।

दिम्य (मं० स्त्री०) दिमातेन क्लोतं ततो यत् । दिमत
द्वारा क्लोत, जो दो मोमें खरोदा गया हो ।

दिम्य (मं० पुं०) दो मोकी यम्य । दिम्य पय, मय पय
जिनसे मुर फटे हो, दो खुरवाया पय ।

गाय, बका, भै म, काका खुर, लंड, भेड़ा, चोर
हिरन ये सब दो खुरवासे पय, हैं ।

दिमो (मं० पुं०) दै-स-म्विराज्जं शरीरे पयस्ये यम्य ।
परस्विराज्ज मियुज, कन्या, धनु चोर मोन रागि ।

ज्योतिषके पनुसार कन्या मियुज, धनु चोर मोन रागियो
जिनका प्रथमाई म्विर चोर हितोपाई चर माना
जाता है ।

दिमभ (मं० पद्य०) दो दो ददाति करोति वा मन् ।
१ एक जिया द्वारा दोकी ध्याति । २ दो चोर दो ।

दिमाच (मं० स्त्री०) दाम्भां मापाम्भां क्लोतं उज्ज । तस्य
मुक् । माचदय क्लोत, जो दो मापमें खरोदा गया हो ।

दिमाच (मं० स्त्री०) दिमाच-यत् । माचदय क्लोत, जो
दो मापमें खरोदा गया हो ।

दिमाच (मं० स्त्री०) दो माकायुक्त, जिनमें दो कीठ-
गियो हो ।

दिमो (मं० पुं०) दै मोर्षे यम्य । १ यम्य, याम ।
(ति०) २ जिनसे दो मिर हो ।

दिम्य (मं० स्त्री०) दाम्भां मूर्ध्मा क्लोतं उज्ज । तस्य
मुक् । १ दिम्य द्वारा क्लोत, जो दो मूर्धमें खरोदा गया
हो । (स्त्री०) दयोः मूर्धयोः ममाहारः दि मूर्धो, तथा

क्लोतं उज्ज । तस्य न मुक्, वरापदहः । २ दिमोर्षिक,
मय जो दो मूर्धमें खरोदा गया हो ।

दिम्यिका (मं० स्त्री०) दै मूर्धे दम यम्य यस्या अप-
यन दत्त । मियुजो, मिदिगा मन् ।

दिम्यिका (मं० स्त्री०) दिम्यिका-दिनि । दो मूर्धमुक्,
जिनसे दो मूर्ध हो ।

दिय (मं० पुं०) दै दैति दि-जि-जि । १ मन्, दुग्मन् ।
(ति०) २ दैजा, दैव नमिषाया, द्वितीयो ।

दिय (मं० स्त्री०) दिय, जसंति क । दैवकारक, मन्,
दुग्मन् ।

दियत् (मं० स्त्री०) दै दैति दि-जि-जि । दिम्यिका । १
२।२।२।२ । मन्, दुग्मन् ।

दियत् (मं० स्त्री०) दियत् तापयति तप-विष, (दियत्
परयोगादि । १ २।२।२।२) दित मन् । (मन्मथः ।

१ २।२।२) ततो मुन् (मन्मथः मन्मथ मुन् । १ २।२।२)
मन्मथ, मन्मथोको योका वदु-बानेमाना ।

दियत् (मं० स्त्री०) दिगुलितो यत् । दादग, मारक ।

दियटि (मं० स्त्री०) दै यटो यपीटो भूतो भूतो भावो
वा उज्ज, वसतपदहः । जो धामठ दिनमें दया हो ।

दिया (मं० स्त्री०) दया, दयाययी ।

दिये (मं० स्त्री०) दिय-दयम् जिय । दैयोन,
दैव या दैवो करना हो जिनका सम्भाव हो ।

दित (मं० स्त्री०) दित-ज । १ दैवविषय, जिनमें दैव
हो । दाद दैवोदरादित्यात् मापुः । (स्त्री०) २ मान्य,
तादा ।

दित (मं० स्त्री०) दैवोदरादित्यात् यः दित-दया-क यस्या-
म्योति वलं । लभयम्, जो दोहे योच यम्यित हो ।

दिम (मं० पद्य०) दि-सुव । दिवार जियादि, दो
बार काम काज ।

दिमभ (मं० स्त्री०) दिमभत्यायुतं मतादि क । दि-मभति-
मुत मतादि । मभत्त, मभत्तमें दो यमिक ।

दिमभति (मं० स्त्री०) दामिका मभति । मं-मन्, मभत्त-
को मं-मन् । (ति०) २ दिमभति मं-मन्का मभत्त,
मभत्तका ।

दिमभति (मं० पद्य०) दिमभ प्रकाशः प्रकाशो भावः ।
दिमभ प्रकाश, मभत्त तरङ्ग ।

दिमभ (मं० स्त्री०) दै मभे परिमाचमय, उज्ज । तस्य
मुक् । १ दिमभ परिमाच, दो मभका ।

दिमभति (मं० स्त्री०) दाम्भां मभत्यायुतं मतादि क । मभत्त-
मापमय वा यम्य । तस्य वा मुक् । २ दिमभति क्लोत,
जो दो मोमें खरोदा गया हो । २ दिमभति परिमाच,
दो मभका । ३ दिगुलित मभत्त, मभत्तका मता ।

दिमभति (मं० पुं०) दिमभति मभत्त दिगुलित दिगुलित-
यम्य यम्योति वल यम्य, ममाभावाः । यम्य । मभत्त

एक हजार सुँह हैं। हर एक सुँह में दो चाँखें होनेसे इन्हें दो हजार चाँखें हुईं इसीसे इनका नाम द्विसहस्राक्ष पड़ा है।

द्विसावत्सरिक (सं० त्रि०) द्विवत्सर भूतादि ठक्। जो दो वर्ष में हुआ हो।

द्विसाप्ततिय (सं० त्रि०) द्विसाप्ति भूतादि ठक्, उत्तर-पट्टद्विः। जो वत्सर दिनों में हुआ हो।

द्विसाहस्र (सं० त्रि०) द्वाभ्यां सहस्राभ्यां क्रीतं द्वे सहस्रं परिमाणमस्य वा अणुं वाहं अणो न सुक्। १ द्विसहस्र, दो हजार। २ दो सहस्र परिमाण।

द्विनील (सं० त्रि०) द्विवारं सोतया मज्जितं द्वितीया-यत्। (नीलवो धर्मति। पा ४।४।८१) चारद्वय कटचैत्र, वह खेत जो दो बार जोता गया हो।

द्विसुवर्ण (सं० त्रि०) द्वाभ्यां सुवर्णाभ्यां क्रीतं ठक् ततो ठको सुक्। १ दो सुवर्ण द्वारा क्रीत, जो दो मोने में खरोदा गया हो। (क्री०) २ खण्डय, दो सोना।

द्विस्तना (सं० स्त्री०) दो स्तनाविव शृंदवयवी यस्याः अस्त्राह्वात् न डीप्। इटका हस्तिमिद।

द्विस्तावा (सं० स्त्री०) द्वि द्विगुणिता तावती। वेदीका स्तम्भावतः जो परिमाण है, उससे द्विगुण परिमाणकी वेदीको द्विस्तामा कहते हैं।

द्विसंज्ञितान् (सं० स्त्री०) द्विसंज्ञितं द्विः पक्षं अयं तण्डलं। द्विसदतण्डल, समालोद्वय धानका चावल, मुजिया चावल। यह देश विदेश में विशुद्ध है, किन्तु ब्राह्मणों के भक्षण और देवपूजन आदि में इसका व्यवहार अच्छा नहीं कहा गया है। यति, विधवा और ब्रह्मचारी के लिये यह अमम्य माना गया है। ताम्बूल खाना उन कीर्तियों के लिये जैसा निषिद्ध है, वैसा ही यह भी है।

द्विहन् (सं० पु०) द्वाभ्यां गृह्णादगृह्णाभ्यां हन्तीति हन्-क्षिप्। हस्ती, हाथी।

द्विहरिद्रा (सं० स्त्री०) दारुहरिद्रा, दारुहृन्दी।

द्विहस्य (सं० त्रि०) हन्तस्य कर्षयत् द्विवारं हस्यः। दो बार हलकटचैत्र, वह खेत जो दो बार हलसे जोता गया हो।

द्विहायन (सं० त्रि०) द्वौ हायनो वयः काको यस्य। १ द्विषयं वयस्त् पश्चादि, दो वर्ष का बछड़ा इत्यादि।

द्वाभ्यां हायनाभ्यां समाहारः। समाहारद्विगुः। (क्री०) २ वर्षद्वय, दो वर्ष। समाहार द्विगुमे क्रीतिङ्गमे ङोप् होना चाहिये था, किन्तु 'पात्रादित्' के लिये विशेष सूत्रके अनुसार ङोप् नहीं हुआ।

द्विहीन (सं० त्रि०) द्वाभ्यां स्तोपु सभ्यां हीनं। क्रीतिङ्ग शब्द।

द्विहृदया (सं० स्त्री०) द्वे हृदये यस्याः गर्भिणी स्त्रा, गर्भवती।

दीन्द्रिय (सं० पु०) वह जन्तु जिसके दो दो इन्द्रियाँ हों।

दीन्द्रियप्राज्ञ (सं० पु०) द्वाभ्यां इन्द्रियाभ्यां प्राज्ञः। इन्द्रियद्वय ब्रह्मणीय गुण, वह पदार्थ जो चमड़े और चमड़े द्वारा ग्रहण करने योग्य हो।

दीप—चारी और सागर-परिवेष्टित भूखण्ड, स्थलका वह भाग जो चारों ओर जलसे घिरा हो। दीप छोटा और बड़ा हो सकता है। बड़े दीपोंको महादीप और बहुत-से छोटे छोटे दीपोंके समूहको दीपगुञ्ज वा दीपमाला कहते हैं। भूतत्त्ववेत्ता अनुमान करते हैं, कि इन छोटे छोटे दीपों में जिनका आकार प्रायः गोला नहीं है, वे पहले एक ठक्व भूखण्ड थे। पीछे समुद्रके वेगसे विभक्त हो गये हैं अथवा धीरे धीरे एक दूसरे से मिल कर एक बड़े भूखण्डके रूप में परिणत हो गये हैं। बहुतसे दीप प्रायः किसी न किसी महादेश वा उपद्वीपके कूलवर्ती थे, भूगोल ज्ञाननेवाले ऐसा अनुमान करते हैं कि वे दीप इन सब देशों के इतने निकट थे, कि वे एक दूसरे से मिले हुए दोख पड़ते थे। अभी भी उन सब दीपोंकी भग्नगठन देख कर ऐसा बोध होता है, कि वे एक समय संयुक्त रह कर एक एक महादेशके रूप में अवस्थित थे। पीछे समुद्रके वेगसे वा किसी दूसरी भूमिके अथवा न्तरस्थ वे कारण विच्छिन्न हो गये हैं।

दीप दो प्रकारके होते हैं साधारण और प्रवालज। साधारण दीप दो प्रकारसे बनते हैं—एक तो भूगर्भस्थ अग्नि के प्रकीर्णसे समुद्रके नीचेसे उभड़ जाते हैं; दूसरे आसपासकी भूमिके घंसे जानीसे और यहाँ पानी पा जानीसे बन जाते हैं। प्रवालज दीपोंको सृष्टि मूर्तमि होता है। ये बहुत सूख कोढ़े हैं। ये धुहरक पिङ्क पाशार-की पिङ्क बना कर समुद्रतल में एकत्रित रहते हैं। इन्हें

पुत्र, बौद्धों के प्ररीये मरही। वय में जमा होते होते बड़ा सा पर्वत बन जाता है और समुद्र के जवा निचल पाता है, इसीका नाम प्रवालज दीप है। इन दोनों के पनावा एक तीसरे प्रकारका दीप भी होता है जिसे परिवर्तन कहते हैं। इस तरह के दीप प्रायः बड़ी बड़ी नदियों के मुहाने पर जहाँ वे समुद्र में मिलती हैं बन जाते हैं।

दक्षिणमागरमें तथा पूर्वमागर और भारतमागरके मंगमस्थान पर सबसे बड़े बड़े दीप पाये जाते हैं। दक्षिणमागरमें स्वाभाविक कारणसे उत्पन्न दीपावलीकी कोड़ कर प्रवालकोट चर्मातू सूँची के कोड़े द्वारा बनाई हुई दीपावलीकी संख्या कम नहीं है। इनके पनावा यहाँ पाने योग्य मङ्गल दीपावली भी घटते हैं।

दुपोंके चार महाद्वीपोंकी चभीतीन उद्भूत दीप लक्ष सकते हैं। जब खोजकी गहर छाटी नहीं गई तो, तब एशिया, यूरोप और अफ्रिका इन तीनों के एक जगह रहनेमें एक बड़ा दीप बन गया था, इनके पनावा अमेरिका भी दो मण्डल मिल कर एक बड़ा दीप था। चभी खोज-गहर के कट जानेसे अफ्रिकाकी भी एक जगह उद्भूत दीप लक्ष सकते हैं। इनके मिया उत्तरमागरमें चीनमण्डल, पूर्वमागरमें बङ्गालिया, भारतमागरमें चीनियों, पपुवा, सुमात्रा ; दक्षिण महासागरमें महासागर और पश्चिममागरमें घटहटन चतुर्दश दीप हैं। इन में बङ्गालिया दुपोंके पनावा दीपोंमें बड़ा है। दक्षिण-सागरमें अटलाण्टिक और उत्तरमागरके बोवनेलका सर्वांग अचलक भी आविष्कृत नहीं हुआ है। आविष्कृत हो जानेसे बड़ा हो आयदा लक्ष नहीं सकते। बङ्गालीका अनुमान है, कि वे दो मूलस्थ दो शिखरों दो महा-द्वीपों के संयोजन हैं। महाद्वीप के। चरक उद्भूत नदी के गर्भों और नदी के मुहाने पर जो सब कर घट कर पानादी हो गये हैं, लक्ष भी दीप लक्षते हैं। भारतवर्षमें गङ्गा और ब्रह्मपुत्र तथा अमेरिकाके पामिडन नदीमें इस प्रकारके दीपोंकी संख्या अधिक है। भूमिकम्पने भी बहुतसे दीप क्षुद्र हो जाते हैं और कम समयमें समुद्रका अन्तर्दिमें प्रवेश कर दीप्तकी निष्पत्ति लक्ष दीप रूपमें परिणत कर देता है। बङ्गाल के पूर्व पश्चिम कीच के बङ्गाल-सागरका कोरे कीरे दीप इसी तरह क्षय हुआ है।

योगाधिक दीपका विषय भागवतमें हम प्रकाशित किया है—

एतद्दीप सुमेरुपर्वतका दृढस्थित कर्तते हैं, इसी कारण दुपोंके चभी भाग पर प्रकाश पड़ना है और पाना भाग चर्मातू रहता है। इस पर महासागर विषयमें पालन तत्त्वप्रमाणमें प्रदोष हो कर प्रतिष्ठा की हो कि सुर्ग के दयने समान वेगवाली खोतिमय रगदारा रानकी भी दिन बनाईगा। इस ताक प्रतिष्ठा कर दुपोंमें सात बार द्वितीय सुर्गको मार्ग सुर्ग के पीछे पीछे परिभ्रमण किया था। इनके दयने पीछेये ५ मनेमें मान समुद्र उत्पन्न हुए, उन सात समुद्रोंमें पान दीप लगे, जिनके नाम ये हैं—जम्बू, ब्रह्म, मावमलि, कुग, जोष, याक और पुच्छर। जम्बूदीपका विस्तार जितना है, उसमें भाव योजन विरलत लक्षण सागरमें यह परिचित है। जम्बूदीप दास सुमेरुपर्वत घिरा हुआ है। ब्रह्मदीप भी भाव योजन विस्तीर्ण लक्षण-सागरमें उसी तरह घिरा है। ब्रह्मदीप जम्बूदीपसे बूना है। इसी दीपमें लवणसमुद्र संज्ञित है। यहाँ बड़ा पाकरका पड़ है जिसको लं चार्ड जम्बूदीपके आसुन-के पीछेकी लं चार्ड के समान है। इसी ब्रह्म या पाकरके हृषये ब्रह्म दीप नाम हुआ है। लक्ष हृष दिक्कलमय है और उसमें अश्विनि चर्य पत्रस्थान करती है। प्रियवत-के पुत्र रघुनिष्ठ इस दीपमें पवित्र है। अर्द्धोंमें इस दीपकी मयमयमें विभाग कर अपने सात पुत्रोंकी प्रदान किया था। मिथ, वयन, सुभद्र, ममन, रोम, लोमूत और पमय इस सात वर्णोंमें ७ नदी और ७ पर्वत बहुत प्रविष्ट हैं। मरुतिरि के नाम प्रविष्ट, वल्लुट, इन्द्र-बोध, खोतिमान, सुवर्ण, दिक्कलमय और मियमान है। चदका, जलका, पाट्रिमी, मारिती, सुभमता, जल-का और मयमय ये दो सात नदियाँ प्रविष्ट हैं। न के लक्षण बहुत पवित्र माने जाते हैं। यहाँ के पान समुद्र समानता की धारि है।

मावमलिदीप बहुत मोट सागरमें परिचित है। यह ब्रह्मदीपमें भी बूना बड़ा है। यहाँ ब्रह्महृष के समान एक विमान मयमयी हृष है। इसी हृष के नामानुसार इस दीपका नाम मावमली दीप पड़ा है। इस दीपमें

अधिपति प्रियव्रतके पुत्र महाराज यशवर्धन हैं। इन्होंने इस दीपको अपने सात पुत्रों में उन्हें नामानुसार सात वर्षों में विभाग किया है जिनके नाम सुरोचन, सोमनख, रमणक, देववर्ध, पारिभद्र, आध्यायन और अभिजात हैं। इन सात वर्षों में सात पर्वत और ७ नदी बहुत प्रसिद्ध हैं। पर्वतों के नाम—सुरज, शतशृङ्ग, वासदेव, कुन्द, कुमुद, पुष्पवर्ष और सद्यस्तुति तथा नदियों के नाम अनुमति, मिनीवाली, सरस्वती, कुङ्क, रजनी, मन्दा और राका हैं। यह स्थान भी पुष्पजनक है। चौरोंदसागरों के बिर्भागमें कुशदीप अवस्थित है। प्रियव्रतके पुत्र राजा हिरण्यरेता इस दीपके अधिपति हैं। यह दीप ब्रह्म-दीपसे द्विगुण है। यहां देवकृत एक कुशस्तम्भ रहनेसे जो इसका नाम कुशदीप हुआ है। यह कुशस्तम्भ सर्वदा अग्नि की भाँई देदीप्यमान है। राजा हिरण्यरेताने भी इस दीपको सम वर्षों में विभाग कर अपने सात पुत्रों को प्रदान किया जिनके नाम ये हैं—वसु, वसुदाम, दृढरुचि, नाभिगुण, सत्यव्रत, विप्रनाभ और देवनाभ। इन सात वर्षों में ७ सोमा पर्वत और सात नदी हैं। समपर्वतों के नाम कद्रु, चतुःशृङ्ग, कपिल, चित्रकूट, देवनाक, ऊँचरोमा और द्रविण है तथा रमकुल्या, मधुकुल्या, मित्रवन्द्य, श्रुतिवन्द्य, देवगर्भा, वृत्तच्युता और निचमाला नामकी सात नदियाँ हैं। इस स्थानमें सभी रुग्ण पण्डित और धार्मिक हो जाते हैं। पाँचवा कौचदीप है जो कुश-दीपके बिर्भागमें अवस्थित है। यह दीप कुशदीपसे दूना बड़ा है और चौरोंदसमुद्रमें वेष्टित है। यहां कौच नामक एक श्रेष्ठ पर्वत है, इसीसे इसका नाम कौच-दीप रखा गया है। कार्तिकेयके बाणसे इस पर्वतका जितम्बदेय और समस्त निकुञ्ज उन्मूलित हुए थे। प्रियव्रतके पुत्र वृत्तवृद्ध इस दीपके अधिपति हैं। उन्होंने इसे मङ्ग वर्षों में विभाग कर अपने सात पुत्रोंके मध्य बाँट दिया। वृत्तसमवर्षों में सात वर्ष पर्वत और सात नदी हैं। पर्वतोंके नाम हैं—रुद्र, वर्द्धमान, भोजन, उपवर्द्धन, नन्द, मन्दन और मर्वतोमद्र तथा नदियोंके अभया, ससतीषा, शार्पका, तीर्थवती, रूपवती, पवित्रवती और शुक्ला। इन सब नदियोंका जल बहुत पवित्र और निर्मल है। इस स्थानके सभी मनुष्य धर्माशील होते हैं।

छठवाँ दीप शाकदीप है जो अक्षोम सागर योजन विस्तृत है। दक्षिणमुद्र इस दीपके चारों ओर परिवेष्टित है। यहां शाक नामक एक प्रकार का वृक्ष है जिसके पत्तोंका भीतरी भाग रुखड़ा और बाहरी भाग सुलायन है। इसी वृक्षसे इस दीपका नामकरण हुआ है। इसको गन्ध बहुत सौमयुक्त है जिससे समस्त दीप आमोदित हुआ करता है। इस दीपके अधिपति प्रियव्रतके पुत्र मन्धानिय हैं। इन्होंने इस दीपको अपने सात पुत्रोंके नामानुसार सात वर्षों में विभाग कर हर एकको एक एक विभाग प्रदान किया। इसमें भी ईशान, जम्बूद्वीप, वन-मद्र, शतकेसर, सहस्रस्त्रीता, देवपात और महानक्ष नामके सात पर्वत तथा अनुष्ठा, पायुर्दा, उभयस्थिति, अपराजिता, पञ्चनदी, सहस्रश्रुति और मिश्रधृति नामकी सात नदियाँ हैं।

दक्षिणसागरके बाद पुष्करदीप है जो शाकदीपसे दूना बड़ा है तथा चारों ओर खादु जलसागरसे वेष्टित है। इस दीपमें एक बड़ा पुष्कर है जिससे अग्निशिखोंकी भाँई एक लाख निर्मल कानकमय पत्र-सर्वदा प्रकाश पाते हैं। इन पत्रोंमें भगवान् नारायणका लवणमग्नस्थान माना गया है। यहां मानलोत्तर नामक एक बड़ा पर्वत है जो पूर्व और पश्चिमवर्षके सोमापर्वत रूपमें अवस्थित है और जिसकी लंबाई तथा चौड़ाई दशहजार योजन है। इस दीपमें लोकपालोंको चार सुरियाँ हैं जिनसे अथ भागमें सूर्यका रश्मि है जो सुमिरपर्वतके चारों ओर परिभ्रमण करता है। इस दीपके अधिपति प्रियव्रतके पुत्र धोतिहोत्र हैं। इनके रमणक और मङ्गल नामक दो पुत्र हैं। राजा धोतिहोत्रने इस दीपको दो वर्षों में विभाग कर अपने दो पुत्रोंको हर एकका अधिपति बनाया। धोतिहोत्रने ईश्वरकी उपासना करके अपना प्राण छोड़ा। (भागवत ५ स्कन्ध) (स्तो०) दो वर्षों इयते इति २ गतो वाङ्मलकार्ष्ण्यं ॥ २२ व्याघ्रचर्म, माघका चमड़ा। (पु०) दिग्गता हयोर्विद्योर्वा गतां पापी यव' काकाचिगोलेकन्यायेन हयोर्वित्येतोऽपि चतुर्दिश इति सिद्धिः। ३ तोयोर्युक्त पुलिनमात्र; चरः। ४ अवसम्बन्ध-स्थान, पाषाण। ५ ककोशसूत्र, ककोल नामका पिंड। दीपकूर (सं० पु०) दीपस्य दीपान्तरस्य कपूरः। चोन कपूर, चीनी कपूर।

होत' साथी भण, हैत' वन' कर्म' धा० । वनविशेष, एक तपोवन जिसमें युधिष्ठिरने यज्ञवाक्यके समय कुछ काल तक निवास किया था ।

इस वनमें जो वास करते हैं, उनका मोह और शोक काता रहता है । यहाँ शोक और मोह दोनों नाश हो जाते हैं इसीसे इसका नाम हैत पड़ा है ।

हैतवाद (सं० पु०) हैत' अधिकृत्य वादः । गौतमादि प्रणीत जीवेष्टर विभेद-निर्णायक कथारूप ग्रन्थभेद, कपिलादि प्रणीत नामा जीवनिर्णायक कथारूप ग्रन्थभेद । जीव और ईश्वरकी पृथक्, पृथक् मानना ही हैतवादका चरमसिद्धान्त है । कपिल गौतमादि श्रद्धागण सभी विषयोंके प्रकृत तथ्यको जान कर दुःखनिवृत्ति और ब्रह्मविषयक जो सब निश्चय कर गये हैं, वे सब ग्रन्थ दर्शनशास्त्र नामसे प्रसिद्ध हैं । उन सब दर्शनशास्त्रोंमें हैतवादका विशेषरूपसे प्रतिपादन किया गया है ।

सभी दर्शनशास्त्रोंमें प्रायः हैतवादका उपदेश दिया गया है । महात्मनि शङ्कराचार्यने जन्म से कर अन्यान्य दर्शनशास्त्र-प्रतिपादित हैतवादका खण्डन कर भईत-वादका संस्थापन किया है । शङ्कराचार्यके बादसे ही हैतवाद और भईतवादकी से कर बहुत मतभेद चला है ।

योगिर्थेष्ट पट्टावलीने पट्टावलीसंहितामें बहुत संचित्र भावसे भईतवादका उपदेश तो दिया था, लेकिन शङ्कराचार्यने ही केवल प्रसाधारण प्रतिभावससे हैत-बोधक सभी न्युनियोंकी भईतभावमें व्याख्या करके भईतमत संस्थापन किया है । शङ्कराचार्यके बादसे हो इस मतका विशेष भादर होता आ रहा है । हैतवाद कहते समय भईतवाद भी कहना आवश्यक है । इसीसे पहले हैत और भईतवाद दोनोंकी ही एक साथ मिला कर ग्रन्थरूपसे उसकी आलोचना की जायगी ।

हैत और भईतवादकी भीमसा करना बहुत कठिन है । इसीसे कोई विचार किये बिना हम यहाँ पर पूर्य-पाद दार्शनिकोंको जो कुछ कहा है, वहीं लिखते हैं ।

हैतवादी लोग कहा करते हैं, कि जीव और ब्रह्म इन दोनोंमें हम सीमाका जो भेदज्ञान है, वह नित्य है; लेकिन भईतवादी कहते हैं, कि जीव और ब्रह्ममें

जो भेदज्ञान है, वह भ्रान्तिमूलक है । यह भ्रम दूर होनेसे ही जीव अपनेको ब्रह्मस्वरूप समझ कर मुक्ति लाभ कर सकता है । 'तत्त्वमसि' वेदके इस महावाक्यका हैतवादी जैसा भादर करते हैं, भईतवादी भी वैसा ही भादर करते । किन्तु दोनों मतवाले इस न्युक्तिका भिन्न भिन्न पर्य लगाते हैं । इसीसे हैत और भईत इस प्रकारका मतभेद हुआ करता है । हैतवादी जो व्याख्या करते हैं उसे भ्रम'गत नहीं कह सकते और भईतवादीकी व्याख्या भी भ्रम'गत, नहीं है । न्युक्तिका इस प्रकार विभिन्न पर्य होनेसे ही, हैत और भईत इन दो प्रकारके मतोंमें विभिन्नता होती है, यह मतभेद ही हैत और भईतवादका कारण है । जिन सब धर्मशास्त्रोंकी से कर हैत और भईतमत प्रचलित हुआ है उन धर्मशास्त्रोंका आधार कहा है ? पहले उसीका अनुसंधान करना चाहिये ।

वेद ही ज्ञानका आधार है । न्याय, चर्याय, सत्य, मिथ्या इत्यादिको सम्पूर्ण रूपसे जाननेको मनुष्यमें समता नहीं है । मनुष्यमात्रमें ही भ्रमप्रमादयुक्त है । एक मनुष्य जिसकी न्याय कहता है, दूसरा उसे चर्याय कहता है । एक मनुष्य जिसे कर्त्तव्य समझ कर उपदेश देता है दूसरा उसमें से कहें दोष निकाल देता है । मतः इन सब कारणोंसे मनुष्यनृत्तिके अन्धों होनेसे ही विभिन्न प्रकारके भ्रम और प्रमादपूर्ण होनेको सम्भावना है । किन्तु ईश्वर यदि इसका एक निर्दिष्ट नियम स्थिर कर दे, तो फिर उस प्रकारकी विभिन्नता वा भ्रमप्रमादयुक्त होने को सम्भावना नहीं रहनेगी । प्रायः श्रद्धागण वेदको ईश्वरप्रणीत वा अपौरुषेय कह कर मानते हैं । इसी कारण वेदके सत्यत्वमें इस प्रकार सिद्धा है ।

'इष्टाप्रत्यनिष्ठपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो दृश्यो वैश्यति च वेदाः' यजुर्वेदभाष्य ।

इष्टाप्रति और अनिष्टपरिहारका पौलौकिक उपाय जिस चर्यसे जाना जाता है, उसीका नाम वेद है । वेदमें दो विषय प्रतीयक हुए हैं, धर्म और ब्रह्म । किन्तु वेदसे इन दो विषयोंकी जाननेमें नामा प्रकारके सन्देह और आधुनिकता या खड़ी होती है । उन सबको भीमसा करके अथ विषय स्थिर करनेके लिये ही दर्शनशास्त्र

‘ज्ञान’ हम लोगों का है, उस भेद को यदि नित्य माने, तो जीव-चैतन्य और ब्रह्म-चैतन्यमें एक स्वरूपतः भेद मानना होगा। किन्तु इस प्रकारका भेद माननेसे ‘एकमेवाद्वि-तोय’ ‘प्रधानं ब्रह्म’ ‘अष्टा ब्रह्माणि’ ‘सर्वसंख्यिदं ब्रह्म’ ‘तत्त्वमसि’ आदि महावाक्योंके साथ विरोध उत्पन्न होता है। यदि यह कहें, कि द्वैतवादियोंने इन सब श्रुतियों को द्वैतबोधक व्याख्या की है, तो उससे विरोध होनेकी सम्भावना ही क्या ? किन्तु इसके उत्तरमें प्रकृत भीमासा-सुदूरपराहत, मातृ-शुद्धि-विषय नहीं है। जिन्होंने इन सबकी व्याख्या की है, वे नित्यबुद्ध सुखस्वभावके हैं, एक एक मनुष्य भयतार स्वरूप है। किसी एक मनुष्यका स्वकीयलक्षित युक्ति द्वारा विचार करना सङ्गत नहीं है। चैतन्यके उपाधिगत जाना प्रकारके भेद मालूम पड़ जानिसे स्वरूपतः कोई भेद नहीं रहेगा। इस संसारमें जो एक है और अद्वितीय है, वही ब्रह्म है। ब्रह्मविषयक अपरोक्षज्ञान प्राप्त करनेमें वह एक और अद्वितीय पदार्थ जिस स्वरूपका है उसे जानना जरूरी है। जिसका परिणाम है, अर्थात् जो आज एक प्रकारका आकार धारण करता है, कल दूसरे प्रकारका, वह एक और अद्वितीय नहीं हो सकता। इस संसारमें जितने जीव हैं, उनमें जिस जिस विषयकी विभिन्नता है, वह विषय चैतन्य पदार्थ नहीं है, किन्तु उनमें जिस विषयकी एकता है, वही चैतन्य पदार्थ है। इस प्रकार एक और अद्वितीय क्या है उसीका अन्वेषण करके ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया जाता है।

द्वैतवादी जीव चैतन्यको ब्रह्मचैतन्यसे यदि पृथक् समझते हैं, तो वे ब्रह्मचैतन्यविषयक अपरोक्षज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। अपने चैतन्य सम्बन्धमें ही मानवका अपरोक्षज्ञान सम्भव है, क्योंकि मुख्य अपने चैतन्यको ही स्वयं अनुभव कर सकते हैं। चैतन्य इन्द्रियग्राह्य पदार्थ नहीं है, वरन् वह अतोन्द्रिय है, अतः दूसरेके चैतन्यके विषयमें उसका अपरोक्षज्ञान कदापि नहीं हो सकता। जीवका चैतन्यविषयक जो अपरोक्षज्ञान है, अर्थात् ‘मैं’ इस ज्ञानकी उपाधिगुण्य करनेकी कोशिश करके उपाधिगुण्य चैतन्यका अपरोक्षज्ञान प्राप्त करनेके सिवा ब्रह्मज्ञानका और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

ब्रह्मज्ञान नहीं होनेसे सुप्ति नहीं होती। किन्तु द्वैत-वादीके मतसे जीवकी उपाधि नित्य है। सुप्ति उस उपाधिकी भूल जानेकी वे कोशिश भी नहीं करते। अतः द्वैतवादीको सुप्ति जिस प्रकार ब्रह्ममें मौन होना पर्याप्त है वही ब्रह्मका हो जाना है, उस प्रकार द्वैतवादीको सुप्ति नहीं है। उन लोगोंका कहना है, कि जो कुछ उनके पास है, उन्हें वे अनन्यकर्मा हो कर ईश्वरसेवा हो परम पुरुषार्थ है। ऐसे सबल्लामि उपाधि रह जाते हैं, क्योंकि उनके मतसे उपाधि नित्य है। किन्तु द्वैत-वादीके मतसे चैतन्यको जो जीव-उपाधि है वह अज्ञान-मूलक है। आत्मज्ञान हो जानेसे वह उपाधि जाती रहती है।

ब्रह्मका जो असीम पञ्च श्रुटिकायं में न लगा उसमें श्रुटिका कोई लगाव नहीं है। सुतरां मनुष्य किसी प्रकार उस असीम भावकी वस्तु नहीं समझता। “यतो वाचो विवर्तन्ते अश्रम्य मनसा सह” (श्रुति) मनके साथ जहां वचन नहीं जा सकता, शोध पाता है, वैसे सबल्लामि उसे निरुपाधि कहते हैं। किन्तु श्रुतिके साथ सम्बन्ध रख कर हम लोग परमात्माकी जगत्कारण आदि नामोंसे पुकारा करते हैं। प्रकृति ही इसकी श्रुतिशक्ति है, इसके साथ ही उस सम्बन्धका उद्घाटन है। अतः प्रकृति ही सभी उपाधियोंको जड़ है। आकाश, वायु, आदि पञ्चभूत उपाधिस्वरूप हैं, यह जड़ जगत् उपाधिस्वरूप है। जीवका स्वरूप मुख्य कारण-शरीर में उपाधिस्वरूप है। ब्रह्म इन उपाधियुक्तोंमें सभी जगह वर्त्तमान है। ये सब उपाधियां ब्रह्मसे ही निकली हैं। पहले कुछ भी न था, ब्रह्मकी ही-शक्तिके अभ्यन्तरसे प्रकाश पाते हैं। अतः ब्रह्मको सत्तामें हो उनकी सत्ता है। ब्रह्मके साथ समस्त जगत् अभेद है, सभी ब्रह्म-भुक्त है, कुछ भी विभक्त हो कर नहीं रहती। “अन्नाय-श्च यतः” “यतो वा इयानि भूतानि जातानि येन जातानि जीविनः” (श्रुति) ब्रह्मसे यह सारा संसार श्रुति स्थिति और भग्न होता है। सभी ब्रह्मशक्तिके आविर्भाव हैं, जब मनुष्यको यह ज्ञान हो जाता है, तब उपाधिकी फिर भिन्न सम्भक्त नहीं सकती। स्वप्न स्वप्न उपाधि-में ज्ञान सगुणरूपसे देखे जाते हैं। पवित्रावधि

हुआ है। कवितादि कविगोत्र में इसीको मोमोवा करके दमनशास्त्र बनाया है। यह दमनशास्त्र फिर दो व्यंग्यों में विभक्त किया जा सकता है, धर्ममोमोवा और ब्रह्ममोमोवा। जैमिनि जो प्रवचन किया है वही धर्ममोमोवा है।

वेदव्यासमें ब्रह्ममोमोवाको प्रवचन कर ब्रह्मको स्वरूप निरूप्य किया है। इसके सिवा सांख्य, पातञ्जल आदि दमनसमूहमें ब्रह्मज्ञान ही प्रतिपादित हुआ है। इन सब दमनशास्त्रोंमें प्रवचन क्रमसे छटि, प्रत्यय आदि अनेक विषयोंकी आलोचना की गई है। दमनशास्त्रका अवलोकन करनेमें मोमोवाको बात तो दूर रहे, माना प्रकारके मतोंका जटिलज्ञान उत्पन्न होता है। क्योंकि अविद्योगोंमें अपना अपना मत समर्थन करनेकी प्रिये हो एक एक धर्मशास्त्रको बनाया है।

शङ्कराचार्य भट्टमतप्रवर्तक थे और समस्त दमनशास्त्र द्वैतवादी। शङ्कराचार्यने केवल भट्टमतका संशोधन किया है जो नहीं, अन्यथा दमनोक्त मतको खण्डन कर अपनेमें भट्टमतको जड़ मजबूत कर दी है। कवितादि कविगोत्रके अवतार स्वरूप वे और शङ्कर भी शङ्कराचार्यात् अर्थात् साक्षात् शङ्कर स्वरूप थे। यदि एक मत अवर्त्य हो, तो दूसरा सत्य होगा इसका क्या प्रमाण है? यदि क्याद, गौतम, कपिल और पतञ्जलिका मत निर्या हो, तो वेदव्यासका मत सत्य होगा तो क्यों? कथादादि कविगोत्र यदि प्रकृततत्त्वको न जानते हो तो शङ्कराचार्यको प्रकृततत्त्व जानते होगे तो मोमो नहीं हो सकता। जो कुछ हो, यह विषय बहुत दुष्ट है और साधारण मानवबुद्धिके योगेचर है। शास्त्रमें इस विषयका जो उत्तर है, उसीकी आलोचना करना चाहिये।

वेदान्तिका मत है, कि मिथ्याका चित्त जब शब्द हो जाता है अर्थात् वह वेदशास्त्रों अधिकारी हो सकता है और जब अतीतवेदवेदान्त श्रमदम आदि भाषणमें पूर्ण योग्य हो जाता है, तब शब्द उसे 'तत्त्वमसि' यह महावाक्य उपदेय देते हैं। 'तत्त्वमसि' अर्थात् तुम हो वह ब्रह्म हो। उन समय मिथ्याकी बँसाही खोल करनी चाहिये। 'मि' कहनेसे जो उपनेकी बोध होता है

यथायमं वह अर्थात् मेरी नित्य अर्थात् नहीं है। 'मि' ब्रह्मण्डका जो पर्य है, यथायमं में वही है। देवत भ्रमवर्गमें जो प्रभो 'मि' कहनेसे अर्पणका बोध करते हैं। मुक्त भ्रमोप परोक्षमात्रमें ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया है, प्रभो अर्पणको नित्यबुद्ध, मुक्त और अर्थात्समस्त समस्त कर 'ब्रह्मो मे भू' ऐसा कथान करना चाहिये। ऐसा करनेसे धीरे धीरे ध्यान, धारणा और नमाधि आदि द्वारा पररोक्ष ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकते हैं अर्थात् 'मि' जो ब्रह्म है' ऐसा समझने लगेगे। वस्तुका स्वरूप ज्ञानके बिना दूसरेसे उन वस्तुका प्रकृत विवरण सुन कर जो ज्ञान होता है उसे परोक्षज्ञान कहते हैं। मान लो, मैंने कभी मिठाई खाई नहीं है, किसीने आकर मुझसे मिठाईका ज्ञान कह सुनाया, तब मुझे मिठाईके विषयमें जो ज्ञान हुआ उसीका नाम परोक्षज्ञान है। किन्तु वस्तुका स्वरूप ज्ञान कर जो ज्ञान प्राप्त होता है उसे पररोक्ष ज्ञान कहते हैं, अर्थात् मिठाई खा कर मिठाईका जो ज्ञान हुआ, उसीका नाम पररोक्षज्ञान है। ब्रह्मके विषयमें भी ठीक यही है। ब्रह्मके स्वरूपका उपदेय पातेने ब्रह्मविषयक जो ज्ञान होता है उसका नाम परोक्षज्ञान है। जब ब्रह्मकी सत्ता उपलब्ध होती है, 'त्व' 'यह' तुम और मैं में कोई भेदज्ञान नहीं रहता, जब 'सोऽह' का ज्ञान हो जाता है, तभी ब्रह्मविषयक परोक्षज्ञान प्राप्त होता है। उन समय और कुछ भी नहीं रहता। प्रत्येक वस्तुमें ब्रह्मकी सत्ता पाई जागी है, यही भट्टमतवादियोंका निदान है।

द्वैतवादियोंके मतमें 'तत्त्वमसि' इस महावाक्यका पर्य कुछ और है, यथा-तत्त्वमसि अर्थात् 'तत्त्व त्वमसि' है मिथ्य तुम उसके हो। 'तत्त्व' ब्रह्मविषयक जो उपदेय दिया गया है, तुम उसी ब्रह्मके हो, तुम ब्रह्म के निकट नित्यसम्बन्धमें बंधे हो। मिथ्याको यह ब्रह्म विषयक उपदेय मिलनेसे शास्त्र, दास्य, भक्ष्य, वास्तव्य और मयूर भाव किसी न किसी विषयमें नित्यसम्बन्ध 'मि' भरा नहीं है, 'मि' उसका है, देवत 'मि' हो नहीं, जोहमात्र सभी उसी आदिपुरुषके हैं, ऐसा ज्ञान उसे उत्पन्न हो जाता है।

भट्टमतवादी कहते हैं, कि ज्ञेय और ब्रह्ममें जो भेद

‘ज्ञान’ हम लोगों का है, उस भेदको यदि नित्य माने, तो जीव-चैतन्य और ब्रह्म-चैतन्यमें एक स्वरूपतः भेद मानना होगा। किन्तु इस प्रकारका भेद माननेसे ‘एकमेवाद्वितीय’ ‘प्रज्ञानं ब्रह्म’ ‘ब्रह्म’ ‘सर्वसत्त्विक’ ‘ब्रह्म’ ‘तत्त्वमसि’ आदि महावाक्योंके साथ विरोध उत्पन्न होता है। यदि यह कहें, कि द्वैतवादियोंने इन सब श्रुतियों को द्वैतबोधक व्याख्या की है, तो उससे विरोध होनेकी सम्भावना ही क्या? किन्तु इसके उत्तरमें प्रकृत मीमांसा-सूत्रपरारम्भ, मानव-बुद्धिका विषय नहीं है। जिन्होंने इन सबकी व्याख्या की है, वे नित्यतुल्य सुखभावके हैं, एक एक मनुष्य पवतार स्वरूप है। किसी एक मनुष्यका स्वकीयस्वतन्त्र युक्ति द्वारा विचार करना सङ्गत नहीं है। चैतन्यके उपाधिगत ज्ञान प्रकाशके भेद मासूम पड़ जानेसे स्वरूपतः कोई भेद नहीं रहेंगा। इस संसारमें जो एक है और अद्वितीय है, वही ब्रह्म है। ब्रह्मविषयक अपरोक्षज्ञान प्राप्त करनेमें वह एक और अद्वितीय पदार्थ किस स्वरूपका है उसे जानना जरूरी है। जिसका परिणाम है, अर्थात् जो आज एक प्रकारका आकार धारण करता है, कल दूसरे प्रकारका, वह एक और अद्वितीय नहीं हो सकता। इस संसारमें जितने जीव हैं, उनमें जिस जिस विषयकी विभिन्नता है, वह विषय चैतन्य पदार्थ नहीं है, किन्तु उनमें जिस विषयको एकता है, वही चैतन्य पदार्थ है। इस प्रकार एक और अद्वितीय क्या है उसीका अन्वेषण करके ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया जाता है।

द्वैतवादी जीव चैतन्यको ब्रह्मचैतन्यसे यदि पृथक् समझते हैं, तो वे ब्रह्मचैतन्यविषयक अपरोक्षज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। अपने चैतन्य सम्बन्धमें ही मानवका अपरोक्षज्ञान सम्भव है, क्योंकि पुरुष अपने चैतन्यको ही स्वयं अनुभव कर सकते हैं। चैतन्य इन्द्रिययात्र पदार्थ नहीं है, वरं वह अतोन्द्रिय है, अतः दूसरेके चैतन्यके विषयमें उसका अपरोक्षज्ञान कदापि नहीं हो सकता। जीवका चैतन्यविषयक जो अपरोक्षज्ञान है, अर्थात् ‘मैं’ इस ज्ञानकी उपाधिगुण्य करनेकी कोशिश करके उपाधिगुण्य चैतन्यका अपरोक्षज्ञान प्राप्त करनेके सिवा ब्रह्मज्ञानका और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

ब्रह्मज्ञान नहीं होनेसे सुक्ति नहीं होती। किन्तु द्वैतवादीके मतसे जीवकी उपाधि नित्य है। सुतरां उस उपाधिको भूल जानेकी वे कोशिश भी नहीं करते। अतः द्वैतवादीको सुक्ति जिस प्रकार ब्रह्ममें मौन होना अर्थात् मैं ही ब्रह्मका हो जाना है, उस प्रकार द्वैतवादी की सुक्ति नहीं है। उन लोगोंका कहना है, कि जो कुछ उनके पास है, उन्होंने अनन्यकर्मा हो कर ईश्वरसेवा को परम पुरुषार्थ है। ऐसी अवस्थामें उपाधि रह जाती है, क्योंकि उनके मतमें उपाधि नित्य है। किन्तु द्वैतवादीके मतसे चैतन्यको जो जीव-उपाधि है वह अज्ञान-मूलक है। आत्मज्ञान हो जानेसे वह उपाधि जाती रहती है।

ब्रह्मका जो असीम अंश सृष्टिकार्यमें न लगा उसमें सृष्टिका कोई लगाव नहीं है। सुतरां मनुष्य किसी प्रकार उस असीम भावकी वस्तुता नहीं समझता। ‘‘तो पापों विवर्तने अशक्य मन्त्रा सह’’ (श्रुति) मनके साथ जहाँ वचन नहीं जा सकता, लौट पाता है, वैसे अवस्थामें उसे निरुपाधि कहते हैं। किन्तु सृष्टिके साथ सम्बन्ध रख कर हम लोग परमात्माको जगत्कारण आदि नामोंसे पुकारा करते हैं। प्रकृति ही इसकी सृष्टिशक्ति है, इसके साथ ही उस सम्बन्धका स्वपात है। अतः प्रकृति ही सभी उपाधियोंको जड़ है। आकाश, वायु, आदि पञ्चभूत उपाधिरूप हैं, यह जड़ जगत् उपाधिरूप है। जीवका स्वसूक्ष्म कारण-शरीर भी उपाधिरूप है। ब्रह्म इन औपाधिय रूपोंमें सभी जगह वर्तमान है। ये सब उपाधियाँ ब्रह्मसे ही निकली हैं। पहले कुछ भी न था, ब्रह्मकी ही शक्तिके प्रभुत्वसे प्रकाश पाती हैं। अतः ब्रह्मको सत्तामें ही उनकी सत्ता है। ब्रह्मके साथ समस्त जगत् अभेद है, सभी ब्रह्म-भूत हैं, कुछ भी विभक्त होकर नहीं रहती। ‘‘अनाप-द्य यतः’’ ‘‘नतो वा इवानि भूतानि जातानि येन जातानि जीवन्ति।’’ (श्रुति) ब्रह्मसे यह सारा संसार सृष्टि स्थिति और भङ्ग होता है। सभी ब्रह्मशक्तिके आविर्भाव हैं, जब मनुष्यको यह ज्ञान हो जाता है, तब उपाधिको फिर भिन्न समझ नहीं सकते। स्वतन्त्र स्वतन्त्र उपाधिमें ब्रह्म सगुणरूपसे देखे जाते हैं। अविच्छेदक

पपने छट जोषके कारण शरीरमें वे प्राज्ञ नामसे, सुन्दर-
देहमें तेजस नामसे, स्थूल देहमें विश्व नामसे जोषरूपमें
प्रकाश पाते हैं और सर्व जीवीके कारण शरीर-समष्टिमें
वे (ब्रह्म) सर्वेश्वर नामसे, सूक्ष्म देह समष्टिमें हिरण्यगर्भ
नामसे और स्थूल देह-समष्टिमें वैश्वानर नामसे नियन्ता
और कारणस्वरूपमें प्रकाश पाया करते हैं। जीवको
इन त्रिविध देहरूप उपाधिमें ब्रह्म ही स्वयं जोषरूप
में प्रकाश पाते हैं। षडैतयादियोंके मतसे कोई पदार्थ
क्यों न हो, तब ब्रह्मके बाहर नहीं है, सभीमें उनका कुछ
न कुछ सम्बन्ध है। वे सभी पदार्थोंमें सत्तारूपसे वर्त-
मान हैं। उनको सत्तामें सभीको रक्षा है, अतः ब्रह्म
ही सब कुछ है। उनको सत्ताका अभाव होनेसे सभी
इन्द्रजालवत् तिरोहित हो जाते हैं। जोषरूपमें अन्तः-
कारणरूप उपाधिके योगसे वे सुख, दुःख हैं और जन्म
जन्मान्तर परिभ्रमण करते हैं। परमात्माके जोषभाव-
को उपाधि प्रविष्टा है, उससे अन्तर्गत देह और अन्तः-
कारण है तथा ईश्वरभावकी उपाधि माया है और उनके
अन्तर्गत समस्त जगत् कार्य हैं। एक दृष्टज दृष्टान्तसे
यह समझमें आ जायगा—मान लो, एक सुवर्णकुण्डल
है, सुवर्ण कहनेसे जिसका बोध होता है, सुवर्णकुण्डल
कहनेसे उसका बोध नहीं होता। किन्तु सुवर्ण और
सुवर्णकुण्डलमें बहुत; कोई भेद नहीं है, अगर है भी,
तो सिर्फ उपाधिगत भेद है। यही सुवर्णनिर्मित वस्तु
कुण्डल यह उपाधि या कर अन्यान्य सुवर्णसे कुछ विभि-
न्नता हो गई है। इसी प्रकार जिसका कोई विशेष
नाम नहीं है, वह उपाधिगुण्य है। किन्तु जब कोई
विशेष नाम भिन्न जाता है, तब वह उपाधिगुण्य होता
है। जिससे नहीं रहनेमें 'मिरा' और 'मि' का ज्ञान नहीं
रहता, यही मिरा चैतन्य है। जिसके नहीं रहनेसे
अन्यान्य जीवीका आत्मा और अस्मिता ज्ञान नहीं
रहता, यही उनका चैतन्य है। ब्रह्मविषयमें आत्म-
कारण भोग कहते हैं, कि वे जो आत्मपुरुष हैं, वे ही
चैतन्यमय पुरुष हैं।

जहाँ नहीं चैतन्य देखोगे, यही 'देवा' मान्य
पड़ेंगी कि चैतन्य पदार्थ सभी जगह एक है। इसी
'शक्त'में अपने चैतन्यको किसी विशेष नामसे पुकार

नहीं सकोगे। उस समय अपनेकी उपाधिगुण्य सं-
भोगे। किन्तु पापातनः जीवकी अज्ञानकी उपाधि
है, जीव कहनेसे इतर जन्तुमें भिन्नता बोध होता है।
इस प्रकार पुरुष ज्ञानका नाम उपाधि है। जीव जब
तक अपनेकी उपाधिगुण्य चैतन्यमय पुरुषके नाम नहीं
समझता, तब तक जीवकी जीव उपाधि रहेंगे। भेदज्ञान
होनेसे ही उपाधिकी सृष्टि हुई है। इतयादियोंके मतसे
जीव-चैतन्यके साथ जीव-चैतन्यका कोई भेद नहीं
है, लेकिन ब्रह्म-चैतन्यके साथ अणुभेद है और यह
भेद निवृत्त है। अतः जीवकी उपाधि जीव छोड़ कर कभी
भी वह निरुपाधिक नहीं हो सकता। षडैतयादी
कहते हैं कि जीवके उपाधिगुण्य रूप बिना उसकी सुनि
नहीं होती, अर्थात् वह पुरुष गुण्यत्वा होने पर भी अर्थादि
भोगके बाद फिर उसे इस लोकमें जन्म लेना पड़ता है।
षडैतयादियोंके मतसे चैतन्य पदार्थ सर्वत्र एक है।
जीव नामधारी चैतन्य उपाधिक है और ब्रह्मचैतन्य
निरुपाधिक। जीवकी उपाधि रहने वा नहीं रहने देना
उन जीवकी स्वयं चैतन्यके ऊपर निर्भर है। उपाधिका
नहीं रहना ही परम पुरुषार्थ है। इतवादी भोग कहते
हैं, कि जीव नियत उपाधिक है, विद्वान् सभी देवता
उसके उपास्य पदार्थ हैं। किन्तु इन सब देवताओंमें
विशेष विशेष क्रमोंके अविद्याता हो कर विशेष विशेष
नाम पाये हैं। सभी देवता निवृत्त नहीं हैं, सुतर्ग वे
निवृत्त सुख प्रदान कर नहीं सकते। चैतन्यमयता
निवृत्त देवगण कामफलानुसार सुख देते हैं। भिन्न
भिन्न देवताओंके उस चैतन्यमें भिन्न भिन्न उपाधि पाई
है। देवता उपाधियुक्त चैतन्य अवच्छिन्न चैतन्य है,
यह वैदिकज्ञानकाण्डसे जाना जाता है। एक अवि-
तोष चैतन्यमय पुरुष ही निवृत्त पदार्थ है। ज्ञानमार्गका
अवच्छिन्न करके उसकी उपासना द्वारा जीव नियत सुख
प्राप्त कर सकता है। उस चैतन्यमय पुरुष-विषयक
ज्ञानमार्गाधारका नाम ही उसकी उपासना है। प्रणव-
मन्त्रादि उस पुरुषके वाचक हैं। षडैतयादी पुरुषार्थ-
साधनके लिये पुरुषाकार चर्चन करके सायं गुरु
पुरुषपद पार्श्वको इच्छा करते हैं। इतवादी नियत
पुरुषके लिये उपासक हो कर उपासक रहनेके लिए हो

अभिलाषी हैं। वहीय कवि रामप्रसादसेन हैं तथादियीके मतका भाव स्पष्ट कर गये हैं, "चीनी चीना में नहीं चाहता, चीनी खाना पसन्द करता हूँ।" ईश्वरमें न मिल कर ईश्वरोपासनामें साधनको परम आनन्द मिलता है, यही है तथादीका धरम सिद्धान्त है।

है तथादी और अहै तथादी दोनोंका ही कहना है, कि ब्रह्मघोमके बिना मुक्ति नहीं होती, अर्थात् जन्म-मरण-मरणदिजनित दुःखभोगसे मुक्ति पानेका कोई मार्ग नहीं है। अभी हम विषय पर विचार करना होगा कि जहां ज्ञान है, वहीं ज्ञाता है और ज्ञेय भी है। ज्ञाताकी नहीं रहनेसे ज्ञेय वस्तुका ज्ञान होना असम्भव है। है तथादी कहते हैं, कि जब ब्रह्म हम लोगोंके ज्ञेय विषय हुए, तब ब्रह्मविषयक ज्ञेयके ज्ञाता कौन होगा ? अवश्य 'मैं' ही होगा। ऐसा होनेसे ज्ञाता और ज्ञेय पदार्थों में जो पृथक्-सम्बन्ध है, हम लोगोंके साथ ब्रह्मका भी वही पृथक्-सम्बन्ध होगा। सुतरां है तथादीके निकट ब्रह्मपदार्थ उनके अहं पदार्थसे भिन्न कोई दूसरा पदार्थ है। उन लोगोंका ख्याल है, कि मैं ज्ञाता हूँ, ब्रह्म ज्ञेय है तथा ज्ञाता और ज्ञेय इन दो पदार्थोंमें जो सम्बन्ध है, वही ब्रह्मज्ञान है। अहै तथादी जिस पद्धतिका अवलम्बन करते हैं, उसमें जो ज्ञाता है, वहीं ब्रह्म है अर्थात् 'मैं' ही ब्रह्म है और 'मैं' ही ज्ञेय विषय है अर्थात् जीव 'मैं' है या पदार्थ है वही ज्ञेयविषय है तथा ज्ञाता और ज्ञेय ब्रह्म और जीवमें जो अर्धद सम्बन्ध है, वही ब्रह्मज्ञान है। है तथादी और अहै तथादीको जो बातें लिखी गई हैं उनमेंसे किसीकी बात सत्य है और किसीको बात असत्य। यहां पर केवल विचारपद्धतिसे काम नहीं चलेगा क्योंकि निष्कर्ष तब ही मान्यबुद्धिमें इस विषयका कोई निश्चय नहीं हो सकता।

'तत्त्वमसि' भादि महावाक्यका प्रकृत अर्थ क्या है ? अर्थात् वेदकर्त्ता उन सब विषयोंका जो अर्थ लगा गये हैं, वह वेदत्रय ध्यति ही जान सकते हैं। इसीसे कोई विचार न कर केवल महापुरुषोंमें जो कुछ कहा है, वही यहां लिखते हैं। पर हाँ, शास्त्रविश्लासी मनुष्योंकी यह कहना उचित है, कि कोई मत मिथ्या नहीं है, कारण कथिलने जो उपदेय दिया है, वह भी

सत्य है और शङ्कराचार्यने जो कहा है वह भी प्रकृत है, कोई मत असत्य नहीं है। इसीलिये शास्त्रमें अधिकांश भेदको इसीसे गृह्यही है। शास्त्रकारों ही कर जब शास्त्रका अवलोकन किया जायगा, तब दिव्यवस्तु और विग्रहरूपमें वह ज्ञान हो जायेगा, कि किसी मतके साथ किसी मतकी विभिन्नता नहीं है। सभी मत एक हैं तथा अन्तर्गतव्य हैं। अतः पहले शास्त्रविचार न कर किसी एक महापुरुषके वाक्योंमें यत्नान्वित हो कर ईश्वरोपासना करना ही जीवका अवश्य कर्त्तव्य है।

परमयोगी पतञ्जलिके योगशास्त्रके मतसे द्रष्टा जब अपना स्वरूप जान लेता है तभी वह कैवल्यपद प्राप्त कर सकता है। वेदान्तमें जिने जीवके तन्मय धनमाया है, मान्य गड़ता है कि पतञ्जलिने उसीका नाम 'द्रष्टा' रखा है। योग समाधान होनेसे जो द्रष्टा कैवल्यताम करता है। "यदा दृष्टुः स्वरूपेणावस्थानं" (मातृगल) उस समय जोव-द्रष्टा स्वरूपसे अवस्थान करता है, अर्थात् कैवल्य प्राप्त करता है। महामति पतञ्जलिने स्वप्नोत्त पातञ्जलदर्शनमें योगमार्ग अवलम्बन करके वे सब विषय प्रतिपादित किये हैं जो अपरोक्षज्ञानसे अनुभूति होती है। योगशास्त्रमें जो लिखा है उनमें एक प्रकारकी गिना मिलती है, कि चित्तका वृत्तिसमूह निवन्धन द्रष्टा है अर्थात् जोव की भिन्न भिन्न रूपोंमें देखा जाता है, वह द्रष्टाका स्वरूप नहीं है। चित्तवृत्ति-समूहका निरोध होनेसे द्रष्टा उपाधिगुण हो कर है तन्मय स्वरूपमें अवस्थान करता है; अर्थात् योगमार्ग अवलम्बन करनेसे मनुष्य जब ऐसी अवस्थामें आ जाते हैं, कि चित्तके वृत्तिसमूहके साथ उनका सम्पर्क बिलकुल जाता रहता है, तभी पुरुष कैवल्य पदको पाते हैं। ऐसा होनेसे देखा जाता है, कि योगशास्त्रके मतानुसार जोवको जो उपाधि है, वह अस्तित्व है। इस उपाधिके नहीं रहनेसे जो सोचको प्राप्ति होती है और यही परम पुरुषार्थ है। इस पुरुषार्थको साधन करनेके लिये, जिस जिस उपायका अवलम्बन कर्त्तव्य है, योगशास्त्रमें उसीका वर्णन किया गया है।

सांख्यकार कपिलदेवके मतसे पुरुष चिरकाय तक शुद्ध और मुक्त है। यही पुरुषत्वधर्मके पक्षीस तत्त्वोंका

परमत्त्व है। देहो पर्याप्त पुरुष स्वभावतः सुख होने पर भी देहाभिमान निवृत्त्यन उसके दुःखका कारण हो जाता है। इस दुःखको निवृत्ति करना ही पुरुषका पुरुषार्थ है। प्रकृत पुरुष सम्बन्धीय पवित्र क निवृत्त्यन पुरुष अपनेको मोषाधिक समझा करते हैं। इस पवित्रकको दूर कर सकनेसे पर्याप्त प्रसूति पुरुषके श्रद्धाका ज्ञान हो जानेसे ही मोक्षनाम होता है। इस ज्ञानमें जीवात्मा या परमात्मा पृथक् नहीं हैं, पर्याप्त इनके स्वरूपमें कोई भेद नहीं है। जीव जो अपनेको मोषाधिक समझता है, वही उसके वृत्त्यनका कारण है। सांख्यकार पदस्य पुरुष स्वीकार करते हैं। पुरुष पदस्य होने पर भी मैं पुरुष, तुम पुरुष, वे भी पुरुष इत्यादि, किन्हीं किन्हीं प्रकारका प्रभेद नहीं है। कोई कोई कहते हैं, कि इनके मतमें जब पुरुषगत कोई पदार्थ नहीं है, तब ये भी पद्वैतवादी हैं। यह मत पद्वैत है या द्वैत, इसका विचार करना अनायासक है, किन्तु यह द्वैत कह कर हो प्रसिद्ध है। इसीसे हम लोग सांख्यको द्वैतवादी मानते हैं। सांख्यदर्शनके भाष्यकार विश्वामित्रस्य वेदान्तदर्शनके पद्वैतवादीको अपने मतमें पर्याप्त द्वैत मतमें खींच मानिको चिन्ता को है। किन्तु वेदान्तदर्शनमें इन सब मतोंका खण्डन किया है।

चित्तमें जब द्वैतभाव प्रयत्न रहता है, तब मनुष्य 'मैंके चित्तिरहित एक चोरको छोड़ने बाहर निकलता है। उस समय चित्तमें मिथुनभावाम्ब छत्ति उत्पन्न होती है, पर्याप्त छत्ति युगपत् अन्तर्मुखी चोर बहिर्मुखी हो कर चित्तमें उदय होती है। जिस प्रकार खण्डको पुष्पकको पत्थरके निकट रहनेसे उस लोहमें मिथुनभावाम्ब शक्तिका प्रकाश होता है, उसी प्रकार सुखभोगको कामना रहनेसे मनुष्यके चित्तमें मिथुनभावाम्ब द्वैतभाव उत्पन्न हुआ करता है। उस समय चित्तका एक प्राप्ति पाप्मामिसुखो चोर दूसरा प्राप्ति पाप्म विषयामिसुखो हो जाता है, उस समय मनुष्य अपनेको भी पच्छा समझता है चोर सुखप्रद वाद्य विषयको भी। भोक्ता चोर उपभोग्य ये दोनों ज्ञानके ज्ञान हैं तथा एक दूसरेसे पृथक् नहीं रह सकते। भोक्षक नहीं रहनेसे उपभोग्यका पद कुछ नहीं चोर उपभोग्य पदार्थ नहीं रहनेसे

भोक्ता नहीं रह सकता। भोक्ता चोर उपभोग्य ये दोनों एक ज्ञानके दो प्राप्तिरूप हैं। चित्तमें जब द्वैतभावको प्रसूति देनी जाती है, तब मनुष्य अपनेको प्रीतिमुखका भोक्ता समझता है चोर अपने 'मैंके' मित्र एक चोर को उपभोग्य पदार्थ मानता है। द्वैतवादमें भक्त लोग अपनेको प्रीतिमुखके भोक्ता समझते हैं, सुतरां उसके पाराध्य पदार्थको उपभोग्यपदार्थ स्वरूप देना ही पसन्द करते हैं। पाराध्य पदार्थका अनुभव कर जो प्रीतिमुख मिसता है, उस सुखभोगके लिये ही द्वैतवादी पाराध्य पदार्थको द्वैतभावसे भक्ति करते हैं। द्वैतवादीको ब्रह्मप्रीति सकाम है, क्योंकि द्वैतवादी यदि खूब गोले ख्याल करे, तो मान्य पदार्थ कि वे अपनेको सुखभोक्ता समझते हैं चोर उस भोगेच्छाको त्याग करनेकी उनकी इच्छा लगे रहने पर भी वे जीवोंका जीव नाम मिटानेको कभी स्थापित नहीं करते। जब तक मैं सुख दुःखका भोक्ता हूँ, तब तक मेरी 'जीव' यह उपाधि रहेगी। क्योंकि जो सुख दुःख भोग करता है, उसका नाम जीव है। जनको ब्रह्मप्रीति निष्काम है, वे ही पद्वैतवादी हैं। द्वैतभाव चोर पद्वैतभावकी प्रीतिमें जो प्रभेद है, वह एक उदाहरण दे कर समझाते हैं। मान्यता, दो मनुष्यमें प्रेमते प्रेमते एक प्रस्फुटित पत्रपुष्प देखा। पत्रकी गोभा तथा सुगन्धमे दोनोंके मनमें एक प्रकारको छत्ति पा गई। फिर दोनों मोक्ष्यसे शास्त्र हो कर पत्रको देखने लगे, कुछ काल तक देखते रहनेके बाद एकमे दूसरेमें कहा, 'भाई! देखो! इस पत्रको सुगन्ध ऐसी मनोरम है, कि दिन रात इसकी गन्ध लेनेको इच्छा होती है।' दूसरेने कहा, 'इस पत्रका मोक्ष्य देख कर मेरी इच्छा होती है कि मैं पत्रके साथ मिला जाऊँ। यह पत्र जिस तरह सरोवरमें खिल कर रहता है, उसी तरह मेरी भी पत्र हो जानेकी इच्छा है जिससे मैं भी उसीके ओसा खिल कर रह सकूँ।' दोनोंमेंसे एक तो पत्रको द्वैतभावसे पसन्द करता या चोर दूसरा पद्वैतभावसे। एक तो पत्रके मोक्ष्यमें अपने पद्वैतज्ञानको मिला देनेका इच्छा या चोर दूसरा अपने पद्वैतज्ञानको अलग रख कर पत्रका मोक्ष्य ही उपभोग करना चाहता या। जिस प्रीतिमें पद्वैतज्ञानको विभर्जन करनेकी चाहता उत्पन्न होती है, वही पद्वैत

भावकी प्रीति है। जहाँ अपने प्रथक् नामको प्रलय रखनेको इच्छा होती है, वही हैतभावकी प्रीति है। हैतभावकी प्रीतिमें मनुष्यके मनमें सुखभोगकी वासना प्रच्छन्नभावसे छिपी रहती है, इसी कारण यह हैत ब्रह्म-वादिदोने हैतवादके विरुद्ध अपने प्रकारके तर्क वितर्क किये हैं। यहैतवादी कहते हैं, कि 'ब्रह्मनाम'-रूप अग्निमें अपने धर्म कर्म, नाम आदिकी आहुति देना ही ब्रह्मोपासना है। इनमेंसे अपने 'जीव' नामकी अर्थात् सुखदुःखभोगा इन नामकी आहुति देना ही ब्रह्मोपासनाकी पूर्णाहुति है। जब यह ज्ञान विलकुल तिरोहित हो जाता है, 'मय' खल्विदं ब्रह्म' जो क्लृप्त है सभी तन्त्र है ऐसा ज्ञान हो जाता है, तबो ब्रह्मोपासनाकी चरमसोमा तक पहुँच जाता है, उस समय हैत और यहैत इस प्रकारका कोई विवाद उपस्थित नहीं होता। सभी ब्रह्मस्वरूपमें अनुभूयमान होते हैं। हैतवादी भी ब्रह्माग्निमें सब धर्म कर्मोंकी आहुति दे कर उपासना करते हैं, किन्तु वे पूर्णाहुति देना नहीं चाहते। क्षिपे ह्य भावमें उनका यह ज्ञान रह जाता है। जो हैत-भावके भक्तिरसमें सिला हो कर आनन्द उपभोग करना चाहते, वे ब्रह्मकी अपनेसे प्रथक् ममभक्त कर ब्रह्मरूपको उपासना करना पसन्द करते हैं। किन्तु यहैतवादी ब्रह्माग्निमें आत्मयिसर्जन करनेके लिये ही ब्रह्म नामको पसन्द करते हैं। हैतवाद और यहैतवाद इन दो विषयोंकी प्राचीनता करनेसे ज्ञान पड़ता है, कि हैतवादके पसन्द करनेसे ही संसारचक्र प्रवर्तित हुआ है और यहैतवादके पसन्द करनेसे इस संसारचक्रकी निवृत्ति हुआ करती है। जिस प्रकार सूर्यो और सूर्यमें एक आकर्षण सम्बन्ध है—दोनों पदार्थ एक दूसरेसे आकृष्ट हो कर परस्पर मिल जानेकी चेष्टा करते हैं—जीव भी उसी प्रकार ब्रह्मके साथ मिल जानेके लिये सदा चेष्टा करता है। सूर्य सूर्यो भी अपनी तरफ लगातार खींच रहा है, किन्तु सूर्यो उसमें मिलती नहीं, तो क्यों? इसका ज्ञान ही जाननेसे ही जीव जो ब्रह्मपदमें लीन नहीं हो सकता। सर्वो जीव और ब्रह्म ही जो प्रलय प्रलय अर्थ रखा गया है, वह मालूम हो जायगा। सूर्य सूर्योको अपने साथ मिला लेनेके लिये मोचता है और सूर्यो भी उसी ओर

आकृष्ट तो होती है, लेकिन सूर्योको किसी दूसरी ओर जानेकी चेष्टा है। इसी कारण सूर्यो सूर्यके साथ नहीं मिल सकती, केवल सूर्यके चारों ओर घूमती है। ब्रह्मकर्तृक जीव भी प्रतिदिन आकृष्ट होता है, किन्तु जीव उस आदिशक्तिके साथ मिलने नहीं जाता अपने सुखदुःखायी हो कर दूसरी ओर चला जाता है और इसी कारण जीव संसारचक्र पर घूमता रहता है। जीव भी ब्रह्मशक्तिको या तो ज्ञान कर या बेज्ञाने उसको भक्ति करता है, क्योंकि जब तक जीव ब्रह्मशक्तिमें नहीं मिलेगा, तब तक वह उस आदिशक्ति द्वारा आकृष्ट होता ही रहेगा। सांख्यदर्शनमें भी लिखा है, कि जब तक मनुष्यको विवेकका ज्ञान नहीं होगा, तब तक प्रकृति उसे छोड़ ही नहीं सकती। ज्ञान उत्पन्न करा कर प्रकृति तिरोहित हो जायेगी, केवल पुरुषको ज्ञान करानेके लिये ही प्रकृति उससे मिलती है। एक बार ज्ञान हो जानेसे मनुष्यके फिर प्रकृति दर्शन नहीं होता। उस आदिशक्ति द्वारा आकृष्ट होना ही वह पसन्द करता है और इसीसे उस ब्रह्मपदार्थमें मिल कर एक होना नहीं चाहता। ब्रह्मपदार्थमें मिल जानेके सिवा कोई दूसरा साध्य देख कर उसी ओर जानेकी कोशिश करता है और इसी कारण सूर्योको नार्हे घूमता रहता है, केवल अन्धमूल्यके रूपमें दुःख भोगता है। सूर्योको केन्द्राभिसुख-गतिकी किसी गतिकी यदि बन्द कर दिया जाय, तो सूर्यो सूर्यसे आकृष्ट हो कर थोड़े ही दिनोंमें उससे मिल जा सकती है। उसी प्रकार जीव यदि ब्रह्मपदार्थमें मिल जानेके सिवा किसी और साध्यकी ओर मुक्त जाय, तो थोड़े ही दिनोंमें वह ब्रह्मद्वारा आकृष्ट हो कर ब्रह्मपदमें लीन हो जा सकता है।

चाहे चेतन जगत् हो, चाहे जड़ जगत् ही सभीमें आकर्षणका नियम एक है। चेतन जीवके आकर्षणका नाम हो प्रिय, खेद, प्रणय और भक्ति है। यदि कोई पदार्थ दूसरे पदार्थको आकर्षण करे तब एक आकर्षण शक्तिके कोई दूसरे प्रतिकूल शक्ति न रहे, तो उस आकर्षण शक्तिके बलमें वे परस्पर मिल कर एक होनेके लिये अग्रसर होते हैं और अन्तमें मिल कर एक ही हो जाते हैं। चेतन जगत्में जो प्राति-यत्तिका कार्य देखने-

में जाता है उसमें एक मन की वृत्ति के समर्थ में या कर दूरी के साथ मिल कर एक हो गया है ऐसा देखनेमें नहीं आया। जीवके मनमें प्रीति है और उसके साथ साथ एक प्रतिकूल-गति भी है। इसीसे जीव मिय हो कर भी खड़े के आधार पदार्थ के साथ मिल कर एक नहीं हो सकता। प्रीतिकी प्रतिकूल-गति का नाम काम है अर्थात् स्वार्थ-सुखामिच्छा है। इन दो गतियोंके वश में जीव खड़े के आधार पदार्थ के चारों ओर घूमा करता है। पृथिवीको केन्द्राभिसुखगति और जीवके स्वार्थ-सुखकी प्रवृत्ति ये दोनों एक ही तुलना की जा सकती है।

यह कामना परिवर्तन कर केवल एक मात्र ईश्वरमें तथा पद्वैतभावमें भक्ति करो, मनके जितने प्रकारके व्यञ्जन हैं उन्हें काट कर मनको कोढ़ दो। ऐसा करनेसे ही मनकी गति ईश्वरकी ओर हो जायेगी और चलाते यह मन ईश्वरके साथ मिल जायगा। किन्तु जो द्वैतभाव से ईश्वरकी भक्ति करना पसन्द करते हैं, वे यदि सब कामनाओंको कोढ़ भी दें, तो भी एक कामना कोड़ी नहीं जा सकती। ईश्वरमें भक्ति संस्थापन करके उनके ध्यानमें स्वयं जिस सुखका अनुभव हो सकता है, द्वैत-वादो उस सुखकामनाकी त्याग करनेमें समर्थ नहीं है। उनकी एक पृथक्, अस्मित्वकी रक्षा करनेकी जो अभि-लाषा है वह द्वैतवादोके मनमें रह जाती है और वे यह द्वैतवादो नहीं हो सकते। विग्रहरूप ईश्वरके मिया इस लीगोंके पृथक्, अस्मित्व है, यही ज्ञान यह द्वैत है और यही यह द्वैत निवन्धन अनुपपन्न संसारवस्तुको बदलता है। निष्काम ईश्वर-प्रीति-अभ्यासकी जो प्रवृत्ति ईश्वरीयामना कहना चाहते, वे ही पद्वैतवादो हैं। जिनके कोई कामना नहीं है, वे अपने पृथक्, अस्मित्व-की चलाय रचना नहीं चाहते। जिनमें ईश्वर-प्रीतिके स्वीकृतमें अपनेको डूबी दिया है, वे उस स्वीकृत के मद्दे परना प्रवृत्तिवस्तुमें जा मिटने में। किन्तु जो ईश्वर-प्रीति-रूपी नदीमें रहनेको इच्छा करते हैं उन्हें किसी न किसी आशय (मंथर) में रहना होता है। ईश्वर-प्रीतिकी नदीमें वह प्रवाण पावत है। इन ५ पावतोंको पार करनेसे ही प्रवृत्तिवस्तुमें पहुँच सकते हैं। मौल्ययोगि-नर इन ५ पावतोंकी पट-चक्र कह कर मानते हैं।

इन पट-चक्रोंकी भेद कर प्रवृत्तिवस्तुमें मिय जानेसे जो जीव मुक्ति प्राप्त कर सकता है। दो मनके एक साथ मिल जाना ही प्रीति-वर्षाका चरमफल है। दो मनके मिल कर एक हो जानेमें प्रीतिका शेष नहीं रहता। पद्वैतवादो कहते हैं, कि जिस भक्तिके फलमें जीव ओर ईश्वरका भेद ज्ञान नहीं रहता है, वही प्रवृत्ति प्रवृत्ति है। किन्तु जो भक्ति निवन्धन जीव ईश्वरमें प्रवृत्ति होने पर भी भेदज्ञानको दूर करना नहीं चाहता, उसको यह भक्ति ईश्वरके चलायना भक्ति नहीं है। इस चलायनाके भक्त यदि अपने चलायनाको सम्यक् चलायना कर देखें, तो वे समझ सकेंगे कि उनके मनकी गति केवल ईश्वराभिसुखी नहीं होती। उनके उद्यम भोगकी वासनाका वीज उस समय भी उनके हृदयमें जायत है। अनुपपन्नमात्रकी ही सुखभोगकी वासना इनकी प्रवृत्ति है। कि निःस्वार्थ प्रीतिरसका आस्वादन कौसा है यह हम लोग नहीं जान सकते। पद्वैतभावकी प्रीति हम लीगोंके संसारमें अधिक वंशवती होने नहीं पाती, हम प्रकारका अधिकारी होना अनर्थ सुख है। इसी कारण पद्वैतभावकी भक्ति किस प्रकारकी है, वह जग साधारणकी माकूम नहीं। द्वैतभावके प्रवृत्ति पृथक्, पृथक्, नहीं रह सकते। वे किसी दूसरे प्रवृत्ति की तलाशमें रहते हैं और उसे पसन्द कर लीगों के साथ प्रीति करते हैं। किन्तु पद्वैतभावमें भावक पक्षसे रह कर स्वयं अपनेमें ही समुद्र रहते हैं, जहाँ द्वैतभावके स्वीकृतकी वृत्ति देखते हैं, वही उस स्वीकृत में मिल जानेकी जो तोड़ कर घेरा करते हैं। द्वैतभावके प्रवृत्ति मादकता-गति निवन्धन जगता पद्वैतभावकी रक्षा पृथक् नहीं कर सकते। इसीसे पद्वैतवाद साधारण लीगोंके मनमें प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं कर सकता, उस समय भी उनकी विश-राधिका प्रभाव रहता है। अन्तः विश्वास मानिग रहनेमें वस्तुता भी पृथक् देखनेमें नहीं आ सकता। निर्मल दर्पणमें किसी पदार्थका प्रतिबिम्ब देखनेमें जैसा उस वस्तुका स्वच्छपट्टन होता है वैसा भावित दर्पण देखनेमें नहीं होता, परन्तु हममें विवृत आकार दीग पड़ता है। इसी कारण हमने पद्वैत-अधि-कारी होना आवश्यक है। विवृतभिम्बमें भावित-म-

के भाषणमें कहा है कि ईश्वर ईश्वर करके कितना ही तक वितर्क क्यों न किया जाय, पर इनके स्वरूपका ज्ञान होना अत्यन्त दुर्लभ है। ईश्वर दुर्घ्न्य है, इसीसे ईश्वर नहीं है ऐसा कहनेमें भी कोई आपत्ति नहीं।

“धृषरो हि दुर्घ्नः इति निरीक्षार्यं”

द्वैतवाद यह है या अद्वैतवाद यह है, यथार्थमें ईश्वरके प्रतिरिक्त और कोई पदार्थ है वा नहीं? यद्यपि केवल ब्रह्म ही ब्रह्मस्वरूपमें अवस्थान करते हैं, इसकी मोमांसा कौन करेगा? ऋषिवाक्य पर विश्वास किया जाय और यदि शास्त्रकी माना जाय, तो जिस प्रकार द्वैतवादका विश्वास करेंगे उसी प्रकार अद्वैतवादका भी करना होगा। तब न्यूनाधिक करनेकी कोई बात न रहेगी। सभीके वचनोंकी समान भावसे मान कर उन्हीं के अनुसार काम करना होगा। ऐसा नहीं होनेसे शास्त्र पर कोई विश्वास नहीं कर सकते। पर हाँ, शास्त्रका अभिप्राय देख कर चलना उचित है। संसारमें जन्म ले कर वा जीव उपाधियुक्त हो कर निरन्तर जिस त्रितापमें अभिभूत होता है, उस त्रितापसे उद्धार होना ही पुत्र्यार्थ है, जीवमुक्त होना ही जीवका कर्त्तव्य है। जीवनका जो प्रधान सत्य है उसका प्रतिविधान ही सबसे पहले विधेय है।

प्रधान सत्यकी उपेक्षा कर व्यर्थ काममें समयकी बिताना जीवका कर्त्तव्य नहीं है। मायाके बन्धनसे जीवको पाले बन्द हो गई हैं। इस बन्धनको काटना होगा इससे लिये श्रवण, मनन और निदिध्यासन प्रत्यावश्यक है। द्वैतवाद वा अद्वैतवादकी से कर तर्क वितर्क नहीं हो सकता। श्रवण मनन और निदिध्यासन करनेसे इसकी मोमांसा आपसे आप हो जायगी, किसीके निरुद्ध निष्ठा उपदेशकी आवश्यकता नहीं रहेगी। उस समय द्वैतवाद वा अद्वैतवादकी सार्वकता उद्भवक्रम हो जायगी। भगवान् पतञ्जलिने ईश्वरका स्वरूप निदेश कर ईश्वरवाचक प्रणवादि मन्त्र, जप आदिको मनस्स्यैका कार्य बतलाया है, अर्थात् प्रणवादि मन्त्रका जप करते करते आपसे आप मन स्थिर हो जायगा, तब फिर मनःचारी और विसिद्ध न हो कर ध्येय वस्तुके प्रति आसक्त हो जायगा। किन्तु पोछे उन्हीं के फिर यह भी

कहा है—“यथाभिमतस्थानाम्” (पात. १।१।१ सूत्र)

जिस किसी मनोवृत्त वस्तुसे अर्थात् जिसके मनमें आ जानेसे मन प्रफुल्ल और शान्ति होता है, एकाग्रता सिद्धाके लिये उसीका ध्यान करना चाहिये। ऐसा करनेसे एकाग्रता सिद्ध होती है। यदि रामकी मूर्त्ति अच्छी लगे, तो राममूर्त्तिका ही ध्यान करना चाहिये, यदि लक्ष्मीकी मूर्त्ति अच्छी लगे, तो उसीकी विन्ता करनी चाहिये और यदि बुद्धकी मूर्त्ति पसन्दमें आ जाय, तो उसीका ध्यान करना कर्त्तव्य है। तात्पर्य यह कि किसी एक अभिमत वा वाञ्छित वस्तुका अवलम्बन कर एकाग्रता सोखनी चाहिये। यह शिष्टा समाप्त हो जानेसे अर्थात् ध्येय पदार्थमें चित्तस्थैर्य का अभ्यास पड़ जानेसे वा दृढ़ हो जानेसे, तब अर्थात् चाहोगे वहाँ एकाग्र हो सकते हो। क्या अन्तर्जगत्का नाड़ीचक्र, क्या बहिर्जगत्का चन्द्र सूर्य, क्या स्थूल, क्या सूक्ष्म सभीमें चित्त प्रयोग और उनमें तत्त्व हो सकता है। यही योगशास्त्रका उद्देश्य है। किसी गतिमें चित्तकी स्थिर करनेसे द्वैत वा अद्वैतमें जो गड़बड़ों के बड़ जाती रहती है, इसमें सदेह नहीं। महात्मनि शङ्कराचार्यने जो अद्वैतमतका विचार कर संस्थापन किया है, उसमें द्वैतमत छिपे तोर पर विराजमान है। फिर सांख्यदि दर्शनमें जो द्वैतभाव समर्थित हुआ है वह भी कुछ गोर कर देखा जाय, तो अद्वैतमतके सिवा और किसीका ज्ञान नहीं होता। सांख्यदि दर्शनके बहुपुरुष और वेदान्त दर्शनकी समष्टि स्थिति है, नाना भेदव्यपदेश इत्यादिमें द्वैत और अद्वैत दोनों ही सिद्ध होते हैं। मान लो, आकाश और घटाकाश, घड़ा तोड़फोड़ देनेसे जिस प्रकार घटाकाश महाकाशमें लीन हो कर एक हो जाता है, तब केवल एक हो रह जाता है। ब्रह्म धर्मके रूपमें जब जीवोपाधि पाते हैं तब उसे द्वैत कहते हैं, जब जीवकी उपाधि तिरौटित हो जाती है, जब जीवके तन्त्र ब्रह्मचेतनमें मिल जाता है, तब ‘एकमेवाद्वितीय’ के सिवा फिर किसीका ज्ञान नहीं होता। सांख्यमें जब पुरुषगत कोई उद्यम होता है, तब अद्वैत मत स्थापन करना उत्तम कहिन नहीं है जो कुछ हो, इस प्रकार द्वैत और अद्वैतको ही कर उनका विचार और मोमांसा करना अतिमय

है। अतएव ईश्वरके गुणोत्कर्षादिके कोर्त्तनरूप सेवाके प्रतिरिक्त कोई अभिन्नपित फल प्राप्त होनेकी सम्भावना नहीं। इस मतमें ईश्वरकी सेवा तीन प्रकारकी है—पद्मन, नामकरण और भजन। इनमेंसे पद्मनकी पद्धति मात्स्न्यमहिताके परिमिटमें विशेष रूपसे निखी गई है और उसकी पद्धत्युक्त स्थिता तैत्तिरीयक उपनिषद्में प्रतिपादित हुई है। नारायणके चक्रादि चक्रका चित्र जिसमें चक्रमें चक्रकाल तक विराजित रहे तत्र सोहादि-यन्त्र द्वारा यैसा ही करना चाहिये। दाहिने हाथमें सुदृगं नवकला और बायें हाथमें मङ्गला चक्र धारण करना चाहिये। ऐसा करनेसे उस चक्रकी देख कर भगवान्का स्वरूप हमेशा होता रहेगा और वाञ्छित फलकी भी सिद्धि होगी। द्वितीय सेवा नामकरण है। हममें अपने पुत्रोंका किशोरादि नाम रखना चाहिये, इसके बाद यदि ईश्वरका नामकीर्त्तन रूपा करेगा। तीसरी सेवा भजन है। इसमेंसे काविकभजन तीन प्रकारका है—दान, परित्राण और परिचय। याचिक चार प्रकारका है—मरु, दित, प्रिय और स्वाध्याय चर्यात् शास्त्रपाठ। मानसिक तीन प्रकारका है—दया, क्षुद्रा और यत्ना। जैसे—

“एतन्मन्त्रं ब्रह्मणे भक्त्या श्रोतुं ब्रह्मणे भवेत्।”

इस वाक्य द्वारा मूढ़ भी यदि भक्तिपूर्वक आग्रहकी पूजा करे, तो वह ब्रह्मणको पवित्रतादि गुणनिमित्त की सहाता है, ऐसा चर्य होता है। इसी प्रकार “ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति” इस श्रुतिवाक्य द्वारा ब्रह्मण और ब्रह्मण-में कुछ भीद न रह कर ऐसा चर्य सम्भवा जायगा कि ब्रह्मज्ञानी मनुष्य ब्रह्म जैसा सर्वज्ञत्वादि गुणसम्पन्न होता है। श्रुतिमें माया, पवित्रता, निवृत्ति, मोक्षिनी प्रकृति और वासना इन छः शब्दोंका प्रयोग है, जिनका चर्य भगवान्की इच्छामात्र है। अर्द्धतत्वादिवाकी कल्पित अविद्या नहीं है। फिर जो प्रपञ्च शब्द कहा गया है उसका चर्य प्रकृत पञ्च भीद है। वे पञ्चभीद ये हैं—जोष्वर भीद, जड़ोष्वरभीद, जड़जोष्वरभीद और जीवाका तथा जड़ पदार्थोंका परस्परभीद। यह प्रपञ्च सत्य एवं अनादि मिष्ट है। विष्णुका सर्वशक्ति प्रतिपादन करना सभी आत्मज्ञा प्रमाण उद्देश्य है। धर्म, चर्य, काम और

मोक्ष ये चार पुरुषार्थ हैं। इनमेंसे मोक्ष ही निच्य है और शेष तीन पुरुषार्थ पक्षायो है। अतएव प्रधान पुरुषार्थ मोक्षको प्राप्तिके लिए योग्य करना सभी बुद्धिमान् मनुष्योंका मुख्य कर्त्तव्य है। किन्तु ईश्वरको प्रसन्न किये बिना मोक्षसम्भवा नहीं हो सकता और बिना ज्ञानके प्रसन्नता भी नहीं हो सकती। ज्ञानमन्त्रसे विष्णुके सर्वोत्कर्ष ज्ञानका बोध होता है। केवल मन्त्रबुद्धि व्यक्ति ही श्रोतवैरक विष्णुकी कीमते प्रयत्न नहीं सम्भवा सकते। बल्कि सुबुद्धि व्यक्तियोंके प्रसादकरनेमें विष्णु और जीवका परस्पर भेद है, यह स्पष्ट रूपसे प्रतीत होता है। ब्रह्मा, शिव, इन्द्र आदि सभी देवगण पतित, चरमण्ड वाच्य और लक्ष्मी पक्षर मन्त्रवाच्य हैं। उस चरमण्डने विष्णु प्रधान है और स्वात्मन शक्ति विज्ञानसुखादि गुणसमूहको आधार स्वरूप है, दूसरे सभी विष्णुकी पथीन हैं। इन सबका मन्त्रज्ञान ही जानेसे विष्णुके साथ सहवास होता है। सभी दुःख दूर हो जाते हैं तथा नित्य सुखका उपभोग होता है। श्रुतिमें लिखा है, कि एक वलुका चर्यात् ब्रह्मका तत्त्वज्ञान हो जानेसे सभी वलुका ज्ञान हो सकता है। तात्पर्य यह है कि जिस तरह प्रामाण्य प्रधान व्यक्तियोंको ज्ञान वक्तव्यसे प्रामाण्य जाता है और विताकी ज्ञान लेनेसे पुत्र जाना जाता है, चर्यात् पुत्रको ज्ञाननेकी और चर्याका नहीं रहती है, इत्यादि। अर्द्धतमना वादो व्यासकृत वेदान्तसूत्रका जो कूट चर्य जगति है, यह कुछ नहीं है। यह सूत्र सभीके मध्य है एक सर्वोत्की यथाशुत वास्तविक रूपमें लिखा गया। जैसे—“अथातो ब्रह्मजिज्ञासा” इस सूत्र है। ‘अथ’ शब्द तीन चर्य हैं, आत्मतत्त्व, अधिकार और मन्त्र। फिर ‘अता’ इस शब्दका चर्य है हेतु, यह शब्दपुरुषार्थके ब्रह्मणार्थ सम्बन्धमें लिखा है। अब नारायणकी प्रसन्न किये बिना मोक्ष नहीं होता तथा उसका ज्ञान हुए बिना प्रसन्नता नहीं होतो, तब ब्रह्मजिज्ञासा चर्यात् ब्रह्मकी ज्ञाननेकी इच्छा करना इसका पक्षकर्त्तव्य है। यही उस सूत्रका कलिताय है। ‘अथाचारमता’ इस सूत्रमें ब्रह्मका अक्षय सिद्धा है जिसका चर्य है—जिसमें इस जगत्की उत्पत्ति, किति और संसार रूपा करता है, तथा जो

नित्य निर्दोष अजेय सद्गुणसम्पन्न हैं वही नारायण ब्रह्म हैं। इस प्रकारके ब्रह्मका प्रमाण क्या है ? ऐसा पूछने पर कहा है, 'शास्त्रोक्तिवात्'। शास्त्र सभी निश्चित ब्रह्मके प्रमाण हैं, यतः ब्रह्म ही सभी भास्त्रोंके प्रतिपाद्य हैं। किन्तु प्रकार ब्रह्मका शास्त्रप्रतिपाद्यत्व स्वीकार किया जा सकता, इस भाग्य पर कहा है 'तल्लु सधन्यत' सभी शास्त्रोंके उपक्रम और उपसंहारमें ब्रह्मके ही प्रतिपादित होनेसे उस भाग्यका समन्वय अर्थात् समाधा हुए है।

पूर्ण प्रश्न इस प्रकार चानन्दतोय के भाष्यका अवलम्बन करने से सब विषय निबह कर गये हैं। मध्यमन्दिर और मध्य वे दो पूर्ण प्रश्नों का संग्रह है।

ब्रह्मवाचायका श्रुतद्वैतवाद—ब्रह्मवाचायं पञ्चदश गताब्दोंमें अर्थात् शङ्कराचार्य के आठ सौ वर्ष पछे आविर्भूत हुए। इन्होंने वेदभाष्यके विष्णुस्वामीके शब्दोंसे मतानुसार वेदान्तसूत्रका भाष्य किया है। इनके मतसे जगत् और जीव मायाविशिष्ट नहीं हैं, किन्तु स्वयं ईश्वरका परिणाम है। शङ्कराचार्य के मतानुसार जो ब्रह्म वेदभाष्य करते हैं, उसे वे स्वीकार नहीं करते। किन्तु ये जगत् और जीवको ब्रह्मके साथ मिलानुल भेद मानते हैं। 'इक्ष्णुसर्पवत्' वा 'शक्तिकारजतवत्' शब्दोंके बदलेमें ये 'अक्षिकुण्डलवत्' अथवा 'स्वर्णकुण्डलवत्' इत्यादि उपमाओंका व्यवहार करते हैं अर्थात् जिस तरह सर्पसे सर्पका कुण्डल पृथक् नहीं है उसी तरह स्वर्णसे स्वर्णकुण्डल पृथक् नहीं। ब्रह्मके मतसे इस जगत्के सभी प्रदाय और सभी जीव ब्रह्म हैं। इस मतको शङ्कराचार्य के मतानुसार किन्तु नवीन अद्वैतवादियोंने भी माना है।

इस प्रकार जो जैसा समझते हैं वहीने उसीके ऊपर निर्भर कर द्वैत और अद्वैतका मत स्थापन किया है। किन्तु न्यूतिर्यो तो मानूँ होता है, कि ब्रह्म ही जगत् और जीवात्माके रूपमें परिणत हुए हैं, फिर किन्तु न्यूतिर्यो ऐसी भो-हैं जिन्हे पढ़नेसे जाना जाता है कि ब्रह्म, जीव और जगत् ये सब पृथक् हैं। न्याय और वैशेषिक-दर्शन तथा सांख्यपातञ्जलशास्त्रोंमें द्वैत-

वाद स्वीकृत हुआ है। सूत्रके मध्य द्वैतवाद मिश्रित और अद्वैतवाद गूढ़ भावसे मिश्रित है। किन्तु शङ्कराचार्यने जिस प्रणाली पर शारोरक भाष्य किया है, उससे पढ़नेसे सहसा बोध होता है कि परमात्माके सिवा मानवका कोई स्वतन्त्र जीवात्मा नहीं है। पर जीवात्मा यह नाम जो सुना जाता है, वह केवल नाममात्र है अर्थात् इनको उपाधि है। इस मतसे मंसार भोज-विद्याकी तरह मिथ्या माया है, सभी मानो ऐन्द्रशक्ति का व्यापार हैं, ब्रह्मज्ञान होनेसे ही ये सब निरोद्धित हो जायेंगे।

द्वैत और अद्वैतवादका विषय एक तरहसे कहा गया। अद्वैतवादका विशेष विशेष विवरण शङ्कराचार्य और वेदान्त शब्दोंमें लिखा है। द्वैत और अद्वैत मत से कर जो विवाद चला आ रहा है उसको सोमांस करना असम्भव है। लेकिन इतना अवश्य कहा जा सकता है, कि शास्त्रोंमें जो सब बातें लिखी हैं, वे सभी आत्म वा असत्य नहीं हैं। ईश्वरका जो एकत्व है उसका बोध होता है, शून्यगर्भ एकत्व नहीं है। किन्तु वैचित्र्यगर्भ एकत्व है अर्थात् ईश्वरने अपने अभ्यन्तरस्थित वैचित्र्यवैशेषिकों अपने ऐशो शक्ति द्वारा जगत्, रूपमें विकसित किया है, यही सृष्टि है। वेदान्तोंमें लिखा है कि जिस तरह मकड़ों अपने पल्लभूत उपादानसे अपने इच्छानुसार जाल फैलाते हैं, ब्रह्म भी उसी तरह अपने अभ्यन्तरसे सृष्टि उत्पादन करते हैं। यद्यपि यह है, कि ईश्वरको शक्ति ईश्वरसे भवशून्य अभिन्न है। पतञ्जल ईश्वरका एकत्व शून्यगर्भ एकत्व नहीं है, वैचित्र्यगर्भ एकत्व है। मूल वैचित्र्य जो ईश्वरके एकत्वके पल्लभूत है उसको कोई माया, कोई अविद्या, कोई प्रकृति मानते हैं। परमेश्वरकी ऐशोशक्ति ही जगत्के समस्त वैचित्र्यका मूल है और वह शक्ति ब्रह्मसे पृथक् नहीं है। कहनेका तात्पर्य यह कि वैचित्र्य सत्भावनाका मूल है। चाहे जो जैसा नाम क्यों न रख लें, माया, प्रकृति या शक्ति किन्तु नामसे क्या न पुकारें, नामसे कुछ होता जाता नहीं। वैचित्र्य सत्भावनाका एक मूल ईश्वरके पल्लभूत है, इसे कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। इस प्रकार एकत्व या बहुत्व माननेसे

हेतु और परहेतुवादी को ई मङ्गल हो रहने नहीं पाती। परमेश्वर चतुर्मुख में समुक्त और निगुण दोनों ही है तथा हेतु और परहेतु सब कुछ के ही हैं। वेदाभाष्य में लिखा है कि ईश्वरकी शक्तिका केषन एक पाद मन्त्रमें व्यक्त हुआ है और प्रथमिष्ट तीन पादों में जगत्का प्रतीक है पर्याप्त ईश्वरका स्वरूपान्वित है किन्तु जगत्की ईश्वर माननेमें यही समझा जायगा कि ऐश्वर्यशक्ति की प्रतुष्टा है। ऐसा होनेमें स्वयं ईश्वर ही जगत् रूपमें परिणत है, ऐसा समझा जाता है, किन्तु यति और ज्ञान दोनों को हमने विरोधी है। ईश्वर कानामोत पुरुष है, जगत्, उपका कालिक प्रतिरूप है। गुणों उनके कानामोत स्वरूपमें जो कालिक प्रतिरूप मिश्र है ऐसा समझना गलत है। उन स्वरूप और प्रतिरूपमें मध्य प्रतीक घनिष्ट सम्बन्ध विद्यमान है। क्योंकि जो प्रतिरूप है वह स्वरूपका ही प्रतिरूप है। इस प्रकार एक और ईश्वर और जगत्की भिन्नता प्रतीय हेतुभाव है, तथा दूसरी और दोर्भोज। घनिष्ट-सम्बन्ध प्रतीय, परहेतुभाव सम्बन्ध रूपमें प्रकट होता है। हेतुवाद और परहेतुवाद दोनों ही वर्तमान हैं। हेतुवाद यह केवल यही है कि जगत्का कालिकप्रतिरूप ईश्वरके कानामोत स्वरूपमें मिश्र है।

संक्षेपार्थ, समस्त, सत्त्वादि और वेदागत हेतु।

हेतुवादित् मं० लि०) हेतु जोय ईश्वरय इति यदति यद-निमित्त। जोय और ईश्वरके हेतुवादो, ईश्वर और ज्ञानमें भेद माननेवाला।

हेतुद्वैत (मं० लि०) हेतुय परहेतुय। जोय और ईश्वरका भेद और अभेद जो जोय और ईश्वरके भेद तथा अभेद दोनोंको ही मानते हैं उन्हें हेतुद्वैतवादी कहते। जगत् मतमें ज्ञानके माध्य ईश्वरका भेद भी है और प्रामेद भी।

प्रमाणों में हेतु भी नहीं है और परहेतु भी नहीं नहीं प्रामाणिक सम्बन्ध है। और वे ही हेतु और परहेतु हैं। जो इस तरह ईश्वरके भेदज्ञान काम कर सकते हैं, वे परम पद पाते हैं।

हेतुत्वं (मं० लि०) हेतु भेदः सत्त्वतया स्वस्वय इति। हेतुवादो नैवाधिक प्रथम।

हेतुयोक्त (मं० लि०) द्वितीय तोपादोक्त, या स्वामी ईकत्। द्वितीय, दूसरा।

हेतुम् (मं० पद्य०) द्वि-प्रकारे धनुषः। प्रकारद्वय, दो तरहसे।

मनुने लिखा है, कि कार्यार्थ मित्रके लिये स्वामी और बल दोनों दो स्थितिका नाम पण्डितों में 'हेतुम्' बतनाया है।

हेतु (मं० पद्य०) द्विधा (वेदाभाष्यार्थ-या। पा ५।३।३५) १ द्विप्रकार, दो तरहमें। (पु०) २ विरोध, परस्पर विरोध।

हेतुभाव (मं० पु०) परहेतुय हेतुय भावः। हेतु-विश्रु-भावे प्रयत्न। १ द्विधाभाव, विरोध, परस्पर विरोधी। २ पञ्चभूतान्तर्गत हेतुय भाव, राजनोतिष्ठे पञ्चगुणों में एक जिसमें प्रकट सभाय रहना पड़ता है पर्याप्त मुख्य उद्देश्य गुण रख कर दूसरा उद्देश्य प्रकट किया जाता है पर्याप्त भीतर कुछ और भाव बाहर कुछ और।

प्रतिपूरणमें लिखा है, कि प्रत्ययानुसार के निश्चित वाक्यमें वाक्यसमर्पण कर काकप्रत्ययों को ही 'मर्त्य' हेतुभावमें रहना चाहिये क्योंकि कोविको पाणि जिस तरह चारों ओर रहते हैं उसी तरह ब्रह्मवान् मनु के निकट बहुत प्रायधानीमें रहना चाहिये।

हेतु (मं० पु०) हेतुविनो विकार हेतु हेतु-प्रयत्न। (प्रति-रत्नादिप्रयोगम्) १ व्यापनिकार, बाधमें सम्बन्ध रहनेवाली या बाधमें निश्चयी या चली हुई वस्तु। (क्रो०) २ व्यापनधर्म, बाधका समझ। हेतुय नाम परहेतुय द्यः इति धनुरज, (द्वैतवेदाभाष्यम्। पा ४।१२) ३ व्यापनधर्म दाहा पातत रय, बाधके समझमें ठका हुआ रय। दिविन हटं पद। (लि०) ४ हेतुयसम्बन्धी, बाध-के समझका।

हेतुक (मं० पु०) हीयै भवः सम्प्रदाित्वात् कुज्। होयभाव, जो होयान्तरमें हो।

हेतुविक (मं० पु०) द्विपदां बाधं यदपरीने ना वक्त-वादित्वात् ठक। १ द्विपदाभाष्यो, द्विपदा भक्त पदमें-वाला। २ त्वेता, द्विपदा भक्त, ज्ञानमेंवाला।

हेतुयत्न (मं० पु०) हीयै प्रयत्नं लपत्तिष्ठानं यत्न-मय, कार्य प्रसादित्वात् वा यत्नः। व्यापनदेव। रम

का जन्म यमुनानदीके किनारे एक हीपमें हुआ था। इसीसे इनका नाम द्वैपायन पड़ा है।

महाभारतमें लिखा है कि सत्यवतीने पराशरसे वर पा कर उन्होंके साथ अपनी इच्छा पूरी की जिससे उन्हें गर्भ रहा। उसी समय उस गर्भसे व्यासका जन्म हुआ। वीर्यमान् पाराशर्यने उसी यमुनादीपमें जन्मग्रहण किया। इन्होंने माताकी प्राप्ता से कर घोर तपस्या की थी। जन्म हो जानेके बाद ये हीपमें फेंक दिये गये थे, इसीसे इनका नाम द्वैपायन हुआ है। वेदव्यास देखो। २ ऋग्विषय। इसमें दुर्योधन पाण्डवोंके भयसे भाग कर छिपा था। कुरुपाण्डवकी लड़ाईमें जब सब घोर मारे गये तब दुर्योधन बहुत मुश्किलसे यहाँ भाग पाया था।

द्वैपारायणिक (सं० पु०) इयोः पारायणयोः समाहारः द्विपारायणं वक्तुं यति उज्ज्वलः, प्रत्ययविधौ तदन्तग्रहणं प्रतिषेधेऽपि संह्यापूर्वस्य तदन्तग्रहणं। पारायणश्च यवर्त्तः, दो पारायण प्रतामुष्ठान करनेवाला।

द्वैप्य (सं० त्रि०) द्वीपे भवः दोपय इदं वा द्वीप यज्ज, (द्वीपारमुष्टमं) यज्ज। वा ४।१।१०; दोप सन्ध्योय।

द्वैभाव्य (सं० त्रि०) १ द्विभावयुक्त, जिसके दो भाव हो। २ जो दो भावोंमें विभक्त हो।

द्वैमातुर (सं० पु०) इयोर्मन्त्रोरपत्यं द्विमातृ-भण-उत्पन्नं (मातृसदृशवत्संभवावर्त्तः) वा ४।१।१२५ गणेश। गणेशके द्विमातृत्वका विषय स्कन्दपुराणके गणेशखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

हे ब्राह्मण। वरेण्य राजाके घरमें त्रेलोक्यकी रक्षाके लिये, विप्रकी शान्त करनेके लिये साधुर्षाको रक्षाके लिये और स्वभक्तोंकी पालनेके लिये मैं जन्म लूंगा। इतना कह कर गणेशने पुष्पिका देवीके गर्भमें प्रवेश किया था। जब नवौ महीना भाया, तब पुष्पिकाने एक शिशु सन्तान प्रसव की जिसके चार बाहु, हाथी सरीखा शरीर और दांत थे। पाँखें सुन्दर थीं और शरीर तेजोमय था तथा चारों ओरोंमें चार गन्ध लिए हुए थे। पुष्पिका इस प्रभूत शिशुको देख कर रोने लगी कि यह क्या भविष्यत् स्थित हुआ। राजा वरेण्य पुष्पिकाका जन्म सुन कर परमात्माके साथ वहाँ भा पहुँचे और बालकको

पातकिकी देख कर डर गये। बाद उन्होंने नौकरोंसे कहा कि, 'पार्श्वमुनिके आश्रमके पास एक जलाशय है वहाँ तुम लोग इसे फेंक बाधो।' नौकर भी राजाके आज्ञानुसार बालकको उक्त तालाबमें फेंक भाया। दूसरे दिन पार्श्वमुनि जब स्नान करनेके लिये जलाशय पर गये तो उस प्रभूत बालककी देख प्रत्यक्ष आश्चर्यान्वित और भयभीत हो पड़े। 'मेरे आश्रममें इस बालकको कौन फेंक गया है? मानूँ मैं पशुता है, कि किसी देवताने तपस्याका फल देनके लिये ऐसा शरीर धारण किया है यद्यपि स्वयं परमात्माने अपने इच्छानुसार सब मनुष्योंको रक्षाके लिये ऐसा परिग्रह धारण किया है।' ऐसा कह कर पार्श्वमुनि उस बालकको अपने आश्रममें ले जा कर यज्ञपूर्वक पालन संगे। बालकको देख कर सुनौकी स्त्री दीपवत्सलाने अपने स्वामीसे कहा था, 'हे स्वामिन्! भाव प्रत्यक्ष आश्चर्य रूपधारी जिस बालकको आज घर लाये हैं, वह विनायककी समान आकारधारी है, लक्ष्मणके आसद्वत् रूप हैं, बहुत तपस्याके फल हैं और योगियोंकी सदा ध्येय सनातन परब्रह्म है, स्वयं इन्होंने तेज से कर हम लोगोंकी प्रकाश देते हैं। वेदान्तमें इन्होंने 'नेति नेति' कहते हैं, ये नहीं हैं ये नहीं हैं।' ऐसा कह कर दीपवत्सलाने उस शिशुको गोदमें ले कर स्नान पिलाया। द्वितीयाके चन्द्रमाकी नाईं यह बालक प्रतिदिन बढ़ने लगा। गणेश पुष्पिकाके गर्भसे जन्मग्रहण कर दीपवत्सलासे पाले पोसे गये थे, इसीसे इनका एक नाम द्वैमातुर पड़ा है। २ जरासन्ध। जरासन्ध देखो। (त्रि०) २ द्विमातृज, जिसके दो माताएँ हों।

द्वैमातृक (सं० पु०) द्वैमातृके इव यस्यास द्विमातृकः स एव स्थायै यज्ज। नदीवृष्टिजन्यजित शस्यप्रधान देश, वह भूमि या देश जहाँ खेती नदीके जल द्वारा भी की जाती है और वर्षा भी होती है।

द्वैमित्रि (सं० पु०) दो मित्र वा मित्रके पुत्र।

द्वैयहकाल्य (सं० त्रि०) इरहकल्पः कालो यस्य तस्य भावः अथ पदान्ताभ्यां ह्यभ्यां पूर्वमच्। द्वयहकाल जातका भाव, जो दो दिनोंमें हो उसका भाव।

द्वैयद्विक (सं० त्रि०) इयो रज्जोर्भवः पच उज्ज्वलः समा-भास्त विधेनित्यत्वात् न टच् ततो पञ्चदशः। जो दो दिनोंमें किया जाय वा दो दिनका हो।

द्वैपायनिक (मं० त्रि०) द्वयोराशयो निगमयोर्मयः ।
धृमादित्वात् मुञ्जतमो र्षः । त्रिसमे दो निगम या
कोत्र दो ।

द्वैयोग्य (मं० त्री०) द्वि संयुक्त, त्रिसमें दो मिला हो ।
द्वैरय (मं० स्त्री०) द्वै रयो यय युक् स्थायं पण्य । दो रय
द्वारा चपनचित युद्ध, यह सहाई को दो रयो द्वारा की
जाय ।

द्वैराज्य (मं० स्त्री०) यह राज्य जो दो राजाओंमें
विभक्त हो ।

द्वैरात्रिक (मं० त्रि०) द्वयो रात्रोर्मयः 'द्विगोर्वा रात्रयः
संयतुमराय' इति सूत्रेण पठे ठञ् । जो दो रातमें हो ।

द्वैरात्र्य (मं० स्त्री०) दो रात्री यय, तस्य भावः प्यञ् ।
द्विविधरात्रियुक्त्य, दो तरहकी रात्रियोंके मिले रहनेका
भाव ।

द्वैवर्षिक (मं० त्रि०) द्वौवावर्षिक, जो दो वर्षके
बाद हो ।

द्वैविध्य (मं० स्त्री०) द्विविधस्य भावः प्यञ् । १ प्रकार
द्वय, दो प्रकार होनेका भाव । २ भ्रम, दुष्पण ।

द्वैशाप (मं० त्रि०) द्वाभ्यां शापाभ्यां क्रीतं ठञ्, तस्य
चलुक् । दो शाप द्वारा क्रीत, जिसके खरोदनेमें दो
शाप लगे हो ।

द्वैषणोपा (मं० स्त्री०) द्वैषणमिव स्थायं पण्य, द्वैषणं
तद्वदिति छ । नागवक्रोका एक भेद ।

द्वैमित्रिक (मं० त्रि०) द्वयोः समयोर्वर्षयोर्मयः समायाः
यत्, पठे ठञ् । वर्षद्वयभव, जो दो वर्षमें हो ।

द्वैव्यायन (मं० स्त्री०) द्विव्यायनस्य भावः युवादित्वादन्य ।
दो वर्षका भाव ।

द्वैय (मं० स्त्री०) द्वयो वर्गयोः समाहारः, पात्रादित्वात्,
न होय् । भागद्वय, दो भाग ।

द्वय (मं० त्रि०) द्वैपविषो यस्य य समासात् । नेत्रद्वय
मुञ्ज, जिसके दो पक्षों को ।

द्वैसर (मं० स्त्री०) द्वौसरवरयोः समाहारः । १ वर्ष-
द्वय, दो चर । द्वैचरद्वै यत् । २ वर्षद्वयान्नक मन्त्र-
दि, एक प्रकारका मन्त्र जिसमें केवल दो चर हो ।

द्वैसु (मं० त्रि०) द्वै सन्तुभौ प्रमायमस्य, ततो य
समासात् । द्वैसुदिव परिमित दो संज्ञाका । द्वौ-

सन्तुभौः समाहारः । (स्त्री०) २ सन्तुदिवद्वयमात्र, दो
संज्ञाका ।

द्वैसुत (मं० पुं०) द्वायसुतोपरिमायमस्य । (द्विविध-
मन्त्रेः । पा ५.५.१०२) इति सूत्रेण टच्, समासात् ।
पञ्चनिद्वय परिमित, दो पञ्चनिका । द्वौसुतयोः समा-
हारः । (स्त्री०) २ पञ्चनि द्वयमात्र, दो पञ्चनि ।

द्वैसुत (मं० स्त्री०) दो सन्तु कारये यस्य, कप् । परमास
समयैतद्वय, वह द्रव्य जो दो सन्तुओंके संयोगमें लप्स्य
हो, दो सन्तुओंका एक संघात ।

द्वैस्य (मं० त्रि०) द्वाभ्यामस्य, इति पक्षगोतीत्यद्वयः ।
द्विभिय, जो दो भागोंमें बँटा हो । द्वौरश्मयोः समा-
हारः । (स्त्री०) २ पक्ष्य द्वयका सर्वोत्पन्न, जिसमें दो का
मिल ।

द्वैय (मं० त्रि०) दो वर्षों यय । वर्षद्वययुक्त मन्त्रादि,
ये मन्त्र जिसके दो वर्ष हो ।

द्वैगीति (मं० स्त्री०) द्वयधिक्रा चगीति चगीतिपय्य ।
दासात् न पात । १ द्वाधिक्रान्तीति संज्ञा, यह संज्ञा
जो निगतीमें चक्रामे दो अधिक्र हो, वदासीको संज्ञा ।
(त्रि०) द्वयगीत संज्ञाका दूरण, चक्रामोवा ।

द्वैष्ट (मं० स्त्री०) द्वैष्टम कयो चयूतं कारयतया द्यात्रोति
चयत् । ताम्, तावा ।

द्वैष्ट (मं० पुं०) द्वौ रश्मोः समाहारः ततो टच्, समा-
सात् । दिनद्वय, दो दिन ।

द्वैज्ञान (मं० त्रि०) द्वाभ्यां चक्षेत्रां निष्ठतादि द्विगो
र्वा 'रात्रयः संयतुमराय' इति सूत्रेण च, सूत्रे चरुति
निर्देशात् न टच्, समासात् । १ दिनद्वयमात्र,
दो दिनोंमें होनेवाला । (पुं०) २ ज्ञानभेद, एक
प्रकारका यत् ।

द्वैशयय (मं० पुं०) द्वैविभेद, एक चरनिका नाम ।

द्वैशयित (मं० त्रि०) द्वै-पाचित मध्यवति चयववति
यवति का ठञ्, मध्य मुञ्ज । १ पाचितद्वयके मध्य यवमें
समावेष्ट । २ चयवहारक, से जामेवाला । ३ पाचक,
चक्रानेवाला ।

द्वैष्टक (मं० त्रि०) द्वै चद्रुकं कथयति चयववति यवति
या, ठञ्, तस्य मुञ्ज । १ चद्रुकद्वयके मध्य यवमें भागमें
समावेष्ट । २ चद्रुकद्वय चयवहारक, चार घेर दो कर से

‘जानेवाला’। ई आठकद्वय पांचक, धार सैर एकानेवाला ।
 द्वात्मक (सं० पु०) हो रूपो आत्मानो यस कप । द्वि-
 भाव रागिभेद, मिथुन, अन्या, धनु और मोन रागि ।
 द्वाभ्याययण (सं० पु०) भसुंय प्रसिद्धस्य अपत्यं एक-
 चासुप्यायणः द्वयो रासुप्यायणः इत्यतः । प्रतिभापूर्वक
 दो लोक कचृक दृष्टीत दत्तकपुत्र, वह पुत्र जो एक-
 से तो सत्यक हुआ हो और दूसरेके द्वारा दत्तकके रूपमें
 ग्रहण किया हो और दोनों पिता उसको अपना अपना
 पुत्र मानते हो । ऐसा पुत्र दोनोंको पिण्डदान देता है
 और दोनोंको सम्पत्तिका अधिकारी होता है ।
 द्वायुप (सं० क्लो०) द्वयोरायुयो समाहारः समाहार-

द्विगौ भवतुरेत्यादि भव, समानान्तः । द्विगुणित आयुः
 काल, दूनी उमर ।
 द्वाहाव (सं० क्लो०) द्वयोराहावयोः समाहारः । आहाव
 द्वय, दो तालाव या गड्ढा ।
 द्वाहिक (सं० लि०) द्वाहे भवः ठञ् वाहुलकात् न
 ऐच् । द्वाहजात ज्वर, दो दिनमें होनेवाला जुखार ।
 द्वाक (सं० लि०) दो वा एको वा वाहुलकात् छ समा-
 सान्तः । दो वा एक ।
 द्वाग (सं० पु०) द्वयोर्वीर्ययोः समाहारः, द्वयोर्दरादि-
 त्वात् साङ्गः । योगद्वय, दो जोड़ा ।
 द्वोपय (सं० पु०) द्वैरादुपयति आ-उप गे-उ, ओपयं दृक्
 द्वे ओपसे यस्य । पश, मर्भे गौ ।

ध

ध—हिन्दी या संस्कृतका उन्नीसवां व्यन्जन और तवर्ग-
 का चौथा वर्ण । इसका उच्चारणस्थान दन्तमूल है ।

इस वर्णका स्वरूप—

“धकारं परमेसाति कुण्डली मोक्षरूपिणी ।

आत्मादितस्त्वसंयुक्तं पञ्चदेवमयं” उदा ।

पञ्चप्राणमयं देवि त्रिशक्तिवहितं” उदा ।

त्रिविभुसहितं वर्णे धकारं इति भाष्य ॥

पीतविष्णुहस्ताकारं चतुर्वर्गप्रदायकं ॥” (कामधेनुतन्त्र)

है परमेश्वर ! धकार कुण्डली और मोक्षरूपिणी,

आत्मादि तत्त्वके साथ सर्वदा सम्मिलित, पञ्चदेवस्वरूप,

प्राणापानादि पञ्च प्राणमय, त्रिशक्तिसमन्वित, विन्दुत्रय

युक्त और पीतविष्णुहस्ताकी तरह भाकतिविशिष्ट है ।

इनका धर्म या ध्यान करो । यह धर्म, अर्थ, काम और

मोक्ष इन चतुर्वर्गका देनेवाला है ।

इस शब्दके उच्चारणमें आभ्यन्तरका प्रयत्न भावश्यक

होता है । दन्तमूलका जिह्वायके साथ स्पर्श होनेसे यह

वर्ण उच्चारित होता है । बाह्यप्रयत्न संचार, नाद, घोष,

महाप्राण हैं । धन, धर्म, द्रवि, स्थाण, सत्त्वत, योगिनी

प्रिय, मौनेय, मन्त्रिनी, तोय, नागय, विश्वपावनी, धिषया,

धारणा, चिन्ता, नेत्रयुग्म, प्रिय, मति, पीतवामा, त्रिवर्णा,
 धाता, धर्मप्रवह्मन, सन्ध्य, मोहन, लज्जा, वस्तुतुण्डाधर,
 धरा, वामपादाङ्गुलिमुक्त, ज्येष्ठा, सुपुर, स्वर्मात्मा, दीर्घ-
 जङ्घा, धनेय और धनसञ्चय ये सब शब्द ध-वाचक हैं ।

मात्रकान्धास करते समय इस वर्णका वामपादा-
 ङ्गुलि मूलमें व्यास करना होता है । इस वर्णके लिखने-
 की रीति इस प्रकार है—पहले त्रिकोण रेखा बनानी
 होती है । बाईं रेखाके स्तम्भ पर एक वक्र चिह्न देना
 होता है । इस त्रिकोणरूप तीन रेखाओंमें ब्रह्मा, विष्णु,
 और महेश्वर रहते हैं तथा बाईं रेखाके स्तम्भ पर जो
 चिह्न दिया रहता है, उस पर भिक्षुंश्वरो भवस्थित हैं ।

“त्रिकोणरूपरेखायां त्रयो देवा वसन्ति च ।

विश्वेश्वरो विद्वन्माता वामतः स्कन्धतः स्थिता ॥”

(वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका ध्यान—

“वद्भुजां मेघवर्णांश्च रत्नध्वजपरां परां ।

वरदां शोभनां रत्नां चतुर्वर्गप्रदायिनी ।

एवं कृत्वा धकारं तु तन्मन्त्रं दध्या अपेत ॥”

इस उच्चारणको अभिधातो देवो वद्भुजसम्पदा है,

जनका मर्त्य यादना है और ये हमेशा रहस्यवादी रहना करती हैं। जनका ध्यान करके दस बार मन्त्र जपना होता है, इस प्रकार ध्यान करनेसे ये चतुर्वर्ग प्रदान करती हैं।

ध (मं० क्री०) दधाति सुप्तमिति धा-ड। १ धन, दोस्त। (पु०) दधाति धरति विभ्रममिति धा-ड। २ मद्रा, जो विभ्रमकी धारण करती है, सर्दीका नाम ध है। दधाति निधि। ३ कुंभर, कुंभरके पास मय निधियाँ हैं, इन्हीं कुंभरका नाम ध पड़ा है। दधाति जोवाना शुभाशुभ-मिति। ४ धर्म, धर्मही जीवोंकी शुभाशुभका कारण है। ५ धकार वर्ण।

धई (हिं० क्री०) एक पोषा। इसके मूल या कन्दकी कोटनागपुरको पहाड़ी जातियोंके लोग खाते हैं।

धंभर (हिं० पु०) ग्वाल, चहोर, चरवाहा।

धंहर (हिं० पु०) एक प्रकारका धारीदार कपड़ा।

धंधक (हिं० पु०) १ कामधंधका पाहम्बर, बघेड़ा। २ एक प्रकारका दोल।

धंधकधोरी (हिं० पु०) काम धंधका बोझ लादे रहनेवाला।

धंधरक (हिं० पु०) कामधंधका पाहम्बर, जंजाल, बघेड़ा।

धंधरकधोरी (हिं० पु०) धंधकधोरी देखो।

धंधना (हिं० पु०) १ कपटका पाहम्बर, झूठा टोंग। २ छीसा, बहाना।

धंधकाना (हिं० क्री०) दस कन्द करना, दंग रचना।

धंधा (हिं० पु०) १ धन या औषधिकके लिये उपयोग, काम काज। २ व्यवसाय, उद्यम, पैसा।

धंधार (हिं० पु०) लकड़ोंका लम्बा जोहार। इससे भारी पत्थर और लकड़ी आदि उठाई जाती है।

धंधारी (हिं० क्री०) गोरखधन्वा जिसने गोरखधन्यो साधु लिये रचते हैं।

धंधाला (हिं० क्री०) कुटनी, दूती, दहना।

धंधीरो (हिं० पु०) राजपूतोंका एक जाति।

धंधोर (हिं० पु०) १ होलिका, होला। २ पागकी लपट, स्वाभा।

धंभ (हिं० पु०) जल पादिमें प्रवेश, डुबकी, गोता।

धंभन (हिं० क्री०) १ धंभनेकी क्रिया या टंग। २ गति, पाक।

धंभना (हिं० क्री०) १ किसी नंगम वस्तुके भीतर किसी कड़ो वस्तुका दाब या कर घुसना गड़ना। २ धर धर दबा कर जगड़ खानो करने हुए गड़ना या पेंटना। ३ नीचेकी ओर बैठ जाना। ४ किसी गड़ो या मोम पर गड़ो वस्तुका जमीनमें घेर नीचे तक बसा जाना जिससे वह ठोक लड़ो न रह सके, बैठ जाना।

धंभन (हिं० क्री०) धंभन देखो।

धंभान (हिं० क्री०) १ धंभनेकी क्रिया या टंग। २ दाल, उतार। ३ दलदन।

धंभाना (हिं० क्री०) १ गड़ाना, घुमाना। २ धंभे कराना, पेंठाना। ३ न चिके घेर बैठाना।

धंभाव (हिं० पु०) १ धंभनेकी क्रिया। २ दलदन।

धक (हिं० क्री०) १ हलम्बका मन्द या माव, दिसके लव्दी लव्दी कुदनेका भाव या शब्द। २ लहंगे, चोप, उमंग। ३ एक प्रकारकी खूं जो लोखने बड़ो होती है।

धक (हिं० क्री० वि०) धावानक, एकवारगी।

धकधकाना (हिं० क्री०) १ लहंगे, भय, धड़कना। २ भभकना, दहकना, लपटके साथ जलना।

धकधकाइट (हिं० क्री०) १ जो धक धक करनेकी क्रिया या भाव, धड़कन। २ पागंका, लपटा।

धकधकी (हिं० क्री०) १ जो धक धक करनेकी क्रिया या भाव।

धकधक (हिं० क्री०) १ जोकी धड़कन, धकधकी। (क्रि० वि०) २ चलते हुए।

धकधकाना (हिं० क्री०) भय घाना, डरना, दहगत घाना।

धकधिन (हिं० क्री०) धकधकना, रसाधिन।

धकार (हिं० पु०) 'ध' पत्र।

धकियाणा (हिं० क्री०) धका देना, टंकेना।

धकेलना (हिं० क्री०) धका देना, टंकेना, टंकेलना।

धकेलू (हिं० पु०) धका देनेवाला, टंकेलनेवाला।

धकेत (हिं० वि०) धकधकना करनेवाला, धका देनेवाला।

धकपक (हिं० क्री०) धकपक देखो।

धकधकना (हिं० पु०) १ बहुतसे मनुष्योंका परस्पर धका देनेका काम। २ रसाधिन, धकाधिन।

धका (हि० पु०) १ घाघात, या प्रतिघात, टक्कर, रसा, भोंका । २ पछो भारो मोड़ जिधमें स्त्रियोंके शरीर एक दूसरेसे रगड़ खाते हैं, काममस । ३ दुःखकी चोट, सन्ताप । ४ कुम्भोका एक पेंच । इसमें बायां पैर आगे रख कर विपक्षीकी छातो पर दोनों हाथोंसे गहरा धका या चपेट दे कर उसे गिराते हैं । ५ टकेलनेकी क्रिया, भोंका । ६ आपदा, विपत्ति, आफत ।
 धकामुकी (हि० स्त्री०) सुठभेड़, मारपोट ।
 धगड़ (हि० पु०) चपपति, जार ।
 धगड़बाज (हि० वि०) व्यभिचारिणी, कुलटा ।
 धगड़ा (हि० पु०) चपपति, जार ।
 धगड़ी (हि० स्त्री०) व्यभिचारिणी स्त्री, कुलटा चौरत ।
 धगरा (हि० पु०) धगड़ा देखो ।
 धगरिन (हि० स्त्री०) धांगर जानिकी स्त्री । यह नव-जात शिशुका नाल काटती है ।
 धगवरी (हि० वि०) १ पतिली दुलारी, लसमकी सुँह लगी । २ कुलटा, छिनाल ।
 धगाड़ (हि० पु०) धगड़ देखो ।
 धक्का (हि० पु०) घाघात, धका, भटका, भोंका ।
 धज (हि० स्त्री०) १ सुन्दर रचना, मोहित करनेवाली । २ चाल, सुन्दर ठग । ३ बैठने ठठनेका ढग, ठवन । ४ ठसक, नलरा । ५ फाकति, शोभा, कपड़ ।
 धजबड़ (हि० स्त्री०) तलवार ।
 धजा (हि० स्त्री०) १ धजा, पताका । २ धज, फाकति, डोलडोल । ३ कपड़को धज्जो, कतरन, चौर ।
 धजोला (हि० वि०) सुन्दर ठगका, तरबदार, सजीमा ।
 धजी (हि० स्त्री०) १ कटा हुआ लम्बा पतला टुकड़ा । २ लोहेकी बहुर या सक्कड़ोके पतले तख्खेकी धन्य की हुई लंबी पट्टी ।
 धट (स० पु०) धं धम धटति गच्छति प्राप्नोति तौल्यत्वेनेति ध-घट-घच्-शकन्नादित्वात् साधुः । १ तुला, तराजू । धकार शब्दका अर्थ धर्म है और टकार शब्दसे कृष्टिम नरका बोध होता है, अतः इन्हीं की धारण कर उसीका नाम तट है । २ तुलारागि । ३ परीचामेद, तुलापरीचा । ४ धर्म । ५ धव हल ।
 धटक (स० पु०) धटन तुलया कायतीति कौ-क । १

चतुर्दश वल्ल पविमाण, एक प्राचीन तोल जो ४२ रसियाँ-की होती थी । २ नन्दीहल, इसका प्रयोग—धक्, घट, नन्दितक, स्थिर, गौर और धुरधुर है ।
 धटककट (स० पु०) धटस्य कर्कटः ६-तत् । तुनाके शिखाधारमें ईपद्वय कर्कटके गड़के सटय धावध कोलकमेद, यह लोहेकी कील जो तराजूकी उँडोके मुँहें हुए सिरके जँबा होता है ।
 धटपरीचा (स० स्त्री०) धटस्य तुलायाः परीचा ६-तत् । तुलापरीचा । तुलापरीचा देखो ।
 धटिका (स० स्त्री०) पञ्चसेरात्मक परिमाण, पाँच सेरकी एक तोल, पमेरी । धटो स्वार्थे कन्-टाप् । २ चौर, वल्ल । ३ कौपीन, लंगोटी ।
 धटी (स० स्त्री०) धन अच्-निपातनात्, नस्य ट गौरादि-त्वात्-डोप । १ चौर, कपड़की धज्ज । २ कौपीन, लंगोटी । ३ गर्भाधानके बाद स्त्रियोंके परिधेय वस्त्रभेद, यह कपड़ा जो स्त्रियोंको गर्भाधानके पीछे पहननेको दिया जाता है ।
 ध्योतिपके अनुसार गर्भाधानके पीछे मूला, श्वषा, हस्ता, गुषा, उत्तरापादा, उत्तरभाद्रपद या मृगशिरा नक्षत्रों में स्त्रीकी अच्छे दिन धटी वस्त्र पहनाना चाहिये ।
 धटिन् (स० वि०) १ तुलाधारक, डंडो पकड़नेवाला । (पु०) २ तुलारागि । ३ शिव ।
 धटोदान (स० स्त्री०) धन्या चोरवस्त्रस्य दानम् । गर्भाधानान्तर स्त्री सम्प्रदानक चोरवस्त्र दान, गर्भाधानके पीछे स्त्रियोंको जो चोरवस्त्र दान दिया जाता है, उसीको धटी-दान कहते हैं ।
 धडंग (हि० वि०) नङ्ग । इस शब्दका प्रयोग प्रायः अकेले नहीं होता, 'नग' शब्दके साथ समस्त रूपमें होता है ।
 धड़ (हि० पु०) १ शरीरका मोटा बिचला भाग । इसमें प्रुत्तर्गत छाती, पीठ और पेट होते हैं । सिर और हाथ पैरकी छोड़ कटिके ऊपरके भागको धड़ कहते हैं । २ पेड़का सबसे मोटा कड़ा भाग । यह भाग जड़से कुछ दूर ऊपर तक रहता है और इसमें डालियाँ निकल कर उधर उधर फैली रहती हैं, पेड़ो, तना । (स्त्री०) ३ वह भावाज जो किसी वस्तुके एकवारगो गिरने-वेगमे गमन करने चाहिये होती है ।

धड़क (हि० स्त्री०) १ हृदय का स्पन्दन, दिल के कूदने या उछलनेकी क्रिया। २ हृदय के स्पन्दनका शब्द, दिल के कूदनेकी आवाज, मड़क, तपक। ३ भय, आगहवा पादि-के कारण हृदयका अधिक स्पन्दन, धड़ने या टहलने दिल का लट्की लट्की घोर और घोरसे कूदना। ४ आगहवा, घटका, पंदेगा।

धड़कन (हि० स्त्री०) हृदयका स्पन्दन, दिलका कूदना।

धड़कना (हि० क्ति०) १ हृदयका स्पन्दन करना, टाँसी-का धड़कन करना। २ किसी भारी वस्तु के गिरनेका शब्द करना, धड़धड़ आवाज करना।

धड़का (हि० पु०) १ दिलकी धड़कन। २ दिल धड़कनेकी आवाज। ३ घटका, पंदेगा, भय। ४ डँके पादि पर रखी हुई काली ढाँड़ी जो चिड़ियोंकी डरानेके लिये चेतों में रखी जाती है। ५ गिरने पड़नेकी आवाज।

धड़काना (हि० क्ति०) १ हृदयमें धड़क उत्पन्न करना, जो धड़कन करना। २ आशंका उत्पन्न करना, जो डकमाना, डराना। ३ धड़धड़ शब्द उत्पन्न करना।

धड़का (हि० पु०) धड़का देना।

धड़कटा (हि० वि०) १ जिसको कमर मुड़ी हुई हो। २ कुपड़ा।

धड़धड़ (हि० स्त्री०) १ किसी भारी वस्तु के गमन करनेके उत्पन्न आवाज की आवाज की ध्वनि शब्द। (क्ति० वि०) २ धड़धड़ शब्द के साथ। ३ धड़धड़, बिना हकानेके।

धड़धड़ाना (हि० क्ति०) धड़धड़ शब्द करना।

धड़का (हि० पु०) १ धड़धड़ शब्द, धड़का। २ भीड़ भाड़ घोर धूमधाम। ३ गहरी भीड़, लामाम।

धड़का (हि० पु०) एक प्रकारकी माला।

धड़काई (हि० पु०) वह जो कोई चीज तोलता हो।

धड़का (हि० पु०) १ बाट, बटपा। २ गुला, तराज, ३ चार मेरकी एक तोल।

धड़का (हि० पु०) धड़ धड़ शब्द।

धड़काधड़ (हि० क्ति० वि०) १ लगातार धड़काई के साथ। २ दरावर जट्टो जट्टो, बिना रुके रूप।

धड़काँटी (हि० स्त्री०) १ धड़का बाँधनेका काम। २ लड़ाई के पहले दो पक्षोंका अपने-अपनी सेनाका रण एक दूसरेके आगे करना।

धड़ाम (हि० पु०) खपरले एकबारगी कूद या गिर कर जोरसे जमीन, पानी पादि पर पड़नेका शब्द।

धड़ो (हि० स्त्री०) चार या पाँच मेरकी एक तोल।

धड़ (हि० पद०) १ तिरस्कार के साथ बटानेका शब्द, दुकानेकी आवाज। २ वह शब्द जो हाथीकी घोंदें बटाने के लिये बिया जाता है।

धन (हि० स्त्री०) दुरा चम्पाम, धराध पादन, दुरी धान।

धनकारना (हि० क्ति०) १ तिरस्कार के साथ बटाना, दुरा दुराना। २ धिक्कारना, मानन देना।

धना (हि० वि०) जो भगाया गया हो, जो दूर किया गया हो।

धनिया (हि० वि०) दुरा चम्पामाना, दुरी मतमाना।

धनौगढ़ (हि० पु०) १ हटपुट मनुष्य, मोटा ताना पाटमो, मुसंड। २ आरज, दीगना।

धनौगड़ा (हि० पु०) धनौगढ़ देना।

धनू (हि० पु०) दो लोग हाथ लंबा एक पोधा। हमके १०१२ भेट है। ध्वनि के समान धीमेधम धनू तथा गति-शोतोच्चमधम धनू यह बहुत उपजता है। हमने प्रकाश धनू विमल होत है। बहुत प्राचीनकालमें धोमपादिमें इनका व्यवहार बना पा रहा है। पर धूरीधनूमें बहुत पोड़े की दिनेमें हमका प्रसार है। प्राचीन दीम घोर रोमके लोग हमका व्यवहार जानते थे, यह प्रतीत नहीं होता।

परशु घोर संस्कृतवाचिन पढ़नेमें मान्य होता है, कि प्राचीनकालमें लोग धनू के गुणोंमें अच्छी तरह जानकार थे। किन्तु वर्तमान समयमें हमको विशिष्ट विविधियोंमें लोग धोमपादि काम पाता है घोर लोग नहीं, हमके विषयमें धनू मतभेद है। बहुतोंका कहना है, कि जिस धनूमें केमरी रंग के फूल लगते हैं, वह मजिद फूलवाने धनूमें अधिक विषय होता है, पर यह भ्रम है। क्योंकि इस देशमें जितने प्रकारके धनू देखे जाते हैं, उनमेंसे प्रायः सभीमें धनू दो रंगों के फूल लगते हैं। धनू यह कह सकते हैं, कि फूल देना धनू धनू के गुणका धनू लगाता बुद्धिमान नहीं है।

धनू के १०१२ भेट होने पर भी वे आचार्यतः मजिद

घोर काले इन्हों दो श्रेणियों में विभक्त किये जा सकते हैं। काला धतूरा (*Datura fastuosa*) भारतवर्ष के विश्वप्रधान प्रदेशों की पतित भूमि में यथेष्ट उपजता है। इसके भी फिर २१ भेद देखने में आते हैं। साधारणतः इसके फूल बड़े बड़े और सफेद अथवा कुछ धूम्रवर्ण के होते हैं। फूलका मध्य भाग (*Corolla*) प्रायः ७ इंच लम्बा होता है, समतलका भाग चौला रहता है। हर एक फूलका आस ५ इंच से कम नहीं होता। इसके फल सँझोके फलों के समान गोल घोर काटिदार पर उससे थोड़े बड़े होते हैं। अब भीतर के बीज अच्छो तरह पक जाते हैं, तब फल फट जाते हैं। साधारण विश्वास यह है, कि काला धतूरा सब धतूरों से अधिक विषैला और भयानक होता है। इससे नरहत्या अथवा इसी तरह के दूसरे दूसरे असदुद्देश्यको साधना के लिये सफेद धतूरे वाले धतूराका अधिक आदर देखने में आता है।

अनेक देशों के चिकित्सकों के मत में भी काला धतूरा बहुत उपकारी है, किन्तु *The Pharmacopoea of India* नामक ग्रन्थ में इसका ठोक प्रतिज्ञात लिखा है। साधारणतः इसके बीज को अनेक कामों में आते हैं। उग लोग बीज खिला कर पथियों को अज्ञान कर देते और पीछे मनमाना उनका सर्वस्व लूट लेते थे। अधिक बीज खाने से कामो कभी मृत्यु भी हो जाया करती है। मरणासादकता प्राप्त बढ़ाने के लिये कामो कभी उसमें बीज मिला देते हैं। रंगार के जखर मोजों को कुछ जला कर उस धूर से कई एक बरतन भर रखते हैं। पीछे उन बरतनों में शराब टाँस कर सुँघ बंधे हुए उन्हें एक रात काँड़ देते हैं। बड़ा आश्चर्य का विषय है, कि बीजको सादकता और विपात गुण उक्त धूर में भी आ जाता है। भाँग और शराबको तेज करने के लिये ओजों को चूर कर उसमें मिला देते हैं। यम्बई प्रदेश में भी इसी तरह व्यवहृत होते देखा गया है। उत्तरपश्चिम अञ्चल में विष प्रयोग के लिये बीजों को सुन कर उन्हें अच्छो तरह चूर कर डालते हैं; पीछे उसे चोभी, आटा, तमाकू आदि के साथ मिला कर देते हैं। एक श्रेणी के ऐसे व्यवसायो हैं जो इसे जल में मिगो कर इससे एक प्रकारका अति

तैयार करते हैं। इसकी दृग् बुंद तमाकू के साथ मिला कर पोने से प्रायः दो दिन तक अचेतन रहता है। श्वच्छेद द्वारा इस विषकी अक्षित्व निर्णयकी कथा अत्यन्त दुर्लभ है। रोगी साधारणतः अचेतनावस्थामें देखा जाता है एवं श्वासप्रश्वासका कार्य बहुत तेज से तथा कष्टकर रूपसे होता है। ऐसी अवस्थामें रोगीको शरीरमें बिलकुल धूप नहीं लगनी चाहिये अन्यथा उसकी मृत्यु हो जायगी। शीतवायुकी अपेक्षा शोष्ककालमें यह विष अधिक देर तक ठहरता है। पोने के पाँच मिनट बाद ही विष अपना प्रभाव दिखाने लगता है और एक घण्टे के भीतर रोगी तामसी नश्रामें पहुँच जाता है। शीतकालमें १५ से २० मिनट तक विष को रें भर नहीं करता।

घोषधर्म काले धतूरेका प्रयोग उतना ही हितकर है, जितना सफेद धतूरेका। सचराचर जिस जिस बीड़ा में धतूरेका व्यवहार होता है, वह सफेद धतूराके वर्णनस्थान पर लिखा जायगा। अभी काले धतूरे के विषय में चिकित्सकों ने जो विषय मत प्रकाश किये हैं, वही इस जगह दिये जाते हैं—

मन्त्राज-निवासी किसी डाक्टरका कहना है,—“इसमें जरा भी सन्देह नहीं, कि यह बीधा जलातद्दरोगमें रामवाण है। इस प्रदेश में अनेक चिकित्सक जलातद्दरोगों के लिये प्रतिष्ठ हैं, किन्तु वे अपना व्यवहृत दवा जनसाधारणको बतलाना नहीं चाहते। मैंने बहुत कष्ट और परिश्रम करके यह दवा निकाली है। इससे मैंने अनेक रोगियोंकी चंगा किया है और मेरे कई एक मित्र भी इसी तरह कृतकार्य हुए हैं। मेरी चिकित्साकी प्रणाली इस प्रकार है—

साधारणतः यह देखने में आता है कि पगले कुत्ते से काटे जाने के ४० दिन बाद रोगी जलातद्दरोग में पोहित हो जाता है। कहीं कहीं दो तीन सप्ताह के मध्य ही इस रोगका आगमन देखा गया है। मेरी प्रणाली के मत से काटे जाने के दो सप्ताह बाद पर्याप्त पन्द्रह से पच्चीस दिनों के मध्य निम्नलिखित औषधका प्रयोग करना उचित है। पन्द्रह दिनों में बहुत सबेरे लगभग ६ बजे रोगीकी एक अल्प मात्रा पीचिसे प्रसृत अत्रारधूत सेवन करावे।

पाप घट्टे के बाद उसे पाप छटा के कामे धनुष के पताका रस घोलने को दे। इसके साथ साथ मिर्चा घोलने को देवे। पचवा जिस बिमो उपायसे हो गये, समन योग रोखने की कोशिश करने रहे। रोगी जिसने बिमो दूध के का चमिट कर न सके, इस तरह उसे पचने तक राख कर दो पहर तक धूप में बैठने से रचना चाहिये। ऐसा करनेसे रोगी धीरे धीरे पचन हो जायगा और ठोक पचने कुर्त सरोगा काम करने लगेगा। यदि ये सब पचन दोष पड़े, तो जानना चाहिये कि उसे पचमुव पचने कुर्तने छाटा या पोर पच पाशोभ्य साम करने में कोई मन्दे नहीं है। आमकी रोगी के गिर पर कुछ काम तक पानो ठानना चाहिये। इसमें रोगी बहुत बिराह हो जायगा और सोनार करके लोभी पर टूट पड़ने की कोशिश करेगा। पीछे उसे मूत्रका मांस, मोमो मसूनी, सरद पोर कड़ू आदि खादों को देना चाहिये। इसका करने पर रोगी को निरोग समझि पोर ममोमें उसे प्रतिदिन थोड़ा पाने को दे। जिस रोगी को इससे पहले को जलातक पहुँच गया हो पोर यदि उसकी निकास करनी हो, तो पहले पहले उसको मोलकी को तेज सुगंध योडा फिर कर कुछ लेह बाहर निकाल डालना चाहिये। खाद कामे धनुष के पत्तों से उस जगह रगड़ देना चाहिये पोर साथ साथ थोड़ा रस भी पिला देना चाहिये।”

डाक्टर धर्मदास वसु कहते हैं, “मैं इस पेशे को कई बार काममें लाया है। शरीरका कोई अंग सूख कर जड़ दण्ड होने लगता है, तब मैं वहाँ जाने पत्तों का रस लगा देता पचवा उसकी एक पुनटिम तैयार कर देता हूँ। पाँचका दण्ड दूर करने में भी जाने पत्तों का रस बहुत उपयोगी है। इसमें पाँचकी मूत्रम बिलकुल जाती रहती है। ऐसे पत्तों पोर कोटो डालियों की लता कर उसका धुँवा मुँह में भी करने दमा रोग जाता रहता है पोर बिजली से रस कर तमाकुकी जाई” तैनेमे दमाका रोग कम जाता है, बिजु पाँचका मयाग करने में गिर कराने लगता पोर मुच्छा हो जाती है। इससे है, कि इससे जोर लगाने से रोगी में बिजु उपयोगी है। पोर इसको आयु में भी उपयोगी होती है।”

जिसे किसी बिराहका कहना है, कि कामे दण्डे लाजे पत्तों का रस दो तीन दण्ड काम में डालने से बहुत उपयोगी होता है।

डाक्टर धर्मदास कहते हैं, “दमा रोग में ऐसे पत्तों का उपयोग फायदा मन्द है। खातकी गन्ना दूर करने में बिजु तथा पन्धर की तैयारी के बिजु पत्तों के रस का बहुत प्रयोग करना चाहिये पोर जहाँ मिर्चों के सामने रोटी के होने को सम्भावना हो, यहाँ उसे दूर करने में बिजु तथा पन्धर दूध का गिरना रोकने के बिजु इसमें पत्तों की पुनटिम देने चाहिये।

गुरुप्रदेव के हकीम लोग खाटे दण्ड सामका दण्ड दूर करने में बिजु रोगी की उसकी सुगंध जड़ पाप घोल माता में काम में साथ पिलाते हैं, इसमें बीज भी धनमदुरोग है। काम के बिजु निम्नलिखित प्रकारसे व्यवहृत होते हैं:- १५ धनुषा फसकी बीजकी पचने तरह गुवा पोर चूर कर उसे दण्ड गिर मायकी दूध के साथ पचने तरह मिश्र करते हैं। पीछे उस दूध में जहाँ तक हो सके भी निकास लेते हैं। प्रति दिन दो बार करते उस पीको जननेन्द्रिय में लगाते पोर एक बार करते पार घोल पिलाते हैं।

अधिसुभी इस रोगको आराम करने के बिजु दण्डों के साथ प्रतिदिन एक बार करके इसके पत्तों का रस पाने को दिया जाता है।

किसी दूध के डाक्टर का कहना है, इसमें पत्तों का रस पीहामें पाशवयोग विधेय व्यवहार है।

कर्ममूख प्रदाहमें इसकी गाढा काफ़ी प्रयोग देने में मूत्रम पोर व्यापक कम हो जाती है।

इसकी पत्तों की सिह कर उसकी पुनटिम लोटेक दमादि में देने में सम्भव दूर होती है पोर पोर बहुत जल्द बाहर निकल पाती है। जिसे धनुष पोर दण्डों को एक साथ पोर कर प्रयोग देने में लाभदायक जाता रहता है।

एक मजिद धनुषी का विषय लिखा जाता है। मजिद धनुषा इस देश में बहुतो यत्न कर लेता होता है। इसमें धनुष कामे धनुष के पुनो में कुछ छोटे हैं। इसमें मिर्चा पोर कोई प्रयोग नहीं है। रंग मजिद पचवा मादरी मांस कुछ बीज होता है।

मर्मद धतूरे के दो भेद हैं, उन दोनों के अंग्रेजी में फ्रान्क नाम यथाक्रम Datura alba और Datura stramonium हैं। औषधमें Datura alba के बीज और पत्ते डाक्टरी से व्यवहृत होते हैं। बोझ से भरिष्ट, सार और प्रलेप तैयार होता तथा पत्तों से पुष्टि स बनती है। मुखे पत्तों का धूम पान करने से दमा, शयकाशका श्वासच्छक्क, हृत्पिण्डका वायुस्कीति आदि रोग जाते रहते हैं। पत्तों से जो सार और भरिष्ट बनता है इससे मादकता और भवसन्नता उत्पन्न होती है। सुलभ ज्ञान कर बहुत से डाक्टर अफीम के बदले उसी भरिष्टका व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं और इसके बीज बुँद एक घंटे अफीम के समान कार्यकारी हैं। सारका भी उसी तरह वैकेलोना के बदले काममें लाते हैं। परिमाण चौथाई घंटे दिन भरमें तीन बार है। यह मात्रा क्रमशः बढ़ा कर तीन घंटे दी जाती है। डाक्टर विडार्ड कहते हैं कि अस्थिगुल्मरोगमें, वातयुक्त हाथ और पैरोंकी गाँठकी सूजनमें, कष्टदायक बुँद अथवा अंग्रेजी वरिच निमें पत्तोंकी पुष्टि स देनेमें यथ्यथा दवा जाती है। किसी और दोष कालस्थायी दमा संभव्यो पौड़ोंमें अक्सर पत्तोंका "ड्रैटर" करके दिया जाता है, किन्तु ऊपरमें किसी प्रकारका फोड़ा वा जलुम हो, तो पुष्टि स अथवा ड्रैटर देनेकी कुछ भी जरूरत नहीं। क्योंकि उससे भोतरमें विषाधिय कर जानिकी सम्भावना रहती है। कष्टजनक स्तनपौड़ोंमें दूधका गिरना रोकने लिये इस देशकी ज़िन्दा धतूरेके पत्तोंकी पुष्टि स देती है। धतूरेके प्रयोगसे आँखोंको पुतली फैल जातो है और वह यदि अधिक विस्तृत हो जाय तो समझना चाहिये कि और अधिक इसका प्रयोग करनेसे अनिष्ट होगा।

किसी तरह अछाघातके बाद हृत्संक्रां हो तो कीर्द कीर्द चिकित्सक अन्य उरुष्ट औषधके नहीं रहनेसे धतूरेका ही व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं। जखमके स्थानमें दिनमें तीन बार धतूरेके पत्तोंकी पुष्टि स देने चाहिये। यदि जखमके ऊपर पीप आदि निकलो हो, तो पहले उसे कुछ गरम जलसे परिकार कर देना उचित है। बाद धतूरेका अरक बोससे तीस मुद्द जलमें मिला कर दिनमें तीन बार बार करके पिलाया चाहिये।

जब तक आँख घटने न लगे तब तक औषधका प्रयोग करते रहना चाहिये। किन्तु इसी बीच यदि आँखोंकी पुतलियाँ सम्पूर्ण रूपसे विस्तारित हो जाय और मस्तिष्कके ऊपर औषधका असर पड़े, तो धतूरे सेवन करनेमें कुछ हानि नहीं है। यदि आँख कुछ विलम्बसे आरम्भ हो एवं धीरे धीरे कुछ काल तक स्थायी रहे तो जब तक आँख बन्द न हो तब तक औषधका प्रयोग उसी तरह ठहर ठहर कर करना उचित है। शरीरके ऊपर धतूरेकी क्रिया लक्षित होने पर भी यदि रोग कुछ भी न हटे तो और अधिक प्रयोगसे कुछ उपकार नहीं है वरन् अनिष्ट ही होनेकी सम्भावना रहती है। इससे प्रत्यावा बोच बोचमें रोगोंके मिहदण्ड पर धतूरेका मरहम अच्छी तरह लगाना उचित है। रोगोंकी एक अन्धरे घरमें रखी और उसके शरीरमें जिससे ठण्डो हवा न लगे वैसे ही प्रयत्न करते रहें। प्रयोजन पड़ने पर सारपिणकी पिचकारी से कर रोगोंका मल त्याग कर सकते हैं। रोगोंको सबल बनाये रखनेके लिये मर्राव और इसके अण्डोंकी अच्छी तरह दूधसे साथ मिला कर उसी दूधकी पीने देना चाहिये अथवा और कोई दूसरा पुष्टिकर एवं उत्तेजक खाद्य पदार्थ दे सकते हैं।

धतूरा (हि० पु०) ठण्डोंका एक सम्प्रदाय। पूर समयमें ये लोग पयिकोंकी धतूरा खिसाकर वैद्योग कर देते और लूट लेते थे।

धत्ता (हि० पु०) एक प्रकारका वृक्ष। इसके विषम चरबोमें १८ और सम चरबोमें १५ मात्राएं होती हैं। अन्तमें तीन लघु होती हैं। यह दो ही पौलियोंमें निजा जाता है।

धत्तानन्द (हि० पु०) एक वृक्ष। इसको हर एक पंक्तिमें ११+७+१३के विधायमें ११ मात्राएं होती हैं। अन्तमें एक मगण होता है।

धत्तूर (सं० पु०) धरति पियंतीति प्रकृतिं धे वाहुलका-दुरच अयोदरादित्वा साधुः। धूस्तर, धतूरा।

धवक (हि० जो०) १ पागकी मपटके ऊपर उठनेकी क्रिया, पागकी धाँव, लपट, जो।

धवकना (हि० जि०) १ लपटके साथ जनना, दहना, भड़कना। २ प्रणयित करना, दहना।

“आवर्धय पनं श्वेत्” इस नीतिके अनुसार अर्थात्, पापदृष्टावक के लिये थोड़ा धन अवश्य जमा रखना चाहिये। किन्तु अति सज्ज करना भी हानिकारक है। रासायणिक लवणकारण्डमें श्रीरामचन्द्रने लक्षणसे धनकी इस प्रकार प्रशंसा की है—

जिस तरह पर्वतसे छोटी छोटी नदियां निकलती हैं, उसी तरह विद्वत्त धनसे सब क्रियायें प्रवर्तित होती हैं। जो धनहीन है, वो लोगोंको निकट मन्दबुद्धि समझे जाते हैं। औषधालयमें छोटी छोटी नदियां जिस तरह सूखी पड़ जाती हैं, उसी तरह निर्धन मनुष्य सब क्रियायोंसे वञ्चित हो जाते हैं। जिनके धन हैं उनके वस्तुशायब हैं, वे ही मूर्ख होने पर भी पण्डित तथा गुणी कहलाते हैं और जिनके धन नहीं हैं उनके कोई नहीं है। धन रहनेसे हर्ष, काम, दुर्ष, धर्म, क्रोध, शम और दम भादि उत्पन्न होते हैं। दुर्दिन या ज्ञाने पर जिस तरह घड़गण छराव फल देते हैं, उसी तरह धन नहीं रहनेसे सब लोग उनको घमसा करते हैं। धन रहनेसे सब प्रकारका धर्म कर्म किया जा सकता है। फिर धन हीसे नरकका मार्ग परित्यक्त होता है। संसारी व्यक्तिके लिये धन अत्यावश्यक है, किन्तु सुमुचके लिये इसका ठीक विपरीत है। उन लोगोंका यही एक मात्र परित्यागका विषय है। शङ्कराचार्यने कहा था कि इस संसारमें परित्यज्य विषय क्या है ? “किमग्रहेयं कनकं च कांता” काश्चन और स्त्री यही दोनों हीय अर्थात् परित्यागके योग्य हैं। जब तक धनादिमें मोह रहेंगा, तब तक जीवका मृत्यु पथ असंभव ही रहेगा। शङ्कराचार्यने और भी कहा है—

“अर्थमनर्थं भाग्यं निरर्थं नास्ति ततः सुखलेशः सत्यं।

पुत्रादपि धनमात्रं भोगिः सर्वत्रैवा विहितो नीतिः ॥”

(मोहबुद्धर)

अर्थ अर्थात् धनकी प्रतिदिन अनर्थ समझना चाहिये। धनसे कुछ भी सुख नहीं मिलता। धनियोंके पुत्र होनेमें भी संदेह बना रहता है, यह नीति सब जगह कही गई है।

जो धनकी इच्छा करते हैं, उन्हें धनिकी आराधना करनी चाहिये। धनिदेवके सन्तुष्ट होनेसे धन मिलता है।

Vol. XI. 16

धन नहीं रहनेसे जीविकानिर्वाह नहीं होता है, इसीसे ब्राह्मणोंको जीविकाके लिये धनोपाजनके विषय में मनुने इस प्रकार उपदेश दिया है—

ब्राह्मणकी उचित है कि वे गुरुके घरमें जोधित-कालका एक चौथाई भाग रक्ष कर पोछे विवाह करके घरमें रहें। गाई-व्यधर्मका प्रतिपालन करनेमें धनका प्रयोजन पड़ता है। तब उन्हें पशोह अर्थात् दूसरे-को बिना कष्ट पहुँचाये शौलोष्णादि हस्ति भवत्वम्बन कर पशुश्रोत्र (प्रायश्चा करके लोगोंमें धन मांगनेका नाम पशुश्रोत्र है) द्वारा धन उपार्जन कर जीवन धारण करना चाहिये। प्राणरक्षा और कुटुम्बोंके प्रतिपालनके लिये वे अनिन्दित निज कर्म द्वारा तथा शरीरको कष्ट दिये बिना धन संचय कर सकते हैं। धनसंचयके लिये कौन काम निन्दित और कौन काम अनिन्दित है यह कहते हैं—मृत, मृत्यु, मृत, मृत्यु और सत्यामृत इनके द्वारा ब्राह्मण धन संचय कर जीवन निर्वाह कर सकते हैं। श्रद्धाति अर्थात् नौकरों करके धन जमा करना ब्राह्मणोंके लिये विलक्षण मना है। छितारि धान काट ले जानेके बाद जो सब धान बहा गिरे रहते हैं उन्हें संप्रह कर जीवन धारण करनेका नाम उच्छ्रयोल है। इसी उच्छ्रयोलका नाम मृत है। जो आपमें आप मिल जाय उसे मृत्यु कहते हैं। (क्योंकि इसमें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता, बल्कि लाभ हो होता है, इसीसे इसका नाम मृत्यु हुआ।) प्रायश्चा कर अर्थात् मोक्ष माग कर जो धन जमा किया जाता है उसे मृत कहते हैं। (लोगोंसे कुछ चीज मांगना मृत्यु कष्टदायक है इसीसे प्रायश्चित्त धनका नाम मृत पड़ा है।) जमीन जीत कर भी सब अनाज उपजाये जाती, उसे मृत्यु कहते हैं। (चूँकि जमीन जीतते समय अनेक प्राणियोंका वध होता है, इसीसे यह अत्यन्त कष्टकर और पापजनक होनेके कारण इसका नाम मृत्यु हुआ है।) वाणिज्य द्वारा जो धन उपार्जन किया जाता है, उसे सत्यामृत कहते हैं। (वाणिज्य करनेमें सब और झूठ धोना पड़ता है, इसीसे इसका नाम सत्यामृत पड़ा है।) इन्हीं सब हस्ति-धन धन जमा कर ब्राह्मणोंको जीवन निर्वाह करना चाहिये, किन्तु श्रद्धाति अर्थात् नौकरों करके कभी धन

मतिमान्, निधिके समान धनपूर्ण, चक्षुः, मतिमान्, सर्वदा हृष्टचित्त, परम सुखभागी, कीर्तिशाली, सद्भिः प्रफुल्ल वदन और चन्द्रमा सदृश कान्तियुक्त होता है।

मङ्गलके धनस्थानमें रहने जिसका जन्म हो, वह मनुष्य कृपिजीवी, बाणिज्यकारी, वक्ता, प्रवासवासी, अल्पधन-शाली; धातुकर्ममें निरत और व्यूतक्रीडामें आसक्त होगा।

मृताक्षरके—जन्मकालमें यदि मङ्गल धनस्थानमें रहे तो मनुष्य धातुद्रव्य विपणनमें विवादपरायण, प्रवासी, अल्प धनविशिष्ट, क्षीणचित्त, व्यूतकर, सद्भिः, कृपिकार्य धर्ममें समर्थ, क्रयविक्रयशील, लुब्धचित्त और सर्वदा अल्प सुखभागी होता है।

बुधके धनस्थानमें रहनेसे जिसका जन्म हो, यह मनुष्य शल्यवादी, प्रगल्भ, प्रवासी, पिष्टभक्त, सुन्दर और सम्पूर्ण मौभाग्यशाली तथा हृष्टचित्तके धनस्थानमें रहनेसे धनवान्, मान्य, हर्षयुक्त, चन्दन और अग्न्याग्न्य गन्ध द्रव्य विभूषित एवं वृष्टान्धामें धनहीन होता है।

जिसके जन्मकालमें शुक्र धनस्थानमें रहे, वह मनुष्य निग्रह विद्याद्वारा धन संपादन करेगा और स्त्रोचन द्वारा धनवान् होगा; ऐसे मनुष्यका धनागार सर्वदा धनसे परिपूर्ण रहेगा। मृताक्षरके—जिसके जन्मके समयमें शुक्र धनस्थानमें रहे, वह मनुष्य दूसरेके धनसे धनवान्, युवशोको मनोरञ्जनकारी, एकमात्र रजतधनसे धनी, यौवनागमसे हृष्टदेह, रक्षिक और याचक होता है।

शनिके धनस्थानमें रहने जिसका जन्म हो वह काष्ठ, पट्टार और लघुद्वारा धनवान् होगा, सर्वदा दुष्कार्यद्वारा धन जमा करेगा तथा नीच विद्याभिरागो और दुःखितचित्त होगा। मृताक्षरके—जन्मकालमें शनि जिसके धनस्थानमें रहेगा, यह मनुष्य काष्ठ और लृण द्वारा धनवान्, कोह और सोसकसमर्थ करनेमें यत्नशील तथा चीरपरायण होगा। राहुके धनस्थानमें रहनेसे जिसका जन्म हो; वह मन्त्र मांस द्वारा धनशाली, नख र्म तथा अस्त्रविक्रयी होगा। यमिपत्नः वह मनुष्य चोरी करके अपना जीविका निर्वाह करेगा। मृताक्षरके—राहुके धनस्थानमें रहनेसे वह चोरीके मतानुयायी प्रतिनिष्ठ, सर्वदा सन्तानहृदय, बहुदुःखभागी, मन्त्र और

मांस द्वारा धनी तथा सब दा नोचोंको संगत करता है। (ज्योतिःकरसता)

दुष्टिराज कुन जातकाभरणमें धनस्थानका विषय इस प्रकार लिखा है—

पण्डितोंको सुवर्ण प्रभृति धातुशोका क्रयविक्रय, रत्न प्रभृति कोषग्रहका विचार धनस्थानमें करना चाहिये।

यदि सूर्य, मङ्गल, शनि अथवा चोषचन्द्र धन स्थानमें रहे वा धन स्थानको देवता हो, तो मनुष्य शम-रोगविनिष्ट होता है। शनि धनस्थानमें रहे कर यदि बुधसे देखे जाते हों, तो मनुष्यको धनहानि होती है। यदि धनस्थानमें सूर्य रहे और शनिसे देखे जाते हों, तो वह निश्चय हो धनवान् होगा। कहेनीका तात्पर्य यह कि शुभ ग्रहोंके धन स्थानमें रहनेसे ही उत्तम फल मिलते हैं। यदि हृष्टरूपित धन स्थानमें रहे और शुभ ग्रहसे देखे जाते हों, तो वह विपुल धनसम्पत्तिका अधिकारी होता है। यदि बुध धनस्थानमें रहे कर चन्द्रमा-से देखे जाते हों, तो धनकी हानि होती है। यदि चोषचन्द्र धन स्थानमें रहे कर बुधसे देखे जाते हों, तो मनुष्यका पूर्वोपार्जित धन नाश तथा नूतनोपार्जित धनको हानि होती है। यदि शुक्र धनस्थानमें रहे और बुधसे देखे जाते हों, तो मनुष्य धनवान् होता है। किन्तु शुक्र यदि शुभग्रहसे देखे जाते हों, वा शुभग्रहके साथ मिले हुए हों, तो मनुष्य प्रचुर धन पाता है।

केतुके धनस्थानमें रहनेसे धननाश, धान्यनाश, क्लृप्त्य विरोध, द्रव्य विषयमें राजभय तथा सुखरोग होता है। यह मनुष्य अर्थों भो सम्मानित नहीं होता तथा बहुमायी होता है। किन्तु यह केतु यदि अपने घरमें अथवा भौम्यघरमें रहे, तो वह सदा सुखी रहता है।

धनयोग—जिसके जन्मसमय पांचवें स्थानमें शुक्र अपने घरमें एवं ग्यारहवें स्थानमें शनि रहे, तो यह मनुष्य बहुत धनी होता है। जिसके जन्मसमय पांचवें स्थानमें बुध निज क्षेत्रमें तथा ग्यारहवें स्थानमें चन्द्रमा और मङ्गल रहे, यह मनुष्य प्रभूत धनाधिपति होता है। जिसके जन्मसमय पांचवें स्थानमें शनिके क्षेत्रमें रवि और ग्यारहवें स्थानमें

पुलस्त्य नामक तपःपराधीन एक ऋषि थे । उनके विद्यवा नामक तपःप्रभावादि सम्भव एक पुत्र हुए । एक दिन भरद्वाज ऋषि विद्यवा आश्रममें गये और वहाँ इन्हें सद्गुणविशिष्ट देख ऋषिने देववर्णिनी नामक अपनी कन्याको इन्हें चर्पण किया । कालक्रमसे देववर्णिनीके एक सन्तान उत्पन्न हुई । विद्यवाने ज्योतिःशास्त्रानुसार गणना करके देखा कि यह पुत्र सकल गुणसम्पन्न और धनाध्यक्ष होगा । तब ऋषियोंने इन्हें पिष्ट भगुरुप देख इनका नाम वैश्ववर्ण रखा । पीछे वैश्ववर्ण ययासस्य धर्म की एकमात्र परमगति है, ऐसा स्थिर कर कठोर तपस्यामें प्रवृत्त हुए । इस तरह निराहार हजार वर्ष बीत गये । बाद वायु भोजन तथा कुछ कुछ जल पान कर एक हजार वर्ष और बीत । ब्रह्माजी इनको कठोर तपस्यामें खुश हो कर घर देनेके लिये इनके सामने उपस्थित हुए और बोले, “तुम्हारे इस तपस्यासे मैं बहुत प्रसन्न हूँ, अभी तुम अभिलषित वर मांगो ।” इस पर वैश्ववर्णने कहा, ‘यदि आप सुभक्त परंप्रसन्न हैं, तो यही वर दोजिये जिससे मैं लोकपाल और धनाध्यक्ष होऊँ ।’ ब्रह्माजी ‘तथास्तु’ कह कर चले गये । (रामायण उत्तरकाण्ड २६वें) २ हिमालय पर्व, समुद्रमन्थन । धनद आश्रयित्वं भास्त्वस्थितिं पच । ३ हिमालयका एक देव । ४ धनस्य वायु । ५ भग्नि । ७ चित्रकवच, चैता । धनं ददाति दाक । (त्रि०) ८ दाता, धन देनेवाला ।

धनदण्ड (सं० पु०) धनेन दण्डः । मन्त्रक धनग्रहणरूप दण्ड, मनुके अनुसार एक प्रकारका दण्ड जिसमें अपराधीसे धन लिया जाता है ।

पहले वाक्दण्ड, तब धिकदण्ड, सबसे पीछे धनदण्ड देनेका विधान है । दण्ड देखो ।

धनदनीय (सं० पु०) व्रजके भगवन्त कुवैरतोय ।

धनदत्त (सं० पु०) १ धन देनेवाला । २ नाममिद, किशोका नाम ।

धनददेव (सं० पु०) एक कविका नाम ।

धनदक्षोत्त (सं० स्त्री०) धनदस्य कुवैरस्य स्तोत्रं । कुवैरका स्तोत्र ।

धनदा (सं० त्रि०) १ धन देनेवाला । (स्त्री०) २ देवीका एक नाम । ३ आश्विन कृष्ण एकादशीका नाम ।

धनदायी (सं० स्त्री०) धनस्य कुवैरस्य अचीव पिङ्गलं पुष्पमस्याः यच्च समामान्तः ततो ह्योय । १ कुवैरको, लताकरंज । २ पाटल वृक्ष, पादरका पेड़ ।

धनदानुज (सं० पु०) धनस्य अनुजः इतत् । १ रावण, कुम्भकर्ण आदि । ये लोग विद्यवाके औरस और कैकयीके गर्भसे धनदके बाद उत्पन्न हुए थे, इसीसे इन्हें धनदानुज कहते हैं । इनकी उत्पत्तिका विवरण रामायणमें इस प्रकार लिखा है—

विद्यवाने कैकयी नामक एक स्त्रीका पालनपोषण किया । पक्षी कैकसीके गर्भसे ब्रीहस्तकृप दशमीव भीम भुजावाक्ता एक पुत्र उत्पन्न हुआ, इसीका नाम रावण था । पीछे कुम्भकर्ण, तब सर्पमठा नामक एक कन्या और सबसे पीछे धार्मिक सुनिगुणसम्पन्न विमोदण नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

धनदायन (हि० पु०) एक पौधा । इसके काढ़से कनौ कपड़ों पर माही देते हैं ।

धनदायिका (सं० स्त्री०) धनं ददाति धन-दायिनी । धनदात्री देवीमिद, धन देनेवाली एक देवीका नाम ।

धनदायिन् (सं० त्रि०) धनं ददाति दायिनि । १ धनदाता, धन देनेवाला । (पु०) २ भग्नि । ‘धनमिच्छेत् कुताशनात्’ भग्निसे धनके लिये मायना करनी चाहिये । भग्नि समुद्र होनेसे धन देने है । इसीसे भनिका नाम धनदायी पड़ा है ।

धनदेव (सं० पु०) धनददेव. धनाधिपतात्री देवता, कुवैर ।

धनदेव्य (सं० पु०) कायीक्षित कुवैरका स्थापित किया हुआ एक शिवलिङ्गका नाम ।

धनधान्य (सं० पु०) धन और धान आदि, सामग्री और सम्पत्ति ।

धनधाम (सं० पु०) घरबार और रूपया पैसा ।

धननन्द—महावंशके मतसे नन्दवंशीय श्रेय राजा । कालाशोकके दश पुत्र थे । ये दशों एकही समयमें राज्य करते थे । इन्होंने सब मिला कर बारह वर्ष तक राज्य किया । धीरे धीरे सबसे छोटे धननन्द जब राज्यके मुख्य पद पर अधिकृत हुए, तब उनमें साथ चाणक्य पण्डितका विवाद हुआ । चाणक्यने बहुत चालाकीसे उन्हें मार

कर मोक्षमोक्ष पञ्चमुक्तो मन्त्रादि पद पर प्रतिष्ठित
किया। मर देवो।

धनदाय (मं० पु०) कुर्वे।

धनदाय (मं० पु०) धन धर्म धाम्ना ददाति दा क.

या धनं ददते धन दायकान् वाच-सुम्। सुवर्गमिष्ट।

धनपति (मं० पु०) धनानां पतिः ३ तत्। ३ कुर्वे।

२ देवदत्त वासुदेव, शरीरको दत्त वासुदेव नाम। दत्त

धनपति का उत्पत्ति-विषय गणपुत्राचमि दत्त प्रसार
मिला है—

व्यभिचर सप्ततमने कहा था कि मैं धनपति का
उत्पत्तिविषय कहना चाहूँ, भ्राता दे वर सुनो, दत्त पञ्चम
पावनमात्र है। शरीरगत धनदवायु त्रिम तरह उत्पन्न
हूँ, भी सुनो। मध्यमे पक्षमे शरीरमें वायु पञ्चाभित्त हो।
घोड़े प्रयोजन होने पर उस वायुको समस्त पितृदेवताओं-
में वृत्तिमिश्रित किया था। उभो वसुदेव वायुको उत्पत्ति
मार्ग कही जानी है। ब्रह्माने तब मन्त्रारको उचि-
को, तब तबके मन्त्रमे वायु देवता मिश्रित। ब्रह्माने उभो
वृत्तिमान् को कर शास्त्राभाव प्राप्त करनेके लिये कहा
और वर दिया, "देवताओं को जितना धन है, सबके
एक ही धन को और उभोमे तुम धनपति नामसे विख्यात
होगे।" १०६ के पत्तिमिश्र ब्रह्माने उभो एकादशोक्तिमि
दि कर कहा, "तो एकादशोंके दिन पार्वी वक्रा दत्त न
व्यायोग समके प्रति प्रयत्न को कर तुम धनपति होगे।
उभो प्रसार धनपति को वृत्ति को उत्पत्ति हूँ तो। यह
वृत्ति सब प्रकारके पात्रों को लाभ करनेवाली है। जो
भ्राता है वह इस वृत्तिमान् को सुनना या पढ़ना है, समके
सब तरह धन को जानें हैं और पार्वी सब सर्वलोकको
ज्ञान होता है।

धनपति कुर्वे के कारणोंसे कुण्डल, मन्त्रमे शास्त्रा,
वाचमे दत्त और दत्त वर सुनते हैं। इसका अर्थ होता
है कि वे वेद-विद्याम पर बैठे हुए हैं और पार्वी
और वृत्तान्त (कुर्वे के वृत्त) भी दत्त हैं। वे मन्त्रार,
प्रकाशक तथा दत्त वर वर्यवर्ग हैं। धनपति कुर्वेके
प्रकार कोनेके धन प्राप्त होता है। ३ दत्त श्रोतार। दे
वपत्ति कहानी कहते हैं। उभो दो-दोनों में जिनके
नाम वासुदेव और शरीर है।

जब वे धनमे देवदे शरीर विद्यमानहोते हैं तब
दोनों में मन्त्रमे वे। वर्यो शास्त्राव शास्त्रमे दत्त के द-
त्त मिला। घोड़े दत्तके दत्त शरीरमाने दत्त शरीरगत वि-
द्या। (१०६ के दत्त-पत्र) ३ पञ्चम देवो। (१०६) ३ पञ्चम-
भ्राता, जिन पर धनको प्रकाश और शरीर दत्त है।

धनपति ३ वृत्तिमान् वर्यवर्ग दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग। ३

वाचसुदेवको नामक दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग। ३

दत्तार्यमन्त्रार नामक दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग। ३

धनपतिमित्र—विद्यारत्नार और वृत्तार्यमन्त्रार्यम
नामक दोनों वर्यवर्ग वर्यवर्ग। शरीरक पत्र १०६ के
में कहा गया था। दत्तके वर्यवर्ग नाम नाम शरीरमाने
शरीरका मन्त्रार्यमनाम, वृत्तका शरीरमाने वर्यवर्ग और
दत्तका नाम दत्तार्यमित्र था।

धनपति (मं० पु०) वर्यवर्ग, शास्त्र।

धनपति (मं० पु०) धनवान्, धनी।

धनपति (मं० पु०) धनं धामपति धानि धनम्। ३ धन
पति, धनको दत्त करनेवाला। (पु०) ३ कुर्वे। ३
वृत्तिमान् वर्यवर्ग और शरीरमाने वर्यवर्ग दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग।
३ दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग दत्त। दत्तके वर्यवर्ग 'धन' और
'वृत्ति' का वर्यवर्ग है। वे मन्त्रार्यमित्र, वाचसुदेव और
वृत्तार्यमित्र वर्यवर्ग हैं। शरीरमाने धनपतिमित्र दत्तका
वर्यवर्ग सब तरह किया गया है।

३ दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग। वे "वृत्तार्यमन्त्रार्यमनाम"
नामक शास्त्राव्यमिषावर्ग हैं। शरीरमाने वर्यवर्ग और शरीरमाने
वर्यवर्ग दत्तका वर्यवर्ग है। दत्तके वर्यवर्ग नाम वर्य-
वर्ग और शरीरमाने वर्यवर्ग नाम वर्यवर्ग।

३ दत्त शरीरमाने वर्यवर्ग। दत्तके वर्यवर्ग दत्त दो वर्य-
वर्ग माने हैं, वर्यवर्गवर्ग और शरीरमाने वर्यवर्ग।
वृत्तार्यमन्त्रार्यमनाम दत्तको वर्यवर्ग नाम था। वे मन्त्रार्यम-
नाम माने वर्यवर्ग हैं। दत्तके वर्यवर्ग नाम वर्यवर्ग
वर्गवर्ग दत्त। शरीरमाने वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग
नामक वर्यवर्ग वर्यवर्ग दिया गया। दत्त वर्यवर्ग वर्यवर्ग
का नाम वर्यवर्गवर्ग वर्यवर्ग है। दत्तके वर्यवर्ग वर्य-
वर्ग और वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग
वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग
वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग वर्यवर्ग

इतना सदास क्यों है ? इस पर कविने सब बातें कह सुनाईं । तिलक-हंस कर बोली, “इसके लिये चिन्ता क्यों ! चाप प्रतिदिन जितने शोक लिखते थे, उन्हें मैं रोज रोज कण्ठस्थ कर लिया करती थी जो आज तक भी सब स्मरण है । मैं कहती जाती हूँ चाप उसे लिखते जाय ।” इस तरह नष्ट ग्रन्थ फिरसे नवीन बनाया गया । कविने बहुत प्रफुल्लितसे अपने कन्याई नाम पर सत्त काव्यका नाम तिलकमधुरी रखा । काव्यालङ्कारमें रनका उल्लेख है ।

धनपिशाचिका (स० स्तो०) धने पिशाचिर्वच । धनाया, धनवा मोक्ष । इसका नामान्तर लम्बा है ।

धनप्रयोग (स० पु०) धनस्य वृद्धयर्थं प्रयोगः । धनको किसी वशावारमें लगाने या वशाज पर उधार देनेका कार्य, रुपया लगानेका काम । धन प्रयोग करनेमें विशुद्ध नक्षत्रादिका विचार करना आवश्यक है । सुकृत्त-चिन्ता-मणिमें इसके विषयमें यों लिखा है—स्वातो, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रैवतो, मिशाखा, पुष्या, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और अश्विनी इन सब नक्षत्रोंमें ऋणदान करना चाहिये ।

मङ्गलवारकी कृष्ण न सेना चाहिये और बुधवारकी न देना चाहिये । मङ्गलवारकी कृष्णपरिशीघ्र करना अच्छा है । सोमवारकी मङ्गल करना चाहिये । हस्ता-नक्षत्र, रविवार और संप्रक्रान्तिमें जो कृष्ण लिया जाता है वह कभी परिशीघ्र नहीं होता, वरं वह पुत्रपौत्रादि तक क्रमशः बढ़ता जाता है । यदि इन सब निषिद्ध दिनोंमें कृष्ण लिया भी जाय, तो उसे यत्नपूर्वक बहुत लक्ष्म परिशीघ्र कर देना चाहिये ।

पूर्वभाद्रपद, भरणी, कृत्तिका, अश्लेषा, मघा, पूर्व-फल्गुनी, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, स्वाति, मिशाखा और आर्द्रा इन सब नक्षत्रोंमें धनप्रयोग अर्थात् ऋणदान नहीं करना चाहिये । किन्तु अनुराधा, मृगशिरा और रैवतोंमें श्रेष्ठ सेना अच्छा है, पर दान भूल कर भी न करे ।

धनप्रिया (स० स्तो०) धनवत् प्रिया । काकजगृह्ण, एक प्रकारका जासुन ।

धनफल (स० स्तो०) धनानां फलम् । दानमोगादि ।

धनमघ (स० पु०) धनमोग ।

धनभूति—मौर्यवंशके बाद सुकृत्तवंशके राजा प्रवत्त हो उठे । पहली वा दूसरी शताब्दीमें वधेनखण्डके ममोप नामोद (नगोद) नामक स्थानमें भरद्वाज नामका एक स्तूप बनाया गया । इस स्तूपके एक स्तम्भमें उक्तोक्तं यिन्ना-मेख पट्टनसे मान्य होना है कि सुकृत्तवंशके राजाधर्म-के समयमें गार्गीके पुत्र विश्वदेवके प्रपौत्र, गौतोके पोत्र, भगर और वात्सोके पुत्र धनभूतिमें यह तोरण (फाटक) निर्माण और समाप्त किया गया था । जर्मनके पण्डित हुल्लर, अनुमान करते हैं, कि ये धनभूति सुकृत्तके चधो-नस्य कोई राजा होगे । हम स्तूपके दूसरे स्तम्भलेखमें धनभूतिके बाद उनके पुत्र सुयराज वधवात्सका नाम पाया गया है ।

धनमद (स० पु०) धनाय ये मदः वा धनस्य मदः । धन-के लिये मत्तता, धनका धमड । धन होनेसे मनमें एक प्रकारका गर्व भा जाता है, उसीको धनमद कहते हैं । धनमित्र—एक व्यक्ति । महाकवि कालिदास-प्रणीत शकुन्तला नाटकमें इसका नाम पाया जाता है । जिम समय राजा दुष्यन्त माधव्यसे साथ शकुन्तला के विरहसे कातर हो कर उपवनमें भ्रमण कर रहे थे, उस समय मन्त्रीने राजाको इसकी अपुत्रक चक्षुष्यामें मृत्युका सम्वाद लिपि द्वारा सुनाया था । उस पर राजाने कहा था, कि धनमित्रके अनेक झियारें हैं, उनमेंसे जो पतिव्रता होगी उसीकी सन्तान हमको उत्तराधिकारी होगी ।

(गङ्गुलठा १ अङ्क)

धनमाली (स० पु०) एक चस्तरका संहार ।

धनमूल (स० त्रि०) धनमेव मूलं यस्य । धन ही जिसका मूल है, अर्थ ही जिसका कारण है ।

धनमोहन (स० पु०) एक व्यक्ति पुत्रका नाम ।

धनराज—महादेवोदीपिका नामक ज्योतिषके ग्रन्थकार ।

धनर्ष (स० पु०) धनार्थं अर्षां यस्य । धनार्थं अर्षायुक्त अग्नि, अग्नि जिसकी आराधना करनेसे धन मिलता है ।

धनलुब्ध (स० त्रि०) धनलोभी, धनका लालची ।

धनलोभ (स० पु०) धनाय धनस्य वा लोभः । धनके लिये लोभ, धनको चमिलाया ।

धनवत् (स० त्रि०) धनमस्त्यस्येति धन-मस्तुप्, मस्य व ।

धनविशिष्ट, धनशाली, धनी, धनाढ्य ।

इतना उदास क्यों है ? इस पर कविने सब बातें कह सुनाईं । तिलक हँस कर बोली, “इसके लिये चिन्ता क्यों ! आप प्रतिदिन जितने शोक लिखते थे, उन्हें मैं रोज रोज कण्ठस्थ कर लिया करती थी जो आज तक भी सब स्मरण हैं । मैं कहती आती हूँ आप उसे लिखते जाय ।” इस तरह नष्ट अन्ध फिरसे नवीन बनाया गया । कविने बहुत प्रयत्नचित्तमे अपनी कन्या का नाम पर सत्त काव्यका नाम तिलकमधुरी रखा । काव्यालङ्कारमें इनका उल्लेख है ।

धनपिशाचिका (स० स्तो०) धने पिशाचिर्वच । धनाया, धनवा लोभः इसका नामान्तर लक्षणा है ।

धनप्रयोग (स० पु०) धनस्य वृत्तार्थः प्रयोगः । धनको किसी वशापारमें लगाने या वशज पर उधार देनेका कार्य, रूपाय लगानेका काम । धन प्रयोग करनेमें विशेष नृपत्यादिका विचार करना आवश्यक है । सुहृत्तचित्तामणिमें इसके विषयमें यों लिखा है—स्वातो, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रैवतो, विशाखा, पुष्या, श्रवणा, धनिष्ठा और अश्लेषा इन सब नक्षत्रोंमें ऋणदान करना चाहिये ।

मङ्गलवारको ऋण न लेना चाहिये और बुधवारको न देना चाहिये । मङ्गलवारको ऋणपरिशोध करना अच्छा है । सोमवारको सख्य करना चाहिये । हस्ता-नक्षत्र, रविवार और संक्रान्तिमें जो ऋण लिया जाता है वह कभी परिशोध नहीं होता, परं वह पुत्रपौत्रादि तक क्रमशः बढ़ता जाता है । यदि इन सब निषिद्ध दिनोंमें ऋण लिया भी जाय, तो उसे यदप्युक्त बहुत लज्जद परिशोध कर देना चाहिये ।

पूर्वभाद्रपद, भरणी, कृत्तिका, श्रवणा, मघा, पूर्वफल्गुनी, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, स्वाति, विशाखा और आर्द्रा इन सब नक्षत्रोंमें धनप्रयोग अर्थात् ऋणदान नहीं करना चाहिये । किन्तु अनुराधा, मृगशिरा और रैवतोमें ऋण लेना अच्छा है, पर दान भूल कर भी न करे ।

धनप्रिया (स० स्तो०) धनवत् प्रिया । काकजम्बूतृप्त, एक प्रकारका जासुन ।

धनफल (स० स्तो०) धनानां फलः । दानमोगादि ।

धनमय (स० पु०) धनमोग ।

धनभूति—भीर्यवंशके बाद सुहृत्वंशके राजा प्रवत्त हो उठे । पहली वा दूसरी शताब्दीमें वचेनगण्डके ममीप नागोद (नगोच) नामक स्थानमें भरद्वाज नामका एक स्तूप बनाया गया । इस स्तूपके एक स्तम्भमें उत्कीर्ण शिला-लेख पढ़नेसे मालूम होता है कि सुहृत्वंशके राजाओंके समयमें भार्गवके पुत्र विश्वदेवके प्रपौत्र, गौतमके पोत्र, चगर और वाकोके पुत्र धनभूतिमे यह तोरण (फाटक) निर्माण और समाप्त किया गया था । जर्मनके पण्डित हुलच-अनुमान करते हैं, कि ये धनभूति सुहृत्के अधो-नक्ष कोई राजा होगी । इस स्तूपके दूसरे स्तम्भलेखमें धनभूतिके बाद उनके पुत्र सुवराज वधवालका नाम पाया गया है ।

धनमद (स० पु०) धनाय ये मदः वा धनस्य मदः । धनके लिये मत्तता, धनका घमंड । धन होनेसे मनमें एक प्रकारका गर्व आ जाता है, उसीको धनमद कहते हैं । धनमित्र—एक व्यक्ति । महाकवि कालिदास-प्रणीत शकुन्तला नाटकमें इसका नाम पाया जाता है । जिन समय राजा दुष्यन्त माध्वयके साथ शकुन्तल के विरहसे कातर हो कर उपवनमें भ्रमण कर रहे थे, उस समय मन्त्रीने राजाको इसकी अप्रत्यक्ष अवस्थामें शत्रुका सम्वाद लिपि द्वारा सुनाया था । इस पर राजाने कहा था, कि धनमित्रके अनेक स्त्रियाँ हैं, उनमेंसे जो पतिव्रता होगी उसीको मन्तान इसको उत्तराधिकारी होगी ।

(शकुन्तला १ अङ्क)

धनमालो (स० पु०) एक सफ़रका सहार ।

धनमूल (स० त्रि०) धनमेव मूलं यस्य । धन ही जिसका मूल है, अर्थ ही जिसका कारण है ।

धनमोहन (स० पु०) एक व्यक्ति पुत्रका नाम ।

धनराज—महादेवोदीपिका नामक क्योतिपके ग्रन्थकार ।

धनच (स० पु०) धनार्थ अर्थात् यस्य । धनार्थ अर्थात् पुत्रपुत्रि, अग्नि, अग्नि जिसकी पाराधना करनेसे धन मिलता है ।

धनलुब्ध (स० त्रि०) अर्थलोभी, धनका लालची ।

धनलोभ (स० पु०) धनाय धनस्य वा लोभः । धनके लिये लोभ, धनको चमिलाया ।

धनवत् (स० त्रि०) धनमस्त्यस्येति धन-मत्तुप्, मस्य वा ।

धनविशिष्ट, धनशाली, धनी, धनाढ्य ।

इतना उदास क्यों है ? इस पर कविने सब बातें कह सुनाई । तिलक जैस कर सोली, "इसके लिये चिन्ता क्यों ! आप प्रतिदिन जितने शोक लिखते थे, उन्हें मैं रोज रोज कण्ठस्थ कर लिया करती थी जो आज तक भी सब स्मरण है । मैं कहती जाती हूँ आप उसे लिखते जाय ।" इस तरह नष्ट श्रम फिरसे नवीन बनाया गया । कविने बहुत प्रफुल्लितचिन्तमें अपना कन्याई नाम पर सप्त काव्यका नाम तिलकमञ्जरी रखा । काव्यालङ्कारमें इनका उल्लेख है ।

धनप्रियाचिका (स० स्तो०) धने प्रियाचिन्तः । धनाशा, धनवा लोभ । इसका नामान्तर लक्ष्या है ।

धनप्रयोग (स० पु०) धनस्य वृत्तार्थं प्रयोगः । धनकी किसी वशावारमें लगाने या वशज पर उधार देनेका कार्य, रुपया लगानेका काम । धन प्रयोग करनेमें विग्रह नक्षत्रादिका विचार करना आवश्यक है । गृहस्तं चिन्ता-मणिमें इसके विषयमें यों लिखा है—स्वातो, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, विशाखा, पुष्या, मघा, धनिष्ठा और अश्लेषा इन सब नक्षत्रोंमें ऋणदान करना चाहिये ।

मङ्गलवारकी कृष्ण न लेना चाहिये और बुधवारकी न देना चाहिये । मङ्गलवारकी कृष्णपरिग्रह करना अच्छा है । सोमवारकी सञ्चय करना चाहिये । हस्ता-नक्षत्र, रविवार और संक्रान्तिमें जो कृष्ण लिया जाता है वह कभी परिग्रह नहीं होता, वरं वह पुत्रपौत्रादि तक क्षम्यः बढ़ता जाता है । यदि इन सब निषिद्ध दिनोंमें कृष्ण लिया भी जाय, तो उसे यत्पुनर्क बहुत लज्जद परिग्रह कर देना चाहिये ।

पूर्वभाद्रपद, भरणी, कृत्तिका, अश्लेषा, मघा, पूर्व-फल्गुनी, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, स्वाति, विशाखा और आर्द्रा इन सब नक्षत्रोंमें धनप्रयोग अर्थात् ऋणदान नहीं करना चाहिये । किन्तु अनुराधा, मृगशिरा और रेवतीमें कृष्ण लेना अच्छा है, पर दान भूल कर भी न करे ।

धनप्रिया (स० स्तो०) धनवत् प्रिया । काकजम्बूवृक्ष, एक प्रकारका लामुन ।

धनफल (स० स्तो०) धनानां फलः । दानभोगादि ।

धनमत्त (स० पु०) धनभोग ।

धनभूति—सौर्यवंशके बाद सुहृदवंशके राजा प्रवस हो उठे । पहली वा दूसरी शताब्दीमें वचनलण्डके ममीप नागोट (नगोघ) नामक स्थानमें भरहृत नामका एक स्तूप बनाया गया । इस स्तूपके एक स्तम्भमें उत्कोर्ण गिरा-लेख पढ़नेसे मान्यम होता है कि सुहृदवंशके राजाची-वंस समयमें गार्गीके पुत्र विग्रहदेवके प्रपौत्र, गौतमके पोत्र, अगार और वास्तोके पुत्र धनभूतिमें यह तोरण (फाटक) निर्माण और समाप्त किया गया था । जर्मनके पण्डित हुल्लर, अनुमान करते हैं, कि ये धनभूति सुहृदके अष्टो-नस्य कोई राजा होगे । इस स्तूपके दूसरे स्तम्भलेखमें धनभूतिके बाद उनके पुत्र सुवराज अथवासका नाम पाया गया है ।

धनमद (स० पु०) धनाय ये मदः वा धनस्य मदः । धन-के लिये मत्तता, धनका चमड । धन होनेसे मनमें एक प्रकारका गर्व आ जाता है, उसीको धनमद कहते हैं । धनमित्र—एक व्यक्ति । महाकवि कालिदास-प्रणीत शकु-न्तला नाटकमें इसका नाम पाया जाता है । जिस समय राजा दुष्यन्त माधव्यके साथ शकुन्तला के विरह-वृत्त-कातर हो कर उपवनमें भ्रमण कर रहे थे, उस समय मन्त्रीने राजाको इसकी अपुत्रक अवस्थामें शत्रुका सम्वाद लिपि द्वारा सुनाया था । इस पर राजाने कहा था, कि धनमित्रके अनेक स्त्रियाँ हैं, उनमेंसे जो पतिव्रता होगी उसीको सन्तान इसको उत्तराधिकारी होगी ।

(शकुन्तला ६ अङ्क)

धनमाली (स० पु०) एक चक्रका संहार ।

धनमूल (स० त्रि०) धनमेव मूलं यस्य । धन ही जिसका मूल है, अर्थ ही जिसका कारण है ।

धनमोहन (स० पु०) एक व्यक्ति पुत्रका नाम ।

धनराज—महादेवोटीपिका नामक व्यापिकके ग्रन्थकार ।

धनार्थ (स० पु०) धनार्थं अर्थो यस्य । धनार्थ अर्थायुक्त अग्नि, अग्नि जिसकी आराधना करनेसे धन मिलता है ।

धनलुब्ध (स० त्रि०) अर्थलोभी, धनका लालची ।

धनलोभ (स० पु०) धनाय धनस्य वा लोभः । धनके लिये लोभ, धनको अमिताया ।

धनवत् (स० त्रि०) धनमस्त्यस्येति धन-मत्तुप्, मस्य व ।

धनविग्रह, धनशाली, धनो, धनाढ्य ।

धनाधिप (सं० पु०) धनार्था अधिपः । १ कुवेर । २ धन-
रक्षक, कोषाध्यक्ष, भण्डारी ।

धनाधिपति (सं० पु०) धनस्य अधिपतिः । १ कुवेर । २
धनरक्षक ।

धनाधिपत्य (सं० स्त्री०) धनाधिपतेर्भावः पत्यम् । धनका
अधिपतित्व, धनके अधिपतिका भाव ।

धनाध्यक्ष (सं० पु०) धनार्था अध्यक्षः । १ कुवेर । २
धनरक्षक, कोषाध्यक्ष, खजानघी ।

मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि जो लोह, वस्त्र, चर्म और
रत्न आदिका विधान अच्छी तरह जानता हो और जो
राशि, कार्यकुशल, सबदा अप्रमत्त और धनके सब प्रकार-
के विधानोंसे अवगत हो, वही धनाध्यक्ष होने योग्य है ।

इसे धनकी भाय और व्ययका हिसाब रखना पड़ता है ।
धनाना (हिं० स्त्री०) १ गायका गर्भवती होना । २
गायका साँसे संयोग करना, गायका बरदाना ।

धनायु (सं० पु०) नृपसेद, एक राजाका नाम ।

धनार्थ (सं० स्त्री०) धनाय अर्थः अर्थेन सह मित्य-
मन्मासः । धन प्रयोजन, धनके लिये ।

धनार्थिन् (सं० स्त्री०) धनं अर्थयति अर्थ-जनि । धन-
प्राप्तिक, धन चाहनेवाला, रुपया पैसा मांगनेवाला ।

धनाशा (सं० स्त्री०) धनार्था शासा इत्यत् । धनलोभ,
धनका लालच ।

धनाश्री (सं० स्त्री०) राशिबीविशेष । जन्मानुके मतसे
यह श्रीरागको तीसरी पक्षी मानो जातो है । इसका
जाति पाण्डव, मृगभमजित मङ्गश्रव्यास पक्षज है ।
यह हेमन्त ऋतुके दूसरे पहरमें गाई जातो है । किसीके
मतसे इसकी गानिका समय तीसरा पहर है । कलिनाथ-
के मतसे यह मिथरागकी सोयी स्त्री और भरतके मतसे
मालकीप रागके पुत्र गान्धारकी स्त्री है । इसका प्रयोग
बौर रवमें विधेय होता है । इसका स्वरग्राम इस
प्रकार हैः—

सं० ग म प ध नि स ।

रागमालामें इसका रूप इस प्रकार वर्णित है—यह
साक्ष वस्त्र पहने फिरछकी दुःखसे बहुत दुःखित है ।
इसीसे इसका शरीर बहुत कण्ट है और यह मोरसरकी
पेड़के नीचे पकेकी बैठ कर रोती है ।

धनिक (सं० पु०) धनिना कायनीति कै-क । १ धन्याक,
धनिया । २ धन, खामी । (त्रि०) धनं अत्यस्येति
(अत इतिठौ) । पा ५।२।१५ इति ठन् । ३ साधु ।
धुंधी, जिसके पास धन हो, मानदार ।

कनाविलासमें लिखा है, कि जो सब मुट्ठ मनुष्य
धूर्त्ताके हाथमें झोडनक स्वरूप है, मारमिताके चरण-
स्थित तुरप मणिकी नाई हैं तथा धनिक शब्दोत्पन्न है,
वैसे मनुष्योंको सुनि नहीं होता है । (पु०) ५ उत्त-
मर्थ, रुपया उधार देनेवाला मनुष्य, महाजन । ६ दश-
रूपक अत्यन्त व्याप्यकर्षण । ये विष्णुके पुत्र एक विख्यात
पण्डित थे ।

धनिका (सं० स्त्री०) धनिक-टाप । एक साधुमारी,
अच्छी स्त्री । २ मधू । ३ युवती । ॥ धनिकपत्नी, धनी
स्त्री । ५ प्रियङ्गुवृक्ष । ६ प्राचीन क्षौराद्र राज्यके पन्त-
गर्त द्वारकाके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम । इसका
वर्त्तमान नाम धनिकि है ।

धनिता (सं० स्त्री०) धनाध्यक्षा, धनीपता ।

धनिन् (सं० स्त्री०) धनमस्त्यस्मिन् धन-इति । १ धन-
वान्, दौलतमन्द । इसका पर्याय इभ्य और आष्य है ।

“धनिनः धीविधौ राजा नदी वैदत्तु वधनः ।

वच यत्र न विद्यते तत्र वारं न कारयेत् ॥” (वाग१५)

जहां धनवाली मनुष्य, वेदविद्ब्राह्मण, राजा, नदी और
वैद्य ये पांच नहीं हैं, वहां वास नहीं करना चाहिये ।
२ उत्तमर्थ, रुपया उधार देनेवाला ।

धनिया (हिं० पु०) एक छोटा पौधा । धन्वाक देखो ।

धनिग्रामाक्ष (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका मछना जो गलेमें
पहना जाता है ।

धनिराम—एक संस्कृत धन्यकार । इनके वनाये हुए धन्यका
नाम नैऋतप्रदिशालव्योरेखा है । यह मित्रादित्य
प्रवर्त्तित वैष्णवाचार मिश्रणक धन्य है ।

धनिष्ठ (सं० स्त्री०) धतिप्रयेन धनी इत्यन् । धनी लीगः ।
धतिप्रय धनयुक्त, बहुत धनी ।

धनिष्ठा (सं० स्त्री०) धनिष्ठा प्रभृति सतविंशति नक्षत्रके
अन्तर्गत त्रयोविंश नक्षत्र, मत्तार्द्रस नक्षत्रोंमें नैऋत
नक्षत्र । इसका पर्याय—यविष्ठा, वसुदेवता, भूति, निधन
और धनवती है । इसमें पांच तारे संयुक्त हैं । इसमें

शान्त करना पड़ा। धनुर्जयनारायणके अभियेकके समय जो गोलमाल हुआ था उसका विवरण नीचे दिया जाता है।

१८६१ ई० की २२वीं मार्च को केठम्हारके राजाका त्रिवेणीमें देहान्त हुआ। इनके पुत्रबाई नामक दामोके गर्भसे धनुर्जय और चन्द्रशेखर नामक दो पुत्र थे। २२० अभिलेखों बड़े धनुर्जयनारायण राजगद्दी पर बैठे। ८५० अभिलेखों मयूरभञ्जके राजाने यह खबर भज दी कि क्षत्रीय महाराज उनके पोते हम्दावनकी दत्तक-पुत्र बना गये हैं, वही वास्तव पत्नी केठम्हारका प्रकृत उत्तराधिकारी है। 'अतः उसे अभियेक करनेके लिये मैं जा रहा हूँ'। करदराज्यसमूहके परिदर्यकोंने मयूरभञ्जके राजाको इस काममें हाथ डालनेसे मना किया, लेकिन उन्होंने एक भी न सुनी और अपने पौत्रको वहाँ भेज दो दिया। हम्दावन रानी तथा कई एक प्रधान व्यक्तियोंको सहायतासे छिपके राज्यगद्दी पर अभिषिक्त हुए। अन्तमें दत्तक ग्रहणकी बात मियाँ साबित होने पर भी रानी धनुर्जयनारायणका पक्ष न ले कर हम्दावनके पक्षका हो समर्थन करने लगीं। पीछे करदराज्यके परिदर्यकोंने जब राजवंशदिके भावहमान-कालको प्रयासा धनुसन्धान किया, तब धनुर्जयनारायण हो उचित उत्तराधिकारी ठहराये गये। हम्दावनकी ओरसे पहले झाँसीकोर्टमें, पीछे विलायत तक अपील की गई, किन्तु फल कुछ भी न हुआ। २५०० समय ब्रह्मान गवर्मेंटने भी धनुर्जयकी हो केठम्हारका राजा कायम किया। १८६० ई० तक यह विवाद चलता रहा। पीछे उसी वर्षके सितम्बरमासमें धनुर्जयके होने वालिग पर उन्हें प्रकाशरूपसे राज्याभिषेक करनेका हुक्म दिया गया। कटकमें जब उन्हें राज्यभार देनेका समय आया, तब रानीने सुकदमेकी निष्पत्ति-काल तक अभियेक बन्द रहनेकी प्रार्थना की। छोटे लाट ये माहवने जब परिदर्यकोंने सलाह माँगी, तब उन्होंने कहा, कि कटकमें राज्यभार अर्पण करनेके समय केठम्हारके सामन्तोंने जिग भावसे नवराजके प्रति सम्मान और वशता दिखाना है, इसमें भयका कारण कुछ भी नहीं है। राजाको राज्यमें भेज देनेसे ही सब गड़बड़ों मिट

जायेगी और सहकारी परिदर्यक भानन्दपुर तक उन्हें पहुँचा देंगे। राजमासादमें प्रवेश होनेके पहले ही रानी धनुर्जयकी राखा मानेगी वा नहीं यह धनुर्जय पहले ही जानना चाहते थे।

परिदर्यकोंने पार्वतीय जातिके सरदारोंकी तथा राज्यके प्रधान कर्मचारियोंकी वशीभूत करके उन्हें बागी होनेसे मना किया। केवल रत्ननाथक नामक एक पार्वतीय सरदार जरा भी वशीभूत न हुआ। छोटे लाट-की तार द्वारा इसकी खबर दी गई। उन्होंने अभियेक कार्य समाप्त करनेकी ही आज्ञा दी।

उधर रानी छिप कर पार्वतीय जातियोंके साथ जुड़कर रहने लगी थी, नयस्वर मानमें यह बात खुल गई। इनमेंसे भुँइया और लुभाङ्ग लोग ही प्रधान थे। जेपोलकी संस्था भी अधिक थी। यही भुँइया सरदार रत्ननाथक था। पीछे रामोने इस बातकी सूचना दी, 'यदि नव भूपति राजमासादमें प्रवेश करेंगे, तो मैं प्रासाद छोड़ कर वहाँ जाऊँगी। मेरे प्रासाद छोड़नेसे, सम्भव है कि भुँइया और लुभाङ्ग लोग बागी हो जायेंगे।' परिदर्यकोंने रानी तथा पार्वतीय लोगोंकी समझानेके लिये सरदारको भेजा। उन्होंने वहाँ जा कर देखा, कि रानीके लोगोंने चन्दाय्य सरदारोंकी बहका कर मयूरभञ्ज भेज दिया है। इसी बीच एक दल पार्वतीय लोग कलकत्तेमें साठके निकट उनका प्रकृत प्रादेश था, वह जाननेके लिये पाये। छोटे लाटने कहा, यदि विलायतकी जेपोलमें राय नहीं बदली जायगी, तो धनुर्जय हो राजा होंगे। पार्वतीय लोग भी इस खोजार कर अपने स्थानकी चतुर्दश दिशों पीछे छोटे लाटके प्रादेश-नुसार जब सब कीर्ति भानन्दपुरमें एकत्रित हुए, तब ग्राममण्डलने राजाकी वशता खोजार कर ली और बहुत प्रादेशसे उनकी शरणार्थी की तथा साथ साथ कर भी दिया। उधर रानी सैन्यसंग्रह करने लगीं।

इसके बाद राजाने दखनके साथ केठम्हारकी यात्रा की। रास्तेमें रसद घट गई और सब कीर्ति पद पदमें विद्रोहियोंके आक्रमणकी आशा करने लगे। उस समय भी ग्रामके मण्डल कसकसते छोटे नहीं थे। लगभग सबके सब कुशलपूर्वक राजधानीमें पहुँचे। वहाँ उन्होंने

बाद सरदार लोग धान, चरद, घृतपूर्ण कलश, दुग्ध और मधु चढ़ाकर चढ़ाते हैं। प्रत्येक द्रव्यकी समीप सरदार स्पर्श करते हैं। अनन्तर वे राजाको सम्बोधन करके इस प्रकार कहते हैं, 'भावहर्मान कालसे पूर्व पुण्योकी रीतिसे भृत्यवार हम लोग जहाँ तक अधिकार दिया गया है, आपकी यह राज्य और हमका शासनभार भरण करते हैं। आप हम लोगोंके प्रति दयाधर्मका पालन करते हुए शासनकाय करेंगे।' इसके बाद तोपकी सलामी चढाती जाती है। अन्तमें राजा फिरसे भुंइया सरदारके कंधे पर चढ़ कर सभासे चले जाते हैं। भुंइयर सरदारगण अपनी अपनी अवस्था से कर उनके पीछे पीछे राजपुरी तक जाते हैं।

इसके बाद एक दिन भुंइया लोग राजाके निकट अपनी वज्रता जताने आते हैं। इस दिन वे दस बांध कर आते और एक एक करके राजाके धन जन हाथी घोड़ेका कुशल सम्वाद पूछते हैं। राजा भी उनके शय्य, मधुमैत्री, कलान आदिके कुशलकी जिज्ञासा करते हैं। बाद वे राजाके पैरों पर साष्टाङ्ग हो उनके दाहिने पैरके अंगुलीकी पक्षी अपने दाहिने कानमें, पीछे बायें कानमें और तब कपालमें स्पर्श कराते हैं। इस प्रकार अभिषेक समाप्त होता है।

धनुर्जयनारायणकी इस अभिषेकके दिन रानीने एक गिरका वस्त्र दे कर चढ़ाकर राजा माना था। १०वीं फरवरीकी भुंइया और सुभाङ्ग लोगोंने उनके वज्रता स्वीकार कर ली।

बाद अग्निले मानके शेषमें रत्ननायक और नन्दनायकके नेत्रमें भुंइया लोग दृष्टाद् विद्रोहो की उठे। उन्होंने राजाको लुट कर मन्त्री तथा एक से राजाधुरीको कैद कर लिया। धीरे धीरे सभी जंगली जातियोंने इस विद्रोहमें साथ दिया। १०वीं मईकी डा० है (विंइपुरके डिप्टी कमिश्नर) कोल आतीथ पुलिस-सेनाके साथ केच-नभरमें आ पहुँचे। उन्होंने आ कर देखा कि राजा विद्रोहियोंसे घेरे गये हैं। उन्होंने राजधानीसे विद्रोहियोंकी भगा तो दिया पर वे चढ़ाकर आना कर न सके। बाद कमिश्नर कर्णल कालटन, मि० रामेनय अंगरेजी तथा और दूसरी दूसरी सेनाकी से कर विद्रोह दमनमें

नियुक्त हुए। उदयपुर, बोनाई, टेंकानल और मयूर-मञ्जके राजाओंने अपनी अपनी सेना लेकर अंगरेजोंको सहायता की। बोनाईके राजाने २५ भुंइया सरदारकी और उदयपुरके राजाने १५ सुभाङ्ग सरदारकी जेत कर अपनीना स्वीकार कराई।

१५वीं अगस्तको रत्ननायक और नन्दप्रधान पकड़ा गया। राजमन्त्रीकी हत्या करनेसे अपराधमें छः मनुष्योंकी फाँसी और एक सौको शस्त्र कैदकी सजा हुई। विद्रोह मान्य होने पर राजा धनुर्जयनारायण निष्कण्टक हो कर राज्य करने लगे। रानी ५५०) रु० नकद और ५०) रु० पायका एक घाम से कर जगन्नाथमें रहने लगीं।

धनुर्दुम (म० पु०) धनुषो दुमः ४-तत्। अंगुष्ठ, दाँव। बाँसे धनुष तैयार होता है, इसीसे इसका नाम धनुर्दुम पड़ा है।

धनुर्धर (स० पु०) धरतोति धनुर्धरः १ धनुर्धरी, धनुष्क, धनुष धारण करनेवाला पुत्र, कमनैत, तोरदात्र। इसका पर्याय—धनुष्मान्, निपट्टी, चम्बो, तूणी, और धनुभूत है। २ इतराङ्गके एक पुत्रका नाम। धनुर्धरिन् (स० द्वि०) धनुर्धरतोति धनुर्धरिन्। धनुर्धर, धनुष धारण करनेवाला। जो अत्यन्त बलवान्, बोर, विग्रह स्वभावयुक्त और क्षीयवह हो तथा घोड़े हाथी और रथके विषयमें अवगत हो, वे ही धनुर्धरोंके योग्य हैं।

धनुर्धत (स० पु०) धनुः विभक्तिं धनुर्धतः। धनुर्धर, धनुष धारण करनेवाला योद्धा।

धनुर्मन्त्र (स० पु०) धनुर्धतल्लिखितो मन्त्रः। यज्ञमें, धनुर्मन्त्र। कथनें यौक्त्यकी कानिसे लिखे कलपूर्वक धनुर्मन्त्रका धनुर्धत किया था। यह यज्ञ कथनें चतुर्दशो तिथिकी विधिपूर्वक पारम्भ किया था।

धनुर्मध्य (स० द्वि०) धनुर्धत मध्यभाग, धनुषका मध्यभाग हिस्सा जिसे पकड़ कर योद्धा तोर छोड़ता है।

धनुर्मह (स० पु०) धनुषो महः। धनुर्मन्त्र।

धनुर्मार्ग (स० पु०) धनुषो मार्गः ४-तत्। १ धनुषको नादें बक रेखा। २ वक्र, टेढ़ा।

धनुर्माना (स० द्वि०) धनुषो माना योयोव। मूर्धा सता, मरीरफली, गुरगडाट।

वेद है। उन्होंने इस उपवेदका कुछ-संक्षिप्त स्मोरा भी दिया है। उसमें चार पाद हैं—दीक्षापाद, संव्रणपाद, सिद्धिपाद और प्रयोगपाद। प्रथम दीक्षापादमें धनुर्गद (धनुषके अन्तर्गत सब वृद्धिधार लिये गये हैं) और अधिकारियोंका निरूपण है। आधुष चार प्रकारके कहे गये हैं—सुक्त, अमुक्त, सुक्तासुक्त और यन्वसुक्त। सुक्ताधुष जैसे चक्र, अमुक्तधुष जैसे खड्ग। सुक्तासुक्त, जैसे भासा, वरका। सुक्तको अस्त्र और अमुक्तको अस्त्र कहते हैं। ब्राह्म, वैष्णव, पाशुपात, प्राजापत्य और आग्नेयादिके भेदसे नाना प्रकारके आधुष हैं। साध्वि-देवत और समन्व चारों प्रकारके आधुषोंमें त्रिनका अधिकार है, वे ही त्रितयकुमार हैं और उनके अनुवर्ति-गण चार प्रकारके हैं—पदाति, रथी, गजारोही और अश्वारोही। इनके प्रतिरिक्त दीक्षा, अभिषेक, शाकुन और मङ्गलादिका निरूपण प्रथम पादमें है। आचार्यका लक्षण और सब प्रकारके अस्त्रशस्त्रादिका विषयसंग्रह नामक द्वितीय पादमें दिखलाया गया है। तृतीय पादमें शुरु और सम्प्रदायसिद्ध विधेय विधेय शस्त्र, उनके अभ्यास, मन्त्रदेवता और सिद्धि पादि विषय हैं। प्रयोग नामक चतुर्थ पादमें देवाचंसा, सिद्धि, अस्त्रशस्त्रादि-के प्रयोगोंका निरूपण है।

वैशम्पायनका धनुर्गद पढ़नेसे जाना जाता है, कि अश्वारोही सबसे पहले खड्गका प्रचार हुआ था, पीछे वैष्णव पृथु राजाके समयमें धनुष प्रचलित हुआ।

(प्रधाने पृथुको दग्धं दे कर कहा था) 'पहले मैं दुटो'की दमन करनेके लिए पक्षि तैयार करूंगा। वह पक्षि तुम्हारे पास रहकर दुटो'की प्रिया देगा। अभी मैंने सोच रखा है, शिंयह तुम्हें दे कर धनु-प्रभृति आधुषका प्रचार करूंगा। हे पुत्र! इस कारण तुम्हें अस्त्र शस्त्र पूंगा।'।

इहशास्त्रधर्मे लिखा है, कि प्रधानतः धनुष दो प्रकारका है, पहले जिम धनुषसे खीखा जाता है वह योगिकधनुष और युद्धधनुष दूसरा है। जिस धनुषका व्यवहार रहत सङ्ग्रहमें हो सके, वही उत्तम धनुष है। धनुषारोही बसकी अपेक्षा धनुष यदि अधिक भारी हो, तो धनुर्हारी थोड़ा जो परिश्रममें-पक जाता है,

सुतरां उनका लक्ष्य ठीक नहीं रहता। युक्ति कल्पतर्कके मतमें युद्धधनुष दो प्रकारका होता है, पहला शास्त्र वा भोगका बना हुआ और दूसरा वासना बना हुआ।

वैशम्पायन लिखते हैं, कि शास्त्रधनुषमें तीन अंग रहना चाहता है, पर वैष्णव धर्मात् बसिके धनुषका भू नाव बराबर क्रमसे होता है। पुराण पढ़नेसे मान्य पड़ता है, कि विष्णुके शास्त्रधनुष था, किन्तु वह धनुष मनुष्यों के दुःप्राप्य है। विश्वकर्माने उसे बनाया था और वह मात बिलम्ब लम्बा था। जो शास्त्रधनुष मनुष्यके काममें आता, वह ६॥ मिलतका होता है और अश्वारोही तथा गजारोही उसे काममें लाते हैं। रथी और पैदलके लिये बोंसका ही धनुष ठीक है।

वासिका धनुष होनेसे पहले उसकी गांठ जांचनी पड़ती है। ३, ५, ७ और ८ गांठवाला धनुष उत्तम माना गया है। ४, ६ या ८ गांठवाला धनुष खराब है अतः उसे परित्याग कर देना चाहिये। बहुत पुराने काले तथा घिसे वासिका धनुष अच्छा नहीं होता है। जिस धनुषके भीतर वा बाहर घबघा हाथको जगह पर जला हो वा फटा हो, जो गुणहोन हो वा गुणाक्रान्त हो, वास्तु हो वा काण्डदीप हो घबघा जिसके गले वा तर्फीमें गांठ हो, वैसा धनुष काममें नहीं लाना चाहिये। अच्छे रंगका धर्मात् पका, कोमल और मजबूत धनुष जो व्यवहारके योग्य है।

धनुषका प्रमाण—अग्निपुराणमें धनुषार चार हाथका धनुष उत्तम, साढ़े तीन हाथका मध्यम और तीन हाथका अधम माना गया है। छोटा धनुष पदाति मैथिके कामका होता है। प्राचीनकालमें दो औरियोंको गुल्लेस भी होता था। यह ३ हाथ लम्बी और २ अंगुली या उससे कुछ अधिक चौड़ी बनाई जाती थी। उस पर पत्थर के का जाता था, इसीसे इसका संश्लत नाम उपलब्धपक पड़ा है।

धनुषकी छोटी—छोटी पाटका और कतिना अंगुलीके बराबर मोटी होनी चाहिये। इसमें किसी प्रकारका जोड़ न रहे, वरं जहाँ तक शब्द और निकनो हो, वहाँ तक अच्छा है। छोटीकी मोटाई सब जगह एकही होनी चाहिये। इस प्रकारकी छोटीमें युद्धके समय उब टांग जा सकती है।

हैं। धनुर्वेदमें ऐसे भोषण नाराच और नासिकाश्रका
सबसे हैं। नाराच और नासिकाश्रका ।

स्थान। जिन सब नियमोंसे बाण छोड़ा जाता है,
उन्हीं स्थान या अवस्थान कहते हैं। अग्निपुराणोक्त धनुर्वेद-
में पाठ प्रकारके नियम बतलाये गये हैं। जिनके नाम
ये हैं—सम्पद, वैशाख, मण्डल, आनीक, प्रत्यानीक,
दण्ड, विकट, सम्पूट और स्तम्भिक। उँगली, एँड़ोके
ऊपरकी गाँठ, एँड़ो और पैर यदि एकल और द्विष्ट हो,
तो ऐसे भावको अवस्थानको सम्पद कहते हैं। दोनों
पैरकी हड्डीयन्त्रिके ऊपर भार दे कर तीन त्रिज्यकी दूरी
पर बैठने वा खड़ा होनेको वैशाख कहते हैं। बीचमें
यदि चार त्रिज्यका अन्तर हो और दोनों जानु यदि
बाँस सरीखा दोह पड़ें, तो इसे मण्डल कहते हैं।
दहिना जानु और उससे ऊँचको स्तम्भ कर इसके आकारमें
पाँच त्रिज्य फँसे रहनेका नाम आनीक है। यदि इस
आनीक अवस्थानका विपरीत भावमें रहे, तो इसे प्रत्या-
नीक कहते हैं। बायें पैरकी टेंका और दाहिने पैरकी
सोधा करने तथा पैरकी एँड़ोको पाँच उँगलीके अन्तर
पर रखनेका नाम दण्ड है। दाहिने जानुको कल और
निचल तथा बायें पैरको फल सरीखा घायत कर दो
घायका अन्तर रहनेमें विकट होता है, दोनों जानुको
विशुद्ध पर्याप्त वक्रण दोनों पैरको सोधा करने का नाम
सम्पूट है। दोनों पैरको कुछ विवर्तित कर समान और
दण्डाकारमें तथा निचल कर यदि रखा जाय और उन्नत
मध्य यदि सोलह उँगलीका ऊँचा हो, तो इस प्रक्रियाको
स्तम्भिक कहते हैं। इससे सिया हड्डीयन्त्रिके नियम-
पर, दूर्लभ, गहक, पद्मानम, आदि स्थानों-
का भी उल्लेख है, ये सब कायदे वा नियम केवल अन्य
पद्धतिका सम्भर्तन नहीं होते, बरं उपयुक्त गुरुसे सीखने-
से उनका सम्यक् ज्ञान होता है।

मुष्टि—धनुयुद्धमें जिस तरह खड़े रहनेको प्रक्रिया
वा कायदे हैं, धनुष और बाण पकड़नेके भी वैसे ही
कायदे बतलाये गये हैं। दाहिने हाथको उँगलीसे
धनुषको डोरी और बाणका पिछला भाग एक साथ
पकड़नेका नाम गुणमुष्टि और बायें हाथमें धनुषका
पिछला भाग पकड़नेका नाम धनुमुष्टि है। फिर गुण-

मुष्टिके भी पाँच भेद हैं—पताका, मध्य, सिङ्कर्ष,
मसरी और काकतुण्ड। जब तर्जनीको पद्म-
मूलमें लगा कर सोधा रखना पड़ता है, तब इसे
पताकामुष्टि कहते हैं। यह मुष्टि नासिकाश्र
प्रयोग और दूरनिशेपके समय उपयोगी है। तर्जनी
और मध्यमा इन दो उँगलियोंके बीच पद्म प्रवेग कर
मुठ्ठी बन्द करनेसे वज्रमुष्टि बनती है। यह शून बाण
और नाराच छोड़नेके समय विशेष उपयोगी है। हड्डी-
यन्त्रिको चित कर इसे सब उँगलियोंमें दबाना चाहिए।
ऐसी मुष्टिका नाम सिङ्कर्ष है। यह धनुष पकड़नेमें
प्रयुक्त है। हड्डीयन्त्रिके मध्यमें मूलमें तर्जनीका
अंगुष्ठा भाग मजबूतीसे रखनेसे मसरी मुष्टि बनती है।
यह शिवालक्ष्य वेधके समय उपयोगी है। अंगुष्ठके
बागें तर्जनीका मुख यदि छुका हुआ हो, तो इसे काक
तुण्ड कहते हैं। स्तम्भिकवेधके समय यह मुष्टि काम-
में आती है।

धनुमुष्टि बायें हाथमें रखी जाती है, फिर इसके भी
तीन भेद हैं—प्रधसन्धान, लक्षसन्धान और सम-
सन्धान। ये तीनों यथासमय काममें लाये जाते हैं। दूर-
निशेपके समय प्रधसन्धान, निचल लक्षके समय सम-
सन्धान और हड्डीयन्त्रिके समय लक्षसन्धान कर्तव्य है।
शराक्षेपस्थानी—तोरका पिछला भाग धनुषको
डोरीमें लगा कर इसे घटनी नीचमें खींचना चाहिए।
तोरको कितना हो टानीमें, धनुष उतना हो नन्व होता
जायगा। बायें हाथको मुठ्ठी स्थिर रहनी चाहिए और
दाहिने हाथमें पकड़े हुए तोरका पुष्ट (पिछला भाग)
और डोरी धीरे धीरे टान कर जान तक लाना चाहिए।
जान तक लानेसे ही तोरको लम्बाईका इद हो जायगा।
और धनुष भी टेंका हो कर अर्धवृत्ताकार बन जायगा।
इस तरहके आकर्षणका नाम व्यय है। इस प्रक्रियामें बहुत
कुछ बलका प्रयोजन पड़ता है। जो इस क्रियामें दक्ष
है, वे ही वायुयुद्धमें पारदर्शी हुए हैं। यह व्यय नामक
आकर्षण भी पाँच प्रकारका होता है—यथा कैमिक,
शक्ति, वक्रकर्ष, भरत और स्तम्भ। कैमिक तक
शराकर्षण करनेका नाम कैमिक, यह तकका शक्ति,
कर्षण तकका वक्रकर्ष, योवा (गले) तकका भरत और

पक्षा चांग दिवस कर भी डोरो बनाई जातो है। उसे मसूचा खुले टुक देना पड़ता है। इस तरहकी डोरो बहुत मजबूत होती है और काफी टांग खट सकती है। यदि मूला न हो, तो हिरण, भैंसे, बैल एवं खानकों मरोई गांध या बकरेकी तंतकी डोरो भी बहुत मजबूत बन सकते हैं। इसके सिवा प्राचीनकालमें पक्षयजको पैदकी खुलो खान मूयानताकी खुले डोरो बनाई जाती थी। धनुर्वेदमें उसका पुरा खोला है।

शानिधान—तोर बनानेकी लिये कोसा नरकट लेना चाहिये उसके विषयमें हहगाइंधरने इस प्रकार लिखा है—जो नरकट न तो उतना मोटा हो और न उतना पतला हो हो, जो कसा न हो, पक्षा हो पर धराय मछो पर न खपना हो, जिसमें गांठ न हो और पक्ष कर जिसका रंग पाण्ड्य, वर्ण हो गया हो, वैसा ही नरकट तोरके उपयुक्त है। कठिन, सुगोल तथा उसमें स्थान पर जो नरकट उपजता है, उसका तोर बहुत अच्छा तथा टिकाऊ होता है। बाघ (गर) दो हाथसे अधिक लम्बा और छोटी उंगलीसे अधिक मोटा न होना चाहिये। जहां तक उसका चर्मात् मोटा हो, वहां तक अच्छा है। अगर उसमें कहीं टेढ़ापन हो, तो उसे किसी भीजारी से ठोक कर लेना चाहिये।

तोरमें पंख नहीं लगानेसे उसकी गति भीधी नहीं रहती है। पंख रहनेसे वह हवाको काटता जाता है, सुतरां तोर कोश भीधा बनता है, टेढ़ा जानि पर भी लक्ष्य भ्रष्ट नहीं होता। किस तरहका पंख लगाना चाहिये, इसके विषयमें हहगाइंधर यों लिखते हैं—फाक, हंस, मयूर, कौय, यक्ष तथा चील इन सब पक्षियोंका पंख उत्तम है। प्रत्येक तोरमें कमसे कम ४ पंख बराबर बराबर दूरी पर देना चाहिये। एक एक ३ उंगलीका पंख रहनेसे काम चल सकता है। पर जो सब बाघ गाइंधरके लिए बनाई हो, उसे, उसमें दंश उंगलीका पंख देना आवश्यक है। योंसे धनुषमें भी ३ उंगलीका पंख काटो है।

हर तीन प्रकारके कड़े मय हैं, जिसका उपयोग मोटा हो, वह खोजातोय है, जिसका विद्यता भीग मोटा हो वह पुष्पजातोय और जो सर्वत्र बराबर हो,

वह मनुष्यजातोय कहलाता है। खोजातोय में बहुत दूर तक जाता है। पुष्पजाति वसुभेदके योग्य है और मनुष्यजातोय निगाना साधनेके लिए अच्छा होता है।

उत्त—सुसज्जयुक्त शस्त्रों धारी शिष्य तरहका फल लगाना चाहिये। उसके विषयमें गाइंधर इस प्रकार लिखते हैं—नव फल सुधार तोया और सतत होना चाहिये। फलके तैयार हो जानि पर उस पर वष सेव देना पड़ता है। पक्ष देखी।

बाघके फल चनेक प्रकारके होते हैं—धारामुख, धुरास, गोपुच्छ, पर्वचन्द्र, सुधीमुख, भन्न, वसदन्त, दिभक्ष, कर्णिक, काकतुण्ड, प्रभृति। भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारका फल बनता है।

धारामुखके धाराकवच और चर्म, पर्वचन्द्र द्वारा प्रतियोद्धाका मस्तक, धुरासद्वारा प्रतियोद्धाका कामुक (धनुष), भन्न द्वारा हृदय, दिभक्ष द्वारा मज्जदीर्घा चाया हुआ शर, काकतुण्ड द्वारा ३ उंगलीका मोटा और गोपुच्छ द्वारा चनेक द्रव्य भिंद सकते हैं। इसके सिवा लोहकण्टक मुख नामक फलसे तीन उंगली हिंद हो सकती है।

फलमें देव देवेका भिन्न—सिपके मुख दोपक्ष धनु-सार पक्षकी धार चखी और बुरो होती है। इसी कारण धनुर्वेदमें लेव देनेको व्यवस्था बहुत बड़ा चढ़ा कर लिखी गई है। भिन्न भिन्न पक्षोंमें भिन्न भिन्न प्रकारका लेव देनेको कहा है। शरके फलमें किस तरहका लेव देना चाहिये, वह नीचे लिखा जाता है।

हहगाइंधर लिखते हैं—वीरव, गंधा नमक और कुट रन तोरीकी मायके सूतसे पोसना चाहिये। पोसते समय विषये ध्यान रहे जिससे पोषधका चतुर्ध्व नट न हो जाय। यदि उसको शरके फलमें चपका किसी दूसरे मध्यमें सगा कर चखी तरह दण्ड करना चाहिये। बाद चम्बिकुण्डले सडा कर उसे तैलमें डुबो देना चाहिये। ऐसा करनेसे मध्यकी व्यापारिज शक्ति को चपेला विषये शक्ति उत्पन्न हो जायगी। इसके सिवा हहगाइंधरता पादि पक्षोंमें और भी दूसरे प्रकारके लेवका उल्लेख है।

बाघ देखी।

जो बाघ शरा कोड़ेका होता है, उसे नाराय कहते

है। धनुर्वेदमें ऐसे भोग्य नाराच और नालिकाखका वस्त्रो छे। नाराच और नालिका खेको।

स्थान। जिन मय नियमोंमें बाण छोड़ा जाता है, उन्हें स्थान वा धवस्थान कहते हैं। धनिपुरापोल धनुर्वेद-में पाठ प्रकारके नियम बतलाये गये हैं। जिनके नाम ये हैं—सम्पद, वैशाख, मण्डल, धालीक, प्रत्यालीद, दण्ड, विकट, सम्पूट और स्वस्तिक। उंगली, एंड़ोके ऊपरकी गांठ, एंड़ो और पैर यदि एकल और द्विद हो, तो ऐसे भावके धवस्थानको सम्पद कहते हैं। दोनों पैरकी हड्डाङ्गुलिके ऊपर भार दे कर तीन विलम्बकी दूरी पर बैठने वा खड़ा होनेको वैशाख कहते हैं। बीचमें यदि चार विलम्बका अन्तर हो और दोनों जानु यदि बांस सरीखा दोध पड़ें, तो उसे मण्डल कहते हैं। दहिना जानु और उसकी ऊर्ध्वको स्तब्ध कर हलके धाकारमें पांच विलम्ब कौले रहनेका नाम धालीक है। यदि इस धालीक धवस्थानका विपरोत भावमें रहे, तो उसे प्रत्यालीद कहते हैं। बायें पैरकी टेंडा और दाहिने पैरकी सोधा करने तथा पैरकी एंड़ोको पांच उंगलीके अन्तर पर रखनेका नाम दण्ड है। दाहिने जानुको कल और निचल तथा बायें पैरको फल सरीखा धायत कर दो हाथका अन्तर रहनेमें विकट होता है, दोनों जानुकी द्विगुण अर्थात् वस्तुएँ दोनों पैरको भीषा करने का नाम सम्पूट है। दोनों पैरको कुछ विवर्तित कर समान और दण्डाकारमें तथा निचल कर यदि रखा जाय और उनके मध्य यदि सोलह उंगलीका फर्क हो, तो इस प्रक्रियाको स्वस्तिक कहते हैं। इससे सिवा हड्डाङ्गुलधर्म विषमपङ्क, दूर्द्धाक्रम, गहृक्रम, पद्माभ्रक्रम आदि स्थानोंका भी उल्लेख है, ये सब कायदे वा नियम केवल धन्य पत्रनेका अभिमत नहीं आते, बरं उपयुक्त शुद्धे सीखने-से समझा सम्यक् ज्ञान होता है।

उटि—धनुर्गुहमें जिस तरह खड़े रहनेको प्रक्रिया वा कायदे है, धनुष और बाण पकड़नेके भी ऐसे ही कायदे बतलाये गये हैं। दाहिने हाथको उंगलीसे धनुषको डोरो और बाणका पिछला भाग एक साथ पकड़नेका नाम गुणसुटि और बायें हाथमें धनुषका बिचला भाग पकड़नेका नाम धनुर्मुटि है। फिर गुण-

सुटिके भी पांच भेद हैं—पताका, यच्च, सिंहरूप, मत्तरी और काकतुण्डो। जब तर्जनीकी पङ्कज-मूलमें लगा कर मोधा रखना पड़ता है, तब उसे पताकासुटि कहते हैं। यह सुटि नालिकाभ्र प्रयोग और दूरनिक्षेपके समय उपयोगी है। तर्जनी और मध्यमा इन दो उँगलियोंसे बीच पङ्कज प्रवेग कर सुट्टी बन्द करनेसे व्युत्सुटि बनती है। यह शुल बाण और नाराच छोड़नेके समय विशेष उपयोगी है। हड्डाङ्गुलिको चित कर उसे सब उँगलियोंमें टहाना चाहिए। ऐसी सुटिका नाम सिंहरूप है। यह धनुष पकड़नेमें प्रयुक्त है। हड्डाङ्गुलिके मल्लके मूलमें तर्जनीका चंगला भाग मज्जूनीसे रखनेसे मत्तरी सुटि बनती है। यह विवासत्य वैधके समय उपयोगी है। पङ्कजके धारी तर्जनीका मुख यदि मुका हुआ हो, तो उसे काकतुण्डो कहते हैं। सूक्ष्म लक्ष्यवैधके समय यह सुटि काममें आती है।

धनुर्मुटि बायें हाथमें रखी जाती है, फिर इसके भी तीन भेद हैं—पद्मसन्धान, ऊर्ध्वसन्धान और समसन्धान। ये तीनों यथासमय काममें लाये जाते हैं। दूरनिक्षेपके समय पद्मसन्धान, निचल लक्षके समय समसन्धान और हड्डाङ्गुलिके समय ऊर्ध्वसन्धान कर्तव्य है।

शरारूपगणकी—तीरका पिछला भाग धनुषको डोरीमें लगा कर उसे अपनी भीषमें खींचना चाहिए। तीरको कितना हो टानीसी, धनुष उभरा हो नन्व होता जायगा। बायें हाथको सुट्टी स्थिर रहनी चाहिए और दाहिने हाथमें पकड़े हुए तीरका पुच्छ (पिछला भाग) और डोरी धीरे धीरे टान कर कान तक लाना चाहिए। कान तक लानेसे ही तीरको लम्बाईका हद हो जायगा और धनुष भी टेंडा हो कर पङ्कजवन्दाकार बन जायगा। इस तरहके धाकपूर्णका नाम व्यय है। इस प्रक्रियामें बहुत कुछ बनका प्रयोजन पड़ता है। जो इस क्रियामें दक्ष है, वे ही धाकपूर्णमें पारदर्मी हुए हैं। यह व्यय नामक धाकपूर्ण भी पांच प्रकारका होता है—यथा कैमिक, आङ्गिक, वस्तुकर्ण, भरत और स्वस्थ। कैमिक तब धाकपूर्ण करनेका नाम कैमिक, यह तबका आङ्गिक, कर्ण तबका वस्तुकर्ण, शोधा (गले) तबका भरत और

कथितं तत्तु पादपथं च तस्मिन्ना नाम दृश्यते । इति वाचंमि
पितृवृद्धे समयं च मित्र, सत्यं च नीचे धोने पर भाङ्गिक,
मित्रं च धोने पर सत्यं च, इत्येवमेव समय भरत धोर
इत्येवमेव तथा दूर निवेष्टे समय सत्यं च यथा प्रयोग
पठता है ।

ये ग्रन्थावली धनुष पकड़ने धोर बाध लोहनेके
विषयमें इन प्रकार उपदेश दिया है—

धनुर्वेदीनां विधिं धनुःसारं वाये वायमे धनुषको
पकड़ कर दाहिने हाथ द्वारा उसमें छोरी लगायी
चाहिये । बाद धनुषको घोंठको धोर बाध कर सध-
स्यान पकड़ना चाहिये । धनुषकी घोंठ पर चार चट्टान
धोर उसमें नीचे घाड़ान् इत्यादि रखना पड़ता है ।
वाये वायमे इन तरह सुद्धो बाध कर दाहिने हाथमें तीर
झिने है धोर उसमें मूलाभागी छोरीमें लगाते है ।
तीरकी इन प्रकार पकड़ना चाहिये कि सध उभरीके
बाधमें पकड़ जाय । बाद उसे कागस पौंथ कर सत्यके
प्रति मन धोर दृष्टि स्थिर करके लोहना चाहिये । उस
समय धाम्नाका धोर विशेष ध्यान रखना चाहिये । जब
तीर छूटने मात्र सत्य विह होने देखे तभी समझना
चाहिये कि धनुषांघी लतझल हो गया है । (वेदभाष्य)

तत्र—तीर द्वारा जो विह करना होगा, यको
सत्य है । युद्धके समय कितने प्रकारके सत्यभेद करने
पड़ते है, उसका कुछ नियम नहीं है । कोई तो सध
जमा पुनता है, कोई वायुके वेगमें टोड़ता है । किमीमें
झिपा कर बाध केका जाता है धोर कोई बहुत कठिन
तथा कोई बहुत बड़ा होता है । मित्र मित्र सत्य मित्र
मित्र उपायविधिया जाता है । जिस तरह से सब सत्य
विह करनेमें लतझल हो जाता है, धनुर्वेदमें उसका
उपयुक्त उपदेश दिया गया है । ये ग्रन्थावली, भाङ्गिक
आदिमें जो चार प्रकारके विभिन्न सत्योका उल्लेख किया
है, वे इस प्रकार है—

स्थिर, चम, चलाचल धोर इत्येवमर्थो चार प्रकार-
के सत्य हैं । पठता स्थिरता है । चम चलाचल धोर
बाद चलनवा, उसमें भी विह हो जाय चलाचल धोर
तब इत्येवमर्थो पठता है । सामनेमें कोई एक स्थिर
सध रख कर धोर चम में भी स्थिरभावमें सध हो कर

उमें तीर प्रकारसे विह करना चाहिये । इस
स्थिरतावा निगाना पकड़ो तरह हो जानेमें चम
स्थिरवेधो कहते हैं । बाद समीपमें धोर मध
उसमें भी कुछ दूरमें एक सधन सध रखना चाहिये
धोर बाध उसमें सामने स्थिरभावमें पठता रहे । स्थिर
भावमें सध रख कर बाधायें के उपदेशान्सार तब
सधन सधको विह करना चाहिये । जो इस तरहका
सधवेध मोच जाता है, उसे सधवेधो कहते हैं । धनु-
षांघीकी किमी एक स्थिर सधाने चारों धोर बाधे दोन
पाने धोर घायवा घोंठे पर चढ़ कर धोर, धनु धनु कर उमें
विह करना चाहिये । इस तरहके सधका नाम चम-
चम है । यह एक पठ, सधपात्र है । जब तक चम सध
पकड़ो तरह मोच न गया हो, तब तक चलाचल सध
नहीं मोचा जाता है । येध धोर धनुषांघी दोनों प्रथ
प्रथम वेगसे धनु रहे हो, धोने सधस्थाने यदि धनुष
उम सधन सधको सधपूर्वक भिद सके, तो उसे इत्येवमर्थो
कहते हैं ।

जिस हाथमें जिस तरहका लक्षणवाचन मोचना
चाहिये उसके विषयमें भाङ्गिक इन प्रकार लिखते हैं,—
पकड़ने वाये वायमे, घोंठे दाहिने हाथमें भाग नीचेमें,
सामने धोर लोहनेके विधे मोचना चाहिये । जो धनुष
पकड़ने वाये वायमे तीर चलाना मोचता है, सध बहुत
जल्द धनुर्वेदामें लतझल हो जाता है । वाये वायमे
मोच जाने पर दाहिने हाथमें तीर चलानेका अध्यास
करना चाहिये । बाद दोनों हाथमें भागच धोर तीर
चलानेको निषा है । दाहिने हाथके पकड़ो तरह विह हो
जाने पर धनुः वाये वायमे अध्यास करना चाहिये ।
विनियमः केमिक नामक भाकप-प-विधामें समविषय
दोनों प्रकारसे धोर अध्यास करना पड़ता है । जो चम
वाये वायमे दाहिने हाथमें समान बना धने धोर दाहिने
हाथ धरोवा वाये वायमे भी नारायण प्रयोग कर सके,
धनुर्वेदयोद्धा सध सधवाचनो सामने है ।

विद्याके समय जिस तरह सध कायन करना पड़ता
है, उसके विषयमें भी भाङ्गिकमें ऐसा निषा है,—

धनुर्वेदके समय दक्षिणको धोर, चरान्नामें पूर्वकी
धोर धोर चरान्नामें समय सधको धोर सध कायन

कर श्राध्वास करना चाहिये। युद्धकालके अतिरिक्त और दूसरे समयमें दक्षिणकी ओर लक्ष्य करना उचित नहीं है। अभ्यासके समय कितनी दूर पर लक्ष्य स्थापन करना चाहिये, उसके विषयमें यों लिखा है,—

६० धनु धर्मात् २४० हाथको दूरी पर लक्ष्य रख कर विह्वल करना उत्तम, ४० धनु (१६० हाथ) पर मध्यम और २० धनु (८० हाथ) पर रख कर विह्वल करना अधम माना गया है।

२४० हाथकी दूरी पर लक्ष्य स्थापन करके तोर चत्तानिका अभ्यास करना कुछ सज्ज वास्तु नहीं है। इसीके द्वारा उस समयके लोगोंका वाद्वल्य और बाणका वेग कितना अधिक था, वह साफ साफ जाना जाता है। ब्राह्मधरने एक जगह लिखा है, कि तोर ४०० हाथ तक जा सकता है। आज कलको सामान्य बन्दूककी गोली मध्यम है, कि ४०० हाथ तक नहीं पहुँच सकती।

कितनी बार अभ्यास करना चाहिये, इसके विषयमें भी ऐसा उपदेश है,—

जो पूर्वाह्न और अपराह्न में ४०० बार लक्ष्य विह्वल करके यक जाता है, वह उत्तम धनुर्धरो, जो २०० बारमें यकत, वह मध्यम और जो २०० बारमें यकता है, वह अधम धनुर्धरी माना गया है। यद्यप्येनं जब तक शरीर और मनमें यकावट न आ जाय तब तक परित्यज करके रहना चाहिये।

पुत्रपद्मनाथ धर्मात् ११० हाथ ऊँचा चन्द्रकाल् गोलाकार काष्ठफलकमें लक्ष्य स्थापन करनेकी लिखा है।

जो उस चन्द्रकाल् लक्ष्यका लक्षभाग विह्वल करता, वह श्रेष्ठ, जो नामि विह्वल करता वह मध्यम और जो पैर विह्वल करता है, वह निम्नस्त समझा जाता है।

धर्मपुराणमें लिखा है, कि जो बाणभङ्ग, कृतावर्त्त, काष्ठच्छेदन, विन्दुक और मोलक जानता है, वह युगो होता है।

एक मनुष्य सामने भा कर बाण छोड़े और दूसरा उस सन्मुखगत बाणको चाहे याव तिरछा हो कर या बाणको तिरछा कर छेद लासे। छोड़े और जो बाण छेद कर सकता है, उसे बाणछेदी कहते हैं। कृतावर्त्त नामक चित्रमध्य भूमिक प्रकारका है जिनमेंसे बा-

टिका प्रधान है। एक काठके टुकड़ेमें घालने एक कौड़ी बांध कर उसे घुमाते रहें। उस धूमती हुई कौड़ी पर गियाना लगानेका नाम बराटिका है। जो इस तरहका लक्ष्य भेद कर सकता है, वह उत्तम धनुर्धरो कहलाता है। गियाना मारनेकी जगह गोपुच्छके पाकारको एक खण्ड गोली लकड़ी रख कर उसे दूरसे क्षुरप नामक बाण द्वारा छेद करना सोचना चाहिये। इस तरह काठ छेद करते करते काठच्छेद हो जाता है। युद्धके समय आदिके भ्रजदण्डादि छेदन आदम्यक है, इसीसे इसका अभ्यास करना चाहिये।

लक्ष्यस्थानमें भेद बांधलो फूल मरोता एक भेद विन्दु बनावे। वैसे उस विन्दुका निदना सोखे। जो इस तरह विन्दुकी विध कर सकता है, वह चित्रवेधी होता है। दूर और सामनेमें रह कर कोई आदमी काठका दो गोला फेंके। बाद धनुर्धरकी गोपुच्छाकृति बाण द्वारा उन दो गोलाओंकी मज्जेश्वर पहुँचने न पहुँचने स्थाप्य करना चाहिये यथावा भिद डालना चाहिये। इस तरह गोला वेध करनेमें जो पटु हो गया हो, वह धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ और राजपूत्य होता है।

इस तरह कभी रथ परसे, कभी हाथी परसे, कभी घोड़ा परसे या कभी जमीन परसे लक्ष्यस्थानका अभ्यास करना चाहिये।

रामायणमें कई जगह शब्दभेदी बाणका उल्लेख है। राजा दशरथने शब्दभेदी बाण द्वारा रावो परसे अश्व मुनिके लहके विन्दुको मारा था। जब मिथनाद मिथकी पादमें रह कर बाण यथेय कर रहा था, तब लक्ष्यने शब्दभेदी बाणका प्रयोग किया था। दूसरे दूसरे बाण-प्रयोगको यिथा जैसे आसाम है, शब्दवेध यिथा उससे कहीं कठिन है। यह कठिन अभ्यासका फल है। जिस तरह यह अभ्यास उत्पन्न होता है, महाभारतके अर्जुनवक्त्र-में हम लोगोंको उसका कुछ कुछ आभास मिलता है। अर्जुन द्रोणाचार्यके सर्वप्रधान गिथ्य और गिथ्य होने पर द्रोण अपने पुत्र प्रश्रवामाको अर्जुनसे अधिक चाहते थे। इस कारण वे कभी कभी द्विपके प्रश्रवामाको कोई कोई विद्वत्पक्ष विख्यात करते थे। अर्जुनको आशाधारण प्रतिभा देख कर द्रोण मनहीमें

जिस धनुषमें तीन जगह झुकाव होता है, उसे शाङ्ग और जिसमें सब जगह झुकाव होता है, उसे वैष्णव पर्यात् बांसका धनुष कहते हैं। शाङ्ग धनुष घात बिलश का होता है। यह स्वर्ग, मर्त्य, पाताल आदिमें कहीं भी कैवल्य पुण्योत्तमके भिन्न और किसीसे साधन नहीं हो सकता है। जो शाङ्ग धनुष तीन बिलशका होता है, यह सब धनुषोंमें निरुद्ध समझा जाता है।

प्रायः शाङ्ग धनुष गजारोहिणी और गजारोहिणीके लिए बनाया जाता है। रथो और पैदलके लिए बांसका ही धनुष ठोका है। हथशाङ्ग करने वाले धनुषका लक्षण इस प्रकार का है—

बांसके धनुषमें तीन, पांच या सात गांठें होनी चाहिये। जिस बांसके धनुषमें नौ गांठें हों, उसे कोदण्ड कहते हैं। चार, छः और आठ गांठवाला धनुष काममें न लाना चाहिये। जो बांस पतितजीर्ण हो वा अपक्व हो, बिना हो, दण्ड हो, छिद्रमय हो तथा हाथ रखनेकी जगह गुणहीन हो, गुणात्मा हो अथवा वायुरोप-युक्त हो, वैसे बांसका धनुष कदापि नहीं बनाना चाहिये। इनमेंसे कच्चे बांसका जो धनुष बनता है, वह बहुत जल्द टूट जाता है, और अत्यन्त जोर बांसका धनुष कड़ा होता है। घिमे हुए बांसके धनुष से उद्ग्रेग और आन्धर्वोंके हाथ कानह उत्पन्न होता, दण्ड होनेसे घर जलता, छिद्रमय होनेसे पराजय होगी तथा हाथ रखनेकी जगह खराब होनेसे लक्ष्यविध नहीं होता है। जो धनुष जोन हो उसमें यदि तीर लगा कर निशाना साधा जाय, तो क्षतवृक्ष नहीं हो सकता और उस तरह का धनुष लड़ाईमें टूट जाता है। जिस धनुषके गले या तलेमें गांठ हो वह ध्यानमें योग्य है और साथ ही साथ प्रथमकर भी है। ऊपर कहे गये दोष जिन धनुषोंमें न पाये जाय, वे हाथों में हैं तथा सब कार्योंमें सिद्धप्रद हैं। जिस धनुषसे पत्थर फेंके जाते हैं, उसे उपलब्धकर पर्यात् गुलिल कहते हैं। इस प्रकारका धनुष तीन हाथ सम्मा और दो उगली चौड़ा होना चाहिये।

धनुर्वेद देखो।

२ हठयोगदोषिकोक्त आसनविधिय, हठयोगका एक आसन।

हाथसे कान और पैरकी उँगलें पकड़ते हुए धनुष पाकपण करनेकी धनुरासन कहते हैं। जनाययतस्व-में चार हाथके आसनको धनुरासन माना है। १ रागि-विशेष, मेधादि बारह रागियोंमेंसे नवीं रागि।

धनुरागिको संज्ञा—पुरुषरागि, सुवर्णसदृशवर्ण, समरागि, अत्यन्त शब्दकारो, पर्वतचारी दिनवली, पूर्वदिक्क्षामी, हटाङ्ग, रुद्रप्ररोह, पंतवर्ण, सतिप्रयण, उष्णस्वभाव, पिच्छप्रकृति, अल्प सन्तानयुक्त, अल्पलो-प्रमङ्गप्रिय, द्वात्मक, द्विपद, अग्निरागि और उप-स्वभाव। अन्तभागमें चतुष्पाद है। (नीलकण्ठेक तावक)

महीपल-हृत यक्षनेत्ररके मनसे धनुषको संज्ञा ये हैं—धनुर्विशिष्ट, पुरुषाकार, पद्याङ्गामें छोड़ेसा आकार, ऊर्ध्व, उच्च नीच भूमि, घोटक, बलवान्, पद्मधारो पुरुष, यशस्वादि एवं अज्ञस्थान। इन सब संज्ञाओंमें अनेक प्रकारकी गणनाएँ हो सकती हैं, जैसे वृत्त और गट वस्तु काष्ठ पर अवस्थित है; प्रश्रमणामें उसका ज्ञान एवं रागिके निम्न तरह शरीर विभाग हैं, उसी समो स्थानमें यहाँके पक्षस्थानानुसार प्रणाटिका चिह्न तथा यहाँके बलावससे पद्मप्रत्यङ्गकी हानि वा दोषवत् इत्यादि का ज्ञान होता है। इस रागिके जो स्वभाव और स्थान आदि ऊपर लिखे गये, उनका ज्ञान इस रागि पर किता यहका अवस्थान वा दृष्टि पढ़नेमें होता है। फिर उन सब रागियों पर यहका अवस्थान और दृष्टि पढ़नेसे स्वभावादिका ज्ञान, हृदि एवं विपरोत हो सकता है।

धनुषकी संज्ञा ये सब हैं—भोज, विषम, द्वात्मक, क्रूर, अग्नि, श्रोत्रोदय, पुष्प, दिनवली, सुवर्ण, हृद्यस्व-का क्षेत्र, हृद्यस्वतिका मूलत्रिकीय, केतुका उच्च, तुङ्ग, राहका मोच, पूर्वदिक्क्षामी, पर्वतचर घोटक, शूर, अक्षय्य, यश और अर्थ। धनुरागि धनुर्धारी होता है। इसके देवताका अङ्गा तक छोड़ा सरोवा और मेघ पद्म धनुर्धारी मनुष्य सरोवा होता है। यह भोज विषम क्रूर है।

धनुषका पहला बाधा भाग द्विपद संज्ञा और शेष बाधा भाग चतुष्पाद संज्ञा है। शेष, हय, मिथुन, कर्कट, धनु और मकर इन सबकी रागि संज्ञा है। धनुरागि पिच्छवर्णकी होती है।

राजाका मन्त्रो, पीनोन्नतनु, प्रधान साधुओं के पूज्य और कवि होगा, ऐसा समझना चाहिये ।

धनुरागिमें यदि शनि रहे तो वह व्यवहारबोधक शिला और बंट, अर्थविद्या-कथनमें कुशलमति, पुत्रके गुणसे विख्यात, स्वधर्मपरायण, अत्यन्तसौम्य, सन्मानो, अत्यन्तपुण्य और बहुमङ्गलविशिष्ट होता है ।

धनुरागिस्थित चन्द्रमा यदि बुधसे देखे जाय, तो वह राजाधिराज, हृदयस्थितिसे देखे जाय तो राजा, शक्तसे देखे जाय, तो पण्डित, शनिसे देखे जाय, तो धनवान्, सूर्यसे देखे जाय, तो दरिद्र और मङ्गलसे देखे जाय, तो राजा होता है । जो सब फल कहे गये, उनसे मनुष्यकी भाङ्गति, स्वभाव और चरित्रादिका निष्पन्न हो सकता है ।

जन्मकालीन जिस राशिमें जो ग्रह अवस्थित है उस ग्रहका राशिस्थित फल और वह ग्रह किस ग्रहसे दृष्ट हो कर जिस तरहका फल देता है, उसे सावधानीसे ध्यान कर फलाफलका विचार करना चाहिये । (बृहज्जातक, धारावली) ४ लग्नविशेष । इस लग्नका परिमाण ५१।७२० विपल है । प्रतिदिन दिन रातमें भेदादि बारह लग्न होती हैं । इसके बीच दोषमाचक धनुलग्नमें सूर्यका उदय हुआ करता है । धनुलग्नजातफल-धनुलग्नमें जिसका जन्म होता है, वह स्थूल शोष्ठ दशन और नासिकासम्पन्न, कफवायुपञ्जतिपुण्य, ऊर्ध्व, शुद्ध और इक्ष्मांशुल, कुनखी, कर्ममें उद्योगी, गुर, गूढ़, नीच, तस्कर, चमल वा राज-द्वारा विनष्ट धनसम्पन्न, विघ्न, सबके पूज्य, भ्रातृघाति-च्छूक, विदेशमें कर्मप्रिय, वा राजासे उच्च धनसम्पन्न, धर्ममें मध्यमरूप मतिविशिष्ट, श्लोकें साथ कलहकारी और सुखरोगी होता है तथा चतुष्पद, सर्वप्रभृति बन्धन और जलसे उसकी मृत्यु होगी, ऐसा समझना चाहिये ।

(वरशायर)

धनुलग्नमें जन्म होनेसे मनुष्य सुनोतिपरायण, धनवान्, सुखी, कुलमें प्रधान, बुद्धिमान् और सब मनुष्योंका पोषक होता है । (कोट्यार) ।

जातकचन्द्रिकाके मतसे जिसका जन्म धनुलग्नमें होता है, वह बहुत बलशाली, बलशाली, महान्, निर्मल-चरित, मित्रभायी और क्षणयोगी । ५ विघातलक्ष, विघा-रका पैर । ६ चतुर्धन्मान, चार हाथको माप । ७

गोलचक्रके व्यासादिसे न्यून अंशमेद, गोलचक्रके आधेसे कम अंशका चेव । (ति०) ८ धनुर्द्वार, धनुष चमन वाला, कमनत ।

धनुस्तम्भ (स० पु०) सुस्तुतोक्त विस्तृतवायुमेद । जिस वायु-रोगमें सररा शरीर धनुषको तरह टेढ़ा हो जाता है, उसे धनुस्तम्भ कहते हैं ।

धनुर्द्वार (हि० स्त्री०) धनुषको लड़ाई ।

धनुर्द्विधा (हि० स्त्री०) धनुष दो दो ।

धनुर्द्वी (हि० स्त्री०) लड़कों के खेलनेको कमान ।

धनु (स० स्त्री०) धन-धान्ये ग्रहदे वा धन-ल । (कृषि-चरितनिधनीति । अण् १।८२) १ धनु, धनुष, चाप, २ मान । ३ धान्यसञ्चय ।

धनेयक (स० स्त्री०) धन्याक, धनेया ।

धनेयु (स० पु०) पुरुषश्रीय श्राद्धार्थक एक पुत्रका नाम ।

धनेय (स० पु०) धनार्थ ईश्वर । १ कुबेर । २ लग्नसे दूसरा स्थान । ३ विष्णु । ४ धनका स्थान ।

धनेश्वर (स० पु०) धनार्थ ईश्वरः १-तत् । १ कुबेर । २ विष्णु । ३ सुप्तबोधके प्रथमा बोधदेवके गुरु ।

धनेश्वरसुरि—विशाल गच्छके अन्तर्गत एक पण्डित । ये जिनवल्लभके आद्यशतक नामक ग्रन्थके टीकाकार हैं । ११८१ सव्यत्नमें यह टीका रचो गई थी ।

धनेश्वरी—आसामको एक नदी । यह आमागुटि नहरके बरेलपर्वतके उत्तरसे निकल कर नागापहाड़के मध्य उत्तरको और जङ्गलके भीतर होती हुई दयाङ्गनदीसे जा मिली है । पीछे दोनों नदियाँ मिल कर उत्तरपूर्व की ओर बागद्वार जलोरोके निकट ब्रह्मपुत्रमें गिरी हैं । नाम्जुरजङ्गलके मध्य इस नदीके निकट दिमापुरका धनसावशेष है ।

धनेय (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी जो बगलिके आकारका होता है । इसकी गरदन और चौंख लम्बी होती है । यह वीर और वरगद आदिके पेड़ों पर वाया जाता है । लोग खानिके लिये इसका शिकार करते हैं । इसको शरीरसे एकाने पर एक प्रकारका सिल निकलना है जो वातके दर्दमें बहुत उपयोगी है ।

धनेय्य (स० स्त्री०) धनेय्य ऐश्वर्य । धनरूप सम्पद, धनसम्पत्ति ।

धनेविन् (मं० वि०) धनस्य, धन वाहकः।

धनोरो—मध्यभारतके मध्या त्रिज्यासर्गस्य परोक्षे तट-
मोल्का एक ग्राम । यह बर्हामपुरके १३ कोस उत्तर-
पश्चिममें धनविन्में है । भोजसंस्था प्रायः एक हजार
है । पश्चिमकी सड़क पोर तांत है । यहां प्रति मण-
वारको बाट लगती है ।

धनोत्त (मं० पु०) धनलोभ, धनरस आनन्द ।

धनोती—बिहारके चम्पारन जिल्लाके निकटको एक नदी ।
पहले मण्डक नदीको उपनदी बहाको एक शाखा मान-
्येगी नदीमें यह धनोती उत्पन्न हुई थी । यही नदीको
सम्पाई ११३ मील है । उत्पत्तिस्थानके समीप इसमें
अधिक जल है । यह मांताकुण्डके निकट सिपसिलो नदीमें
जा गयी है । मोतिहारी महरके निकट इस नदीके ऊपर
रेल लाइका एक मोड़का पुल बना है । धनोती नाम
धनपती मन्दका उपभोग है । भविष्य-प्रज्ञापण्डके जिन
पञ्चायमें सम्पादिशका वर्णन है, उनमें धनपती नामका
भी उल्लेख है । (भविष्य प्रज्ञा ४४ पृ० ५)

धनोदा (धनोदा)—गुजरातराज्यके चम्पारन गुजा सव-
विभागका एक छोटा मामलराज्य । इसमें ३२ ग्राम
लगते हैं । भोजसंस्था प्रायः पाँच हजार है । यहांके
राजा ठाकुर कहलाते हैं । ये ठाकुर क्षत्रगणके वर्गमें
हैं । वर्तमानमें १८५३ ई० में खुशगु नामक किना पोर
धनोदा राज्य जागोरके रूपमें पाया था । ये लोगो
बोहान-वंशीय राजपूत हैं ।

धनोरा—गुजरातके सुरादाबाद जिल्लाका एक महर । यह
पक्षा० २८° ५८' ००" पोर देशा० ७८° १८' ३०" पू०के
मध्य मण्डा नदीके ४३ कोस पूर्व पोर सुरादाबाद महर
के २३ कोस पश्चिम पक्षा मण्डकके ऊपर अवस्थित है ।
भोजसंस्था प्रायः पाँच हजार है । यहां बौलोका
विराजत कारवार है ।

धनुक—१ बयर्हके चम्पदाबाद जिल्लाका एक तातुक । यह
पक्षा० २१° २६' से २२° ३३' ००" पोर देशा० ७१° १८'
से ७२° ५३' पू० में अवस्थित है । भूविस्माप १२८८
वर्गमील पोर भोजसंस्था प्रायः १२५३८८ है । इस
१ महर पोर २०४ ग्राम लगते हैं । यहांकी लाली लाली
पोर समस्त है । इसके पश्चिममें एक बहा है । जल

बहुत कम है । मध्य भागमें बड़े पोर सुतंधीमें निक-
रता है । यहां जलका पश्चिम पक्ष है, एक ही
बड़ी नदी नदी है । केवल भार पोर लाली लाली
को दो, छोटी नदियों प्रवाहित है ।

२ सत तातुकका एक महर । यह पक्षा० २३° ३३' ००"
पोर देशा० ७१° ४८' पू० चम्पदाबाद महरमें ६२ मील
पश्चिम पश्चिम पोर सुतंधीमें १०० मील उत्तर-पश्चिममें
भार नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है । भोजसंस्था
लगभग १०३१४ है । यहां जलका बहुत प्रमाण है ।
पश्चिमपश्चिममें बोहावांका मंस्था पश्चिम है । बाहरकी
प्रताप्योमें यहां प्रमिन्न जलमिच्छक हैमचक्रका जल दूया
या । सर्वोका जलपान करनेके कारण यह महर पश्चिम
है । पश्चिमपश्चिमके सुमावाय जलके समानाई यहां
बोहर नामका एक महर निर्मात्र कर गये हैं । १८८०
ई०में यहां स्थितिनिर्माणों स्थापित हुई है । महरको
प्रायः प्रायः १५००००० को है । यहां एक महर-
को पदोक्त, पश्चिमपश्चिम पोर एक महर है । यह बहुत
प्राचीन स्थान है ।

धना (हि० पु०) धना देश ।

धनासिका (मं० रत्ना) रागिणीविधि । इसका यह
पद है पोर यह धनजित है तथा पोर पोर मण्डा-
रके निधे गाने जाती है ।

यह रागिणी मण्डावर्दी, चाला मणीहारिणी, धनो,
पोर धनुषी है । धनकलजमें धनके लाताको गितन
करती पोर लाताविरहमें सभंदा रोदन करती है ।
इसके निजधनमें लाक पोर रोना धन धीव लाने है ।

धनाण्ड (हि० पु०) धनिक धनाया, भारा म. लोहा, बहुत
धनो पादमी ।

धनी (हि० स्त्री०) १ धनार्थक लभकधाम धनार्थमें
प्राप्तप्राप्त मिलनेवाली मांसी के लोको एक प्राणि । २
घोड़े को एक प्राणि । ३ बैलका पादमी ।

धन्य (मं० पु०) धनार्थक धन-धन । १ धन्यवर्धक,
यह प्रकारका मण्डक । (हि० २ धनार्थक, धनो,
धन्य, बहाईके योग्य । जो धनमें लाभ, धन पोर कोर्ग
पादि द्वारा विद्यमान है, वे को धन्य है ।

धन्यवर्धक धनार्थक धनोर्ध्वधनार्थक धनार्थक

विषयमें सनत्कुमारसे इस प्रकार कहा गया है—

विस्तीर्णं वासुजातिं मध्यभागमें शतयोजन कच्छप हो
धन्य है, सीरोदसागर धन्य है, जहाँ हमारे जैसे जन्तुगण
विद्यमान हैं, वसुधादेवी धन्य हैं, जहाँ सात सागर प्रवा-
हित हैं। हम लोगोके आधार शीलान्तेके प्रशस्तरूप धनन्त-
देव धन्य हैं जगतके विधाता पितामह ब्रह्मा धन्य है,
चारों वेद धन्य हैं, यज्ञसमूह और व्यवस्थाकर्त्ता धन्य हैं,
समस्त शुभकर्म धन्य हैं और परमात्मा शीलान्तेव ही
निश्चिन धन्य है, केवल मैं धन्य नहीं हूँ। १ धनलम्बा,
जिसे धन प्राप्त हो। ४ धनके लिये उपयोगदि ५ द्राघ्य,
प्रगमनीय। ६ सुखी, सुकृती। ७ कृताय। ८ विष्णु।
९ नास्तिक। १० धान्यक, धनिया। ११ कौवर्त्त सुस्ती,
केवटी मोथा।

धनग्राम—भविष्यब्रह्मण्योक्त यशोर प्रदेशका एक ग्राम।

धन्यवाद (स० पु०) १ साधुवाद, प्रशंसा, वाह वाह।

२ कृतज्ञता सुचकशब्द, प्रशंसा।

धन्यविष्णु—मातृविष्णुके छोटे भाई। मध्यभारतके भागर
जिलेके खुदाई विभागके अन्तर्गत एरथ नामक ग्राममें
लाल पत्थरके स्तम्भमें एक लिपि खोदी हुई है। लिपि
पढ़नेसे जाना जाता है कि यह स्तम्भ एक धनजस्तम्भ है

जिसे महाराज मातृविष्णु और उनके छोटे भाई धन्य-
विष्णुने प्रतिष्ठित किया है। शुक्रसम्वाद, सुधुषके समय
यह लिपि खोदी गई है। इसके पास ही बराहमन्दिरमें
बराहप्रतिमाके वक्षस्थल पर उत्कीर्ण एक लिपि पढ़नेसे
मालूम होता है कि महाराज मातृविष्णुके भाई धन्य-
विष्णुने इस बराहप्रतिमा और मन्दिरका निर्माण किया।
यह लिपि राजा तोरमाणके समयमें उत्कीर्ण हुई है।

धन्यव्रत (स० स्त्री०) धन्य धनजनक व्रत। धनजनक-
व्रतविशेष, वह व्रत जो धन जनक लिये किया जाता है।
कुवेर पक्षमें शूद्र से पौछे यही व्रत करके वे धनपति हो
गये।

वराहपुराणके अनुसार यह मोभाग्यवर्द्धनव्रत
है। वराहपुर इस व्रतके उपदेशक है। निर्धन मनुष्य
भी यह व्रत करके धनी हो सकता है। वराहमहीने-
की शुक-प्रतिपदा तिथिमें रातको विष्णुरूपो अग्निकी
पूजा की जाती है। बाद वैश्वानर नामक भगवान्‌के

दोनों पैर, अग्निके उदर, हविर्भुक्के दोनों ऊह, द्रविण
के दोनों भुज, मर्वर्त्तके मस्तक और पञ्चनके सर्वाङ्ग
का पूजन करते हैं। अन्तमें भगवान्‌के सामने विधानके
अनुसार कुण्ड बना कर उसमें उत्तम नाम संयुक्त मन्त्रसे
होम करना होता है। पौछे व्रत करनेवालेकी सो
मिली हुई धुंधलो खानेकी लिवा है। वराहमहीनेमें
ले कर फागुन तक इसी नियमसे चलना पड़ता है।
हण्यपचकी प्रतिपदमें भी इसी तरहकी पूजा करनेका
विधान है। बाद वैश्वामहीनेमें द्रुतयुक्त पायस भोजन
कर इसी तरहका पूजन करते हैं और इसी नियमसे
प्रपाद महीने तक चलना पड़ता है। बाद आषाढमास-
से ले कर कार्तिक तक सत्तु खा कर रहना पड़ता है।
इस प्रकार एक वर्ष ब्रह्मचारी रक्ष कर व्रत समाप्त
करते हैं। समामिके दिन अग्निकी स्वर्णपतिमा
बना चन्दे एक जोड़ रत्नवस्त्र, रत्नपुष्प, कुङ्कुम, रत्न-
चन्दन आदिसे सजा कर पूजा करते हैं। बाद एक-
मर्षे पङ्कमम्बल मिषदर्शन ब्राह्मणका विधानके अनुसार
पूजन कर उन्हें एक जोड़ रत्नवस्त्र (धोती और बौदना)
और कुछ भय दे कर निम्नलिखित मन्त्रसे दान देना
चाहिये। मन्त्र—

“ब्रह्मेति धन्यकर्मिण धन्येश्वरेति धन्यवान्।

धन्यवानेन चीर्णेन वनेन स्या ददा सुखी॥”

इस व्रतके फलसे मनुष्य इस जन्ममें मोभाग्य, धन
और धान्यप्राप्ती होता है। पूर्वजन्म और इस जन्मके
पाप भी इस व्रतके फलसे दण्ड हो कर व्रतचारी इसी जन्म-
में विसृज्यता हो जाता है। इस व्रतको कथा सुनने
और पढ़नेसे भी मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। पूर्व-
कालमें धनद कुर्वर जब शूद्रयोनिमें थे, तब ये यही
कथा सुन कर सुख हो गये थे। (वराहपुर ६५ ज०)

धन्या (स० स्त्री०) धन्य-टाप्। १ चामलकी, फोटा
चांवना। २ उपमाता। ३ पिण्डारक वनदेवताभेद।
४ धन्याक, धनिया। ५ मनुष्यकी एक कन्या जिमका
विवाह भूषके साथ हुआ था।

धनयाक (स० स्त्री०) धनरते भक्त्याभिहित (विनाश-
दयक। अण् ४।५) इति सूत्रेण पाक प्रत्ययेन साधुः।
सुश्रवण शाकजातीय सुगन्ध सक्के शस्यभेद, धनिया

करता हूँ, वह यह है कि आप प्राणियों के प्रति दया द्रमाइये। परोपकारके लिये महात्माओं को नाना प्रकारके स्तोत्र सहन पड़ते हैं। भगवान् विष्णुने भी मत्स्यादि शरीर धारण कर प्राणियों की रक्षा की है। पृथ्वी ने जिन पौर दृष्टि छातीं जाते हैं उधर जो देखा जाता है कि प्राणीगण प्रतिनियत व्याधि द्वारा पीड़ित हो कर माना प्रकारके दुःख भोग रहे हैं। अतः आप उनके उपकारके लिये भूनीकर्म जा कर कागोधामका राजा होवें और व्याधि मनुष्यकी चिकित्साके लिये आयुर्वेद शास्त्र प्रकाश करें। इतना कह कर इन्द्रने धन्वन्तरिकी सब आयुर्वेद शास्त्र सिखला दिये। धन्वन्तरि इन्द्रसे सब आयुर्वेदशास्त्र सीख कर कागोधामकी ओर चले और उन्होंने किसी क्षत्रियके घरमें जन्मग्रहण किया। वहाँ वे दिवोदास नामसे प्रसिद्ध हुये। इन्होंने वाल्यकालमें भी सब कामना छोड़ कर अनन्यकर्मा हो ब्रह्माकी तपस्या की। ब्रह्माने इनकी तपस्यासे मनुष्य हो कर उन्हें कागोका राजा बनाया। राजा हो कर इन्होंने प्राणियों के उपकारके लिए आयुर्वेद शास्त्र प्रचार किया। पीछे ये धन्वन्तरिमहिता नामक एक अन्य निवृद्ध नर कालों को पढ़ाने लगे। (भाष्य ० पूर्व ०)

हरिवंशमें इनका उत्पत्ति-विवरण इस प्रकार लिखा है—

महामति जनमेजयने वैशम्पायनसे प्रश्न किया था, 'हे महात्मन् ! देव धन्वन्तरि किम लिए इस लोकमें मनुष्यके रूपमें अवतीर्ण हुए थे ?' इनके उत्तरमें वैशम्पायनने कहा था—पूर्वकालमें जब देवता और असुरगण समुद्र मन्थन कर रहे थे, तब समुद्रसे ये उत्पन्न हुए। इनके उत्पन्न होने को दिशार्थ जगमगा उठी। उस समय ये मिहकायोंके उद्देशमें ध्यानपरायण थे। कामने भगवान् विष्णु की दृष्टि से स्तब्ध हो रहे, इस पर भगवान् इन्हें सब कह कर पुकारा। भगवान् ने पुकारने पर इन्होंने उनसे प्रार्थना की, 'हे प्रभो ! आप लोकमात्रों के ईश्वर और जगत्के निधाता हैं। मैं आपका पुत्र हूँ, अतः यशमें मेरा भाग और स्थान नियत कर दिया जाए।' विष्णुने कहा, 'हे वर ! देवताओंने यशभागको कल्पना कर दी है और वे मर्त्यियोंने भी चर विचिह्न प्रदान

कर दिये हैं। अभी तुम्हारे लिए हीमभाग विधान करनेमें मेरो शक्ति नहीं है। पर तुम इस जन्ममें देवताओंका पुत्र हुए हो दूसरे जन्ममें विगोपस्थिति लाभ करोगे, यन्मिमादि मिहियां तुम्हें गर्भमें हो प्राप्त रईंगो और तुम उसी शरीर द्वारा देवत्व लाभ करोगे। दिज्ञानिगण चक्र, मन्त्र व्रत और जपादि द्वारा तुम्हारे पचन करेगे। तुम्हो आयुर्वेदकी षाठ भागोंमें विभक्त करोगे।' ब्रह्मा भी ये सब जानते हैं, इतना कह कर विष्णु अन्तर्धान हो गये।

इसके बाद आपरयुगमें सुनहिल-वर्णाशतंग कागो-राजधन्व पुत्रके लिए कठोर तपस्या करने लगे। 'तो उपास्य देवता मुझे पुत्र देंगे, वे ही मानो मेरे पुत्रके रूपमें जन्म ग्रहण करें।' इस अभिप्रायसे कागोराजने अन्नदेवकी पाराधना की। बाद भगवान् अन्नने राजा-की तपस्यासे मनुष्य हो कर उभये कहा, 'हे सुव्रत ! तुम जो वर चाही वही; पर मैं अभी तुम्हें दूंगा।' इस पर राजाने कहा, 'भगवन् ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो आप ही मेरे कीर्तिमान् पुत्र होवें।' 'तयाम्' कह कर अन्नदेव अन्तर्धान हो गये। पीछे देव धन्वन्तरि ध्रुवके घरमें जन्म ले कर सर्वरोगप्रणाशन महा-राज कागोराजके नामसे प्रसिद्ध हुए। इन्होंने भरद्वाज ऋषिसे आयुर्वेद शास्त्रका अध्ययन करके उसे फिर भिषक, कियाके साथ षाठ भागोंमें विभक्त किया। यह विभक्त आयुर्वेद इन्होंने विपरीतकी विपत्ति दिया। धन्वन्तरिके पैगमान् नामक एक पुत्र हुए। (हरिवंश २८ अ०)

जब देवराज इन्द्र महासुनि दुर्वासके गावने ओजव्रत हो गये, तब देवताओंने विष्णुके आदेशसे समुद्रमन्थन किया जिससे मन्थनमें मन्दोदरी तप्यनदाह, कामराज उस मन्दरके अधिष्ठान और वास्तुकि मन्थनराज हुए थे। स्वयं भगवान् विष्णु इन्हें धनिदान करने लगे। समुद्रमन्थनमें पहले चन्द्र पीछे लक्ष्मी और तब सुरा, उच्चैःश्रवा, कौस्तुभ पारिजातवृक्ष, सुभिक्षो, पाद पाद-में अमृत लिये धन्वन्तरि, और अग्रसे चन्नां दिय तप्यन हुए। पुराणमें सब द्रव्योंकी उत्पत्तिमें कर्त पड़ता है। भागवतके चत्वार यथाक्रमसे विष, हरि, उच्चैःश्रवा, ऐरावत, कौस्तुभ, पारिजात, चक्षुरागप,

धर्मगजर (हिं० पु०) १ उपद्रव, उत्पात, कथम । २ युद्ध, लड़ाई ।

धर्मधम (सं० पु०) धम विकारें दित्वं । पार्वतोके क्रीध-
सम्भूत कुमारानुचर गणभेद, क्षांतिकेयके गण जो
पार्वतोके क्रीधसे उत्पन्न हुए थे । स्त्रियां टाप् । २ धम-
धमा, कुमारानुचर मातृभेद । (भारत समाज ४० अ०)
धमधुमर (हिं० वि०) शृंगार और वेष्टोल आदमी, भद्दा
मोटा आदमी ।

धमन (सं० पु०) धम्यते निरर्मेनेति धम-करणे ल्युट् । १
नलं नामक लघुभेद, नरकट, नरमल । २ हवासे फूँकने-
का काम । ३ पीली नली जिसके द्वारा हवा दो जाती
है । ४ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़ । (हिं०) ५ क्रूर, कठोर ।

धमना (हिं० क्रि०) फूँकना, फूँकना ।

धमनि (सं० स्त्री०) धम्यते इति धन-धनि (धातिं गृह्-
णमिति । उण् २।१०३) १ धमनी, नाड़ी । २ प्रह्लादके
भार्य्या का नाम । जो जो वातापि स्वस्वकी मां यो । ३ गति-
कर्त्ता । गत्यर्थी बुधवार्या, गम्यते ज्ञायतेऽर्थोऽनया ज्ञायते
या विद्वद्भिः साध्वसाधुविभागिन वा धमति इति वध
कर्म स्त्रिय पठ्यते धमति हन्यनया शापाक्रोधादि रूपया ।
४ वाक् । ५ गन्ध ।

धमनो (सं० स्त्री०) धमनि वाहुलकात् ङोप । १ नाड़ी,
शरीरके भीतरकी वृद्ध छोटी या बड़ी नली जिसमें रक्त
आदिका संचार होता रहता है ।

इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है,—

प्रधान धमनियां चौबीस हैं जो नाभिसे निकलती हैं ।
जिसी किसी पण्डितका कहना है, कि शिरा, धमनो और
स्त्रोत इनमें कोई फर्क नहीं है, धमनो शिराका
विकार मात्र है । पर यह सङ्गत नहीं है । मलसलियम,
मलमूत्रधारण और त्याग, तथा क्रियाकी भिन्नताप्रयुक्त
स्त्रोत-शिरासे धमनो भिन्न है । शरीरमें इसे प्रथक्
वतलाया है और भौतिक व्यवहारमें भी धमनो कहनेसे
शिरा नहीं समझी जाती है । मगर दोनोंके एक जगह
रहने तथा शरीरके एक ही प्रकारके कार्य करनेसे वे
दोनों एक ही समझे जाते हैं । दोनोंकी क्रियामें
विभिन्नता है यद्यपि, किन्तु बहुत सूक्ष्म है । अतः दोनोंकी
क्रिया एक ही समझी जानी है ।

ये सब धमनियां नाभिसे निकल कर दग ऊपरकी
घोर गई हैं, दग नीचेकी घोर तथा चार बगलकी घोर ।
ऊपर जानेवाली १० धमनियां द्वारा गन्ध, स्पर्श, रूप,
रस, गन्ध, स्वास, उच्छ्वास, जंभाई, कीर्ण, हास, कथन,
रोदन आदि काम होते हैं । ये दग धमनियां द्रव्यो
पहुँच कर तीन तीन शाखाओंमें विभक्त हो कर तोस
हो जाती हैं । इनमेंसे दो दो वात, पित्त कफ, शोणित
और रस बहान करती हैं । इसके प्रतिरिक्त पाठ गन्ध,
स्पर्श, रूप, रस और गन्ध बहान करनेवाली हैं । फिर
दोसे मनुष्य बोलता है, दोसे गन्ध करता है, दोसे सोता
है, दोसे जगता है और दोसे रोता है । स्त्रियोंके स्तनोंमें
दो धमनियां दूध बहान करतीं, और पुरुषोंके शरीरमें दो
शक्त । यद्यो तीस ऊपरकी धमनियां नाभिसे से कर उदर,
पार्श्व, पृष्ठ, हृत्, स्कन्ध, बीजा और बाहु तक व्याप्त हैं ।

यद्य तो हुई ऊर्ध्वगामिनी धमनियोंकी बात । पञ्च
अधोगामिनो धमनियोंके कार्य दिखताये जाते हैं ।

अधोगामिनी धमनियां इनकी प्रकार वायु, मूत्र,
पुरीय, शक्, पाचन आदि इनकी नीचेकी घोर ने जाती
हैं । जो दग धमनियां पित्ताशयमें जा कर यद्यो छाये
पोष हुए रसकी सञ्चलाने प्रथक् करती हैं, रस पहुँचा
कर शरीरको दृढ करती है, ऊर्ध्व, अधः और तिर्यक्गत
धमनियोंमें रस देती हैं तथा रसका स्थान पूष एवं
मूत्र, पुरीय, स्वेद प्रभृतिको परस्पर प्रथक् कर देती हैं
वे भी आमाशय और पक्वाशयके बीचमें पहुँच कर तीन
तोन भागोंमें विभक्त हो कर तोस हो जाती हैं । इनमेंसे
दो धमनियां वात, पित्त, कफ, शोणित और रस
बहान करती हैं । पतियोंसे लगो हुई दो पञ्चवाहिनो हैं,
दो जनवाहिनो और दो मूत्रवाहिनो । मूत्रवर्धनमें
लगो हुई दो धमनियां शक् उत्पन्न करनेवाली और दो
प्रवर्तित करने या निकालनेवाली हैं । वे दोनों
धमनियां स्त्रियोंके शरीरमें पार्श्व बहान करती हैं ।
मोटी पार्श्वसे लगो हुई दो मलकी निकालती हैं । बाँजो
पाठ धमनियां नाभिसे अधोगामिनी जा कर पक्वाशय,
कटि, मूत्र, पुरीय, गुच्छदेय, वार्ध, श्रेष्ठ और रस आदि
स्थानोंको पोषण करती हैं ।

यद्य तो अधोगामिनो धमनियोंके कार्य बतलाये

पश्चिम हो कर वह चली है। इसमें एक शहर और ५८० ग्राम लगते हैं। तालुककी आय प्रायः २५४००० रु० है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह चला १२° ४०' और देशा ७८° १०' पूर्व में अवस्थित है। यहां से १८ मील दक्षिण एक सब्ज मन्दाज रेलवेके मोरापुर स्टेशन तक चली गई है। लोकसंख्या प्रायः ८१००२ है। इस शहरमें कुछ समय तक मैजर सुनरीने वास किया था। वे यहां फलके उद्यान और एक तालाब बनो गये हैं। शहरमें एक प्राचीन भग्नुर्ग है जो अभी कंठोने नासपातीसे ढक गया है।

बरला—ब्रह्मालकी अन्तर्गत कोवविहारकी एक नदी। यह भूटानके पर्वतमें निकल कर जलपाईगुडो जिलेके हारमदेशमें मयाही परगनेके मध्य होती हुई कोवविहारमें प्रवेश करती है। जलपाईगुडोमें मलाकुया और उमिमार नामक इसकी दो उपनदियां हैं। कोवविहारमें बह सिङ्गिमारी वा जलधका नदीके साथ दुर्गापुरके निकट मिली है। पीछे यह दक्षिणकी ओर रङ्गपुरमें प्रवेश कर बगीचा नामक स्थानमें ब्रह्मपुत्रनदीमें जा गिरी है। वर्षाकालमें नाबं इसमें आती पाती है।

बरवाना (हि० क्लि०) १ धरनेका काम कराना, पकड़ाना, घमाना। २ रखवाना।

बरसाना (हि० क्लि०) दब जाना, डर जाना, सहम जाना।

बरसेन—१ वलभीवंगके स्थापनकर्ता सेनापति भट्टाजंके प्रथम पुत्र। ये भी सेनापति बरसेन नामसे प्रसिद्ध हैं। ये शिवोपासक, महाविक्रमशाली योगी और दरिद्रोंके भक्षदाता थे। ये ही इस वंगके १२ बरसेन हुए।

२ वलभीराज महाराज धरपटके बौद्ध और महाराज शुद्धसेनके पुत्र। ये महाराज द्वितीय बरसेन नामसे प्रसिद्ध थे। धामन्त, महानामन्त, महाराज और महाराजाधिराल प्रभृति इनकी उपाधियां थीं। ये २५० और २७० गुप्तसंवत्में चर्मात् ५८८ तथा ५८८ ई०में वर्त्तमान थे। ये भी शिवोपासक थे। स्कन्दमह इनके सान्निविधार्थि कहें।

३ महाराज द्वितीय बरसेनके द्वितीय पुत्र १२ सारपटके बड़े ब्राह्मणका नाम भी बरसेन था। ये वलभीवंगके तृतीय बरसेन हैं। ये भारी विद्वान् थे। सब प्रकारके शास्त्रग्रन्थ और कलाविद्यामें इनका अच्छा

प्रवेश था। ये सर्वदा पण्डितोंसे चिरे रहते थे। इनके पत्न्यासे ये पण्डित शुद्धनोर भी थे।

४ वलभीवंगके ४४ बरसेन। ये तृतीय बरसेनके छोटे भाई वालादित्य भूवसेनके २४ पुत्र थे। इनकी परममहार्क, महाराजाधिराज, परमेश्वर और सप्तवर्त्ती आदि कई एक उपाधियां थीं। ये गुप्त-सं ३२४-३७०-में वर्त्तमान थे। जिस समय बंगधर्मनिर्माणमें और पादित्यसेनने मगधमें चक्रवर्त्तित्व प्राप्त किया था, प्रायः उसी समय महाराज ४४ ब्रह्मसेन भी पश्चिम भारतवर्षमें चक्रवर्त्ती कहलाते थे। वलभीवंग और गुप्त-संवत् देखो।

बरहर (हि० स्त्री०) १ धर पकड़, गिरफ्तारी। २ रक्षा, बचाव। ३ धैर्य, धीरज। ४ दो या अधिक लड़नेवालोंको धर पकड़ कर लड़ाई बन्द करनेका कार्य, बीच बिचाव।

बरहरा (हि० पु०) धोरहर, मोनार।

बरहरिया (हि० पु०) बीच बिचाव करा देनेवाला, रक्षक, बचाव करनेवाला।

बरहार—भविष्य-ब्रह्मखण्डोक्त जगद्भूमिको वर्णनामें इस नगरका उल्लेख है। लिखा है, कि गोमती नदीके दक्षिणकी ओर यह नगर अवस्थित है। धोरसिंह नामक यहां एक राजा रहते थे जो शिवनामकी छपाने राजा बनाये गये थे। उनके पिताका नाम था चन्द्रसेन। वे बाल्यकालमें गाय बरानेके लिये प्रतिदिन गोमतीके किनारे लाया करते थे। वैशाख शुक्लपक्षाय किसी एक दिन बालक धोरसिंह एक जाननेके कारण सकलनके हथकी छायामें सो रहे। इसी बीच शिवनाम गोमतीके जलमें लोड़ा कर रहे थे। उन्होंने उस सुन्दर बालकको धूपमें सोया हुआ देख उस घर अपना फल लाया और लाया ही। समय पा कर वही बालक राजा हुए। इनके वंशमें केवल पांच राजा हो गये हैं। इनके पुत्र रघुसिंहने ६० वर्ष तक राज्य किया था। उन्होंने समयमें राज्यको ठीक ठीक रखा। पीछे उनमें लड़ने रायसिंहने निष्कण्ठकसे राज्य किया। इस वंशके अन्तिम राजा उदयसिंह थे। कविचर्यामें सुमलमानोंके हाथसे इनका नाम हुआ था।

(अ-न-ख ५४ अ० १११-१२३ पृष्ठ)

धराधर (स० पु०) सङ्गीतमें एक तालका नाम ।

धराधर (स० पु०) ग्रंथनाम ।

धराधिप (स० पु०) धरायाः अधिपः । नृप, राजा ।

धराधिपति (स० पु०) धराधर देखो ।

धराधोम (स० पु०) नृप, राजा ।

धराना (हि० लि०) १ एकड़ाना, घमाना । २ स्थिर कराना, रखाना । ३ स्थिर करना, निश्चय करना, ठहराना ।

धरान्तरधर (स० लि०) धरान्तर धरन्ट । पृथ्वी पर विचरण करनेवाला ।

धरापति (स० पु०) धरायाः पतिः । पृथिवेश्वर, राजा ।

धरापुत्र (स० पु०) मङ्गलग्रह ।

धराभूत (स० पु०) धरा विभक्ति भू-क्रि०, तुक्, च । पृथिवेश्वर, पृथ्वीके मालिक ।

धरामर (स० पु०) धरायाः पृथिव्या नमरो देवः । ब्राह्मण ।

धराधुन (स० पु०) धरायाः धुनः । १ मङ्गल । २ नरकाधुर ।

धराधुन (स० पु०) एक प्रकारका पत्थर । विश्वामित्र और यमिष्ठकी लड़ाईमें विश्वामित्रने यमिष्ठ पर यह पत्थर चलाया था ।

धराधर हि० पु०) मकानका वह भाग जो खंभेकी तरह ऊपर बहुत दूर तक गया हो और जिस पर चढ़नेके लिये भीतर हो भीतर लोढ़ियाँ लगी हो, मिनार ।

धरिगा (हि० पु०) एक प्रकारका चावल ।

धरित्री (स० स्त्री०) धरति जीवजातमिति, ध्रियते गेवेष वा धृ-इत् (अग्निप्रदिग्ध इनेत्री । वण्, ४।१०२) ततो गौरादित्वात् ङोप् । पृथिवी, भूमि ।

धरिमन् (स० पु०) ध्रियते दग्गनेन्द्रियेवेति धृ-इम-निष्- (ह्यप्पयत्तुम् इव इवनिच । वण्, ४।१४७) १ रूप । २ तुला परिमाण ।

धरो (हि० स्त्री०) १ धार सेरकी एक तील । २ रत्नवी, रत्नेकी स्त्री । ३ एक प्रकारका गहना जिसे किसी कानोंमें पहनती हैं ।

धरोमन् (स० पु०) धरिमन् ब्रह्मसो शोर्बः । १ मारभूत मैदिरूप स्थान । (लि०) २ धारक ।

धरण (स० पु०) धरतीति धृ-वाहुमकान् उमन् । १

धारक, वह जो धारण करता हो । २ सड़क, जल, पानी ।

३ जनि, भाग । ४ धरा, पृथ्वी । ५ एकविंशति, इकोस की संख्या । ६ बादिल, सूर्य । ७ ब्रह्मा । ८ स्वर्ग ।

९ नीर, जल, पानी । १० सम्यक्त, राय ।

धरेचा (हि० पु०) धरेचा देखो ।

धरेल (हि० स्त्री०) रखेली स्त्री ।

धरेला (हि० पु०) वह पति जिसे कोई स्त्री बिना व्याह-के ही ग्रहण कर ले ।

धरोत्तम (स० पु०) धराया उत्तमः । शिख, महादेव ।

धरोहर (हि० स्त्री०) वह द्रव्य जो किसीके पास हम विश्वास पर रखा हो कि उसका मालिक जब मंगीगा तब वह दे दिया जायगा । छाती, अमानत ।

धराली (हि० स्त्री०) भारतवर्षमें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़ । यह विशेष कर हिमालयकी तराईमें विपाशा नदीके किनारेसे ले कर सिक्किम तक पाया जाता है । यह पेड़ केवल भारतवर्षमें ही नहीं मिलता, बरन् अफ्रीका और अस्ट्रेलियाके गरम भागोंमें भी पाया जाता है । हमको टहमियाँ नखो और पत्तियाँ सीकके दोनों ओर सामने सामने लगती हैं । हममें सकेद लाल या पीले फूल लगते हैं । हम पेड़का कोई भाग चूत हो जानेसे हममेंसे पीला दूध निकलता है जिसे पानोंमें सोलनेसे खाया पीया रंग तैयार हो सकता है । हमके कोजसे एक प्रकारका तेल निकलता है जो दवाके काममें जाता है । काल और जड़ सब काटने और बिच्छूके डंक मारनेकी दवा हमको जाती है ।

धरीना (हि० पु०) बिना विधिवत् विवाह अथि स्त्रीकी रखनेकी बात ।

धर्ष (स० पु०) धृ-वाहुमकान् नमि । १ बल, ताकत । २ धर्षण्य बचादि, धारण करने योग्य वष ।

धर्षि (स० लि०) धृ-नि । धारक, धारण करनेवाला ।

धर्षण्य (स० लि०) धृ-तत्त्व । १ धारणीय, एकड़ने योग्य । २ स्वातन्त्र्य, रहने योग्य । ३ पतनोप, निरने योग्य ।

धर्षा (स० पु०) १ धारण करनेवाला । २ कोई काम ऊपर मेंनेवाला ।

वेदशास्त्रके अविरोधो तक दारा जो अनुसन्धान करते हैं, वे ही धर्म को जानते हैं। अन्य कोई नहीं जान सकता। इससे ऐसा सिद्धान्त हुआ, कि ऋषियोंने जिसको धर्म कहा है एवं वेदमें जो कहा गया है, वही धर्म है। यागादि क्रिया ही धर्म है, जो यागादि का अनुष्ठान करते हैं, वे ही धार्मिक हैं। कारण यागादि क्रियाका अनुष्ठान करनेसे शुभाष्ट होता है और उस शुभाष्टका फल भी शुभ होता है।

“विहितक्रियावत्तयः धर्मः पुंलो घृणो मतः।

प्रतिष्ठितक्रियासारगः स गुणोऽयमै उच्यते ॥

धर्मश्रवः समुद्दिष्टं श्रेयोऽभ्युदयसाधनं ॥”

(मीमांसा १०. १२ सूत्रभाष्य)

विहित क्रियाके दारा साध्य जो उपपत्तिका गुण है, उसका नाम धर्म है। शास्त्रोंमें जो क्रियाओंके विधान बतलाये गये हैं, उनके अनुसार कार्यानुष्ठान करना धर्मानुष्ठान है। शास्त्रोंमें जिन कार्योंके लिए निषेध किया गया है, उन कार्योंके वारनेसे अधर्म होता है। धर्म शब्दका अर्थ अर्थात् सङ्गलन अर्थ होता है, जिससे अभ्युदय साधित होता है, उसका नाम धर्म है। वेदविहित कार्योंके अनुष्ठान करनेसे धर्मानुष्ठान होता है। किसी किसीके मतमें यागादि हिंसादि दोषदुष्ट हैं, इस लिए उनके अनुष्ठानसे धर्म और अधर्म दोनों ही होता है। मीमांसा, दर्शन और स्मृति आदिमें मीमांसित हुआ है, कि इनमें जो हिंसादि की जाती है वह अधर्म नहीं है; बल्कि उसका अनुष्ठान न करना अधर्म है।

(मीमांसा १०)

मनुष्योंका धर्म ही एकमात्र बन्धु है, मरुतुके बाद कोई भी अनुगमन नहीं करता, एकमात्र धर्म ही अनुगामी होता है।

“एकएव एहदमैः निपनेऽऽस्तुनाति यः।

शरीरेण समं मातां सर्वमन्वन्तु न पच्छति ॥”

(द्वितीयोपदेश १।५९)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र प्रत्येक वर्गका विभिन्न धर्म है। ऐसा भी हो सकता है कि जो कार्य क्षत्रियके लिए धर्म है, वही कार्य ब्राह्मणके लिए अधर्म है। इसीलिए प्रत्येक वर्गका विभिन्न धर्म बतलाया गया

Vol. XL, 26

है। जिस जिस वर्ग एवं आयुष्यके लिये जो जो कर्मानुष्ठान बतलाये गये हैं, वे अनुष्ठान सभी वर्ग वा आयुष्यके लिए धर्मस्वरूप हैं। विधिविहित अनुष्ठानोंके न करनेसे आयुष्य धर्मका लङ्घन होता है और उमीका नाम अधर्म है।

पहले जो यह कहा गया है कि धर्म वा अधर्म करनेसे उसका फल सुख वा दुःख प्राप्त होता है, उमीको अब विशदरूपसे बतलावना की जाती है। भगुण शरीर, मन और वाक्च दारा जो कुछ भी अनुष्ठान करता है, पचवा जो कुछ भी अनुभव करता है, उसके द्वारा उसके चित्त वा अन्तःकरणमें शून्य शरीरमें एक प्रकारके गुण वा संस्कार उत्पन्न होते हैं और वे फिर भविष्यत् परिणामके बीज वा शक्तिविशेषकी उत्पत्ति करते हैं। ये संस्कार (या शक्तिविशेष) प्राणियोंके वर्तमान जीवनके परिवर्त्तक वा भविष्य-जीवनके बीज हैं। बहुत-बहुत वा अनुभूत क्रियाकलाप मात्र ही सुखताके प्राप्त जीवके चित्तमें रह जाते हैं। ज्ञानान्तरमें वे ही संस्कार प्रबल हो कर (अर्थात् जीवकी) भिन्न भिन्न रूपमें परिणत करते हैं। इन संस्कारोंकी ही कर्म, पट्ट, धर्माधर्म, पापपुण्य इत्यादि संज्ञाएं हैं। शरीर और मानस व्यापारसे उत्पन्न कर्म साधारणतः तीन प्रकारके हैं—एक, कृण्य और शकृण्य अर्थात् मित्य। जो शक्ति तपस्या और ज्ञानसोधनानमें रत रहते हैं, उनके कर्म शकृण्य होते हैं। इस अर्थोंके लोग शास्त्रको विधियोंका किसी प्रकारसे लङ्घन नहीं करते, जिनसे सुख प्राप्त होती है उमीका अनुष्ठान करते हैं। जो लोग प्राणिजिवा आदि दुष्कार्योंमें रत रहते हैं, अर्थात् शास्त्रके किसी भी विधि अनुष्ठानका पालन नहीं करते हैं, सिर्फ विधियोंका लङ्घन ही किया करते हैं, उनके कर्मोंकी कृण्य संज्ञा है। जो लोग केवल यज्ञादि कार्यमें रत रहते हैं, उनके कर्म शकृण्य अर्थात् मित्य हैं। शकृकर्म अर्थात् धर्मसे भविष्यमें उत्पत्ति होती है। कृण्यकर्म अयोगिकते और मित्यकर्म मित्यफलके बीज हैं। शकृ नामक कर्मबीजसे क्रमगः देवशरीर, कृण्यनामक कर्मबीजसे पदपक्षी आदिवा शरीर और मित्यकर्म-बीजसे मानवशरीर उत्पन्न होता है। परन्तु योगियोंको बात अलग है; उनके धर्मकार्योंमें

सत्य और अधोभय ये दश धर्मों के मूल हैं। जो दिन इन दश प्रकारके धर्मोंका पाठ करते हैं एवं पाठ करके उनका अनुष्ठान करते हैं, वे परमगति को प्राप्त होते हैं। इन दश धर्मोंका जानना सभी वर्णों और सभी पात्र्यों-के लिए आवश्यक है; इसलिए प्रत्येकके लिए इन दश धर्मोंका अनुष्ठान करना सर्वोत्तमविषय है। जो लोग धर्मानुष्ठान नहीं करते, उन्हें अनेक प्रकारके क्लेश सङ्गे पड़ते हैं।

अधर्म अनुष्ठानकारीका विषय अनुसंहितामें इस प्रकार लिखा है—

जो व्यक्ति अधार्मिक है, असत्य मार्गमें धनोपाजन करता है और जो दूसरोंकी हिंसा करनेमें अपनेको लग्न मानता है, वह व्यक्ति सभारमें सभी सुखका अधिकारी नहीं हो सकता। अधार्मिकोंकी ग्रीष्म की विपत्तियोंका सामना करना पड़ता है। ऐसा विचार कर धर्माधर्मका व्यवस्थान लेना चाहिए, धर्माभावसे चाहे मरना बन्नी न पड़े, पर अधर्ममें कदापि प्रवृत्त न होना चाहिए। जिस प्रकार भूमिमें बोया हुआ बीज तत्काल ही फल प्रसव नहीं करता, उसी प्रकार इस संसारमें अधर्माचरण करनेसे उसका फल उसी समय नहीं मिलता। किन्तु अधर्माचरण करते करते कालान्तरमें ऐसा होता है कि अधर्मकर्त्ता समूल विनष्ट हो जाता है। अधर्मका फल यदि अधर्मापेक्षी न मिले, तो उसके पुत्र वा पौत्रको पवश्य ही मिलता है। अधर्माचरण अपना फल दिये बिना नहीं रह सकता। अधर्म द्वारा लोक उसी समय उद्विग्न हो सकते हैं, मृत्यु भी पर विजय हो पा सकती है; किन्तु अन्तमें वे समूल नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं। सर्वदा सभी कार्य धर्मानुसार करना उचित है। सत्यधर्म, सदाचार और शौचमें सर्वदा रत रहना चाहिए। वाङ्मय और उदरके विषयमें सतत संयत रहना उचित है। धर्माविरुद्ध व्यर्थको कामनाको छोड़ देना चाहिए। जिस धर्माचरणसे अपने को दुःख ही और दूसरोंको आक्रोशभाजन होना पड़े ऐसे ऐसे धर्माचरण भी परित्यज्य हैं। (मनु ४ अ०)

धर्मोंको दम पड़ है। जो सा कि कहा है,—

“मद्वन्द्वेण धर्मेन तपसा च परार्हते।

दानेन निश्चेनापि ज्ञाना शौचेन व्रतम् ॥

अहिंसा वृथागत्या च अस्तेनेनापि वर्द्धते।

एतैर्दशभिरेतेषु धर्मैरेव प्रसूयते ॥” (शांख्य भूमिका)

ब्रह्मचर्य, सत्य और तपस्या इन तीनोंसे धर्म प्रवर्धित होता है और दान, नियम, जमा, शौच, अहिंसा, सुमान्ति और अस्त्य इनके द्वारा वर्धित होता है।

“अथोद्धारोपलोभ्य दमो मृतदशा ततः।

ब्रह्मचर्यं ततः क्षत्रमनुकीलः समा पृष्टिः।

मना नश्यत् धर्मस्य मुनेतद्दुःखम् ॥” (मातृवपु०)

अद्वेष्ट, अनोभ, दम, जीवोंके प्रति दया, ब्रह्मचर्य, सत्य, अनुशील्य, जमा और धृति ये मनातम धर्मोंके मूल कर्त्तव्य हैं।

कनिके दश हजार वर्षं बीत जानि पर धर्मादि विष्णु-को पाठभूममें चले जायति।

“शालग्रामो हरेर्भूर्तिर्ब्रह्मनाथ भारत”।

कलेर्दशसहस्रान्ते बयौ स्वपत्न्या हरेः पत्न ॥

सर्वधर्मं सर्वथ वेदाथ प्राप्तदेवताः।

व्रतं तपश्चानन्यं न्युक्तौ सार्द्धमेव च ॥” (ब्रह्मवैवर्त०)

शालग्राम शिला, जगन्नाथ और विष्णुभूर्ति ये कनिके दश हजार वर्षं बीतने पर विष्णुकी पादभूममें अभी जायेगी और इनके साथ ही सत्य, धर्म, सत्य, वेद, शमदेवता, व्रत, तप और अन्यान्य भी प्रस्तान करेंगे।

धर्मके आधारस्थान—

“मत्र स्थानं तदापातो बहामि श्रुतां विभो।

श्रेण्येषु च सर्वेषु धर्तुषु ब्रह्मचारिषु ॥

पतिव्रताषु शास्त्रेषु वागवस्थेषु निष्ठुषु।

श्रुषुषु धर्मतीक्ष्णेषु सरसु पदरैश्चनतिषु ॥

दिग्गेषु धर्मेषु सर्वेषु धर्मैश्चनतिषु च।

एषु त्वं सत्यतः पूर्णं धर्ममात्रो विराजते ॥

सुमे सुमे समापारा एते पुण्यतमा जनाः ॥”

अपिच—“अद्वन्द्वेण धर्मिषु श्रुतीवन्दनेषु च।

देवार्हेषु च पुत्रेषु विपदानोद्दिष्टि शान्तिषु ॥

देवावस्थेषु तीर्थेषु सर्वा शरत्पद एतेषु च।

वेदवेदांगधर्मवचनेषु च समासु च ॥

धीष्ण्यपुनरागोक्तश्रुतिगीतस्त्वेषु च।

मन्त्राणां तान्त्र्यामयश्चवाधिरयेषु च ॥

किसी प्रकारका संस्कार उत्पन्न नहीं होता। उनका चित्त सर्वदा विषयोंसे विरक्त रहता है और वे धर्ममन्त्रि पूर्वक कोई भी कार्य नहीं करते। वे जीवधारणके लिए किसी न किसी कार्यका अनुष्ठान करते रहते हैं, मही पर हमसे किसी प्रकारका संस्कार उत्पन्न नहीं होता। कारण वे सर्वदा कामनाशून्य रहते हैं और कृतकर्म ईश्वरके लिए छोड़ देते हैं। अथ भर भी वे उन्हें अपने चित्तमें स्थान नहीं देते। यही कारण है कि उनके संस्कारों वा संसार बीजोंको उत्पत्ति नहीं होती। मनुष्य शक्त, क्षण्य पदवाः मित्य किसी तरहका कर्मोपाज्जन क्यों न करे, कोई भी कर्म उसे एक समय और एक प्रकारसे फल नहीं दे सकता। कुछ कर्म ऐसे हैं जो जन्मान्तरमें जाति, जन्म, पाप और भोग प्रमथ करते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो सिर्फ उसी जन्ममें स्व स्व जातिमें अनुसार भोगोपयुक्त स्मृति वा स्मरणायक ज्ञान उपस्थित करते हैं। जन्मजन्मान्तरमें सञ्चित असंख्य कमावासनाएँ ऐसी हैं जो मरण कालमें धर्मिष्ठता हो कर पुनर्जन्मको प्रारम्भक होती हैं और कुछ ऐसी भी हैं जो उसी जन्मके उपयुक्त भोगादि (वा कृति) के कारण हैं। जो कुछ भी कहा गया है, उसका मूल धर्म ही है। जगत्में जो कुछ वैषम्य देखनेमें आता है, उसका मूल धर्म और अधर्म है। एक वृत्ति राजा होता है, एक भोक्ष मांगता फिरता है; दोनों मनुष्य हैं, फिर क्यों इतना वैषम्य? इसका कारण एकमात्र धर्मोपधर्म ही है जिसने जैसा पुण्य-पाप उपार्जन किया है, वह वैसा फल वा रहा है और वर्तमानमें जो जैसा आचरण कर रहा है, उसके अनुसार भविष्यमें वह वैसा ही फल पावेगा। इसलिए प्रत्येक मनुष्यको अपने अपने धर्म-धर्म का पालन करना नितान्त आवश्यक है। गोता आदिमें भी शिक्षा है—

“अपान् स्वधर्मो विप्रः परधर्मोऽस्वगृहीतारः।

स्वधर्मो निषण्णः धर्मः परधर्मो भयावहः ॥” (गीता ७:३५)

सम्पूर्ण रूपसे परधर्म अनुष्ठित होनेकी अपेक्षा, कष्ट-चित्त पङ्कहाति होने पर भी, स्वधर्म आचरण श्रेष्ठ है। परधर्म पालना भयानक है। स्वधर्म पालन कर चुकने पर यदि देहान्त भी हो जाय तो भी वह कल्याणकारी होता

है। इसका तात्पर्य यह है, कि बहुत मोहवश अपना धर्मात् स्वधर्मका धर्म त्याग कर परधर्म धर्मात् ब्राह्मणों-का धर्म (मित्रादि अवलम्बन) ग्रहण करना चाहते हैं। इस पर श्रोकण्य उन्हें समझा रहे हैं कि “यह तुम्हारे लिए अधर्म है; क्योंकि ब्राह्मणों के नियम जो धर्म है, स्वधर्मों के लिये वही अधर्म है। अतएव हम स्वधर्म (युद्धादि) के अवलम्बन करने पर यदि मरण भी हो जाय तो भी वह श्रेयस्कृत है।” इससे प्रमाणित होता है कि एक वर्ण के लिए जो धर्म बतलाया गया है, दूसरे वर्ण के लिए वही अधर्म है। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र, जिस वर्ण के लिए जो धर्म बतलाया गया है, उसका उत्तम करने को अधर्म है। प्रत्येक वर्ण के लिए विभिन्न धर्मों का निर्देश किया गया है। इसी लिए “स्वधर्मो निषण्णः धर्मः” ऐसा वचन प्रयुक्त हुआ है। परधर्म धर्मात् अन्य धर्मों के धर्मों को ग्रहण करना उचित नहीं। ब्राह्मण, गाह्वय, वानप्रस्थ और भिक्षु ये चार धर्म हैं। इन चार धर्मधर्मोंका पालन करने से मोक्षकी प्राप्ति होती है।

“अथैषां विधेयं वेदव्यतिथिपातनः।

ग्रहण्य उच्यते धेष्टः ६ श्रीमत्तत्त्व विमर्शि दि ३ (मनु १:८९)

इन चारों धर्मधर्मियों में ग्रहण्य ही श्रेष्ठ है। कारण ग्रहो ब्राह्मणारी, वानप्रस्थ और यति तीनों धर्मधर्मियों की मित्रादि द्वारा पोषण करता है। जिस प्रकार समस्त नद और नदियाँ समुद्रमें जा कर धर्मधर्म होती हैं, उसी प्रकार समस्त धर्मधर्मों ग्रहण्य धर्मियों पर निर्भर किये हुए हैं। चारों धर्मधर्मों के लिए धर्मधर्म कहे गये हैं।

“अथैषां विधेयं वेदव्यतिथिपातनः।

ग्रहण्य उच्यते धेष्टः ६ श्रीमत्तत्त्व विमर्शि दि ३

पृथिः क्षमा दमोऽस्तेषां शौनमिन्द्रियनिमः।

वीरिषा स्वधर्मकोषो दण्डः परधर्मणः ॥

दण्डव्यतिथि धर्मणः वेदितः धर्मधीवते।

अथैषां विधेयं वेदव्यतिथिपातनः ॥

(मनु १:८९-८९)

धृति धर्मात् सन्तोष, क्षमा, दम धर्मात् माद्विषयों में मनको रोकना, अक्षय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या,

मैल्य और भक्तोप ये दृष्ट धर्म के मूल्य हैं। जो द्विज इन दृष्ट प्रकारके धर्मोंका पाठ करते हैं 'एवं' पाठ करके उनका अनुष्ठान करते हैं। वे परमगतिको प्राप्त होते हैं। इन दृष्ट धर्मोंका ज्ञानना सभी वर्ण और सभी आश्रमों के लिए आवश्यक है; इसलिए प्रत्येक के लिए इन दृष्ट धर्मोंका अनुष्ठान करना सर्वसोमायसे विधेय है। जो लोग धर्मानुष्ठान नहीं करते, उन्हें अपनेक प्रकारके हानि भङ्गने पड़ते हैं।

अधर्म अनुष्ठानकारीका विषय अनुसंहितानें इस प्रकार लिखा है—

जो व्यक्ति अधार्मिक है, अमत्य मार्गमें भगोपाजन करता है और जो दूसरोंको हिंसा करनेमें अपनेको दृष्ट मानता है, वह व्यक्ति सँसारमें कभी सुखका अधिकारी नहीं हो सकता। अधार्मिकोंको शीघ्र ही विपत्तियोंका सामना करना पड़ता है। ऐसा विचार कर धर्माधर्मका अवलम्बन लेना चाहिए, धर्माभावसे चाहे मरना लो न पड़े, पर अधर्ममें कदापि प्रवृत्त न होना चाहिए। जिस प्रकार भूमिमें बोया हुआ बीज तत्काल ही फल प्रसव नहीं करता, उसी प्रकार इस सँसारमें अधर्माचरण करनेसे उसका फल उसी समय नहीं मिलता। किन्तु अधर्माचरण करते करते कालान्तरमें ऐसा होता है कि अधर्मकर्त्ता समूल निनष्ट हो जाता है। अधर्मका फल यदि अधर्मकारीको न मिले, तो उसके पुत्र या पौत्रको अवश्य हो मिलता है। अधर्माचरण; अपना फल दिये बिना नहीं रह सकता। अधर्म द्वारा लोक उसी समय द्विकी प्राप्त हो सकते हैं, शत्रु भी पर विजय हो पा सकते हैं; किन्तु अन्तमें वे समूल नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं। सर्वदा सभी कार्य धर्मानुसार करना उचित है। सत्यधर्म, सदाचार और शौचमें सर्वदा रत रहना चाहिए। मातृ और पितृको विषयमें सतत संयत रहना उचित है। धर्मविरुद्ध कार्यको कामनाको छोड़ देना चाहिए। जिस धर्माचरणसे अपने को दुःख ही और दूसरोंको आक्रोशमालिन होना पड़े ऐसे ऐसे धर्माचरण भी परित्यज्य है। (मनु ४५०)

धर्मको दम पड़ है। जो सा कि कहा है,—

“माचर्येण धर्मेन तपसा च प्रवर्तते।

दानेन निवसेनापि ज्ञया मौनेन व्रतम् ॥

वर्हिं सवा सुशान्ता च मरतेयेनापि वदंते।

एतेर्दशभिर्गणैः धर्ममेव प्रवृत्तयेत् ॥” (पापे भूमिस्तम्)

ब्रह्मचर्य, सत्य और तपसा इन तीनोंसे धर्म प्रवर्तित होता है और दान, नियम, जमा, शौच, अहिंसा, सुशान्ति और धर्म्य इनके द्वारा वर्धित होता है।

“अतोदयात्पटोभ्य दसो मृतदया तपः।

ब्रह्मचर्यं ततः सत्यमनुकोः समा वृत्तिः।

मनातनस्य धर्मस्य मुनयेतद्दशातपः” (मातृवपुः)

पटोद, पलोम, दम, जीवोंके प्रति दया, ब्रह्मचर्य, सत्य, अनुशील, जमा और धृति ये मनातन धर्मके मूल कर्त्तव्य हैं।

कनिके दृष्ट हजार वर्ष बीत जाने पर धर्मादि विष्णुको पाटमूर्त्तमें चले जायगी।

“शास्त्रमाया हरेर्भूतैर्गणनाथ भारत”।

कलेर्दशसहस्रान्ते भवौ रत्नवत्सा हरे। पर” ॥

सत्य धर्म सत्य वेदाश्च मानदेवताः।

सर्वं तत्परचानकनं यदुल्लेख्यं तदादेव च ॥” (ब्रह्मवैवर्त०)

शालग्राम मिला, जगदाय और विष्णुमूर्त्ति ये कमिके दृष्ट हजार वर्ष बीतने पर विष्णुके पाटमूर्त्तमें भवौ जायेंगी और इनके साथ ही मत्स्य, धर्म, सत्य, वेद, ब्रह्मदेवता, व्रत, तप और अन्नग्रन्थ भी प्रस्नान करेंगी।

धर्मके आधारस्थान—

“वत्त स्वानं तवापारी वदामि श्रुता विभो।

वैश्वदेव्यु च सर्वेषु वतिषु ब्रह्मपारिषु ॥

वतिपताषु प्राहेषु दानप्रत्येषु मिच्छुषु।

श्रेषु धर्मधीषेषु धर्मस्य सदैवैवनातिषु ॥

द्विजेषु श्रेषु सत्यं समैरिवेषु च।

एषु स्वं सत्यतं एषो धर्मोऽपि विराजते ॥

गुणे गुणे तवापारा एते पुण्यवता जनाः”

अपिच—“अरत्यवटपिन्वेयु द्वितीयवर्त्तनेषु च।

वेदाहंषु च पुण्येषु विपमानोऽपि शास्त्रेषु ॥

वेदाहंषु धर्मेषु सदां शरत्तव्येषु च।

वेदवेदांगधर्मवर्त्तनेषु च समाप्ते च ॥

धीकृष्णगुणानामोष्णुषिणीत्येषु च।

व्रतपूजा तपोभ्यामयज्ञाश्चिन्त्येषु च ॥

ईशापरीक्षाचपयोगोदगोदग्मिषु ।

गर्वा एहेयु गोष्ठिपु विचरानोदि परपति ॥

कसता तेन भरिता एहेयेयु एकेषु च ।"

(ब्रह्मवैवर्त श्रीकृष्णार्जवच ० ४२ अ०)

समस्त वैष्णव, यति, ब्रह्मचारी, पतिव्रता नारो, ब्राह्म व्याति, वानप्रस्थावन्तश्चो, भिक्षु, धर्मशील नृप, भद्र नैषा, दिग्वेद्यापरायण शूद्र और सत्समर्गस्थित गृहस्थ इनके पास धर्म सम्पूर्ण रूपसे और सर्वदा अवस्थान करता है । अश्वत्थ, वट, विष्व, तुलसी, चन्दन, देव-पूजाई पुष्पवृक्ष, देवानय, तोर्षस्थान, वेदवेदाङ्गव्यव-कारी स्थिति, वेदपाठका स्थान, श्रौतव्यके नामादि कीर्तन का स्थान, व्रत, पूजा, तप, विधिविहित यज्ञ, सांख्यिक, दीक्षा, परोक्षा, अष्टादशक, गौड, गोपदभूमि और गोष्ठइ इन स्थानोंमें धर्म अवस्थान करता है; और इसीलिए उक्त स्थानोंमें किये हुए धर्ममें मन्त्रिभता नहीं आती ।

देवता आदिका धर्म नामनपुत्राणमें इस प्रकार लिखा है—

सुकेशि नामक एक राजसने ऋषियोंके पास जा कर ऐसा प्रश्न किया कि "इस जगत्में श्रेय क्या है?" ऋषि-योंने उत्तर दिया—"इस काल और परकालमें धर्म ही श्रेय है; साधुगण धर्मका आश्रय लेते हैं, इसलिये वे पूज्य हैं । धर्ममार्गके अवलम्बन करने पर ही सब सुखो हो सकते हैं ।" इस पर सुकेशिने पुनः प्रश्न किया कि "धर्मका लक्षण क्या है और क्या करनेसे धर्मचरण होता है?" ऋषियोंने कहा—यागयज्ञादि क्रिया, स्वाध्याय-तत्त्वविज्ञान, विष्णु पूजनमें रति और विष्णुको स्तुति करना देवताओंका परम धर्म है । बाह्य-पराक्रम और सन्ध्यामण्डप सत्कार्य, मोतिशास्त्रको निन्द्य और हरिमति करना देवोंका धर्म है । योगासुखान, स्वाध्याय, ब्रह्मविज्ञान, विष्णु और गङ्गाकी भक्ति करना भी देवोंका परम धर्म है । नृत्यगोतादिमें समिपता और सरस्वतीमें स्नान भक्ति करना गन्धर्वोंका धर्म है । पौरुष कार्यमें समिपता, भवानो और भगवान् सूर्यके प्रति भक्ति एवं गन्धर्व विद्या उदात्तजन करना विद्यावर्षा का धर्म है । समस्त चक्षु और अक्षविद्याओंमें निपु-

यता प्राप्ति करना कि 'पुण्य' का धर्म है । ब्रह्मचर्य और योगाभ्यासमें सर्वदा आनुरक्ति, समस्त स्थानोंमें दक्षता-सार गमनागमन, नित्य ब्रह्मचर्य और जप मन्त्रों का ज्ञान प्राप्ति करना पितृगणों का धर्म है । धर्मज्ञान ऋषियों का धर्म है । स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य, टम, यजन, सारस्व, अहिंसा, क्षमा, जितेन्द्रियत्व, शोचत्व, मङ्गल कार्योंमें श्रद्धा और देवताओंको भक्ति करना मानवों का धर्म है । धर्माधिपतित्व, भोग, स्वाध्याय, शङ्खरोपामना, अहङ्कार और मत्ताराहित्य शुद्धाका धर्म है । पर भार्यामें समि-पता, परकीय चर्यमें लोचुपता, वेदाभ्यास और गङ्गामें भक्ति करना राजसों का धर्म है । अविवेकता, अज्ञान, अणुवि, मिथ्यावादित्व और धार्मिक-भोजनमें लोभ करना पिशाचोंका धर्म है ।" (वायव्य ० ११ अ०)

धर्मके अगम स्थान—

"एतद्वयेयु कसता यदगमस्य ततः भूषु ।

पुंश्चलीषु तद्वयेयु एहेयु नरवातिना ॥

नरवातिषु गोचेषु नृकेषु च लहेयु च ।

देवतागुह्येयु पदार्थानां घनद्वारिषु ॥

असत्रेषु भूतैषु चौरैषु रतिभूमिषु ।

शुभेदसुतापानकलहानां एकेषु च ॥

शास्त्रमामवापुलीषु पानाद्वयेयु च ।

दस्तुमत्तेषु देवेषु तालवृक्षावाद् गार्हिषु ॥

अभिनीषिषु लीषिषु बलकामयाजिषु ।

तुरवाहरवर्णकाराणीषु द्वितीयेषु ॥

भक्तनिन्दितनारीषु हरीमयेषु च पुंश्चु च ।

दीक्षाभक्तिविष्णुभक्तिविहीनेषु द्विजेषु च ॥

स्वाङ्गकन्याविक्रयिषु रवोविद्विक्कविष्व च ।

शास्त्रमामसुत्राण्यभूमिद्विक्कविषु प्रभो ॥

मित्राङ्कुरुवनेषु शयविश्रामपाणिषु ।

शरणागतद्विषेषु आश्रितवनेषु सेषु च ॥

शरणिमिषोकिषोऽप्येषु तपाशीसाराद्विषु ।

कामात्तु कंपासता सोमादिमिश्रावाधिप्रवदिषु ॥

पुण्यकर्मविहीनेषु पुण्यकर्मविहीनेषु ।

एषाद्विषेयेषु निषेयेषु नापिकारस्तव प्रभो ॥"

(ब्रह्मवैवर्त ० श्रीकृष्णार्जवच ० ४२ अ०)

पुंश्चली नारो (चर्मात् स्वमिचारिणां लो) और लक्ष्मी

रुद्र, गरुड, गणेश, नोच, भूष, चन्द्र, देवता, शुभ और प्रतिपाद्य व्यक्ति का घनहरणकारी, समस्त नर, धूर्त, चौर, रतिभूमि, दुरोदर (द्यूतकोड़ा) शरापान और कलहकी भूमि, जहां मालपाम, माधु और तीर्थ नहीं है ऐसा स्थान, पुरापरहित स्थल, दस्युयुद्ध देवता, तान्त्रिका, ब्रह्महारी व्यक्ति, प्रतिजीवी, सविभोवी, देवता (पद्योत् को लोग प्रतिष्ठित देवमूर्ति को पूजा करके जोबिका निर्वाह करते हैं), धामयाजी, हृषवाह, स्वर्णकार, जोबिका भोवजीवी, पतिको निन्दा करनेवाली स्त्री, स्त्रीजगत् पुत्र, दीक्षा, मन्त्र और विष्णु भक्तिविहीन हिज, स्त्रीय अन्न, कन्या और स्त्रीको वैचरिताला व्यक्ति, देवीसत्त संस्थितिकी वैचरिताला व्यक्ति, मित्रदोषी, क्षतध, सत्य और विमोक्षका वात करनेवाला व्यक्ति, मरणागतकी रक्षा न करनेवाला व्यक्ति, पात्रिकी मारनेवाला और मिथ्यावादी व्यक्ति, सोमापहारी, काम, क्रोध वा मोक्ष के कारण मिथ्या साक्षी देनेवाला व्यक्ति, पुण्य धर्म विहीन और पुण्य-कर्म विरोधी, इन सबोंको धर्म का अधिकार नहीं होता पर्यात् इन सब स्थानों में धर्म का अवस्थान नहीं है।

हिमाद्रि-प्रतखण्ड में धर्म निदाटिका विषय इस प्रकार लिखा है—

“वर्णधर्मस्मृतस्त्वेक आधमापामतः परं ।

वर्णाधर्मस्तुतोऽपि तु यौनो नैमित्तिकस्तथा ॥

वर्णधर्मस्माभिः यो धर्मः सम्प्रवर्तते ।

वर्णधर्मः स तुल्यस्तु ययोरनवन्” इति ।

आधमिक समाभिः यो धर्मः सम्प्रवर्तते ॥

य सत्त्वाधर्मधर्मस्तु भिलादश्रयिको यथा ॥

वर्णधर्मस्माभिः यो धर्मः सम्प्रवर्तते ।

य वर्णधर्मधर्मस्तु ध्यान्मोक्षी मेवसा तथा ॥

यो गुणैः प्रवर्तते गुणधर्मः स तुल्यते ।

यथा मूर्धाभिः प्रवर्तते प्रवर्तते परिशक्तः ॥

निमित्तधर्मस्माभिः यो धर्मः सम्प्रवर्तते ।

नैमित्तिकः स तुल्यते प्रायश्चित्तविधिषा ॥

(हिमाद्रि-प्रतखण्डक मन्त्रिगुणः)

वर्णधर्म, धार्यधर्म, वर्णाधर्म, गोधर्म,

तथा नैमित्तिक धर्म, एक वर्णत्वको धार्य कर जो धर्म सम्प्रवर्तित होता है, उसे वर्णधर्म

कहते हैं; जैसे—उपनयनादि। धार्यधर्म धार्य कर जो धर्म प्रवर्तित होता है, उसे धार्यधर्म कहते हैं; जैसे—मित्रा और दण्डादिधर्म। वर्णत्व धार्य धार्यधर्म की अधिकार कर जो धर्म प्रवर्तित होता है, उसे वर्णाधर्म कहते हैं; जैसे—मोक्षी और मेवसादि धारण। जो धर्म गुणों के द्वारा प्रवर्तित होता है, उसका नाम गुणधर्म है। जैसे—ध्यानियम प्रजादिका पालन। किसी एक निमित्तको धार्य कर जिस धर्म का प्रवर्तित होता है, वह नैमित्तिक धर्म है; जैसे—प्रायश्चित्तविधि आदि। धार्यधर्म धर्म का लक्षण इस प्रकार कहा गया है—

“प्रादुर्गमं तपश्चैव धार्यधर्म एव ॥

स्वेयु चरेयु सगोत्रः शौचं धियानसुरता ॥

आनन्दानं तितिक्षा य धर्मः धार्याणो वृत् ॥”

आहकर्म, व्रत (धार्यात् आन, दान पूजा, होम और जपादि), प्रलोभ, सर्वदा प्रलोभ पक्षों में समीप, विप्रहिता, विद्या, प्रत्या-राहित्य, आत्मज्ञान और तितिक्षा ये साधारण धर्म हैं। धार्यात् इति धार्या की धर्म कर सकते हैं। विष्णु संहिता में धर्म का लक्षण इस प्रकार लिखा है—

“समा सत्यं दमः शौचं दानं धर्मियधर्मः ।

अदिसागुच्छुश्रातीर्षावर्णं दया ॥

आर्जवं कोमलपदं देवताधर्मधर्मः ।

अनन्तरं यथा य धर्मः धार्याय सत्यते ॥”

(विष्णुसंहिता)

समा, सत्य, दम, शौच, दान, इन्द्रियनिग्रह, अहिंसा, शुद्धी श्रुत्या, तीर्थानुसरण, दया, कृत्तुता, मोम-राहित्य, देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा तथा प्रत्या-राहित्य, ये सब साधारण धर्म हैं। धार्यात् इति धर्म पालन कर सकते हैं। जो लोग इन धर्मोंका अनुष्ठान करते रहते हैं, वे मोक्षपद पाने के अधिकारी और धार्मिक कहलाने के लयुक्त हैं। विष्णु धर्मोत्तरने धर्म का लक्षण इस प्रकार लिखा है—

“तस्य धार्याय यत्नं तपोदाय” दया धर्मा ।

मोक्षधर्म तथा धर्म धीर्षावर्णं धर्म ॥

स्वाध्यायवेद्याध्यानां धर्माश्च धार्याय ॥

धर्माश्च धार्याय धार्याय धर्माश्च धर्मा ॥

इन्द्रियाणां यमोर्वेद्यं ब्रह्मचर्यममराणां ।
गङ्गास्नानं शिवो देवो विप्रवृत्तामचिन्तनं ॥
पञ्चन नागपदपदं तस्य संधेपाहमं कश्चन ॥

(विष्णुसमोत्तर ।)

यजन, लपय्या, दान, सर्वभूतोंमें दया, चमा, ब्रह्म-
चर्य, सत्य, तीर्थयात्रा, स्नायवा, माधुघोकी सेवा, स-
वास, देवाचन, गुरुश्रवण, ब्राह्मण-पूजा, इन्द्रियसंयम
आत्मसं-राहित्य, गङ्गास्नान, शिवपूजा, आत्मचिन्तन और
नारायणका ध्यान इन सब छत्तीसों धर्म कहते हैं ।

विश्वामित्रने धर्मका लक्षण इस प्रकार किया है—

“यमार्याः कियमाणं हि शास्त्रमयामयेधिनः ।

स धर्मो यं विनर्दिष्टं तमपरि प्रचलते ॥” (विराटिन)

“प्रवृत्तश्च निवृत्तश्च प्रियं कर्मपरिक” ।

सर्गादौ सृजता सृष्टं ब्रह्मण वेदरूपिणा ॥

महत्तमं तको धर्मो गुणतन्त्रिभेदो भवेत् ।

सावित्री राजसर्पैश्च तामसद्वेष्टे भेदतः ॥

कार्यपुण्या च दारुणे मोक्षोपि कतवर्जितः ।

क्रियते द्विजः कर्मह सत्तात्त्विकमुदाहृतः ॥

मोक्षावेदं करोमीति सत्कल्प क्रियते तु यत् ।

तत्कर्म राजसं हेतुं न गाक्षात् मोक्षहृत् भवेत् ॥

कार्यपुण्यापेक्षं यत् कर्मविषयपेक्षया ।

क्रियते द्विजवैह सत्तात्त्विकमुदाहृतः ॥”

आगमसत्त्वज्ञ धर्मगण जिस कार्यको करते एवं
जिसकी प्रशंसा करते हैं, उसे धर्म कहते हैं और
जिसकी भी निन्दा करते हैं, उसे अधर्म । ब्रह्मनि सृष्टिके
पक्षमें प्रवृत्त और निवृत्त इन दोनों प्रकारके वैदिक
कर्मोंका निर्देश किया है । इनमेंसे प्रवृत्त लक्षणवाले
कर्मका नाम धर्म है, जो गुणभेदानुसार तीन प्रकार-
का है—सात्विक, राजसिक और तामसिक । जिस
कर्ममें किसी प्रकार फलको कामना नहीं रहती, उसे
सात्विक धर्म कहते हैं ; इसके अनुष्ठानमें मोक्षकी प्राप्ति
होती है । मोक्षक निमित्त मत्कल्प करके जो कार्य किया
जाता है, उसका नाम राजसिक धर्म है । कार्यमें विविध
परिधा न करके केवल कार्यशुद्धि जो कार्य किया
जाता है, उसे तामस धर्म कहते हैं । आज्ञासे तथा
हिंसासे बने हुए धर्मका वर्णन उर्ध्वी शब्दमें देना ।

माना धर्ममें इस धर्म, शब्दका व्यवहार होता है ।
यह शब्द संस्कृत भाषाका है । संस्कृतमें जिन जिन धर्म-
में इसका व्यवहार होता है, हिन्दीमें भी उन्हीं धर्मोंमें
होता है । इसमें सिया और ओ एन विशेष धर्ममें इस-
का व्यवहार दृष्टिगोचर होता है; उन्हीं धर्मोंकी यहां
प्रयोगता है । स्मृतिप्रणितानि माना जातियों और माना
देवोंमें माना प्रणामियोंमें ईश्वरोगमना की जाती है ।
इन विभिन्न ईश्वरोगमनाकी प्रणामियोंको साधारणतः
“धर्म” कहते हैं । परन्तु जिन भाषासे यह शब्द लिया
गया है, उस भाषाके कोई भी प्राचीन ग्रन्थमें “धर्म”
शब्दका ऐसा धर्म दृष्टिगत नहीं होता । “हिन्दूधर्म”
“ईजधर्म” “बौद्धधर्म” “मुसलमानधर्म” “सैराईधर्म”
इत्यादि स्थानोंमें “धर्म” शब्दका जो धर्म किया जाता
है एवं हिन्दी भाषाओंमें ऐसे प्रयोगमें “धर्मका” जो पद
गिनाया जाता है, यह धर्म संस्कृत भाषाओंमें नहीं है ।

संस्कृत भाषाओंमें सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेदमें “धर्म”
शब्दका उल्लेख है । जैसे—

“श्रीणि पदा विचक्रमे विष्णोर्गात्रा भद्रधरः । भती धर्मणि
धारयन् ॥” (ऋक् १२.२१.२८)

पर्याप्त परीक्षणमें प्राकामर्गमें विवाद परिमित स्थानमें
द्वितीयक निर्माण कर लनेमें धर्मोंकी धारण किया है ।
यहां “धर्म” शब्दका धर्म जगत्त्रिषोदक नियमोंका समूह
होता है । अंगरेजीमें laws कहतेमें जिस धर्मका
बोध होता है यहां “धर्म” शब्दका प्रायः ऐसा ही धर्म
होता है ।

२ समुच्चयों में लिए जो कर्तव्य और पाठशालीय बत-
लाया गया है, वही धर्म है । स्मृतिग्राह्यमें धर्म शब्दका
ऐसा ही धर्म मिलता है ।

श्रुति और स्मृतिधर्मोंमें धर्म शब्दके धर्मका जो विरोधा-
भास पाया जाता है, उसकी विधानोंमें इस प्रकार
सोमांसा की है, कि दोनों ही धर्मोत्तर द्वारा प्रतिष्ठित या
व्यवस्थित हैं, इसमें विरोध जान बोनकी श्रद्धा नहीं ।

३ स्मृतिकारोंमें मनु जी प्रधान समझे जाते हैं ।
उन्होंने अपने ही धर्मिक दितोय पञ्चायमें “धर्म” की
सोमांसा करने हुए कहा है, कि रागद्वेष परिग्रह विद्वान्
और साधुगण समाजमें जिन नियमोंका पालन करते हैं,

उसीको धर्म कहते हैं। इसी अर्थसे वर्णाचार, आश्रमाचार, सदाचार आदिको धर्म कहा गया है।

४ पुराणों में धर्मका एकाग्र देखनेमें नहीं आता। नाना स्थानों पर नाना अर्थों में धर्म शब्द प्रयुक्त हुआ है। धीरे धीरे वे ही अर्थ काव्यानाटक आदिमें प्रविष्ट हुए हैं। धर्म शब्दके किन्तु जितने भी लौकिक प्रयोग देखे जाते हैं, नीचे उनका विस्तृत विवरण दिया जाता है।

५ मनोवृत्तियोंको धर्म कहते हैं, जैसे—दयाधर्म, अहिंसा परमधर्म, सत्यधर्म, क्रोध अपहृत धर्म। मनुके मतसे, जहाँ सदाचार धर्मके नामसे कहा जाता है, वही सदाचार धर्मके अर्थमें सहोचन और उत्कर्ष हो कर ऐसा अर्थ होता है।

६ इन्द्रियोंके कार्योंका भी धर्मके नामसे उल्लेख होता है; जैसे—चक्षुषा धर्म दर्शन, मनका धर्म चिन्ता इत्यादि। वैदिक अर्थसे इस अर्थको उत्पत्ति हुई है, ऐसा अनुमान किया जाता है।

७ कर्तव्य भी धर्म कहलाता है, जैसे—पिताका धर्म, पुत्रका धर्म, पतिपत्नीका धर्म, भृत्यका धर्म इत्यादि। यह भी स्मृत्युक्त 'मदाचार' अर्थसे उद्भूत है।

८ शुष्की क्रियाका नाम भी धर्म है, जैसे—श्रीतका धर्म सहोचन, तापका धर्म सम्भारण इत्यादि। यह वैदिक अर्थसे उद्भूत है।

९ हत्यगुहारिणी क्रियाको भी धर्म कहते हैं, जैसे—धीरधर्म, दस्युका धर्म, याजका धर्म, व्यवसायका धर्म इत्यादि। यह अर्थ भी स्मृत्युक्त वर्णाचार, आश्रमाचार आदि अर्थसे उत्पन्न है।

१० देवमनुष्य मनुष्यक श्रेणीगत और आचारगत व्यवहारादिके विषयत्वकी भा धर्म कहते हैं। जैसे—पण्डितोंका धर्म, रोमनोंका धर्म इत्यादि। इनको भा उत्पत्ति आचार अर्थसे है।

११ पदार्थके शुष्की धर्म कहते हैं, जैसे—जीवधर्म। यहाँ धर्म शब्दसे आहार, निद्रा, भय, मोक्ष नाटिशुष्की केवल जीवमें हो होते हैं, हललतादिमें नहीं मोक्ष होता है, इसी प्रकार यशुधर्म, मनुष्यधर्म, पशुधर्म आदिसे यशुत्व, मनुष्यत्व, पशुत्व आदिका बोध होता है।

१२ काल एवं युगादिके भेदसे मानवाचारके भेदको भी धर्म कहा जाता है; जैसे—कालधर्म, युगधर्म, मनुके समयका धर्म, युधिष्ठिरके समयका धर्म, अकबरके समयका धर्म, अनेकैतिहासिक धर्म इत्यादि।

१३ कुछ विशेष विशेष व्यापारकी समष्टिको भी धर्म कहते हैं, जैसे—जागतिक धर्म, लौकिक धर्म, सामाजिक धर्म, कौलिक धर्म, दैहिक धर्म, मानसिक धर्म इत्यादि।

इन अर्थोंके प्रतिरिक्त धर्म शब्दका एक विशेष अर्थ भी है, जिसका कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है (जैसे—'हिन्दूधर्म' 'जैनधर्म' 'बौद्धधर्म' पादि)। अब उसीके सम्बन्धमें विग्रह भालोचना की जाती है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि हिन्दूधर्म, बौद्धधर्म, सुनसमान-धर्म आदि स्थानों पर हिन्दुओं में जमा अर्थ होता है, संस्कृतमें 'धर्म' नहीं होता। हिन्दुओं में यह अर्थ कैसे प्रचलित हुआ, कहाँसे आया इसको कुछ भालोचना करने की चाहिए। 'धर्म' जो भाषाके बहुतसे शब्द इस समय हिन्दु भाषाके पशुभूत हो गये हैं और कुछ शब्दोंके अर्थ एवं भावाँने हिन्दु भाषा में तद्वाचकाशक भा अर्थके निकट सम्बन्धयुक्त शब्दोंमें न स्थापित हो कर उन शब्दोंका एक एक नया अर्थ कर डाला है। 'धर्म' लोके Religion, nation, आदि शब्द इसी श्रेणीकी जाति के हैं। 'धर्म' जो कि Religion शब्दसे विभिन्न जातीय विभिन्न ईश्वरोपासना प्रणालीका बोध होता है। संस्कृतमें ईश्वरोपासना-प्रणाली 'आचार' शब्दके अर्थान्तर्गत है; सुतराँ धर्म शब्दसे आचारका बोध कराते हुए तामसः अर्थ सहचित हो कर आचारके विभिन्नार्थों को धर्मके नामसे कहने लगे। ऐसा दृष्टिमें 'रिजिजन' शब्दका अर्थ 'धर्म' शब्दमें प्रविष्ट हो गया। रिजिजन शब्दका बहुवचन प्रतिशब्द हिन्दु या संस्कृत भाषा में न होनेके कारण बहुत कुछ नैकटविगिष्ट होनेसे क्रमशः 'धर्म' शब्द ही बहुवचन व्यवहृत होने लगा। 'धर्म' जो Religion शब्दमें और हिन्दु धर्म शब्दमें किन्तु पयस्कृत है, यहाँ उतना देना उचित है। रिजिजन कहनेसे पारलौकिक विश्वास, ऐश्वर्य विश्वास, विभिन्न कथामना-प्रणाली और तत्संबन्धित उक्त-उपवास-प्रायश्चित्तादिका जो एकाभूत

उसीको धर्म कहते हैं। इसी धर्म से वर्णाचार, आश्रमाचार, सदाचार आदिको धर्म कहा गया है।

४ पुराणों में धर्म का एकार्थ देखने में नहीं आता। नाना स्थानों पर नाना अर्थों में धर्म शब्द प्रयुक्त हुआ है। धीरे धीरे वे ही धर्म काव्यनाटक आदि में प्रविष्ट हुए हैं। धर्म शब्द के किन्तु जितने भी लौकिक प्रयोग देखे जाते हैं, नीचे उनका विस्तृत विवरण दिया जाता है।

५ मनुस्मृतियों को धर्म कहते हैं। जैसे—दयाधर्म, अहिंसा परमधर्म, सत्यधर्म, क्रोध प्रपन्न धर्म। मनु के मत से, जहाँ सदाचार धर्म के नाम से कहा जाता है, वही सदाचार धर्म के अर्थ में सङ्कीर्ण और उत्कर्ष हो कर ऐसा अर्थ होता है।

६ हिन्दुओं के कार्यों का भी धर्म के नाम से उल्लेख होता है; जैसे—चरुका धर्म दमन, मनका धर्म चिन्ता इत्यादि। वैदिक धर्म से इस धर्म को उत्पत्ति हुई है, ऐसा अनुमान किया जाता है।

७ कर्त्तव्य भी धर्म कहलाता है, जैसे—पिताका धर्म, पुत्रका धर्म, पतिपत्नीका धर्म, श्रमका धर्म इत्यादि। यह भी स्मृत्युक्त 'सदाचार' धर्म से उद्भूत है।

८ गुणकी क्रियाका नाम भी धर्म है, जैसे—श्रीतन्त्रका धर्म सङ्कीर्ण, तापका धर्म सम्प्रसारण इत्यादि। यह वैदिक धर्म से उद्भूत है।

९ ह्यनुसारिणी क्रियाको भी धर्म कहते हैं, जैसे—पौरधर्म, दश्युका धर्म, राजका धर्म, श्रमका धर्म इत्यादि। यह धर्म भी स्मृत्युक्त वर्णाचार, आश्रमाचार आदि धर्म से उत्पन्न है।

१० ऐश्वर्य से मनुष्य के श्रेष्ठता और आचारगत व्यवहार के विमर्शको भी धर्म कहते हैं। जैसे—कर्मको धर्म, रोमको धर्म इत्यादि। इसको भी उत्पत्ति आचार धर्म से है।

११ पदार्थ के गुणको धर्म कहते हैं, जैसे—जोषधर्म। यहाँ धर्म शब्द से आहार, निद्रा, भय, मोह आदि-गुण की केषल लीधर्म हो होते हैं, उत्पत्ति आदि में नहीं मोह होता है, इसी प्रकार यशुधर्म, मनुष्यधर्म, पशुधर्म आदि से वशुधर्म, मनुष्यधर्म, पशुधर्म आदिका मोह होता है।

१२ काल एवं युगादिके भेद में मानवाचार के भेदको भी धर्म कहा जाता है; जैसे—कालधर्म, युगधर्म, मनुके समयका धर्म, युधिष्ठिरके समयका धर्म, अकस्मिक समयका धर्म, धर्म निष्ठाधर्म इत्यादि।

१३ कुछ विशेष विशेष व्यापारकी समष्टिको भी धर्म कहते हैं। जैसे—आगतिक धर्म, लौकिक धर्म, मानात्मिक धर्म, बौलिक धर्म, दैहिक धर्म, मानसिक धर्म इत्यादि।

इन अर्थों के अतिरिक्त धर्म शब्द का एक विशेष अर्थ और भी है, जिसका कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है (जैसे—'हिन्दूधर्म' 'जैनधर्म' 'बौद्धधर्म' आदि)। अब उसीके सम्बन्ध में विषय आलोचना की जाती है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि हिन्दूधर्म, बौद्धधर्म, मुसलमान-धर्म आदि स्थानों पर हिन्दुओं में जैसा अर्थ होता है, संस्कृत में वैसा नहीं होता। हिन्दु में यह धर्म कैसे प्रचलित हुआ, कहाँ से आया इसका कुछ आलोचना करने को चाहिए। धर्म जो भाषा में बहुत से शब्द इस समय हिन्दु भाषा के पदोद्भूत हो गये हैं और कुछ शब्दों के अर्थ एवं भाषा में हिन्दु भाषा में तद्वाचका शब्द या धर्म के निकट सम्बन्धित शब्दों में संज्ञा मिलती है कर उन शब्दों का एक एक अर्थ कर डाला है। धर्म-शब्द के Religion, nation, आदि शब्द इसी श्रेणी में आते हैं। धर्म जो के Religion शब्द के विभिन्न जातीय विभिन्न ईश्वरोपासना-प्रणाली का बोध होता है। संस्कृत में ईश्वरोपासना-प्रणाली 'आचार' शब्द के अर्थान्तर्गत है; सुतरां धर्म शब्द से आचार का बोध कराते हुए क्रमशः धर्म मङ्गलित हो कर आचार के विभिन्नार्थों में धर्म के नाम से अङ्गीकृत हो गये। ऐश्वर्य दायिनी 'रिजिजन' शब्द का अर्थ 'धर्म' शब्द में प्रविष्ट हो गया। रिजिजन शब्द का अर्थ प्रतिशब्द हिन्दु वा संस्कृत भाषा में न होने के कारण बहुत कुछ नैकटविधित होने से क्रमशः 'धर्म' शब्द हो बहुत व्यवहृत होने लगा। धर्म जो Religion शब्द में और हिन्दु धर्म शब्द में कितनी पचता है, यहाँ जतना देना उचित है। रिजिजन कहने से पारमौलिक विज्ञान, ऐश्वर्य विज्ञान, विभिन्न उपासना-प्रणाली और तत्संबन्धित सम्प्रदाय-आचार-विधान आदि का जो एकात्म

भाव इदयमें उदित होता है, धर्म शब्दके आचारायके भी उत समस्त भावोंका आभास पाया जाता है, किन्तु 'रिषीजन्' देगादिके सेदेवे सत्य वा मिथ्या हो सकता है, ऐसा भाव धर्म शब्दमें किसी प्रकार भी प्रकट नहीं होता। ईश्वरोपासना ही प्रयासो एक सत्य हो और एक मिथ्या, यह हो ही नहीं सकता। धर्मका अर्थ जब आचार होता है, तब जो आचार भेदे जिये पादरपोय है, वह दूसरेके लिए अनादरपोय हो सकता है, किन्तु मिथ्या नहीं हो सकता, ऐसा ही अर्थ प्रकट होता है। मेरा Religion सत्य है, दूसरेका मिथ्या है, ऐसा कहा जा सकता है, किन्तु मेरा धर्म सत्य है, दूसरेका मिथ्या है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। धर्म शब्दमें ऐसा भाव कुछ भी नहीं है। धर्म एक है बहुत नहीं, परन्तु रिषीजन् कभी भी एक नहीं हो सकता। Religion और धर्म शब्दमें हम प्रकारका पाठ्य देव कर तथा धर्म शब्दवे अर्थको हिन्दी भाषामें परिष्कृत करनेके लिये बहुत दिनोंसे अनेक विद्वान् अनेक शब्दोंकी आलोचना कर रहे हैं। उनकी गवेषाके फलस्वरूप सप्रति एक शब्द स्थिराकृत हुआ है, जिसका विवरण नीचे दिया जाता है।

गीताके अथर्व अध्यायमें लिखा है—

“दे यथा नां प्रपद्यते तत्सर्वेषु मन्त्रात्मजम्।

मम कर्मानुवर्तन्ते लोकेऽस्मिन् पाशं सर्वथा ॥ ११ ॥”

अर्थात् जो जिस रूपसे मेरा भजन करता है, मैं उसके उसी प्रकारसे भजन करता हूँ। इस लोकमें सभी भेदे 'पद'का ही अनुवर्तन करते हैं।

गीताके इस श्लोकके 'मन्त्र' शब्द 'भजनमार्ग' अर्थ प्रकट होता है। ओषरक्षामोनि पद्मी टोकामें समझाया है, कि इन्द्रादि बहुदेवीवासकगण भी अपने अपने देवताओंकी उपासना द्वारा भगवान् की ही उपासना करते हैं। अब ओषरक्षामोकी कथित इन्द्रादि बहुदेवीउपासना की यदि और भी विस्तृत अर्थ बोधक मान लिया जाय, तो भी दोष नहीं पाता। कारण हिन्दूधर्ममें किसी भी धर्मकी मिथ्या वा अफसदायी नहीं माना है। हमके विषा और भी एक प्रसिद्ध श्लोक देखनेसे पाता है—

“वेद विभिन्ना इत्यपि विभिन्ना नागो मुनिर्वैश्वं सत्यं न भिन्नम्।

धर्मश्च तत्र विहितः प्रत्यक्षं महात्मनो देवः न वचनात् ॥”

अर्थात् वेद परस्पर विभिन्न विधानदाता हैं, एतन्निघो भी वैसी ही हैं। ऐसे कोई भी मुनि नहीं हुए जो स्वतन्त्र मतावलम्बो न हो। धर्मका तब मुझमें पूरा है, दुर्बोध है, इसलिए महाजन जिस प्रकार वा जिस मार्ग पर चल रहे हैं, वही पन्था है।

इस स्थान पर 'पन्था' शब्दका अर्थ भी उपासना-प्रधानो है। जरा विचारितसे विचार कर देखा जाय तो मान्य होगा कि इसका अर्थ बहुत अर्थोंमें अर्थोंकी Religion शब्दके समान हो सकता है। गीताके 'मन्त्र'की भी 'पन्था' कहा जाय, तो कोई हानि नहीं। Religion और धर्ममें जितना प्रभेद है, हम श्लोकके 'धर्म' और 'पन्था'में उतना ही प्रभेद सूचित होता है। हम श्लोकसे मान्य होता है, कि धर्मतत्त्व मान्य नहीं है, कोनसा धर्म पादरपोय है इसका निर्णय करना भी अवशय है, किन्तु महाजन जिस 'पन्था' पर चल कर उसे दूसरेके लिए निर्देश कर गये हैं, वह पदसाक्षत सुपरिज्ञात है, मागे इगारेमें उसे ही अवलोकन करनेकी कहा जाता रहा है। अब यह निर्णय करना चाहिए कि एक श्लोक कहे हुए महाजन कोनसे हैं? हिन्दुओं की समझसे अवगण्य ही महाजन हैं। स्वरां अवि नामक महाजन जिस मार्ग पर चले हैं, वही 'पन्था' है। इस तरह यदि ईश्वरमोक्ष, महम्मद, बुद्ध, जैमिनी पादिको भी महाजन मान लिया जाय, तो कोई हानि नहीं। क्योंकि जिस प्रकार धर्मत्वकी पदोप समझ कर उसके उद्धारके लिए अविनाश विभिन्न 'पन्था' बता गये हैं, उसी प्रकार ईश्वरमोक्ष, महम्मद पादि भी वही धर्मतत्त्वके निदयपदके लिए एक एक पद निर्देश कर गये हैं। इस प्रकार विवेचना करके इस 'पन्था' शब्दकी यदि अर्थोंकी Religion शब्दका हिन्दी वा संस्कृत भाषाका प्रतिपद मान लिया जाय, तो सम्भवतः कोई हानि नहीं। 'पन्था' शब्दका यथायथ अर्थ 'पद' वा 'उपाय' है। हिन्दी भाषामें पन्था वा अन्धका प्रयोग न हो, ऐसा नहीं। उदाहरणार्थ 'कबोरपन्थी' 'नानकपन्थी' 'तरापन्थी' 'बौद्धपन्थी' 'टिहियापन्थी' 'अधोपन्थी' पादि अनेक शब्द मिल सकते हैं। इसी

प्रकारें सुमनसार्गोंकी मन्त्रपदपत्रों, ईसाइयोंकी खूट-पत्रों, बौद्धोंकी बुद्धपत्रों इत्यादि कहा जा सकता है; इसमें कोई अर्थानि होनेकी सम्भावना नहीं। मन्त्र-पत्रोंमें जैसे पन्था शब्द गमनाय सूचक है, उसी प्रकार धर्मोपदेशक शब्द 'मज्झिम' शब्द 'जडिम' इस गमनाय धातुसे निकला है। इससे भी यह प्रकट होता है कि 'मज्झिम' और 'पन्था' एक भावात्मक शब्द हैं तथा सुसंयोजन लोग 'मज्झिम' शब्द द्वारा ही Religion शब्दको प्रकट करते हैं। वेदोंमें एक जगह पन्था शब्द 'मज्झिमार्ग' अर्थमें प्रयुक्त हुआ है,—

"अथ पन्था भवति पुराणो अतो देवा उद्गमन्ते विश्वे।"

यहां पन्था शब्दका अर्थ साधारण गमन-पथ भी है और मज्झिमार्ग भी।

अब कहना यह है कि जब तक इस ग्रीक अर्थमें शब्दका बहुत व्यवहार न होगा, तब तक Religion का हिन्दू अनुवाद 'धर्म' शब्दसे ही किया जायगा; इस-लिए Religion ('रिलीजन') शब्दोंमें जो कुछ लिखा जाना चाहिए, उसे यहीं लिखा जाता है।

जगतके सम्पूर्ण धर्मोंके निरूपणके लिए, प्राच्य विद्वान् गवेषणा-द्वारा जिन सत्योंका निर्धारण कर सकते हैं, वे बड़े-पाठ्यपत्रक हैं; यहाँ उनको कुछ पाली-पन्था की जाती है। धर्मविज्ञान (Science of Religion) की पालीपन्थामें प्राच्य विद्वान् थोड़े दिनोंसे प्रसरण हुए हैं। ऐसा नहीं; बहुत प्राचीन कालसे ही उनमें पन्थाको दार्शनिकता प्रचारित थी; किन्तु वह प्रायः कल्पनाओं पर निर्भर थी। कल्पनाओं द्वारा मीमांसा करनेके सिवा उस समय इस विषयमें ज्ञानवीजके साथ अनुसन्धान करनेका आयोजन वा सुविधा विद्यमान नहीं। अतिसामान्य स्वकी आधार पर गवेषणा-द्वारा उस समयके प्राच्य दार्शनिक विद्वान् इस विषयमें जितनी भी दार्शनिक मीमांसा कर गये हैं, उन्हें एक प्रकारसे उनकी कल्पनाओंका फल कहना चाहिए। उनमें ग्रीक, रोमक और कुछ प्राच्य जातियोंके पौराणिक देव-देवियोंके इतिहासादिका विश्लेषण और व्याख्या कर उनके निरूपणको चेष्टा की थी; किन्तु उपयुक्त आयोजन के अभावसे वह भी एक प्रकारसे व्यर्थ हुई। पौराणिक

ज्ञानकी हटाते हटाते वे कुछ रूपक, हटाने इत्यादिकी मृष्टि कर बैठे हैं और कहीं कहीं कल्पनाके बल पर कुछ कुछ दार्शनिकता भी स्थिर कर गये हैं। उस समय दार्शनिकताकी तरह धर्मोंकी ऐश्वर्यिकता भी प्रचलित थी; जिनकी पालीपन्था कर प्राचीन प्राच्य विद्वान्गण, एकको छोड़ कर बाकी सबको मिथ्या अर्थात् ऐश्वर्यिकता-हीन बतला गये हैं। उस समयके 'मोग सिक' दार्शनिकताकी ही प्राकृतधर्म समझते थे। किन्तु अब वह भी कुसंस्कार समझ कर उपेक्षित हुआ करती है। वर्तमान विद्वानोंका कहना है कि कुछ कौगलो और स्वार्थी याजकोंके चक्रान्तसे ही इनको उत्पत्ति हुई है।

ग्रैसमें १८वीं शताब्दीमें धर्मविज्ञानकी पालीपन्थाके लिए इतिहासके प्रबलमूल पर जो सुप्रमाणोक्त अनुसन्धान प्रारम्भ हुआ, वह गत १८वीं शताब्दीके प्रमाणोंका फल प्रत्यक्ष नहीं। इससे जो कुछ मीमांसित हुआ है उससे प्रमाणित होता है कि उस समय जो मूल निर्धारित हुआ है वह बहुत अंशमें कल्पित है, सुप्रमाणोक्त नहीं है। क्लिष्टज्ञान, भारतीय, पौराणिक आदि कुछ जातियोंके मूल शास्त्रग्रन्थों (अर्थात् जिन भाषाओं में पद्य सर्व प्रथम लिखे गये हैं, उन धर्मों)की पढ़ कर, मिश्रदेशकी विज्ञापितियों (Heiroglyphics) का पाठोद्धार कर तथा प्राचीन और बाबिलोनिय कीपाकार लिपियोंका पाठोद्धार कर इस विषयमें जो मूल संश्लेषण हुए हैं, उससे अति प्राचीनकालसे अब तक धर्मजगत्का एक इतिहास बनाया जा सकता है और उस इतिहासके आधार पर पालीपन्था करने रहनेसे किसी समय धर्मविज्ञान गठित हो सकता है।

धर्मतत्त्व क्या है? (What is religion?) इसकी मीमांसा करनेके लिए दो विषयोंकी विवेक पालीपन्था करना आवश्यक है,—१. प्रत्येक धर्मके ऐतिहासिक तत्त्वकी तुलनात्मक पालीपन्था और २. मानवके मनस्त्वकी पालीपन्था। इन दो विषयोंकी पालीपन्थासे धर्मतत्त्वका जो निर्णय होगा, उसके द्वारा सिर्फ विद्वत्समाजका कोटुल ही परिहार्य हो, धर्म नहीं। प्रत्युत इसके द्वारा मानव इतिहासकी उस प्रधान और प्रबल शक्तिका, जिससे जातियां गठित और नियुक्त

होती है, राजनीति का संगठन और धर्म होता है, चरित-मर्याद और सर्व्वर आचारादि भी मानव-समाजमें आधारके साथ गठित होती हैं, चरित् छया और मित्र कार्य भी आचरणीय होती हैं, तथा जो शक्ति चरित् सृष्टान् वीरताके कार्य, आत्मत्यागके कार्य और भक्तिके कार्य कराती है एवं मोक्ष लक्ष्य, विद्रोह और विषय उपस्थित करती है, एवं स्वाधीनता, सुख और आत्मिको प्रतिष्ठा करती है, उस प्रयत्नता शक्तिके धर्मरत्नों का निरूपण होता है।

अन्यान्य व्यापारों की तरह धर्मों का भी एक इतिहास है। इस इतिहासका जितना भी परिचय हो सके, उतना ही जान लेना उचित है। किस प्रकारसे उत्पन्न और विस्तृत हुए हैं, किस तरहसे उनको उत्पत्ति और धर्म हुआ है, उनकी ऐतिहिक मूलमें व्यक्तित्व का जातिगत ज्ञान को कार्यकारिता जितनी है; यदि सम्भव हो, तो किन किन नियमों के अधीन उनकी उत्पत्ति हुई है, इसके निरूपण; मूल, विज्ञान और लक्ष्यव्यापक साथ उनकी कितनी घनिष्टता है, राज्य और समाजके साथ उनकी कितना सम्पर्क है तथा मोतिके साथ कितना सम्बन्ध है, उनका पारस्परिक ऐतिहासिक सम्बन्ध क्या है अर्थात् कौन किससे उत्पन्न हुआ है वा कुछ अन्य एक विशेष पक्षसे उत्पन्न है या नहीं, इत्यादि गया विमर्शजोन धर्म के साथ उनमें प्रत्येकका सम्पर्क कैसा है? इन सब बातोंका जानना आवश्यक और उचित है। इस प्रकार की आलोचनासे धर्मों का क्रमविकास निर्धारित हो सकता है।

क्रमविकास निर्धारण करनेसे पहले धर्मों का संगठन पर विचार करना उचित है। प्रत्येक धर्मके दो प्रधान उपादान पाये जाते हैं—एक आनुभविक (Theoretical) और दूसरा आनुष्ठानिक (Practical); इनमेंसे पहलेकी धर्मभाव और दूसरेकी धर्मकार्य कहा जा सकता है।

धर्मभाव सम्बन्धतः परजुट धारणा (Ague conceptions), पौराणिक कथा (concrete myths), प्रदक्षन रीति (Prescriptive dogmas) इत्यादि उत्पन्न हैं और वे प्रवाद धर्ममात्रों में प्रारब्ध हो सकते हैं। इसकी सिद्धांता

धर्ममें महाजनोपदेश (Doctrine) नामसे भी एक विषय पाया जाता है। ये उपदेश दो ठन धर्मोंके प्रधान सचय हैं; परन्तु ये चाहे कितने ही महान् कर्म न हो, मात्र उनके ही धर्म नहीं कहा जा सकता। उनमें सिद्धा प्रत्येक धर्ममें कुछ नियम और आचार हैं, उनमें भी सचयसे नैतिक (Moral) और आचारिक (Ethical) सम्बन्धको लिये हुए हैं। इन दोनोंमें एक ऐसा सम्बन्ध है, कि एक दूसरेसे प्रयत्न कर लिया जाय तो फिर किसी भी धर्मको सत्ता न रहेगी। इन दोनों भागोंकी एकत्र करनेसे एक धर्मका संगठन तो होता है, किन्तु वह एक विश्वास (Belief) पर अनुप्राणित हुआ करता है। धर्मके संगठनके समय जो उपदेश और आचारादि संघटित होती हैं, उनमें से इस विभाजकी उत्पत्ति है।

इन विषयोंके सुखतत्त्व जाननेके लिए एकमात्र तुलनात्मक आलोचना ही उपाय है। तुलनात्मक पद्धतिसे समालोचना करने पर पंच दो भागोंमें विभक्त हो जाते हैं। १. इसका आनुष्ठानिक विभाग है, अर्थात् प्रत्येकके पौराणिक, औपदेशिक और आचारिक मूलतत्त्वोंका अनुसन्धान कर जिसके साथ जिसका जितना सादृश्य हो, उनके पारस्परिक विचार और आलोचना द्वारा एक मूल स्थिर किया जा सकता है। इनमें से क्रमविकास प्रदर्शित हो सकता है। इस क्रमविकासके स्थिर करनेसे पहले, उनमें से जिस नियमसे मानवके सम्बन्ध-विकासके इतिहासका आविष्कार किया है, उस नियमसे मानवका आदिम कालमें एक स्थानमें वास, एक माताका व्यवहार इत्यादि शोकार कर प्रत्येक धर्ममें व्यवहृत मन्त्रादिका समत्व वा नैकट तथा आचारादिका समत्व वा नैकत्व निरूपित कर समस्त धर्मोंकी प्रथमतः दो प्रधान विभागोंमें विभक्त किया है—(१) प्राचीन धर्मधर्म और (२) वैमिश्रधर्म।

यूरोप और एशियाकी जितनी भी सभ्य जातियाँ कार्यजातिसे उत्पन्न हुई हैं, उनमें एक ही धर्म था, ऐसा मान लिया गया है। यूरोपकी कार्यजातिमें जर्मनजाति चरित् प्राचीन है और एशियाकी कार्यजातिमें हिन्दू जाति। इसलिये उक्त समय जातिके एकत्र

समयके धर्म की प्राचीन धार्य धर्म वा हिन्दू धर्म नोका धर्म कहा जा सकता है। धार्यों के विधा और जो सम्भ जातियाँ एशिया के पश्चिम खण्ड में बास करती हैं, उनको प्रादिम धर्मों के धर्म की उक्त नियमानुसार सेमिटिक धर्म कह सकते हैं।

प्राचीन धार्य धर्म—ऐतिहासिक कालमें जिन धर्मों वा पंथों की उत्पत्ति हुई है धार्यों कनफूषो मत, बौद्धमत, ख्रिष्टमत, महाभदीय मत तथा अन्य सामान्य कुछ मत जिनके सृष्टिप्रभाव और धर्मों का इतिहास मालूम है, उनको उत्पत्ति और पारस्परिक सम्पर्क का निर्णय करना सज्ज है। किन्तु जो धर्म सिद्धान्तिक हैं, जिनके सृष्टिप्रभाव और धर्मों के विज्ञान-जनक विषयादि सङ्गृहीत नहीं हैं, उनके पारस्परिक सम्पर्क के निर्णय के लिए उन्हीं के और साधारण व्यवहारों की तुलना करना आवश्यक है। अध्यापक मोक्ष-मूलरका कहना है, कि भाषागत साहस्य के निरूपण-द्वारा ही वे मानव-इतिहास के अनेक लटित विषय भीमांशित हुए हैं, उसी प्रकार इसकी भी हो सकते हैं। इस प्रकारके पाश्चात्य विद्वानों ने भाषागत धर्मों के सम्बन्ध पर भीमांश की है, कि प्राच्य धर्म जातियों (भारतीय धार्यगण, पारसिक धार्यगण, फ़िनीय (Phrygion) धार्यगण के तथा पाश्चात्य धार्यों (ग्रीक, रोमक, जर्मन, (Norseman) और स्लेटी स्लावीय (Lettoslavs) के (Celts) आदि जातियों के जो ईश्वर विभिन्न धर्म थे, वे सब उक्त प्राचीन धार्य वा हिन्दू धर्मों के धर्म से उत्पन्न हुए हैं। उससे बाद उनमें से कौनसा धर्म किससे निकला और कैसे उनका क्रमविकाय हुआ, इसका निर्णय जैसा भी हो पाया है, परन्तु (क, ख) तालिका में दिया जाता है; देख लें। यहाँ एक बात विशेषरूपसे बड़ी जायी है। यह यह है कि पाश्चात्य विद्वान्

० यूरोपीय मतसे जोशाके तीन पुत्र थे—रोम, सेम और जाकेत। इनके बँधुर लड़कियों और जाकेत के बँधुर लड़कियों में बास करते रहे (इसी बँधुरे भाग्य की उत्पत्ति है)। सेम के बँधुर पश्चिम एशिया में रहे। इन्हीं सेम के नामानुसार 'सेमिटिक' (Semitic) कबूकी उत्पत्ति हुई है। धार्यों के विधा भगवत् सम्भजातियों के लिए यही कबू प्रयुक्त होता है।

हिन्दुधर्म की तरह वेदकी अभ्यास वा परोक्ष्य नहीं मानते। वे किसी भी धर्म की ऐसा नहीं मानते; धर्म की ऐतिहासिक दृष्टि से देखते हैं। और तो क्या, धार्मिक की हकी निगाह से देखते हैं। उनको हम दृष्टि में हिंसा वा कुटिलता नहीं है। धर्म वेदकी उन्हीं की जगत् में सर्वोपेक्षा प्राचीन और मामाण्य धर्म माना है। ऋग्वेद के विषय में उन लोगों का कहना है, कि हमने प्राचीनत्व के विषय में लोगों का जितना विश्वास है, वास्तव में यह उतना प्राचीन नहीं है। इसमें भी प्राचीनतम कालका धर्म न पाया जाता है। उस प्राचीनतम काल के धर्म विज्ञानादि और साधारणों के साथ धार्मिक काल के साधारणों के मिश्रण-धर्मों में याजक, होता, उद्गाता, ब्रह्मा आदि द्वारा ऋग्वेद गठित हुआ है। जरयुद्ध के प्राचीन पारसिक धर्म के विषय में भी ऐसा कहा जा सकता है। प्राचीन धार्य शास्त्रों की ऐतिहासिकता में धर्म धार्यों के संगठित की कर उक्त धर्म की दृष्टि की है। अध्यापक डोमेटेटर (M. Jar Domestater) का कहना है, कि जरयुद्ध नामक एक वा धर्म धर्म-वैश्वारक प्राचीन धार्य राजनीतिकी धर्म धर्म मता-नुसार परिवर्तन कर उक्त रूप में गठन कर गये हैं। वैदिक और जरयुद्धों के धर्मों में जो एकत्व था नैक दृष्टिगोचर होता है, उससे अनुमित होता है कि जिनके समय बहो प्राच्य धार्यों का साधारण धर्म था। (क, ख) तालिका में उसी धर्म की "प्राच्य धार्य धर्म" कहा गया है। यह प्राच्य धार्य धर्म ईरानीय और भारतीय के भेद से दो प्रकार का हो गया था। ईरानीय में जरयुद्धों के और भारतीय में वैदिक धर्म की दृष्टि हुई है। विशेष विवरण (क, ख) तालिका में देको।

ऐतिहासिक धर्म—ऐतिहासिक धर्म के विषय में पाश्चात्य विद्वान् धर्म तक भी विषय पालोचना नहीं कर पाये हैं। कारण, पालोचना के योग्य धर्मों तक उतनी सामग्री सङ्गृहीत नहीं हुई है। ईसाई धर्म के पहले धर्मों के (Aramean), महाभदीय धर्म के पहले प्राचीन धर्मों और प्राचीन हिन्दुधर्म के जो धर्म प्रचलित थे, उनकी पालोचना द्वारा जितना सम्भव था, उतनी गहरे-गहरे करके देखा गया है कि प्राचीन धार्य धर्म की तरह उनका भी एक मूल था; विषयतः भाषागत साहस्य,

पाचारगन सादृश्य और नैकत्वकी होड़ देने पर भी समस्त मेमिटिक धर्मोंमें कुछ विमिश्रताएँ यह पाई जाती हैं कि धर्ममें प्रत्येक मानव और दूसरोंमें राजा प्रजा वा प्रभु दासका सम्बन्ध समझने से। उनमें प्रत्येक का सामुदायिक भाग बहुत छोटा था और वे दो एडेम्बरवादी थे। परन्तु और दूसरायेन देयके धर्मका श्रेष्ठ तथ्य एकेसरवाद है। मेमिटिक धर्म का कर्तव्यगम (श्र) ॥ निम्नमें देखना चाहिए।

भ्रातृका आरिध धर्म—मिस्रके प्राचीन पंच मेमिटिक वा पाच पंचोंके लक्षणालम्बन नहीं हैं। इनमें प्राचीन और सामुदायिक उपादान इस ढंगसे मिश्रित है, कि उनसे बहुतोंमें अनुमान कर लिया है कि पाच और मेमिटिक जातिके पार्श्वस्थ संघटित होनेसे पहले जब वे एक जातिके रूपमें व्यवस्थित थीं, उस समय सम्भवतः उनके धर्मपंचोंका पारस्परिक कुछ इसी ढंगका था। बहुतोंने इस बहुत जातिकी भूमध्य सागरीयधर्मों वा कर्शरीय जातिके नामसे प्रसिद्ध करना चाहा है। और बहुतोंने इस अनुमानकी स्वीकार करनेके लिए तैयार भी नहीं हैं। उनका कहना है, कि नौवाके तीन पुत्र नाम सेम और जाफेत की हामिटिक, मेमिटिक और जाफेटिक नामसे तीन जातियाँ उत्पन्न हुई थीं, उन सबका किसी जगह एकत्र मिल कर रहना और उसमें किसी समयमें एक बहुत जातिका अनुमान करना केवल कल्पनामात्र है। कारण इसका कोई निदर्शन नहीं मिलता। मेमोट विद्वानोंका कहना है, कि प्राचीन मिस्रके विषयमें हमें जितना साम्य है, उससे कहा जा सकता है कि मिस्रके लोग उस समय 'पुन्त' (Punt) नामकी एक जातिके साथ व्यापारिक करते थे। बाइबिलमें इस जातिका 'फुन्त' (Phut) नामसे उल्लेख है। इन पुन्तोंके साथ उनके धर्मसम्बन्ध सादृश्य था। और तो क्या पुन्तोंके देवकी (पश्चिम चरचकी) 'यवतमूनि' (Yavnetar) कहते थे। कुशी (Cushites) के विषयमें भी यह बात कही जा सकती है। मिस्रके दक्षिण प्रायद्वीप जाति 'कुश' नामसे परिचित होती थी। मेमिटिक जातिके नामसे पूर्वकालवर्ती एथियोपीय और कालानुवासी जाति भी हमी प्रसारमें मिस्रोंके साथ जातिगम

नुसार वा भौतिक उत्पत्तिके अनुसार मिश्र सम्बन्ध-विशिष्ट साम्य पड़ते हैं। बाइबिलके निमिस्र नामक पुस्तकमें 'पुन्त' और कुशीकी भी कहीं जातियोंमें शामिल कर लिया गया है। इन चार जातियोंके एकत्र पर विचार करनेसे, उनके धर्मके सम्बन्धमें यह अनुमान होता है कि किसी समय मेमिटिक धर्मपंचोंकी तरह इनका भी एक स्वतन्त्र पंच था, और धर्म पाच 'मेमिटिक धर्म' कह सकते हैं। दक्षिण-मिस्रियोटेनियाके धर्मपंचोंका साकादेय वा सुमिरिय (Aegyptian or Sumirian) पाच्य ही नहीं है। यह भी पनेकागमें मिस्रके धर्मांतर्गत है। इमोशग (Imoshag) वा 'बर्बरी' (Berbers) में इस नाम-धर्मके प्रचारमें पहले की धर्म था, उसकी भी प्रायः मिस्रके पंचके साथ सम्यक्ता थी, ऐसा अनुमान किया जाता है। इमोशगण लिब्यीय (Libyans), गंतुलीय (Gartulians), मरितनीय (Mauritanians) और नुमिदिय (Numidian) जातियोंके पूर्व पुत्र थे। इसीसे गवेषणा द्वारा ज्ञान हो सकता है कि मिस्रजातिके धर्म-पाचार व्यवहार इनमें भी प्रचलित हैं। परन्तु वास्तवमें ये सभी जातियाँ किसी समय मिस्र-जातिसे मिलाई-धी-धी नहीं का उनसे उत्पन्न हुई हैं वा नहीं, यहवा प्राचीन कालमें मिस्र-जातिके प्रभावसे इनमें उक्त विषय अनुसरणादि द्वारा प्रविष्ट हुए वा नहीं; इत्यादि बातोंका निश्चय करना कठिन है।

पूर्वज विषयोंकी गवेषणा-पूर्वक प्राप्ति करना करके प्राचीन विद्वानोंने यहाँ तक स्थिर किया है, कि मिस्रके धर्म-पंचोंके जितने भी भौतिक पाचार (Magic rites) और जैववादिक प्रचार (Animistic customs) देखनेमें पाते हैं, वे सब चकरीयाके सर्वत्र समस्त प्राचीन धर्मोंमें प्रायः समान हैं। बहुतोंने, इस प्रकारके एकत्र का सादृश्यकी देख कर ऐसा भी अनुमान करते हैं और उसकी बहुतसे विश्राम भी करते हैं, कि किसी समय एशियावासी ओपनिथेमिकोंने ऐतिहासिक आकारस्थे बहुत पहले इन जातियोंकी नीति कर, उनकी शिक्षा-कुल कर प्राप्त किया था, सम्भवतः उनकी ईशां इनमें ऐसे महानुभाव प्रचारित हुए हैं। यदि ऐसा हो है, तो

मानना होगा कि मिस्रके साट्रश्रयुक्त धर्म पंच निधियों धर्ममतसे उद्भूत हैं। इसके सिवा अफ्रीकाके अन्यान्य मौलिक धर्मों की खोज करना करके भी यही स्थिर किया जाता है कि उनमें प्रत्येकका प्रत्येकके साथ मेल है। पाश्चात्य विद्वानों ने गवेषणा द्वारा अफ्रीकाके सम्पूर्ण धर्म पंचों की प्रधानतः चार भागों में विभक्त किया है, जैसे—(१) कुशोद्यमत (Cushites) जो मिस्रको उत्तर-पूर्वीय जातियों में प्रचलित है, (२) बसन्तो निग्रितीयमत (Nigritian proper) जो मध्य और पाश्चात्य अफ्रीका-वासी निग्रि में प्रचलित है, (३) बाण्टू, वा कान्द्रिय मत (Bantu) जो काफ़ी में प्रचलित है, और (४) खोई-खोई वा हण्टेण्टोयमत (Khoi-Khoi) जो दक्षिण अफ्रीका के हण्टेण्ट और कुशेनो में प्रचलित है। फिलिपिन इन चारों विभागों का हान्डीन के साथ वर्णन नहीं किया जा सकता, कारण साधनभाव है। १म विभाग के लक्षणों की सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वान् अब तक विमोक्षित स्थिर नहीं कर सके हैं। २य विभाग के प्रधान लक्षण प्रेतत्व की पुष्टियों की खोज, उवाचन, पञ्चाचन (विमोक्षितः सर्वाचन) आदि हैं। इनमें योराणिक पाख्यान (Mythology) नहीं है; और है भी तो प्रति सामान्य। उन्हीं परसे पाश्चात्य विद्वान् अनुमान करते हैं कि इनमें एके-ग्रन्थवाद की स्थिति भिन्न भी है। प्रायः सभी जातियाँ एक प्रधान देवता का अस्तित्व स्वीकार करती हैं। इन देवताओं को सर्वदा पूजा चर्चा करने को आवश्यकता नहीं होती। बहुतेक मतों में ये प्रधान देवता ही स्वर्गवासो एवं वृष्टि वा सूर्य के अधिष्ठाता हैं। चन्द्रोपासना सर्वोपेक्षा विरुद्ध है और गामो के प्रति प्रत्यक्ष भक्ति सर्वत्र देखने में आती है। ३य विभाग का मत, जिसे हम बाण्टू मत कहते हैं, प्रेतोपासना (Religion of spirits) मात्र है। जिन प्रेतों की आकांक्षा लोग चर्चा करते हैं वे उनके मृत पुरुषों के प्रेतों से विशेष विभिन्न नहीं हैं; परन्तु समस्त प्रेत एक प्रेतनायक (Ruling spirit) के अधीन हैं। ये प्रेतनायक जातिभेदसे विभिन्न हैं और उन उन जातियों के मृत आदिपुरुष समझे जाते हैं। यह प्रेतोपासना प्रथमतः चार भागों में विभक्त है

प्रेत-नायकों के नामानुसार ही ये विभाग कल्पित होते हैं। इन प्रेतनायकों की उपासना मूलतः चन्द्रोपासना मात्र है। ४य विभाग खोई-खोई मत में हण्टेण्टोयों के प्रधान देवता का नाम तानो वा सुनिकोपाब (Tani or Tsunikoab) अर्थात् 'टूटे घुटनों का प्रेत' (wounded-knee) और नामाकोयाबों के प्रधान देवता का नाम हेत्सोएइबिब (Heits-eibib) अर्थात् 'काष्ठमुख प्रेत' (Wooden Face) है। बाण्टूओं को तरह ये देवता भी तदुपासक जातिके आदिपुरुष समझे जाते हैं और चन्द्रमूर्ति हैं। चन्द्रकारके अधिष्ठाता प्रेत के साथ इनका बराबर युद्ध होता रहता है। खोई-खोई मत में ज्योपासना नहीं है।

मध्य एशिया का धर्म—जातिवैविध्यों के मतों से चीन, जापान और कोरियावासो समस्त तुलान जातियाँ तथा मलय-जाति, अमेरिका की असम्भ्य जाति, उत्तर-भागरोप-कुलवर्ती प्लिम्सो, पाटागोनोय, फिजोय (Fugians) आदि सभी जातियाँ एक हड़त्त जातिके अन्तर्गत हैं। इस हड़त्त जातिकी ये मङ्गोलीय जाति कहते हैं। अमेरिका के मौलिक धर्म के साथ तुलान के मौलिक धर्म का नाट्य देव कर अन्धकार मुक्त आदिने इनका निकट स्त्रोकार किया है। आद्य का विषय यह है कि इन अद-भूतवर्ती जातियों में प्रधान देवताओं के नाम प्रायः एक-से हैं। तुलानोय और जापानीय जाति में देवता और मानव का जैसा सम्बन्ध कल्पित है, वही भी यहाँ बहुत उन्नत चीन-जातियों में भी वैसा ही सम्बन्ध कल्पित होता है। चीन-जातियों के प्रधान देवता 'सियेन' (Sien) समस्त देव और मानव-राज्य के सञ्चाट हैं; मानवगण प्रजाओं तरह उनके दृष्टाधीन हैं। इनमें भी पिछपुरुषों के प्रेतों पर भक्ति पायी जाती है और चरमका श्रद्धा के साथ उनकी चर्चा की जाती है। इन धर्मों के प्रधान लक्षण ये हैं—मौलिक हड़त्त जाति पर विश्वास, भाङ्क-क, कथ, ताबीज आदि पर विश्वास, अधिकांश निदानों में विश्वप्रेतवाद (Shamanism) नामसे अभिहित किया है। इस धर्ममतने क्रमशः अभिज्ञान हो कर चीन में त्रिविध मूर्ति धारण की है,—१म प्राचीन पंच, २य कनफुयी मत (Confucianism) और ३य ताओमत (Taoism)

ये तीनों 'य' योहमतके प्रधानमें संश्लिष्ट हो गये हैं। जापानमें भी इसी प्रकार विविध धर्मव्यवस्था दृश्य है, इस कान्मि-मसुयु (Kamimasa-yasu) नामक प्राचीन ग्रंथ। जापानी भाषामें इसका अर्थ 'य' (The way) अर्थात् देवोपासनाप्रणाली होता है; चीनी भाषामें इसे शिन्ताओ (Shintao) कहते हैं। परन्तु चीनी-के मतमें देवोपासनाको देवोपासना नहीं कहा है। शिन्ताओ नामके ग्रन्थमूल इनके प्रधान हैं। यह ग्रन्थ पुष्पी मत है। यह ईसाकी सातवीं शताब्दीमें चीनमें जापानमें प्रविष्ट हुआ था। उनके बाद यह योहमत के जो कौरिगने गङ्गा प्रवर्तित हुआ था। परन्तु ईसाकी दसवीं शताब्दीमें यह इस देशमें प्रियतम दूरीभूत हुआ था और फिर ईसाकी सातवीं शताब्दीमें उनमें बड़ा प्रधानत्व पाये।

ग्रीकोय धर्ममें क्रिस्तिक शास्त्राकी सभी आत्मायुग्म (Yum) युग्म (Yummal), युग्म (Yumball) और युग्म (Yumla) नामक एक प्रधान देवताको उच्चता काते हैं। नागै गडवायिगो के तथा एल्डोनीय और क्रिस्तिक गडवायिगो के धर्म मतमें जर्मन वा एल्डोनीगो जर्मन मतके पौराणिक व्यवधान यथेष्ट प्रविष्ट हुए हैं। इनका हीम पर भी ग्रीकोय दो आत्मायुग्म के धर्ममग ले ग्रीकोय धर्म के पुष्ट उदाहरण हैं, इनमें समूह नती। मध्ययुगीय मत प्रवर्ण करनेमें पहले तुर्क देवता आदिम धर्म भी अधिकतरमें ग्रीकोय व्यवधानका था। पश्चिमो ग्रीकोय धर्ममें अमेरिकाके मोनिक धर्म बहुतसे उदाहरण पुष्ट हैं। आबिरियाके शिवायिगो (Shamanism) में अमेरिकाके उदाहरण मिश्रित होने पर पश्चिमो धर्ममगकी यहि हुई है। इनका प्रेरणायुग्म, पश्चिम, पश्चिम और वायुमण्डलमें प्रवर्ण है। इनके प्रेरणायुग्म का प्रधान देवताका नाम 'तदगसु' (Torgasuk) है।

अमेरिकाके मोनिक धर्मका विभाग इस प्रकार है—

१। एन्डो-मत, यह कनाडाके किन्डो उपायुग्म तक विस्तृत है। इन देवताको विविध आत्मायुग्म (Kirchmanito), मिचाओ (Micha), नाहोन्डा (Wahonda), एन्डो (Ando)

(Ando) और ओकी (Oki) नामक प्रधान देवताकी उपासना करते हैं। ये धर्मवादी वायुदेवता हैं। अन्य उपासना देवता और गुरु भी इनके अधीन हैं। इन आत्मायुग्मों में प्रत्येक धर्म एक एक उदाहरण है, जो एक एक विशेष उपासना है अर्थात् किसी एककी भाग, किसीकी चर्चा और किसी एककी गथा इष्ट देवता है।

२. अज़्तेक मत (Aztec) — अज़्तेक, अमेरिका, मध्ययुगीय आदि मत आत्मायुग्मों की उपासना करते हैं, जिसका भौतिकत्व हीम निराकरण तक गत है। इस मतमें किन्ही आत्मायुग्मों उपासना-प्रणाली बहुतसे मतानुसार प्रयोजित है।

३. योन्टनोन्ता वायुमण्डल — योन्टनोन्ता वायुमण्डल (Mayas in Yucatan) और नाचि (Natchez) आदि आत्मायुग्म हैं। इस मतके पौराणिक व्यवधानों (Mythology) बहुत विस्तृत और लघु-कालीन हैं, किन्तु अनेक मतानुसार भी हैं। योन्टनोन्ता वायुमण्डल नामक इन मतानुसारों में बहुत एक संकीर्णता पायी है।

४. मध्ययुगीय (Mingyuan) — इस धर्मको मानने वाले 'चि-चा' (Chil-chas) धर्म हैं। यह मत एल्डोनीगो धर्म में प्रवर्तित है। निरारगुपा-वायुमण्डल मतको इनके मतकी मिला है। निरारगुपा-वायुमण्डल उपासना देवता 'कीमागाटा' को (जो कि समस्त मनुष्यों के आत्मायुग्मों और एल्डोनीगो वायुमण्डल के एल्डोनीगो हैं) इनमें 'कीमागाटा' नामक प्रधान देवता है। इन धर्मों में अनेकालत मध्य योन्टनोन्ता 'वीधका' नामक देवताको प्रधान उपासना दिया है और यह 'कीमागाटा' को उपासना 'गुरु' नामक धर्म है तथा गुरुकी भी गुरुकी भाव्य मानने लगे हैं। इनमें इन उदाहरणों और अन्य भाषाओं का उदाहरण देवताको इष्टों के मतमें नहीं दिया है।

५. कुइचुवा-मत (Quichua) — अज़्तेक (Aztec) आदि आत्मायुग्मों में यही मत प्रवर्तित है। ये धर्मवादी इष्टों की उपासना इनमें प्रवर्तित है। इन धर्मों में 'गुरु' की उपासना प्राचीन धर्मों का संस्कार करने पर लगे हुए अज्ञानवाद (Tidism) तक ले गये हैं, परन्तु अभी तक अज्ञानवाद (Monotheism) का

सम्बन्ध नहीं कर सके हैं। इनके धर्म में उस अभिराष्ट्रिक-के मूल पर एशिया वा यूरोपका किसी प्रकारका प्रभाव नहीं पड़ा है। इनकी धर्माभिव्यक्ति सम्पूर्ण तथ्या प्राकृतिक उत्पत्ति कहा जा सकता है।

इस दुर्भाग्य-कारिण और घनाभाकी का मत इनके विषय में विशेष कुछ मालूम नहीं हो सका है। त्रामिन-वासियों ने टुपिगुवारोनी (Tupiguarono) नामक प्रधान देवताकी वक्षना की है।

मराठीय धर्म की मुख्य-व्यक्तिमयी शक्तों में सामान्य सामान्य विवेक देखने में आते हैं, जिनमें मलयमत, पोलिनेशियमत, मेकोनेशियमत आदि प्रधान हैं। ये सभी मत मूलतः प्रायः एक ही हैं, किन्तु अब तक इसका भीमाभा नहीं हुआ है। इस मलयमत—मलयदायपुत्र में पहल ब्राह्मणधर्म था, जिसका सम्पूर्ण स्वरूप प्रभाव देखने में आता है। इसके पहले की प्रस्था प्रभाव है। उस बाद बौद्धमत, फिर मध्यदायमत और फिर ईसाई मतका प्रचार हुआ था। इस, पोलिनेशियमत—मालागसा (Malagasy) और मदागास्कर-वासी हावावा (Hovas) प्रचलित राति-भाति का प्राचीन पोलिनेशिय धर्म कहें हैं। इस धर्मका प्रधान लक्षण (Taboo) 'ताबू' वा प्रतिज्ञाकरण है। पादर विशेष द्वारा व्यक्ति वा वस्तु के विरपवित्र बना लेते हैं, एक बार कोई भी विषय पर्यवेक्षित हान पर फिर वह कदा प्रकार भी अपवित्र नहीं होता। मदागास्करवासियों के दामादारा प्रवर्तित संस्कारके पहले इस प्रथाका विशेष पादर था। मलयदायम इस 'पामला' (Pamali) कहते हैं और पट्टेशिवामें 'कुदनुयुण्डा' (Kudnyunda)। पोलिनेशिय मत में प्रधान देवताका नाम तारावा या तारावा (Tarao or Tangaroa) है। इस, मेकोनेशिय-मत—इसमें प्रधान देवताका नाम 'एन्डुगु' (Nden-gui) है।

भारतवर्ष के दाक्षिणात्य प्रदेशों में गुण्डा, गोड्ड, सिंहलो आदि द्राविड़ोय जातिको धर्माविवेक करने पर हिन्दुधर्मका प्राधान्य ही अधिक पाया जाता है।

प्रागुत्पत्तिक धर्म पन्थाओंका विवरण एक प्रकार-से हो चुका। इस विषयमें और भी एक बात

विषय है। मध्य-जगत्में अब तक वर्तमान वा सुप्रचलित भी धर्म हैं, उनकी दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। जो धर्म उत्पत्तिमय एवं अधिकतर महान् भाव-समन्वित हैं, उनका एक विभाग और जिन धर्मों में मालिक अवस्थाके भाव अधिक हैं और महान् भावोंका अपेक्षाकृत प्रभाव है, उनका द्वितीय विभाग बनाया जा सकता है। प्रथम विभागकी 'सुगठितधर्म' (Organized religions) कह सकते हैं, इसमें योनि ब्राह्मणधर्म (हिन्दू धर्म), जैनधर्म (बौद्ध धर्म) बौद्धधर्म, ख्रिष्टीयधर्म, मध्यदायधर्म तथा पन्थान्थ दो एक धर्मों की शामिल किया जा सकता है। द्वितीय विभागका नाम 'असुगठितधर्म' (Inorganized religions) कह सकते हैं, इसमें योनि जापानक आदिमधर्म, दाक्षिणात्यक पन्थाधर्म, अरबकी प्राचीनधर्म इत्यादिकी तथा यत्न-मन प्रसन्न जातिवर्गिक धर्मोंका गणना हो सकती है। इन धर्मसमूह धर्मोंकी सङ्गठन अभिव्यक्तिवादक नियमा-न्तगत है; पालीचना द्वारा यह प्रभावित हो चुका है कि अति सुगठित धर्म भी मूलतः किन्हीं एक सुगठित धर्म से उत्पन्न हैं। समाजकी उत्पत्तिका पदार्थक सम्बन्ध वर्तमान है। सामाजिक प्रयोजनानुसार ही धर्म का आचार-व्यवहारका तथा बहुत कालसे प्रचलित मूल सूत्रों का परिवर्तन हुआ करता है। अधिक पुरातन अवस्थामें किन्हीं धर्मों की बात पकड़ कर विचार करनकी अपेक्षा ऐतिहासिक कालके प्रभावगत एक सुगठित धर्म का भावार्थके विषयमें पायाव्य विधानों की भव प्रकट किया है, उसकी पालीचना करना सुगम है, इस लिए यहाँ उसकी उल्लेख किया जाता है।

पायाव्य विधानों के लिए किया है, कि ब्राह्मणधर्मके चरम प्रभावक समयमें, जब ब्राह्मणिक प्रादुर्भावमें पन्थान्थ वर्षे यन्त्रणा और पन्थाचार महान् भग्न, तब अधिकतर मनुष्यों के लक्षणालो मनीषाओं के लिए उपयोगी अर्थसाधन मूलक बौद्धमतका प्रचार हुआ। इस मतमें वर्षगत आचार-व्यवहारके पन्थाव्यक्तिको छोड़ कर केवल ब्राह्मण धर्म की नीति और तत्त्वज्ञान मात्र रह्योत हुआ। इस प्रचारमें पन्थक मतोंका विचार हुआ। आर्यधर्म की भारतीय शाखाके दो धर्मोंकी बात कहा

गरे हैं। ईरानीय शास्त्रों में ऐसा ही दृष्टा है। जो दैतवाद प्रत्यक्ष में प्रचलनभावसे था, वह जरब खोय धर्म के संस्कारों के समान "जुद्ध-धर्म" धर्मों में गड़बड़ हुआ। धर्म धर्मों के विषय की छोड़ कर यदि भौतिक धर्मों को धीरे दृष्टिपात किया जाय, तो वहाँ भी ऐसी ही दोष पड़ते हैं। ब्राह्मण धर्म के साथ बौद्ध धर्म का जैसा सम्पर्क है, जुदाई के प्राचीन धर्म (Judaism) के साथ ख्रिष्टीय धर्म का भी ठीक वैसा ही सम्बन्ध है। धर्म धर्मों में यह बौद्ध धर्म को भी ठीक वैसा ही दगा है। दोनों ही जन्मस्थानों में दूरीभूत एवं भिन्न देववासियों द्वारा प्रचलित हुए हैं। बुद्ध को खलू के प्रायः शताब्दी बाद महाराज पद्योक्त तत्कालीन जमीनी हो कर बौद्ध धर्म के पाचार व्यवहार की विधि-व्यवस्था स्थिर करने के लिए एक सङ्घ की बुलाया था। इसी तरह ३२५ ई० में रोमक-सन्नाट, कन्स्टेन्टाइन की ख्रिष्टीय मत-संघर्ष के लिए एक सङ्घ स्थापन किया था, जो 'निकीय समिति' (Council of Nicaea) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसी समिति द्वारा 'नाइसिन रीति' (Nicene-creed) विधिवत् ब्रूई थी। 'पद्योक्त-सङ्घ' के कलसदस्य जैसे बौद्ध धर्म की मशानुनीति धीरे सामान्यतः जीवननिर्वाह विधि संघर्ष के साथ साथ भिन्न ग्रन्थों की पूजा, सुषुप्ति-व्यवस्था की चर्चा, धर्म-व्यवस्था, जन्मान्ता-वाचन, बौद्ध-याज्ञिकों का अछुत्व स्वीकार, उनके प्रति देवतुल्य भक्ति प्रदर्शन, प्रधान याज्ञिक कामों के प्रति बुद्ध-सङ्घ सम्मान प्रदर्शन इत्यादि पाचार व्यवहार प्रचलित हुए थे, सभी प्रकार रोमक याज्ञिकों द्वारा प्रतिष्ठित पाश्चात्य-बहुल ख्रिष्टीय मत (Latin Church) में भी नवनीति (New Testament) का स्थापना साधन भी यूरोपीय राज-यंत्र की सहायता प्राप्त है। जरब खोय मत जैसे वैदिक बहु-देववाद का प्रतिपक्ष है, उसी प्रकार महाकदीय मत भी, बुद्धी-गतात्मीय प्रचलित पौस्तनिक पाचारपूर्व ख्रिष्टीय मत का प्रतिपक्ष है।

सुगठित धर्मों के सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा गया है, वह प्रगटित धर्मों के विषय में भी कहा जा सकता है। इन्हें, इतना समझ है कि प्रगटित समाज के इतिहास के धर्मावर्तन के रूप में दृष्टांत द्वारा प्रमाणित करने के

लिए बहुत तर्क निकाले बहुत करने पड़ेगे। समाज पादिम अवस्था में जैसे धीरे धीरे उत्पत्ति प्राप्त करता है, सामाजिकों का मनोभाव भी क्रमशः उसी प्रकार मशानु भाव धारण करने में समर्थ हो जाता है और साथ साथ उन समाजों के धर्मों में भी नैतिक वाचस्पतिक मशानु भाव व्याप्त होने लगते हैं। हम सामाजिकों में भी एक स्तर से दूसरे स्तर में निर्गुण वाचस्पतिक निद्वय किया जा सकता है। सामान्य विद्वानों ने मोलिक भावार्थ यत्मान धर्मों की चयन्यता की पशोनीचता कर हम तरफ के स्तरों का निर्देश किया है। भाषातत्त्वविद् डा० मेस प्रमुख दार्शनिक विद्वानों ने हम मत का पोषण किया है। इनके मत में मनुष्य के हृदय में ईश्वर के विषय में एकराव का ज्ञान (Unity of God) होने से पहले ही यह धर्मों के स्तरों की चयन्यता है और उन स्तरों के साथ उनके हृदय में धर्मों का चौरमस्वर्य "एकराववाद" प्रचलित होता है। डा० मेस के मत में मोलिक धर्मों के स्तर इस प्रकार हैं— १. पित्रोत्तरोत्तरता (Ancestor-worship), २. बहुदेववाद (Fetichism), ३. पशुदेववाद (Totemism), ४. धर्म विग्रहोत्तरता (Shamanism), ५. एक देववाद (Monotheism), ६. बहु देववाद वा बहुदेववाद (Polytheism)। वहाँ डा० मेस ने इन विभागों का जैसा पोषण एवं निर्णय किया है, वैसा ही लिखा गया है। पद्यापक प्रोफेसर (Prof. Pfleiderer) पादि विद्वानों ने अन्य प्रकार से स्तरों की व्यवस्था की है। इनके मत में, पूर्व प्रथम पादिम प्राकृतिक भाव (a kind of indistinct chaotic naturism) था, उसके बाद उसी में प्रेतवाद की (Spiritism) उत्पत्ति हुई। फिर उसके क्रोधाव (Anthropomorphic Polytheism) और क्रोधाव में देवदेववाद (Monotheism) उत्पन्न हुआ। पद्यापक भी प्रोफेसर (Prof. O. P. Tiele) पादि विद्वानों ने धर्मों को विभाग किये हैं, बहुतने उधे को स्थापन करने समझते हैं। उन लोगों के मत में, प्रथम क्रोधाववाद है। Animism। प्राधान्य धीरे बहुदेवतत्त्वनिमित्त ऐन्द्रासिद्ध धर्म

• बहुदेववाद धर्म Materialism नहीं है।

(Polydaemonic magical religions), द्वितीय बहुदेववात्मक जातीयधर्म (Polytheistic national religions), तृतीय शास्त्रगत धर्म (Monistic) वा अध्यापक पुरोहीके मतानुसार Monotheistic religions और अर्थ सार्वजनिक वा विश्वजनिक धर्म (Universal or world-religions) है। डॉ० डी० ब्रोसेस (Dr. De Brosses) ने गत १८वीं शताब्दीमें जड़देववाद (Fetichism) को ही आदिम अवस्था माना है। परन्तु अध्यापक मूलरने इसे गलत बता कर तर्कवितर्क द्वारा पिछले प्रेतोपासनाकी ही पूर्ववर्ती अवस्था सिद्ध किया है।

१. पिछले प्रेतोपासना (Ancestor-worship) — मानवके पन्नाः क्षारधर्म धर्म-विषयक जो सङ्ज्ञात बुद्धि प्रद्युम्नभावसे विद्यमान थी, उसका प्रथम विकास पिछले प्रेतोपासनासे ही है। असभ्य अवस्थामें मूढ़ मानव बहुत ही घोर स्वरूपके व्यापारके पाथीव्यकी न समझ दोनोंकी सत्यता और सत्ता समान रूपसे अनुभव करता है। इस क्षममें वह स्तत्र प्राचीय स्वजनको, जीवितास्थानमें उनके परिच्छेदसे निभूषित देखता है। इस कारण, विद्यमानताका अनुभव करता है। इस अवस्थामें उसके मनमें स्तत्र भात्मिकी अवस्थान, भ्रमण, गमन इत्यादि कार्योंकी भावीचना होती रहनेसे क्रमशः भौतिक प्रभावको धार्मिक उद्दिष्ट होती है। इस प्रकारसे स्तत्र भात्मिकी भौतिक प्रभावोंकी ओर ध्यान, असभ्य मानवका मूढ़ मन जीवितोके महेश उनको भी सचल, सज्जन, सकाम, सक्रिय प्रेतत्वमें कल्पना कर लेता है। धर्ममें वह स्तत्रमें उनके दर्शनके साथ अपने दैनिक जीवनके कार्यकलादिका मिश्रण कर शुभाशुभका निर्णय करनेकी कोशिश करता है। इस चेष्टाके फलसे क्रमशः वह उस प्रेतोंमें किसीकी शुभदाता और किसीकी अशुभदाता समझ उनमें उपहारों वस्तु और भेषकालों गन्धकी कल्पना कर बैठता है। फिर क्रमशः परस्पर फलसम्पत्तिकी भावीचना कर प्रेतविशेषके गुणविशेषकी धारणा कर लेता है। इस तरह जब प्रेत, प्रेतका कार्य, समुदाय इत्यादिका उद्धारण-कार्य समाप्त हो जाता है, तब वह उन अनिष्टकारी प्रेतोंको गुणा-

वली, प्रभाव और कार्योंका पुनः पुनः स्मरण कर अपने आप भीत और पाकुलित होने लगता है, एवं क्रमशः उनकी तुष्टिके लिए धनि, पूजा, उपहारादि देनेकी कल्पना करता रहता है। वह समझता है कि जैसे जीवित व्यक्तिके भयानुष्ट होने पर उसे उपहारादि देकर सन्तुष्ट किया जा सकता है, उसी प्रकार इन प्रेतोंकी भी उपहारादि द्वारा दम कर देने पर उनसे अनिष्टकी भागछा नहीं रह सकती। अथ प्रेतोंकी वासस्थानकी निर्णयकी आवश्यकता पड़े, कारण स्थान निर्णयित हुए बिना उपहारादि दिये कहाँ जाय ? इसलिए उस समयके विभिन्न मानव-वृद्धोंने अपना अपना कृषिके अनुसार एक एक प्रेतके लिए एक एक जड़ पदार्थमें (छल पर्वत नदी पाटिमें) या एक एक जीवदेहमें उनके आवासकी कल्पना कर ली। इस कल्पनाके साथ ही प्रेतोंके मृदु वा भीषण गुणोंके साथ कल्पित वासस्थान (जोय वा जड़) की अवस्थाके चर्चितत्वका भी अनुमान किया गया। उत्तर अमेरिकामें रहनेवाले हुरन जाति (Huron) एक जातीय घुघुषोमें (Turtle-dove) स्तत्र भात्मिकी अवस्थानकी कल्पना करती हैं। इसी प्रकार लुलु लोग एक प्रकारके सज रंगके निरोह सर्पोंमें स्तत्र भात्मिकी वासकी कल्पना कर उनके सामने वलि चढ़ाते हैं। पोड़ाकी धर्मशास्त्रके मध्यमें कार्योंकी पशुविधा और पाहारादिके लाभमें विघ्न पानेके कारण उनको धार्मिके लिए पशु पक्ष इस प्रकारकी पूजाका प्रचार हुआ और कात्यायनमें वही फिर धर्मभाव समझा जाने लगा एवं उसकी पुष्टि होने लगी। इस प्रकारसे प्रेतोपासना आदि उपासनाप्रवृत्ति परिरक्षण कर देता है। हिन्दुओंकी श्राद्धप्रवृत्ति इस प्रेतोपासनावस्थाकी रीतिविशेषका उत्तम संस्कार है।

२. जड़देववाद (Fetichism) — जड़ोंका मत है कि पिछले प्रेतोपासनाके बाद मानवकी धर्मप्रवृत्तिके प्रगाढ़ हो जाने पर उसके मनमें जड़देववादका भाव जागरित हुआ। अब धार्मिक पदार्थोंमें पिछले प्रेतोंका वाप है, ऐसा विश्वास अच्छे तरह जम गया, तब लोग कालान्तरमें प्रेतोंके पिछले को भूल गये और धीरे धीरे कुछ वस्तुओंमें उपहारों और कुछमें भेषकालों प्रेतोंका

मृत्यु इतिहासकी लीग भूल गये, तब तद्वरूप उपाधिधारी किसी व्यक्तिने अपनी उपाधि के हस्तभूत पशु को खेड़की निगाहमें देखते हुए उस पर पवित्रता आरोपित की हो और यही धीरे धीरे देवत्वमें परिणत हुई हो। पूर्वान अमेरिकाके एस्किमो-मतामनन्विधोंमें बहुतने अपनेको 'मिचाबो' (Michabo) चर्चात् महाशय (The great hare) ने उत्पन्न वतलाते हैं। भारतमें भी मयूरभक्ष, वृषभक्ष आदि स्थानोंके हिन्दू चरित्र (उत्कलिय) राजा अथ भी अपनेको मयूर-वृष-प्रसूत मानते और बड़ी शक्ति के साथ मयूरोंको पालते हैं। यहाँ तक कि मयूरके सर जामे पर ये समीप भी मानते हैं। यह भी प्रति प्राचीन कालको पशुदेवप्रथाका भ्रान्त्यवेष है। हिन्दुधर्मको गो-पूजा भी सम्भवतः इस पशुदेवोपासक अवस्थाको किसी एक प्रथाका उत्पन्न भ-स्कार है। देवदेवियोंके वाहनोंकी कल्पना और उनकी पूजा भी इसी पशुदेववादका उत्पन्न भ-स्कार है।

४। शिरोमनवाद (Shamanism) - जड़देववादमें जब मानवकी दृष्टि जड़तोत प्राकृतिक शक्ति और निद्राधर्म पर चढ़ी, तब उनके प्रभावकी देख कर वह और भी सुख हो गया; किन्तु उस समय प्राकृतिक कारण न समझ सकनेके कारण, उसने उन प्राकृतिक शक्तियोंमें भी महाप्रभावशाली प्रेतोंकी कल्पना कर डाली। वायु, तूफान, वर्षा आदिमें प्रेतोंकी कल्पना की; फिर धीरे धीरे षट्पद वस्तुधर्मों में शृङ्खलाधर्मोंका उपाधि करना सीखा और उसमें क्रमशः प्रेतोंका वह भौतिक भाव किसीके भी समझमें आगमक नहीं रहा। कालख्योतः साथ साथवके मनको धारण-शक्तिको दृढ होने लगी और वह चक्षुःश्रुति वस्तुधर्म प्रेतोंका दृढकृत्य समझने लगा; दस्तुधर्मोंके शृङ्खलाधर्म प्रेतोंकी आरोपित हुए, जो इसी लिए प्रेतगत हो प्राकृतिक शक्तियोंके नियन्त्रा एव प्राकृतिक क्रियाधर्मोंके कर्ता समझे जाने लगे। धर्मधर्मोंके विद्वानोंने प्रेतोंकी इस अवस्थाको The thing-in-itself कहा है। इस समय मनुष्यका मन प्रेतराज्यको महिमामें इतना सुख हो गया था कि उसे विमलके किसी भी विषयमें प्रेतशक्त्यता देख न पड़ती थी; यही कारण है जो प्रेतोंकी संख्या इतनी बढ़ गई थी। उस समय

प्रत्येक व्यक्तिके लिए प्रत्येक प्रेतकी पूजादि करना दुर्लभ हो गया। लक्ष्मिधर्म, आहारान्वेषण, मत्तानपानन इत्यादि कार्योंमें व्यस्त होनेके कारण कोई भी उनकी पूजाके समय न निकाल सका और इसी कारण लोगोंने अपने अपने परिवारके एक एक व्यक्तिको (जो माधारातः यथोक्त होता था) पूजाके लिए नियुक्त किया। दूसरी पर उपासनादि का भार सौंप कर धीरे धीरे लोग इतने निश्चित हो गये, कि दो एक पीढ़ीके बाद उन पूजाधर्मोंके सिवा और कोई प्रेतोंकी पूजा भी न होता था। पूजा-गण उन्हें पूजाके विषयमें जो कुछ भी कहते थे, उसका वे अविचलित चित्तमें पालन करते थे। कालान्तरमें ये पूजाधर्म ऐन्द्रजालिक, सुगोष्ठि या याज्ञिकधर्मोंमें मिले जाने लगे। इसीसे सामाजिक षट्पदिको प्रथा (Patrilarchal society) गठित हुई। बहुतोंके अनुमान है, कि षट्पदिको धर्मके पहली यज्ञविधाता मयिमन्मदाय की दृष्टि भी इसी प्रकार हुई थी। साइबेरिया प्रदेशमें इन याज्ञिकों और ऐन्द्रजालिकोंको 'शमन' (Shaman) कहते हैं। डा० मेडका अनुमान है, कि यह 'शमन' शब्द बोहो-मिन्सुकीबोध 'शमन' शब्दका अपभ्रंश है। बोहोमनियों पतनावस्थामें अमरगण ताम्रित इन्द्रजा आदि विद्यामें नियुक्ता लाभ कर लोगोंकी सुख कर्मोंको चेष्टा करते थे। इसी कारण पाश्चात्य विद्वानोंने ऐन्द्रजालिक प्रभाव और प्रेतोपासनामूलक धर्मोंको अवस्थाका Shamanism नाममें उल्लेख किया है। ५. पोन लेण्ड प्रदेशमें ऐसे ऐन्द्रजालिकोंकी 'अङ्गकोक' (Angkok) कहते हैं हिन्दुधर्मोंमें सांपका विष तथा भूत उत्तरनेवाने नियामे वा पोभाधर्मोंकी उत्पत्ति भी इसी प्रकार है। पञ्चानन्द, चण्डाकर्ण, महाकाश, शोतना, मनसा, जरासुर, वन्देवो आदि देवदेवियोंकी कल्पनाधर्मोंका आधार भी यही है। वैदिक देवता वरुण, वायु, इन्द्र, सोम, अग्नि, उषा आदिको उत्पत्ति भी धर्मोंकी उसी अवस्थामें हुई है; परन्तु इनका प्रथम है कि यें-

६. हिन्दीमें 'अवगवाद' कहनेसे अर्थप्रती नामके वाक्य वाक्य तो रहते, पर अर्थ परिपुष्टि नहीं होता, इस कारण भावार्थोंके के कट शिरोमनवाद शर्णा शिरोमनी यमन मनुष्यों में प्रेतवादकी कल्पना ऐसा नाम दिया गया है।

प्रतिपादित देवताओं का एकल चोर ईश्वरत्व बहुत समय पीछे कल्पित हुआ है।

अध्यापक टिपलर ने विभाग में जो जैसवाट (Ari-
mism) को प्रथम चरित्रा बतलाया गया है, वह उन
चार चरित्राओं को धर्म विभाग की एकलौटत मंजा है।
जन्म के समवे, इस तरह धर्म के विकास का मूल्य हमने
निर्णय करना समाय है। चार की बनाए हुए द्वितीय
विभाग (Polytheistic national religions) को प्रथमावस्था भी विश्वेश्वरवाद में सामिल की जा
सकती है।

पू देववाद और ४ धर्मवाद (Polytheism and
Henotheism) ये दोनों चरित्राएँ प्रायः सममात्राधिक
हैं। मन्मथर पहले चरित्राद चोर पीछे देववाद की
कल्पना करते हैं; किन्तु डा० मेम दोनों की एक ही सम-
य में उत्पन्न चरित्राते हैं। विश्वेश्वरवाद में सामाजिक
उन्नतिके साथ साथ जब मानव-चित्ताने विभिन्न प्रेतों
की सन्निभापित देव धर्म में (प्रेतत्व की भूलकर)
देवत्व स्वीकार किया, तब देववाद की उत्पत्ति हुई और
देववाद में साथ साथ चरित्राद भी उत्पन्न हुआ। देव-
वाद चोर चरित्राद की विभिन्नता दिशाने के लिए डा०
मेमने कहा है, कि देववाद (Polytheism) में बहुदेवत्व
कोकृत हुआ है। चोर चरित्राद (Henotheism) में
बहुदेवत्व का समुच्चय मात्र, होता है।

यद्यपि मान में सुगति धर्मोपनिषद् में जो देववाद
चोर चरित्राद के विषय में विवाद देवधर्म पाता है,
तब के साथ हम मौलिक देववाद या चरित्राद का
सम्बन्ध बहुत स्पष्ट है। मौलिक देववाद देवतागत
विक्रम प्राकृतिक शक्तियों के चरित्रातामाय समझे जाते
हैं। उस समय अध्यात्मधर्म की कोई कल्पना विकसित
नहीं हुई थी। समकाल कर्मगः मानव-वृद्धि में परि-
वर्तन होने के कारण मानव कल्पना जब इन देवताओं
के विषय में निष्ठा करने करने लगा प्रकार कोड़ा
करने लगी, तब मानव-प्रकृति की एक शक्ति विभिन्न
कार्य होने देव धर्म के लिए विभिन्न देवताओं की कल्पना
न कर एक एक देवता में माना प्रकार सुधारों करने
लगी। इस सुधारों के साथ साथ माना प्रकार के मान-

वरद होने लगी। एवं चरित्राद देव, दिशावर देव,
तपन देवः माय देव, दई, परम देव, नमः देव
हई इत्यादि। बाद में, एक देवता में विभिन्न
गुणों के धर्मों के प्रदेवता, कि कुछ गुण कुछ
देवताओं में साधारणतः पाये हो जाते हैं, तब मोमने
मन्मथचित्तने दोनों देवताओं की एक समानता मन्म
कर दिया। समगः यह भाव होने बहुतों में सन्निभा
हो गया। जब मन्मथका भाव दूर हो गया, तब मौलिक
चरित्राद की उत्पत्ति हुई। मन्मथर ने चरित्राद का
पूर्वत्व स्वीकार कर कहा है, कि विश्वेश्वरवाद के बाद
मानव-कल्पना बहुत चम्पट भावने काम करती रही
है। उस समय लोग, विभिन्न प्रेतों के विभिन्न कार्य चोर
शक्तियों का परिमाण स्थिर न कर मन्मथ के कारण समय
समय पर एक कार्य के साथ चम्प एक प्रेत का सम्बन्ध
स्थिर करते लगे। यह मन्मथों जब परस्पर समे प्रेतों में
कौन मई, तब लोग बहुतों में एकलका समुच्चय करने
लगे; कारण तो कुछ चोर है, पूजा किमो चोर की काम
लगी। चम्प में चम्प में एक की प्रेत वद पर (Chief-god)
स्थापित किया। प्रेतत्व में जो मौलिक चरित्राद के
विषय में निष्ठा है, वह धमाहो है। मौलिक बहुदेवत्व का
एकल प्रायः इसी चरित्राद का परिणाम है।

इसी समय चोर एक चरित्राद है। प्राचीनकाल के
चरित्राद (या प्रायः विरुद्ध) प्रेतत्ववादि कालधर्म-
की चीज शक्ति के साथ इस समय के समुच्चय शक्तिमत्त्व
एक या बहुभावात्मक देवताओं का नियम हो जाते हैं
कल्पनाचारी यात्राकार दारा माना पाप्यों का मुटि
होने लगी। इन कथनों की उत्पत्ति में प्रधान कारण
यात्राओं दारा हो गई समकाल के धर्ममत्त्वों को मता
प्रमाणित करने की चेष्टा है। चोर यदि यह भेदा न हो
जाते, तो भी मन्मथदेवताओं के साथ प्राचीनकाल के दारा
प्रेत परस्पर देवताओं के धर्म में एक दूसरी चरित्रा
की विर-विमर्जित होना पड़ता। क्योंकि एक दूसरे
मत्त्व के साथ चम्प एक का सामन्तत्व न रहता जाता, तो
यात्रा-मन्मथवादि चरित्राद का धारा प्रतीति। कुछ भी हो,
इस प्रकार तत्त्वचरित्राद की उत्पत्ति मन्मथ देव
धर्म में साधार, कर्मवाद, होनि, जाति नियमित होने

सगी'। प्रत्येक धर्म में "पौराणिक-कथा" (Mythology) नामसे इनकी प्रसिद्धि है। इन रचनाओं के प्रसादसे देवताओं में भी पिता पुत्रादिका संबंध निर्णीत हुआ और जो जो जीव प्रतापस्थानों में देवताओं के वासस्थान समझे जाते थे, अब वे ही उनके वाहन समझे जाने लगे। आगधर्म में अधिक उष्णता होनेके कारण वह अग्नि का वाहन समझे जाने लगे। जल्दी चलनेमें सबसे तेज घोड़ा है, इसलिये इसे ध्वज का वाहन मान लिया। इसी प्रकार अन्यत्र वाहनों के विषयमें समझना चाहिये। इसके बाद क्रमशः मानव-हृदयमें भय, प्रीति, श्रद्धा और भक्तिका विकास हुआ और फिर मन्दिरादि बनने लगे। इस बादिम देवराज्यकी सृष्टिके साथ धीरे धीरे रोमक देवताओं की उत्पत्ति हुई। हिन्दुओं के वैदिक देवताओं का भाव इसमें भी उन्नत अवस्थाका परिचायक है। उस समय मानवको कल्पना मनुष्य और पशुके-मिथा अन्य किसी भी जीवके आकारको धारणा नहीं कर सकते थे, इसीलिये समस्त देवता हस्तपदादि-युक्त मनुष्यकी मनोवृत्तिके समान मनोवृत्ति विशिष्ट कल्पित होने लगे। किन्तु जिन देवताओंको कल्पना भयसे हुई, उनका आकार चादि (भीषण मनुष्य और पशुकी मिश्रित आकृति) कल्पित हुआ। इससे पशु-सुख भस्माकार, नरसुख सर्पाकार मूर्तियाँ कल्पित हुईं। मनुष्याकार होने पर भी देवताओंको मानवापेक्षा अधिक शक्ति मनुष्य शक्तिसम्पन्न सिद्ध करनेके लिए उनके चतुर्भुज, दमस्त, विपद, विनिम, लोलरसना, दिग्बन्धन, सुखमास, विराटदेह इत्यादिकी कल्पना की गई। ब्रह्माण्डमाण्डोदर, सूर्याग्निमयन, विषकण्ड इत्यादि अवस्थाओंको कल्पना भी इसी समय हुई होगी। इसके बाद जब मानवहृदयमें शोन्ध्यानुभव शक्ति विकसित हुई, तब उसने परम श्रद्धाका आधाररूप उन भीषणमूर्ति देवदेवियोंमें भी शोन्ध्या मिला कर भद्रास्त्रके पाशमें औरामन, शक्त मांसातिमै रवमें भी पीनस्तन, घोषकटि और उज्ज्वल चक्षुषोंमें भी प्रपन्नताम वर्ण इत्यादिकी कल्पना की। फिर रत्नासद्वार विचित्रवस्त्रादि तथा पूर्ण शोन्ध्या के उपयुक्त विष्णु, मदन, कार्तिकेय, रति, लक्ष्मी, नरसुख, मिनमो, भिन्नम, कृपिष्ठ इत्यादि देवता भी कल्पित हुए।

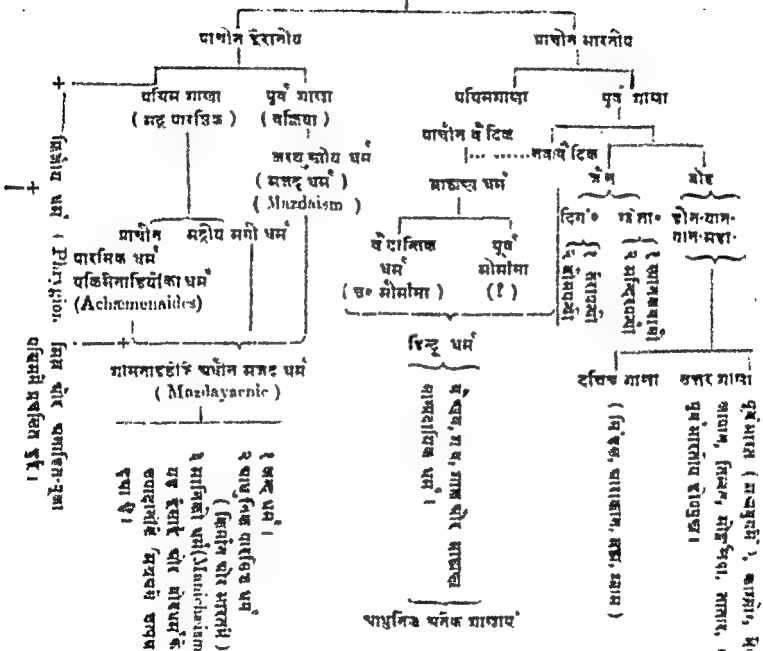
धर्मतत्त्वमें मानवीकरण—उसके बाद देवताओंके साथ मानवका सम्पर्क स्थापन करनेके लिए देवताओंका मानवीकरण किया गया, अर्थात् मानवके प्रयोजनकी सिद्धिके लिए देवता मानवादिका आकार धारण कर मनुष्योंमें आकर रहते हैं, इत्यादि कल्पना की गई। पीछे यह कल्पना और भी गहरी बढ़ी; मानवकी भी देवता बना कर स्वयं नरककी कल्पना की गई। मानव यदि देवभावकी पहचान कर कार्य करे, तो वह किसी समय देवत्व प्राप्त कर देवलोकोमें स्थान पा सकता है, इत्यादि कल्पनाएँ भी सोझी हुईं। इसीलिए हिन्दुओंमें शालोप्य, साध्व्य, सामोप्य और साष्टि इस तरह चार प्रकार मुक्तिपथोंकी कल्पना की गई है। फिर इन्द्रलोक, चन्द्रलोक, भ्रुवलोक, वैकुण्ठ, गोमोक, शिवलोक, ब्रह्मलोक इत्यादि प्राप्ति की कल्पना हुई। हिन्दुधर्ममें राम-कण्वकी कथा तथा इतिहासमें बुद्धचैतन्य चूटकी कथा इनकी कोड़ देने पर भी सुखसामानोंके पीर, हिन्दुओंके परमहंसादि और यूरोपीय (Saint और Martyr) दोनों कथा इन श्रेणियोंमें आ जाते हैं। शल्यपीर, माणिकपीर, सुखमाह, मोक्षमाह, माह फरीद आदि कितने ही और हिन्दु-सुखसामानोंके उपासक हो गये हैं, इसका निर्णय करना असम्भव है। भिन्न साधनका कहना है (१८७२ ई०में) कि आंध्र-खेनापति जनरल निकलसनको दाक्षिणात्यवासी बुद्धारा नामक पश्यन्त जातिने देवत्व प्रदान किया था। यह जाति उनको कम परभूजा और मछि चढ़ाया करती है। यह ज्यादा दिनकी बात नहीं है।

धर्मके विभागोंका ऐसा परिवर्तन सभी जातियोंमें एक ही समयमें और एक ही प्रकारसे हुआ हो, ऐसा नहीं। जिस जातिको सामाजिक उन्नति जितनी शीघ्र हुई हो, उस जातिकी आध्यात्मिक उन्नति भी उतनी ही प्रबली हुई हो। जनरल निकलसनके देवत्वसामने धर्म की समझ सकती है, कि जिस समय हिन्दू, ईसाई, बौद्ध आदि धर्म आध्यात्म-जगतके योगस्थान पर पहुँच चुके थे, उस समय भी बुद्धारों का धर्म प्रेतवादके व्यूहसे बाहर न निकल सका था।

धर्मकी अभिव्यक्तिका वर्णन हो चुका। अब आध्यात्मिक (१२५ श्रृंखला परती अंश)

("सु" तानि रू)

प्राप्य सायं धर्मं



मुद्रामालीकं मन्त्राय चमे प्रत्यः परिष्कृतं
मन्त्रं प्रियं चो गता ये चोऽपि भावतः चरि-
तानि चालीके मुद्रामालीकं मन्त्राय चमे विमल-
हो भवति ।

("क" तालिका)
प्रतीच्य आर्य धर्म ।

‘પ્રાચીન Windic ધર્મ’

स्लेविय (Slavic) लेट्टीय (Lettio)
शाखा शाखा

१ वायुद्विज रचना या प्रकाश यंत्र (Wend) का यंत्र ।
२ प्राचीन रूप का मूल्यमापक (Starog, Dugbog, Ogonii)
३ दोलक (Poles) को दोलकी (Ozchba) -या यंत्र (विद्युत् यंत्र प्रकाश है) ।
४ सर्वोच्च, गौरवपूर्ण निमित्त यंत्रों का यंत्र (विशेष विवरण प्राप्त नहीं है) ।

प्राचीन जर्मन धर्म

द्यूटोनीया नसंवा
भाखा स्कन्दिनेभीयभाखः।

२ एस्तर (Ester) ओधिन (Odhin) थोर (Thor) ।
३ भनिर (Vanir), Frey, Freya,
१ ऊहै समैन (High German)
२ निख समैन (Low German)
क. निख समैन, ओदेन (Woden), गोदेन (Godeu),
ख. क्रिस्तिन; वोदा (Woda)
ग. ऐदरवो सुखमन वाउदेन (' uuden)

टिएन-द्वारा वर्णित धर्म के आध्यात्मिक विभागों का वर्णन किया जाता है। आपने समस्त धर्मों को प्राकृत धोर नैतिक इस तरह दो भागों में विभक्त किया है। प्राकृतधर्म (Nature-religions) का स्वरूप धर्मों के तात्त्विक पक्षों को विस्तृत आलोचना के बिना समझाया नहीं जा सकता। जैवदेववाद (Animism) के प्राकृत धर्म की अवस्था को भी यो, यह बात अनुमान में आनी जा सकती है; भाषा के द्वारा समझा देना बहुत कठिन है। ऐसी दृष्टि में जैवदेववाद में जब तक मानव की रीति भौतिकी साथ धर्म का आचार व्यवहार सम्मिलित नहीं हुआ था, तब तक के समय को धर्म को प्राकृत अवस्था के अन्तर्गत माना जा सकता है। किसी समय सभी धर्मों की ऐसी अवस्था हो, यह बात उच्चाङ्ग धर्मों के अन्तर्गत जैवदेववाद की किसी किसी प्रणाली के अवशेष निम्नाङ्ग के धर्मों में जैवदेववाद को वर्तमानता देवकर स्पष्ट समझने पा जाती है। इसकी पूर्ववर्ती अवस्था को बहुतन्त्रि (Polyzoic stage) आख्या दो है। पौराणिक आख्याओं के मूलभूत भाग (Original Myths) में इन अवस्था का अत्यन्त सुस्पष्ट रूप से अनुमान लिया जा सकता है। अन्तर्गत टिएन ने धर्म को प्राकृत अवस्था को तीन भागों में विभक्त किया है—(१) बहुमैतैविक इन्द्र-जालमय अवस्था (Polydemonistic Magical religions) इस समय जैवदेववाद का प्राधान्य हो इसका प्रधान लक्षण था, (२) संस्कृत इन्द्रजालमय अवस्था (Purified Magical religions or Therianthrope Polytheism), इस समय भी जैवदेववाद का प्राधान्य था, पर उसमें पर धोर मानव रूपी देवताओं की उत्पत्ति हो चुकी थी। (३) प्राकृत शक्ति में पञ्चोक्तिक समताविशिष्ट अर्धनैतिक अर्धप्राकृत देववाद की अवस्था (Religions in which the powers of nature are worshipped as manlike though superhuman and semi-othical beings or Anthropolomorphic polytheism)। इनमें से फिर प्रथम अवस्था के तीन भाग कल्पित हुए। प्रथम भाग की अवस्था अत्यन्त अपरिष्कृत थी। उस समय प्रेतों द्वारा प्राकृतिक अव-
भास (Natural phenomena) नियन्त्रित धोर उनमें से

वाञ्छित होता था, उसी सबके प्रति मानव मन में अन्तःकल्पित होता। एक ही विशेषरूप से समतावादी मान कर सभी को परात्पर समझते थे। द्वितीय भाग को अवस्था में इन्द्रजाल पर विश्वास होने से मानव-दृष्ट द्योति धोर पनोनि कर्तव्य धोर भक्तव्यक्त भाव समझने लगा था। तृतीय भाग में मन की पन्थान्य हस्तियों में भय के आधिक्य धोर आधिक्य के कारण धर्म के आचार व्यवहार-
रादि सभी स्वार्थ प्रणोदित हो गये थे।

द्वितीय अवस्था में यद्यपि मनुष्याकार की कल्पना का प्रारम्भ हो गया था, तथापि पञ्चाकार देवताओं का ही अधिक प्राधान्य था; परन्तु ऐसा होने पर भी इस समय में देवताओं का आध्यात्मभाव (Spiritual) उदभव हुआ था, किन्तु उस समय भी वह पदार्थादि तथा जीव-देवों में पावत था। इसी समय के देवताओं का आचार नरकाव पशुसुख वा पञ्चाकार नरसुख था। उस समय देवता धोर प्रेतों में पायत्वज्ञान ज्ञान हो जानने प्रेतज्ञान तथा ऐन्द्रजालिक आचार धोर भाङ्ग फूँक आदिका ज्ञान हो गया था। ऐसी अवस्था में प्राचीन धोर वर्तमान आचार व्यवहार का एकत्र मिश्रण हो जानने में एक प्रकार का अज्ञान कारणजित आचार व्यवहार (Mystic rituals) विधिवत् होता रहा। इसी अवस्था के समय सुगठित धोर अगठित (organized and unorganized) में दो भेद दृष्टिगोचर हुए।

इस अवस्था के देवताओं में सभी मनुष्याकार धोर पञ्चोक्तिक शक्तिरूपक हैं। वे ही प्राकृतिक शक्तियों के नियन्ता, प्राकृतिक घटनाओं के परिणाम धोर सु एवं कु के जनदाता हैं। इस समय उनके पूर्वोक्त पदार्थ-प्रत्यक्ष वाहन, भूषण वा चिह्न (Symbols) हो गये धोर वे पवित्र समझे जाने लगे। इन देवताओं में इस समय नाना रूप धारण किये। उनके अनुसार नाना प्रकार की कथाएँ प्रचलित हो गईं। इसी समय देव धोर दैत्य-
को अलग को गई। प्राचीन जैवदेववाद के विगाय, डाकिनी, प्रेत, दैत्य, Centaurs, Harpies, Sityra इत्यादि, जिनको अब पौराणिक आख्याओं में निरुक्त कर विस्मृति के गहरे गहरे में जाननका कीर्ति उदाय नहीं रहा, वे देवताओं के अनुवर वा शत्रु समझे जाने लगे। शिव-

(ग) मनुष्याकार अन्धोक्तिक शक्तिविशिष्ट परैवास्तविक चर्च नैतिक देववादकी अवस्था (Worship of man-like but Super human and semiethical beings i. e. Anthropomorphological Polytheism) — इस अवस्थामें निम्नलिखित धर्म शामिल है—

प्राचीनतम वैदिक धर्म (भारतवर्ष) ।

जरायु, स्त्रीय मतके पूर्ववर्ती इरानोय धर्म (पैकट्रिया, मिट्रिया वा मद्र और पारस्य) ।

बाबिलोनीय और सामीरीय मध्य धर्म ।

अन्या उन्नत सेमितिक धर्म (फिनीकीय, कानान, अरमिय वा अर्मेनिय), सेविया कैल्टिक, जर्मनीय, इलेनीय और ग्रीक-जर्मनका धर्म ।

२ नैतिक धर्म ।

(क) साम्प्रदायिक वा जातिगत देववादकी अवस्था (National nomistic or nomastheistic) — इन अवस्थाओंमें निम्नलिखित धर्म शामिल हैं,—ताओ (Taoism), कनफूचीय (Confucianism), जैनधर्म (चर्चत धर्म समुद्र विभाग में स्थित), मज्झिम मत (Mazianism) वा जरायु, स्त्रीय मत, मूसामत (Mosaism), और जूडाका मत (Judaism) ।

हिन्दू, ब्रह्मन्, बौद्ध, जैन, महम्मदीय धर्म आदि अष्टोंमें उनके धर्मोद्धार विस्तृत विवरण देखो ।

२ एक देवता । ये ब्रह्माके दक्षिण स्थानसे उत्पन्न हुए हैं । (महावक्त्र ४।१०) ।

दस प्रजापतिमें धर्मदेवकी १३ कथ्याये दान दीं । इन सब पत्नियोंमें धर्मकी अनेक उन्मत्त हुईं जिनमेंसे यदाके गर्भसे सत्य, मैत्रीके गर्भमें प्रसाद, दयाके गर्भमें अभय, शान्तिके गर्भमें दाम, तुष्टिके गर्भमें धर्म, पुष्टिके गर्भमें गर्व, क्रियाके गर्भमें योग, अवतिका गर्भमें धर्म, बुद्धिके गर्भमें धर्म, सिद्धाके गर्भमें सत्य, तितित्वाके गर्भमें सद्गान, सत्ताके गर्भमें विनय और भुक्तिके गर्भमें नर और मारायण उत्पन्न हुए । (मातृवत्)

वराहपुराणमें धर्मकी उत्पत्ति इस प्रकार मिली है— एक दिन ब्रह्मा प्रजाकी सृष्टि करनेके अभिलाषों से पतितगय चिन्तापरायण हुए थे । चिन्ता करनेसे उनके दक्षिणाङ्गमें एक तक्षकप्रमादी और अनेकतन्मय तथा अनु-

सेवनायुक्त एक पुरुष प्रादुर्भूत हुए । उसे देख कर ब्रह्माने कहा, 'तुम अतुष्याद हवाकति हो, पतः तुम लक्ष्य हो कर प्रजाका पालन करो ।' इतना कह कर वे स्थिर हो रहे । वही धर्म मन्वयुगमें अतुष्याद, वेतामं विषाद, हापरमें हिषाद और कलिमें एक पाद द्वारा प्रजाका पालन करते हैं । वे ब्राह्मणांको सम्पूर्ण रूपसे, क्षत्रियोंको तोन भागमें, वैश्यांको दो भागमें और गृह्यं की एक भाग द्वारा रक्षा करते हैं । गुण, द्रव्य, क्रिया और जाति ये चार पाद हैं । वेदमें उनका विशद नाम रखा गया है । उनके पादान्त पीकार, दो शिरा और सप्त हस्त हैं, उदात्तादि तोन स्वर द्वारा बह हैं । ब्रह्माने यह भी कहा था, 'धर्मदेव ! आजसे तुम्हारा व्रतोदगो तिथि नाम पड़ा । इस तिथिमें तुम्हारे उद्देशमें जो उपवास करेंगे, वे सब पापोंसे मुक्त हो जायेंगे ।'

वामनपुराणमें लिखा है, कि धर्मके पहिले नामक भार्याके गर्भमें चार पुत्र उत्पन्न हुए । इनमेंसे बड़ेका नाम भनकुमार, द्वितीयका मनातन, तृतीयका मनक और चतुर्थका नाम मनन्द था । किन्तु दूसरे पुराणमें ये ब्रह्मके मानसपुत्र माने गए हैं ।

१ धनु । ४ यम । ५ मोमप । ६ सक्ता । ७ चर्चत, जिन । ८ न्याय । ९ स्वभाव । १० वाचा । ११ उपमा । १२ क्रतु । १३ पहिलेवा । १४ उपनिषद् । १५ आत्मा । १६ जीव । १७ भाग्याय नन्दभेद, ज्ञात नन्दसे नवम स्थानकी धर्मस्थान कहते हैं । यह नवम स्थान देख कर बानक किम प्रकार भाग्यसम्पन्न होकर धार्मिक होगा, यह जाना जा सकता है । इसका विषय ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है—धर्म कार्यमें प्रवृत्ति, भाग्योपपत्ति, चरित्रवृद्धि, नीचयात्रा और प्रलय ये सब पुण्यालयों अर्थात् नवस्थानमें निदधित होतीं । तन्वादि अन्यान्य स्थानोंका त्याग कर पड़ते भाग्यस्थानका विचार करना नितास्त प्रावश्यक है । कारण थायु, विद्या, यम और पिता ये सभी भाग्याधान हैं । गणितज्ञ पण्डितोंको अन्यान्य विन्ताका परिचय कर यदपूर्वक भाग्यका विचार करना चाहिए । भाग्यधर प्यक्तिका जीवन, माता, पिता और वंश सभी धर्म हैं । जिनके विपुल विस्तार हैं, वही प्यक्ति कुनोन, पण्डित,

धर्मस्थानमें रहनेमें यह दार्ष्टिक, धर्महीन, पिछवधक, नियत पापनिस्त, अनश्वर, रोगविशिष्ट और वीर्यहीन होता है तथा उसको स्त्री या प्रकृतमें रत रहनेवाला ऐसा विचार करना चाहिए । राहुके धर्मस्थानमें रहनेमें मनुष्य लक्ष्म, कुत्तिलवध-परिधानकारी और अत्यन्त दोन होगा तथा वह चण्डालके जैसा कर्म करेगा और ज्ञातिवर्गके साथ नियत चामोट प्रभेदमें रत रहेगा । यह मनुष्य सबदा शत्रु कुनने डरता रहेगा । राहुके धर्मस्थानमें रहनेमें मनुष्य नीच कर्ममें पतुल, सत्यहीन, शीघ्रचरित लोभाग्रहीत और पतिहीनहीन होगा, ऐसा समझना चाहिए । १८ द्रुह्य वर्गोय लृपभेद । (भाग १२३।१४)

धर्म—कामासन प्रदेशके अन्तर्गत हिमालयके दक्षिणस्थ एक जनपद । यह चक्षो ३०° ५' से ३०° ३०' उत्तरे मध्य अवस्थित है । इस देशके मध्य निम्न नामक पर्वत-श्रितर १८८४२ फुट ऊँचा है । उत्तर सोमान्तमें धर्म-निषिध इन्द्रदेश नामक जनपदमें ला मिला है । यह गिरिपथ १५०० फुट ऊँचेमें अवस्थित है । इसी स्थानमें गङ्गाकी उपनदी काली नदी निकली है । कालीकी प्रधान उपनदी धोली नदी भी इसी प्रदेशमें प्रवाहित है । पश्चिमासिन्धु भूटिया और तिब्बतीय हैं । ये लोग मेष-पालन लेकर कामासन और इन्द्रदेशके मध्य वाणिज्य करती हैं । देवका परिमाण फल प्रायः चार सौ वर्गमील है ।

धर्मकथक (मं० पु०) धर्मकथा ।

धर्मकथादरिद्र (मं० पु०) धर्मार्थकामार्थ दरिद्रः । कलिकालमें जात मानव । कलिकालमें मानवगण धर्मकथा विहीन होते हैं इसीसे उन्हें धर्मकथा दरिद्र कहते हैं ।

धर्मकर उपाधाराय—तद्वागादि प्रतिष्ठापयति नामक स्मृति पद्यके प्रस्ता ।

धर्मकर्म (मं० स्त्री०) धर्माय धर्मस्य वा कर्म कार्य ।

धर्मकुष्ठान, यह कर्म वा विभाग जिसका करना किसी धर्मपथमें आवश्यक ठहराया गया हो ।

धर्मकाम (मं० पु०) धर्म कामयते फलमिति सन्धानिन कर्म-पथ । कर्त्तव्य बुद्धिद्वारा धर्मकारक ।

धर्मकाय (मं० पु०) धर्माय कायो देहो यस्य । बुद्ध ।

धर्मकार (मं० पु०) धर्मकरोतीति धर्मक-पथ ।

धर्मशास्त्रकर्त्ता ।

धर्मकार्य (मं० स्त्री०) धर्माय धर्मस्य वा कार्य । धर्म कर्म ।

धर्मकीर्त्ति (मं० पु०) १ उच्चकारदीय-पुराचोक्त एक राजा । २ एक विख्यात बोध नैयायिक और प्राचीन कवि ।

इकोने बोधमज्झि नामक अन्तर्धारण्य, प्रमाण-वार्त्तिक, प्रमाण-विनियय और प्रयत्नपाद नामक ग्राय ग्रन्थ प्रणयन किये हैं । खण्डनखण्डलाय, धाममट्टा, मवट्ठनसंग्रह प्रभृति ग्रन्थोंमें इनका उल्लेख है और मनुस्मृतिकर्त्ता, सुभाषितावली, तथा धन्वालीकलोचन नामक ग्रन्थोंमें इनको बनाई हुई कविताएँ उद्धृत हैं ।

३ धातुप्रत्ययपरिज्ञाता और धातुमञ्जरी नामक व्याकरण रचयिता ।

धर्मकील (मं० पु०) धर्मस्य कील इव । शासन राज्य, शासन ।

धर्मकीलक (मं० पु०) धर्मकील सन्ध्यायां कर्त्तु । मन्त्र-शासन ।

धर्मकुमारसाधु—एक जैन पंथकार । इसीने शोकभद्र-चरित नामक पंथको रचना की । धर्मकुमारसाधु अपने गुरु-तामिकाका भी उल्लेख कर गये हैं इसमें जाना जाता है कि नरैन्द्रगच्छके मध्यामें हैमप्रमचरि उत्पन्न हुए । हैमप्रमचरि के शिष्य विद्याधरप्रभ और विद्याधरके शिष्य धर्मकुमार साधु थे । प्रथम भावार्थ-ने इनके पंथका संशोधन किया । उस शीलभद्रचरित नामक पंथ 'जनातिपययचवर्ग'में लिखा गया ।

धर्मकूप (मं० पु०) एक प्राचीन तीर्थ ।

धर्मज्ञत (मं० स्त्री०) धर्म धर्मसाधन कर्म करोति ज्ञापि, तुक् । १ धर्मसाधन कर्मकर, धर्म करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

धर्मकृत (मं० स्त्री०) धर्मकार्यका अनुष्ठान ।

धर्मकेतु (मं० पु०) धर्मः पदिसादय कर्म केतुष्य । १ बुद्ध । बोधधर्ममें पदिसा हो एकमात्र परमधर्म है, इसीसे धर्मकेतु शब्दसे बुद्धका बोध होता है । २ कामय वर्गोय मुक्तेषु राजाको एक पुत्रका नाम । विष्णुपुराणके मतसे ये सुकुमारके पुत्र थे । ३ एक व्याघ्र । ४८८० फुट लोसाब्द महादेवके प्रापसे साकसेतु नामसे इससे पुत्र हुए थे ।

करनेका विधान है। बादें लक्ष्मी, मरुस्ती और आधरप देवताकी पूजा कर नैवेद्य उत्सर्ग करना चाहिये।

‘एति गन्धपुष्पे नमः सभोज्यवारिपूर्णशयः नमः’ इम प्रकार तीन बार भर्चना कर यह मन्त्र जप करते हैं—

‘ओ षट्सं धर्मस्तोतुमि मन्त्राणि निर्मितः पुरा।

एवमि तिष्ठे मन्त्र लिखत्यन्धनैः सर्वं देवता ॥’

इस मन्त्रसे चन्दनानुलेपन कर ‘षष्ठोत्पादि यमुक गोत्रा ओषसुकी देवो श्रीविष्णुपीतिकामा धर्मघटवत्त कर्मणि इमं सभोज्य वारिपूर्णघटमर्चितं श्रीविष्णु देवतं यथासम्भव गोत्रनाम्न ब्राह्मणायार्चं ददे।’ इस प्रकार उत्सव कर लताझालि हो पाठ करना चाहिये।

यह पाठ करके दक्षिणा देते हैं, बाद भविष्यपुराणीक धर्मघटवत्तकथा सुनते और भस्ममें ब्राह्मणादि भोजन कराते हैं। इस व्रतके करनेसे स्त्री सौभाग्यवती होती है।

धर्मघटो (हि० स्त्री०) ऊँचे स्थान पर लगी हुई बड़ी चट्टो जिसे सब कोई देख सकें।

धर्मघोष—१ जैनियोंके युगप्रधानोंमेंसे एक।

२ एक जैनग्रन्थकार। ये ‘महाचार’ और ‘शक्ति-यति पर्याप्तविश्वस्तयम’का नामसे कयात् २८ सुति रच गए हैं। ये तपागच्छीय देवेन्द्रके शिष्य और भोमप्रभके गुरु थे। १३०२ सम्बत्की देवेन्द्रने उल्लयिनी नगरमें महेभ्य जिनचन्द्रके वीरध्वज और भोमसिंह नामक दो पुत्रोंको दोलित किया। १३१३ सम्बत्में (किंवोके मतसे १३४४ सम्बत्में) वीरध्वज को विद्यानन्द नाम दे कर देवेन्द्रने सुरिपद प्रदान किया और इनके भाई भोमसिंह को धर्मकीर्तिक नाम दे कर उपाध्यायके घट पर नियुक्त किया।

१३२० सम्बत्की मातवमें जब देवेन्द्रकी मृत्यु हुई, तब विद्यानन्द सुरिने गुरुका पद प्राप्त किया। किन्तु तेरह दिग बाद ही विद्यापुरमें उनकी मृत्यु हो गई। देखि उनके भाई धर्मकीर्ति उपाध्याय धर्मघोष नाम धारण कर सुरिपद पर प्रतिष्ठित हुए। सुरिपद पानेके पहले ही इन्होंने धर्मकीर्ति उपाध्याय नामसे महाचारकी रचना की। ये “जानमसति” नामक एक और ग्रन्थकी रचना कर गए हैं।

३ एक जैनाचार्य, चन्द्रकुलके भस्मगत शीमनद्रपुरिने शिष्य और यथोधरके गुरु। ये वादिमदहर नामसे प्रसिद्ध थे। इन्होंने किमो एक शाक्यधरो-राजको दोलित किया। पद्मप्रभके गुरु वादिचूडामणि धर्मघोष सुरि और ये समिष व्यक्ति मने आते हैं।

४ कोटिगणके मध्य यज्जगामभूत, चन्द्रगच्छीय चन्द्रप्रभके शिष्य और मसुद्रवाचके गुरु। इन्होंने २० शिष्योंको सुरिपद प्रदान किए। इन्होंने ग्रन्थमिह नामक आकरणकी रचना की है। इन्होंने भगने गुरुके शु। जयसिंहके बादेगानुसार पूर्णिमागच्छ प्रतिष्ठित किया। ११४८ सम्बत्में यह गच्छ स्थापित हुआ। रामकण गोपाल भाग्यकारके मतानुसार इनके गुरु चन्द्रप्रभने जो उक्त गच्छकी प्रतिष्ठा की है।

५ एक जैन ग्रन्थकार, चन्द्रगच्छीय जयसिंहके शिष्य और महेन्द्र सुरिके गुरु। १२६३ सम्बत्में इन्होंने “गतपदिका” को रचना की और १३८४ सम्बत्में महेन्द्र-शिष्यने उनका एक सखल पाठ प्रकाशित किया। इनके गुरुका नाम था ‘चार्य’रचित। मेरुतुल्लके ‘गतवादिगा-मागेहार’ नामक ग्रन्थमें लिखा है कि धर्मघोषने महा-पुरके भस्मगत मरुदेगमें १२०८ सम्बत्की जन्म ग्रहण किया। इनके पिताका नाम चन्द्र और माताका नाम राजनदेवा था। इन्होंने १२१६ सम्बत्में ग्रन्थग्रहण, १२२४ सम्बत्में सुरिपद प्राप्त और १२६८ सम्बत्में ६० वर्षको अवस्थामें स्वर्गगमन किया। इन्होंने ही शाक्यधरोराजको जैनधर्ममें दोलित किया था।

६ एक सुरि। ये महेन्द्रगच्छके भस्मगत हैमप्रभके शिष्य और सोमप्रभके गुरु थे।

७ एक जैनग्रन्थकार। ये महेर्षिकुलपण्य बना गए हैं।

धर्मघ्न (सं० त्रि०) धर्महन्ति इनका। धर्मनाशक, धर्मघोषो।

धर्मउक (सं० क्री०) धर्मस्य चक्रं ६-तत्। १ धर्मसमूह, धर्मका टेर। २ बुद्ध। ३ पञ्चविमेष, प्राचीन कालका एक प्रकारका पञ्च।

धर्मचक्रभूत (सं० पु०) धर्मचक्रं धर्मसङ्घं विभर्त्तानि भू क्रिप्, तुगागमनः जिन।

अस्यैवमिति—एतन्मैत्रेयस्यैव । अस्मिन्मैत्रेयस्यैव ।
अस्मिन्मैत्रेयस्यैवमिति—एतन्मैत्रेयस्यैव । अस्मिन्मैत्रेयस्यैव ।

भर्तृहरि (अ० पृ०) चर्चायाच ।

अध्यायः (१००) अध्यायः १०० । अध्यायः, अध्यायः
अध्यायः ।

अमरजाति (मं० श्लो०) अमरं चरतीति चरमिति-
हो० । अमरा, चरममिथो, श्लो० ।

अमं चारिम् (मं० ति०) अमं मन्त्राधनममं चारिम् चर-
तिम् । अमं मन्त्राधनममं चारिम्, अमं का चारिम् चरिम् ।

नमः ॥
भमः धिमाक (सं. ५०) विमापति इति विमाकः धर्मः

विमलः, धर्मविज्ञाकारी, वह जो धर्म संबंधी बातों का विचार करता हो।

भगविष्णुस (गं० सं०) विभि भावे लुट्, भगवद्विष्णुस
४-सत। भगविष्णु, भगवत्सत्तः विष्णुत्वात् विष्णुः ।

धर्मचिन्ता (मं० पृ०) चिन्ता भावे च टाप् । धर्मस्य
चिन्ता । धर्मविषयको चिन्ता धर्म विषयको विषय ।

धर्मशक्ति (मं० पृ०) आशुत सुनिहा आमाकाद ।
 धर्मशक्ति (मं० पृ०) आशुत सुनिहा आमाकाद । धर्मशक्ति

तपस्य मत्ता धीरम सुतः । सुतः शर्मा श्रीमते विद्याय
श्रीमते शर्मा श्रीमते । विद्यायः शर्मा श्रीमते । विद्यायः शर्मा श्रीमते ।

पक्षोंमें जो प्रथम पुत्र कायम हो, सभी धर्मिक व्यवहारे हैं।

पिशा जिह्वावशमे मुल दीपा है और वरुणं यमकाय काम

[illegible]

नामः (औ०) ४ दिवसि । (५०) ३ मासावयम् ।
(६०) १ वर्षे ३ मासमात्रे । वर्षे ३ मासमात्रे ।

अमरकान्त (मं० पु०) अमरको कथं गतः । दुर्दिनः ।

आम लोग, सब लोग भी धर्म ही कोन है ।

[illegible]

सीमांतरी को जाती है, कर्ते पक्ष निश्चयः कहते हैं।

[illegible]

मनुने निरादे कि भयं भोवक माह्वन म'द भयं
भय हो, तो राधा पुने दण्ड देवे ।

धर्मज्ञ (मं० ति०) धर्मः आत्मानो निरुद्धः । धर्मज्ञान
विदित्, धर्मज्ञो आत्मनिष्ठः ।

भयंकार-पश्चिम तौर दक्षिण बहामको बाहो, पं०.
डोम, जैयरी धादि निवासन बिल्लु कानिबं समान

देवता । इसका नाम माधवारत्नः भगंठाकृत, भगंठा
माधमंशय है । इससे विद्या विभिन्न ज्ञानोपे विभिन्न

काम प्रवृत्ति है। जनतापुरको भूमि या मजिमा
कोई एक निमित्त या कारण नहीं है, बल्कि यह है।

मिथुनमण्डित मण्डप, जहाँ जिनो एक मन्त्रीको
मन्त्रिके कर्म बलको मन्त्र बोले। बलको मन्त्रादि

पर्यन्त भिन्न है। कबो कल्याणकार, कबो त्रिकीकार
होत कबो मित्रविहिन होई भाग्ये प्रयास रहको शक्ति

જમનો જે, હમને વિશા ધોર માં અનેક વચારનો પ્રતિભાવ
જે । માતા આત્માને હમને પ્રતિભાવ છે । પ્રતિભાવને

मणिमा खी, ईमी खीई निदम नही", कदा" मणिमा खीमा
ई, कदा" मणिमा खीमा खीमा ई खीमा कदा" मणिमा खीमा

अन्तर्गत है। अतः यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि जो लोग

मन्त्रीं मेदात्मं त्रिषु विद्यं यज्ज्ञान परं यमात्मन इदमि
पदे इयं है । इत्युक्त्वा सिद्धात्मा मन्त्रीं बोधः । मन्त्राय

मन्त्रमात्रमेव विद्यते हिमं वा वायुं चम-
नः कर्माणि यथाः कर्माणि च । अथोः यथोः विदुः-

ਸੂਰਮਾ ਦੀ ਸ਼ਾਨਦਾਰ ਮੀ ਦੀ ਗੱਲ ਹੈ । ਅਸੀਂ ਦੀ ਸ਼ਾਨਦਾਰ
ਮੀ ਸ਼ਾਨ ਮੀ ਦੇਖਣੇ ਦੇਖਣੇ ਹੈ । ਅਸੀਂ ਦੀ ਸ਼ਾਨ

जाति का जड़ों का दीमकको टोरो जलो दूरी करोंग है ।
मिथ्याको से रोहितां भां जलद जलद मोममें वा । कौनमें

पुनः ही ज्ञानो है । इति ज्ञानो है । अथवा ज्ञानो है ।
इति ज्ञानो है । इति ज्ञानो है । इति ज्ञानो है ।

सद्वर्तमान। यही विचारधारा हमारे देश के, हमारे समाज के, हमारे
राज्य के प्रति हमारे मन में बसाई जा रही है। यही हमारे देश के

मैत्र, सुग्री और सुहर तक चढ़ाये जाते हैं। पूजकके भेदसे पूजनकी व्यवस्था होती है। 'अधिकार्य स्थानोंमें निम्न श्रेणीके लोग ही इनकी पूजा करते हैं, जैसे डोम, पोदो आदि। कहीं कहीं कौत्स, सद्गोप आदि भी धर्मकी उपासना करते हैं। डोम और पोदोंमें जो पण्डित कहलाते हैं, वे ही इनकी पूजा करते हैं। धर्मठाकुर एक प्रकारसे इनके निजस देवता हैं। कहाँ जितने नीच जातिके लोग इनके पूजनेवाले हैं, वहाँ उतनी ही नीच जातिके पण्डितोंको बलि होती है। कौत्स आदि द्वारा सेवित धर्मस्थानमें बलि तिथि है। धर्मठाकुरकी पूजा नीच जातिके सिवा ब्राह्मण आदि भी करते हैं। स्थानभेदसे इसके भी विभिन्न नियम हैं। कहीं कहीं एक ही धर्मावस्थामें निम्न श्रेणीके ब्राह्मण और नीच जातीय पूजक दोनों उपस्थित होते और पूजादि करते हैं। मन्त्र माननेवालेको कृषिके पशुमार ब्राह्मण वा अन्य कोई नीचजातीय पूजक पूजा कर सकता है। कहीं कहीं 'स्वयं' मन्त्र माननेवाले ही पुरोहितके साथ पूजा किया करते हैं। पूजाका विधान सर्वत्र ब्राह्मण देवताके पूजाविधानके सदृश है। जिस धर्मावस्थामें बलि चढ़ानेकी मनाई है, वहाँ नीचजातिके लोग यदि बलि देनेकी मन्त्र मान भी लें, तो भी बलि नहीं चढ़ा सकते। धर्मकी पूजा प्रायः पश्चिम मुख बैठकर की जाती है और धर्म देवता पूर्वमुख विराजमान रहते हैं। हर एक मन्त्र माननेवालेकी तल और चन्दूर चढ़ाना पड़ता है। धर्मके अधिकार्य पूजा न चुना देनेकी मन्त्र मानते हैं, उस चुनैवे मन्दिरकी सफेदी कराई जाती है। इनका सेवा भी लगता है। भाद्र और वैशाखको संक्रान्तिके दिन यह उत्सव होता है। मेला पर नागा स्थानोंके यात्रियोंका समागम होता है।

यात्री लोग संक्रान्तिके एक दिन पहले हजिब वा फलमूलादिका आहार करते हैं। फिर संक्रान्तिके दिन पूजा करते धर्मठाकुरका प्रसाद पाते हैं और दिन रात धर्मके गीत गाते हैं। मेला पर जितने भी यात्री मन्त्र मान उतारते हैं, पूजक उन सबके नाम और गोकुला उल्लेख कर मन्त्र उच्चारण करते हैं। इसके लिए उन्हें प्रत्येकमे दक्षिणा मिलती है। यात्री लोग धर्मके मन्दिरमें कर्दम

का टेर करके उसमें एक नकड़ी गाड़ते हैं, उस नकड़ीके ऊपर रुई लिपटी रहती है, रुईमें घो डाल कर जलाते हैं। इस तरहसे प्रत्येक यात्रीको दीपपटल जलना पड़ता है। भाद्र और वैशाखको संक्रान्तिके सिवा धर्मकी मन्त्र ग्रन्थ पढ़ना मन्त्रधारकी भी उतारी जा सकती है। वहाँ बहुत लोग प्रायः पूर्णिमा तिथिके वा बंगमा मासकी संक्रान्तिके दिन भी मन्त्र उतारते हैं। धर्मठाकुरकी मन्त्र मान कर लोग बलि रखते हैं, घर नख वा दाढ़ी नहीं रखते। बालक बालिकाओंके बाल भी धर्मके नामसे बढ़ाये जाते हैं। समय-समय पर प्रतिमा वा चटकी पण्डित घर ला कर बड़ी धूमधामसे पूजा उत्सव करते हैं। मेलेके सन्ध्यामियोंको 'गति' और पूजार्थियोंको 'भगत' कहते हैं।

धर्मठाकुरके पक्के मन्दिरोंके पूजारी ही उनके अधिकारी हैं। उनकी बंगारम्परा मन्दिरोंकी बायका भोग करती है। पश्चिम बंगालके धर्ममन्दिरोंमें कात्ती पामदनी है।

धर्मठाकुर नीचजातिके देवता होने पर भी मन्त्र मानते हैं। ब्राह्मण आदि पंडितोंसे भी इनकी मन्त्र मानते हैं। जहाँ इतना कह सकते हैं कि उच्च श्रेणीके लोग धर्मके नाम पर सन्ध्या नहीं करते। सुनसमानो भी इनको मानते और पूजादि करते हैं। सुनसमानोको पूजा पण्डित (पूजक) ही करते हैं। यजमान-व्यवसायी ब्राह्मण-गण कहीं कहीं विमोक्षित; उस जगह जहाँ कि धर्मका प्रभाव नहीं है, पूजा करनेको राजी नहीं होते। किन्तु जहाँ धर्मके प्रबल मन्दिरादि हैं, वहाँ बहुतसे मन्त्रान्तर्गत विभिन्न यजमानों ब्राह्मण भी यजमानकी भौतिके लिए धर्म पूजा करते हैं।

पूजाके नियम :—पूजाके दिनको तिथिका उल्लेख कर पहले सङ्कल्प किया जाता है। फिर ठाकुरकी प्रतिमाका प्रसादन और तुलसी वा विजयपटादिके द्वारा उनका ध्यान किया जाता है। पश्चात् धर्मके योजनमन्त्रोंका उच्चारण कर पक्षीपचार वा घोड़गोपचारसे पूजा की जाती है।

पूजकके भेदने वा ब्राह्मण प्रभावकी आसक्तिसे पशुपार इनकी पूजाके बंगला और संस्कृत मन्त्र हैं।

पुस्तकका नाम 'वपदेगमाला' है। मिहसाधुने इस पत्रकी एक टोका की है। देवेन्द्रने १४२८ सम्यत्में इनके पत्रके प्रमाण उद्धार किया है, सुतरां ये १४२८ सम्यत्के पूर्ववर्ती मनुष्य थे। इनकी बगई हुई और भी एक टोका है।

धर्मदीपिका (स० स्त्री०) गौड़-प्रसिद्ध मीमांसा ग्रंथ-विशेष।

धर्मदुष्टा (स० स्त्री०) धर्मान् दोषि, पापादयः कष्टल-विषयया कर्त्तरि दुष्टक भवाम्नादेः। धर्मदान स्थान। चर्चिर्दो।

धर्मदेव—नेपालके लिच्छविवंशीय एक राजा। अपने पिता मल्लदेवके मरने पर ये राजा हुए थे। इनके मामदेव नामक एक लड़का था।

धर्मदेग (स० पु०) धर्मसाधन देगः। सर्वार्थात् यज्ञीय देग। जहाँ स्वभावतः छात्रसार श्रम विवरण करते हैं उस स्थानको धर्मदेग कहते हैं। यह धर्मदेग द्विजोंके लिए धर्मसाधनदेव है।

धर्मदीप-शुभ सन्नाह, मिथुनवर्द्धनका मन्त्रो। इनके पिताका नाम दीपकुम्भ था। सुविख्यात भगवदत्त इनके बड़े भाई थे। उन्होंने कोमलसे मिथुनवर्द्धनका राज्य खूब बढ़ बढ़ गया था। ये राजा और प्रजाके हित में मित्र और माना थे कि उन्हें राजोचित परिष्कृष्टादि वस्त्रनका अधिकार मिला था। इनके छोटे भाई "निर्देव" नामधारी टचने एक बड़त्त रूप खुदवाया था।

धर्मद्रवी (स० स्त्री०) धर्मजनकी द्रवी यस्याः, गौरादित्वात् ङीष्। गङ्गा।

धर्मद्रोहिन् (स० पु०) धर्माय परस्व धर्मावरणाय द्रुहति द्रुह-णिनि इत्त्। राक्षस।

धर्मद्विन्दु (स० पु०) धर्मद्विष्टि धर्मद्विष-णिनि। १

धर्मद्वेष्टा, धर्मद्वेषकारी, राक्षस। २ विभीतकहच।

धर्मधजा (हि० पु०) १ धर्मके निमित्त उठाए जानेका कष्ट, वह हाजि या कठिनाई जो परोपकार यादिके लिये महजो पहुँ। २ वह कष्ट या प्रयत्न जिससे अपना कोई काम न हो, व्यर्थका कष्ट।

धर्मधातु (स० पु०) धर्मः पविः साक्यः परमं धर्मं ददाति धा-तुन्। बुद्धदेव।

धर्मध्वज (स० पु०)—मिथिला नगरके जनकवंशीय एक राजा। इनके विषयमें महाभारतके शांतिपर्वमें हम प्रकार लिखा है,—सत्ययुगमें मिथिला नगरमें धर्मध्वज नामक जनक वंशीय सन्ध्यामधर्मतत्त्व एक प्रसिद्ध नरपति रहते थे। वेद, भोचगात्र और दण्डनीतिके विषयमें वे पूर्ण पण्डित रहते थे। पाप इन्द्रियोंकी वशोभूत कर सुनिग्रमसे राज्यका शासन करते थे। वेदतः पण्डित तथा पन्थान्य व्यक्ति, सब पापकी साधुताका स्मरण कर पापका अनुकरण करना चाहते थे। उस समय सुलभा नामक एक सन्ध्यामिनी योगवर्म प्रवक्तृत्व कर यक्षीनी पृथिवीका पर्यटन कर रही थीं। एक दिन परिभ्रमण करती हुईं वे मिथिला नगरमें उपस्थित हुईं और लोगोंके सुँहसे धर्मध्वज राजाको प्रगंभा सुन, उनकी परोक्षा करनेकी अभिप्रायसे योगवर्मसे अच्छा रूप धारण कर भीष मांगनेके बहाने राजाके समक्ष पहुँचीं। राजा धर्मध्वज इनके अपूर्व रूपसाक्षकी देख कर चकित हो गये और मनमें विचारने लगे कि ये कौन हैं, किसको कन्या है और कहाँसे आई हैं? साथ ही आपने उनका आगत क्रिया और वात्साद प्रदान किया। उनके बाद हस्त्रेण धारिणो सन्ध्यामिनीने राजाको परोक्षा करने शुद्ध कर दी। उन्होंने अपना सन्देह दूर करनेके लिए अपनी बुद्धि द्वारा राजाकी बुद्धिमें और अपनी पाली द्वारा राजाकी पान्थीमें प्रवेश कर योगवर्मसे उन्हें वशोभूत और बद्ध कर लिया। इस समय दोनोंके वाद्यगरीर कार्याचम हो गये थे।

सनत्तर राजा धर्मध्वज सुलभाके अभिप्रायकी जाण कर निद्रदेहका पाथय ले बैठते हुए बोले—देवि! तुम्हारा वासस्थान कहाँ है, तुम किसकी कन्या हो और कहाँसे आई हो, कहाँ जाओगी? बिना पूछे कोई भी किसीके शास्त्रज्ञान, वयःक्रम और जातिकी विषय नहीं जान सकता। जब मेरे समक्ष मैंने शास्त्रज्ञानादिका विषय जानना तुम्हारे लिए प्रार्थनार्थक है। मैं जब राज्यादिविषय शुरु हो चुका हूँ। जब तुम्हारे पाप अपनी तत्त्वज्ञान कोर्तन कर तुम्हारे सन्ध्यामिनी रथा कराना मेरा कर्त्तव्य है। महात्मा पद्मपिप मेरे गुरु हैं, उन्होंने भीने मोक्षधर्म साम किया है। मैं उनकी प्रसादसे साक्ष-

जहाँ आत्मपुत्रभाव पवित्र है, वहाँ 'धो धो धो' यह मन्त्र धर्मका योत्रमन्त्र समझा जाता है। जहाँ धर्ममें विष्णु, मूर्ति को करुणा की जाती है, वहाँ विष्णु-स्नान का मन्त्र मन्त्र होना परिवर्तित होरश्ममपुत्र पाकारमें धर्मके स्नानमन्त्रके रूपमें व्यनक्त होता है। परन्तु इनका ध्यानमन्त्र भिन्न है, वह भी ज्ञाना स्नान-मन्त्र नामा प्रकार है।

धनराम नामक बंगाली कविका मत है, कि रमाई पण्डित (एक बंगाली विद्वान्) इस पूजाके प्रवर्तक हैं। उनकी रचो हुई पद्धतिके अनुसार इनकी पूजा होती है।

विशेष—धर्मठाकुरकी पूजा आदिका विवरण लिख चुके। अब इस बातका निरूपण करना चाहिए कि धर्म-पूजा कबसे और कैसे प्रचलित हुई? धर्मठाकुरकी मूर्तिमाको प्रकट करनेवाला कोई मन्त्रज्ञ पन्थ उपलब्ध नहीं है। हाँ, चण्डीमन्त्र आदि बंगला ग्रन्थोंमें इनका उल्लेख है और कुछ मन्त्रज्ञगीत भी देखनेमें पाते हैं।

धनराम चक्रवर्तीप्रणीत श्रीधर्म-मन्त्र नामक बंगला पुस्तकके पृष्ठमें मान्य होता है कि गौड़पति धर्मपालकी सासी रक्षावतीके पुत्र सावसेनके द्वारा इस पूजाका प्रचार हुआ है। रमाई पण्डितने रक्षावतीकी धर्म-पूजाका उपदेश दिया था। मेदिनीपुरमें मयनागढ़ नामक स्थानमें रमाई पण्डितका आश्रम था। इस आश्रममें मयनावतीमें कण्ठकश्या पर शयन कर धर्मको तपसा पूर्वक उनकी वरपुत्रके रूपमें सावसेनकी गर्भमें धारण किया था। सावसेनने ही मयनागढ़के राजा की वर रमाई पण्डितके उपदेशानुसार धर्म-पूजाकी कथा बसाई थी।

शूद्रपुराणके मतमें, धर्मठाकुर पैदल पयोद्वयल और नितालकी नहीं मानते। इनका कोई पाकागादि नहीं है; ये महाशूद्रके मध्य शूद्र मूर्तिमें वसन्ति है और शूद्रमें ही खटि करते हैं। यह भाव किसी भी हिन्दू पुराणादि शास्त्रमें नहीं देखनेमें पाता। शूद्रवाद ही बौद्ध दर्शनकी नीति है। ब्राह्मण और वैष्णव देखो।

धर्म (मं० पु०) धर्मविषय धार्मिकवृत्तियः नमोति मन्त्रः । १ हृदयं द, धार्मिकवृत्तिः । २ धर्मविषय, धार्मिक वृत्तिः । ३ धर्मविषय, धार्मिक वृत्तिः ।

धर्मः (मं० पद्य) धर्म-तन्त्रिणः । धर्मोत्तमार्थे, धर्मको ध्यान रखते हुए, धर्मको मार्गो करके । २ धर्मके निष्कर्ष, धर्मके द्वार पर ।

धर्मतत्त्व (मं० लो०) धर्मतत्त्व तत्त्वः । धर्मतत्त्व, धर्मका निगूढ़ मर्म ।

धर्मतीर्थ (मं० लो०) धर्मज्ञान तीर्थः । तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम ।

महाभारतमें लिखा है, कि धर्मतीर्थ पश्यता न्येह तीर्थ है। यहाँ धर्ममें तपस्या को घे, इसीसे यह तीर्थ धर्मतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है। इस तीर्थमें स्नान करनेसे धर्मशील होता है और स्नान करनेवालेका सातवाँ कुल पवित्र हो जाता है।

धर्मत्व (मं० लो०) धर्मस्व भावः धर्मत्वः । धर्मत्व, धर्मत्व ।

धर्मदाता—एक बौद्ध धर्म पुस्तकके प्रवेसः । इनका पूरा नाम धर्मदा या धर्मधर्मदाता है। इनकी बौद्ध धर्म पन्थ धर्मपदके उत्तरदेशीय पाठानुसारसे 'उद्दामवर्ग' नामक बुद्धोक्ति संघट की। ये वसुमित्रके मामा और सम्भवतः धर्मदेवके ब्राह्मण थे। उत्तरा ये पक्षी गन्धर्वोंमें वसमान थे ऐसा अनुमान किया जाता है। उनके चत्वार्य ग्रन्थोंमें 'धर्मपदवृत्त' चीनी भाषामें २२४ ई० की अनुवादित हुआ है। ताराणाथके मतमें ये ब्राह्मण राजपूतके समकालिक थे। राजपूत वसुमित्रादि चार व्यक्ति थे भाषिक धार्मिकोंके समकालिक रहे। धर्मदाताके भाजा वसुमित्र यदि कनिष्कके समयके समकालिक हुए हों, तो धर्मदाता ४० ई० में विद्यमान थे ऐसा कहा जा सकता है।

धर्मद (मं० पु०) धर्मस्वधर्मकतं ददाति धर्मस्व संज्ञामयति दा-क । १ दूसरे धर्मधर्मकता संज्ञामक । २ धर्मोत्पादक । ३ कुमारानुचर मातृभेद ।

धर्मदान (मं० पु०) धर्मदान की किमी निमित्तसे या विधेय फलकी प्राप्तिके धर्म न किया जाय, धर्मधर्म या सात्विक बुद्धिकी प्रेरणासे किया जाय ।

धर्मदार (मं० लो०) धर्मार्थ धर्मदाताधर्म्य दा-क । धर्मपक्षी ।

धर्मदासगति—एक जैनपन्थकार । इनकी बंगाली

पुस्तकका नाम 'उपदेशमाला' है। सिद्धसाधुने इस पुस्तकी एक टोका की है। ईस्वी १४२८ सम्मत्में इनके ग्रन्थसे प्रमाण उद्धार किया है, सुतरां ये १४२८ सम्मत्के पूर्ववर्ती समुद्य थे। इनकी बगई हुई चौर भी एक टोका है।

धर्मदीपिका (स० स्त्री०) गौड़-प्रसिद्ध मोर्मासा धर्म-विशेष।

धर्मदुष्टा (स० स्त्री०) धर्मान् दोषि, आचारम्य कर्तृत्व-निवर्जिता कर्तारि दुष्ट-क शब्दाम्नादेः। धर्मदान स्थान। धर्मदो।

धर्मदेव—नेपाकके लिच्छविवंशीय एक राजा। अपने पिता शङ्करदेवके मरने पर ये राजा हुए थे। इनके नामदेव नामक एक लड़का था।

धर्मदेग (स० पु०) धर्मसाधन देगः। सर्वतोक्त यज्ञीय देग। जहां स्वभावतः क्षणशर शृंग विवरण कर्त है उस स्थानको धर्मदेग कहते हैं। यह धर्मदेग हिजोंके लिए धर्मसाधनदेग है।

धर्मदीप-गुप्त सम्राट्, विष्णुवर्द्धनका मन्त्री। इनके पिताका नाम दीपकुश था। सुविख्यात अभयदेव इनके बड़े भाई थे। इन्होंने कोगप्रसे विष्णुवर्द्धनका राज्य खूब बढ़ा दिया था। ये राजा चौर प्रजाके हते। प्रिय चौर मान्य थे कि इन्हें राजोचित परिच्छादादि पदमन-का अधिकार मिला था। इनके छोटे भाई "निर्दीप" नामधारी लक्ष्मी एक ब्रह्म कृप सुदवाया था।

धर्मद्रो (स० स्त्री०) धर्मजनको द्रोघी यक्षाः, गौरादि-त्वात् स्त्री। गद्गा।

धर्मद्रोहिन् (स० पु०) धर्माय परस्व धर्मावरणाय दुष्टति दुष्ट-वर्तिन इत्यत्। राक्षस।

धर्मद्विप (स० पु०) धर्म द्वेति धर्म-द्विप-वर्तिन। १ धर्मद्वेष्टा, धर्मद्वेषारी, राक्षस। २ विभीतकहस।

धर्मधक्षा (द्वि० पु०) १ धर्मके निमित्त उठाए जानेका कट, वह हानि या कठिनाई जो परोपकार आदिके लिये मङ्गलपक्षे। २ वह कट या प्रयत्न जिससे अपना कोई लाभ न हो, व्यर्थका कट।

धर्मधातु (स० पु०) धर्म पवित्राकार्य परम धर्म देवति धातुत्। दुष्टदेव।

धर्मध्वज (स० पु०)—मिथिला नगरके जगन्मोघीय एक राजा। इनके विषयमें महाभारतके शांतिपर्वमें हम प्रकार लिखा है,—सत्ययुगमें मिथिला नगरमें धर्मध्वज नामक जनक वंशीय संन्यासधर्मतत्त्वज्ञ एक प्रसिद्ध नरपति रहते थे। वेद, मोक्षशास्त्र चौर दण्डनीतिके विषयमें वे पूर्ण पाण्डित्य रखते थे। आप इन्द्रियांकी वशोभूत कर सुनिश्चयसे राज्यका शासन करते थे। वेदज्ञ पाण्डित तथा सन्यास्य व्यक्ति, हम आपकी साधुताका श्रवण कर आपका अनुकरण करना चाहते थे। उस समय सुसभा नामक एक संन्यासिनी योगव्रत चरमस्वयन कर चलेली पृथिवीका पर्यटन कर रही थीं। एक दिन परिश्रमसे करती हुई वे मिथिला नगरमें उपस्थित हुई चौर लोगोंके सुंघसे धर्मध्वज राजाको प्रणामा सुन, उनको परोक्षा करनेके प्रतिपाद्यसे योगव्रतसे अच्छा रूप धारण कर मोक्ष मार्गके बहाने राजाके समक्ष पहुंचीं। राजा धर्मध्वज उनके अपूर्व रूपसावयकी देख कर चकित हो गये चौर मनमें विचारने लगे कि ये कौन हैं, जिसको कन्या है चौर कहांसे आई है। साथ ही आपने उनका स्वागत किया चौर पाषादि प्रदान किया। उसके बाद वृषभेग-धारिणी संन्यासिनीने राजाकी परोक्षा करने में रुक कर दी। उन्होंने अपना समूह दूर करनेके लिए अपना बुद्धि द्वारा राजाकी बुद्धिमें चौर अपनी चारों द्वारा राजाको चारोंमें प्रवेश कर योगव्रतमें उन्हें वशोभूत चौर बंध कर लिया। इस समय दोनोंके वाद्ययंत्री कार्यालय हो गये थे।

अनन्तर राजा धर्मध्वज सुसभाके प्रतिपाद्यको जान कर चिह्नदेहका आश्रय ले हंसते हुए बोले—देवि। तुम्हारा वासस्थान कहां है, तुम किसकी कन्या हो चौर कहाँसे आई हो, कहां जाओगी? बिना पूछे कोई भी किमोके शास्त्रज्ञान, व्यवहार चौर जातिका विषय नहीं जान सकता। अब मेरे समय में शास्त्रज्ञानादिका विषय जानना तुम्हारे लिए आवश्यक है। मैं अब राक्षस-दिवे मुक्त हो चुका हूँ। अब तुम्हारे पास अपना तत्त्व-ज्ञान कोर्तन कर तुम्हारे सम्मानकी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। महात्मा पद्मिष्ठ मेरे गुरु हैं, उनसे मैंने मोक्षधर्म प्राप्त किया है। मैं उनकी प्रसादसे साक्ष्य-

हेति धर्म ध्वज इति। जो धर्म की ध्वजा धारण करता हो धर्म-वासुधैव धर्मिणं कर्तुं पावण्यते। जो ऊपर से धर्मात्मन वन कर लोगों पर अपना महत्त्व जमाना चाहते हैं, उन्हें धर्म ध्वजी वा पावण्यी कहते हैं।

“धर्मध्वजी सदा लक्ष्मणध्वजो लोकदम्भकः।

“देवात्मनो ह्येवो देवः सर्वभिक्षमन्त्रः॥” (मनु १।१६५)

जो वदा ध्वज है धर्मात् जिन्हें हृदयमें धनका लोभ निरन्तर जायत है और ऊपर से धर्म की ध्वजा वा चिह्नादि धारण कर जनसमाजमें अपनेकी धार्मिक वृत्तताते हैं, वे लक्ष्मणध्वजो, लोकदम्भक, परहिमा-प्रापण्य और सर्वाभिक्षमन्त्र हैं तथा दूसरेके गुणकी महान न कर सबको तुच्छ समझते हैं, ऐसे व्यक्तियोंकी वैष्णव-व्रतिका वा धर्म ध्वजी कहा जाता है, जो ऐसा वाचरण करते हैं, वे तिर्यग्योनिमें जन्म लेते हैं।

धर्मन् (स० पु०) ध्रियते इति छन्दोऽभिन् । १ धर्मः, पुण्य-कर्म । (त्रि०) १ धारक, धारण करनेवाला ।

धर्मन्त (स० स्त्री०) तोर्ये विशिष्ट, एक तीर्थका नाम ।

धर्मनन्दन (स० पु०) नन्द्यतीति नन्दनः धर्मस्य नन्दनः इति । धर्मपुत्र, सुपुत्रि ।

धर्मनन्दिन् (स० पु०) एक शोध पण्डित । इन्होंने कई शोध शोधोंका चौकी भाषा में अनुवाद किया था।

धर्मनाथ (स० पु०)—जो नीचे चतुर्विंशति तीर्थहरी-से पन्द्रहवें तीर्थहरी । इनके पिताका नाम राजा भागुराय और माताका नाम सुमतिदेवी (सुप्रतादेवी) था। ये कुड-वर्गमें माघ शुक्ल त्रयोदशीके दिन शयोध्याके पश्चात् रात्रिपुत्री नगरीमें मति-शुद्ध-पराधिसान सहित उत्पन्न हुए थे, इन्द्रादि देवोंने इनका जन्म-संकीर्ण (जन्मकल्याणक) किया था। इनका गोत्र काश्यप था।

चतुर्दश तीर्थहरी भगवान् धर्मनाथके मोक्ष जानिके चार सागर (चलौकिक समय प्रमाण) बाद भगवान् धर्मनाथ प्राविर्भूत हुए। इनके जन्मसे आधा पण्य पड़ते हैं धर्ममार्ग बन्द था। धर्मशास्त्र शुद्ध त्रयोदशीकी ये सर्वांगसिद्धि नामक विमानसे चढ़ कर माताके गर्भमें पाये। गर्भमें आनेसे ६ मास तक धर्मसे रहस्यपूर्ण हुई, देविघोने माताकी सेवा की तथा इन्द्रादि देवोंने गर्भकल्याणक संकीर्ण किया। इनके शरीरका वर्ण

सूर्यके समान, परिमाण ४५ धनु (१८० हाथ) और पाय १० हाथ धर्मकी थी। दाईं भाग्य वर्ण तक कुमाग-वस्थामें रह कर पाय रात्र्याभिमित हुए थे। पाँच लाख वर्ष राज्यम्पदका सुख अनुभव करते हुए राज्य किया। भगवन्तर एक दिन उत्काशत होते देव्य भावकी मंभारने वैराग्य हो गया, उसी समय लोकात्मिक देवोंने आ कर मुनिपुत्रक आयेके वैराग्यका अनुमोदन किया। अपने पुत्र सुधर्मकी राज्य दे कर आपने माघ शुक्ल-११मीके दिन शान्तिवर्णमें दीक्षा धारण की। इन्द्रादि तपकल्याणका उत्सव किया। दीक्षा धारण करते ही भावकी (४५) मनःपर्ययज्ञान प्राप्त हुआ। भगवान् के माघ १००० एक हजार राजापीने दीक्षा ग्रहण की थी। भगवान् ने छः दिन तक उपवास कर पाटलीपुत्रके राजा धर्मसेनके यहां आहार ग्रहण किया। देवोंने राजा धर्मसेनके घर पाश्चायर्ण किया।

प्राप्त एक वर्ष तप करनेके उपरान्त शान्तिवर्णमें सप्त-हृदयसे मोक्षीय शुक्ल पूर्वमाके दिन चार घाति-कर्मोंकी नष्ट कर भगवान् धर्मनाथने केवल ज्ञान प्राप्त किया। इन्द्रादि देवोंने उसी समय समग्रभारतकी रचना की और केवलज्ञान कल्याणक उत्पन्न बनाया। उस समय भगवान् के परित आदि ४१ गणधर थे, ८०० ग्यारह पद्म चोदक पुत्रके ज्ञाता ३६०० अवधिज्ञानी, ४००० शिष्य सुनि, ४५०० केवली, ७००० विप्रदा-श्रविकारक सुनिराज, ७००० मनःपर्यायज्ञानी, २८०० वादी सुनि, ६४००० सुनि, ६२४०० आर्याका, २०००० (ब्रह्म) यावक और ४००००० (ब्रह्म) याविकाय मौजूद थी।

इसके बाद भगवान् धर्मनाथने एक साय प्रायुष्य-शिव रहने तक प्रायः छत्रमें बिहार कर धर्मतोषीकी प्रवृत्ति की और पश्चात् समेदमिखर (पारसनाथ) पहाड़ पर पवारे। शेष एक मासमें पवगिट चार कर्म-प्राप्त नाम, गोत्र और वैदिकीय कर्मका नाम कर पण्य शुक्ल चतुर्थीके दिन ८०८ सुनियों सहित निर्वाण प्राप्त हुए। भगवान् का शरीर कपूरवत् चढ़ गया, केवल केव और मल पड़े रहे। जिन्होंने इन्द्रादि चौरमागर्णमें निवेद्य किया और निर्विकल्याणक उत्पन्न बनाया।

(सुनमन्त्राचार्यहरी हरिदास)

धर्मनाम (मं० पु०) धर्मनामनिष्ठ यत्न, यत्न समाधानात् ।

१ विष्णु । २ नदीविनिष्ठ, एक नदीका नाम ।

धर्मनिष्ठा (मं० ति०) धर्मनिष्ठा यत्न । धर्मपरायण, धर्ममें जिसकी धारणा हो, धार्मिक ।

धर्मनिष्ठ (मं० स्त्री०) धर्मस्य धर्मं वा निष्ठा । धर्म-विषयमें आन्तरिक धारणा, धर्ममें अद्या भक्ति और प्रवृत्ति ।

धर्मनीति (मं० स्त्री०) धर्मस्य नीतिः नीतिज्ञानविषयक शास्त्र, जिस शास्त्रमें कर्त्तव्याकर्त्तव्यका व्यवधारण और धर्मके फलफलका ज्ञान साम्य हो, उसे धर्मनीति कहते हैं । धर्मनीतिमें ज्ञान नहीं रहनेसे धर्मानुष्ठान नहीं होता है, इसीसे जो धर्मानुष्ठानके परिभाषा है, उन्हें धर्मनीति अच्छी तरह जान लेनी चाहिये ।

धर्मनेत्र (मं० पु०) १ युधुवंगीय एक राजा पुत्रका नाम । २ युधुवंगीय एक राजा । ३ पौरव वंगीय तंजु राजाके एक पुत्रका नाम ।

धर्मनेपुल्लकाम (मं० पु०) धर्मस्य नेपुल्लं पतिगणं कामयते कम-पण्य । वह जो धर्मके विषयमें निपुण होनेकी इच्छा करता हो ।

धर्मपथ (मं० पु०) विधिविहित सिद्धिपथ, वह व्यवस्थापन जो किसी राजा या धर्माधिकारीकी ओरसे दिया जाय ।

धर्मपति (मं० पु०) १ राजविधिक अधिकारी वा शास्त्र-ज्ञान, धर्म पर अधिकार रखनेवाला पुरुष, धर्मात्मा । धर्मस्य पति परमात्मा । २ वरुच देवता । धर्मः पतिरिव यस्य । ३ धर्मगोल ।

धर्मपत्तन (मं० स्त्री०) १ आदरणी नगरी, धर्मपुरी । तत्परायणता प्राप्त्यर्थं यत्न । २ गोलनिष्ठ । ३ हङ्गल-संहिताके अनुसार एक देश जो कुर्म विभागके दक्षिण दिशि निकट पश्चिम सागरी मया है । कहीं कहीं धर्मपत्तनकी जगह धर्मपथ भी लिखा पाया गया है ।

मन्त्राजके चतुर्गत्त मलवार जिलेमें कोटा-दम् तातुर्गके चतुर्गत्त एक नगर । यह पचा० ११° ४६' ८०" पौर देशा० ७४° १०' पू० । धर्मपत्तन नामक नदीसे कुन्नासे पर अवस्थित है । भूपरिमाण ६ बर्गमील और

लोकसंख्या प्रायः ६ हजार है । यह पचास कोसतिरि रागुके चतुर्गत्त या । १७३४ ई०में इटालिका कम्पनी को यह ज्वाल दिया गया था । १८८८ ई०में यह विभाजित-के राजाने अधिगत हुआ, किन्तु दूसरे वर्ष में पुनः पंग-रेजोके हाथ लगा ।

४ मन्त्राजके चतुर्गत्त मलवार जिलेकी एक नदी । यह तलवारी नगरसे डेढ़ कोस उत्तर समुद्रमें जा मिली है ।

धर्मपत्नी (मं० स्त्री०) धर्माय धर्मावस्थाप्य पत्नी । वह स्त्री जिसके साथ धर्मभाषाकी रीतिमें विवाह हुआ हो, विवाहिता स्त्री ।

दक्षस्मृतिमें लिखा है, कि विवाहिता पौर दोष-रहित स्त्रीको धर्मपत्नी कहते हैं । व्याह कर सांई हुई दूसरी स्त्रीकी कामपत्नी कहा गया है ।

मनुने लिखा है कि विधुपुत्रने तत्परा तदा पतिव्रता धर्मपत्नी यदि विहित पुत्रकामो हो, तो उसे गृह्योक्त मन्त्रों द्वारा मध्यम पिण्ड चर्चात् विनामकका पिण्ड लिखाना चाहिये । मध्यम पिण्ड स्थानमें उस धर्मपत्नीके गर्भमें जो पुत्र उत्पन्न होता है वह बहुत आयुवान्, योग्य, मिथामय, धनवान्, प्रजावान्, सत्वगुणविहित और धार्मिक होता है । २ धर्मदेवकी पत्नी । दत्तत्रय-पतिमें धर्म की दृग कर्त्तव्ये दो यौं जिसके नाम से यौनि, मन्त्रो, धृति, मिधा, पुष्टि, अद्या, क्षिपा, बुद्धि, जज्ञा और मति ।

धर्मपत्न (मं० स्त्री०) धर्मसाधनं पतं यस्य, धर्माय यथादिकार्यायं पतं यस्य । पत्नीद्वय, गृह्य । १ सके पत्ने यथादि धर्मकार्यमें काम पाते हैं ।

धर्मपथ (मं० पु०) धर्मस्य पथः । धर्ममार्ग, कर्त्तव्य पथ ।

धर्मपथिन् (मं० पु०) धर्मपथानुसारी, कर्त्तव्यनिष्ठ, धर्मात्मा ।

धर्मपर (मं० ति०) धर्मः परो यस्य । धर्मात्मा, कर्त्तव्य-परायण, धर्ममें जिसकी चारणा हो । जिसका एक मात्र धर्म ही प्रधान हो, उसे धर्मपर कहते हैं ।

धर्मपरायण (मं० ति०) धर्मः परः अयमो यस्य । जो धर्मकी परम पदार्थ समझता है, जो साध्यके अनुसार धर्मपर पर चलता है जो- यथासक्ति धर्म कार्यका

पनुष्ठानं करता है तथा कभी असत्य काम के अनुष्ठानमें प्रवृत्त नहीं होता है, उसको धर्म परायण कहते हैं। इसका पर्याय—धर्मात्मा, धार्मिक, धर्मशील और धर्म-निष्ठ है।

धर्मपरिणाम (सं० यु०) धर्मरूपः परिणामः । पातञ्जलोक्तं
चित्तधर्मिका व्युत्पन्नं शरीरनिरोधधर्मका शमिभयतया
मादुर्भावरूपपरिणामप्रभेदः । पातञ्जलसंनितं धर्मका परिणामका
विषय इति प्रकारं लिख्यते ।—

“एतेन भूतेन्द्रियेषु धर्मलक्षणावस्था परिणामा व्याख्याताः ।”
(पात० ५० ३।३)

मल्लिपुत्रमें बनामन मीनाममें चढ़ाया रहता है, इसी कारण कोई सड़े देव नहीं उभरता। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु की द्विती रहती है, जब तक काम जो पाकार उपयुक्त नहीं हो जाता, तब तक वह उसी अवस्थामें वर्तमान रहती है। सुतरां सभी ममोंके कारण है और सभी ममोंके कारण है, यह समझना नहीं। तुम जिस किसी वस्तुका उत्पन्न करोते, वह कारण और कार्य दोनों होता। मोज पहनका कारण है और पहन भी मोजका कारण है।

दूसरी बात यह है, कि सभी वस्तुओंमें सभी वस्तुओंके आविर्भाव होनेकी सम्भावना है। बीजमें जल, मृत्तिका और कद्दनीका आविर्भाव देखा जाता है। सुतरां दूसरे प्रकारके आविर्भावकी शक्ति रहते भी रह सकती है, यह सहजमें समझना किया जा सकता है। किस प्रकारके देशमें, किस प्रकारके कालमें और किस प्रकारकी क्रियाके संयोगमें, किस क्रिया द्वारा कब और किस प्रकारका आविर्भाव होता है, यह कौन कह सकता है? किस प्रकारके कारणका उपलब्ध कर कब कौन शक्ति अभिव्यक्त होती है, उसका कौन निराय कर सकता है? फलतः सभी वस्तुओंमें सब शक्ति निहित या सम्भवितरूपमें रहती है। उपयुक्तकाल, उपयुक्तदेश और उपयुक्त कर्म का क्रियाके मिलनमें ही यह शक्ति अभिव्यक्त होती, आविर्भाव होती वा कार्यरूपमें प्रकाश पाती है। काल और जिया आदिको विविधता है। सुतरां सभी जगह सर्वकार्य शक्तिके रहने पर भी देश, काल और क्रियाके भिन्न कर्मों नहीं तो कुछ होता है और कर्मों कुछ भी नहीं होता। धर्मोक्तके दायव्य होनेमें ही मही और समवे किर कद्दनीका आविर्भाव होता है, पनपा पन प्रकाश हो जाता है। कुछ स कामनीरादि देशोंमें ही होता है, दूसरी जगह नहीं। पाञ्चजानमें ही उवजता है, दूसरे समयमें नहीं उपजता। समुपरोचित क्रियादिके नहीं होनेके कारण नहीं मृदके मिठा मनुष्य प्रसन्न नहीं भरती। किन्तु यदि कर्ममें समुपरोचित क्रियादिका सम्प्रदेश हो जाय तो उसके कर्मोंके समुपाके दायव्य नहीं होनेका कोई कारण नहीं रहता। सभी दूना सर्वशक्तिके दायव्य है, कर्मके अभिव्यक्ति देश, काल, या कर और

क्रिया ये सब निमित्तानिबन्धके अन्तर्गत है। सुतरां देश-कालादिका अभिव्यक्ति नहीं होनेमें ही कार्यकारणता स्थिर रहता है, पनपा दूसरे प्रकारका हो जाता है। उस पनपा प्रकारको वा अभिव्यक्तिरूप का निबन्ध समुपा बहुत मानते हैं, निश्चिन्त यदायमें वह प्रजन चकत नहीं है। परिणामको निबन्धमें प्रति परिमाण-प्रमको निबन्धताका रहता हो कारण है, यह सबको विदित हो गया है। (पञ्चतन्त्र)

धर्मपाठक (मं० पु०) धर्म धर्मशास्त्र पठति पठ काल् ।
१ मन्वादि प्रचोत धर्मशास्त्रके पठनेवासी। २ राज-विधि अधिकारी वा शास्त्रारण्यक मन्त्रिभेद। ३ एक प्रसिद्ध षोडशकृत।

धर्मपाल (मं० पु०) धर्मपालपति पालि धन,। दशों-यम धर्मरक्षक दण्ड। केवल दण्डके भयमें लोग धर्मका पालन करते हैं। जो मन्वाय काम करते हैं, वे दण्डमें शासित होते हैं। महाभारतके शास्त्रार्थमें भिया है, -यम लोकमें जिसमें सब कोई नगोभूत होते हैं, उसीका नाम दण्ड है। जिसमें धर्मका मोहन हो, वरं उनका दिनों दिन प्रचार हो, उसीको व्यवहार कहते हैं। भगवान् मनु कह गये हैं, तौ जो सुविहित दण्ड द्वारा विषय और धर्म समुत्पन्न भरण-पोषण करते हैं, वे महात्मा धर्मव्यवहारे हैं। दण्ड प्रधान देवता है जिसका निज प्रत्यभिमान धर्मिको मार्ग और दण्ड मोक्ष-फल दण्डको मार्ग प्राप्त है, जिसके द्वार दण्ड, चार बाढ़, दो जिह्वा, पाठ परत और समस्त वस्तु हैं; जिसका काम पञ्चका तैल्य है, गीतरके रंगिटे चक्रे हैं, महाक कटाजालमें जड़ित है, मुण्ड मण्डल ताववर्ण हैं और शरीर कण्ठमार मृगमो मार्ग चमड़ेमें टबा घुसा है। इस प्रकार दण्ड सब मूर्ति धारण किये हुए है। वृद्ध, धनुष, गदा, मल्ल, सिङ्ग, मर, मृग, पाय, चक्र, पाश, दण्ड और मोम प्रभृति जिनमें पल्ल है, दण्ड समस्त ममीका पाकार धारण कर किसीको विष, किसीको भिन्न और किसीको पीड़ा पहुँचाया करता है। दण्डके कई एक नाम कर्मकाहे गये हैं, जैसे,—धर्म, विमर्श, धर्म, मोक्षवर्ज, दुराध, योग्य, विषय, मन्त्र, व्यवहार, मन्त्रान्त, मन्त्र, मन्त्र, धर्मपाल, चक्र,

देव, सत्या, धर्म, भगवान्, इन्द्रतनय, लोह, मनु, और गिवहर । दण्ड साक्षात् भगवान् निष्ण और नारायण स्वरूप है । दण्डकी पत्नी नीति भी ब्रह्माकी कन्या संकी, सरस्वती और जगन्नाथी नामसे प्रसिद्ध है । दण्ड अर्थ, धर्म, धर्म, सत्य, दुःख, वध, धर्म, दुर्भाग्य, सोभाग्य, पाप, पुण्य, गुण, अपुण्य, काम, धर्मात्, ज्ञान, मास, दिवा, रात्रि, सुहृत्, प्रसाद, अप्रसाद, धर्म, क्रोध, शम, दम, देव, पुण्यकार, मोक्ष, धर्मोक्ष, भय, धर्म, हिंस, अधिमा, तपस्या, यज्ञ प्रवृत्ति नामा प्रकारके प्रकार सम्यक् है । इस लोकमें यदि दण्डका प्रोद्भावि न रहता, तो सभी एक दूसरेकी कट्ट देता । इस संसारमें केवल दण्डके भयसे ही कोई किसीका विनाश नहीं कर सकता है । (भारत शास्त्रिपर्व १२१००) २ धर्मका पालन वा रक्षा करनेवाला । ३ राजा इमारतके एक मन्त्रीका नाम ।

(रामायण १।७ अ०)

धर्मपाल—१ गौड़के पालवर्ग्य प्रथम राजा । इनके पिताका नाम राजा गोपाल था । इनके दिये हुए कई एक ताम्रशासन पाये गये हैं । पालाजवंश देखो ।

धर्मपाय (स० पु०) १ श्यावभक्षण, धर्मवन्धन । २ धर्मके हस्तक्षेप पायास्त वह पाशा नामक धर्म जो सर्वदा धर्मके हाथमें रहता है ।

धर्मपीठ (स० स्त्री०) १ बाराणसीका नामान्तर, काशी । २ विधिनिषेधादि प्रणयनका स्थान, धर्मका प्रधान स्थान । ३ धर्मशास्त्रगत व्यवस्थाप्रतिस्थान, वह स्थान, जहाँ धर्मकी व्यवस्था मिले ।

धर्मपीठा (स० स्त्री०) धर्म का श्यायके विरुद्ध आचरण । धर्मपुत्र (स० पु०) धर्मस्य पुत्रः १-तत् । १ सुधित्र । २ नरनारायण ऋषि । ३ धर्मके अनुसार कृत पुत्र, जिसे धर्मानुसार पुत्र मान कर स्वीकार किया गया हो उसे धर्मपुत्र कहते हैं ।

धर्मपुर (धर्मपुर) अयोध्याके अन्तर्गत हरदोई जिल्लाका एक ग्राम । यह फतेगढ़से ३० कोस पूर्वमें अवस्थित है । निवासी-विहीनके समय यहांके राजा तिलकसिंहके भाई मर हरदेववर्मा के, सो, पक्ष, बाध, ने सगरेजोंकी संपत्ति-पुर्णमें प्राप्त्य दिया था । इस कारण ये सगरेजोंको बड़े प्रिय थे ।

धर्मपुराण (स० स्त्री०) उपपुराणविशेष ।

पुराण देखो ।

धर्मपुरी—मन्दाजके अन्तर्गत मनेम-जिमेका एक तालुक । यह अक्षां ११° ५४' से १२° २०' उ० और देशां ७५° ४१' से ७६° १०' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ८५१ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग २,५०,००० है । इसमें एक शहर और ५८० ग्राम मिलते हैं । यह पहले बार-महलके अन्तर्गत था । इसके उत्तरमें हीसुर और जग-गिरि तालुक, पश्चिममें घोपुर नदी, पूर्वमें जग-गिरि और दक्षिणमें उत्तराखण्ड तालुक है । मनेम जिमेके दक्षिणमें घोपुर गिरिपथ है जो हैदरपुरकी और टीपू सुसतानके बुधकालमें बहुत प्रयोजनीय पथ हो गया था । यह देश सर्वत्र पर्वतमय है । यहां चेन्नार और घोपुर नामकी दो नदियां प्रवाहित हैं । इस तालुकमें जहां तहां खोईकी खान देखनेमें आती है । जनबायु छत्त और शक्क है । वार्षिक आय प्रायः २,५०,००० है ।

२-उत्तर तालुकका एक प्रधान शहर । यह अक्षां १२° ०' उ० और देशां ७५° १०' पू०में अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ८१,०२ है । शहर साक्षरकर है, जलका बन्दोबस्त सब जगह अच्छा है । १८८८ ई० तक यहां और राज्यके अन्तर्गत था, पीछे छनो साल महि-सुर-राज्यके अधीन हो गया । १८८८ ई०में बनस उठने यह नगर अवरोध किया था । हैदरपुरकी सन्धि-के बाद यह नगर सौदा दिया गया । कुछ काल तक मन्दाजके गवर्नर सर टोमस मनरो यहां रहे थे ।

धर्मप्रचार (स० पु०) धर्मस्य प्रचारः । धर्म विषयका प्रचार ।

धर्मप्रचारक (स० पु०) धर्मस्य प्रचारकः १-तत् । धर्म प्रचार करनेवाला, वह जो शहर उधर जा कर धर्मप्रचार के लिए व्याप्यमान देता हो ।

धर्मप्रतिपक्ष (स० पु०) १-यमपुरी । यहां शरार झूटने पर प्राचिनांके किए हुए धर्म अधर्मका विचार होता है । २ श्यावभक्षण, लच्छरी, घटाकत ।

धर्मप्रदोष (स० पु०) १ धर्मान्तिक, धर्मका प्रकाय । २ धर्मस्य । ३ धर्मनिष्ठ । ४ धर्मप्रत्यविरोध ।

धर्मप्रमथर—एक जैन आचार्य । ये अष्टमगण्डोप

देवेन्द्रमिन्द्रे सिध्द चौर भित्तितककं गुह्यं । इतः
 तम १३११ मन्वन्तं दृष्टा या । ये १३११ मन्वन्तं दौलिन
 दृष्ट चौर १३१८ मन्वन्तं दृष्टिपद तथा १३०१ मन्वन्तं
 मन्वन्तं दृष्ट या कर १३८१ मन्वन्तं १३ वर्ष की अवस्थामें
 परमोक्तको विचार ।

धर्मप्रमाण (मं० पु०) पुष्टका नामान्तर ।

धर्मप्रमाण (मं० लि०) धर्मप्रमाण यथा । जिसका
 माको धर्म हो, धर्म ही जिसका प्रमाणद्वारा हो । धर्म
 प्रमाण यस्मिन् । धर्मानुसारमें धर्मको सादो करके ।

धर्मप्रवक्तृ (मं० पु०) धर्म सन्दिप्यायें ययं धर्म
 प्रति प्रवक्ति प्रवक्ष्यते । धर्मनिर्णायक राजाओंके
 व्यवहारव्याप्त सम्प्रदाय । राजाको उचित है कि वे इस
 पद पर शास्त्रको नियुक्त करें । उपयुक्त शास्त्र नही
 मिलने पर कविय चौर योज्य नियुक्त किये जा सकते हैं,
 किन्तु इसपद पर गृहको कदापि नियुक्त न करें, करने
 से राज्यका नाम होता है ।

मनुने निर्या है, कि जातिमात्रोपजोने शास्त्रको
 पथवा जो चरनेको शास्त्र बतला कर दूर उधर धूमने
 है, किन्तु क्रियासुचारुविरहित चौर शास्त्रगुण है, ऐसे
 शास्त्रोंको भी यदि राजाको दृष्टा हो तो चरने धर्म
 प्रमाणपद पर नियुक्त कर सकते हैं, किन्तु गृह को मा को
 क्यों न हो, नियुक्त नहीं किये जा सकते । जिस राजाके
 सामनेमें ही गृह भाग्य चौर चरणाप पर विचार
 करता हो, उस राजाका राज्य मोघ ही धूमने मिल
 जाता है ।

धर्मप्रवचन (मं० पु०) धर्म प्रवक्ति प्रवक्ष्यते । शास्त्र
 सुनि ।

धर्मप्रवृत्ति (मं० लि०) धर्मप्रवृत्तिः । धर्मविवरण
 प्रवृत्ति, धर्ममें प्रवृत्ति, भक्ति चौर प्रवृत्ति ।

धर्मपण्य (मं० पु०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम ।
 यहाँ धर्म प्रतिनिधित्व ही वर्णमान है, यहाँ को रूप
 सुदृढ कर समझें खान करते चौर देवता तथा पित्रात्म-
 का तत्त्व करते हैं, उन्हें समझें यज्ञका फल मिलना
 है । (भाष्य द्वादश, पृष्ठ ५०)

धर्मपिप (मं० पु०) धर्म पिप यत्नः । एक बोधा-
 यत्नः ।

धर्मवर्तो (मं० लि०) धर्मवर्ता मन्त्रे, धर्ममें बदलने
 वाली मन्त्रे । (मन्त्रवर्ता पृष्ठ १३)

धर्मवर्धन (मं० पु०) राजनिर्णय, एक राजाका नाम ।
 (पञ्चांगः)

धर्मवत्त (मं० पु०) धर्मवत्तः । धर्मको गति ।

धर्मवाचिजिक (मं० पु०) धर्मवाचिजिक इति । धर्म
 को नामना करके जो धर्मका अनुष्ठान करते हैं, उन्हें
 धर्मवाचिजिक कहते हैं । ऐसा ऐसा जाता है, कि
 देवताके चर्चमें भेदा अनुष्ठानार्थ मित्र होने पर अनुष्ठान
 देवताका पूजन एक रूपमें करकेगा, जो ऐसा कहता
 है, वह महाधर्म है । धर्म द्वारा तत्त्वज्ञानका नामको विधि
 होगी, ऐसी दृष्टिमें सादान प्रदानके कारण इसका नाम
 धर्मवाचिजिक दृष्टा है ।

धर्मवृद्धि (मं० लि०) धर्म वृद्धिः । धर्मज्ञान, धर्म
 चरमका विवेक, भवे वृद्धि विचार ।

धर्ममगिनी (मं० लि०) धर्मतः ज्ञाता मगिनी । धर्मके
 अनुष्ठान मागे हुई वृद्धि । २ गुह्यकथा, गुह्यकी भेदी ।

धर्मभय (मं० पु०) धर्मभयः । धर्मका भय । धर्म
 करनेमें धर्मके यहाँ दण्ड मिलता चौर परमोक्तमें धर्म
 यातना भोगनी पड़ती है, ऐसा विमान किया जाता है ।

धर्माचार्य (मं० पु०) भारतादि पाठक, कथा सुनाय
 वाचनेवाला, व्यवहार ।

धर्मभिक्षु (मं० पु०) मनुज नवविध धर्मायें मित्रादीन,
 वह जिसमें धर्मायें जो प्रसारकी मित्रादिति दृष्ट हो ।
 मनुने कहा है कि धर्मको कामनामें विचार चाहनेवाला,
 यज्ञको दृष्टा रक्षणवाला, धर्म, जो धर्ममें धर्मका धर्म
 जगत् कर निर्धन हो गया हो, गुह्य, माता चौर विचार
 धर्मपदोपपत्ति के निमित्त चाहनेवाला, धर्मपदको दृष्टा
 धर्मपदवाला विचारों चौर रोमी से नव धर्मभिक्षु धर्मके
 अर्थ प्राप्त है । इनके यज्ञको वेदोंके भीतर देना कर
 दक्षिणाके महित व्यवधान देना चाहिये । इनके कतिपय
 चौर को शास्त्रको, उनके वेदोंके बाहर वेदका
 चाहिये ।

धर्मभीत (मं० लि०) धर्मभीतः । जो धर्ममें भय
 करता हो ।

धर्ममीमांसा (सं० पु०) धर्मो भोक्तृः । धर्ममीमांसा, जिसे धर्मका भाव हो, जो धर्म करने के लिये बहुत करता हो ।

धर्मश्रुति (सं० त्रि०) धर्म विभक्ति श्रुतिपुत्रागमय । धर्मधारक, धार्मिक, धर्मशील ।

धर्मश्रुत (सं० त्रि०) धर्मो श्रुतो येन । १ रचित धर्मक, जो धर्म की रक्षा करता हो । (पु०) २ त्रयोदश मनुके पुत्रमेव, तैरहमेव मनुके एक पुत्रका नाम ।

धर्मभास्व (सं० पु०) धर्मतः कृतः भास्वता । १ शुद्ध पुत्रादि । २ भास्वत्त्व द्वारा प्रतिपन्न एकाग्रमी । जिनके साथ एक ही आचमनमें पवकान किया जाय, उन्हें धर्मभास्वता कहते हैं ।

धर्ममति (सं० पु०) धर्म मतिर्यस्य । १ धार्मिक, पुण्यात्मा । २ देवमिद, एक देवताका नाम । ३ बोधि-वृक्षमेव ।

धर्ममय (सं० त्रि०) धर्ममयः । १ जहां धर्मका संस्कार नहीं है । २ धर्म से परिपूर्ण, साक्षात् धर्म ।

धर्ममहासाध (सं० पु०) धर्मविषयक मन्त्री ।

धर्ममित्र (सं० पु०) एक बौद्धाचार्य ।

धर्ममूल (सं० स्त्री०) धर्मस्य मूलं । धर्मका प्रमाण ।

मनुके मतानुसार समस्त वेद, वेद जाननेवालोंकी रक्षति और उनके रागद्वेषादि परित्यागात्मक शील, साधुओंके आचार और आत्मप्रसाद से सब धर्मके प्रमाण-स्वरूप हैं ।

वाराणसी-हितार्थ वचनानुसार धर्ममूल से सब माने गए हैं—प्राज्ञा, देवपितृभक्ति, अपरोपतापिता, मनश्चोलता, मृदुता, अपाह्वय, भिक्षता, प्रियवादिता, काव्य, कृतज्ञता, मरणादिक और प्रशान्ति से तैरही प्रकार धर्मके मूल हैं ।

याज्ञवल्करके श्रुति, स्मृति, सदाचार, अपनी तथा आत्माकी जिससे भलाई हो ऐसा कर्म, सम्पत्क सहायके लिए कामका इत सबकी धर्ममूल माना है ।

धर्ममुनि—एक प्रसिद्ध जैन आचार्य । ये चन्द्रकुल और विभिन्नपञ्चक के भक्तगण विविधसुख-श्रुतिके गुरु थे । ये कल्याणसागरके रक्षिता कल्याणसागरमुनीन्द्र उदय-मागरके गुरुपर्यायमें जर्जरतन चतुर्थ पुत्र माने जाते हैं । बृहन्नगरमें १३५ सम्मतमें अपने पत्न्यकी रचना की ।

सुतपंथे १३वीं शताब्दीके पारम्परिक विद्यमान थे, ऐसा कह सकते हैं ।

धर्ममेव (सं० पु०) धर्मात् मेव इति वदन्ति मिह-पञ्च-धर्मान्तादेयः । पातञ्जलीक धर्मप्रज्ञान समाधि ।

मनोवृत्तिकी निवृत्तिका प्रधान कारण वैराग्य है । वैराग्यके अभ्याससे चित्त सब वृत्तियोंसे रहित हो जाता है पर्यात् इतना असमर्थ हो जाता है कि उसका रहना न रहना बराबर हो जाता है । कमल कुछ संस्कार मात्र रह जाता है । जो या, उसकी चेतने जाने पर भी जो सुख चित्र रह जाता है, उसका नाम संस्कार है । उस तरह संस्कारापन्न एवं रहने न रहनेकी समान निरवस्थान विज्ञानस्थानका नाम धर्ममेवसमाधि है । यह धर्मप्रज्ञानसमाधिके भक्तगण हैं । सम्प्रज्ञात-समाधि जब अत्यन्त परिष्कार हो जाती है, तब चित्त आप ही आप भावच्युत होने लगता है और सबजमें ही कमजोरी आ जाती है । चित्तकी अवस्थानगुण्य करने का प्रधान उपाय यद्विधि है । सभी विषय चक्षुः, श्रोत्र, चित्तमन तो किसी प्रकारकी वृत्ति धर्म देने की चाहिये और न सम्प्रज्ञात वृत्तिको भी स्थान देना चाहिये, ऐसा ही दृढ़कल्प रहने । ऐसा करनेसे चित्त धीरे धीरे निश्चलस्थ होने लगता है । सम्प्रज्ञात वृत्ति पर्यात् ध्येय वस्तु परित्याग करने पर यदि तब समय कोई दूसरी वृत्ति पर्यात् कोई दूसरी वस्तु मनमें आ जाये, तो उसे भी मनसे हटा देना चाहिये । कहनेका तात्पर्य यह है, कि जब जो वृत्ति उत्पन्न हो जाय, सभी समय उसे दूर कर देना अविवेक है । इस तरह बारबार करनेसे अभ्यास धीरे धीरे दृढ़ हो जाता है । भक्तमें ठहो दृढ़ाभ्यासके प्रभावसे चित्त फिर कभी भी कोई विषय ग्रहण नहीं कर सकेगा, बरं प्रसन्नकी नाई वा स्वयं प्राप्ति की नाई स्थिर हो जाएगा । सुखी चित्त तब निश्चल, निरवस्थान और स्वप्रतिष्ठ अवस्था योगियोंकी धर्ममेव-समाधि या निर्वाण समाधि है । समाधि देखो ।

धर्मयु (सं० त्रि०) धर्म पत्यर्थ वा यु । धर्मविमिष्ट, धार्मिक ।

धर्मयुग (सं० स्त्री०) धर्म प्रधान युग मन्वन्तरी कर्मधा । धर्मयुग ।

धर्मसूत्र (मं० त्रि०) धर्मसूत्रं सूत्रं इत्येवमिति शब्दः ।
१ धर्मसूत्र (को०) २ व्याख्यातं द्रव्यं व्यापके उपार्जनं
किया हुआ धर्म ।

धर्मसूत्र (मं० पु०) एक सूत्र जिसमें किसी प्रकार का
व्याप्य वा नियमका भक्षण हो ।

धर्मरक्षित—योनदेवोय कीर्ति स्वरूपि । धर्मो मोक्ष बोध
धर्मरक्षार्थं निये ज्ञाना देवोमि स्वरूपि भोजे ये जिनमें
में धर्मरक्षित अपराधका (सूत्रके निकटवर्ती) देव
भोजे गये थे । यही पदार्थ कर रक्षितें कुहोपदेम "यस्मिन्
संज्ञोपमन"के नियममें उपदेम दिया था । कहते हैं,
कि इनको यक्षता सुननेके लिये प्रतिदिन ०० हजार
मनुष्य समागत होते थे । पीछे एक सन्निव यक्षों ने हजार
में सन्निक परिवार इनके गिण हुए । जब महाद्वय
स्थापित हुआ था, तब भिन्न भिन्न देवोंमें शोध याज्ञकादि
मणि उपरिद्यत हुए थे । उस समय प्रधान स्वरूप धर्म-
रक्षितके निकट कोमासी मन्दिरमें १० हजार याज्ञक
घोर उज्जयिनीके दक्षिणगिरि मन्दिरमें ४० हजार द्वाप्त
पदार्थ थे ।

धर्मरक्ष (मं० को०) जोमृतवाहन जन स्वर्गतिनिवन्धमेद ।
धर्मरक्ष (मं० पु०) मगर राजाके एक पुत्रका नाम ।
महावीर मगरमें समस्त देव जोत कर परमेश्वरपूजा
पुनर्वाप्त किया । यज्ञका घाड़ा छोड़ा गया । उस घोट्टेमें
ममसा देव देवात्मरोंको पतिक्रम कर रक्षातममें प्रवेष्ट
किया । यहाँ पुत्रवीर्यम कपिलके रूपमें रहने थे । मगरके
मनुष्योंको जब ज्ञान प्राप्त हुआ कि घोट्टेको कपिल सुनिने
बांध रखा है, तो लक्ष्मीं स्वयं पर पाकमय किया ।
पीछे तम हो कर जलमें तब घटने लगे घोट्टे को लोती ली
नारके पतिरिक्त घोर गेय लक्षो जगह भण्य हो गये ।
तब पारिके नाम महेन्द्र, सुमेत, धर्मरक्ष घोर महावीर
हैं । ये ही पार मगरके मगर यक्ष हैं । (हरिवंश १४५०)
२-पुनर्वर्त्योय दिविरयत्त एक पुत्रका नाम । ये रोमपाद
नाममें प्रसिद्ध हैं ।

धर्मराज (मं० पु०) धर्मसूत्र राजा-पुत्र । १ त्रिमः ।
इनके मतमें पक्षिणा को परम धर्म है । पक्षिणाद्वय
धर्मद्वारा मोक्षित होनेके कारण धर्मराज मन्त्र्ये द्विजका

धर्मबोध होता है । धर्मराजी राजा नेत्रि, मगादि २५
ममांशालाः । २ यम । एव धर्मोके धर्मराजका विचार
करते हैं, इसीसे हमको धर्मराज कहते हैं । ३ मरुति,
राजा । ४ सुधिति । ५ धर्मप्रधान । ६ धर्मराज ।

धर्मराजघरीया (मं० को०) धर्मराजघरी घरीया ।
धर्म घोर धर्मको घरीया । इसका विषय हृदयमें
रम प्रकार निवास है—

धर्म घोर धर्मको दो गेय घोर हृदय मुक्ति
भोजन पर बना कर उनको प्रापमतिता करे । बाद ज्ञान-
त्रादि घोर मोक्षमन्त्रमें चामत्तय कर गेय घोर हृदय
पुन्यमें उनको पूजा करे । पीछे लक्षो पद्मपद्मपुत्र कर लोके
बराबर विष्णुमें रहे । फिर दोनीं पिच्छों की दो लक्ष भूतोंमें
रख कर यमितुकी बुनाये घोर हृदय घोट्टे पर रख
रगमेंके लिये कहे । यदि लक्षका हृदय धर्मविष्णुकी
घोट्टे पर घटे, तो लक्ष घट घटात् घाटोक्त समर्थ ।

कोन मनुष्य दण्ड पाने योग्य है, कोन धर्म प्राप्ति है
अथवा कोन पातकी है, यदि इसको घरीया करनी हो,
तो इस प्रकार धर्मघरीया करनी चाहिये । धर्म
बादकी धर्ममुक्ति घोर भीषे या मोक्षको धर्ममुक्ति
मनाये । बाद भोजनमा घट पर धर्म घोर धर्म
मक्ति घोर काले पक्षमें भिषे घोर तब धर्म घोर
धर्मको मुक्ति प्रापमतिता पूर्वक पूजा करे ।
पद्मपद्म घोर मन्त्रमात्रादि द्वारा चामत्तय कर उनको
धर्मना करनी होती है । पीछे गेय पुन्यमें धर्मको घोर
हृदय पुन्यमें धर्मको पूजा करते हैं घोर मोक्ष वा मोक्ष
दो बराबर विष्णु बना कर उनमें धर्मधर्म भिषे हुए
भोजनमा घट रख छोड़ते हैं । फिर दोनीं पिच्छों की
मोक्षे बरतनमें दास कर पवित्र स्थानमें रख देते हैं ।
बाद पक्षमात्रोंको लक्ष स्थानपर या कर लोकादीका
वापाकन करन बाद धर्मको वापाकन कर घट प्रीतिता-
यत निय देना होता है कि पक्षमें निष्ठापक, तो
धर्म मरे बादमें या काले । देना करते धर्मधर्म भिषे
दोनीं घोट्टेमें किसी एकको धर्म करते । यदि हमका
हृदय धर्मघर घटे, तो लक्ष निर्दोष घोर धर्मघर घटे तो
दोषी मन्त्रमना चाहिये । हरिद्वारा विष्णुका धर्म-
घरीया द्वारा धर्मधर्म का विचार कर दण्डका विधान

करे। यदि अभियुक्त निर्दोष हो, तो उसे बिना कोई दण्ड दिये छोड़ देना चाहिये। धर्मराजे के स्थान पर विशद ब्राह्मण और साधु व्यक्तियों का रहना आवश्यक है। धर्म की प्राथप्रतिष्ठाकी जगह 'पों पों, जों जों' इत्यादि प्राथप्रतिष्ठा विधिके अनुसार करने को तो है। (दिग्गन्तव्य) धर्मराजाध्वरीन्द्र—इनको उपधि दीक्षित हो। इन्होंने 'वेदान्तपरिभाषा' और 'अष्टैतपरिभाषा' रचना की है। वेद्वटनायक नृसिंह यतीन्द्र इनके गुरु थे। इनके पुत्रका नाम था रामकृष्ण।

धर्मराजिका (सं० स्त्री०) १ राजविधिके ऊपर राजप्रशस्ति २ धर्मका प्रभाव ज्ञापक विहारादि।

धर्मराष्ट्र (सं० त्रि०) धर्म राशि ददाति राष्ट्रम्। १ धर्म-दाता। स्त्रियां ङोप्। २ अथ, जन्म, पाने।

धर्मरश्मि (सं० पु०) भीषिष्ठलके अभिज्ञाता एक देवताका नाम।

धर्मसत्त्व (सं० स्त्री०), धर्मो सत्त्वमेव प्रायतन्नेन सत्त्व कारणे ण्यट्। १ धर्म प्रसापक वेदादि। स्त्रियां ङोप्। २ मोक्षसा। भावे ण्यट्, धर्मस्य सत्त्वर्ण, इ-तत्। १ धर्मका सत्त्वर्ण। ४ धर्मका बोधन।

धर्मसुमासपा (सं० स्त्री०) वह उपमा जिसमें धर्म भर्थात् उपमान-धोर उपमेयमें समानरूपसे पाई जानेवाली बातका कथन न हो।

धर्मवत् (सं० त्रि०) धर्मविद्यमानः, धर्म-मनुष्य, मध्यमः। धर्मयुक्त, धार्मिक।

धर्मवर्द्धन (सं० त्रि०) १ धर्मपोषक, धर्मका प्रतिपादक। (पु०) २ महादेव।

धर्मधर्म (सं० त्रि०) धर्मधर्म इव यस्य। १ जिसका धर्म धर्मस्वरूप हो, धार्मिक। जिस तरह कवचधारी पर कोई हठात् आक्रमण नहीं कर सकता है, उसी तरह धर्मरूप कवचधारी पर विपत्ति पड़नेकी आशङ्का नहीं रहती। (स्त्री०) धर्म धर्मैव। २ धर्मरत्नक।

धर्मवत्सल (सं० त्रि०) धर्मप्रिय, कर्त्तव्यनिष्ठ।

धर्मवाद (सं० पु०) धर्मसम्बन्धीय तर्क।

धर्मवादिन् (सं० त्रि०) धर्म वदति धर्म-वद-वणि। धर्मवक्ता, धर्मप्रदेश देनेवाला।

धर्मवासर (सं० पु०) धर्मस्य वासरः। पूर्णिमा। इस दिन पुण्यकार्यादि किये जाते हैं, इसीसे इसका नाम धर्म-वासर पड़ा है।

धर्मवाहन (सं० पु०) धर्म वाहयतीति वह-विच-ण्य, वा धर्मो ह्यः वाहनं यस्य। १ धिय, महादेव। (स्त्री०)

२ धर्मका प्रापण। धर्मस्य धर्मराजस्य वाहनः इ-तत्।

३ धर्मराजका वाहन शक्ति, भेसा।

धर्मवाद्या (सं० त्रि०) विधिविभूत, धर्मवर्द्धिभूत, जो किसी धर्मको नहीं मानता हो।

धर्मविद (सं० त्रि०) धर्म वेत्ति विद-क्षिप्। धर्मज्ञ, धर्म ज्ञाननेवाला।

धर्मविदुत्तम (सं० पु०) धर्मविदुः उत्तमः। विष्णु।

धर्मवित्तम (सं० पु०) धर्ममेवामतिशयेन धर्मविदुः तमप्य। १ विष्णु, (त्रि०) २ धार्मिकोक्ति श्रेष्ठ।

धर्मविद्या (सं० स्त्री०) धर्मस्य विद्या इ-तत्। १ मोक्ष-साधि विद्या। २ धर्मोपाधित गाथा। (त्रि०) ततो ठक्।

धर्मविद्याक, धर्मशास्त्र ज्ञाननेवाला।

धर्मविश्रव (सं० पु०) धर्मस्य विश्रवः इ-तत्। धर्मका व्यतिक्रम। जब कभी धर्मका विश्रव उपस्थित होता है, तभी भगवान् भोक्तृस्थितिके निमित्त प्रयतोर्ण होते हैं। उनके प्रयत्नसे ही धर्मविश्रव निवृत्त हो जाता है।

धर्मविवर्द्धन (सं० पु०) धर्माचरण।

धर्मविवेक (सं० पु०) धर्मस्य विवेको यत्। इत्यायुध-कृत निवन्धयन्त्रमेतत्।

धर्मविवेचन (सं० स्त्री०) धर्मस्य विवेचनं इ-तत्। १ धर्म निर्णय, धर्म अधर्मका विचार। मनुने लिखा है कि जिस राजाके सामने गुरु व्याप्यायायका विचार करता है उस राजाका राज्य मोक्ष हो धूलमें मिल जाता है। २ धर्मके मन्त्रार्थमें चिन्तन। ३ दूसरेके किये हुए कर्मका विचार, किसीके दोषों वा निर्दोष होनेका निर्णय।

धर्मवीर (सं० पु०) वीररसोक्त वीररीढ, वीर रसके अनुसार वह जो धर्म करनेमें साहस्य हो।

वीररसमें चार प्रकारके वीरोंको कहा उल्लिखित है, दानवीर, बुद्धवीर, धर्मवीर और दयावीर। धर्मवीर दुर्घटित है।

युधिष्ठिरने कहा है, कि राज्य, देह, धन, माया, भ्राता, पुत्र और जो कुछ मरे पड़ते हैं, वे सबके मग एकसाथ धर्मके लिये उद्योग हैं। वीररस है।

धर्मवैशेषिक (सं० पु०) धर्मवैशेषिक इव। वह जो

पापके द्वारा धन तथा घर-मोतीकी दिशःने और धर्मिक
मन्दिर कीर्ति के लिये बहुत धन पुनः करता हो ।

धर्मप्राप्तके लिये है, कि जो पापके द्वारा धन
तथा घर-मोतीप्राप्तके लिये ब्राह्मणकी धन दान देता
है, उसे धर्मके भक्ति कहते हैं । यह भवता है पापारी
योगी और धनकासमें शग तथा मोहादिगुण जो कर
सुख धर्मिकी प्राप्त होता है ।

धर्मपाप (गं. पु०) धर्मप्राप्तकी व्याधः प्रपत्नी० ।
एक धर्मिक व्याधः, मिथ्यापुराणों एक पाप ।
इसका विषय महापुरुषमें इस प्रकार निर्या है —
जिसो पण्य काममें राजा धर्मिक ब्राह्मणकी पावने
मुक्त होने के लिए अपने पुत्रकी राज्य भोग कर पुनः
भोगकी गये । यही है पुनरीकायकी पूजा तब मुक्त
करने लगे । एक दिनको वान है, कि उनके गरीब
भगवान् मोलान् मुद्र पात्रिभूत हुआ । राजाके समने
पूछा कि तुम क्यों हो ? किम लिए यहाँ पात्रि हो ? इस
पर वगैरे कथा कहि, 'हे राजन् ! अपने पाप दक्षिण
प्रदेशमें राजा है । एक पण्य धनमधानतावशः मृग-
धेयधारी मुनिकी पावने मार डाला । तभीमें मैं ब्राह्मण
पावने कर्म पावने शरीरके चमत्कार था । यही पुनरी
काय की पूजा के लिये मैं पावने छोड़ दिया ।' यह
कह कर राजाके कहा कि पात्रि तुम धर्मपाप नामके
प्रसिद्ध हो । ब्राह्मणतमें इसको क्या हम प्रकार :-
योगी भगवान् कोई मंदाधारो, तभीको और धर्म शीघ्र
तोषण है किमः मण्य के एक पेशके मोषे बैठ कर
वेदपाठ कर रहे हैं । इस पेश पर एक बगला बैठा
हो । इसमें अपने उस ब्राह्मणके ऊपर बैठ कर हो ।
भीष्टकने माह की कर उठकी और देवा और वन भा
का गिर पड़े । ब्राह्मणने उसे मारी देवा पर बहुत
दुःख प्रकट प्रिया और है भिन्ना मांसके लिए भार
मिलन पड़े । इस कथा सुनते प्रिये के पुनः परिवर्तित
किया मृगधारी पर पदों के और भिन्ना मांसः मृगधारी
हमें बैठने के लिए कहा । यही कथाके समाप्त कथा
भूया व्याप्य कहने का कथा । तब वह धर्मप्राप्त राजा
काय दूध धर्मिक ब्राह्मणकी कथिन्ना करके धर्मप्राप्त
मन गई । पात्रि तब उसे उस ब्राह्मणकी कथिन्ना करके, तब

तब भिन्ना के कर मारल पड़े । यही समने ब्राह्मणकी
धनका धर्मिकी मारि मंदाधार देवा कर मण्य वगैरे
कथा, 'मो ! मुनि नाम कीष्ट, मों वगैरे देवता
नामों पाव ही । जैसे भुनि नामों का पदों के, तभीको
मेवाधर्मधर्म में कथिन्ना पदों के, यहः विषय को
एक माय कारण है ।' यह सुन कर धर्मिक और भी
को धर्म की उठे और बोले, 'तुमने ब्राह्मणकी धर्मिक
पदों कथामोभी की गैठ समझा । तुम मृगधारी नामों
रह कर ब्राह्मणकी पदका कारणों को, मण्य मोक्ष
मनुष्यो पाव मो दूर रहे, इन्हीं भी ब्राह्मणकी मण्यः
मण्य कर मण्य । तब मृगधारी नामों धर्मिकी कथिन्ना
मुद्रों में भी मण्य मुनो कि ब्राह्मण मण्य धर्मिकी मण्य है ।
जब यह कह बोले है तब धर्मिकी भी मण्य कर मण्य
है । यह सुन कर धर्मिक कहा, 'हे धर्म ! मैं मण्य
मण्य हूँ । पाव धर्मिकी मण्य शीघ्र । पावने कोषके
मेवा वगैरे धर्मिकी है । मैं ब्राह्मणका मण्य मण्य नामों
हूँ । मुनि हम विषयमें नामों कीष्ट । है दिशो मण्य ।
मण्य देवताधर्म कथामों मण्य मण्य देवता है । पावने
कोषके भी मण्य मण्य मण्य है, मो मैं धर्मिकी मण्य
मण्य नामों हूँ । कोष मण्यके मण्यका धर्म मण्य
है । जो कोष और मण्यकी मण्य देवे है मण्यकी देवता
की ब्राह्मण मण्यके है । मण्यमें भी मण्य मण्य, मुद्र-
की मण्य मण्य और धर्मिकी को, पर धर्मिकी मण्य
करने, है धर्मिकी है । पाव मण्य है धर्मिकी, किम
पाव धर्मिकी मण्य मण्य मण्य है । यदि पावकी धर्मिकी
का मण्य मण्य नामों को, तो मिथ्यापुराणों धर्मिकी
व्यापने धर्म मण्यके । यह व्याप पावने धर्मिकी मण्य
कथिन्ना मण्य मण्य देवा । धर्मिकी कोषकी मण्य मण्य
कोषके मण्यके पाव पावने मण्य मण्य मण्य कर धर्मिकी
है और धर्मिकी धर्मिकी धर्मिकी मण्य मण्य । मण्यका मण्य-
के लिये मिथ्याकी और धर्म पड़े ।

मण्यका मण्य मण्यके देवा कि मण्य मण्य मण्य मण्य
मण्यके मण्यके नाम मण्य कर मण्य मण्य है । मण्य
मण्य मण्यके मण्य मण्य मण्य मण्य मण्य, कि कोई
मण्य पावने मण्य है, तो मण्य मण्य मण्य मण्य मण्य
मण्य और मण्य मण्य मण्य मण्य मण्य मण्य, 'मण्य

किसी एक ब्राह्मणोंने यहाँ मेरे पास भेजी है सो मुझे मालूम हो गया। अतः आप क्षय्या मेरे घर पर पधारिये।' कौशिकको यह देख कर बहुत चायय हुआ और धर्मव्यापके साथ उनके घर पर आये। यहाँ कौशिकने व्याधो कहा, "तुम इतने ज्ञानसम्पन्न हो कर जो यह निष्कट काम करते हो, वह मेरे स्थानमें उपयुक्त नहीं है। तुम्हारे इस भयङ्कर कर्मोंसे मुझे बहुत दुःख होता है।" धर्मव्यापने कहा, "महाराज। यह पित्र-परंपरासे चला आता हुआ मेरा कुलधर्म है, अतः मैं इसमें स्थित हूँ। इसलिये आप मेरे लिये कोई चिन्ता न करें। विधाताने पहले ही मेरा जो काम लिख दिया है, उसीको मैं करता आ रहा हूँ। मैं अपने माता पिता और प्रतिष्ठियोंकी सेवा करता हूँ, सत्य बोलता हूँ, किसीसे डाह नहीं रखता, यथा शक्ति दान और देवपूजा करता हूँ। इसीमें मेरा समय व्यतीत होता है। संसारमें कृपि, पशुपालन और वाणिज्य ये ही तीन मनुष्योंकी उपजीविकायें हैं; दण्डनीति, त्रयोधोर विद्या परलोकका साधन है। शूद्रमें शूद्र्यादि कर्म, वैश्यमें कृपि, क्षत्रियमें संश्राम और ब्राह्मणमें नियत तप-चर्य, तपस्या, मन्त्र और सत्य कर्म आदिका विधान है। मैं दूसरेके हाथ मर्यादा बराह, महिमादि बेंचता हूँ, लेकिन मैं उन्हें बंध नहीं करता और न कि उनका मसखी खाता हूँ। अहिंसा और सत्यवाक्य ये ही दो सभीके लिये परम हितजनक हैं। अहिंसा परमधर्म है जो नश्यते प्रतिष्ठित है। सत्य ही के ऊपर निर्भर रहनेमें साधुओंकी समस्त प्रवृत्तियाँ प्रवर्तित होती हैं। आचार ही साधुओंका धर्म है। विद्या सबका समापन है; तीर्थयात्रा, चर्या, सारथ्य और शीघ्र ये ही साधुओंका आचार धर्म देखे जाते हैं। साधु लोग सर्वदा सध औषोंपर दया रखते, हिंसा नहीं करते, ब्राह्मणोंके प्रिय होते और कठोर वचन कभी व्यवहार नहीं करते हैं। मैं जो काम करता हूँ यह परमेश्वर भयङ्कर है, इसमें करा भी मन्द है नहीं। किन्तु हे ब्रह्मन्! देव पत्यस्त वचनान् हैं। पूर्व जन्ममें जो सा कर्म किया जाता है, वे सा ही फल हम जन्ममें मिलता है। मेरा यह दोष मुत्तलत पापके कर्मका फल है। मैं इसे छोड़ना चाहता हूँ।

पहले विधाता ही प्राणियोंका बंध करते हैं। लेकिन नाम घातकका ही होता है। पूर्व जन्ममें रत्तिदेव राजाके रत्ननागारमें प्रतिदिन दो हजार बकरे यदि और दो हजार गायें मारो जाते थीं। तब पर भी उनके समान उम समय और कोई धार्मिक न थे। यह मेरा स्वधर्म है, ये ही समझ कर मैं इसे छोड़ना नहीं चाहता। अपना धर्म छोड़ कर दूसरेका धर्म ग्रहण करनेमें बहुत दोष है। परमेश्वर कुलोनित कर्म है, ऐसा जान कर इसीमें मैं अपना जिवित्त निर्याह करता हूँ।" धर्मव्यापने इसी तरह ब्राह्मणका अनेक धर्मापदेश दिये थे जिनका मर्म यह है—कुलचितकर्म रथाग करना चल्याय है, किन्तु वादाचार त्याग कर मदाचार चरितचर्य करनेमें दोष नहीं है। दूसरेको प्रमत्ता या निन्दा दोनोका समान समझना चाहिये। दानरूपादि कर्म करना पावश्यक है; भगवत् कर्मों नहीं बोनना चाहिये। कष्टने अभिभूत होना अनुचित है, अपना कृत पाप अनुतापमें ध्वंस होता है, लोभ मर्षाद परित्यज्य है, शुभ वा अशुभ कर्मका चरम्य भोग करना पड़ता है। इत्यादि। अन्तमें धर्मव्यापने कहा, 'आप क्षय्या मेरे पूर्व जन्मका हस्तास्त सुनिये। मैं पूर्व जन्ममें सुनिपुण वेदाध्यायी और वेदाङ्गपारंग ब्राह्मण था। आकाशत दोपने ही मेरी यह दशा हुई है। धनुर्वेदपरायण कोई राजा मेरे मित्र थे। उनके साथ एक दिन मैं शिकारमें जंगल गया। यहाँ ला कर मैंने अपने हाथमें एक तोर छोड़ा जिससे एक वृषि मारे गये। वह वृषि शृगोंके रूपमें थे। जब मैं वृषिके पाँच पदों तो उन्होंने कर्णना विनाप करते हुए मुझे ग्राप दिया कि, तुने मुझे बिना अपराध मारा, इसने तू शूद्रयोनिमें जा कर एक व्याधके घर उत्पन्न होगा। वृषिने इस तरह ग्राप दिये जाने पर मैंने उन्हें प्रणम करनेके लिये बहुत विनोत भावसे कहा, "हे प्रभो! मुझे समा कीजिये। मैंने बिना जाने यह अपराध किया है।" इस तरह प्रमुनय विनय करने पर वे प्रमद हो कर वाते-ग्राप तो चल्या नहीं हो सकता, लेकिन मैं अब तुमसे प्रणम हूँ, इसलिये तू शूद्रयोनिमें जन्म ले कर भा धर्माप होगा, पिता माताको शूद्र्या करेगा और मज्जती धिदि

भनु, यम, मयिष्ठ, पत्ति, दत्त, विष्णु, अङ्गिरा, उग्रना,
हृषस्ति, व्यास, आपस्तम्ब, गौतम, कात्यायन, नारद,
वाङ्मन्वन्, पराशर, संज्ञा, शङ्ख, हारोत और मिश्रित
इन सब ऋषियोंने जो सब ग्रन्थ बनाये हैं उन्हें धर्म-
शास्त्र कहते हैं। यह आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त
इन तीन प्रधान भागोंमें विभक्त है। याज्ञवल्क्य धर्मशास्त्र
के प्रयोजकने कहा है, कि मलमास, टाय, संस्कार, शुद्धि
निर्णय, प्रायश्चित्त, विवाह, एकादशदि निर्णय, तद्वा-
गादि उत्सव, हृषीकेश, व्रत, व्रतप्रतिष्ठा, ज्योतिष,
वास्तु, दोषा, आङ्गिक, कृत्य, चैत्रमाहात्म्यादि, सामन्त्राह,
यजुःब्राह्म, और गृहकृत्य इन सबकी मीमांसा करके रघु-
नन्दनने अष्टाविंशतितत्त्व नामक स्मृतिशास्त्र प्रणयन
किया है और यह भी धर्मशास्त्रसंयुक्त नामसे प्रसिद्ध है।

मूल धर्मसंहिता को धर्मशास्त्र है। जब इन
संहिताओंसे धर्मव्यवस्थाका निर्णय करना कठिन हो
गया, तब उनके आधार पर जो सब संयोज्य प्रणीत हुए
उन्हींसे सभी धर्म व्यवस्थाएँ प्रचारित होने लगीं। ये
सब संयोज्य स्मृति नामसे प्रसिद्ध हैं। स्मृति देखो।
धर्मशास्त्री (सं० पु०) धर्मशास्त्रके अनुसार व्यवस्था देने-
वाला, धर्मशास्त्र ज्ञाननिवाला पण्डित।
धर्मशील (सं० त्रि०) धर्म धर्माचरणे शील प्रभावो
यत्न। धार्मिक, धर्मके अनुसार आचरण करनेवाला।
धर्मशीलता (सं० स्त्री०) धर्मशील होनेका भाव, धर्म-
चरणकी वृत्ति।

धर्मयैष्टिनः (सं० पु०) एक बौद्ध ग्रन्थ।
धर्मसंयुक्त (सं० त्रि०) धर्मतत्त्वविशुद्ध, धर्मतत्त्वका
प्रतिपाद्यी।
धर्मसंहिता (सं० स्त्री०) धर्मशास्त्रिका संहिता, धर्म-
संहिता निरूपिता यत्न वा। धर्मशास्त्र, जिस शास्त्रमें
धर्मका निरूपण हो, जिसमें दृष्टौकिक तथा पारलौकिक
विषय मीमांसित हुआ हो, उसे धर्म संहिता कहते हैं।
धर्मगृह्य (सं० पु०) धर्मस्य गृह्यः इत्यतः। विद्वद्
धर्मका एकत्र समवाय।

धर्मसभा (सं० स्त्री०) धर्मस्व सभा। धर्माधिकरण, यह
स्थान जहाँ बैठ कर ग्यायाधीश ग्याय कर, फैलात।
धर्मसहाय (सं० पु०) धर्म सहायः। धर्मके कार्यमें
माहात्म्यकारी, कृतिकादि।

धर्मभार (सं० पु०) धर्मयुक्त भारः। १ यैष्ठ पुस्तकम्।
२ पुस्तक कर्मका साधन।
धर्मसारवि (सं० पु०) धर्मः सारविधि यम्। धर्म-
सङ्केत सहायक।

धर्मसावर्णि (सं० पु०) धर्म एव सावर्णिः। एकादश
भनु, पुराणोंके अनुसार ग्यारहवें भनु। इन मन्वन्तारमें
पचत्वारिंशत् धर्मसिद्धि हैं, इन्द्रका नाम वैद्विदि है। विद्वद्भूम
कामग और निर्माणरति नामक देवगण हैं। चक्रवादि
समर्पि हैं तथा मत्स्य धर्मादि भनुपुत्रगण हैं।

(भागवत पृ० १११२)

सार्कण्ड्यपुराणमें धर्मसावर्णिका विषय इस प्रकार
लिखा है—इन मन्वन्तारमें विद्वद्भूम, कामग और निर्माण-
रति ये तीन प्रकारके देवगण साविभूत हो कर प्रत्येक
चौसगणमें विभक्त होगे। इनमेंसे सास, ऋतु और दिवस
ये तीनों निर्माणरति और रात्रि, मिहङ्गम और सुहृत्
ये कामगण होंगे, प्रख्यातविक्रम त्रय इनके इन्द्र बनेंगे।
हविष्मान्, धनिष्ठ, पारुणि, निचर, चमघ, वृत्ति और
चर्मितीश ये सब इस मन्वन्तारमें समर्पि होंगे। सर्वा-
नुग, सुगर्मा, देवानोक, पुण्डव, ईमघवा, हृदायु और
विभाव, ये सब भनुपुत्र राजचक्रवर्ती समझे जायेंगे।

धर्मसिंह—चौहानराज हजौरीके प्रधान मित्राणित।
हजौरी जिस समय दिग्विजय करके राजधानीमें लौटे,
उस समय धर्मसिंहने समस्त कर्मचारियोंके साथ बड़ी
धूमधामसे उनका स्वागत किया। उसके बाद हजौरी
पवने पुण्डित विष्णुरूपके आदिगानुमार “कोटिपञ्च”
नामक यज्ञका अनुष्ठान कर रक्तचक्रमें प्रवेशान करके
लगे। उन समय खलासहोत्र निमज्जी भारतके सम्राट् थे।
सम्राट्ने जब हमोरको जयवार्ता सुनी, तब उन्होंने पवने
भाई लतुचण्णको ८० हजार चम्पारोहियोंके साथ चौहान
राज्यके भ्रमणके लिए भेजा। हमोर उस समय प्रयोग
सुनिधत चवनम्बन कर बैठे हुए थे। हमसिंह ने प्रत्येक
युद्धमें न जा मरे, धर्मसिंह और भीमसिंहको भेज
दिया।

प्रथम युद्धमें जयी हो कर भीमसिंह राजधानीकी तरफ
लौटे। रजौरी मोके पर लतुचण्णने द्विप कर भीमसिंहका
पीका किया। धर्मसिंहको भी यह बात मालूम न

दूसरा और तीसरा खण्ड इन्हींका बनाया हुआ है।
 धर्मसूत्र (सं० पु०) धार्ष्टत मतविद्वद् धर्माधिकार्य
 पदार्थ। जैन देवो।
 धर्मस्य (सं० पु०) धर्मेतिष्ठति स्यात्क। १ प्राङ् विवाक,
 विचारक, न्यायकर्त्ता। (त्रि०) २ जो केवल धर्म में
 अवस्थित या समारंभता हो।
 धर्मस्थल (सं० स्त्री०) धर्मस्य स्थल। धर्मस्थान, जहाँ
 धर्मकार्यदि किया जाता है, उस स्थानको धर्मस्थान
 कहते हैं।
 धर्मस्थविर (सं० पु०) धर्मस्य विर; वृद्ध;। धर्मवृद्ध,
 धर्म में वृद्धचित्त।
 धर्मस्वामिन् (सं० पु०) १ बुद्धका नामान्तर। २ काश्मीर
 के राजा धर्म से प्रतिष्ठित देवता।
 धर्महन्तृ (सं० त्रि०) धर्मकर्मका विरोधक, जो धर्म के
 कामों में बाधा डालता हो।
 धर्महा—नदीविशेष। यह विह्वला नदीके तीरवर्ती
 चण्डीपुर नामक स्थानसे एक योजन उत्तरमें
 प्रवाहित है। (भ०भ०)
 धर्मकर (सं० पु०) ८८ सस्यत्त बुद्ध, जिनमेंसे १ बुद्ध
 लोकेस्वरराजके शिष्य हैं।
 धर्मागम (सं० पु०) धर्मस्य आगमः। धर्मशास्त्र।
 धर्माङ्ग (सं० पु० स्त्री०) धर्म इव शुभं, धर्म यव्य।
 धर्म, वगला। इसका अङ्ग धर्म के समान शुभ होता है।
 धर्महज (सं० पु०) प्रियङ्गर नामक एक राजाका पुत्र।
 धर्माचार्य (सं० पु०) धर्मोपाचार्यः। १ धर्मशिक्षक,
 धर्मकी शिक्षा देनेवाला गुरु। जिससे धर्मकी शिक्षा
 मिले उसे धर्माचार्य कहते हैं। २ ऋग्वेदियोंमें उन
 ऋषियोंमेंसे एक। जिसने निमित्त तर्पण किया जाता
 है। (भा० सं० ५४२ ११४४) ३ नैमित्तिकादि प्रत्यङ्ग,
 वैदिक धर्माचारको शिक्षाके निमित्त योजनरूप धर्म-
 प्रवर्त्तक एक ऋषिका नाम।
 धर्मात्मन (सं० त्रि०) धर्मगोत्र, धर्म करनेवाला, धार्मिक
 धर्मादिर्य—, समरीराज प्रथम शिवादित्यका नामान्तर।
 ये शैव थे। शिलादिर्य और ब्रह्मर्षिगुह्यो। २ ब्रह्म एक
 राजा। ये शुभसम्प्राप्त समुद्रगुप्तकी अधोभूताओंकी कार
 करते थे। ३ ई० पञ्च शतकके एक वज्जराज।

धर्माधर्म (सं० पु०) धर्मस्य अधर्मस्य इत्यन०। पुत्र
 और पाप। यह शब्द द्विवचनान्त है। धर्माधर्मो परोक्ष-
 णीयतया अन्तरः अच्। २ धर्म अरूप दिशमें द।
 धर्माधर्मपरोक्षण (सं० स्त्री०) धर्माधर्मयोः परोक्षण-
 तत्। धर्म और अधर्म विषयकी परीक्षा।
 धर्माधिकरण (सं० स्त्री०) अधिहितवते इतिचित्ति अधि-
 छ-पधिकार्ये स्मृट्, धर्मस्य अधिकरणं। राजाको
 विचार-स्थान, वह स्थान जहाँ राजा व्यवहारों (मुकदमों)
 पर विचार करता है, विचारालय।
 धर्मविरोधयत्ने कात्यायनका वचन है, कि धर्मा-
 नुसार जहाँ धर्मशास्त्रका निरूपण होता हो अर्थात्
 मुकदमों पर विचार किया जाता हो उस स्थानको धर्मा-
 धिकरण कहते हैं। इस तरहका विचारालय कहा बनाना
 चाहिये उनके विषयमें यों किया है—दुर्गके
 मध्य विचारालय निर्माण करना अच्छा है। यह विचा-
 लय खाई या लुहोमें वेष्टित होना चाहिये। पूर्व दिशा-
 में और पूर्व मुख करके बना स्थापित करनी चाहिये।
 विचारकको उचित है, कि वे किसी उद्योग पर बैठ
 कर विचार करें और यह आसन माना और रत्नादिसे
 भूषित रहे।
 जो पुत्रयोः कृत्यका माय चर्द्धा तरङ्ग समक्ष जायं
 और जिन्हें किसी प्रकारका लाभ न हो धर्म समुत्पत्तको
 धर्माधिकरणमें नियुक्त करना चाहिये।
 धर्माधिकरण (सं० पु०) धर्माधिकरणं आश्रयत्वेनाश्रयस्य
 इति अच्। धर्माश्रय, विचारक।
 जो शत्रु और मित्र दोनोंकी समान भावसे देखते
 हों और जो समस्त गणविवाहार्थ, प्राप्ति यथेष्ट और
 कुलीन हों, वे ही विचारक हो सकते हैं।
 धर्माधिकारिन् (सं० पु०) धर्माधिकरणं विचार्य स्थान-
 स्तेनाश्रयस्येति, धर्माधिकरण-इति। धर्माधिकरण-विशिष्ट
 विचारक। इसका पर्याय—धर्मोपदेश, धार्मिक, प्राङ्-
 विवाक और अधदर्शक है।
 धर्माधिकार (सं० पु०) धर्मोपाधिकारः। न्याय और
 अन्यायके विचारका अधिकार, विचारपतिता पद वा
 कर्म।
 धर्माधिकारिन् (सं० पु०) धर्मो व्यवहारे तद्विषयं

धार्मिक । तस्य कर्मभावादो इति पुरोहितादित्वात्
याक. । (ली०) २ धार्मिक्यः धार्मिकका भाव या कर्म ।
धर्मिणी (म० स्त्री०) १ पत्नी, स्त्री । २ रेणुका । (त्रि०)
३ धर्म करनेवाली ।

धर्मिन् (म० त्रि०) धर्मास्तारण्य इति । १ धर्मविनिष्ट,
जिम्में धर्म हो । २ धार्मिक । (पु०) १ विष्णु । ४
धर्मका आधार । ५ रेणुका । ६ जाया, स्त्री ।
धर्मिष्ठ (म० पु०) धर्मपामतिशयेन धर्मवान्, इति
इष्टम् मनुष्यो लोपः । १ अत्यन्त धार्मिक, पुण्यात्मा ।
२ विष्णु ।

धर्मिपुत्र (म० पु०) नट, नाटकका कोई पात्र या
चमिनयकत्ता ।

धर्मियम् (म० त्रि०) पतिशयेन धर्मवान्, इति ईय-
सुत् । अत्यन्त धर्मगौन, जो पाणपणसे धर्मके पथपर
चलता है, मरते समय भी अधर्मके पथ पर पैर नहीं
रखता; उसे धर्मियम् कहते हैं ।

धर्मिन्द्र (म० पु०) धर्म इन्द्र इव रचकत्वात् । धर्मराज,
यम ।

धर्मिष्ठा (म० त्रि०) धर्म धाम्निष्ठः पाप-धन-धर्मेषु
ततोऽन्यथाविधादिना उ प्रत्यय । धर्मभाष करनेका
चक्षुमायी, जिसे धर्म प्राप्तिको इच्छा हो ।

धर्मिष्ठ (म० पु०) धर्मवर्गोय शौद्राण्य पुत्रभेद, पुत्र वर्गी
राजा शौद्राण्यका एक पुत्र ।

धर्मिष्ठ (म० पु०) धर्मस्व ईशः ६-तत् । यम ।

धर्मिष्ठर (म० पु०) धर्मस्व ईश्वरः ६-तत् । १ यम,
धर्मराज ।

धर्मोत्तर (म० त्रि०) धर्म उत्तरः प्रधानं यस्य । धर्म
प्रधान ।

धर्मोत्तराचार्य—एक बौद्ध आचार्य और धर्मकार । इस
देयमें अब तक इसका नाम और पन्थादि विदुस थे ।
तिब्बतमें "तांगूर" (Tangur) नामक सर्वसाहित्यसंपद
विषयक एक बड़ा ग्रन्थ है, जिमें बहुतसे ऐसे ग्रन्थोंका
वर्णन है जो भारतीय विद्वानों द्वारा रचे गये हैं । इसी
संपद ग्रन्थोंमें धर्मोत्तराचार्यके ७ ग्रन्थोंका उल्लेख है ।
परन्तु आज तक अनुसन्धान करने पर भी उल्लिखित ७
ग्रन्थोंकी मूल संस्कृत प्रति न तो भारतमें ही मिली

और न तिब्बतमें ही, १८८०में बम्बई एशियाटिक सोसा-
इटीके प्रथममें "न्यायविन्दुटोका" नामक एक टीका-
ग्रन्थ इनका रचा हुआ पाण्डित्यपूर्ण रूप है । "तांगूर"
नामका पूर्वाक्ष संघट्ट ग्रन्थमें भी इसका नाम पाया जाता
है; इसीसे दोनों ग्रन्थों और ग्रन्थकारोंको एक समझनेमें
कोई बाधा नहीं है । यह ग्रन्थ 'न्यायविन्दु' नामक
संस्कृत न्यायग्रन्थही टीका है । बौद्धोंमें न्याय-विषयक
अनेक ग्रन्थ मिलते हैं । मूल ग्रन्थ 'न्यायविन्दु' किमका
रचा हुआ है, पता नहीं । परन्तु भावदाओके पुस्तका-
गारमें संघट्टीत सद्बुधमोत्तरसूत्र और जैमिनीरसि संघ-
टीत "धर्मोत्तराचार्य" इसका कुछ कुछ सम्पर्क अवगत
है । पाश्चात्य विद्वानोंका अनुमान है, कि 'सद्बुधमोत्तर-
सूत्र' और न्यायविन्दुटीकाके मूल ग्रन्थ 'न्यायविन्दु'
में कुछ भेद नहीं है । न्यायविन्दुटीकाके पढ़नेसे मान्य
होता है, कि धर्मोत्तराचार्यने जिन सूत्रोंको व्याख्या की
है, उन सूत्रोंको उन्होंने स्वयं बुद्धके वाक्य माने हैं । इस
से अनुमान होता है कि चाप बौद्धधर्मके वैभाषिक,
सौत्रान्तिक, माध्यमिक और योगाचार इन चारों मायाचार्य
में थे । 'धर्मोत्तराचार्य'के पढ़नेसे ज्ञान होता है कि
चापके पढ़ने आचार्य विमोददेव (भद्रचरित्रे भ्यानु-
प्युक्त राजा गोपीचन्द्रके समकालवर्ती और योगानन्दा-
नामो)ने पूर्व सीमावाके आचार्य पर प्रमाण-विषयक
एक सप्त-आयो टीका तथा समाजभेद प्रत्यक्षक नामक
१८ प्रकार बौद्धमायाचार्योंका निवरण लिखा था । उसके
बाद शास्त्रमद्व वा गान्धर्व वा मद्भद्र नामक आचार्यने
अभिधर्मकीयका प्रतिपाद कर "न्यायानुसारमात्र"
नामक ग्रन्थ रचा था । यूपन बुधगिने बीबी भाषामें
इसका अनुवाद किया है, जो कि दोनों त्रिपिटकका
एक चंग समझा जाता है । उसके बाद बौद्ध कवि और
आचार्य धर्मकीर्तिने प्रमाणवार्तिक, प्रमाणाविन्दुय,
प्रसन्नपाद आदि न्यायविषयक ग्रन्थ रचे । धर्मकीर्ति
द्वारा प्रवीत "बौद्ध धर्ममहति" नामक ग्रन्थका उत्तर
सुबन्धु-प्रणीत वागवदत्तामें मिलता है । धर्मोत्तराचार्यने
भी इसी प्रकार आचार्य पादोंके अनुसरण करने हुए
"न्यायविन्दुटोका" रची होगी ।

धर्मोपदेश (म० पु०) धर्म उपदिश्यते इति उपदिश

नोचा दिखाया गया हो। धिया टाय। धंघनी छो। धर्पिन् (मं० त्रि) धर्पति इति ध्रुप निमि। १ धर्पक, धर्पण करनेवाला। २ पाक्रमण करनेवाला, धर दवानेवाला। ३ परामभवकारी, धरानेवाला। ४ नोचा दिखानेवाला। ५ धपमान करनेवाला।

धनकगौर (दारकेश्वर, दाहकेश्वर)—पश्चिम बङ्गालकी एक नदी। यह मानभूम जिलेके तिलावनी पहाड़से निकल कर बाँकुड़ा जिलेके चम्पास, विष्णुपुर, कोटासपुर, इन्द्रास आदि स्थानोंके मध्य होती हुई कोटासपुरसे २ कोस पूर्व बहमान जिलेमें प्रवेश करती है। दक्षिणपूर्व ओर दक्षिणकी ओर जङ्गलवादा से कुछ दूर बँसारी ग्रामके निकट यह दुगली जिलेमें प्रवेश करती है। दुगली जिलेमें इसका नाम रूपनारायण है। दुगलीके मुहामेके निकट यह नदी दुगली नदी में हो मिली है। इसमें कभी कभी बाढ़ आ जाती है। बाढ़से बचनेके लिये इसमें बाँध बाँध दिये गये हैं। बाँकुड़ा में सेवल बर्पाके समय इसमें आँब आते भाते हैं। बलण्ड (सं० पु०) इन्द्रकण्डकल, भंकोलका पेड़, टैरा।

धनदोघो—इस नामका दिनोजपुरमें एक ग्राम और एक बड़ी दिगी है। प्रतिवर्ष १ सौ फाल्गुनसे लेकर ८ दिन तक इस दिगीके पास एक बड़ा मेला लगता है जिसमें प्राय २५ हजार मनुष्य समागम होते हैं।

धननधर—२४ परगनाका एक ग्राम। यहाँ एक पगला गारद है।

धनहर—उड़ीसाके बंस्तर्गत एक जनपद।

धनेट—मध्यदेशके बंस्तर्गत कौशकपुत्र जिलेकी एक नदी। यह भाराकान पर्वतमालासे निकल कर कम्बर्-मिवा उपसागरमें गिरती है। सुधानसे २४ कोस दूर धनेट ग्राम तक इसमें आँब जाती पाती है। कहीं इस नदीकी टलक भी कहते हैं। धनेट ग्रामके समीप इसकी गति बहुत तेज है।

धनेश्वर—त्रिपुराके बंस्तर्गत पागरतलासे ५ कोसकी दूरी पर अवस्थित एक पर्वत।

धनेश्वरी—ब्रह्माल और आलाममें इस नामकी बहुतसी नदियाँ हैं। १ यमुनाकी एक शाखानदीका नाम धने-

श्वरी है। यह ठाका जिले होती हुई मेघनामें गिरती है। यमुनाकी ओरका सुधाना दिनों दिन बालू में भरता आ रहा है। सेवल बर्पाकानमें हीमर चलता है। २ सुमाँ ओर कुमियाँरा दोनों संयुक्त नदियोंके प्रवाहका नाम धनेश्वरी है जो मैमनसिंह ओर ओहह जिलेके मध्य सीमास्थलमें प्रवाहित है। यह मेघनामें जा गिरि है।

३ कछाड़की एक नदीका नाम धनेश्वरी है। यह सुसाई राज्यसे निकल कर हैलाकादोके मध्य होती हुई बराक-नदीमें गिरती है। सुसाई सीमामें कछाड़के राजाने इस नदीसे एक गहर काट निकाली है। भसल नदीके ऊपर इस तरहके मुहामें पर एक बाजार अवस्थित है। इस नदीके किनारे १६ कोस विस्तृत सुरचित वन है जो धने जङ्गल नामसे मशहूर है।

धव (सं० त्रि०) धवति, ध्रुवति धुमोति धुमानि या ध्रुव। १ कम्पनकारक, काँपाने या हलानेवाला। (पु०) २ पति, स्वामी। ३ नर, पुरुष, मर्द। ४ धूर्त पादमी। ५ सनातन्यात पश्चिमदेशीय हजविशेष, एक जङ्गली पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—गाकटासय, इद्रुतव, धुरभर, गौर, कपाय, मधुरलक, गुच्छाडव, पाण्डुतव, धवल और पाण्डुर है। इसका गुण—कपाय, कटु, कफ और वातनाशक, पित्तप्रकोपक, रुचिकर, दीपन, शीतल, प्रमेह, शर्मा, पाण्डु, पित्त और कफनाशक, मधुर, तुवर और तिक्त है। (आयुर्वेद)

इस जातिका बड़ा पेड़ बिमालयकी तराईसे लेकर दक्षिण भारत तक पाया जाता है। इसके पत्ते चमकत या सरोफेके पत्तोंके जैसे होते हैं। इसकी छाल भेद और चिकनी तथा औरकी लकड़ी बहुत कड़ी और चमकीली होती है। फल बहुत छोटे छोटे होते हैं। इस पेड़की कई जातियाँ हैं। बड़ी जातिके पेड़का घोंरा या शाकनी कहते हैं। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है। इसका कोयला भी अच्छा होता है। पत्ती चमड़ा विभानिके काममें पाती है। इसके पेड़से जो गंद निकलता है वह डॉट छाननेवालेके काममें पाता है। छोटी जातिका पेड़ विध्य पर्वत पर तथा दक्षिण भारतकी ओर मिलता है। ५ कम्पने भावे धप। ६ कम्पन। धवई (हिं० स्त्री०) एक पेड़। चातकी रेकी।

धवलित (स० लि०) धवलोत्पल सञ्जातः तारकादित्वादि-
तत्त्वः । धवलोभूतः, जो सफेद किया गया हो ।

धवलितम् (स० पु०) धवलय भावः समन्वितः ।
शान्तत्वः शुभत्वः, सफेदी । (स्त्री०) धवलसमर्पादित्वात्
डीपः । २ शुभलक्षणं गाभीः, सफेद माय ।

धवली (स० स्त्री०) १ शुभल मायः, सफेद माय । २ एक
रोग जिसमें बाल सफेद हो जाते हैं । ३ सफेद मिर्च ।
धवलीकृत (स० लि०) धवलाः धवलाः कृतः धवलोत्पन्नानि
विषः ततो दीर्घः । धवलितः, जो सफेद किया गया हो ।

धवलोभूत (स० लि०) शुभलोभूतः, जो सफेद हुआ हो ।
धवलसेतु (स० पु०) श्वेताक्षः, सफेद पर्वत ।

धवलेश्वर-गोदावरी जिसमें राजमहन्दी तालुकके अन्तर्गत
एक नहर । यह अक्षा० १६°५६'३५" स० और देशा० ८१°
४८' ५५" पूर्वमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः साढ़े
दस हजार है जिसमेंसे दस हजार हिन्दू हैं । राजमहन्दीसे
२ कोस दक्षिण गोदावरी नदीमें १२ फुट ऊँचा घोर
१६५० गज लम्बा एक बांध है । यह बांध पिपिका नामक
गोदावरी नदीके मुहानास्थ दीप तक विस्तृत है । १८५०
ई०की इस काममें हाथ डाला गया था । यहां अभी
डिस्ट्रिक्ट इंजिनियरका दस बम घोर पूर्ण विभागका
कारखाना है । १५वीं घोर १६वीं शताब्दीमें जब हजोर-
के अन्तर्गत साय राजमहन्दीके सीतापतिका युद्ध हुआ
था, उस समय हजोर नदीमें दोनों पक्षकी सेनाये रहती
थीं । गोदावरी घोर कृष्णानदीकी नहर को कर इस
नगरके साय उपजलको घनिष्ठता बढ़ गई है ।

धवलेश्वर—१ भविष्य-व्रह्मखण्डोक्त ब्रह्मदेशान्तर्गत परद
देशके अन्तर्गत एक नदी । इसके किनारे बलाननगर
अवस्थित है । (म० ख० १५।१२) २ एकाग्रकाननकी एक
सीमा । एकाग्रकानन देखो ।

धवलोत्पल (स० स्त्री०) धवलं उत्पलं कर्मधा ।
कुसुम, एक फूल ।

धवा (हि० पु०) धव देखो ।

धवायक (स० पु०) धुनाति कम्पयति लघादीनिर्ति धू-
आयक (भावः लघुमिषपाजः । उ० ३।८३) वायु ।

धवाना (हि० लि०) दौड़ाना ।

धवितव्य (स० लि०) धृतव्यः । ध्वजोपयुक्तः, दवा देने
योग्य ।

धवित (स० स्त्री०) धृतव्येति धू-इत्य (भा० उ० सूत्र
महत्तर इति । पा १।२।१८४) १ मृगचर्म-रचित ध्वज,
हरिषके चमड़ेका बना हुआ एक प्रकारका पंखा ।
(लि०) २ अपनयनकारक, छटानेवाला, दूर करनेवाला ।
धम (हि० पु०) १ जल चादिमें प्रवेश, लुबकी, गोता ।
२ भुरभुरी जमीन ।

धमक (हि० स्त्री०) १ ठम-ठम शब्द जो सूखी खाँसीमें गलेमें
निकलता है । २ सूखी खाँसी, टसक । ३ दृष्टि, डार,
जलन ।

धमकना (हि० लि०) १ नीचेको धंस जाना, दब जाना,
बैठ जाना । २ दृष्टि धरना, डार धरना ।

धमका (हि० पु०) फेफड़ोंमें होनेवाला बीबाघोंका एक
रोग । यह रोग धूतने फैलता है ।

धमनि (हि० स्त्री०) धं धनि देखो ।

धमसमाना (हि० लि०) धरनीमें समाना, धंम जाना ।

धसान (हि० स्त्री०) १ धंसाव देखो । २ एक लोटी
नदी । यह पूर्वी मानवा घोर हुँदेमखण्डमें की कर
बहती है । पूर्वी मानवा घाटीमें आसमं देगाय देग कह-
लाता था घोर यह नदी सो समो नामने प्रसिद्ध थी ।

धमाना (हि० लि०) धसन देखो ।

धवाय (हि० पु०) धंसाव देखो ।

धाक (हि० पु०) एक जंगली जाति । इसका पत्तार
आवहार भोजने बहुत कुछ मिष्ठता लुलता है ।

धागड़ (हि० पु०) १ धनाय अन्नलो जाति । ये विंध्य घोर
को मोर पहाड़ियों पर रहते हैं । २ कूर्प घोर तानाव
खोदनेका काम करनेवाली एक जाति ।

धागर (हि० पु०) धागड़ देखो ।

धाधना (हि० लि०) १ बन्द करना । २ बहुत पक्षि या
सेना । ठूसना ।

धाधल (हि० स्त्री०) १ लघम, उपद्रव, मटपटो । २ धोना,
दगा, धरेव । ३ बहुत पक्षीक जट्टो ।

धाधलपन (हि० पु०) १ पात्रोपन, गरातर । २ धावे-
बाजो, दगाबाजो ।

धाधा (हि० स्त्री०) दनायची ।

धाधवी (हि० स्त्री०) १ उपद्रवी, गरोर, पात्री, मटपट ।
२ धोखेबाज, दगाबाज ।

होता है। येवमे चैत्रमास तक भाङ्गियोंमें फूल लगते हैं। इस समय कनीजी तोड़ कर सुखा रखते हैं। कहीं कहीं तो गरुत्काफमें इसकी पत्तियां भी तोड़ कर रखी जाती हैं। पत्तियां वा फल संग्रहमें शारीरिक परिश्रमके निवा और कुछ भी पर्यवश्य नहीं होता। पर पीछे रंग बना कर खाया साभ ठठाले हैं।

औषध—शुष्क फूल वैद्यकके मतसे उत्तजक और सङ्कोचक है। रक्तश्या और उदरामयदिमें कविराज लोग इसे काममें लाते हैं। २ ग्राम फूलके चूर्णको दक्षिणे साय शिवन करनेसे आमाशय और मधुके साय शिवन करनेसे रजमाश्रित्य बंद हो जाता है। घावके ऊपर सूखा चूर्ण छिड़क देनेसे वह पाराम हो जाता है। कोरुण प्रदेशमें जब पित्तकी अधिकता रहती है, तब रोगीका मुखगङ्गा तिलतैलसे भर कर गिर पर धातको पत्तियोंका रस घिसते हैं। इससे पित्त कट कर मुख मध्यस्थ तैलमें मिल जाता है और तैलका रंग कुछ पीला हो जाता है। इस समय यह तैल केक देते और पुनः यह तैल सुचर्म दे कर गिर पर पत्तियोंका रस घिसते हैं। इसी प्रकार तब तक करते रहना चाहिये, जब तक मुखस्थ तैलमें पित्तसंक्रमण निवारित न हो। उत्तर भारतमें यह नङ्कोचक, उत्तजक और शोणन गुणविशिष्ट माना गया है। स्त्रियोंको गर्भावस्थामें देने पर भी यह कुछ घनिष्ठ नहीं करता। छोटा-नागपुरमें प्रदरोगमें इसकी पत्तियोंको उषान कर जलपान कराते हैं।

वैद्यकके मतसे इसका गुण—कटु, उष्ण, मृदकरी, विषदोष, भस्मीभार, विमर्ष, म्रण और रक्तपित्तनाशक है। चाप—मध्यप्रदेशमें लोग इसका फल खाते हैं। बङ्गालमें इसकी पत्तियोंको मिर्ची कर गरुत्त तैयार करते हैं। काङ्गरामें इसको भाङ्गियोंका कोई कोई पत्र मराव बगानमें व्यवहृत होता है। इसकी लकड़ी, भारी होती और जलधनके काममें प्यारी है।

धातकीकुसुम (मं० स्त्री०) धातकी पुष्प, धवला फूल धातसमिपुन (मं० स्त्री०) धातकी पुष्पजत, सुरभिः एक प्रकारकी मराव जो धवले फूलोंसे बनाई जाती है।

धातक्यादिलेह (मं० पुं०) चक्रदत्तक लेहयेद । धातकी,

विवर, धनिया, लोभ, इन्द्रिय और बाला इन सबको चूर्ण कर मधुके साथ सेदन करनेमें छोटे छोटे बर्तोंका छर और भनीमार बिन्द होता है।

धाता (मं० पुं०) निघात, म्रदा ।

धाता (हिं० पुं०) धातु रेखे ।

धातु (मं० पुं०) धौशी मर्ममस्तिमिति वा धा-तुन् (सिगनिगोति । अण्, १००) १ परमाका । २ शरीर-धारक वस्तु, शरीरको धारण करनेवाला द्रव्य; धात पित्त और रक्त ।

धात, पित्त और रक्त ये ही तीनो शरीरको धारण किये हुए हैं, इनसे इन्हें धातु कहते हैं।

रस, पट्टक, पर्यात् रक्त, मांस, मेद, प्लीहा, मज्जा और शुक्र ये धात शरीरस्थित धातु हैं। सुश्रुतमें इसका विवरण इस प्रकार मिलता है।—जो कुछ खाया जाता है उसका सार भाग रस होता है पर्यात् उस भागमें कट, पच, तिष्ठ, कषाय, क्षयण और मधुर ये छः प्रकारके रस दो वा पाठ प्रकारके बोध तथा अनेक तरहके गुण रहते हैं। पच्छी तरहसे पच जाने पर उसमें जो द्रव्य घट्ट-सार बनता है, वह रस कहलाता है। इसका स्थान हृदय है जहाँसे वह रस दश जह्वांसिनी समरक्त-वाहिनी धमनियोंके द्वारा सारे शरीरमें फैलता है। पीछे पट्टकृत् क्रिया पर्यात् जिस क्रियाका कारण देवा नहीं जाता उसी क्रियाके द्वारा वह रस धमनियोंमें प्रवेश कर सारे शरीरकी हमिया तर्पय, बर्धन, धारण और जोषमाण करता है। सद्य, हृदि और विकार पर्यात् शरीर चीथ होता है हृदि हीनो है और प्रवादि रूपका विकार प्राप्त होता है। इन्हीं कारणोंसे सर्वशरीरगतो उस रसको गति अनुसरणसे जानो जानो है। प्राचियोंके शरीरव्यवस्थापर रस पर्यात् जिस रसमें किसी प्रकारका विक्षिप्तभाव नहीं है तेज या पित्तके कार्यके साथ मिलित हो कर मांस रंगका हो जाता है और रक्त कहलाता है। यह रक्त प्लीहोंके शरीरमें रज-नामसे प्रसिद्ध है। अन्त्याध आचार्योंका कहना है कि जो जोवरक पाण्डुमोनित्र पर्यात् पचभूतसे यह शरीर उत्पन्न होता है, वही जीवह रक्तमें है। मांसमय विगिटता, तात्प, रजश्चैव, साव-गीयता और सुश्रुता शोधितके रस गुणोंको ही पचभूत-

मांस, शरीरमें वा पचनेमें धातुचरण होता है और स्वयं होनेमें दृष्टि, चर्म्म या वस्त्रकी रूपा, वायुका प्रकोप पचवा मूल्य, होती है। वसा धातुके विकृति होने पर पूर्वाति तीन पचन्याचामें की खेदपान और चने शरीरमें मर्दन, सेवन वा परिचयन एवं चिन्म और मधु द्रव्य भोजन करना चाहिये। यदि धातु घय हो जाय तो जिन तरङ्ग हो सके भोजन करने ही उसे पूरा तरह सेना चाहिये— क्योंकि शरीरमें अक्षरम सञ्चारित की कर मय धातु समान ही जाती हैं। शरीरकी मय धातु समान होनेमें शरीर स्थूल वा लघु न हो कर मध्यमावर्त रहता है, सब काम सामानोमें करता है, शुभा, पिपासा, शीत, प्रीति, धर्मा और रौद्र सहा कर सकता है तथा वसवान् दोग्य पड़ता है। स्थूल और लघु एहो दो प्रकारके शरीर निन्दनीय हैं। मध्यम शरीर ही मयसे बँध है। सब धातुके बराबर रहनेमें ही शरीर मध्यम होता है। विवेक विवरण तत्तद् गद्यमें देखो। १ शब्दका मूल, क्रिया-वाचक। "धातुर्नाम क्रियावाचको गणदिवहितः शब्दविशेषः।" (१३३३३३३३) क्रियावाचक गणादि प्रकृत शब्दविशेषका नाम धातु है, क्रियाकी वाचक प्रकृतिका धातु है। जितने शब्द देखे जाते हैं वे धातुमें ही बने हैं, इसीसे धातुकी शब्दयोगि कहते हैं। धातुके बादमें दम विभक्तियां होती हैं।

विभक्तिकी संख्या	धातुके मतमें नाम	धातुके मतमें नाम	धर्म	क्रिया का नाम धर्म
१ लट्	ही	यथा मानं	यथा मानं	यथा मानं
२ लोट्	ही	यथा मानं		
३ विधित्	ओ	विधि	यथा मानं	यथा मानं
४ आगोक्ति	टो	आगोक्ति		
५ लृट्	ही	यथा मानं		
६ लृट्	टो	यथा मानं	यथा मानं	यथा मानं
७ लृट्	टो	यथा मानं		

० लृट्	ही	धातुयं हो	धातुयं हो
८ लिट्	टो	धातुयं हो	
९ लृट्	टो	परीच यतो	परीच यतो
१० लृट्	टो	परीच यतो	

इन दोगोंसे विधा चेतमें लोट, नामक एक और विभक्ति का व्यवहार है। ये सब विभक्तियां परस्पर धातु के आकारमें एक ही भागोंमें विभक्त हैं। प्रत्येक विभक्तिमें इन दो भागोंमें जो नो करके बराबर रूप होते हैं। ये नो प्रथम, मध्यम और उत्तमपुरुषके एकवचन, द्विवचन और बहुवचन से कर बने हैं। एक एक धातुकी मय विभक्तियोंमें १८० रूप होते हैं। इसमेंसे प्रत्येक वचन आकारमें पदो हैं। कुल परस्परपदो और कुल सम्यगपदो भी हैं। यथा हिन्दो वाकरयमें धातुको कल्पना गहों को गई है, पर को आ मकमी है, लैवे करमाका 'कर', 'करमाका 'हस' इत्यादि। ४ बुध या किमी मङ्गाका की बन्धि पादि जिसे वीरयोगि जिन्नेमें बन्द करके स्थापित करते थे। ५ एक, बोध। ६ तत्त्व, भूत। पञ्चभूतो और पञ्चधातुको भी धातु कहते हैं। वीरोंमें बराबर धातु हैं—प्राणधातु, वज्रधातु, श्रोत्रधातु, जिह्वाधातु, काय-धातु, रूपधातु, शब्दधातु, गन्ध धातु रस धातु, स्वादवा धातु, वसुधविज्ञानधातु, श्रोत्रविज्ञानधातु, प्राणविज्ञान-धातु, जिह्वाविज्ञानधातु, कायविज्ञानधातु, मनोधातु, धर्मधातु और मनोविज्ञानधातु।

धातु—प्राचीन कालमें प्राकृतिक पदार्थ मात्रको भी धातु कहते थे। प्राचीनमें Mineral कहनेमें मयराचर जो समझा जाता है धातु कहनेमें भी समान रहते हैं कि इसी प्रकार "अम-विभक्ति" समझा जाता था।

"अम-विभक्ति-प्राचीन-पदार्थ-मयराचरः।"

प्राचीन-पदार्थ-मयराचरः पदार्थः।

मयराचर-पदार्थ-मयराचरः पदार्थः।

इत्यादि वचनोंसे ऐसा ही ज्ञान होता है। ज्ञानमय धातु शब्दका धर्म संकोच होता थाया है और जितने विशेष धर्म विभिन्न धर्मोंमें द्रव्य धर्म नाममें पुकारा जाता है। धातुकी संख्या अभी तो ० अभी ८ और अभी ८ निर्दिष्ट होती थी। स्वर्ण, रौप्य, नाभ, रंग, दमद

का गुण कहते हैं। रमसे रत्न, रत्नसे मांस, मांससे मीठ, मीठसे पल्लव, पल्लवसे मज्जा और मज्जासे शुक्ल बनता है। पद्मगन्ध द्वाारा जो रस उत्पन्न होता है, यद्यो रस मधु धातुओं का पोषणकर्त्ता है। पुरुष पर्याप्त देखो इसी रससे उत्पन्न होता है। रस धातुकी गति समझा जाता है। वह रसधातु तीन हजार पन्द्रह जन्मों कारके एक एक धातुमें रहती है।

इसी तरह वह रस एक महीनेमें शुक्ल बन जाता है। स्वतन्त्र और परतन्त्रके रूपसे यह रसधातु चत्वारह हजार जन्मों (१८०८०) कलाओंमें बाँटो जा सकती है। प्रत्येक धातुमें ३०१५ चंग्र कारके ६ धातुओंमें १८०८० कलाएँ रहती हैं और रसधातु क्रमशः परिष्कार हो कर तीस दिन बाद शुक्लधातु होती है। इसका तात्पर्य यह है कि आहारजनित और शरीरमें प्रतिदिन जो रस बनता है, यद्यो रस पाँच दिनोंमें परिष्कार हो कर कठे दिनोंमें रत्न धातुमें बना जाता है। और उन पाँच दिनोंमें मया रस जमा हो कर परिष्कार बुझा करना है। रत्न भी पाँच दिनोंमें परिष्कार हो कर मांस उत्पन्न करता है। इस तरह क्रमशः तीस दिन बाद सत्व-रससे शुक्लधातु बनती है और यह सभी धातुमें रहता है। धातुके त्रिष चंग्र को पन्ना धातुमें जाना होता है, यद्यो इसका परतन्त्र चंग्र है और जो चंग्र पचनेमें रहता है वह इसका स्वतन्त्र चंग्र है। इस तरह स्वतन्त्र और परतन्त्रके रूपसे १८०८० चंग्र रससे ही कर मज्जा तक धातुमें रहते हैं। ये सब धातु रससे उत्पन्न हो कर शरीरको धारण करती हैं, इसी कारण उन्हें धातु कहते हैं। इन सब धातुओं का सत्व और तृप्ति शोषित हो सत्वहृदिमें ही जानी जाती है।

पक्षी धातुकी तृप्ति होनेसे पीरलो धातु भी तृप्ति होती है, पतपत्र जिन सब धातुओंकी चरित्य तृप्ति होती है, उन्हें काम करनेके निये प्रतीकार धरना कर्त्तव्य है। रससे ही कर शुक्ल तक सात धातुओंका जो परम तेजोभाग है उसे पोषण कहते हैं। धातुमें हमें इस पोषण धातु की ही बस माना है। शरीरमें पोषण धातुके रहनेमें मांस दृढ़ और पुष्ट होता है, सब कामोंमें उत्साह बना रहता है और शरीरकी शक्ति चमकती रहती है, मांस और चत्वारह पल्लवों की तरह पचना

पचना काम करती जाती है। शरीरस्थित पोषण पोषण गुणविशिष्ट है। यह शरीरमें शुक्ल भावसे रहता है और रससे प्राणको रचा होती है। प्राणियोंकी देखने सब पक्षधर्मोंमें यह व्याप्त रहता है। इसमें नहीं रहनेसे शरीर मीन हो जाता है। सब धातुओंमें जो मार निरुपता है वही पोषण है। मानविक और शरीरिक श्रेय, क्रोध, मोह, एकाग्रचित्त। और यम प्रभृति द्वारा पोषण धातुका सत्व होता है। पोषण सत्व ही जानने प्राणियों के तेज भी सत्व हो जाते हैं तथा मन्त्रिस्थानको श्रितिसत्ता, शरीरकी व्यवसयता, वात, पित्त और श्लेष्माका प्रकीर्ण तथा क्रियाका निरोध, शरीरकी स्तब्धता, मार, वायुसे उत्पन्न शोष, कर्पको सूक्ष्मता, शक्ति, तन्द्रा और निद्रा ये सब लक्षण देखे जाते हैं।

बनके तीन प्रकारके दोष हैं—व्यापक, विश्रंसा और सत्व। बलकी विश्रंसा होनेसे शरीरकी श्रितिसत्ता, व्यवसयता, शक्ति, वायु निरुप और कर्मको विवर्ति एवं इन्द्रियका कार्य स्वभावतः जिन प्रभावसे होता चाहिये उस प्रभावसे नहीं होता चाहे लक्षण पाये जाते हैं। बलका व्यापक होनेसे शरीरका मार, स्तब्धता और शक्ति, शरीरिक बलकी विविधता, तन्द्रा, निद्रा एवं वायु अन्य शोष उत्पन्न होता है। बनके सत्व होनेसे भुक्षा, मोहसंय, मोह, प्रसाव और पचानना चाहे लक्षण तथा पूर्वोक्त सब लक्षण देखे जाते हैं, यद्यो तब कि इसमें वायु भी हो जा सकती है।

सब धातुओंके भीतर जो ऊँच हत और तैलादिको तरह विच्छिन्न पदार्थ रहता है, धातुके परिष्कारके समय उन सब खरे पदार्थोंसे शरीरके तेजःस्वरूप बसा मांसक धातु बनती है। इससे शरीरकी कोमलता, मोर्द्ध, उत्साह, दृष्टि, श्रिति, परिष्कारशक्ति, शक्ति और शक्ति उत्पन्न होती है तथा शरीर कोमल और रोम छोटे होते हैं। कषाय, तिक्त, शैतल, दृढ पचना मज्जामुत्तरोष्ण पदार्थ भक्षण करनेसे पचना क्षीयसंग, व्यायाम या व्याधिसे क्षय होने पर यह पचना धातु विकृत होती है। बसा धातुके विकृत वा सुप्त होनेसे स्तब्धता, पाण्ड्य, बलकी विविधता, मांसवेदना पचना शरीर प्रभावशून्य हो जाता है। इससे व्यापक होनेसे शरीरकी क्षमता, रक्त-

मांस, शरीरसे वा पण्ड्ये धातुचरण होता है और चय होनिसे दृष्टि; पणि वा वनकी शक्ति, मायुका प्रकीर्ण पथवा मृत्यु, होती है। वसा धातुके विकृति होने पर पूर्वोक्त तीन चयस्यापेक्षित न हो खेदवान और उसे शरीरमें मर्दन, लेपन वा परिमेषन एवं स्निग्ध और लघु द्रव्य भोजन करना चाहिये। यदि धातु चय हो जाय तो जिम तरफ हो सके भोजन करके ही उसे पूरा कर लेना चाहिये—क्योंकि शरीरमें अप्रचरित संचारित हो कर सब धातु समान हो जाती है। शरीरकी सब धातु समान होनेसे शरीर स्थूल वा कृम्य न हो कर मध्यमांशमें रहता है, सब काम आसानोमें करता है, सुधा, पिपासा, शीत, पीस, घर्षा और रोद्ध सहा कर सकता है तथा बलवान् दीर्घ पटुता है। स्थूल और कृम्य पदो दो प्रकारके शरीर निर्दलीय है। मध्यम शरीर ही सबसे श्रेष्ठ है। सब धातुके बराबर रहनेसे ही शरीर मध्यम होता है। विशेष विवरण तत्तद् भागमें देखो। १ शब्दका मूल, क्रिया वाचक। “धातुर्नाम विधावापरो मनादिपठितः कश्चिदेवः;” (तत्त्वार्थरत्न) क्रियावाचक मणादि पठित शब्दविशेषका नाम धातु है, क्रियाकी वाचक प्रसक्तिका धातु है। जितने शब्द देखे जाते हैं वे धातुमें ही बने हैं, इन्हीं धातुको शब्दयोगि कहते हैं। धातुके भागमें दस विभक्तियां होती हैं।

विभक्तिकी संख्या
पाणिनिके मतमें नाम

मुसवीके मतमें नाम

चय

विभक्तिकी संख्या

१ मट्	की	वर्तमान	}	वर्तमान
२ मोट्	मी	धनुषा		
३ विधिविह	वो	विधि		
४ आगोर्णिङ्	टो	आगोर्वाद		
५ लुट्	ली	अनेचतन अतिचत अचतन	}	अविध्यत् बोधक अचतन
६ लुट्	डो	अविध्यत्		

७ लृट्	वी	भाल्य'को अविध्यत्	}	अतोम अचतन
८ लिट्	डी	परीच अतोम		
९ लुट्	टी	अचतन अतोम	}	बोधक
१० लृट्	वी	अचतन अतोम		

इन दशोंके विधा वेदमें सेट नामक एक और विभक्ति का व्यवहार है। ये सब विभक्तियां परस्परपट और आत्मेपट इन दो भागोंमें विभक्त हैं। प्रत्येक विभक्तिमें इन दो भागोंमें नौ नौ करके पठारक रूप होते हैं। ये नौ प्रथम, मध्यम और उत्तमपुरुषके एकवचन, द्विवचन और बहुवचन से कर बने हैं। एक एक धातुको सब विभक्तियोंमें १८० रूप होते हैं। इनमेंसे चनेक देखन आत्मेपट पदो हैं। कुछ परस्परपटो और कुछ समवपटो भी हैं। यद्यपि हिन्दी व्याकरणमें धातुओं'को कल्पना नहीं की गई है, पर को ना सकती है, जैसे करमाका 'कर', हँसनाका 'हँस' इत्यादि। ४ दुष या किसी महाकाकी यद्यि यादि जिसे बीहलोग डिब्बेमें बन्द करके स्थापित करने में ये। ५ एक, बोध'। ६ तत्त्व, भूत, पञ्चभूतों' और पञ्चतत्त्वकी भी धातु कहते हैं। दोहोंमें पठारक धातु हैं—प्राचधातु, चतुधातु, योषधातु, जिह्वाधातु, काय-धातु, रूपधातु, शब्दधातु, गन्ध धातु रस धातु, स्वादवा धातु, चक्षुर्विज्ञानधातु, श्रोत्रविज्ञानधातु, घ्राणविज्ञान-धातु, जिह्वाविज्ञानधातु, कायविज्ञानधातु, मनोधातु, धर्म धातु और मनोविज्ञानधातु।

धातु—प्राचीन कालमें प्राकृतिक पदार्थ' मात्रकी ही धातु कहते थे। च'नरेजोमें Mineral कहनेसे मचराचर जो समझा जाता है धातु कहनेसे भी अनुमान करते हैं कि इसी प्रकार 'अम-विकृति' समझा जाता था।

"कुर्वन्-कृष्-मानिष-दरितार-पनःदिनाः।

गैरिहोवन-वागीव-वीव-शेराः वरिधुषाः।

मण्योऽपूकमिराया धातवो गिरिवचनाः ॥"

इत्यादि वचनोंसे ऐसा ही ज्ञात होता है। क्रमगः धातु शब्दका अर्थ 'संकोच' होता पाया है और जितने विशेष धर्म विशिष्ट गुणित द्रव्य पदों नामसे पुकारा जाता है। धातुकी संख्या कभी तो ७ कभी ८ और कभी ८ निर्दिष्ट होती थी। अर्च, रोषा, नाय, रंग, पद

(जस्ता), सीस, तथा लौह ये ती भाग धातु हैं। पारद से कर पाठ होती है। कौनो चौर पीतलके लघुमें मिश्रितमें भी होती है। कौनो चौर पीतल पर्याप्त धातुके मेलमें उत्पन्न होता है, यदि इसका निर्णय किया जाय, तो धातुकी तात्त्विकतामें इनके नाम हटा कर उपधातु नामक एक दूसरी श्रेणीके पदार्थमें रख सकते हैं। उपधातु कहनेमें कौनो, पीतलादिके जैसे मिश्रधातुका बोध होता है, परंतु जिनमें इसे Alloy कहते हैं।

धातुके व्यवहारके साथ, मानवजातिकी सभ्यताका सम्बन्ध परमत्त घनिष्ठ है। अति प्राचीनकालमें मनुष्य धातुका व्यवहार नहीं जानते थे। इसका कारण यह था, कि पश्चिमांग धातु की विरुद्ध व्यवहारोपयोगी पदार्थोंमें नहीं मिलती थी। उन्हें विवेक परित्यक्त चौर विवेक प्रक्रिया द्वारा प्राकृतिक पदार्थोंमें निकाल कर अधुना किये जाने बादके काममें सार्व्व जाते हैं। धातुका व्यवहार प्रचलित होनेके पहले मिश्रधातुका व्यवहार प्रचलित था। मिलावटकी अच्छी तरह धिस कर हममें पचाटि बनाये जाते थे। क्रमशः प्रचाटि उपधातु आविष्कृत हुई। बाद लोहे चौर पर्याप्त धातुओं का आविष्कार हो गया।

लोहेके आविष्कारके बादमें मनुष्य-जातिकी सभ्यताकी वृद्धि उत्तम हुई है। लोहा भिन्न भिन्न कार्योंमें व्यवहृत होता है तथा यह बहुतायतमें मिलता भी है, इस कारण पर्याप्त धातुकी पर्याप्तता इसका मुख्य भी काम है। क्लिष्टातल जितनी धातु है, समोमें लोहा ही प्रधान है। किन्तु यह प्रधानतः चिरकाल तक रहने, भी कह नहीं सकते। Aluminium नामकी धातु, ऐसा ज्ञात होता है, कि लोहेमें भी अधिक कामोंमें लग सकती है। इन्हींमें लोहे की पर्याप्तता भी प्रचुर परिमाणमें वह धातु पर्याप्तमान है। किन्तु पर्याप्तमान कालमें इस धातुका विरुद्ध पाकारमें निकालना कष्टसाध्य है। यही कारण है कि आज भी इसका मूल्य लोहेके लोहा ज्ञात है।

उल्लिखित पाठ विरुद्ध धातुओंमें कौन कह आविष्कृत हुई भी, इसका निरूपण करना कठिन है।

सभी धातु सभी प्रदेशोंमें नहीं मिलती। मध्यमता लोहे धातु तो किसी प्रदेशमें चौर लोहे पर्याप्त प्रदेशमें

आविष्कृत हुई होगी। हमने निरूपण एक पदार्थका लोहा है। उपधातुओंमें लोहा बहुत दिनोंमें प्रचलित है चौर पीतलका भी आविष्कार प्राचीन कालमें ही हुआ था। तबके साथ पीतलका लघु सम्बन्ध है, प्राचीन पीतल लोहा भी इसे जानते थे। किन्तु पीतल एक उपधातु मात्र है, इसमें लोहा चौर एक स्वतन्त्र धातु जस्ता पर्याप्तमान है जो उपधातुत पाधुनिक कालका आविष्कार है। दूसरी पीतल सामान्यनिकोमें वेमिन फालेताइलके प्रथम जन्मका प्रथम उत्तम देखा जाना है। पीतल द्वारा मेलनमें लोहा का नाम धातुकी तात्त्विकतामें गया। लोहे लोहे कहते हैं कि प्राचीन कालकी भारतवर्षमें लोहाका व्यवहार प्रचलित नहीं था। पीतल लोहा लोहा इस धातुकी पर्याप्त वहन भारतवर्षमें लाये, पीतल वह व्यवहारप्रक्रम लाई गई।

प्राचीन कालमें परिचित धातु पदार्थोंमें पत्तन सुवर्ण, पोष्यवर्ण, धातुसहज आदि विविध धर्म द्वारा पण्डितोंको आश्चर्यचकित कर दिया था। इन सब विविध धर्मोंके प्रभावोंसे वे सब पदार्थ मनुष्यजातिका विवेक विवेक प्रयोजन साधन करते थे। विभिन्न धातुओंमें उत्पन्न पदार्थ, जब मनुष्योंको अग्रिम पक्ष देने लगे, तब वैदिक शास्त्रोंमें भी उनका व्यवहार होने लगा था। पण्डित लोग विविध कार्यात्मिक धर्म चौर कार्यात्मिक सम्बन्ध धातुओंके ऊपर आरोप करते थे। युरोपके विद्वान् लोग एक समय मात विरुद्ध धातु चौर मान यहका ज्ञान जानते थे। एक एक पदके साथ एक एक धातुका सम्बन्ध स्थापित हुआ था। यहवति सुवर्णके साथ धातुपति सुवर्णका लोमान कालि पण्डितोंके साथ रोयका, तात्त्विक वैदिकके साथ तात्त्विक, अथवा प्रकृति दत्त सुवर्णके साथ पारदका सम्बन्ध था, इत्यादि।

“एतान् द्वेर्षिर्षे सारोर्षे मयःशिरा।

पारदं शिखरीरितदात्तं मयः वारुटीरमः ॥”

इत्यादि वाक्योंमें भी इस प्रकार कार्यात्मिक सम्बन्धोंको चेष्टा देखी जाती है। निम्नमें किसी धातुका रूप दिया। उत्तरे मांयमें तात्त्व, मोचितमें स्वर्ण, पण्डितमें रोय लघुवर्ण हुआ, इत्यादि ज्ञान प्रकाशके लक्षणान् पुराणादि ग्रन्थोंमें मिले हैं। आज भी बहुतसे ऐसे

तात्विक-मतावलम्बी धोर सन्ध्यादि-सम्प्रदाययुक्त मनुष्य हैं जो इसी प्रकारके उपाध्यायानाटिकी सहायतासे जनता की कल्पनावृत्तिको चालित करते हैं !

आयुर्वेद-गाम्भिर्ये धातुचटित प्रोषणका व्यवहार बहुत प्राचीन कालसे चला आ रहा है । विग्रह धातुके जीर्ण होनेसे वह शरीरमें प्रवेश नहीं कर सकती, इसीसे धातु-की साधारणतः भस्म कर लेते प्रथम या जारण-सारपादि प्रक्रिया द्वारा रूपान्तरित करते हैं । ताम्र, लौह और पारदसे उत्पन्न पदार्थ साधारणतः मनुष्यके शरीरमें विष का काम करता है । उपयुक्त मात्रामें इनका व्यवहार करनेसे उनके प्रकारके रोग दूर जाते हैं ।

उल्लिखित पाठ विग्रह धातुओंके बिना आत्मनि, विम मय, आर्सेनिक आदि धनेक धातु अपेक्षाकृत प्राधुनिक कालमें आविष्कृत हुई है । वर्तमान शताब्दीके प्रारम्भमें परिचित विग्रह धातुकी संख्या ग्यारह बारहसे अधिक न थी । उस समय विख्यात सर हम्फ्री डेवोने तात्विक-प्रवाहकी सहायतासे नूतन-प्रणालीका अवनमन करते हुए नाना प्रकारके जार पदार्थोंसे बहुतसी नई धातुओं-का आविष्कार किया ।

पौष्टि इस प्रणालीके तथा अन्यान्य प्रणालीके अव-लम्बन पर बहुतसी नवीन धातुओंका आविष्कार हुआ है । ली वर्ग पहले बुनसेन धोर किर्कॉफ (Bunsen and Kirchhoff) ने प्रालीकके विश्लेषण द्वारा नूतन धातु-पदार्थोंके आविष्कारका उपाय निकाला । बाद गत कई वर्षोंके मध्य बहुतसी नवीन धातु इस प्रणालीसे आविष्कृत हुई हैं । यह प्रयोग प्रणालीकी असाधारण चमत्ता है । प्रायः पचास वर्ष पहले सर गर्मान-लियरने सूर्यके प्रालीककी परीक्षा करके सूर्यमें एक नूतन धातुका अस्तित्व आविष्कार किया और सूर्यके प्रोक्त नामानुसार इनका हेलियम (Helium) नाम पड़ा । उस समय पृथिवीमें उस धातुका अस्तित्व है, ऐसा कोई नहीं जानता था । पौष्टि ही दिन हुए हैं कि उसका पार्थिव अस्तित्व आविष्कृत हुआ है । फिलहाल परिचित मूलपदार्थोंकी संख्या प्रायः सत्तर है । जिनमेंसे पन्द्रह कोष्ट कर शेषकी गिनती धातुमें की गई है ।

भेगो विभाग—मूल पदार्थोंकी दो साधारण श्रेणियोंमें

विभक्त कर सकते हैं । इन दो श्रेणियोंके अंगरेजी नाम metal धोर non-metal or metalloid हैं । प्रथम श्रेणीकी हमलोग धातु धोर द्रव्यकी अपधातु कहेंगे । अपधातुकी संख्या कुल पन्द्रह है । आर्सेनिक धोर हाइड्रो-जनकी यदि धातुमें ले लें, तो अपधातुको संख्या कुल तेरह रह जाती है । नीचेकी तालिकामें धातुओंके नाम धोर परमाणविक शुद्धता atomic weight दिये गये हैं । इस तालिकाभूत धातुके सिवा पृथ्वी वा अन्य ज्योतिष्कमें धोर भो धातु विद्यमान हो सकती हैं ।

तात्विकामें दो द्रव्य धातुओंके नामकरणके नियमोंमें एक बात बतला देना आवश्यक है । स्वर्णादि क्षतिप्रय धातुओंके देशीय संस्कृत नाम प्रचलित हैं । लवायुक्षत धातुओंके अंगरेजी वा लाटिन नामका अनुवाद हिन्दीमें नहीं हो सका, अतः वे देशिक नाम ही अक्षरान्तरित करके लिखे गये हैं ।

लाटिन नामके अन्तमें um वा ium की जगह हम ने साधारणतः 'क' का व्यवहार किया है ।

१। (क) लिथक (Lithium)	७
सोडक (Sodium, natrum)	२३
पोटाशक (Potassium, kalium)	३९
रुबिडक (Rubidium)	८५
सीसक (Caesium)	१३३
(ख) ताम्र (Copper, cuprum)	६३
रोष्य (Silver, argentum)	१०८
२। स्वर्ण (Gold, aurum)	१९७
(क) बैरिलक (Beryllium)	९
मग्नेशक (Magnesium)	२४
कालक (Calcium)	४०
स्ट्रॉन्गक (Strontium)	८७
बैरक (Barium)	१३७
(ख) यमद, जप्ता (Zincum)	६५
कदमक (Cadmium)	११२
पारद (Mercury, hydrargyrum)	२००
३। (क) स्कन्दक (Scandium)	४४
वैट्रिक (Wetrium)	८९
लन्थानक (Lanthanum)	१३८

चारका चारख जाता रहता है। दोनों द्रव्यके मिलनेसे जो न तो चार और न पन्ध्र नूतन द्रव्य उत्पन्न होता है, उसीका पारिभाषिक नाम 'लवण' है।

सोडा, पटाश आदि पदार्थ चूनेसे भी अधिक तीव्र चारधर्म युक्त हैं। गन्धक द्रावक (Sulphuric acid), महाद्रावक वा यस्त्रावक (Nitric acid) आदि तीव्र चारधर्मिकान्त हैं। लेकिन एक दूसरेका धर्म नष्ट करता है। यव द्रावक (Nitric acid) पटाशमें मिलानेसे सोरा (Nitro) तैयार होता है। सुतरां सोरा एक लवण मात्र है।

साधारण नियम यह है। धातु द्रव्य चक्षिजनके योगसे द्रव्य हो कर जो (Oxide) पदार्थ बनते हैं, उनका साधारण नाम चार है। गन्धक, प्रस्फुरक (Phosphorus) चक्रार आदि अपधातु चक्षिजनके योगसे जिस पदार्थमें परिणत हो जाते हैं, उनका साधारण नाम लवण है। चार और पन्ध्र दोनोंके योगसे जो पदार्थ उत्पन्न होते हैं, उनका साधारण नाम लवण (Salt) है।

ताम्रचूर्णकी वायुमें उत्पन्न करनेसे वह जिस भस्ममें परिणत हो जाता है, वह इससे परिभाषाके अनुसार चार है। उसका चर्चरेजो नाम है Cupric oxide। उसमें थोड़ा गन्धकद्रावक डालनेसे द्रावकका तीव्र चार रूप नष्ट हो जायगा। परिणाममें जो पदार्थ होगा, वह तृतिया वा नीलाचक्रन (Cupric sulphate वा Blue vitriol) नामसे प्रसिद्ध होगा। सुतरां अवलम्बित परिभाषाके मतसे तृतियाकी गिनतो लवणमें को जायगी। कुछ तृतियाकी जलमें गला कर यदि उसमें लोहखण्ड डाल दिया जाय, तो उस लोहेके ऊपर लोहा जम जाना है। लोहा धीरे धीरे गायब हो जाता है और पीछे तमिका स्थान ग्रहण कर वह गन्धकद्रावकके साथ मिल जाता और एक दूसरे लवणको उत्पादन करता है। यह लवण हीराकस (कभी Green vitriol, ferrons Sulphate) से प्रसिद्ध है।

तृतिया, हीराकस आदि जिस चर्चमें लवण है, उस चर्चमें और भी चण्डल पदार्थको भक्षण खोखोमें रख सकते हैं। चक्षिजनके योगमें उत्पन्न oxide मात्रको यदि भस्म करें, तो साधारणतः धातु भस्मको चार और अप-

धातु भस्मको पन्ध्र तथा लवण मात्रके एक चर्चको चार और दूसरे चर्चको पन्ध्र कह सकते हैं। इस चर्चमें भस्म मात्र देखनेमें राखके जैसा लगने लगे। यहां तक कि पन्ध्रक वायव्य पदार्थ भस्म कहना पड़े और ऊपरमें चार चर्च तथा पन्ध्र धर्मका निरूपण करनेके लिये जो आजादादि सचज उपाय निर्दिष्ट किया है, वह भी नहीं चलैगा। बीयना जमानेसे जो भद्रग वायु उत्पन्न होती है, गन्धक जलानेसे जो धुआँके जैसा तीव्र गन्ध पदार्थ उत्पन्न होता है, यहां तक कि अति पदार्थ जो बालू है वह भी इस पारिभाषिक चर्चमें भस्ममें गिनो जायगा। वायुमें बीसा गमानेसे सममें जो मल या भस्म पड़ जाते हैं, लोहेमें जो मोरवा लग जाता है, उन सबकी भी गिनतो चारमें होगी। किर सोरा (Nitro) मजिंक चार (सब्जोमो, Common washing soda), तृतिया (Blue vitriol), हीराकस (Green vitriol), कितकरी (Alum), खड़ी, (Chalk) माथेन, सफेदा (white-lead), डाकरीका व्यवहन कटिह (lunar caustic), चस्त्रिमस (bone ash) यहां तक, कि मीठी, खाँच, पन्ध्र, प्रस्फुर, सावन आदि नामा प्रकारके द्रव्य लवणचर्चमें गिने जायेंगे।

कततः चक्षिजनके साथ प्रायः सभी धातुओं और अप-धातुओंका रासायनिक मेल लगता है और कालके द्वारा प्रायः सभी पारिषधधातु और अपधातु वायुस्थित चक्षिजनके साथ युक्त हो कर विविध चार और विविध लवण उत्पादन करते हैं। यह चार और पन्ध्र पदार्थ भी पुनः नामा प्रकारके आवधिक द्रव्योंको उत्पादन कर द्रव्योंके घटदेयका निर्माण और उसका वैविध्य सम्पादन करता है।

चक्षिजन छोड़ कर गन्धक, लोहिन आदि अपधातुओंके साथ और विविध धातु पदार्थोंके मेलसे नामा प्रकारके योगिक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। कततः स्वयं, प्रातिमक आदि कितनी धातुओंके सिवा पन्ध्रान्य सभी धातु खानके मध्य दूसरे दूसरे योगिक पदार्थोंके साथ विद्यमान अवस्थामें रहती हैं। विद्युत अवस्थामें वे नहीं पाए जाते। प्रयोग पर जिन सब खानों या योगिक पदार्थोंमें धातु रहती है, उन्हें विविध उपायोंसे विच्छेद देना निकालना पड़ता है।

धी, उनकी अनेक विविध धर्म हैं। अत्याम्य पदार्थों में उन सब विविध धर्मों का प्रभाव था। स्वर्ण, रौप्य, ताम्र-सीस, रक्त, लोह, पारद ये सब धातु गुरुभार-विश्रित हैं, इनमें सज्जापन और चमक टमक है, सभी (पारद अवस्था में) चौर कठिन अवस्था में) घात-सह हैं। उन पर चोट देनेसे पत्तर होता है। अजानिसे भी एक प्रकारका विशेष गन्ध निकलता है, इत्यादि धर्म धातु-वत्त्व निर्णायक हैं। किन्तु अभी परिमित धातुओं में इतनी अधिक है और ये इतने विभिन्न तथा विरुद्ध धर्मों का लक्षण हैं, कि इस प्रकारके धातु पदार्थों के विशेष धर्मों का निर्देश करना दुःसाध है। पटागक, सर्जक आदि धातु, जलकी अपेक्षा लघु हैं, प्लातिमिन, विषमय आदि धातु, इतनी घातसह नहीं हैं। तेलूरक (Tellurium), नामक अपघात, पाफाइट नामक चट्टान (जिनसे पैग्मिन तैयार होता है) ये सब पदार्थ यद्यपि धातु नहीं हैं, तो भी धातु के जैसा उनमें चमक टमक है। यथायथं धातु, और अपघात इन दो नामों को पारिभाषिक मंजूर देना ही कठिन है। किन्तु पदार्थ ऐसे हैं, यथा—पार्लेनिक, प्लातिमिन, तेलूरक इत्यादि, जिन्हें थोड़े गुणों के कारण धातु की श्रेणी में और थोड़े गुणों के कारण अपघात की श्रेणी में रख सकते हैं। नीचे कुछ स्थूल धर्मों का उल्लेख किया जाता है। अधिकांश धातु-में ही ये सब धर्म पाये जाते हैं।

(१) धातु का रासायनिक गुरुत्व साधारणतः अपघात की अपेक्षा अधिक है। जल की तुलना में प्लातिमक-का गुरुत्व २१, स्वर्ण का १८, पारद का ११.५, सीस का ११ है, इत्यादि। अपघात में पटागक, सर्जक, नियक आदि जल की अपेक्षा लघु हैं।

(२) अत्यन्त लघु नहीं होने पर धातु पदार्थ न तो द्रवोद्भूत होता है और न वाष्पीभूत धातु में एक पारद सज्ज में तरल है और अवशिष्ट द्रव्य में वायवीय है। अक्विजन आदि अपघात सज्ज अवस्था में वायवीय और मैग्नेसियम तरल अवस्था में रहता है। गन्धक, चायो-दीन, पार्लेनिक पदार्थ, सज्ज में वाष्पीभूत हो जाते हैं। पलास्तर में चट्टान, प्लिंक, औरक आदि अपघात, सज्ज में द्रवोद्भूत या वाष्पीभूत नहीं होते।

(३) ताप और तापित परिचासन की समता धातु पदार्थों को अत्यन्त अधिक है। अपघात साधारणतः अपरिचासन है।

अपघात में आकाइट, चट्टान, तेलूरक आदि की परिचासन समता कुछ अधिक है।

(४) घातसहता, तात्कालिकता आदि वस्तुधर्म धातु पदार्थों में वर्तमान हैं। इसीसे उन्हें पोट कर और खींच कर तार बनाया जाता है।

अपघात में जो सज्ज में कठिनावस्था में रहते हैं। (जैसे चट्टान, गन्धक इत्यादि) वे साधारणतः भ्रष्ट-प्रवण हैं।

(५) धातु पदार्थों के पृष्ठदेश पर एक प्रकारका भोज्य या चाकचिप देखा जाता है, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र आदि धातु पदार्थों में ये गुण विशेष रूप से वर्तमान हैं। इसीसे उन सब द्रव्यों में अच्छी तरह पानिग कर सकते हैं। यही कारण है, कि धातु पदार्थों से दर्पण तथा चन्द्रादि बनाये जाते हैं। तेलूरक, पाफाइट, कठिनावस्था चायोदीन आदि में सज्जापन कम देखा जाता है।

(६) धातुद्रव्य साधारणतः पानी के नीचे स्वेच्छता-हीन है। पानी के लिये भेद कर नहीं जा सकता। अक्विजन आदि वायवीय अपघात, लघुत्व स्वेच्छ है। गन्धक आदि के भीतर ही कर पानी कुछ कुछ जा सकता है। पलास्तर में चट्टान अपघात, होने पर भी वह विषम कुल स्वेच्छताहीन है। जिनमें तापित-परिचासन की समता अधिक है उनमें यही तत्त्व अभी निर्णित हुआ है।

(७) धातु पदार्थ पर घात करनेसे एक प्रकारका झोठा गन्ध निकलता है। अपघात निमित्त पदार्थों में रस गुणका प्रभाव है।

(८) धातु पदार्थों में अक्विजन मिलानेसे चार उत्पन्न होता है। अक्विजन के योगसे अपघात चक्र उत्पादन करते हैं। चार और चक्रों के योगसे लघु उत्पन्न होता है। साधारण नियम यह है कि धातु का Oxide चारजनक (basic) है और अपघात का Oxide अम्लोत्पादक (acid forming)। साधारण नियम ऐसा होने पर भी इसमें अपेक्षा है। अनेक धातुओं में एकाधिक oxide है; एक ही धातु विभिन्न परिचासन में अक्विजन प्रवण रहती है, अनेक

लोमक माटकी मोर, रङ्ग, लुप, प्रातिमग इत्यादि ।
 इन सब भातुवेदि विभिन्न oxide में निधम पक्कि-
 लमयी माता कत है, ये की चार-जनक है, जिनमें पक्कि-
 जनकी माता पक्कि है, ये पक्कि-पक्कि है । ये पक्कि लोम
 चार पक्कि की माता निम कत लुप लुप लुप लुप है ।

(८) द्वयीभूत सवयमें बेटोके दो प्राचीन सभ्य दो तारोंके निम्न करमें सवय विष्ट दोने मगता है । सारमें बतना पुते है, कि सवय मानका एक भाग धातु घटित घोर सवय भाग सवय घटित है । बेटोका जो तार सवयके माय सभ्य रहता है, उस तारमें धातु घटित भाग घोर जो तार सवय वा प्रातिमके सवय सभ्य रहता है, सवमें सवय-घटित भाग लम जाता है । धनताद्विता प्रवाह सवय वा प्रातिमके निम्न कर तार द्वारा तरलप्रवाहके सवय जोता दुचा बेटोके सवय की घोर जाता है । प्रवाह द्वारा तरल द्रव्य विष्ट दुचा करता है । सवका धातुभाग ताद्विता-प्रवाहको घोर सव कर सव-सभ्य तारमें घोर सवय-धातुभाग ताद्विता-प्रवाहको घोर प्रतिज्ञा दिशामें सव कर सव तारमें लम जाता है ।

(१०) एक सङ्कीर्ण दीर्घ स्तम्भकार या रैखिकार
 द्विचक्रे भीतर सूर्यका प्रकाश से का कर वहनि तबे यदि
 एक तिकोने काचको जलम (Prism) को कर से
 जाय, तो प्रकाशका शब्दा वृत्त जाता है और उस शब्दा
 पर यदि एक कागज छिं तो उस पर भिन्न भिन्न रङ्गों
 बिजित एक कीता मजर पायेगा । इस कीतेका एक कोर
 भाग और दूसरा कोर बँगोरी इङ्का हो जायगा । बीच-
 में पीला, मोला तथा भिन्न भिन्न रङ्ग देखनेमें पाये गे ।
 इस प्रक्रिया द्वारा सूर्यका दृश्य प्रकाश विभोपित हो कर
 विभिन्न वर्णोंका प्रकाश टपादन करता है । इस प्रक्रिया-
 को बालोह-विच्छेद और तन्मात्रोपयोगी तन्मात्रो
 बालोह विभोप-यन्त्र (Spectroscope) कह सकते
 है । सूर्यके बालोह या लोह प्रकारके दोषविमान पदार्थके
 निःसृत बालोहमें जितने वर्णोंका विकास देखा जाता
 है, वन्ध बालोहमें दलने दिखाई देते । इसीसे
 पलनेमें सोडा मगज देनेमें दोषविमा लवण लोहवर्ण-
 में रंग जाती है । इस सेत बालोहका दन्ध द्वारा

विशेषकर मरी केवल एक उच्चम पीतमर्च को देना देवर्गमें पाती है। नमस्कर्म मर्चक धातु मर्चमान है। मर्चक धातुके दोतिदुल कोमैने हो वह एक मर्चकक पावोकर देतो है। मर्चक धातुके बहमे पडासक, नियम पादि धातुपांको प्रदीन चवक्यामि यदि पौआ को जाय, तो कितनी देवाए मरर पाती है। मर्चके आनोकेम जिम तरह चमक्य चमक यदि ज्ञाते है, उस तरह रममें मर्चो पावे जाते। माधारण नियम यह है कि धातु, पदार्थ प्रदीन चवक्यामि केवल बहुत ही देवाए देता है। चयधातु वदत देवाचंको मर्चका बहुत ज्यादा है। चयंके पावोकेम देवाको मर्चका मचमातोम है। इनो प्रकार धातुके-विशेषवच-मर्चके विविध चमर्चो देवाको मर्चका देव कर वह पदार्थ धातु है, वा चय-धातु, इसका ज्ञान पावमे पाव हो जाता है।

છપામં તો સહ સદાદરજ દિયે મયે જે, સત્યને મજ
 શાક શાક માંસમ્ હો જાયેગા, જિ મજાનુ ખાતું
 ભજનજા ગિરંગ કરના કહિન છે। વધાર્યું જરમર
 ખાતું પોર પવખાતું દન દો એ વિધો'માં તો વિમજા કહે
 જાતે જે, સત્યનો વરતિ ઠાંક ત્યાવમાજને ચમુસોદિત
 નહીં રોનો, વાજન વધાર્યું ભજનજા એ સોધિમાગ કરદે-
 મં હો સમી જગદ રમ પ્રકાર દેવા જાતા છે। જનુ પોર
 સદિદુ દન દો પ્રકારનો એ વિધો'માં જોયગવ વિમજ
 છે। કોમ જોમ જે પોર જોમ સદિદુ રમજા કિદર કરના
 સદા હો મહન જે। કિનુ એને નિહટ્ટ એ પોદે પ્રાવે; શા
 જોજ પતેજ જે, જિયે' જનુ શા સદિદુ સોજ ઠાંક જતલા
 નહીં' મહતે। જાતવ પોર સોદિદ વે દો પ્રકારજે ખમં
 હો સત્યને મજા'માગ જે। વધાં મો મજાનુ કુદ મેં સ; હો જે,

यवनजन या यवनसारजन (Hellenism) : यवनराज, यवार्थिक, यवानिगमि, विदमय इत यवक मूल पदार्थिको रसायनमात्रमि एत यवोमि गिनमो, सो मरि है। इममि परापर यवनेक विषयमि साक्ष्य है। यवामा मूल पदार्थिक साध इतका यवम्य भी यवनेक विषयमि प्रसा है। त्रिग योदिक पदार्थमि ये यवामा है, यममि भी नाना विषयमि यवामा साक्ष्य देखा जाता है।

महाराजस्य स्मरणं विमलं भवति यदि विमलिनंवारः
 तुलनाः श्रीः प्रायः तो यवः प्रायः देवदेवि यादेना विमलम

गुण और धर्म धीरे धीरे परिवर्तित होता जाता है। नाइट्रोजन एक स्वच्छ स्वादहीन, वर्ण रहित वायवीय पदार्थ है, उसमें तीव्र चपल धर्म विविट महाद्रावक उत्पन्न होता है। उसमें धातुका मध्य कुछ भी नहीं है। विसमय कठिन ग्रेतवर्ण चाकचिक्चमय, घातमह घोर धातु पदार्थ है। उसे पान्तिजनमें दग्ध करनेमें जो भरम उत्पन्न होती है, यह कार्बधम युक्त है और चम्याम्य चक पदार्थोंके साथ युक्त हो कर लावणिक पदार्थ प्रयुक्त करता है। इन सब कारकोंके विसमयकी धातु, यैवो-मि रख सकते हैं। प्रस्तुरक नाइट्रोजनके जैसा अपघात में घोर पान्तिमनि पदार्थ विसमयके जैसा धातुमें गिना जाता है। किन्तु मध्यवर्ती पार्थेनिकको गिनती धातुमें जो लायगी वा अपघातमें, इसका निर्णय करना बहुत कठिन है। पार्थेनिक अनेक विषयोंमें प्रस्तुरकके जैसा है, इस हिसाबसे इसे अपघातु घोर अनेक विषयोंमें पान्तिमनिके, जैसा होनेका कारण इसे धातु कह सकते हैं।

धातुओंका भेणीविभाग—मूल पदार्थका यैवोविभागीय करनेमें जो गड़बड़ी होती है, धातुओंमें यैवोविभाग करनेमें ठीक वही गड़बड़ी सामने पाली है। लिथक, सर्जक, पटागक, क्वीटक, कौगक इन धातुओंमें परस्पर इतना सादृश्य है तथा चम्याम्य धातुओंके साथ इनका साधारण वैसादृश्य भी इतना है, कि इन्हें यदि एक स्वतन्त्र निर्दिष्ट लक्षणयुक्त यैवोमें रखें, तो कोई आपत्ति नहीं किन्तु चम्याम्य धातुओंकी जगह ऐसा सुलक्षणयुक्त यैवो निर्देश नहीं हो सकता। किमो एक धातुकी स्थान लेने में ही ऐसा देखा जाता है, कि किसी गुणमें तो एक यैवोमें घोर तिनी गुणमें चम्य यैवोमें स्थान पानेका स्वका अधिकार है। वस्तुतः हमने जिस यैवोमें स्थान दे सकते इसकी सीमासा करना मुश्किल है। यद्युतः भिन्न भिन्न रासायनिक पण्डित इस प्रकारके सामाविक धर्मांतुमार यैवोविभागमें प्रवृत्ता हो कर विभिन्न रूपमें इसकी सीमाभा करते हैं।

जब वा उसी प्रकारकी हाइड्रोजनविविट पदार्थमें सर्जक धातु, डाउनसे देखा जाता है, कि उसमेंसे हाइड्रोजन बाहर निकलता है और सर्जक धातु हाइड्रोजनकी

जगह लेकर मूल पदार्थकी उत्पादन करती है। इस हिमावसे देखा जाता है, कि हाइड्रोजनके एक परमाणुकी जगहमें सर्जकका ठीक एक परमाणु बैठ जाता है। सर्जकका एक परमाणु हाइड्रोजनके एकमात्र परमाणुको हटा कर उसका स्थान ले लेता है। चम्याम्य धातुओंकी से कर परोक्षा करनेमें देखा जाता है, कि इस हाइड्रोजनके परमाणुको हटानेमें सही की एकनी समता नहीं है। पटाग धातु ही एक परिमाण सर्जकके जो जैसा हाइड्रोजनके एक परमाणुका स्थान लेता है। किन्तु जस्तोका एक परमाणु हाइड्रोजनके दोका पस्तुमीनका एक परमाणु हाइड्रोजनके तीनका स्थान लेता है। इसी प्रकार चम्याम्य धातु विभिन्न मंस्था क्षमसे हाइड्रोजनके परमाणुका स्थान पकण कर सकते हैं। जिस धातुका परमाणु हाइड्रोजनके कितने परमाणुका समकक्ष है, यह व्यापार देख कर धातुओंका एक हिमावसे यैवो विभाग हो सकता है। किन्तु इस प्रकारसे यैवो-विभाग करनेमें भी नागा प्रकारकी दीव होती है।

मन्देलजेक (Mendeljeff) नामक विद्वान् इस पण्डितने सभी धर्म घोर सभी गुणकी अपेक्षा कर केवल पारमाणविक गुरुत्व (Atomic weight)के अनुसार मूल पदार्थोंका यैवो विभाग करते दिखजाया है, कि इस प्रकारसे जो यैवोविभाग होता है, वही चम्याम्य प्रणालीके मतमें विभागकी अपेक्षा युक्तिमङ्गल घोर दीव वर्जित है। हमने ऊपरमें धातुकी जो तानिका दी है, वह मन्देलजेककी प्रणालीके अनुसार है। इस प्रणालीके मतसे दृढ़ वा मूल पदार्थ मान यैवोमें विभाग होता है। किसी एक यैवोमें जिन सब पदार्थोंके नाम हैं। उनमें स्थूल सीमादृश्य वस्तु मान है।

यह प्रणाली भी जो सर्वथा होप्युय है तो नहीं कह सकते। एक बड़ादरव देनेमें जो समझमें या जायेगा। प्रथम यैवोके मध्य लिथक, सर्जक, पटागक, क्वीटक, कौगकने स्थान पाया है। यह सामाविक घोर युक्तिमङ्गल है। किन्तु उसी यैवोमें फिर ताव्य, शीय घोर क्षय की भी स्थान मिला है। चयव इन सब लोग धातुओंके साथ प्रथम पर्व धातुओंका प्रायः किसी विषयमें मिल नहीं जाता। वे मध्यम भावों, इयक

नामक *Sodic chloride* समुद्रके जलमें बहुत मिलता है। *सिन्धुतटवर्ती प्रदेशमें तथा पन्थल स्थानोंमें* 'पाकरिक लवण' (*Rock salt*) पाया जाता है।

सोडा-मदी—सर्जिकचार—कार्बोनेट सफ सोडा (*Carbonate of soda*), साबुन, काँच, सोडावाटर पादि पानीय प्रसृत करनेके लिये आज कम यह पदार्थ बहुत काममें लाया जाता है। उसके लिये बड़े बड़े कारखाने हैं।

सोडाग्रा—Borax, Borate of soda का स्वरूप कार लोम व्यवहार करते हैं।

वद्विजचार—(काठ, पत्ता जलानेसे जो भस्म बच जाती है) पटाय कार्बोनेट (*Potassic carbonate*) इसका प्रधान उत्पादन है।

नोरा—Nitric or potassic nitrate—प्राणिज पदार्थके सड़नेसे 'पमोनिया' उत्पन्न होती है, पमोनिया छुद्र जीवाणु बिगड़ने से ही यवद्रावक (महाद्रावक) जलमें परिणत होती है। उद्भिज्ज पारपदार्थ इसी नाइट्रिक एसोडन योगसे नोरेमें रूपान्तरित होता है। उद्भिज्ज और प्राणिज पदार्थोंको बहुत दिनों तक गोभी जमीनमें बाधुके मध्य सड़ानेसे नोरा उत्पन्न होता है। यह वाहद तैयार करनेके लिए व्यवहृत होता है।

१। (ख) ताम्ब, रोय्य, स्वर्ण,—इन धातुओंके साथ (क) अथोभुक्त विलिखित नियतादि पाँच धातुओं का माहम्य बहुत ही कम है। पवित्रजनके साथ इनका सतना सम्बन्ध नहीं है। इसी कारण ये धनेक समय विग्रह वा प्राय विग्रह पाये जाते हैं।

ताम्र उत्पन्न रहस्यपूर्ण का धीरे रोय्य उत्कृष्ट शम्भवर्ण का है—पवित्रजनादिके साथ इनका सम्बन्ध बहुत कम रहनेके कारण यह सजापान अदो गट नहीं होता। इसे पीट कर पतला पत्तर धीरे धीरे धारों के तार बनाते हैं। इसी सब कारणोंसे सुद्धा धीरे धारों द्वारादि प्रसृत करनेमें ये तीन धातु वावृत्त होती हैं।

ताम्ब धीरे रोय्य महाद्रावकमें बहुत लवद गल जाता है। सोनेको महाद्रावक भी नहीं गला सकता। ये सब तादितके उत्कृष्ट परिचालक हैं। इसीसे तादित-यन्त्र बनाईने में तादित का व्यवहार होता है। रूपमें

पाणिज देनेसे वह यथेष्ट शम्भ पावोक देता है, रमीसे रोय्यसे उत्कृष्ट दर्पण प्रसृत होता है। रोय्य धीरे स्वर्ण प्रेषाकृत कोमल है। ताम्र मिलानेसे ये मजबूत हो जाते हैं।

पाकरिक ताम्र सर्वत्र विग्रह प्रवस्थामें नहीं मिलता। पवित्रजनके साथ रहनेसे उसे कोयलेसे उत्तम करना होता है। कोयला पवित्रजनका भाग धो'व लेता है। गन्धकके साथ युक्त रहनेसे पाकरिकको जलानेसे गन्धक जल जातो है। पवित्रजनके योगसे दग्ध हो कर भस्म (*oxide*)में परिणत हो जाता है, फिर कोयलेकी गर्मीसे इस भस्ममेंसे विग्रह ताम्र निकाला जाता है। गन्धकयुक्त पाकरिक ताम्रके साथ धनेक समय सोडा मिला रहता है। इन लोहेकी दूर करनेके लिए बहुत परिश्रम करने पड़ते हैं।

गन्धक-द्रावकके कारखानिका जो पाकरिक जलाया जाता है, उसमें ताम्र गन्धकके साथ युक्त प्रवस्थामें रहता है। इस ताम्रकी लवण द्वारा गलानेसे को द्रव्य उत्पन्न होता है उसे जलमें गला कर यदि उसमें सोडियम डाल दिया जाय, तो सोडियमके लपर ताम्र जल जाता है।

रोय्यकी पविग्रह पाकरिकसे निकालनेकी धनेक प्रकारकी प्रणानियां प्रचलित हैं। कभी कभी पारदके प्रयोग से रोय्य धीरे धार लाया जाता है। सोनेके साथ रोय्यके मिले रहनेसे उस मिय वातुको गन्ना कर धीरे धीरे उसे ठंडा होनेके लिये यदि कुछ समय तक छोड़ दिया जाय, तो उसमें सोनेके दाने (*Crystal*) पड़ जाते हैं। द्रवोभूत मिय धातुमें वायुका प्रवाह लगनेसे सोमक पवित्रजनके योगसे क्रमशः भस्मोभूत हो कर द्रव्य हो जाता है।

कहीं रोय्य सब लवणित पदार्थोंकी जलमें गला कर उस जलमें ताम्रलवणके साथ देनेसे ताम्रके लपर रोय्य जल जाता है।

स्वर्ण प्रायः सभी समय विग्रह प्रवस्थामें गतामान रहता है। पर हाँ, उसमें बालू धीरे धीरे कुछ कुछ प्रथम मिली रहती है, जिसे पकण करनेमें बहुत परिश्रम लगाने पड़ते हैं। स्वर्ण लव भारी पदार्थ है, पतल उसे पानीमें भी लेनेसे भी धीरे धीरे सब जलमें डूब हो जाती है।

कम रहता है। ठंडा होना भक्षणवर्धक है। उसे पीट कर कोई चीज बना नहीं सकते। पर हाँ, वह चपेचकृत कोम संतापमें मल जाता है, इसीसे गर्दनेके काममें इसका आदर है। इसमें दूसरेका भाग अधिक है, प्रायः एक आनाभाग पझर रहता है। इसात खूब स्थितिसंपन्न और पंच्यक्त दृढ़ पदार्थ है।

लोहा पाकारिक पचस्थाने पचान्या द्रव्योंके साथ मिला रहता है। पक्वजनने योगमें लोहेकी भस्ममें, गन्धकके योगमें सलफाइडमें, इसके सिवा कार्बनेट, सिलिकेट आदि भाग पचस्थाने लोहा पाया जाता है। गन्धकादि भाग जला कर फेंक देना पड़ता है। पक्वजनयुक्त लोहा भस्मकी पझारके साथ द्रवीभूत कार्बनेसे उसमेंसे पक्वजन निकल जाता है। द्रवीभूत विषय लोहा धीरे धीरे पझारकी ग्रहण कर उसमें साथ मियित हो जाता है और ठंडा लोहा, पिट्ट, लोहा, इस्पात आदिमें परिणत होता है।

गैरिक (गैरुमरी) नामक पदार्थका प्रधान उपादान लोहा है। जिस मरीमें गैरिक वा लोहा पदार्थ कुछ भी रहता है। उसका वर्षा साल हो जाता है। कोटा-नागपुरके पक्षकमें लोहा पत्थर देखनेमें आता है और वहाँ जितनी नदियाँ निकली हैं, उतने जलका रक्त वर्षा लोहेके पक्षित्वसे कम हो जाता है।

लोहेका प्रधान दोष पक्वजनसे आक्रान्त हो कर लय हो जाता है और उसकी सक्रियता जाती रहती है। रंगा कर वा अन्य धातुका आवरण दे कर इसको रक्षा करनी होती है। लोहाकम लोहेका संलैट है।

क्रीमक और मज्जनकके जैसे कीवाल् भी विविध वर्षाका पदार्थ उत्पन्न करता है। निकेन और लोहेमें भी यह गुण कुछ कुछ पाया जाता है। निकेनके ऊपर पक्की पालिम की जा सकती है और शुष्क वायु इसकी छेकीटीकी संज्ञा में गट कर देती है। निकेनके साथ तांबा और सोडा जस्ता मिलानेसे जर्मन रीप (German Silver) बनता है।

८। (ख) हबोदक, ह्रदक, पजदक, पञ्जक, हरिदक, प्रातनक ये छय धातु प्रायः समान गुणवाली है। प्रातनक पाजकम विभीम प्रसिद्ध है और इसमें ओ

लो कम वक्तमान है, प्रायः लोही धर्म पच्यमें भी देखे जाते हैं। पक्वजन और पच्यार्थ टावक द्रव्य होनेके लोहा हने भी पाकप्रच कर सकते हैं। मन्हाद्रावक (Nitric acid) के साथ लोहिन टावक (Nitro-chloric acid) मिलानेसे छय टावक प्रयुक्त हो जाता है, जो मोने और प्रातनककी पाकप्रच कर सकता है, पर इस न्येचीको समो धातुपर्वकी नहीं। पक्वजनमदिके साथ इनका सम्बन्ध पक्षिक न रहनेके कारण होनेके लोहा ये भी विषय पचस्थाने पाये जाते हैं। पाकारिक प्रातनकमें पच्यार्थ धातु भी कुछ कुछ मियित रहती है। उस मियित पदार्थमेंसे प्रातनककी निशानमें बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

प्रातनक सफेद चमकीली धातु है। इसमें सूक्ष्म पत्तर और चारोक तार बनते हैं। इसकी सफेदी किसीमें भी गट नहीं होती। जब तक यह खूब गरम नहीं की जाती, तब तक गलतो नहीं है। इसमें सब कारकोसे प्रातनक बहुतसे कामोंमें व्यवहृत होता है। तात्विन-प्रवाहीत्यारक बैटरोमें प्रातनकके पत्तरका व्यवहार होता है। इसके सिवा इसका पत्तर तार और पात्रादि वैज्ञानिक परीषामें व्यवहृत होते हैं। यह धातु होनेसे कम दरमें बिरगो है।

(ग) हेलियक—जैसे वर्षा दृष्ट कर निर्माय लक्षितरने यन्त्र द्वारा सूर्यके पानोक्तका विशेषण करके उसमेंसे एक उच्छ्रयल वीतयर्थके पानोक्तका पक्षित्व पादिष्कार किया। पानोक्त कथ्य किमो परिचित पदार्थसे नहीं मिलता था। उस समय लक्षितरने स्थिर किया था, कि सूर्य-मण्डलमें ऐसा कोई धातु पदार्थ वर्तमान है जो पृथ्वी पर पाजतक भी नहीं मिलता। सूर्यका पीक नाम हेलि (Helios) है। तदनुसार पृथ्वी पर पञ्चात छय और धातुका Helium नाम पड़ा है। कुछ दिन दृष्ट (1868 ई०में) पार्मल नामक धातुके पादिष्कारके बाद पञ्चापक रामने (Ramsay) एक प्रकारके पाकारिक द्रव्यमें पार्मलका पच्यार्थ कर रहे थे। उस पाकारिकी उत्पन्न करनेसे उसमेंसे जो पाचवीय पदार्थ निकला उसे टोमिमान् करके रामने जब तबसे निःसृत पानोक्तकी परीक्षा की, तब देखा कि यह पानोक्त

भावप्रकाशमें लिखा है, कि रस नाड़ी द्वारा जा कर चरने गुणसे सब धातुको पोषण करता है। यह समान वायु द्वारा प्रेरित हो कर हृदयमें प्रवेश करता है और प्यान वायु द्वारा विचलित हो कर सब धातुकी बढ़ाता है। २ शक, वीर्य।

धातुपाक (स० पु०) रसादि धातुका क्लृप्त।

धातुपाठ (स० पु०) धातुनां पाठो यत्र, धातवः पाठात्को यत्र वा आधारे यत्र। पाणिन्यादि प्रणीत पर्याय बोधक ग्रन्थभेद।

धातुपारायण (स० पु०) धातुनां पारायणं यत्र। धातुप्रतिपादक ग्रन्थभेद।

धातुपट्ट (स० लि०) वीर्यको गाढ़ा करनेवाला, जिससे वीर्य गाढ़ा हो कर बढ़े।

धातुपुष्पिका (स० श्लो०) धातुरिष पुष्पं यस्याः आतो डोय, स्वार्थे कन्, पूर्व क्तवः। धातुपुष्पिका, धवका फूल।

धातुपुष्पी (स० श्लो०) धातुरिष पुष्पं यस्याः जातिस्त्वान् डोय। धातुकी, धवका फूल।

धातुप्रदान (हि० पु०) शक, वीर्य।

धातुवैरी (हि० पु०) गन्धक।

धातुभृत् (स० पु०) धातुं भ्रूँरिकादिकं उपधातुं विभक्ति भ्रूँरिप, तुक्, च। १ पर्वत, पहाड़। (लि०) २ जिससे धातुका पोषण हो।

धातुमम (स० पु०) कसो धातुको साफ करना जो ३४ कलाशोके बनता है, धातुवाह।

धातुमल (स० पु०) धातुनां मलः ३-तत्। धातुका मल।

भावप्रकाशमें लिखा है, कि कफ, पित्त, प्लीहा, आतून, बाल, पाँख या कानकी मूल ये सब यथाक्रमसे धातु-समूह पर्याप्त रसादि मल्ला पर्यन्त धातुके मल हैं। कोई कोई कहते हैं, कि चक्षु, जिह्वा और गण्डदेहगत जल भी रसजनित मल है। अथ शकपरिपाक हो जाता है, तब मलको उपपत्ति नहीं होती है, क्योंकि कई बार प्रामर्श तपाये जाने पर जिस तरह सीनेमें मल नहीं रहता। सभी तरह पाचाराजान रस पुनः पुनः परिपाक हो जानेसे उसका मल जाता रहता है।

धातुमांसिक (स० श्लो०) धातुरूपं मांसिकं। मांसिक, पोषात्मको नामकी उपधातु।

धातुमारिणी (स० श्लो०) धातुं मारयति मृ-विच-निनि डोय। सर्जिका, मोड़ामा।

धातुराग (हि० पु०) धातुवेमि निकला हुआ रंग।

धातुराजक (स० श्लो०) धातुपु राजते इति राज गन्तु वा धातुनां राजा, समामास टप्, ततः स्वार्थे कन्। शक, वीर्य। यह शरीरके सब धातुप्रांति को ठ है, इसीसे इसका नाम धातुराजक पड़ा है।

धातुरचक (स० लि०) जो वीर्यकी बढ़ा कर निकाल दे।

धातुवदेक (स० लि०) वीर्यकी बढ़ानेवाला, जिसमें वीर्य बढ़े।

धातुवह्नम (स० श्लो०) धातुपु वह्नमः। टहण, मोड़ामा। टहण देगो।

धातुवाद (स० पु०) १ चौमठ कलाशोमें एक। इसमें कसो धातुको साफ करते और एकमें मिलो हुई पनेक धातुप्रांति को पचन पचन करते हैं। २ रसायन बनानेका काम। ३ कीमियागिरी। ४ तबिने सीना बनाना।

धातुवादिन् (स० पु०) धातुं वदति, उपधातुदेव कन्, कथयति वद-णिनि। कारभ्यमी, रसायनको सहायतासे सीना या चाँदी बनानेवाला, रसायनी।

धातुविट (स० श्लो०) शोषक, सोसा।

धातुविष (स० श्लो०) १ धातुशक, सीमा। २ इरितान।

धातुवृद्धि (स० श्लो०) रस पादिकी वृद्धि।

धातुवृद्धिकर (स० पु०) धातुवर्द्धक देको।

धातुवैरिन् (स० पु०) धातुनां वैरीव, दूषकत्वात् गन्धक।

धातुवैरिन् (स० श्लो०) १ सीसक, सोसा। २ धातुकागोव, कसोस (Green sulphate of iron)

धातुगोधनकारी (स० श्लो०) इरोतकी।

धातुसंघ (स० श्लो०) शोषक, सीमा।

धातुसम्भव (स० श्लो०) शोषक, सीमा।

धातुमाय्य (स० श्लो०) १ विशार उपग्रम दूष कार्य। २ पारोम्य।

धातुसैन—सहाय-महत एक मोव वंशोय बोह राजा। राजा मित्रसेनको मार कर जब (४२४ ई०) ताजिनके मरदार पाण्डु, बिहाइल पर बैठे थे, सभी समस्त मोव वंशोय लोग प्रायः बचानेके लिये धातुसैनपुर प्रदेश

धर्म का पुनर्स्थापन किया। जिन मम भ्रष्टान्त व्यक्तियों ने तामिलकों साथ मध्यम स्थापन किया था, राजा धातुसेन ने उनका धन-रत्न इस स्थानसे खीन लिया कि ये न तो मेरी ओर रखा करते और न धर्म को। रोहणसे पलातक सम्भ्रान्त व्यक्ति पुनः आ कर राजसे सन्धानित हुए। धातुसेन ने महाबाहुका नदीमें एक बांध दे कर अलखीन शष्पक्षेत्रमें जल-सञ्चालनका उपाय कर दिया और अछ याजकों की शान्तिधानसे लिये वे सब जमीन दान दे दी। उन्होंने एक धातुराज्य भी स्थापन किया था। गण नदी और कालवापी दीर्घ कामें तोन बांध दिये गये थे। उन्होंने सेना भेज कर बोधिवृक्षका मन्दिर और महाविहारका उद्धार किया तथा धर्मयोगकी नाईं याजकों की चारों प्रकारके दानादि द्वारा उपयुक्त मन्त्र-होना पूर्वक पितृकृत्यके विषयमें एक महानभाकी स्थापना की। इसके सिवा उन्होंने "स्यविशवाहा" नामक याजक-समाजके लिये १८ विहार निर्माण किये और उन चट्टारही विहारके समीप १८ जलाशय खुदवाये। इन चट्टारही जलाशय और विहारके नाम ये थे:—कालवापी, कीटापाग, दक्षिणगिरि, मईनम्, पुष्पावलीक, भग्नक, पाशनागन, मङ्गलितवापीति, धातुसेन, पूर्वकी और कम्बोति, पन्तरामगिरि, पद्मान प्रदेशमें धातुसेन, कश्यपोठिक पर्वत पर कश्यपोठिक, रोहण प्रदेशमें दया-याम, शालवाप और विभोपण-विहार। इसके पलावा उन्होंने कई जगह अपने नाम पर जलाशय और विहारकी स्थापना की थी। उन्होंने २५ हाथ मयूर-परिवेण स्तम्भ तोड़ कोड़ कर २० हाथ ऊँचा एक स्तम्भ निर्माण किया। महाभासाद जो मठ होता था रखा था, सुधारा गया। प्रधान तीन स्तूप ऊपर ऊँच दिये गये। बोधिवृक्षमें जल देनेके लक्ष्मि बोधिवृक्षान नामक देवताओंके प्रियतिथ्यकी नाईं एक उत्सवकी प्रतिष्ठा की गई। छठ जगह उन्होंने सचन पितामहवी पीढ़्य पुत्तनिका बनवा दी। सभी समयमें सिंहास-राजशयन प्रत्येक बारह वर्षमें बोधिवृक्षान-उत्सव करने आ रहे थे।

पञ्चमालक विहारमें महामहोद्द व्यतिरका शरीर-दोह किया गया था। राजा धातुसेनने उस स्थान पर क्यविरकी एक प्रतिमा स्थापित की और उस समय उन्होंने

ने एक मेला करके दीपवर्गका पाठ कराया तथा सम-के प्रचारके लिये एक हजार खण्ड पुस्तक वितरण की थीं। इस उपलक्ष्यमें ममागत याजकों की चीनी दान दी गई थी। उन्होंने पद्मगिरि-विहारका जोन संस्कार किया था। बुद्धदेवकी प्रतिमाके लिये एक स्वतन्त्र कथा बनाई गई। बुद्धदासने इस प्रतिमाके जो वस्त्रमय नेत्र बनवा दिये थे, उनके पद्मपत्र हो जाने पर धातुसेनने अपनी चूड़ामणि (राजमुकुटकी मणि)-में पुनः दो नेत्र, चूणसे प्रतिमाका केगभाग सज्जित और स्वर्णसूत्रसे सामनेके वालका गुच्छा बनवा दिया था। पाण्डित प्रत्यर्निर्मित बुद्धप्रतिमाके और उपरभयकी प्रतिमाके मस्तकके चारों ओर प्रकाश होनेके लिये धातुसेनने अपने मुकुटके बहुतसे रत्न अपने जड़वा दिये थे और बोधिवृक्षके दक्षिण मैत्रेय बोधिसत्वका मन्दिर बनवा कर अपने राजोपयुक्त वसन मूपणसे सुसज्जित करके चारों ओर एक योजना पर्यन्त सुरक्षित बना दिया। उन्होंने सभी विहार-की धातु नामक एक तरहके रंगसे चित्रित करवा दिया था और बोधिवृक्षके विहारके गल्लेमें राँदा दिला दिया था। उन्होंने यन्त्रे रामस्तूप और दत्तमन्दिरका जोन संस्कार हुआ। 'दत्तधातु' की रत्नाके लिये मणि-खचित स्वर्णपुष्पमें एक चट्टारी बनवाई गई। तोन प्रधान चैत्यमें स्वर्णहस्त दिये गये और एक 'सुम्यतन' निर्माण किया गया। अधार्मिक महादेवने जब महा-विहार ध्वस्त किया गया, उस समय तक धर्मदेवि सम्प्रदाय चैत्यपर्वत पर रहते थे। धातुसेनने उन लोगोंकी प्रार्थनाके अनुसार चैत्यपर्वतका पवमान विहार उन्हें प्रदान किया था।

राजा धातुसेनके दो पुत्र थे, कश्यप और मोक्षपायन। पुत्रके सिवा उनके प्राणसे अधिक प्यारी मनोरमा नाम की एक कन्या थी जिसका विवाह उन्होंने अपने भाँजिंदे करा दिया था, पीछे भाँजिकी सेनापति बनाया। इसमें निरपराध अपनी माताकी उत्तेजनासे राजकुमारोंकी चातुक्त्ये चूष पीटा जिसमें खेद बड़ा निकला। सेनामें रंग हुए कपड़ेकी देख कर जब राजाकी सब दान भालूम हो गया तब उन्होंने अपने भाँजिकी माताकी भेजी करा कर जीते जमा दिया। राजाजामानमें बूढ़ हो

एवं गर्भ के प्रति बारम्बार दीक्षता रहता है; इसीमे जो धातक पाठवें महीनेमें मृगिष्ठ होता है, उसकी चकसुर मृत्यु होती है। २ उपमाता, यह स्त्री जो किसी शिशुको दूध पिलाने और उसका स्वासन पालन करनेके लिये नियुक्त की जाय, धाय, दाई। इसके अन्वयादिका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—

धार्मलक्षण- धातककी दूध पिलानेके लिये यदि धात्री नियुक्त करने की, तो उसका दीपगुण मन्त्री माति विचार कर निम्नलिखित प्रकारकी धायो रखनी चाहिये। जो धायो स्वजाति हो, मध्यमवयस्का अर्थात् युवती हो, सुमीला हो, जो सर्वदा सज्जावे मुख मुकाये रहती हो, शक्तदुग्धा अर्थात् जिसका दूध वातादि दोषसे दूषित न हो, जिसके दूध अधिक हो, जो जीववत्सा अर्थात् जिसको सन्तान हो, जो दयाशील हो, स्वाधीना हो, जो थोड़े-थोड़ेमें सन्तुष्ट हो जाती हो, जो अच्छे वंशकी हो, जिसका पारधन उत्तम हो और जो शिशुकी अपनो सन्तान जान कर दूध पिलाती हो, वही स्त्री धात्रीके योग्य है।

निषिद्ध धात्रीका लक्षण—जो शोकाकुला, दुःखिना, परित्याक्ता, व्याधियुक्ता हो, जिसका अन्न भग्न वा अपूर्ण हो, जो पत्युत्त मोटी वा पत्युत्त पतली हो, गर्भिणी हो, अवरपोषित हो और जिसके दोनों स्तन लम्बे और बहुत ऊँचे हों, (ऊँचा स्तन बूझनेसे वातकका पास बड़ा हो जाता है और लम्बा स्तन वातककी नाक और सुँडकी टक सेता जिनसे उसकी मृत्यु होती है,) जो यजीर्ण अथवा अपय खाँनियाली हो, दुर्बल काममें आसक्त हो तथा दुःखान्विता और अस्वस्थमानो हो, ऐसी दीपयुक्त स्त्रीका दूध पीनेसे शिशु रोगागुर हो जाता है। दूध पिलाने समय धातककी माता वा धात्रीकी सुन्दर रत्न पहन कर पासके ऊपर पुष्पगुण किये बैठना चाहिये। पीछे दाहिने स्तनकी जखमे अच्छी तरह धो कर कुछ दूध नीचे गिरा देना चाहिये और तब शिशुको उत्तरमुखी करके गोदमें से कर दूध पिलाना चाहिये।

दधति धारयति सर्वमिति धा-दध्, डीप। १ चति, दधो, लभोम। ४ गायत्रीसप्तपिणो भगवती। ५ गन्ना। ६ धामसकी वृत्त, आधवा। यह वृत्त सरीखा गुणदायक

है। इसका गुण श्लेषित और प्रमेहनाशक तथा पत्युत्त पुष्टिकारक और रसायन है। धामसकी अन्तरास द्वारा वायु, मधुर रस और शीतलता द्वारा वित्त एवं कषाय रस और दृक्-गुण द्वारा कफ नाश करती है। सुतरां धामसकी त्रिदोषनाशक है। इसकी मञ्जारीं भो वैसा ही गुण है। (भास्कर) धामसकी और इरीठकी देलो।

धात्रीका रोगति विवरण—उपगुणार्थमें इस प्रकार लिखा है। अस्तम्भरको अत्र हृन्दाके मार्ग पर जब विष्णु मोहा-च्छेद हो गये, "य देवताधनि महादेवने कथमानुसार शक्तिकी चाराधना की। इस पर देवीने सन्तुष्ट हो कर कहा था, 'मैं त्रिधा हो कर मत्व, राज और तमोगुणमें वर्तमान हूँ। वही तीनों गुण मेरो लक्ष्मी गोरो और स्वाधरूप है। अतः उर्ध्वकी चाराधना करनेमें तुम्हारा भरोवर निश्च होना।' देवताधनि वैसा ही किया। तीनों गुणोंने देवताधनीकी तीन बीज देकर कहा, यमो जहां विष्णु है, वहाँ हम तीनों बीजोंकी भी जा कर बीजो। तीन बीजसे तीन पोषि उत्पन्न हुए और वही धात्री (आदिना), मासुकी तथा तुमको कहलाये। स्वधामे धारी, लक्ष्मीने मासुकी और गोरोसे तुमकीको उत्पत्ति हुई। हम तीन वृक्षोंके पानेमें विष्णुका मोह जाता रहा।

धात्री-माहात्म्य—माता जिस तरह अपनी सन्तानको प्रति दया रखती है, धात्रीकी ओर उसी तरह मनुष्योंके ऊपर दया करने रहनी है।

जो धात्री खान करती है उनके सब विष दूरे हो जाते हैं और उनके समस्त तीर्थस्थानका फल मिलता है। जो धात्री फलसे खान रंगती है, वे कनिके सब दीवोंने रहित हो जाते हैं और यन्त्रमें विष्णुपदोंकी प्राप्ति है। फल खानेसे भी विषय पुष्ट होता है—

"न गंगान गवा पुष्पा न बायो न व पुष्कर।

एकै च तथा पुष्पा धात्री मायवधारे ॥

कार्तिके मासि शिष्टे धात्रीत्वात् अमावसे।

अथ तज्जन्मन्त्रीवात् शोडशमेघमवाप्तुदात् ॥"

(पदार्थ ७ वारम्भ १२० अ०)

हरिधामरके दिन एक धात्रीवृत्त यह तोर्दिकी अपेक्षा पुष्टदायक है। इस दिन कामी, मया और पुष्कर भी इनके समान नहीं हैं। जो कार्तिक मासमें

जिस कार्य द्वारा अणुयुग्म भ्रूण, तत्सम्बन्ध फल (Placenta) और पाच्छादनो झिल्ली (Fetal membrane) के साथ भ्रूण के करीब निरपेक्ष भागसे जोड़ना होता है उसे प्रसव कहते हैं। देहवैद्य विद्वत्पण्डित लोग इस प्राकृतिक व्यापारके अनेक कारण बताते हैं तथा प्रायुर्वेदादिमें भी लिखा है, कि गर्भवती नारी में, दमर्ष, ग्यारहवें या बारहवें महीनेमें प्राकृतिक नियमावली प्रसव करती है। इसके व्यतिक्रम होनेमें पर्याप्त नर्व महीनेके मोतर या बारहवें महीनेके बाद यदि प्रसव हो, तो यह प्राकृतिकविरुद्ध या विकृत गर्भ समझा जाता है। प्रायः सभी जगह नवम या दशम मास ही प्रसवका निर्दिष्ट समय बतलाया है।

ग्यारह महीनेमें कभी कभी प्रसव होने देखा जाता है। प्रसवके समय गर्भवती पाचनप्रसवा है वा नहीं, पहले यह जान लेना चाहिये। जब गर्भवतीका कुचिदेग गिरिष्ठ और हृदयका बन्धन विमुक्त होता है तथा जब पर्याप्त नितम्बके सामने भागमें दर्द होने लगता है, तब उसे पाचन-प्रसवा जानना चाहिये। पाचनप्रसवा स्त्रीको बारम्बार कटी और पूर्वदेग वेदनाके साथ मन और मृतका वेग उपस्थित होता है। गर्भवती ठीक पाचनप्रसवा है, यह मालूम हो जाने पर पर्याप्त प्रसव कालके उपस्थित होने पर उसके शरीरमें तेज लगा कर उष्ण जलसे उसे स्नान कराना चाहिये। बाद उसे कुछ गरम माँड़ मिले हुए भातकी धोके साथ पिता देना चाहिये। पनतर वह पाचन-प्रसवा ग्री कोमल और विरहित शय्या पर धीरे धीरे दोनों ऊँहको फँसा कर ऊँह मुक्त हो हो जावे। बाद निर्भिक, प्रसव करानेमें सुगन्धित, हिलाकाढ़िपी, प्राचीना पर्याप्त जिसमें अनेक प्रसव कराये जाँ और अनेक प्रसव देखे जाँ, ऐसी बार श्रियाँ अपने मायून कटवा कर गर्भिकोंके परिचारिका-कार्यमें नियुक्त रहे। इनमेंसे एक तो गर्भवतीको योनि-द्वारके चारों बगल तेज लगावे। गर्भवतीको उस समय अपनी कुबज भर झूँटना चाहिये, किन्तु यदि प्रसव-वेदना न हो, तो झूँटना मना है। गर्भवती यदि प्रसवमें कुँघी, तो गर्भस्थ शिशु मुक्त, बधिर, ग्रास, कास आदि ज्वरोंमें पड़ा रहता है और गर्भिकोंको देख भी

गिरिष्ठ हो जाती है। इसीमें उसे धावधान हो कर झूँटना चाहिये। पहले थोड़ा थोड़ा करके, पीछे कुछ जोर दे कर झूँटना चाहिये। बाद गर्भस्थ शिशुके योनि-द्वार पर हाँ जानेमें जब तक अणुयुक्त पर्याप्त गर्भिक-वर्ण-चर्म-मण्डलीके साथ दशा भूमिष्ठ न हो जाय, तब तक अपनी शक्तिके अनुसार पल जोरमें झूँटते रहना चाहिये। ऐसा करनेमें प्रसव सुनिश्चित होता है जिस तरह धनुषमें तीर छूटता है, वही तरह गर्भस्थ भ्रूण बापमें पाप भूमिष्ठ हो जाता है।

बालकके भूमिष्ठ होने पर शार्श्वविद्या कुमावत और श्री-पाचार आदि जो जो पद्धतिसे चला पा रहा है, उसी नियमका प्रतिपालन करना चाहिये। (भावप्रकाश)

सुश्रुतमें भी नवम या दशम मास प्रसवका निर्दिष्ट समय बतलाया है। पतः नवम मासमें प्रसव दिन देव कर गर्भवतीको सुतिकागारमें प्रवेश करावे। यह घर पूर्व पयवा दक्षिण दिशामें रहे। घरको लम्बाई ८ हाथ और चौड़ाई ४ हाथकी होनी चाहिये। यह घर भिन्न भिन्न रंगोंके लिये भिन्न भिन्न प्रकारका होना बतलाया है। प्राज्ञवर्षके लिये रत्नवर्षको, क्षत्रिणके लिये रातवर्षको, वैश्यके लिये पीतवर्षको और शूद्रके लिये लघुवर्षको भूमि प्रसव है। विद्वत्, वट, तन्दूक और भलातक इन चार प्रकारकी लकड़ियोंका सुतिकागारमें पसंग बनवाना चाहिये। घरके भीतरमें भर्त्ताभाति सेव रहे। गर्भवतीका कुचिदेग जब गिरिष्ठ और हृदयका बन्धन मुक्त हो जाय तथा दोनों ऊँहमें दर्द होने लगे, तब नम-भूना चाहिये, कि प्रसवका उपयुक्त समय पहुँच गया है। इस समय कटी और हृदयके चारों ओर वेदना, बारम्बार मनमूत्रकी प्रवृत्ति तथा पचपचपमें वेदना मालूम पड़ती है। प्रसवके समय मञ्जन कार्य और ध्वांस-साधन होता रहे। छोटे छोटे लकड़के पुँलिट नामक फल ५०में ५०में हाथमें लिये प्रसूतिकों चारों ओरमें घेरे रहे। गर्भिकोंको तेज लगा कर सप्तेन्द्र परिरक्षकपुँलिट जोका माँड़ भर पेट पिता देना चाहिये।

बाद उसे सुदु, कोमल और विरहित शय्या पर तकिये पर गिर टिए इस तरह सुना दे, कि उसके दोनों ऊँह कुछ चलाते रहे। प्रसव-

भीतर स्नातक चयन। मस्तक चांगी किये हुए वस्त्रिकोटार-
में प्रवेश कर कून्ने साथ महजमें भूमि हो जाय, तो
उसे स्वाभाविक प्रभव कहते हैं। इस प्रकार यदि न हो,
तो उसे विज्ञत या स्वाभाविक प्रभव समझना चाहिये।
यह विज्ञत प्रभव उत्तिष्ठित तीन चट्टीकी परम्परा-
योगिताके मीदने तीन चट्टीमें विभक्त है। इसकी
प्रत्येक चट्टीकी दो या तीन विभाग हैं। फिर ऐसे भी
कई प्रकारके प्रभव हैं जिनका किसी चयनैव चटनाके
साथ योग रहनेमें से उक्त दो चट्टीमें नहीं रहते जा
सकते। इसकी महत्त्व-प्रभव कहते हैं। उपरोक्त नियमा-
नुसार सभी प्रभव निम्नलिखित चट्टी, चट्टीकी और
यगमें विभक्त किये गये हैं।

१म चट्टी—स्वाभाविक प्रभव।

२म चट्टी—विज्ञत या स्वाभाविक प्रभव।

(१) चट्टीकी—मस्तिष्क-शक्ति के सम्बन्धमें—

१ यग—दोष-मुक्ती प्रभव।

२ यग—शक्ति-कोन प्रभव।

(२) चट्टीकी—निगम पथके सम्बन्धमें—

१ यग—रोधक-प्रभव।

२ यग—विज्ञत वस्त्रिकोटारोय प्रभव।

(३) चट्टीकी—भूयः शरीरके सम्बन्धमें—

१ यग—वस्त्रिकोटारमें समस्त भावमें भूयःका
मस्तक, चयन। चयन-पदादिका चांगी प्रवेश।

२ यग—यमज, बहुभूय वा चट्टित भूय प्रभव।

३ यग—महत्त्व प्रभव।

४ यग—चांगी गाड़ीकी वस्त्रिकृति।

५ यग—चायय फूल।

६ यग—चयनित मोचितपात।

७ यग—मुक्तीरोग।

८ यग—विदारण।

९ यग—जरायुकी विकीरज्जिया।

१० यग—चयन-मृत्यु।

किसी किसी देहमस्तिष्क पण्डितके चयनित
(Annual) चोर यन्त्रमाध्यमवत्ते मीदने उपरोक्त
प्रभव चट्टीकी विभक्त किया है। किन्तु इस प्रकारका
विभाग विस्तृत मन्त्र नहीं समझा जाता। इसीमें यन्त्र-

माध्य प्रभवका विवरण जहाँ तक सम्भव था, दिया
गया।

प्रथम प्रवेशोद्यममें स्थिति (Presentation) है।
निम्नलिखित कई प्रकारके भूयः वस्त्रिकोटारमें प्रवेश
करता है।

१म, मस्तकका पहले प्रवेश (Head-presentation)
२म, निगम, यन्त्र या कटिका प्रवेश। ३म, चरण या
जामुका प्रवेश। ४म, कन्ध, उदरका प्रवेश।

राशु या वस्त्रिकोटारमें भूयः। सबसे पहले कोन-
पथयय जाता है, उसका निद्वय करन। परम चाययका
है। इसीमें प्रत्येक प्रकारके भूयः मन्त्रा मन्त्रा लिये
दिया जाता है।

मस्तकका काठिक, करोटि-चयनकी मोदगी मन्त्र,
मस्तिष्क पथकयान और पथात् कयानका स्वयं करन-
में मस्तकका प्रथम प्रवेश जाता जाता है। निम्नलिखित
प्रस्ता, कोमनता, मध्यस्थित गतं, गुदा चोर भगद्वार,
चण्डकोप इत्यादिका चयनो द्वारा चयनित करके वस्त्रि-
कोटारमें निम्नलिखित प्रथम प्रवेश समझा जाता है। निम्न-
के सबसे पहले प्रवेश होनेमें समको सगोन चालति चोर
किन्नर चयनके पथ-प्रवर्धन द्वारा उसका निद्वय होता है।
यदि सबसे पहले पद निकले, तो सममें समको दोषता
एवं समको चोर कन्धके स्थानका समको, पथाङ्गनो
भगद्वारता एवं शुक्लको चयन-मन्त्रा चादिहा निद्वय
हो जाता है।

देहनीका ऊपर प्रवर्धन और जामुका कण्ठाङ्गनी
चयन। चयन-पथ चोर चयन। इन दोनोंका प्रवेश
करना महत्त्व है। वस्त्राङ्गनीको चयन-मन्त्रा चोर कन्ध-
कन्धके प्रायः चयन द्वारा चयनता निद्वय होता है।

चिरकी स्थापना (Position)—प्रथम कानमें भूयः-
मस्तक जो चार प्रवर्धन वस्त्रिकोटारमें प्रवेश कर रह
सकता है, उसे चिरकी १म, २म, ३म, चोर ४म पञ्चमन
(Position) या स्थापना कहते हैं। चयनित निद्व-
मस्तकका चयन। चोर विज्ञता भाग कण्ठ-मन्त्र वस्त्रिकोटार-
के चण्डालतिदिद्वमें तथा निद्वानि चोर कण्ठ-मन्त्र
चयन। मन्त्रमें निम्न निम्न प्रकारके मन्त्र हो कर चयन-
कोटारमें प्रवेश करता है, समको चिरकी स्थापना
कहते हैं।

कार्य में कुगुप्ता परितवशब्दा चार त्रियां प्रसूतिकी परि-
धाय करे । बाद दो सूतिका गृहमें प्रवेश कर गर्भिणी-
की पशुलोम मायवे पर्याप्त लवरमें मोचे तमाम तेल
मगावे । उस समय गर्भिणीकी 'धना पला' कह कर
कूचना चाहिये । बाद गर्भाङ्गीका यन्त्रन जब गियिल
हो जाय और कटि, कुक्षि, वक्षि तथा शिरोदेशमें दर्द
होने लगे, तब कुछ और दे कर कूचना चाहिये । समय-
में कूचनेमें गिरु बहिर और मूक होता है तथा उसके
गाल और मस्तककी इट्टी टेढ़ी हो जाती है अथवा
यह काध, मान, गोप चादि रोगोंमें पक्ष वा कुल
और विकटाकार हो जाता है । सन्तान यदि विपीत
भासमें गर्भमें रहे, तो उसे सरल भावमें ला कर प्रसव
कराना चाहिये । गर्भमूत्र होनेसे पर्याप्त गर्भकृमिः सत
नहीं होनेसे कृष्णसर्पकी केशुल अथवा मनाहस द्वारा
प्रसव-द्वार पर धूमप्रयोग करना चाहिये अथवा हिरण्य-
पुष्पका मूल, सुवर्चल लवण या शुलभ गर्भिणीके
हाथ और पैरमें पहना देना चाहिये । प्रसव हो जाने
पर जातवालककी जरायुनाड़ीकी मधु, छत और सैन्य
दाग विशेषित करना चाहिये । मूर्ध्निदेश पर छताक
यन्त्र-छल रख देना चाहिये । पीछे छत्र द्वारा उसे नाभि
(नाड़ीका पट्टाङ्गल) परिमाण बांध कर बाट छादे
और उस सूतेके कुछ पंगुकी कुमारीके गलेमें
बांध देवे । बाद जातवालककी गीतल जलसे
अग्नासित कर जात कर्म समाम्पकारके मधु, घृत, चन्दा-
मूल और ब्राह्मणके माघ सुवर्ष चर्षकी मिना कर
पटाना चाहिये । पीछे चरवोका तेल लगा कर चौर-
हृदके काढ़में गन्धद्रव्यविण्णित जल डाल कर अथवा
रोष्य और स्वर्णके माघ जलकी गरम कर उस जलसे
अथवा कुछ छण्य केयूर पत्तीके काढ़में दोष काल
अथवाका विचार कर छान करना चाहिये ।
तोन या चार रातके बाद हृदयस्थ धमनोका पत्र साफ
हो जाने पर प्रसूतिके स्तनमें दूध प्रवर्त्तित होता है । पीछे
प्रथम दिन उसे चन्दा-मूलमिश्रित छत और मधु प्रनि दो
पहर और ग्रामकी, द्वितीय दिन लक्ष्मका काय और यतोय
दिन दूध पिनावे । बाद चपने करतल मरपी और मधुका
हो कर दिमें दो बार पिनाया चाहिये । इसके अनंतर

प्रसूतिकी बैठे लेका तेन लगा कर बाहुगान्धिक रोष्य
पिनावे चाहिये । किसी प्रकारका दोष स्तनमें उस दिन
पर्याप्त पाँचवें दिन विषयीमूल, गन्धर्वपनी, विवक और
गृहवेर इन सबके चूर्णकी छण्य मुट्टोटकके माघ पिनाया
उचित है । इस प्रकार दो या तीन दिन अथवा तब तक
करते रहे, जब तक दूधित शोषित संशोधित न हो जाय ।
बादमें शोषितके संशोधित हो जानेपर विदारि गन्धादिका
काय और छत अथवा दुग्धके माघ अथवा मण्ड तोन
रात तक पिनाते रहे । अनंतर उस और चम्पिके घनु-
मार चवकील और कुत्तय चादिके काय और मांसके रक्त-
के माघ भोजन करावे । इस प्रकार चर्षमास बीत जाने
पर शरीर संशोधित हो जाता है और सूतिकासे निजस
कर बाह्यादिके नियमका परित्याग करना होता है ।
कोई कोई कहता है, कि जब तक फिरसे पार्श्व न
निकले, तब तक सूतिकापस्था मानो जाती है । (वृत्त)

पापात्य पण्डितगण इसका विषय इस प्रकार कहते हैं ।
प्राकृतिक नियमानुसार गर्भस्थ जीव भूमित होता है ।
महात्मा वक्ता इस कामकी हृदये 'सुपज' फल गिरनेके
माघ तुलना करते हैं । 'हार्मि' और 'हर्ष'का कहना
है, कि पूर्णमास बीत जाने पर जरायु भ्रूचपाशमें चम-
सर्ष होकर उसे गहिरूत कर देती है । फलतः प्राक-
ृतिक समय दयम वृत्त कालके माघ मिलता है, इस
कारण डाक्टर टारनर ग्रियने बहुत शोचने बाद यह
स्थिर किया है, कि डिम्बकोषका स्नायुचैतनिक छागु
जन्तु प्रसव और वृत्तु से ही दो काम पूरे होते
हैं पर्याप्त जिस प्रकार एक विविध छागुकी क्रियासे भ्रू-
द्वारा रोग उत्पन्न होता है, वही प्रकार पूर्णतम कालमें
डिम्बकोषकी चैतनिक छागु कवेदमज्जा हो कर जरायु-
की स्नायुज छागुकी उत्पत्ति करती है और उसकी
मांसपेयीकी सङ्कोचक्रियाके उपक्रित होनेसे ही
भ्रूच भूमित होता है ।

रासायनिक प्रसव—इस प्रसवकी संज्ञा यदि फिर कर
सके, तो इसे विव्रन और सहर प्रसवके माघ विशेष
करना सज्ज हो जायेगा । प्रसव कार्यके तीन पद हैं :
पदा, १ भ्रूचविकरक-मार्ग, २ भ्रूचका निम्नपथ और
३ भ्रूच-शरीर । यदि इन पदोंमें कसरे काम न हो

भीतर सन्तान प्रपन्ना मन्त्रक सामे क्रिये हुए वस्तुकोट-
में प्रवेश कर कन्धे साथ सहजमें भूमिष्ठ हो जाय, तो
उसे स्वाभाविक प्रणय कहते हैं। इस प्रकार यदि न हो,
तो उसे विज्ञान वा पञ्चाभाविक प्रणय समझना चाहिये।
यह विज्ञान प्रणय उन्निवृत्त तीन चट्टाणी परम्परागम-
योगिताके भेदमें तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। इसकी
प्रत्येक उपश्रेणीके दो या तीन विभाग हैं। फिर ऐसे भी
कई प्रकारके प्रणय हैं जिनका किसी चतुर्थ घटनाके
साथ योग रहनेसे वे उक्त दो श्रेणियोंमें नहीं रहते जा
सकते। इसको सहृ-प्रणय कहते हैं। उपरोक्त निम्न-
लुम्बारी सभी प्रणय निम्नलिखित श्रेणी, उपश्रेणी और
घट्टा में विभक्त किये गये हैं।

१म श्रेणी—स्वाभाविक प्रणय।

२य श्रेणी—विज्ञान वा पञ्चाभाविक प्रणय।

(१) उपश्रेणी—वर्णिकरण शक्तिके सम्बन्धमें—

१ वर्ग—दोष सूत्री प्रणय।

२ वर्ग—गतिज्ञान प्रणय।

(२) उपश्रेणी—निर्गम घट्टे सम्बन्धमें—

१ वर्ग—रोधक-प्रणय।

२ वर्ग—विज्ञान वस्तुकोटोप प्रणय।

(३) उपश्रेणी—भूय शरीरके सम्बन्धमें—

१ वर्ग—वस्तुकोटामें समझत भावमें भूयका
मन्त्रक, प्रणय। वस्तुपदादिका सामे प्रवेश।

२ वर्ग—यमज, बहुभूय वा चतुर्भूय प्रणय।

३य श्रेणी—सहृ प्रणय।

१ वर्ग—प्राग्माणीकी वक्षिणति।

२ वर्ग—प्राग्माणी।

३ वर्ग—प्रवर्तित मोक्षितात।

४ वर्ग—मुच्योरीग।

५ वर्ग—विदारण।

६ वर्ग—जराप्राणी विनोमक्रिया।

७ वर्ग—प्रकृष्टाग गट्टु।

किसी किसी ऐक्यस्यिद्ध वस्तुतः कृष्णत
(Manual) और यन्त्रमाध्यमसे भेदमें उपरोक्त
प्रणय श्रेणीकी विभक्त किया है। किन्तु इस प्रकारका
विभाग विस्तृत दृष्टत सभी सम्भवा जाता। इसीसे यन्त्र-

माध्य प्रणयका विवरण जहाँ तक सम्भव था, निम्ना
गया।

प्रथम प्रवेशोद्यममें स्थिति (Presentation) है।

निम्नलिखित कई प्रकारसे भूयों वस्तुकोटामें प्रवेश
करता है।

१म, मन्त्रकका पहले प्रवेश (Head-presentation)

२य, निम्न, वक्ष्य वा कटिका प्रवेश। ३य, चरण वा

जानुका प्रवेश। ४य, स्थ, जम्बका प्रवेश।

५रागु या वस्तुकोटामें भूयका सबसे पहले कौनसा
पक्षप्रवेश जाता है, उसका निरूपण करना परम आवश्यक
है। इसीसे प्रत्येक प्रकारके निर्गतता लक्षण भी
निम्ना जाता है।

मन्त्रकका काठिक, करोटि-पक्षिकी योग्यता स्थि,
दलितगुण्य पक्षप्रणय और पक्षात् रूपान्तरा स्वयं करने-
से मन्त्रकका प्रथम प्रवेश जाता जाता है। निम्नकी
गुणता, कोमलता, सञ्चाल्यता गत, गुण और भगदार,
पक्षकीय हस्तादिका उँगलियों द्वारा अनुभव करते वस्तु-
कोटामें निम्नका प्रथम प्रवेश सम्भवा जाता है। शिशु
के मुखसे पहले प्रविष्ट होनेसे उसकी सगीन प्राप्ति और
किम्बर पक्षिके पक्षप्रवेश द्वारा उसका निरूपण होता है।
यदि सबसे पहले पद निरूपे, तो उससे उसकी दृष्टता
एवं उसकी और लक्ष्यके स्थानका समकोण, पक्षात्गतता
भ्रमदोषता एवं युक्तकी चतुर्गुणता आदिका निरूपण
हो जाता है।

वैद्यकीका कृपार प्रवेश और जानुका कक्षात्गतता
पक्षका पक्षगत और पक्षका कोना, इन दोनोंका प्रीद
करना सहज है। हस्तागुणिकी चतुर्गुणता और हस्ता-
गुणिके प्राप्यता द्वारा हस्तका निरूपण होता है।

शिरसी स्थापना (Position)—प्रणय कालमें भूय-
मन्त्रक की चार प्रवृत्त वस्तुकोटामें प्रवेश कर रह
सकता है, उसे शिरसी १म, २य, ३य, और ४य प्रतिमान
(Position) वा स्थापना कहते हैं। प्रमाण दिष्ट-
मन्त्रकका पक्षका और विक्षिप्त भाग कक्षात्गत वस्तुकोट-
के पक्षात्गततिदिष्टमें तथा विक्षिप्त और वक्ष्यस्थित
पक्ष स्थितिमें जिस जिस प्रकारसे संवृष्ट हो कर वस्तु-
कोटामें प्रवेश करता है, उसीकी शिरसी स्थापना
कहते हैं।

प्रवसावस्था (Stage of labour)—प्रथम प्रसव कार्याका महजमें काम को जानिके बिचे से चार चक्काओं-में निभल किया जाता है। यथा—प्राक्त प्रसवके १।२ ममाह पहलेसे जरायु यस्मिन्कोटरके प्रवेगद्वारमें टप जाती है, जिसमें प्रसूतिका निःश्वसन-प्रणालिकायाँ पहले-की चपेला सुचारुदमसे चलता है। किन्तु गिराई रक्तके जाने पानिका व्याघात की जानेसे, यदि पहलेसे चर्मरोग रहे, तो उसको हडि की जाती है, पटमें सूजनके लक्षण दिखानेमें आती है। मृतकोपके ऊपर दबाव पहलेसे बार-बार पीगाव उत्तरता है और सरस चालोंमें दबाव पड़नेसे वेदना होती है। एक प्रकारके तैलवत् पदार्थ-के निकलनेमें जब घूर्णनका निर्गमद्वार विच्छिन्न और प्रसारित हो जाता है तब प्रसव-वेदना चारभूके चोके की समय ताद प्रत्यान भूमित हो जाती है। इन सब लक्षणान्प्राप्त चक्काओं प्रसवकी प्रारम्भिक चक्का कहते हैं। यादवधिकमें प्रसवकारभमें से कर जब तक जरायु-पीया दार हो कर घूर्णमस्तक न निकले। तब तक प्रथम प्रसवावस्था, यस्मिन्कोटरमें गिराके प्रवेगकालमें से कर भूमित काल तक द्वितीय चक्का चोर कमके बादसे से कर जरायुकुसुमके निकलने तक तृतीय चक्का कह-जातो है।

तस्मिन्कोटरमें घूर्ण-मस्तकका प्रवेग चोर निर्गम-क्रम इन विषयका सर्वान करनेके पहले प्रसवके ती तीन चक्के पहले चक्क, चक्क, कर कर एक पर एक कुछ कुछ विचार करना आवश्यक है।

१। घूर्ण-निश्चरण-गति।—जरायुकी सार्वभौमिकी क्रिया की गर्भस्थ भ्रूणात्मक निकलनेका मुख्य उपाय है। क्योंकि जब प्रसूति चक्कस्मात् मुच्छित वा चलेतावस्था-में मृतप्राय हो जाती है, उस समय भी कभी कभी मस्तान भूमित होती देखी गई है। वह पेशी जरायुकी भ्रूणोत्पत्ति बाह्यगटन कारी है और उसका चर्चिकीय-मृत् (Fibre) जरायु-पीयाके एक पार्श्वमें निक्षेप कर उसे चारों ओरसे घिरे हुए पुनः उक्त चोवाके विपरीत पार्श्वमें ही सम्मिल रहता है। प्रसवके प्रारम्भमें उस सब मृतोको निष्पीडक मन्दोपक क्रियासे जरायु चोवाचय को कुछ प्रकाश पाती है, वह भी प्रसूति चक्कन नहीं कर

सकती। इस कारण प्रसववेदना मानूस होनेके साथ ही यदि चापसे जरायुकी चोवाको पीयाको जाय तो वह कुछ प्रगति देवनेमें पातो है। पीछे जरायुकी मन्दो-चन-क्रियाके प्रथम की जानेसे जब प्रसूति चक्क उसका चक्कन कर सकती है, तब उसे प्रसववेदना कहते हैं। यह क्रिया जितनी हो प्रथम होती जाती है, तबनी ही वेदना भी चक्का होने लगती है।

कटिदेशमें जो दर्द उत्पन्न होता है, वह मनुष्य पीटमें फँस कर दोनों ऊरुमें पड़ने जाता है। उस समय पीटा मानूस पड़ता है, कि पीट मानो किसी तीव्र हडिघारसे कटा ला रहा है। इसी कारण इसे हेटकषया (Cotting pain) कहते हैं। इस प्रकारकी वेदना प्रथम चक्कामें होती है। द्वितीय चक्कामें जो व्याघात होता है, वह पूर्वोक्त व्याघातकी भाँति सुतीव्र तो नहीं है, पर चक्का उठने पछिक मानूस पड़ती है। इस समय यस्मिन्कोटरीय सार्वभौमिकी क्रिया भी जरायुक्रियाके साथ साथ चक्कमें उपस्थित हो कर सूक्ष्मकी मोचिकी चोर दबाती है। इस कारण द्वितीय चक्कामें वेदनाके साथ साथ जब तब प्रसूति कुसुम बग मन्दो देती, तब तक उसे चैन नहीं मिलेगा। इसी कारण इस व्याघात नाम सर्वेग-व्यथा रखा गया है। प्रथमोक्त चक्कामें प्रसूतिकी बहुत कष्ट होता है, इसीसे यह रोतो है। किन्तु नियोज बाधाके समय कुसुमका जो वेग देना होता है, वह कन्दनकी पीठ रहता है। निम्न बाधा जब कुसुम-वेगमें भी दब नहीं सकतो तब फिर प्रसूति रोने लगती है। फलतः बाधाके साथ रोता है वा बग देती है, वह मानूस हो जानेसे प्रायः प्रसवकी चक्का निक्षेप को आतो है।

प्रसवके समय जरायुकी मन्दोचन-क्रियाके साथ साथ जो दर्द मानूस पड़ता है, उसके तीन कारण हैं, जैसे—(१) जरायु चोवाके निम्न भागका प्रसारित होना, (२) योनि पादिका विस्तार होना और (३) जरायुकी सार्वभौमिकी द्वारा उसकी धातुका टप जाना। यमहीना सिद्धांतों प्रसवके समय जेमा कष्ट भुगतना पड़ता है, यथा यम-शोन सिद्धांतकी नहीं। जरायुकी मन्दोचनक्रियाका पार्श्व निम्न यह है, कि प्रत्येक क्रियाके प्रारम्भमें वेदना होती मानूस पड़ती है, पीछे और पीछे वह बढ़ कर चक्कनोप

ही जाती है। प्रसवकार्य में इस प्रकारकी वेदना कई बार होती है। पौरुषमयः दीर्घकालस्यायो तथा मूलधिक यातनादायक ही जाती है। अन्त में जरायुकी एक ऐसी सहोचन-क्रिया अर्थात् व्याघा उपस्थित होती है, कि उससे गर्भस्थ भ्रूण ग्रीध ही बाहर निकल जाता है। प्रसवको घरेमायव्या जितनी ही सविश्रुत होती है, उतना ही विरामकाल कमता जाता है। डाक्टर स्त्राकनोव्स्का कहता है, कि प्रसववेदनाका विरामकाल जिस परिणामसे कम जाता है, उसका स्वायत्तकाल सभी परिणामसे बढ़ता भी है। पौरु जितना ही वह बढ़ता है, उतना ही प्रसूति उल्टा पौरु प्रसन्न यन्त्रणा भुगती है। सन्तान भूमिष्ठ हो जाने बाद काल ही बाहर निकलनेके निये प्रत्येक सहोचनक्रियाके प्राथमिक होने पर, वह भी उल्लिखित नियमसे सम्भव होता है।

प्रत्येक व्याघाका फल यह है कि वह पहले भ्रूण-मन्त्रकको उठा कर पीछे मोचकी पौरु पहलसे अधिक दबाव देती है। व्याघाके समय जरायुके ऊपर बाध रख कर देखनेसे ऐसा मानस पड़ता कि वह पहलसे सहोचन पौरु सुदृढ़ हो गई है। फिर व्याघाके विरामके समय जरायुके गिरित भाग बाधव करने पर भी वह पहलकी अपेक्षा कुछ तात्पर्य रहती है। जरायुकी सहोचनक्रिया को प्रथम अवस्थाका समाधान करती है। द्वितीय अवस्थामें जब भ्रूणमन्त्रक जरायुसे निकल कर वन्तिकोटरमें पानेकी योग्य करता है, तब प्रसूति कीव कर उदर पौरु वन्तिकोटरकी मांसपेशी द्वारा भ्रूणको वन्तिकोटरमें ठेल देती है। छांदना प्रथमतः दृष्टाधीन होने पर भी पीछे जब व्याघाके साथ प्राथमिक व्याघ उपस्थित होता है। जब भ्रूण-मन्त्रक वन्तिकोटरके भाग बाहर निकल कर योनिमें प्रवेश करता है, तब योनिको सहोचन-क्रिया द्वारा भी तादृश ही कर वह भूमिष्ठ हो जाता है।

जरायुकी सहोचनक्रिया प्रसूतिके दृष्टाधीन नहीं होने पर भी कभी कभी स्वतः रूपसे सामानिक प्रसव्याकी प्रयोग होने देती जाती है। जैसे—क्रोध, माध, विषाद इत्यादिमें जिस प्रकार प्रसववेदना होने देती जाती है, उसी प्रकार व्याघातः जो व्याघा होती है वह भी उल्टा कारणोंसे प्रसव्यात् रूप ही जाती है। प्रसवके समय

प्रसूतिके सुतिकाष्टहमें उठात् प्रवेश करनेसे कभी कभी वेदना बढ़ ही जाती है, प्रसवकार्यके सामानिक प्रसव्याके प्रयोग रहनेका यह भी एक उदाहरण है।

२२ नियमनाथ।—पभी वन्तिकोटराव प्रवेशद्वारका (Inlet) तोन व्यामका विधय याद रखना। प्राथमिक है। यथा—प्रथम प्रायः व्यास ४ वा ४ ई इत्य, अनुप्रस्य ५ ई इत्य, तिर्यक् व्यास ४ ई वा ५ इत्य है। इन तोन व्यामोंका जो अनुपात होता है, वह कोटरके मध्य क्रमयः परिचरित्त हो कर समके निर्गमद्वार पर (Outlet) ठीक विपरीत हो जाता है। अर्थात् प्रसवद्वारका न्यूनतम व्याम दीर्घतम पौरु वहिर्द्वारका दीर्घतम व्याम न्यूनतम हो जाता है।

यथा—उसका प्रथमप्रायः व्यास ५ इत्य पौरु अनुप्रस्य व्यास ४ ई इत्य हो जाता है। निर्गमद्वारके मांसपेशी प्रादि कोमल पदार्थोंसे प्रावृत्त रहनेसे पूर्वात प्रथमप्रायः व्यासमें १ इत्य पौरु अनुप्रस्य व्यासमें १ इत्याम जितने पर प्रसवित्त प्रथमप्रायः व्यास १ इत्य पौरु अनुप्रस्य व्यास ५ ई इत्य रह जाता है।

वन्तिकोटरके प्रवेश पौरु निर्गमद्वार पर यदि कुछ मंद-विषाघोंको कल्पना करें, तो कोटरके मध्य इनके संयोग-स्थानपर जो छल्लकोचकी सृष्टि होती है, वह पहलसे निम्ना जा चुका है। फिर यह भी स्मरण रखना उचित है, कि वन्तिकोटर ऊपरसे नीचेकी पौरु फल जाता है। किन्तु निम्नभाग सामनेमें कुछ झोका दिये रहता है।

वन्तिकोटरमें भ्रूण-मन्त्रकके निक्षेपने समय पूर्वार्ध प्रकारमें कोटराव्यामका फल भाग तात्पर्य जाना जाता है। जरायुकी मांसपेशी द्वारा भ्रूणमन्त्रकके मोचकी पौरु तादृश होनेसे वह जितनाही प्रथमः प्रयोगामो होता है, उतना ही प्रथम कर मन्त्रकको तथा वन्तिकोटरका प्रत्येक दीर्घ पौरु स्वव्यास परस्परवर्तनी ही जाता है। पौरु इस प्रकार भ्रूण आनेके कारण जरायुको सहोचनक्रिया ठहर ठहर कर उपस्थित होती है पौरु भ्रूण-मन्त्रक वन्तिकोटरमें सभी पौरु अर्थात् मांसपेशी मन्त्रक दृष्टा करना है।

भ्रूणमन्त्रके निर्गमके समय इस प्रकारकी तात्पर्य पड़ती है। प्रथमतः जरायुका निम्न भाग वा पौरु जमे

हृद करती है। प्रसवके कुछ दिनों पहलेसे जरायुका गिरा भाग गिराने और उसका रक्त कुछ प्रसारित हो जाता है। प्रसवकेदनाके पारम्भ होनेमें अम्नियोन (Amnion) झिल्ली उसमेंसे कुछ प्रसवके भाग चला रक्त हो कर बहक जाती है। इसीको जनकोप कहते हैं। पेटमें जरायु जितनी बड़ा बिन होती है, वह जरायुकोप उतना ही नीचेकी ओर ताड़ित हो कर बढ़ता जाता है और उसमें जरायुका दोनों दोरा दब कर क्षम्यः प्रसारित होने लगता है। पक्षमें जनकोपके फाट जाने पर जिन तरह भ्रूण-संस्कार जरायुपोषाके वहिर्भाग पर दबाव डालता है, उसी तरह जरायु उक्त वहिर्भागको भी भ्रूण-संस्कारके बहिर्भाग हो कर बाह्यकक्ष्यक प्रसारित करती है। जनकोप द्वारा उस वहिर्भागमें प्रसारित होनेके समय प्रसूति घटना कह नहीं पाता। किन्तु सब केवले भ्रूण-संस्कार द्वारा वह उम प्रकारसे फैलने लगता है, तब प्रसूतिको प्रसन्न यातना होती है। प्रत्येक व्यापारके समय भ्रूण-संस्कार घोंड़ा घुम कर नीचेकी ओर कुछ प्रवृत्त होता है और उसके विरामके समय फिर ऊपरकी ओर उठता है। किन्तु जिस परिणामसे वह नीचे जाता है, उस परिणामसे ऊपर नहीं उठता। इस प्रकार बारम्बार पुर्वातभावमें लक्ष्मी प्रयोगमें कुर्दान किया द्वारा भ्रूण-संस्कार धरितकोटरके बाह्यगम द्वार पर पहुँच कर एक तीसरी बाधामें प्राप्त होता है। यहाँ पर प्रथमतः माग-विमो और बन्धने पादि द्वारा वह अवकाल प्रवृद्ध हो कर पेटमें गुह्रदेग द्वारा प्रतिबन्धकताको प्राप्त होता है। इस स्थानके प्रसारित होनेमें कुछ निरास हो जाता है जिनमें प्रसूतिही बहुत कुछ भुगतने पड़ते हैं। किन्तु भ्रूण-संस्कार प्रवृद्धके जैसा कुर्दान-क्रिया द्वारा पक्षमें उम पड़ती प्रतिबन्ध कर योगि-द्वार पर पहुँच जाता है। यहाँ भी कुछ देरमें जब योगि यद्योचित फैल जाती है। यहाँ भी कुछ देरमें जब योगि यद्योचित फैल जाती है, तब भ्रूण-संस्कार निश्चय पड़ता है।

प्रथम प्रसवमें योगिसे भ्रूण-संस्कारके निश्चयने समय भगदाईके पक्षात् मातावर्ति कोषेट (Fornicette)का बाह्यद्वार मिथ्य-संज्ञित रहत रह कुछ मात्रा निश्चय जाता है और कामी कक्षा सज्जित सज्जभाग दिव

हो जाता है। किन्तु इसमें गुह्रदेगका प्रसवका भाग पड़ता नहीं। इसमें प्रथम बाह्य प्रसवमें प्रसवका उठ होता है, उतना पेटमें नहीं होता। इस प्रकार तो पेट पक्षिक समरमें गर्भ प्रसार करती है, उते भी दूसरी प्रवृत्तमें प्रवृत्त कह भोगना पड़ता है।

स्वाभाविक प्रसवमें भ्रूण-संस्कारके जरायु-दोराके निश्चय वहिर्भागमें निश्चयमें जितना समय लगता है, प्रसवके पाथे या उत्तरीयग समयमें वह यदि कोटरमें प्रसव कर वहमें निर्गत हो जाता है पक्षात् जिस बाधा यदि वह पेटमें प्रसव भूमित हो, तो प्रसवके प्रसव प्रवृत्तके पक्षमें पक्ष प्रवृत्त प्रवृत्त है। किन्तु प्रसव दोरायुमें यद्यपि निश्चय लागू नहीं है, पक्षात् उम परिमाणमें उमत् जामने प्रथम प्रवृत्तसे द्वितीय प्रवृत्त होती वा तिसरी सुदीर्घ हो जाती है।

प्रसवके पहले भ्रूण-संस्कारको प्रवृत्तका निश्चय कराना परम आवश्यक है। डाक्टर निश्चय कहते हैं, जिस प्रसवार्थमें यदि भ्रूणगोरीही सञ्चालन-क्रिया गर्भपक्षीके तब पेटमें दाहिने बायेंमें पक्षिक मान्य पक्षी तो भ्रूण-संस्कार प्रथम वा पक्षात् स्थाना (Position) में और यदि बायें बायेंमें पक्षिक मान्य पक्षी, तो द्वितीय या उत्तरीय स्थाना (Position) में पड़ता है, किन्तु इस प्रसवके प्रथम प्रसवगमने प्रसव पक्षीगमने और द्वितीय प्रसवगमने उत्तरीय प्रसवगमने प्रसव नहीं किया जाता।

भ्रूण-संस्कारका प्रसव वहिर्भागमें प्रथम काला यद्यपक्षी तरह मान्य हो जाने पर उक्त निश्चय बाह्यके मतमें भ्रूण-संस्कारके भ्रूण-संस्कार द्वारा भी भ्रूण-संस्कारके प्रसवगमने दिवद दिया ला गजना है। पक्षात् प्रसव यद्यपि प्रसव कटिदेगमें सुना लाया, तो प्रसव पक्षीगमने और यदि द्वितीय कटिदेगमें सुना लाया, तो द्वितीय प्रसवगमने प्रसवगमने प्रसवको प्रसव सम्भावना है। स्थानके भूमित होनेके बाद वह कोटरके मध्य किमी प्रसवगमने प्रसव करके निश्चयी है, वह प्रसव प्रसवका प्रसवगमने प्रसव देग कर प्रसवमें निश्चय दिया जाता है। प्रसव निश्चयने समय प्रसवमें जरायुके निश्चय और योगि देग दोनों द्वारा प्रसव प्रसवके प्रसवगमने प्रसव देग प्रसवके प्रसव रक्त जमा हो जाता है तब वह प्रसव प्रसव हो

उठता है। इसमें प्राथमिक चौर द्वितीय रत्नगर्भ
: पुरुष के शक्तिशाली दृष्टि होती है। जिस प्रथममें भूषण
मन्त्रको धारण करके जरायुमें बहिर्गमनपूर्वक उसी
प्रकार शक्तिकोटारमें प्रवेश करे, कोई अनपेक्ष घटना
उपस्थित न हो, प्रसूति निर्विघ्नमें अपनी जरायुकी बहि
: स्करण-शक्ति द्वारा कमसे कम २४ घण्टेमें जोड़ित मग्नान
प्रसव करे और जिसमें प्रत्येक प्रसवावस्था सममित
ममयमें गीय हो जाय, उसीको स्वाभाविक प्रसव कहते हैं
जपरमें जो स्वाभाविक प्रसवका समय निश्चित हुआ है,
यह सभी प्रसवमें लिए नहीं है। यहाँ तक कि दो प्रसव
भी एक समकालव्यापी देखे नहीं जाते। सभी स्त्रियोंके
प्रथम प्रसवमें छोड़ा दिनभर हो जाता है। सममित
कालका विषय को कहा गया है उसका कारण यह है
कि स्वाभाविक प्रसवमें प्रथम प्रसवावस्थाके उत्तम या
चतुर्थीय समयमें एकचर द्वितीय प्रसवावस्था शेष होती
है। इसका वैपरीत्य अर्थात् प्रथम प्रसवावस्थाकी अपेक्षा
द्वितीय प्रसवक्रिया दूसरी वा तिसरी कालव्यापी होनेमें
यह स्वाभाविक प्रसव नहीं कहना सकता। जैसे २४
घण्टेके भीतर जी प्रसव होता है उसको प्रथम
प्रसवस्थान ११/१८ घटिका स्थायी न हो कर २१ घंटेमें
गीय हो जाता है। द्वितीय प्रसवस्थानें उचित रीतिमें ४१
घटिकाके मध्य गीय न हो कर १२/२० घण्टी तक रुक
जाता है। इस प्रकारका प्रसव निम्न प्रसवकी श्रेणीमें
गिना जाता है।

प्रसवका प्राभाविक लक्षण, जरायुका नीचे जाना और
उदरका पूर्वावेण। योड़ा होना (घटम मासको अपेक्षा
नवममासमें गर्भिणीका उदर कोटा दिखाई देना)
ये सब लक्षण प्रसव होनेके समूह दिन पहलेसे ऐसे साफ
साफ देखनेमें आते हैं, कि गर्भिणी भी स्वयं उसका
अनुभव कर सकती है। यह समयमें काहबर समन्याय
के कुछ चमोका मूल जाना उसका प्रथम कारण है और
जरायु प्रयोगीनी हो कर समस्त निम्न भागका
गन्धकोटारके प्रवेशद्वारमें युक्त होना द्वितीय कारण है
तथा जरायुस्य मांसपेशीके सभी स्त्रियोंके निहित हो जाने
से उसका अधोभाग अनुपस्थित भावसे प्रसारित हो जाता
और उसका दृष्टान्तन चर्च हो जाता है, यही तीसरा

लक्षण है। इस समय जरायु उदरके मांसमें मांसकी बहुत
उठाने रहती है। जिन स्त्रियोंके बार-बार गर्भ होनेमें
उसकी समस्त चौर मांसपेशी ठोसो पड़ जाती है, उनमें
से किसी भीके उदरकी तो जरायु इतना ऊपर उठाने
रहती है कि बिना पेटो बन्धनीके उसका कट निवारण
हो ही नहीं सकता।

पुनः पुनः प्रसव करनेमें इच्छा। जरायुका नीचे चौर
मांसमें मूलाधारके ऊपर दबाव पड़नेसे अधिक मूल
मध्यम नहीं रह सकता। इसीमें प्रसवोन्मुखी की बार-
बार प्रयास किए बिना नहीं रह सकता। गर्भके द्वितीय
वा चतुर्थमासमें गर्भिणी की बारम्बार मूल त्याग करती
है, उसका भी यह एक मूल कारण है। इस लक्षणका
द्वितीय कारण यह है कि जरायु चौर मूल द्वारके परस्पर
सहायभाषक यन्त्र हो जानेमें गर्भके गीय मांसके पड़ने
जरायु पीछे मूलाधारमें भी ताड़न उत्पन्न करती है, इसीसे
बारम्बार प्रयास करना होता है।

अन्तर्ग मूल।—जिस कारणसे लगातार प्रयास करना
होता है, उसी कारणसे सरल पातमें मूल पड़ने की योजना
हुआ करती है। कभी प्रयास रोगकी भाँति पुनः पुनः
वादा को योजना होनेमें भी मूल निर्गत नहीं होता। ऐसे
प्रसवस्थानें किसी उपायसे कोठकी मूँद रहनेमें हो कट
बहुत कुछ कम जाता है।

जरायुकी शोकाहीन संकीर्ण-क्रिया। गर्भके गीय
मांसमें विविधता प्रसवारस्थान २१ दिन पहले उदरके
अधोभागमें प्रसूति रह रह कर एक प्रकारका मरोड़
अनुभव करती है। गर्भस्थ भ्रूणके सञ्चालनकालमें
प्रयत्ना चकान गर्भपात होनेमें पहले जरायुकी
इस प्रकारकी प्रागिक क्रिया हुआ करती है। इस कारण
प्रसववेदन। होनेसे साथ ही इनकी परीक्षा करनेमें
सामान्य उदरगर्भ के लक्षणों के लक्षण मूल पड़ता है।

शक्ति के स्वरूप निःपत्तन।—स्वाभाविक प्रसववेदनके
२४ घण्टे पहलेसे इस प्रकारका लक्षण देखनेमें आता है।
योनिस्थित सम कट द्वारा विच्छिन्न चौर तैसाहृत्
की जानेमें भ्रूणके काहर् निष्पत्तनका महत्त्व पय तैसा
हो जाता है। यह पदार्थ पहले तो गाढ़ रहता है,
पीछे प्रसववेदनके कारण होनेमें पतला हो जाता है। यह

किमीमें तो कम और किसीमें ज्यादा पाया जाता है। यह यथार्थ हीन है, किन्तु प्रत्यक्ष-वेदना चारित्र्य के बाध मिल जाता है।

इन पांच लक्षणोंमें से तोन गर्भ के शेष व्यवस्थामें देखे जाते हैं, शेषमें सामान्यतया अनुभूत होता है। पांचवां लक्षण दीर्घ पड़नेसे शीघ्र ही प्रसव होता है, यह सामान्य हो जाता है। प्रसवकालमें उपस्थित होनेसे और भी बहुतसे सामान्य लक्षण हैं—यथाप्रसवमें दोनों पेटोंमें रुकोरता, जब और अङ्गमें विषाद, मनकी प्रवृत्तता, मांस, लुप्तता, श्वास लक्ष्म का काम, गतिमें रुकृति और सुगमता अनुभव आदि लक्षण देखनेमें पाते हैं।

पतियम, क्षालि, पञ्चोर्णता, मन्दाग्नि, कोष्ठवह और गर्भस्य पुनः पुनः की विषय सञ्चलन-क्रिया इत्यादि द्वारा कभी कभी गर्भिणीकी हृत्प्रति प्रसव-वेदना उपस्थित होती है। किन्तु यह वेदना व्यापारिक प्रसव वेदनासे मज्जामें प्रसिद्ध होती है। यथा, हृत्प्रति वेदना जरायु-के जगरी भागमें (fundus) चारित्र्य हो कर समस्त पक्ष-भाग मांसमें व्याप्त रहने से और अनियमित विरामके बाद पुनः पड़ने पातो है। इस समय योगिनिष्ठों के दर्शन निकलता और न जरायुका सुँड़ ही प्रसारित होता है। उन ही कर जनकोय भी लट्ट हने नहीं पाता। प्रसुतिको ऐसा सामान्य पड़ता है मानो वेदना छूटनेमें निकल कर क्षमः मांसमें ही और समूचे पेटमें फैली जाती हो। इससे नियमित विरामकालके बाद वेदना बहुत जल्द प्रसव-रूपसे पुनः पुनः उपस्थित हुआ करती है। इस समय जरायुका सुँड़ फैल जाता है और समस्त मांस ही कर जनकोय लट्ट पड़ता है। कभी कभी हृत्प्रति व्याधा भी प्रकृत व्याधामें परिवर्तित होती है, इसीसे हृत्प्रति व्याधाका निवारण करना आवश्यक है। इस व्यवस्था। इसमें जरायुको मद्धोचनक्रिया द्वारा जिस प्रकार व्याधा उपस्थित होती है, वह पक्षमें ही कहा जा चुका है, यथा पक्षमें पक्षसे व्याधा बहुत कम सामान्य पड़ती है। दोहरे पक्ष क्षमः प्रसव और सुहोर्ण ही कर बहुत जल्द शेष हो जाती है। उससे प्रत्यक्ष व्याधाका विरामकाल मो क्षमः क्षम हो जाता है। प्रत्यक्ष हृत्प्रति व्याधाके चारित्र्य होनेसे प्रसुति पक्ष पर नहीं गड़ती तदा बहुत धीरे-धीरे पाद करती

है। इस समय एक व्याधामें रहना उसे प्रसव नहीं पड़ता। कभी यह होती है, कभी वेदना है, कभी श्वास लक्ष्म हो है, विषय कर एकता व्याधा और व्याध रहती है। जिस प्रसवकार्य जितना ही शेष होने पाता है, वह सब बह-दायक लक्षणोंको प्रसुति छतना ही छोड़ा छोड़ा करके पतियम करती आती है। कोई कोई तो गर्भके शेष मांसमें व्याध और जताम हो कर प्रसवकार्यमें भागविह और समुक्त होती है। फलतः गर्भके शेष मांसमें और प्रसव-की प्रसवमांसमें प्रसुतिका मन के भी ही व्यवस्थामें व्याध न रहे, दूसरी व्यवस्थाके चारित्र्य होनेसे मांस ही पक्षसे छोड़ो छोड़ो वेदना होती है, दोहरे पक्ष कर विराम हो जाते हैं और प्रसवकार्य बहुत जल्द सम्पन्न हो जाता है, प्रसुति व्याधा और उपस्थित हो कर सम विषयमें समीचनपूर्वक यथासाध्य चेष्टा करती है। जब श्वासमांसक पक्ष-रुद्धताके मध्य हो कर बाहर होता है, तब प्रसुतिको बहुत कष्ट मात्तुम पड़ता है। यह कष्ट हिमप्रसव नहीं होता, वरन् सम समय शरीर लक्ष्म रहता है। इसका प्रकृत कारण जरायुको पक्ष प्रसव मद्धोचनक्रिया है। इस समय किसी किसी स्त्रीको चरित्रकमलाव और विरामता उपस्थित होती है। प्रायः सभी स्त्रियाँ इस समय समस्त कर देती हैं। इसमें पेटके पञ्चोर्ण भुक्त हृत्प्रति निकल जानेसे पक्ष-रुद्धताके (जरायुकोवाका निष्क पक्षिभांग) शिथिल हो जातो है। प्रथम प्रसवपक्षधा शेष होनेसे समस्त प्रसुतिका कुत्सन केन चारित्र्य होता है। उस समय योगिनिष्ठों के दर्शन मांस मांस रहती बुद्ध भी बहुत देती जातो है और जनकोयके कट जाननेसे भी बाहर प्रसवपक्षी गिर पड़ती है। इससे बाद को व्याधा होती है, इसीसे पक्ष-रुद्धताके मध्य श्वास-मद्धक निकल कर चरित्रकोटरमें प्रसवोन्मुख होता है।

श्रीरूप प्रसवपक्षधा—इस समय व्याधाके शेष तोन पाक्षमण करमेसे पक्षके मध्यस्थित विरामकाल क्षमः पक्ष हो जाता है और व्याधा भी प्रसव और दीर्घ-बाध व्याधी हो जाती है। व्याधताको पक्षके बाध प्रसुति व्याधाके समय रोदन शीघ्र कर प्रसवकी बंद लक्ष्म रहती है, दोहरे व्याधा जल्द बहुत घट जाती है, तब कुछ क्षम-मन पक्ष पूर्ण हो जाता विराम करती है। व्याधाके समय कीर्ण

घोर पीछे सेना इन दोनों लक्ष्यों द्वारा ही द्वितीय प्रसवा-
वस्थाका निर्वय किया जाता है। व्यथाके उपस्थित होने-
के साथ ही प्रसूति ग्रासको रोक कर मसिकटकी किसी
मचन या स्थापित बस्तुको पकड़ कर झोंकती है। घोर
जरायुकी सङ्कोचन-क्रियाकी सहायताके लिये शरीरकी
प्रायः सभी मांसपेशियोंको नियुक्त करती है। ग्रासके
रक्त जाननेसे रक्तपरिचालनका व्याघात उत्पन्न होता है
घोर उससे स्वयंको सभी गिराएँ रक्तमें पूर्ण हो कर
सर्वाङ्गकी विरहित; पाख घोर बस्तुकी लान बना देती
है। कपाक, कनपटी घोर गलेकी गिरापीके रक्त-पुष्प
होनेसे स्तोक होतो है, शरीर उष्ण हो कर चर्मज हो
जाता है। नाड़ोकी गति भी प्रायिक व्यथाके साथ साथ
तेज हो जाती घोर सन्तान भूमिष्ठ होनेको बाद वह
प्रति मिमटमें ८-१२० बार चलती है।

किसीकी बार बार वमन होने भी देखा जाता है।
प्रथम अवस्थामें कोई कोई ही जो वमन करती है, वह
सिर्फ सहायतावाक जरायुकी उत्तलजाने कृपा करता है।
वमन द्वारा रक्त-पुष्पके निकलनेका पथ गिराएँ घोर प्रसूत
हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं। किन्तु इस समय जरा-
युकी सङ्कोचनक्रियाके दृष्टात् सन्देह ही जाननेसे जो वमन
होता है, उससे थोड़ी ही देर बाद शरीर उष्ण हो जाता
है, नाड़ो तेजसे चलने लगती है, जो भी मँसो हो जाती
है घोर स्वरकी प्रकीर्ण पा जाता है। इस समय वमिद्वेग-
की दायमें दवानेसे जरायुमें दर्द होने लगता है।

जब दूसरी अवस्था अधिक काल तक रहती है, तब
प्रसूति ज्ञान हो जाती है घोर मसिकटमें सङ्कोच हो जाने
से उसे सन्तान घोर भींद पा जाती है। कभी कभी व्यथा
के विरामके समय वह विकल हो जाती है। इस
प्रकारकी निद्रा में किसी प्रकारका लर नहीं रहता, यरम्
उसमें बहाव दूर हो जाती है। कलता; यदि व्यथा ठहर
ठहर कर नहीं होतो, तो प्रसूतिजा गुच्छटेग घोर योनि
सत विस्त हो जाती, इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

गुच्छटेग घोर भगदर उपायोप्य प्रसारित हो जाने-
से जरायुको सङ्कोचन-क्रिया दूरी हो जाती है। पश्चात्
एकता पक्षी तरङ्ग पूरा होते न होते दूरी कीया पर्व-
जातो है। इससे सभी पति बन्धक पतिज्ञान हो कर

सहजनीय यातनाके समय मृत्प मन्तक दृष्टात् योनिसे
निकल पड़ता है। थोड़ी देर बाद एक दूसरी व्यथाके
उपस्थित होनेसे हो शरीर ताड़ित हो जाता है घोर
उसके साथ शिशु बाहर निकल पाता है। इसमें सन्तुष्ट-
रूपसे यातनाकी गानि हो जानेसे प्रसूति पतिवैधनीय
स्वाच्छन्द घोर स्वास्थ पशुभव कातो है। इस समय
प्रसूतिके पेटके ऊपर हाथ रखनेसे ऐसा मान्य दृष्टता
है कि जरायु पछलेसे अधिक सङ्कोचित हो गई है।
इस समय पेटके ऊपरका सन्तान मान दीख पड़ता है।

२५ अवस्था।—इस समय जरायुकुसुम दृढक, हो
कर निर्गत हो जाता है। किसी किसी प्रसूतिसे व्यथाके
समय जो सन्तान भूमिष्ठ होती है, उससे साथ कुसुम
भी निकल पाता है। किन्तु यह पक्षमर जरायु वा
योनिमें ही जमा रहता है। पथवा निकलने पर भी
उसका कुछ पंग पावक रहता है। पीछे थोड़े जरायुकी
सङ्कोचनक्रियासे ही, थोड़े समय के साथ साथ ही पथवा
थोड़ा थोड़ा पथवनेसे ही, वह फल एकबारगी बाहर
निकल पाता है।

सन्तानके भूमिष्ठ होनेमें जितना समय लगता है
घोर उसमें प्रसूति जितनी ज्ञान हो जाती है, गर्भ-
कुसुम-विक्षारक व्यथा भी उसी परिमाणसे दूरी करके
होती है। पक्षमर देखा जाना है, कि सन्तान भूमिष्ठ
होनेके २-३० मिमट बाद ही फल बाहर निकल पाता
है। स्वाभाविक प्रसवमें १२ घण्टेके भीतर फलजा निश्च-
लना उचित है। यदि इससे भी घोर अधिक विराम हो
जाय, तो उसे सङ्कोचनक समझना चाहिये।

स्वाभाविक प्रसवमें सहायताकी आवश्यकता होती है,
इस कारण पक्षमें सर्वत्र मन्कार है, किन्तु सभी प्रसव-
कार्यको अपनेक उचित तथा समेक विधियोंके पालनकार
हो जानेसे वह सन्तानिकी सम्पूजता समझी गई है। इस
प्रसव विषयमें धैर्य घोर सहिष्णुता हो सङ्कोचक प्रदान
करनी है। सुतरां स्वाभाविक प्रसवके समय व्यद हो कर
कार्य करनेमें कुशल होनेकी सहायता रहनी है। दिन-
के समय प्रसूति यदि अधिक काल तक पीथे, तो वह
ज्ञान घोर पथव हो जाती है। इस कारण प्रथम अवस्था-
में क्रमागत प्रसवस्थायी दर रहना उचित नहीं। सुतरां

जैसे कभी बैठना, कभी खड़ा खड़ा घूमना और कभी घंटा काम काज भी करना चाहिये।

प्रथम अवस्थामें प्रवृत्तिको नामें देना जानिकारक नहीं है, परं उसमें आमागम्य पदमें आयेमें सब कर विनिष्कल देना है। इस अवस्थाके जीवमें जतीको प्रथित है कि वह प्रयोज्ययोगी गच्छा प्रवृत्त करे और लोगके लक्षर नितम्ब रखनेको जगह पर सुनायम समझा घयवा एक प्रकारका तेनाद्र-पाच्छादन बिछा दे। पीछे उसने खपर कम्बल और कम्बलके लपर एक दूसरा कपडा, हाट सबके लपरमें एक कपड़ेको चार पांच तब करके नितम्बको मोचे रखना प्रथित है। पीछे प्रवृत्तिको उसको लपर सुना देना चाहिये और उसको परिधि यदाको खोल कर घयवा लपरकी ओर कुछ खींच कर एक बड़ी चादरमें समस्त बदनको ढक देना चाहिये। प्रवृत्ति शय्या पर बाईं करबट में कर मोये। इस देशमें प्रवृत्ति चक्रसर बैठ कर जो प्रथम करती है। पूर्व समयमें गुरोवर्गें भी यही प्रथा थी। चौमदेशमें और इङ्गलेण्डके कामकाज नामक प्रदेशमें प्रवृत्ति घुटना टेक कर बैठती है। जाम्म और जर्मनीमें कई जगह बेंचिन ही कर मो जाती है। किन्तु इन सबकी पयिवा बाईं करबट दे कर सोना ही चल्ता है। इस अवस्थामें दोनों आंगुल बीच एक तकिया रखनेकी प्रवृत्तिकी गमति है। अर्थात् माय माय कुत्तल उदगित होती है, इस कारण प्रवृत्ति के पक्षप्रथनके लिये एक चादरमें पच्छी तरह लपेट दे कर समके एक होरकी जिस एक स्थानमें बांध देना चाहिये और दूसरे होरकी समके हाथमें लगा देना चाहिये। यदि ऐसा नो नो करे, तो किसी दूसरेका हाथ पकड़ कर कुत्तल किया करे, इसमें बहुत सुविधा होती है। भूचमस्तकके गुच्छदेशमें दब जानमें पड़ने प्रवृत्ति बाध बोधमें यदि उठ बैठे, तो कोई हानि नहीं होती।

चक्रमा द्वितीय अवस्थाके आरम्भमें जलकीय फट जाता है। किन्तु समसिपम यदि घुट्टा हो, तो भूचमस्तकके दाहिनेकोटरमें धाममें भी तथा कभी कभी उसमें निगल होकर समय तक भी बह करता नहीं है। इस भूचमस्तकके कोटरके मध्य ही कर जाद्विज कोटमें

बहुत देर लगती है। इसी अवस्थामें आंगुली मही-चमक्रियाके समय जब जलकीय स्वीत और तिलक गोल हो जाय तब एक पक्ष नि दारा जसे निर कर दे-ने को लक्षरकरमलिया गिर रहना है। इस समय प्रवृत्तिको यदि कुछ गरमी मान्यम पड़े तो शय्या परमें कम्बलदि पचा मछाको चमय कर जने शीतलक-मिवन करानी चाहिये। भूच सममें पर दुष्प्रादि दे रहने है।

भूचमस्तकके गुच्छदेशमें दब जानमें निगमे उच्च स्थान उठाव विधीन नो हो जाय और तब सामनेकी ओर चालित हो, इसके लिये धातो एक कम्बलकी धाड़ तब कर उसमें ध्याके समय भूचमस्तककी सामनेकी ओर धीरे धीरे ठेले। समस्त जब भगदार पर पर्वच जाय, तब योनिदार पर पछाहागके समके लक्षरमें खींच कर न लावे, बल्कि उये सामनेकी ओर ओर भी ठेक दे। नवीं तो गुच्छदेशमें विदोष ही जानैको मथावना रहती है। इस समय धातोको चाहिये कि वह दाहिने पक्षकी दो चंगलियोंकी प्रवृत्तिके मलधारमें सुनेह कर भूचके मलधारको बाहर और सामनेकी ओर गतोंक बिदनाके माय माय ठेक देवे। ऐसा करनेमें गुच्छदेश (वेगिनियम)को रक्षा होती है, और भूच भी गीम ही भूमि हो जाता है।

मलधार बाहर होनेके बाद यदि क्लथ निरुद्धमें विनम्ब देवे, तो धातो परमें एक या दो चंगलोंकी निध-के दोनों कक्षोंमें लगा कर खींचे और मलधारको ध सो गया। और दूसरी तो बधा हो, इस प्रवृत्तिके घंटेन खपर जाय रख कर आंगुली ओरमें पकड़े। इसमें दो कल निरुद्ध है, जैसे—भूचका पचमिटाग निरुद्धमें बाट कलको भी समके माय माय निरुद्धमें मथावना रहती है और अरागुमें पछि विविधकाय भी नवीं हो गच्छा।

मलान स्वीको भूमिष्ठ हो, शीघ्री जगहे गुच्छमें चंगलो दाग छेद निरुद्धकर बाहर छेक देवे, तब समान नीरोग होने पर हो रहती। इस समय स्थाय पछाहागकी यदि पच्छा तरह बहने देवे, तो पक्षमें नाकीको बाट देवे। पीछे पक्षानेक बादि करम खपड़ने उच्च निरुद्ध

टक कर धाखीके घाम मगा दे। इधर धाखी प्रसुतिके पेटके लपर हाथ रख कर यह देखे, कि पेटमें दूधरी समान हो नही है। यदि समान न हो, तो उसी समय पेटो बन्धनसे कमरको कुछ जोरसे बांध दे। किन्तु कोई कोई कहते हैं, कि जब तक अपरिमित रक्तस्राव न हो तब तक पेटो बन्धनको व्यवहार करना अवश्याक है। किन्तु इसका व्यवहार करनेसे जरायु संकुचित होर पचन भावमें एक स्थान पर रुक सकती है। उठर-का मोचितपत्रं होर पेशी मोघही पड़नेके जैसा व्यामा-निक पचव्याको प्राम होती है। इस रोगकी विशेषतः रक्तस्रावकी श्रियोके पेट जटके हुए देखे जाते हैं। इसका कारण यह है कि ये प्रसवके बाद पेटो-बन्धनको व्यवहार नहीं करतो।

द्वितीय धाखीगण समान भूमिष्ठ होनेके बाद ही फूलको याहर खींच लेतो है। उसका विग्रहण है कि ऐसा नहीं करनेसे फूल पीछे नही निकलता और इससे विपरीत फल होता है।

प्रसवके कुछ घण्टोंके बाद प्रसुतिको शारीरिक पचव्याका विषय अनुसन्धान कर देगनेसे यह ज्ञेय प्रसवकालीन चायामने लपर पारोप नहीं किया जाता, मन-मुटाटिके विषयमें पनेक काव्य देखे जाते हैं, नूतन शक्ति-मारक यन्त्रकी क्रिया पारम्भ होती है। जनेन्द्रिय-छायु रक्त-परिचालक यन्त्रकी क्रियासे सम्बन्धमें भी पनेक परिवर्तन भजर पाते हैं।

गतिरक्त और जरायुकी अवस्था—द्वितीय चतु, मन्त्रिण, किंफुका व्याम प्रवास होर परिचालकयन्त्रकी क्रिया-का व्यतिक्रम, मन-मुटाटि शारीरिक पचमर समान भावान्तर, पचमवस्था, दोषल्य पादि लक्षण देखे जाते हैं। ये लक्षण मन्त्रिण होर जरायुके प्रसवजनित पचव्या-न्त्रके फलमात्र हैं। शरीरके रक्तपरिचालन होर निग्रहस प्रवास कार्यके पचव्यान्त्रका कारण किमन प्रसव-कालीन शारीरिक परिवर्तन होर मानसिक पीड़ा है।

जनेन्द्रियकी अवस्था।—संकोचक क्रिया दाग भरायु होर होर रतनी दाटी हो जाती है, कि प्रसव होनेके बाद भी उसका पायतन सद्योजात शिशुके मध्यकक्ष परावर हो जाता है। इससे जरायुकोटर भी क्रमशः

संकीर्ण होर सुप्त हो जाता है, वहीमे फिर रक्तस्राव नहीं हो सकता। उसकी समी घमनियता पायतन क्रमशः क्षाम हो जाता है। पीछे जरायु होर भी संकुचित हो कर ८-८ दिनोंके भीतर मन्त्रिणकोटरमें समावेश होनेमें योग्य हो जाती है। दूसरे समाहके बाद जरायु फिरसे स्वाभाविक पर्याप्त गर्भकी पूर्वतन पचव्याकी भाँति हो जाती है।

प्रसवजनित जरायुकी संकोचन-क्रिया-जनित व्यामा-लमिन्ना पर्याप्त जमने कई बार प्रसव किया है उसकी व्यामा जितनी कष्टदायक होतो है, प्रथम प्रसुतिकी उनको नहीं होती। चक्रमर यह व्यामा प्रसवों पाध घण्टोंके बाद हो होती है और २-४ घण्टों तक रहती है।

स्तनदुग्ध।—पहले प्रसुतिके स्तनमें विम दूधका भण्डार होता है यह प्रथमतः जन्मवत् रहता है। उसका वर्ष कुछ पोला मानस्य पहता है। इसके पीछे साथ ही जन्म प्रथम शिशुका मनोभूत विस्त पानमे निश्चय पड़ता है। इस कारण समान भूमिष्ठ होनेके बाद प्रसुतिका स्तन उसे पिलाता चाहिए। क्योंकि इससे विमानसे पीछे पड़नेके तेज द्वारा शिशुकी पान परित्पार करनेकी पावश्यकता नहीं रहती। प्रसवके २४ घण्टे बाद दोनों स्तनोंमें तादृश उत्पन्न हो कर शीत हो जाता है। पीछे दूधका भण्डार हीमे जमता है। बाद जितनी बार प्रसव होता है उनको बार भूमिष्ठ शिशुकी पानोपयुक्त दुग्ध मिलता है।

शुद्धिदायक शारीरिक अवस्था।—मन्त्रिण होर जरायुकी पोड़ाकी दृष्टान्तके लिए पचव्याकी उनको पाव-ग्रकता नहीं। शरीरको निज्जन होर विमन पचव्याके स्थानमें शारीरिक विग्रहण होर मानसिक शान्तिसे श्रुता चाहिए। स्वास्थ्यवर्धन करने पर उद्यम जन दूध होर रास-की सिवा कर उससे प्रतिदिन दो बार करके पानि माक करने चाहिए। ऐसा करनेसे दो फल निश्चलते हैं, एक तो उस स्थानकी व्यामा होर ज्वरना बन्द हो जानो है और दूसरा यानि ज्वरदोमे महुचित हो कर स्वाभाविक पचव्याकी प्राप्ति होती है।

प्रसुतिके सुमानिका तापयं यह है कि प्रसवे जरायु प्रकृत स्थानमे निश्चित नहीं हो सकती। सुना रक्त-स्राव भी होर होर बन्द हो जाता है।

नष्ट हो जाती है और कई दिन बाद वह मृत सन्तान प्रसूत होती है। ऐसी जगह पर चकान प्रसव कराना उचित है। डाक्टर डैनमेनने ऐसी जगह पर चकान प्रसव करा कर सन्तानको बचा लिया था।

गर्भसम्बन्धीय किसी किसी पोषाहमें चकान प्रसव करना आवश्यक है। कोई कोई गर्भिणी इतनी उलटो करती है, कि खाना प्यास पदार्थ कुछ भी पेटमें रहने नहीं पाता और किसी पोषधमें भी उसकी शक्ति नहीं होती। इसमें गर्भिणी मरने मरने पर ही जाती है। ऐसी अवस्थामें चकान प्रसव कराना ही आवश्यक है।

किसी किसी स्त्रीके दोनो पैरमें सूजन पड़ जानेसे वह धीरे धीरे बढ़ती जाती है, जसोदरो भी हो जाती है। ऐसी अवस्थामें चकान प्रसव विधेय है।

गर्भाशयमें भ्रूणका रक्तपात होनेसे गर्भाशय वा चकानप्रसव कराना लफ़ो है। फलतः ऐसी घटनासे प्रायः गर्भस्थ भ्रूण पक्षी ही नष्ट हो जाता है।

चकान प्रसवमें गर्भिणीका पेट विमर्दन करनेसे और उसे उष्ण जलमें डिठानेसे प्रसववेदना को मरुतो है। पच रहती रहने चारों ओरसे एक इंच तक घमनियन भित्रीओ घनन कर देनेसे प्रसव आसरे पाप होने लगती है। फलतः स्वाभाविक प्रसव वेदनामें घमनियन भित्री इसी प्रकार विद्युत हो जाती है। प्रसव वेदनाके और भी माना प्रकारके उपाय हैं, पर विस्तार हो जानेके भयसे उन सबका उल्लेख नहीं किया गया।

धात्रीपद, पलकपुन (सं० ली०) गुह्यपुन ।

धात्रं विहा (सं० ली०) धात्रेयी स्वायं कनू टाप, पूर्व अश्वय । १ धात्री, धाय, दाई । २ धामनकी, धावना ।

धात्रेयी (सं० ली०) धात्रा चयत्वं लीं स्वायं टक्, वा औप । १ धात्रीका स्त्री चयत् । २ धात्री, धाय, दाई ।

धात्रादि (सं० पु०) धात्री पादि यण्य । मूलकपरोक्त चोपधमेद । इसकी प्रसूत-प्रपात्री—धात्री, धामनकी, दावा, भूमिकुष्माण्ड, यष्टिमधु और मोहुर प्रत्येकके २ तोमके पाध सेर जलमें डल कर उखाओ। जब पाध पाप पानो बच जाय तो उसे नीचे लतार लो। ठंढा होने पर सममें पाध तोना चीनी डाल दो। इससे स्थल दर-मिसे मूलकपरोक्त जाता रहता है। (नैषधर०)

इसके दो मीट देखे जाते हैं, बड़े धात्रादिकी प्रसूत प्रपात्री इस तरह है—धात्री, दावा, यष्टिमधु, भूमिकुष्माण्ड, मोहुर, कुगमूल, उल्बेसुमून और हरीन्दी प्रत्येकके २ मांके पाध सेर जलमें उखाओ। जब पाध पाप जल बच रहे, तो उसे नीचे लतार लो। ठंढा होने पर पाध तोना चीनी डाल कर मंथन करनेसे मूलकपरो और सममें उपाय दावादि दूर हो जाते हैं।

धात्रयं (सं० पु०) धातुने निकसनेवासे चयं, पुन और पक्षमा चयं ।

धादर—यष्टिम भारतवर्षकी एक नदी। यह विश्व त्रयीकी पश्चिमीय पर्वतमालामें निकल उत्तर-पूर्वकी ओर १५ मील भिनापुर तक बसी गई है। भिनापुरमें इस पर एक पत्थरका पुन है। इसमें कुछ नीचे दक्षिण पार्श्वमें विष्णुमित्री नदी इसमें जा मिली है। यह नदी और भी १५ मील जा कर काम्बे उपमागरमें गिरती है।

धान (सं० ली०) धाभावे श्चुट्, १ धारण । २ पोषण । धाधारं श्चुट्, ३ धारणाधार ।

धान (हिं० पु०) दण्य तातिका एक पोषा । धाय देवा ।

धानक (सं० ली०) धन्याक एयोदरादिस्तु मधुः । १-

धन्याक, धनिया । २ एक रसोका पोषाई भाग ।

धानक (हिं० पु०) १ धनुर्वातो, तीरन्दाज, धनुष चलाने-वाला ।

धानकी (हिं० पु०) १ धनुर्वर, धनुर्वातो । २ कामदेव ।

धानगोत्र—मध्य भारतका एक सुद्र शण्य । यहांके पश्चिमी डाकुर कहलाते हैं। ये सिन्धिया राज्यमें १८०० ई० और बोलकरने ५१ ई० वार्षिक पाने हैं। छटिगाराजका वार्षिक एक हजार रुपये करमें देने पड़ते हैं।

धानगवैन—ब्राह्मणके पत्नीके उद्धारोक्षण जिलेका एक गिरिपथ । यह छटाटीका माधोन राज्ता रवी पय की कर गया है। यमो इस राह को करगाड़ी जानेकी सुविधा नहीं है।

धानमई (सं० पु०) एक प्रकारका धान ।

धानपल (हिं० पु०) १ एक प्रकारकी रथम जो विशाहने कुछ री पक्षी होती है। इसमें दरपसको पोरेमें जमा-के घर धान और चन्दो मीओ जाते हैं। इस रथमके बाद दिवाह-सम्बन्ध प्रायः पूर्ण रूपसे निमित्त हो जाता है। (दि०) २ दुबला पनमा, मासुह ।



मिगूँके एक ५००० वर्षोंके पुगानन पकथिरनम्ममें सोदिन चित्र ।

पगो हम लोगोंके देगमें जिस तरह बैल द्वारा खेती होती है, उसी तरह ५००० वर्ष पहले भी मिश्र देगमें होती थी । चित्र छोटे स्फट मानूस की जायगा । यदि प्राचीन मिश्रवासी धान्यकी मशीनकारिता जान कर हमें भारनवर्षसे से गये हों, तो यहाँकी खविमणानी मिश्रमें प्रवर्तित हुई हो, यह असंभव नहीं है ।

हम लोगोंके चट्टपल मूमन द्वारा धान कूट कर व्यवहार करनेका उल्लेख पाया है । ५००० वर्ष पहले मिश्रवासी भी उसी तरह चट्टपल मूमन द्वारा धान कूटकर तैयार करते थे । विषयके प्राचीनतम चित्रमें उसका परिचय है (१) ।

पति प्राचीनकालसे धान्य भारतवासीका प्रधान धन गिना जा रहा है । समुच्चितामें धान्यके विषयमें जो कुछ लिखा है, सब नीचे देते हैं—

जिस लैइके पास धान्य धन पधिव है वह दूसरेकी पदिका खेच है (२।१५५) । भूमिकी लयरता और कर्षणकार्यके तात्पर्यानुसार धान्यादि श्रम्यका दण्ड, पाठवाँ या बारहवाँ भाग राजाका होना चाहिये (०।११०) । धान्य कर्ष देनेसे पीछे उसका पाँचगुना से सफते हैं, उसमें पधिव नहीं (८।१८१) । चित्रम धान्य नुरागमें लंब हवये और प्रगुन किया हुआ धान्य नुरागमें द्रष्टव्यमीका सम्पर्कीय होनेसे ५० हवये और पम स्पर्कीय होनेसे पने १०० हवये लम्बाई करना चाहिये । (८।११०-११) । ब्राह्मण लोग पाथिर मूइकी धान्यका पुगान या धान पानेकी देते थे (१०।१२३) । भारतवासीके निकट धान जेमा गया है और राजा केसा भाग सेते हैं, ईसा त्रयसे २३५६ वर्ष पहले चीनमें भी यैसी ही प्रथा थी ।

मानवीके खाने मायक जितने प्रकारके पनाज हैं उनमेंसे धान ही सबसे खेच है और प्राचीनकालसे व्यवहार होता जा रहा है । धान्यके प्राय सभी देशोंमें विमेषतः ब्रह्मण और विहारमें धान्य ही प्रधान पदार्थ है । मन्द्राज और तम्रदेगमें भी धानके बिना काम नहीं चलता ।

धान्यकी भूमि चपल करनेसे भीतरमें जो बीज या मय्य रहता है, उसे संस्तरमें तण्डुल कहते हैं । यह तण्डुल और धान्य विभिन्न देगमें विभिन्न नामसे प्रसिद्ध है, कुछके नाम नीचे दिये जाते हैं ।

धान्यका नाम । तण्डुलका नाम । माषा या वैतका नाम ।

धान्य, सोदि तण्डुल संस्कृत ।

धान पायन } हिन्दी ।
पाडर }

धान पाठम } ब्रह्मण ।
पाम }

धान पावम } उडिया ।
पावना }

उडिया किवा गुनिया ।

उरि, उडि ... मद्राज ।

मो ... मारी ।

देरन, तानि ... काशी, दिगावर ।

धान, से, शानियाल ... भद्र ।

धानो ... दजारा ।

धान ... पेमावर, पन्नाव ।

गारि, गान ... राजपूताना ।

गारि ... तिभू ।

.. तण्डुल मारवार ।

.. तण्डुल मद्राज ।

परोपि, धानो मेलि, मेल तादिस ।

उरु, उरु ... निम निमगु ।

पाडी ... चपेटे ।

(१) See Willingham's Ancient Egyptians, (New Ed.) Vol. II P 166.

(२) *Oryza coarctata*—इस खेसीकी वना पक्षययि ज्वियुक्त गमोर जनजात धानाकी उत्पत्ति हुई है। इसका दाना कुछ मोटा होता है।

(३) *Oryza bengalensis*—डा: घाटने इस खेसीमें भद्रान्तर्गत अमास्यानोंके सब प्रकारके जनना की है। यह भील और दोषीके किनारे बापले पाया जाता है। भारतवर्षमें 'छड़ि' और 'अरु' नामके जिनमें प्रकार-के धान होते हैं वे इसी खेसीके अन्तर्गत हैं। इसमें खेसीके ज्विके प्रभावे कई प्रकारके पाचन भी पायनकी तरह छवि पाते हैं। किन्तु जल छविके साथ साथ इसको भी छवि है। इसका दाना ज्वियुक्त गमोर की तरह परिपक्व, परिपुष्ट और समान आकारका होता है।

(४) *Oryza abunens*—यह सम्भवतः धानाकी पत्ति प्रादिस पक्षययाका मनुष्य है। इसका पत्ती जो आकार पाया जाता है उसमें भी छोटे आकारका गम्य पत्ति प्राचीनकालमें सर्वमान था, ऐसा अनुमान किया जाता है। इसमें सर्वाधिक पक्षिक जड़न नहीं पड़ती। पक्षिकोंके ऊपर और उच्चभूमिमें जो सब छड़ि रोया धाना उत्पन्न होता है, वह इसी धानमें उत्पन्न समझा जाता है। इसका दाना कुछ काँची रंगका होता है। माधुर्यता: यही काला धान नामसे प्रसिद्ध है।

इसमें सब जंगली धानमें पक्षिकोंका पाचन, पायन और रोया धानाको उत्पत्ति कथित हुई है यही, किन्तु यही धानाकी प्रादिसपक्षयया इनमें किछीमें समित नहीं होती।

इतिहास पक्षयया—ज्वियुक्त धानाको उत्पत्ति तत्वाङ्ग-साधे खेसीमें करना बड़ा दुर्लभ है। ज्विके समय भदेके ही इसका खेसीमें किया जा सकता है। आधा-रपत्ता इसमें सुख भेद तोन माने जाते हैं—(१) पायन (पक्षययी), जो जेठ आषाढ़में बोया जाता और पक्षययी पूरमें कटता है। (२) पाचन (भदर), जो वैशाख जेठमें बोया जाता और भाद्र कुशरमें कटता है, और (३) बोरी, जो पूर माघमें बोया जाता और वैशाख जेठमें कटता है। जो धान एक स्थानसे उगाकर दूसरे स्थान पर लगा कर पैदा किया जाता है, उसे जड़न कहते हैं। खेसिक यह जड़ने में बार होता

है। यों तो भिल भिलस्थानोंमें धानको बोपारे पूरने से कर आषाढ़ तक होती है और कटार जेठमें पक्षययी मज, पर उत्तरीय भारतमें पक्षययी धान आषाढ़ माघमें बोया जाता है। माघरप धान तो भाद्र कुशर तक तैयार हो जाता है, पर जड़न पक्षययी कटता है।

आषाढ़की जमीन—भारतमें विभिन्न: ब्रह्मदेशमें 'आयन' की सीमाका प्रधान पक्षययी है। मद्रास और मद्रासमें भी यही हाल है। इसमें इन लोग देशमें धान की खेती की प्रधान है। भारतवर्षमें ब्रह्मदेश छोड़ कर अन्यदेशोंमें प्रायः निम्नलिखित परिमित जमीनमें धानको खेती होती है—

मद्रास	१२८५०५ एकड़
बम्बई (सिन्धु समित)	२२०४८८८८ "
गुजरात	४२१८८२१ "
अयोध्या	४२८२१८ "
मध्यदेश	१०८५५५५ "
उत्तरप्रदेश	११२१८१५ "
दक्षिणप्रदेश	४०५०५०५ "
आसाम	१२११८८१ "
पञ्जाब	४५५५ "
पंजाबी मीवार	७५८ "
सुग	७४४८८ "
बेकर	१८८४० "
मानपुर (मध्यभारत)	८० "

कुल २४८१८०५ एकड़ या ८०४१२४८ बोया जमीनमें धानकी खेती होती है। मद्रास आसामके धान पक्षययी समित जाते हैं। पक्षययी जातिकी बढ़िया आसाम प्रायः जड़नसे ही होती है। धान या आसामके जड़न पक्षिक भेद है। सन् १८७२ में अजायब घरमें हलनेके निये जो आसामका खेसक दूपा था, उसमें पक्षययी प्रकारके आसाम बतलाय गए थे। इस खेसका जो न मान कर आधी तिहाई भी से, तो भी बहुत भेद होते हैं। इसीसे अजायब आसामोंमें आसामोंके परिचित कटारा, राममोग, रानीकातर, सुगपीधान, शीतल, सलुहिन, कनकजोरा आदि भी पक्षययी आसाम समित जाते हैं। आषाढ़ पक्षययी भी बहुत प्रकारके होते हैं

परि	मज्जयासन ।
माय	धान, तमान	ग्रह्य ।
शान, पकड़े	विह्वल ।
भोज, को	जापान ।
तुगा	कोचीन-चीन ।
ताव	मो	चीन ।
पाडी	ग्रम	भूमय ।
ग्रमी	हाना	यवहीय ।
पाडी (Paddy)		इङ्ग्लैण्ड ।
अररु (Arruz)		स्पेन ।
ब्रिज (Brinj)	फार्मिया ।
पकस, रम, रुज		मिस्र ।
विरज	पारस्य ।
ब्रिजडा	...	पलु (कावुची)

तण्डुल और जल दे कर धर्ममें पाक करनेमें गान्धे योग्य एक प्रकारकी वस्तु धन जाती है जिसे संस्कृतमें 'धन', तेलगुमें 'मात्ता', मलयामें 'नामसी' ब्रह्ममें 'तामनी' ब्रह्मण और उत्तर भारतमें प्रायः सभी जगह 'भात' कहते हैं ।

जिनको विस्तृत खेतों नहीं होते वा जो पापमें पाप उत्पन्न होता है, उस धान्यजातीय लक्ष्मी जड़नी धान कहते हैं । संस्कृतमें मोवार और ग्रामा दो प्रकार के धान्यका नाम पाया जाता है । मोवार धान्य 'निव-यार' 'निवारो' पाटि शब्दोंसे गायामें प्रचलित है और ग्रामा धान्य मध्यमः काश्मीरमें 'तामा' कहलाता है । पयोधा प्रदेशमें "मुष्नी" नामक एक प्रकारका जड़नी धान मिलता है । यह संस्कृत 'मुष्' और धान्य भाषा-को 'मू' नामक लक्ष्मीका मूल्य है वा नहीं, कह नहीं सकते । उत्तर भारतमें जड़नी धानकी वृद्धि और दक्षिण भारतमें निवारो कहते हैं ।

लघुजात धान्य की साधारणतः 'धान्य' वा धान कहाता है । इसी धान्यकी तामिन भाषामें 'गान्धि' कहते हैं । संस्कृतमें भी 'गान्धि' शब्दका प्रयोग है । संस्कृत 'गान्धि' शब्दसे—ग्रीष्मिद, ग्रीष्मिद ऐसा अर्थ पाया जाता है । मान्यम पड़ता है कि संस्कृत भाषामें 'गान्धि' शब्दसे लघुजात धान्य (Cultivated rice) और

'मोवार' शब्दसे वन्य धान्य (wild rice) कहनेमें काम चल सकता है । भाषासमूह से कर पञ्चाश तक मोर जगह जाली धान्यमें ऐतिहासिक वा धार्मिक धान का बोध होता है । लघुजात धानमें ऐतिहासिक धान वृद्धि उत्पन्न है, यही कारण है कि गान्धि शब्दसे वन्य उमीका बोध होता है । इस लघुजात धान्यका संस्कृत नाम वैज्ञानिक नाम *Oryza sativa* है ।

वन्य धान्य—धानकी खेती भारतवर्षमें सब जगह होती है । श्रीलङ्काको जलामूमिमें धान स्वाभाविक जंगली होता है । भारतमें मद्रास, उड्डिया, बङ्गाल, पट्टालममें भी कर पञ्चाशकाल और कोचीन-चीन तक इस प्रकारका जंगली धान बहुत उत्पन्न है । इसीसे बहुतोंका अनुमान है, कि श्रीलङ्काका ही धान्यको पाटि जलामूमि है । इसी स्थानसे यह क्रमशः उत्तर और दक्षिणमें फैल गया है । जंगली धान वन्य स्थानों में पाया और कहीं नहीं होता, जो नहीं । जैनगिरि, गुल्फ प्रदेश, पञ्चाश मध्यभारत राजपुताना वा बाबूपुर, लोटा गागपुर, धामास, वेतुविधान, पकगामिधान, पारस्य पाटि स्थानोंमें भी यह कम नहीं उत्पन्न है । कोई कोई उद्भिज्जतत्ववित् वन्य धान्य और लघुजात धान्यकी विभक्तिकुल स्वतन्त्र खेतीके मानते हैं । डाक्टर वाटने अपने प्रकाशके वन्य धान्यकी परीक्षा कर लक्ष्मी प्रमाणतः चार भाषाओंमें विभक्त किया है उनका कहना है कि इन चार खेतीयोंके साथ लघुजात धान्यका जोड़ा बहुत फर्क पड़ता है ।

(१) *Oryza rufipogon*—पकीगढ़, महाराष्ट्र पाटिसे इस वन्य धान्यका नमूना संस्कृतित और परीक्षित हुआ है । डाः वाटने उद्भिज्ज-मात्तागुवायी लक्ष्मी पाटि बिना कर स्थिर किया है, कि सम्भवतः यही प्रायः सब प्रकारके लक्ष्मी धान्यके उत्पादक धान्यकी पाटि-सावधता है । बाह्यजति देव कर मान्यम पड़ता है कि इसको खेतमें कम धान्यकी जड़त पड़ती है । डाः वाटने और भी कहा है कि लघुजात धान्य इस मूल्यकी परिपुष्टि और खेती की कर भी, मान्यम होता है, कि मद्रास दाना "लोटा धामास" उत्पन्न हुई है । पूर्वब्रह्मण्ड नविगन्ध, लघुगन्ध पाटि स्थानोंमें नदीके किनारे यह वन्य धान्य स्वाभाविक उत्पन्न होता है ।

जैसे - बमरो, दुही, माडी, सरया, रामजयाइन, 'केला-मार, तुलसीमञ्जरी, लटजीरा, केमोर, कजरघोर, कृष्ण-भोग इत्यादि ।

धान्यका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है । धान पांच प्रकारका है—शालिधान्य, श्लोहिधान्य, शक-धान्य, मिथीधान्य और सुद्रधान्य । इनमेंसे रत्नशालि प्रभृतिको श्लोहिधान्य, यव प्रभृतिको शून्धधान्य, मूंग प्रभृति को मिथीधान्य और काष्ठनिधान्य-प्रभृतिको सुद्रधान्य या टण कहते हैं ।

शालिधान्यका लक्षण और गुण—जो सब है मलिन धान्य कण्डन और स्तंभवर्ण का होता है, उसे शालि-धान्य कहते हैं ।

शालि-धान्यके नाम—रत्नशालि, कलम, पाण्डुल, शङ्खनाइत, सुगन्धक, कदमक, महाशालि, हूपक, पुष्पा-पङ्क, पुण्डरीक, महिषमम्बक, दोर्घशूक, आसुनक, शायन और लोभपुष्पक आदि करके भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके शालिधान्य हैं ।

शालिधान्यका गुण—मधुर, कषायरस, क्षिप्त, वन-कारक, मनका काठिन्य और अल्पताकारक, लघुपाकी, क्षतिकारक, स्वरप्रसादक, शकवर्धक, शरीरका उपचय-कारक, ईषत् वायु और कफवर्धक, गीतवीर्य, पित्तनाशक और मूत्रवर्धक ।

दधमूजिज्ञात शालिधान्य—कषायरस, लघुपाको, मलमूत्र-निःसारक, रुच्य और कफनाशक । खेत जोत कर धान बुननेमें जो धान उत्पन्न होता है, वह वायु और पित्तनाशक, गुरु, कफ और शूलवर्धक, कषायरस, मनका अल्पताकारक, निधाजनक तथा वनवर्धक माना गया है ।

जो धान बहुत भूमिमें बाढ़में पाप उत्पन्न होता है वह ईषत् क्षिप्त-गुरु, मधुर, कषायरस, पित्तघ्न, कफनाशक, वायु और अग्निवर्धक तथा कटु, विपाक है ।

वापित धान्य अर्थात् एक जगहसे उखाड़ कर जो दूसरी जगह रोपा जाता है, वह मधुर, कषायरस, शक-वर्धक, बलकारक, पित्तघ्न, शकवर्धक, मनका अल्पता-कारक, गुरु और गीतवीर्य होता है ।

जो धान बाढ़में धाप उत्पन्नता है उसे अवापित-

धान्य कहते हैं । अवापित धान्य वापित धान्यकी अपेक्षा अल्प गुणवर्धित होता है ।

रोपितधान्य अर्थात् चवहत्यामें एकवर्धक और पुराना होने पर लघु होता है । पतिरीय धान्य अर्थात् रोपा-धान्यकी उपाड़ कर दूसरी जगह रोपनेमें जो धान्य उत्पन्न होता है वह रोपा धान्यकी अपेक्षा गुणगुरु और लघुपाकी होता है ।

क्षिप्तका शालिधान्यका गुण गीतवीर्य, रुच्य, वन-कारक, पित्तघ्न, कफनाशक, मनरोधक, ईषत् क्षिप्त-मंयुक्त, कषायरस और लघु माना गया है ।

रत्नशालिका गुण—शालिधान्योंमें रत्नशालिधान्य को श्रेष्ठ होता है । यह बलकारक, वर्ष प्रसादक, शक-वर्धक, अग्निकारक, पुटिजनक, और पिशसा, ज्वर, विय, व्रण, श्याम, काम और दाहनाशक है । महाशालि प्रभृति रत्नशालिको अपेक्षा अल्पगुणगुरु होते हैं ।

श्लोहिधान्यका लक्षण और गुण—वर्षाकालसमय धान्यमें जो दाँटने पर सफेद बर्ण का होता और दूरीमें पचता है, उसे श्लोहिधान्य कहते हैं ।

कृष्णवीहि, पाटल, कुङ्कुटाणक, जलमुल्य आदि अनेक प्रकारके श्लोहिधान्य हैं । जिस धान्यकी भूसो और चावल जाना होता है, उसे कृष्णवीहि; जिसका वर्ष पाटलपुष्पके समान होता है, उसे पाटलवीहि; जिस धान्यको पाजनि कुङ्कुरदिम्ब भी होता है, उसे कुङ्कु टा-पङ्क; जिस धान्यका चावल और भूसा कामा होता है, उसे श्यामासुषु और जिस धान्यमें सुषुका वर्ष जातोके समान होता है, उसे जलमुल्य श्लोहि कहते हैं ।

श्लोहिधान्य—मधुर, विपाक, गीतवीर्य, ईषत् अमि-थस्यी, मनरोधक और घटिक धान्यके समान होता है । श्लोहिधान्यमें मध्य क्षणमाँहि की मधमे श्रेष्ठ तथा गुण-वर्धित है ।

घटिक धान्यका नाम, लक्षण और गुण—जिसका पक्ष पेटमें जानेमें ही पक्ष जाता है, उसे घटिधान्य कहते हैं । घटिक, मधुपुष्प, प्रमोदक, सुकुन्द और महाघटिक आदि अनेक प्रकारके घटिक धान्य हैं । रत्न-कीरे कीरे श्लोहिधान्य भी कहते हैं । कृष्ण श्लोहिधान्य-के जो सब लक्षण हैं, वे लक्षण इनमें भी पाये जाते हैं ।

पटिकधानां मधुररस, शीतवीर्यं, मधु, मलरोधक, वातघ्न, पित्तनाशक तथा शान्तिधानाके लैसा गुण माना गया है।

पटिक धानां पटिकाग्रधाना की ये छ गुणयुक्त है। यह मधु, क्षिप्त, त्रिदोषनाशक, मधुररस, मृदुवीर्य, धारक, वनकारक, प्लरनाशक तथा रक्तमांसिके लैसा गुणयुक्त होता है। परंपरा पर पटिक धानांमें इनको अपने आप गुण है।

शूकधाना—यह, शितशूक, निःशूक, पतियव, लोका और स्वपयव ये सब शूक धानाके भेद हैं। शूकधानांमें नि यव श्रेष्ठ है।

यवका गुण—कषाय, मधुर रस, शीतवीर्य, लैसन-गुणयुक्त, मृदु, मधुरीगर्भ तिलके समान हितकारक, कृच्छ्र, शिवाजनक, पानिबर्धक, कटु, विपाक, अनमिष्यन्दी, क्षरप्रसादक, वनकारक, शुद्ध, पच्यमान वायु, और मन यर्धक, वर्षाप्रसादक, शरीरका स्थिरतामप्यादक, पिच्छिन, पच्य कष्टागत रोग, चर्मगत रोग, कफ, पिता, भेट, पोचन, मांस, काम, कदम्बाभ, रक्तदीप और विषामानाशक है। इन सबको अपने आप पतियव पच्यगुणयुक्त माना गया है।

गोधूम शूकधानाके पन्तर्गत है। इसका दूसरा नाम है सुमन। गोधूम तीन प्रकारका होता है—लैसा महागोधूम, यह बड़ा गोधूम कहा जाता है और पचिम प्रदेशमें उत्पन्न होता है। २रा मधुनीनामक, यह कुछ छोटा होता है और मध्यप्रदेशमें उत्पन्नता है। ३रे प्रकारका नाम है नन्दीमुख, यह गुयाबिबोन दोषांशतिका होता है। यह देखी।

महागोधूमका गुण—मधुररस, शीतवीर्य, वातघ्न, पित्तनाशक, शुद्ध, कफजनक, शुक्लवर्धक, वनकारक, क्षिप्त, भन्तसन्धानकारक, क्षारक, भोजोधागुवर्धक, वर्षा, प्रसादक, मणका हितकारक, रुचिजनक, और शरीरका स्थिरतामप्यादक है। गोधूमकी कफजनक शक्ति नूतन गोधूममें है, पुरातनमें नहीं। मधुनी गोधूम शीतवीर्य, क्षिप्त, पित्तनाशक, मधुररस, मधु और शुक्लवर्धक, शरीर का उपचयकारक और सुपच है। नन्दीमुख गोधूम हवी के समान शुष्कदायक है। निम्न विवरण गोधूममें देखी।

शिम्बी धाना—शमोज, शिम्बीज, सुयं पोर वेदन ये सब शिम्बीधानाके नाम हैं। इसका गुण—मधुर, कषाय रस, कृच्छ्र, विपाक, वायुवर्धक, कफघ्न, पित्तनाशक, मन्मूत्ररोधक और शीतवीर्य है। इनमेंसे मूंग पोर मसूरके सिवा अन्य सभी वेदन चाधान-कारक हैं। मंग पोर मसूर विषकुल पाधानकारक नहीं है मो नहीं, पर जई, चनामन वेदनको अपने आप कम है।

मूंग, माय, निष्पाव सुकुन्द, मसूर, पादकी (परधर) कलाय, खेमारो, कुलयो, तिल, बार, पादि शिम्बीधाना-के पन्तर्गत हैं। इनका विवरण वन्दी सब ग्रन्थोंमें देखो।

सुद्रधाना—सुद्रधाना, कुधाना और लघुधाना ये तीन एकाग्र दाचक शब्द हैं। सुद्रधाना इपत्त कृष्ण, कषाय, मधुर रस, कटु, विपाक, मधु, लेपनगुणयुक्त, कृच्छ्र, क्रीड-शोषक, वायुवर्धक, मन्मूत्ररोधक और पित्त, रक्त तथा कफनाशक है। सुद्रधानाके जितने प्रकारके भेद हैं, उनका विवरण नीचे दिया जाता है।

कङ्गुधाना—कङ्गु पोर मियङ्ग, एकपदायक शब्द हैं। यह कृच्छ्र, रक्त, शुक्ल और पीतवर्षके भेदमें चार प्रकारका है। इनमेंसे पीतवर्ष कङ्गु सबसे श्रेष्ठ है। इसका गुण—भन्तसन्धानकारक, वायुवर्धक, शरीरका उप-चयकारक, शुद्ध, कृच्छ्र, कफनाशक, पच्यमान शुक्लवर्धक और शुष्ककर है।

शोनाकि धाना—यह काङ्गि धानाका प्रसिद्धात है और काङ्गिनि के समान शुष्कदायक भी है।

ग्रामाक धाना—शीघ्रक, कृच्छ्र, वायुवर्धक एवं कफ और पित्तनाशक है।

कोद्व धाना—कोद्वक और कोद्वय ये दो छोटी धानाके नाम हैं। इनकोद्वकी उत्पन्न कहते हैं। इनका गुण वायुवर्धक, क्षारक, शीतवीर्य और पित्त तथा कफनाशक है। इनकोद्व उत्पवीर्य, क्षारक तथा पच्यमान वायुवर्धक है।

शादकधाना—इसका दूसरा नाम सरवीज है। इनमें मधुर, कषायरस, कृच्छ्र, रक्तपित्तनाशक, कफघ्न, शीत-वीर्य, मधु, शुक्लवर्धक, तथा वायुका प्रकोपकारक गुण माना गया है।

बंग-वीज—कृच्छ्र, कषायरस, कटु, विपाक, मृदु

शोधक, कफनाशक, वायु और पित्तकारक तथा सारक है।

कुसुमशीज—यह भी शरीर के दो ही कुसुम शीजों के पर्याय है। इसका गुण मधुर, कषायरस, क्षिप्त, रक्तपित्त, कफनाशक, शीतवीर्य, शुष्क, कटु और वायुनाशक है।

गवेषुका—इसमें कटु, मधुररस, क्षयताकारक और कफनाशक गुण हैं।

नीयारका दूसरा नाम प्रधाधिका और लघुनाम है। इसका गुण—शीतवीर्य, धारक, पित्तनाशक तथा कफ और वायुजनक है। यह नाल शीतवीर्य, मधुर, कषाय-रस, मोहित, कफप्र, पित्तनाशक, पच्य, हृद्य, कटु-जनक और लघु है।

नूतन सभी धान्य मधुररस, शुष्क और कफकारक होते हैं। एक वर्ष का पुराना धान क्रमशः चपला गुल्म छोड़ता है, लेकिन मोटा नहीं छोड़ता। जो धान जितना पुराना होता जाता है वह उतना ही चपला होय छोड़ता जाता है लेकिन खव, गोधूम, तिल और माष ये सब नूतन अवस्था में भी विग्रह दितकर होते हैं। पुराना होने पर चपात दो वर्षों कीत जाते पर ये फिर भी रक्त हो जाते हैं। जो मनुष्य सुख है क्योंकि निये नवीन यय गोधूम आदि दितकर है, पणभीजीके निये नहीं।

(भावप्रकाश)

सूतुर्तम धानाका विषय इस प्रकार लिखा है— मोहित, शान्ति, कर्दम, पाण्ड, सुगन्ध, शकुनाङ्ग, पुष्पा-पुष्क, सुपरीक, कायन, मद्धि-मद्धक, हायन, दूयक, महादूयक प्रभृति शान्तिधाना हैं। शान्तिधाना मधुर, शीतवीर्य, मधुपाक, बसकर, पित्तप्र, चक्षुवायु और कफ-कर, क्षिप्त, मलका धार्यताकारक तथा मसरीयक होता है। सब प्रकारके शान्तिधानोंमें मोहित धान ही श्रेष्ठ है। यह दोषप्र, शुष्क और मृदुलिकर, चक्षु और धारके पचने दितकर, चक्षुकर, बसकर, हृद्य, शान्तिनाशक, पणके निये दितकर तथा सब प्रकारके दोषनाशक है।

पटि, काङ्क, सुकुन्द, पोत, प्रमोद, काकलका, कनकपुष्प, मशायदिक, चूर्ण, कुरव और केदार आदि

वाट शीज है। ये रस और पाकमें मधुर, शान्तिधाने पचने शान्तिकर, शुष्कमें प्रायः शान्तिधानके समान है। यह सुटिकर, कफ और शुष्कता हटिकर है। इनमें पाट धान्य ही प्रधान है। पाट धान्य पचात कषायरस विग्रह, चक्षु, श्वेत, क्षिप्त विदोषप्र, शरीरका रक्त और बलवर्धनकर, विपाकमें मधुर, मंघाहो और मोहित धान्यके समान है। दूसरे सभी पाट धान्य उत्तरोत्तर क्रमशः चक्षुगुणविग्रह हैं।

क्षुण्णोहि, शालामुष, नन्दीमुष, गवाक्षक, खरितक, कुज टाण्ड, पारावत, पाटन प्रभृति मोहिधान्य चपात धाना हैं। मोहिधान्य कषाय, मधुर, पाकमें मधुर, चक्षु-रोगकारो और पाट धान्यके समान गुणकारी तथा मलसंघाटक है। मोहि धानोंमें क्षुण्णोहि श्रेष्ठ है। यह चपात कषाय रसविग्रह और लघु होता है। जो सब शान्तिधान्य दक्षभूमिमें उत्पन्न होते हैं, वे लघु-पाक, कषाय, मलसूत्रके संचारी, हृद्य एवं कफनाशक हैं। लघुभूमिजात धान्य ईयत् तिक्त, मधुर, वायु और अनिवर्धक, कफ और पित्तनाशक, कषाय और चपात कटु होता है। केदार धानमें मधुर, हृद्य, बलकारक, पित्तनाशक, ईयत् कषाय, चक्षु मलकारी, शुष्क, कफ और शुष्कवर्धक गुण माना गया है।

शेयातिशेयाधान्य—समुपाक, चतिग्रहगुणकारी, चटाही, दोषनाशक, बसकर एवं मृदुलिकर होता है। जिन सब शान्तिधानोंके मोतरमें चक्षु रक्तता है वे रक्त, मलवर्धनकर और श्रेष्ठजनक होता है।

कुधाना—कीरदूयक, ग्रामा, मोवार, दान्तु, तुवर, भाङ्गो, कोशानक, मियदु, सपुलिका, नन्दीमुष, कुहविन्द, गवेषुका, गद्धक, चपपणी, सुकुन्द, मोक्ष यय पाटि कुधान्यवर्ग हैं। ये चक्षु, मधुर, हृद्य, कटु, पाक, श्रेष्ठ, स्वास्तीर्यक और वायुपित्तने प्रकोपकर हैं। इनमें कोद्वध, मोवार, ग्रामा और शान्तुमें कषाय, मधुर और शीत पित्तका शान्तिकर गुण माना गया है। (दृष्टुं) विशेष विवरण कहीं अब करने देते।

पञ्चपुराणके उत्तर-अष्टमें धान्यका विषय इस प्रकार लिखा है—

एकादशो दिन ब्रह्मवर्णो भवति । तस्यैव नाम पर

धानधेनु (मं० श्लो०) धाना निर्माता धेनुः । दानाय धानानिर्मित धेनु, दानके निये एक कल्पित माय जिसको कल्पना धानको टोरोमें की जाती है । इसका विषय बराहपुराणमें इस प्रकार लिखा है, —

विपुवमश्राप्ति, या कार्तिक मासमें यह धानधेनु दान करना होती है । दानका विधान इस प्रकार लिखा है, यह धानधेनु दान करनेमें सब पाप नाश हो जाते हैं । दम धेनु दान करनेमें जो फल लिखा है, वही फल धानधेनुमें भी है ।

पौंड्र कृष्णाञ्जन प्रयुक्त कर उसे वस्तुको कल्पना और जलोमकी गोबरसे शोध कर वहां सुन्दर यक्षाच्छादन पूर्वक धेनुको कल्पना करते हैं । यह धेनु चोदिन वैदिक मन्त्रसे पूजा जाती है । चार द्रोण धानसे जो धेनु कल्पित होती है, उसे उत्तम धेनु और जो दो द्रोणसे कल्पित होती है उसे मध्यम धेनु कहते हैं । धेनुके चतुर्धांगसे बहड़की कल्पनाकी जाती है । इस कल्पित धानधेनुके सींग सोने और खुद चांदीके होने चाहिये ।

यन्माग सोमेका, नाक चगरको, दांत मुक्ताफले, मुँह घी या मधुका, कान सुन्दर पत्तोंके, घौर ईशके टुकड़ोंके, पूँछ रेशमो पच्छकी घोर चवके साथ साथ तरब तरबके फल घोर रत्नका गर्भ भगा कर उसे खड़ावा, जूनी, हाते चादिके साथ पुष्प काष्ठमें तोन बार प्रदक्षिणपूर्वक दान देनेका विधान है । जो धानधेनु दान करते हैं, उन्हें सब प्रकारके फल मिलते हैं, तथा जो इस श्लोकमें सोमाय पायु घोर पारोप्यता लाभ करते हैं । वस्तुत्तममें वे अर्कयणके निमान पर चढ़ कर चक्षराक्षीमें प्रगमित होते हुए स्वर्गलोककी जाते हैं ।

धातुपचक (मं० श्लो०) धान्यानां पचक ६-तत् । १ मायवकाशोष्ठ गालि, तीहि, शूक, मिथी घोर सुद ये पाँचों प्रकारके धान । २ पतिसार रोगका पाचनमेद । यह पाँचों प्रकारके धान, धेन और धाम आदिको मिला कर बनाया जाता है । इसके सेवन करनेसे धान, शून घोर पतिसार रोग दूर हो जाते हैं । ३ पाचन बोधमेद, यह पाचक बोधमेद । यह धनिया, सीक, नायरमोया वनगिरी घोर क्षायमाया प्रत्येक दो तोमिकी पाच मेद जलमें बोटते हैं । धान पाच पानी रह जाने पर उसे

भीषे उत्तार लेते हैं । पीछे ठंडा होने पर इसमें चाय तोना मधु मिला देते हैं । इसके सेवन करनेसे पान्मासिक रोग घोर घटरगुण आदि रोग पारोप्य हो जाते हैं । ४ घी का नाम धातुपचक है । वैदिक पतिसारमें क्षामाश्वक के चम मोठ छोड़ कर पचमेद ४ द्रव्योंका पूर्ववत् पाचन तैयार कर सेवन करना चाहिये । इसका नाम धानधेनुपचक है ।

धानपटोल (मं० श्लो०) धेनकोश बोधमेद । इसकी प्रयुक्त-प्रधानी—१ तोना धनियेके घोर परबनके पत्तों को कुट कर ३२ तोना जलमें छिड़ करते हैं । ८ तोना जल बच जाने पर उसे उत्तार कर खान लेते हैं । इसके सेवन करनेसे पतिसार दोष, कफनाश, मायु घोर निर-का पथीनिःसरण, पामहीयका परिपाक घोर च्छरगा होता है ।

धातुपति (मं० पु०) धान्यानां पतिः ६-तत् । १ मोहि, चावल । २ दध, जो ।

धातुपानक (मं० श्लो०) धानकविषय, एक प्रकारका पवा । इसके बनानेके निये पहले धनियेको मिला पर अच्छी तरह पोष कर पानीसे साय खान लेते हैं । पीछे उसमें नमक, मिर्च, पानी घोर सुगन्धित पदार्थ आदि छोड़ देते हैं । इसके सेवन करनेसे विष नाश होता है ।

धातुपिय्यो (मं० श्लो०) १ धामज्वर । २ ज्वरका एक पाचक ।

धातुबोत्र (मं० पु०) धनिया ।

धानामचक (मं० पु०) बहड़का पचो, एक प्रकारकी चिहिया ।

धानामचरो (मं० श्लो०) धान्यानां मचरो ६-तत् ।

धानाकाशोष, धानका पंच ।

धानामय (मं० पु० श्लो०) धानाश्च मय, धानको बनाई हुई शराब ।

धानामाद्य (मं० वि०) धानां माति मा-द्यः । धाना-मायक, धान मायनेवाला ।

धानामाद्य (मं० पु०) धानां माति मा-द्यः । (१४१४१४) वा ३१।२२) ततो मुक्तः । १ धानां मातिमायक, यह जो धान लोकता हो । २ धानाविज्ञेता, यह जो धान वैज्ञता हो ।

धानामालिनी (मं० श्लो०) रावयने वहां रहनेवाली एक

जाति ५ और जो पीछे गया कर उसे पक्षा करत, ये बिन्दु होते हैं। एक कार्यागमिने प्रति मवाह २० से २५ मग पदा मोहा तैयार होता है।

धामतारि—१ मध्यमदेयके रायपुर जिलेकी एक तहसील यह पचा २०' १' से २१' २' उ० और देशा० ८१' २५' से ८२' १०' पू० में अवस्थित है। सुपरिमाण २५४२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११,८८६ है। इस तहसीलमें एक शहर और ५४१ ग्राम लगते हैं। यहाँकी पाय एक लाख रुपयेसे अधिककी है।

२ उक्त तहसीलका एक तहसील और प्रधान शहर। यह पचा० २०' ४२' उ० और देशा० ८१' ११' पू० रायपुर शहरसे ४६ मील दक्षिणमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ८१५१ है। मूँहूँ, चावल, हर और तेल-एल पनाज ही यहाँकी प्रधान उपज है। यहाँ जल अच्छी लगती है। इस शहर तक रेलके पा जानेसे यहाँकी दिनांदिन उत्पत्ति होती जा रही है। १८८१ ई० में यहाँ एक शुनिम, ऐक्टिटी स्थापित हुई है। यहाँसे साह, पड़ और चमड़की रक्तो दूधरे दूधरे देगीमें होती है। शहरमें एक अस्पताल, एक बर्नाकुलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी बाइका स्कूल है।

धामधा (म० पु०) पासक, रचक।

धामन् (सं० कौ०) दधाति षट्छादिकं धीयते द्रव्यज्ञान-मस्तिमिति वा, धा-मन्तिन्। (सर्वशत्रुम्भे मन्त्रिः। उग. ४।१४४। १ षट्, घर। २ देह, शरीर। ३ त्रिवय, मोधा। ४ प्रसाध। ५ रजि, द्विरप। ६ स्थान, लगन। ७ जका। ८ निष्पु। ९ तज। १० दामोपसधित। ११ बागहोर, लगाम। १२ देमखान, मुद्रखान। १३ क्पोति। १४ परलोक १५ मर्ग। १६ अवस्था, गति।

धामन (सं० पु०) देहरादूनमें धामनाम तक साध धादिके कृष्णोमें निमर्गवाना एक प्रकारका पेड़ जो कसबेकी जातिवा होता है। इसकी लकड़ी प्रायः बहंगोके ठंडे या कुवहाड़ी धादिके दवा के बनावेके काममें पाती है। २ एक प्रकारका वृक्ष।

धामनगर—१ छत्तीसगढ़ के बांजेश्वर जिलेका एक परगना और धाम। बूझाटो और म्यामपुर इस नगरके मध्य में धाम है। मद्रक उपनिषद्में मध्य धामनगरमें एक धामा है।

२. धोबीस परगनेके चत्तर्गन बाहरपुर उपनिषद्भाग। एक धाम। यहाँ दक्षिणदिशे उत्तरदिशिगिट एक जमींदार रहते हैं। इनके एक पूर्वपुत्रपुत्र सुगमनामोंमें चत्तर्गन ही पर एक पुष्करिणीमें डूब मरे थे। इस पुष्करिणीके मोचमें पीपलका एक पेड़ है। १८मोय मोतीका विग्रह है कि यह पेड़ जलके मोचे एक मन्दिरके अंगर लगा हुआ है।

धामनौर—राजपूतानेके चत्तर्गन एक पर्वतमाता। यह निमच शहरसे २० कोस दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है। इस पर्वतमातामें बहुतसे छोटीग गिरिगुहाएँ हैं जो हिन्दू-कोर्ति और बौद्ध-कोर्ति दोनों पत्नीत होती हैं। पर्वतमाता जलो भाग समतल है। केवल दक्षिणमें और २०।३० फुट ऊँचा एक शिखर है। इसी शिखर पर बौद्धकोर्ति विद्यमान है। पर्वतमें कहीं-कहीं बहुतसे गुहाएँ पाई जाते हैं जिनमें तरह तरहकी धामिकादि छोटी गई हैं। दक्षिणपश्चिम कोषमें यदि गिनो जाय तो उस ऊँचे शिखर पर १४ प्रधान गुहाएँ होच पड़ती हैं।

१ ली गुहामें एक बरामदा और उनके बगलमें ८×० फुट करके दो घर हैं। इस घर जामिके निचे पर्वत पर मोड़ी लगी हुई है।

२ ली गुहामें भी एक बरामदा है जो २०। फुट लम्बा और १० फुट चौड़ा है। इसके भी बगलमें ८०। फुट करके दो घर हैं। इनके पश्चिममें ८×६ फुट करके दो घर हैं।

३ ली गुहामें भी एक १२ फुटका घर है। उसमें केवल एक समतल छत है। परके मोर ५। फुट घेरका एक टोप है।

४ ली गुहामें एक छोटा टोपनिगिट चैत्यगुहा है। इसकी लम्बाई २० फुट और चौड़ाई १०। फुट होती। घाटे यमी कोमें मोल है और इन गुम्बज मीया है। इनके दक्षिणमें ६० फुट लम्बी एक दूसरी गुहा भी निमकी छत गिर पड़नेसे भीतर जाभेका रास्ता बन्द हो गया है। ५ ली गुहामें ६० फुट लम्बा और १० फुट चौड़ा एक बरामदा है जिसके दोब्रमें १६×८ फुटका एक घर है। इनके भी बगलमें एक छोटाया घर

दीर्घ पड़ता है। पश्चिमकी ओर पर्वत पर एक चर्खा
मध्य सुदा हुआ है।

दो गुहाको लोग 'बड़ी कचहरी' कहते हैं। यह
गुहा गहरी बड़ी है। इसकी विचित्र भागमें एक दो दुर्ग
हैं। लम्बाई करीब २० फुट होनी। यही दरबार घर है।
एक चार खंभोंसे लपट टिको हुई है। इसमें दोनों
ओर ० फुट लम्बा ओर उतना ही चौड़ा तीन घर हैं।
मामनेमें एक माटमन्दिर ओर गोळमें एक चैत्यगुहा
है। बड़ा दरबारघर मध्य ७०० ई. ओर यह दो भग्नावशेष
में अच्छी तरह प्रकाशित होता है, किन्तु ओर दूसरे
दूसरे घर प्रत्यक्ष रहते हैं। माटमन्दिरके सामने दो
चौपट खंभे हैं ओर दोनों बगल कटघरेकी नाईं पत्थर
के अंगुलीमें घिरे हुए हैं।

०वीं गुहामें ८५० फुटका एक घर है। इसमें
सामने लंबाई ओर भी पश्चिम है। ८ वीं गुहाका
नाम 'छोटी कचहरी' है। इसमें २५३ × १५ फुटकी
एक चैत्यगुहा है। इसमें बीचमें १५३ फुट लंबा एक
टोप है। टोपके निम्न भागको चौड़ाई ओर लम्बाई
८३ फुट होगी। इसमें सामने भी बड़ी कचहरीकी
नाईं एक माटमन्दिर है जिसमें दो घर लगे हुए हैं।

८वीं गुहामें ४ छोटे छोटे घर हैं। पर्वत पर एक
चर्खा टोप है। एक चार खंभोंमें तीन घर ८ × ५ फुट-
के हैं ओर चौथा घर ११ फुट लम्बा है। इस घरमें
पश्चिमकी ओर पत्थरकी एक बड़ी स्टा है, जिस पर दो
तकिये भी दीख पड़ते हैं।

१०वीं गुहाका नाम 'राजमोक' 'कमोके मकान'
या 'कमनीय मकान' है। यह ठीक बड़ी कचहरी
घरीला है, किन्तु दरबारका घर २५ फुट लम्बा ओर
२१ फुट चौड़ा है।

११वीं गुहाका नाम 'भीमका बाजार' है। यह
छोटी गुहामें बड़ी है। इसमें एक लम्बी चैत्यगुहा
ओर माटमन्दिर है जिसमें चारों ओर एक प्रदक्षिणा
है। यह प्रदक्षिणा तीन ओर बहुतसे खंभोंके लपट
बसामदा ओर समने बगलमें छोटे छोटे घर हैं जिसमें
दोनों दो छोटे चैत्य हैं। चैत्यगुहाके मध्य मध्य
विहार देखने योग्य है। इस गुहाकी चौड़ाई ८० फुट

है। सामनेके चैत्यगुहा गुम्बज गिर पड़नेसे इसकी
लम्बाई घट कर ८० फुट हो गई है। गुहादार पर ५
फुट घरेके दो टोप हैं। प्रदक्षिण १०५ फुट लम्बा
होगा। इसमें पश्चिममें ८ वर्ष प्रयुक्त लम्बक
पड़े हुए हैं। बरामदेकी चौड़ाई मध्य ५५८ फुट है।
घरोंकी लम्बाई ओर चौड़ाई ० फुट होगी। जो घर
उत्तरकी ओर पड़ता है वह १० + ११ फुटका है। पूर्व
ओर पश्चिममें दो चैत्यगुहा हैं। पूर्वगुहाके चैत्यके
सामने एक उपविष्ट बुद्धमूर्ति है। १२वीं गुहा एक
चैत्यमन्दिर है। मध्यम टोप लम्बा है ओर बड़ी हलका
पाधार है। इसकी सरल गर्भमें इसका नाम 'बायीकी
मेख' (बायीका खूँटा) ओर गुहाका नाम 'बायी
बन्दी' (बन्दिगामा) पड़ा है। इसमें दरवाजेकी
लम्बाई (१५३ फुट) देख कर यह बहुत कुछ यथार्थता
प्रतीत होता है। यह घर २ × २५ फुटका है। हल
समतल है ओर समने पत्थरका एक बोम है। जो घरकी
लम्बाई तक विस्तृत है। इसी बोम पर एक निभर है।
इस गुहाके सामने २५ फुट विस्तृत एक समतल परि-
प्यार घनावन स्थान है जिसमें नीचे जल सोड़िया लगी
हुई हैं।

धामनिहा (मं० प्लो०) धामनोय धाम्यं कन् टाव।
अत इत्यं। धमनी, नाड़ी।

धामनिधि (मं० पु०) धामानि किरणानि निधोयन्ते इत
नि धा-कि। धर्म।

धामनो (मं० प्लो०) धमनोय धमनी-धाम्यं पच, तना
कोप्। धमने, नाड़ी।

धामपुर—१ युक्तमदेयके विजयोर त्रिलोकी एक तहमील।
यह पचा० २८° २' से २८° २५' ००' ओर दिगा० ७८°
४१' पूर्वमें अवस्थित है। भूपरिमाण ४५८ वर्गमील
ओर लोकसंख्या लगभग २५५१८५ है। यह तहमील
धामपुर, मंडहार, निहतोर ओर बुद्धपुर परगनासे बनो
है। इसमें ५०४ ग्राम ओर ५ ग्राम समते हैं। इनके
उत्तर ओर दक्षिणमें बहुतसी नदियां प्रवाहित हैं जिन-
में गान्ध, मोह ओर रामगन्गा प्रविष्ट है।

२ एक तहमीलका एक प्रधान महर। यह पचा०
२८° १८' ००' ओर दिगा० ७८° ११' ००' विजयोरसे ११

कोम पूर्व करिदारके राक्षो पर अवस्थित है। लोक-
संख्या प्रायः ७२७५ है। अधिकांशियों वट्टर पोर
क्षेत्रीको संख्या अधिक है। मारे गहरमें लोहे पोर
योग्यको पौमकी दूकान ज्यादा है। यहां लोहेका
तामा, कुंजी, बकमकी कल, घीनलका चिरागदान, कानि-
का बरतन, पंटा पोर चड़ी इत्यादि बगती है। यहां
बन्दूक भी तैयार होती है। किमने १८४० ई० में
घेरनको प्रदर्शनीमें बन्दूकका एक नमूना यद्यपि भेजा
था। लक्ष्म है, कि वही ७५० फुट (फरानो मुद्रा)
पारितोषिक मिला था। यहां प्रति ममाहमें दो बार
गाट लगती है पोर प्रतिमासमें एक सला लगता है।
गहरको दक्षिणमें एक बड़ो मराय है।

१८५० ई० में राहिनोमें यहां पर सुगन्धोकी परामत्त
जिया था। १८५५ ई० में विण्डारी नायक पमोर रा-
ने इस गहरको लूटा पोर सिपाही विद्रोहके समय भी
इसे लूटनेकी चेष्टा की गई थी। १८६६ ई० में यहां
गुनिष्ठपेलिटो स्थापित हुई है। गहरको प्राय १००००
वयवकी है। प्राय कल यहां तीन फुल है।

धामभाज (सं० पु०) यक्षलानभागी देवता, यक्षस्थानमें
भाग लेनेवाला देवता।

धामरा—१ लुहोवाकी एक नदी। माताई, वरसुधा,
ब्राह्मणो पोर नैतरको यही पारो नदियां मिल कर
धामरा नामसे प्रसिद्ध हुई है। यह बड़ोपनागरमें जा
गिरा है। इस नदीमें सब समय नावें जाती पाती है,
किन्तु सुदामिक निकट बानूका घर पड़ जानेसे नावका
ले जाना खतरनाक है।

२ लुहट जिलेमें इनो नदीके ऊपर अवस्थित एक
बन्दर। यह पचा० २०° ४०' ७०' पोर देगा० ८६° १८'
५०' में अवस्थित है। नैतरको नदीके ऊपर बांढाना
पोर माछपीके ऊपर बंछपा, पटासुणो पोर वरसुधा
नदीके ऊपर बांढव नामक स्थान तक इस बन्दरकी
सीमा है। यहां समुद्रमें चलनेवाला जहाज भी आ उह-
रता है।

धामराय (सं० ८५०) धामि धामि इत्यर्थे ग्राम।
स्थान स्थान, जगज जगज।

धामा (हि० पु०) भोजनका निमज्ज, धानिको दान।

धामासंघ (सं० पु०) धामो धामे पन्थानं यातोनि ना-
यतो क। १ धामासंघ, विषय। २ धामासंघ, धाम
विषय। ३ धामासंघ, धामासंघ। ४ धामासंघ,
एक प्रकारको सुरर। ५ राजकीयातको। ६ मराठोवा-
तको, एक प्रकारको सुरर।

धामि—पन्थाव गयनेसेपट्टे पयोधव एक धारंत्त राग्य
यह पचा० ११° ०' में ११° ११' ३०' पोर देगा०
७७° ३' से ७७° ११' ५०' में विममाने १६ मील दक्षिणमें
अवस्थित है। भूरिगाय २६ वर्ग मील पोर लोकसंख्या
लगभग ४५५ है। बारनवीं गताऽनेमें जह गाहपुर न
घोर भारतवर्षको सीतने पाये थे, वही समय धामा
जिमिके रायपुरमें एक राजपुत्रने भाग कर इगे फगह
किया पोर गह एक छोटा प्राधीन राज्य बसाया।
धामिके अधिपति 'राया' उपाधिधरो पोर राज्यवर्ति-
ताताके पंशोद्ध है। कुछ दिन तक यह राज्य विनाम
पुर राज्यका काल हुआ था। धामेजोने गोरपा-पुर
समय (१८०३-१८१५) इमे विनामपुरको अधीनताये मुक्त
कर दिया। यहांके वर्तमान रायाका नाम प्रोराधिम है।
इहां इटिंग गवर्नमेंटकी वार्षिक ८२० रु० राजस्व देने
पड़ते हैं। राज्यकी प्राय १५८००० रु० की है। रायाको
पहले अधिक कर देना पड़ता था, पर मिजाही विद्रोहके
समय कर्तविके विनाम धामेजोकी राज मशायता
की थी, इस कारण इटिंगगवर्नमेंटने पुन ही कर धामा
कर घटा दिया। तभीसे यहांके राया केवल पाधा कर
देते पा रहे हैं। पक्षीम यहांकी प्रधान व्यवसाय है।

धामिन (हि० लो०) एक प्रकारका मीन। यह कुछ बरा-
बर या पोलावन जिये अकेद रंगका होता है। यह
बहुत लम्बा होता है पोर इसकी पूँछमें बहुत विष होता
है। दूसरे दूसरे मालीको मारे यह काटता मरी, बल्ल
पूँछसे जो कोड़ेको तरह मारता है। मरीके त्रिम स्थान
पर इसको पूँछ लग जाती है, वन खानका मिन मल
मक कर मिने लगता है। इसको धाम बहुत मज है।
२ दक्षिण भारत, राजपूतानेतया धामाकी पहाड़ियमें
मिननेवाला एक प्रकारका दिड़। इसको लुहो की
भूर रंगको होती है। मिन, कुहो पोर धामाको पादि
बननेके कामने पाती है।

धामिया (हि० पु०) १ एक पत्थर का नाम । २ इसी पत्थर का धातमी ।

धामिक—काश्मीर के निकटवर्ती एक पत्थर का । इसका प्राचीन नाम खगदाय है । सबसे पहली बुद्ध ने इसी पत्थर पर अपना मत प्रचार किया था । भगोक्त लखे हमरगार्थ दहा एक स्तूप निर्माण कर गये हैं । यह स्तूप माधा-रपतः मानायायम्तथ नामसे प्रसिद्ध है । धामाषदेयो ।

धामोमी—मध्य-प्रदेश के सागर जिले का एक नगर । यह पचा० २४° १२' ३०" और देशा० ८८° ४८' ५०" सागर शहर से १४ कोस उत्तर में अवस्थित है । मण्डला के सरदार मंगेश सुरय या नामक किसी व्यक्ति ने धामोमी राज्य स्थापन किया । प्रायः १६०० ई० में पोर्चुगल राज्य के मुन्टेन्-सरदार राजा मोरिस इदेन ने इसे अधिकृत कर बुर्ग और नगर का संस्कार किया था । इनके समय में वर्तमान सागर और धामो जिले का अधिकारी स्थान इसी राज्य के पत्तगंत था और यहीं पर उनकी राज धामो थी । उस समय इस राज्य में २५५८ ग्राम लगते थे । पत्तगंत से पत्तगंत राजा समराय सिंह ने जीता, किन्तु छोड़े समय बाद ही नामपुर के राजा ने लखे गार भगाया और शहर को अपने कब्जे में कर लिया । १८८६ ई० में पोर्चुगल के भगाये जाने बाद जिन राजा लखे गार के राजा को पोरने इस पर अधिकार जमाया । नामो यह पद्धति के पक्ष में था रहा है । इसकी मोमा-को घटा जेबल ३३ गांव ने कर धामोमी त-मोव संगठित हुई है । सुवर्णमान-राज्य भी जोड़ि के निर्देशन स्वरूप मानाशे मद्रिजका भगवतोय पोर एक दोष मरोवर है । धामा लोको उपर्युक्त नाम मुन्टेनपण्ड के नाम से घाट पयंत के कर एक दुर्ग अवस्थित है । मरोवर शहर के दक्षिण-पश्चिम में पड़ता है, इसका जन बहुत समदा है । धर्य (हि० लो०) तीव्र बन्दूक पादि छूटने तथा किसी पदार्थ के जोर से गिरने का शब्द ।

धार (सं० लि०) दधातीति धा-अन् । (रादृक्प्रथमि) । वा १।१।१५ । धारयकतां, धारय करनेवाला ।

धार (हि० लो०) १ यह पौरत जो पारसिके हालतकी दूध पिनामें पोर लपका पालन पोषक करने के लिये नियुक्त हो, धार । (पु०) २ धारिका पेट ।

धारय (सं० लि०) दधातीति धा-अन् बाहुलकात् युक् । (बहिराप्, अक्षप्रथमि) । उक्, ४।२१० । धारयकतां, धारण करनेवाला । २ पोषकता, पालनेवाला ।

धातु (सं० लि०) धा-उन्, बाहुं युक् । धारक, धारण करनेवाला ।

धव्य (सं० पु०) धोयते धामियते मङ्गलार्थमिति धा-वर्त्मन् धि ध्यतु ततो युक् । पुरोहित ।

धाव्या (सं० लो०) धावति मद्रिजतया धा-वर्ये ध्यतु । धामिनिमन्धनार्थं लृङ्, लृट् लृट्मन् लो धामि प्रत्य-नित करते समय पढ़ा जाता है ।

धार (सं० लो०) धाराया दट् धारा-पन्, (तारैद । वा ४।१ १२०) वर्षादिव जन, दकटा किया हुआ वर्षा का जन ।

वर्षा का जन धारावाही हो कर जल सहेद यत्र वा लव्ध पत्र चयवा परिष्कृत भूमि पर गिरे, तो उसे माने, पौदो, ताने, स्फटिक पोर काँच के वस्तुओं में रत्न छोड़ो, इसीको धार वर्षात् धाराभव जन कहते हैं । इसका शुभ—विदोषनायक, पय्यल रत्न, लघु, सोम्य, रमायन, यन्त्रारक, दलितकर, पाण्डुरजनक, पाणधारक, पाचक, बुद्धिजनक, एवं मूर्च्छा, तन्द्रा, दाह, शान्ति, क्षान्ति पोर विवासानायक हैं । वर्षात्पुत्रे समय यह जन बहुत हितकर है । वेपथके अनुसार यह जन दो प्रकार का होता है, गाढ़ पोर मासुद्र । मासुवाका कहना है कि पाकागगङ्गा में जन ने कर भिन्न जो जन बरमाने है उसे गङ्गाजन कहते हैं । भिन्नय प्रायः धामिजमान में गंगाजन की वर्षा करते हैं । यह जन बहुत हितजनक है । चाक मुनि का मत है, कि मोने, चाँदी पयवा मर्मा के वस्तुओं में रत्ने पुत्र प्राप्त पर यदि तथा ही पोर लघु पयवा रत्न यदि न बढते, तो उसे गंगाजन कहते हैं । मासुद्रने जो जन ने कर भिन्न वर्षा करते हैं, उसे मासुद्रजन कहते हैं । साधारणतः मासुद्रजन प्रायः लमकोन, दकनायक, दृष्टि के निर दलितारक, लम-लताक पोर दीपपदायक माना जाता है । मासुद्रजन धामिज मान में गङ्गाजन की तरह उपदेशी होता है । क्योंकि पयत्य तारे के पदय होने के पदयता यह जन निर्विष, मधुररस, दृक्जनक पोर दीपपदायक नहीं होता । १ जोरसे पानी बरसना । २ जोरकी वर्षा । ३

मूल, उपार, कर्ज । ५ प्राप्ता प्रदेग । (ति०) ६ गभीर, गहरा ।

धार (हि० धी०) १ वज्रज प्रवाह, पानी पारिदे गिरने या बहनेका पार । २ पानीका मोता, चमत्ता । ३ जल, कमलमय । ४ किसी काटनेवाले चविद्याका वह तेज मिश्र या किमारा जिसमें कोई चीज काटने के । ५ किमारा, मिश्र, छोर । ६ मेला, फोज । ७ पाक्रमण, हमला, धावा । ८ दिगा, घोर, तरफ । ९ अज्ञातके तन्त्रिका जोड़ । (पु०) १० दासवान, चोखदार । ११ कछे कृप के सुंर पर लगाये जानेका पीढ़का तना या काठका कुकड़ा । यह हमलिय लगा दिया जाता है जिसमें उसका ऊपरी भाग चन्द्रज गिरे ।

धार—मध्यभारतमें भीमावर एज्योका एक प्रसिद्ध राजा । यह सन् २१५ ई० से २५५ ई० तक चोर देश का राजा रहा । ४१ ई० से ७६ ई० तक पूर्णमें प्रचलित है । भूवरिमाण १००५ वर्गमील है । उसमें उत्तरमें रत्नाम राज्य, पूर्वमें मिथियाके पछोन बङ्गलूर, उत्तरपनो, टिकमान् चोर हन्दोर, दक्षिणमें नर्मदा नदी चोर पश्चिममें भद्रुवा राज्य तथा मिथियाके पश्चिमत चमकोरा जिला है । इसमें चाल परगने हैं—घास, बुढावर, जलवा, धरमपुरी, कुलि, टिकरी चोर निवानपुर ।

इस राज्यमें बहुतने राजपूत-पश्चिमत सामन्त राज्य हैं जो पंगरज राजके विजित चोर रक्षायैलवके अधीन हैं, जैसे—मूलतान, काङ्गि, खोदा, धीयिया, मङ्गलान, भलगढ़, कोह, कटोदिया, मङ्गोनिवा, धरमखिरा, वाहरनिवा, मुरवाङ्गिया चोर घामा । इसके पलावा अनेक भूमिया, भोज चोर भोजाला मर्दार हैं जो पश्चिमीय धरमपुरी चोर मलवा परगनेमें रहते हैं । वार्धान मर्दारागव ठाकुर समाधिधारी हैं । ये भी छोटे छोटे राजा हैं । किन्तु इन लोगों ने पसेला भूमिया चोर भोज मर्दारीको जमींदारा नियममें काम चमत्ता है । ठाकुर लोग अपने अपने राज्यमें प्राचदपत्र के बिना चोर दूसरे दूसरे राज्यके पश्चिधारा हैं । सब कानोंको प्रता धार राज्यमें अपना विचार करा सकतो है ।

धारराज्यमें चमत्ता नामकी जो नदी है वह चम्पसकी सदमदी राजा जाती है । यह नदी धार परगनेके पूर्णको

की कर प्रवाहित है । पाल नामक कानमें नर्मदा नदी के ऊपर एक पुल है । छोटी छोटी नदियोंमें भोज, कदम चोर बाङ्गनी प्रधान है । चौक जगुमें ये सब नदियां गुप्त जाती हैं चोर वर्षामें भर जाती हैं । नर्मदा उपत्यका में विस्थाप्य तकी लोचारे प्रवाह १६ से १७ मी पुत्र है । इसमें गिरिपय भी है जिसमें भोजपुर चोर प्राचदपत्र गिरिपयके मिश्र चोर सभी सब दुर्गम तथा बेल गाहने के पाने जानेके अनुपपन्न है । पारस्य प्रदेशमें सब नर्मदा नदीकी पाल है, किन्तु कहीं भी उसने काममें नहीं किया जाता । विस्थाप्य ऊपरका प्रदेश नातिधीनोप है । वहाँ दिनकी पसेला रातमें अधिक ठंड पड़ती है चोर प्रांच मरु भी कम दिन तक रहती है । घाट पर्वतके नीचे कभी कभी पश्चिमत दिन ठहरती है । वर्षाके बादही प्रकीप देवा जाता है वहाँ सब प्रकारके धनाज उत्पन्न होते हैं । चम चोर निहू जो कूड उत्पन्न होता है उसने लोपोपाङ्गकी रकलनो होती है । बंद, ईन्ड, तमापू, बन्दो, तिल चोर पकोम भी कम नहीं उत्पन्नतो ।

इतिहास—धारका वर्तमान राजवंश परमार राजपूत है । ये लोग अपनेको विक्रमादित्यके वंशज बतलाते हैं । प्राचीन प्रवादके अनुसार उत्तरपनो चोर धारा एक ही राज्यथा । वर्तमान राजाघोमें भोज निमिय विन्यास है । ये ही उत्तरपनोके राजधानी भारालगामें छटा लाये । पाचवीं सताब्दीमें राजपूतोंके चम्पुदवके समय परमारीको चमत्ता नाम की नदी चोर वहाँके राजवंश पूना ला कर बसे । ११८० ई० में दिल्लीके प्रसिद्धि दिनावर लो इस देशमें पाये । इन्होंने धारा नगरीके हिन्दुमन्दिरादिको तहस नहस कर उनके उत्तरपनोके मुसलमान मन्त्रजिदे तैयार कीं । दिनावर वाले पुन शासनकाली की कर धारने मापूमें राजधानी छटा लाये । एक समय धारका माचोन गव जाता रहा चोर महाप्राङ्गिके चम्पुदवके पड़ने तक यह मुगल राज्योंमें एक महत्त्व प्राप्त माना जाता था ।

धियाङ्गिके चम्पुदवमें पुनाके धारा-राजवंशोप ओनेने सनके मेलापति की कर विमिय क्कालि चोर पति पति काम की । १७४८ ई० में नर्मदेराव धियाङ्गिके माचोन

धारराज-वंशीय भानन्द राव नामक एक व्यक्ति को धार-राज्य प्रदान किया। वर्तमान राजवंश ही प्रतिष्ठा सन्धी-से हुई है। मालवप्रदेश अंगरेजोंके अधीन पानिके पहले होलकर और सिन्धियाके अत्याचारसे धार राज्य प्रायः तहस नहस हो गया। प्रथम राजा भानन्द रावसे पञ्च-मृत्यु पञ्चम पुत्र कुमार रामचन्द्र नावान्तिग थे। उनको माता मीनाबाई (२५ भानन्दरावकी महिले) बुद्धिकीगलसे कैवल्य राज्य रचा करती रही। अन्तमें रामचन्द्रके वृत्तकपुत्र यशोवन्तराव राजा हुए। १८७५ ई०में उनकी मृत्यु हुई। इस समय उनकी बेभानेय आता भानन्दराव नावान्तिग थे। वे ही राजा बनाये गये। किन्तु सिपाही विद्रोहकी गड़बड़की समय अंग-रेजोंने राज्यकी रक्षाका भार अपने ऊपर ले लिया। पोहे बाहरसिया जिलेकी छोड़ कर मध्यस्थ राज्य भानन्द रावको सौंपा दिया गया और उक्त जिला भूपालकी बेगम-के अधीन रहा। परमाद सन्धमें चारके प्राचीन राजाओंका इतिहास देखो।

इसमें दो गहर और ५१४ ग्राम लगते हैं। लोक-संख्या प्रायः १४२११५ है। यहां मील, मिलाय, राज-पूत, कुनवो और ब्राह्मण रहते हैं। १८२६ ई०की सन्धि-के अनुसार धारराज्य अंगरेजोंके अधीन आया। यहांके राजाकी २७० पखारोही, ८०० सो पदाति, २ कमान और २१ गोलन्दान हैं। इन्हें १५ सभानसूचक तोपें मिलती हैं। राज्यकी आय ८ लाख रुपयेकी है। यहां १ कारागार, ११ स्कूल, १३ चिकित्सालय और २ यन्त्रा-लय हैं।

२. उक्त राज्यका एक प्रधान गहर : यह अक्षा० २२°१६' स० दिशा० ७५°१८' पू०में बरोदासे साव जानिके रास्ते पर अवस्थित है। साव यहमें १६ कोस दूर पड़ता है। गहरकी लम्बाई ११ मील और चौड़ाई ३ मील है। यह चारों ओर भूमीको दीवारसे घेरा हुआ है। यह एक प्राचीन गहर है। पांच वर्षतक यहां मालवा-के परमार प्रधानोंकी राजधानी थी। इस राजवंशकी पहली राजधानी उज्जैनमें रही, पोहे २५ वैरिगिंह ८वीं शताब्दीमें इसे धारा नगरमें स्थान लाये। सुभ-मान राजाओंके समय इसका नाम पील्लधार था।

कालिक यहां अनेक सुसज्जमान घोर रहते थे जिनमेंसे बहुतोंको ममाधि भाज भी विद्यमान हैं। भलाघदीन्ने १३०० ई०में सबसे पहले इस नगरको जीता था। १३४४ ई०में यहां घोर दुर्भिक्षके समय सुहृद्द-विन-तुगलक आये हुए थे। १३८८ ई०में दिनावर खां धारके गामक नियुक्त हुए। कुछ दिन बाद वे स्वतन्त्र हो गये और उनके लड़के हुयेनगाह मानवके तम पर बैठे। ये ही सुभलमान राजाओंमें मानवाके प्रथम राजा थे। धान-मज्जिन्दके लोहमन्तर्गमें लिखा है, कि १५६४ ई०में जब अकबर दक्षिण प्रदेशकी जीतने जा रहे थे, तब सात दिन तक येही नगरमें ठहरे थे। पोहे और अजमेर इसे फतह किया। १७३० ई०में यह नगर मुगलोंके हाथमें महराष्ट्रके हाथ आया। यहां बहुतसी मगोहर अष्टा-लिकाये हैं। साथ पत्थरकी बनी हुई दो मस्जिदें उल्लेखयोग्य हैं। यहांका दुर्ग गहरको बाहरमें अवस्थित है, जिसे लीग (१३२५-५१ ई०) सुहृद्द विन तुगलक-के समयका बना हुआ वस्तुमान है। रसी दुर्गमें १७७५ ई०को अंतिम पेशवा २५ बाजोरावका जन्म हुआ था। १८५० ई०में अंगरेज सेनापति जेनरल टुवार्ट सैन्य इस दुर्गमें रह कर सिपाहियोंका दमन किया था।

यहां कमाल मौला नामक आहातिमें चार समाधियां भाज भी विद्यमान हैं। उनमेंसे एक १५ मज्जुद खिलजीकी और दूसरी शेख कमाल मोलवोकी है। यहां हाई तथा और दूसरे दूसरे स्कूल, पुस्तकालय, अस्पताल और डाक-बंगला है।

धारक (सं० पु०) धरति जलादिकमिति धृष्टुन् । कलंग, वडा। इसका उत्पत्ति विवरण देवीपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

महानि सुनिर्वोसे कहा था, 'हे महासुने। धारका अर्थात् कलंगकी उत्पत्ति, लक्षण और परिमाणके विषय-में कहता हूं' की सुनिवे। जब देवता और असुर मन्दर पर्वतको मत्स्यनदण्ड और वासुकीकी रज्ज बना कर समुद्र मंथने लगे, तब अमृत रत्ननेके लिये ही कलंगकी उत्पत्ति हुई थी। विश्वकर्माणे देवताओंको कला ले कर इसे बनाया था, इसीसे देवगणने इसका नाम 'कलम' रखा। कलमके मुखमें ब्रह्मा, गलेमें महाश्वर, भूतमें विष्णु

अथ, उपर, उत्तर । ५ वाया प्रदेश । (ति०) ६ गभीर, गहरा ।

घा (हि० की०) १ घण्टा प्रवाह, घासी घाटिह गिरने या बहनेवा तार । २ घासीका घोता, चरमा । ३ जल, समुद्रमध्य । ४ किसी काटनेवाले इधियाका वह तेज भिरा या किमारा जिसमें कोई चीज काटने के । ५ किमारा, भिरा, घोर । ६ मेला, छोड़ । ७ घाकमप, चमसा, घावा । ८ दिमा, घोर, तरफ । ९ जहाजोंके तख्तिका छोड़ । (पु०) १० दारपाण, चोखदार । ११ कषे कृपे के मुँह पर लगाये जानेका पेड़का तना या काठका कुड़ा । यह हमलिय लगा दिया जाता है जिसमें लकड़ा ऊपरों भाग चन्दन मिले ।

घा—सध्मावर्तमें भीवावर एजिमोका एक प्रसिद्ध राजा । यह चला २१° ५१' से २५° ११' उ० और देशा ७७° ४१' से ७६° ४२' पू०में अवस्थित है । भूविस्माप १००५ वर्गमील है । समुद्र सतहमें समुद्रमध्य राज्य, पूर्वमें मिश्रियाके पक्षीय बहुरंगर, उत्तरपक्षी, दिकमान् घोर हदोर, दक्षिणमें नर्मदा नदी घोर पश्चिममें भनुषा राज्य तथा मिश्रियाके पश्चिमत घमभीरा जिला है । इसमें घात घराने हैं—घात, बुदगावर, लमबा, घरमपुरी, कुल्लि, टिकरी घोर निमानपुर ।

इस राज्यमें बहुतसे राजपूत-पश्चिमत सामन्त राज्य हैं जो पंगरेज राजके पश्चिमत घोर रत्नवापिसवले पक्षीय है, जेमे—भूमताम, कचिप, बरोदा, घोसिया, बहू-बाम, भक्तगढ़, कोइ, कटोदिया, महीनिया, धासिया, काडरिया, मुराहिया घोर घामा । इनके पलावा घनेक भूमिया, भील और भीलावा मदीर हैं जो पश्चि-कांग घरामपुरी घोर लकवा घरामनेमें रहते हैं । प्राचीन मदीरगण ठाकुर उमाधिधारी हैं । ये भी छोटे छोटे राज-के तुल्य हैं । किन्तु इन लोगोंकी पक्षिया भूमिया घोर भील मदीरोंकी जमींदारी नियममें कम समता है । ठाकुर लोग अपने अपने राज्यमें प्राचदण्डके सिवा घोर दूसरे दूसरे दण्डके पक्षिधारी हैं । सब व्यापारोंका प्रवा घात राज्यमें घमना विचार करा गच्छती है ।

घातराज्यमें घमना नामकी जो नदी है वह चम्बलकी उपनदी नामी जाती है । यह नदी घात घरानेके पूर्वकी

को कर प्रवाहित है । घात नामक व्यापारी नर्मदा नदी-के उत्तर एक पुन है । छोटी छोटी नदियोंमें भील, बहम घोर बाहनी प्रधान हैं । घोर चराममें ये सब नदियां घुल जाती हैं घोर चराममें भार जाती हैं । नर्मदा उपनद्या में विस्मयपूर्णतरी वर्षाके प्रायः १६ से १७ गी पुट है । इसमें निरिषय भी है जिसमेंमें गोमपुर घोर बाहदुर निरिषयके सिवा घोर समी सब दुर्गम तथा येन गाड़ीके घाने जानेके अनुपयुक्त है । पार्वत्य प्रदेशमें सब जगह लोहकी पान है । किन्तु कहीं भी समी काममें नहीं लिया जाता । विस्मयके ऊपरका प्रदेश नातिमीतोव है । महा दिनकी पक्षिया रातिमें पक्षिक उड़ पक्षी है घोर घोर मनु मी कम दिन तक रहती है । गाट पर्वतके गोले कभी कभी पक्षिक दिन उठती है । वर्षाके बादही प्रकीप देवा जाता है । यहां सब प्रकारके जगाज लापस होते हैं । घना घोर मंदू जो लूट लापस होता है समने दतोपामकी एकलमी घोनी है । बंदे, ईर, तमाणू, हन्दो, तिल घोर पक्षीय भी कम नहीं उपजतो ।

दरीप—घातका वर्तमान राजवंश परमार राज-पुत हैं । ये लोग अपनेको विक्रमादित्यके वंशज मतमाने हैं । प्राचीन प्रवादके अनुसार उत्तरपक्षी घोर घारा एक ही राज्यवा । वर्तमान राजाघोमें भील विविध विस्मय घे । ये ही उत्तरपक्षीय राजधानी धारागाममें बसा लिये । पारवीं घताण्डोमें राजपूतोंके चम्बलदण्डके समय घरामारी-को समता ज्ञान हो गई घोर वर्षाके राजवंश पूना जा कर बसे । ११८० ई०में दिवाके प्रतिनिधि दिवावर ली इन देशमें बस्ये । इकोने घारा नमरोके हिन्दुमन्दिरादि-को तहस तहस कर उलके उपकरवधि लुप्तमान सब जिदे मेंदार की । दिवावर वधि पुन घामनकली की कर घारमें माण्डूमें राजधानी बसा लिये । लण कमर घातका प्राचीन सब जाता रहा घोर मदीराहोके चम्ब-दण्डके पहले तक यह सुगम राज्यमें एक लकवा राज्य दिना जामे लगा ।

दिवाजीके चम्बलदण्डके पुनाके घारा-राजवंशोय कोदीने लकके मेलापति की कर विद्वत व्यापति घोर प्रति-पति काम को । १७४८ ई०में मारीराम दिवाजीके घात

धारराज-वंशीय धानन्द राव नामक एक व्यक्ति को धार-राज्य प्रदान किया। वर्तमान राजवंश की प्रतिष्ठा वर्द्धी-से हुई है। मालवप्रदेश अंगरेजों के अधीन धानिके पहले होमकर और सिन्धिया के अत्याचार से धार राज्य प्रायः तहस नहस हो गया। प्रथम राजा धानन्द राव से पञ्च-मृतम पञ्चम पुत्र कुमार रामचन्द्र नावलिंग थे। उनको माता मीनाबाई (२५ धानन्दराव की महिषी) बुद्धिकीयल से केवल राज्य रक्षा करती रही। अन्त में रामचन्द्र के दत्तकपुत्र यशोवन्तराव राजा हुए। १८७५ ई० में उनकी मृत्यु हुई। इस समय उनके वैसाखीय भ्राता धानन्दराव नावलिंग थे। वे ही राजा बनावे गये। किन्तु सिपाहों विद्रोह की गड़बड़ी के समय अंग-रेजों ने राज्य की रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया। पोखे बाहरसिया जिले को छोड़ कर समस्त राज्य धानन्द राव को सौंपा दिया गया और उक्त जिला भूपाल की वेगम-के अधीन रहा। परमाद वर्द्धी धार के प्राचीन राजाओं का इतिहास देखो।

इसमें दो शहर और ५१४ ग्राम लगते हैं। लोक-संख्या प्रायः १४२११५ है। यहाँ मौल, भिजाय, राज-पूत, कुनवो और ब्राह्मण रहते हैं। १८१८ ई० की सन्धि के अनुसार धारराज्य अंगरेजों के अधीन आया। यहाँ के राजा की २७० परगणों की, ८०० से ज्यादा, २ कमान और २१ गोदाम्दाज हैं। इन्हें १५ सम्मानसूचक तोपें मिलती हैं। राज्य की आय ८ लाख रुपये की है। यहाँ १ कारागार, १ स्कूल, १३ चिकित्सालय और २ यन्त्रालय हैं।

२. उक्त राज्य का एक प्रधान शहर। यह अक्षां २२°३६' उ० देशां ७५°१८' पू० में बरोदा से साव जानिके रास्ते पर अवस्थित है। साव यहाँ से १६ कोस दूर पड़ता है। शहर की लम्बाई १६ मील और चौड़ाई १ मील है। यह चारों ओर मदीयों की दीवार से घेरा हुआ है। यह एक प्राचीन शहर है। पाँच वर्ष तक यहाँ मालवा के परमार प्रधानों की राजधानी थी। इस राजवंश की पहली राजधानी उज्जैन में रही, पोछे २५ बैरिनिङ्ग ८ वीं शताब्दी में इसे धारा नगर में उठा लाया। सुदृढ-मान राजाओं के समय इसका नाम 'योगेश्वर धार' था।

क्योंकि यहाँ अनेक सुसलमान घोर रहते थे जिनमें से बहुतेको ममाधि बाज भी विद्यमान हैं। मलावहीन्ने १३०० ई० में सबसे पहले इस नगर को जीता था। १३५४ ई० में यहाँ घोर दुर्भिक्ष के समय सुहम्माद-बिन-तुगलक आये हुए थे। १३८८ ई० में दिनावर खाँ धार के शासक नियुक्त हुए। कुछ दिन बाद वे मृत्यु हो गये और उनके लड़के हुसैनशाह मालव के तान पर बैठे। वे ही सुसलमान राजाओं में मालवा के प्रथम राजा थे। माल-मस्जिद के लोहस्तंभों में लिखा है, कि १५६४ ई० में जब अकबर दक्षिण प्रदेश की जीतने जा रहे थे, तब सात दिन तक यहाँ से नगर में ठहरे थे। पोछे औरङ्गजेब ने इसे फतह किया। १७३० ई० में यह नगर मुगलों के हाथ में महाराष्ट्र के हाथ आया। यहाँ बहुतेकी मसजिदें अहा-लियाँ हैं। साय पत्थर की बनी हुई दो मस्जिदें उल्लेखयोग्य हैं। यहाँ का धुग शहर के बाहर में अवस्थित है, जिसे सोग (१३२५-५१ ई०) सुहम्माद बिन तुगलक-के समय का बना हुआ बताया है। इसी दुर्ग में १७७५ ई० की अंतिम पेयवा २५ बाजोराव का जन्म हुआ था। १८५७ ई० में अंगरेज सेनापति जैनराट्ट टुवार्ट समेत इस दुर्ग में रह कर सिपाहियों का दमन किया था।

यहाँ कमान सैना नामक बाह्य में चार समाधिर्वां बाज भी विद्यमान हैं। उनमें से एक हम महम्मूद खिलजी की और दूसरी शेख कमाल मौलवी की है। यहाँ कई तथा और दूसरे दूसरे स्तूप, मुस्तफासय, अस्तान और छाक—बंगला है।

धारक (सं० पु०) धरति जलादि कमिति धृ-जुन्, कलाग, चढ़ा। इसका उत्पत्ति विवरण देखीपुराण में इस प्रकार लिखा है—

अग्रानि सुनियेयि कथा था, 'है महासुने। धारका पर्याप्त कलधकी उत्पत्ति, लक्षण और परिभाषके विषय में कहता है' की सुनिवे। जब देवता और असुर मन्दर पर्वत की मन्थनदण्ड-धोर बासुकी की रज्ज बना कर समुद्र मथने लगे, तब अमृत रत्नने के लिये ही कलधकी उत्पत्ति हुई थी। विश्वकर्मा ने देवताओं को सना से कर देने बनाया था, इसी से देवगण ने इसका नाम 'लक्ष्मण' रखा। लक्ष्मण के सुघने ब्रह्म, गले में मङ्गेश्वर, मूल में विष्णु

गये । उस समय दस पञ्चलमें यही स्थान वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध था ।

उक्त घटनाके बाद शम्भोजीने इसे लूटा और जला कर तहस नहस कर डाला । १८१८ ई०में यह शहर हट्टिश गवर्मेण्टके हाथ लगा । १८२५ से ३६ ई० तक यहां रह कर अंगरेज-सेनापति पाउटरमने मौल-भैरव संगठन की । उन्हींके नामसे प्रसिद्ध यहाँका बंगला देखने योग्य है । यहाँ सदर कदचरो, मौल सेनापोका गड्डा, डाकघर, चिकित्सालय और स्कूल हैं । इस शहरमें जनका बहुत अभाव है । यहाँकी प्राय १२००० रूपयेकी है ।

धारणयन्त्र (सं० स्त्री०) तन्मोक्त पूजाप्रयन्त्रभेद । धारणा (सं० स्त्री०) धार्यते या साधं णिच्, पुष्-टाप् । १ बुद्धि । २ मगध्यपथस्थिति । पर्याय—संस्था, मर्यादा, स्थिति । ३ योगाङ्गविशेष, योगके एक अंगका नाम । अद्वितीय वस्तुके विषयमें अन्तरिन्द्रिय धारणका नाम धारणा है । (सैदान्तसार)

‘तस्मात् समस्तगो नामाधारे तत्र चैतसः ।

कुर्वति संस्थितिं वा तु भिन्ना ब्रह्मधारणा ॥”

(विष्णुपु० ६।१।७४)

परब्रह्ममें मनकी संस्थिति है, मनका दैर्घ्यसंस्थापन है ।

“ब्रह्मात्मविष्ठा ध्यानस्यात् धारणा मनसोदृष्टिः ।

अहं ब्रह्मेवैश्वर्यान् समाधिर्माहागः स्थितिः ॥”

(गङ्गपु० ४८ अ०)

ब्रह्मविषयमें आत्मचिन्ताका नाम ध्यान है और मनकी दृष्टि धैर्य संस्थापन है अर्थात् किसी भीर विचलित न हो कर केवल ब्रह्म-विषयमें मनकी समाधान करनेका नाम धारणा है । इसका विषय अग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—

अथ वस्तुमें मनकी जो संस्थिति है, उसका नाम धारणा है । मन किसी भीर विचलित न हो, केवल अथ वस्तुमें निश्चित रहे, उसीको धारणा कहते हैं । बाहरकी भीर किसी प्रकारका लच-न-रह, चित्तका लक्ष्य केवल एक ही भीर रहे, निर्वीर्य प्रदेशमें दीप जिस प्रकार विचलित नहीं होता, स्थिर रहता है, उसी प्रकार चित्त अथ

किसी भीर विचलित न हो कर एक मात्र अथ वस्तुमें अवस्थित रहता है, तब उसे धारणा कहते हैं । जो धारणाभ्यासयुक्ता है अर्थात् जिसका चित्त इस प्रकार स्थिर हुआ है, उसे अन्तःकालमें स्वर्गलाभ होता है । इसीसे प्रत्येक व्यक्ति को धारणाका अभ्यास करना आवश्यक है । (अग्निपु० ३७५)

इसका विषय पातञ्जल-दर्शनमें इस प्रकार लिखा है—योगफलका प्रथम अङ्ग धारणा है । चित्तकी देश विशेषसे बांध रखनेका नाम धारणा है । राग-द्वेषादि शून्य हो कर पूर्वोक्त प्रकारकी मैत्रादि भावना द्वारा निर्मल चित्त हो कर यमनियमादिमें सिद्ध हो कर किसी एक योगासन पर ऋतुभावसे अर्थात् अनुभवावसे बैठे । अनन्तर इन्द्रियोंकी चपने चपने विषय रूपादिसे वा चपने चपने गन्तव्य स्थानसे प्रत्याहरण करके चित्तके साथ मिला दो । बाद उस प्रकारके चित्तको नामाधर्म, भ्रू मध्यमें, हृत्पद्ममध्यमें, चयवा नाड़ी-चक्र आदि प्राध्यात्मिक प्रदेशमें धारणा न कर भूत भौतिक चयवा किसी उत्तम मूर्त्ति आदि बाह्य वस्तुओंमें धारण करो । ऐसे प्रयत्नसे धारण करना चाहिये कि चित्त उससे विच्युत न हो सके । इस प्रकारसे चित्तकी बांध सकनेसे ही धारणा-योग प्राप्त होता ।

धारण करनेका नाम धारणा है । उस धारणाके स्थायी हो जानेसे वह ध्यानमें परिणत हो जाता है । ईश्वर चयवा जो कुछ अभिमत वस्तु है, उसीमें मनो-निवेश करनेकी चेष्टा करो, पीछे चित्तके चारों भीरकी दृष्टियोंको उन उस वस्तुमें ही खींच कर उस अभिमत वस्तु वा ईश्वरमें अभिनिविष्ट करो । जब इन्द्रियां किसी भीर विचलित न हो कर एकमात्र अथ वस्तुमें स्थिर रहेंगे, तभी प्रह्लन-धारणा-योग सिद्ध होगा । इस प्रकारके धारणा-योगसे सिद्ध हो जानेसे ध्यान होता है । उस धारणाये पदार्थों यदि प्रत्ययकी अर्थात् चित्तवृत्तिकी एकरतागता उत्पन्न हो, तो उसका नाम ध्यान पड़ता है अर्थात् जिस वस्तुमें तुमने बाह्येन्द्रिय निरोध करके अन्तरिन्द्रिय धारण की है, उस वस्तुका ज्ञान यदि तुम्हारे मनमन्तरित भावमें वा अविच्छेदमें अर्थात् प्रवाहाकारमें प्रवाहित हो, तो उस प्रकारका चित्तप्रवाह ध्यान कहलाता

चरितानसंख्यी भक्तता भूमिका नृदयमें ध्यान करना चाहिये, इस प्रकार ध्यान करनेसे चित्तधारणा होती है। विष्णुगणितसम्बन्धित भर्तृचन्द्र सट्टय जलका ध्यान करनेसे जलधारणा, इन्द्रगोपतुल्य त्रिकोण रेफ-संयुक्त रुद्रकपर्क क पश्चिष्ठित तेजका ध्यान करनेसे वह्नि-धारणा, दोनो भूके मध्यस्थलमें वायुतत्त्वका ध्यान करनेसे वायुधारणा होती है। इस पञ्चभूतको धारण कर सकनेसे पञ्चभूत जय किया जाता है। इसके पांच नाम ये हैं—सूक्ष्मानी, ज्ञानानी, शोधनी, भाविनी और श्रमनी।

“स्तम्भनी क्वावनी चैव शोधनी भाविनी तथा।

शमनी च भवभेदा भूतानां च धारणाः॥” (काशीख०)

४ वृहत्संहितामें जलसूचक वायु विशेष-धारणा-आत्मक योगमें है। इसका विषय वृहत्संहितामें इस प्रकार लिखा है—

ज्यैष्ठमासके शुक्लपक्षके अष्टमी बाद चार दिन वायु द्वारा गम धारण जानकारका समय है। श्रुतु शुभ वायु युक्त होनेसे वा सिन्धु सिन्धुवाकाश होनेसे यह गम-धारण प्रयत्न मानी जाती है। इसमें स्नाति नचत्र चतु-ष्टयमें यदि वृष्टि हो, तो क्रमशः आध्यात्मिक भास समेकी परिरुत होगी। यही धारणा नामसे प्रसिद्ध है। यदि सब दिन एक तरहके हों, तो शुभ और अतन्त्र होनेसे प्रथम होता है तथा उस दिन तत्त्वका भय अधिक रहता है। अगिठने इस विषयका ऐसा निरूपण किया है—परिच्छेद चन्द्रस्य युक्त समो धारणाये शुभप्रद होती है। जब यह समो विषय शुभके प्रति उपस्थित होती है, तब पण्डित लोग शस्यकी वृष्टि होगी, ऐसा कहते हैं। (वृहत्संहिता २२ अ०)

धारणावत् (सं० त्रि०) १ सिन्धुवाली, जिसकी धारणा-शक्ति बहुत प्रबल हो।

धारणी (सं० स्त्री०) धार्यते शशीमनया, छ-णिच्, वयुट्, स्त्रियां ङोप्, माङ्गिका, माङ्गो। २ श्रेणी, पंक्ति। ३ धारणकरनेवाली, पुत्री। ४ मोक्षी लकोर। ५ महाकन्द-शकविशेष। ६ धारणी कन्द।

धारणी—बौद्धतन्त्रका एक पद। यह प्रायः हिन्दुतन्त्रके कवचके समान है। यह अमीष्टचित्ति, सपदेवताप्रीति, वृष्टिसे पञ्चाङ्गित और दीर्घजीवन-लाभके उद्देश्यसे

शरीरमें धारण की जाती है, इसीसे इसको धारणा कहते हैं। बौद्धोंकी धारणीमें अधिकांशके उपदेष्टा बुद्ध और श्रीतः भानन्द या वज्रपाणि माने जाते हैं।

इसका प्रचार नेपाल, तिब्बत, चीन, जापान, तथा बर्माके बौद्धोंमें अधिकतासे है।

हिन्दुओंमें जिस तरह रामकवच, ताराकवच इत्यादि कवच प्रचलित हैं, उसी तरह बौद्धोंमें भी महा-वैरोचन, महामङ्गुली, प्रत्यङ्गिरा प्रभृति बुद्ध, बोधिसत्व और बुद्धमूर्तियोंकी धारणी प्रचलित है। नेपाली बौद्धोंके धारण्डे संग्रह नामक ग्रन्थमें इन सब धारणियोंका विवरण पाया जाता है। अतः साहित्यका प्रज्ञापरिमितके नवम अध्यायमें धारणीका विषय वर्णित है।

धारणीमति (सं० स्त्री०) समाधिभेद, योगमें एक प्रकारकी समाधि।

धारणीय (सं० त्रि०) धारि कर्मणि प्रनीयर्। १ धार्य, धारण करने योग्य, जो धारण किया जा सके। (पु०) २ धारणीकन्द।

धारणीयन्त्र (सं० स्त्री०) धार्यते धारि कर्मणि प्रनीयर्। धार्यं देवताप्रीति का यन्त्रभेद। यह यन्त्र पूजायन्त्रसे भिन्न है। यह सोनेकी कलमसे कैसर, रोचन, लाख, कस्तूरी, चन्दन और हाथीके मूँदसे लिखा जाता है और शरीर पर धारण किया जाता है।

जो यन्त्र जमीन या शवसे छू गया हो, अल गया हो फेंकना चाहिये। धारण नहीं करना चाहिये। धारण (सं० पु०) १ प्रकारकी दवा जो हाथीकी खिलाई जाती है। २ धारण देखो।

धारय (सं० त्रि०) धारि-ण, धारक धारण करनेवाला। धारयत्कवि (सं० त्रि०) १ कवियोंके धारणकारी। २ जलशाली।

धारयत्चित्ति (सं० त्रि०) जो यज्ञके लिये जमीन धारण या प्रयत्न करता हो।

धारयद्वा (सं० पु०) आदिस्वका एक नामान्तर। धारयिष्ठ (सं० त्रि०) धारि-स्वच्, धारणकर्ता, धारण करनेवाला।

धारयितव्य (सं० त्रि०) धारण करने योग्य, सहनीय। धारयितो (सं० स्त्री०) १ धारण करनेवाली। २ पुत्री।

धर्मार्थ निर्वाहके लिये जाती थीर मुखा है। -कोटे पार्श्वमें पथान् पथी कम समुच्चोत्रा पाया है, पाया: क्लोमिगो, मोमग, येथ चीर इत्यादि नहीं रहते। बाइल, बरजतो चीर छोड़ उपविभागमें मोर-मोमग नामक एक स्थिर योथोके मोमरहते है। इन मोमोका मुक्त नाम कदा तथा माताय पाटिका छोड़ना है।

धरधारको पनेक जमीन नाम गवर्नमें गृह पथीन है जिसे पानना जमीन कहते हैं। मजा गवर्नमें गृहमे यह जमीन बन्दीनया मेमो है।

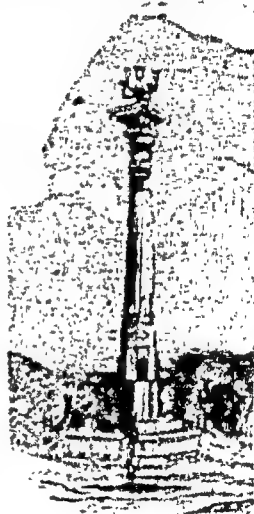
गर्हाको 'रेहार' या बहरी जमीन ही विभिन्न मूल-पात है। वर्ष भरमें यहां दो फसल लगती है, पहली परोक चीर दूमरी रब्बी। परोक पनात्र पायादमें बोया जाता चीर कालिकमें पड़ता है। कपासके सिवा अन्य रब्बी फसल पाणिनमें बोई जाती चीर माघ, फाल्गुनमें पड़ती है। ग्राहवमानमें कपास बोई जाती चीर फाल्गुन या चौथमें तोड़ी जाती है।

इन क्रिषिमें १४ प्रधान मजद है—१ धारवार, २ दूरको, ३ रामोवेष्ट, ४ गडग, ५ मगमुन्द, ६ मयममुन्द, ७ मूलमुन्द, ८ माहमजरा या मडापुर, ९ कपेरो, १० मरेगम, ११ बाइल, १२ गुमीनकरी, १३ व्याङ्गनी चीर १४ मुन्दरगी।

शिक्षा:—पूर्व समयमें यहांके बढागो नामक बगानमें बालुका राजगण रहते थे। इन बगानके सिवा उसके पथेन कई जगहोंमें महु, रह, मेन्क पाटि राजगण राज्य करते थे। कभी कभी यह बगान बाहुकूट राजाघोके अधिकांशक हो गया था। इन क्रिषिके जाल बघनोंमें जो एक प्राचीन सिमानिनि, मायकलकादि काश्चित्क दुष्ट है उसमें बहाके प्राचीन हिन्दू राज्यका चर्चित्क विनाश पाया जाता है।

१४वीं जगहोंमें विजयनगरके हिन्दू राजाघोके पथद दण्डागर्भमें यह बगान विजयनगरमें सिमा दिवागया था। १८३६ ई०में ताकिगाटको अङ्ग्रेजोंमें यह विजयनगरके राजाघोका मोरम चुर कर दिया गया, सब तरह सिमा बिनागुरके सुमममम-भावाके मायनगर्भमे दृश। १८७१ ई०में दिवागोके पथेन मडागुरोंमें इन क्रिषिके लट चीर मजद था। इन

मजदके मादा एक मजदारी तक महु सिमा दण्डे कम बार मडागुरागानके चीर पीछे मुकाके पनात्र अधिकांश था। १८३६ ई०में हैदर अलीने इन चीर पनात्र अधिकांश जमाया। जिसका पथ चौकीन पाया था कि जटिद मेन्क के बहागोमें मडागुरोंमें पुनः धारवार दृश चीर मगरको पनात्रा। पीछे १८१८ ई० तक मडागुरोंके गुवागनमें इन क्रिषिके माणि बहागो रवी। पथी नाम पथवाके पथ:पथन होने पर यह सिमा कटिद राजके पथीन मडागुर अधिकांशमें सिमा दिवा गया।



धारवार: दीवार।

धारवारमें प्राचीन कोर्निके पनेक विज्ञ पाये जाते हैं। मडागुरकले पायायाया माटि: प्राचीन हिन्दू सिन्धका विभिन्न पथिबद देला है। इन क्रिषिके बढागो: नामक जगहमें जमीन बालुका राजाघोको पाटि राज-पार्श्वको। मडागुर हैवी। बढागोमें भी पनेक कम कोर्निके पाये जाते हैं। यह मडागुर मजद बार भी यह हिन्दू देवालय जगहमें लट है पथेन दिवा कद पाया

होना पड़ता है। * धारवारके एक दीपदानका चित्र भी दे दिया गया है। उसीसमं भी इस तरहकी दीपदण्डो है, किन्तु इस तरहका जौषा स्तम्भाकार पत्थरका खतन्त्र दीपदान और कहीं देखनेमें नहीं आता। यह दीप-दण्डो उल्टा पत्थरकी बनो हुई है। इसके ऊपर रोशनी करनेसे यह बहुत दूरसे भी देखी जाती है। पूर्व समयमें इनके साधुवेता इस दीपदानका प्रकाश देख कर तब पोछे भोजन करते थे।

पुलिस विभागमें एक डिस्ट्रिक्ट सुपेरिण्टेण्डेण्ट और एक सहायकी सुपेरिण्टेण्डेण्ट तथा दो इन्स्पेक्टर हैं। यहां १६ पुलिस स्टेशन है। पुलिसकी संख्या ८२५ है। इसके सिवा, १० सवार और एक दफादार है। धारवार शहरमें डिस्ट्रिक्ट जेल है जिसमें कैदल ३३६ कैदो रखे जाते हैं। डिस्ट्रिक्ट जेलके सिवा और कई एक छोटे छोटे जेल हैं। जिले भरमें ४४३ विद्यालय हैं जिनमेंसे ५२० प्राइमरी, १० सेकण्डरी, ३ हाईस्कूल और १२ ट्रेनिंग स्कूल हैं। इसके सिवा यहां एक अस्पताल, पाठ शौच-शाला और तीन रेलवे-मेडिकल स्कूल हैं।

२ धारवार जिलेका उत्तर-पश्चिम तालुक। यह अक्षां १५° १८' से १५° ४१' ०" और देशां ७४° ४३' से ७५° १३' ०"में अवस्थित है। औपरिमाण ४३० वर्गमोल और लोकसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें धारवार और होबली नामके दो शहर और १२८ ग्राम लगते हैं। तालुककी आय दो लाख रुपयेसे अधिककी है। वार्षिक हटियात ३४ इंच है।

३ उत्तर जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षां १५° २०' ०" और देशां ७५° १' ०"में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ३१२०८ है। नतीसत जमानेके ऊपर यहांका दुर्ग अवस्थित है। पश्चिम घाट पर्वतकी सबसे पश्चिम शाखा इसी नगरके पश्चिम हो कर गई है। नगर और दुर्गके चारों ओर ऊँची भूमि और हवादिके रहनेसे पूरा दिशासे यह देखनेमें नहीं आता। सर्वोच्च

• Architectural History of Dharwar and Mysore, 1866, Dr. Borge's Report on the Belgaum and Kalgudi Districts 1874 and Fergusson's History of Indian and Eastern Architecture, p. 437-45

भूभाग पर यहीकी कल्पवृक्षी अदायत है जहाँमें मम्मूचा शहर देख पड़ता है। अदालतके नीचे एक सुन्दर मन्दिर है। मन्दिरसे कुछ दूर माइलरगुड़ नामका एक पहाड़ है। पहले यही पहाड़ धारवार दुर्गका सिंह-द्वार माना जाता था। दुर्गमें एक कोस उत्तर-पश्चिममें छावनी है।

धारवार नगर और दुर्ग कब बनाया गया इसका कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। स्थानीय सोमेश्वर-मन्दिरमें सोमेश्वरकी उत्पत्तिका स्थलपुराण है, उसमें भी धारवारका कोई उल्लेख नहीं है। कहते हैं, कि धानगुण्डिके राजा रामराजके पत्नी उनके वन विभागकी रक्षाके लिए धाराशिव नामके एक कर्मचारी थे। १४०३ ई०में उन्होंने जो यहाँका दुर्ग निर्माण किया। १६८५ ई०में दिल्लीके मुगल सम्राटने इस दुर्ग पर आक्रमण किया। १७५३ ई०में महाराष्ट्र वीरोंने यह दुर्ग दखल कर लिया। १७७७ ई०में यह हैदर-अलीके हाथ लगा। १७८१ ई०में महाराष्ट्र-देवाभादक परशुराम भीने मराठा और कतिपय ब्रिटिश सेनाको साथ ले धारवार पर अधिकार जमाया। १८१८ ई०में पेशवाके अधिकारभुक्त देशोंके साथ साथ धारवार भी ब्रिटिश शासनाधीन हुआ। १८३७ ई०में यहांके ब्राह्मणों और निम्नजातोंमें दारुण विद्रोहकी आग प्रज्वलित हुई, जिससे दोनों पक्षके अनेक लोग निहत हुए। अन्तमें ब्रिटिश गवर्नमेंण्टने यह गोलमाल मिटा दिया।

धारवार दुर्ग कारुकार्यविशेष और सुदृढ़ है। सिपाहीविद्रोहके पहले इस दुर्गकी अवस्था अच्छी थी। पोछे इनके कई अंग तोड़ फोड़ दिये गये। अभी यह भग्नावस्थामें पड़ा है।

यह शहर ०६ मजलीमें विस्तृत है। यहां जौषा दो तला मकान बहुत कम है। शहरमें प्रायः पांच कोसको दूरी पर माइलरगुड़ पहाड़के ऊपर एक जैनियों के सा सुन्दर और प्राचीन पूर्वहारी देवमन्दिर है। इसके समीप भी बरगे पत्थरके धने हुए हैं और उनमें अच्छी कारीगरी दिखलाई गई है। मन्दिरके एक वृक्ष स्तम्भमें पारसी भाषामें लिपि भी खोदी हुई है जिसके पढ़नेसे मालूम होता है कि यह देवमन्दिर १६८० ई०में विजा-

धारापात (सं० पु०) धारायाः पातः ६-तत् । जनधारा-
पतन, पानीका गिरना ।

धारापुरम्—१ मन्दाज प्रदेशके कोयम्बतूर जिलेके अन्तर्गत
एक तालुक । यह पचा० १०° ३०' से ११° ८' ३०' और
देशा० ७७° १८' से ७७° ५४' पू०में अवस्थित है । भूपरि-
माण ८५३ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः २०११२०
है । इसमें एक शहर और ८५३ ग्राम लगे हैं । तालुकमें
मेकड़े पोछे ७७ भाग साल वालूमिश्रित मटो पाई जाती
है । यहां अमरावती, छप्पार और नोयेल नामकी नदियां
प्रवाहित हैं । तालुककी आय ४४०००० रुपयेकी है ।

यहां वन जङ्गल वा पहाड़ नहीं है । अधिकांशी
खेतो करके अपनी जोविका निर्वाह करते हैं । सरद,
मटर, तमाखू, सरसों और कपास यहांकी प्रधान उपज
है । इस तालुकके अन्तर्गत शिवनसमय और नौरोय
नामक स्थानमें देवमुर्ति देखनेके लिये सैकड़ों यात्रो
आते हैं । यहांकी भावहवा अच्छी है ।

१ वल तालुकका एक प्रधान नगर । यह पचा०
१०° ४५' ३०' और देशा० ७७° ३२' पू० तिहपूर रेलवे-
स्टेशनसे ३० मील दक्षिण अमरावती नदीके किनारे
अवस्थित है । लोकसंख्या लगभग १७१०८ है । कहते हैं,
कि यहां एक समय भोजराजाओंकी राजधानी थी । ११६७
और १७४६ ई०में मल्लिकार्जुन राजा ने मरुपुराके राजासे इसे
दो बार जीत लिया था । जब हैदरअली और टीपू सुलतान-
के माथ चंगरेजोंकी लड़ाई हुई थी, तब यहां पर कई
बार युद्ध हुआ था । उस समय यह स्थान कभी मुसल-
मानों और कभी चंगरेजोंके हाथ लगा था । १७८२ ई०में
यहांके दुर्गकी दीवार खाद तोड़ फोड़ दी गई । कुछ
दिन यहां जिलेकी सदर कचहरी थी, अब नहीं है ।
वहां तालुकका सदर, थाना, डाकघर, प्रौद्योगिक प्रश्रुति
है । प्रति सप्ताह हाट लगता है जिसमें घी, घान, साल-
मिच, तमाखू, सरद और धनेका व्यवसाय होता है ।
अधिकांशियोंमें हिन्दूकी संख्या ज्यादा है ।

धारापू (सं० स्त्री०) धारास्थं पपू । पपूपद, एक
प्रकारका पूवा । इसके बनानेके लिये मैदेकी घी मिला
इस दूधमें डालते और तब घीमें डाल कर बनाते हैं ।
बाद इसमें चाड़ या चीनी मिला दी जाती है । भाव-

प्रकाशके अतुमार इसका गुण—सुमधुर, अलकारक,
पित्तनाशक, सुस्निग्ध, रुचिकर, हृद्य और वात-
नाशक है ।

धाराफल (सं० पु०) धाराफली यस्य । मदनहृद्य, मेन-
फलका पेड़ ।

धारायन्त्र (सं० पु०) धाराया जनधारायाः प्रस्रवायै यन्त्र ।
जलप्रस्रवयन्त्रभेद, वह यन्त्र जिससे पानीकी धार छूटे,
फुटारा ।

धाराज (सं० त्रि०) धारा प्रवत्यस्य निधादित्वात् लङ् ।
धाराशुल खड़ादि, जिसकी धार तेज हो, धारदार ।

धारावत् (सं० त्रि०) १ धारविशिष्ट, धारदार । २ जल-
वत्, पानीके समान ।

धारावनि (सं० पु०) धारायाः वृष्टेः अवनिः प्रव्यौव,
अभिधानात् पुंस्त्वम् । वायु, हवा । (कोई कोई कहते
हैं 'परवनिष्ठ' परवत् लिङ् होता है, इस नियमके
अनुसार यह शब्द स्त्रीलिङ्ग होना उचित है । क्योंकि
'अवनि' शब्द स्त्रीलिङ्ग है, इसलिये यह शब्द स्त्रीलिङ्ग
होना चाहिये । किन्तु यहां जो पुलिङ्गका व्यवहार किया
गया है, वह प्रामादिक है ।)

धारावर (सं० पु०) धारया जनधारया धावणीत्याकायं
ह-अच् । मीघ, बादल ।

धारावर्ष (सं० पु०) धारया मन्ताया अवच्छिन्नेन वर्षः ।
अवच्छिन्नदरूपसे वर्षण, लगातार बरसना ।

धारावर्ष—१ इस नामके कई एक राष्ट्रकूट राजा हो गये
हैं । राष्ट्रकूट राजवंश देखो । २ सालवर्ष एक राजा । ये
११वीं शताब्दीमें राज्य करते थे । परमार-राजवंश और
मालव राजवंश देखो ।

धारावाही (सं० त्रि०) धारया मन्ताया वहति वह-णिनि ।
अवच्छिन्नदरूपसे जायमान, जो धाराके रूपमें जारी
बढ़ता हो ।

धाराविप (सं० पु०) धारा एव विपमित यस्य माघमायक-
त्वात् । खड़ा, तलवार ।

धाराश्रु (सं० स्त्री०) श्रु-प्रवाह, धाँसूका गिरना ।

धारासल (सं० स्त्री०) श्रुचोस्तरस, श्रुचका रस ।

धारासम्प्रात (सं० पु०) धारायां मसू सम्यक् पाली यस्य ।
महावृष्टि, बहुत तेज और अधिक वृष्टि, जोरोंकी बारिश

इसका प्रयोग—धारा, संघात और धामार है।
धारामर (मं० वि०) लगातार छटि, बराबर गाने
करना।

धारानुद्धी (मं० स्त्री०) धारावृत्तानुद्धी मध्यमो०।
विधारा अनुद्धी, विधारा घ घर।

धारि (मं० स्त्री०) धारु, उमर।

धारिन् (मं० पु०) धृ-णिनि। १ धीनृत्त, धीनृका पेड़।

२ एक वर्षवृत्त। इसमें प्रत्येक चरणमें पहले तीन लगन
और तब एक योग होता है। (वि०) ३ धारण करने-
वाला। ४ धनार्थ धारणायुक्त, किसी धन्यसे तात्पर्य को
भली भाँति जाननेवाला। ५ धरण सेनेवाला, कर्मदार।

धारिणी (मं० स्त्री०) धारिन्-डीप्। १ धारी, धूम्र,
भूमि। २ गान्धर्वनीतृष, सेमरका पेड़। ३ चतुर्दश
देवयोपिदृगण, चौदह देवताओं को धियाँ जिनके नाम
ये हैं—गंधी, वनस्पति, गार्गी, धूम्रवीर्या, कचिराकृति,
सिनिधानी, कुङ्कु, राक्ष, अनुमति, आयति, प्रसा, सेना
और वेला। ४ धाधार स्वरूप। (वि०) ५ धारणकर्त्री,
धारण करनेवाली।

धारी (हिं० स्त्री०) १ सेना, फौज। २ समूह, झुण्ड। ३
रेखा, लकीर। ४ पुत्रा।

धारीदार (हिं० वि०) जिसमें लम्बी लम्बी धारियाँ हों।

धारु (मं० वि०) धयति धियतीति धे कृ (दाघटि विदध-
धेकः। वा ३।२।१५८।) धारुक्त्या, धीनेवाला।

धारुजल (हिं० पु०) पुत्र, ललवार।

धारुपुर—धयोधार्के प्रतापगढ़ जिलेके चम्पान्त एक मण्ड-
याम। यह माणिकपुरमें ८ मीलकी दूरी पर अवस्थित
है। धारुसाहने यह ग्राम बनाया था।

धियाँ को विशेषज्ञ समय यहाँके तालुकदारोंने चंग-
रेज्जो काय्य दे कर उनको रक्षा की थी। यहाँ साव-
ने अधिक खपेका व्यवसाय होता है। लोकमें बड़ा प्रायः
हीन हज़ार है। यहाँ एक गजर्गशिष्ट गुरु और
प्राचीन गिबमन्दिर है।

धारोष्ण (मं० स्त्री०) धारायां टोहनप्रपाते उत्पन्ना।
धनमें गिनना क्या ताजा दूध। धारोष्ण दूध बहुत उप-
योगी होता है। वह कुछ गरम होता है और स्नानमें
निकरनेके कुछ समय बाद तक गरम रहता है। वैद्यक-

के अनुसार ऐसा दूध पशुपति के ममान, भ्रम हरनेवाला,
विद्रा मानेवाला, बोध और पुत्रप्राप्ति बढ़ानेवाला,
पुष्टिकारक, पम्पिको बढ़ानेवाला, पति व्यादिष्ट और
विदोषनाशक है। गायका धारोष्ण ही सबसे श्रेष्ठ है,
भैरवा उत्तमा उपकारो नहीं होता।

धार्तराष्ट्र (मं० पु० स्त्री०) धृतराष्ट्रोऽपत्यं पश्य,
उपधामोप। धृतराष्ट्रका अपत्य।

धार्तराष्ट्र (मं० पु० स्त्री०) १ धृतराष्ट्रके अपत्य दुर्वाधिरादि।
धियाँ डोय। २ दुःखना। (पु०) ३ धृतराष्ट्र-संगीडेव नाम
सिद्ध, धृतराष्ट्रके बंधका उत्पन्न एक नागका नाम। धृ-
राष्ट्र सुराष्ट्रदेमि भवः पश्य। ४ लक्ष्मण-वत्पुत्रव्युत्त
हंस, कानि रंगकी चोंच और पैरोंवाला हंस।

धार्तराष्ट्रपदी (मं० स्त्री०) धार्तराष्ट्रस्य पाद द्वा पादो
मूलं यस्याः डोय-ततोपद्रावः। १ हंसपदी लता। २
रक्तवल्गुलका, लाल रंगका लज्जालु।

धार्तराष्ट्रि (मं० पु०) धृतराष्ट्रका पण्य।

धार्तर्य (मं० पु० स्त्री०) धृतायाः अपत्यं टक। धृताका
अपत्य।

धर्म (मं० वि०) धर्मस्योद् पश्य। १ धर्मसम्बन्धी।
धियाँ डोय। धार्तर्य पश्य। २ धर्मस्य।

धर्मपत (मं० वि०) धर्मपतेरपत्यादि धर्मपतादित्या-
दयः। धर्मपति सम्बन्धीय। धियाँ डोय।

धर्मपत्न (मं० वि०) तत्र भवः पश्य। १ धर्मपत्न-
भग, जो अच्छे स्थानमें उत्पन्न हुआ हो। (पु०) २
कीलक, कील, खूँटी।

धर्मायन (मं० पु० स्त्री०) धर्मस्य गोत्रापत्यं पत्न्यादित्या-
कन। धर्मका गोत्रापत्य।

धार्मिक (मं० वि०) धर्मपरताति ठक। (धर्म वरति।
वा ३।३।४) यद्वा धर्मसंघोते विद वा ठक। १ धर्मयोग,
धर्मोक्ता, धर्मोचरण करनेवाला, पुण्यात्मा।

जो विभागीय, गणों का समायुक्त, दयाप्रिय, देवता
और पतिविभक्त है वे ही धार्मिक पदवाच्य हैं। जो गण
समूह धर्मके पथ पर विचरण करने, उनके धार्मिक कहते
हैं। धर्मशब्दमें धर्मका जो लक्षण मिलता है, उन्हीं धर्म-
मपयोग धर्मोचरणकारीको धार्मिक कहते हैं। २ धर्म
सम्बन्धी।

धार्मिकता (सं० स्त्री०) धार्मिकत्व भावः तत्त्व, तत्त्व
टाप। धर्मशोभता, धार्मिकता भाव।

धार्मिक्य (सं० क्लो०) धार्मिक पुरोहितादित्वात् भाव
वक्। धर्माशुशीलन, धार्मिक होनेका भाव।

धार्मिण (सं० स्त्री०) धर्मिणां समूहः। धार्मिक समूह।

धार्मिण्य (सं० पुं०-स्त्री०) धर्मिण्याः अपत्यं शूद्रादि-
त्वात् ठक्। धर्मिणीका अपत्य।

धार्म्य (सं० द्वि०) धर्म्ये इति घृ-ण्यत्। १ धारणीय धारण
करनेके योग्य। (पुं०) २ स्वतः, कपड़ा।

धार्म्यत्व (सं० क्लो०) धार्म्यस्य भावः धार्म्य-त्व धार्म्यका भाव।

धार्म्य (सं० द्वि०) घृष्ट-ण्यत्। घृष्टका भाव, घृष्टता।

धार्म्यत्व (सं० पुं०) घृष्टत्व-मन्त्रका अपत्य।

धार्म्य (सं० क्लो०) घृष्टस्य भावः कर्म या व्यञ्ज्। प्राग-
लभ्य, निर्वर्ण्यत्व, वैयर्थी।

धार्म्यक (सं० क्लो०) घृष्ट्य राजाके एक पुत्रका नाम।

धाव (हिं० पुं०) एक प्रकारका लंका और सुन्दर पेड़।

इसे गोक्षरा, ध्रुवरा, वकली और खड्गधाया भी कहते हैं।

धावक (सं० द्वि०) धावति शीघ्रं गच्छति धाव-ण्यत्।

१ धावनकर्ता, दोड़ कर चलनेवाला, हरकारा। धावति
वक्तादिकं साटिं धाव-ण्यत्। २ वस्त्रादि प्रमाणक,
रजक, घोषी।

धावक—संस्कृत भक्तद्वार और वाटकमें यह नाम पाया
जाता है। संस्कृतवित् फनेक पण्डितोंका विश्वास है,
कि धावक एक पालहारिक थे। माहित्यमार प्रभृति
भक्तद्वार ग्रन्थोंमें धावकका नाम पाया जाता है।
साहित्यसारमें एक जगह लिखा है—धावक अत्यन्त
दरिद्र थे। उन्होंने मन्त्रमिहिके गुणसे कवित्वशक्ति
प्राप्त कर १०० सर्गोंमें "नैपथ्यचरित्त"की रचना की और
उसके द्वितीय चर्प राजसे पुरस्कारस्वरूप निष्कार अमीन
पाई थी।

कालिदासने मासविकामिमित्रकी प्रस्तावनामें लिखा
है—प्रतिष्ठित धावक सोमिष्ठ कविपुत्रादिके प्रबन्धका प्रति-
श्रम कर क्या बर्त्तमान कवि कालिदासका शब्द आदर
पा सकता है।

उक्त प्रमाणसे सिद्ध होता है कि काव्यप्रकाश और
कालिदासका मासविकामिमित्र रचे जानके पहले धावक

नामके एक कवि हो गये थे। किसीका मत है, कि धावक
कविने ही ओहर्षका नाम दे कर नागानन्द और रत्ना-
वल्लिनाटिकाकी रचना की है।

अध्यापक बुधर धावकका नाम मिटा देना चाहते
हैं। उनका कहना है, कि काश्मीरमें भारदा भवचरमें
लिखा हुआ जो काव्यप्रकाशका ग्रन्थ पाया गया है,
उसमें धावकको जगह 'वाण' देखा जाता है। सारदा
भवचरका धावक और वाण शब्द एकमा प्रतीत होता
है। * अध्यापक मेक्समूलरका विश्वास है, कि नागानन्द
भी वाणके बदलेमें धावकके नाम पर प्रयुक्त हुआ है।†

किन्तु हम लोग इस नामको सड़ा नहीं सकते। जब
अधिकांश प्राचीन पालहारिकोंने इस धावकका नाम
उल्लेख किया है, जब माहेन्द्र, नागेश्वर, वेदनाथ, जय-
राम आदि काव्यप्रकाशके प्राचीन टीकाकारोंने धावक
नाम प्रयुक्त किया है, तब यह नाम वाणके बदलेमें जो व्यक्त
होता था रहा है यह ठीक प्रतीत नहीं होता। कालि-
दासके ग्रन्थमें भी जब यह नाम पाया जाता है तब और
सन्देह करनेका कारण ही न रहा। किन्तु यह धावक
ओहर्षके समयमें विद्यमान थे वा नहीं, इसमें भी सन्देह
है। यदि वे ओहर्षके समसामयिक थे, तो
ओहर्षके बहुपूर्ववर्त्ती कालिदासके ग्रन्थमें धावक-
का नाम किस तरह पाया जा सकता है, कि
धावकने ओहर्ष नामक किसी दूसरे प्राचीन राजा-
का शायद लिया हो। उस समयके पालहारिक गण
धावकका परिचय और कालिदासके परवर्त्ती काव्य-
कुलाधिपतिको विद्योत्साहिता और पण्डितोंके शायद-
दासत्वका परिचय या कर धर्षके विषयमें जो सब ग्रन्थ
बनाये गये हैं वे सब धावक ज्ञात ठहराते हैं। यद्यार्थमें
धावक कवि और पालहारिकके सिवा और कोई विशेष
परिचय नहीं पाया जाता है।

धावड़ा हिं० पुं०) धवका पेड़।

धावण (हिं० पुं०) दूत, हरकारा।

धावन (सं० क्लो०) धाव भावे वृद्धत्। १ शीघ्र गमन,

* Dr. Bulhe in India Antiquary, Vol. II, P. 331
and Hall's Vajrayana-darśan, P. 15.

† Max Muller's India, what can it teach us, p. 231,

वदत लब्धौ या दोह कर जाना । २ प्रसासन, धोने या माफ करनेका काम । ३ दृष्टि, वद चीज जिससे कोई पदार्थ धोये या माफ को जाय । ४ दूत, दूरकरा ।

धावनि (मं० स्त्री०) धाव या दृष्टकात् धनि । १ दृष्टि-पर्णी, पिठवन । इसका संस्कृत पर्याय—दृष्टिपर्णी, दृष्ट-पर्णी, चित्रपर्णी, क्रोट, विषा, मिहपुच्छी, कलसी चोर गुहा है । २ कण्टकारी, भटकटैया ।

धावनिजा (मं० स्त्री०) १ कण्टकारीका, कटेरी ।

२ दृष्टिपर्णी, पिठवन । ३ जंटीनी मजीय ।

धावनी (मं० स्त्री०) धावनि छटिकारादिति डोप । १ दृष्टि-पर्णी, पिठवन । २ कण्टकारी, भटकटैया । ३ धामकी, धवका फूल । ४ कपिलवृक्ष, देवांच, कौठ । ५ शमवृक्ष, मनका पेड़ ।

धावरा (हिं० पु०) धव देखो ।

धावा (हिं० पु०) १ धाकमण, कमवा, चढ़ाई । २ किसी कामसे लिये लट्ठो जलदो जाना ।

धावम, (मं० पु०) धा-वसन् । धरत वहाड़ ।

धामि (मं० पु०) धारयति प्राधान्यं धा-वमि । १ चक्र चमज । २ गृह, घर । (ति०) १ धारणकारी, धारण करनेवाला ।

धाह (हिं० स्त्री०) जोरसे चिन्ता कर रोगा, धाड़ ।

धिग (हिं० स्त्री०) लजम, छोगा धोंगी, शरारत ।

धिगरा (हिं० पु०) धीगरा हेतो ।

धिगा (हिं० पु०) १ उपद्रवी, शरारती, बटमाग । २ निर्लज्ज, बेधर्म ।

धिगारि (हिं० स्त्री०) १ उपद्रव, लजम, शरारत । २ निर्लज्जाता, बेधर्मी ।

धिगाधिगी (हिं० स्त्री०) धीगाधीगी हेतो ।

धिवा (हिं० स्त्री०) १ कन्या, शेटो । २ कोई छोटी लहरी ।

धिक् (मं० धम्य) धक नाशने धा धारि या दाहकात् धिकम् । हताशुचक एक शब्द, मानत । २ भक्षणा, निरस्कार । ३ निन्द, शिकायत ।

धिक् (हिं० धम्य) धिक्, मानत ।

धिक्कार (मं० पु०) धिक्, इत्यस्य कारः करणं धिक् ।

निरस्कार मानत, फटकार । इसका संस्कृत पर्याय—

जोकार, चमहेना, चवमानन, सेज, निहार चोर, चम-टर है ।

धिक्कारना (हिं० क्रि०) मानत ममानत करना, फट-कारना ।

धिक्कृत (मं० ति०) धिक्, कृत धर्मणि कृ । भर्त्सित, जो धिक्कारा जाय । इसका पर्याय चपपत्त है ।

तुम्हें 'धिक्' ऐसा शब्द जिसे कदा जाय, धमे धिक् त कहते हैं ।

धिक्किया (मं० स्त्री०) धिगित्य, चारणमेव क्रिया ।

निन्द, शिकायत ।

धिग्दण्ड (मं० पु०) धिगिति दण्डः । निर्मत्तानरूप दण्ड, निरस्काररूप दण्ड ।

धिक्कण (मं० पु०) मन्त्रक सहोर्णं जातिभेद, एक संहर जाति । शूद्रके चोरस चोर वेगार्थं गर्भमे ओ लपस होता है, उसे चायोगव कहते हैं । ब्राह्मण विना चोर चाधी-गवी माताये ओ जाति लपस होती है, उसे धिक्कण कहते हैं । यह जाति चर्मकार्य द्वारा चपमो ओविका निर्वाह करती है । भला तक चपमान किया जाता है, जि चर्मकार या चमार इसी धिक्कण जातिके चर्मार्थ है ।

मनुने लिखा है, कि धिक्कणोंका चर्मकार्य चोर देख जातिका भाण्डवादन हो उन लपओविका है ।

धिक्का (हिं० पु०) एक प्रकारकी दमनो ।

धित (मं० ति०) धा-क्त कान्दनी न हिः । निहित, स्थापित, रखा हुआ ।

धिति (मं० स्त्री०) धि धूमो हिन् । धारण ।

धिक्, (मं० ति०) दन्म-चन् तत ड । दृढ करनेमें इच्छुक, जो ठगना चाहता हो ।

धियजित्व (मं० ति०) कर्म वा बुद्धिं प्रोचयित्वा । (अर. १।१८।१)

धिय (हिं० स्त्री०) १ कन्या, शेटो । २ बालिका, लहरी ।

धियसाम (मं० ति०) धि धारि पेदे दाहकात् चमानच, क्रिय । धारक, धारण करनेवाला ।

धिया (हिं० स्त्री०) धिव देखो ।

धियामन्यसि (मं० पु०) धियां बुधोर्ना पतिः चतुक्, मना-माना । १ पूर्वजिनमित्र । ये मन्त्रधोच नामने विख्यात है । २ पासा । ३ हकपति ।

धियायत् (सं० त्रि०) इ कान्ती शब्द यन् अलुक् समासः ।
कर्माभिलाषी, जो काम करना चाहता हो ।
धियायु (सं० त्रि०) धि-धारणे धीयते ज्ञायते धनया धि-
यायुलकात् करणे श, धिया तां प्रक्षामाकनः इच्छति
क्वच, ततः क्वादेश स । अपनी बुद्धि या समझके अनु-
सार करनेवाला ।
धियायुक्त (सं० त्रि०) धिया कर्मणा वस्तु यस्मात् वेदे अलुक्
समासः । कर्मद्वारा वस्तु निमित्त देवभेद, सरस्वतीके
वर्गके एक वैदिक देवता जो 'धी' अर्थात् बुद्धिके देवता
माने जाते हैं ।
धियुष (सं० पु०) धृष्योति प्रागल्भ्यं ददाति धृष क्ण,
(इषे पिष व षहायां । उग. २।८१) । इहस्यति । २ मन्त्रा ।
३ नारायण, विष्णु । ४ पिच्छक, शुभ । (त्रि०) ५ बुद्धि-
मान्, प्रक्षामन्द, समझदार ।
धियया (सं० स्त्री०) धृष्योत्यनया धृष-क्यु धियादिप्रत्यय ।
१ बुद्धि, प्रज्ञा । २ लुत्ति, प्रशंसा । ३ वाक्, वाक्शक्ति ।
४ प्रह्लाद, पत्थर । ५ वावाद्यधिको । ६ पृथ्वी । ७ स्थान ।
८ हविर्होतृको स्त्री । (त्रि०) ९ धारयित्री, धारण
करनेवाली ।
धिययाधिय (सं० पु०) धिययायाः अधियः इतत् । १ वृह-
स्पति, देवताओंके शुभ ।
धियय्य (सं० त्रि०) धियययामिच्छति क्वच, क्वादेशोर्धो-
भावेऽलोपः । आत्मज्ञाषो, जो अपनी लुत्ति या बढ़ाई
करनेकी इच्छा करता हो ।
धियट (सं० स्त्री०) धियय्य निपातनात् कस्य टः । १
स्थान, जगह । २ गृह, घर । ३ मन्त्र । ४ अग्नि, भाग ।
५ शक्ति । (पु०) धृष्योति प्रगल्भो भवति धृष-य्य निपात-
नात् साङ्गः । ६ शक्ताचार्य ।
धियय्य (सं० स्त्री०) धृष्योति प्रगल्भो भवतोति धृष-य्य
(आगति वर्गसिपनर्लोति । उग. ४।१०७) निपातनात्
सकारस्य च इकारः । १ स्थान, जगह । २ गृह, घर ।
३ अग्नि, भाग । ४ मन्त्र । ५ शक्ति । ६ सत्कामेद ।
७ प्राणमिमानी देव । (त्रि०) ८ स्थानार्ह । ९ सुख,
लुत्ति करने योग्य ।
धीग (हिं० पु०) १ छट् पुष्ट भनुष्य, बड़ा कष्टा पादमी ।
(वि०) २ दंड, मजदूर, जोरावर । ३ उपद्रवी, बदमाश,
शरीर । ४ कुमारी, पापी ।

धीगधुकुट्टी (हिं० स्त्री०) १ बीगामुखी । २ पाजीपन ।
धीगरा (हिं० पु०) १ छट पुष्ट, बड़ा कष्टा, सुसंड, मोटा-
ताजा । २ कुकर्मी, गुंडा, बदमाश ।
धीगा (हिं० पु०) उपद्रवी, बदमाश ।
धीगाधीमी (हिं० स्त्री०) १ उपद्रव, शरासत, बदमाशी ।
२ बल-प्रयोग, जबरदस्ती ।
धीगामुखी (हिं० स्त्री०) १ उपद्रव, बदमाशी, शरासत ।
२ बलपूर्वक लड़ना, जबरदस्ती मड़ना, हावावाही ।
धीगाड (हिं० वि०) १ दुष्ट, पाजी, बदमाश । २ छट-
पुष्ट, बड़ा कष्टा । ३ वषं गृह, दोगला, हरामी ।
धीगाडा (हिं० पु०) धीगं डू देखो ।
धीगर (हिं० पु०) धीगर देखो ।
धी (सं० स्त्री०) धी चित्तने ज्ञाप ततो सम्प्रसारणं । १
बुद्धि, ज्ञान, चक्षु । २ मानववृत्तिभेद । नैयायिकोंके
मतसे यह पाकहस्त अर्थात् पाकाका धर्म है । किन्तु
वैदान्तिकगण इसे लोकार नहीं करते, वे इसे मना-
वृत्ति मानते हैं । बुद्धि देखो । ३ मन । ४ कर्म ।
धी (हिं० स्त्री०) लड़की, बेटा ।
धीगुण (सं० पु०) धियाः गुणः इतत् । बुद्धिका गुण ।
कामन्दकी, वर्तित बुद्धिके चट, गुण, धर्मात् श्रुत्युपा, यवक-
यवक, धारण, जड, अपोशय, विज्ञान भोर तत्त्वज्ञान ।
धीजग (हिं० स्त्री०) स्त्रीकार करना, अङ्गोकार करना,
ग्रहण करना । २ प्रतिप्रसव होना, सुग होना । ३ धैर्य-
युक्त होना, धीरक धरना ।
धीत (सं० त्रि०) धे-ञ । १ धीत, जो पिश गया हो ।
धी-ल धीन । धी-घातुल, प्रत्यय करनेसे लौकिक स्थानमें
धीन भोर वैदिक प्रयोगमें धीत होता है । २ अनाहत ।
जिसका अनादर हुआ हो । ३ धाराधित, जिसकी धारा-
धना की जाय । ४ विपाशा, व्यास ।
धीति (सं० स्त्री०) धे-क्तिन् । १ पान, पीना । २ विपाशा,
व्यास । ३ अनादर । ४ धाराधना । ५ पङ्कलि, ढंगली ।
धीदा (सं० स्त्री०) धियं ददातीति दा-क स्त्रियां टाप् ।
१ कथा, कुं पारी लड़की । २ पुत्री, बेटा । (त्रि०) ३
बुद्धिदायक, चक्षु देनेवाला ।
धीन्द्रिय (सं० स्त्री०) धोञनक इन्द्रियं । मानिन्द्रिय,
यह इन्द्रिय जिससे किसी बातका ज्ञान प्राप्त किया जाय,

ले में,—मन, चोख, काम, तब, जोम, मार ।
भीमवृ (मं० पु०) भीः विद्यतेऽस्य, अस्त्यर्थे । भी-मनुष्य ।

१ वृहस्पति । (वि०) २ मनुष्य विराजते एव ननु केन नाम । ३ धर्मगोत्रं गर्भं मे सत्यं पुत्रं वा केन पुत्रं नाम । ४ बुद्धिगुरु, जिसे बुद्धि हो ।

भीमति (मं० स्त्री०) भीमवृ श्रियां ह्योप । बुद्धिमतो ।

भीमा (हि० वि०) १ जिनका वेग मन्द हो, जो पाहिस्ता; धने । २ जो अधिक प्रचण्ड, तोमर या वधन हो, धनका ।

३ जिनको किसी काम को गर्ह हो । ४ कुछ नाचा और साधारणमें काम ।

भीमानिताया (हि० पु०) सद्गीतमें मोक्षद मातापिता का एक नाम । इसमें तीन पाशात और एक स्थानो होता है ।

भीमान् (मं० पु०) १ भीमन्, बुद्धिमान्, समझदार । २

वृहस्पति । ३ नारद्व्यासी । एक विख्यात भास्कर गिण्यो ।

भीमान—दाजि निज् और नैगमकी तराईमें रहनेवाली

एक जाति । कोई इन्हें मोहित्य श्रेणीके और कोई कोच

जातिकी एक शाखाके बतलाते हैं । इनकी आकृति

प्रकृति सभी प्रायः कोच जाति-सी है । किसी किसीका

कहा है कि इनमेंसे जो धनी होते, वे अपनेकी राज-

वंशीय बतलाते हैं । इस प्रकार यह वद लाभ करते समय

इन्हें बहुत लुच करके पड़ते हैं । किन्तु इस प्रकारकी

चटन। प्रति विरल है ।

इस जातिको मंथ्या क्रमया वितुप्त होती जा रही

है । १८४० ई०में जनमन साहब इस जातिकी मंथ्या

१५०० निर्णय कर गए हैं । पीछे १८७२ ई०की लोक-

गणनामें इनकी मंथ्या ८०३ और १८८२ ई०की गणना-

में ६२२ देखी जाती है । इस प्रकार मंथ्या क्रम हीनका

कारण और कुछ भी नहीं है मिया । इसके कि भीमान

इस साम्राजा परिचय गोजर और कायलपरिचय है ।

प्राप्त कम इस जातिके लोग अपनेकी 'भीमान' न कह

कर 'मोजिक' बतलाते हैं । वेचन चतुःपाश्वर्ती विदेशी

काग ही अपनेकी भीमान कहा करते हैं ।

निम्न जातिके मध्य एक पाश्चात्यिका इस प्रकार

प्रचलित है—

कोच, भीमान और मेच जातिके पाँच पुत्र्य नामों

माई मांसे काहीधाममें रहते । यहाँसे वे तीनों जाति जाते

'जवर' (जग ?) देशमें पहुँचे । (कोई कोई मजदूर

और कौमिको नदी-तीरवर्ती भूभागको जवर देय कहते

हैं ।) कनिष्ठ महीदर नहीं रहने, अंगे और लघुमें

धारे धीरे कोच, भीमान और मेच इन तीन जातियोंकी

उत्पत्ति हुई । मेच दो भाई समुच्चार प्रदेशमें गए और

उन दोनोंमें नेपाळके लघु और सिन्धु जातिकी उत्पत्ति

हुई । फिर कोई कोई कहते हैं, कि कोई नेपाळी सामा-

जिक नियमका समझन करनेके कारण देशमें निहाल

दिया गया और जवर देशमें जा कर रहने लगा । यहाँ

उभने एक भीमे विवाह किया और उसीमें मेच और

भीमान जातिकी उत्पत्ति हुई । किन्तु यत्मान का नाम

ध-मान लोग कोच और मेचके साथ कोई सम्भव नहीं

रखते ।

यह जाति प्रधानतः १ श्रेणियोंमें विभक्त है—

चमिया, लानेर और दुंगिया । तीनों श्रेणियोंमें आदान-

प्रदान चलता है । लेकिन चमिया लोग अपनेकी यह

बतलाते हैं, इस कारण श्रेणियोंमें ही विवाह करते हैं ।

इसमें विधवा विवाह प्रचलित है । इसके मिया खा-

खामो रहते भा दूरसे आगे कर सकती है, इसमें

समाजकी चोरसे कोई हानिवाक नहीं है ; यदि कोई

पुरुष किसीको धोकी बहका कर ले जाय, तो उसे धोकी

प्रतिकी सतिपूरण स्वयं विनाइमें दसपयके सभी क्षय

तथा पचायतुम निर्दिष्ट धर्मदण्ड देने होते हैं ।

यूयं मयमें ये लोग मयको गाढ़ देने से, लेकिन

यहो शब्दाव प्रया हो जारा हो गई है । चमोच बस

दस दिन तक भागा जाता है । काशीख साममें ये

लोग वितरोंके छद्ममें तप्य करते हैं । ये लोग मोर्मास

मयवा सचोदि नहीं खाते, लेकिन मुर्गी, ब्राह्म, हिर-

क्यों तथा सभी तरहकी मदनिया खाते हैं । जनि,

मरुत्पराए और मोनारए इनकी प्रधान उपभोगिका

है । इस जातिके लोग सब दिन एक स्थानमें बास नहीं

करते ।

भीमोदिकी (मं० स्त्री०) मय, मराय ।

भीया (हि० स्त्री०) मङ्गली, पंटा ।

भीर (मं० स्त्री०) चित् शान्ति राक्ष । १ बुद्धि, म-

केसर । २ लका घराय—कुपुष, रज्ज्, कागज, फलक,

धर, महोदध, पिशुन, धीर, बाल्मीक धीर शोणिताभिध है। (पु०) धियं राति ददाति शृङ्गातीति धा रा-क। २ ऋषभोदधि, ऋषभ नामकी ओदधि। ३ वनिराज, राजा-वलि। ४ मन्त्र। ५ चिदाभास द्वारा बुद्धिचित्तप्रेरक चिदात्मा। (त्रि०) धियं ईरयतीति ईर-अच् वा रा-क। ६ धैर्यान्वित, जिसमें धैर्य हो, जो जल्दी घबरा न जाय ७ वलशुक्त, वलवान्, ताकतधर। ८ विनीत, नम्र। ९ गभीर। १० मनोहर, सुन्दर। ११ मन्द, धोमा। धीरगोविन्दधर्मा—आद्यवर्षरहस्य नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ये वर्त्तमान शताब्दीके प्रारम्भमें विद्यमान थे।

धीरज (हि० पु०) धैर्य देखो।
धीरज (हि० पु०) धैर्यवान् देखो।
धीरट (हि० पु०) हँस पची।
धीरता (म० स्त्री०), धीर-भावे तत्त्व। १ पचासत्त्व, चित्तकी स्थिरता, मनको दृढ़ता। २ स्थैर्य, सम्योप-सन्न। ३ पाण्डित्य। ४ नायकशुणभेद।
धीरत्व (स० स्त्री०) धीरस्य भावः। धीरता, धीर होनेका भाव।

धीरदेव—युक्तपदेयके बलिया जिलेके एक विख्यात अधि-पति। इन्होंने प्रायः १६४१ ई०का इन्दौ घाममें एक दुर्ग निर्माण किया था जो अभी गंगाका गर्भमायी हो गया है।

धीरपत्नी (स० स्त्री०) धीर' मनोहर' पत्न' यस्याः स्त्रियां डोप। १ धरणोकन्द, जमीकन्द। (त्रि०) २ मनोहर पत्रयुक्त, जिसके अच्छे अच्छे पत्र हैं।

धीरप्रयात्न (म० पु०) नायकभेद। जहाँ नायक बहुत श्रमयुक्त ब्राह्मणादि हैं, वहाँ धीरप्रयात्न होता है। जिस तरह मासतौमाधव ग्रन्थमें माधव धीरप्रयात्न नायक है।

धीरमलित (म० पु०) १ नायकभेद। साहित्यदर्पणमें लिखा है कि जो चित्तारहित, मृदु धीर सदैव कक्षा-परायण रहता है, उसे धीरमलित नायक कहते हैं। रत्नावली प्रभृति ग्रन्थोंमें बलराजादि धीरमलित नायक हैं। २ कन्दोविषय। इसके प्रत्येक चरणमें १६ अक्षर होते हैं। १।४।१।१०।२।१।४।१६ वा अक्षर शुद्ध धीर अन्य वर्ष लघु होते हैं।

धीरशान्त (स० पु०) साहित्यमें यह नायक जो सुशील, दयावान्, गुणवान् धीर पुण्यवान् हो।

धीरसिंह—१ भविष्य-महाकवि नामक संस्कृत ग्रन्थवर्णित एक राजा। ये चन्द्रसेनके पुत्र थे धीर गोमतीनदी तोर-वर्ती धरहर नामक घाममें राज्य करते थे।

२ वर्तमानके राजा धीरसिंहके पुत्र। जय मानसिंह समेय वर्तमान प्राये थे, तभी धीरसिंह राज्य करते थे। धीरस्तम्भ (स० पु०) धीरः अचञ्चलः भारमह इति यावत् स्तम्भो यस्य। १ सहिष, भैस। २ वनगूजर, जंगली सुघर।

धीरहाम्बीर—विष्णुपुरके राजा प्रसिद्ध धीरहाम्बीरके पुत्र। ये गरीसम ठाकुर प्रभृतिके अश्ववर्धित परवर्त्ती थे। इनको बनाई हुई बहुत सी पदावली पाई जाती हैं। इन्होंने 'सारावली' नामक एक प्रति उपादेय (ऐति-हासिक धीर भक्तिविषयका) वैष्णव ग्रन्थको रचना बंगला भाषामें की है। इस ग्रन्थमें अनेक भक्तोंके परि-चय पाये जाते हैं।

कहते हैं, कि धीरहाम्बीरके राज्यमें एकादशोके दिन आठवर्षने अधिक उमरवाले लोगोंको उपवास रहना पड़ता था। इन दिन सभी हरिभाम कीर्त्तन करनेमें बाध्य होते थे, इसके विपरीत चलनेवालोंको सजा दी जाती थी।

हरिनाम प्रचारके लिये राजाने अपने राज्यमें एक धीर नियम चलाया था जिनमें प्रत्येक शृङ्खलाको अपने घरमें तोता मँना खयवा कोई दूसरा पची पालना पड़ता था। वे इस पचीको 'राधास्तव' वा 'गौरनिताइ' सिखाते थे। यतः इसके साथ साथ हरिनाम उच्चारण कानेका फल उन्हें मिलता था। इन उपायों को थोड़े ही दिनोंमें विष्णुपुरमें स्वर्ग भी प्रोभा दीवने लगे। कहते हैं, कि उनके समयमें राज्य भरमें धीर उकीर्त्तको मिश्रायत बिलकुल नहीं थी।

धीरा (म० स्त्री०) धीर-टाप। १ काकोली। २ महा-ज्योतिषप्रतोः सासकगणो। ३ शुद्धची, शूरिच, गिलोय। ४ साहित्यमें यह नायिका जो अपने नायकके शरीर पर पर स्त्री-रसवर्ण विष्ट देख कर व्यंग्यमें कोप प्रकाशित करे, तानेसे अपना मोह प्रकट करनेवाली नायिका।

बीराम (हि० पु०) प्रधान राजा, अधिराज ।
 बीराभीरा (सं० स्त्री०) आधिकमिद, माहिल्यमे सह
 आधिका जो अपने नायकके शरीर पर पर-प्रो-भमके
 विग्रह देण हर कुछ गुण और कुछ प्रगट रूपमें अपना
 क्रोध दिखावे ।

बीराबी (सं० स्त्री०) बीर' धरति पद्म, प्रीत्यमे पद्म होय ।
 गि'गयाहण, गोममका पेड़ ।

बीरी (हि० स्त्री०) घोष की पुनको ।

बीरे (हि० स्त्री० वि०) १ मन्द मन्द, धीमी गतिसे,
 आदिष्टमे । २ सुषकेमे ।

बीरेण पद्मोभूषण—नित्यकर्मलता नामक मंजुल पत्रके
 प्रस्ता । इनके पिताका नाम धर्मेश्वर था ।

बीरीदास (सं० पु०) साहित्यदर्पणोक्त नायकविशेष ।
 जो अपने इलाहा नहीं करते, जो चालका बलवान् होते हैं
 और जो हथ' या मोकादिमें समिभूत नहीं होते, जो
 विनीत हैं, जिसका पहचान मया नहीं किया जा
 सकता और जो अपने प्रतिप्राकी प्रापवशसे निर्वाह
 करते हैं, वे ही बीरीदास उदाहरण हैं । रामचन्द्र,
 बुद्धिहर आदि बीरीदास नायकके समर्थक हैं । २ बीर-
 रम-प्रधान नाटकाका मुख्य नाटक ।

बीरीदत (सं० पु०) १ साहित्यदर्पणोक्त नायकविशेष ।
 मायापट, प्रचण्ड, चालक, पहचानादियुक्त, आत्म-
 स्वाधारायण इन सब गुणोंसे युक्त नायकको बीरीदत
 नायक कहते हैं । भीमसेन प्रभृति इसी नायकके समर्थक
 हैं । २ धैर्यान्वित पद्य कहल ।

बीरीर—कासी और गीरछपुर पक्षके बहीरकी एक
 जाति । तमरीदुल पक्षका नामक पारसी धर्ममें ये लोग
 दोषावशसे बहीर नामसे प्रसिद्ध हैं ।

बीरीपिन् (सं० पु०) विमदेवमिद ।

बीर्य (सं० वि०) बीरे भयः 'मयेष्णन्दमोनि, इति यत् ।
 कातर, डरपोक ।

बीरपटि (सं० स्त्री०) धिया हुआ पटल वस्त्रोत्तरा मोचक-
 मोति की कट-रत्न (परीवार-रत्न । इ. ३११६०) दुहिता,
 लड़की ।

बीरपु (सं० वि०) भी विष्णोऽख, भी मनुष्य, मय्य व ।
 बुद्धिपुत्र, बुद्धिमान्, पक्षमन्द ।

बीरपु (सं० पु० स्त्री०) आरतोनि धी-कतिप, मय्य-
 मारपय । (पायोः कट्याराण्य । इ. ३११६१) १ बीरप,
 मन्त्रा, मनुष्य । रितयो होय । २ बीरपकी स्त्री ।
 बीरपे देवी ।

बीवर (सं० पु०) दहाति मत्स्यमिति धी-चरय, प्रत्ययेन
 माधुः । (धिवरपयरीवीरीरदि । इ. ३११६१) १ बीवर,
 लोम मयकी एकहुमे बीर से चनेका काम करते हैं । इस
 जातिका हुआ जल दिवज लोम पदण करते हैं । २ मय्य-
 पुराणके अनुसार एक दिन बीर सम देवका निवास ।
 ४ मेघक, विदमतगार । ५ कासा मनुष्य ।

बीवरक (सं० पु०) बीवर, मनुष्य ।

बीवरी (सं० स्त्री०) बीवर स्त्री । १ बीवरपत्नी, मन्त्रा-
 रित । २ मय्यपेधिनी, मय्यी मारगैकी कटिप ।
 ३ गतमूनी ।

बीरपति (सं० स्त्री०) धिया शक्तिः इत्यत् । बुद्धिपति, बुद्धि-
 का गुण ।

बीरप (सं० पु०) धिया मया सहायः 'राजाहममि-
 भ्यष्ट' इति टच, मसामान्ता । मन्त्री ।

बीरपवि (सं० पु०) धिया बुद्धी मय्यपादो सविमः सहायः ।
 मन्त्री ।

बीररा (सं० स्त्री०) १ एक प्रकारका मोठा कटकन ।
 २ कुम्भक, विरोध ।

बु (सं० स्त्री०) धी-कल्पने भावे तु । कल्पन, घरघराहट,
 कल्पकी ।

बुंदा (हि० पु०) पुन देवी ।

बुंकार (हि० स्त्री०) जोरका मन्द, गरज, लड़कड़ाहट ।

बुंगार (हि० स्त्री०) मयार, लड़का, बौक ।

बुंगारना (हि० स्त्री०) बवारना, बोकना ।

बुंद (हि० स्त्री०) बुंदा देवी ।

बुंदा (हि० वि०) पत्ता ।

बुंदुल (हि० पु०) बडाला और मलपारमें निवसेवाना
 एक प्रकारका पेड़ । इसकी लकड़ी मजिद रंगकी होती
 है और गाड़ियोंके पहिये तथा भोजन की आदि बनावमें
 काममें आती है । इसके पत्रोंमें एक प्रकारका नि
 निवास कर जलाने और निरमि लाने है । इसमें एक
 प्रकारका कीट भी निवसता है ।

धुंध (हि० स्त्री०) १ हवामें सड़ती हुई धूल । २ वह धंधरा जो हवामें मिश्री धूलके कारण हो । ३ धाँसका एक रोग । इसके कारण ज्योतिर्मन्द हो जाती है और कोई वस्तु स्पष्ट नहीं दिखाई देती ।

धुंधक (हि० पु०) धुंध देखो ।

धुंधका (हि० पु०) धुंध निकलनेके लिये दोवार या छत आदिमें बना हुआ छेद, धोंधका धुंधारा ।

धुंधकार (हि० पु०) १ धुंधकार, गरज, गड़गड़ाहट । २ धन्धकार, धन्धरा ।

धुंधमार (हि० पु०) धुंधमार देखो ।

धुंधर (हि० स्त्री०) वह धूल जो हवामें सड़ती है, गढ़-गुवार । २ वह धन्धरा जो धूल सड़नेके कारण हो ।

धुंधराना (हि० स्त्री०) धुंधराना देखो ।

धुंधला (हि० वि०) १ धुँएँ के रङ्गका, कुछ कुछ कासा । २ धसल, जो साफ दिखाई न दे । ३ कुछ कुछ धन्धरा ।

धुंधलाई (हि० स्त्री०) धुंधलापन देखो ।

धुंधलाना (हि० स्त्री०) धुंधला पड़ना ।

धुंधलापन (हि० पु०) धसल होनेका भाव, कम दिखाई देनेका भाव ।

धुंधली (हि० स्त्री०) धुंध देखो ।

धुंधुकार (हि० पु०) १ धंधकार, धंधरा । २ धुंधलापन । ३ गगाड़े का गन्ध, धुंधकार ।

धुंधुरित (हि० वि०) १ धूमिल, धुंधला किया हुआ । २ दृष्टिहीन, धुंधली धाँसवाला ।

धुंधरी (हि० स्त्री०) १ वह धंधरा जो धूल आदि सड़नेके कारण हुआ हो । २ धुंधलापन । ३ धाँसका धुंध नामका रोग ।

धुंधरी (हि० स्त्री०) धुंध, वह धंधरा जो हवामें मिश्री धूलके कारण हो ।

धुंधेना (हि० पु०) १ बदमाश, पाजी । २ धोखेबाज, दगाबाज ।

धुंधी (हि० पु०) धुंध देखो ।

धुंधीक (हि० पु०) धुंधीक देखो ।

धुंधीदान (हि० पु०) धुंधीदान देखो ।

धुंधी (हि० पु०) १ भाप जो सड़गती या जलती हुई चीजोंमें निकल कर हवामें मिला जाती है और कोयले-

के लिये प्रयुज्ये सड़ी रहनेके कारण कुछ नीलापन या कालापन लिये होती है । धुंध देखो । २ भारो समुद्र, समुद्रती हुई वस्तु, घटाटोप । ३ धुरी, धुल्ली ।

धुंधीक (हि० पु०) वह लहाना या नाम जो भापके जोरसे चलती है, धूमिबोट, स्टीमर ।

धुंधीदान (हि० पु०) वह छेद जो धुंधी निकलनेके लिये छत आदिमें बना होता है ।

धुंधीघार (हि० वि०) १ धूममय, धुँएँ से भरा । २ प्रचण्ड, घोर, बड़े जोरका । ३ काला, धाँस, धुँएँ का सा । ४ भड़कीला, तड़क गड़कका, गहरे रंगका ।

(हि० वि०) ५ बड़े वेगसे घोर बहुत धुंधी, बहुत जोरसे ।

धुंधीना (हि० स्त्री०) अधिक धुँएँ रहनेके कारण खाद घोर गन्धमें बिगड़ जाना ।

धुंधीध (हि० वि०) १ जो धुँएँ की तरह मलकता हो । (स्त्री०) २ वह प्रकार जो धुंध धुंधी तरह परिपाक न होनेके कारण आती हो ।

धुंधीरा (हि० वि०) प्रचण्ड जो धुंधी निकलनेके लिये छत आदिमें बनाया जाता है, धिमनी ।

धुंधीस (हि० स्त्री०) धुंधीस देखो ।

धुंधीसा (हि० पु०) १ वह कालिल जो पाग जलनेके स्थानके ऊपरको छतमें जम जाती है । (वि०) २ धुँएँ से बना हुआ, धाँस ठीक न लगनेके कारण खाद घोर गन्धमें बिगड़ा हुआ ।

धुंध (स्त्री० पु०) धूमिवदरवण, धेरका पड़ ।

धुंध (हि० स्त्री०) कलावत्, बटनेकी सलाई ।

धुंधकपुक्क (हि० पु०) १ चित्तकी वह धसिरता जो भय आदिको धाँसकाये होती है, धवराहट । २ पागा पीका, पसीपेश ।

धुंधकी (हि० स्त्री०) छोटी धेनी, बट, पा ।

धुंधकी (हि० स्त्री०) १ पेट घोर आतीके बीचका भाग, यह कुछ गहरा सा होता है । २ हृदय, कसेजा । ३ कसेकी धुंधकान, कप्य । ४ मय, डर, खौफ । ५ गलेमें पड़नेका एक गड़ना जो आती पर लटका रहता है, सुगन् ।

धुंधक (स्त्री० स्त्री०) बंदरीफल, धेर ।

प्राक्रान्त राजस रहता है। यह प्रसिद्ध मधुराससका पुत्र है। यह धुन्नु मकभूमिमें बालू के नीचे छिप कर संभार-को नष्ट करनेकी कामनासे कठिन तपस्या कर रहा है। वह जब साँस छोड़ता है तब उससे बड़े बड़े पहाड़ और जंगल आदि हिंसने लगते हैं और उसके साथ धुर्षा और भंगारे भी निकलते हैं तथा पृथ्वीको धूल ऊपर उड़ कर सूर्यमण्डलको आच्छादित करती एवं सात दिन तक अनवरत भूमिभस्म होता है। उस समय समस्त जीव जन्तु बहुत रुष्ट होते हैं। आपके सिवा उसे बंध करनेका किसीका साहस नहीं होता। देवगण भी उसे बंध करनेमें बिलकुल असमर्थ हैं। उसके भयसे हम बहुत व्याकुल रहते हैं। अतः निवेदन है, कि आप उसे मार कर हम लोगोंका कष्ट दूर कीजिये। हे महाराज! पूर्वजन्ममें हमें विष्णुसे-वर मिला है कि जो इसे मारेगा मैं उससे तेजको बढ़ाऊँगा। अन्य तेजस्वी कोई व्यक्ति यदि दिव्य शक्तवर्षतः चेष्टा करे, तो भी इन राजसका बंध नहीं कर सकतें। यह सुनकर तृदशने कहा, "मैं शरासमादि परित्याग कर वानप्रस्थ प्रवृत्त कर चुका हूँ अतः परित्यक्त प्रवृत्त उठा नहीं सकता; हाँ, मेरा लड़का कुवलयाश्व उसे मार डालेगा।" इतना कह कर कुवलयाश्वकी धुन्नु-विनायके लिए आज्ञा दे पाप तपस्यामें लग गये। तदनुसार कुवलयाश्व अपने सो लड़कोंको ले कर चलकर वाय धुन्नुको मारने चला। उस समय विष्णुने भी लोकहितके स्थानसे उसके शरीरमें प्रवेश किया था। स्वर्गसे देवगण आनन्द ध्वनि करने लगे। कुवलयाश्व वहाँ समुद्र पङ्क्ति पर उस बालकापूर्ण स्थानकी जग खोदने लगे। तब कहा देखते हैं, कि धुन्नु बालुकारागिके नीचे पश्चिमकी ओर सो रहा है। धुन्नु इन्हें देख कर क्रुत्कार छोड़ने लगा। चन्द्रोदयके समय समुद्रको जलराशि जिस तरह बढ़ती जाती है, उसी तरह धुन्नुके सुँहसे प्रवाल जलस्रोत बढ़ने लगा। इससे कुवलयाश्वके ८० लड़के मर गये। राजा कुवलयाश्व इस तरह अपने पुत्रोंका नाश देख धुन्नु पर टूट पड़े। पहले उन्होंने योग-वचसे जलने वेगको रोक, पीछे पत्थरको ठगड़ा किया, अन्तमें उसे मार डाला। इस पर संभारने शान्तभाव धारण किया, आज्ञाप्रसे देवगण पुण्ड्रटि करने लगे।

महर्षि उक्तमें भी कुवलयाश्वकी वर प्रदान किया। उस वरसे राजाकी विसतराशि घनन हुई और जो सब पुत्र इस लड़ाईमें मरे थे, वे स्वर्गको प्राप्त हुए। कुवलयाश्व धुन्नुका बंध कर धुन्नुमार नामसे प्रसिद्ध हुए।

(हरिवंश ११ अ०, वनप० २००।२०२ अ०)

धुन्नुमार (सं० पु०) धुन्नु मारयति मारि-यण्। राजभेद।

महाराज तृदशनेके पुत्र। इनका प्रकृत नाम कुवलयाश्व था। इन्होंने धुन्नु राजसको मारा था, इसीसे इनका नाम धुन्नुमार पड़ा। धुन्नु प्रसिद्ध मधुकैटभका पुत्र था। भगवान् विष्णुने मधुकैटभको अनेक प्रयास करते हुएमें मारा था। धुन्नु देखी। हरिवंशके ११वें अध्यायमें और वनपर्वके २०० और २०१ अध्यायमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है। २ राजा विश्वरूपा पुत्र। २ गृह-धूम, चरको कानिष्ठ। ४ इन्द्रगोपकोट, वीरवज्रटी नामका कीड़ा। गृहगोधा, विपत्तिकी।

धुपना (हिं० लि०) धुलना, धोना।

धुपाना (हिं० लि०) किसी चीजको सुखाने आदिके लिए धूपमें रखना, धूप दिखाना।

धुपेला (हिं० स्त्री०) वह जूँसी जो गरमीमें पसीनके कारण शरीर पर निकल पाती है, अम्लीय, पिप्ती।

धुमार (हिं० वि०) धूमिल, धूपके रङ्गका।

धुर (हिं० स्त्री०) १ वह लुप्रा जो बँलोंके कन्धों पर रखा जाता है। २ गङ्गाका एक नाम। ३ माग, भंग। ४ चिनगारो। ५ उंगली। ६ बोझा, भार। ७ पच, गाढ़ी आदिका धुरा। ८ छूँटो। ९ शीघ्र स्थान, अच्छी और जंगल जगह। १० धन, सम्पत्ति।

धुर (सं० पु०) १ गाढ़ी या रघ आदिका धुरा। २ शीघ्रका प्रधान स्थान। ३ भार, बोझ। ४ आरम्भ, शुरु। ५ लुप्रा जो बँलों आदिके कन्धों पर रखा जाता है। ६ जलौनकी माप जो बिल्लिका बौधवा भाग होता है, बिसासी। (वि०) ७ पक्का, दृढ़। (अर्थ०) न दहर न चहर, बिलकुल ठोक, सटीक, सोष्ट।

धुरकट (हिं० पु०) वह लगान जो पचासी अमीरों-आदिको जेठमें पेशगी देते हैं।

धुरकिस्ली (हिं० स्त्री०) गाढ़ीकी एक कील। यह धुरीकी धाँके घटकानिके लिए भीतरकी ओर धुरीके तिर पर लगा दी जाती है।

पुराणीकम् (मं० पु०) मृगहृद्य, एक प्रकारका पेड़ ।
 पुत्र (मं० पु०) पुत्र भ्रातादि पृथक्. मुत्र या पुत्रो
 भारयति पृथक्, पति कृत्वा । भारवाहक वृषादि. शोभ
 शोभयामास । ज्ञानवर, ज्ञाने ब्रह्म, स्वयं, मया पाति ।
 इवका मन्त्रत पद्या—पुर्वं, पुत्रं, धीरेय धीर पुत्रीव
 है । २ पादित्य राजादि मन्त्रो । ये मन्त्र बुद्धिमन्त्र
 धीर पन्थना नीर ये । ये मन्त्र ब्रह्मिणीये पादित्य
 राजाको मन्त्र कर राजमहो पर बैठे थे । इन्हीं राजा-
 की वृषाधि धारण कर राजावाचन किया था । ३ राजम-
 विमिय, रामायणके अनुसार एक राजम जो प्रसूतका
 मन्त्रो था । ४ ध्वज, शोभा पेड़ । (वि०) ५ भार-
 वाही मान, भार शोभयामा । ६ श्रेष्ठ. प्रधान । ७ जो
 मन्त्रें बहुत बढ़ा, भागी था हवी हो ।
 पुष्ट (वि० पु०) १, २ देखा ।
 पुरा (मं० श्री०) पुर पची टाव । भार, शोभ
 पुरा (वि० पु०) पश्चिमेकी ओर धीर विरोधा हुआ वह
 कंडा जिस पर पश्चिमा भूमता है ।
 पुरियापुरंग (वि० वि०) १ यह गाना जो राजा या राज-
 की सायन गाय, जाय । २ चंडिका, जिसके माय धीर
 कीर्ति न हो ।
 पुरियाना (वि० लि०) १, किमी चीजका धूलमे टका
 जाना । २ लवंग चेतका पचने पचन गोंडा जाना । ३
 किमी ऐह या बदनामीका किमी प्रकार टटना या टबाया
 जाना ।
 पुरियामन्त्र (वि० पु०) सम्युक्त जातिका एक मन्त्र ।
 जलमें मद्य रह कर जगते है ।
 पुरी (वि० श्री०) शोभा पुरा ।
 पुरीव (मं० वि०) पुरा वहति इति व (कः) पुराव ।
 वा । राजादि । भारवाहक, शोभ शोभयामा । २ श्रेष्ठ.
 प्रधान, मुख्य । ३ भ्रातर ।
 पुराव (मं० पु०) पुरा वहति इति व । १ शोभ. शोभ-
 यामा पच । २ कारवारी मनुष्य । (वि०) ३ भारहीन,
 शोभ शोभयामा ।
 पुरेडी (वि० श्री०) पुरेडी देवा ।
 पुर्व (मं० वि०) पुर्व वहति इति वृत्त-पत्त । १ भ्रातर ।
 २ श्रेष्ठ । ३ भारवाहक, शोभ शोभयामा । (पु०) ४

धुर्वं वृषादि, शोभ शोभयामा पच । ५ हृद्य, श्रेष्ठ । ६
 स्वयंभोवधि, स्वयं नामकी बोधधि, जो मद्यमन्त्रो मन्त्र
 शोभी धीरदिमन्त्र पचत पर पादे जानो है । ७ विष्ट ।
 पुर्व (वि० पु०) कच, रजकच, जरी, मुवा ।
 पुर्व (मं० वि०) वहति इति वृत्त-पत्त । पुर्वो वह ।
 १ भारवाहक, शोभ शोभयामा । २ कर्मिष्ठ ।
 पुर्व (वि० वि०) धर्मोकी । सदायामा मन्त्र किया
 जाना, बोधा जाना ।
 पुर्वाना (वि० लि०) धीरेका काम दूसरेके कराना ।
 पुर्व (वि० श्री०) १ धीरेका काम । २ धीरेका भाव ।
 ३ धीरेकी मजदूरी ।
 पुर्वाना (वि० लि०) किमी दूसरेको धीरेमें प्रवृत्त करना,
 धुलवाना ।
 पुर्विवापीर (वि० पु०) एक कल्पित धीर जिसका नाम
 वह श्रेष्ठ पादित्य लिया करते हैं ।
 पुर्विवापिटा (वि० वि०) १ जिस पर धूल या मी
 पड़े हो । २ दबाया या गाला किया हुआ ।
 पुर्वी (वि० श्री०) १ हिन्दुका एक स्त्री । २ यह
 जोनें जलमें डूबने दिन पंत मही । ३ जो होता है ।
 इन दिन महीर लोग शोभीकी राख समझ कर लाने
 धीर दूसरे पर चढ़ीर गुमान पादि खुले धूल कावते
 हैं । ४ एक स्त्रीधारक दिन ।
 पुर्व (वि० पु०) शीव, गुवा ।
 पुर्वक (मं० वि०) पुर्वक, गुर्वमीवक, गुर्वी नाम करने
 जाना ।
 पुर्वका (मं० श्री०) शीतका पचना, पच, टुक ।
 पुर्वक (मं० वि०) पुर्वक वी पादित्या वृत्त । पुर्वक
 कल्पित देगादि ।
 पुर्वकोप (मं० वि०) पुर्वक, विष्टादिना वृत्त
 वृत्त । पुर्वकपुर्व ।
 पुर्वी—पावामने मन्त्रादि लिखिका एक मन्त्र । यह
 पचा २१ ई० धीर देगा ८८ ई० पू० मन्त्रपुर्व
 दादिनि लिखी स्वयंभो है । शीवमन्त्रा प्रायः
 १०१ ई० ।
 १००८ ई० में वही निम्निका मन्त्र हुआ है । वही दिन
 शीव-मन्त्रादि मन्त्रों का दीव्य. मन्त्रादि ई० मन्त्रो

स्टेशन, पासाम टीमरका पठार तथा और कोई एक दुकान है।

धुवन (सं० पु०) धूवतीति धु-ङ्युन् । (भूध्वजिभ्य-इङ्यदि । उण्, २।८०) १ ध्वनि, धाग । (त्रि०) २ चालक, चलानेवाला, हिलानेवाला ।

धुवाँ (हिं० पु०) धुवाँ देखो ।

धुवाँकाश (हिं० पु०) धुवाँकाश देखो ।

धुवाँरा (हिं० पु०) बंद छेद जो धुवाँ निकलनेके लिये दीवारमें बनाया जाता है ।

धुवाँस (हिं० स्त्री०) सरदका पाटा । इससे पापड़ या कचोड़ी बनती है ।

धुवाना (हिं० क्ति०) धुलाना देखो ।

धुवित्र (सं० स्त्री०) धुयतेऽनेनेति धु-ङ्वि । १ भस्मिज्वातनके लिये जगचर्मादि रचित यांत्रिकोंका व्यवहार, प्राचीन कालका एक प्रकारका यंत्र जो हिरनके चमड़े बाँधे बनाया जाता था और जिसका व्यवहार यांत्रिक लोग यंत्रकी प्राग्दृष्टिके लिये करते थे ।

धुसुर (सं० पु०) धुसूर प्रयोदशदिवसां साधुः । धूसूर ।

धुसूर (सं० पु०) धूमोति कम्पयति चित्तहेवनम् धु-सुर (कलिप्रसादिभ्य-उठोत्तौ । उण्, ४।९०) 'धुनोतिः सुट्, इति उच्चलट्प्रत्ययः सुट् । धुसुर । इसका पर्याय—धूमक, कितव, धूस, कनकाङ्गव, मातुल, मदन, घसर, गठ, मातुलक, श्याम, शिवशेखर, खज्जु, काहनापुष्प, खल, कण्टकल, मोहन, कलम, मस, गैव, देविका, तुरी, महामोह, शिवमिय, धुसर और धूसूर है । इसका गुण—कपाय, मधुर, तिक्त, उष्ण, शुष्क, कटु, मदा, वणं, भस्म और वातकारक तथा क्वर, कुष्ठ, मण, होला, कण्ड, क्षमि और विषनाशक है । राज-यक्ष्मक मतसे यह त्वग्दीप, खज्जु, और भ्रमनाशक, मूत्रकारक, भस्म तथा विस्मवर्धक, मांसा गवा है ।

धुसुरा देखो । २ सपविपविशेष । ३, वण्टकणं सुप ।

धुस (हिं० पु०) १ मही, पादिका जैसा टिगा, टोला । २ मदी बादिके तिनारिपर बाँधा हुआ बाँध ।

धुसा (हिं० पु०) धोड़नेके काममें धानेवाली मोटे जानकी मोड़ी ।

धुध (हिं० स्त्री०) धुध देखो ।

धुधर (हिं० वि०) १ धुधता । (स्त्री०) २ हवामें छाई हुई धूल । ३ अंधिा जो हवामें छाई हुई धूलके कारण हो ।

धू (हिं० पु०) १ धूस तारा । २ राजा उत्तानपाद का पुत्र जो भगवान्का भक्त था । ३ धरो ।

धूपति (सं० पु०) धुरः पतिः इत्य् । भारपति ।

धुपाधार (हिं० पु०) धुपाधार देखो ।

धूर् (हिं० स्त्री०) धूनी ।

धूक (सं० पु०) धूमोति कम्पयति ध कन् । (भगिद्व-धूनीभ्यो दीर्घश्च । उण्, ३।४०) १ धातु, हवा । २ धत्तं मलम् । ३ काल । ४ वकुलवृक्ष, मोरसरीका पेड़ । ४ विहास, विनाय ।

धूक (हिं० पु०) कलावत्तू बटनेकी सलाई ।

धून (सं० त्रि०) धू-क्तः । १ कम्पित, कँपना हुआ, घंटा गाना हुआ । २ भस्मित, जो धमकाया गया हो, जो डाँटा गया हो । ३ त्वक, कीड़ा हुआ । ४ तर्कित ।

धूतपाव (सं० पु०) धूतं परित्यक्तं पापं येन, बहुव्री । १ त्यागपाप जिसके पाप दूर हो गये हों, जो पापके दीपमें रहित हो गया हो ।

धूतपाषा (सं० स्त्री०) धूतपाव+टाप । १ वेदगिरा ब्राह्मणके चौरस चौर शुचि नामक चमराके गर्भमें उत्पन्न एक कन्या । काशोखण्डमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—

पुराकाशमें भृगु-वंशीय वेदगिरा नामक एक ऋषि वनमें तपस्या कर रहें थे । इसी समय शुचि नामकी एक चमरा वहां था पहुँचो ।

वेदगिरा इस निर्जन प्रदेशमें असामान्य रूपसावकाश धत्ती शुचिको देख कर कांमातुर हो पड़े और चला-में निताल बधैं हो कर उन्होंने चमराके साथ धर्मयोग किया और उससे कन्या, "तुम्हारे इस गर्भमें एक कन्या उत्पन्न होगी, जब तक सन्तान भूमिष्ठ न हो, तब तक तू इसी जगह रहना ।" उपर्युक्त कालमें शुचि-एक कन्या प्रसव करके स्वर्गकी चली गई । वेदगिराने उस कन्याका नाम धूतपाषा रखी और बहुत पक्षमें वे संतुष्टीका भरण पोषण करने लगे । पिताकी आज्ञामें यह कन्या भी और तप करने लग गई । अन्तमें ब्रह्माने प्रसन्न हो कर उससे

कहा, 'मुम कोई कमिलमिन कर मागो।' यह सुनकर धूमराग बोली, 'ये बाक्य ! यदि पात्र हम पर प्रसन्न है, तो यहाँ पर दोनिये निश्चये हम अन्तर्गत प्रसन्न प्रसन्न होयें।'

इस पर ब्रह्मा ने कहा, "धूलगाय! इस दुनो पर जितने पदार्थ हैं, सभीमें तुम प्रभाव डोगी। धन, मत्त, पोर पाताममें जो सदां तीन करीब तोय हैं। वे तुम्हारे तनु पोर रोममें बाम कोने।" इस तरह वर दे कर ब्रह्मा अपने व्यासको चले गये। धतुगाया भी तनु मित्र कम मात्र कर पित्तके समोप पाई पोर पानम्में रहने लगी। एक दिन धर्म नामक एक मुनिने, धतुगायाको चलीकी देव कहा, "इस तुम्हारे यमामात्र रूप-साधकको देव कामरुषके निनामा पीड़ित हो गये हैं। पतः नू हमने विवाह कर।" इसके सचमें धतुगायाने कहा, "पिता जो कथादानके एकमात्र अधिकारी हैं, यदि पाप हमसे विवाह करनेको इच्छा करते हैं, तो पित्ताने प्राप्ता ने पाई।" किन्तु धर्म उसी समय मन्त्रों विवाह करनेका वृत्त करने लगे। इस समय भी धतुगायाने अपने प्रार्थना को कि "बिना पित्तके दान दिये हम पशुवद्वयके कभी भी विवाह नहीं कर सकतो।" इस पर भी धर्म गाला न हुए पोर बार बार उसी संयोग करनेकी प्रार्थना करने लगे। पतमें धतुगायाने पत्यस लूच को कर माप दिया कि "तुम पत्यस लूच पोर जसा-धार नद को कर बहो।" धर्म ने भी कोषान्वित हो कर माप दिया कि "तुने जित तरह बनें माप दिया है, उसी तरह नू भी पत्यर को ज।" इस पर धूलगाया भयभीत हो पित्तके पास गई पोर सब हलाना कह सुनाया। वेदमिश्रित तपके प्रभावमें यमिमापकारोंको धर्म जान कर अपनी कथ्याने कहा, "हे पुत्रि! माप पश्यता नहीं हो सकता, तो भी नू मत डर, मैं अपने तपके प्रभावमें जहाँ तक हो सकेता तुम्हारी भलाई कर दूँगा। नू कामोंमें संयुक्तता नामकी गिता डोगी। पीछे चन्द्रोदय होमें पर तुम्हारा शरीर प्रदीपित हो कर नदीके रूपमें बहेगा, तुम्हारा नाम धतुगाया हो रहेगा पोर धर्म भी उसी काल पर बनें नद को कर बहता पोर तुम्हारा पति डोगा।" यह धतुगाया नामकी नदी बहुत पतली डोगी प्राची है।

महाभारतमें भी कथित है कि राजा
नामकी एक लड़की अपने पिता की एक विधवा लड़की
से । इसमें कहा लगे जा सकता कि इसी लड़की
परिचाय है या किसी दूसरी में ।

**धुलपणिएमःताःयं (मं० खो०) लोचंमिद, एक लोचंका
गम ।**

પ્રતા (નં. ૧૦) માણં, જી. ।

धृति (मं० स्त्री०) धृ-स्तिन् । १ विषयगत । २ ब्रह्मयोगाद-
भेद ।

धूनी (हि० शब्द) एक विद्या ।

६५ (वि० पु०) पागडें नरकमेका गद्य. पागडो मरद
नरमेकी पावाज ।

धन (सं० वि०) ध० न० । (श० दि० १००० । वा ८०००००) वनि
मूल्येन निष्ठा मध्य मकारः । कल्पित, कविता इत्यादि ।

ਮੂਲ (ਦਿੰ. ਪੁ.) ਦੂਜੇ ਵੇਰੀ ।

पुनश्च (मं० पु०) यस्मिं धनयति मंभूययति इति ध-
निष्-प्लुत् । १ यस्मिद्वयम, मालका गौद, राम, भूप ।

(ति०) ३, आनन्द, दिव्यमे सुखमेवम् ।

धनम (मं० स्त्री०) ध० पिब० इष्ट० । कर्मन्, वाचराज० ।

धमना (हि० मि०) धुना, धुनना, धुनाना ।

भुलगात्र (मं० पु०) वृषविर्देव, एक पिङ्गला नाम ।

पूना (दि० पु०) चामाम तथा वसिष्ठाजी पहाड़ियों पर
मिन्नबाबा गुफाओं की जाति का एक बड़ा पक्ष । इसका
गर्दभो भयंकर तरह जलावा जाता है और एक बार मिन
बनने के काममें आता है ।

५ नि (मं० खो०) भू-स्मिन् यत्त दधादितान् नि । कल्पन,
लापनको लिया या भाव, यत्तान् दृढ ।

५५ (३००) १ दिवसभर या सुगन्धनिष्ठ
 कपूर, चमर, मुमुक्षु आदि गन्धद्रव्यों की जला कर उसका
 दूध छुवा ॥ २ आध्रुवों के लगाने को पाग तो या नी बंटा
 ॥ कर्णों के निदोषचमर को भी लगाने या बट पड़वाने
 से निदोष जगदीश को ॥

हम (मं. पु.) ब्रह्मविनि कीय मन्त्रेन मन्त्रेण वागनि
हमि यम-यमः । मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः ।
विमोक्षयामि मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः ।
मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः । मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः ।
मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः । मन्त्रेण विमोक्षयामि यम-यमः ।

“एवं सा कथितो दौघो पूर्वव श्रुतः-सती ।

नासाधिदेभ्रवुनदः सुगन्धोऽतिमनोहरः ॥

दद्यान्नामस्य काष्ठस्य प्रयतस्येतरस्य वा ।

परागस्यवायवा भूमौ गित्तायो यक्ष जायते ।

स धूप इति विज्ञेयो देवानां वृष्टिदायकः ॥” इत्यादि ।

(कालिकापु० ६१ अ०)

मासिका और पचिरन्धका प्रोतिदायक अत्यन्त गन्ध-युक्त, मनोहर, दहनशील काष्ठसे भयवा किन्तो दूसरे प्रकारके धूपों में द्रव्यमें जो तापगन्ध भूम निकलता है, उससे धूप कहते हैं । यह धूप देवताओंका प्रोतिप्रद है । इस धूपको तुपास्त्रिकी नाई प्रभूविन दूरनेसे वह फल-दायक नहीं होता ।

ओषन्धन, सरल, साल, जम्बागुद, उदय, सुरघ, स्कन्दी, रत्नविष्टम, पोतमान, परिमल, विमर्दिका, भसन, नमिद, देवदाह, विषवशाखा, दाडिम, सन्तानक, पारिजात, हरिचन्दन, वल्लभ इन सब वृक्षोंका धूप प्रोतिप्रद माना गया है । सूत्रके साथ पराल, शोवास, पटवास, कर्पूर, ओकर, पराग, ओहर, भमल, सर्वोषधिरज, जाति-साराइचूर्ण और इनकी कण्डा तथा जायफलका चूर्ण भी धूप कहलाता है । यक्षधूप, लक्षधूप, औषिष्ठ, निर्जर, पत्रिवाह, पिण्डधूप, सुगोलकण और परम्परयुक्त निर्वास ये सब धूपके भेद कहे गये हैं । इनकी पत्रिके धूम द्वारा देवताओंको धूपित करना चाहिये, क्योंकि ये सब द्रव्य अत्यन्त सुगन्ध और पवित्र हैं । इनकी गन्धसे सभी प्रोति होते हैं । निर्वास, पराग, काष्ठ, गन्ध और कृत्रिम ये पाँच प्रकारके धूप देवताओंके प्रोतिप्रद हैं । इन पाँच प्रकारके धूपोंमें यक्षधूप माधवके उद्देशमें नहीं देना चाहिये, क्योंकि यह उनका अप्रोतिकर है । रत्नविष्टम, सुरघ और स्कन्दी यह धूप महाभायाकी नहीं देना चाहिये । किन्तु यक्षधूप, पत्रिवाह, पिण्डधूप, सुगोलक, जम्बागुद और कर्पूर इन सबका धूप महाभायाका प्रिय है । महाभायाका हृद्यधूप द्वारा पूजन करना ही प्रयत्न है । भेद और महायुक्त धूप पङ्क्तिय नहीं है । जो धूप आग्रात वा याहित है उस धूपसे देवपूजा करना निषिद्ध है । यदि कोई इस प्रकारका धूपदान दे तो उसका भारकर्म नाश होता है । मृत्तिकाभन पर भयवा

चङ्गेमें रख कर धूपदान नहीं करना चाहिये । इन दो-के सिवा जो कोई आधार हो, उस पर धूपदान दे गकते हैं । रत्नविष्टम, साल, सुरघ, सुवल, सन्तानक, नमिद और कालागुद ये सब हृद्यजात धूप कामेश्वरदेवोके प्रिय हैं । (कालिकापु० ६८ अ०)

पहला निर्वास, जैसे धूना । २रा चूर्ण, जैसे जाय फलचूर्ण आदि । ३रा गन्ध, जैसे कस्तूरिका आदि । ४था काष्ठ, जैसे कालागुद आदि । ५वा कृत्रिम चर्मात् जो क्रिया द्वारा तैयार किया गया हो, जिसके तैयार करनेमें ५१० भयवा उससे भी अधिक द्रव्योंकी मददरत पड़ती हो, जैसे पङ्क्तधूप आदि ।

यही पाँच प्रकारके धूप देवपूजामें प्रयत्न है । पाँच प्रकारके धूपोंका विधान रहने पर भी हम लोगोंके देगमें कृत्रिम धूपका हो विधेय प्रचार देखा जाता है । प्रत्येक पूजादि सांझिक कार्यमात्रमें ही धूना वरमद्वत दूपा करना है, यह भी धूपके अन्तर्गत है । धूपकी नाम-निवृत्तिके विषयमें इस प्रकार कहा गया है—

“भूतारोपमहारोप-युतिगन्धः प्रभावतः ।

परमानन्दनवार धूप इत्यभिधीयते ॥” (भाट्टकृत०)

अपने प्रभावके अनुसार धूप भविष्य होय और पुति-गन्ध विनाश करता है तथा अत्यन्त आनन्द देता है चर्मात् दुर्गन्धकी नाश कर उस जगह सद्गन्धसे आमी-दित करता है, वही कारण इसका नाम धूप पड़ा है । पाञ्चिकतत्त्वमें धूपविधानकी जगह ऐसा विधान लिखा है—

“हरिकार्यं इने दाह सिद्धं वायुदं धितं ।

शक्ते जातीकं भीसे भवति स्तुः प्रियाणि वे ॥”

और भी

“पुर्व धूर्वक गन्धं उपचारांस्तथा परान् ।

जिह्वन् निवेद्य देवेभ्यो मरो नरकमाप्नुयात् ॥

न भूयो विदरेदधूर्व गाँवेन न फटे तपो ।

यथा तथाभारततः कृत्वा ते निविदेदये ॥

ब्रह्मरः सर्वमाप्नोति धूपदः सर्वमाप्नुते ॥” (भाट्टकृत०)

मासिक, महिषास्य, गुग्गुलु, दाह, मिश्रक, पगुद, कर्पूर, मकरा, नखी और पायकन इन सबके द्रव्य-चूर्णको एकत्र कर बीके साथ मिला करके प्रयुक्त करना

अन्ते तन्मन्त्रे विभिन्न धूर्तिका विषय इह प्रकार लिखा है—

“सितायमधुपमिधुं शुभगुणगुणचन्दनम् ।

पङ्कज धूपयेत्तु सर्वदेवप्रियं सदा ॥”

सित, चान्द, मधु, गुग्गुलु, पशुप और चन्दन इन चार द्रव्यों के जो धूप बनाता है, तन्मन्त्रसे वह पङ्कजधूप कहलाता है । यह पङ्कजधूप सब देवताओं का प्रिय है । दशग्राह और योगग्राहधूपका भी तन्मन्त्र विधान देखा जाता है ।

योगग्राहधूप—

“गुग्गुलं सरलं दाहपत्रं मलयसम्भवम् ।

जोवेरमण्डं कुठं शुद्धं चर्जरश्च वनम् ॥

हरीतकी नखीं लाक्षा जटामांसीच कौलजम् ।

योगग्राहं विदुर्धूपं देवे वैने च कर्मेणि ॥” (तन्त्र)

गुग्गुल, पशुप, सरल, दाहपत्र, मलयसम्भव, जोवेर, कुठ, शुद्ध, चर्जर, चन, हरीतकी, नखी, लाक्षा, जटामांसी और शैलज इन सबको मिश्रित कर घीके साथ धूप बनानेसे भी तन्त्रीक योगग्राह धूप होता है । यह धूप देव और पित्रकर्ममें प्रयुक्त है ।

दशग्राहधूप—

“मधु मूलं घृतं मन्थो गुग्गुलुशुकीरजम् ।

सरलं सिद्धसिद्धार्थं दशगोधूप इत्येव ॥” (तन्त्र)

मधु, मोथा, घी, गन्ध, गुग्गुल, पशुप, शैलज, सरल, सिद्धक और सिद्धार्थ इन दश प्रकारके द्रव्यों द्वारा यह धूप प्रसृत होता है, इसीसे इसका नाम दशग्राहधूप पड़ा है ।

देवताको धूप निवेदन करके देना होता है । ‘फट’ इस मन्त्रसे धूपको मोक्षित कर ‘नमः’ इस मन्त्रसे निवेदन करके चण्डा बजा कर दान करना चाहिये । धूप, दीप और मोग देवताओंके पागे रखना चाहिये ।

“धूपरीरे धुनोगपञ्च देवताये निवेदयेत् ॥” (सिधितर)

धूपकोन पूजा करनेसे अर्घ्यात् पूजा करके धूपदान नहीं करनेसे सङ्ग हो जाता है ।

“जलहीने तु दुर्गिहं मन्थरीने त्वगम्यतां ।

धूपहीने तपोरोगं बहवहीने पनस्यं ॥” (अविशोचर)

आद्यादि कायमें एक विशेष धूपका अलक्ष्य देखनेमें आता है ।

“चन्दनाशुक्ली चोमे तथैवीरीरपद्मकं ।

गुग्गुलं गुग्गुलुचैव प्रताकं सुगन्धदेहत् ॥”

“उत्तीरं पीरगमूकं गुग्गुलं सिद्धकं ।” (भ्रातृत्वं)

चन्दन, पशुप, चमीर, पद्मक, तुलसी और गुग्गुल इन सब द्रव्योंको छुताकर कर जो धूप प्रसृत किया जाता है उसका आद्यादि पित्रकायमें प्रयोग होता है ।

गन्धमास्यादि चट्टाये बिना धूपदान करना निषेध है जो कोई करता है, उसे प्लो पर कृपण ही कर जन्मग्रहण करना पड़ता है ।

रोगनाशक धूप—इसका विषय वैद्यकग्रन्थमें इस प्रकार लिखा है—

वैर-पेङ्कजा मूल और मुस्तन्तुकी छाल, चकवन्की छाल, कज्जिका और हिङ्गुल इनके बराबर बराबर भागको एक साथ कूट कर जो धूप प्रसृत होता है उसका उपदंशरोगमें प्रयोग करनेसे उपदंशजनित चतुष्पञ्च हो जाता है ।

अभ्यविष—पारा, हरिताल, मन्थिला, सुद्रायक, तृतीया, फिटकरी, यवचार, विट्स्वण, मोशगा, मिच और सफेद चकवन्की छाल प्रत्येक एक तोला, हिङ्गुल छेद तोला इनके चूर्णोंको घीमें मिला कर धूप बनाने है । इस धूपसे उपदंश रोग नाश होता है । (वैद्यपर)

अष्टग्राहधूप—गुग्गुल, निम्बपत्र, वच, कुठ, हरीतकी, यव, सर्वप और छत इन्हीं एक साथ मिला कर जो धूप बनाने है उससे विषमण्वर निवृत्त होता है ।

अवशजिताधूप—गुग्गुल, गन्धलप, वच, धूना, निम्बपत्र, चकवन्का पत्र, पशुप और देवदाह इसका धूप विषमण्वरमें प्रयोग करनेसे वह जाता रहता है ।

माक्षेररधूप—हिङ्गुल, देवदाह, सरलकाष्ठ, गन्ध, छत, गो-पक्षि, गन्धलप, शिवनिर्मास, कण्टकी, म्लेत, मर्षप, निम्बपत्र, मयूरपुच्छ, सापकी केँचुल, विद्यामकी विंश, गोशुद्ध, मदनफल, हस्तो, कण्टकारी, धानकी भुंछी, कागलकी विंश, शृगासविंश और हस्तीदन्त इन सब द्रव्योंको एकत्र कर जागमूलमें भावना देते है । बाद उसे बोधलोमें कूट कर मरीच वरतनमें रख करके ब्रूयित करते हैं । चक्रभार से मृत्युशयमें रख कर पांच देते हैं । ऐसा करनेसे वे सब द्रव्य जलते तो नहीं, पर

उन्में धूपी निकलता है। यह धूप ऐकादिक पादि चरको यिनट करता है। जिस घरमें यह धूप दिया जाता है, वहाँ सर्प, विभाव, राक्षस आदिका भय कुछ भी नहीं रहता। (मैयग्वरत्नाम्नी उवराधिकार)।

निम्बपत्र, वच, हिङ्गु, सापको के तुल, और सर्प रस मय द्रव्योंको एक साथ मिला कर धूप देनेसे छात्रिणी पादि दूर हो जाती है और भूतोन्मादरोग मान्त्र हो जाता है।

पद्मविध—जपास-मोज, मयूरपुच्छ, हृष्टीफल, गिरिनिर्मल, मदनफल, गुहत्वक, विडालकी, विष्टा, तुप, वच, मनुष्यका केग, कापकी के तुल, गोखरू, हसी-धन्ता, हिङ्गु और मिर्च इनका धूप देनेसे माना प्रकारके भूतोन्माद और ज्वररोग नाश होता है।

(मैयग्वरत्ना० उवरादाधिकार)।

गह्वरपुराणमें रोगनाशक धूपका विधान इस प्रकार लिखा है—

“कूर्ममत्तशामद्विगीश्रगात्तवधानराः।

विद्वान्महिकाकादय बराहोत्कङ्कङ्काः॥

हं प एषाध्विन्मूत्रं मांसं वा रोमशोणित्।

धूपं दद्यात् उवरात्तस्य उवमस्तेम्यश शास्तये॥

एषान्मौषधप्रजातानि धूपितामि महेस्वर।

निप्रमित रोगमातानि ह्रस्वमिन्द्राशानियेषा॥”

(गह्वरपुराण)

कूर्म, मत्त, चूहा, महिष, गी, जगाल, चक्र, यानर, विडाल, बर्हि, काक, बराह, उच्छक, कुलूट और हंस इनकी विष्टा, मूत्र, मांस, रोम, पयवा शोणित द्वारा प्रधूमित करनेसे ज्वर नाश होता है और उवमत्तता पादि प्रशमित होती है।

“कार्वाकारियमुञ्जगरप वषा निमोचनं भवेत्।

उर्ध्वनिर्मिषानो धूपः प्रशस्तः सततं गृहे॥”

(मत्स्यपुराण १८२ अ०)

जपाम और मुनइकी पत्थिका धूप देनेसे सांपका भय नहीं रहता।

धूपक (सं० लो०) गुप्तकाष्ठ, मङ्गलूक लकड़ी।

धूपपट्टी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका यन्त्र जिसमें धूपमें धूपपत्री प्राम होता है। इसके बगानेकी रीति इस

प्रकार है—पट्टी काठ या धातुका एक मोम चक्र बनाया जाता है, पोछे उसके चार भाग किये जाते हैं। एक एक भागमें छः छः समान भाग करते पोर उस चक्रकी कोर थोड़ा कोढ़ देते हैं। बाद उस कोरमें साठ भाग करते पोर बीचमें एक एक चंगुल लोड़ी दो पट्टियाँ ऐसी लगाते हैं कि उनसे सम चक्रके चार विभाग पूरे हो जाय। जहाँ दोनों पट्टियाँ मिलती हैं वहाँ बोरी बोच एक छेद करके एक कोल लगा दे पोर धूपककी सुईसे या पोर किसी प्रकार उत्तर दक्षिण दिगा ठीक ठीक जान लें। उस स्थानके जितने पत्ताम की छतनी वह कोल उत्तरकी पोर उड़ी रहनी चाहिये। उस कोलको छाया मध्याह्नके पड़ने पश्चिमकी पोर पोर पोछे पूर्वकी पोर पड़ेंगे। मध्याह्नके चित्रसे पश्चिमकी पोर जिस चित्र पर छाया पड़े छतनी ही पड़ी मध्याह्नमें छटती जानें, इसी प्रकार पूर्वका भी मासूम नियोजा सकता है।

धूपक (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका रंगीन कपड़ा। इसमें एक ही स्थान पर कभी एक रंग और कभी दूसरा रंग दिखाई पड़ता है। इस कपड़े के तानिका सून एक रंग का होता है और बानिका दूसरे रंगका। इसी कारण देखनेवालेकी स्थिति पोर कपड़ेकी स्थिति के अनुसार कभी एक रंग दिखाई पड़ता है, कभी दूसरा।

धूपदान (हिं० पु०) १ वह वस्तु या डिब्बा जिसमें धूप रखा जाता है। २ वह वस्तु जिसमें गन्धद्रव्य या धूपवत्ती रख कर सुगन्धके लिये जलाई जाती है, अगि-याही।

धूपदानी (हिं० स्त्री०) धूप रखनेका छोटा बरतन।

धूपधुम (सं० पु०) रत्नखदिर, साल खेर।

धूपन (सं० पु०) धूपयति संधुसयति अग्निमिति धूप-त्वात्। १ सालखदिर, सालका पेड़। इसका मूल्यत पर्याय—गालवेष्ट, सजरस पोर मञ्जिवज्र है। (लो०) धूप-धुष्ट। २ धूपदि द्वारा समुच्चल, धूप देनेकी क्रिया। ३ धूप, पूजा।

धूपपात्र (सं० स्त्री०) धूपपत्र पात्र इत्यत्। धूपधार पात्र-मैद, वह वस्तु जिसमें गन्धद्रव्य जला कर धूप देने है। धूपपत्री (हिं० स्त्री०) मसाला समी पड़े सोक या पत्ती।

इसे जलानेसे सुगन्धित सुगंध उत्पन्न होता है।
धूपमुद्रा (सं० स्त्री०) धूप प्रदानाय मुद्रा। देवपूजा
धूपदानके लिये दग्धनीय मुद्रामुद्रा।

धूपवास (सं० पुं०) धूपने वासः सुगन्धोत्पत्तिः। स्नानके
पेछे सुगन्धित धूपसे शरीर, बाल आदि वासनेका
कार्य।

पूर्व समयमें भारतवासी स्नानके बाद कुछ काल सुग-
न्धित धूपमें रक्ष कर गीने शरीर या बालको सुखाते थे।
ऐसा करनेसे सुगन्ध शरीरमें बस जाती थी। रघुवंश,
मेघदूत आदि काव्योंमें इस प्रथाका उल्लेख है।

धूपवृक्ष (सं० पुं०) धूपमाधनं वृक्षः मध्यपट्टलोपि-
कर्मधा०। संरलवृक्ष, सलई या शुभमुखका पेड़। इसका
गोंद धूपके काममें आता है।

धूपमरला (सं० स्त्री०) धूपार्द्र संरलवृक्षविशेष, एक
प्रकारका शुभमुखका पेड़।

धूपगुरु (सं० स्त्री०) धूपाय सन्मुखपाय यदगुरु।
दाह्य अगुरुमंद, एक प्रकारका अगर।

धूपार्द्र (सं० पुं०) धूपमाधनं पार्द्रं यस्य। यौवेष्ट
नामक सुगन्ध काष्ठ।

धूपयित (सं० त्रि०) धूपयति स्म इति धूप सक्रापे इति
पाठ, धूपयः क्त। १ स्तनत्र, चलने आदिसे यका हुआ,
कैरान। २ दत्तधूप, धूप दिया हुआ।

धूपार्द्र (सं० स्त्री०) धूपाय पार्द्रति पूज्यते इति पार्द्र-
पूजायां घट्। १ कृष्णाशुभ, काला अगर। (त्रि०)
धूपमयति पार्द्रं यस्य। २ धूपदानके योग्य।

धूपित (सं० त्रि०) धूपयति स्म इति धूप-क्त। १ स्तनत्र,
चलने आदिसे यका हुआ, कैरान। २ आत्मा, यका हुआ।
३ स्तनापित। ४ दत्तधूप, धूप दिया हुआ। (स्त्री०)
धूप।

धूप्य (सं० पुं०) गन्धी नामक अमृतद्रव्य।

धूपकी—नेपाल राज्यमें उत्पन्न वृक्षविशेष। इसकी शाखा
महासूती की भाँति लसती है और इससे जो सौगन्धयुक्त
निर्गन्ध निकलता है, वह पूजादि तथा धोपत्रादिके काम-
में आता है। इसको सऊठो चंद आदिमें लगाये जाती
है। इसका सूंसा नाम भेचियाकोरी, शाखा और छे-
नुल है।

धूम (सं० पुं०) धूनीति धूयते वा धूमन्। (श्विषुपीन-
पीथि। उक्त्वा १।१४४) आग्नेय प्रभव। १ धुआँ। पर्याय—
मरुदाह, धतमाह, शिखिध्वज, चनिवाह, तरो। इनका
गुण वातपित्तहृत्कारक है। (राघवचरित)

“हविःशमीपवदवाजगन्धैः पुण्यः कृत्वा नो हविषाय धूमः॥”

(रघु० २४)

२ उद्गारज वायुविशेष, डकार। जठरान्निके
माध्य होनेसे अन्न चञ्चो तरफ परिपाक नहीं होता।
पतएव जठरान्नको दोषिके अभावके कारण भीतरसे
एक प्रकारका धुआँ निकलता है, इसीको धूम या डकार
कहते हैं। ३ सुशुतोक्त धूमपान। इनका विषय सन्धुतमें
इस प्रकार लिखा है।—

धूमपात्र प्रकारका है—प्रायोगिक, खेहन, वैरेचन,
कासघ्न और वासनीय।

तगर और कुछको छोड़ कर एलादियोंके दूसरे
दूसरे सभी द्रव्योंकी मलीभांति पोस कर चूर्ण बनाते हैं।
बाद बारह अंगको सरकण्डमेंसे भात अंगको चोम-
कण्डसे लपेट कर उसमें वह चूर्ण लेप देते हैं। इस
प्रकार बत्तीकी सहायतासे धूम प्रयोग करनेकी प्रायो-
गिक कहते हैं।

रैखान फलका सार, मधुपिष्ट, सजंरस, शुग्गुल
आदिके साथ ही वा तेल मिला कर बत्ती बनानेसे जो
धूम प्रयोग किया जाता है, उसे खेह कहते हैं।

गिरिविरेचन बत्तीको बत्ती प्रस्तुत कर धूम प्रयोग
करनेको वैरेचन कहते हैं। हृहतो, कण्टकारी, त्रिकटु,
कासमर्द, डिङ्ग, इङ्ग, दोलक, मनामिला, गुप्तच, कर्कोट,
मूडी आदि काष्ठनामक बत्तीको बत्ती निर्माण कर जो
धूम प्रयोग किया जाता है, उसका नाम कासघ्न है।

सायु, चर्म, चुर, मूत्र, कर्कोटाक्षि, शुष्कमास्य और
लामि इनके द्वारा धूम प्रयोग करनेकी वामनीय
कहते हैं।

वर्षा प्रयोगका नम जिन सब द्रव्योंसे प्रस्तुत होता
है, धूमका नम भी उन सब द्रव्योंसे प्रयुक्त है।

धूम प्रयोग करनेके यह भागको विद्यालना कमिठा-
कुलिके द्वारा और मूलका पय एक उरदके परिमाणका
होना चाहिये। अर्थात् उसमें दो कं एक उरद पना-

याससे जा सके, ऐसा होना आवश्यक है। धूम प्रयोगकी जगह बत्ती प्रविष्ट करनेके लिये नलके छिद्रको दोधेता प्रायोगिकमें ४८, खेहनमें ३२, वैरेचनमें २४ घोर कासप्र तथा वामनोद्यमें १६ पट्टुनि होना चाहिये। श्वेतोक्त दो प्रकारके नलका छिद्र वैरेकी गुठलोके जैसा रहे।

प्रथमधूमार्थ—नलका परिणाम सरदकी जैसा घोर छिद्रपथ कुलघोके जैसा होना आवश्यक है। धूम प्रयोग करनेसे धूमपान समझना चाहिये। जब धूम सेवन करना हो, तब लच्छन्दभावसे प्रफुल्लित हो कर बैठना चाहिये, छिटकी नीचेकी घोर घोर चित्तकी स्थिर करना एकात्म आवश्यक है। खेहाल वसोई धम भागको प्रदीप्त कर उसे नलके छिद्रमें डाल कर धूमपान करना चाहिये। पहले धूमको मुख द्वारा, पीछे नासिका द्वारा पान करना चाहिये। मुख वा नासिका जिससे द्वारा धूमपान किया जाता है, उसी द्वारा धूम निकालना भी आवश्यक है। मुख द्वारा ग्रहण करके नासिका द्वारा धुप निकालना उचित नहीं है। इस प्रकार प्रतिशोभ क्रिया कर्णक दयनगतिमें व्याघात पहुँचता है। विमेषतः प्रायोगिकमें नासिका द्वारा, खेहनमें मुख घोर नासिका दोनों द्वारा वैरेचनमें केवल नासिका द्वारा घोर दुर्गरे दो प्रकारमें मुख द्वारा धूमपान करना चाहिए। प्रायोगिकमें बत्तीको छायामें सुखा कर पट्टारसे दोष करके धूमपान करनेका विधान है। खेहन घोर वैरेचनमें भी यही नियम है। पट्टार यदि निधूम हो, तो उसमें धूमका द्रव्यडाल कर ऊपरसे ठकन टांक देना चाहिए। उस आच्छादनके ठकनमें छिद्रका रहना आवश्यक है। उस छिद्रमें नलका मुख संयोजित कर कासप्र घोर वामनोद्य धूमपान करना चाहिए। जब तक देख निर्वासन हो आय, तब तक धूमपान करते रहना उचित है।

शोक, परिश्रम, क्रोध, भीति, उष्णता, रक्त, पित्त, मद, मूर्च्छा, दाह, पिपासा, पाण्डुरोग, तालुघोष, वमन, मन्त्रकमें चमिघात, उद्वेग, उपवास, तिमिररोग, प्रमेह, उदराधान, आर्ध्रात, बालक, हृद, दुर्बल, विरक्त, आस्थापित, जागरित, गर्भिणी, रुच, चोच, चरचल पाटि रोगिनि मधु, घृण, दधि, दुग्ध, मत्स्य, मद्य वा ओषा मांड़ पान करने पर अथवा शरीरमें योद्धे माया

रहने पर धूम सेवन करना उचित नहीं है। धूम यदि आकालमें पोया जाय, तो भ्रम, मूर्च्छा, गिरीरोग, चक्षु, कर्ण, नासिका घोर जिह्वाका उपघात होता है। प्रय-सोक्त तीन प्रकारका धूम, निम्नलिखित बारह कालमें पोना उचित है।

धूमपानके बारह काल—सुत, दन्तप्रचालन, गन्ध, खान, दिवानिद्रा, मैद्युन, वमन, मूत्रपूरीपत्याग, क्रोध घोर मन्त्रकर्म इनमेंसे मूत्रपूरीपत्याग, लघु, क्रोध घोर मैद्युन इनके बाद खेहिक धूम प्रयोज्य है। खान, वमन घोर दिवानिद्राके बाद वैरेचन धूम दितकर है। दन्तप्रचालन, नस्यप्रयोग, खान, भोजन, घोर शास्त्रकर्मके पन्तमें प्रायोगिक धूम विधेय है। खेहधूम, खेह घोर उपवेप प्रयुक्त वायुका शान्तिकर होता है। वैरेचनसे रुचता, तीक्ष्णता, उष्णताप्रयुक्त श्रेष्ठा निर्गत होती है। प्रायोगिक धूम पहले दो प्रकारके कारणों द्वारा श्रेष्ठा की उत्पत्ति कर निर्गत करता है।

किसी कविका कहना है कि, 'हुका चार सत्त चच्छा सोके, सुह धोके, खाके, महर्षि घोर चार सत्त दुरा धोधिमें, चंभेरेमें, मूकमें घोर धूममें'।

धूमपानका काल—धूमपान करनेसे इन्द्रिय, वाक्, घोर मन प्रसन्न होता, केश घोर मन्त्र हृद रुचता तथा मुख सुगन्धित घोर परिष्कार होता है। कास, खास, रुचि, मुखका उपवेप, कारभन्त्र, मुखका आस्वाव, वम, नेच्छा, तन्हा, निद्रा, हृदुदाभ, मध्यादाभ, गिरीरोग, कर्णशूल, चक्षुशूल घोर वातश्लेष्मासे उपपन्न मुखरोग धूमपान करनेसे प्रशमित होता है।

धूमपानमें योग घोर अतियोगका कल जानना आवश्यक है। उपयुक्त परिमाणमें धूमका प्रयोग करनेसे शीत शान्त होता है। अधिक परिमाणमें सेवन करनेसे रोगको चमगति, तालुघोष, मन्त्रघोष, दाह, पिपासा, मूर्च्छा, भ्रम, मद, कर्णरोग, छिटकाति, नासिकारोग घोर दोषोत्पत्ति पादि उपद्रव होते हैं। प्रायोगिक धूमपानमें सुख घोर नासिका द्वारा पर्यायक्रमसे तीन तीन बार करके धूमपान करना चाहिए।

खेहिकमें जब तक पशुपति न हो, तब तक धूमपान विधेय है। वैरेचनिकमें जब तक कोई दोष दोष

जो यह है तब तक धूमपान कर सकते हैं। अनिरिक्त होमिसे दोष देखनेमें आता है। तिस, तण्डुल और जोड़ा मड़ि पर कर पीछे वामनीय धूमपान करना विषय है। काष्ठधूम आसके साथ पोना हितकर है। अथर्वे यदि धूमका प्रयोग करना हो, तो शरीरमें किद्ध करके उसमें मल लगा कर प्रयोग करना चाहिये। धूमके द्वारा प्रयोग की वेदना शान्त होती है, निम्नता भाजातो है तथा पीपका निकलना बन्द हो जाता है। धूमकी यही संचित विधि है। (संयुक्त चिकित्सित स्थान)

४ धूमकेतु। ५ उक्तापात। ६ ऋषिभेद, एक ऋषि का नाम। ७ देशभेद, एक देशका नाम।

धूमक (सं० पु०) १ धूम, धुआँ। २ एक शाकका नाम धूमकंधैया (हि० स्त्री०) उपद्रव, उत्पात, शोरगुल।

धूमकेतन (सं० पु०) धूमः केतनं ध्वजाच्चिह्नं यस्य। १ अग्नि। इसकी पताका धुआँ है। २ केतुपट्ट।

धूमकेतु (सं० पु०) धूमः केतुः चिह्नं यस्य। सध्याकि कुछ बाद घयवा सुबहके कुछ पहले कभी कभी आकाशमें लम्बे धुमदार सफेद तारे दीप्त पड़ते हैं, वही धूमकेतु हैं। इनके प्रकाश तथ्यका पता आज भी अच्छी तरह किसीकी नहीं लगा है। अत्यन्त प्राचीन कालसे धूमकेतुके विषयमें जनसाधारणमें यह कुसंस्कार चला आ रहा था कि इनके उदय होमिसे राष्ट्रविव्रव, क्षत्रभङ्ग, दुर्भिक्ष, महामारी आदि भयंकर होतें हैं। 'अपमृजुन' जान कर धूमकेतुका जो नामान्तर प्रचलित है, वही इस विश्वासका परिचायक है। यह संस्कार केवल इस देशमें प्रचलित था सो नहीं, बरं समस्त सभ्य देशोंकी ही प्राचीन अधिवासियोंमें इसके अस्तित्वका दृष्टान्त मिलता है। कालक्रमसे विज्ञान पालोचनके फल द्वारा ये भ्रम भ्रान्त जनसाधारणके मनसे दूर हो गये हैं सही, किन्तु धूमकेतुका यथार्थ तथा बहुत ही कम प्रकाशित हुआ है। जोचे इसके विषयमें वर्तमान कालके प्रधान ज्योतिर्विदोंके सङ्ग्रहित मतका सारांश दिया जाता है।

इन सहाधारण तारोंमेंसे अनेक हम लोगोंकी शरीरजगत् के साथ मिले हुए हैं और शेषके साथ इस शरीरजगत्का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। ये सब प्रकाश नभोमण्डलके त्रिष.पं.में शरीरजगत् अवस्थित है, वही पं.पं.

जो कर जाते हैं और इसीसे हम लोगोंकी दृष्टि उन पर पड़ती है। धूमकेतुओंमें अनेक बिना दूरबीनके देखे नहीं जा सकते। जो सब बिना किसी यन्त्रके दिखाई पड़ते, वे शीघ्र और पुच्छ दो पं.पं.में विभक्त हैं। शीघ्रका मध्यस्थ एक सफेद तारा-सा है, इस पं.पं.को 'गर्भ' (nucleus) कहते हैं। इस पं.पं.के चारों ओर कम प्रकाशको एक नोहारिका रहती है। गर्भसमन्वित इस नोहारिका मण्डलका नाम शीघ्र है। पुच्छांश भी इसी तरह नोहारिकासे संयुक्त है और रेश्माक्रमसे बहुत दूर तक विस्तृत है, किन्तु शीघ्रदेशमें इस पं.पं.की उत्पन्नता बहुत कुछ कम है। धूमकेतुकी भाङ्गति सब समय एक-ही नहीं देखी जाती। बहुतोंके एक पूर, किसीके दो, किसीके चारसे भी अधिक और किसीके बिलकुल नहीं रहती है। इस प्रकार पुच्छविहीन केतुओंमेंसे अनेक 'गर्भ' गर्भावस्था नोहारिकामण्डल के परान्तर सुडौलरूपसे प्रवर्धित नहीं हैं। बहुतोंके बिलकुल गर्भ नहीं रहता, केवल एक नोहारिकामण्डल देखनेमें आता है। कहना फजूल है, कि शरीरजगत्का सम्बन्ध और सुपगामी-परिचालित यहाँके साथ धूमकेतुका विशेष पायंका है। इसके पहले ही कहा जा चुका है कि विज्ञानसर्वाङ्गी वसुधै धूमकेतु सम्बन्धोय सभो कुसंस्कार दूर हो गये हैं सही, किन्तु इसी सम्बन्धमें अनेक ज्ञातय विषय अब तक भी अच्छी तरह किसीकी मालूम नहीं हैं। पर धूमकेतु की विषय-प्रज्ञाण्डके पन्तगत कई एक सुमहती नियमावतियोंका अनुसरण करते हैं, वह एक प्रकारसे बहुमतसिद्ध है एवं मविष्यत्में जो ये अनेक ज्योतिषिक रहस्य उद्घाटनके स्वल्प होंगे, उसमें भी तनिक सन्देह नहीं है।

धूमकेतुकी संख्या कितनी है? इनका उत्तर यही है, कि धूमकेतुकी संख्या नहीं कहने पर भी भ्रम नि नहीं होगी। सुविश्रुत पायात् ज्योतिर्विद देवना कह गये हैं कि समुद्रमें मछलीकी संख्या त्रिष.पं.में अनिश्चित है, श्योमसामगमें धूमकेतुकी संख्या भी उसी तरह है। इनमेंसे अनेक कभी कभी शरीरजगत्के समीप रहनेके कारण हम लोगोंको निगलमें आते हैं। इसामही अन्धके बादसे से कर वर्तमान समय तक ८१२ केतु

ज्योतिर्विंदने देखे गये हैं। इनमें से १८ फ़ीर सौरजगत्में कोट घाते हैं, केवल फ़ीर दूमरे बार देखनेमें नहीं घाते। दूसरे तुभी 'कक्षा' या गगनमण्डल-परिभ्रमण-मार्ग एक तरहका नहीं है। कोई वृत्ताभास (Ellipse), कोई चतुर्धो (Parabola) या कोई हाइपरबोला (Hyperbola) को राहमें पाकागमें विचरण करता है। यदि इनकी गतिविधि किसी प्रकार भी नियम-प्रणालीके अन्तर्गत नहीं है, तो भी यह एक प्रकारसे स्थिर हो चुका है, कि इनकी समस्त गतिविधि अन्ततः केतुधोके सौरजगत् के मघिहिततावस्थानके समयमें माध्याक्यण द्वारा नियमित होती है। इसके सिवा धूमकेतु सम्यग्धोय कोई भी विशेष तत्त्व प्राप्त तक प्राविशित नहीं हुआ है। विज्ञापितकी कोई प्राप्य नियमावलीके अधीन हो कर ये अस्मय धूमकेतु दिन रात अन्तर्गत गगनपथमें घूमते फिरते हैं, यह कौन कह सकता है ?

धूमकेतुका प्रकाश कहाँसे आता है ? इसके विषयमें मतभेद है। किसीके मतमें सभी केतु सौरजगत्में घड़ीके सदृश हैं, सूर्यालोका इनके ऊपर प्रतिबिम्बित हो कर इन्हें ज्योतिर्मय रूप देता है। फिर बहुतोंके मतमें धूमकेतुगण स्वप्रभ हैं, किसी गुरु अन्तर्निहित शक्ति अन्तर्से उनकी शरीरसे यह प्रकाश निकलता है, लेकिन सब तक इनकी पूरी सीमांचा नहीं हुई है।

पहले ही लिखा जा चुका है, कि ये सब यह एक एक गीहाराका-विच्छेदावस्था हैं, किन्तु इनके परमाणुका लगाम (Cohesion) बहुत कम है। ये सब परमाणु माध्याक्यणके अन्तर्से एकमें दूसरेके साथ मिले हुए हैं, ऐसा अनुमान भी नहीं किया जा सकता। अतर्गत यही अनुमान कर सकते हैं, कि केतु शरीरका प्रत्येक विभिन्न परमाणु-समष्टि (Molecule) रविके चारों ओर घूमनेवाली एक अतन्त्र मण्डल मण्डल है। कुछ कास पहले एक बार 'रियेनर धूमकेतु' की अतन्त्र अंशोंमें विभक्त हो कर एक दूसरेके चारों ओर घूमता दिखाई पड़ा था, यह केतुधोके परमाणुसमष्टि-समूहमें अंतर्गतिके परमाणुका ही परिचायक माना था और "पेरिहेलियन" (Perihelion) में उपावृत्त होनेमें केतुका शरीर को प्राप्य-रूपमें रूप धित होता है, उसका भी यही कारण है कि हमें यह स्पष्ट जाना जाता है, कि धूमकेतुधोकी

घनितता (Density) बहुत मामूली है। यही कारण है कि इनके सौरजगत्में कोटोंमें कोटों ताराधोके अन्तर्गत निष्ठ रहने पर भी ये सब छोटे तारे तनिक भी विचलित नहीं होते। केतुगरीरका परमाणुसमष्टिका प्राकुचन ओर सम्प्रसारणके विषयमें ये सब मालूम होने पर भी किम तरह इनकी पूँछ उत्पन्न होती है, यह दुर्भेद्य रहस्य आज तक किसीको अच्छी तरह मालूम नहीं। इन विषयमें विभिन्न ज्योतिर्विदोंका मत अन्तर्गत करना निष्प्रयोजन है। अभी सबसे पहले धूमकेतुके विषयमें कई एक साधारण विषय ओर इनकी प्राकृतिक परिवर्तनके विषयमें दो एक बातें कह देने बाद इस विषयके दो एक मतका उल्लेख किया जायगा।

धूमकेतु काय तक देखनेमें आते हैं उसका कुछ नियम नहीं है। कोई कोई केतु केवल दो बार रात तक, कोई कोई एक वर्षसे अधिक समय तक अन्तरमें आता है। साधारणतः केतु केवल दो-तीन मास तक ही दिखाई देते हैं। १८२५ ई०में पल्लवा ओर १८६१ ई०में तैयका प्राविशित केतु एक वर्षमें अधिक समय तक दृष्टिगोचर होता था। जब तक धूमकेतु दीर्घ मण्डलता, तब तक उसको गीहारावरणका बारम्बार परिवर्तन हुआ करता है। केतु अतन्त्रा हो सूर्यके समीप रहते हैं, अतन्त्रा हो उनकी अन्तर्गता बहुतों के ओर सूर्यसे ही जितनी ही दूर चले जाते हैं। अतन्त्रा हो उनकी प्राकृतिक फिर लगी हो जाती है। एतद्वर धूमकेतुको कई बार यही तरह प्राकृतिक परिवर्तन हुआ था। कोई कोई ज्योतिर्विद ऐसा अनुमान करते हैं, कि तापका शून्याधिक हो इस प्राकार-परिवर्तनका कारण है। धूमकेतु अतन्त्रा हो सूर्यमण्डलके निष्ठ रहते हैं, अतन्त्रा हो उनका गीहारावरण अन्तर्गत तापके कारण अत्यन्त द्रवपदार्थ हो जाता है और अतन्त्रा हो सूर्य मण्डलमें दूर रहते हैं अतन्त्रा ही माध्यामि तापको कमोसे कम हो कर अन्तर्गत दीर्घता है। अब उनकी पूँछको उत्पन्निके विषयमें दो एक बातें बतलाते जाते हैं। अत्यन्तसमं धूमकेतुकी पूँछ प्रायः नहीं रहती, यदि रहती भी है तो बहुत छोटी। धीरे धीरे यह पूँछ अन्तर्गत बहुत बहुत बढ़ जाती है।

कभी कभी तो यह बीस करोड़ मीलसे भी अधिक लम्बी देखी जाती है। जिस प्रकार इस पूँछकी उत्पत्ति होती है इसकी विषयमें जो मतभेद है वह पहले ही लिखा जा चुका है। कोई कोई कहते हैं, कि समस्त उपकरणोंमें धूमकेतु गठित है, उनमेंमें एक वा अधिक द्रव्य ले कर उनकी पूँछ बनाई गई है। सूर्यके समीप जानेसे पूँछके उपकरण अधिक गर्मीके कारण गल कर वायुमें परिणत हो जाते हैं और सूर्यकी विपरीत दिशामें विखल हो जाते हैं। जब तक केतु सूर्यके समीप रहते हैं तब तक नये उपादान गल कर वायुके आकारमें परिणत हो जाते और पूँछके कलेश्वरकी हडि करते हैं।

धूमकेतुके पुच्छाङ्गके विषयमें एक मतका उल्लेख हो चुका। इसके विषयमें और भी कई मत हैं किन्तु विस्तार हो जानेके भयसे उनका उल्लेख नहीं किया गया।

धूमकेतुके साथ हम लोगोंको इस छविका संघर्ष हो सकता है वा नहीं? धूमकेतुकी अधिकता देख कर और जिन तरह से गगन-ययमें भ्रमण करते हैं उससे साफ साफ अनुमान किया जा सकता है कि कभी न कभी इस प्रकारकी घटना अवश्य हो सकती है। तब इस तरह संघर्षका फल क्या होगा उसका अनुमान करना कठिन है।

जिस ज्योतिर्विद्वन्ने जिस धूमकेतुका आविष्कार किया, उसकी नामासुमार उन्ने केतुका नामकरण हुआ है, जैसे—हेलिका धूमकेतु, एनकका धूमकेतु, कैला धूमकेतु इत्यादि।

पहले ही लिखा जा चुका है कि धूमकेतुके विषयमें मनुष्योंका ज्ञान अब भी सामान्य है। ज्योतिर्विद्व पण्डित लोग अनुमान करते हैं कि इस केतुसम्बन्धीय आलोचना होनेसे ही विश्वब्रह्माण्डके अनेक रहस्य प्रकट हो सकते हैं।

वराहमिहिरके मतसे धूमकेतुका उदय नामस उत्पत्ति-विशेष है। इससे भ्रम गल होता है। इन्द्र धनुषको गर्द-आकाशमें जो तारे उदित होते हैं उन्हें धूमकेतु कहते हैं। इनकी दो शूल, तीन शूल या चार शूल भी होते हैं। यह धूमकेतु अत्यन्त घापद-अनक है और इनके उदय होनेसे तरह तरहके उत्पात-हुआ करते हैं।

धूमकेतुके उदय होनेसे साम्राजिक क्रिया नहीं करनी चाहिये। चर्मात् पाँच दिनके बाद मंगलकार्य कर सकते हैं। कहीं कहीं ऐसा भी लिखा है कि धूमकेतुके उदय होनेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीन दिनके बाद और शूद्र एक दिनके बाद शुभ कार्य कर सकते हैं। हेतु देवो।

२ अश्वविषय, एक प्रकारका घोड़ा। यह घोड़ा भ्रम-जनक होता है, अतः इसे परित्याग कर देना चाहिये। जिन सब घोड़ोंकी पूँछमें भँवरी हो, उन्हें धूमकेतु कहते हैं। राजाओंकी यह घोड़ा नहीं रखना चाहिये।

युक्तिसम्बन्धमें इसका लक्षण दूसरे प्रकारमें लिखा है। जिन घोड़ोंकी पोठमें एक भँवरी हो, उन्हें धूमकेतु भण्य कहते हैं। इस प्रकारका घोड़ा परित्यज्य है। शमहादेव, शिव। ३ भनि। इसकी पताका धुवाँ है। ४ रावणका एक दास सेनापति।

धूमगन्धि (सं० स्त्री०) धूमस्य गन्ध इव गन्धो यस्य, ततो गन्धादित्यादिना इत्समासान्तः। १ रोहिण्यङ्ग, कृशा घास। धूमिन गन्धते गन्धतेऽसौ गन्ध-इन्। २ धूम द्वारा धनुषमें य बडि, वह बाग जो धुएँसे धनुषमान हो जा सके।

धूमगन्धिक (सं० स्त्री०) धूमगन्धि-कन्। रोहिण्यङ्ग, कृशा घास।

धूमध (सं० पुं०) राहुं प्रह।

धूमज (सं० पुं०) धूमाज्जायते जन-ड। १ मेघ, बादल, धूपसे मेघ उत्पन्न होता है। इसीसे धूमज शब्दसे मेघका बोध होता है। २ सुस्तक, मोया।

धूमजहज (सं० स्त्री०) धूमजन्यमधस्य चङ्गं वष्यं, तस्मात् जायते जन-ड। वन्यवार, मोषादर।

धूमदग्गी (सं० पुं०) धूमं धूमाज्जातिं द्रष्टुं शीलमस्य इय णिनि। सुद्युतोऽपि पित्र और वाक् द्वारा विदग्धध्वंज मानव, पित्र और वाक्के बड़ जानेसे जिसको दग्धं गति प्राप्त हो गई हो, जिसकी पालके मानने धुवाँ सा दिखाई पड़ता हो, उसे धूमदग्गी कहते हैं। सुद्युतमें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है—गीक, खर, परियम और मस्तकके समिताप द्वारा दृष्टिके समिहत हो जानेसे सभी पदार्थ धूमवर्ण दीप्त पड़ते हैं, इसीकी धूमदग्गी कहते हैं।

धूमधुका (हिं० पुं०) धूमरोह, भारी आवोजन, ठाट बाट।

धूमपान (मं० पु०) धूमि. धान ।

धूमध्वज (मं० पु०) धूम ध्वजः केतुरिय यत्न । धूमि धान ।

धूमनाटो (मं० स्त्री०) प्रयोगिकादि धूम प्रयोगार्थे नत्वा कार यत्न, नन्वे धाकारका एक यत्न जिससे गीतकी सुणी सेवन कराया जाता है ।

धूमप (तं० लि०) धूम धूमपानं पितृति पाक । मध्याह्ने निमित्त धूमपात्रपाककारो, तपस्याके लिए को केवल धुमां पो कर रहता है । २ धूमपायिमात्र, धूम पोनिवासा ।

धूमपथ (मं० पु०) धूमोपलवितः पथ्याः धूमपाथानां । पितृपथ । २ धूमपथारामार्ग, धुमां निकलनेका रास्ता ।

धूमपान (मं० स्त्री०) धूमपानं धानं । मत् । सुदुर्गन्धं मन्त्र धोर धनवीरगनामक धूमविशेष धान । इधका विषय धूम पदार्थमें देखो ।

धूम देगमें धूम लोग ऐसे समाज पोना कहते हैं । तमाज पोनेमें धूमपान करना होता है, इसीसे इसका धूमपान नाम पड़ा ।

इसका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है— धूमपान ६ प्रकारका है समन, तृण, रीचन, कामन, वामन धोर मधधूमन । मध धोर प्रायोगिक से दो मध शमन मधके, छेड़न धोर मृदु तृण धूमके, गोधन धोर तोण्ड से दो मध रीचन धूमके वर्णित हैं ।

वारक वर्णके लङ्गेकी धोर लछी वर्णके लङ्गेकी धूम पान करना मना है । यदि धूमपान मन्त्रक प्रकारसे प्रयोगित हो, तो काम, शान, प्रतिशान, मन्त्राग्रह, हनुपह, शिरोरोग धोर पातघ्नेमिक रोग प्रशमित होते हैं, इन्द्रिय, वायु धोर मनकी प्रसन्नता होती है । रोग, मन्त्र हन्त मन्त्रवृत्त होती हैं तथा सुपकी दुर्गन्धि जाती रहती है ।

जब धूम प्रयोग करना हो तब लसको लिपण्ड तथा मीन पर्व समन्वित करना कर्त्तव्य है । इसको मूल्यता कनिष्ठ पञ्चमिनी धोर पञ्चमरसा हिन्दु शास्त्रभाषा में मद्रा रहै ।

मन्त्र की रीति—प्रमनधूमके प्रयोगमें लसकी मन्त्रांश रोगीकी चंगनीमें ४० चंगनी, कामन धूमप्रयोगमें १६

चंगनी धोर कामन धूमप्रयोगमें १६ चंगनीकी दोनो चाहिये । मद्रधूमनाथ कोमन दम चंगनीका होता है, उसकी मूल्यता मद्र वा उरदके मद्रा धोर हिन्दु धा परिमाण सतना हो रहना आवश्यक है श्रितनेमें लसको वा लसाय मद्रजमें या जा सके ।

धूमपानका नियम—१२ चंगनी मध माय माय पतने एक मरकण्टेकी ले कर छने दो तीनो परिमित धूमोपयोगी धोपधके कलक द्वारा २ चंगनी मन्त्र धोर लेव दे, बाद छने लक्षणमें सुना से । मन्त्रोभाति धूम जानें पर मरकण्टेकी धोर धीरे धीरे धपणत करके लस लस की मन्त्रोकी स्निहोक्त करे । बाद लसके धूमपात्रको धकारकी धमिने मन्त्रा कर छमके दूधने भागकी सुपमें लगा धूमपान करे । धूमकी पहले सुप हो कर पान करना चाहिये धोर सुप हो कर की निकालना चाहिये । पोले नामिका धार पान कर सुप द्वारा उसे निकाल सकते हैं ।

जहाँ मधधूमन करना होता है, वहाँ प्रश्रुति पञ्चरके ऊपर एक मरकण्टेकी स्थापन कर उसमें ऊपर कलक धोपध रख देते हैं । पोले एक दूधने मद्रिध मरकण्टेमें छने टक देते हैं । जब उस हिन्दुमें धुमां निकलने लगता है तब लसके एक सुपको हिन्दुमें धोर दूधने सुपको चत स्थानमें लगा कर धूमप्रयोग करते हैं ।

मनधूमके प्रयोगमें समानादिका कलक, तृण धूममें लिध, मन्त्रांश, रीचन धूममें तोण्ड द्रव्योका कलक, कामन धूममें कण्टकारो धोर मिध, वामन धूममें खाग समानाद तथा लसमें धूमप्रयोग करना चाहिये । धूमपान करके मनमन्त्राध धोर लोष विमकुल नहीं करना चाहिये । सुदर्पादि धान, मन्त्र पचका धान द्वारा धूमपानका मन बनाना चाहिये । शान, मधपुत्र, दुःखित, मन्त्रोकी, कृष, चीन धादिके धूमपान करनेसे पचवा समनधूम धधिक मातामें इसका सेवन करनेसे नाना प्रकारके लसवृत्त होते हैं । लसवृत्त लपलित होने पर लसकी मालिके विप हतयान, मन्त्र, पञ्चम धोर मन्त्रांश करे तथा लस, रहु-रम, द्राणा दुग्ध धोर मधुमन्त्रके मद्रयोगमें समन, कलाता हितकर है । (आर्य २० पूर्वक) विषे विराटके मिधे धूम पदार्थ देखो ।

धूमपान (स० पु०) धूमिषोड, धुपान्न ।
 धूमपमा (स० स्त्री०) धूमस्य प्रभा इव प्रभा यस्याः । १
 धूमप्रकार नरक, वह नरक जो मृदा धूप से भरा रहता
 है । (त्रि०) २ धूमवर्ण, धूप के रंगका ।
 धूमपाय (सं० त्रि०) धूमं प्राप्नोति प्र-धम-धम । १ धूमभवत्
 तपस्विभेद, जो केवल धुप पी कर तपस्या करता हो ।
 धूममहिषी (स० स्त्री०) धूमस्य महिशेव इ नत् । कुम्भ-
 टिका, नौहार, कुम्भा ।

धूममार्ग (स० पु०) धूमपथ, धूप का रास्ता ।
 धूमश्रुति (स० स्त्री०) श्रुत्यं शोधनयोग्यं क्षणं श्रुतिः, एक प्रकारकी काली मही जिससे सोना सोधा जाता है ।
 धूमयोनि (स० पु०) धूम एव योनिस्तत्त्विकारणं यस्य ।
 १ मेघ, बादल । यन्त्रके धूपसे उत्पन्न मेघसे जो छट्टि होता
 है, वह धूमि के लिये धूम है । दावानलसे जो धुप निक-
 लता है, वह धूमहितकर है, धूमिचारान्तिके धूपसे जो
 मेघ बनता है, उससे धूमका नाश होता है और धूम
 व्यक्तिके चिन्ता-धूमसे जो मेघ बनता है वह धूमफल है ।
 १ सुस्तका, मोथा ।

धूमर (स० पु०) दृष्टिमण्डलगत रोगविशेष, धौलका
 वह रोग जिससे सभी चीजें धुंधली दिखाने पड़ती हैं ।
 धूमरज (स० स्त्री०) १ गृहधूम, घरका धुप । २ घरके
 धूपकी कालिख जो छत और दीवारमें लग जाती है ।
 धूमल (स० पु०) धूमवद्वर्णं सातोति ला-क । १ क्षण-
 कोहितवर्ण, कालिमायुक्त काला रंग । (त्रि०) २
 क्षणकोहित वर्ण युक्त, धूप के रंगका, धुंधलीके रंगका ।
 धूमला (द्वि० द्वि०) १ लालाई लिये काली रंगका,
 धूप के रंगका । २ धुंधला, जो चटकीला न हो । ३
 जिसकी शान्ति मन्द हो, मलिन ।
 धूमवत् (स० स्त्री०) धूमः विद्यतेऽस्य धूम-वन्तुप । १
 धूमयुक्त पर्वत । २ जिसमें या जहाँ धुप हो, धूपवाला ।
 धूमवर्ण (स० पु०) १ धूल, रज, गर्द । २ एक नागराज ।
 धूमवर्ण (स० स्त्री०) धूमस्य वर्णः । धूमपथ, धूप का रास्ता ।
 धूमशिला—देवविशेष । कथासरित्सागर ग्रन्थमें शङ्खभुज
 राजाकी कथा इस प्रकार लिखी है—

धूमशिला नामक एक राक्षसके रूपशिला नाम्ने
 भुवनेश्वर-रूप-सावर्ण्यशिलीने एक कन्या थी । शङ्ख

भुजने उससे विवाह करना चाहता । इस पर धूमशिलाने
 राजासे कहा कि यदि आप भुक्त भुक्त काम कर सकें
 तो आपकी इच्छा पूरी हो सकती है । रूपशिला इन्द्रजाल
 विद्यामें निपुण थी । उसकी सहायतासे जय राजा शङ्ख-
 भुज धूमशिलाके कहे हुए दुष्कर कार्य कर चुकनेके बाद
 उसके पास गये तो उसने फिर कहा, "यहाँसे दक्षिण-
 दिगामें दो योजन कीसकी दूरी पर एक मन्दिर है । यहाँ
 मेरा भाई धूमशिल रहता है । धनः आप अभी यहाँके
 लिये चल पड़ें । मन्दिरके सामने जा कर आप यह बात
 कहें, धूमशिल । मैं तुम्हें मदल निमग्न करनेके लिये
 धूमशिलसे भेजा गया हूँ । जल दो वहाँ चलो, क्योंकि
 कल रूपशिलाका विवाह होगा ।" यह काम करके यदि
 आप यहाँ पुनः लौट आँगे तो कल ही रूपशिलाकी
 आपसे ब्याह दूँ ।" धूम राक्षसकी बातमें पड़ कर शङ्ख-
 भुज यह काम करनेकी राजी हो गये । पीछे उन्होंने
 रूपशिलाके पास जा कर ये सब बातें कह सुनाईं ।
 यह सुन कर रूपशिला उनकी हाथोंमें थोड़ी मद्य, जल,
 काँटा, चाग तथा सायमें एक तेज घोड़ा दे कर बोली,
 " इस घोड़े पर सवार हो कर उक्त मन्दिरकी सामने जा
 पड़ लिये और वहाँ धामन्य-वाक्य उच्चारण कर वायु-
 वेगसे पुनः लौट आइये । चाते समय यदि धूमशिल
 आपका पीछा करतें दीख पड़ें, तो उसी समय पीछेकी
 ओर इस महीकी किंक दें । इस पर भी यदि वह अनु-
 सरण करता ही आवे, तो इस जलकी उसी तरह
 किंकीरी । इतने पर भी यदि वह पीछा न छोड़े, तो
 तामरी बार कटिकी ओर सबसे पीछे धूमशिला
 करीगे । ऐसा करनेसे वह आपका अनुसरण करना छोड़
 देगा । विलम्ब नहीं कीजिये, अभी तुरत रवाना हो
 जाइये । आज ही आपकी मेरे इन्द्रजालका प्रभाव देखने-
 में आया ।" शङ्खभुजने तदनुसार मन्दिरके सामने
 पहुँच कर पूर्व कथित भावसे निमग्न वाक्य उच्चारण
 किया और घोड़े पर चढ़ कर ओरसे वायुक्त लगाया ।
 घोड़े की दूर जानेके बाद वे क्या देखते हैं कि धूमशिल
 बहुत वेगसे पीछा कर रहा है । उसी समय उन्होंने
 रूपशिलाकी दो हुई मही की की । उस महीसे एक बहुत
 लंबा पहाड़ तैयार हो गया । जब उन्होंने देखा कि

राघव बहुत पासानीसे घटाड़ लाध कर पा रहा है, तब रूपगिराजे कथनानुसार पुनः उसकी चोर जन किंका। इस समय जलमे एक बड़ी गदोकी उत्पत्ति हुई। बहुत काटमे राघव उसे भी पार कर पाया। तब उन्होंने फिर काटिकी किंका जिसमे उस जगह एक प्रमाण्ड जगटका कोयल जड़नभा बाधिभाय हुआ। जब राघव उसमे भी निरुक्त पाया, तब पन्तमे शूद्रभुजने रूपगिराजीकी दो हुई पत्ति दूखो पर किंका जिसमे प्रचण्ड अनिरागिने निकल कर राघवकी गति रोक दो। राघव बहुत कर गया और रूपगिराजे ऐन्द्रजालिक मोहमे बतबुद्धि हो बहुत थके मारे अपने मन्दिरकी बापिस हो गया।

धूमस (सं० पु०) गाक, साग।

धूमसार (सं० पु०) गड़धूम, धुरका धुपों।

धूमसो (सं० स्त्री०) रोटिकाविशेष, धुपोंस छरदडा पाटा।

छरदकी दाखकी पानोमें मिगी कर उसकी भूमीकी किंका देते, बाद से धूपमें सुवाते हैं। पन्तमें उसकी चक्रोंमें घोसते हैं, इसीकी धूमवी कहते हैं। इसको अच्छी रोटी बनती है। यह कफ, पित्तनाशक और तापवर्धक है।

धूमसंहति (सं० स्त्री०) धूमस्य संहतिः इत्यत्। धूम-मसृज, धुपका समाज।

धूमा—मध्यप्रदेशके भक्तगंत सिवनी जिलेका एक पाम। यह लखनामनमे ११ मील और जन्मपुरसे ३१ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहां स्तून, पाना और छावनी है। लोकसंख्या प्रायः १००० है। यह स्थान समुद्रस्तरसे १८०० फुट ऊंचे पर बसा हुआ है।

धूमाघ (सं० पु०) धूम इव घाघ सस्यस्य, घव समा-नात्। धूममुख्य नैस्युक्त, वह जिसकी बाजे धुपें होती हैं। धूमाङ्ग (सं० पु०) धूम इव ऋग् यत्। १ मिश्रा घव, ग्रीष्मका पेड़। (ति०) २ धूममुख्य चन्द्रमुख, जिसका घंग धुपके समान हो।

धूमानि (सं० पु०) धूममेघोऽग्निः सभ्यलो० कर्मधा। अग्निमेघ, मिठा ल्वासा का मयटकी पाग।

धूमादि (सं० पु०) धूम आदिर्यस्य। पाणिनिप्रत्ययान्त देवनाचक मन्दगण। यमा—धूम, बहण्ड, अमादान,

चर्जनव, माचकल्लो, धानकल्लो, मादिचल्लो, मानल्लो, पटल्लो, मद्रुल्लो, समुद्रल्लो, टाल्लो, यल्लो, राजल्लो, मिट्ट, राजल्लो, मावाभा, मय मित्रवर्ध, भालो, मद्रुल्ल, पाजोक्त, हाहाव, माहाव, मन्कीय, बर्बर, यम्, गत्त, पानत्त, मठा, पादेश, घोव, पको, पारासी, धात्त, रात्रो, पावय, तीर्थ, कुचि, पत्तरीव, दोव, पदव, लज्जिनी, पद्म, दक्षिणाय चोर मातं। (पाणिनि)

धूमाम (सं० पु०) धूमस्य धाभा इव धाभा यत्। १ धूमवर्ष, धुपका रंग (ति०) २ धूमवर्षयुक्त, धुपके रंगका।

धूमावती (सं० स्त्री०) द्यमहाविद्यान्तर्गत विद्याविशेष। द्यमहाविद्याधोनिसे एक देवी। धूमावतीका उत्पत्ति-विवरण तत्त्वशास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—

एकवार पार्वतीको जब बहुत भूख लगी, तब उन्होंने महादेवसे कुछ पानेकी मांगा। महादेवने कहा, सर आ कर भोजन करेंगे, इसलिये थोड़ी देर ठहरो। पर पार्वती लुपासे पत्थर पातुर हो कर महादेवकी निमत गई। इस समय पार्वतीके शरीरसे धुप निकलने लगी। पन्तमें महादेवने माया द्वारा शरीर कल्पित कर कहा, "हे देवि! तुमने जब हमें पाया, तब तुम विधवा हो चुकी, पन्तः विधवाका नेत्र धारण करो। हमारे घरसे तुम इस वेशमें पुनो जाओगी और तुम्हारा नाम धूमावती होगा। इसवहायिया देवो।

तत्त्वसारमें लिखा है, कि जपचक्रुदंगो निविर्धे सुर-यत्तकी सिद्धिके लिये धूमावतीका जप करना चाहिये। तत्त्वसारमें इनका पूजन, कर्तव्य, मन्त्र आदिका विशेष विवरण लिखा है।

धूमिका (सं० स्त्री०) धूम इवास्तस्या इति धूम-उत्पन्न, निवर्धो टाप, १ कुम्हटिवा, कुहावा। २ पर्वोविशेष, एक चिह्निका नाम।

धूमित (सं० ति०) धूमोऽस्य मन्त्रातः इति तारका-दित्यादितत्त्वं, १ मन्त्रातधूम, जिसमें धुपों भंगा हो। (पु०) २ दोषवीय मन्त्रमेघ, तत्त्वोंके पदुमार वह दूधित मन्त्र जो माटे बारह पत्तरीका हो।

धूमिता (सं० स्त्री०) वह दिमा जिसमें धूप जाले-वाला हो।

धूमिन् (सं० त्रि०) धूमोऽस्त्यस्य बाहुल्येन इति । १ वाहुल्य द्वारा धूम-पुल, जहाँ बहुत धुआँ हो, धुएँ से भरा हुआ । जहाँ वाहुल्य या अधिकताका भाव नहीं होता, वहाँ मनुष्य प्रत्यय हो कर धूमवत् होता है । स्त्रियां ङीप् । २ अजमीदुभी पक्षोभेद, अजमीदुकी एक पक्षोका नाम । ३ अग्निर्भी जिह्वाभेद, अग्निर्भी एक जिह्वाका नाम ।

धूमोत्थ (सं० क्ली०) धूमादुत्तिष्ठति परस्पर सम्बन्धेनेति धूम-उद्गृह्णा-क । १ मृगधार, नौसादर । (त्रि०) २ धूमजातमात्र, ध एसे निकला हुआ ।

धूमोद्धार (सं० पु०) धूमस्य उद्धारः इ-तत् । १ धूम-निर्गम, धुएँका निकलना । २ जठराग्नि के मन्दतापृचक पदार्थका उद्धार, अजोष वा अपच के कारण पानेवाली धुएँकी भी कड़वी उकार । इस तरहकी उकार पाने पर समझना चाहिये कि अग्नि मन्द है ।

धूमोपहत (सं० पु०) धूमैः उपहतः इ-तत् । सुप्तोक्त धूमकृत उपद्रव्य रोगभेद । इससे लक्षणिका विषय धूमहतने इस प्रकार लिखा है—

“अतः जलं प्रवृणामि धूमोपहतलक्षणं” (धूमतः)

इसके बाद धूमकण्टक उपहत होनेसे धुएँका शरीरे में धुएँका प्रवेश होनेसे जो सा लक्षण होता है, उसका विषय कहते हैं । यथा, चिचकी, खासी, कातरमृद, दोनों पाँखों में आँसू और रक्तवर्णता, निम्नासके साथ धूमका निकलना, धूमके सिवा दूसरे द्रव्यको गन्ध वा स्वाद कुछ भी मालूम न पड़ना, अवयवशक्ति-रहित होना और लज्जा, दाह तथा ज्वरप्रयुक्त रक्तस्रव और ज्ञानशून्य होना ये सब धूमोपहतने लक्षण हैं । इसका चिकित्साविधान इस प्रकार है— हृत्, हृत्तरु, प्राणा, दुग्ध, चोमो वा । मिश्रीका भस्म और मधुराक्षरस इनेके द्वारा रोगीको अच्छे तरह भसन कराना चाहिये । भसन हो जानेसे कोष्ठ-शुद्ध हो जाता है और धुएँकी गन्ध नहीं रहती । शरीरको अवयवता, चिचकी, ज्वर, दाह, मुर्च्छा, लज्जा, उदरा-भान, ग्रास और वास ये सब उपद्रव भी जाते रहते हैं । बाद मधुर, लवण, अम्ल और चरपरा द्रव्य सुखमें रहनेसे जिह्वा द्वारा रस ग्रहण होता है और मन भी

प्रभव रहता है । चिकित्सक इस रोगमें जिससे चिचकी आवे, ऐसी औषधका प्रयोग करे । ऐसा करनेसे दृष्टि विगोहित होती है और मन्दतक तथा ग्रीवा भी परित्सार रहती है । पीछे जिससे अचरसकी उत्पत्ति न हो, ऐसे भवदाही, लघु, क्षिप्त, चाहार रोगीको देना उचित है । (धूमतः)

धूमोर्णा (सं० स्त्री०) १ यमपत्नी, यमकी स्त्री । २ माक-ण्डेय पत्नी, माकण्डेयकी स्त्री ।

धूमोर्णापति (सं० पु०) धूमोर्णायाः पतिः इ-तत् । यम । धूम्या (सं० स्त्री०) धूमानां समूहः धूम पाशादित्वात् य टाप । धूम समूह ।

धूम्याट (सं० पु०) धूम्या इव घटति इति घट-घच् । पक्षिविषय, मिश्रराज नामकी एक चिट्ठिया । इसका संस्कृत पर्याय कलिङ्ग और भृङ्ग है ।

धूम (सं० पु०) धूमः धूमवर्णः इति रा-क । द्यो-दरादित्वात् साधुः । १ श्यामरक्तमिश्रितवर्ण, ललाई लिये कासा रंग । इसका पर्याय—धूमल, कण्ठलोहित, कण्ठ-वर्ण और लोहितवर्ण है । २ चिह्नक, गिलारस नामका गन्ध द्रव्य । ३ तुल्यक गन्धद्रव्य, लोधान । ४ पसर-विषय, एक पसरका नाम । ५, गिव, महादेव । ६ मेघ, बादल । ७ कुमारातुचरभेद, कुमारके एक पशुचरका नाम । ८ रामकी सेनाका एक भाग । ९ मानिक या लालका धुंधलापन जो एक दीप समझा जाता है । (त्रि०) १० धूमवर्णयुक्त, धुएँके रंगका, सुँघनी या भुरे रंगका ।

धूमका (सं० पु०) धूमवर्णेन कायति इति कै-क । उद्गृ, जट ।

धूमकेतु (सं० पु०) १ भरत राजाके एक पुत्रका नाम । जिस समय भगवान् मंसारकी रक्षाके लिये कुछ विचार कर रहे थे, उसी समय भरतने विश्वरूपकी लड़की पञ्च-जनीकी श्यावा या, जिसके गर्भसे सुमति, राष्ट्रभृत्, सुद-र्शन, चावरण और धूमकेतु ये पांच पुत्र उत्पन्न हुए । २ लघुमिन्दके एक पुत्रका नाम । (त्रि०) ३ धूमवर्ण ध्वजयुक्त, जिसकी पताका धुएँके रंगका हो ।

धूमवेश (सं० पु०) १ धूम्य राजाके एक पुत्रका नाम । २ कपाम्बका पुत्र जो अग्नि नामकी स्त्रीसे उत्पन्न हुआ

या। (त्रि०) ३ धूमवर्षं कियमुक्त, जिसके धान ललाई
मिये कासे रंगके हो।

धूमवत्ता (मं० श्री०) धूमं धूमवत् पतं यस्याः
पञ्चादिरात्रतिगन्तव्याम् टाप। सुगन्धिवेय, एक पोषिका
नाम। १ मन्त्रा मन्त्रित पण्याय—धूम्राः, सुलभा, चय-
भुया, गृध्रपता, गृध्रादी, छमिपी मोर योमसायका
है। इनका गुण—तिक्त, उष्ण, कृषिकारक, घोष, छमि
मोर कागनायक तथा चर्मप्रदोषक है।

धूम्रविका (मं० श्री०) धूम्रवा वैद्य।

धूम्रमुनिका (मं० श्री०) धूम्रं मूनः यस्याः कप् टापि
पत इत्वं। मूनीष्टय, एक प्रकारकी घास।

धूमरोहित (मं० पु०) धूम्रव, रोहितय 'वर्षावर्ष'न'
इति पूर्ववत् कर्मधारयः। धूम्रवर्णमित्यति रक्तवर्ण,
ललाई मिये काला रंग।

धूम्रनीचन (मं० पु०) धूम्रं नीचने यस्य। १ कपोल,
कवुतर। २ दानवराज शम्भुका एक सेनापति। जब
देवीने शम्भु मियाभके वचन मिये एक पाम सुन्दरोका
रूप धारण कर कलाया, 'जो मुझे सुझने जोतेगा उसे
मैं ब्रह्मात्मा पहचानूँगी,' तब शम्भुने सुप्रीय नामक
एक दूतके सुझने यह बात सुन कर उन्हें पकड़ लातेके
मिये इसी धूम्रनीचनको भेजा था। धूम्रनीचन ६०
हजार सेनाकी साथ ले देवीके पास गया। जब धूम्र-
नीचन लगेसे बुझ करनेकी प्रस्तुत हुआ, तब भगवतोने
एक प्रवण्ट दूधार किया जिससे ६० हजार सेनाके साथ
धूम्रनीचन सभी जगह भस्म हो गया था।

(मार्कण्डेय ब्राह्मण)

धूम्रनीहित (मं० पु०) धूम्रव नीहितय 'वर्षावर्ष'न'
इति पूर्ववत् समासः। १ क्षत्रवर्ष मित्यति रक्तवर्ण,
ललाई मिये काला रंग। २ मित्र, महादेव। ३ मृदुगुक्त,
हृदयके रंगका।

धूम्रवर्ष (मं० पु०) धूम्रा वर्षः। १ क्षत्रनीहित-तण,
कलाई मिये काला रंग। २ मृदुगुक्त, एक सुगन्धित द्रव्य।
३ धूमिनीवे सप्तम एक पुतका नाम। (त्रि०) ४
धूम्रवर्ष रंगका।

धूम्रवर्षा (मं० श्री०) धूम्रवर्ष-टाप। चन्द्रिरी
नाम जिह्वावर्धने द्रव्य।

धूम्रगूक (मं० पु० श्री०) धूम्रः गूकः रव रोम यस्य।
वट्ट, लट।

धूम्रगूल (मं० पु०) वट्ट, लट।

धूम्रा (मं० श्री०) कर्कटोद्विमेय, एक प्रकारकी ककड़ी।
धूम्राच (मं० त्रि०) धूम्रं धूम्रवर्षं पक्षि सप्तद्विमेय,
मसामान्यवियो पक्ष समान। १ धूम्रवर्ष-भोग्युक्त, जिस-
की चालें धूमसे रंगकी हो। (पु०) २ तनवियन्,
बंगीय राजा हेमचन्द्रके पुत्र। ३ राजवका एक सेनापति।
यह राम-रायच सुझने हनुमानके हाथसे मारा गया था।

धूम्राट (मं० पु०) पक्षितिवेय, भिंगराज नामकी
बिड़िया।

धूम्राक्षीक (मं० पु०) १ भाकः दीपाधियति भिषातिविके
एक पुतका नाम। २ तन्नामक तत्वत्व वर्ष।

धूम्रास (मं० पु०) धूम्रस्य धामा इव धामा-गण्यः। धूम्र
वर्ष धामा-गुक्त, वह जिसकी कालि धुमने रंगती हो।
धूम्रायच (मं० पु०) मोक्ष-प्रवर ऋषिभेद, मोक्ष प्रव
तक एक ब्राह्मिका नाम।

धूम्राचिन्त (मं० श्री०) गारदातिलकोष्ठ चर्मिके दग
विष कलात्मनं कलाभेद, गारदातिलमर्क-चतुमार पालि
को दग कलाचर्मिके एक।

धूम्राग (मं० पु०) विमालराज सुचन्द्रका पुत्र, सुर्ग-
मन्त्रोय इत्याहुका प्रयोक्त।

धूम्राङ्गा (मं० श्री०) धूम्रं वर्षं पात्रिपति वर्षने पात्रे
क। धूम्रपता, एक पोषिका नाम।

धूम्रिका (मं० श्री०) मिमिवाचय, योगमका पक्ष।

धूर (हिं० श्री०) एक घास।

धूरकट (हिं० पु०) लगानकी वह पैरगी की जर्मदार-
की समामोकी चोरसे जेठ थापाहुमें दी जाती है।

धूरकागर (हिं० पु०) धीगवाला घोड़ाया डोर।

धूरपात्र (मं० पु०) धूम्रकी रागि, गर्दका टेर।

धूरपात्री (हिं० श्री०) १ गर्दकी टीरी, धूम्रकी रागि।
२ धूम्र, विनाम।

धूरा (हिं० पु०) १ धूम्र, गर्द। २ धूम्र, मुहनी।

धूरिवायिता (हिं० पु०) एक प्रकारका बीना।

धूरियामजरा (हिं० पु०) गकार शीमका एक भेद।

धूरिजि (मं० पु०) धूम्र आरम्भता जटिमेंक, मादकता

अथ । संक्षीर्णाख्य संख्याते इन्, धूर्गङ्गा जटालख्य,
अथवा धूर स्त्री लोख्यचिन्ताया जटिः संघाती यत्न वा ।
गिब, महादेव ।

धूर्त (सं० स्त्री०) धूर्ततीति धूर्त्-स्तन् (इक्षिभृगि-
वांमि दमि ड् पूर्व-स्तन्) उन्-इत्-इत् वा धूर्-स्त । १
विट् स्वयम् । २ लोहकिट्, लोहकी मौल । ३ धूर्त्तूरस्वय,
धूर्त्ता । ४ चोरक, चोर नामक गन्धद्रव्य । ५ खण्डस्वयम्,
एक प्रकारका जमक । ६ द्युतकृत, लुपारी । जो लुप्यादि
खेलता है, उसे धूर्त्त कहते हैं, क्योंकि वह सदा दूसरे
पर दाव पैच खेननेका व्यवसर ढूँढना रहता है, इसीसे
उसका नाम धूर्त्त पड़ा है । (लि०) ७ वक्षक, धोखा
देनेवाला, दगाबाज । ८ मायावी, क्ली, चालबाज ।

“नागार्ग नापितो धूर्तः प्रणिशो चैव वायसः ।

इंक्षीर्णा च श्रमालस्तु श्वेतभिभूतस्तत्त्विका ॥” (पंचतन्त्र)
मनुष्योंमें नाई, पक्षियोंमें कौआ, पशुओंमें गौदड़, तपस्वीमें
श्वेत भिक्षु ये स्वभावतः धूर्त होते हैं । प्रत्येक वस्तुमें
लिखा है कि स्वर्णकार, स्वर्णवणिक, और कायस्थ ये तीन
मनुष्योंमें धूर्त और दगाबाज होते हैं । इन लोगोंका
हृदय लुपार सहज और विनयादिगुण होता है । मैं कई
गोष्टि एक कायस्थ सहजसम्पन्न हो सकता है किन्तु
स्वर्णकार और स्वर्णवणिक, सभी धूर्त होते हैं ।

ये लोग विद्यासम्पन्न और देवहिजके भक्त क्यों न हों,
तो भी उन पर विश्वास नहीं करना चाहिये । ८ शठ-
नायकविशेष, साहित्यमें शठनायकका एक भेद ।

जहाँ जातिवाचक शब्दके साथ धूर्त्त शब्दका समास
हो, वह । ‘पोटायुषतीत्यादि’ स्वयं परिनिपात होता है
और उनी जगह “वक्धूर्त्त”, “शृङ्गानधूर्त्त” इत्यादि रूप
प्रयोग होता है ।

धूर्त्तकृत् (सं० पुं०) धूर्त्त-कृत्वा कर्त्तु । १ श्रमाल, गौदड़,
क्षिर्णा जातित्वात् डीप् । २ लोहकृत कुलका नाग ।
३ धूर्त्तकर, लुपारी । ४ कलिकदम्ब ।

धूर्त्तकृत् (सं० पुं०) धूर्त्त भावे तन्, धूर्त्त-कृत् हिंसन-
करोतीति कृत् कृप् पितिकृतिरुगमयः । १ धूर्त्तूर,
धुरा । (लि०) २ वक्षनकारक, धोखा देनेवाला ।

धूर्त्तचरित (सं० स्त्री०) धूर्त्त-चरितं वक्ष्यत्वेना-
न्तरासं पच । १ संक्षीर्णाख्य नाटकशब्दभेद, ‘महोप-
नाटक’का एक भेद । २ धूर्त्तका, चरित्र ।

धूर्त्तकृत् (सं० पुं०) धूर्त्त-कृत्वा कर्त्तु-करोतीति कृत् कृप्-
धा मनुष्य । मनुष्यगण स्वाभाविक धूर्त्त होते हैं । इससे
इन्हें धूर्त्त कर्त्तु कहते हैं ।

धूर्त्ता (सं० स्त्री०) धूर्त्तस्य भावः धूर्त्तं तत्त्वं टाप् ।
शठता, ठगपना, चालबाजी ।

धूर्त्तमानुषा (सं० स्त्री०) धूर्त्तों हिंसितो मानुषो
ऽनया । राक्षा ।

धूर्त्तर (सं० पुं०) पारद, पारा ।

धूर्त्ता (सं० स्त्री०) शूद्रकण्ठकारी, सफेद भटकटैया ।

धूर्त्ति (सं० पुं०) धूर्त्त-हिंसायां लिच् । १ हिंसक ।
(स्त्री०) २ हिंसा ।

धूर्त्तूर (सं० पुं०) धूर्तीति धूर्-भच् धूर्ता धरा, पृथोदरादि-
त्वात् दोषः । धुरन्धर, बोभा देनेवाला ।

धूर्त्त (सं० पुं०) १ विष्णु । २ श्रेष्ठभक्त ।

धूर्त्त (सं० लि०) वहतीति वह भच् धूर्ता वहः, पृथो-
दरादित्वात् दोषः । धुरन्धर, बोभा देनेवाला ।

धूर्त्ता (सं० स्त्री०) धूर्त्त-भजति भज कृप् भजिर्वी-इति
सौ । रथाग्र भाग, रथका अग्रभा भाग । इसका पर्याय—
यानमुख और धू है ।

धूर्त्ता (हिं० स्त्री०) १ सही, रेत पादिका ‘महीन चूर,
रेण, रज, गर्द’ । २ धूर्त्तके समान तुच्छ वस्तु ।

धूर्त्तक (सं० स्त्री०) धूर्त्त-वाहुलकात् सकृत् । विष ।

धूर्त्तधारी (हिं० स्त्री०) धूर्त्त, विनाश ।

धूर्त्ता (हिं० पुं०) खण्ड, टुकड़ा, कतरा ।

धूर्त्तातिया—परिम मालव एजेन्सीके अधीन एक छोटा
सामन्त राज्य । यहाँके सदर मिन्टियासे ४०० और
होलकरसे ६०० ह० तनखाह पाते हैं ।

धूर्त्ति (सं० स्त्री०) धूर्त्ति धूर्त्तं वेति धूर्त्त-वाहुलकात्,
लि । १ पार्थिवचूर्ण, मही, रेत पादिका ‘महीन चूर’ ।
इसका पर्याय—रेण, पांघ, रजस, धूर्त्ती, चितिकण, चीट्ट,
चूर्ण, गूदा, महीद्रव्य, वातक्रेतु, ममःश्रेतु, कषा और
चिति, कषा है ।

दीप, खाट, गरीरकी काया, किष्क्रेय मलादि, जग
और मार्जारकी धूर्त्ति-प्राप्तत पत्थ नष्ट जाती है ।
कागज, खर, मृदाजैव और क्षिप्रोंकी पटधूर्त्ति शरीर
पर नहीं लगाने चाहिये । जगनेसे रज्जु और कच्ची

भरत की सती है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि प्रायः
मात्र ही की भूमिनिर्देश समग्रजनक है। २ व्याकुलो
भाव। १ पराग। ४ गदम, गधा।

भूमिकदम्ब (मं० पु०) धूमनी कदम्ब यव। १ नीप-
कदम्बवृक्ष, एक प्रकारका कदम्ब। २ वृक्षवृक्ष। १
निमिषवृक्ष। (को०) ४ भूमि समूह, धूमनी टोरी।

भूमिकदम्बक (मं० पु०) भूमिकदम्ब स्त्रायें कन। नीप-
कदम्बवृक्ष।

भूमिका (मं० स्त्री०) भूमिरिव प्रतिफलितः (इवे प्रति-
हती। वा ५।३।८६) इति ध्रुवेष कन टाप। १ कुम्भ-
टिवा, कुशमा, कुशारा। २ नौवार, महीन लसकपोंकी
भरी।

भूमिकदम्ब (मं० स्त्री०) धूमनी कुम्भमिव। छट सेव,
जीमा बुधा सेव।

भूमिकदम्ब (मं० पु०) भूमिप्रधानः विदारः मध्यपटलो
कर्मधा। १ छटसेव, जीमा बुधा सेव। २ वम, महीका
टीमा।

भूमिगुहक (मं० पु०) धूमनी गुहक इव, इवायें
कन। पटवासक, चघोर जो होलीमें डाला जाता है।

भूमिगुहक (मं० पु०) काक, कोवा।

भूमिभ्रम (मं० पु०) धूमिरेव भ्रमो यस्य। पवन, वायु,
हवा।

भूमिभ्रमिका (मं० स्त्री०) धूमि परागपात, प्रचुरं पुष्पं
यस्याः, कापि यत इत्वं। केतकी पुष्प। इसमें बहुत
पराग रहता है, इसीसे इसका नाम भूमिभ्रमिका
हुआ है।

भूमिया - १ बम्बईके गानदेग जिलेका एक तातुम।
यह चक्षा २०° ३८' से २१° ८' से चौर देगा ७४°
२६' से ७३° पू० में अवस्थित है। भूविस्माप ७५० वर्ग-
मील चौर लोकमंख्या लगभग १०८८५१ है। इसमें
उत्तरमें कीरदेग, पूर्वमें पबोरा और चमलेश, दक्षिणमें
भागिक जिला तथा पश्चिममें गिर्यनरेश है। यहाँ बहुतसे
छोटे छोटे पहाड़ हैं जहाँ पानका चौर मोरी नदी प्रवा-
हित है।

यह ज्वालामुखी और वास्तविक है। दक्षिणमें ललका
तुल्य चमलेश है। यहाँकी वायव्यो भाग बम्बईके पश्चिम
है। 'भूमिक' इतिपात्र २२ इति है।

२ यह तातुमका एक प्रधान नगर। यह चक्षा
२०° ३८' से चौर देगा ७४° २६' से चौर देगा ७४°
२६' से ७३° पू० में अवस्थित है। लोकमंख्या लगभग २४०२१ है
जिसमें १८७५१ हिन्दू, २२३३ मुसलमान और ३३१
जैन हैं।

यह नगर पुरातन चौर नूतन इन दो भागोंमें विभक्त
है। पुरातन चर्ममें पश्चिम दिशि मनुष्योंका आश्रय है
चौर नूतन चर्ममें चक्षा वस्ती सङ्घर्ष चौर परामिता है
है। यहाँमान गतायोके प्रारम्भमें यह नगर बहुत नगण्य
समझा जाता था चौर नीतिनि या फतेहाबाद चर्मविभागके
पक्षोय था। बाद निजामके पश्चिमपक्षके समय मासि
होसताबादमें मिला दिया गया।

प्रवाद है, कि गोली राजासे यहाँ एक दुर्ग बनाया
जिसका संस्कार मुगल-शासन कर्त्तामेंसे समर्थमें हुआ
था। हिन्दूराजाओंके हाथमें यह नगर पड़ने पर वह
पश्चिम, पौड मुगल, निजाम चौर सबमें चर्चामें
१७८५ ई० की महाराष्ट्रोंके हाथ आया। १८०३ ई० में
भोवच दुर्गिचर्ममें तथा कोलकरके चर्चातुमें यहाँसे पश्चि-
मविभाग नगर छोड़ दूसरी जगह चर्चामें गये थे। दूसरी
बर्ष बालाजी मन्वन्तमें बहुत कोमिग करके यहाँ पर
बसाये। चर्चामें भूमिया नगरमें लचरी स्थापित कर
कुछ काल यहाँ राज्य किया। यहाँ १८१८ ई० में यह
स्थान ब्रिटिश मन्वन्तमें चर्चामें हुआ। उसी समयमें
यहाँकी लोकमंख्या धीरे धीरे बढ़ती जा रही है।
नगरमें एक बार्ड स्कूल, एक मिश्र स्कूल, बालाजी नगर
स्कूल, २ चर्चातु, टेनिषाफ चौर डाकघर हैं। इसमें
बनाया यहाँ राजस्वविभागके चर्चातु चौर दो चर्चा-
किनेट लकरी चर्चातु है। १८६२ ई० में यहाँ भूमि-
विनिर्देश स्थापित हुई है। नगरकी वाय ७४४०० वर्ग
है। प्रति मन्वन्तवारकी एक बाट, लगती है जिसमें
बहुतसे मनुष्य मर्यादित चर्चातुमें चौर चर्चामें चर्चातु
भूमिपात्र—यहाँसे भूमि दावा जिलेके चर्चातुमें चर्चा-
तु चर्चातुका एक चर्चातु है। यह चक्षा २०° ३८'
से चौर देगा ७४° २६' से पू० भागीरथीके किनारे अव-
स्थित है। लोकमंख्या प्रायः १८८० है। यहाँ चर्चातु,

चरद, चर, गीर्ण और दूसरे चरार्जिका चरदा
वाणिज्य होता है। यहाँ प्रतिवर्ष एक मेला लगता है।
धुली (मं० स्त्री०) धूलि डोण। धूलि, धूस, गर्द।
धुलीकदम्ब (मं० पुं०) कदम्बवृक्षविशेष, एक प्रकारका
कदम्ब धूलिकदम्ब देखो।

धुलीपटन (मं० पुं०) धुलीनां पटनं यत् । १ चट्टीय-
मान धुलीमसूत्र, चट्टीनी हुई धूलका मसूत्र। (स्त्री०)
धुलीनां पटनं इत्यत् । २ धूलिमसूत्र, धूलका टेर।
धुलीमय (मं० स्त्री०) धूलो-मयट् । धूलिमय, जो धूलसे
भरा हो।

धुलीमुष्टि (मं० स्त्री०) धुलीनां मुष्टिः इत्यत् । एक मुष्टि
धूलि, एक सुई धूल।

धूलिवयुधन (मं० स्त्री०) धूलोभिरिव युधनं इत्यत् ।
धूलिगोधक सुखाच्छादन, वह वस्त्र जो धूल रोकनेके
लिये सुँघ पर रखा जाता है।

धूसर (मं० पुं०) धुनातोति धू-सन्धु- सञ्चित् (इषुषा-
विश्वः किर। चण, २। ७१) इषत् पाण्डुवर्णं, योलापन
लिये सफेद रंग, सटमैला रंग। २ गर्दभ, गदवा। ३
चट्ट, जट। ४ कपोत, कबूतर। ५ लोभाकार, वनियोंकी
एक जाति। कर्मिकल्पलतामें धूसर वस्त्र से सब वस्त्राई
गई है। यथा - धूलि, मकड़ी, कर्म, गृहगोधिका,
कपोत, मृषिका, रङ्ग, काककण्ड और खरादि। ५ वन-
चटक। (स्त्री०) इषत् पाण्डुवर्णं युक्तं, धूलके रंगका,
खाकी, सटमैला। काने और सफेद रंगकी मिलावनेसे
धूसर रंग बनता है। ७ धूलि युक्त, धूस लग्ना हुआ,
धूलसे भरा।

धूसरच्छादा (मं० स्त्री०) धूसर इषत् पाण्डुवर्णो ह्रदो
यस्याः । श्वेतकुंडा, सफेद बीना।

धूसरपत्रिका (मं० स्त्री०) धूसर पत्रं यस्याः डोण ततः
स्वायं कन्, टाप् टाप् पुंस्रस्य ऋन् । १ हस्ति-
गुच्छोत्पु, हाथी सुँडका पोछा। २ पक्षिकाली। ३ शिव-
प्राचीभाषण।

धूसरसूत्र (मं० पुं०) धूसरवर्णं सूत्रविशेषः ।

धूसरा (मं० स्त्री०) धूसर टाप् । पाण्डुरकलीसुष,
पाण्डुफलो।

धूसरा (हिं० वि०) १ धूलके रङ्गका, सटमैला, खाकी।

२ धूल, लग्ना हुआ।

धूसरगह्वर (मं० पुं०) गर्दभ, गधा।

धूसरित (मं० स्त्री०) धूसरो रसा मन्नातः तार-
कादित्वादितच । १ धूसरवर्णीकृत, धूसर किया हुआ,
जो धूलसे सटमैला हुआ हो। २ धूलसे भरा हुआ,
जिसमें धूल लिपटी हो।

धूसरी (मं० स्त्री०) १ गर्दभ गधी। २ एक कियरी।

धूमना (हिं० वि०) धूसरा देखो।

धूसूर (मं० पुं०) धूस, कान्ति काशी भाये क्षिप्र, तुरन्त।
धूसुरा। धूसुर देखो।

धूसूरतैल (मं० स्त्री०) तैलोपधमेद । हमकी प्रस्तुत
प्रणाली—कटुतैल ४ सेर, दममूलका तैल ६ सेर,
कल्काय दममूल १ सेर इन सब द्रव्योंमें यथाविधान तैल
प्रस्तुत करनेमें धूसूर तैल बनता है। हमसे साविपातिक
खर, खास और कामरोग चारोप्य हो जाता है।

धुत (मं० स्त्री०) धृ कर्मणि कर्त्तरि तत् । १ धारणविगिट,
धारण किया हुआ। २ स्थिरीकृत, स्थिर किया हुआ,
निश्चित। ३ पतित। धृ-स्थितौ पतने च भावेत्त। ४ पतन।
५ स्थिति। ६ त्रयोदश मनु रीषका पुत्रभेद, तीरहर्ष मनु
रीषके पुत्रका नाम। ७ दृष्ट-शु-वर्णीय धर्मका पुत्र।

धुतकेतु (मं० पुं०) वसुदेवको वसुनोर्द।

धुतदेवा (मं० स्त्री०) देवककी एक कन्या।

धुतपटा (मं० स्त्री०) गायत्रीभेद।

धुतमाकी (मं० पुं०) चर्त्ताकी निष्फल करनेका एक यन्त्र,
शक्तीका एक संहार।

धुतराजन् (मं० पुं०) धुती राजा प्राचल्लयेन येन। नीराज्य
देय, वह देय जहाँ राजा चक्की तरह प्रजापालन
करते हो।

धुतराष्ट्र (मं० पुं०) धुतं राष्ट्रं सुपात्तनया सत्रं । १
सोराष्ट्रदेय, वह देय जो चक्की राजाके शानमें हो।
२ वह जिसका राज्य बढ़ हो। ३ नागभेद, एक नागका
नाम। ४ कौरव राजभेद, एक कौरव राजा जो दुर्योधन-
के पिता और विचित्रवीर्यके पुत्र थे। हमकी कथा महा
भारतमें इस प्रकार आई है—पुरुवंशमें याज्ञानु नामके
एक राजा थे जिन्होंने गङ्गासे विवाह किया। गङ्गाके गर्भ-
से लक्ष्मीदेवव्रत नामक पुत्र हुए जो जन-समाजमें भौष्म-
के नामसे प्रसिद्ध थे। भौष्मसे विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा

नरक पधने विनाया विवाह मध्यवर्तीने कोने दिया मध्यवर्तीका दूसरा नाम मध्यमभा था। यह जब करारी हो, तभी उसे परावरने एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम देवायन था। यही देवायन महाभारतके अवेता मर्या-श्रेष्ठ वेदव्यास हुए। मध्यवर्तीके गर्भमें आत्मपु-को दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनके नाम विविधवीर्य और विराट्टदत्त थे। विराट्टदत्त युवावस्थाके पूर्वकी एक गर्भव-हानि मारे गये। विविधवीर्य राजा हुए। इन्हीं कोमल्या-गाम में उत्पन्न कामिराजकी दो कन्याएँ पत्निका और पद्मास्तिकावि विवाह किया। कुछ दिन पीछे निःसन्तान पद्मास्तेन उनकी मृत्यु हुई। तब मध्यवर्तीने देखा कि कन्याता भावसे यह योग सुख ही जायगा।

इस कारण मध्यवर्ती बहुत चिन्तित हुई और उन्होंने पधने पुत्र देवायन वेदव्यासका मरण किया। धरत्य-यानिने साथ ही व्यासदेव उस जगह पहुँच गये और बोले-माता मुक्ति जिसलिये धरत्य किया है ? तब मध्यवर्तीने कहा—पुत्र। तुम्हारा भाई विविधवीर्य बिना कोई संतान छोड़ कर गया है। तुम उसने क्षेत्रमें पुत्र उत्पन्न करो। इस पर देवायन सहमन हो गये और उन्होंने मातासे कहा, 'मैं पापके पात्रानुसार धर्मका उद्देश्य करके पापका अभिप्राय पूर्ण करूँगा। किन्तु आपकी पुत्रवधू व्यासके पुत्रमार्ग संवत्सर प्रसूता अनुष्ठान करे' जिससे वे विशुद्ध हो जाय। क्योंकि मत्तानुष्ठान किये बिना कोई आसिनी ही समीप नहीं पासकती है।

तब मध्यवर्तीने कहा, 'राजमहिषीगण जिससे भयो तुम्हें गर्भवती हो जाय, वेसा उपाय करो। राज्यमें राजाके नहीं रहनेमें प्रजा चलाय की कर विनष्ट हो जायगी; देवगण राज्यमें भाग जायगी और राज्यमें बरा-जलता केवल आसिनी, इसलिये तुम कोरन की गर्भधारण करो। उस गर्भजात बाल की भीष्म संवर्द्धन करेगी।' राजासे कहा, यदि भीष्म की पुत्र लेना चाहती हो, तो महिषीगण की विवचनाकी सहाय कर ले यही उपाय समझ लोग। इतना कह कर व्यासदेव समाहित हो गये। तब मध्यवर्ती अपनी पुत्रवधूके पास-सा कर बोली, 'हे सुशोचि ! देवराज करोपा पुत्र प्रसव करो जो हमारे इस पुत्ररा राज्यमार्गके बहान कर सके।'।

यथासमय जब कोमल्या जगज्जाता हुई, तब मध्य-वर्तीने उन्हें क्षम्योक्त मन्त्रा पर बैठे कर कहा, 'हे पुत्री ! तुम्हारे एक देवर है, पात्र रातकी वे तुम्हारे पास पायेंगे, तुम सममन हो कर उसकी प्रतीक्षा करना।' पत्निका भाग्यही यह बात सुन क्रुद्ध होय अपना पुत्रकी के नाम से कर मन्त्रा पर पड़ रही। जब सब देवरा जाये जन हो रह्यो कि वेदव्यास पत्निकाके घर पा पधने। पत्निकाने उनका लक्ष्यनर्प, विद्वान् जटाश्रु, बड़ी बड़ी दाढ़ी और चमकीली चाँये देय अपनी चाँये मूँद लीं। देवायनने माताके प्रियानुष्ठानके लिये पत्निकाके साथ समागम किया, किन्तु पत्निका डरके मारे उन्हें देन न सकी। पीछे जब व्यास घरसे बाहर निकले, तब माताने उनसे पूछा, 'हे पुत्र ! क्या हम वधूने तुम्हारा पुत्र उत्पन्न होगा ?' इस पर व्यासने कहा, 'इसके गर्भमें बहुत नाम सहस्र मनवान्, विद्वान्, राजविश्रेष्ठ और पत्निका बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न होगा और उस महाभाके एक भी पुत्र होगे, किन्तु मैं अपनी माताके दोषने पश्चात् होगा।' यथा समय पत्निकाने पैसा की पत्नी पुत्र प्रसव किया। दुर्लभा नाम पुत्राष्ट था। पुत्राष्ट जब भी के पत्नी निकले, इस कारण वेदव्यासने पद्मास्तिकाके साथ नियोग किया जिससे पाण्डुकी उत्पत्ति हुई और पुत्रिया दासीके साथ नियोग होने पर विदुरका जन्म हुआ। पत्नी होनेके कारण पुत्राष्ट राजा न हो सके। पाण्डु, जो छोटे थे राज्यसिंहासन पर बैठे। पुत्राष्टके साथ माथार-राजकी कन्या माथारीका विवाह हुआ। माथारी के गर्भमें एक भी पुत्र उत्पन्न हुए जिनमेंमें दुर्योधन, दुःस-मन, विकर्ण और चित्रसेन थे जो चार प्रधान थे। एक दिन व्यासदेव पुत्रार्थ हो माथारीके समीप पहुँचे। जब माथारी उन्हें पच्छी तरह समुद्र कर दिया, तब उनकी ने माथारीकी तर दिया—तुम्हारे पतिने मझ भी पुत्र दंति। पीछे यथासमय माथारीकी पुत्राष्टने गर्भ रखा। गर्भधारणके बाद दो मर्ग कीत जुकने पर भी कोई मन्त्र-न उत्पन्न हुई। इससे माथारीका समय बहुत सदय होसने लगा। इसी समय जब माथारीने सुना कि कुंभी-ने तैलभी पुत्र प्रसव किया है, तब उन्होंने विनाशिकीकी कुछ पड़े पधने गर्भ में आकाश पहुँचाया जिससे कोटिक

सरोखा कठिन मांसपेयी बाहर निकली । क्यों हो
गाभ्यारीने उसे परित्याग करना चाहा, क्यों ही वेदव्यास
वहाँ आ पहुँचे और बोले, 'क्यों तुम ऐसा भन्याय काम
कर रही हो । मैंने जो वर तुम्हें दिया है, वह कभी
भन्याय नहीं हो सकता । अभी तुम चौबे भरे हुए एक
थोड़ी साँवली और चर्बे' किसी गुप्त स्थानमें अच्छी
तरह रख लो और ठंडे जलसे इस मांस-पेशीकी सिका
कर खाओ ।' पीछे जलामिषेक करते करते वह मांसपेयी
विदीर्ण हो गई । उसका प्रत्येक खण्ड अद्भुत पर्वप्रमाण-
का हो कर कालक्रमसे एक छोटे सख्यापीमें विभक्त हुआ ।
बाद में सब मांसपेयी-खण्ड छतपूर्ण चट्टानोंमें लाल कर गुप्त
स्थानमें रख दिये गये । 'इन्हें' दो वर्ष बाद खोलना'
यह कह कर व्यासदेव अन्तर्हित हो गये । यथासमय
उन सब मांसपेयीके खण्डोंमेंसे पहले दुर्योधनका जन्म
हुआ । दुर्योधन जन्म लेनेके साथ ही गधेकी नाईं रेकने
लगा और उस समय बहुत भ्रमराल दिखारें देने लगे ।
इसपर विदुर पादिने उस पुत्रको छोड़ देनेके लिये छत-
राष्ट्रसे बार बार पत्नीरुध किया, किन्तु पुत्रजन्मसे बयो-
भूत हो कर छतराष्ट्र उसे परित्याग कर न सके । बाद
एक मासके अत्यन्तर एक सो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न
हुई । गाभ्यारी जब गर्भ के क्षणसे दुःखित थी, उससमय
एक वैश्या धृतराष्ट्रको परिचर्यामें नियुक्त थी । उस वैश्या-
के धृतराष्ट्रसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम युयुत्सु
रखा गया । इन्होंने वैश्या और चरित्रिक समागमसे जन्म
ग्रहण किया था, इस कारण ये कारण हुए थे । उबेछादि-
क्रमसे छतराष्ट्रके सो पुत्रोंके नाम ये हैं—१ दुर्यो-
धन, २ युयुत्सु, ३ दुःशासन, ४ दुःसह, ५ दुःगल, ६
दुर्मुख, ७ विविधति, ८ विकर्ष, ९ जलसम्भ, १० सुवी-
चन, ११ विन्द, १२ अशुविन्द, १३ दुर्धर्ष, १४ सुवाहु, १५
दुःप्रधर्षण, १६ दुर्धर्षण, १७ दुर्मुख, १८ दुष्कर्ष,
१९ कर्ष, २० चित्र, २१ उपचित्र, २२ चित्राक्ष, २३
चार, २४ चित्राक्ष, २५ दुर्मद, २६ दुःप्रधर्ष, २७
विचित्र, २८ विकट, २९ सम, ३० चर्षनाभ, ३१ पप्र-
नाभ, ३२ नन्द, ३३ उपनन्द, ३४ सेनापति, ३५ सुपेय,
३६ कुण्डोदर, ३७ महोदर, ३८ चित्रवाहु, ३९ चित्र-
धर्मो, ४० हवर्मा, ४१ दुर्विरोचन, ४२ पयोवाहु,

४३ महावाहु, ४४ चित्रचाप, ४५ सुकुलन, ४६ भीम-
वेग, ४७ भीमवस, ४८ वलाको, ४९ भीमविक्रम, ५०
उद्योग, ५१ भीमगर्भ, ५२ कनकायु, ५३ हृदायुध, ५४
हृदवर्मा, ५५ हृदचक्र, ५६ सोमकोर्ति, ५७ पतुदय, ५८
जरासम्भ, ५९ हृदमन्त्र, ६० सत्यमन्त्र, ६१ सहस्रवाक,
६२ उपस्रवा, ६३ उपमेन, ६४ सेनापति, ६५ दुष्पराजय,
६६ पपराजित, ६७ पण्डितक, ६८ विद्यालाल, ६९ दुरा-
चर्ष, ७० हृदहस्त, ७१ सुहस्त, ७२ वातवेग, ७३ सुयर्चा,
७४ पादित्यकेतु, ७५ वज्राशी, ७६ नागदन्त, ७७ पतु-
यायी, ७८ निपट्टी, ७९ कवचो, ८० गङ्गी, ८१ दण्डधार,
८२ धनुर्धर, ८३ उप, ८४ भीमरथ, ८५ वोर, ८६ वोर-
वाहु, ८७ धनीपुत्र, ८८ प्रथम, ८९ रोद्रकर्मा, ९० हृद-
रथ, ९१ पनाष्ट्र, ९२ कुम्भमेदो, ९३ धिवागो, ९४
दीर्घभोवन, ९५ दीर्घवाहु, ९६ महावाहु, ९७ व्यूढोद,
९८ कनकाक्षद, ९९ कुण्डज और १०० विवक । कन्या-
का नाम दुःमला था । धृतराष्ट्रके वैश्यागर्भजात युयुत्सु-
के सिवा और सब पुत्र क्रूरचेष्टको लड़ाईमें महावीर
भीमर्ष हाथसे मारे गये । धृतराष्ट्रके कणिक नामक एक
मन्त्रणाकुशल मन्त्री थे । इन्होंने मन्त्रणा भारत-युद्धको
जड़ समझो जा सकती है । धृतराष्ट्र बहुत वलवान् थे ।
वेदव्यासके वरसे इन्हें सो ह्यप्रियोंका वन था ।

महायुद्धके बाद जब इन्होंने सुना कि भीमके हाथसे
भी पुत्र मारे गये, तब इन्होंने भीमकी पालिङ्गन करना
चाहा । श्लोथके परामर्शसे सोहभोम इनकी गोदमें
दिया गया जिसे इन्होंने श्लोथलिङ्गनसे चूर चूर कर डाला
था । जब लड़ाई सम्पूर्ण रूपसे समाप्त हो गई, तब
पाण्डवोंने पश्यमेवयन्न करके राज्यभार ग्रहण किया और
धृतराष्ट्र तपस्याके लिये वन चले गये । वहाँ छः मास
रहनेके बाद इन्होंने दावानलमें पत्नीके साथ प्राणत्याग
किया । (महाभारत)

जैमिनी भारतमें धृतराष्ट्र नामक एक नागका उल्लेख
देखनेमें आता है । यह धृतराष्ट्र नाग कटुका पुत्र था ।
इसके साथ पाण्डवोंकी दुश्मनी थी । जब अर्जुन पश्य-
मेवयन्नका पश्यरसक हो कर मथुरा गये थे, उसी समय
अर्जुनके पुत्र अश्वत्थामने पश्यमेवयन्न कोड़ा पकड़ा ।
इससे दोनोंमें लड़ाई बिड़ गई । इस युद्धमें पश्यन पादि

मायः मरने मरने पर हो गये । पातामने मासुकीमागने
 पास मधोवक मयि हो । लम्बोने पराममं पोर माता
 को पातामि मन्त्र वाहन सम मयिको मानने लिये पाताम
 गये । सम मधोवक मयिके मरने हो पलुनादि होमने
 पा मायि, द्वा लम्बोने कह दिया था । इधर धृतराष्ट्र-
 मागने वासुकीको मयि देनेसे मना किया । सुतरी सर्विक
 माय मन्त्र वाहनको मयहर गुरु करना पड़ा जिसमें सर्व-
 गण पराप्त हो कर भाग गये । वासुकीने कर मान कर
 मन्त्र वाहनको मय्योवकमयि दे दी । बाद धृतराष्ट्रने
 पुत्रुहि पोर दुःखभाव नामक पयने दो मन्त्रको को दम-
 का मदका मेनेके लिये पलुमने मन्त्रने कहा । इस पर
 दोनो मागोने रवचमने आ कर पलुमका मन्त्रक काट
 जाना पोर उमे से कर महर्षि बकदात्म्यके वनमें किंक
 दिया । इधर पलुमके शरीरमें मन्त्रक मन्त्री देख कर
 चारो पोर हाहाकार मय गया । तब श्रीकृष्णजी महा-
 यथासे धृतराष्ट्रके दोनो पुत्र मरि गये पोर पलुमका
 द्विज मन्त्रक भी तोड़ दिया गया । पीछे सम मधोवक-
 मयिके मरने पलुम पुनर्जीवित हो गये । (कैटिनीपारव)

४ जनमित्रयके ल्येष्ट पुत्र । ५ कश्चिराताके एक पुत्र
 का नाम । (हरिवं ३।०४) ६ पयिपियेय, एक चिकुया
 का नाम । ७ गन्धर्वभेट, एक गन्धर्व ।

(तिलपु० २।१-१।५)

धृतराष्ट्रो (मं० २६०) धृतराष्ट्र-टीव् । १ धृतराष्ट्रका
 ह्यो । २ ४ मययी, कश्चपययिको ययो तामाने लयय ।
 ३ कल्याणमिंधि एक ।

धृतमत् (मं० त्रि०) धृत-मत्पु, मय्य, म । धारयकारो,
 पयय करनेवाला ।

धृतमर्मन् (मं० पु०) धृतं मर्मं येन । १ शरीर कवच,
 लक्ष्मी कवच धारय किये हो । २ भारममिह तिमर्त
 के राता केतुमर्माके पुत्र । इनके भारिका नाम एयमर्मा
 था । जब पलुम पयमिह-योक्के लोहे पीछे गये थे, तब
 समके माय इनका गुरु हुआ था । इस युद्धमें इनके भारी
 केतुमर्मा पोर एयमर्मा मारे गये थे । इनके मरनेके बाद
 धृतमर्मा पलुमके माय कुछ समय तक लड़े, पीछे पराजित
 हो कर लक्ष्मी पलुमकी अधीनता स्वीकार कर ली ।

(भाव ७२०-७३ ५०)

धृतमत् (मं० त्रि०) धृतं मर्मं येन । १ शरीर कवच, लक्ष्मी
 कवच धारय किये हो । (पु०) २ दुष्टमोय कयययके पुत्र
 राजा विजयका पोत्र ।

धृतात्मन् (मं० त्रि०) धृत धात्वा येन । १ धीमान्-
 विष्णु, धात्वाको स्मिन् रपनेवाला, धीर । (पु० २ विष्णु)
 धृति (मं० २६०) धृ त्रिप्, १ धारय, धर्म वा धर्म
 को क्रिया । २ तुष्टि, मयोप, लक्षि । ३ धैर्य, मर्मका
 दृढ़ता, धिक्ताकी पवित्रता । ४ विष्णुआदिका धर्म
 योमर्भेट, कलित कर्तातियमें एक योम । इस योममें विष्णु
 का लभ होता है, लक्ष मुद्रिमान्, सर्वदा मन्त्रविष्णु,
 धामिन्धर, सुमोम चोर विमयास्मिन् होता है । ५ लक्ष,
 सुच । ६ गौरादि योक्ता मायकाके मन्त्रमायकाभेट,
 मालक मायकाभेटमें एक । मायका देवी । ७ पटादमा
 चरा हृति हृद्योमाय, पठारक पयमिंधि हृत्ताको मन्त्र ।
 इन लक्षके प्रतिश्रुतमें १८ पयार होमें हैं । इनके पयमिंधि के
 पोर मातरे पयारमें यति होमी है तथा इनके १, २, ३, ४
 पयवर्षा, पयारवर्षा, पयारवर्षा, पयारवर्षा, पयार-
 वर्षा, पोर पठारवर्षा पयार गुरु पोर मंय लपु होमें है ।
 ८ मानस-धारयामेट ।

धृति को भी धारया कहते हैं । जिम धारया-महि धारा
 सम मान पोर इन्द्रिया मयदा मयापानके लक्षमें लक्ष्मी-
 ने प्रतिगिष्ठ को जानो हैं उसको गान्धिका धृति
 कहते हैं । जिम धारया द्वारा कलाकादिकोंका सम पयं
 कागादि के लय पयमिंधि वा पलुम होता है उसका नाम
 राजसिक् धृति है पोर जिम धारय विमोय दा, मय दा
 मनेके मोह, भय, लय, विषाद, मयता, पादि लक्षि हुआ
 करतो है, लोको धारयाको तामसिक् धृति कहते हैं ।
 ९ दमस्त्याकप धर्मयोजोभेट, दमका एक लक्ष्या पोर
 धर्मको ययो । (पु०) १० राजा कयययके पोत्र ।

(हरिवं ३१ मं०)

११ मेविक राजभेट, भागवतके धनुषार एक मेविक
 राजा । १२ विष्णुदेवभेट, पय विष्णुदेवका नाम । १३
 नादिमय्यर्षयोक्के धर्मिपारो भावभेट, नादिमय्यर्षके
 धनुषार मयिपारो भावभेटि पय । १४ गुदमयिगिष्ठ लक्ष-
 का दमनामाक १५ विष्णुनाम विष्णुका पयमिंधि लक्ष्मी,
 लक्ष्मी को विष्णुका विष्णुका पयमिंधि लक्ष्मी लक्ष्मी है ।

१६ यद्वर्ग्योयं वस्तु के पुत्र । १० अन्वयिको एक पाद-
तिका नाम ।

वृत्तिमत् (सं० त्रि०) वृत्तिरस्यस्य मत्पुत्र । १ वैर्यान्वित,
त्रिवे संयं हो । (पु०) २ वैर्यके एक पुत्रका नाम ।
३ अजयिष्ठ राजा के पुत्र । (हरिवंश १० अ०) ४ कुम्भ-
दीपक वर्णभेद । (भारत भीष्मपर्व १२० अ०) ५ अन्वि-
भेद । (भारत वनपर्व २११ अ०) वृत्त होमाङ्गमे वृत्ति नामक
अन्वि का होम करना पड़ता है । ६ त्रयोदश मन्त्ररत्न
वर्णिके मध्य चक्रिका का अन्वयभेद, तैरुद्धे मन्त्ररत्न
मन्त्रि चक्रिका की संज्ञान ।

वृत्तिहोम (सं० पु०) वृत्ताष्टकोद्देशको होमः । विवा-
हाङ्ग होमभेद ।

विवाह हो जानेके बाद यह वृत्तिहोम करना पड़ता
है । यह पाठ प्रकारका है और इसे अवश्य करना
चाहिये । "इह वृत्ति स्वाहा" इस मन्त्रसे होम करना
पड़ता है । यहाँ पर वृत्ति शब्दके योगसे चतुर्थी विभक्ति
नहीं होती । भवदेवसे यह होम-विधान इस प्रकार
लिखा है—विवाहके बाद कुण्डलिको विधानके अन्त
सार होम करके वृत्ति नामक अन्विकी स्थापना करे,
पूजे समित् प्रेषेपात्त अथवा महाव्याहृतिहोम समा-
पन कर ८ मन्त्रसे वृत्तिहोम करना चाहिये ।

पाठ मन्त्र—प्रजापतिर्हृदिपितृवतो ऋग्वेदो वसु देवता
वृत्तिहोमे विनियोगः । पौं इह वृत्तिः स्वाहा । पौं इह
स्रष्टुतिः स्वाहा । औं इह रतिः स्वाहा । औं इह रमस्व
स्वाहा । औं मयि वृत्तिः स्वाहा । औं मयि स्रष्टुतिः
स्वाहा । औं मयि रतिः स्वाहा । औं मयि रमस्व स्वाहा ।
इत पाठ मन्त्रसे वृत्तिहोम करना पड़ता है ।

धूम्रवृत् (सं० पु०) धरतीति धूम्रजिह्व, पीड् कुडि कडि
निवेति । अण्, ४।१।१२ । १ विष्णु । २ धर्म । ३ गगन,
पाकाय । ४ समुद्र । ५ मेधावी । ६ विप्र । (त्रि०)
७ धारक, धारण करनेवाला ।

धूलरी (सं० स्त्री०) धूलन, कोप, रक्षात्तादेयः (बनोवर ।
वा ४।१।७०) भूमि ।

धृपत् (सं० त्रि०) धृप अग्निमये वाहुषकात् कजिन् ।
१ धर्षक, दमन करनेवाला, दबानेवाला । (की०)
२ अग्निभक्त, पराजय, ज्ञात ।

धृपद (सं० त्रि०) धृप अग्निमये वाहुषकात् कर्त्तरि
अधिक । धर्षका, दमन करनेवाला ।

धृपु (सं० त्रि०) धृप्योतीति धृप ह्यु । (अभिदिश्वधोति ।
अण्, ४।१४) १ दण्ड, निग्रह । २ प्रगल्भ, चतुर होमि-
यार । ३ सङ्घात ।

धृष्ट (सं० त्रि०) धृष्ट ता । १ प्रगल्भ, चतुर, होमियार ।
२ निरालस, बेहया । ३ निर्दय । ४ उद्धत, अतृप्त
साहस करनेवाला । ५ नायकविशेष । साहित्यदर्पणमें
लिखा है, नि जो अपराध करता है, अथवा किसी बात का
भय नहीं रखता, निरालस होने पर भी जिसे किसी
प्रकारकी सजा नहीं होती और दीप दिखता देने पर
भी भूको बातसे उसे क्षिपानकी कोमिग करता है, उसीको
धृष्ट नायक कहते हैं । ६ वेदि वर्गीय कुलिका पुत्र ।
(हरिवंश ३६।२४) ७ सप्तम मनुके एक पुत्रका नाम ।
(भागवत ८।१।२) ८ अर्जुनका संहार ।

धृष्टकेतु (सं० पु०) १ सक्ति राजवर्गीय सुकुमारके एक
पुत्रका नाम । (हरिवंश २८ अ०) २ नवें मनु रोहितके
पुत्र । (हरिवंश ७ अ०) ३ अनुक वंशीय सृष्टिके पुत्र ।
(रामायण बा०) ४ सत्यकेतुके एक पुत्र । ५ वेदि देयके
राजा मिथपालके पुत्र । ये कुर्वचेलके धृष्टमें पाण्डवकी
बोरसे सङ्घट्टे थे । जिस दिन जयद्रथ मारा गया, उस
दिन इन्होंने असाधारण वीरत्व दिखलाया था । जब ये
द्रोणाचार्य की गति रोकनेके लिये उद्यत हुए, तब वीर-
धन्या नामक वीरवपुषके एक बोरसे इनको सुदुर्भेद
हुई था ; जिसमें वीरोधन्या मारे गये थे । अन्तमें बहुत
काल तक युद्धके बाद ये द्रोणाचार्यके हाथसे मारे गये ।

(भारत शीर्ष १०७, १२५ अ०)

धृष्टकर्मिपुत्रके पुत्र अतुङ्गादने धृष्टकेतु की कर
लक्ष लिया था । (भारत आदि ६७ अ०)

धृष्टता (सं० स्त्री०) धृष्टस्य भावः धृष्टतन्, ततः टाप ।
१ निरालसा, संकोचका भाव, बेहयाई । २ अतृप्त
साहस, टिकार, घुस्साही ।

धृष्टव्यास (सं० पु०) धृष्टद राजाके पुत्र । इनकी कथा
महाभारतमें इस प्रकार लिखी है—

धृष्टद राजाके धृष्टद नामक एक पुत्र था । धृष्टद
राजाके भर्ताज कवि की मित्रता बड़ी थी, इससे वे

नित्य हृदयकी मे कर शक्ति प्राप्त कर ज्ञान करने से। यही समय भरहाज-पुत्र शेष और हृदयमें गाड़ी मिलाया हो गई। राज-यंत्र प्रयत्न के समये पर हृदय-राजा हुए। एक दिन जब शेष शक्ति प्राप्त मयो, तब हृदयमें एक ही पदमा हो। इस पर शेषमें बहुत दुःखित होकर शेषों और पाण्डुकी की चमत्कारका भार लिया। पीछे चमत्कारमें हृदय नित्य कर शेषमें चमत्कार की समझा बदला; चुनने के लिये कहा। चमत्कार भी हृदयकी शक्ति पर शेषाचार्य के पास लाये। तब हृदयमें शेषाचार्य की चाचा राज्य दे कर कृष्णा का पाया। इन चमत्कारका बदला देने के लिये हृदयमें राज-और चमत्कार इन दो शक्ति-भारों की सहायतासे एक यंत्रका चमत्कार किया। इन यंत्रों, हृदय-चमत्कारियों की शक्ति, सुन्दर शक्ति, भुक्त, चमत्कार, राज और चमत्कार चमत्कार को दिव्यरूप पर चढ़े हुए चमत्कार निकले। इसकी शक्ति-समय दिन-रातों हुई कि पाण्डुकी का यंत्रका, भवामक यह राज-पुत्र चाप कोमल शीतका नाम करने के लिये उत्पन्न हुआ है। यही वास्तव शेषका मध्य करेगा।

कोरय और पाण्डुकी जब लड़ाई दिखी, तब ये पाण्डुकी और ये एक प्रधान मैदानायक की कर लड़े थे। शेषाचार्य जिस समय चमत्कार पुत्र चमत्कारों की शक्ति वात चुन कर चमत्कार गरीर त्याग करने के लिये योगी सन्ने से चमत्कार समय हृदय-चमत्कार शेषाचार्य पर बढ़ाई कर चुनका गिर काटा था। जिस महाभा-वतमें भाव माक लिया है, कि हृदय-चमत्कार शेषाचार्य का गिर काटा था, इसीसे चमत्कारों में समझा बदला चुनने के लिये चमत्कार को यो। चमत्कार भारत-सुद्ध के बाद जब ये पाण्डुकी चमत्कार मोटे हुए थे, तब चमत्कारों में भी चमत्कार चमत्कार देने के लिये समझा गिर काट लिया था।

हृदय (मं. की.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदयानि (मं. वि.) हृदयानि, चमत्कार।

हृदय (मं. पु.) हृदय, एक राजा।

हृदय (मं. पु.) हृदय, एक राजा।

हृदय (मं. की.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. की.) हृदय।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. पु.) हृदय, कर्जो समाप्त।

हृदय (मं. वि.) हृदय, कर्जो समाप्त।

राज्य तथा पश्चिममें तालसर और पालसहरा हैं। ब्राह्मणी नदी इस राज्यमें पश्चिमसे पूर्वकी ओर बहती है। जिन जिन स्थानों को कर यह नदी गई है, वहां खेती अच्छी तरह होती है। इस नदी को कर बहुतसे वाणिज्य द्रव्य देशमें लाये जाते हैं। इस राज्यमें खेती करने गोमय बहुत सी जमीन परतो है। यहां लोहेकी अनेक खान हैं, पर ये अधिक खोदी नहीं जाती। यहां कुछ कुछ लोहका भी व्यवसाय होता है। यहांके प्रधान-पामका नाम भी बैकानल है, जहां राजा वास करते हैं। ऐसी बहुत खरीदने और बेचनेके लिये छदीपुर और सदाशपुरमें प्रति सप्ताह बाट लगती है। अधिवासियोंमें अधिसे अधिक हिन्दू हैं, श्रममें सुसलमान, बौद्ध और ईसाई हैं। इसके अलावा यहां पाषाणों जंगली जाति रहती है। राज्यकी वार्षिक आय दो लाख रुपयेसे अधिक की है जिसमेंसे ५०८८ रुपये छट्टिये गवर्नमेंटको कर लक्ष्य देने पड़ते हैं। राज्यको मैन्समंथना ४४ है। इसके सिवा ४१ नियमित पुलिस और ७४२ चौकीदार हैं।

छद्दीवासमें जितने करद राज्य हैं उनसे यह राज्य अधिक सुचारित है। महाराज भागीरथी महीन्द्र बहादुरसे जो इस राज्यकी उत्पत्ति हुई है। ये राजधानीमें एक हिन्दोय अथवा एक अस्पताल और एक भवनैतिक विद्यालय स्थापित कर गये हैं। उक्त स्थानमें चंगरीजी, छद्दीया और संस्कृत भाषा सिखाई जाती है। अधिकांश छात्रको हंस्ति और गुस्ताक मिलती हैं। इसके सिवा स्कूलों और भो १२ पाठशालाकी स्थापना को है एवं छात्रके अध्ययनीक चंगरीजी विद्यालयमें दो हस्ति दग्ग दग्ग रुपयेकी और दो पांच पांच रुपयेकी प्रदान को है। छात्रिकाओंको उत्पत्तिके लिये भी ये अधिक परियम और रुपये खर्च कर गये हैं। १८६६ ई०में जब छद्दीवासमें और दुर्भिक्ष पड़ा था, तब उन्होंने प्रजाकी जान बचानेके लिये बहुत रुपये खर्च किये थे। उनके सुधारनसे सुभ हो कर १८८६ ई०में गवर्नमेंटने उन्हें 'महाराज' की उपाधि दी थी। १८७७ ई०में ये पञ्चालको प्राप्त हुए हैं। वर्त्तमान महाराजका नाम दीनदस्य महीन्द्र बहादुर, भागीरथी महीन्द्र बहादुरके दत्तकपुत्र हैं।

छेड़ोकोवा (हि० पु०) बड़ा काला कीवा, छोम कीवा।
छेन (मं० पु०) १ समुद्र। २ नद।

छेनजी—एक नगर। यह गुजरातके प्रायोदीपके ग्रेव भागमें हारकासे संयुक्त है। यह नगर छेन जंगलमें घिरा है। माषिक नामक एक व्यक्ति इस नगरके अधिपति थे, किन्तु पत्न्यन्त दुर्गम स्थान ज्ञान कर उन्होंने इसे छोड़ दिया था। नगरके सभी मनुष्य चोरी करके अपना जोविका निर्वाह करते थे। पीछे १८०७ ई०में कर्नाट वाश्चर साहबने माषिकके माय, सन्धि करके नगरवासियोंकी दृष्टवृत्ति कुछ दी।

छेना (सं० स्त्री०) धेनू-टाय। टटल्लेऽपि खखेव डोप, हर दसोवे न डोप, इति केचन। नदी। इस शब्दको व्युत्पत्ति किसी किसीके मतसे इस प्रकार है, दधाते खंडः, ततः शानक्षि व्यत्ययेन एत्वाभ्यासलोपो दधाना क्षममिधेयं चप प्रदानेन सौकिकाय वा। अथवा धेदु पाने इति न प्रत्ययः इकाराच्चात्तादेगः ततो गुणः । वा धीयते पीयते आत्ताद्यते वा अनेन, धयति प्राणानिति छेना। २ आत्ताद, वम, मजा। ३ भारतीविशेष, एक प्रकारका वाक्य।

धेनु (सं० स्त्री०) धवति छेदि सुतान्, धीयते यस्मै इति वा धेदु-नु इत्यात्तादेगः—(धेदु इत्थं। उग्न, ३।३४) १ गोमात्र, गाय। २ नवप्रसूता गायी, वह गाय जिसे बच्चे जने बहुत दिन न हुए हों। इसका संस्कृत पर्याय-नवसूतिका और नवप्रसूतिका है। सवत्सा गोकुल धेनु कहते हैं। शास्त्रमें जहां जहां धेनुदानका उल्लेख है वहां वहां सवत्सा गोदान करनेकी ही लिखा है। इसी कारण धेनु शब्दसे सवत्सा गोकुल अर्थहीन होता है। जहां पर धेनु शब्दसे केवल गायका अर्थ जाना जाय, वहां निम्नोक्त द्वा प्रकारकी गायें समझनी चाहिये। इसका विषय हृदहमं पुराणमें इस प्रकार लिखा है—
‘इस गोजातिमें अकपिला गाय प्रधान, अविहन्ता द्वितीय, रत्नापिहन्ता तृतीय, नीनपिहन्ता चतुर्थ, यशस्वर्ण और पिङ्गलवर्ण चतुर्विध गो पञ्चम, शङ्खपिहन्ता षष्ठ, चित्रवर्ण और पिङ्गलवर्ण चतुर्विध सप्तम, बभ्रुरोहिणी अष्टम, खेत और पिङ्गलवर्ण, चतुर्विध नवम एवं खेत और पिङ्गलवर्ण विविध दशम हैं।’

के लिये ताड़के धन गये थे। यह वन मनुष्य-समाजके लिये
गन्ध और अत्यन्त सुगन्धघ्न था तथा इस तरहसे अवस्थित
था कि देखनेसे मालूम पड़ता कि 'यह केवल नरनाम-
मोलुप राक्षसके वासस्थानके सिवा और कुछ नहीं है।
यहाँ बलरामने एक ताल-ढोका जिसके शब्दसे धेनुक
अत्यन्त क्रुद्ध हो उनके पास जा पहुँचा। अग्निमानसे उसके
शरीरके रोए खड़े हो गये, दोनों पाखें स्तम्भ हो गईं,
हुंकारसे वन गुंज उठा और चुरचुरसे पृथ्वीतल विदीर्ण
होने लगा। इस तरह वह कालान्तक यम सगोखा बल-
रामके सामने उपस्थित हुआ और उन्हें दातोसे काटने
लगा। बलरामने तुरंत ही उसके दोनों पैर पकड़ कर
धार धार चारों ओर घुमाया और अन्तमें उसे ताड़के पेड़-
के ऊपर फेंक दिया। इस पाघातमें उसकी आँध, कमर,
गन्ता और पैठ चूर चूर हो गई और ताड़के फलके साथ
जमीन पर गिर कर वह पशुत्वको प्राप्त हुआ। यह देख
कर रामने उसके दूसरे दूसरे स्नातियगों की भी मार
झाली। उनी-समयसे उम नाम-धनमें और किसी प्रकार-
का उपद्रव न रहा। (हरिश्चं. ६. ७०) २ तीर्थविशेष,
एक तीर्थका नाम। महाभारतके वन-पर्वमें इस तीर्थका
उल्लेख देखनेमें आता है।

"ततो गच्छेत् राजेन्द्र धेनुकं लोके-विभुतम्।

एक रात्रौपितो राजन् प्रवृष्टे तिलधेनुकम् ॥"

(महाभारत १५.५८२)

धेनुकतीर्थ अत्यन्त पवित्र है। यहाँ एक रात रह कर
तिलकी धेनु दान करनेसे सब पाप मिट जाते हैं और
अन्तमें ब्रह्मलोकको प्राप्ति होती है। यहाँ कविना चपने
बर्षके साथ विचरण की थी। आज भी उसका चिह्न
विद्यमान है जिसे स्वयं करनेसे जो कुछ प्रशन्न हैं वे
जाते रहते हैं। ३ पौड़ग प्रकारके रतिबन्धके अन्तर्गत
हादयवन्ध, सोलह प्रकारके रतिबन्धोंमेंसे बारहवाँ बन्ध।
रतिकथ देखो।

धेनुकसूदन (मं० पुं०) धेनुकं गोपर्वनोत्तरपार्श्वस्थताल-
वमनिवासिनं असुरं निमुदयति सुद-गिच-न्यु। श्रो-
क्षय। त्रिकाण्डशेषमें लिखका नाम 'धेनुकसूदन' ऐसा
लिखा है। बलरामने धेनुक असुरका वध किया, ऐसा
होने पर भी बलरामकी ही विष्णुके अवतारमें सम्मन्ना
वाहिये, क्योंकि भागवत आदिमें लिखा है—

Vol. XL 67

"नैतच्छिन्नं भगवति क्षनन्ते जगदीश्वरे।" (भागवत)

भगवान् जगदीश्वर अनन्तदेवने धेनुक धनुरकी
मारा होगा, यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है, इत्यादि
वचनों द्वारा बलभद्रजीकी भगवान् जगदीश्वर वतनाथा
है। इसी कारण त्रिकाण्डशेषमें श्लोकका नाम धेनुक-
सूदन लिखा है।

धेनुका (सं० स्त्री०) धेनुरिच वतिक्रतिः धेनु-कन्-टाप।
१ हस्तिनी, हयिनी। २ धेनुरेव स्त्रायं कन्। २ गामो,
गाय। ३ धान्यक, धनिया।

धेनुकारि (सं० पुं०) धेनुकस्य परिः १. तत्। १ धेनुकके
ग्रन्थ, बलराम। २ नामके शरका पेड़।

धेनुजम्होड़—दक्षिण प्रातर्त्तमें म्होड़ ब्राह्मणोंको एक श्रेणी।
दक्षिणमें मोहिरपुरसे सात कोसको दूरी पर धेनुज नामक
एक नगर है जहाँ इनका वास होनेसे ये धेनुजम्होड़
कहलाये। इनकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा निश्चय मिला है
कि इनके पूर्वजोंने किसी विधवा कन्याके गर्भस्थापन
कर दिया था। अतः इनके स्मृतिविष्णुवर्गने इनसे
घृणा प्रकट की और इन्हें धेनुज नाममें रहनेको आज्ञा
ही थी। तभीसे ये लोग धेनुजम्होड़ नामसे प्रसिद्ध हुए।
ये किस तरहके ब्राह्मण हैं, इसके विषयमें ग्रन्थकारोंने
ऐसा लिखा है,—

"एहस्यास्ते भर्तृवध-कुमारा धर्मपिब्रवाः।

"धेनुब्राह्मणं यपिब्रमन्ति लोके विप्रायमा अपि ॥"

अर्थात् धर्मका विप्रव करके विधवाओं द्वारा ब्रह्म
हुए, इस कारण ये ब्राह्मण धर्मभ्रष्ट तथा ब्राह्मणोंमें
अधम हैं।

धेनुजिह्वा (सं० स्त्री०) गोजिह्वा नामक गोमुप, गोजिह्वा
नामकी श्व।

धेनुदुग्ध (सं० स्त्री०) धेनोर्दुग्धमिव शुभं फलमस्य। १
चिर्मिट, चिर्मिटा। धेनोर्दुग्धं १. तत्। २ गोचोर, गाय
का दूध।

धेनुदुग्धकर (सं० पुं०) करोति बह्विधतीति, क्ष-पच,
धेनोर्दुग्धकर १. तत्। १ गजर, गजर। इसके चिहाने-
से गाय अधिक दूध देती है। २ मञ्जरुवृक्ष, एक प्रकार
की घास।

धेनुसचिका (सं० स्त्री०) बड़े मच्छर जो गोगणोंकी
लगते हैं, डंस, डावा।

अपराधीका गान सुनाई पड़ता है, उसी समय मन्त्रार्थ ध्यानमें मग्न थे। अपराधीका गीत सुन कर चित्त ता चाक्षुष होना उचिन्त था, किन्तु वे मान हो कर गिरजी और भी ध्यानमें लयलीन हो गये, इसी कारण हमें धैर्य कहते हैं। (सांख्यदर्शन)

धैर्यकलित (सं० त्रि०) धैर्येण कलितः शतत् । स्थिर, पटल ।

धैर्यश्रुत (सं० त्रि०) धैर्यात् श्रुतः शतत् । धैर्यं होम, अस्थिर ।

धैर्यशान्ति (सं० त्रि०) धैर्यं शान्तिं शीलमस्य शान्तिनि । धैर्ययुक्त, जिवे धैर्य हो, शान्त ।

धैर्यवलम्बन (सं० स्त्री०) धैर्यस्य अवलम्बनं शतत् । शान्त होनेकी क्रिया ।

धैर्यवलम्बन (सं० त्रि०) धैर्यशाली, सहिष्णु, शान्त ।

धैर्यत (सं० पु०) धीमतामयं, धीमत्-बन्ध, एषोदरादि-त्वात् मस्य वत् । सङ्गीतके सात स्वरोंमेंसे छठा स्वर, मारदीय-मिथ्याके अनुसार छोड़के हिमहिमार्थके समान जो स्वर निम्नसे बह धैर्यत है; 'मन्त्रसु धैर्यत' रीति' पद्यों छोड़ा धैर्यतके सहस्र शब्द करता है। तानधेनने इस स्वरको मेढकके स्वरके समान कहा है। इसका स्थान सावाट है, लेकिन व्याकरणमें इसका स्थान दन्त बतनाया है। यह सत्रिय वर्ण है और जातिका पाङ्कज है। इसको ७२० तानें मानी गई हैं जिनमें प्रत्येकके ४८ भेद होनेसे सब ३४५६० तानें हुईं ।

सङ्गीत-शामोदरके मतसे जो स्वर नामिके नीचे आ कर वस्ति-स्थानसे फिर ऊपर दोड़ता हुआ कण्ठ तक पहुँचे, वह धैर्यत है ।

"नन्दती रोहिणी रम्येयिता धैर्यतन्धवाः ।" (सङ्गीतदर्शन)

रम्या, रोहिणी और मन्दस्त्री नामकी इसकी तीन श्रुतियाँ हैं। यह यह और कोमल इन्हीं दो रूपोंमें प्रयुक्त होता है। अतः कोमल कोमलका जो भ्रम है। धैर्यत की सुर करनेमें स्वरपास इस प्रकार होता है—

ध-म, नि-पट, श्र-ग श्र-म,
म-प, म-घ, ध-नि, ध-स ।

कोमल धैर्यत सुर होनेसे—

△
ध-म, नि-पट, स-ग, श्र-म,
△
म-प, म-घ, ध-नि, ध-स,

सङ्गीतदर्शनके मतसे यह स्वर स्रष्टिकुलमें उत्पन्न होय सत्रिय वर्णका है। इसका वर्ण पीत, जन्मस्थान श्वेतोष्ण, वृद्धि तुम्हक, देवता गणेश और कन्द उष्णिक (अन्तान्तरसे जगतो) माना गया है और यह बीभक्ष और भयानक रसके उपयोगी कहा गया है। धैर्यतके अन्य सभी विवरण रसमान छन्दमें देखो ।

धैर्यल (सं० स्त्री०) धोन्नी भावः यज, टाण्डिनायने-र्यादित्वात् मस्य त । धीवनका भाव ।

धैर्य (सं० पु० स्त्री०) धैर्यस्याप्यर्थां वदे षण् । धैर्यका अर्थ, मन्त्राङ्गको सम्मान ।

नैटिक-प्रयोगमें ही षण्, होता है, किन्तु नौटिक-प्रयोगमें षण्, न हो कर इज, होता है, वहाँ धैर्यारि ऐसा रूप होता ।

धौं डाल (हिं० वि०) जिसमें टेले कंकड़ पत्थरके टोंके हो ।

धौं धा (हिं० पु०) १ मोंदा, बड़ौल पिंडा । २ मोटा और बड़ौल मूर्ति, महा धौं बड़ौल गरीर ।

धौं (हिं० स्त्री०) छरद या मूँगकी ढाल जिसका किलका निकाला रहता है। पानीमें कुछ देर तक डाल कर भिगो कर उसकी भूसी हाथमें मल कर घनग कर देते हैं, इसीलिए टालकी धौं कहते हैं ।

धौं धौ—हिन्दीके एक कवि । ये अनेक छुटकार कवितायेँ रच गए हैं, उदाहरणार्थ एक भोले देते हैं—

"ए लाला जीको तेलों न'ग समुदा बल परनी धूँ बूतागे तहनी ।
बैग बही बह दोड़ विरचकट यक्षुपति पूत तिहारो ॥

अच्छेले अवतार तिगो है मेहनको मूर मारी
धौं धौके प्रभु पुन धिरीधी ब्रज जन-प्राण अपारी ॥

धौं धौ—हिन्दीके एक कवि । ये कविताको अनेक पुस्तकें बना गये हैं । ये १००० ई०में विद्यमान थे ।

धौं कड़ (हिं० वि०) छटपुट, हडा कहा, मोटा ताजा ।

धौं धा (हिं० पु०) १ धूर्चता या कम जिससे दूसरा अममें पड़े, भुलावा, कम, दगा । २ दूसरेके कम द्वारा उपस्थित भाव, डाला हुआ अम, भुलावा । ३ चमटकी सभावन, जोड़ी । ४ अन्यथा होनेको सम्भावना । ५

धोविंटा (हिं० पु०) बह घाट जहाँ घोड़ी कपड़ा धोते हैं।
धोविन (हिं० स्त्री०) १ धोवोकी स्त्री। २ घोड़ी
जातिकी स्त्री। ३ बालके किनारे रहनेवाली एक
प्रकारकी चिट्ठी। यह दम बारह अंगुल लम्बी होती
है और पथर भाटिके नीचे चूके देती है। जैसे जैसे
जटु बढ़ती जाती है, वैसे वैसे इसका रंग बदलता
जाता है।

धोवो (हिं० पु०) राजक, कपड़ा धोनेवाला। इस जातिकी
लोग बीच और चरखे समझी जाते हैं। विशेष विवरण
रत्नक नाममें देखा।

धोवोघास (हिं० स्त्री०) बड़ी दूध, दूध।

धोवीपकाड़ (हिं० पु०) कुशीका एक पेड़। इसमें
कोड़का हाथ पकड़ कर अपने कन्धेकी ओर खींचते
हैं और काम पर लाद कर बिन गिरा देते हैं।

धोवीपाट (हिं० पु०) धोवीरका देवी।

धोवी (सं० पु०) चंलनके एक कवि। इनका चरित्र जय-
देवने गीतगोविन्दमें किया है। ये लक्ष्मणसेनके नाम-
यिक राज कवि थे। इनके प्रकृत विवरणका पता नहीं
चलता है। इनका रचा हुआ पवनभूत ग्रन्थ अब तक
मिलता है और मेघभूतके टहका है।

"धोवी कविः हमायतिः" (गीतगोविन्द)

धोर (हिं० स्त्री०) १ सामीप्य, पास। २ धार, किनारा, बाढ़।
धोरण (सं० स्त्री०) धोरति गच्छत्यनेन धोर करणे व्युट्।
१ याममात्र हाथो छोड़े पादिकी सवारी। भावे
व्युट्। २ पणको प्रथम गति, छोड़की सरपट चाल।
इसका पर्याय—धोरितक, धोर्य और धोरित है। ३ दीह।
धोरण्य (सं० स्त्री०) धोरति क्रमशः प्राप्नोतीति धोर-
ण्य। परम्परा, श्रेणी।

धोराजी—बम्बईके काठियावाड़ जिलासंगत गोण्डल
राज्यका एक सुरक्षित नगर। यह अक्षां० २१°४५' उ०
और देशां० ७०° ३७' पू० राजकोटसे ४३ मील दक्षिण
और वीरवन्दरसे ५२ मील पूर्वमें अवस्थित है। जन
संख्या पचोस हजारके लगभग है। १८ मी० शताब्दीमें
जूनगढ़से गोण्डलके २५ कुम्भजीने इसे हस्तगत किया
था। यहरमें से कर रकबे स्टेशन तक छोड़ेकी टूट-
गाड़ी चलती है। यहाँ एक अस्त्राल और चंटाघर है।

Vol. XI, 68

धोरित (सं० स्त्री०) धोर-त। १ धोरण, छोड़की सरपट
चाल। २ बध, कतन।

धोरै (हिं० पु०) १ भार चठानेवाला। २ अष्ट पुरुष, बड़ा
बादमी। ३ हयम, बैल। ४ प्रधान, मुखिया, सरदार।

धोसधक (हिं० पु०) एक पेड़का नाम।

धोना (हिं० पु०) जवासा, धमासा, हिं गुवा।

धोनाना (हिं० क्रि०) घुठाना देना।

धोलेरा—१ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत अहमदाबाद जिलेके
टण्डूक मासुतका एक बन्दर। यह अक्षां० २२°
१५' उ० और देशां० ७२° ११' पू० अहमदाबाद नगरसे
६२ मील दक्षिण-पश्चिम काब्ये उपसागरके किनारे अर्ध-
स्थिर है और रुईके कारबारके लिए प्रसिद्ध है। लोक-
संख्या प्रायः ७३५६ है। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पहले
धोलेरा का माटार-खाड़ी हो कर धोलेरा नगर तह नाम
जाती पाती थी। किन्तु गत १०० वर्षके बन्दर खाड़ी
तहस नहस हो जानेके कारण धोलेरा बन्दर समुद्रमें प्रायः
१२ मील दूर जा गया है। धोलेरा बन्दरसे ५ मील
दक्षिणमें सत खाड़ीके किनारे वान-बन्दर है। वान-बन्दर
और १६ मील दक्षिणस्थ एक समुद्रके किनारे अवस्थित
बाबलोयारी बन्दर हो कर धोलेराका वाणिज्य चलता
है। देखीय लोगोंके यन्त्रसे बन्दरमें से कर मूल नगर तक
डामगाड़ी चलाई गई थी, अभी उसका नामो निगान
नहीं है। खाड़ीके प्रवेश-द्वार पर एक आनोकस्तम्भ है।
धोलेरा नगरको रुई यूरोपमें बहुत मशहूर है। इस नगर
के नाम पर वहाँ एक अफीकी रुईका नाम धोलेरा-
रुई रखा गया है। १८७५ ई०में यहाँ न्यूनिशपाकिटी
स्थापित हुई है। यहाँ डाकघर, टेलिग्राफ आफिस, गव-
र्मेंट विद्यालय, अस्त्राल और पुलिस थाना है।

धोलेरा—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत अहमदाबाद जिलेका एक
उपविभाग। यह अक्षां० २२° २४' से २२° ५२' उ० और
देशां० ७२° ०' से ७२° २३' पू०में अवस्थित है। भूपरि-
माण ६८० वर्गमील है। इसमें एक शहर और ११६
ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः ८८०८० है। इसने
उत्तरमें सामन्द, पूर्वमें छेड़ा जिजा और कोबे, दक्षिणमें
टण्डूक तथा पश्चिममें काठियावाड़ है। इस उपविभाग
की लगान-दक्षिण-पश्चिममें क्रमशः टाण्डू हो कर अन्तमें

११ ममस दमदममि मिल जातो है । यहाँ पूर्ण भावमें
साधारणतो नहीं है किन्तु जो भूतलगतियों में विराट है, कि
दलित-वधिम भावमें एक भी हवा देवतेमें नहीं जाता ।
यहाँ साधारणतो नमकी लेखन एक मरी बहती है ।
पार्थिक हृदयाम ३३ दृष्ट है ।

२ यह भीमका पचिमाका एक प्रमाण मय । यह
पचास ३२ हरे मं पोर देगा ०२ २० पुं पचमदा-
बाद महरमे २२ मीम दलित-वधिममें पचमिम है ।
मीमका मममम १४८० है ।

यह मुद्रागतका एक मापीन मय है । पात्र भी बड़ी
बड़ी साधार, मममिहिर पोर ममिमिहिर ममममम मय
की पलात मीमिम । पचिम दे रते है । बहतीका पच
मम है, कि मयममम पचममम, पचमिममममम
मिमममकी ममा मीमममम, पचिम ममम ममममम
ममममम पोर पाल्म-मममिमम यहाँ रहने है । ममम
मममि पचिमका ममम मिममि मई एक ममममम
ममममम पच कर रहने ममम । १०३३ ई०में मममममम
मम ममम पचिमका ममम । १०४० ई०में यह
मम ममममममम मम ममा । मीम १०४३ ई०में मम-
मममि पुम; मम मीमा पोर १०२० ई०में ममममकी
मीम ममा । यहाँ पचिममो मममकी ममममो ममम
मममि मममम है । १२८८ ई०में मम मममममम
मिमममि मममकी पचमिमममम मम मममम म।
मम ममम मम मीम मीमि मुम पचिम, मममम
पचिममिमम मममि मममम है । यहाँ मिममम-
मि ममो ममम ममम है पोर पचममममम मिमम मम
ममो ममममम ममो ममो है । १०२३ ई०में यहाँ ममम-
ममि ममो मममि मम है । मममो मम मममम १३००
म० मीम । यहाँ मम मम-मममो मममम, मममम,
मम मममममि पोर मम ममिमि ममम है ।

मीमम (हि० पु०) १ मीममका मम, मममममो मम ।
२ यह ममो मिममि मीमि मम मीमि मम मी ।
मीम (हि० पु०) मममममका ममा ममा मिमम,
ममम ।

मीम (हि० मी०) ममि मर मममम ममा ममम
मममम । २ मममो ममम, ममम, मम ।

मीमम (हि० मी०) २ मममो मममि मममि मम

ममम मममम ममम मममम । ३ मम मम
मममम । ३ मम ममम, ममम मममम ।

मीममो (हि० मी०) १ ममम मीमम मममो मम
ममममो ममो मी मम मम मममो ममो ममम है । ३
ममो ।

मीमममिहिर—१ मिममिहिर मम मम । मीममिहिर मीम
ममिम पोर मममो ममम मममममो मम मममिहिर है ।
ममम मम १८१ ममममि ममा म । मममम ममि
ममि मीम मीम मम ममम ममि ममि ममि है ।

२ मीमममिहिर मम मीममिहिर मम । ममम मम
मीममिहिर मममिहिर मम मम । मीममिहिर ममम
मम ममममिहिर मममिहिर मम मम । मीममिहिर
ममममम ममममिहिर ममममिहिर ममममिहिर मम
मममम म । मममिहिर मम ममम मम मीम, कि मम मम
मम मीममिहिर ममो मम ममो है, ममम मममिहिर
ममि मम ममा, मी मममम; मम ममम मम ममम; मम
मम है । मममम मम ममम मममम मममम । मम ममम
मममम ममम ममममिहिर मममम ममममो मममिहिर
मममिहिर ममम । मम मम मममम मममम मममम मम
मिममिहिर मममिहिर मी ममा मम । ममममम मम मम
ममममम मममम मम मीमम मम ममम । मम मीम-
मिहिर ममममममिहिर एक मम ममम ममा । मममममिहिर
मममम कि मम मम मम मम ममम मी मममिहिर मम
मम मममम । ममो मम मम मममिहिर ममममिहिर
मम मीमममिहिर मम ममममिहिर मम ममम । मी मममिहिर
मममिहिर मम ममम मम मम, मम मममिहिर कि
मम मम मममम ममममम मम मीम मी ममि मममिहिर
मममम मी मममिहिर मम ममम मममिहिर ममो मम
मममिहिर ममो मम मम मम मम मीम ममो है ।
मम मम मम मममिहिर मम मम मम मम ममम ममम,
ममम ममममिहिर मम मममिहिर मम ममम ममम ममम
मममिहिर मममिहिर मममम मममिहिर ममो मम
ममिहिर ममममम । मममम मीममिहिर ममो मम
मममममो मम ममम मममिहिर ममिहिर मम मम । मम

उनके मरने पर सवाईसिंहने जगपुरके महाराजसे कृष्ण-
कुमारों का पालियक्षण करनेके लिए कहा। उन्होंने यह
प्रस्ताव उदयपुर भेजा। लेकिन सवाईश्री चतुरतासे मान-
सिंहने मागमें हो उनको सेनाने विवाहके प्रस्तावको
कुल सामथ्री कोन ली घोर उन्हें मार भगाया। ऐसा
करनेसे उनका विरोध बढमूल हो गया। बड़ी तैयारीसे
जगत्सिंह जोधपुर पर चढ़ आये। राठौरसेनाने भी
जगत्सिंहका पक्ष लिया। दोनों पक्षमें घनघोर युद्ध हुआ।
मानसिंहने सवाईसिंह पीट दिखलाई और जोधपुरके किले-
का आश्रय लिया। अन्तमें जगत्सिंह यहाँसे चपमानित
हो कर जयपुर लौट गये। सवाईसिंहका पड़वन्ध
प्रकाशित हो गया। अमोरखनि मानसिंहके कंधनेसे
सवाईसिंहको मिथताके जालमें फाँस कर मार डाला।
१८२८ ई०में धौकलसिंह मारवाड़का राज्य पालन करने-
के लिये कोशिश करने लगे। जगपुरके महाराज सवाई
जयसिंह तथा कतिपय राठौर सामन्तोंका दम इसलिये
तैयार हुआ कि मानसिंहको तख्ता परसे उतार कर धौकल
सिंहको राज्य दिला दें। लेकिन ब्रिटिश गवर्नरके
सुप्रबन्धसे पड़वन्धकारी हताश हो गये और धौकल-
सिंह भी हार्य मरते रह गये।

धौकिया (हि० पु०) १ भायो बनानेवाला, भाग फूँकने-
वाला। २ व्यापारी जो भायो बाँट लिए नगरोंको गलिया-
में फिर कर टूटे फूटे वस्तुओंको मर्याद करता है।

धौकी (हि० स्त्री०) धौकनी।

धौज (हि० स्त्री०) १ दोड़, धूप, धाय-वृष। उद्दिग्नता,
धवसाहाट, हेशमी।

धौजन (हि० स्त्री०) धौज देखो।

धौजना (हि० क्रि०) १ दोड़ धूप करना। २ किसी
वस्तुको पैरोंसे रौंदना। ३ रौंद कर तह बिगाड़ना।
धौटा (हि० पु०) वह टकल जो कोहरेके बंसकी
पंखोंमें लगाया जाता है।

धौतान (हि० वि०) १ सुप्त, चालाक, फुरतोला।
साइसो, हड़ा। २ हट मुट, षटा कटा, मजदूर। ४ निपुण,
पटू, तेज।

धौधौमार (हि० स्त्री०) धौधता, ब्रह्मबड़ी, उतावली।

धौर (हि० स्त्री०) सफेद रङ्गको ईंस।

धौस (हि० स्त्री०) १ धमकी, घुड़की, डाँट। २ अधिकार,
धाक, रोष दाव। ३ कल, धोखा, भुलावा। ४ बाकी बसल
होनेका खर्च जो जमीन्दार या पासामीकी देना पड़े।

धौगना (हि० क्रि०) १ दण्ड देना, दमन करना, दवाना।
२ धमकी देना, घुड़का देना, डराना। ३ मारना,
पीटना।

धौगपड़ी (हि० स्त्री०) धोखा, भुलावा, दम दिनामा।

धौना (हि० पु०) १ बड़ा नगरा, डंका। २। सामर्थ्य,
शक्ति, वृत्ता।

धौसिया (हि० पु०) १ धौस जमानेवाला। २ धोखियाज,
दमदिलावा देनेवाला। ३ नगरा सजानेवाला, धोखे-
वाला। ४ वह जो मानगुजारीके बाकीदारोंसे मान-
गुजारी वसूल करनेका खर्च लेता है।

धौ (हि० पु०) भारतवर्ष में पायः सर्वत्र जंगलोंमें मिलने-
वाला एक जँवा भाड़। यह हिमालय पर ५०००
फुटकी ऊँचाई तक होता है। इसके पत्ते चमकड़के
पत्तोंसे मिलते जुलते हैं और किलके सफेद होते हैं जो
चमड़ा सिंहानेके काममें आते हैं। यह साल इसके
फूलकी चालके रंगमें मिला कर साल रंग बनाते हैं।
इससे एक प्रकारका गोंद निकलता है। इसको लकड़ी
सफेद होती है और इस सुवन कुवहाड़ोका बंट बाँट
बनानेके काममें आते हैं। यह दवाके काममें भी आता
है। यह देखो।

धौत (सं० वि०) धाव्यते इति धाव कर्मणि क्त। १
मार्जित, साफ किया हुआ। २ प्रचालित, धोया हुआ।
३ स्नात, नशाय हुआ। ४ योषित, गृह किया हुआ।
इसका पर्याय—निष्पिक्त, योषित, मृष्ट और चालित है।
(स्त्री०) ५, रौप्य, रूपा, चाँदी। ६ मोलकमोल।

धौतकट (सं० पु०) धौतः कटः कर्मधा०। सुवर्चलित
पात्र, सुतकी यैली। इसका पर्याय—स्थोन, स्थूल, प्रसेवक
और स्नून है।

धौतकोपज (सं० स्त्री०) कीयाव्यायते इति कीय-जन-ङ।
धौत कोपज०। धौत, मोनापाटा।

धौतकीपेय (सं० स्त्री०) धौत-चालित कोपेयं। प्रचा-
लित पवर्ण, धोया हुआ मोनापाटा।

धौतखण्डी (सं० स्त्री०) दण्डपण्ड, ईंसका टुकड़ा।

कपाहरणको मलना होता है । ऐसा अभ्यास करनेसे कफदोषकी यात्रा, उत्तमदृष्टि और गाढ़ी निम्न होती है । यह धोति प्रतिदिन निद्रावसानमें, दिनान्तमें अथवा भोजनान्तमें करना होता है ।

द्विती—द्विती तौन प्रकारकी है । प्रथम—रथा-दण्ड, हरिद्रादण्ड अथवा वेतदण्डकी सुख द्वारा हृदयमें प्रविष्ट करती है । बाद कुछ काल तक उसे वहाँ परिचालन कर निकाल लेते हैं । ऐसा करनेसे कफ, पित्त और कोद सुख ही कर बाहर निकल जाता है । इस धोति द्वारा हृदयमें कोई रोग रहनेसे वह निवृत्त हो पारोय हो जाता है ।

द्वितीय—बाहरी बाद पाकण्ड पर्यन्त जलपान कर कुछ काल तक हृदिको ऊपरकी ओर किये जल-वसन करते हैं । प्रतिदिन यह धोति करनेसे कफ और पित्त नष्ट हो जाता है ।

तृतीय—चार उँगलीकी चप्ट वस्त्रकी धीरे धीरे गले-के भीतर डाल कर किरसे उसे बाहर निकाल लेते हैं । इस धोति द्वारा शुष्म, प्लव, श्लेष्मा और कुछ खादि रोग पारोय हो जाते हैं, पित्तका नाश होता है और दिने-दिन देहकी पुष्टि होती है ।

मूलशोधन—जब तक मूलशोधन नहीं होता, तब तक वायुकी कूटिलता नहीं जाती । इसीसे यंत्रके साथ मूलशोधन करना आवश्यक है । हरिद्राके मूल अथवा मधुमाहूति द्वारा जलसे बार-बार शुष्मदेहकी साफ करना चाहिये । ऐसा करनेसे कोष्ठका काठिण्य, घाम, अजीर्ण आदि विनष्ट होते हैं तथा कान्ति, पुष्टि और अग्नि प्रदीप्त होती है । (वेदवर्धिता)

घीतो (सं० स्त्री०) धू-कसरि शिब, स्वाद्यं पथ, ततो होप, कम्पन, वरपरावट, कपकपी ।

घोन्मुमार (सं० स्त्री०) घुन्मुमारमधिक्य लतो यन्त्र; पथ ।

महाभारतके वनपर्वके भन्तर्गत उपोख्यानमें ।

घोमक (सं० पु०) धूम तदधानदेमि भव; धूमादित्वात् कुल । धूमप्रधान देममें ।

घोमत (सं० स्त्री०) रत्नमेष, लून-खराबो ।

घोमनायन (सं० पु०) राजभेद, एक राजाका नाम ।

घोमायेनक (सं० वि०) घोमायेनेन निष्ठत; ततो कुल ।

घोमायेन निष्ठत्तादि ।

घोमोय (सं० वि०) धूमन, निष्ठत्तादि, कुमादित्वात् कण । धूमनिष्ठत्तादि ।

घोम्य (सं० पु०) धूमस्य अपत्यं गर्गादित्वात् यञ् । धूम-प्रतिने पुत्र । ये युधिष्ठिरके पुरोहित थे । महाभारतमें इनको कथा इस प्रकार लिखी है—

घोम्य देवसुते भार्गवे । उत्प्लोचक नामक एक प्रसिद्ध तीर्थ है, वहाँ इनका पायम था । वहाँ ये रह कर जठरे तपस्या करते थे । चित्रावने इन्हें पुरोहित बनानेके लिये पाण्डवोंकी उपदेय दिया । उन्होंने उपदेयानुसार पाण्डवगण इनके पास पहुँचे और इन्हें उपयुक्त पात्र समझ कर उन्होंने श्रमिकों अथवा पुरोहित बनाया । इन्होंने नारदेसे सूर्यका एक स्त्रीय पाया था, जिसे इन्होंने युधिष्ठिरकी सिखाया था । इसी स्तवके प्रभावसे युधिष्ठिरने मुक्ति पाई थी ।

२ सत्ययुगके एक ऋषि । सत्ययुगमें व्यासपुत्र नामक एक ऋषि थे । इनके छोटे पुत्रका नाम घोम्य था । एक दिन ये और इनके बड़े भाई उपमन्यु खेलते-खेलते किसी एक भाग्यमकी जा पहुँचे जहाँ इन्होंने एक गायकी दूध पीने देखा । दूध देख कर ये दोनों भाई अपनी-माता-की पास गये और दूध पीनेकी इच्छा प्रकट की । इस पर माताने इन्हें प्रसन्न किया, 'हे बन्धु ! महादेवकी उपासनाके सिवा अभीष्ट वस्तु पानेकी कोई सम्भावना नहीं है ।' घोम्य मातासे महादेवके स्वरूपादि सुन कर उनको तपस्यामें लग गये । माताका उपदेय इनके लिए बहुत मन्त्र था ।

महादेवने इनकी तपस्यासे खुश हो कर वर दिया, "बन्धु ! तुम मेरे घरके प्रभावसे भञ्जर, पमर, तेजस्वी और दिव्यज्ञानसम्पन्न होगे । तुने सामान्य दुष्भावनें लिए माताके उपदेयसे सुख पाया । अतएव तुम्हारी इच्छासे सोरसमुद्र तुम्हारे सामने आविर्भूत होगा और एक कल्पके बाद तुम मेरा साक्षीत्व पाओगे । पात्रवे मैं तुम्हारे इस पायममें स्थायी हुआ । अब कबो तुम इच्छा करोगे, तभी तुम सुखे इन पायममें देव सकते हो ।" इस वरको पा कर ये कुछसे रहने लगे ।

(महाभारत वृ०)

३ एक ऋषिका नाम जिसे 'घायोद भी' कहते थे ।

इनके प्रादुर्भाव, उपमथ्यु और वेद नामके तीन ग्रन्थ थे ।

४ एक ऋषि जो तारावरुण पवित्र दिगम्बरी स्थित है । इनका नाम महाभारतमें उपर्युक्त है, कवि और परिब्राधके साथ पाया है ।

धोम (मं० पु०) १ धूम्र एवं स्वार्थे घण् । ऋषिसेद, एक ऋषिका नाम । स्वार्थे घण् । २ धूम्रवर्ण, धुएँ का रंग । (वि०) ३ धूम्र वर्णयुक्त, जो धुएँ-रंगका हो । भावे घण्, (पु०) ४ धूम्रवर्णत्व, धूम्रवर्णका भाव । धूम्र देवता इत्य घण् । ५ वांलुस्थानसेद ।

धोन्नायण (मं० पु० श्लो०) धून्वस्य गोत्रापत्यं सखादित्वात् फज्ज । धूम्र ऋषिका गोत्रापत्य ।

धोर मं० पु०) धवहस, धोका पेड़ ।

धोर (हिं० पु०) एक चिड़िया, समीप परेवा ।

धोरा (हिं० वि०) १ श्वेत, समीप, उजला । (पु०) २ धोका पेड़ । ३ एक पक्षी । यह कुछ बड़ा और खुलते रंगका होता है । ४ समीप रंगका बैल ।

धोराकुम्हार—मध्यभारतके इन्दौर एजेन्सीके अन्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य । यहांके ठाकुर अर्थात् सरदार मिमरोला घाटसे सिंगवर तक राजपथकी रक्षा करनेके लिये यहांका उपसत्त्व भोग करते हैं ।

धोरादित्य (गं० पु०) शिवपुराणके अनुसार एक तोयका नाम ।

धोराहर (हिं० पु०) जंजी अटारी, धरहरा, 'नुज' ।

धोराहरा—१ अयोध्याके अन्तर्गत फैजाबाद जिलेका एक शहर । यह फैजाबादसे सखनज जानेके रास्तेसे २० मील और घाघरा नदीसे ४ मील दूर पर अवस्थित है । यहां मस्जिद का मन्दिरादि कुछ भी नहीं है, केवल शहरके बाहरमें एक सुन्दर तीरथदार विद्यमान है । यहांके लोगोंका कहना है, कि अयोध्यापति प्रांसक सद्दोसा इसे निर्माण कर गये हैं । धोराहरसे घाघराके दूसरे किनारे एक प्रकाण्ड हमलीका घन है जिसमें महादेवका एक मन्दिर प्रतिष्ठित है । प्रवाद है, कि पहले यहां महादेव प्रभोके भीतर रहते थे । एक समय एक दल अयोध्या-प्राप्ती सन्ध्याही अर्घ्यप्राप्तकी कामनासे महादेव की वाहर निकालनेके लिये लमोन छोड़ने लगे । किन्तु जितना ही वे लमोन छोड़ते जाते उतना ही शिवलिंग

लमोनके भीतर प्रविष्ट होते गये, यह देख कर वे सब सब लरिके सारे बड़ोंमें भाग गये । इस पक्षोक्तिके घटगने स्मरणार्थ दो भक्त भोदागरीने वहां पर पथरकी बंदी देकर प्राकारयुक्त एक शिवमन्दिर बनवा दिया । मन्दिर अभी भग्न दशामें पड़ा है ।

२ अयोध्याके अन्तर्गत खेरो जिलेकी निम्नतम तहसीलका एक परगना । इसके उत्तरमें कौरियावा, पूर्वमें दहावर, दक्षिणमें चौकानदी और पश्चिममें निवा-सन परगना है । भूपरिमाण २६१ वर्ग मील है । मुख्य मानोसे कसोज फतह किये जानेके पहले यह परगना विख्यात मद्योवा-सरदार आहवा और जदलके राज्य युक्त था । पीछे किरोज शाहके समयमें यह गढ़ किन्न-नवाके अन्तर्भुक्त हुआ । इस समय सन्तानः धोरा-निवासे प्राग्नि-वर्गीय राजगण यहां राज्य करते थे । सुगम-सास्त्रालयके अधःपतनके समय यिसेनेने इस पर अपना अधिकार जमाया । कुछ समयके बाद चौहान जाटवंशने उन्हें मार भगाया और धोराहरको अपने अधिकारमें कर लिया । आज भी यह उन्हें के हाथमें है । यहांकी भूमि पल्लवमय है । प्रतिवर्ष सारा परगना चोका और कौरियावा नदीके जलसे डूबा करता है । कृषिकार्यको अवस्था श्लथुष्ट नहीं है । चोका, कौरि-यावा और दहावर गढ़ों की कर-वर्ष भरमें दम साध वाणिज्य व्यवसाय चलता है ।

३ उत्तर परगनेका एक शहर । यह अक्षांश २८° ४०' और देशांश ८१° ४०' पू० सखनजसे ८० मील उत्तर और शाहजहानपुरसे ७३ मील पूर्व चोका नदीके पश्चिमी किनारे अवस्थित है । १८२० ई०के सिपाहो विद्रोहके समय शाहजहानपुर और महमदीसे भगाये जानेके बाद अंगरेजोंने सखनज जानेके रास्ते पर धोराहरके राजाका प्राश्य पाठा था । किन्तु राजाने विद्रोहियोंके भयसे उन्हें प्राश्य देनेसे पक्षोक्त कर दिया था । पीछे इसी पक्ष-राधमें उन्हें प्राश्य दफ्त हुआ और उसका राज्य जप्त कर लिया गया । इस शहरमें एक विश्वविद्यालय और दो स्कूल हैं ।

धोरित (गं० श्लो०) धोरितमेव घण् । अग्रगतिसेद, चोड़की एक जाति, चोड़की पाँच पाँचोंमें एक ।

भौरितक (सं० पु०) भौरित देखो ।
 धोरो (हि० स्त्री०) कपिला, सफेद रंगकी गाय ।
 धोरे (हि० स्त्री० वि०) धोरे देखो ।
 धोरय (सं० लि०) धुर वृद्धि-धुर-ठक । (धुरो यह, ठकी ।
 पा ४४।००।) १ धुर्यह, धुर खींचनेवाला, रय भादि
 खींचनेवाला । (पु०) २ धुर्य ध्रुव, वह बौल जो
 गाड़ी खींचता है ।
 धोस्तक (सं० पु०) धूर्त्तस्य भावः मनोज्ञादित्यात् सुप्र. ।
 -धूर्त्तत्वा गठता ।
 धोस्तक (सं० लि०) धूर्त्तस्य इदं - धूर्त्त-शब्द-प्रत्ययेन
 निष्पन्नः । धूर्त्तका भावः ।
 धोर्त्तय (सं० पु० स्त्री०) धूर्त्तया चपत्तय स्त्रीभ्यो ङङ्
 इति सूत्रेण ङङ् । धूर्त्तका चपत्तय, क्लेशकी समृति ।
 धोर्त्त (सं० स्त्री०) धूर्त्तस्य भावः, कर्म वा ब्रह्मणादि-
 त्वात्-त्यज । १ धूर्त्तत्व, गठता । २ धूर्त्तकर्म, -धोखेका
 काम ।
 धोर्त्त (सं० स्त्री०) धोर-धुर वा श्वत् । चरगतिसंभेद,
 घोड़की एक चाल ।
 धोल (हि० स्त्री०) : १ ययङ्-धया, चाँटा । २ हानिका
 पाघात, तुकनामका धका, टोटा । ३ कानपुर वरलो
 भादिमें, होनेवालो धोर नामकी ईँख । ४ छत्राकरा हरा
 ङङल । (पु०) ५ धोका पेड़, धोरा, बकली । ६ धोराहर,
 धरहरा । (वि०) ७ श्वेत, सजला, सफेद ।
 धोलधकड़ (हि० पु०) लघम, उपद्रव, मारपीट, दंगा ।
 धोलधका (हि० पु०) पाघात, चपेट ।
 धोलधयङ्ग (हि० पु०) १ लघम, उपद्रव, दंगा । २ मार
 पीट, धका मुक्का ।
 धोलधया (हि० पु०) धोलधयङ्ग देखो ।
 धोना (हि० वि०) १ श्वेत, सजला, सफेद । (पु०) २
 धोका पेड़, धोरा । ३ सफेद बौल ।
 धोनाई (हि० स्त्री०) सजलापन, सफेदी ।
 धोनाखेर (हि० पु०) बहाल, बिहार, -पासाम-धोर
 दक्षिण भारतमें जोनेवाला वृक्षकी जातिका एक-पेड़ ।
 इसका दिसका उमसा होता है ।
 धोनागिरि (हि० पु०) धनगिरि देखो ।
 धोनाकर—पञ्जाब प्रदेशके काङ्गड़ा जिलेकी एक गिरि-

माला । यह-गिरियो को हिमालय पर्वतमालाकी एक
 उपगंगा है । इसके एक धोर काङ्गड़ा धोर दूसरी धोर
 चम्बा है । मूल पर्वतयें धो-धोरी धोरकी समतल भूमि-
 से निकल कर १२०० फुट तक ऊँची हो गई है ।
 यह पर्वत पश्चिम दुरारोह है । इसके बगलमें छोटी
 शाखादि नहीं हैं । इसके ऊपरका भाग बहुत पतला है
 इस कारण वर्षा वर्षा जमने नहीं पाता । नीचेका
 अधिलका-प्रदेश देवदारु भादि वृक्षोंसे सुशोभित है ।
 पर्वतके गोचे बहुतसे खेत वृक्ष हैं जिनसे खेत नीचा
 जाता है । सबसे बड़ा श्वर समुद्रतटसे १५८५ फुट ऊँचा
 है धोर उपत्यका प्रदेशकी ऊँचाई लगभग २० फुट
 होगी ।
 धोल—छद्दीसा प्रदेशमें मुगलेश्वर नगरके दक्षिणपूर्व
 एक गण्ड माल । इसका प्रकृत नाम धवलगिरि है । यह
 पचा० २०° १५' उ० धोर देशा० ८५° ५०' पू० मुग-
 लेश्वरसे ७ मील दक्षिणमें अवस्थित है । इसके तीन प्रधान
 श्वर हैं । समूचा पहाड़ कहीं ऊँचा धोर कहीं नीचा
 हो कर प्रायः पाठ मील तक फैला हुआ है । समतलसे
 मीलमिथर पर चढ़ना बहुत कठिन है । इसके धोरी
 धोर प्रायः ८१० मील तक एक भी पर्वत नहीं रहने-
 के कारण इसका दृश्य बहुत रमणीय मालूम पड़ता है ।
 भूतत्वविद्वांसा कहना है, कि यह पहाड़ पाम्नेय शक्तिसे
 उत्पन्न हुआ है । इसका उत्तरस्थ माल सूर्योदय है धोर
 पूर्वका पश्चिम प्रायः २५० फुट ऊँचा है । इस शिखर पर
 एक टूटा फूटा शिवमन्दिर देखनेमें आता है धोर सब
 दूसरे दूसरे श्वर चतने ऊँचे नहीं हैं ।
 मन्दिरके निम्न भागमें चमक लविम गुहाएं पाज भी
 विद्यमान हैं, जिनमेंसे चमक लहस लहस हो गई हैं ।
 समय पर्वत पर दो प्रकाण्ड गिरिगह्वर हैं जिनमेंसे एक
 पत्थरसे भर गया है धोर दूसरा चालोस पथान हाथ तक
 खूब परिष्कार है, किन्तु रास्ता इतना अप्रमत्त धोर चम-
 गादहके मूल तथा बिछासे दुर्गभ्रमण हो गया है कि धोरी
 बढनेका जो नहीं भरता । इस गह्वरके दक्षिण पार्श्वमें
 बहुत कम छोटी बूँदें एक गिरिगिरि हैं ।
 पहाड़के पश्चिमकी धोर कन्दारमें पण्येय धोर महादेव-
 का मन्दिर है । इनके सिवा पर्वतके चर शिखरों पर

तथा इधर ध्वरं धनेक मन्दिरादिके विष्ट देखे जाते हैं ।

इसो धोलगिरि पर्वतसे पत्थर निकाल कर ये सब मन्दिर बनाये गये हैं । कोयल्यागात्र नामक सुष्ठुत् अत्रायणके निकट अमृत्यमा नामक योलिका दक्षिण पूर्व भाग बहुत कुछ विस्तृत है । इस पर्वतमें बौद्धधर्मके प्रचारक स्यातनामा सम्राट् अशोकके अनुयायन लोग दक्षिणस्थ गिरिपुत्रके उत्तरोपायमें स्थलीय हैं । यत्रका पत्थर काट कर प्रायः १५ फुट लम्बा और १० फुट चौड़ा स्थान परिष्कार और चिकना कर दिया गया है । इन चिकने स्थानके चार स्तंभकीमें अशोककी अनुयायन-निधि गहरी पत्थरोंमें खोदी हुई है । पहले स्तंभके पत्थर बड़े हैं मही, किन्तु अच्छे तरह खोदे हुए नहीं हैं । इसीमें बहुतरी लोग अनुमान करते हैं कि यह स्तंभक दूसरे दूसरे स्तंभकीं विभिन्न समयमें खोदा गया होगा । पांच स्तंभके चारों ओर एक गहरी रेखा खींची हुई है । इनके पत्थर सिलसिलेवारसे खोदे हुए हैं ।

अनुयायननिधिके ऊपरमें ही १६ फुट लम्बा और १० फुट चौड़ा एक पत्थर है । इसके पश्चिम पार्श्वमें सुनपुत्र भास्कर-निर्मित हस्तीके समुखादेकी प्रस्तर-मय एक सुन्दर मूर्ति है । पर्वतके एक प्रच्छन्न पत्थरको काट कर यह हस्तिमूर्ति बनाई गई है । पत्थरके तीन ओर ४ इंच चौड़ा और १२ इंच लम्बा गहरा गाला है । आधीक दोनों बगलमें भी छोटी तरहका एक गाला है । फलतः हाथी मूर्तिके सामने ३ फुट स्थानमें गाला नहीं है । इससे अनुमान किया जाता है कि काष्ठनिर्मित पद्मनाभ पादि बीठानेके लिये ये सब नासे प्रयुक्त किये गये होंगे ।

यह हस्तिमूर्ति किसीके उपास्य देवता नहीं है । किन्तु प्रतिवर्ष ब्राह्मण लोग एक बार यहाँ जा कर गौतम देवकी रथ कारनेके लिये उस गजमुकुटमें सिद्धर पर्वत और उसे स्नान कराते हैं ।

अमृत्यमा-गिरिके चारों ओर अस्सु गुहायें अम्बा-धर्ममें पड़ी हैं । कहीं कहीं मन्दिरादिको दीवारोंके चित्र माय देखनेमें पाते हैं । अनुयायन-निधिके ऊपरमें भी एक प्रच्छन्न भवनका भग्नावशेष दृष्टिगत होता है । यही सम्भवतः अनुयायन-निर्मित शैल्य भोगा ।

हस्तिमूर्तिके दक्षिणमें पाँच गुहाएँ हैं जिनमें कोई पक्ष पाण्डव और कोई पक्षगोस्वामो कहते हैं । इन पाँच गुहाओंके अलावा और कितने गुहाओंके चित्र देखनेमें पाते, वे सब काल क्रमसे लुप्त हो गई हैं ।

इन सब गुहाओंके सामने पत्थरके ऊपर धनेक छोटे छोटे गड्ढे देखनेमें पाते हैं । बहुतोंका अनुमान है कि इन सब गड्ढोंमें गुहावासिगण संवत्सरीय काम करते और अनुयायनोक्त पाण्डवदेवित् संवत्सरीय उत्तममें पोषण शुद्धमादि दीजते थे । अश्वगिरिमें भी इन तरहके गड्ढे देखे जाते हैं ।

धोलिके अनुयायन साट देगल गिरिके ओर सुष्ठु-जाइ देगल अशोक-अनुयायनके समान हैं, केवल धोलिके अनुयायनके आदि ओर धर्ममें दो पक्षिक अनुयायन जोड़े हुए हैं, दूसरे किसी अनुयायनमें नहीं हैं ।

इस अनुयायनमें धनेक शैल्य प्रयुक्तिके नामोशेष हैं । वे सब शैल्य प्रायः धोलिके पहाड़के पाम ही अवलम्बित थे, उनमेंसे पक्षिकाय लुप्त हो गये हैं । धोलिके निकट ही कोयल्यागात्र-दीर्घिके अशोक-पाण्डव और मध्यवर्ती दीपमें धनेक भगवत्पू विद्यमान हैं । वे सब मन्दिरादि सम्भवतः अशोकके बहुत पीढ़े बनाये गये थे ।

कोयल्यागात्र पुत्तारिपो भी १२वीं शताब्दीमें कङ्क-श्वर अन्नभोमके समयमें तैयार की गई है, ऐसा प्रवाद है । लो कुङ्क-श्वर, जिस समय धोलिका अनुयायन खोदा गया था उसी समयके लगभग यहाँ एक जनपूर्व सुष्ठु नगर था इसमें तनिक भी सम्यक् नहीं किया जा सकता । बौद्ध, सम्राट् अशोकने जो जनघातारण्यकी मसालेके लिये सिद्धित अनुयायनमालाको निर्जन प्रदेशमें या विदूषवादी हिन्दुओंके मध्य स्थापित किया होगा यह भी प्रतीत नहीं होता ।

धोलिके ओर उदयगिरिमें धनेक बौद्ध संन्यासी रहते थे । ये लोग बहुत अस्वास्थ्य जीवन व्यतीत करते थे । सुतरां अनुमान किया जाता है कि इसके पाम ही धनेक बौद्धगण-परिहृत एक सुष्ठु नगर था । किन्तु धोलिके चारों ओर कहीं भी नगरका अस्वास्थ्य देखनेमें नहीं पाता । बहुतोंका अनुमान है कि वर्तमान सुष्ठुनगर जिस स्थान पर अवलम्बित है वही जगह पहले प्राचीन

भूतं स्थापितं वा शीरं शीलिं सद्यमिहिरिभादि सप्त हस्त
नगरके सप्तकण्ठमें धर्यस्थित ये । शीलि पञ्चाङ्गके समोप ही
शीलि नामक एक सद्यः याम वसा हुआ था । जहाँ आज
भी एक प्राचीन बौद्ध स्तूपका मन्मावशेष विद्यमान है ।
शीलिदे भद्रशासनमें उस स्तूपका नाम 'दुवासवि स्तूप'
लिखा है । शायद उस दुवासवि टोप वा स्तूपमें ही
शीलि नामका नाम पड़ा है । आज कम उस नामको
गढ़घोषि कहते हैं ।

धीली (हिं० खो०) पञ्चाव, चवच, मध्यप्रदेश तथा
मन्मथानमें होनेवाला एक प्रकारका बड़ा पेड़ । इसकी
पत्तियाँ जाड़में झड़ जाती हैं । इसकी लकड़ी नरम
और भूरी होती है तथा पासकी, खिलीनी, खेतीके
समान बनानेके काममें आती है । इसके भीतरका
छिन्नका दवाके काममें पाता है और इससे चमड़ा भी
सिंभाया जाता है ।

धोवकि (सं० पु०) धुवकाया अपत्यं चत्र टक, प्रतिपेदि
वाह्नादित्वात् इव । धुवकाका अपत्य ।

धाकार (सं० पु०) धा भस्मिन् योगः तं करोतीति क्-
चच । १ लोहकारक, लोहार । २ भस्मयत्न-
कारक, धम धम की आवाज करनेवाला ।

धाङ्ग (सं० पु०) धाचि-धच । १ काक, कीड़ा । २
२ मत्स्यमत्सक पक्षिभेद, बगला । ३ मिष्ठुक । ४ तपक ।
(खी०) ५ कक्षोलिका, मोतलचीनी ।

धाङ्गजहा (सं० खी०) धाङ्गस्यैव जहा यस्याः । काक-
जहा, चकसेनी, मघी ।

धाङ्गजम्बु (सं० खी०) धाङ्गमिया जम्बुः । काकजम्बु-
पानोमें पैठा होनेवाला एक नाम ।

धाङ्गतण्डुलफला (सं० खी०) काकजहा, चक-
सेनी, मघी ।

धाङ्गतुण्डी (सं० खी०) धाङ्गस्यैव तुण्डं यस्याः लोप ।
काकनासा सता ।

धाङ्गदन्ती (सं० खी०) धाङ्गस्यैव दन्ता अवयवो यस्याः
लोप । काकतुण्डी सता ।

धाङ्गनखी (सं० खी०) धाङ्गस्यैव नखा यस्याः । काक-
तुण्डी ।

धाङ्गनामा (सं० खी०) काकोतुण्डिका, एव सता ।

धाङ्गनामिनो (सं० खी०) हाजवर ।

धाङ्गनामा (सं० खी०) काकनासा सता ।

धाङ्गपुट (सं० पु०) कोकिल, कीपल ।

धाङ्गमात्री (सं० खी०) काकमात्री तुप, एक प्रकारको
मेल ।

धाङ्गवली (सं० खी०) काकजहा, चकसेनी, मघी ।

धाङ्गादनी (सं० खी०) काकादनी सता ।

ध्माङ्गराति (सं० पु०) पेशक, उद्गृहणी ।

ध्माङ्गी (सं० खी०) काकोसो, मतावरको तरहका एक
प्रकारका कन्द ।

ध्माङ्गोषी (सं० खी०) काकोसो ।

ध्मापन (सं० खी०) ध्मा-विच-भाधे ल्युट् । हुं हण, जलाने
को क्रिया ।

ध्मापित (सं० खी०) ध्मापितः । हुं हित, जला कर धुआँ
किया हुआ ।

ध्यात (सं० खी०) ध्यौ-ञ् । चिन्तित, विचार किया हुआ, ध्यान
किया हुआ ।

ध्याता (हिं० खी०) १ ध्यान करनेवाला । २ विचार
करनेवाला ।

ध्यान (सं० खी०) ध्ये भाधे ल्युट् । १ चिन्ता, सोच
विचार । २ चरितीय वस्तुमें चित्तकी एकाग्रता । ३ वाङ्म-
हन्द्रियोंके प्रयोगके बिना केवल मनमें जानिके क्रिया या
भाव, मानसिक प्रत्यक्ष, चलाकरयमें उपस्थित करनेकी
क्रिया या भाव । ४ भावना, प्रत्यय, विचार, स्थान । ५
चेतनाकी प्रवृत्ति, चेत, स्थान । ६ बोध करनेवाली वृत्ति,
बुद्धि, समझ । ७ धारणा, स्मृति, याद । ८ चित्तकी चारों
ओरसे बड़ा कर किसी एक विषय पर स्थिर करनेको
क्रिया ।

ध्या धातुका ध्ये चिन्ता है । जब तत्त्व द्वारा निश्चला
चिन्ता होता है तभी उसे ध्यान कहते हैं । पर्याप्त जो
चिन्ता किसी एक ध्येय वस्तुमें निश्चल की जाती है, वही
ध्यान कहलाता है । यह ध्यान दो प्रकारका है, सगुण
और निर्गुण । जो चिन्ता मन्त्रपूर्वक की जाती है, यही
सगुण ध्यान कहलाती है । मन्त्रादि भिन्न जो ध्यान
किया जाता है; उसे निर्गुण ध्यान कहते हैं । पातञ्जल-
दर्शनमें ध्यान शब्दका विषय दस प्रकार लिखा है—

“तत्र प्रत्ययेष्वा ध्यानं ।” (योगसूत्र ३२)

जिसमें मनुष्य तोनों प्रकारके दुःखमें निवृत्ति नाम कर मरे, उसका अनुष्ठान करना अग्रम विषय है। योगशास्त्रमें एकमात्र योग हो उसका प्रधान उपाय है। योगानुष्ठान द्वारा पहले धारणा, पीछे ध्यान और उसके बाद समाधि नाम हुआ करती है। योगफलका प्रथम अङ्ग धारणा है, उसके बाद ध्यान है। जब धारणा स्थायी होती है, तब उसके बाद ही धारणा ध्यानमें परिणत हो जाती है। धारणा वस्तुमें यदि चित्तकी एकतानता उत्पन्न हो तो वही ध्यान कहलाती है अर्थात् जिस वस्तुमें तुमने बाह्येन्द्रियको निरोध करके अन्तरिन्द्रियको धारण किया है, उस वस्तुका ज्ञान यदि अन्तरित भावसे वा अविच्छेदसे प्रवाहित हो, तो उस प्रकारका हृत्प्रवाह ध्यान कहलाता है। वही ध्यान जब चरमावस्थाको पहुँच जाता है, तब समाधि कहलाता है। वही ध्यान जब सिर्फ ध्यान वस्तुको ही उद्भासित वा प्रकाशित करता है और अपना स्वरूप अर्थात् मैं ध्यान करता हूँ इत्यादि प्रकारका भेद ज्ञान सुप्त कर देता है, तब उसीको समाधि कहते हैं। ध्यान जब पराकाष्ठा तक पहुँच जाता है, तब सब प्रकारके दुःख जाते रहते हैं।

सब प्रकारकी क्षीयवृत्ति अर्थात् सुख और दुःखादिके प्रकारका परिणाम यह स्थूल शरीर भोग करता है। ये सब क्षीयवृत्ति या केवल ध्यान द्वारा ही दूर हो सकती है। ध्यान द्वारा सुखदुःखादि निराकृत हो जाते हैं, इसका तात्पर्य यह है कि जिससे किसीकी यह न मालूम पड़े कि मानवजन्म ग्रहण कर हम भोग की सुख भोग करते हैं, वही सुख है, वह हम लोगोंने निकट सुख समझा जा सकता है, किन्तु दर्शनकारियों ने सतसे यह दुःखमें गिना जाता है। इसीसे हमने सुखदुःखादि कुछ कर इसका उन्मूलन किया है। परिपुष्ट क्षीय राशिके विनाशके लिये ही नामा प्रकारके उपाय शास्त्रोंमें निर्धारित हुए हैं। क्षीय नामक अविद्यादि जब अर्धमान या प्रथम अवस्थामें रह कर सुख दुःख और मोहादिरूप विविध कार्य वा भोग उत्पन्न करती है, तब ये स्थूल कहलाती हैं। उन स्थूल अवस्थाको नष्ट करने का प्रधान उपाय ध्यान है। अविद्यादिन तक और

अनेक बार ध्यान करनेसे धीरे धीरे सुख दुःख और मोहादि नामक सभी वृत्तिवृत्तियाँ निवृत्त या विलुप्त हो जाती हैं। अतः अविद्या, अस्मिता आदि क्षीयवृत्तियोंके अर्थ अर्थात् सुखदुःखादि रूप विविध अवस्था या विविध परिणाम ये सब ध्याननामक माने गये हैं। जिस प्रकार पहले प्रकाशन, पीछे चारु योग और उपाय प्रदानपूर्वक निर्बन्धन द्वारा वस्तुको मूल दूर होती है, उसी प्रकार पहले क्रियायोग, पीछे ध्यानयोगका अवलम्बन कर चित्तकी मूल दूर करनी चाहिये। प्रकाशन द्वारा वस्तुमूलको निश्चिन्ता नष्ट हो जानेसे पीछे जिस तरह चार संयोगादि द्वारा उसका उन्मूलन सहज है, उसी प्रकार पहले क्रियायोग द्वारा चित्तक्षेत्रको निश्चिन्ता दूर हो जानेसे पीछे ध्यान द्वारा उसका उन्मूलन सहज हो जाता है। क्रियायोग और ध्यानयोग द्वारा सभी वृत्तिक्षेत्र दूर हो जाते हैं वही, लेकिन इसका संस्कार लय नहीं होता। यह संस्कार केवल समाधि भावना द्वारा विनष्ट होता है, अर्थात् चित्तके लय होनेसे ही उसके साथ साथ क्षीय और क्षीयके सभी संस्कार सहजमें विनष्ट हो जाते हैं।

क्रियायोग और ध्यानयोगादि द्वारा क्षीय मूलकी दृष्टि नहीं करनेसे अर्थात् दृष्टव्योजके जैसा निर्मूल या निःशक्ति नहीं करनेसे चिरकाल तक समाप्त नहीं की जा सकती रहना पड़ेगा, अभी सुनि नहीं होगी।

(पाठप्रकरण)

महानिर्वाणतन्त्रमें ध्यानका विषय इस प्रकार लिखा है—

“ध्यानस्तु द्विविधं श्रेष्ठं स्वस्वगतमेवम् ।

अर्हत् तत्र २५ ध्यानमवस्था मनयोगो वरः ॥

अर्हत् सर्वतो ध्यानमिदं विविधं ।

अर्हत् योगनिर्णयः ॥ २५ ॥ ध्यानविधिः ॥

मनसो धारणायां धीयः स्वकीयसिद्धये ।

सुखमयान श्रोत्राय ध्यानमवस्था ॥ २५ ॥

अर्हत्वायाः ध्यानवायाः ध्यानवायाः ध्यानवायाः ॥

ध्यानवायाः ध्यानवायाः ध्यानवायाः ॥

(महानिर्वाणतन्त्र)

अर्हत् एव अर्हत् एव अर्हत् एव अर्हत् एव अर्हत् एव

स्वरूप ध्यान वाक्य 'धोर' मनका शगोचर है। यह ध्यान अत्यन्त कठिन धोर योगियोंका प्रगम्य है तथा बहुत कष्टसे साधित होता है। मनके 'धारणार्थ' धोर शीघ्र शीघ्र अभिलषित सिद्धि तथा सुख ध्यान जाननेके लिए स्वरूप ध्यान अर्थात् स्थूलध्यान कहते हैं। ईश्वर रूप-रहित होनेसे भी गुण धोर क्रियानुसारसे उनके रूपकी कल्पना करनी होगी। किसी मूर्ति का उपलब्ध करके भी चित्तकी एकाग्रता साधित होती है, उसीको स्वरूप ध्यान कहते हैं, ब्रह्मविषयक जो चित्ता को जाती है, उसे ध्यान कहते हैं।

"ब्रह्मप्रतिष्ठा ध्यानं स्वात् पारगा मनसो वृत्तिः।

चरैर्नैकैर्यवस्थानं समाधिब्रह्मणः स्थितिः॥"

(गुरुपुराण ४८. भ०)

मनकी स्थिरताका नाम धारणा धोर ब्रह्माभिव्ययक चित्ताका नाम ध्यान है।

ध्यानशौच (सं० पु०) ध्यानस्थ शौचर् १-तत् १ ध्यान प्रत्यक्ष जो ध्यान करके मान्मस किया जाय।

ध्यानश्रव्य (सं० पु०) विद्यामित्र ब्रह्मके एक करणिका नाम। (हरिवंश २० अ०)

ध्यानमय (सं० त्रि०) ध्यान स्वरूप मय, ध्यानस्वरूप।

ध्यानयोग (सं० पु०) १ वह योग जिसमें ध्यान ही प्रधान भूत हो। २ इन्द्रजालकी एक क्रिया। इसकी द्वारा मनमें किसी प्राकृतिकी कल्पना करके मनुका नाम किया जाता है। ३ ध्यान धोर योग।

ध्यानबदरो—हिमाचलस्थ गङ्गकान्त शब्दके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध गिरमन्दिर। जेरगामके मध्य यह मन्दिर अवस्थित है धोर बदरीनाथका ही एक भग्न समझा जाता है। स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें इसका माहात्म्य लिखा हुआ है।

ध्यानविन्दू पनपद (सं० स्त्री०) अथर्ववेदीय एक उपनिषद्। नारायणमें इसकी उत्पत्ति की है।

ध्यानसिंह—पद्मावत-केसरी महाराज रणजितसिंहके एक विशाल मन्त्री धोर काशीराधिपति गुलाबसिंहके भ्राता।

ध्यानसिंहका जन्म राजपूत-कुलमें काशीरके उत्तर-पूर्वमें जन्मराजवंशमें हुआ था। आपके पिताका नाम था किशोरसिंह। किशोरसिंह स्वयं जन्मके राजा न थे।

यन्किशु राजदेव उपलब्ध भोग कर जीवन-यात्रा निर्वाह करते थे। किशोरसिंह (वा कशोरसिंह) के तीन पुत्र थे—गुलाबसिंह, ध्यानसिंह धोर सुचेतसिंह। ये तीनों भाई बोरप्रकृतिसे पञ्चवसत्यो, कृतनीतिष्ठ धोर चतुर धोर बुद्धिमान् थे। बड़े भाई गुलाबसिंहने अपने प्रतिभाके बल पर सामान्य भवभ्याने काशीरका सिंहासन प्राप्त किया था। गुलाबसिंह देखो।

महाराज रणजितसिंहके जन्म अधिकार करने पर, वहाँके राजवंशोद्योग लगेमगा गये थे। उसी समय गुलाबसिंह अपने सहोदर ध्यानसिंहकी से कर लाहौरके दरबारमें पहुँचे। इन दोनों भाइयोंकी बोरमुक्ति धोर कमनीय कान्तिकी देख कर रणजितसिंहने आदरके साथ उन्हें अपने सभामें स्थान दिया। योही दो दिनोंमें ये महाराजके प्रिय पात्र हो गए धोर महाराजने आदेशानुसार छोटे भाई सुचेतसिंहकी ओर दरबारमें बुला लिया। दिनों दिन इनकी प्रतिभा फैलने लगी। महाराज रणजितसिंह गुलाबसिंहकी चपेला ध्यानसिंह धोर सुचेतसिंह पर अधिक रुचि रखते थे। रणजितसिंहके अन्ततम सभासद रामलालने जब महाराजके आदेशानुसार उपवीत त्याग कर सिखधर्म ग्रहण नहीं किया, तब महाराज उन पर बहुत क्रुद्ध हो गए। रामलालके भाग जानने पर महाराजने उनके भाई सुमासिंहकी, जो सिख बन चुके थे, राजपुराधरके पदसे अलग कर दिया धोर ध्यानसिंहकी उनके पद पर नियुक्त कर अपना क्रोध कुछ शांत किया। कुछ दिन बाद रामलालने अपने भाईकी दुर्गति देख कर सिखधर्म ग्रहण कर लिया जिससे सुमासिंह पर महाराजका क्रोध दूर हो गया। कुछ ही ही, लाहौर-दरबारमें इन तीनों भाइयोंका प्रसार धोर विश्वास दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा। १८२० ई०में इन तीनों भाइयोंने दरबारमें कुछ स्थान अधिकार कर लिया। गुलाबसिंह जन्म धोर काशीर प्रदेशके विद्रोही सुप्रसमानोंकी पराजित कर राज्यमें शान्ति स्थापन करनेके कारण पूज्य प्रसिद्ध हो गए। महाराज रणजितने प्रसन्न हो कर गुलाबसिंहकी जन्म राज्य धोर ध्यानसिंहकी सुमासिंहके स्थान पर प्रधान दर-रसकका पद दे दिया। इसी वर्ष तीनों भ्राता राजाकी

उपाधिसे विभूषित किए गए और ध्यानसिंह 'राजा-र-राज' राजा हिन्दुय राजा बहादुर' की उपाधिसे साथ बजोरके दर पर नियुक्त हुए। कनिष्ठ सुवेतसिंह राजकायेकी कृत्तनीतिसे विपयमें उदासीन रह कर स्वयंसायन रणव्ययनमें माहुरी बीरपुरुष और राजसभामें प्रिय-वद, सुरमिष और गिट्टाचारी समासद रहे।

ध्यानसिंहके पुत्र हीरासिंह पर महाराजका बड़ा इन्तेज था। यहाँ तक कि, उनके चाँसेमि भीभन होने लगी देते थे। हीरासिंहकी भी पिता और पिछ्छोंके साथ 'राजा' की उपाधि प्राप्त हुई थी और अन्य समासदीकी तरह वे भी राज-दरबारमें शामिल होने थे तथा महाराज रणजितसिंहके सामने एक आसन पर बैठते थे।

एक दिन कतोच-राजकुमार पलिवडचन्द्र अपनी दो बहनोंके साथ लाहौर उपस्थित हुए। दोनों राज-कुमारियाँ अनुपम सुन्दरी थीं। ध्यानसिंहके उनके कानोंमें पा कर हीरासिंहके साथ उनके विवाहका प्रस्ताव किया। कतोच-राजवंश उस प्रदेशमें प्रचलित मजानकी दृष्टिसे देखा जाता था, इसलिए महाराजकी महारथसे ध्यानसिंहकी फिलहाल पलिवडचन्द्रका निमित्त पड़ो कार-पत्र भिज जाने पर भी, राजकुमारियोंकी माता हम प्रस्तावसे सहमत न हुई। वे दोनों कन्याओंकी से कर भाग गईं। ध्यानसिंहने बहुत कोशिश की; परन्तु वे किसी तरह भी उक्त राजकुमारियोंको हस्तगत न कर सके। राजमण्डिपी और पलिवडचन्द्र ध्यानसिंहको विद्व-मजानमें पड़ कर राज्य भ्रष्ट हुए और अन्तमें दोनोंकी मृत्यु हो गई। फिर महाराजने स्वयं कचोत-राजकुमारियोंकी वाचना की। किन्तु इस विषयमें उनके भी हताश होना पड़ा और पाँचरकी कतोच-राजकी रचिता लो-को-पन्थ दो कन्याओंकी हस्तगत किया। इनमेंसे एकका विवाह हीरासिंहके साथ होनेवाला था, पर रणजित-सिंह दोनों कुमारियोंको देख कर इतने मोहित हो गये कि उन्होंने दोनोंका पाँचपडच कर डाला। हीरा-सिंहका विवाह एक दूसरी कुमारीके साथ हो गया।

कुछ दिन बाद रणजितसिंहने आदेश दिया कि अब वे राजकीय चिट्ठी पत्रियोंमें राजा ध्यानसिंहकी 'राजा' महान बहादुर' के नामसे उच्चारित किया जायगा।

राजा ध्यानसिंहके इस समय महाराजकी दाहिने बाय थे। ध्यानसिंहकी अनुमतिसे बिना कोई भी महाराजसे जायत कर नहीं सकता था। महाराज पर्येक कार्यमें ध्यान-सिंहकी सुविधि ग्रहण करते थे और राजकीय पुरुष विषयोंमें उनसे माद परामर्श करते थे। ध्यानसिंहके पड़ो दिग्गजोंके साथ लो-जानसे कीमिय करके मानिकका काम बजाते थे और पास रह कर उनके प्रसन्न रहनेकी कोशिश करते थे।

१८३३ ई०में पञ्जाब-केगरी महाराजने मृत्यु-प्रस्थानमें पड़े पड़े समस्त समासद और प्रधान सरदारोंकी बुला कर, उनके सामने खड्गसिंहकी राजटोका दे कर अपने विद्याल साम्राज्यका संघोदर बनाया और ध्यानसिंहकी नवोन राजाका प्रधान मन्त्री बना कर उन पर खड्ग-सिंहकी रक्षाका भार अर्पण किया। महाराज रणजित-सिंहने ध्यानसिंहसे कहा कि "पात्र तत्त थापने अनु-नयके साथ ऐसा संघान और भक्ति रणजीतसे प्रति दिव-माई हो, आजने खड्गसिंहके प्रति भी वैसा ही भाव रखे।" थाप ही खड्गसिंहके शिखर और पश्चिमायक नियुक्त हुए हैं। संघान-स्वरूप उनके एक बहुमुख परि-खट और उसके साथ 'माइर सन्-सुलतानत-उजमा, वेरखाको सामिमी दोलत-उ-सरकार, बजोर-उ-मुसलिन, दस्तूर-उ-मकर राम, सुखतार महमजून' इत्यादि महान-सूचक उपाधियाँ मिली थीं। परन्तु हाथ। महाराजकी मृत्युके बाद ध्यानसिंह खड्गसिंहके प्रति वैसा व्यव-हार न कर सके, जैसा कि उन्होंने महाराजकी मृत्यु-प्रस्थानके मामलेमें पहले ही कर पञ्जीकार किया था। उलट दुराकांक्षा और स्थाय-परताके प्रयीभूत हो अन्तमें थापने अद्वयत पल्लतजताका कार्य किया था। हाँ, इतनी बात जरूर है कि इसमें उनका पडेला ही दोष नहीं था, अविरामादमई खड्गसिंहकी मुहिने दोषसे थापको कुमार्ग पर चलना पड़ा था।

महाराज रणजितसिंहकी मृत्युके बाद ध्यानसिंहने समस्त राणियोंके सामने, महाराजकी वृत्तदेह और योगीताजी की आर्य करके पुनः प्रतिष्ठा की कि वे खड्गसिंहके अनुगत और निरन्तर रहें तथा खड्ग-सिंह और उनके पुत्र जलजितसिंहमें परस्पर महान

स्थापन करेगी। यथासमय रणजितसिंह चिता पर सुलाए गए। प्रतिमाणा-रानियों और बद्धछत्री सेविकाएँ स्नान-प्राप्तिकी इच्छासे रणजितसिंहके साथ चिता पर बैठ गईं। चिता जलने लगी। ध्यानसिंह अपने प्राणायामादाता प्रभुके विधोयसे इतने शोकाकुल हो उठे कि उन्हें अपना जीवन एक भार-सा मालूम होने लगा। आपने दो तीन बार चितामें प्रवेश कर प्राण-विमर्जन करना चाहा, पर विश्व-राज्यका भावी सम्राट् अभी पर निर्भर था, इस लिए उपस्थित व्यक्तियोंने उन्हें बलपूर्वक रोक लिया। ध्यानसिंहने एक शोकसन्तान्द्रय विस्तारो और प्रभु-भक्तको प्रति प्रभुको अत्यन्त द्विगुणित सम्मन की। इस समय आपके मनमें किसी प्रकार भी पाप न था।

रणजितसिंहको स्मृत्युक्त उपरान्त खड्गसिंहने विशाल विश्व-राज्यके सिंहासन पर अधिरोधस्थ किया। परन्तु जिस शौर्य, वीर्य और राजनीति-कुशलताने रणजितकी इस विशाल राज्यके शौर्य-स्थान पर स्थापित किया था, खड्गसिंहने उनमेंसे कोई भी गुण न था। वे पितासे भी अधिक भक्तोत्साही थे और आत्मस्मृति दिन गमाया करते थे। खड्गसिंह यदि पिताके आदेशानुसार ध्यानसिंहके परामर्शसे कार्य करते, तो शायद पञ्चाब्-राज्यकी ऐसी शोचनीय-दशा न होती और न उसका शीघ्र ही होता। परन्तु स्वभावतः दुर्बल-चित्त खड्गसिंह चेतसिंह नामक एक भूक्त सुयामदीके वशीभूत हो गये। वह भूक्त खड्गसिंहका प्रिय वयस्य हो गया और हरवक्ष उसके साथ रहने लगा। खड्गसिंहने चेतसिंहके कुपरागमार्गद्वारा ध्यानसिंह और उनके पुत्र कीरासिंहको भक्तपुरमें प्रवेश करनेसे रोक दिया। इसलिये ध्यानसिंहको राजासे राज्यकी गोपनीय बातोंसे कहनेका अवसर न मिला था। चेतसिंहने सुयामद करके वशीरुक्ता पद प्राप्त कर लिया, किन्तु इससे भी उसे हस्तोप न हुआ-वह ध्यानसिंहकी मारनेके लिए पड़वन्ध रचने लगा। दुष्टने शरीर-रक्षाके लिए दो सैन्यदल नियुक्त किये और स्थिर किया कि किसी दिन सुबह ज्योंही ध्यानसिंह दुर्गमें प्रवेश करेगी, त्योंही उन्हें सैन्यदल उनकी हत्या करेगी। दुर्गके द्वार पर पड़ने लगे सेना नियुक्त थी, वह ध्यानसिंहके प्रति अनु-

रक्त थी, इसलिए उसकी हटा कर चेतसिंहने अपने पण्डितों, तैनात किये। परन्तु यह सब कुछ व्यर्थ हुआ। तीक्ष्णदृष्टि ध्यानसिंहको यह सब हास मालूम हो गया; उन्होंने एक झूठे सफवाह उड़ा दी कि खड्गसिंह पञ्चाब् राज्यकी पर्वतश्रेणियों के कर सिख-सेना और सरदारोंको भगा देनेका सन्देश्य कर रहे हैं। यह सन्वाद समस्त खास-सैन्य और सरदारोंमें फैल जानेसे सब सम्मत् हो उठे। और तो क्या, रानी चांदकुमारी भी धर्मके विरुद्ध हो गई, और ध्यानसिंहने सुतासिंहकी मंत्र मन्वाद् लिख कर शीघ्र ही उन्हें लाओर पानेके लिए पत्र दिया। क्षीपी तीरसे ध्यानसिंह और सिन्धुनाली सरदारगण चेतसिंहकी मारने और खड्गसिंहकी हत्या करनेका पड़वन्ध करने लगे। सुतासिंहके लाओर पड़वने पर एक दिन शेष रात्रिको ध्यानसिंह अपने दोनों माइयों और कुछ सरदारोंके साथ नंगी तलवार हाथमें सिए हुए खड्गसिंहके शयनगृहमें पड़व गये। राक्षसों दो भाइयोंकी काट कर फेंक दिया। खड्गसिंहका जल-बाहक इन भीषण हत्याकारियोंको देख कर भागनेकी कोशिस करने लगा; किन्तु ध्यानसिंहने उसे बहुत दबे बन्दूकसे मार डाला। पड़वन्धकारियोंका दल जब खड्गसिंहके कमरेमें पड़वा, तब चेतसिंह अपने ऊपर विपत्ति आई जान एक चर्धरी गुप्त कोठरीमें छिप गया। दो समस्त राज-शरीर-रक्षक द्वार पर खड़े थे, पहले उन लोगोंने रोक्नेका हवाला किया; पर ध्यानसिंह और उनके दोनों भाइयोंकी देखते ही जमीन पर उबिगार रख कर वे चला मागने लगे। खड्गसिंह इस आकस्मिक विपत्तिमें, निष्कारण्यविमूढ़ हो खड़े रहे। पड़वन्धकारियोंने खड्गसिंहको कैद कर लिया। यहां तक कि यदि उस समय नवनिहाससिंह और रानी चांदकुमारी उपस्थित न होते तो, ये महाराजको हत्या भी कर दासते तो; पाश्चात् नहीं। इसके बाद चेतसिंह की चर्धरी कोठरीमें दूढ़ कर निकाला गया। चेतसिंह वहां दोनों हाथोंमें मज्जी तलवार लिये खड़ा था, परन्तु पकड़े जाने पर यह सबको तरफ रौने भगा। सामने पाने पर ध्यानसिंहने उसे पड़वन्ध और साथ ही एक तोमरो छुरीसे उसका घेटी और काटा। पानगी चेतसिंह-

जो इस तरह जीवन-लोका समाप्त हुई, ध्यानसिंहका कोप इतने पर भी शांत न हुआ, 'उन्हीने चेतसिंहके घरवालोंको भी यही जानत थी। १८३० ईमें ८ पक्ष-बरको यह भीषण हत्याकाण्ड संघटित हुआ और यहीसे भविष्यमें भीषणतर हत्याकाण्ड होनेका सुवार्ता हुआ।

पक्षसिंहको कैदमें रखा गया और नवनिहाससिंह सिंहासिंहासन पर पधिरित हुए। नवनिहाससिंह तेजस्वी, तोख्खुरि और पक्षद्वारी थे। ध्यानसिंह सम्भवतः इन पर विमोह न कर सके थे। कुछ भी हो, ईश्वरकी विदुष्यतासे जिस दिन बन्दी छड़गसिंहमें भग्न एवं हताश-हृदयसे कारागारमें प्राप्रत्याग किया, उसी दिन तोखद्वारका एक पत्थर जिसका कर नव निहाससिंहके मस्तक पर पड़ा, जिससे उन्हें बड़ी भारी चोट पहुँची। साथ ही गुलाबसिंहके मिय पुत्रको भी उसी दिन मृत्यु हो गई। मन्त्री ध्यानसिंह उसी समय नवनिहाससिंहको पालकीमें लिटा कर दुर्गमें ले गये। दुर्गका द्वार बन्द हो गया। केवल मन्त्री ध्यानसिंहके सिवा और किसीकी भी वहाँ जानेका अधिकार नहीं था। नवनिहाससिंहको माता चांदकुमारीने बहुत चतुर्नय-विनय किया, पर उन्हें किसी तरह भी पुत्रके पास जानेकी अनुमति न मिली। परिवारक और सरदारोंको यह कह कर कि 'राजकुमार पक्षे है, विद्यान कर रहे हैं' विदा कर दिया गया। कुछ समय बाद ध्यानसिंहने रानी चांदकुमारीसे कहा—'बापके पुत्रके प्राप निकल चुके। यदि बाप चाहें तो रानी हो सकती हैं, मैं बापकी यमासाधा सहायता पहुँचा सकता हूँ।' बहूतोंने चतुर्मान किया है कि ध्यानसिंह राजकुमारके इस हत्याकाण्डमें लिप्त थे। बहूतोंका यह कहना है, कि तोखद्वारके पत्थरका गिरना, इसमें भी सम्भव-जाताथीका हाथ था। कुछ भी हो, ध्यानसिंहका व्यवहार सन्देह-परिचित न होने पर भी, उनके विरुद्ध कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। कारण उस विपक्षमें ध्यानसिंहका मिय अनुप्राप्य माया गया था और स्वयं ध्यानसिंहके हाथमें भी कूड़-चोट पहुँची।

नवनिहाससिंहके बाद रानी चांदकुमारी सिंहासन पर बैठीं। पर ध्यानसिंहने देखा कि रानी भी उनके

घोर विरुद्ध हैं, यथा क्षमता प्राप्त करने पर उनका घोर उन्मत्त यंत्रिणिका उच्छेद करनेको चेष्टा प्रयत्न करेंगी; इसलिए वे भी चांदकुमारीके समक्षमें श्री-ईश्वर प्रतिष्ठाका पालन न कर सके। रणजितसिंहको रक्षित स्त्रीके गर्भसे गिरसिंह नामक एक पुत्र हुआ था; ध्यानसिंह उन्हें ही सिंहासन पर बिठानेके लिये मरदासको उन्मत्त करने लगे। आपने सिध-गेनाको यह बात मन्त्री भाति समझा दी कि स्त्रीके शासनमें उनका कल्याण नहीं है और न किसीकी मन्त्रात्मना को मिह हो सकती है।

रानी चांदकुमारी भी मालूम पड़ती है उन्मत्त पक्षसिंहसिन्धुनवाला और चम्पाग सरदारोंको बुलवा भिजा। रानीका पक्ष ही प्रबल रहा।

रानीने सबसे कहा कि 'नवनिहाससिंहको पक्षे गर्भवती हैं, मैं गर्भस्थ मियके प्रतिनिधिरूप राजत्व कर रही हूँ'। हाँ, यदि वह जन्मा प्रसव करें; तो फिर मैं हीरासिंहको इसका पक्ष कर लूँगी; महराज रणजितसिंह भी हीरासिंहको पुत्रयत्न मानते थे। इस बात पर सारा भगड़ा निश्चय गया। ध्यानसिंह रानीके रूप प्रत्यक्ष सरल व्यवहारसे चमूट हुए। परन्तु दुर्दान्त गिरसिंह बलपूर्वक साम्राज्य लेनेकी चेष्टा करने लगे। ध्यानसिंह इन लोकों पर बीमारीका बहाना बना कर लाहौरसे लखु बसे गये। रानीने पक्षसिंहसिन्धुनवाला को प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त किया।

गुलाबसिंह मोका देव का रानीके साथ मिल गये। मृतमोतिवत् जम्बूभाटगण भी कार्यसिंघोंको चतुरता दिखाना करते थे। जो पक्ष जया-हीना, उसी पक्षमें ला कर मिल जाते थे।

राज्ञी ध्यानसिंह जम्बूमें रह कर किसी तीर्थे लाहौरकी सब खबरें मंगाने लगीं। ध्यानसिंहने ध्यानसेना और सरदारोंसे ऐसी पाया और स्वीकारता प्राप्त कर ली कि ज्यों ही वे घोररणजितसिंहके पुत्र गिरसिंह लाहौरके द्वार पर उपस्थित होंगे, ज्यों ही वे उनके साथ आ मिलेंगे।

इधर गिरसिंह ध्यानसिंहके परामर्शानुसार १७७७ ईसा से कर मुंकरासे लाहौरको घोर पक्ष दिने परन्तु

उस समय ध्यानसिंह ने प्रत्यक्ष में महारानी को नही दी। जवाहलाल ने नामक एक सरदार इस मौके पर गिरसिंह की कृपा पाने को आशा से सेना सहित भाकर उनमें मिल गये।

गिरसिंह ने लाहोर-दरवाजे पर उपस्थित होते ही बहुतसे खालसा सरदार और पक्ष-सरदार आ कर उनके साथ हो लिये। गिरसिंह ने नगरमें प्रवेश किया। प्रगणित सन्तस सेनाने लाहोर लूट लिया। गुलाबसिंह बाद रानी के पक्ष में लोग डोगरा-सेना की सहायता से दुर्ग की रक्षा करने लगे। दुर्ग में प्रत्यक्ष व्यवहार सेना थी, तथापि उसने ५ दिन तक सारी सिख-सेना की परास्त और मर्दा क्षतिग्रस्त कर रखा था। इस अवरोध के समय सिख-सेनाने बढ़ा हो छुपित और श्रम से व्यवहार किया था।

ध्यानसिंह इस समय लाहोर को सोमार्ने आ पहुँचे थे। उनके आगमन का स्वाद मिलते ही गिरसिंह ने युद्ध आगत कर दिया और गुलाबसिंह को सन्धिके लिए कहला भेजा। गुलाबसिंह ने कहा कि ध्यानसिंह के बिना पाँचे सन्धिकी कोई बात नहीं हो सकती। गिरसिंह ने शहर के द्वार पर जा कर ध्यानसिंह की अभ्यर्थना की। समस्त सेना उद्योत्तर से ध्यानसिंह का अभिवादन किया। ध्यानसिंह की आदेशानुसार युद्ध बन्द रहा।

राजा हरिसिंह महारानी को और से सन्धिके लिए गिरसिंह के पास भेजी गये। इन शर्तों पर सन्धि हुई—
“चांदकुमारों गिरसिंह को सिंहासन प्रदान करेंगे, उसकी प्रतिदान-स्वरूप गिरसिंह महारानी को ८ लाख रुपये पाँचों को एक जागीर देंगे, गुलाबसिंह रानी की तरफ से उस जागीर का आगमन करेंगे। गिरसिंह चांदकुमारों के साथ विवाह करने की आशा त्याग देंगे और डोगरा-सेना दुर्ग से निर्बिघ्न चली जा सकेगी।”

राजा गुलाबसिंह रक्षा करने के बदले में चांदकुमारों के समस्त मर्दान्तादि हर्षण कर चलते बने। रानी लाहोर में अपने पुत्र के बनावे हुए महल में रहने लगी।

१८४१ ई. में १८ जनवरी को गिरसिंह ने राज-सिंहासन पर अधीरोहण किया। ध्यानसिंह फिर बजीर हो गए और उन्हें एक बहुमुख्य खिस्त मिली। कैनिडीज

१) मासिक वेतन बढ़ाया गया। सिन्धुनवासे सरदारी-की सारा सम्पत्ति जप्त कर ली गई और पतरसिंह सिन्धुनवासा और उनके भाई सहजामिंह की बन्दी कर-ने का परवाना निकला। पतरसिंह और उनके भतीजे अजितसिंह काही भाग गये। सहजामिंह पकड़े गये और लाहोर में कैद रहे।

गिरसिंह प्रत्यक्ष इन्द्रियासक्त और भामोदप्रिय थे, इसलिए वे राज-कार्य का समस्त भार विचक्षण मन्त्रा ध्यानसिंह पर छोड़ कर स्वयं भामोद प्रमोद में मग्न रहने लगे। वास्तव में ध्यानसिंह ही राज्य-प्राप्त करने लगे। यह सुचतुर ध्यानसिंह ने देखा कि उनकी इस अप्रतिहत समता का एक प्रतिद्वन्द्वी है। जवाहलाल गिरसिंह के विद्यापरायण थे, उन्होंने युद्ध में गिरसिंह की विशेष सहायता पहुँचाई थी तथा लाहोर अवरोध के समय गिरसिंह के मना करने पर भी अपनी सेना को युद्ध में नियोजित किया था। बाद में ध्यानसिंह और गिरसिंह ने स्वयं आ कर पर्य प्रदान पूर्वक युद्ध बन्द कराया था। जवाहलाल के मन में मस्तिष्क पाने की सहाया यह भी रह सकती है, इस प्रकार अनुमान कर ध्यानसिंह ने कृटिल-मन्त्रणा द्वारा गिरसिंह की जवाहलाला को धरत, बना दिया। गिरसिंह भी ध्यानसिंह की बातों में आ गये और सामान्य चरपाध पर प्रभुभक्त भवाला-सिंह की कैद में डाल दिया। मेवारा कैद में पड़ा ही मर गया। इस तरह ध्यानसिंह ने अपनी उचतिका मार्ग निष्कण्टक किया।

यह ध्यानसिंह चांदकुमारों के छोड़े पड़े। चांद-कुमारों के साथ जो सन्धि हुई थी, उसमें यद्यपि यह शर्त थी कि गिरसिंह चांदकुमारों के साथ विवाह करने को आशा त्याग देंगे, किन्तु तथापि वे एक बार भी उस आशा को त्याग न सके थे। “बादर-चन्द्राज” प्रयाग अनुसार उनकी पाणिपट्टणाया एक दिन पूर्ण भी हो सकती थी, किन्तु गुलाबसिंह प्रतिदिन रानी को सम-भाषा करते थे कि मिलन-प्राप्त ना केवल गिरसिंह का कीयल है, बल्कि तरंग बयम करके प्रायः गट धरना की उनका उद्देश्य है; इसलिए रानी चांदकुमारों पवने बचाव के लिए पुनः महल में आ कर रहने लगीं। इस

व्यवहारमें महाराज गिरमिंह सन्तानाराम हो गये और
निम पर ध्यानसिंहने चायमें यी डाल दिया कि रानो
चांदकुमारो महाराजकी रक्षितकी सजात समान
गर्दी समझतीं। ये और पपनेकी कष्टेयावशसे मरदार
जयमलकी कन्या-साम पपने पामिनात्यकी पक्षी करती
हैं। फिर क्या था, महाराज गिरमिंह चांदकुमारोके
पुत्रने प्याये मन गये और पद्वय्य रचने लगे। रानोके
कोतदामियोंकी रूपये दे कर वधमें कर लिया और उनमे
रानोको मार डालेनेके लिये कह कर पाप दरबारके
साथ बजोरावाद चल दिये। पिशाचियोंने एक दिन
(१८५२ ई. में) योगाक बदलते समय मयूक पर बैठे
मार कर उन्हें मार डाला। ध्यानसिंहने उन पिशाचियों-
को पकड़वा गुनाया और कोतबानीमें जन साधारणके
समक्ष उनके पाप और नाक कान काटवा दिये। दामियों-
की जिह्वा नहीं छेदी गई थी। इसलिये उन लोगोंने
सबके सामने सत्य बात कह दी। परन्तु साधारण
जनताने उस कथनकी उन्मादका प्रभाव समझ लिया।
गिरमिंह और गुलाबसिंहकी बड़ी खुशी हुई। गिर-
मिंहका कपड़क दूर हो गया और गुलाबसिंहकी
मन्दूकमें रकड़े हुए मणिरत्नादि प्रापि न देने पड़े।

इसो समय काबुलके युवमें सिप-येनाकी वरायतामे
लप प्राप्त कर पट्टेजोने किरोनपुरमें एक सेना-परि-
दग्गनका भेजा किया। उस भेजेमें युवराज प्रतापसिंह
और मनो ध्यानसिंह उपस्थित थे।

सिम्लवाले सरदारोंके रक्षितसिंहके सजातीय
थे। ये गिरमिंह जैसे रक्षितके गर्मजातपुत्रके शासनमें
रहना किसी तरह भी पसन्द नहीं करते थे। ध्यानसिंह
उनके प्रहरीपक्ष थे, इसलिये उनमें भी महा घमस्फुट थी।

सिम्लवाले सरदारोंने लक्ष्मणसिंहकी कारागृह
किया और भागे हुए पतरमिंह एवं पजितसिंहकी दूर
दूरमें गुनाया। उनकी जयकी हुई। सम्पत्ति और
उपाधियां उन्हें पुनः प्रदान की गईं। इस पर ध्यानसिंह
राजाने हँस करमें लगे। सिम्लवाले सरदारोंका भी
उन्मादका उनकी उपेक्षा कर कार्य करने लगे। महाराज
की पक्ष उन्नी विषयमें उनसे सन्तुष्ट नहीं मानते थे।
ध्यानसिंहका हृदय विषमिल हो गया। उन्होंने जय

से ज्योत्स्नाता गुलाबसिंहकी बुला भेजा। उनके जाने
पर दोनोने परामर्श करके पपना मन्त्रालय मार्ग चुन
लिया। इसी समयमें ध्यानसिंह रक्षितसिंहके पुत्र
पुत्र शासक दिलोपसिंह पर खेद करने लगे। दिलोपकी
उम्र इस समय कुल १० वर्षकी थी। दिलोपके दोहो।
महाराज गिरमिंह भी ध्यानसिंहके सद्गमकी समझ गये
और उन्हें दमनमें रखनेके लिये नाम उपाधिसिं काम
लेने लगे। परन्तु सुकोमलो बुद्धिजीवी ध्यानसिंह गिरमिंह
जैसे मनुष्यके कोमलमें पानेवाले व्यक्ति न थे, वे सतर्कता
के साथ चलने लगे।

सिम्लवाले सरदारोंके राज्यमें प्रचलन प्रतिभावाली
हो जाने पर भी अब तक वे गिरमिंहकी सुझाव न होने
के कारण घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। ध्यानसिंहने,
घमता होने पर भी उनसे पुनः प्रतिष्ठासामके विषयमें
उत्तरेप नहीं किया, वरन् राजकी अभिप्राय मागनेमें
ही प्रयत्न किया था, इस बातकी सरदारोंका समझने
थे, किन्तु तथापि वे उनके प्रति विद्वेषभावकी ल स्वाग
रहे थे। मनो और महाराजमें मनोमानिय बन रहा
है, यह देख कर वे भी इस समय 'कण्टकेनैव कण्टक-
वत्' दोनोके उच्छेदके लिये पद्वय्य कर रहे थे।
महाराज पर इस समय सरदारोंका घण्ट प्रभाव पड़
चुका था, इसलिये महाराजके प्रति किसी तरहका
सम्मान न दियाते थे। पजितसिंह मायः महाराजके
सुँह पर उनकी जान से का भय दिखाया करते थे।
महाराज ज्युवर्गदारा मतके रहने पर भी इन बातोंको
परमाह न करते थे। सिम्लवाले सरदारोंने पद्वय्य
ठीक करके महाराजको, पपनी पूर्वविधवाताकी
उत्प्रेक्ष करके हुए समझा दिया कि वे शास्त्रावध मूल
हैं, उनके लिये राज्यके विरह खड़ा होना बिलकुल
असम्भव है। ध्यानसिंहके विषयमें जान भर दिये कि
"वे भीतर भीतर महाराजको मार कर कुमार दिलोप-
सिंहकी सिंहासन पर बिठानेकी कोशिश कर रहे हैं।
यहाँ तक कि, हम लोगोंकी पुरस्कारका काम दे कर
महाराजके प्राणनाशके लिये निवृत्त किया जा।" गिर-
मिंह और और साक्षी होने पर भी, इस संवादसे
विचलित हो गये; उन्नी पपना तबदा सरदारोंके

हाथमें दे दो और कहा कि "यह बख्त है और यह मेरी गरदन है, यदि आप लोग ध्यानसिंह द्वारा पादित हुए हैं, तो जो, मस्तक छेद लो। किन्तु एक बात याद रखियेगा, जो व्यक्ति भोजन आप लोगोंकी यन्त्रकी तरह चला रहा है, वही व्यक्ति प्रयोगानुसार कभी आपके भी प्राण ले सकता है।" महाराजने इस व्यवहारसे सरदारगण चौंक गये, पर विचलित न हुए; कहने लगे—“ऐसे गृहशत्रु मन्त्रीकी इसी वस्तु मार डालना चाहिए।” महाराजने भी सन लोगोंकी ऐकान्तिकता पर सुप्त हो कर सभी वस्तु मन्त्रीकी मार डालनेका स्वीकार पत्र लिख कर दस्तखत कर दिये। सहनासिंह और उनके भाईने, इस वधादेशकी ले कर महाराजसे कहा—“किलहाल हम लोग अपनी जागीर राजा-सौंसोकी सौट लायने और वहासे एक दस स्राहवी सेना ले कर हजारी पहुँचेंगे। महाराज उस स्थान पर उपस्थित हो कर हम लोगोंकी क्रीडारम्भका आदेश देंगे सेना बन्दूक पादि ले कर तैयार रहेंगे, आदेश पाते ही वह सब मातमें ध्यानसिंह और उनके पुत्र औरसिंहकी घेर लेंगे।”



ध्यानसिंह

सहनासिंह और भरतसिंहने इस बातकीसे ध्यानसिंहका वधादेश पत्र जप्तगल किया। और महाराजके पाससे बिदा हो कर ध्यानसिंहके पास पहुँचे। पहले जाना प्रसारकी भूमिका बौधो, फिर उन्हें महाराजका

आदेश पत्र दिखसाया। ध्यानसिंह बड़े चतुर थे, पहले उन्होंने इस पर विश्वास नहीं किया; कहा कि कितना भी मनोमालिन्य क्यों न हो, मेरे ही भयप्रदसे वधित शेरसिंह इस प्रकारका आदेश कदापि नहीं दे सकते; विवेकतः इसमें महाराजकी सुहर नहीं है।

सहनासिंहने यह सुन कर किसी तरहसे महाराजकी सुहर करा लाये और फिर आ कर ध्यानसिंहकी दिखाया। ध्यानसिंह मुद्राहित आदेश पत्रकी देख कर मयमुच हो विचलित हो गये। सिम्बलवाले सरदारोंने अवर पड़ा देख, ठीक पूर्वोक्त कृतवाक्य कीमलसे प्रीति और विश्वास दिला कर ध्यानसिंहसे महाराजके वधादेश पत्र पर दस्तखत करा लिये। फिर सरदारोंने मन्त्रीके साथ परामर्श कर स्थिर किया कि ध्यानसिंह-हत्याके लिए निर्धारित दिनकी राजप्रासादमें उपयुक्त सेना रखनेका बन्दोबस्त कर रखेंगे। परवर्ती कोई क्षमादार मासका प्रथम दिन ही इस भयानक कार्यके लिए उपयुक्त दिन निर्धारित हुआ।

सरदारगण फिर राजा-सौंसोकी सौट गये। ध्यानसिंहने रोगका बहाना कर दरबारमें जाना बन्द कर दिया।

एक दिन ध्यानसिंह, दीवान दीननाथ और राजास्राहक भुपसिंहकी ले कर महाराज शेरसिंह क्रीडागुह देखनेके लिए हजारी नामक स्थानमें पहुँचे। परामर्शानुसार भजितसिंहने वहाँ अपनी दल सहित उपस्थित हो कर एक साथ बन्दूकका शब्द कर अपनी उपस्थिति सूचित की।

यहाँ शेरसिंह राजप्रासादके द्वारके द्वारीकी बैठकमें बैठे हुए कुछ पहलवानोंकी मस्तकौड़ा देखने लगे। इसी समय भजितसिंहने आ कर दल सहित उपस्थिति सूचित की। राजादेशसे दीवान दीननाथने तत्पश्चात् उन लोगोंकी राजकीय सेनामें शामिल कर लिया। इसी समय भजितसिंहने एक नई बन्दूक निकाल कर महाराजसे कहा—“यह मेने १४०० रु०में खरीदी है। पर तीन हजारसे कममें किसीको दूँगा नहीं।” यह कहते हुए भजितने महाराजकी दिखानेके बहाने बन्दूक बढ़ाई और महाराजके छाती पर मार दी। दुर्भाग्यवश बन्दूकके सगते श्री-शेरसिंह “देखो दगा!” कहते हुए

जमीन पर गिर पड़े और उसी समय उसकी मृत्यु हो गई। चरितचित्र ने उसी समय तनवारने से शासक का मिरा भट्टने पसल कर दिया। बुधमिह वन्दुकका गन्ट चुन कर उदित हो कर वयो हो धमरने चुने, जो की उन्हे नि चरितके हाथमें घूमने तर तनवार देख लने दो पगु-चरो की काट डाला और फिर चरित पर पाकमय किया, किन्तु तनवार टूट जानेसे ये गोप हो चरितके पादमियों द्वारा मारे गये। चरितको मेना राज-भयों पर पाकमय करतो हुई मासादेके भीतर मृग पड़ो। लहनामिह गोरमिहने रीते हुए धारद वयेंके पुत्र प्रतापमिह की मारनेके लिए आने पड़े। धिचारा प्रतापमिह उस दिन यज्ञके उपलक्षमें उद्यानमें तुलापुत्र हो कर ब्राह्मणकी कर्पादि दाग कर रहा था। लहनामिहने जा कर उसे पकड़ लिया; शासकने पिता काट कर उसने प्रायमिच्छा मांगी, किन्तु निर्दय लहनामिहने उसको बात पर ध्यान न देते हुए उसी समय उसका मिर काट डाला।

चरितको येनामें १०० अगारोही और २५०० यदाति धि। चरित येना-सहित नगरको तरफ चल दिये। मार्गमें धानमिहसे साक्षात् हो गया। चरितने सब काम कह सुनाया। धानमिहने बातक प्रतापकी कथा पर बड़ा रोद प्रकट किया और सरदारोंकी निन्दा को। चरितने धानमिहकी अपने साथ दुर्गकी ओट चलनेके लिए कहते। मन्देह होने पर भी धानमिहकी अन्य उपाय न देख लने सोच जाना पड़ा। प्रथम द्वार द्वार हो जाने पर द्वितीय द्वारमें धानमिहके अनुचरको रोका गया, किन्तु चरित मातुचर जिना-किनी बाधाके भीतर चले गये। धानमिह भीतर ही भीतर पचका अभ्यस गये, पर ऊपरसे कुछ कह न सके। आने-जव दुर्ग प्राकारमें मेना देखी, तब लनेमें पूछा—“ये लोग कौन हैं?”

चरितमिहने पीड़ा पांसेमें ला कर धानमिहका काम पकड़ लिया और कहा—“यह राजा कीन कीन। धानमिहने भी चरितचित्त भावसे कहा—“दिकोव समान उपयुक्त और कीन है।”

इस पर चरितने कहा—“दिकोव राजा और तुम

मन्त्रो; फिर हम लोगोंने इतना कष्ट-को उठाया है” धानमिह इस व्यवहारसे व्यक्तित्व हो कर बट रहे थे, कि इतनेमें सब भाई युद्धसुचमिहने कहा—“बातावे तो यही पच्छा है कि काम करके दिवसा हो, कि त्रिप रात्रो में मिरमिहको मीजा गया है, मन्त्रो महागणको भी उसी रात्रोमें आने दो। फिर तुम्हारा राक्षस मार है।”

यह सुन कर चरितने हमारा किया। हमारे के साथ ही रोहिसे एक पादमीने गोको मार कर धानमिहका काम तमाम कर डाला। चरित उद्यमित येनामें धानमिहकी देहकी टुकड़े टुकड़े कर अपनी रक्तपात-उच्छा-को कुछ कुछ दस्त किया। धानमिहके कुछ पंजाको और एक सुभलमान अनुचरने कौगलमें दुर्गमें प्रवेश कर गत हो पर पाकमय किया; पर ये सभी मारे गये। धानमिह और इन लोगोंको नामों एक तोपके गड़हनें डाल दी गईं। अन्य विवरण हरिदासधनु उद्गमें देखो।

धानावधार—बोधवाञ्छित देवभेद, मोह माञ्जरी अनुसार एक देवताका नाम।

धानिक (सं० त्रि०) धानेन निर्हता ठक। धानसाधा, जिसको मानि धान द्वारा हो।

धानिन् (सं० त्रि०) धान-रति। धानबुद्ध समागिह। धानिबुद्ध-धानयोगकारी बुद्ध। इनकी संख्या कीई १ या और कीई १० से भी अधिक बताते हैं। ये अगरीही हैं। धानिबोधिसत्व—धानि-बुद्धके पुत्र, ये भी अगरीही हैं। धानो (वि० दि०) धानिन्, देखो।

धाम (सं० क्त०) धायेन पशुभिरिति धा-वित्तने बाहुलकात् मञ्। १ दमनकडप, दोना। २ गम्यदप, एक प्रकारकी सुगन्धित धाम (त्रि०) ३ ब्रह्मल, भावना। धामक (सं० क्त०) १ रोहिषदप, रोहिष धाम। २ कस्यप, एक सुगन्धदार धाम, बोधिया। धामन् (सं० पु०) धा-मचिन् (मामन् धीमन् शोभन् इजति। क्व० शार०) १ परिमात्र, अन्दाज। २ क्षेत्र। ३ चिन्ता, विचार, कयाल।

धा विनाय—रात्रभेद, एक रात्राका नाम। (१३ १०२२) धोय (सं० त्रि०) धा-यत्। १ धानत, धानकरने, योग। २ जिसका ध्यान किया जाय, जो ध्यानका विषय हो। धनीमन् (सं० त्रि०) धन गतो यन् सर्वप्राप्य इति भाष-

हन् प्रत्ययः, ततो मनुष्यः। प्रातिपदिकस्याश्च दात्तत्वं।
शीघ्रगतिशुक्रः, जिसकी चाल तेज हो।

प्राचा (स० स्त्री०) प्राचा, दास।

प्राचा—वर्षा के काठियावाड़ पोलिटिकल एजिएण्ट के
अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह पश्चात् २२° ३३' से
२३° १३' स० और देशा० ७१° ३१' ४८' पू० अक्षमंदा-
बाद से ७५ मील पश्चिम में अवस्थित है। भूपरिमाण
११५६ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ७०८८० है। इसमें
दो शहर और १२२ ग्राम लगते हैं।

यहांका भूभाग असमतल है, बीच बीचमें छोटे छोटे
सीते बहते हैं। छोटे छोटे पहाड़ जो इसके चारों तरफ
घेरे हुए हैं, उनसे व्यवहार करने योग्य पत्थरकी चाम-
दनी होती है। यह स्थान यौद्धप्रधान होने पर भी
स्वास्थ्यकार है। उत्कृष्ट सर्वांगमनो यहाँ अधिक नहीं
है। प्रधानतः कपास और साधारण धनाजकी खेती
होती है। नमक, ताँबा, पौलक बरतन, पत्थरका
जाता, देशी कपड़ा और मट्टीका बरतन ही यहाँका
प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। धोलेरा नगर ही इस राज्यका
निकाटवर्ती बन्दर है।

यहाँकी सरदार १८०७ ई० में ब्रिटिश गवर्नमेंण्ट के
साथ सम्मिलित हो गये हैं। प्रथम जैषीके करद राज्या-
की नाई राजकीय सभी कामोंमें उनका अधिकार है।
उनकी उपाधि है, राजा साहब। वे राजपूत जातिकी
आत्मा जैषीके अन्तर्गत हैं। ब्रिटिश गवर्नमेंण्ट से उन्हें
११ मान्यता दी मिलती है। राज्यको चामदनी पाँच लाख
रुपयेको है। वे ब्रिटिश गवर्नमेंण्ट और जूनागढ़ के गवा-
की वार्षिक ४४६०० रु० कर देते आ रहे हैं। उनके
अधीन २१५० सैन्य हैं। प्रजाका जीवन मरण उनके
अच्छाधीन है।

वर्तमान राजवंशके पूर्व पुराण उत्तर प्रदेशसे बहुत
प्राचीनकालमें काठियावाड़में आ गये थे। उन्होंने पहले
अक्षमदाबाद जिलेके अधीन प्रांतों नामक स्थानमें, पीछे
हलवाड़में और अन्तमें वर्तमान स्थानमें आ कर, अपना
राज्य स्थापन किया। गुजरातके सुसलमान शासककर्ताओं
के समयमें इस राज्यका अधिकार उनके अधिकार भुक्त
हुआ। बाद सन्नाट और जीवके समयमें सुहस्रदनगर वा

हलवाड़ उपविभाग आलाओको दे दिया गया। निमरो,
बहुवान, चूरा, सायना और याना लखनर नामक जो
वर्ष एक छोटे छोटे राज्य हैं, वे हमो-धाहद्रा राज्यकी
शाखा हैं। बांकादेरके राजगण भी अनेकों इसी वंशकी
एक प्रति प्राचोन शाखासे उत्पन्न बतलाते हैं। राज्य भर-
में ३८ स्कूल, ४ कारागार, १ अस्पताल, और २
चिकित्सालय हैं।

२ उक्त राज्यका एक प्रधान नगर। यह पश्चात् २२°
५८' उत्तर और देशा० ७१° ३१' पू० अक्षमंदाबाद से
७५ मील पश्चिम में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग
१४००० है। नगरकी चारों ओर खाई है। यहाँ केवल
एक अस्पताल है।

भाजि (स० स्त्री०) गति, चाल।

भाजि (स० पु०) भाड़, हन् (सर्वव्यापक हन्। उग,
४।११०) उपपद्यमान, फूलोंका चुनना।

भाका—गुजरात प्रदेशमें हलाल मानकी अन्तर्गत एक
छोटा राज्य। इसके अधीन १२ ग्राम हैं जिनमें पुनः ८
करद सामन्त रहते हैं। यहाँकी आय प्रायः ६००० रु०
की है।

भूति (स० स्त्री०) भू गतिरर्थे योरिति धातुः। व्य-
मानक्या। (ऋ० ७।६।६)

भूपद—भूपदसे उत्पन्न, संगीत स्वरविशेष। इसका संस्कृत
नाम भूवक है। इसके चार मेल या तुक होते हैं—
अस्थायी, अन्तरा, सञ्चार और आभोग। किसी किसी
भूपदमें मिलातुक नमक और भो एक तुक है। यह
केवल गायकी के लिये निर्दिष्ट है। (संगीतरत्नाकर)

जिस गीत द्वारा देवताओंको कोला, राजाओंका
यह अथवा प्रबल युद्धादिका विवरण वर्णित हो, जिसमें
स्वर, ताल, राग-गणितोंकी प्रगाढ़ता गद्यपद्यय चंद्र
और रचना आभोग्य अच्छी तरह विद्यमान हो, उन सब
गीतोंकी संगीत-शास्त्रविद पण्डितोंने भूपद बतलाया
है। इसमें यद्यपि दृढत्व हो उपकारी है— किन्तु यह
विस्तृति स्वरसे तथा विलम्बित समयमें गाने पर अच्छा
मालूम होता है। यह मृदुलकी ओर जातिके उपयुक्त
नहीं है। अधिकार्य रूपमें अस्थायी, अन्तरा, सञ्चार
और आभोग ये चार पद होते हैं। किन्तु किसी किसी

ध्रुवमें पदमाघी घोर चक्रांग ये हो दो पद देखे जाते हैं। ध्रुव काण्डा, ध्रुवदेवा, ध्रुव समन चादि इनके भेद हैं। वे सबके सब शोभायक होते जाते हैं। संगीत दामोदरके मतमें ध्रुव सोलह प्रकारका होता है—अवध, शिखर, जलाज, मधुर, निमल, कुन्तल, कमल, सामन्द, पद्मशिखर, सुन्द, कुसुद, जायो, कन्दर्प, जय-मङ्गल, निमल घोर ललित। इनमेंसे अष्टमते प्रतिपादमें शारद घट्टर होते हैं। फिर पाँचों प्रत्येकमें पञ्चमेसे एक एक चत्वार अधिक होता जाता है; इस तरह ललित-में कुल २६ होते हैं। छः पदोंको ध्रुव उत्तम, पाँचका मधम घोर चारका अधम माना गया है।

ध्रुव (मं० वि०) ध्रुवति स्थिरमवतीति ध्रु-क (सुवः कः। इगू। २। ११) १ निधित, दृढ़, ठीक, पक्का। २ स्थिर, चरक, मदा दृढ हो स्थान पर रहनेवाला। (पु०) ३ मनाति। ४ शास्वत। ५ तर्ष। ६ चाकाश। ७ मण्डू, कील। ८ विष्णु। ९ चर। १० मट, बरगद। ११ घट-मसुका एकलम, पाठ मसुचोमिमे एक। १२ योगभेद, फलित ज्योतिषमें एक समयोग। यदि कोई नामक इस योगमें लग्न ग्रहण करे तो मरम्भतो उसके सुलपप पर मर्त्यता स्थिर रहती है घोर बह व्यायकाम्यकर्ता, मनुष्यके भक्त, दुष्टिमान् घोर प्रमिद-होता है। १३ क्षाण, क्षमा, दून। १४ शरादि नामक पक्षी। १५ ध्रुवक पद। १६ चाकाशमित ताराग्रह, ध्रुवतारा। यह ध्रुव तारा मन्त्रचर्तिका आधार स्वरूप है। भूयगता देवे। १७ रोहिणी घोर मसुदेवसे उत्पन्न एक पुत्र। (भागवत ८। २४। ४६) १८ पापघ्न-पक्षीय एक चरिय घोर। (भारत ७। १५। ३०) १९ मनुष्यके एक पुत्र। (भारत १। ७। १२०) २० सुवर्णमय रत्नभारके एक पुत्र। (भागवत ८। २०। १४) २१ यक्षोय चक्षुषादिविषय, एक यक्ष-पात। २२ नामाघ, माकका चगता माग। २३ उत्तमानपाद राजाके पुत्र। इनकी कथा विष्णु पुराणमें इस प्रकार लिखी है—

पुराकाकर्म व्यायध्रुव मनुके प्रियव्रत घोर उत्तमानपाद नामके दो पुत्र थे। उत्तमानपादकी दो कन्या थीं, सुवर्ण घोर कुनोति। राजा सुवर्णको बहुत चाहते थे। सुवर्णकी प्रीतिभावे राजासे कुनोतिको बलवाह दिया। एक दिन राजा चाण्डिकी बाहर निकले घोर पतयन्ता

की वनस्थित कुनोतिकी निजान कुटीरमें आ पहुँचे। उस रात राजाके मन्त्रवाचने कुनोतिको गर्भ रह गया घोर यथासमय ध्रुव उत्पन्न हुए। एक दिन राजा सुवर्णके पुत्र उत्तमको गोदमें लिये बैठे थे, वही पौत्रो ध्रुव देखते हुए राजगर्भामें पहुँचे घोर राजाको गोदमें बैठनेको इच्छा करने लगे। राजा सुवर्णके भयसे ध्रुव-को गोदमें ले न सके। सुवर्णमें लज देखा कि मन्त्रोका मङ्कला ध्रुव राजाकी गोदमें बैठना चाहता है, तब उसने पचपाकी माघ मङ्कलसे कहा, 'हे मन्त्रो! यह उच्चाभिभाव होइ दो। तुम होना कुनोतिके गर्भमें उत्पन्न हुए हो। यह क्षान्त मन्त्रोच है। चतः तुम्हारे उत्पन्न लगे। मेरा पुत्र उत्तम की इस पर बैठ सकता है। इसलिये तुम अपनी लक्ष्मी अधिमाया परिवर्त्याग करो।' ध्रुव विमाताके रिमे कठोर वचनको सुन कर क्रुद्ध हो पड़े घोर अपनी माताके पास चले गये। कुनोतिके रिमे क्रोधित देख पूछा, किमने तुम्हारी पचपा की है? इस पर ध्रुवने सब बातें मातासे कह सुनाई। यह सुन कर कुनोतिके फिर पुत्रके कहा, 'वन्त! सुवर्णने जो कुछ कहा है सब सच है। तुम भाग्यहीना मेरे गर्भमें उत्पन्न हुए हो, चतः तुम भी भाग्यहीन हो। इसलिये तुम्हें दुःख नहीं करना चाहिये। सुवर्णने पुत्र किया है, वहीसे राजा सुवर्णको चाहते हैं। विमेष पुत्रादुत्तम करनेमें यह पद मिलना है। चमो इस लीग जिन चक्षुषां हैं उसीमें मन्त्रोय रत्नता स्थित है। यदि तुम्हें सुवर्णके वचनोने चयना दुःख हो गया हो, तो पुत्र-कार्य करमेके लिए तैयार हो जाओ जिससे तुम्हारी अधिमाया पूरी हो जावे।' ध्रुवने माताको बात सुन कर कहा, 'हे माता! सुवर्णका वचन मेरे हृदयकी नीरसा होइ रहा है। इस समय घोर क्रोह मेरा क्षान्त मान प्रायः ना नहीं करता, मैं मेमा की क्षान्त चाहता हूँ आ मेरे पिताको भी लमिया हो।'

इतना कह कर ध्रुव चरने बाहर निकल पड़े। पूर्व की घोर आने जाते चक्रोंमें चाने कुनोतिकी कुपायन पर बैठे देख उनके निवेदन किया, 'हे मन्त्रो! मैं उत्तम पादका पुत्र हूँ कीर चक्षुषा निवेदना कर पात्र लीने-का मरपापघ्न हुआ हूँ।' यह सुन कर कुनोतिके कहा,

तुम्हारी उमर चार पाँच वर्ष की होगी। और तुम्हारी शरीर में किसी प्रकार की व्याधि नहीं है, अतएव निर्वेदका कारण क्या है। सो हम लोग समझ नहीं सकते। इस पर भ्रुवने पादिसे अत तक अब बातें सुनिषे कह सुनाई। यह सुन कर सुनिगण विस्मित हो कर बोले, 'सत्रियो' की मति और पराक्रम पद्म है, क्योंकि छोटे से छोटा बालक भी किमो प्रकारको पचपचा सज्जन नहीं कर सकता है। ओ कुल हो, अभी तुम्हारी क्या अभिज्ञाया है, सो हमसे कहो, यह सुन कर भ्रुवने कहा, 'मैं अर्थ वा राज्य नहीं चाहता, मैं एक ऐसा स्थान चाहता हूँ जिसे किसी दूसरेने उपभोग न किया हो। आप मुझे ऐसा उपदेश दोजिए जिससे मैं बहुत जल्द वैसा स्थान पा सकूँ।' वे सातो' मुनि ज्ञपिये थे। उनमें से मरीचिने कहा, 'ओ गोविन्दकी आराधना नहीं करता उसे उत्तम स्थान नहीं मिल सकता है। अतएव तुम भगवान् विष्णुकी आराधना करो।' क्रमसे यति अहिरा पादि मुनियो'ने भी एक स्वरसे विष्णुकी आराधना करनेका उपदेश दिया। इस पर भ्रुवने कृपियो'से कहा, 'विष्णु'की आराधना करनेमें मुझे किस कार्यका प्रयत्न करना होगा और किस मन्त्रसे जप करना पड़ेगा?' समर्पिने यह सुन कर भगवान् विष्णुका यह मन्त्र निर्देश कर दिया—

॥रिप्यतमै रुद्रप मयानाव्यकल्पिणे॥

ओ नमो राष्ट्रैवाय रुद्रज्ञानह्वमाभिने॥

(विष्णु० १११५)

भ्रुव इस मन्त्रकी पाश्र्वियोंकी भक्तिपूर्वक प्रशंसा करके यमुनाके किनारे सङ्ग नामक एक पुत्र वनमें चले गये। यत्र वने इसी वनमें मङ्ग राक्षसके पुत्र लवण राक्षसकी मार कर मथुरा नामकी सुरी निर्माण की थी। यह तोष पापनाशक है। यहाँ भ्रुव पचमन्त्रकी हो कर भगवदाराधनामें लग गये। भ्रुवको इस कठोर तपस्यासे नदी, मृदु और पृथ्वी व्याकुल होने लगे। इन्द्रादि देवगण उनकी तपस्यासे भयभीत हो मन्त्रणापूर्वक माया द्वारा सुनोतिका रूप धारण कर भ्रुवके निकट आ पहुँचे और तपोभङ्गके लिये तरह तरहके उपाय करने लगे। किन्तु भ्रुवको ध्यान विष्णुकी और ऐसा

लगा हुआ था कि उनका चित्त किसी अन्य विषयमें जरा भी आकर्षित न होने पाया। इतने पर भी भ्रुवका तपोभङ्ग न होता देख देवगण तरह तरहके उपाय करने लगे; किन्तु उनका समी परिश्रम व्यर्थ जाता रहा। तब सबने मिल कर भगवान् विष्णुको प्रार्थना की। भगवान्ने उन्हें आश्वासन का भ्रुवसे आ कहा, 'हे वत्स! हम तुम्हारी तपस्यासे सन्तुष्ट हो गये, अभिज्ञपित वर मांगो।' भ्रुवने अपने सामने दृष्ट देखको खड़ा देख उनके प्रार्थना को, 'प्रभो! यदि आप हम पर क्षुब्ध हैं, तो यही वर दोजिए जिससे मैं आपका स्तव कर सकूँ, मैं बालक हूँ, मुझे आपका स्तव करनेका सामर्थ्य नहीं है। भगवान्ने विष्णुकी देख कर भ्रुवका ज्ञान खुल गया। तब भगवान्ने भ्रुवसे कहा, 'तुमने जिस स्थानके लिये प्रार्थन की है, वह तुम्हें' मिल जायगा। पूर्व जन्ममें तुम ब्राह्मणका लड़का था, पचमन्त्र चित्त हो कर तूने मेरी उपासना की थी। और और तुम्हारे साथ एक राजपुत्र की मिलता हुई; उसके ऐश्वर्योदि देख कर तुम्हारी राजा होनेकी इच्छा हुई थी, इसीसे तुमने उत्तानपादके घरमें जन्म लिया है। मेरी आराधना करनेसे मनुष्यको बहुत जल्द सुख प्राप्त होती है, तुम्हें स्वर्गादिका विषय कहना फलून है। तुम सब लोकों और ग्रहों' नक्षत्रों'के ऊपर उनके आधार स्वरूप हो कर सबत भावसे स्थित रहोगे। तुम जिस स्थान पर रहोगे, वह भ्रुवलीक नामसे प्रसिद्ध होगा और तुम्हारी माता सुनीति भी तारकाक्षमें तुम्हारे समीप रहेंगी।' भगवान् विष्णु इस प्रकार वर दे कर स्वस्थानको चले गये। भ्रुवने भी वर पा कर पितासे राज्य प्राप्त किया और शिशुमारकी कन्या भूमिसे विवाह किया। इसा नामको इनको एक और पत्नी थी। भूमिके गर्भसे कन्या और बत्सर तथा इसाके गर्भसे उत्पन्न नामक पुत्र उत्पन्न हुए। एक बार इनके सोतेसे भाई उत्तम शिकार करनेकी जङ्गल गये और वहाँ' यची'ने मार डाले गये। इसलिये इन्हें' यची'ने शूरे करना पड़ा। पीछे पितामह मरुने इन्हें' शान्त किया। कुक्षरने इनसे सन्तुष्ट हो कर वर मांगने कहा। इस पर भ्रुवने कहा था, 'विष्णुके पदमें जिससे मेरी भक्ति हो, वही वर मुझे दोजिए।' 'तथास्तु' कह कर कुक्षर अपने स्थानको चले

उत्तम, पाँच पदवाला मध्यम और चार पदवाला अधम माना गया है। विशेष विवरण भूपद अधर्मे देखो। नक्षत्रका दूरत्व, नक्षत्रकी दूरी। मीनराशिमें भेषवे जिस नक्षत्रका योग-तारा जितनी दूरी पर रहता है, उतनेकी उस नक्षत्रका भ्रुवक (Celestial longitude) कहते हैं।

भ्रुवका (सं० स्त्री०) भ्रुवक-टाप। भ्रुवा, भ्रुपद।

भ्रुवकेतु (सं० पु०) केतुभेद, एक प्रकारका केतु तारा। भ्रुव नामक एक प्रकारका केतु है। इसके आकार, वर्ण, प्रमाण या गतिको कोई स्थिरता नहीं है। इसके तीन भेद माने गये हैं, दिव्य, सात्त्विक और भौम। यह विषय और अनियतका फलदाता है। यही भ्रुवकेतु विनायकादी राजाओंके सेनाहर्षमें या विनायकीय देशके हस्तों पर प्रायः ही देखा जाता है। (हस्तसं)

भ्रुवचित् (सं० स्त्री०) भ्रुवे स्थिरे यत्र चियति निवसति। यत्रमें वासकारी, यत्रमें रहनेवाला।

भ्रुवचिति (सं० स्त्री०) भ्रुवा स्थिरा चित्तिनिर्वासे यस्य सः स्थिरनिवास, जिसका वासस्थान दृढ़ हो।

भ्रुवचैम (सं० त्रि०) भ्रुवःचैमः वासः यस्य। स्थिर-निवास।

भ्रुवगति (सं० स्त्री०) भ्रुवा गतिः। भ्रुवपद।

भ्रुवघाट—तीर्थविशेष। मधुवनके जिस स्थानमें महात्मा भ्रुवन तपस्या की थी, उस स्थानको भ्रुवघाट कहते हैं।

भ्रुवचरण (सं० पु०) चद्रतालके बारह भेदोंमेंसे एक।

भ्रुवच्युत (सं० त्रि०) निचल पर्वतादिका च्युतकारक, पचन पर्वत आदिका हिलाने डुलानेवाला।

भ्रुवतारा (Pole-star or Polaris) मेरुके अग्रभागमें विद्यमान तारका, वह तारा जो सदा भ्रुव अर्थात् मेरुके उत्तर रहता है। प्रायः ज्योतिर्विदो मानते हैं, कि

मेरुके उत्तर अर्थात् मेरुके दक्षिणाय और उत्तरायक ऊपर आकाशमें दो तारे हैं जिन्हें भ्रुवतारा कहते हैं। जिस तरह गाड़ीके पहियेके बीचोबीच डंडेकी जिसकी सहारे पहिया घूमता है, वही वा भ्रुवदण्ड कहते हैं उसी तरह उत्तर और दक्षिणाश्वस्थित उन तारोंको भ्रुव बना कर राशिचक्र लगातार घूमा करता है। इसी कारण वे दोनों तारे भ्रुव कहलाते हैं।

यूरोपीय ज्योतिर्विदोंके मतानुसार जो अत्युच्चतम नक्षत्र किसी समय सुमेरुके बहुत समीप था जाता है, उसे सुमेरु-नक्षत्र (North star) और सुमेरुसे जिस तारेका व्यवधान सबसे कम होता है, उसे भ्रुवतारा (Pole-star) कहते हैं। सुतरां पृथ्वीके पचविन्दुको सीधे जब जो तारा सबसे कम छूट कर होता है, तब वही भ्रुवतारा कहलाता है। आज कल Ursa major नक्षत्रके प्रथम तारेको भ्रुवतारा कहते हैं। जिस प्रकार सप्तर्षिमें (Ursa-major) मात तारे हैं, उसी प्रकार जिस ग्रहणसार नामक तारकगुच्छके अन्तर्गत भ्रुव है उसमें भी मात तारे हैं। इन सातोंमें भ्रुव पञ्चमा और सबसे उच्चतम है। यह सुमेरुके २१° ५५' मात्रको दूरी पर है और इसकी गति बहुत सामान्य है। पयनचक्रके चारों ओर नाड़ोमण्डलके मेरुको गतिके अनुसार (प्रायः २१०० ई०में) यह तारा मेरुको पीछे छोड़ता हुआ उसकी सीधसे बहुत छट जायगा और तब अभिजित् नामक नक्षत्र भ्रुवतारा होगा। हिवाकैसके समयमें (१५१ पूर्वाह्नमें) यह तारा सुमेरुसे १३° ५५'को दूरी पर था और १८०० ई०में २° ५५' २' कला दूरवर्ती हुआ। अभी केवल डेढ़ ५५'को दूरी पर है। दो हजार वर्ष पहले सप्तर्षि नक्षत्रका दूसरा तारा और पाँच हजार वर्ष पहले थूबन तारा (Thuban or alpha Draconis) भ्रुवतारा था। अभी वे सब आकाशके भ्रुवसे बहुत दूरमें अवस्थित हैं।

प्रायः हिन्दुओंके विवाह-सम्बन्धमें भ्रुवताराका उल्लेख है। इससे अनुमान किया जाता है, कि प्रायः ऋषिगण अत्यन्त प्राचीन कालसे ही भ्रुवताराके विषयमें अवगत थे।

विख्यात यूरोपीय ज्योतिर्विद जैकविन नाचत्रिक गतिकी गणना द्वारा स्थिर किया है कि हिन्दुओंमें प्रायः ३००० वर्ष पहले भ्रुवताराका आविष्कार किया था। ज्योतिष अध् देखो।

यूरोपीय ज्योतिर्विदोंने गणना करके स्थिर किया है, कि आजमें १२००० वर्ष बाद अभिजित् नामक उच्चतम नक्षत्र भ्रुवतारा कहलायेगा। किसी किसी यूरोपीय ज्योतिर्विदने यह भी कहा है, कि अभी हमलोग

देवीवरगद्दीय ब्राह्मणोंमें इन्होंने मिल कर दिया। इन्होंने कुलीनोंका कुल-परिचायक ग्रंथ और वंशभावकी संस्कृत भाषामें प्रकाशित की जिसका नाम महावंशावली रखा गया है। राष्ट्रीय ब्राह्मणोंके कुलाचार्य समाजमें यह ग्रन्थ समर्पित प्रामाण्य है। कृपित देखो।

ध्रुवाचल (सं० पु०) ध्रुवसंज्ञक भावार्थः रोमसंस्थान भेदः। १. अश्वका रोमसंस्थानभेदः, छोड़ो की मौगी। बहुतसे छोड़ोके ललाट और वक्षमें जो एक भावार्थ एवं रस्य, उपरध, मस्तक और वक्षमें जो भावार्थ रक्षते हैं उसे ध्रुवाचल कहते हैं। २. वह छोड़ा जिसके ऐसी मोरिया होती है।

ध्रुवाचल (सं० पु०) वृहदश्वभेदः, एक प्रकारका वृद्धा छोड़ा। (मरुपु०)

ध्रुवि (सं० त्रि०) ध्रुवः। ध्रुव, स्थिर।

घोला-बम्बईके काठियावाड़ पोलिटिकल एजेंसीका एक देसीय राज्य। यह अक्षां २२° ४' से २२° ४२' उ० और देशां ७०° २४' से ७०° ४५' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २८३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २,१८,०५ है। इसमें १ गहर और ६७ ग्राम लगते हैं। यहका मूभाग कई एक जगह पर्वताकीर्ण और जंघा नीचा है। मधो हलकी होती है। नदी और झीलें पानी चमड़ेके घोंलेमें भर भर कर जमोन लींचो जातो है। शीतमें अत्यन्त गरमी पड़ने पर भी यहांको जलवायु स्वास्थ्यकर है। ईखकी खेती यथेष्ट होती है। यहांके बहुतेरे लोग मोटा कपड़ा बुन कर अपना गुजारा करते हैं।

काठियावाड़ एजेंसीकी द्वितीय श्रेणीके राज्योंमें यह राज्य गिना जाता है। यहांके राजा पत्त्रिय राजपूत-वंशीय है। राजाकी उपाधि गजपुर साहब है। इन्हें १८०७ ई०में पोषपुत्र ग्रहण करनेकी सनद मिली है। सरकारी धोरसे इन्हें ८ सम्मान-सूचक तोपें दी जाती हैं। प्रजाका जीवन मरण राजाके हाथ है। इनकी सैन्य-संख्या १,१८ है। राज्योंको प्रामदनी १ लाखसे अधिककी है, जिसमेंसे १०२३१ रु० गायकवाड़ और खूनागढ़के नवाबकी कर रूप्य देने पड़ते हैं। यहां, ८ स्कूल और १ अस्पताल है।

२ उक्त राज्यका एक गहर। यह अक्षां २२° ३४' उ० और देशां ७०° ३०' पू० राजकोटसे ३२ मील उत्तर-पश्चिम तथा नवानगरसे २४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या ५६६० है। यहां भी एक चिकित्सालय है।

ध्रुव (सं० त्रि०) ध्रुवायां गृहीतं अणुः। १ ध्रुवामें गृहीत वाय्यादि, वह वी चादि जो ध्रुवा नामक यष्ट-पात्रमें रखा जाता है। २ ध्रुव नामक तारासे सम्बन्ध रखनेवाला। (खो०) ३ अक्षः। आक्षान्त, पुकार। ४ ध्रुवका, ध्रुपद।

ध्रुव्य (सं० स्त्री०) ध्रुवस्य भावः व्यञ्ज्। १ स्थिरत्व, दृढ़ता, मजबूती। (त्रि०) २ स्थिर, दृढ़। ध्रुवाय हितं व्यञ्ज्। ३ ध्रुवस्थानप्रापक, ध्रुवस्थानकी प्राप्ति करने वाला।

ध्वंस (सं० पु०) ध्वंस भावे वञ्ज्। १ विनाश, क्षय, हानि। त्याग और वैशेषिक दर्शनके मतसे ध्वंस एक अभाव माना गया है। इसका स्थूल अर्थ 'विनाश' होता है। पर सत्यायवादी सांख्य और वेदान्त ध्वंसको अभाव नहीं मानते, केवल तिरोभाव मानते हैं। 'इह सटी ध्वस्तः' इस जगह असत्कार्यवादो नैयायिक कहते हैं कि यह वृद्धा 'ध्वस्त' अर्थात् विनष्ट हुआ है अर्थात् इस जगह वृद्धोका ध्वंसभाव हुआ है। किन्तु सत्यायवादी सांख्यादि दर्शनकार कहते हैं, 'ध्वस्त' अर्थात् घटका, तिरोभाव-हुआ है, अर्थात् कारणमें खोने हो गया है, किन्तु वस्तु विनष्ट नहीं हुई है। उन लोगोंका कहना है कि किसी वस्तुका विनाश नहीं होता, बल्कि उसका अन्तर्भाव होता है। वृद्धोकी जो प्रकाशप्रवस्था थी, उसका तिरोभाव हुआ है, अर्थात् कारणमें मिल गया है। २ मध्यविकाररोग।

ध्वंसक (सं० त्रि०) ध्वंसयति ध्वंसक-कन्। ध्वंसकारक, नाश करनेवाला।

ध्वंसकला (सं० अश्व०) ध्वंसं कलयति कलि-ङा। हिंसा, कत्तल।

ध्वंसन (सं० स्त्री०) ध्वंस भावे व्युट्। १ नाश। (त्रि०) ध्वंस-णिव-व्युट्। २ ध्वंसकारक, नाश करनेवाला। (स्त्री०) माने व्युट्। ३ ध्वंस-करण, नाश करनेकी क्रिया। ४ अंश, नाश, तबाही। ५ अश्व-पतन।

ध्वंसित (सं० त्रि०) ध्वन्स-विच्, क्त । विनाशित, नष्ट किया हुआ ।

ध्वंसिन् (सं० त्रि०) ध्वं-स-णिनि । १ नाश प्रतियोगी, जिसका नाश हो, कोई कोई ध्वंसिन् शब्दका अर्थ त्व-रेण अर्थात् सूक्ष्मकण समान है ।

“जालान्तरगतो सुवन्दरे स्वर्गी विरोधयते ।

प्रसरेणुस्तु विह्वलितप्रसता परमाणुभिः ॥”

(वैश्वरूपरिभाषा)

भरोखे हो कर सूर्यको किरण जानिने ‘ध्वंसी’ देखा जाता है, यहाँ ध्वसी शब्दका अर्थ त्वरेण अर्थात् सूक्ष्मकण है । इस तरहकी कल्पना भूल समझी जाती है, क्योंकि यहाँ ध्वंसो यह त्वरेणका विधेयपण है । उस जगह इस प्रकार अर्थ होना चाहिये,—नाशके प्रतियोगी अर्थात् ध्वंसविशिष्ट समस्त त्वरेण देखे जाते हैं । ध्वं-स-विच्-णिनि । २ नाशकरक, नाश करनेवाला । (पु०) ३ पर्वतसम्भव विलूक्य, पहाड़ी विलूका एक पेट ।

ध्वज (सं० पु०) ध्वजोऽभ्यास्ति ध्वज अर्थ आदित्यात् अथ ।

१ शीण्डक । ध्वजा से कर चलनेवाला धादमी ।

“दशदानवनः चक्रं दशचक्रवती ध्वजः ।

दशध्वजवती वैशो दशवेश समो वृषः ॥” (मनु ४८-३)

शीण्डक अर्थात् सूड़ी ध्वजा उड़ा कर जोविता निर्वाह करते हैं, इससे शीण्डकको ध्वज वा ध्वजवान् कहते हैं । ये लोग पत्यन्त नीच समझे जाते हैं । दश सूनावान्में अर्थात् मांस बेचनेवालोंमें जो दीप है वह एक चक्रवान् तैलिकमें दाप है और दश तैलिकमें जो दीप है वह एक ध्वज अर्थात् ध्वजवान् शीण्डकमें दीप पाया जाता है । कसाईकी परवध स्थानको सुना कहते हैं । कोहलीकी धानोको चक्र और ध्वजा उड़ानेवाले सूड़ीकी ध्वजवान् कहते हैं । ध्वजति उच्छ्वसो भवति ध्वज ‘पवा-द्यच्’ इति अच्, २ छडाह, खाटको पही । ३ मेदु, जिह्वा । ४ चिह्न । ५ गर्व, दर्प, अभिमान । ६ पूर्वदिक्स्थित गृह । ७ पताकादण्ड । इसका अर्थात् वैन है । ८ चतुष्कोपाकार वगदण्डोपरिस्थित वस्त्रखण्डमेद, भण्डा, निग्रान । इसका विधान शुद्धि-कल्पतर्कमें इस प्रकार लिखा है—

“सेना विह्वं क्षितीगानां दण्डो वंज इति स्मृतः ।

सपताको निष्पताकः सधेयो द्वितीयो दुर्ध्वः ।” (युजिह्वा-१६)

राजाधोके सेनाविह्वस्वरूप जो दण्ड होता है उसीका नाम ध्वज है । यह ध्वज दो प्रकारका है — सपताक और निष्पताक । ध्वजका दण्ड वक्रुत, घाल, पनाम, चम्पक, कदम्ब और निम्ब आदिका होता है । किन्तु इन सबको अपेक्षा वगदण्ड हो श्रेष्ठ है । जय, विजया, भीमा, चपला, वैजयन्तिका, दोर्घा, विगाहा और मोला ये ८ प्रकारके ध्वज हैं । इनमेंसे जया नामक जो ध्वज है उसका दण्ड पाँच हाथ और विजयादि ध्वजका दण्ड उत्तरोत्तर एक एक हाथ बढ़ता जायगा । सभी पताकाधोका वर्ण रत्ना, खेत, पद्म, पोत, चित्र, नील, कुबूर और कृष्ण हो सकता है । जिस पताकामें गजादि चित्रित रहता है उसका नाम जगन्ती है । इस प्रकारका पताका सर्वमङ्गलदायिनी समझी जाती है । गजादि शब्दोंमें गज, सिंह, हय और ह्रींकोका बोध होता है । राजाधोके वगदण्ड विह्वलुक्त जो सप्त पताका रहती है उसे षट्-मङ्गला कहते हैं; वगदण्ड शब्दोंमें वंज, केकी और एक समझा जाता है । चामरादि विह्वलुक्त जो पताका है उसे सर्व-दुष्टिदा कहते हैं । पताकाके अर्ध भाग पर सुवर्ण, रजत और ताम्र अथवा नाना धातुका कुम्भ बनाया होता है और चक्रं रत्नादिसे खचित करना उचित है । ऐसी पताकाको सपताक ध्वज कहते हैं । निष्पताक ध्वजके भी सभी दण्ड पक्षके समान होते हैं ।

दण्ड, पद्म, कुम्भ, विहग और मणि ये छः पदांश जिन्हें सब दण्डोंमें जड़ रहते हैं चक्रं निष्पताक ध्वज कहते हैं । यह भी राजाधोके मङ्गलजनक है । जहाँ वंज निर्मित ध्वज होगा, वहाँ मृणादि युक्त न हो, ताम्रका दण्ड हो सकता है । (युजिह्वा-१६)

ध्वजदानकी विधि देवीपुराणमें इस प्रकार लिखी है—
वस्त्र निर्मित हो अथवा चर्म वस्तुका हो लेकिन हो सभी ध्वज नूतन, समान, अचल और विकल्प । ध्वजमें जिससे किंदादि कोई अपवित्र वस्तु रहने न पावे, इस पर विशेष ध्यान रहे । यह दण्डनिष्ठित करके प्रासादके ऊपर रख देना चाहिये । यदि वंज ग्रील वा धातुनिर्मित हो तो भी उसका समान, विकल्प और अशुद्ध होगा उचित है । इसमें

कपूर और रोचना मिश्रित करके पटके मध्य एक सर्व
लक्षणसम्पन्न सिंहाकी मूर्ति अङ्कित कर उस पटको
प्रासादमे भूमित्तः। सटका देना चाहिये। ध्वजपाखें में
अपने अपने वाहनके साथ दयदिकपालकी मूर्ति अङ्कित
रहे। किङ्किणी, चामर, घण्टा, दर्पण आदि द्वारा उसे
शोभित कर यथाविधि होमादि और ऐसी भगवतोका
पूजन करे। पीछे ध्वजोत्तखन कराना होता है। इस प्रकार
अनुष्ठान करनेसे विद्याधरत्व लाभ होता है और सभी
कामनाये सिद्ध होती हैं। एतद्विध स्वर्ण, रौप्य, लुच,
वृत्तिका वा प्रहरादि द्वारा एक सिंहा इस प्रकार
बनाना चाहिये। जिसे देखनेसे मालूम पड़े कि वह
सिंहा मानो किसी मद्मत्त हाथीको विदारण कर रहा
है और नख प्रहार द्वारा करिकुम्भसे सुतोफल निकाल
रहा है। इस प्रकार सिंहाका निर्माण कर पुनः देवोकी
पूजा करनी होती है। ध्वजारोहणके समय ब्राह्मण और
कुमारी-भोजन कराना होता है। पीछे अष्टाईम पक्षर
वस्त्रमन्त्र जप करके मङ्गल शब्द पूर्वक सिंहाको स्तम्भ पर
पारोक्ष्य करे और वेदध्वनि द्वारा सिंहाका ध्यान करे।
'तदन्तर मखाभरण-भूयित देवीका महाध्वज स्थापन
कर अन्त्या देवताओंके भो ध्वज स्थापन करे। ब्रह्मा,
विष्णु, इन्द्र, वरुण, चन्द्र, सूर्य-पादि देवताओंका ध्वज-
दान सर्वश्रेष्ठ दान समझा जाता है। जब तक ध्वजदान
न किया जाय तब तक प्रासादमें कोई देवचित्र न
रहे। भूत, नाग, गन्धर्व और राक्षस आदि शून्यध्वजसे
गृह-दिमें जाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। इसीसे गृह-
हार, प्रासाद, पर्वत और नगरमें ध्वजदान करना शक्ति-
कामी मनुष्योंके लिये उचित और हितकर है। जो मनुष्य
विधिपूर्वक इस प्रकार ध्वजदान करते हैं, उनके सभी
अभिलाष सिद्ध होते हैं और अन्तकालमें उन्हें शिवलोक
की प्राप्ति होती है। ऐसे मनुष्योंके साथ संभाषणदि
करनेसे भी पापक्षय होता है। चतुर्थ राजगण आचार-
पूत हो कर भक्तिपूर्वक शङ्ख, चक्र, छत्र, 'तार्क्ष्य, हंस,
मयूर, हस्ती-पादि चिह्नित ध्वजगृष्टि उचोत्तलन करे। ऐसा
करनेसे उन्हें युद्ध, व्याधि और शत्रु, पाकमण्ड, शस्त्र, व्रण
पीड़ा आदि-किसी प्रकारका अहित नहीं होता।

(वैशीष्टराण)

ध्वजगृह (मं० पु०) ध्वजाय युक्त गृह आकषाधिक० ।
१ ध्वजरूप युक्त गृह, वह घर जिसमें पताका फहराया
जाता है। २ वह घर जिसमें पताका रखा जाता है।

ध्वजश्रीय (सं० पु०) ध्वज इव शोभा यस्य। राजमहोद,
एक राजमन्त्रका नाम। (राधायण ५।१२३ अ०)

ध्वजद्रुम (सं० पु०) ध्वज इव लघतो द्रुमः। १ तान
लघ, ताड़का पेड़। यह ध्वजाको नाई बहुत ऊँचा
रहता है इसीसे इसका नाम ध्वजद्रुम पड़ा है।

ध्वजप्रहरण (सं० पु०) ध्वजं प्रहरति नाययति भन-
तोति प्र ह-व्यु। वायु, हवा।

ध्वजमङ्ग (मं० पु०) ध्वजस्य मन्दुस्य मङ्गः। क्षोभताजनक
रोगविशेष, क्षोभता, नपुंसकता, नामर्दोको बीमारो।
चरकसंहितामें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है,—

‘गलप्रहरणस्यारविहृदासनभोजनात्।

तथान्धुगान्दिवपाद पिष्टापप्रकोजनात्॥

दधिधीरात्रुपर्वसेवनात् अश्विर्द्वर्षणात्।

कृषाणीयमनाश्वपि विरोधिममनादपि॥

दीर्घरोमी विरोध्यां तथैव च रजस्रकाम्।

सुर्म्यां बुधशोभित तथैव च परिश्रुताम्॥

ईदृशीं प्रसदा मोहात् यदि गृह्यति मानवः।

चतुष्पादादि यमनाष्टकेष्वश्वविधानतः॥

अथावमाद्यैव मेदृश्ये लज्जन्तनलक्षणात्।

काष्ठप्रहारनिषेधशूकानाद्य निषेधनात्॥

रेतसश्च प्रतीपादात् ध्वजमङ्ग प्रमायते।” (चरक)

यदि कोई पुरुष अत्यधिक अन्न, लवण वा क्षार
भोजन, विरह भक्षण, विषमाभ्युपान, पिष्टादि गुरु
भोजन, अतिरिक्त दधि, घोर वा अनूप मांसभोजन,
व्याधिकर्षण, कल्याणी (गामो)-गमन, वियानिगमन,
दीर्घरोमा और चिरपरित्यागा आदिके साथ सहवास करे
तथा रजस्वला, दुष्टयोगि और दुर्गन्धि योगियुक्त चतुष्पादि-
में मोहप्रयुक्त उपगत हो तथा मन्दुदेय यदि न धोवे
और वह शस्त्र, दन्त या नखसे घत हो जाय चयवा
काष्ठप्रहार द्वारा नियमित हो जाय तथा शूक सेवन
और वीर्यका प्रतिरोध करे, तो उसके ध्वजमङ्ग रोग हो
जाता है। इस रोगको क्षोध्य (अर्थात् नामर्दो) कहते
हैं। यही कारण है कि मनुष्य आदिमें इसको गिनती

क्षेत्रोंमें ली गई है। भावरसायन लिखा है कि ध्वजमङ्ग होने पर ग्रिथकी उत्तेजनाके समान हेतु, वह फिर उत्पन्न नहीं होता—मैथुन करनेमें सममर्ष हो जाता है। इसका कारण यह है, कि यदि कोई रम-पेच्छु, व्यक्ति भय, शोक वा क्रोधादि द्वारा किंवा अद्वय सेवन हेतु पथवा अनभिष्टेता होटा स्त्रीके साथ मैथुन करनेसे उसके द्वारा मन असुख होता और ध्वजमङ्ग पर्याप्त ग्रिथकी उत्तेजना नष्ट होनेसे स्त्रीवता (नामर्दी) उत्पन्न होती है, इसकी मानसहोष्य कहा जा सकता है पतिरिक्त कटु, पशु, लवण और उष्ण द्रव्य खानेसे पल्लव विरलहृदि होती है और उससे शुक्लपय होता है, इन्हींलिए ध्वजमङ्ग पर्याप्त ग्रिथकी उत्तेजना मन्द हो जाती है। इसे पित्तकक्षोष्य कहते हैं।

जो लोग बाजीकरण औषध सेवन न कर हृदये ज्वादा मैथुन सेवन करते हैं, उनके ध्वजमङ्ग वा स्त्रीवता हो जाता है। पल्लविक मन्द रोग होनेसे भी ध्वजमङ्ग हो जाता है और उससे ४४ प्रकारका क्षोष्य उत्पन्न होता है।

वीर्यवाही गिराका छिदन करनेसे ध्वजमङ्ग हो कर स्त्रीवता उत्पन्न होती है।

वनवान् व्यक्ति के पक्षक कामासक्त होने पर यदि वह मैथुन न कर शुक्लके वेगकी धारण करे, तो उसमें भी ध्वजमङ्ग हो कर स्त्रीवता आ जाती है।

जन्मकालमें ही स्त्रीव होने पर उसे सहज क्षोष्य रोग कहते हैं। यह जन्म क्षोष्य वसाधा है, तथा वीर्यवाहीनी गिरा-छिदनक्ष्य ध्वजमङ्ग भी वसाधा है। साध्य-क्षोष्यरोगमें हेतुके विपरीत कार्य करना चाहिए। कारण, निदान परिवर्जन ही सब प्रकार बिकल्पापेक्षे श्रेष्ठ उपाय है। ध्वजमङ्ग वा स्त्रीवतामें बाजीकरण औषध ही प्रगन्त है। व्याधिहोन मनुष्य १६ वर्षके बाद ७० वर्ष पर्यन्त कायगोधन कर बाजीकरण औषध सेवन कर सकता है, इससे प्रायः काम और रतिगतिही हृदि होती है। १६ वर्षसे कम तथा ७० वर्षसे ज्यादा सम्बन्धालोकी बाजी-करण औषधियाँ खाने चाहिए। पतिरिक्त स्त्री-संयोगसे ध्वजमङ्ग उपदंश आदि माना प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं और उनमें पक्षामृत्यु होती है।

विज्ञानी, पर्याप्तानी और रूपवीवनसम्पन्न मनुष्यों-

की तथा जिनके कई स्त्रियाँ हैं, उनको बाजीकरण औषध सेवन करने चाहिए। छद्म, रमपेच्छु, मैथुन-हेतु चीन, स्त्रीव और अन्य शुक्लविगिट गतिवियोंकी तथा जो व्यक्ति स्त्रियोंसे प्रिय होना चाहते हैं, उनके लिए यह हितकर प्रोत्तिस्तर और वलपद है। (भाष्य०)

समुत्तम लिखा है—ध्वजमङ्ग होने पर पुरुष स्त्रीवता की प्राप्ति होता है। यदि कोई रमपेच्छु, व्यक्ति के वसा-करणमें प्रप्रिय भावका उदय हो, पथवा प्रप्रिय स्त्रीके साथ सहजि होनेसे मनः लुप्त हो, तो ध्वजमङ्ग हो कर स्त्रीवता आ जाती है। इसकी मानसिक स्त्रीवता कहते हैं। कटु, पशु, उष्ण और लवण ये रस यदि अधिकतासे खाये जावें, तो भी मौम्य धातुका क्षय होने लगता है और उससे ध्वजमङ्ग रोग हो जाता है। बाजीरिया विना किये पतिवय स्त्री-वह्नम करनेसे शुक्लधातुका क्षय होनेके कारण इस रोगकी उत्पत्ति होती है। पल्लव मन्दरोगके कारण वा समंस्कृष्ट-वह्नतः पुरुष-गतिमें व्याघात होने पर भी यह रोग उत्पन्न होता है। सहज क्षोष्य और समंस्कृष्टद्वय क्षोष्य वसाध्य है। जिन जिन कारणोंसे जो सो जैसी स्त्रीवता उत्पन्न होती है, उन उन कारणोंके विपरीत क्रिया द्वारा उनका प्रतिकार किया जा सकता है। सुरतसन्धीयनी-गतिसे तारतम्यानुसार बाजीकरणके योगोंकी निम्नलिखित तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया जा सकता है।

११ प्रेणीय योग—तिल, उरद, जमोक्तद और शाली-तण्डुलके चूर्णकी बराहके मंद और सैन्धवके साथ पोष्टक १५के रसमें घोंट कर गोली बना लें। उन गोलीयोंकी घीमें पाक कर यथासाध्य परिमाणमें सेवन करनेसे वह रोग अच्छा हो जाता है। हागका कोप दुग्धसे साथ पकावें, उस दुग्धमें कान्ही तिलकी पुनः पुनः भावित करें और फिर उस तिलसे घिटक बना कर शिथिलकी चर्चोंमें पाक करें। इसकी यथासाध्य सेवन करना चाहिए। हागके कोप, पिप्पली और लवणसे दूध और छोटी पका कर सेवन करना चाहिए। उरद, जमोक्तद, और सहजुनकी दूधमें पका कर घी और चीनीके साथ खाना चाहिए। ये योग बाजीकरणके लिए बहुत समदा हैं।

२२ प्रेणीय योग—पिप्पली, उरद, शाली तण्डुल,

जो बीर गेहूँ इनके समभाग चूर्ण द्वारा पिष्टक बना कर घीमें भूतना चाहिए; फिर उसे दूध और चोनीके साथ खाना चाहिए। जमीकन्दके चूर्णको जमीकन्दके रसमें भावित करके उसे शकर घी और मधुके माथ चाटना चाहिए और ऊपरसे दूध घी लेना चाहिए। शक्करके चूर्णको शक्करके रसमें भावित करके उसे शकर, घी और मधुके साथ चाट कर ऊपरसे दूध पीना चाहिए। इससे अमीतिपर हृद भी युवाके सहाय हो जाता है। छागके कोपको पीपल और नवगके माथ घी वा शिशमारको बसमें पका कर खानेसे वाजीक्रिया भावित होती है।

श्वेच्छीश्व योग—मध्वि, श्वेयम वा छागका शुक्र पान करना चाहिए। पीपलके फल, मूल और छागको दूधमें पका कर शकर और मधुके साथ पान करना चाहिए। जमीकन्दकी जड़की तुकनीकी उडुखरके माथ घी और दूधमें पका कर सेवन करना चाहिए। इसमें हृद भी युवाके समान हो जाता है। एक पल परिमाण छरदका चूर्ण घी और मधुके साथ चाट कर ऊपरसे दूध घी लेना चाहिए। ये सब सामान्यतः वाजोकरणके लिए व्यवहार्य हैं। जिस बराबरका वायु हृद हो गया है, उसका दूध वा छरदकी पत्ती खानेवाली मायका दूध वाजोकरणके लिए प्रसन्न है। सर्व प्रकारका दूध और काकोली आदि पदार्थ वाजीकरणके लिए उपयोगी हैं। ये सब योग नीरोग अवस्थामें भी सेवन किये जा सकते हैं। (प्रयुक्त) भेदव्यवहारकी ध्वजभङ्गाधिकारमें इस प्रकार लिखा है—

भय और शोकादि तथा अन्यान्य प्रकार अद्वय कारणोंसे भयसे व्याहत होने पर शिथिल पतित होता है और उसमें लक्ष्मणशक्ति नहीं रहती। विद्वेषमांजन कीके साथ सङ्गम करनेसे भी ध्वजभङ्ग होता है।

धौपध—अश्वगन्धाद्युत, अश्वत्थाम्बाद्युत, मदनानन्द-मोदक, कामिनोदपद्म, स्वल्पचन्द्रोदयमकरध्वज, हृदय-चन्द्रोदय-मकरध्वज, सिद्धत, कामदीपक, सिद्धशालमलो-कल्प, पद्मगर, विकण्ठकायमोदक, रसाला, चन्दनादि-तैल, पुष्पधन्वा, पूर्णचन्द्र और कामान्निचन्द्रोपनी बड़ी; इन औषधोंके सेवन करनेसे ध्वजभङ्ग रोग शरीरमें होता है। (भेदव्यवहार, ध्वजभङ्गाधिकार)

शुक्रवृद्ध हो एक मास ध्वजभङ्गका कारण है। शुक्रकी वीणावस्थाका परिज्ञात होने से वाजीक्रिया और बलकर खाद्यादि खाना चाहिए; फिर ध्वजभङ्ग होनेका भय नहीं रहता। इस रोगमें सर्व प्रकार वाजोक्रियाएं प्रसन्न औषधका काम करती है।

पाथात्य विक्रिया शरीरमें ध्वजभङ्गरोगके विषयमें कुछ विशेष तथ्य कहे गये हैं। अधिकांश यान्त्रिक हीनता-वटित रोग शरीरमें नहीं होते, परन्तु किन्हीं तमो प्रकारकी हीनता औषध और पथ्यादिके प्रभावसे छोड़े हो दिनोंके लिए भी दूर हो सकती है। नैतिक और क्रियावटित रोग सचिकित्सासे पूर्ण शरीरमें होते हैं।

यान्त्रिक असम्पूर्णता वा रोगको कोशिश करके दूर किया जा सकता है। निद्राशक्ति के साथ निद्रावस्थाका संयोजन, सुप्त, स्वल्पवृद्ध, निद्रावस्थाके सहाय रक्तवायु आदि रोगों के होने पर निद्रावृद्ध में उत्तेजित होनेकी क्षमता नहीं रहती, तथा उक्त रोगों में अणुशरीरकी शक्ति कम होती है और उससे रमण-शक्तिका अभाव हो जाता है। जो चिकित्साके द्वारा दूर किया जा सकता है। सङ्घर्षविनी, सङ्घर्षविनी, वधविनीमुख, अश्वत्थ-जरायुमुखी, वधभगोडी, अस्वाभाविकरूप पुरुषकी वृद्धविक्रिया वा भगवत्पुत्रा भिक्षु द्वारा आवरित क्रिया भी रमणशक्ता हुआ करता है। इनमेंसे कुछ औषध और अस्वाभाविकता द्वारा शरीरमें हो जाते हैं।

साधारण रोगोंमें क्रिया और नैतिक कारणोत्पन्न रोगोंकी संख्या ही अधिक है, इसकी चिकित्साके लिए बहुत विज्ञता और शास्त्रदर्शिताका होना आवश्यक है। इसे तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—(१) सृज्य-जनित, (२) अपव्यवहारजनित और (३) मानसिक एवं शारीरिक अत्यधिक उत्तेजना जनित। इन रोगोंकी चिकित्सा करते समय चिकित्सकको पहले रोगीके शरीरको नष्ट हुई शक्तिका, फिर जननयन्त्रोंकी क्षमताका उद्धार करना चाहिए। शरीरको नष्टशक्तिका उद्धार बिना किये ही, जो पहले ही यान्त्रिक चिकित्सा करनेकी कोशिश करते हैं, वे शरीर रोगीको विरक्त कर डालते हैं। ऐसे चिकित्सकसे रोगीको रायपान रहना चाहिये।

भाषा रोगोंमें, ऐसा भी देखनेमें आता है कि बहुतसे रोगियोंका स्वास्थ्य तो बुरा नहीं, पर सामान्य मानसिक दुर्बलता या शारीरिक व्यानविशेष ही दुर्बलताके कारण इन प्रभोतिकर रोगमें उन्हें थड़ा कट उठाना पड़ता है। ऐसी जगहमें दूढ़ कर चिकित्सा कराना बहुत ही लाभदायक है। ऐसे रोगोंमें परिपाकक्रिया और शौर्य-क्रियाका वर्धन, उत्थिज वा वातपुष्टिकर औषधादिका सेवन करना फायदेमन्द है। इस रोगमें निर्भर-स्नान (पुष्करिणी पानीसे स्नान), समुद्र-स्नान (नुनखुरे पानीमें नहाना), अनाहत स्नानमें शारीरिक चालना, अपने विषयमें मन लगाना आदि लाभदायक है। यदि शीतघर्मके साथ वा शमनोक्तमें उद्वेगके साथ साथ रोगीका शरीर-स्नान हो अथवा स्नानोप होता हो, तो शीतघर्म पुष्टि कर औषधादिकी व्यवस्था करनी चाहिये। धातवात्म-घटित ओषधियों भी इस अवस्थामें उपयोगी हैं।

अपरिमित रमणमें जो रोग उत्पन्न होता है, उसके प्रभावमें रोगी प्रवृत्ति दमन करनेमें किसी तरह भी समर्थ नहीं होता। समुद्र-स्नान ही इसकी महीपधि है। इस रोगका कारण अधिकांश स्थानोंमें अनैसर्गिक उपाय-से शौर्य मोचन करना ही अनुमित होता है। इस रोगमें स्त्री-महाम विलकुल बन्द कर देना उचित है।

इन रोगोंमें सामान्यतः (पूर्वकालमें और अथ भी) क्या मध्य और क्या अमध्य, सभी समाजमें उत्तेजक और उत्प्रेषीय औषधादि व्यवहृत होती हैं। परन्तु इससे बहुत हानि होती है। इन रोगोंमें साधारणतः कस्तूरी, अम्बारपिच, कन्याराइडिस, फस्करस, अफीम, लवङ्गादि उत्प्रेषीय मसाले, काफी, सुहागा, कोर, रैडो आदिका व्यवहार होता है तथा कस्तूरका मांस, घण्टे, औष आदि पदार्थोंमें व्यवहृत होता है; परन्तु यह व्यवस्था अच्छी नहीं—हानिकर है।

ध्वजपत्र (सं० स्त्री०) यह पत्र जिसमें ध्वजाका डंडा रखा रहता है।

ध्वजपट (सं० स्त्री०) ध्वजदण्ड, पताकाका डंडा।

ध्वजपत्र (सं० स्त्री०) ध्वजपत्र विद्यार्थीस्य, ध्वज प्रत्युप-मस्य यः। १ चित्रपुष्प, चित्रवाला। २ विलगुल, पताका-शारी, जो ध्वजा या पताका लिये हो। ३ जो ब्राह्मण अन्य

ब्राह्मणको हत्या करके प्रायश्चित्तके लिये उसकी छोड़ने के कर भिन्ना मांगता हुआ तोषीमें धूमै। (पु०) ४ शौण्डिक, कलवार। श्रियां डीप, ५ रुचिमें धाकी एव कन्याका नाम। (भारत उ० २०८ म०)

ध्वजशुक (सं० स्त्री०) ध्वजस्य शुक ६-तम्। ध्वज या निशानका कपड़ा।

ध्वजा (हि० स्त्री०) १ पताका, भण्डा, निशान। २

कन्दःशास्त्रानुसार उगणका पक्षभा भेट। इसमें पहले लघु फिर गुण होता है। ३ एक प्रकारको कसरत। इसकी दो भेद हैं, मलखंभ और चोरंगी। यह कसरत मलखंभ पर तीनके ही समान की जाती है। सिर्फ इतना फर्क है कि इसमें मलखंभकी हाथसे लपेट कर उसके एक वगलमें सारा शरीर सोधा करके तोलना पड़ता है। संस्कृतमें इसका नाम ध्वज है। चोरंगीमें हाथ पाँव फैला कर चारकोनों ठोक दिवाए जाते हैं और दोनों पाँव पंठोसे बांध कर खड़े रखे जाते हैं।

ध्वजायकेयूर (सं० स्त्री०) शोधिमस्त्रीका योगाङ्गभेद।

ध्वजायनिशानि (सं० पु०) बह्व्यास्तोत्र गणनाका उपायभेद।

ध्वजायवती (सं० स्त्री०) गणनाका उपायभेद।

ध्वजादिगणना (सं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त गणनाभेद, फलित ज्योतिषके अनुसार एक प्रकारकी गणना। इसमें ध्वजाकार चक्र बनाया जाता है। यदि कोई व्यक्ति शुभाशुभ आदिका प्रश्न करे, तो इस चक्रके अनुसार बहुत ही आसानीसे उस प्रश्नका उत्तर मिल जाता है। इस चक्रमें नौ घर या कोठ होते हैं। इनमेंसे पहले घरमें जिस विषयका प्रश्न होता है वही सन्निवेशित होता है। फिर बायीं दूसरे घरमें ध्वजसंज्ञा, वर्ग, ग्रह, राशि और फलाफल-तीसरे घरमें पूर्वसंज्ञा; चौथे घरमें सिंघ; पाँचवें घरमें ज्ञान, छठवें घरमें वृष, सातवें घरमें गज और नवें घरमें धातु रहते हैं। हर एक घरमें जो संज्ञा है, उसका वर्ण, ग्रह, राशि और फलाफल भी लिख देना चाहिये। गणना करनेकी प्रणाली इस प्रकार है—प्रश्नकर्ताको मानसिक विषय गणकके निकट स्पष्ट रूपसे कह देना चाहिये। बाद प्रश्नकर्ताकी दिशो फलका नाम लेना पड़ता है। जिस फलका नाम कह

जाय उससे आदिने अक्षरमें ध्वजादि संज्ञा निर्णय करके चक्र देख कर जिज्ञासित शब्दका फल सहजहोमें कहा जा सकता है ।

ध्वज शब्दके नीचे अवर्ग, अर्थात् स्वरवर्ण, ध्रुव शब्दमें कवर्ग (क, ख, ग, घ, ङ), सिद्धमें चवर्ग (च, छ, ज, झ, ञ) श्रानमें टवर्ग (ट, ठ, ड, ढ), उपमें तवर्ग, धरमें पवर्ग, गगमें यवर्ग, घाहमें शवर्ग अर्थात् श, ष, स, और ह होता है । कथित फलका आदि अक्षर से कर से सब वर्गोंमें ध्वजादि निर्णय करने से ही फलफल मालूम हो जायगा । इसमें प्रायः सभी प्रकारके प्रश्न किये जा सकते हैं ।

ध्वजरोपण (सं० स्त्री०) ध्वजस्य भारोपणं इ-तत् । देव प्रासादिमें ध्वजोत्तलन, देवालय तथा पहालिकाधीन पताकाका फहराया जाना । अग्निपुराणमें लिखा है कि देवगुरु गौर प्रासादमें पताका नहीं लगानेसे वह पवित्र नहीं माना जाता और उसमें भूत प्रेत उपद्रव मचाते हैं ।

ध्वजाहृत (सं० पु०) ध्वजनं तदुपलक्षितमभामेण आहृतः । १ दासभेद, स्मृतिवीके अनुसार पन्द्रह प्रकारके दासोंमेंसे एक ।

युद्धमें जीत कर जिसे पकड़ा हो, उसे ध्वजाहृत कहते हैं । (स्त्री०) २ अविभाज्य धनभेद । लड़ाईमें शत्रुको जीतने पर जो धन मिलता है, उसे ध्वजाहृत कहते हैं । यह धन किसीके साथ बाँटा नहीं जा सकता है । (स्मृति) ध्वजिक (सं० त्रि०) ध्वजं ध्वजो, पाठुण्डो ।

ध्वजिन् (सं० त्रि०) ध्वजोऽस्त्यस्येति, ध्वज इति । (अत इति ठनौ । पा ५।२।११५) १ ध्वजयुक्त, ध्वजवाला, जो ध्वजा पताका धिये हो । २ चक्रयुक्त, चक्रवाला । (पु०) ३ ब्राह्मण । ४ पर्वत, पहाड़ । ५ रथ, यशस । ६ सर्प, साँप । ७ घोटक, घोड़ा । ८ मयूर, मोर । ९ शौण्डिक, कलवार ।

ध्वजिनी (सं० स्त्री०) पांच प्रकारको बीमा धर्मोंमेंसे एक । १ बीमा पर नियामके लिये पैड़ आदि लगे रहते हैं । २ देनाका एक भेद । इसका परिमाण याहिनोका दूना माना जाता है ।

ध्वजोच्छ्रय (सं० पु०) ध्वजस्य उच्छ्रयः इ-तत् । १ ध्वज

या पताकाका खड़ा करना । २ सिङ्गोच्चकरण, इन्द्रियका खड़ा करना ।

ध्वजोत्थान (सं० स्त्री०) ध्वजस्य इन्द्रध्वजस्य उत्थानं । शक्तीसूत्र । यह उत्थव भाद्रमासको शुक्ल द्वादशीमें मनाया जाता है । राजाओंके द्वार पर इन्द्रके उद्देशसे चतुरस्र ध्वजाकारमें दिया जाता है, इसीको ध्वजोत्थान कहते हैं । इनमें इन्द्र बहुत मनुष्ट हो कर वर्षा देते हैं । इस उत्थवके समय प्रजा तरह तरहका आमोद-प्रमोद करती है । इन्द्रध्वज देखो ।

ध्वन (सं० पु०) ध्वन इवमेव । शब्द, भाषाज । ध्वनन (सं० स्त्री०) ध्वन्यते व्यन्यतेऽर्थोऽनेन ध्वनिं करणे ह्युट् । पलङ्करोक्त वाद्य मृदयामिकाद्यंको बोधनात्मक व्यञ्जनावृत्तिरूपमें शब्दनिष्ठ व्यापारभेद । अर्थात् मने कोई शब्द प्रयोग किया है, वह शब्द जिस अर्थमें व्यवहृत हुआ है, उससे सिवा जो कोई दूसरा अर्थ व्यञ्जनाशक्ति द्वारा बोधित होगा, उसोका नाम ध्वनन है । भावे ह्युट् । २ अर्थव्यञ्जक शब्दकरण ।

ध्वनमोदिन् (सं० पु०) ध्वनेन शब्देन मोदयति मुदंणिनि । अमर, भोरा ।

ध्वनि सं० पु०) ध्वननमिति ध्वन-इ (कलिह्रस्वमृगसीति । अण् ४।११८) १ शब्दवादि शब्द, नाद, भाषाज । हिन्दीमें इसे खोलिह माना है ।

“शब्दोऽवतिष्ठ वर्णश्च शब्दवादिमयो ध्वनिः ।

शब्दसंयोगजगमनो वर्णाद्यः कादयो मताः ॥”

(भाषापरिच्छेद)

शब्दवादि द्वारा उत्पन्न शब्द और कण्ठतावदादि संयोगसे कादिवर्ण रूप जो शब्द उत्पन्न होता है, उसका नाम ध्वनि है । यह शब्द दो प्रकारका है—बुद्धिहेतु और श्रुतिहेतु । निधादिमें जो शब्द उत्पन्न होता है, उसका नाम श्रुतिहेतु है । बुद्धिहेतु शब्द भी फिर दो प्रकारका है,—स्वभाविक और काव्यनिरत । वर्णविशेषका अनभिव्यञ्जक इसमें और रुचितादिका शब्द स्वाभाविक है । इससे या रोदन करनेसे किसी शब्दका बोध नहीं होता, अथवा ध्वन्यत शब्द निरुक्तता है । इस प्रकारके शब्दको स्वाभाविक शब्द कहते हैं । काव्यनिरत भी फिर तीन प्रकारका है, याव्यादि शब्द गीतिरूप और वर्णात्मक । मेरो

घोर शृङ्ग आदिसे जो शब्द निकलता है, उसे वाद्यादि, माध्यादि, रागव्यञ्जन नियमादि द्वारा जो शब्द होता है उसे गीतिरूप घोर कण्ठतात्वादिसे परिघातसे कक्षा-रादि वर्णरूप जो शब्द होता है, उसे वर्णात्मक कहते हैं। (शब्दार्थरत्न०)

वेदान्तदर्शनके शारीरकभाष्यमें ध्वनि शब्दका जो अर्थ लिखा है, वह इस प्रकार है—

दूरसे शब्द तो सुना जाता, लेकिन साफ तौरसे उसका कुछ भी बोध नहीं होता। केवल मात्र तारत्वादि जाना जाता है, इस प्रकारके शब्दका नाम ध्वनि है।

“ध्वनिः स्कोटश्च सर्वानां ध्वनिस्तु खलु लक्षये।

कृत्वो महादेव वेदाक्षित इत्यर्थं नैव स्वभावतः॥”

(महाभाष्य)

शब्दका स्कोट ही ध्वनि है। वेदाकारण पण्डितोंने ध्वनिकी स्कोट बतलाया है। इसका कारण यह है, कि जब कोई शब्द उच्चारण किया जाता है, तब उससे सभी वर्णोंके मिल जाते हैं एक शब्दका बोध होता है। जैसे ‘सस’ यह शब्द उच्चारित हुआ, बोलनेके साथ ही शब्दका नाश हो गया। पहले क वर्ण पोछे स और स इन तीन वर्णोंको ले कर कसस शब्द हुआ है, किन्तु ज्योंही शब्द उच्चारित हुआ त्योंही क वर्ण विनष्ट हुआ। पोछे स वर्णोंका लक्ष अर्थ लगाया जाता है, तब कुछ भी अर्थ नहीं होता। इसी कारण वेदाकारण पण्डितगण शब्दका स्कोट स्वीकार कर परस्पर वर्णोंकी एकत्र करके अर्थका बोध कराते हैं अर्थात् कसस इन तीन वर्णोंके एकत्र करनेसे फिर अर्थबोधका कोई मोक्षमाल नहीं रहता। यही स्कोटध्वनि है।

पाणिनिदर्शनमें भी यह स्वीकृत हुआ है कि शब्द ही प्रकाशक है, नित्य और अनित्य। नित्य शब्द एक मात्र स्फोट है, इससे शिक्षा वर्णात्मक शब्दसमूह अनित्य है। वर्णोंतारक स्फोटात्मक आ एक नित्य शब्द है उससे विषयमें करके अलग अलग युक्तियाँ प्रदर्शित हुई हैं। इनमेंसे प्रधान युक्ति यह है कि स्फोटके नहीं रहनेसे केवल वर्णात्मक शब्द द्वारा अर्थबोध नहीं होता। यह सभी स्वीकार करते हैं कि घ घोर ट इन दो वर्णोंकी ले कर घटा घट शब्द बना उससे घटका बोध होता है। किन्तु

यह केवल दो वर्ण सम्पादित नहीं हो सकते, कारण यदि इन दो वर्णोंके प्रत्येक वर्ण द्वारा घटका बोध होता, तो केवल घ या ट उच्चारण करनेमें घटका बोध नहीं होता है, सो क्यों? इस दोषकी नाश करनेके लिए इन दोनों वर्णोंके मिलनेसे घटका बोध होता है, ऐसा नहीं कह सकते। क्योंकि सभी वर्णों आद्यविनासी हैं, पोछेके वर्णोंके उत्पत्तिकालमें पूर्व सभी वर्ण विनष्ट हो जाते हैं। सुतरां अर्थबोध होनेकी बात तो दूर रहे, उनका एक साथ रहना भी सम्भव नहीं है। इसीसे यह स्वीकार करना होगा कि पहले दो वर्णों द्वारा अर्थव्याप्त अर्थात् स्फुटता होती है, पोछे स्फोट द्वारा घटका बोध हुआ करता है। यही स्फोट ध्वनि है। स्फोट देखो।

२ उत्तम काव्यभेद। साहित्यदर्पणमें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

अर्थ्यके वशीभूत होनेसे जो काव्य होता है उसका नाम ध्वनि है। अर्थात् जहाँ व्यञ्जनाशक्ति द्वारा बोधित अर्थ जो गुणोभूत और अत्यन्त प्रगल्भ होता है उसका नाम ध्वनि है। कोई एक वाक्य कहा गया, जिस अर्थमें यह वाक्य प्रयुक्त हुआ है पहले उसीका बोध कराया गया, पोछे व्यञ्जना द्वारा एक ऐसे अर्थका बोध हुआ जो गुणोभूत अर्थात् अत्यन्त उत्तम है। इस प्रकार जिस व्यञ्जनाशक्त हास जो अन्वयार्थका प्रत्यय होता है उसी काव्यका नाम ध्वनि है।

व्यञ्जना बोधित अर्थ जब वाक्यसे अतिग्रह अर्थात् व्यञ्जनार्थसे अधिक समकारित्व होता है, तब वह ध्वनि कहलाता है। ध्वनित अर्थात् व्यञ्जित होनेके कारण इसे ध्वनि कहते हैं। यह अत्यन्त उत्तम काव्य है।

‘भेदोऽन्येनैव द्वायुपरीतो लक्षणाविधायकौ।

अविचित्रवाचनोऽप्यो विविचितास्य पराध्वन्यः॥”

(साहित्यदर्पण ४।२।२२)

यह ध्वनि दो प्रकारको है, लक्षणा और अविधायक। इनमेंसे लक्षणासूत्रक ध्वनि अविधायितवाक्य और दूसरा विविचितवाक्य है। अर्थ लक्षसूत्रक एक ध्वनिका नाम अविधायितवाक्य और दूसरे विविचितवाक्य है। लक्षणासूत्रक ध्वनि वाक्य अर्थका स्वरूप प्रकाशित करके बोधव्यक्त अर्थात् व्यञ्जनाशक्ति द्वारा वाक्य अर्थका प्रकाशक होता है।

“अथोत्तरं संकमिसे वाच्येऽतएव तिरस्कृतः ।

अविचक्षितवाच्योऽपि ध्वनि द्वै विध्यमृच्छति ॥”

(साहित्यद० ४।२५३)

अविचक्षित वाच्य ध्वनि जहां मुख्य अर्थ में अर्थान्तर अर्थात् अन्य अर्थ संक्रमित होती है अथवा अत्यन्त तिरस्कृत होती है, वहां यह ध्वनि भी दो प्रकारकी हुषा करती है, अर्थान्तर संक्रमित वाच्य और अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ।

उदाहरण—

“कदली कदली करमः करमः करिराजकरः करिराजकरः ।

सुभवनितयैऽपि विभक्तिं सुखामिदं मृदुयुगं न चमूदरघः ॥”

(साहित्यद० ४ परि०)

कदली कदली अर्थात् अत्यन्त शीतल है, करम हस्तके मण्डिस्थ है कनिष्ठ पर्यन्त करम अत्यन्त ऊँच है, हस्तोका मृच्छादण्ड अत्यन्त कर्कश है । अतएव इस मृगौदृशो श्लोक दोनो जहकी विभुवनमं किनोके भाय तुलना नहीं हो सकती । यहां पर कदली शब्दका साधारण अर्थ तो रभापट्टि है, पर इसे छोड़ कर अत्यन्त शीतल इस अर्थमें व्यवहृत हुषा है, जाचादि शुशविगिट मुख्य अर्थकी छोड़ कर दूसरे अर्थका बोध होता है और यहां जाचादिका भातिग्रथ्य और व्यञ्जनाशक्ति बोध्य है । अतएव यहां पर मुख्य अर्थ तिरस्कृत वा अन्य संक्रमित यही दो हुए हैं, इस कारण अर्थान्तर संक्रमित वाच्य और अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि यही दो अर्थ हुए ।

“निःश्लाघात्वं इवाद्दोदधनमा न प्रकाशते ॥”

(साहित्यद० ४ परि०)

निःश्लाघा द्वारा अन्य अर्थात् अप्रकाश आदर्शकी नाद चन्द्र प्रकाशित नहीं होता । यहां पर अन्य शब्दसे मुख्य अर्थका बोध ग भी कर अप्रकाशरूप अर्थका बोध होता है और अप्रकाशका जो भातिग्रथ्य है वह व्यञ्जना द्वारा बोध होता है, अतएव यहां पर भी वही ध्वनि हुई ।

“विचक्षितानिधेऽपि द्विदमः प्रथमं मतः ।

अवलक्ष्यकमो यत्र वन्द्योः लक्ष्यकमस्त्वया ॥”

(साहित्यद० ४।२५४)

जहां पर विचक्षित अर्थात् ज्ञेयनेके निमित्त यमि- प्रेत अर्थ, लक्ष्यको किसी प्रकारकी वाधा नहीं देता, उसका नाम विचक्षित वाच्य है । यह विचक्षित वाच्य ध्वनि

भी दो प्रकारकी है, अर्थात् सत्यक्रम और संलक्ष्यक्रम । जहां व्यञ्जना बोध्य अर्थ पोषार्थ सभी क्रम सम्यक् रूपसे अनुभूयमान नहीं होते, वहां अर्थात् सत्यक्रम और जहां व्यञ्जनाशक्ति द्वारा पोषार्थरूपमें सभी अर्थ सम्यक् रूपसे अर्थात् सत्यभावसे अनुभूयमान होते हैं, वहां संलक्ष्यक्रम ध्वनि होती है ।

“तत्रापोरसभावादिरेकएवात्र गच्छते ।

एकोऽपि भेदोऽनन्तरं वा सत्यमेतदस्यैव भवत् ॥”

(साहित्यद० ४।२५५)

इन दोनोंमेंसे अर्थात् सत्यक्रम ध्वनिके अनेक भेद रहने पर भी एकमात्र रसभावादि भेद होगा, इसीसे इसकी गणना सत्य नहीं है । जिस प्रकार मृद्गरका सम्भोग ही एकमात्र भेद है, किन्तु परस्पर चाखिङ्गन, चुम्बन और अघरपानादि भेद रहने पर भी उनकी गिनती नहीं होती, उसी प्रकार यहां पर भी रसभावादिके अनेक भेद प्रथमः उनकी गिनती न कर एकमात्र भेद कहा गया है ।

“शब्दायैमिवशक्तुमे व्यंगोऽनुस्वानवनिमने ।

ध्वनिलक्ष्यकमन्यरेवविधः कथितो नृपैः ॥”

(साहित्यद० ४।२५६)

जहां व्यङ्ग्य अर्थात् व्यञ्जना-बोधित अर्थ केवल शब्द शक्ति वा अर्थ शक्ति अथवा शब्द और अर्थ इन दोनों शक्ति द्वारा उचित होता है, वहां यह संलक्ष्यक्रम ध्वनि होती है । यह ध्वनि तीन प्रकारकी है, शब्दशक्त्युत्पत्ति, अर्थशक्त्युत्पत्ति और उभयशक्त्युत्पत्ति ध्वनि ।

शब्दशक्त्युत्पत्ति ध्वनि वस्तु और अलङ्कारके भेदसे दो प्रकारकी है,—शब्दशक्त्युत्पत्ति वस्तुध्वनि और शब्द-शक्त्युत्पत्ति अलङ्कारध्वनि ।

उदाहरण—

“धृक् ! नाहं संसारीऽस्ति मयाहं प्रत्यक्षदे प्राप्ते ।

अनन्तवयोपरं प्रेक्ष्य पुनर्गदं वसति तद् वद ॥”

(साहित्यद० ४ परि०)

साहित्यदर्पणमें यह श्लोक प्राकृत भाषामें लिखा है, किन्तु सुविधाके लिए हमने संस्कृत भाषामें कर दिया । यह श्लोक वाचार्थी पथिकके प्रति किसी नायिकाकी उक्ति है । हे पथिक ! इस याममें अनेक पथार हैं, यथ्यातल एक भी नहीं है, उन्नत पयोधर (भेद) देख कर यदि यहां

रचनेकी इच्छा हो तो रच सकते हो। इस घाममें एक भी ग्रन्थात्मक नहीं है, इसका तात्पर्य यह कि हमलोग पत्र पर मोते हैं, ग्रन्थाविधानका भी कोई नियम नहीं है और उन्नत पयोधर शब्दमें उन्नत स्तनका भी बोध हुआ तथा यहाँ पर संस्तरादि इस शब्द द्वारा यह बोध होता है कि यहाँ ग्रन्था नहीं है, इसका तात्पर्य यह कि यदि तुम उपभोगक्षम हो, तो मेरे समीप रह सकते हो। क्योंकि मेरे समीप कोई विशेष शयनयोग्य स्थान नहीं है, यही यहाँ पर इसका अर्थ होता है। अतएव यहाँ पर यह शब्द शक्त्युत्पन्नध्वनि हुआ। अलङ्कारादिको जगह भी इसी प्रकार जानना चाहिये।

बलुध्वनि और अलङ्कारध्वनि बारह प्रकारको है—

(१) स्तनः सन्धावी बलु द्वारा जहाँ व्यङ्ग्य अर्थात् व्यञ्जना बोधित होती, वहाँ बलुरूप व्यङ्ग्यध्वनि होती है। (२) स्तनः सन्धावी बलु द्वारा अलङ्कार जहाँ व्यङ्ग्य होगा, वहाँ अलङ्कार रूप व्यङ्ग्य ध्वनि होगी। (३) जहाँ स्तनःसन्धावी अलङ्कार द्वारा बलु व्यङ्ग्य होगी, वहाँ बलुरूप व्यङ्ग्य ध्वनि होगी है। (४) जहाँ स्तनःसन्धावी अलङ्कार द्वारा व्यङ्ग्यमान होगा, वहाँ अलङ्कार व्यङ्ग्यध्वनि होगी। (५) कवियोंकी प्रौढोक्ति सिद्ध बलु व्यङ्ग्य होनेसे बलुरूप व्यङ्ग्य ध्वनि होगी। (६) कवि-प्रौढोक्ति-सिद्ध बलु द्वारा अलङ्कार रूप व्यङ्ग्यध्वनि। (७) कवि-प्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार द्वारा व्यङ्ग्यमान बलुरूप व्यङ्ग्यध्वनि। (८) कवि-प्रौढोक्ति-सिद्ध अलङ्कार द्वारा व्यङ्ग्यमान अलङ्कार रूप व्यङ्ग्यध्वनि। (९) कवि-प्रौढोक्ति-सिद्ध बलु द्वारा व्यङ्ग्यमान अलङ्कार रूप व्यङ्ग्यध्वनि। (१०) कविनिबद्ध बलुद्वारा व्यङ्ग्यमान बलुरूप व्यङ्ग्यध्वनि। (११) कविनिबद्ध व्यङ्ग्य प्रौढोक्ति-सिद्ध अलङ्कार द्वारा व्यङ्ग्यमान बलुरूप व्यङ्ग्यध्वनि। (१२) कविनिबद्ध व्यङ्ग्य प्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार द्वारा व्यङ्ग्यमान अलङ्कार रूप व्यङ्ग्यध्वनि। यही बारह प्रकारके भेद हैं। यहाँ पर प्रत्येक लक्षणा उदाहरण विस्तारके भयमें नहीं दिया गया, केवल एक ही उदाहरण दिया जाता है।

“दिशि मन्दास्ये तेजः इक्षिप्तो रवेरपि ।

स्तम्भाश्च रयोः पादयोः प्रगाढं न विरेक्षिरे ॥”

(रघु ४ ४०)

दक्षिण दिशामें सूर्यका तेज मन्द हो गया था। पाण्ड्य नामक राजा अभी और रघुका तेज मन्द करने सके। सूर्यके दक्षिणायन होनेसे ही स्वाभाविक तेज मन्द हो गया, इस सूर्य तेजको अपेक्षा रघुका तेज अधिक है। इस प्रकार वास्तविक अलङ्कार ध्वनित हुआ। अतएव यह अलङ्काररूप बारह ध्वनि हुआ। ध्वनि कुल ११ प्रकारको है।

किर इसके भी कई भेद हैं। विस्तार हो जानेके भयमें उनका उल्लेख नहीं किया गया। आलङ्कारिक पाण्डित्योंके मतसे ध्वनि काव्यकी भाषा है।

इसका विषय शारदातिलकतत्त्वमें इस प्रकार लिखा है—

“सा प्रवृत्ते कुण्डलिनी शब्दप्रधानी विभुः ।

शक्तिं ततो वनिस्तद्वाम्नाद स्तवमाम्निरोधिकाः ॥”

(शारदातिलक)

शब्द प्रधानी, प्रधानरूपा है जो पहले कुण्डलिनी शक्तिकी प्रसव करती है। उनकी शक्तिसे ध्वनि और वन ध्वनिसे नाद उत्पन्न होता है। अत्यव्युक्त चित्शक्तिशब्द वाच्य है, यह भाषाशस्त्ररूप है। इस चित्से रजोबहुला होनेसे यह ध्वनि कहलाती है।

पाथात्य यै शान्तिकोंके मतसे— किसी कारणवश जड़ पदार्थके परमाणुका उत्कम्पन हो कर, वह उत्कम्पन वायु वा किसी प्रकारके परिचालक द्वारा जब कणक्षर में पहुँचता है, तब अव्यभिचार्यमें जो एक प्रकारकी वस्तु भूति उत्पन्न होती है, उसका नाम ध्वनि है। व्यक्त और अव्यक्तके भेदसे ध्वनि दो प्रकारकी है। मनुष्योंके कण्ठ तालु आदिके परिघातसे जो ध्वनि उत्पन्न होती है, उसे व्यक्त ध्वनि कहते हैं। सङ्गीतगायनेत्यादि इस प्रकारकी ध्वनियोंकी मधुर और मठोर इन दो भागोंमें विभक्त किया है। जब निर्दिष्ट संख्यक उत्कम्पन उत्पन्न होता है, तब उसे मधुरध्वनि कहते हैं। अनियमित उत्कम्पन द्वारा जो ध्वनि उत्पन्न होती है, यही कर्काश ध्वनि है। शब्दायामात्र द्रव्योंकी अणु की आन्दोलित होती है, वे मजहमें प्रतिपन्न किये जा सकते। किसी धातु निर्मित यात्रीके ऊपर कुछ बालू रख कर जब उसे चलाने

है, तब ऐसा मालूम पड़ता है, कि वह बालू नाच कर रहा है, यदि बालूके अणु क्षणिक नहीं होते तो उसके ऊपरका बालू कभी नाच नहीं करता। शब्दायमान द्रव्यके समस्त अणु भीके उत्क्रमणसे तत्प्रसिद्धित वायुरागमिं एक प्रकारकी तरङ्ग उत्पन्न होती है और वह तरङ्ग जब कण कूहरमें आघात करती है, तब एक प्रकारका शब्द उत्पन्न होता है। शून्य प्रदेशमें ध्वनिकी उत्पत्ति नहीं होती। वायु जिस प्रकारका शब्द परिवालन कर सकती है, उसी प्रकार तरल और कठिन पदार्थ भी शब्द परिवालन कर सकते हैं। परीक्षा द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि वायुरागमिके मध्य हो कर ध्वनितरङ्ग प्रति सेकेण्डमें ११२८ फुट जाता है।

१ शब्दका स्फोट, शब्दका फूटना, आवाजकी गूँल, नादका तार। ४ भाग्य, शुद्ध धर्म, मतलब।

ध्वनिकार—ध्वन्यालीक ग्रन्थकी सुचसमूहके प्रणेता। काव्य-प्रकाश, काव्यचन्द्रिका, अलङ्कारसर्वस्व, काव्यप्रदीप और साहित्यदर्पणमें इनका सुच उद्धृत हुआ है।

ध्वनिकाव्य (सं० स्त्री०) उत्तम काव्य।

ध्वनिकृत (सं० पुं०) ध्वनि तत्प्रतिपादक ग्रन्थ करोति कर्त्तव्य, तुल्य। अलङ्कार-ग्रन्थकारके एक पण्डित।

ध्वनिग्रह (सं० पुं०) ग्रह भावे घप, ध्वनिः शब्दस्य ग्रहः ग्रहणं यसमात्। गोल, कर्ण, कान।

ध्वनि (सं० स्त्री०) ध्वन्यन्तस्मिन् धन-त्त। १ शब्दित, शब्द किया हुआ। २ व्यञ्जित, प्रकट किया हुआ। ३ वादित, बजाया हुआ। (पुं०) ४ शृङ्गादि वाजा।

ध्वनिमाला (सं० स्त्री०) ध्वन्युत्पादक नाम यस्याः। १ गोपा। २ वैष्ण, वासुदेवी। ३ काहल बाद्यमेद, एक प्रकार का बड़ा ढोल।

ध्वनिकार (सं० पुं०) ध्वनिर्निकारः इत्तत्। विकृत ध्वनि, शोक भयादिके द्वारा ध्वनिका ग्रन्थयाभाव। ध्वनिबोधक (सं० पुं०) ध्वनि बोधयति बुध-णिच्-खल्। रोहिषप्लव, रोहिंस घास।

ध्वन्य (सं० पुं०) ध्वन-कर्मणि यत्। १ व्यंग्यार्थ। २ श्रुत्वेद प्रसिद्ध राजा लक्ष्मणके एक पुत्रका नाम।

ध्वन्यात्मक (सं० स्त्री०) १ ध्वनिमय, ध्वनिसम्पन्न। २ जिस में व्यंग्य प्रधान हो।

ध्वन्यार्थ (सं० पुं०) वह अर्थ जिसका बोध वाच्यार्थ न हो कर केवल ध्वनि या व्यंग्यनाम हो।

ध्वस् (सं० स्त्री०) हिंसिका।

ध्वसन् (सं० स्त्री०) ध्वनस अन्तर्भूतस्यै कणिन्। ध्वंस-कारक, नाश करनेवाला।

ध्वसन (सं० स्त्री०) ध्वंसते इव ध्वंस बाहुलकात् धाधारे क्य। ध्वंसन स्थान।

ध्वमनि (सं० पुं०) मेघ, बादल।

ध्वमति (सं० पुं०) ध्वनस भिच्च किञ्च। ऋग्वेद प्रसिद्ध एक ऋषिका नाम।

ध्वमिर (सं० स्त्री०) ध्वनम किरच, नाशप्रतियोगी, जिसका नाश हुआ हो।

ध्वन्त (सं० स्त्री०) ध्वस्यते इमं इति ध्वन्त-त्त। १ श्रुत, गलित, गिर पड़ा। २ नष्ट, भ्रष्ट। ३ खण्डित, भग्न, टूटा फूटा। ४ परास्त, पराजित।

ध्वस्ति (सं० स्त्री०) ध्वंस भावे तिन्। १ ध्वंस, नाश, चय। कर्मणि ध्वंसन्ते इव धाधारे-तिन्। २ कर्मचय-की आधार विद्यामेद।

ध्वंसन् (सं० स्त्री०) ध्वनस बाहुलकात् मनिन् किञ्च। ध्वंसक, नाश करनेवाला।

ध्वंसन्त्वत् (सं० स्त्री०) ध्वन्मा ध्वंसो विद्यते इत्यध्वंस मत्तुप मस्य च। १ ध्वंसयुक्त, जिसका नाश हो। (पुं०) २ उदक, जल, पानी।

ध्वस (सं० स्त्री०) ध्वनस-रक्त, १ नष्ट, बरबाद। एष्ये रक्त, २ ध्वंसक, नाश करनेवाला।

ध्वन्त इमं जगद् धो विभक्तिको जगद् धाच, हुआ है। (पुं०) १ राजभेद, एक राजाका नाम।

ध्वाङ् (सं० पुं०) ध्वाचि घच्। १ काक, कौवा। २ मरस-भचक पक्षी, बगला। ३ तथक। ४ भिक्षुक।

ध्वाङ्गजङ्घा (सं० स्त्री०) ध्वाङ्गस्य जङ्घा इव पाकृति यस्याः। काकजङ्घा, चकसेनी, मसो।

ध्वाङ्गज्व (सं० स्त्री०) ध्वाङ्गः काकः तद्वत् ज्वणमर्थं जम्बुः। काकजम्बु, काला जामुन।

ध्वाङ्गतुण्डी (सं० स्त्री०) ध्वाङ्गतुण्ड घच् ततो ङोप, काकनाभा सता।

ध्वाङ्गदण्डी (सं० स्त्री०) ध्वाङ्गस्य दण्ड इव भाकृतिरस्य स्या, घच् ङोप। काकतुण्डी, कोपार्टोटी।

ध्वाह्नघी (मं० स्त्री०) ध्वाह्न्य मयमिव घालितरस्य-
स्याः घञ् डोप् । काकतुण्डी, कौघाटोटो ।

ध्वाह्ननाम्नी (मं० स्त्री०) काकोदुस्वरिका, कठगूनर ।

ध्वाह्ननाम्नी (मं० स्त्री०) ध्वाह्नं भाग्यन्तीति नग-पिनि
डोप् । १ बुधा, एक प्रकारका फल ।

ध्वाह्ननामिका (मं० स्त्री०) ध्वाह्न्य नामिका इव फलं
यस्याः काकनामानता, कौघाटोटो नाम ही नता ।

ध्वाह्नपुट (मं० पुं०) ध्वाह्न्य काकेन पुटः प्रतिपादितः
३-तत् । कौकिल, कौयल ।

ध्वाह्नमाची (सं० स्त्री०) ध्वाह्नान् मञ्चते फलदानेन, मञ्च-
णम्, ततो गौरादित्वात् डोप् । काकमाची, मकीय ।

ध्वाह्नवन्नी (मं० स्त्री०) ध्व-ह्वत् इहो नता । काकनासा
नता ।

ध्वाह्नदानी (सं० स्त्री०) ध्वाह्नाणां काकानां ददनी ३-तत् ।
काकतुण्डी, कौघाटोटो ।

ध्वाह्नघागति (मं० पुं०) ध्वाह्न-घाणां घरातिः । पेषक ।

ध्वाह्नची (मं० स्त्री०) ध्वाह्न-च-पच् डोप् । कको-
चिका, गीतलचीनी ।

ध्वाह्नचोली (मं० स्त्री०) काकोली, सगावरकी तरहका
एक प्रकारका कन्द ।

ध्वान (मं० पुं०) ध्वन भावे घञ् । शब्द, धावाज ।

ध्वानायन (मं० पुं० स्त्री०) ध्वनय शब्दे गौत्रापत्यं
पञ्चादि० फञ् । ध्वन शब्दिका गोत्रोपत्य ।

ध्वान्त (मं० स्त्री०) ध्वन शब्द प्रत्ययेन निपातनात् साधु
(ध्रुवायान्तध्वान्तेति । पा ७।२।१८) १ तम, पञ्चकार,
पञ्चरा । २ तमः प्रधान नरकमेदः, एक नरक जहा
इमेमा पञ्चकार रहता है ।

ध्वान्तचर (सं० पुं०) राक्षस, निगाचर ।

ध्वन्तवित्त (सं० पुं०) ध्वान्तो पञ्चकारे वित्तः प्रदितः ।
खुद्योत, खुगुन ।

ध्वान्तशब्द (मं० पुं०) ध्वान्तशब्दव देधो ।

ध्वान्तशास्त्रव (सं० पुं०) ध्वान्तस्य शास्त्रवः । १-तत् । १
सूर्य । २ चन्द्र । ३ चन्द्रमा । ४ शोभाकण्ठ, खोटा ।
५ खेतवर्ष ।

ध्वान्ताराति (मं० पुं०) ध्वान्तस्य परातिः । १ चन्द्र, सूर्य,
अग्नि ।

ध्वान्तोन्मेष (मं० पुं०) ध्वान्ते उन्मेषः प्रकाशो यस्य ।
खुद्योत, खुगुन ।



न



न—संस्कृत और हिंदी व्यञ्जनवर्णों का बीसवाँ वर्ण और तवर्ग का पञ्चम प्रचर। इसका उच्चारणस्थान दन्त है। “दन्तश्च लघुत्वः स्मृतः ॥ (गिष्ठा १०) पर्याय—मेघ, दोर्घी, सीरि। (बीजप्रमाण) ५४ वर्णों के उच्चारण में अन्त्यतर प्रयत्न और जिह्वा के अग्रभाग की दाँतों की जड़ से स्पर्श होता है। बाह्य प्रयत्न सँवाद, नाद, घोष और अक्षप्राण है। इसके वाचक शब्द ये हैं—

गर्जिनो, चमा, सीरि, वाहणी, विमलपावनी, मेघ, ध्वनिता, नैत, दन्तुर, नारद, अचल, ऊँगाँसो, हिरण्य, वामपादाङ्गुलिनख, वैगतेय, सुति, वर्जभय, अन्नर्वा, निरागत, वामन, ज्वालिनी, दोघ, निरोध, सुगति, वियत्, शब्दात्मा, दीर्घघोषा, हस्तिनापुर, मेचक, गिरिनायक, नील, शिव, चनादि और महामति।

इसकी लिखन-प्रणाली इस प्रकार है—‘न’ यह चन्द्र, सूर्य और अग्नि स्वरूप है; तथा बायीं नाम से इसकी प्रसिद्धि है।

इसका ध्यान इस प्रकार है—

“ध्यानमय नकारस्य वक्ष्यते शृणु मांभिनि ।
इति साधनवर्गोऽस्य सल्लिख्यो ह्यलोचन” ॥
चतुर्भुजां कोटराचीं चावचन्दनवर्जितां ।
कृष्णरश्मिरोपानाभीपद्मास्त्रिभुवीं सदा ॥
एवं ध्यात्वा नकारस्य तत्तत्पुण्यं दशधा वपेत् ॥”

(वर्णोद्धारतन्त्र)

यह वर्ण अतिशय कृष्ण, लल्लिख्य, सुलोचना, चादि-वस्तुयुक्ता, चतुर्कोटरप्रविष्टा, चावचन्दनादिवर्जिता, कृष्ण-वस्त्रविशिष्ट और सप्तदा ईषत् हास्ययुक्त है। इस प्रकार नकारका ध्यान कर उक्त मन्त्रका दश बार जप करना चाहिए।

नकारका स्वरूप—

“नकारं शृणु चावर्गो कोटिविषु स्फुटारुहति ।

वचदेववर्णं वर्णं इति भावय पावति ॥” (होमधेनुतन्त्र)

यह नकार स्वयं परम कृष्णही, और कोटिविषु कृता

शब्द है, इसकी भावति पञ्चदेवमय और प्राणात्मक है। माट्टकान्वासर्गे इस नकारके वामपादके चतुर्लिनखमें ग्रास होता है। काव्यके आदिमें इस वर्ण का विन्यास करनेसे सुख प्राप्त होता है। (हत्तरभाकरटी०)

२ चतुर्वधविशेष। ‘न’ यह शब्द सुगन्धोष्णके सुचादि-गन्धका बोधक है।

न (सं० चक्षु०) नह वन्धने नश नाशे वा-ह। १ निषेध, नहीं, मत। पर्याय—नहि, च, नो, अभाव, घना, ना। विधि, चतुष्ठा, चतुष्टुतमज्ञाव चादि कुछ विशेष स्थलों पर भी ‘नहीं’ के स्थानमें ‘न’ आता है। २ कि नहीं, या नहीं। ३ उपमा। ४ नकार स्वरूप वर्ण। ५ वन्ध। ६ सुगत। ७ हिरण्य, सोना। ८ रत्न। ९ सुत। वज्र, देखो। नरहर (हिं० पु०) माताका गृह, स्त्रियोंकी माताका घर, मोहर, मायका।

नई (हिं० वि०) नयाका स्त्रीलिङ्ग।

नरकी (हिं० स्त्री०) लोकी नामक फल।

नरचा (हिं० पु०) गाल देखो।

नररंग (हिं० स्त्री०) नारंगी देखो।

नरर (हिं० पु०) नेवला देखो।

नरपंक (हिं० पु०) वह छोड़ा जिसकी अवस्था पांच वर्ष की है, जवान छोड़ा।

नंगा (हिं० पु०) १ नग्नता, नंगापन, नंगी स्त्रीका भाव। २ पुत्र अङ्ग, गरोरका लिया हुआ भाग। (वि०)

३ सुचा, नंगा, बंदमाथ और बंधा।

नंगवडंग (हिं० वि०) विवस्त्र, दिगम्बर, जिसके गरोर पर एक भी वस्त्र न हो।

नंगपेरा (हिं० वि०) जिसके पैरोंमें जूता न हो, जिसके पाँव नंगी हों।

नंगसुनगा (हिं० वि०) नंगवडंग देखो।

नंगर (हिं० पु०) केंपर देखो।

नंगरवारी (हिं० पु०) एक प्रकारको साधारण नाथ जो

समुद्रमें चलता है और तुफानके समय किसी रचित स्थान पर खंगर डाल कर ठहर जाता है।

नंगा (हि० वि०) १ वस्त्रहीन, दिगम्बर, विवस्त्र । २ लुगा, पाजो । ३ निराल, वैध्या, धैर्य । ४ जिसके ऊपर किसी प्रकारका आवरण न हो, जो किसी तरह टंका न हो, खुला हुआ । (पु०) ५ शिव, महादेव । ६ एक बड़ा पर्वत जो कामरूपी सीमा पर अवस्थित है ।
 नंगाभोरो (हि० स्त्री०) नंगाभोरी देखो ।
 नंगाभोली (हि० स्त्री०) किसीके पहने हुए वस्त्रोंकी छतरवा कर या वीं हो अच्छी तरह देखना जिसमें छिपाई हुई चीजका पता लग जाय, जामातलाशी ।
 नंगाबुंगा (हि० वि०) १ जिसके ऊपर कोई आवरण न हो, जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो ।
 नंगाबुछा, नंगाबूछा (हि० वि०) भागना दीन, बहुत दरिद्र, कंगाल ।
 नंगा मादाजाद (हि० वि०) ऐसा लन जैसा माताके सदरमें निकलनेके समय होता है, विलकुल नंगा, शक्ति नंगा ।
 नंगामुनंगा (हि० पु०) जिसके शरीर पर एक सूत भी न हो, विलकुल नंगा ।
 नंगालुचा (हि० वि०) जीव चीरदुष्ट, बदमाश ।
 नंगियाना (हि० क्रि०) १ शरीर पर वस्त्र न रहने देना, नंगा करना । २ सब कुछ कोन लेना, कुछ भी पास न रहने देना ।
 नंदना (हि० स्त्री०) पुत्री, घीठी, लड़की ।
 नंदकण (हि० पु०) एक प्रकारका पेड़ जो अश्रुत जातिका होता है । इसके पत्ते रेशमके कोड़ोंकी खानेके लिये दिये जाते हैं ।
 नंदिन (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली । यह बहाम्ब घोर खासाममें पाई जाती है और तीन फुट तक लम्बी होती है और तोसमें बाध मनको होती है ।
 नंदो (हि० पु०) मदिन देखो ।
 नंदीघंटा (हि० पु०) बैलके गलेमें बांधनेका बिना डाढ़ीका घंटा ।
 नंदोई (हि० पु०) पतिका बहनोई, मनदका पति ।
 नंदोना (हि० पु०) मछीकी बड़ी माँद ।
 नंदोषी (हि० पु०) नंदोई देखो ।
 नंबर (पं० पु०) १ गणना, गिनती । २ संख्या, गङ्ग,

पदद । ३ एक प्रकारका गज जिसमें कपड़ा भाग जाता है । यह गज ३ फुट या ३६ इंच लम्बा होता है । ४ स्त्री-पमड़, भोग । ५ किसी सामयिक पत्र वा पुस्तक आदिकी कोई एक संख्या या पङ्क्ति ।
 नंबरदार (हि० पु०) घासका वह जमींदार जो अपनी पट्टीके चौर छिछोदारोंके मानगुजारी आदि वसूल करनेमें सहायता दे ।
 नंबरवार (हि० क्रि० वि०) क्रमगः, पद्याक्रम, मिश्रमिश्रवार, एक एक करके ।
 नंबरिंग्, मणोन (पं० स्त्री०) वह पत्र जिसमें रसोदी, टिकटों आदि पर क्रम-संख्या छापीये हैं ।
 नंबरी (हि० वि०) १ जिस पर नंबर लगा हो, नंबरवाला । २ प्रसिद्ध, मशहूर ।
 नंबरीगज (हि० पु०) नंबर देखो ।
 नंबरीवेर (हि० पु०) चंगरेजी रूपोंके पं० भरका तोसनेका एक वेर, चंगरेजी वेर, बीस गंठो वेर ।
 नंबूरी (हि० पु०) मसवार पान्तके ब्राह्मणोंको एक जाति । नम्बूरी देखो ।
 नंग (सं० पु०) नागन, ध्वंस, बरबादी ।
 नंगन (सं० स्त्री०) नंग-स्पृष्ट । नागन, ध्वंस ।
 नंगक (सं० क्रि०) नग्नतोति नग-ध्वन-मुमानय । (वचनशेषोक्तं कृष्णोच्यते । उच्यते २।१०।) १ नागक, नाग या बरबाद करनेवाला । (पु०) २ अप, छोटा टुकड़ा, कण ।
 नंग (सं० वि०) नग-तथ, नुमथ, (नग-प्रतियोगि । वा ७।१।६०) नागाथय, नाग-प्रतियोगी ।
 नंगथ (सं० स्त्री०) नग-तथ । नागका योग्य, बरबाद होनेवाला ।
 नंगुद (सं० वि०) नग नासिकश सुदः । सुदनासिक, छोटी नाकवाला ।
 नक् (सं० प्रथम) नग-क्षिप, वादुमकात् कुल । रात्रि, रात । (उच्यते ७।८।११) ।
 नकंद (हि० पु०) कागड़में होनेवाला एक प्रकारका बहिया आवरण ।
 नककटा (हि० वि०) १ जिसको नाक कटो हो । २ निसंज, वैधर्म्य, वैध्या । ३ जिसकी बहुत दुर्दगा हुई

हो। ४ जिसको बहुत अप्रतिष्ठा या बदनामी हुई हो।
५ जिसके कारण अप्रतिष्ठा हो।

नककटापंथ (हि० पु०) एक कल्पित पंथका नाम।
दत्तकथा है, कि एक समय किसी कारण एक मनुष्य-
को नाक कट गई। तब वह दूसरे लोगोंकी भी अपने
ही मरिखा बनानेके उद्देशसे लोगोंसे प्रह्लाद करने लगा,
कि नाकके कट जानेके कारण ही मुझे ईश्वर देखनेमें
आ रहे हैं। उसको बात पर विश्वास करके बहुतसे
लोगोंने अपने नाक कटा डाली। ईश्वरके दर्शन तो
किसीको न होते थे, लेकिन नककटे होनेके अपवादसे
वचने और दूसरोंकी भी अपने समान बनानेके लिये वे
उस पहले नककटेकी बातका खूब समर्थन करते थे।
इसी कहानीके आधार पर लोगोंने इस 'नककटे पंथ'
की कल्पना कर ली।

नककटी (हि० स्त्री०) दुर्दशा, अप्रतिष्ठा या बदनामी।
२ नाक कटनेकी क्रिया।

नकचिसनी (हि० स्त्री०) १ लमीन पर नाक रगड़नेकी
क्रिया। २ बहुत अधिक दीनता, भ्राजिनी।

नकचढ़ा (हि० पु०) चिड़चिड़ा, बड़-भिजाज।

नकक्षिकनो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी घास। इसकी
पत्तें बहुत महीन महीन और कटावदार होते हैं।
इसके फूल सुँड़ोंके आकारके और गुलाबी होते हैं जिन्हें
सूँदनेसे कीर्तन भाने लगती हैं। यह चरपरी, रुखी,
गरम, रुचिकारक, अमिनदीपक, पित्तकारक और वात,
कफ, कुष्ठजमि, रक्तविकार तथा दृष्टिदोषनाशक है।
इसका संस्कृत पर्याय—चवकत, तीक्ष्ण, क्षिकिका,
प्राणपटुःखदा, उष्ण, संवेदनापटु, उष्णगन्धा, चवक
और क्षिकनी है।

नकटा (हि० पु०) १ वह जिसकी नाक कट गई हो।
२ एक प्रकारका गीत। इस गीतकी स्त्रियां विशेष पव-
सरो पर और विशेषतः विवाहके समय गाती हैं। ३
सक्त गीत गानेका भयसर या सखस। ४ एक प्रकारका
पत्ती। (वि०) ५ जिसकी नाक कटी हो। ६-जिह्वा,
बेहया, बेधर्म। ७ अप्रतिष्ठित, जिसका बहुत अप्रतिष्ठा
या दुर्दशा हुई हो।

नकटसर (हि० पु०) एक प्रकारका पीधा। यह सिर्फ
फ लोंके वास्ते लगाया जाता है।

नकड़ा (हि० पु०) वैलौका एक रोग। इसमें उनको
नाक सूख जाती है और जिसके कारण उन्हें श्वास लेनेमें
बहुत कष्ट होता है।

नकतोड़ा (हि० पु०) कुम्होका एक घेँघ।

नकतोड़ा (हि० पु०) बहुत घन चबे नाक भी चढ़ा कर
मखरा करना अथवा कोई बात कहना।

नकद (अ० पु०) १ धन जो सिक्कोंके रूपमें हो, तैयार
रूपया, रूपया पैसा। (वि०) २ जो तैयार हो, जो
तुरंत काममें लाया जा सके। ३ खान। (क्रि० वि०) ४
उधारका चसला, तुरंत दिए हुए रुपयेकी बदलीमें।

नकदावा (हि० पु०) वह बरी या कुम्होरो जो चने
या मटरको दाबनेके साथ पकाई गई है।

नकदी (अ० स्त्री०) १ धन, रोकड़, रूपया पैसा। २
वह प्रमीन जिसको मानगुमारी नकद रूपयोंमें ली जाती
है, जमई।

नकना (हि० स्त्री०) नाकमें दम होना, हैरान होना वा
हैरान करना।

नकफूल (हि० पु०) एक प्रकारका लौंग जो नाकमें
पड़ना जाता है।

नकव (अ० स्त्री०) वह बड़ा छेद जो चोरी करनेके लिये
दीवारमें किया जाता है। इसमेंसे हो कर चोर किसी
कोठरो आदिमें घुसता है, घेँघ।

नकवजन (अ० पु०) घेँघ लगानेवाला, चोरो करनेके
लिये दीवारमें छेद करनेवाला।

नकवजनी (अ० स्त्री०) घेँघ लगानेकी क्रिया।

नकबेसर (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी कोटी नय जो
नाकमें पड़नी जाती है, बेसर।

नकमोती (हि० पु०) नाकमें पड़नेकी मोती। इसे
कोई कोई लटकन भी कहता है।

नकस (अ० स्त्री०) १ वह जो किसी दूसरेके ढंग पर
उसकी तरह तैयार किया गया हो, अनुकृति, कापी।
२ लेख यादिकी अक्षरयः प्रतिलिपि, कापी। ३ अनु-
करण, एकके अनुरूप दूसरी वस्तु बनानेका कार्य। ४
स्वाक्ष, किसीके वेष, हावभाव या बातचीत आदिका
पूरा पूरा अनुकरण। ५ अशत और हास्यजनक
आकृति। ६ हास्य-रसकी कोई कोटी मोटी कहानी या
बातचीत, उटकुला।

नकल-उस-मैतान-अजोवर देयका एक प्रकारका खजूर-
का पद। इसमें अनेक शाखाएँ निकलती हैं। प्रत्येक
शाखा का मध्यकाष्ठ मनुष्य के कण्ठ के भाँसा स्थूल होता
है। प्रतिगात्रा २०।४० फुट लम्बी होती है। इसकी
रिखायें लंब चौड़ी होती हैं। चरबीभाषामें इसे
‘मैतानका खजूर’ कहते हैं।

नकलनवीस (फा० पु०) यह मनुष्य, विशेषतः आदलत
या दफ्तर आदिका मुहरिं जिसका काम केवल दूसरे-
के लिखीको नकल करना होता है।

नकलनवीसो (फा० फ्री०) १ नकलनवीसका काम।
२ नकलनवीसका पद।

नकलनो (हि० पु०) एक प्रकारका पत्थो। कोई कोई
इसे सुनिया भी कहता है। सुनिया देखो।

नकलवाखाना (फा० पु०) पत्थोका भाई, खाना।

नकलघड़ी (हि० फ्री०) दफ्तरों या दूकानों आदिका
खाना। इसमें मीजो जानिवालो बिहीयोकी नकल
रहती है।

नकना (फा० वि०) १ जलम, बनावटी, जो असली न
हो। नकली वस्तु अकसर निकली घोर निजट समझी
जाती है। इस कारण लोगोंमें इसका आदर नहीं होता।
२ रोटा, जाली, झूठा, जो असली न हो।

नकनेल (हि० फ्री०) यह रस्सी जो नाव खींचनेके
लिए गोदरखेमें बँधी रहती है और सब रस्सियोंसे बाँधी
रहती है।

नकनोस (हि० पु०) नकनोस देखो।

नकन (फा० पु०) १ नकन देखो। २ एक प्रकारका लुभा।
यह दो या अधिक मनुष्योंसे ताशके पत्थोंसे खेला
जाता है। इसमें सब खिलाड़ियों को पहले एक एक
पत्ता बाँट दिया जाता है और बाद एक एक खिलाड़ी-
को असल पक्ष उठके सामने पर और पत्ते दिये जाते
हैं। इसमें पत्थोंकी बूटियोंकी गिन कर बार जीत मानी
जाती है।

नकनमार (हि० पु०) ताशके पत्थोंसे खेले जानिका
नकन नामका लुभा।

नकनो (हि० पु०) नकन देखो।

नकनवीस (हि० पु०) नकनवीस देखो।

नकनी (हि० वि०) नकनी देखो।

नकनीमेना (हि० फ्री०) तलिया नामकी एक प्रकारकी
मेना।

नकनमार (हि० पु०) नकन देखो।

नकना (हि० पु०) नकन देखो।

नकनोर (हि० फ्री०) चापसे चाप नाहने रह बहना।

यह बीमारी विशेष कर गरमीके दिनोंमें बूझा करती
है। ये रोगमें इसे रक्तपित रोगके अन्तर्गत माना है।

जब रक्तपितकी बीमारी होती है, तब सुँह, नाक,
पाँव, कान, गुदा और योनि या किन्हीं से स्रव गिरता है।

यदि यह स्रव अधिक मात्रामें बड़े, तो ममभना चाहिये
कि रोगकी प्रायु निकट या गई। अधिक चाँच या

धूप लगने, रास्ता चलने और जोर ध्यायाम या मोधुन
करनेसे भिन्न भिन्न मार्गों द्वारा रक्त बहने लगता है।

स्त्रियोंका रज जब रुक जाता है, उस समय भी यह
रोग हो जाता है। विशेष विवरण रक्तपितमें देखो।

नकानिया (वि० फ्री०) संस्कृत नाचत्रिका। वि० बलवा
देवना। ये लोग वर्षाका फलाफल, जलवायुका हमाद्यम

और जातक गणना करके जीविकानिर्वाह करते हैं। दो
हजार वर्ष पहले इन लोगोंकी जैसी वृत्ति थी, आज भी

प्रायः वही तरहकी है। वि० बलमें फलित ज्योतिषका
बड़ा आदर है। अत्यन्त उच्चयोगसे ले कर अत्यन्त निम्न
योगोंके अल्पतक सभी यह विद्या सीखते हैं।

नकाब (फा० पु० देखो) १ सुँह छिपानेका महीन रंगीन
कपड़े या जालीका टुकड़ा। यह सिर परसे ले कर

गले तक डाला दिया जाता है। विशेष कर चार
देगकी स्त्रियाँ इसका व्यवहार करती हैं। अभीके

संस्कारोंसे यूरोपमें भी इसका व्यवहार होने लगा है।
सुसलमानों स्त्रियाँ अपना वदन छिपानेके लिये इसे

काममें लाती हैं, ले किन यूरोपियन स्त्रियाँ पुनः और
कीकड़ी पतंगों आदिसे बहने तथा मोभा बढ़ानेके लिये

इसका व्यवहार करती हैं। प्राचीन कालमें जब अजरत
पड़ती थी, तब पुनः भी इसका व्यवहार करते थे।

२ साड़ी या चादरका वह भाग जिससे स्त्रियाँ अपना
मुख ढक लेती हैं, घुँघट।

नकार (फा० पु०) १ गश्कदर घब, नहीं। २ अन्तो-
कति, इनकार।

नकारची (हि० पु०) नकारची देखो ।
नकारना (हि० क्रि०) अस्वीकृत करना, इनकार करना ।
नकारा (फा पु०) नकार देखो ।
नकाश (हि० पु०) नक्काश देखो ।
नकाशना (फा क्रि०) धातु, पथर आदि पर बेल बूटे आदि बनाना ।
नकाशी (हि० स्त्री०) नक्काशी देखो ।
नकाशीदार (फा वि०) बेल बूटेदार, जिसपर नकाशी हो ।
नकास (हि० पु०) नक्काश देखो ।
नकासना (हि० क्रि०) नक्काशना देखो ।
नकासी (हि० स्त्री०) नक्काशी देखो ।
नकासोदार (हि० वि०) नकाशीदार देखो ।

नकि—सुसलमानोंके चारह इमामोंमेंसे एक मनुष्य । इनका पूरा नाम अली नकि है । इमामकी गणनामें ये दशमें हैं और अलीके वंशोद्भव माने जाते हैं । इनके पिताका नाम अबम इनाम मक़्कद तक था । ७२२ ई० में १२५ हिजरीमें इनका जन्म हुआ । बगदादके भक्तगर्त सर-समराय (नामिरा) नामक स्थानमें इनका समाधि-मन्दिर है ।

न-कि—फाहियनके भ्रमणवृत्तान्तमें भारतके उत्तरवर्ती इस नामके एक देगका विवरण पाया जाता है । वहुनी का अनुमान है, कि यहाँ बौद्धशास्त्रीक बकुल नामक जलपट है ।

नकिश्चन (सं० लि०) नासि किश्चन यस्य, अथ नजयस्य न शब्दस्य 'सहस्रपति' समासः । नकिश्चन, दरिद्र, क'गास । 'तवैकाम रवेदीनाः स्थानमथ नकिश्चन ।'
(भारत ४० १३२ अ०)

नकिश्च (सं० अर्थ०) नाकिश्च चादिपाठात् अर्थः 'थत्' नशब्देन समासः । यज'नाथ', रोकनेके लिये ।

नकिथाभा (हि० क्रि०) १० शब्दोंका अनुमासिकवत् सञ्चार्य करना, नाकसे कोलना । २ बहुत दुःखी या शेरान होना या करना, नाकमें दम आना या करना ।

नकिस् (सं० अर्थ०) नकिस् ऐषोदरादित्वात् साधु । निवारण, यज'न, रोकनेकी क्रिया ।

नकीब- (फा पु०) चारण, बन्दीजन, भाट । ये लोग

राजाओं आदिके आगे उनमें तथा उनके पूर्वजोंके यशका भान करते हुए चलते हैं । बादशाहों या नवाबोंके यहां जो नकीब रहते, केवल सवारोंके आगे वे सिर्दावसीका बगान करते ही नहीं चलते, बल्कि किसीकी उपाधि या पद आदि मिलनेके समय यथा किसी बड़े पदाधि-कारीके दरबारमें आनेके पहले उनकी घोषणा भी करते हैं । २ कड़खा गानेवाला पुरुष, कड़खेत ।

नकीब खाँ मुगल-सम्बन्ध-भक्तिके समयके एक नव-शती मनसबदार । इनका असल नाम मोर गियास-उद्दौन चली था । इनके पिताका नाम था मोर अबदुल खतोफ । ईरानके भक्तगर्त कोजाजवीन नामक स्थानमें इनके वंशका हमेशाका वास है । ये सैफी सैयद हैं । दिग्गमें ये लोग सुन्नी-मतवाले हैं । इनके पितामह मोर एहिया धर्मशास्त्रदर्शी प्रसिद्ध दार्शनिक पण्डित थे । मोर एहियाका ऐतिहासिक ज्ञान भी बढ़ा चढ़ा था । वे सुसलमान-धर्मके संस्थापनसे ली कर अपने समय तककी धर्म-सम्बन्धी सम्पूर्ण घटनाओंकी तारीख तक बतला सकते थे । एहियाने पारस्यके राजा शाह तमास-इ-सफवी द्वारा अनुष्ठान हो कर यथेष्ट शक्ति खाम की थी । अन्तमें यह पञ्चकी प्रोचनाने बिना अफराकसे वे पारस्यराज द्वारा बन्दो हुए और कारागारमें हो उनकी मृत्यु हो गई । मोर अबदुल खतोफ, पिताके बन्दो होनेका संवाद पाते हो गिलान नामक स्थानका भाग गये और पोछे वे दिल्लीके सम्बन्ध-हुमायूँके आह्वानानुसार हिन्दुस्तानमें आये । भक्तिके निःहासनारोहणके साथ साथ वे अपने परिवारवर्गको भी यहां ले आये । आचारोहणके दूसरे ही वर्ष भक्तिके मोर अबदुल खतोफकी अपने शिष्यके पद पर नियुक्त किया । इस समय तक भक्तिके लिखने-पढ़नेके कोरे थे । नकीबकी शिष्यकृतार्थ बहुत पोछे ही दिनोंमें बादशाह हाफिज पढ़ने लगे और पाठ करना सोख गये । मोर साहब स्वयं धर्मके विषयमें बड़े धरन और सुविवेचक थे । उन्होंने ही भक्तिके मूल-हो कुल, अर्थात् 'सर्वोंके साथ ज्ञान, व्यवहार' की शिक्षा दी थी । जिस समय बैरागखी राजाजुमहसे वधित हो कर आगरा छोड़ कर चले गये थे और अम्बलधाराकी तरफ

विद्रोहान्त जनानिकी कोमिग कर रहे थे, उस समय चक्रवर्ते इन्हें मोर माहबकी सनडे पास भेजा था। मोर माहबने उन्हें समझा कर जाना कर दिया था। २८ डिजरीमें मिक्कीमें पापकी मृत्यु हुई थी।

मोर माहबके २ पुत्र थे—१ने नकीबखाना, २रे कामारखाना, पोर ३रे मोर मरगद शरफ। फतेपुरमें सम्राट चक्रवर्ते साय चक्रवर्ती। कारते कारते एक दिन मोर सरोफकी मृत्यु हो गई। मोर कामारखाना पद्मगती मन-सबदार हो कर मुनोमखाने अधीन बहालमें, शिष्टारके अधीन गुजरातमें पोर टोडरमलके अधीन बिहारमें सेनापति रहि थे। सुनतान बिलहरीके युद्धमें इनकी मृत्यु हुई थी।

नकीबखानेको, इस देशमें आनेके बाद हो चक्रवर्ते साय ब्रिगेड मिमता हो गई थी। मुनोमखाने जब खान-जमान के नाम पमियोग लगाया, तब चक्रवर्त सन पर बड़े बिगड़े, पर नकीबखाने चतुरोष करने पर उन्होंने खान-जमानकी जमा कर दिया। जिस समय सम्राट पाटन अहमदाबाद पोर पटना गये थे (राज्यारोहणके १८१८ वर्ष बाद), उस समय नकीबखाने उनके साथ थे। चक्रवर्ते राजत्वके इमीनमें वर्ष इन्होंने इंदरके युद्धमें ख्याति प्राप्त की पोर इसके दूसरे हो वर्ष पाप गुजरातके सेनापति हो कर रवाना हुए। बहालके विद्रोहके समय टोडरमलके अधीन पाप पोर पापके भाई कामारखाने युद्ध किया था। बिहारमें सलामी कानुनीके साथ युद्धमें इन्होंने ब्रिगेड कीरत्वका परिचय दिया था। चक्रवर्ते राज्यके २३वें वर्षमें पापकी 'नकीबखाना' यह नाम प्राप्त हुआ था।

तजकीरात-छद्म-उमरा नामक इतिहासके लेखक किवनारामके मतसे, गधाके युद्धमें सलामी कानुनीने जिस दिन रातकी टोडरमलकी सेना पर गुप्त भागसे आक्रमण किया था, उस दिन नकीबखाने मोरोपित साहस पोर कीमतके साथ उन्हें विध्वंस किया था। इकीलिय याद-याहने उन्हें सपापि प्रदान की थी। अनुब-फजलने भी इस गैर-युद्धका उल्लेख किया है, पर नकीबखाना कीर्ति प्राप्त नहीं किया। चक्रवर्ते राजत्वकासमें यद्यपि नकीबखाने इजारी पद पाया नहीं, तथापि दरबारमें उनकी ब्रिगेड भुल्य था, इसमें संन्देह नहीं। ये हो चक्रवर्ते काठक थे।

चक्रवर्ते जिस समय महाभारतका पोरमी चतुर्थाद कराया था, उस समय इन्होंने नकीबखाने पर उसकी पञ्च-सताका भार था। इनके साथ बटोरो मोताना, चन्द्रस कादेर पोर यामेखरी गंध सुनतान भी नियुक्त हुए थे। महाभारतके बाद इन्होंने लोमने रामायणका चतुर्थाद किया था। तबरोह-र-चलकी नामक इतिहासका अधिकांश भाग नकीबखाने लिखा है।

नकीबखाने एक चचा थे, जिनका नाम था काजो रेखा। ये भी ईरानसे पाये थे; उनके एक पुत्र थे। नाम था शहागाजीखाना। चक्रवर्ते पदमें ये पित्रेयभ्राता मिर्जा महमूद खानकी सहादरा साक्षिण वायुवेगनके साथ शहागाजीखाना विवाह कर दिया। चक्रवर्ते राजत्वकासके ३८वें वर्ष नकीबखाने उनसे कहा—“गाजीखाना पासबकाल सपस्थित है, पर ये परमी कन्याका पापके साथ ब्याह करना चाहते हैं।” भागि-नेयीका सम्पर्क होने पर भी चक्रवर्ते पासबखाने गाजीखाने चतुरोषका स्वीकार कर विवाह कर लिया।

जहांगीरके समयमें नकीबखाने ११गती मनसबदार हुए थे। जहांगीरके राजत्वकासमें (१६१३ ई०में) पन-मिरने नकीबखाने मृत्यु हुई। इन्होंने सुमी-उल-मानिक मोर महमूदको कन्याका पापिपहण किया था। इनके पक्षमें ही इनकी स्त्रीकी मृत्यु हो गई थी। पनमेरमें सुखती विश्वाके दरगाहमें दोनोंकी कब्र है। नकीबखाने पबदुस सतोक नामके एक पुत्र थे। विवाहसमय उनका बहुत ख्याति थी, युगलखाने कन्याके साथ उनका विवाह हुआ था। पनतो वे उमराद हो गये थे।

नकीम (सं० पन्थ०) गकिम् एयोदरा० साधु। निवारण, नज्ज, रोमकी क्रिया।

नज्ज—एक नहरके तीरवर्ती एक पहाड़का पुरारोष अनुचरिण। मिनारके पन्तगत टोरेमें यह पाप कोम-को दूरी पर अवस्थित है। यह मोटे बालूमें परिष्ठात है। वायु द्वारा यह वायुकाराणि जय चालित होती है, तब उस चेतसे एक प्रहारका गम्भीर मन्द उत्पन्न होता है। यह मन्द पक्षमें इतलियन बोपाके मन्दके सेना सुननेमें लगता है। चारों माथामें नज्जमें घण्टाका शब्द होता है। इसीसे इस मन्दको उभलित हुई है।

नकुल (स० पु०) न कुचति कुच सङ्घोषे न शब्देन समासः । १ मन्दार, मदारका पेड़ । २ छट्टछट, एक प्रकारका पेड़ ।

नकुटी (सं० स्त्री०) न कुचति कुट-क, न शब्देन भक्त समासः । नासिका, नाक ।

नकुल (स० पु०) नास्ति कुलं यस्य, समाने नवो नलोपः । (नम्रान् न. पादिति । पृ० ६१३७५) १ चतुष्पद स्तम्भपायी मांसासो जन्तुविशेष, नेवला । पृथिवीमें नाना प्रकारके नकुल हैं । प्राणितत्वविदोंने प्रायः २० प्रकारके नकुलोंका विवरण लिखा है और सबोंमें इसको Herpestes (Elliger) नामिसे नामिल किया है ।

इसमें संस्कृत वैद्यक भाष्यप्रकाशमें नकुलके लक्षण इस प्रकार लिखे हैं—

“हृत्पुच्छो रक्तनेत्रो बभ्रुर्दृष्टः स नकुलः ।”

पूँछ मोटी, आँखें लाल और देख विश्लेषण करनेसे, उसे नकुल कह सकते हैं । प्राणितत्वविदोंने इस प्रकार लक्षण निर्देश किया है—

किसीके दाँत $\frac{k-k}{k-k}$ किसीके $\frac{k-k}{k-k}$ और किसीके

$\frac{k-k}{k-k}$ होते हैं ।

कान छोटे और गोलाकार, पैरोंकी उँगलियाँ लम्बी, चौड़ी और टेढ़ी तथा गहोदार होती हैं । पूँछ लम्बी, पोंछीकी ओर मोटी, लोम बड़े बड़े कर्कश और नाना-वर्ण युक्त होती है । भारतीय नकुलोंका मुख्य साधारणतः तीक्ष्ण, चक्षुःशुद्ध, प्रत्यङ्ग छोटे छोटे, पैरोंकी उँगलियाँ भित्री द्वारा परस्पर एक दूसरीसे सटी हुई होती हैं । मादाओंके स्तनोंमें चार चार दन्त होती हैं । जिह्वा पतली और कण्टक-विशिष्ट होती है । इस जातिमें किसी किसी श्रेणीके निश्चित मन्त्राशय होता है, जिसमें किसी प्रकारका गन्धद्रव्य नहीं रहता और उसके तलदेखमें गुग्गुलु होता है ।

इसमें संस्कृत पर्याय—पिहल, सर्पहा, बभ्रु, कोटिर, मर्पलण, सूक्ष्मवदन, सर्पारि और लोहितानन । मध्य और उत्तर भारतमें इसे न्योना, नेवला या नेवार, बिहारमें बिल्ली, गोण्डार कीचल, तैलङ्गमें येल्तावा या कोन्त येल्तावा, कनाड़ीमें लहलो, मराठीमें मङ्गस कहते हैं । हिरोदोतसके ग्रन्थमें

इकनेवति (Ichneutes) तथा चारिष्टल, दिमोदोरस-ट्रामो, इलियन आदिके ग्रन्थोंमें इकनेउमन् (Ichneumon) नामसे इसका वर्णन है । पश्चिम भारतके ‘मङ्गस’ नामसे ही फरासीसियोंने इसका ‘मङ्गुस्ते’ और यूरोपियोंने ‘मङ्गुस्ता’ (Mangusta) नाम रक्खा है ।

भारतमें प्रधानतः ७ प्रकारके नेवले देखनेमें आते हैं । बङ्गालमें जितने भी नेवले देख पड़ते हैं, वसन्तमान प्राणितत्वविदोंने उनका नाम Herpestes malaccensis or the Bengal mungoos रक्खा है । इनके मस्तक और देखकी लम्बाई १५ इंच, रंग ललाईको लिए भूरा, कान सुँघ और श्वश्व ललाईको लिए, कण्ठ और वक्षस्थल चीथ पीतवर्ण, लोम लुने हुए से होते हैं । पासाम, मध्य और मलयद्वीपमें भी इस श्रेणीके नेवले देख पड़ते हैं । इनको मादा एक साथ ३४ बच्चा जन्मती हैं । देखनेमें इसी प्रकार पर इनसे २१ इंच बड़े एक श्रेणीके नेवले उत्तर और दक्षिण भारतमें पाये जाते हैं, ये ही साधारणतः मङ्गस (Herpestes griseus or the Madars mungoos) नामसे प्रसिद्ध हैं । इनके शरीरका वर्ण श्वपेक्षाजस्त उज्ज्वल पिहलवर्ण, लोमावली पीताम्ब धूसर है । शरीरकी लम्बाई २० इंच और पूँछ १६ इंच तक लम्बी देखनेमें आती है ।



नकुल ।

ऊपर जिन दो जातियोंका उल्लेख किया गया है, उन्हींकी संख्या अधिक है । पन्थाग्य श्रेणीके भी नेवले हैं, उनके वैज्ञानिक नाम इस प्रकार हैं—Herpestes monticolus (दीर्घपुच्छ), Herpestes Smithii (मद्राजके रंगोन नेवले), Herpestes Nipalensis (नेपालके खर्ण विन्दु नेवले), H. epestes fuscus (नीलगिरिके खाकी नेवले), Herpestes vitt-

collis (जिनके गले पर धारियाँ हों, ऐसे निराले । इनके अन्तर्गत दक्षिण-यूरोपमें H. widdringtonii, अफ्रीका-में H. calfer, आक्सिभियामें H. Mutzigella, उत्तर मागा अन्तरीपमें H. apiculatus, यवरोपमें H. javanicus, मलयामें H. brachyures, दक्षिण अफ्रीकामें H. punctulatus, सिन्धुमें H. ichnoumon (Egyptian ichnoumon) आदि भिन्न प्रकारके नेवले हैं। इनके सिवा आसामकी तरफ घोर एक प्रकारका जन्तु देखनेमें आता है, जिसकी चोंचें लोमें Uva cinerivora कहते हैं। प्राचिनत्वविदोंने इसका नाम the crab-mangoos (चर्पातू कंकड़ निवला) रखा है। इस जन्तुका स्वभाव नेवलेके समान है, देखनेमें काला घोर पिङ्गलवर्ण है, एक एककी लम्बाई १०-१२ हाथ है।

एसे मैदानमें, भाङ्गोंमें, जंगलोंमें, तालाबोंके किनारे नदियोंके किनारोंमें तथा गड्ढोंमें नेवलोंका बाम है। जो सिङ्घिया मैदान वा तालाबोंके किनारे बसा करती है, वे इनको घोर शत्रु हैं। चक्रसर यह पालतू वृक्ष, हंस वा तोता'ची पकड़ कर उनका चून पीता है घोर फिर छोड़ देता है। मोका पाले ही यह घामें घुस कर पालतू सिङ्घियोंकी पींजड़ोंके भीतरसे निकालनेकी चेष्टा करता है। जहाँ ज्यादा नेवले होते हैं, वहाँ हंस, सुरभी आदिके पण्डोंको दबा करना सुप्रसिद्ध हो जाता है। यह चण्डा खाता बहुत पसन्द करता है।

सर्प घोर नकुलकी विराधता जगत्प्रसिद्ध है। इस देगमें बहुतोंका विश्वास है, कि नकुल घोर सर्पमें मिलाव होता है विषाद होना अनिवार्य है। सर्प जब नकुलकी खाट लेता है, तब यह ग्रीध हो निकटवर्ती भाङ्गोंमें जा कर दबा द्या जाता है, जिसमें सर्पके विषसे उसका कुछ घनिष्ट नहीं होता।

महाशायियोंका विश्वास है, कि नकुली वा मङ्गल-धन नामक एक प्रकारकी मत्ता है, उसीकी अङ्ग सर्प-विष हरषमें समर्थ है। परन्तु जेठन आदि प्रायुनिक प्राचिनत्वविद्गण इस प्रवाद पर विश्वास नहीं करने। उन लोगोंका कहना है, कि नेवलेकी चमड़ी बड़ी होती है घोर इसीलिए उसमें सर्प-विष प्रविष्ट नहीं होता। यही कारण है कि सर्पके खाटमें पर भी मङ्गलमें लज्जा

कुछ घनिष्ट नहीं होता। सर्प घोर नकुलकी चमड़ीमें प्रायः नकुलकी ही अणु होती है, सर्प मर जाता है। परन्तु नेवला खाहमखाह सर्पमें विरोध नहीं ठगता। मोथुरा (बरेला) आदि विषघटोंके सामने पा जाल पर यह एक बगनमें निकलनेकी कोशिश करता है, परन्तु यदि कटाघित्ट इट न मचे घोर दोनोंका मुकाबिला हो जाय, तो यह मशायिकमके साथ सर्प पर आक्रमण करता है घोर फिर उसे मार वा पराजय काटके हो दम लेता है। इस देगके लोगोंका ऐसा विश्वास है, कि नकुल यदि सर्पको जाल जाय तो सर्पके उसी समय दी टुकड़ी हो जाते हैं। चयवबोदमें भी इसका उल्लेख है—

“यथा नकुलो विविध स'दृशालि' पुनः ।”

(अथर्ववेद ४।१२।२)

परन्तु यदि किसी प्रकारसे सर्पका विष नकुलमें चम'की भेद कर शरीरमें प्रविष्ट हो जाय, तो फिर उसकी मोत ही है।

घोरिष्टन लिखते हैं,—महा विषभर सर्पके साथ नकुलका मुकाबिला होने पर जब तक दूसरा नकुल वहाँ हाजिर नहीं होता, तब तक वह शत्रु पर आक्रमण नहीं करता। विष शरीरमें प्रविष्ट न हो मचे, इससे सिध नेवला आक्रमण करनेसे पहले ही पोषणमें कुछही लगा कर शरीर पर अच्छी तरह कोषक लपेटे जाता है।

इस देगमें जेसे सर्प घोर नकुलमें विरोधकी कहावत प्रचलित है, उसी तरह ज़िमीके घन्में भी मगर घोर नेवलेमें विरोधकी एक बड़ी बाध'जगज्ज कया लिखी है। ज़िमीने लिखा है,—“मगर जब मु'ह चीक खर हो जाता है, तब नेवला शायित खरकी तरह लोमवेसे उससे मु'हमें घुस जाता है घोर पेटमें जा कर भीतरकी मर्मीको खाटता है।” परन्तु प्रायुनिक प्राचिनत्वविद् इस बात पर विश्वास नहीं करते। हाँ, इतना तो चयव्य मान्य हुआ है, कि जहाँ बहुतसे मगर रहते हैं, वहाँ नेवलोंकी संख्या भी अधिक होती है। ये बड़ी सावधानीके साथ मगरके चण्डोंकी निजालते घोर पाले हैं। इनको इस शत्रुताके कारण वहाँ मर-ही'की संख्या ज्यादा बढ़ने नहीं पाती।

नेवला चुड़ैल भी पूरा दुश्मन है। एक एक नेवला

मे कहीं चूड़ीकी मार कर उनका खून पीते हैं। नेनट साहबने लिखा है,—एक कोटेवे घरमें एक नेवलेने १॥ मिनटकी धंवर १२ बड़े बड़े चूड़ीको मार डाला था। महाभारतमें भी नकुलको चूड़ीका शत्रु लिखा है।

“एतैः सखादि जीवन्ति दुर्गन्धैः संवत्सराः।

नकुलो मृषिकान्ति विहालो नकुलस्तथा ॥”

(भारत १२।१।२०)

पूर्वकालमें मिश्रके लोग नकुलको पूजा करते थे। नकुलकी मरने पर उसे एक पवित्र पेटिकामें रख देते थे। पालतू विलियोंकी तरह लोग इसे बड़े शोकसे पालते थे और दूध-मच्छी आदि खिलाते थे। यदि कोई नेवलेकी मार डालता था, तो राज-दरबारसे उसे दण्ड मिलता था। मिश्रकी तरह भारतमें भी नकुल इत्यादि निषिद्ध थे। मनुसंहितामें लिखा है, कि नकुल-इत्यादि करनेवालेकी शूद्र-इत्यादि प्रायश्चित्त लेना पड़ता है।

(मनु ११।१३) मनुसंहितामें यह भी लिखा है, कि घी पुरानेवाला मर कर नेवला होता है। (मनु ११।१२)

वैद्यकीय भट्टमार नकुलका मांस पिच्छित्त, वात-नाशक, दोषा और कफ-वर्धक होता है। (राघवि-)

यह सज्ज ही परच जाता है। नेवलेकी पालनसे घरमें सग वा चूड़े नहीं रहते।

२ महादेव, शिव। (विदग्धमुखम्)

३ पाण्डुराजकी चतुर्थ पुत्र। ये माद्रीके गर्भमें अश्विनीकुमारद्वयसे उत्पन्न हुए थे। इसका विषय महाभारतमें इस प्रकार लिखा है,—“पाण्डु, श्रापग्रस्त हो कर जिस समय पत्नीद्वयके साथ वनमें वास करते थे, उस समय कुन्तीने अपने वरके प्रभावसे तीन पुत्र जन्मे। इस पर माद्रीने पाण्डुसे प्रार्थना की कि मुझे भी पुत्रकी प्राप्ति हो। पाण्डु ने कुन्तीसे अनुरोध किया। तब कुन्तीने माद्रीसे कहा, ‘तुम किसी एक पशुसंनिहित देवताका स्मरण करो।’ माद्रीने अश्विनीकुमारोंका स्मरण किया। इन्हीं अश्विनीकुमारोंसे माद्रीके यमज पुत्र हुए, अर्थात् नकुल और कनिष्ठ महादेव। नकुल अत्यन्त रूपवान् थे। जिस समय पाण्डुवर्षा विराट्छत्रके अन्तर्गत भावसे वास करते थे, उस समय इनका नाम तन्निपास रखा गया था; ये गौरवा-कायमें नियुक्त थे।

Vol. XI. 79

युधिष्ठिरने जिस समय राजसूय-यज्ञका अनुष्ठान किया था, उस समय इन्हीं पश्चिमदिगामें जा कर महादेव अर्पण किया था। वेदिके राजर्षि अश्विनीकी जोत कर आपने दमार्ण, शिवि, त्रिगर्त, प्रमथ, मालव, पञ्चकपट, मध्यमक, वाटपान और हिलोंकी परास्त किया था। उसके बाद इन्हीं पुष्करारण्यवासी सख-सङ्गतोंकी, समुद्रतीरस्थित आभीरोंकी और सरस्वतीतीर-वासियोंकी जोत कर पञ्चनद, चमरपर्वत, उत्तर-ज्योतिष, दिव्य कटपुर और हारपान जय किया था। फिर रामठ, हारह्वण और प्रतीच भूपार्श्वकी चपते वधमें जा कर वायुदेवके पाम अगता दूत भेजा था। यादोंमें जब युधिष्ठिरकी अघोषिता स्त्रीकार कर तो, तब वे शकल पट्टे, वहा गन्धने भी युधिष्ठिरकी अघोषिता स्त्रीकार की। अन्तमें स्त्रीच्छ, पञ्चव, वर, खिरात, वरन और शकलकी तथा पाश्चात् अग्न्यान्ध राजाओंकी परास्त किया। वेदिराजकी कथा करण-मतीके साथ नकुलका विवाह हुआ था। करणमतीके गर्भसे नकुलके निरमित्र नामका एक पुत्र हुआ था। युधिष्ठिरने जब महाप्रस्थान किया था, तब ये भी उनके साथ गये थे। (भारत) इन्होंने ‘पञ्चविकिता’ रचो थी।

जैनमतानुसार—नकुलका जन्म पाण्डुराजकी श्रीरत और माद्रीके गर्भसे हुआ था। पाण्डुराज श्रापग्रस्त थे ऐसा जैनपुराणोंमें कहाँ भी उल्लेख नहीं है। जैन-हरिवंशमें लिखा है, कि ‘जिस समय पाण्डुने गन्धर्व विवाह कर कुन्तीसे सम्भोग किया था, उस समय उनके कर्ण नामक पुत्र हुआ और विवाह करनेके बाद युधिष्ठिर अर्जुन और भीम ये तीन पुत्र हुए तथा वहीं राजा पाण्डुके रानो माद्रीसे नकुल और महादेव पुत्र हुए। (जैनहरिवंश, अध्याय १६-२०) अन्तमें ये अन्य चार भाइयोंके २२वें तीर्थहार भगवान् नेमिनाथके समवसरणमें उपस्थित हुए थे और चारों भाइयोंके साथ जिन—दीक्षा ग्रहण की थी। तपस्यापूर्वक मर कर ये सर्वार्थसिद्धि नामक स्वर्गमें उत्पन्न हुए हैं। वहाँसे चयन कर मनुष्य होने और उची शरीरसे मोक्ष-प्राप्त होने। किन्तु युधिष्ठिर, अर्जुन और भीम उची मंथसे निवृत्त हुए हैं। (जैनहरिवंश) ३ पुत्र, बेटा, लड़का। (त्रि) ३ कुलरहित, जिनके कुल न हो।

नकुल (सं० पु०) वह रस जो मध्याह्नमाक्रमे पुर आदि चलातेवालोंको दोनेके लिये दिया जाता है।

नकुलक (सं० पु०) १ नकुलके पात्राकार एक प्रकारका प्राचीन गजना। २ लवण आदि रसमेंको एक प्रकारकी घसी।

नकुलकन्द (सं० पु०) गन्धमाकुलीया राधा नामक कन्द।

नकुलमेन (सं० स्त्री०) काम-व्याधि रोगाधिकारोक्त तैल्योपधमिद, एक प्रकारका तैल जो नेत्रनेत्रे मांसमें बहुतसे दूसरी औषधियाँ मिला कर बनाया जाता है। इसको प्रसृत प्रवाली इस प्रकार है—नेत्रमेका मांस ५२ गेर, लज १६ गेर, शिप ५४ गेर, दममुल ५२ गेर, जल ६ गेर, शिप ५४ गेर, द्रव्यका तैल ५४, दहीका पानी ५४ गेर, यष्टिमधु, जीरा, राख, भैरव लवण, वनयवानी, सोया, यमानी, मिर्च, कुट, विडुङ्ग, गजपिप्पली, मधुन-लवण, घष, गैलज और जटामांसी प्रत्येक द्रव्य चार तोला से कर छे छूर्ण करते और उस तैलमें मिला देते।

। बाद यथाविधान तैलको पाक कर छे छे घटाते हैं। इसका व्यवहार पान, चम्पक और सन्तिक्रिया में होता है। इस तैलके कम्पकान्त, हृत्कम्प, गिरःकम्प, वाहकम्प, और आसयात आदि रोग जाते रहते हैं। काम, पीठ, जंघ, पुटने आदिका वातका ठरह तथा चर्मकी प्रकारका वातज रोग भी दूर हो जाता है।

(भैरवराजो-पाशुपत-पिचार)

नकुला (सं० स्त्री०) पावती।

नकुलाठरा (सं० स्त्री०) नकुलेन, नकुलगन्धेन, चाठरा मधुरा। गन्धमाकुली या राधा नामक कन्द।

नकुलाघृत (सं० स्त्री०) वातव्याधि-रोगाधिकारोक्त तैल्योपधमिद, प्रसृतप्रवाली—कापके लिये नेत्रमेका मांस ५२ गेर और पाकके लिये जल ५६ गेर, शिप ५४ गेर, लज ५२ गेर, जल ६ गेर, शिप ५४ गेर। बकुला ५२ गेर, लज ६ गेर, शिप ५४ गेर। दममुल ५२ गेर, दूध ५४ गेर। जीरा, जपम, कंकोण, यष्टि, हरि, भिद, मन्दागंध, जीपली, यष्टिमधु, द्वायवी, शुक्लक, तेज-पत्र, विजया, मोया और घनसामुल प्रत्येक द्रव्य दो तोला से कर छे छूर्ण कर छे छे घटाते हैं। इस

घोटा शिवन करनेके चाम्पार, लम्बा, पक्षाघात, पाशान, कोष्ठनिषेध, हृत्कम्प, गिरःकम्प, मधिता, मुक्त, मिथियमापण और चम्पक नामा प्रकारके रोग दूर हो जाते हैं।

(भैरवराजो-पाशुपत-पिचार)

नकुलान्धता (सं० स्त्री०) नकुलरोगेय चम्पका, (सं० पु०) सुदुर्लभ एक प्रकारका नेत्ररोग। सुदुर्लभ इसका लक्षण इस प्रकार निम्ना है—जिस रोगमें चक्षुं दोषाभिभूत हो कर नेत्रमेको चक्षुंको तरह चमकने लगती है और दिनके समय चक्षुं रंग निरंगो दिखाई देने लगती है, उसीको नकुलान्ध कहते हैं। इस रोगमें निम्नलिखित पदार्थोंका सेवन बिल्कुल मना है।

विदेह विवरन नेत्ररोगमें देवो।

नकुलारि (सं० पु०) विह्वल, विहास।

नकुली (सं० स्त्री०) नकुल-श्रीम्। १ कुल-श्री, मूर्ति। २ मांसी, जटामांसी। ३ कुल-म, के-र। नकुल-श्री, नेत्रमेकी मांसी। ४ यष्टि-श्री। ५ मांसको छे छे।

नकुलीय (सं० पु०) १ कानापोठस्य भैरव शिपेय, तान्त्रिकोंकी एक भैरवका नाम। २ प्रकार।

नकुलीय पाशुपत दर्शन—भारतीय एक दर्शनम्पत्ति। माधवाचार्य-कीत सर्वदर्शन-संग्रहमें इस दर्शनका भार्या निम्ना है। इसका मूलग्रन्थ पान चम नहीं मिलता और न इस बातका ही निर्णय होना है कि किस समय इस दर्शनकी रूढ़ि हुई हो।

इस दर्शनमें एकमात्र महादेवको ही परमेश्वर और जीर्णको प्रथमाना गया है। महादेव जीर्णके चक्षुंनि है, इसलिये प्रवर्तित है। नकुलीय महादेवका नाम है और वे ही प्रवर्तित हैं, इसलिये इस दर्शनका नाम नकुलीय-पाशुपत-दर्शन हुआ है। इस दर्शनमें सभी विषय प्रतिपादित हुए हैं।

इस कीर्ण भी कार्य नहीं करे, समझें दूधरे हो महायता न भी से, पर चमने हाथ वेगीरी महायता प्रवर्तित है। पाशुपत दर्शनमें चम किमी भी प्रवर्तित की महायताके बिना ही समझ प्रवर्तित निम्नलिखित है। इसलिये नकुलीय महायताके हाथ हा प्रवर्तित है और इस जी कार्य कर रहे हैं, समझें हाथों भी प्रवर्तित है,

इसलिए उनकी मर्त्य कार्य का कारण कह सकते हैं। इस बात पर कोई कोई यह आपत्ति लाते हैं, कि यदि समस्त कार्य के कारण परमेश्वर ही हैं, तो एक कालमें ही भूत भविष्यत् और वर्तमान इन तीनों कालों का कार्य क्यों नहीं होता और सब समय सब कार्य क्यों नहीं होते ? जब कि कारण-स्वरूप जगदोत्थर सर्वदा ही समस्त स्थानोंमें विद्यमान हैं। बुद्धिमान जन-समूह किस कारण से सुक्ति की इच्छासे घोरतर क्षीयकर तप करनमें प्रवृत्त होता है और क्यों वह पारलौकिक सुखेच्छासे यज्ञादि कर्ममें तथा सांसारिक सुखेच्छासे धनोपाजनादिमें प्रवृत्त होता है ? परमेश्वर जब जैसा करते हैं, तब तैसा होता है। कोमिश करके उसके प्रतिरिक्त कुछ नहीं किया जा सकता ; जब ऐसी ही बात है तो यज्ञ-विधानादि भ्रष्टान्तरे विरत रहना ही बुद्धिमान मनुष्यका कर्त्तव्य है। परन्तु यह आपत्ति ठीक नहीं है। परमेश्वर अपने इच्छासे समस्त विषयोंका सम्पादन करते हैं, उनको जब जिस विषयकी इच्छा होती है, वे उसी विषयको कर लाते हैं। किसी एक समयमें सब कार्य हीं मयवा सर्वदा सब कार्य हीं ऐसे परमेश्वरको इच्छा नहीं होती और इसी कारण ऐसे कार्य नहीं होते। यदि उनकी इच्छा इस प्रकारको होती, तो निश्चय ही ऐसे कार्य हुआ करते। सुसुष्ठु व्याक्ति योगाभ्यासमें, खर्गोभिलाषो यज्ञादि कार्यमें और सांसारिक सुखेच्छा-व्याक्ति धनोपाजनमें प्रवृत्त हो, ऐसा ईश्वरको इच्छा होती है, तभी लोग उक्त कर्मोंमें प्रवृत्त होते हैं। उनकी इच्छा कभी भी ठग्या नहीं जाती। परमेश्वर सबके प्रभु हैं और उनकी इच्छा बादेय स्वरूप है, इसलिए प्रभु के बादेय-उल्लङ्घन करनेमें प्रसमर्थ सभी व्यक्ति उन विषयोंमें प्रवृत्त होते हैं।

इस दर्शनके मतसे सुक्ति दो प्रकारकी है—एक दुःखोंकी अत्यन्त निवृत्ति और दूसरी परमेश्वरप्राप्ति। अत्यन्त दुःख-निवृत्ति-रूप सुक्ति होने पर फिर कभी किसी प्रकारकी दुःखोत्पत्ति नहीं होती। इसलिए इस सुक्तिका नाम अत्यन्त दुःखनिवृत्ति है। एक शक्ति और क्रियाशक्तिके भेदसे परमेश्वर सुक्ति भी दो प्रकार है। एक शक्ति द्वारा कोई भी विषय अवस्थात नहीं रहता। जितना भी सूक्ष्म और व्यवहित वा दूरस्थ क्यों न हो सभी वस्तुएँ स्थूल

समीपवर्त्ती वस्तुकी तरह प्रतीयमान होती हैं। सभी विषय एक शक्तिमान् व्यक्तिके ज्ञानपथके पथिक हैं। क्रियाशक्तिसंमय होने पर जब जिस विषयकी अभिलाषा होती है, उसी समय वह सम्पन्न होता है। क्रियाशक्ति-युक्त व्यक्ति को केवल इच्छा मात्रकी अपेक्षा करनी है। सुक्त व्यक्तिकी इच्छा होने पर वह तत्संपात्त अवस्था में नो-रयकी पूर्ण करती है। इस प्रकार एक शक्ति और क्रिया-शक्तिरूप सुक्ति परमेश्वरको तत्तद् शक्तियोंके सह्य हैं। इसलिए उसकी परमेश्वर्य सुक्ति कहते हैं। पूर्ण प्रस-दय नमें सुक्तिका जो लक्षण लिखा है, इस दर्शनमें उसका खण्डन है। उसमें भगवद्वास्तवप्राप्तिको ही सुक्ति माना है। ऐसी सुक्ति सुक्ति-पदवाच्य नहीं हो सकती, क्योंकि जिस सुक्तिमें दासत्वरूप अधीनता-श्रद्धाभाव रहना पड़ता है, उसकी किस प्रकार सुक्ति कहा जा सकता है ? सविमानिक्कादि यथित सुवर्णश्रद्धालनमें यद्यप्यक्तिकी भी बन्धनशुक्त कहते हैं, कोई भी उसे सुक्त नहीं कह सकता। अतएव अन्ध व्रातियों के पक्षलोचन करनेके समान भगवद्वास्तव्य अधीनता पाथमें बंध व्रातियों की सुक्त कहना सुक्तिविरोध और वास्तव्य है, इसमें सन्देह नहीं।

इस दर्शनकी मतसे, प्रधान धर्म साधनकी चर्याविधि कहते हैं। चर्या दो प्रकारकी है—व्रत और धार। त्रिसन्ध्या भस्म-ब्रह्मण, भस्मशय्या पर मयन और उपहार-प्रदान, इन तीनों को व्रत कहते हैं। 'व. उ. वा' इस प्रकार शब्दपूर्वक वास्तव, शब्दार्थशास्त्रानुसार महादेवकी शुषोंका गानरूप गीत, ज्ञान्यासा-सम्मत नतन-रूप नृत्य, पुष्पके चौत्कारके समान चौत्काररूप बृहत्कार, प्रणाम और जप इन छः कामोंको उपहार कहते हैं। प्रतापुष्टान जनसमाजमें ज कर-पति शुक्त स्थानमें करना चाहिए। धाररूप चर्या, ज्ञायन, सन्दन, मन्दन, श्रद्धारण, अवि-तल्लारण और अविजज्ञापणके भेदसे छः प्रकारकी है। सुप्त न होने पर भी सुप्तकी भांति प्रदेयनको ज्ञायन, प्रतीरादि-के कम्पनको सन्दन, खल्लव्यक्तिकी तरह गमनको मन्दन, परम रूपवर्ती स्त्री-सन्दर्शनसे वास्तविक कामुक न हो कर भी कामुककी भांति कुञ्चित वरवहार-प्रदेयनको श्रद्धारण, कस-धराकस-व-पर्यालोचन शून्यकी भांति

विमर्शित कर्मानुष्ठानको चवितत्करणे चोर निरर्थक
या माधियायक मध्येधारणको चवितहायक कहते हैं।
इस मतमें तत्त्वज्ञानको ही मुक्ति का साधन माना है।
शास्त्रान्तरों में भी तत्त्वज्ञान ही मुक्ति का साधन बतलाया
है, परन्तु शास्त्रान्तर द्वारा तत्त्वज्ञान होनेको सम्भावना
नहीं है, इसलिये सुमुमुक्षुओं को यह अवलम्बनीय है।
विशेष रूपसे समस्त पदार्थों का ज्ञान हुए बिना तत्त्वज्ञान
नहीं होता। परन्तु समस्त वस्तुओं का विशेषरूप ज्ञान
शास्त्रान्तर द्वारा होनेको सम्भावना नहीं। शास्त्रान्तरमें
बहुल दुःखनिवृत्तिको ही मुक्ति बतलाया है। योगका फल
दुःखनिवृत्ति है, कार्य चित्त है और कारणस्वरूप
परमेश्वर ब्रह्मादि सम्पन्न है, ऐसा बतलाया गया है।
परन्तु इस शास्त्रमें परमेश्वर-प्राप्ति चोर दुःखनिवृत्ति
इस तरह दो प्रकारकी मुक्ति मानी गई है, तथा उन
दोनोंको योगका फल बतलाया गया है। कार्य चित्त है
और परमेश्वर स्वतन्त्र कर्ता है, यही प्रमाणादि द्वारा प्रति
पादित हुआ है। सर्वज्ञानेश्वर) वास्तव तथा सृष्टीय देखो
नकुलस्य (सं० पु०) कालोपाकृत्यत भैरवमंद, नकुलेष्टर।
नकुलेष्टा (सं० स्त्री०) नकुलस्य इष्टा १-तत्। राजा,
राजसल।
नकुलोष्ठी (सं० स्त्री०) तारंगि वजाये कामिका माधोग
कामिका एक प्रकारका शाजा।
नकुला (हि० पु०) १ नायिका, नाक। २ तराजूको
ठंडाका धारा।
नकुल (हि० स्त्री०) यह रसो जो जटकी नाकमें बंधी
रहती है। यह सगामका काम करती है और इससे
सुखी जट पलाया जाता है, सुखर।
नकुलेष्टर—१ पञ्चावर्ग जलधर जिलेकी एक तहसील।
यह चला० ३०' ५६' और १३' १६' सं० तथा देगा०
०१' ५' और ०५' १०' पू० समजत नदीके उत्तरीय
किनारे अवस्थित है। इसका भूपरिमाण ३०१ वर्गमील
और लोकसंख्या १५२५१२ के लगभग है। अधिकांश
वधियाधी सुलतमान है। इसमें एक महर चोर १११
घाम लगती है। पाप चार लाख रुपयेसे अधिककी है,
मि०, चला, लुमरी, भो. वरि चोर भल यहाँके प्रधान
अपत्य मण्ड है।

२ छत्र तहसीलका एक महर। यह चला० ११' ६'
सं० और देगा० ०५' २८' पू० में मज अवस्थित है। लोक-
संख्या प्रायः ८८५८ है। प्रवाद है, कि पहले यह महर
कंबोजाकम् हिन्दुधर्म अधिधारमें था। वंशे ऐतिहासिक
समयमें सुलतमानधर्मानुसारी यह राजपूत बादशाह
जहाँगिरके निकट आगेरमें होने पाया था। जब विश
लीमेंका अभ्युदय हुआ, तब महरदार तारामिर्चने राज-
पूतोंकी भगा कर यहाँ एक दुर्ग निर्मात्र किया था।
१८१६ ई०में यह महर अश्रितमिर्चने अधिधारमें
पाया। महरमें १६१२ और १६३० ई०के दो समाधि-भस्त्र
देवमेंमें पाते हैं। १८६० ई०में यहाँ म्युनिसिपलिटो
स्थापित हुई है। यहाँ ४५ घर, मरकासो चलातान चोर
व्यापारी बोट का एक रेड्जो-मनीश्वर मण्ड है।
नकु (सं० पु०) मनास, बरदादी।
नका (हि० पु०) १ सुंदमें छोटा विरोधिका हेट, गाँवा।
२ नामके पारमिना एका। ३ नदी और नवीनूद रेवो।
४ कोड़ी।
नकार (हि० पु०) अवज्ञा, तिरस्कार, अपमान, चव-
हेसना।
नकारायना (का० पु०) नकार या नोबत वजनका स्थान,
नोबतस्थान।
नकारचो (का० पु०) १ बंबईके विशापुर जिलावासी
एक ठस मगाड़ा बजामिनाका सुलतमान। यह १५
अवसायके एक हिन्दु भाई है, किन्तु ६ इस नामसे
पुकारे जाने पर भा चलने प्रतिष्ठित नहीं है। इसको
धर्या बहुत चौड़ी है। १५ नामके सुलतमान कीम दोर्ध-
हट, सुष्ठितममर, ममृपारा चोर कुछ वीतवर्षके
होते हैं। ये लोग हिन्दूको नार्दे पगडो धारमें चोर
धोती पहनते हैं। इसको प्रियाका पदनावा भा हिन्दु
सीपा है। इन लोगोंमें चवरीय प्रदा नहीं है, या हा,
खिला कोई काम नहीं करते। जा बेल साति म्ब-
मायने आविका मिवांर करते हैं, उनको यहव्या पट्टो
नहीं है। ये लोग परिचयी चोर मितावारी कोन
है। विशाह केवल चपरे की मन्त्रागमें होता है।
ये लोग अन्य सुलतमानको नार्दे गोमति नहीं खाने।
अधिक हिन्दु देवताको पूजा करते हैं। २ यह जो मकरा
बलाता ही, नगरा भजामिनावा।

नक़्शे (फ़ा० पु०) एक प्रकारका बहुत बड़ा बाजा । यह छुगडूगी या बाएँकी तरहका होता है। इसमें एक बहुत बड़ी झुंझके ऊपर चमड़ा मढ़ा रहता है। इसकी धारमें इसी प्रकारका पर इससे बहुत छोटा एक और बाजा होता है। इन दोनोंको धामनी सामने रख कर लकड़ीके दो डंडोंसे जिन्हे चौब कहते हैं, बंधाते हैं, नगाड़ा, डंका, नौबत।

नक़्श (फ़० पु०) १ अनुकरण करनेवाला, नक़्श करनेवाला । २ भांड । ३ भट्ठरुपिया ।

नक़्शा (फ़० स्त्री०) १ नक़्श करनेकी क्रिया या विद्या । २ भांडका काम या विद्या । ३ भट्ठरुपियेका काम या विद्या ।

नक़्शाय (फ़० पु०) नक़्शाघोका कारीगर, वह जो खोद कर बेल बूटे आदि बनाता हो ।

नक़्शायी (फ़० स्त्री०) १ धातु या पत्थर आदि पर खोद खोद कर बेल-बूटे आदि बनाईका काम या विद्या । २ वे बेल बूटे आदि जो इस प्रकार खोद कर बनाये गये हों ।

नक़्शायीदार (फ़ा० पु०) जिस पर खोद कर बेल बूटे बनाये गये हों ।

नक़्शी (हि० स्त्री०) १ नक़्शी-मूठ खेलमें एक की दांव । नक़्शीमूठ देखो । २ ताशके पत्तोंमेंका एक । ३ लुएके किसी खेलमें वह दांव जिसके लिये एक क़ा चिह्न नियत हो प्रयत्न जिसकी जीत किसी प्रकारके एक चिह्नके पानेसे हो ।

नक़्शीपूर (हि० पु०) नक़्शीमूठ देखो ।

नक़्शीमूठ (हि० स्त्री०) लुएका एक खेल । यह खेल प्रायः क्रियां और बालक कौड़ियांसे खेलते हैं। इसमें एक दूसरीको काटती हुई दो सीधी लकीरें खींची जाती हैं और उनके चारों छोरोंमेंसे एक छोर पर एक बिंदी, दूसरे पर दो, तीसरे पर तीन और चौथे पर चार बिंदियां बना दी जाती हैं। ये बिंदियां क्रमशः नक़्शो, दूपा, तोया और पूर कहलाती हैं। यह खेल दो से चार तक खिलाड़ोंसे खेला जाता है जो एक एक दांव से लेते हैं। एक खिलाड़ी अपनी सुझीमें कुछ कौड़ियां से कर अपने दांव पर सुझी रख देता है। बाद में

खिलाड़ी अपने अपने दांव पर कुछ कौड़ियां लगाते हैं। अनन्तर वह पहला खिलाड़ी अपनी सुझीको कौड़ियां गिन कर उसमें चारका भाग देता है। भाग देने पर १ कौड़ी बच जानिसे नक़्शोवलेकी, २ बच जानिसे दूएवालेकी, ३ बच जानिसे तोएवालेको और कुछ भो न बचनेसे पूरवालेको जीत होती है जिसकी जीत होती है, दूसरी बार वही मूठ लाता है। यदि मूठ लानेवालेका दांव पाता है, तो वह दांव पर रखे हुए सबकी कौड़ियां जीत लेता है, नहीं तो जिसकी जीत होती है, उसको उसे उतनी ही कौड़ियां देने पड़ती हैं जितनी उसने दांव पर लगाई हों, नक़्शीपूर ।

नक़्शू (हि० वि०) १ जिसकी नाक बड़ी हो, बड़ी नाकवाला । २ जिसके आचरण आदि सब लीकोंके आचरणके विपरीत हों, सबसे भलम और उल्टा काम करनेवाला ।

नक़्श (फ़० पु०) नक़्श । १ रात्रि, रात । तद् अन्तर्त्त ना-स्वस्य अच । अतर्भेद, एक प्रकारका व्रत ।

‘भाग्यं धीर्षं शिवे पक्षे प्रतिपद्य या तिथिर्भवेत् ।

तस्यां नक्तं प्रकुर्वीत रात्रौ विष्णुं प्रयुजयेत् ॥’ (ब्राह्मण)

भगवान् महीनेके शुक्ल पक्षकी प्रतिपदाकी यह व्रत किया जाता है और रातको विष्णुपूजा की जाती है। यहां पर ‘नक्तशब्द’ से भोजनके बाद ऐसा समझना चाहिये। इसमें दिनके समय बिलकुल भोजन नहीं किया जाता, केवल रातको किया जाता है। नक्तका अर्थ रातके समय भोजन करना है। रात कहनेसे जिस प्रकार अर्थबोध होता है, नक्त शब्दसे ठीक वैसे नहीं होता। इसका लक्षण धृष्टक रूपसे निर्दिष्ट है—

‘सुहृत्सौर्नं दिनं नक्तं प्रवक्षति मनीषिणः ।

नक्षत्रदशानामनक्तं नक्षत्रे गणाधिपः ॥’ (भविष्यपुराण)

समूचा दिन प्रायः शेष हो गया हो, केवल एक सुहृत् रक्ष गया हो, ऐसे दिनको पण्डितगण नक्त कहते हैं। किन्तु मैं (महादेव), जिस समय नक्षत्रका दशम होता है, उसी समयकी नक्त कहते हैं। देवसने भो नक्तका विषय इस प्रकार निर्णय किया है—

‘नक्षत्रदशानामनक्तं गृहस्थस्य सुभेः शुद्धम् ।

शरीर्दशाश्वे भागे तस्य रात्रौ निधायते ॥’ (देवक)

भट्टशर्माके लिये नक्त वह समय कहलाता है, जब

नारा याकागमे दीप चहूँ मेकिन यतिपोंके निचे दिनके
पाठमें भागका नाम भक्त है। इत्यन्तमारमें भी भक्तका
लक्षण इस प्रकार लिया है—

“भक्तं निश्चयां कृतीं पराको विधिगंयुतः ।

रतिरप विषया परे कृतीं यतिवाचकम् ॥

रतिवाचकम् नर भोक्तव्येति चेति वा ह्ये ।

विशालम् तु विवेकं सामर्थ्यं प्रथमे यदा ॥” (रघुप्रे)

इत्यन्तको विधिपूर्वक रातके समय, यति चोर निधमा
को ‘मदियाकर’ समयमें नक्तप्रत करना चाहिये। यहां
पर निशा शब्दका ‘य’ रात्रिकालका प्रथम यामार्ध समय
है। दिवा भागके मध्य दो दण्डका नाम मदियाकर है।
कहनेका तात्पर्य यह है, कि इत्यन्तको चार दण्ड रातमें
चोर यति तथा विधवाको दिनमें दो दण्ड रहते भोजन
करना चाहिये। व्यासने नक्तका लक्षण इस प्रकार कहा
है—सूर्यके चला होने पर धिमुहूर्त रात प्रदोषवदवाच्य
है। इस प्रदोष कालमें ही नक्तप्रत चर्यात् भोजन करना
चाहिये। इस नक्तप्रतमें प्रदोष-व्यापिनो तिथिका प्रयोजन
होता है। रघुमन्दनमें प्रायश्चित्तसर्वमें नक्तप्रतको जगह
देना लिया है—

“प्रदोषव्यापिनो प्राया यदा नक्तप्रते तिथिः ।

वदवात् तथा पूज्या हरेरुत्पत्तेरिति ॥” (एश्वरीतर)

इस मतमें तिथि यदि पूर्वदिनमें प्रदोषव्यापिनो हो,
तो पूर्वदिनमें चोर यदि दूसरे दिनमें प्रदोषव्यापिनो हो,
तो दूसरे दिनमें तथा उभय दिन प्रदोष व्यापिनो हो, तो
दूसरे दिनको ही नक्तप्रत होगा। इस मतके करनेमें
विविधभोजन, खान, चाहार-लपुता, चम्पिकायं चोर
चक्रागम्याका पाचरण करना होता है। इस मतके करने-
में लग्नसाम होता है। (उपरा) १ मध्याह्निक। ४ रात्रा
पुनः पुनः । (ति०) ५ सज्जित, जो ग्रामा गया हो।
नक्तप्रत (सं० पु०) नक्तप्रिय कार्याति सलिलतया के-क, या
नक्त-प्रायं नक्तः १ कपट, पुनः पुनः निघडा, गूटका,
महाः २ मध्याह्निक, चायका घाटा, पनक।

नक्तचर (सं० पु०) १ मध्याह्निक २ रातको घूमनेवाला।
३ रातमें ४ घूम।

नक्तवारिन् (सं० पु०) नक्त रातो चरतीति चर-वतिनिः।
१ निघान, बिघो २ घेक, छट् । (ति०) ३ रात्रिचर
रात, रातके समय विचरण करनेवाला।

नक्तचर (सं० पु०) नक्त रातोति चर-ट (चरेः) ४
१ रात्रि २ रातमें ३ घूम, गूमन ४ घोर, चोर ५
घेक, छट् ६ निघान, बिघो ७ सोमराज्य ८ घूम, भू,
नगरा, भौमा । (ति०) ८ रात्रिचर, रात रातके समय
विचरण करनेवाला।

नक्तचर्या (सं० यो०) नक्त रातो चर्या चरणं । रात्रिमें
विचरवादि, रातको इधर उधर घूमनेकी क्रिया।

नक्तचारिन् (सं० ति०) नक्त रातो चरतीति चर-विनि।

रात्रिचर मात, रातके समय विचरण करनेवाला।

नक्तप्रात (सं० ति०) नक्त रातो जाता। १ रात्रिजात,

जो रातको उत्पन्न हो। (पु०) २ चोपधिभङ्ग, बहुत प्राथम
कालकी एक प्रकारको चोपधि त्रिमका उल्लेख वेदोंमें है।

नक्तन (सं० क्री०) नक्त वापुलकात् तनिन् । रात्रि, रात।

नक्तान (सं० ति०) नक्त रातो भवा वपुट्, गुट्, च। रात्रि-
भव, जो रातको हो।

नक्तन्दि (सं० ति०) नक्त च दिवा च समस्यं ह्ययोः

दृष्टः ततो यद्यतुरेत्यादिना यच्च समानात् । दिवा चोर
रात्रि, दिन-रात। “विशालं नक्तप्रिचरनरतिरिण” (वि० ३)

नक्तभोजिन् (सं० ति०) नक्त रातो भुङ्क्ते भुक्-विनि।

१ रात्रिभोजनकारी, रातको भोजन करनेवाला। २ नक्त
नामक व्रत करनेवाला। इस व्रतमें दिन को खाना मना है,
इसमें दिनके समय भोजन म नर रातको भोजन करना
विधेय है।

“इतिरभोजनं रानं चयवाहारमावसु ।

अतिरक्त-विमवातः । नक्तभोजनचर्यात् ॥”

(भरिच०)

नक्तम् (सं० यद्य०) रात्रि, रात।

नक्तमात्र (सं० पु०) नक्त रातो या मध्यम प्रचरिण
चमति यथाप्रतीतिं वा-चन्-पपु । १ अश्रुप, कलिका
पिङ्ग।

नक्तमुखा (सं० यो०) नक्त रातप्रान्तं मुखं यादिभानो
यथाः । रात्रि, रात।

नक्तमुलकम् (सं० क्री०) १ कपटपुन, कलिको नक्त,
महाभयम् ।

नक्तजन (सं० क्री०) नक्त रातो वदुतिनं यतः । नक्त जन-
तिथिदिनको न रात रातको खाना है । नक्त दीन।

नक्तप्रपञ्च (स० वि०) नक्तं प्रपञ्चति भू-भू-भूप । रात्रि-
प्रपञ्च, जो रातको उत्पन्न हो ।

नक्ता (स० स्त्री०) नक्त-प्रच-टाप । १ कलिकारी, कलि-
यात्री नामक विपैला घोषा । २ हरिद्रा, हल्दी । ३ रात्रि,
रात । ४ छणविशेष, एक प्रकारकी घाघ ।

नक्तान्ध (स० वि०) नक्तं रात्रौ अन्धः । रात्र्यन्ध, जिसे
रातको दिखाई न दे, जिसे रातोंघो होती हो ।

नक्तान्ध (स० स्त्री०) नक्तं अन्धः । नेत्ररोगमेद । इस
रोगमें रातको दिखाई नहीं देता । दूषित कफ जब चक्षुं
दृष्टीय पटलमें जम जाता है, तब यह रोग उत्पन्न होता
है । इस रोगमें केवल दिनको दिखाई पड़ता है, रातको
कोई चीज नजर नहीं आती । इसका कारण यह है, कि
दिनमें दृष्टि सूर्यास्तहोत होतो और दूषित कफ घट
जाता है, इसीसे रोगी दिनमें हर एक वस्तु देख सकता
है । (भावप्र० ४५१ नेत्ररोगाधिकार)

सुप्ततमें भी इस प्रकार लिखा है—दृष्टिभ्रमा द्वारा
जब विदग्ध होती है, तब समी वस्तु सफेद नजर आती है
और जब तीनों पटलमें यह दीप उत्पन्न हो जाता है, तब
नक्तान्धता होती है । इस रोगमें दिनके समय सूर्यको
किरणोंसे कफ कुछ कम हो जाता है जिससे दृष्टिगति
प्रकाश पाती है । (ध्रुव उक्त० ७७०)

नक्ता (स० पु०) कर्णजल, कंजा ।

नक्ति (स० स्त्री०) रात्रि, रात ।

नक्ष (हि० पु०) नक्ष देखो ।

नक्ष (स० पु०) न क्षामति दूरस्थल क्षम-उ 'नक्षान्वित'
न लोपो न । १ कुम्भार, नाक नामक जलजन्तु । (स्त्री०)
२ द्वारशाखाका अग्रभाग । ३ मकरादि जलजन्तुमेद, मगर
नामक जलजन्तु । ४ घड़ियाल । ५ नासिका नाक ।

नक्षराज (स० पु०) नक्षार्ण राजा । (रागादृष्टिप्र० ४८५,
पा० ४८६) दृष्टि टप समासान्तः । १ जलजन्तु प्रधान,
घड़ियाल । २ मगर । ३ नाक नामक जलजन्तु ।

नक्षहारक (स० पु०) नक्षमपि हरति इ-खुल् । हारहर ।

नक्षा (स० स्त्री०) नक्ष-प्रच-टाप । १ नासिका, नाक । २
मक्षिका दंशसूची, मधुमक्खो आदिका डंक जिसे वे क्रोध-
के समय मनुष्य शरीरमें रखाती हैं ।

नक्ष (स० स्त्री०) नक्ष देखो ।

नक्षत्रवीथ (हि० पु०) नक्षत्रवीथ देखो ।

नक्षत्रवीथी (हि० स्त्री०) नक्षत्रवीथी देखो ।

नक्षत्रपरवाना (हि० पु०) नक्षत्रपरवाना देखो ।

नक्षत्रघो (हि० स्त्री०) नक्षत्रघो देखो ।

नक्ष (स० वि०) १ जो बहित या चित्रित किया गया
हो, खींचा, बनाया या लिखा हुआ । (अ० पु०) २
चित्र, तमबीर । ३ खोद कर या कलमसे बना हुआ वस्तु
चूटे या फूस पत्तो आदि का काम । ४ मोहर, छाप । ५
एक प्रकारका ताराका लुप्ता । ६ एक प्रकारका यन्त्र जो
सारणीया कीटकके रूपमें बना रहता है और अनेक
प्रकारकी रोगों आदि को दूर करनेके लिये भोजन आदि
पर लिख कर बाँध या गली आदिमें पहनाया जाता है,
ताबीज । ७ जूट, टोम । ८ एक प्रकारका गाना ।

नक्षत्रनिगार (फ० पु०) बनाए हुए बेलचूटे आदि,
नकाशी ।

नक्षत्रबन्धो—एक नक्षत्रदायक सुमलमान फकीर । ये लोग
एक वाद्यमें प्रवृत्तित दोप से कर परमेस्वर और महम्मद-
को महिमाका गन करते हुए रातको भोव मंगते हैं ।
बङ्गाल देशमें ये लोग "सुक्लित आसान" नामक पीरके
ककीर कहलाते हैं । ये लोग हिन्दू सुमलमान दोनोंके
घर भीख मांगने आते हैं और वहाँ दीपकी कालीख से
कर कोटे कोटे बच्चोंके कपान पर लगा देते हैं । प्राची-
वीदके समय ये लोग इस प्रकार कहते हैं, "सुक्लित-
आसान माहव तुम्हारे कष्टको दूर करे, पापद्वेषे बचावे,
तथा कोटे कोटे बच्चोंको सुखो बनाये रखे" इत्यादि ।
गुलाम बहाउद्दौन नामक एक व्यक्ति इस सम्प्रदायके
प्रथम प्रवर्त्तक थे । नक्षत्रबन्धो फकीर अपने नामके पहले
'खाजा' पद लगाते हैं । तातार, तुर्क और भारतमें इस
श्रेणीके फकीर पाये जाते हैं ।

नक्षत्रवि—तुतिनरामके यन्त्रकर्त्ता । इन्होंने शुभ नामसे
अपना परिचय दिया है ।

नक्षत्र-रश्मि—पारस्यके अन्तर्गत पाणिपोलिसके निष्काट-
वर्ती कीह-रश्मि नामक पर्वतके ऊपर अनेक खोदित
शिलाफलक-विशिष्ट अत्यन्त प्राचीन समाधि-मन्दिर
वर्त्तमान हैं । इन सब मन्दिरोंका एकत्र नाम 'नक्षत्र-
रश्मि' है और वहाँ जो एक पर्वत है, वह भी इसी नाम-

अति प्राचीनकालमें ताराविन्यास देख कर प्राचीनों ने आकाशका विभाग किया था। प्रति रात्रिमें चन्द्रको सनमें जाने हुए देखा जाता है। इस प्रकारसे २०१८ दिनमें चन्द्र एक बार अपने पथका तारों के साथ घास करते हैं। प्राचीनों ने इन तारामालाओं का नाम नक्षत्र रखा था। इस प्रकारसे २७२८ नक्षत्र कल्पित हुए। कालान्तरमें जब उन्हें देखा कि एक भगवान् या पूर्णिमासे लगा कर दूसरी भगवान् या पूर्णिमा तक कुल ३० बार सूर्योदय होता है, तब ३० दिनका एक मास बना दिया। परन्तु सूर्योदयारम्भकालमें नक्षत्रों पर दृष्टि डालनेसे उन्हें मालूम पड़ा, कि सूर्य भी नक्षत्रों में हो कर गमन करते हैं। बारह बार भगवान् होनेसे सूर्य एक बार नक्षत्रचक्रमें घूम लेता है। इस प्रकार ३० दिनमें एक मास और १२ मास या ३६० दिनमें एक वर्ष गिना जाने लगा।

चन्द्रकी गति देख कर चन्द्रमण २०१८ नक्षत्रों में विभक्त हुआ था। सूर्य इसी पथसे १२ मास तक भ्रमण करता है। इसलिए इस पथको १२ भागों में विभक्त करनेकी आवश्यकता हुई।

आकाशमें तारागणको स्थान-निर्देशक हैं। इस कारण जैसे कुछ तारोंकी ली कर एक एक नक्षत्र कल्पित हुए थे, उसी प्रकार एक वा तत्त्विक नक्षत्रोंकी ली कर १२ राशियाँ कल्पित हुईं। जैसे कुछ तारोंके पारस्परिक विन्यासको देख कर उनका त्रिकोणाकार वा शकटाकार प्रतीत होने लगता है, उसी प्रकार कुछ नक्षत्रोंके पारस्परिक विन्यासको देख कर शेष-शुक्रादिके आकारकी कल्पना होती है। इस नाम और आकारकी कल्पनासे ही प्रकारकी सुविधाएँ हुईं। आज आकाशके किस स्थानमें सूर्य वा चन्द्र है, यह नाम द्वारा स्थित किया जाने लगा और वह अवस्थान आकाशका कौनसा अंश है, यह भी यन्त्रकी सहायताके बिना निर्दिष्ट होने लगता है।

कोई कोई ऐसा समझते हैं कि यह राशिविभाग पहले पहल मिस्रवासियों द्वारा प्रचलित हुआ था। दूसरे यह भी कह जाते हैं, कि मिस्रवासियोंकी राशि-कल्पनाको देख कर इससे ४०० वर्ष पहले योनीयोंकी यौक भाषा में krios, tauros आदि-राशियोंका नामकरण किया

था। इन लोगोंने देखा, कि मेष-शुक्रादि द्वादश राशियों द्वारा सम्पूर्ण आकाशका निर्देश नहीं किया जा सकता। इसलिए सन लोगोंने कुछ तारोंके auriga, cassiopeia आदि नाम रख कर कुछ नवीन आकारविशिष्ट राशिओंकी कल्पना कर ली। इस तरह कालान्तरमें १६ अतिरिक्त आकारोंकी कल्पना हुई और पहलेकी १२ राशियोंकी मिला कर अब सम्पूर्ण आकाश ४८ राशियोंमें विभक्त हुआ।

परन्तु किन किन ताराओंकी ली कर कौनसी राशि हुई, इसकी पहचान चित्रवर्णनाके बिना नहीं हो सकती। क्योंकि हर एक तारापुञ्जका यथेच्छ आकार कल्पित हो सकता है। इससे ४०० वर्ष पहले यौक इदक्सम (Eudoxos) ने पहले गोलक पर राशिओंका आकार दिखलाया था। तदनन्तर इससे १२८ वर्ष पहले हिपाक ने पहले पहल ताराका मानचित्र बनाया। १३१ ई० में प्रसिद्ध टॉलेमिने उस मानचित्रका संस्कार किया। प्रायः तीन सौ वर्ष पहले तायकोब्राहि नामक ज्योतिर्विदने कुछ नूतन राशियोंकी कल्पना की। इस तरह प्रायः ६० नूतन राशियोंकी दृष्टि हुई और प्रत्येक राशिमें आकार और नाम दिया गया। पुरानी ४८ और नयी ६०, इस तरह सब मिला कर १०८ राशियोंके विचित्र आकार खगोलक और खगोल मानचित्रमें चित्रित होने लगे।

एक ही नक्षत्रके भ्रमणमें तारे यौक अक्षरों द्वारा परस्पर विभिन्नोक्त हुए थे। वर्षमात्राके प्रथम अक्षरसे उज्ज्वलतम ताराका बोध होता है। यौक अक्षर निम्न जाने पर रोमन अक्षरोंको सहायता ली गई। बहुतसे उज्ज्वल ताराओंके विशेष विशेष नाम हैं। यौकज्योतिषके तारतम्यानुसार तारागण प्रथम, द्वितीय, तृतीय, आदि परिमाणोंमें विभक्त हुआ करते हैं। साधारणतः चतुर्विंशति जितने भी चन्द्रतारे देखे पड़ते हैं, वे पञ्चम परिमाणके हैं। परन्तु अति तोच्छ चन्द्र द्वारा षट् और सप्तम परिमाणके तारे भी दृष्टिगोचर हो सकते हैं। ज्योतिर्विद सि० जेम्सने निर्णय किया है, कि सर्वोपेक्षा उज्ज्वलतम लुब्धक तारे (Sirius) की ज्योति षट् परिमाणके तारोंकी अपेक्षा २२४ गुण अधिक है। उत्तर गोलार्धके

नक्षत्रों में निम्नलिखित तारे प्रथम परिमाण के हैं। यथा -
रोहिणी, स्वाति, Altair, चार्ड, Capella (प्रकटप्रथम),
Procyon (प्रथम), Regulus (चर्मजित्)। दक्षिण
गोलार्द्ध के नक्षत्रों में Arcturus, Antares (ज्येष्ठा),
Canopus (चमस्त), Rigel (शुद्धि), Sirius (मुख्य)
और Spica (विष्णु) ये सब प्रथम परिमाण के तारे हैं।

ये नक्षत्र क्या पदार्थ हैं, इसका निश्चितरूपसे निर्णय
करना सम्भव है; परन्तु यह निःसन्देह ज्ञात जा सकता
है कि सूर्यकी यदि नक्षत्रों के समान दूरमें व्यापन किया
जाय, तो वह भी आकाश और अन्तरिक्ष में एक नक्षत्र-
रूपमें प्रतीयमान होगा।

नक्षत्रों के व्यवस्थान के विषयमें विहित अनुमान
करना आवश्यक है। कोई कोई नक्षत्र विभिन्न दिशों
और कोई, कोई दूरमें अवस्थित है। यथा-रोहिणी, पुष्या,
षष्ठा आदि विभिन्न दिशों में निकटमें हैं और स्वाति, धनिष्ठा
एवं ज्येष्ठा आदि दूरमें अवस्थित हैं। कोई कोई नक्षत्र
परस्पर निकटस्थों तथा विष्ठा और स्वाती, चार्ड और पुन-
यंश परस्पर दूरस्थों एक एक ताराकी भे कर कोई नक्षत्र
तथा बहुतसे तारोंकी भे कर कोई कोई नक्षत्र कल्पित
हुआ है। शत (बहु) संख्यक तारोंकी भे कर शतभिषा,
शेर तारोंकी भे कर ऐश्वरी, ११ तारोंकी भे कर मूला और
१ तारोंकी चार्ड एवं स्वाति नक्षत्र कल्पित हुआ है।

नक्षत्रों की एक प्रकारकी दृष्टि: आर्द्धिक गति है।
उनके विषयकी पर्याप्तवशा परन्तु विविध होता पड़ता
है। ऐसा जाना है, कि अधिकांश नक्षत्र उदित हो कर,
पश्चिम वा दक्षिण-पश्चिम दिशा में परिक्रमण करते हुए
पश्चिम दिशाकी अवस्थिति होते हैं, और कुछ पञ्च नक्षत्र
व-मध्य (Zenith) के उत्तरवर्ती किसी एक बिन्दु के चारों
तार (हस्ताकार) परिक्रमण करते हैं। सिद्धदेवीय
तारा जिस हस्ताकी चिह्नित करता है, वही सर्वोपेक्षा दृष्ट
है। सिद्धदेवी के उत्तर दक्षिणोत्तरावर्तन को इस प्रकार
इन्द्रमाला गतिधोका कहा है। यदि किसीकी यदि वह
आवर्तन-गति हो सकती, तो वर्षमें सभी समय एक ही
नक्षत्र आकाशमें एक ही स्थानमें दीख पड़ता। परन्तु ऐसा
नहीं है। सर्वत्र चार्ड तारा दृष्टिधोकी की वार्षिक गति
है, जसके कारण आकाशका दृष्ट चर्चो चर्चो परिवर्तित

होता रहता है। पात्र एक नक्षत्र किसी समय आकाशमें
जिस स्थानमें दीखेगा, वही वर्षी नक्षत्र या मित्र
पहले सभी स्थानमें नक्षत्र आदेश की श्रेष्ठ एक वर्ष
बाद एक ही नक्षत्रकी समान पहले स्थानमें दिखेगी।

कुछको छोड़ कर अधिकांश नक्षत्रों का दूरत्व सभी तरह
निर्णीत नहीं हुआ है। परन्तु यह दूरत्व समझिक है,
इसमें संदेह नहीं। मैडमिरे समर्थी तारों के वार्षिक
सम्यन (Yearly parallax) निम्नप्रकारे द्वारा उनके
दूरत्व-निर्धारण के लिये बहुत चेष्टा की गई है। वह नक्षत्र
सुमन्यन यन्त्रों द्वारा अवधारित होता है। किसी नक्षत्र
एक ऐसा शून्य पर्यन्त और दूसरी देखा दृष्टिसे पर्यन्त
परिपथमें जो कोण उत्पन्न होता है, उसे नक्षत्रका सम्यन
कहते हैं। यदि उस कोणका परिमाण एक सेल्सियुस की,
तो समझना चाहिये कि प्रस्तावित नक्षत्रका दूरत्व शून्य के
दूरत्वमें २०,००० गुण अधिक है। १८३२ में १८३८ ई.
भीतर डेन्डर्गन, सेवेन और पिटर्म सहोदय नक्षत्रों
का सम्यन यथावत् रूपसे निर्धारित किया था।

डेन्डर्गन सहने पहले त्विर दिया कि स्थान (Siberia)
नक्षत्र के समर्थन ११ म' व्यापीका जो एक गुण तारा
(Double star) है, उसका सम्यन ०.१० है। इसमें
निर्णीत हुआ कि वह तारायोंकी दूरी शून्य की दूरीमें
२५,००० गुण अधिक है। इस कारण वह तारायोंका
आसन्न दूरत्व पर पर्यन्तमें ८ सेल्सियुस है। आज तक
जिन सब नक्षत्रोंकी दूरी मापस हुई है, उनमें Al-pis
Centauri (जिसे नामक तारा सबसे कम दूरी पर है।)
यह एक परदत्त उत्तम तारा है और दक्षिण आकाशमें
अवस्थित है। इसका समर्थन डेन्डर्गन और
मैडमिरे द्वारा इसका सम्यन ०.८१२८ लिये हुआ
था। पीछे मंगोपिन हो कर ०.८०६ कायम किया
गया। यह तारायोंका आसन्न दूरत्व २२ पर्यन्तमें
१ सेल्सियुस है। उत्तम तारा तारा मुख्यका सम्यन
०.१२ निर्णीत हुआ है।

सहरी छोड़ करमें बाद सभी यह पञ्च तारा तारों
होता है, कि एक प्रथम परिमाण के तारोंकी दूरी मुख्यतः
हस्ता के व्यापार्य में मूलाधिक ८८,००० गुण है। इस
दूरत्वकी परिमाण कर प्रथम पर्यन्तमें १ सेल्सियुस

है। किन्तु ठूठे परिमाणके एक तारिका (पर्याप्त बड़ होट्टे) कोटा तारा जो दूरबीचणकी सहायताके बिना देखा जाता है। दूरत्व भूकक्षाद्वारतके व्यासार्धसे ७६०००० गुण है। इस सुदूर पथको पार कर पृथ्वी पर प्रकाशके पहुँचनेमें १२० वर्षसे भी अधिक समय लगता है। जब चन्द्रग्राह्य अधिकतम ताराधोंका दूरत्व इतना अधिक हुआ, तब जो सब ज्योतिष्ककृपा बलवान् दूरबीचणकी सहायताके बिना दृष्टिगोचर नहीं होती, उनकी दूरी किस प्रकार अवधारित होगी? हमसे यह सिद्धान्त होता है, कि उन सब नक्षत्रोंका जो प्रकाश हम लोग देखते हैं, वह दो एक वर्ष या दो एक जीवितकालका नहीं है; लेकिन वह सहस्र वर्ष पहलेसे चला आ रहा है।

ताराधोंकी संख्या भगणित है। ताराधोंको गिन कर कौन गेप कर सकता है? जितने तारे नयन गोचर होते हैं, उनकी संख्या कुछ सहस्रसे अधिक नहीं है। प्रथम परिमाणके ताराधोंकी संख्या १५से २०, द्वितीय परिमाणके ताराधोंकी संख्या ५०से ६०, तृतीय परिमाणके ताराधोंकी संख्या प्रायः १००, चतुर्थ परिमाणके ताराधोंकी संख्या ४००से ५००, पौष्टपञ्चम परिमाणके ताराधोंकी संख्या क्रमशः अधिक होती गई है। ठूठे और सातवें परिमाणके ताराधोंकी संख्या प्रायः १२००० है। सभी नक्षत्र ज्ञायापथके (Milky-way) निकटवर्ती प्रदेशमें घने तौरसे अवस्थित हैं। ज्ञायापथ भी ११वें, १२वें परिमाणके तारकागुच्छके निविड़ सन्निधयके सिवा और कुछ भी नहीं है।

नक्षत्रगण नियत नहीं हैं, यह युक्ततारा वा बहुतारा (Multiple stars) का व्यापार देख कर सहजमें प्रतीत हो जायेगा। युक्त वा बहुताराधोंमेंसे एक वा अनेक तारे दूसरेके वा आपसके साधारण भारकेन्द्रके चारों ओर घूमण करते हैं। दूरबीचणको सहायताके बिना वे सब तारे प्रत्यक् प्रत्यक् देखे नहीं जाते। गिज्ञोभि भी इनके भस्तिवका आविष्कार किया था और इनकी सहायतासे नक्षत्रका वार्षिक सम्बन्ध (Yearly parallax) अवधारण करनेका प्रस्ताव किया था। उसके बहुत समय बाद मैडेली, सैफर्टखोन और मेयर साधने युक्त ताराधोंके नियथमें बहुत दिमाग लगाया

था, लेकिन कुछ भी फल न निकला। अन्तमें जर्मन साधने बहुत समय तक सोच विचारके बाद इनकी प्रकृतिसे सम्बन्धमें अपूर्व सिद्धान्त उद्भावण किया है। शुभ, सेमारि, एडि, साउथ और जर्मनीने मिल कर उत्तमाग्रा अन्तरोधमें चार वर्ष तक अनुसन्धान द्वारा दक्षिण गोलाधर्ममें ६०० युक्ततारों और बहुतारोंका आविष्कार किया। उनका अधिकतम दूरी दोके योगसे गठित है। लेकिन फिर अनेक लोग, चार या पाँच तक कि पाँच से कर भी गठित हुए हैं। इन सब युक्तताराधोंका दूरत्व कभी भी अधिक देखा नहीं जाता। वह दूरत्व "१५ से १२" में अधिक नहीं है। दो ताराधोंके परस्पर निकटवर्ती रहनेसे जो वे युक्ततारा कह जायेंगे, वो नहीं। प्रकृत युक्तताराधोंमेंसे केवल दो तारे जो एक दूसरेके नजदोक रहते हैं, सो नहीं, बल्कि वे एक दूसरेके चारों ओर परिभ्रमण करते हैं, प्रथम परिमाणके ताराधोंमें प्रत्येक ठूठे तारा बहुतारा है। इसकी अपेक्षा सुदूर ताराधोंमें बहुताराकी संख्या अपेक्षाकृत विरल है। किसी किसी जगह पर एक तारा दूसरेकी अपेक्षा कहीं बड़ा है; जैसे कालयुद्धके अन्तर्गत रिमेल (वटवट्टि)। किन्तु अक्सर युक्तताराधोंको ज्योति प्रायः एक ही है। अधिकतम स्थानोंमें युक्ततारागण एक वर्षके है। किन्तु उनमें एक-पञ्चमांश ताराधोंमें वर्षभेद देखा जाता है।

२० वर्ष तक खोज करनेके बाद ८०२ ई०में जर्मन साधने यह मत प्रकाशित किया, कि युक्ततारागण परस्पर संबद्ध दो वा दोसे अधिक तारामण्डल हैं, वे नियमित कक्षाद्वारतमें साधारण भारकेन्द्रके चारों ओर घूमते हैं। और जगतमें यतिका जो निम्न प्रवर्तित है, उनमें उक्तो नियमका प्रचलन देखा जाता है, और उनकी कक्षाद्वारत दीर्घ वृत्ताकृत (Elliptical) का है। अतएव वे सब दूरवर्ती अक्षमण्डल मज्जाकार अष्टनके मज्जाध्वज-सम्बन्धीय नियमके बन्धवर्ती हैं। उनमेंसे फिर बहुतो का प्रदक्षिणके समय-काल अवधि नियमित हुआ है। चाकि उचितके अन्तर्गत एक तारिका प्रदक्षिण समय ३० वर्ष है। यही सबसे कम है। दूसरे दूसरे ताराधोंके प्रदक्षिणका समय एक ही वर्ष निश्चित

हुपा है। जिन सब स्थानों में लम्बन मालूम है, वहाँ कचाहत्तका प्रायतन निरूपित किया जाता है। इस उपायसे ज्योतिर्विद् पण्डितों ने यह अवधारण किया है कि राजहंस (Cygnus) नक्षत्रके भन्तर्गत ६१ युक्त ताराओं के परस्पर चारों ओर जो कचाहत्त है, वह प्रायतनमें सूर्य के चारों ओर निपशुनका जो कचाहत्त है उससे कहीं बड़ा है। इस प्रकार परिभ्रमणवशतः पहले जो सब तारे पृथक् पृथक् देखे जाते थे, अभी उनमेंसे अनेक एक साथ मिले हुए देखे जाते हैं। हेलिग्राहवने निर्धारण किया है कि ताराओं की प्रकृत गति एक दूसरे तरहकी है। एक तारा भिन्नभिन्न दिशा में जा कर गायब हो जाता है। इस कारण प्रयुक्त नक्षत्रों की प्राकृति धीरे धीरे परिवर्तित होती है। हाव्योस्टका कहना है, कि दक्षिण दिक्स्थ ज्ञान नक्षत्र चिरकाल तक ठीक वर्तमान प्राकृतिविशिष्ट नहीं रहेगा। क्योंकि जिन चार ताराओं को लेकर उक्त नक्षत्र गठित हुआ है, वे भिन्न भिन्न मार्गों से कर समान वेगसे भ्रमण करते हैं। इस सम्पूर्ण रूपसे भ्रमण हो जाने में कितने हजार वर्ष लगेंगे, उसको गणना नहीं।

ज्योतिःशास्त्र में जिस प्रकार लिखा है, उसका विषय और कर देखना आवश्यक है, सूर्य उत्तरायण और दक्षिणायन गतिसे आकाशमण्डल में परिभ्रमण करते हैं, इन दो सोमाओं वा रेखाओं के मध्य पृथ्वीका जो अंश पतित होता है, उसका नाम मध्याह्न है। इस अर्ध में धारह राशि और उसके भन्तर्गत १०१६ नक्षत्र देखने में पाते हैं। गगनमण्डलके उत्तर जो अंश हैं, उसे उत्तरअर्ध कहते हैं। उसके मध्य ३५ राशि अर्थात् गुप्त है और तदन्तर्गत १४५६ नक्षत्र हैं। दक्षिणकी ओर जो अर्ध है, उसके मध्य ४६ राशि और तदन्तर्गत ८८५ नक्षत्र अवस्थित हैं, यह पाश्चात्य ज्योतिर्विदों ने स्थिर किया है।

उस मध्यअर्ध में जो सब नक्षत्र हैं, उनमेंसे बंधुओं को ले कर एक एक भाकितिकी कल्पना करके पुराणकारों ने ज्योतिर्विद् पण्डितों ने धारह वर्षों राशि स्थिर की है।

विषुवरेखाके उत्तरकी ओर मेषादि ६ राशि हैं और दक्षिण ओर तुला आदि ६ राशि तिर्यक् भावसे अव-

स्थित हैं। गगनमण्डलके इन तीन अर्धों में जिन सब नक्षत्रों का विषय कहा गया है उनके सिवा दूरदोषण-यन्त्रकी सहायतासे अनेक नक्षत्र दृष्टिगोचर होते हैं।

भारतवर्षीय ज्योतिर्विदों ने उत्तर और दक्षिण अर्धों में जो सब राशि और नक्षत्र हैं, उनका कोई उल्लेख नहीं किया। इसी कारण किसी ज्योतिर्विद् ने उन सब राशियों और नक्षत्रों के नाम नहीं मिलते।

किन्तु उन्होंने मध्यअर्धस्थ मेषादिप्रथम बारह राशिसंज्ञा २० नक्षत्रों के नाम रखे हैं। साधारण लोगों का विश्वास है, कि अश्विनोत्तरे से कर १६वीं तक जो ५० नक्षत्र गिने जाते हैं, वे सिर्फ २० हैं, सो नहीं। सूर्य-सिद्धान्त आदि ग्रन्थों में अश्विनी प्रभृति एक एक नक्षत्र नहीं हैं उनमेंसे कोई तो एक और कोई उससे भी अधिक नक्षत्रों से विरचित है।

अश्विनी, इसमें तीन नक्षत्र हैं। इन तीन नक्षत्रों का अवस्थान अश्वके जैसा है, इसीसे इसका नाम अश्विनी पड़ा है, इत्यादि। इन नक्षत्रों की भाकति और अवस्थायादिके विषयमें खुल्लेख देखो। २० नक्षत्रों के नाम ये हैं—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्या, अश्लेषा, मघा, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुषावा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, मूला, पूर्वाषाढा, श्रवणा, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और ऐश्वी। अश्वि जित् नामक एक नक्षत्र और है, किन्तु यह नक्षत्र भिन्न नक्षत्र नहीं है, इसी २० नक्षत्रों के भन्तर्गत है।

इन २० नक्षत्रों के प्रति नक्षत्रकी चार भाग करके उसके जो भी पाद अर्थात् भागमें एक एक राशि ठीक करके बारह राशियों में नक्षत्रचक्र विभक्त किया गया है। इसीसे उन नक्षत्रों को राशिचक्र भी कहते हैं।

कोई कोई नक्षत्र ऊर्ध्वमुख और कोई अधोमुख वा तिर्यक्मुख है, इनमेंसे आर्द्रा, पुष्या, धनिष्ठा शतभिषा, श्रवणा, रोहिणी, उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तरभाद्रपद ये सब नक्षत्र ऊर्ध्वमुख हैं। मूला, अश्लेषा, कृत्तिका, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढा, और पूर्वभाद्रपद ये सब नक्षत्र अधोमुख हैं। अश्विनी, ऐश्वी, हस्ता, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, मृगशिरा और अनुषावा

इन सब नक्षत्रों का एक एक अधिपति निर्दिष्ट है। यथा—
चित्रिणीका चित्रि, मारुतीका यम, क्षत्तिकाका दहन,
रोहिणीका कमलज, मृगशिराका शशी, भार्गवाका शूल-
शूल, पुनर्वसुका अर्द्धि, पुष्याका जीव, अश्लेषाका
फणी, मघाका पिङ्गण, पूर्वफल्गुनीका योनि, उत्तर-
फल्गुनीका अयंमा, हस्ताका दिनकत, चित्राका
स्यष्टा, स्वातिका पवन, विशाखाका शक्रान्नि,
मृगशिराका मित्र, ज्येष्ठाका शत्रु, मूलाका निवृत्ति,
पूर्वाषाढाका तोय, उत्तराषाढाका विश्वविरिञ्चि,
ज्येष्ठाका हरि, धनिष्ठाका वसु, शतभिषाका वरुण,
पूर्वभाद्रपदका अजेकपाद, उत्तरभाद्रपदका अर्द्धिभू
और ऐश्वरीका पुष्या अधिपति है। नक्षत्रके नामसे
मासका नामकरण हुआ है, यथा—क्षत्तिका और
रोहिणी इन दो नक्षत्रों के कार्तिक, मृगशिरा और
भार्या के फल्गु, पुनर्वसु और पुष्या के चैत्र, अश्लेषा और
मघा के माघ, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी और हस्ता के
फाल्गुन, चित्रा और स्वातिका के चैत्र, विशाखा और मृ-
गशिरा के मघा, ज्येष्ठा और मूला के ज्येष्ठ, पूर्वाषाढा और
उत्तराषाढा के आषाढ, ज्येष्ठा और धनिष्ठा के आषाढ,
शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद के भाद्र-
पद, ऐश्वरी और भरणी के चैत्र।

उन सब मासों को पूर्णिमा तिथि में वे दो सब नक्षत्र
होने, अर्थात् कार्तिकमासको पूर्णिमा तिथि में क्षत्तिका
अथवा रोहिणी नक्षत्र होगा। इसी प्रकार सभी मासों में
जानना चाहिये। इस तरह नामकरणका कारण
मान्य करने में यह साफ साफ जाना जाता है कि पृथ्वी
जब जिस राशि में ठहरती है, तब उसी राशि के स्थिति-
काल में उसी नक्षत्रके नामसे मासका उल्लेख हुआ
है। किन्तु जिस राशि में पृथ्वी जब स्थित रहती है, उस
समय उसी राशि में उसकी सातवीं राशि में सूर्य देखे
जाते हैं और उसी उसी राशि को सातवीं राशि में वे
अस्त होते हैं। अर्थात् जब पृथ्वी विशाखा नक्षत्र में अर्थात्
तुला राशि में स्थित रहती है, उस समय सूर्य मेषराशि-
में देखे जाते हैं। इसी प्रकार सभीका विषय जानना
चाहिये।

गणनका तरीका तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।

Vol. XI. 42

जिन सब नक्षत्रों को सर्वत्र किया गया है, उसके मध्य-
खण्ड में बारह राशि और तदन्तर्गत २७ नक्षत्र हैं। उन
२७ नक्षत्रों को बारह भाग करके उसको एक एक राशि
नौ पद नक्षत्र में बूझा करती है। उस गणनमण्डलकी
मध्यखण्डस्थित राशियोंका परिभ्रमण करने में किस-
का कितना समय लगेगा, वह नीचे दिये जाता है।
इसके द्वारा उनको गति पौर दूरी जानी जा सकती है।
यद्यप्य नक्षत्रपुञ्जलक्षण राशिचक्रका परिभ्रमण
करते हैं। उनमेंसे रविको बारह राशिभ्रमण करने में
एक वर्ष लगता है, अर्थात् सैपरागिके अन्तर्गत चित्रिणी
नक्षत्रके प्रथमपादसे भ्रमणका आरम्भ कर फिरसे उस
स्थान पर आजाने में एक एक वर्ष लगता है। इसी
प्रकार चन्द्रको २७ दिन, मङ्गलको ५४० दिन, बुधको
२२६ दिन, वृहस्पतिको १२ मास, शक्रको ३३६ दिन,
शनि को ३० वर्ष, राहु और केतुको १८ वर्ष लगता है।
यहो को बारह राशि भ्रमण करने में जो समय
लगता है, उसे बारह भाग करने से जो काल होता है,
वह काल एक एक राशि भ्रमण करनेका निर्दिष्ट समय
है। नौ वादनक्षत्र में एक राशि होता है। उस राशि के
मोगकालकी ८ वें भाग देने से जो वष जाता है, उसका
चौथाई काल एक एक नक्षत्र-भ्रमण करनेका काल है।

रविको एक राशि के भ्रमणका काल १ मास है,
अर्थात् चित्रिणी नक्षत्रके प्रथम पादसे शुरू कर क्षत्तिका
पूर्ण एक पाद परिभ्रमण करने में १ मास लगता है।
इस प्रकार चन्द्रको २१५ पद, मङ्गलको ४५ दिन,
बुधको १८ दिन, वृहस्पतिको १ वर्ष, शक्रको २८ दिन,
शनि को २ वर्ष ६ मास, राहु और केतुको १ वर्ष ६
मास समय लगता है। इसके द्वारा गणनमण्डलके
हादय भाग में अर्थात् हादय राशि को जिस राशि में कोन
यह किस समय अवस्थित रहेगा तथा उन राशि में
अन्तर्गत नक्षत्रों में कब तक भ्रमण करेगा, वह मान्य
हो जायेगा।

एकमात्र नक्षत्रानुसार ही राशिकी दया आदिका
निर्दिष्ट किया जाता है, इसके फलफल जाना प्रकारके
लिखे गये हैं।

नक्षत्रगणन—जिस किसी नक्षत्रके उदये से कर फिर-

मे उदय होनेसे जो समय लगता है, उसे एक नाक्षत्र अक्षरात्र कहते हैं। नक्षत्रमान इस प्रकार है—६० अशुपत्तका एक विपल, ६० विपत्तका एक पल, ६० पलका एक दण्ड, ६० दण्डका एक नाक्षत्रअक्षरात्र, ६० नाक्षत्र अक्षरात्रका एक नक्षत्रमास और बारह नक्षत्र मासका एक नाक्षत्र वर्ष होता है। ३६६ अक्षरात्र १५।३१।२४ अशुपत्तका एक और वर्ष होता है। अतएव सावन ३६५ दिन १५।३।२४ अशुपत्तका एक नाक्षत्र अक्षरात्रसे अधिक होता है। नक्षत्रोंका उदय देख कर इस नक्षत्रकालका नियम होता है। किसी विशेष नक्षत्रके उदय स्थानसे पुनर्वा रसी स्थान पर आनेसे जो समय लगता है, वह किसी प्रकार किसी यन्त्र द्वारा स्थिर करनेसे उस काल द्वारा एक नाक्षत्र अक्षरात्रका परिमाण स्थिर होता है। इस नाक्षत्र अक्षरात्रका प्रतिदिन बराबर रहता है। नाक्षत्र अक्षरात्रमें भी बारह सन्त होते हैं। इस नाक्षत्र दिनके द्वारा परमायु और दशा आदिकी गणना होती है।

नक्षत्रका जाति-निर्माण-अश्विनी और शतभिषा, अश्वजाति; रेवती और भरणी हस्ती, क्षत्तिका भजा; रोहिणी और मृगशिरा सर्प, आर्द्रा, हस्ता और स्वाति व्याघ्र, पुनर्वसु मेष, पुष्या, अश्लेषा और मघा इन्दुर; पूर्वफल्गुनी और चित्रा मछिप; विशाखा और अश्लेषा हरिण, ज्येष्ठा कुक्कुर, मूला और श्रवणा वानर; पूर्वाषाढा मकुल; धनिष्ठा पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद सिंह जातिका है। नक्षत्र द्वारा नाम और राशि निर्धारित होती है। वह नक्षत्रानुयो नामकरण शतपदचक्र अनुसार हुआ करता है। नक्षत्रके चार पादमें चार अक्षर रहेंगे। उस नक्षत्रके मध्य जन्म समय स्थिर कर नक्षत्रके किस पादमें जन्म हुआ है, वह स्थिर करना होता है। पीछे जिस पादमें जन्म होगा नक्षत्रके उस पादमें लिखित नामोंका आदि अक्षर होगा। किस अक्षरके किस पादमें जन्म होनेसे क्या नाम होगा उसका विषय नीचे दिया जागा है।

“अ ए इ ए क्षत्तिका, अ ष बी नु रोहिणी, वे वो क कि मृगशिरा, कु छ ऊ ऋ आर्द्रा, के को ङ ण पुनर्वसु, हु ङे हो ङ पुष्या, ति तु तं तो अश्लेषा, म मि मु मे मघा, मो ट टि टू पूर्वफल्गुनी, टे टो प पि उत्तरफल्गुनी, पु

प ण ठ हस्त, ये यो र रि चित्रा, रु रे रो त स्वाति, ति तु ते तो विशाखा, न नि नु ने अश्लेषा, नो य ये यु ज्येष्ठा, ये यो भ भि मूला, भू भु भ ङ पूर्वाषाढा, मे भो ज जि उत्तराषाढा, जु जी जो ख अभिजित्, खि खु खे खो श्रवणा, ग गि गु ने धनिष्ठा, गो ग ग्रि ग शतभिषा, गी गो द दि पूर्वभाद्रपद, दु ध ध ङ उत्तरभाद्रपद, दे दो च धि रेवती, चु षे चो ल अश्विनी, सि सु से सो भरणी।”

इनमेंसे जिस किसी नक्षत्रमें जन्म होगा, उस जन्म नक्षत्रका कितना दण्ड है, पहले उसका निर्णय करना चाहिये। नक्षत्रमें चार भाग करके उनमेंसे जिस भागमें जन्म होगा, वही पाद जानना होगा। प्रति नक्षत्रमें चार चार करके अक्षर सन्निविष्ट हैं। नक्षत्रके जिस पादमें जन्म होगा, उस पादमें जो अक्षर रहेगा, वही अक्षर आदि अक्षर होगा। जैसे क्षत्तिका नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म होनेसे अकार, द्वितीय पादमें ईकार, तृतीय पादमें उकार और चतुर्थ पादमें एकार आदि पर नाम होगा। इसी प्रकार और सभी नक्षत्रोंका विषय जानना चाहिये। नाक्षत्रिक दशा और राशि आदिका विवरण दशा और राशि शब्दमें देगे। किस नक्षत्रमें जन्म होनेसे जातवालक किस प्रकारका गुणसम्पन्न होगा, वह प्रत्येक नक्षत्रके नाम और अपरापर विवरण खगोल शब्दमें लिखा है।

२ द्वारविशेष, २७ नरद्वारका नाम नक्षत्रमासा है।

नक्षत्रमासा देखो।

नक्षत्रतन्त्र (सं० पु०) अथर्ववेदका परिशिष्टविशेष। इसमें चन्द्रकी अर्थास्तिका विषय वर्णित है।

नक्षत्रकान्तिविस्तार (सं० पु०) नक्षत्रकान्तोना विस्तारीयत। अथर्वानाल, सफेद ज्वार।

नक्षत्रकूर्मविभाग (सं० पु०) नक्षत्रकूर्मका विभाग अर्थात् राशिको प्रधानताके अनुसार देवका अवस्थानभेद।

नक्षत्रगण (सं० पु०) नक्षत्रघटितो गणः समुदायभेद।

नक्षत्रविषयका समुदायक गणभेद। इस नक्षत्रगणका विषय सप्तर्षिर्हिताने इन प्रकार लिखा है—रोहिणी, उत्तराषाढा, उत्तरभाद्रपद और उत्तरफल्गुनी नक्षत्र प्रमुखण है अर्थात् प्रमुखण कहनेमें यही सब नक्षत्र पाये जायेंगे। इस प्रमुखणमें अभि-

पेक, शान्ति, तह, नगर, बीज और सभी भूवकार्य
प्रारम्भ करना उचित है। मूला नक्षत्र एवं शिव,
शत्रु और भुलग जिनके अधिपति हैं, वे सब नक्षत्र तीक्ष्ण
गण हैं। इस तीक्ष्णगणमें अभिघात, मन्त्र, वेताल,
बन्ध, वध और भेद सम्बन्धीय कार्य सिद्ध होते हैं।
पूर्वाषाढा, पूर्वफल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, भरणी और पितृ-
नक्षत्रमें स्रग्गण होते हैं। स्रग्गण नक्षत्र सन्तादन,
नाय, शठ, अन्ध, विष, दहन, और शस्त्राघात आदि-
के सिद्धि लाभके लिये प्रयोज्य हैं। हस्ता, अश्विनी और
पुष्या इन तीन नक्षत्रोंमें लघुगण होते हैं। इस लघुगणमें
पुण्यकर्म, रति, ज्ञान, भूषण आदि सिद्धिदायक हैं।
चतुराश्रा, चित्रा, पौष और इन्द्राधिपति नक्षत्र स्रुद्गण
हैं। इस स्रुद्गणमें सुरत, विधि, वस्त्र, भूषण और मङ्गल-
गीत आदि चितकर होते हैं। विशाखा और ज्ञप्तिका
नक्षत्रमें स्रुद्-तीक्ष्णगण हैं। यह स्रुद् तीक्ष्णगण विभिन्न
फलदायक होते हैं। अश्विनी, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र
तथा वायु और सूर्य जिन सब नक्षत्रोंके अधिपति हैं, वे
सब नक्षत्र चरगण हैं। यह चरगण चरकर्ममें हित कर
माने गये हैं। (बृहत्संहिता ८८ अ०)

नक्षत्रचक्र (सं० स्त्री०) नक्षत्राणां चक्रं यत् । १ राशिचक्र ।
२ तन्मूल दीर्घोपयोगी चक्रमेढ । शिष्यको मन्त्र देते समय
शुक्रको चाहिये कि वे नक्षत्रचक्र आदि चक्रसमूह द्वारा
मन्त्र स्थिर कर लें । तन्वसारमें यह चक्र इस प्रकार
लिखा है—

नक्षत्रचक्र—“यथा अश्विनी देवगणः । इ भरणी
मातृगणः । ई च ज्ञप्तिका राक्षसः । ऋ ऋ ऋ ऋ
रोहिणी मातृगणः । ए अश्विनी देवः । ऐ आर्द्रा मातृगणः ।
ओ भो पुनर्वसुर्देवः । क पुष्यो देवः । ख ग अश्विनी
राक्षसः । घ ङ मघा राक्षसः । च पूर्वफल्गुनी मातृगणः ।
झ ञ उत्तरफल्गुनी मातृगणः । भ अ हस्ता देवः । ट ठ
चित्रा राक्षसः । ड ण विशाखा राक्षसः ।
त थ द चतुराश्रा देवः । ध भ ज्येष्ठा राक्षसः । न
प फ मूला राक्षसः । व पूर्वाषाढा राक्षसः । म
उत्तराषाढा मातृगणः । म अश्विनी देवः । य र धनिष्ठा
राक्षसः । स शतभिषा राक्षसः । श पूर्वभाद्रपदा मातृगणः ।
व स इ उत्तरभाद्रपदा मातृगणः । अ अ-ः अक्षा रेवती
देवः ।” (तन्वसार)

नक्षत्रचिन्तामणि (सं० पु०) रत्नविशेष, एक प्रकारका
कल्पित रत्न । इसके विषयमें यह प्रसिद्ध है कि उससे जो
कुछ मांगा जाय, वह मिलता है ।

नक्षत्रज (सं० स्त्री०) जो नक्षत्रमें उत्पन्न हो ।

नक्षत्रजात (सं० स्त्री०) नक्षत्र तद्विशेषे जातं जन्म । नक्षत्र
विशेषमें जन्म, किंच नक्षत्रमें जन्म लेनेसे कांसा फल होता
है, उसका विषय बृहत्संहिताके १०१ अध्यायमें
लिखा है ।

नक्षत्रताराजादित्य (सं० पु०) चन्द्र, नक्षत्र और ताराओं
के अधिपति सूर्य ।

नक्षत्रदश (सं० स्त्री०) नक्षत्रं दशति चवन्नीकयति
इति दश-भण् । १ नक्षत्रबीजक, जो नक्षत्र देखता हो ।
(पु०) नक्षत्रं तत्कालं दशं यति सूचयति दश-गिच भण् ।
२ गणक, ज्योतिषी ।

नक्षत्रदान (सं० स्त्री०) नक्षत्रं नक्षत्रविशेषे दानं । नक्षत्र
भेदसे द्रव्यविशेषका दान, पुराणानुसार भिन्न भिन्न
पदार्थोंका दान । इसका विषय जैमात्रि दानखण्डमें इस
प्रकार लिखा है— ज्ञप्तिका नक्षत्रमें पायस, रोहिणीमें
माष रत्न, घृत और दुग्ध, अश्विनी नक्षत्रमें सवसा धेनु,
आर्द्रामें क्षार (खिचड़ी), पुनर्वसुमें प्रपुष (पाटकी मिट्टी),
पुष्यामें सुवर्ण, अश्लेषामें रोष्य, हस्तानक्षत्रमें हस्ती और
रथ, चित्रा नक्षत्रमें उत्तमा धेनु, विशाखामें धेनु, चतुराश्रा
नक्षत्रमें उत्तरीय सहित वस्त्र, मूला नक्षत्रमें मूलक,
पूर्वाषाढामें वरतन समेत दहो और खाना हुआ सरसू,
अभिजित् नक्षत्रमें घृत और मधु, अश्लेषामें कम्बल,
धनिष्ठामें वस्त्र और धेनु, शतभिषा नक्षत्रमें गन्ध
द्रव्य, पूर्वभाद्रपद नक्षत्रमें, राजमाय उत्तरभाद्र पद
नक्षत्रमें मांस, रेवती नक्षत्रमें कांसा और बड़ड़ा
सहित गो आदि दान करनेसे बहुत अधिक पुण्य होता
है और यन्त्रमें उसे स्वर्ग मिलता है । जो ब्राह्मण विद्या
विनयादिसे सम्पन्न हो अर्द्धांकी यह दान देना चाहिये ।

नक्षत्रनाथ (सं० पु०) नक्षत्राणां नाथः इ-तत् । चन्द्रमा,
पुराणानुसार दचकी अश्विनी आदि मन्त्राईय (नक्षत्रों)
कन्याओंका विवाह चन्द्रमाके साथ हुआ था, इसीलिये
चन्द्रमाको नक्षत्रनाथ कहते हैं ।

नक्षत्रनेमि (सं० पु०) नक्षत्रस्य तच्चक्रस्य नेमिरिवः । १

ध्रुवतारक, ध्रुवतारा । २ चन्द्र, चन्द्रमा । ३ रेवती ।
४ विष्णु ।

भगवान् विष्णुने तारामय शिखरके छटयमें ठहर कर ज्योतिष्कमण्डलकी नेमि को नई चक्राकारमें घुमाया था, इसीसे भगवान् विष्णुका नेमि नाम पड़ा है ।
नक्षत्रप (सं० पु०) नक्षत्रे पाति रचति इति पा०क । चन्द्र, चन्द्रमा ।

नक्षत्रपति (सं० पु०) नक्षत्रे पाति पा इति, वा नक्षत्राणां पतिः इत्यत् । चन्द्र, चन्द्रमा ।

नक्षत्रपथ (सं० पु०) नक्षत्रोपलक्षितः पन्थाः, अथ समासन्तः । नक्षत्रचक्रका भ्रमणमार्ग, नक्षत्रों के चलनेका रास्ता । “असीतनक्षत्राणि यत्र” (माघ) अंगीत देखे ।

नक्षत्रपुरुष (सं० पु०) नक्षत्रैः पुरुष इव । व्रतविशेष । नक्षत्रमनुष्को पुरुष मान कर यह व्रत किया जाता है, इसीसे इनका नाम नक्षत्र-पुरुष-व्रत पड़ा है ।

इस व्रतका विषय बृहत्संहितामें इस प्रकार लिखा है—मूलानक्षत्र नक्षत्रपुरुषके दोनों पाँच, रोहिणी और अश्विनी दो जड़ा, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा दो जड़, पूर्वफल्गुनी और उत्तरफल्गुनी गुह्यदेश, कृतिका च - का कटिदेश, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद दो पाश, रेवती कुक्षिदेश, चतुराश्व नक्षत्र, धनिष्ठा वृषभेश, विशाखा दोनों भुज, हस्तानक्षत्र दोनों हाथ, पुनर्वसु, हस्तान्त्रि, अश्लेषा हस्तानख, ज्येष्ठा शीवा, श्रवणा दो कर्ण, पुष्या मुख, स्वाति दन्त, शतभिषा हाथ, मघा नासिका, मृगशिरा दोनों चक्षु, चित्रा सलाहदेश, भरणी मस्तक और आर्द्रानक्षत्र मस्तकस्थित केज होगा ।

पूर्वोक्त नक्षत्रों द्वारा उक्त सभी अवयवों की कल्पना कर एक नक्षत्रपुरुष कल्पित करना होता है । जो इस व्रतको करेगा, उन्हें इसी नियमसे नक्षत्रपुरुषकी कल्पना करने होंगे । यह व्रत चैत्रमासको कल्याण-होमें मूलानक्षत्रयुक्त चन्द्रमें किया जाता है । इस दिन विष्णु और सभी नक्षत्रोंको पूजा कर उपवास करना चाहिये । व्रत समाप्त हो जाने पर अपने यत्नि-के अनुसार कालविद्याविशारद पण्डितोंको सुवर्ण के साथ द्रुतपुष्पपात्र और सरस यज्ञ दान देना चाहिये । जो सायण्यको इच्छा करते हैं, वे और हताश और गुह्य दे

कर ब्राह्मणोंकी अर्चनापूर्वक दीप्यसमर्पित यज्ञ उन्हें दान करें, फिर नक्षत्रपुरुषके पादस्थित नक्षत्रसे क्रमशः मास मासमें उपवास कर उनके यज्ञस्थ यमी नक्षत्रोंमें अपने विधिके अनुसार विष्णु और सभी नक्षत्रको पूजा करें । जो पुरुष इस प्रकार व्रताचरण करते हैं, वे कन्दर्प सद्य रूपवान् होते हैं । यदि स्त्रियां यह व्रत करें, तो वे भस्त्राणोंके सद्य सोम्य लाभ करती हैं, जब तक नक्षत्रमाला पाकागमें विचरण करेगी, तब तक इस व्रतके करनेवाले उन नक्षत्रोंके साथ व्यवहार करेंगे और जब तक इस लोके रहेंगे, तब तक राजाओंसे पूजित हो कर कान थापन करेंगे ।
(बृहत्संहिता ११५ अ०)

इस व्रतका विषय वामनपुराणके ७७ अध्यायमें विस्तारित रूपसे लिखा है । विस्तार हो जानेके भयसे यहाँ उसका उल्लेख नहीं किया गया ।

नक्षत्रफल (सं० लो०) नक्षत्राणां फलं इत्यत् । नक्षत्र समूहका फल ।

नक्षत्रभोग (सं० पु०) नक्षत्राणां राशिचक्रस्थितनक्षत्राणां एकैकदिने भोगः । नक्षत्रोंका भोग, २१६० कलात्मक कालमें बराबर बराबर २७ भागोंका एक भाग ८०० सो कलारूप भोग होता है ।

नक्षत्रमान (सं० लो०) सूर्यसिद्धान्तोक्त दिमादि मान-मिद । नक्षत्र देखो ।

नक्षत्रमार्ग (सं० पु०) नक्षत्राणां मार्गः । नक्षत्रोंका विचरण पथ, नक्षत्रोंके चलनेका रास्ता ।

नक्षत्रमाला (सं० लो०) नक्षत्रसंज्ञिका माला । १ वह हार जिसमें सत्ताईस मोती हों । २ नक्षत्रश्रेणी । ३ हाथियोंकी माला ।

नक्षत्रमालिनी (सं० लो०) जातोपुष्पवृक्ष ।

नक्षत्रयाजक (सं० पु०) नक्षत्रनिमित्तं ह्यक्षरं याजयति यज-विच, खलु । नक्षत्रदेश याज्ञिकारक ब्राह्मणमिद, वह ब्राह्मण जो ग्रहों और नक्षत्रों आदिके दोषोंको याज्ञिक करता हो । महाभारतके अनुसार ऐसा ब्राह्मण निजह और प्रायः चाण्डालके समान होता है ।

“आश्वयुजा देवकदा नक्षत्रमाश्रयाजकः ।

एते ब्राह्मणकाशका महानिबिडवन्माः ॥”

(भारत शास्त्र ७६ अ०)

नक्षत्रयोग (सं० पु०) नक्षत्रमन्त्रेः योगः ६ तत् ११ नक्षत्रो-
के साय दृष्ट्यन्तेका योगः ।

नक्षत्रयोगिनी (सं० स्त्री०) नक्षत्रैरमिसानितया युज्यते
युज्य विद्युत् । दाक्षायणी, अश्विनी, आदि नक्षत्र ।

नक्षत्रयोगि (सं० स्त्री०) नक्षत्राणां योगिनी विवाह आदि-
में योगिकृत्, यद् नक्षत्रयो विवाहके लिये निश्चित हो ।

नक्षत्रराज (सं० पु०) नक्षत्राणां राजा ६ तत्, ततो टच्
समासान्तः । चन्द्र, नक्षत्रोंके अधिपति ।

नक्षत्रलोक (सं० पु०) नक्षत्राणां लोकः ६ तत् । नक्षत्रा-
धिष्ठित लोकभेद, वह लोक जहाँ नक्षत्र रहते हैं ।

काशीवर्णनं लिखा है—

दृष्ट्वा कस्या नक्षत्रादेः जय महादेवके लिये कठिन
तपस्या की थी, तब महादेवने खुश हो कर उन्हें घर
दिया था, 'तुम लोग ज्योतिष्यकर्म प्रधान हो कर तथा
मैत्रादि राशिधोका उत्पत्तिस्थान हो कर, चन्द्रलोकसे
जहाँ एक स्वतन्त्र लोकमें रहोगे ।' इस लोकमें तुम-
लोगोंका खूब आदर होगा । जो तुम्हारी पूजा और
ब्रह्मादि करेंगे, वे तुम्हारे इस लोकमें अवस्थान करेंगे ।
(काशीखं १५ पं०)

नक्षत्रवर्णनं (सं० स्त्री०) नक्षत्राणां वर्णनं । नक्षत्रमार्ग,
नक्षत्रोंके चलनेका पथ । जगत् देखो ।

नक्षत्रविद्या (सं० स्त्री०) नक्षत्राणां तन्त्र स्थितग्रहा-
दीनां चारक्षानाम विद्या । ज्योतिषविद्या । जिस
विद्या द्वारा नक्षत्र आदिके विषयका ज्ञान हो उसे नक्षत्र-
विद्या कहते हैं ।

नक्षत्रवोधि (सं० स्त्री०) नक्षत्रैस्तद्भेदेः कृता बोधिः ।
आकाशतन्त्रमें नक्षत्र कक्षा का कृता बोधि, नक्षत्रोंकी गति-
के अनुसार पथविशेषका नाम बोधि है । इसका विषय
हस्तसंहितामें इस प्रकार लिखा है—अश्विनी आदि
तीन तीन नक्षत्रोंमें एक एक बोधि होती है । यह बोधि
मौ भागोंमें विभक्त है, जिनके नाम ये हैं—माग, गज,
ऐरावत, ह्यभ, गो, जलद्व, मृग, यज्ञ और दहन । स्वाती,
भरणी और कृत्तिका नक्षत्रमें नागबोधि होती है, किन्तु
यह सर्ववादिसंगत नहीं है । गज, ऐरावत और ह्यभ
नामक जो तीन बोधि हैं । वे रोहिणीसे लेकर उत्तर-
फल्गुनी तक तीन तीन नक्षत्रोंमें दृष्टाकारतो हैं ।

अश्विनी, ऐरावती, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद नक्षत्रमें
गोबोधि ; यवणा, धनिष्ठा और धनमिया नक्षत्रमें जार-
हवीबोधि; अश्लेषा, ज्येष्ठा और मूलानक्षत्रमें मृगबोधि;
हस्ता, विशाखा और चित्रा नक्षत्रमें अश्वबोधि तथा पूर्वा-
षाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें दहनबोधि होती है ।
इस प्रकार २० नक्षत्रोंमें ८ बोधि कोनेसे मत्स्यक बोधि
तीन बार होती है । अतएव उक्त सभी बोधियोंमें तीन
तीन बोधि हैं जो राशिमार्गके उत्तर, मध्य और दक्षिण
मार्गमें अवस्थित हैं । फिर उनको भी एक एक बोधि है जो
यथाक्रमसे उत्तर, मध्य और दक्षिण पथमें विद्यमान है । तीन
नागबोधि हैं—जिनमेंसे उत्तर मार्गमें पहिली, मध्यपथमें
दूसरी और दक्षिणपथमें तीसरी बोधि अवस्थित है ।
किसी किसी ज्योतिषिद्वारा कहा है, कि नक्षत्रसमूहकी
नक्षत्रमार्गवर्त्ती योगतारागण उत्तर मध्य और दक्षिण
भागमें जिस प्रकार अवस्थित हैं, 'बोधिमार्ग' भी उसी
भावेन अवस्थित है । इस मार्गका निरूपण करनेमें कोई
कोई पण्डित भरपौर उत्तरमार्ग, पूर्वमार्ग, नीचे मध्यम
मार्ग और पूर्वाषाढ़ासे दक्षिण मार्ग ऐसे गणना
करती हैं ।

शुक्र जिस समय उत्तर बोधिमें रह कर उदय वा अस्त
होते हैं, उस समय देशमें सुमित्र और मङ्गल होता है ।
मध्य बोधिमें रहनेसे मध्यफल और दक्षिण बोधिमें रहने-
से मन्दफल होता है । आर्द्रा नक्षत्रसे ले कर मृगशिरा
तक जो नौ बोधि होती, इनमें शुक्रके उदय वा अस्त
होनेसे यथाक्रम अत्युत्तम, उत्तमतर और उत्तम, सम,
मध्य और मध्यम, मध्यम, मन्दतर और मन्दतम फल
होता है । (हस्तसंहिता २००) अत्रायं फल शुक्रवारमें देखो ।
नक्षत्रवृत्ति (सं० पु०) तारापतन, उल्कापात होना, तारा
टूटना ।

नक्षत्रव्यूह (सं० पु०) नक्षत्राणां व्यूहः समूहः । पुरुष
और द्रव्य विशेषका शमाशुभधृक्क नक्षत्रसमूह । हस्त-
संहितामें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—सित-
कुसुम, अश्विनी, मन्त्र, सुवभाष्य, आकरिक, चौर-
कार, ब्राह्मक, कृष्णकार, पुरोहित और देवता ये सभी
कृत्तिका नक्षत्रके अधीन हैं प्रयात् इन् सब द्रव्योंका शमा-
शुभ कृत्तिका नक्षत्रसे ज्ञान जाता है । सुवत, पथज्ञान

वस्तु. राजा, धनवान्, योगी, शाकटिक, गो, हथ, जलचर, लपक, पर्वत चोर ऐश्वर्य-सम्पन्नगण रोहिणीके अधीन हैं। सुरभि, वस्त, पद्म, कुसुम, फल, रत्न, वनचर, विहङ्ग, मृग, याज्ञिक, गन्धर्व, कामुक चोर पद्मवाहकगण मृग गिरा नक्षत्रके पायत्त हैं। उत्तम धान्य, सत्य, मोदाय, शीघ्र, कुल, रूप, बुद्धि, यग, मेवा और वनिक, समूह पुन वं सु नक्षत्रके अधीन हैं। यक्ष, गोधूम, सब प्रकारको शाली इक्षुवर्ग, मन्त्रज्ञगण, समस्त नृपति, जलजीवी और याज्ञिकगण पुण्या नक्षत्रके अधीन हैं। कृत्रिम, कन्दमूल, फल, कीट, पक्ष, विष, मृग, धान्य परस्पादकारी और भियक्षु चोरेया नक्षत्रके भायत्त हैं। शस्यागर और समस्त वृद्ध, अर्थशाली वनिक, शूरगण, क्लेशाद और श्लेष्मिणी व्यक्तगण मघा नक्षत्रके वशीभूत हैं। नट, युवती, सुभग, गायक, शिल्पी, सुभाष्ट, कपास, खयण, मधु, तेल और कुमारागण पूर्वफला नी नक्षत्रके अधीन माने गये हैं।

१६६। विभिन्न विवरण बृहत्संहिताके १५ अ० १५० में देखो।

नक्षत्रव्रत (मं० लो०) नक्षत्रनिमित्त व्रतं । नक्षत्र निमित्तक व्रतमेव । एक एक नक्षत्रके उद्देश्यसे जो व्रत किया जाता है, उसे नक्षत्रव्रत कहते हैं, तिथितत्त्वमें सामान्य रूपमें नक्षत्रव्रतके कालका निर्णय हुआ है। यथा—जिस नक्षत्रमें सूर्य भस्म हो'गे, उसे नक्षत्र रास और जिस नक्षत्रमें उदय हो'गे, उसे नक्षत्र दिन कहते हैं। इस नक्षत्र दिवारात्रके मध्य जिस नक्षत्रमें सूर्य भस्म हो'गे, उसी दिन उपवास करना चाहिये, अर्थात् उसी दिन व्रताचरण विधिय है।

‘तन्मन्त्रमहोरात्रं हरिमन्त्रं गतो रविः।

हरिमन्त्रोति वसिता तन्मन्त्रं दिनं स्मृतं ॥

वयोधितम् नक्षत्रं येनास्तं याति मास्करं।

यत्र वा युज्यते राम निशीथे शशिना सह ॥’ (सिधितार)

इस व्रतका विषय हेमाद्रिके व्रतखण्डमें भविष्य-पुराणमें इस प्रकार लिखा गया है—

‘इत्येते कथिताः कृण्वन्ति योगी मया तव।

नक्षत्रदेवताः सर्वाः नक्षत्रेषु व्यवस्थिताः ॥’

(हेमादि व्रतख०)

नक्षत्रव्रतमें नक्षत्रके अधिष्ठात्री देवताओंकी पूजा करनी होती है। अश्विनी नक्षत्रमें दोनों अश्विनीकुमार-

का पूजन कर इस व्रतका आचरण करना चाहिये। इन अश्विनीनक्षत्रमें यह व्रत करनेसे दीर्घायु लाभ होता है तथा सभी व्याधियां नाश होती हैं। भरणीमें यमका और कृत्तिकामें भग्नका पूजन कर उपवासादिका व्रतानुष्ठान करना चाहिये, इसी प्रकार सभी नक्षत्रोंके उद्देश्यसे व्रताचरण करनेका विधान है। किसी नक्षत्रका व्रत क्यों न हो, उस नक्षत्रके अधिपति पूजनीय समझे जाते हैं। इस व्रतका विशेष विधान हेमाद्रिके व्रतखण्डमें देखो।

नक्षत्रशुक्ल (सं० लि०) देवताओंके प्रतिगमनशील स्तोत्र-समूह।

नक्षत्रशुक्ल (सं० पु०) नक्षत्राः शुक्ला-इव। पूर्वादि दिशाओंमें यात्राकाशील निविह नक्षत्रविशेष, फलित ज्योतिषमें कालशा वह वास जो किसी विशिष्ट दिशामें कुछ विशिष्ट नक्षत्रोंके होनेके कारण माना जाता है। शुक्लवह होनेसे जैसा अनिष्ट होता है, इन संक्षेप नक्षत्रोंमें यात्रा करनेसे वैसा ही अनिष्ट हुआ करता है, इसी कारण इसे नक्षत्रशुक्ल कहते हैं। यदि पूर्व दिशामें श्रवणा या ज्येष्ठा, दक्षिणमें अश्विनी या उत्तरभाद्रपद, पश्चिममें रोहिणी या पुण्या और उत्तरमें उत्तरफल्गुनी या हस्ता नक्षत्र हो, तो उस दिशामें यात्रा आदिके विधे नक्षत्रशुक्ल माना जाता है।

नक्षत्रधन (सं० लो०) नक्षत्रनिमित्त धनः। नक्षत्र निमित्तक धनमेव। पुराणके अनुसार एक प्रकारका धन जो नक्षत्रके निमित्त किया जाता है। यह धन नक्षत्र भासके अनुसार होता है।

नक्षत्रसन्धि (सं० पु०) नक्षत्रयोः सन्धिः। पूर्व नक्षत्रसे उत्तरनक्षत्रमें चन्द्रादि ग्रहोंकी गतिरूप संज्ञान्ति।

नक्षत्रसाधक (सं० पु०) मन्त्रादेव, शिव।

नक्षत्रसाधन (सं० लो०) नक्षत्रं साधते प्रायते निन साधिकाश्चेत्युट्। ग्रहोंकी क्षयमानसाधन गणना मेव, वह गणना जिसके अनुसार यह जाना जाता है कि किस नक्षत्र पर कौनसा ग्रह कितने समय तक रहना है। यह गणना निबान्त-श्रीरोमणि आदि ग्रहोंमें विशेष रूपसे लिखी गई है।

नक्षत्रसूचक (सं० पु०) नक्षत्राणि, सुभाद्यभतया सूचयति सूचकः। सिद्धान्ताभिज्ञ ज्योतिर्विद्, वह ज्योतिषी

की खय भारी गहना आदि न कर सकता हो, केवल दूसरों के मतके अनुसार उद्योगिषध बन्धी साधारण काम करता हो।

शास्त्रके ज्ञान बिना जो अपनेकी ज्योतिषी बतलाते हैं उन्हें पशुदूषक, पाथी वा नक्षत्रसूचक कहते हैं, अथवा जो तिथिकी उत्पत्ति और ग्रहोंके साधनसे भवगत नहीं हैं पथवा दूसरोंके मतानुसार चलते हैं, उन्हें भी भवत-सूचक कहते हैं।

नक्षत्रसूची (स० पु०) नक्षत्रसूचक देखो।

नक्षत्रान्त (स० स्त्री०) योगविशेष, बारह निदिष्ट नक्षत्रोंका जब योग होता है, तब उसे नक्षत्रान्त योग कहते हैं। इस योगका विषय ज्योतिःसारधर्ममें इस प्रकार लिखा है—रविवारमें वृश्चा, उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी, पुष्या, मूला और रेवती नक्षत्र; सोमवारमें श्रवणा, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तरफल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, अश्लेषा, ज्येष्ठा और उत्तरभाद्रपद; मङ्गलवारमें रेवती, पुष्या, अश्लेषा, ज्येष्ठा और उत्तरभाद्रपद; बुधवारमें अनुराधा, ज्येष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा और स्वाती; शुक्रवारमें पुष्या, पुनर्वसु, और अनुराधा; शनिवारमें धनिष्ठा, श्रवणा, उत्तरभाद्रपद, उत्तरफल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, पूर्वफल्गुनी और अनुराधा तथा मनिवारमें रोहिणी वा स्वाती नक्षत्रका योग होनेसे यह नक्षत्रान्तयोग होता है। यात्रा कार्यमें इस नक्षत्रान्तका योग सर्वश्रेष्ठ है। नक्षत्रान्तयोग होनेसे विटि और व्यतोपादादि निषिद्ध योगोंका दोष नहीं

रहता। जिस प्रकार सूर्योदय होनेसे पञ्चकाराग्रि विनष्ट होती है, उसी प्रकार इस नक्षत्रान्तके योगमें सभी दोष नाश हो जाते हैं। (ज्योतिःसारधर्म)

यह नक्षत्रान्त योग और सिद्धियोग यदि एक दिनमें हो तो उस दिन यात्रा नहीं करने चाहिये, इस योगकी विषययोग कहते हैं।

नक्षत्रिद (स० पु०) एक वैदिक देवता जिनका नक्षत्रोंमें रहना माना है।

नक्षत्रिन् (स० पु०) नक्षत्रमस्त्यस्य इति इति। १ चन्द्रमा। २ विष्णु।

नक्षत्रिय (स० पु०) नक्षत्राय इति; नक्षत्रधः। १ नक्षत्राधिष्ठित देवभेद, नक्षत्रोंसे स्थापित एक देवता। २ क्षत्रिय भिक्ष, वह जो क्षत्रिय न हो।

नक्षत्री (हि० वि०) जो अच्छे नक्षत्रमें उत्पन्न हुआ हो, भगवान्, शुभकिस्मन्।

नक्षत्रेश (स० पु०) नक्षत्राणां ईशः। १ चन्द्रमा। २ कपूर, कपूर। ३ शक्ति, शीघ्र।

नक्षत्रेश्वर (स० पु०) नक्षत्राणां ईश्वरः। १ चन्द्रमा। २ नक्षत्रोंसे काशीमें स्थापित शिवलिङ्गभेद। इसका विषय काशीखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

नक्षत्रोंने काशीमें शिवलिङ्गकी स्थापना करके कठोर तपस्या की थी, यही शिवलिङ्ग नक्षत्रेश्वर नामसे प्रसिद्ध है। जो काशीमें नक्षत्रेश्वर महादेवका दर्शन करते हैं, उन्हें नक्षत्रपद और राशिसे कभी कष्ट नहीं होता।

विस्तृत विवरण काशीखण्डके १० अध्यायमें देखो।

नक्षत्रेष्टि (स० स्त्री०) नक्षत्रनिमित्ता इष्टिः मध्यपद सोपि कर्मधा०। नक्षत्रनिमित्तक यज्ञभेद, नक्षत्रनिमित्तक यज्ञात् नक्षत्रके उद्देश्यसे जो यज्ञ किया जाता है, उसे नक्षत्रेष्टि कहते हैं।

नक्षत्रेष्टका (स० स्त्री०) इष्टकामेद, एक प्रकारका यज्ञ। नक्षत्राभ (स० स्त्री०) अभिगमनकारी शत्रुपक्षी हिंसाकारक।

नक्ष्य (स० स्त्री०) उपगमनमौघ, उपगन्तव्य, नजदोक पङ्कचनेके योग्य।

नक्ष (स० स्त्री०) नक्षते इव शरीरे नक्ष-ख, ततो हली-पक्ष (नक्षेत्रोपपन्न, उप, १२२) अङ्गलिकाग्रक, उगलीसे

* "भुवशुक्लरमूला यौगभास्पर्कवारं,

इरियुगविधियुग्मे फागुनीययुग्मे।

रिषकुरुरनौ कर्करीनायवारं,

शुशुगलवशातोवास्व पौष्णानि कौभे॥

रश्मिविधिशताह्वया मैत्रमं सौम्यवारं,

मङ्गदितिभपुष्या मैत्रमं जीववारं।

मङ्गमङ्गयुगयो विष्णुमैत्रेसिताह्वे,

स्वसनकमस्योनिर्हारिवारोऽमृतानि॥

यदि विटिभ्यतिपातो दिनं वाप्य छत्रं भवेत्।

रश्मिदेऽमृतमोहन आहारेण तमो यथा॥"

(ज्योतिःसारधर्म)

भगते भागकी हड्डी, नार्वून । पर्याय—पुनर्भव करवह, नखर, कामाद्भु, करज, पाणिज, चहुनिचभूत, करा-यज, करकपटक, स्मराद्भु, रतिपय, करचन्द्र, करा-दृश । (शब्दरत्नावली)

गर्भस्थित शयककी ६ महीनेमें नख निकलता है । नख और मोम स्वयं न काटना चाहिये और न कि मखकी दाँतसे ही काटना चाहिये ।

“न पिन्यान्मखलोमानि दन्ते नोत्पादये नखान् ।”

(मनु ८।६८)

जमीन पर नखसे दाग देना मना है । चट्टनें नखवाद्य भी नहीं करना चाहिये ।

“न नखैर्विलिख्य भि” गाथा पद्येभ्येनहि ।

न स्वामि नखवाद्यं व कुर्वीताजलिना पिबेत् ॥”

(क्रमपु० वर्गभ० ११-अ०)

मनुष्य, वानर तथा बहुतेमें ऐसे जन्तु हैं जिनके हाथ और पैरकी उँगलियोंके अग्र भागमें नख होते हैं । इतर जन्तुओंके छुर और नखर नखके समजातीय पदार्थ हैं । उपत्वक् रूपान्तरित हो कर नख उत्पन्न करता है । प्रकृतत्वक् (Dermis) अपने छोटे छोटे गिखरोंको फैलाए हुए नखके मूलमें रहता है । उन सब गिखरोंके चारों ओर उपत्वक्के सभी कोष देखनेमें आते हैं । ऊपरी भागका कोष चिपटा और नीचेका मोल होता है । उपत्वक्के कोष परस्पर एक हो कर क्रमशः घनोभूत होने लगते हैं और अन्तमें अत्यन्त कठिन हो कर नखके रूपमें परिणत हो जाते हैं । इस प्रकार नख जब उगलीके अग्र भाग पर आ जाता है, तब वह काट डाला जाता है । हाथका नख सप्ताहमें एक इंचके तीसरा भागके बराबर और पैरका सप्ताहमें एक इंचके एक-सौ बीसवां भागके बराबर बढ़ता है । पीढ़ाके समय नखकी हडि नहीं होती और पोषणके अभावसे वह पतला हो जाता है । इसी कारण नखकी अवस्था देख कर प्राणी कभी योग्यता विचार किया जाता है । यदि नख न हो जाय, पर नोवेधा तब अक्षय रहने, तो बहुत द किरके नख निकल जाता है ।

(स्रो०) न-मिष प्राकृतिरन्त्यस्थ, रति सम्यदित्योत्पद्य ॥ २ मखो नामकं गेयद्रव्य-विशेष (A vegetable perfume) । ओजिष्ठमें यह मखी मण्डसे प्रसिद्ध है ।

यह समुद्रजात शङ्ख-गन्धक जातीय कोमल प्राणीका (मखाकृति) मुखोवरण है । यह देखनेमें इस देगके गन्ध-कादिके मुखोवरणके जैसा लगता है, जब यह दखर सध जाता पाता है, तब उसका यह मुख विकसित हो कर ऊपरकी ओर हो जाता है । उस समय यह प्राणियोंके पदके नखके जैसा देखनेमें लगता है, इसीसे इसका नाम मखी पड़ा है । जब यह श्रेतादि जमीनी भूमि पर गमना-गमन करता है, तब इसके सम्बन्धानसे अर्धचक्र परि-माणमें राल टपकती है । जो सब मनुष्य इसका व्यव-साय करते हैं, वे उन्हें खपह कर मार डालते हैं, पीछे उन्हें सिखा कर मखाकृति मुख निकाल लेते हैं । यह छोटे बड़े के भेदसे कई प्रकारका है । जो सब गन्धकके मुखके सदृश होते हैं, उन्हें छोटी नखी और जो शङ्ख-दि-के मुखके जैसे होते हैं, उन्हें मखनखी, व्याघ्रनखी वा बड़ोनखी कहते हैं । इनके सिवा और भी कई जातियाँ-की मखी हैं, जिनमेंसे किसीकी प्राकृति तो उत्पन्नके मध्य, किसीकी गजकर्णके सदृश और किसीकी अग्र-छुरके सदृश होती है । इनका नाम कछुर है । पर्याय—शक्ति, मङ्क, खुर, कोनदल, करजाख, अमखुर, नख, व्याघ्रनख, मखी, करवह, सिम्बी, शक, चल, कोमी, करज, हनु, नागहनु, पाणिज, बदरोपत्र, हय, पख, विष्णुसिन्धी, सन्निनाख, पाणिद्वय, व्याघ्रायुध, चक्रकारज, शङ्खनख, नखरी । (शब्दरत्नावली)

खल्य नखका पर्याय—मखी, हनु, इहविष्णुसिन्धी । इसका गुण श्रेष्ठा, वात, पित्त, कृमि, कुष्ठनाशक, कष्ट, चण, शूलवर्धक, यक्ष्मकर, श्वातु, मय, विष और मुख-दोर्गन्धनाशक है । (भास्कर०) (पु०) १ खण्ड, टुकड़ा । नख (फा० खो०) १ गुठ्ठी उड़ाने और कपड़ा सोनेका एक प्रकारका बड़ा बुधा बहुत महान श्रेष्ठी तागा । २ गुठ्ठी उड़ानेके लिये वह पतला तागा त्रिश पर मौभा दिया जाता है और ।

नखकर्त्तनि (स० खो०) वह हथियार जिससे नाखून काटा जाता है, नखरी ।

नखकुष्ठ (अ० पु०) नख कुष्ठित कुष्ठ छेदे अथ । नापित, गाढ़, इज्जाम ।

नखपत्र (अ० पु०) १ नाख मने मङ्गलेके कारण बना

हुंभा दाम्या चित्र । २ स्त्रीके शरीर परका विगोषतः स्तन आदि परका वक्षचित्र जो पुरुषके मर्दन आदिके कारण उसके नाखनोसे बन जाता है ।

नखखादिन् (सं० त्रि०) नखान् खादितुं शीलमस्य खाद-णिनि। दन्त द्वारा नख-खादिके, जो दाँतोंसे चपने नाखून कुतरता हो । मनुके भानुसर ऐसे मनुष्यका चतुर्गोत्र नाम ही जाता है ।

नखगुच्छफला (सं० स्त्री०) नखद्वय-गुच्छः फलं च यस्याः । निष्पाव भेद, एक प्रकारकी सेम ।

नखच्छेदन (सं० स्त्री०) नखका-केशन, नखका काटना ।

नखधोरिन् (सं० त्रि०) पंखीके बल चलनेवाला ।

नखजाह (सं० स्त्री०) नखस्य-मुख-कर्षादित्वात् जाह-प्र-नखमूल, नाख नका चगला भाग ।

नखता (हिं० पुं०) एक-प्रकारका पंखी जो भारतकी सिवा और कहीं नहीं मिलता । यह बघोंके आराममें दिन भर छड़ा करता है और भिन्न भिन्न मृतपौमें भिन्न भिन्न स्थानोंमें रहता है । यह कौड़े-मकोड़े और फल आदि खाता है और पाना भी जा सकता है ।

नखदारण (सं० स्त्री०) नख दार्यतेनेन दारि-करणे-ष्यट् । नखनिलस्तनायं नापितास्य भेद, नाखून काटने-का जोजार, नहरनी ।

नखना (हिं० क्रि०) १ छलहून होना वा करना । २ मष्ट करना ।

नखनामा (सं० पुं०) नीलवृक्ष ।

नखनिक्रान्त (सं० स्त्री०) निक्रान्ततेनेन-कृत-ष्यट्-वा-सुप् । १ नखच्छेदनाका, नहरनी । २ सीहमाल ।

नखनिष्पाव (सं० पुं०) नख-निष्पद्यते फलसादृश्येन चतुःकोरति, निर-पू-प्रथ । निष्पावी भेद, एक प्रकारकी सेम । पर्याय—चक्रुक्षफला, हंसनिष्पाविका, प्रास्या, नख-गुच्छफला, ग्रामजनिष्पावी, नखफलिनी । इसका गुण—कषाय, मधुर, कण्ठश्लेष्मिक, मेध्य, दीपन और रुचिकारक ।

नखपद (सं० स्त्री०) नखचित्र ।

नखपर्णी (सं० स्त्री०) नखद्वय पर्णं यस्यः ङोप । छत्रिका रूप, बिहना चाप ।

नखपुङ्खी (सं० स्त्री०) एक, असवरग-नामका गन्ध-द्रव्य ।

नखपुष्पफला (सं० स्त्री०) श्वेतवर्च-निष्पावी, सफेद सेम ।

नखपृथ्वी (सं० स्त्री०) नख-द्रव पुष्प-यस्याः ङीप् । एक, असवरग-नामका गन्ध-द्रव ।

नखपूर्विका (सं० स्त्री०) हरिद्वर्ण-निष्पावी, हरी सेम ।

नखप्रच (सं० स्त्री०) नखस्य-प्रचितस्य मयूरव्यं सकादि-त्वात् समासः । नख और प्रचित ।

नखफलिनी (सं० स्त्री०) नख-द्रव फलमद्वयस्य इति हन्-ततो ङीप् । नखनिष्पाव, एक प्रकारकी सेम ।

नखभेद (सं० पुं०) १ वातरोग भेद । २ कुलस्य, कुलघी ।

नखमुच (सं० स्त्री०) नखं मुचति इति क । (मूलविभुंजा-दिष्य उपलक्षणां । पा ३।२।५) इति सूत्रस्य कान्ति-कोश्या क । १ घसु, घसुस । २ चिरी-भौका पेट । (त्रि) ३ नखमोचक, नाखून काटनेवाला ।

नखम्वच (सं० त्रि०) नखं पचति तापयति पच-सुप् । नखतापक, नाखूनको खराब करनेवाला । स्त्रियां टाप् । २ यमंगू, माहू ।

नखर (सं० पुं० स्त्री०) नखं रतौति रा-कं । १ नख, नाखून । २ अस्त्रविशेष, प्राचीन कापेका एक हथियार ।

नखरजनी (सं० स्त्री०) नखो-रज्यतेऽनयो रज्ज-कंरणे-ष्यट्, न सोपः ङोर्-च । बिहन्त वृक्ष, मेंहदीका पेट ।

नखरञ्जिनी (सं० स्त्री०) रज्यतेऽनया इति रज्ज-ष्यट्-ङोप् । नखस्य रञ्जनी । नखच्छेदक संज्ञविशेष, नहरनी ।

नखरा (का० पुं०) १ साधारण चंचलता या कुलकुलादन, बनावटी चेष्टा । २ बनावटी इनकार । ३ वह कुलकुला-पन, चेष्टा या चंचलता आदि जो जवानीकी उम्रमें चयवी प्रियको रिभासके लिये को जाती है, आज, चोचला, हावभाव ।

नखरातिज्ञान (हिं० पुं०) चोचला; जाज, नखरा ।

नखरायुध (सं० पुं० स्त्री०) नखर-एक वायुधं यस्य । १ सिंह । २ व्याघ्र, बाघ । ३ कुहुर, कुत्ता । ४ ताल-चट्ट ।

नखराज (सं० पुं०) नखर-चाहयते-रज्जते इति रा-ङ्-क । करवीर वृक्ष, कनेरका पेट ।

नखरी (सं० स्त्री०) नखरः प्राकृतिसादृशमेव चक्षुष्यस्या
इति घञ् गोरादित्वात् ङीप् । १ नखी, नखीनामक
गन्धद्रव्य । २ सुद्र नखा ।

नखरीना (फा० वि०) चोचसेवाज, नखरा करनेवाला ।
नखरेखा (सं० स्त्री०) १ नखघत, नाखूनका दाग ।
२ कश्यपकट्यिकी एक पत्नी । यह बादलोकी माता थीं ।
नखरेवाज (फा० वि०) जो बहुत नखरा करता हो,
नखरा करनेवाला ।

नखरेवाजी (फा० स्त्री०) नखरा करनेकी क्षिया या
भाव ।

नखरीट (हिं० स्त्री०) शरीर परका यह दाग जो नाखून
धुमानेसे होता है, नाखूनकी खरीट ।

नखसेखक (सं० त्रि०) नख लिखति लिख-कन् । जीविका
के लिये दन्तलिखन-शिल्पकारक ।

नखविन्दु (सं० पु०) वह गोला या चन्द्राकार चिह्न जो स्त्रियां
घपने नाखूनके ऊपर मँहदेी या महावरसे बनातो है ।

नखविष (सं० पु० स्त्री०) नखे विषं यस्य, वह जिसके
नाखूनमें विष हो । नर आदिके नाखूनमें विष रहता
है । सुश्रुतके मतानुसार बिल्ली, कुत्ता, बन्दर, मगर, मेंढक,
गोह, झिपकसो, पाकमन्त्रा, शम्बुक, प्रचलक तथा
अध्याम्य चतुष्पदी कीड़ोंके दाँत और नाखूनमें विष है ।

(अनुवृत्त ६८५५५५ १ अ०)

नखविष्कार (सं० पु० स्त्री०) नखे विष्कारिणि वि-क-क,
ततो सुट्, च । श्येमादि, यह जानवर घपने शिकारकी
नाखूनसे फाड़ कर खाता है, इससे इसका नाम नख-
विष्कार पड़ा है । इस प्रकारके जानवरका नाम
चमय है ।

नखहल (सं० पु०) नखो हलः अच, नखो हलः । मोलहल,
नीसका पिट ।

नखगङ्गा (सं० पु०) नखइव गङ्गाः । सुद्रगङ्गा, छोटा गंध ।

नखगन्ध (सं० पु० स्त्री०) नखगन्धेदकं गन्धं । नख-
गन्धेदगन्धोप्य पलविगन्ध, नाखून कटानेका बीजार
नहरनी ।

नखगिह (हिं० पु०) १ नखसे खगायत गिह तकके
समो पत्र । २ सब पत्रोंका बन्धन ।

नखगूल (सं० पु०) नाखूनका एक रोग । इसमें ठसके
थोस पाम या जड़में पीड़ा होती है ।

नखहरणो (हिं० पु०) नखरनी ।

नखाघात (सं० पु०) नखैराघातः इत्यत् । नखदारा
आघात । सुरतकार्यमें नायक द्वारा नायिकाके पत्रमें
उसे नरम बनानेके लिये नखमें जो आघात किया जाता
है उसे भी नखाघात कहते हैं । किस किस जगह पर
नखाघात करना चाहिये, कामयाबमें उसका विषय
इस प्रकार लिखा है—

दोनों पाख, दोनों स्तन, दोनों ऊर, नितम्ब, कक्षस्थल,
कपाल, कपाल, वाट्ठमूल, प्रोवा और अण्डदेग, इन सब
स्थानोंमें कामक्रीड़ाके समय नखाघात करना चाहिये । १
सुहाय नखदारा आघात, वह चोट वा प्राक्तमण जो सुहाय
लिये नाखूनसे किया जाता है ।

नखाह (सं० पु०) नखं पृष्ट इव यस्य । १ नखाघात
चिह्न, नाखून गड़नेका निशान । (स्त्री०) २ व्याघ्रनख ।

नखाह, २ (सं० पु०) नख, नाखून ।

नखाह (सं० स्त्री०) नखस्य अङ्गमिव पङ्कं यस्य । १
नखी, नख नामक गन्धद्रव्य । २ नखिका या नखी नामक
गन्धद्रव्य ।

नखानखि (सं० पु०) नखैव नखैव प्रकृत्य युद्धमिदं
प्रवृत्तं । परस्पर नखाघात द्वारा प्रवृत्त युद्ध, वह लड़ाई
जो केवल नखगड़ा कर की जाती है ।

नखायुध (सं० पु०) नखमेव आयुधं यस्य । १ व्याघ्र, बाघ ।
२ सिंह । ३ कुकुर, कुत्ता ।

नखारि (सं० पु०) शिथानुचर विरोध, शिवके एक अनु-
चरका नाम ।

नखावि (सं० पु०) १ सुद्रगङ्गा, छोटा गंध । २ नखश्रेणी,
नाखूनकी पंक्ति ।

नखालु (सं० पु०) नखतीति नख संपदे नख-आनुच ।
नीसहल, नीसका पिट ।

नखामिन् (सं० पु०) नख पश्यातीति भक्षयतीति पशं-
पिनि । १ पेशक, छलू । (त्रि०) २ नखमज्जक मात्र,
जो नाखूनको सहायतासे खाता हो ।

नखास (सं० पु०) १ वह बाजार जिसमें पशु विमेयता
की विक्री होती है । २ व्याघ्रनखः कीर्ति बाजार ।

नखि (सं० पु०) नखेनातिक्रामति इति, नखेयतेरेव इ।
(भव ॥। वण० ४। १८) १ नख द्वारा भतिक्रामक। नखति
सर्पति नख-इत् २ सर्पक।

नखिन् (सं० पु०) नखमस्त्यस्येति नख इति। १ वि० इ।
२ ध्यात्र, वाद्य। (त्रि०) ३ विदारणक्षम नखयुक्त पशुमात्र,
नाखू नखे किसी पदार्थको चीढ़ने या फाड़नेवाला
जानवर।

नखी (सं० स्त्री०) नखगोरादिवात् ङीप्। नख नामक
गन्ध द्रव्यविशेष। नख देखो।

नखीवट—जास्वोडिया देशमें बौद्ध लोगोंका एक प्रसिद्ध
मठ। पहले कास्वोडियामें बौद्ध लोग सर्पोंकी उपासना
बहुत धूमधामसे करते थे। प्रसिद्ध नखीवट मन्दिरमें
बहुत उत्सव किया जाता था। उक्त मठका भग्नावशेष आज
भी विद्यमान है। वह मन्दिर एक समय पृथ्वीको एक
अत्युत्तम पहालिकामें गिना जाता था। १८५८ और १८६०
ई०में एम, मोइटेने सबसे पहले इसकी नींव डाली।
मिटर के टोमसेन उसका एक फोटी से गये हैं। उसकी
गठनप्रणाली चलन्त ग्रीष्मासम्पन्न तथा शीम लोगोंकी डोरिक
प्रणालीसे थी। मन्दिरके मूलदेशकी लम्बाई और
चौड़ाई ६०० फुट और ऊँचाई १८० फुटके लगभग थी।
उसका सर्वाङ्ग नामा प्रकारके कारुकायसम्पन्न पत्थरोंसे
मण्डित था। उसके प्रत्येक कोणमें सात सिरवाली
साँपोंकी मूर्तियाँ रखी हुई थीं। जोखित साँपोंके लिये
मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पुष्करिणी थी। उन्हीं सब साँपोंको
पूजा होती थी। दसवीं शताब्दीके लगभग वह मन्दिर
बनाया गया था। मैत्रतत्त्वविर्दिका कहना है, कि १४वीं
शताब्दीके पहले इसका निर्माण हुआ है, इसमें तनिक
भी संदेह नहीं। इत्येव देखो।

नखसास (हिं० पु०) नखास देखो।

नग (सं० पु०) ने गच्छतीति नगम-ङ वा दृष्टते इति
दृष्ट-ङ, ततो हलोपः दथ न (इदमो ओपो दथ नं। वण०
५। ११) १ पर्वत, पहाड़। २ वृक्ष, पेड़। ३ सात संख्या।
४ सर्प, साँप। ५ सूर्य। (त्रि०) ६ त गमन करनेवाला, न
चलने फिरनेवाला, भ्रमण, खर।

नग (सं० पु०) १ अंगूठियों आदिमें लड़नेका शीर्ष या
पत्थर आदिका रंगीन बड़िया टुकड़ा, नगीना। २ संख्या,
पदत।

नगकर्षी (सं० स्त्री०) खेत अपराजिता।

नगगन्धा (सं० स्त्री०) रास्ना।

नगज (सं० पु०) नगी पर्वते जायते जन्म-ङ। १ इन्दी,
हाथी। (त्रि०) २ पर्वत जात, जो पर्वतसे उत्पन्न हो।

नगजा (सं० स्त्री०) १ पार्यंती। २ पापापभेदो ज्ञता,
पखान भेद।

नगजित (सं० पु०) पापापभेदक।

नगण (सं० पु०) पिङ्गल कन्दोशास्त्रमें तीन सप्त भ्रमरोंका
एक गण।

नगणा (सं० स्त्री०) नागिन गणी यस्याः। सताविशेष,
मालकंगनी। पर्याय—परावतपदी, पिण्या, स्फुटवन्धनी,
ज्योतिषतौ, पुनिते शा, इह, द्वी।

नगण्य (सं० त्रि०) १ घणणमोय, जो गणना करने
योग्य न हो, बहुत हो साधारण या गद्या बीता, सुच्छ। २
घृणाई, घृणा करने योग्य, नफरत करने लायक।

नगद (हिं० पु०) नरद देखा।

नगदन्ती (सं० स्त्री०) विमोषणकी स्त्रीका नाम।

नगदी (हिं० स्त्री०) नरुपी देखो।

नगधर (सं० पु०) पर्वतके धारण करनेवाली, जोलण्य-
चन्द्र, गिरिधर।

नगनदी (सं० स्त्री०) नगजाता नदी, वह नदी जो
किसी पर्वतसे निकली हो।

नगनन्दिनी (सं० स्त्री०) नगस्य नन्दिनी इ-तत्। हिमा-
लयकन्या पार्वती।

नगना (हिं० स्त्री०) नगना देखो।

नगनिका (हिं० स्त्री०) १ सङ्गीत रागका एक भेद।

२ क्रीडा नामक वस्त्रका एक नाम। इसके प्रत्येक चरणमें
एक गणण और शुरु होता है।

नगनी (हिं० स्त्री०) १ वह कन्या जो रजोधर्मको प्राग्
न हुई हो, वह लड़की जिसके स्तन न उठे हो। २
कन्या, पुत्री, बेटो। ३ नगना स्त्री, नगी औरत।

नगनिकाहन्द् (हिं० पु०) नगनिका देखो।

नगपति (सं० पु०) नगस्य पतिः इ-तत्। १ हिमालय,
पर्वत। २ चन्द्रमा। ३ तासवृक्ष, ताड़का पेड़।

४ कैलाशकी स्वामी, शिव। ५ समर।

नगपर्यायकर्षी (सं० स्त्री०) अपराजिता।

नगमित (सं० पु०) : नगं, मिनति, भिद्वक्तिः । १ पायाभेदनाशविग्न, प्राचीनकालका पत्थर, तोड़ने का एक प्रकारका पत्थर । २ इन्द्र । पुराणके अनुसार इन्हीं में पहाड़ों के घर काटे थे, इसीसे इनका यह नाम पड़ा । ३ पायाभेदहीनता ।

नगभू (सं० पु०) नगं भूतत्पत्तिर्यस्य । १ सुदूर-पायाभेदहीनता, छोटी पर्वतभेद-मत्ता । (स्त्री०) २ पर्वत-भूमि, पहाड़ी जमीन । (वि०) ३ पर्वतजात मातृ, जो पहाड़से उत्पन्न हुआ हो ।

नगमालः (सं० पु०) : गालिधान्यभेद, एक प्रकारका सुगन्धित धान ।

नगमूर्धन (सं० पु०) पर्वतकी चूड़ा, पहाड़की चोटी । नगर (सं० स्त्री०) नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र । (नगप्रासादप्रत्यय) । वा १।२।१००) इति सूत्रस्य चार्ति को तथा २। अनेक सींगों का वासस्थान, मनुष्यों की यह वही वर्तनी जो गाय या कर्बू घाड़िसे बड़ी हो और जिममें अनेक जातियों तथा पशुओं के लोग रहते हों—ग्रहर ।

पर्याय—पुर, पुरी, पुरि, नगरी, पत्तन, ग्रहन, पटनी, पुटभेदन, पटभेदन, स्थानीय, निगम, कटक, पट ।

इस शीर्षिके प्राचीन ग्रन्थों में लिखा है, कि जहाँ बहुत की जातियों के अनेक व्यापारी और कारोगर रहते हों, तथा देवदेवियों को भुक्ति प्रतिष्ठित हों, उसे नगर कहते हैं ।

कोई कोई नगरका ऐसा लक्षण बतलाते हैं—जहाँ पाठ सो पामोंके विचारार्थ कार्य किये जाते हों, पर्याप्त जङ्गल प्रधान विचारालय हो, वही नगर कहलाता है । नगरमें राजाकी परिचारकों के साथ रहना चाहिये, यह प्रकार और दुर्गादि द्वारा परिवेष्टित रहे तथा इसका आयतन एक योजन विस्तृत हो । कोई कोई पण्डित पुर और नगरमें ऐसा गीट बतलाते हैं—जहाँ अनेक पामोंका व्यवहार स्थान पर्याप्त विचारालय हो, उसका नाम पुर और मुख्यके प्रधानका नाम नगर है ।

नगर निर्माणज्ञान—

“विश्वराशिगते भानो पश्य पवित्रोदये ।

पृथ्वीं काले दिने वैव नगरं कुरुतेनृपः ॥”

(सुविश्वकर्मा)

जब सूर्य विश्व राशिमें ग-रहे, केवल चन्द्रमा विश्व राशिमें रहे, और काल—तथा दिन—विद्युत् हो, उस समय राजाकी सम्भा, चौकोना, तिकोना या गोल नगर बसाना चाहिये । इसमेंसे तिकोना और गोल नगर निम्नोद्य माना जाता है । नगरकी चौड़ाई जितनी होगी, उससे एक पाद भी अधिक होनेसे वह दीर्घ कहलाता है । चौकोन होनेसे उसकी चारों दिशा समान रहे । जो नगर तीन ओर समान पर्याप्त तिकोण हो, उसे तिकोण और जो बलयाकृतिका हो, उसे वृत्त या गोल कहते हैं । इन चार प्रकारके नगरोंमें दीर्घ नामक नगर स्थापन करनेसे सुखसम्पत्ति मिलती है तथा यह दीर्घ कालस्थायी रहता है । चतुरस्र पर्याप्त चौकोना नगर चारों प्रकारका फल देनेवाला है, तिकोना नगरसे तीन शक्तिका नाश होता है तथा वृत्त नगर माना प्रकारका रोगदायक माना जाता है ।

नगर—यम्बईसे घर और पार्कर जिनका एक तातुक । यह अक्षांश २४° १४' और २५° १' उ० तथा देशांश ७०° ३१' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १४१८ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग २५२५५ है । इसमें कुल ११ ग्राम लगते हैं । आय २८००० रुपयेकी है । यहाँ बाजरीकी उपज अच्छी होती है । खेतों विविधतः हटि तथा धूप पर निर्भर है, इस कारण यहाँ पञ्चसर दुर्भिक्ष हुआ करता है ।

नगर—पञ्जाबके काहड़ा जिलेके पनागत्त कुल उपविभाग तथा तहसीलका एक नगर । यह अक्षांश २२° ७' उ० और देशांश ७०° १५' पू० विपासा नदीके बायें किनारे सुसतानपुर ग्रहणसे १४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या ५८१ है । यहाँ पहले कुल राजाओंकी राजधानी थी । १८०५ ई०के मुकामसे यह नगर बहुत तहस, नहस हो गया है । ग्रहणसे टाकघर और टेखियाफ धातुम है ।

नगर (वा राजनगर) बङ्गालके बीरभूम जिलेका एक नगर और प्राचीन राजधानी । यह अक्षांश २१° ५१' ३०' उ० तथा देशांश ८७° २१' ४५' पू० के मध्य अवस्थित है । मुसलमानोंके जब बङ्गाल जीता था, सबसे पहले यहाँ हिन्दू राजाओंकी राजधानी थी, राजाबाद

प्रायः टूट फूट गया है। किलहाल यहां अनेक भग्नष्ट, मसजिद और अपरिष्कार पुष्करिणी देखनेमें आती है। नगर—महिसुरके शिमोग जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १३° ३६' और १४° ६' उ० तथा देशा० ७४° ५२' और ७५° २३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५३८ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग ४०४५५ है। इसमें एक बुरकहे और नगर नामके दो शहर तथा २०५ ग्राम लगते हैं। राजस्व प्रायः ११६००० रु०का है। तालुकका उत्तरी भाग छोड़ कर शेष सभी भाग बड़े बड़े पहाड़ों से भरे हैं। इनमेंसे प्रधान पहाड़ कीटवादीरी है जो समुद्रतल से ४४११ फुट ऊंचा है। यों तो यहां अनेक नदियां बहती हैं, पर शरावती नदी ही सबसे बड़ी है। सुपारी, पोपर, इलायची और चावल यहांके उत्पन्न द्रव्य हैं। अधिकांश जङ्गलोंमें सुपारीके पेड़ देखनेमें आते हैं।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १३° ४८' और देशा० ७५° २' पू०के मध्य शिमोग शहर से ५५ मील दूरमें पड़ता है। लोकसंख्या सिर्फ ७१५ है। पहले इस नगरका नाम विदरहल्ली था। १६४० ई०में जब यहां केलाडो राजाओं की राजधानी थी, तब यह विदर नामसे प्रसिद्ध हुआ। कहते हैं, कि उस समय इसमें १०००० घरे लगते थे, इसी कारण इसका नाम बदल कर नगर हो गया। १७६३ ई०में यह हैदरालीके हाथ लगा और वहींने इसका नाम हैदरनगर रखा। टीपू सुल्तान और अङ्गरेजोंमें जब लड़ाई हुई तो इस शहरकी विशेष मति हुई थी। पीछे १७८३ ई०में अङ्गरेजोंने इस पर अपना पुरा दखल जमाया। १८८१ ई०में यहां म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई है।

नगर—महाराजके तहसीर जिलान्तर्गत, नागपसनका एक शहर। यह अक्षा० १०° ३२' और १०° ५०' उ० तथा देशा० ७८° १४' और ७८° ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां सुपारी, बहादुरी काष्ठ तथा छोड़ का वाणिज्य स्थापार होता है। यहां एक विख्यातः मसजिद भी है। नगरभानन्दपुर—इसका आधुनिक नाम बड़ा-नगर है। बड़ा-नगर और देवनगर देखो।

नगरकाक (स० पु०) शहरका कोवा, हवापुष्क शब्द। नगरकीर्तन (स० स्त्री०) नगर कीर्तन—नगरपरिचम-

येन हरिनामसंशोधन। नगरके राखी राखते हरिनाम-संकीर्तन, वह मान-बजाना या कीर्तन विशेषतः ईश्वरके नामका भजन, जिसे नगरकी गलियों और सड़कोंमें घूम घूम कर लोग करते हैं।

नगरकोटि (स० पु०) हिमालयके पाददेशस्थित एक नगर।

नगरघात (स० पु०) नगर' इति हन-प्रण, १ इच्छा, हाथी। हन-भावे घञ, नगरस्य घातः। २ नगरस्य लोकका हनन, शहरके लोगों की हत्या।

नगरकुतर—सम्याल परगनेके सूबधारों की एक श्रेणी।

नगरजन (स० पु०) नगरस्य जनाः। पुरवासो, शहरके लोग।

नगरतीर्थ—गुजरात प्रदेशस्थ नगर नामक एक प्राचीन तीर्थ। गुजरातके राजा विजयदेवके सभाकवि नामक-की प्रशस्तिमें नगरतीर्थका उल्लेख देखनेमें आता है। वह स्थान वेदधर्मसे सर्वदा शुद्धित रहता था। यज्ञो घूमसे उसका आकाश हमेशा परिपूरित रहता था। यहां किसी समय शिवका निवास माना जाता था। बड़नगर देखो।

नगरद्वार (स० स्त्री०) नगरस्य द्वारं इ-तत्। नगरका द्वार, पुरद्वार, शहरपनाइका फाटक।

नगरचमविहार (स० पु०) बौद्ध लोगोंका एक मठ।

नगरनायिका (हि० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

नगरनारी (हि० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

नगरपति (स० पु०) नगरस्य पतिः इ-तत्। नगराध्यक्ष, शहरका मालिक।

नगर-पार्कर—१ बम्बईके सिन्धुप्रदेशके अन्तर्गत धर और पार्कर जिलेका एक तालुक।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २४° २१' उ० और देशा० ७०° ४७' पू० अमरकोटसे १२० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग २४५४ है। यह स्थान अच्छी अच्छी सड़कों द्वारा इस-सामकोट, मिति और पीठापुरसे संयोजित है। १८५८ ई०में यहां विद्रोह हुआ था। हैदराबादसे भंगरेली सेना भी आ कर उस विद्रोहको दमन किया था। शहरमें एक अच्छाताल, दो बर्गीकूलर स्नान-घर और कई एक मालिका-स्तूप हैं।

नगरपाल (सं० पु०) नगरं पालयति पालि-पण् । नगर-
रक्षक, वह्नि जिनका काम सब प्रकारको उपद्रवों आदि-
नि नगरकी रक्षा करमा हो, चौकीदार ।

नगरपुर (सं० स्त्री०) नगरस्य पूः इ-तत्, अल् समा-
मानाः । एक नगरका नाम ।

नगरप्राप्त (सं० पु०) नगरस्य प्राप्ताः । पुरप्राप्त, नगरके
समीपका स्थान ।

नगरमर्दिन् (सं० त्रि०) नगरं मृद्विति मृद-णिनि ।
नगराभ्यर्दक, शत्रुको लक्ष्य लक्ष्य करनेवाला । पु०)
२ भग्नगज, भग्ना हाथी ।

नगरमार्ग (सं० पु०) नगरस्य मार्गः इ-तत् । राजमार्ग,
शहरका भट्टा चौक चौड़ा रास्ता । शकनैतिमें लिखा
है,—राजाको भवनमे से कर उसके चारों तरफ प्रशस्त
पथ बनवाना चाहिये । ३० हाथका पथ उत्तम, २०
हाथका मध्यम, १० पौर ५ हाथका अधम माना जाता है ।
राजमार्ग देखा ।

नगरमुक्ता (सं० स्त्री०) नगरस्योपा ।

नगरभूकर (सं० पु०) नगरस्य भूधरस्य रक्ष्यं करोति क-ट ।
कार्तिकेय ।

नगररक्षा (सं० स्त्री०) शहरका शासन, उपद्रव आदिसे
नगरकी रक्षा ।

नगररक्षाधिकृत (सं० त्रि०) जो नगरकी रक्षाके लिये
निपुण किया गया हो ।

नगरवा (हिं० पु०) ईश्वरी एक प्रकारकी शोषार्द्र ।
इस प्रकारकी शोषार्द्र मध्य-प्रदेशके उन प्रांतोंमें होती
है, जहाँकी मही काकी या करैली पाई जाती है ।
इसमें सेतोंमें जल मिश्रणकी आवश्यकता नहीं होती,
बल्कि बरसातके बाद जब ईश्वरके पक्षुर फूटते हैं, तब
जमीन पर इसलिये प्रतिष्ठा बिछा देते हैं जिसमें उप-
का पानी भाप बन कर सड़ न जाय, धनवार ।

नगरवायस (सं० पु०) नगरकाक, छपासुसक शब्द ।

नगरवासिन् (सं० त्रि०) नगरे वसति वस-णिनि । नाग-
रिज, शहरमें रहनेवाला, पुरवासी ।

नगरविवाद (हिं० पु०) दुनियाके भगवद् बखेड़े ।

नगरस्थ (सं० त्रि०) नगरे तिष्ठति स्था । नगरस्थित,
नागरिक, शहरमें रहनेवाला ।

नगरहा (हिं० पु०) नागरिक, शहरमें रहनेवाला ।

नगरहार (सं० स्त्री०) १ नगराक्रमण । २ राज्यविजय,
प्राचीन भारतका एक नगर । यह किसी समय वर्तमान
जलामावादके निकट बना था । चीनयात्री गुप्त-
सुवहने अपने स्मरण-वृत्तान्तमें इसका वर्णन किया है
उस समय यह नगर कपिल राज्यके अधीन था । पहले
इस नामका एक राज्य भी था जो उत्तरमें आधुन भू-
धोर दक्षिणमें सकेदकोट तक विस्तृत था ।

नगरादिसन्निवेश (सं० पु०) नगरादीनां सन्निवेशः इ-तत् ।
नगरादि स्थापन । इसका विषय पत्तिपुराणमें इस
प्रकार लिखा है,—राजाको चाहिये कि वे अच्छी तरह
देख सुन कर नगर बसानेके लिये एक ऐसा स्थान चुन
लें, जो एन या पाधा योजन विस्तृत हो । हाथी
चलायामने या ना सके, पैना छः हाथ परिमाणका शहर
पनाइका फाटक रहे । शहरके अगिरेणमें स्नान,
कारादि सन्निवेश, दक्षिण दिगामें नृत्यगोत व्यवसायो-
नैष्ठिकमें गड, बाह्मिकादि पौर कैवर्त आदिका वास-
स्थान; पश्चिममें रथ, वायुध पौर लव्हादि व्यवसायी-
का वास; वायुकोणमें गोलिखक पौर कर्मोदिहत्
भृत्यादिका वास; उत्तरमें ब्राह्मण, यति, निह आदि
पुण्यवान् स्थितियोंको वासभूमि; ईशानकोणमें फल
आदि वेचनेवालोंका वास पौर पूर्वदिगामें वसाध्यवी-
को वासभूमि होने चाहिये । इसके पश्चिम
पश्चिमकोणमें विविध वैजिक पुरुष; दक्षिणमें द्वितीयके
निर्देशार्थताः नैष्ठिकमें अधमजन, पश्चिममें वसाध्य-
वर्ग, कोषाध्यक्ष पौर गिल्सिगण, पूर्वमें सत्तिष्ठ, दक्षिण-
में वैश्य, पश्चिममें गृह पौर वैश्य तथा चारों पौर पात्र
संव्यक्ता वासस्थान रहना चाहिये । पूर्व दिगामें
चरनिहो चर्मात् छंसवैमी राजपुरुष आदि, दक्षिण दिगा-
में ब्रह्मणभूमि, पश्चिममें तोषगादि पौर उत्तरमें क्षत्रि-
काय आदिके स्थान निर्दिष्ट हो । सभी कोषोंमें क्लृप्त
गंव रह सकने हैं । नगरमें स्थान स्थान पर देवदेवियोंके
मन्दिरका होना आवश्यक है । (अग्निपुराण ५०० अ०)
नगराधिकृत (सं० पु०) नगराध्यक्ष, नगरके शासनकर्ता ।
नगराधिप (सं० पु०) नगरस्य अधिपः । नगराध्यक्ष, नगर-
पालक ।

नगराधिपति (स० पु०) नगरस्थ अधिपतिः । नगराध्यक्ष, नगरपति ।

नगराध्यक्ष (स० पु०) नगरे रात्रा नियोजितः अध्यक्षः । राजकर्त्तृक नियोजित नगर रक्षाके लिये अधिकारिभेद, नगरका वह स्वामी जिस पर नगरको रक्षा आदिका पूरा पूरा भार हो । महाभारतमें लिखा है, कि प्राचीनकालमें राजाजी औरसे शासन और न्याय आदिके कामोंके लिये जो अधिकारो नियुक्त किया जाता था, वही नगराध्यक्ष कहलाता था । (भारत शास्त्रिक ८७ अ०)

२ नगररक्षक, वह जो नगरकी रक्षा करता हो ।

नगराध्यक्ष (स० स्त्री०) शयल, सौंद ।

नगरिन् (स० पु०) शहरमें रहनेवाला मनुष्य, नागरिक शहराती ।

नगरी (स० स्त्री०) नगर-डीह । नगर, शहर ।

नगरीकाक (स० पु०) नगर्या काक-इव । वक, वगला ।

नगरीय (स० त्रि०) नागरिक, शहरका रहनेवाला ।

नगरीराक्षन् (स० पु०) नगररक्षक, नगरके रक्षाविधानकर्त्ता, वह जिस पर नगरकी रक्षाका पूरा भार हो ।

नगरीवक (स० पु०) काक, कौवा ।

नगरीत्य (स० त्रि०) नगरादुतिष्ठति उद्-स्था-क । १

नगरीपक्ष, जो नगरमें उत्पन्न हुआ हो । (स्त्री०) २ नागरसुखा, नागरमोघा ।

नगरीकस् (स० पु०) नगरे चोक्रः वासस्थानं यस्य । नगर-वासो, शहरके लोग ।

नगरीपधि (स० स्त्री०) नगरजाता चोपधिः । कदही, किला ।

नगवत् (स० त्रि०) नागः विद्यतेऽस्य मनुष्यः । मण्ड व ।

नगविशिष्ट, पहाड़ने भरा हुआ ।

नगवाहन (स० पु०) महादेवका एक नाम ।

नगवृत्तिक (स० पु०) हस्तिकालो, बहिष्ण ।

नगवृत्तिका (स० स्त्री०) सप्तकी हस्त, सप्तिका पीड़ ।

नगवृत्तियिषी (स० स्त्री०) हन्दीविशेष, एक प्रकारका वर्षावृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें एक जगण, एक रगण, एक लघु और एक गुरु होता है । ...इसे कोई कोई प्रमाणी और प्रमायिका भी कहते हैं ।

नगाटन (स० पु०) नमी हचे अटति भ्रमतीति अट-क्यु ।

१ वानर, वन्दर । (त्रि०) २ पर्वतचारी, पहाड़ पर विचरण करनेवाला ।

नगाड़ा (हि० पु०) नगारा देखो ।

नगाधिप (स० पु०) नगाना पर्वताना अधिपः इ-तत् । १

हिमालय पर्वत । २ समुद्र पर्वत ।

नगानिका (स० स्त्री०) हन्दीभेद, एक प्रकारका वर्षावृत्त ।

इसके प्रत्येक चरणमें चार चार भ्रमण होते हैं, जिनमेंसे प्रति चरणका दूसरा और चौथा वर्षा गुरु होता है ।

नगारा (फा० पु०) हुग हुगो की तरहका एक प्रकारका बहुत बड़ा और शक्तिशाली ।

इसमें एक बहुत बड़ी कुंडीके ऊपर चमड़ा मड़ा रहता है । कभी कभी इसके साथ इसी प्रकारका लेकिन इससे बहुत छोटा एक और वाला भी होता है । इन दोनोंको आमने सामने रख कर चौब नामक लकड़ोंसे दो छेदोंसे बजाते हैं, नगाड़ा, छंका, धौसा ।

नगारि (स० पु०) नगस्थ परिः शत्रुः । इन्द्र । पुराणमें लिखा है, कि इन्द्रोंने पर्वतोंके पर काटे थे, इसीसे इनका नाम नगारि पड़ा है ।

नगावास (स० पु०) १ हत्तीपर भवस्थान, पीड़ पर रहनेकी जगह । २ मयूर, मोर ।

नगाव्यय (स० पु०) नगः पर्वतः भाग्यवत् उत्पत्तिस्थानं यस्य । १ हस्तीकन्द, हाथीकंद । (त्रि०) २ पर्वत और हस्त पर वासकारी, जो पहाड़ और पीड़ पर रहता हो ।

नगी (हि० स्त्री०) १ रत्न, मणि, नगीमा, नग । २ पर्वत पर रहनेवाली स्त्री, पहाड़ो घोरत । ३ पर्वतकी कन्या, पार्वती ।

नगोना (फा० पु०) १ शीला बटानिके लिये खंडी/आदिमें लड़ा हुआ पत्थर आदिका रंगीन चमकीला टुकड़ा, रत्न, मणि । २ एक प्रकारका चारखानेदार देसी कपड़ा ।

नगोना—१ युक्तप्रदेशके विजयनगर जिलेकी एक तहसील । यह १५०० २८' ३३' और २८' ४३' ४०" तथा देशां ७८' १०' और ७८' ५७' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरि-

माण ४५३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५६८८८ है । इसमें नगोना और अफजलपुर नामक दो शहर तथा ४६४ ग्राम समिते हैं । तहसीलका अधिकार्य जङ्गलमय है । रामगढ़ तथा इसकी सहायक नदी खीर तहसीलके

दिए ।

मध्य हो कर बह गई है। यहाँकी भूमि चर्वरा है।
पनः समय समय पर चट्टी फसल लगती है। घावबवा
खास्यकर नहीं है।

२ राज तहसीलका एक शहर। यह चर्चा २८° २०'
८०' और देगा ७८° २१' पूरु के मध्य अवध और रोहिल-
खण्ड रम्ये पर अवस्थित है। लोकसंख्या २१४१२ के लग-
भग है जिनमेंसे मुसलमानोंकी संख्या अधिक है। इसके
प्राचीन इतिहासका कुछ भी पता नहीं चलता। लेकिन
पार्लेन-इ-अकबरीमें लिखा है कि यह शहर किसी समय
महल या परगनाका सदर था। १८वीं शताब्दीमें रोहिला-
के अभ्युदयके समय यहाँ एक किला बनाया गया था।
१८०५ ई०में अमीरखांके अधीन पिछारियोंने इसे तहस
महस कर डाला था। १८१०से ले कर १८२४ ई० तक
यह शहर उत्तरीय मुरादाबाद जिलेका सदर रहा।
मिर्जाही विद्रोहके समय यहाँ एक छोटी लड़ाई किड़ी
थी। शहरमें बड़ी बड़ी अहलिकाये तथा अनेक पक्की
सड़के हैं। प्राचीन किलेमें अभी तहसीली लगती है।
तहसीलीके सिवा यहाँ एक अफ़तान, तहसीली स्कूल और
American Methodist mission है। १८८५ ई०में
यहाँ ग्रुनिस, पत्तिटो स्थापित हुई है। राजस्व लगभग
१२००, १००का है। प्रति सप्ताहमें दो बार छाट लगती
है। यहाँ नाबे, टहलनेकी लड़ी तथा सुन्दर बकच तैयार
होते हैं।

मंगीनासा (फा० पु०) मंगीना बसाने वा जड़नेवाला
मनुष्य।

मगुरिया—अन्धालोंकी एक शाखा।

मगीन्द्र (सं० पु०) मग इन्द्र इय अष्टत्वात् १ हिमाश्रय।
२ पर्यतश्रेष्ठ।

मगीम (सं० पु०) मगीम देखो।

मगीकस (सं० पु०) मगी हसी पर्वतो वा ओकी निवास-
स्थान यस्य। १ पक्षी, चिड़िया। २ शरभ। ३ सिंह,
शेर। ४ काक, कोषा। (सि०) ५ एक और पर्वतवासी
मांस, सिंह और पहाड़ पर रहनेवाला।

मग्न (सं० सि०) मग्नतमेनि, अकर्मकात् कर्त्तरि क,
ततो गिहा तस्य न। १ विषय, जिसके शरीर पर कोई
बला न हो, मंगा। २ जिसके अन्तर किसी प्रकारका भाव-

रप न हो। (पु०) २ दिग्भर जैनभेद। ये लोग कोपिन
और कपाय वस्त्र पहनते हैं। ये पांच प्रकारके होते हैं—
दिकच्छ, कच्छमीय, मुक्तकच्छ, एकवामा और अवासा।

जो पत्नी वा पुरुष नग्नावस्थामें हो उसे देखना नहीं
चाहिये। नग्न हो कर खान, शयन वा पाठ पादि
कार्य करना मना है।

“न मर्ता स्त्रियमीक्षित पुरुष” वा वदामन।

न च मूलं पुरीषं वा न वै संश्रुमैषुनम् ॥

मोहित्वा संविदेमिह न मनः स्नानमाचरेत्।

न गच्छेत् पठेद्वापि न वैष स्वधियाः स्फुटयेत् ॥”

(कर्मपु० १५ अ०)

३ पारिमायिक नग्न, पुराणानुसार बह मनुष्य जिसे
यादों पादिका ज्ञान न हो और जिसके कुलमें किसीने
पेद न पड़ा हो। ऐसे पादमियोंका धर्म प्रहण करना
वर्जित है।

“येषां कुले न येशोऽस्ति न शास्त्रं नैव च मतम्।

ये नमाः कीर्त्तिताः पक्षित्वेयामनं विगृह्णन् ॥”

(मार्कण्डेयपु०)

विष्णुपुराणमें भी लिखा है, कि जो पेद नहीं जानते
उनका नाम नग्न है। ऐसे मनुष्य पातकी समझी जाते
हैं। जो मनुष्य मोहवश गार्हस्थान्त्यके बाद बिना वान-
प्रस्थ पहण किये ही मन्थालो हो जाते हैं, वे भी नग्न
कहलाते और पातकी समझी जाते हैं। ४ वन्दी, कैदी।

५ एक संस्कृत कविका नाम।

नग्नक (सं० पु०) नग्न एव स्वार्थे कन्। नग्न, मंगा।

नग्नद्वारण (सं० स्त्री०) अग्नयः नग्नः क्षियतेऽनेन ल
एतन् मुम् व। अग्नयज्ञा नग्नताकरण, किसीको मंगा
करनेकी क्रिया।

नग्नचपक (सं० पु०) एक प्रकारका बौद्ध मन्दाकी वा
भिन्दु।

नग्नजित् (सं० पु०) गान्धारके राजा। २ कोमल देवके
राजा। इनको कन्याका नाम मन्था था, लेकिन पिताके
नामानुसार लोग उसे नग्नजितो भी कहते थे।
नग्नजित्ने प्रतिज्ञा की थी कि जो उनके रक्षित मन्त्र
महालयका बंध करेगा, उसीसे सत्या ब्याही जायगी।
क्षणमें उनको रक्षा पूरी की, पता चर्किके साथ नाम

जितोका विवाह हुआ। (भागवत १०म स्कन्ध) ३ वासु-
शास्त्रके रचयिता। ४ एक संस्कृत कवि।

नम्रता (सं० स्त्री०) नम्र भावे तत्त्व, नम्रत्व, विव-
स्त्रत्व, नम्र होनेका भाव, नंगापन।

नम्रधर—सुवर्णकी एक टीकाकार।

नम्रपर्ण (सं० पुं०) प्राचीन कालके एक देशका नाम।

नम्रसुयित (सं० स्त्री०) सुयितो नम्रः 'राजदन्तादिषु'
इति पूर्व निपातः। धनादि अपहरण हो जानेके कारण
नम्रतापन्न, जिसका धन चुराया गया है और वह नंगा
हो कर भी रहा है, उसीको नम्रसुयित कहते हैं।

नम्रभविष्णु (सं० पुं०) भगवान् नम्रो भवति भूष्यर्थे
विष्णुश्च। भगन्नका नम्र होना, वह जो नंगा नहीं
था, पौछे उसका नंगा होना।

नम्रभाषुक (सं० पुं०) भगवान् नम्रो भवति नम्र-भू-
षुकः न सुम्व्। भगन्नका नम्र होना।

नम्रयोधित (सं० स्त्री०) नम्रा योधिन्। ललङ् स्त्री, नंगी
औरत।

नम्रवृत्ति (सं० स्त्री०) उपादिसूत्रकी एक वृत्ति।
उत्पन्नद्वयमें इसका नामोर्द्ध्व किया है।

नम्रव्रतधर (सं० पुं०) १ नम्रव्रताधारी। २ महादेव,
शिव।

नम्रहर—प्राचीन गुजरातका एक शयः। स्कन्दपुराणके
प्रभासखण्डमें इसका उल्लेख है।

नम्रह (सं० पुं०) नम्रं ह्रयति उपदेति अपनेति हं करणे
क्षिप्। यङ्। विद्यति द्रव्यकृत सुराभोज, दह शराव
जो हल्लोसः कारके द्रव्यकी मेलसे तैयार होती है।
पर्याय—किण्व, कण्व, दम्रह।

२६ प्रकारके द्रव्यकी नाम ये हैं—१ सज, २ त्वक, ३
सोठ, ४ पोपर, ५ मिश्र, ६ कपूर, ७ पुनर्षवा, ८ सतु-
कांतक, ९ पिपली, १० गजपिपली, ११ वंश, १२ वक, १३
हृहृच्छवा, १४ चित्तक, १५ इन्द्रवारुणी, १६ ब्रह्मगन्ध,
१७ धान्यक, १८ यवानी, १९ २० दोनों प्रकारका जीरा,
२१-२४ दोनों प्रकारकी हल्दी, २५ विरुद्ध यव और
२६ नीचि, इन्हीं सब द्रव्योंके मेलकी नम्रह कहते हैं।

(वेददीप १८।१)

नम्रा (सं० स्त्री०) नम्र-टीव्। १ विवस्त्रा नारी, नंगी

औरत। इसके संस्कृत पर्याय—कोटवो, कोटवी, नम्रिका
और नम्रयोधित हैं। २ चतुर्दशतनुवा स्त्री, वह औरत
जिसके स्तन उठे न हों।

नम्राचार्य—एक प्राचीन कवि। सूक्तिकर्णामृतमें इसकी
कविता संस्कृत हुई है।

नम्राट (सं० पुं०) नम्रः सन् घटति घट-पच। दिग-
म्बर, वह जो सदा नंगा रहता हो।

नम्राटक (सं० पुं०) नम्राट एव स्वार्थे कम्। दिगम्बर
योगी, वह साधु जो सदा नङ्गा घूमा करता है।

नम्रिका (सं० स्त्री०) नम्रैव स्वार्थे कन् टाप्ति घत इत्वं।
विवस्त्रा स्त्री, वह स्त्री जो नंगी हो कर घूमा करती
है। २ चमामररक्ता, वह स्त्री जो रजो धर्मिणी न हुई
हो। पर्याय—गोरी, चमामरसत्वा, गोरिका। ३ अजात-
कुचा कन्या, वह लड़की जिसके स्तन उठे न हों।

नमोघ (हिं० पुं०) घट हृष, बढ़का पैड़।

नघना (हिं० स्त्री०) पार करना, मोचना, नाचना।

नघमार (सं० पुं०) कुष्ठरोग, कौड़की बोमारी।

नघाना (हिं० स्त्री०) ललङ्गन करना, नाचाना, उँका
देना।

नघारीव (सं० पुं०) कुष्ठरोग।

नघुष (सं० पुं०) नघुष पयोदरादित्वात् साधुः। नघुष
राजा।

नङ्ग (सं० पुं०) नं ननिं गच्छतीति गम ह, बाहुन्-
कात् सुम्। १ जाग, उपपत्ति। २ एक असभ्यजाति,
जो विशालखण्डमें प्रायः ५० घामोंमें वास करते हैं।
इस जातिके क्वा पुण्य क्या स्त्री सभी नम्र रहते हैं।
इन लोगोंका एक भ्रान्तिमूलक विश्वास है, कि मस्तकको
ठंके नहीं रखनेसे शाय पकड़ता है, इस कारण वे हमेशा
अपने अपने मस्तकको ठंके रहते हैं, ये लोग शयकी
मादते हैं और दस दिनों बाद एक गो वा भैंसकी
काट कर अपने बन्धुबान्धवोंको खिलाते हैं।

नङ्गपर्वत—काश्मीरमें हिमालय पर्वतका एक शृङ्ग जो
२६६८ फुट लम्बा है।

नङ्गाम—बम्बई प्रान्तका एक छोटा राज्य। इसका परि-
माण सिर्फ ३ वर्ग मील है। सत्ताधिकारी राजाचौको
उपाधि मकुर है।

नवनिर्वा (हि० पु०) नवनिर्वा, नवनिर्वा ।

नवनी (हि० स्त्री०) १. करघेकी ये दोनों मकड़ियाँ जो घेरकर कुनवाईकी नाईं मटकती होती हैं। इन्हींके नीचे सफ़ाई के दोनों राखें बसो रहती हैं। इन्हींकी सहायतासे राखें ज़रूर नीचे जाते घोर पातो हैं। इन्हें धक या कटारा भी कहते हैं। (वि०) २. नाचनेवाली, जो नाचती हो। ३. बराबर इधर उधर घूमती रहने-वाली स्त्री।

नवनीया (हि० पु०) नाचनेवाला, जो नाचता हो।

नवाना (हि० क्रि०) १. दूसरेकी नाचनेमें प्रवृत्त करना, नवानेका काम किसी दूसरेसे कराना। २. भ्रमण करना, किमी चीजकी बराबर इधर उधर घुमाना या हिलाना। ३. हैरान या परेशान करना, इधर उधर दोड़ाना। ४. पनेक व्यापार कराना, किमीको बार बार उठने बैठने या घोर कोई काम करनेके लिये विवश करके तंग करना, हैरान करना।

नविकेतन (सं० पु०) १. वाजयथा श्रविके पुत्र। २. चरित्र, भाग। नाविकेत देखो।

नविर (सं० स्त्री०) न निरं न शब्देन महसुपेति समासः। शोचकान्, घोड़ा समय।

नजके साथ यदि बिर शब्दका समास हो, तो नविर होता है।

नविरात् (सं० पद्य०) ग्रीष्म, जलद, कौरव।

नवेत् (सं० पद्य०) नही तो, ये ना नही होनेसे।

नव्युत् (सं० ति०) न न्युत्; नतु वा, न शब्देन सह सुपेति समासः। च्युत भिन्न स्थिर, निम्न, नविनाशी।

नव्य (हि० पु०) नव्य देखो।

नजदोह (फा० वि०) निकट, पास, करीब, समीप।

नजदोहो (फा० स्त्री०) १. सामिप्य, पास या नजदोह होनेका भाव। (पु०) २. निकटका सम्बन्ध। (वि०) ३. निकटका, जो समीपमें हो।

नजफ खाँ—इनकी सयाधि पमोर-उम-उमरा, कुल-फिकर सहोला था। पारस्यके सफ़री राजबंशमें इनका जन्म हुआ था। आदिल शाहने पारस्यके सिंहासन पर बैठ कर पुराने राजबंशके सभी समुदायोंको जबरन खर रखा था, सब समय ये भी कैद कर लिये गये थे। दिल्ली-

के सम्राट्, महमूद शाहने जिस समय आदिलशाहके निकट नवाब सफ़र-जङ्गके भाई मिर्जा महमूदको दूत बना कर भेजा था, उस समय मिर्जा महमूदने पनुरोधसे नजफ खाँ तथा उनकी बड़ी बहन कारागारने कोह दी गई थी। इनकी बहनके साथ मिर्जा महमूदका विवाह हुआ था। पीछे तीन मनुष्य दिल्लीको पाये। महमूदनेके सरने पर नजफ खाँ पदमें भाजे महमूद कुनो खाँके निकट रहने थे जो उस समय इलाहाबादके शासन-कर्ता थे। सफ़र-जङ्गके पुत्र नवाब सुजाउद्दौलाके जब कुनो खाँ मारे गये, तब नजफ खाँने बहुतसे पनुरोधोंको साथ ली बहालदेहमें प्रस्थान किया। वहाँ जा कर ये नवाब मोरकाशिमके पक्षमें काम करने लगे। उस समय मोरकाशिम चंगरेजीके साथ लड़ाईमें उनमि हुए थे। नजफखाँने इसमें घोर मौ वक्ताह दिया। मोरकाशिमने जब नवाब सुजाउद्दौलाको शरण ली, तब नजफ खाँ उन्हें कोह मुन्दे सखण्डके एक सरदार गुमाज सिंघके पक्षमें काम करने लगे। बख्तरकी लड़ाईमें छार कर सुजाउद्दौला जब भाग गया, तब नजफखाँने चंगरेजीसे प्रार्थना की, कि यमी वे ही इलाहाबाद प्रदेशके प्रकृत छतराधिकारी हैं। चंगरेजीने उन्हें बादरपूर्वक पहचान कर इलाहाबाद प्रदेशके एक चंगका शासनकर्ता बनाया। नवाब बजीरके साथ चंगरेजीकी सन्धि के समय इनका मिया-छतराधिकारत्व प्रमाणित हुआ। इन पर चंगरेजीने इन्हें पद-च्युत करके मासिक दो लाख रुपये देनेका बन्दोबस्त कर दिया घोर शाह पालमके निकट पच्छी तरफ़ सुकारिध कर दो। चंगरेजीने नजफके प्रति जैसे व्यवस्था कर दी, सब पूछिये तो ये सब विज्ञापके पात्र न थे। सुजाउद्दौलाके साथ वे गुस्तीरितिये चंगरेजीके विरुद्ध पक्षमें कर रहे थे, खोराकी लड़ाईमें नवाबको यदि जीत होनी, तो नजफ उन्हें पचमरा सहायता देते। १८०१ ई०में वे सम्राट्के साथ इलाहाबादको कोह कर दिमी पने गये। जाँकेके हाथमें इन्होंने पागरा शहरका छहार किया, इस कारण सम्राट्ने इन्हें पमोर-उम-उमरा-कुल-फिकर सहोलाकी सयाधिमें भूयित किया था। १८०२ ई०के ३८ वर्षके पचमामें इनका देहान्त

हुया। अन्तिम समय नजफ सम्झाटू के मन्त्री हुए थे।

नजम (५० खी०) कविता बन्द, पद्य।

नजमुद्दौला—बहालके नवाब मोरजाफरके पुत्र। मोरजाफरके मरने पर अंगरेजों ने इनसे कुछ नकद ले कर इन्हें गिरफ्तार कर लिया था।

नजर (५० खी०) १ राजदर्शनार्थ प्रदत्त अर्घ्योपहार, भेंट।
२ राजकोषमें देय अर्घ्योपहार अथवा सुचित करनेको एक प्रथा। इसमें राजाजी, महाराजों और अमीरों आदिके सामने प्रजावर्गों के या दूसरे अधीनस्थ और छोटे लोग दरबार या खोहदार आदिके समय अथवा किसी अन्य विशिष्ट अवसर पर नकद रुपया आदि हथेलीमें रख कर सामने लाते हैं। यह धन कभी राजकोषमें रख दिया जाता है और कभी केवल स्वयं कर छोड़ दिया जाता है।
३ अर्घ्यदण्ड संज्ञित अर्थ, वह धन जो अर्घ्यदण्ड द्वारा जमा किया गया हो। ४ निम्नपदस्थ लोक कर्त्तृका लक्षपदस्थ लोकको प्रदत्त उपहार, वह भेंट जो नीच श्रेणीके मनुष्य उच्च श्रेणीके लोगोंको देते हैं। ५ दृष्टि, निगाह, चितवन। ६ कृपादृष्टि, भेदभावविषे देखना। ७ निगरानी, देखरेख। ८ पहचान, परख, विमर्श। ९ ध्यान, ख्याल। १० दृष्टिका कल्पित प्रभाव। यह प्रभाव किसी सुन्दर मनुष्य वा अच्छे पदार्थ आदि पर पड़ कर उसे खराब कर देनेवाला माना जाता है। प्राचीन लोगोंका तथा आज कलके लोगोंका ऐसा विश्वास है, कि किसी किसी मनुष्यकी दृष्टिमें ऐसी शक्त होती है कि जिस पर उसकी दृष्टि पड़ती उसमें कोई न कोई दोष या खराबी पैदा हो जाती है। यदि ऐसी दृष्टि किसी खाद्य पदार्थ पर पड़ जाय, तो वह खानेवालेको नहीं पचता और भविष्यमें उस पदार्थ परसे खानेवालेको रुचि भी नष्ट जाती है। इसके सिवा उनका यह भी ख्याल है कि यदि किसी सुन्दर बालक पर दृष्टि पड़े, तो वह बीमार हो जाता है। अच्छे पदार्थों आदिके सम्बन्धमें ऐसा कहते हैं कि यदि उन पर दृष्टि पड़े, तो उनमें कोई न कोई दोष या विकार अवश्य उत्पन्न हो जाता है। किसी विशिष्ट अवसर पर केवल किसी विशिष्ट मनुष्यकी

दृष्टिमें ही नहीं, बल्कि प्रत्येक मनुष्यकी दृष्टिमें ऐसा प्रभाव माना जाता है।

नजरबंद (फा० वि०) १ जो किसी ऐसी जगह पर कड़ी देख रेखमें रखा जाय जहाँसे वह कहीं भा जा न सके। (फा० पु०) २ जाटू या इन्द्रजान आदिका एक खेल। इनके विषयमें जन साधारणका ग्यास है, कि वह लोगोंको नजर बांध कर किया जाता है।

नजरबंदी (फा० खी०) १ राज्यकी तरफसे एक प्रकारका सजा। इसमें दण्डित मनुष्य किसी सुरक्षित या नियत स्थान पर रखा जाता है और उन पर कड़ा पहरा बैठाता है। जिसे यह सजा मिलती है उसे कहीं भ्रम नाने या किसीसे मिलने जुलनेकी आज्ञा नहीं होती। २ लोगोंकी दृष्टिमें अम उत्पन्न करनेको क्रिया, जादू-गरो, बाजोगरो।

नजरबाम (५० पु०) मरहों वा बड़े बड़े सत्तानों आदिके सामने यात्राचारों और उनके महासभा वाग।

नजर-बे-उजबक—अकबरकी एक मनसबदार। जिस दिन मानसिंह अलीमसजिदके निकट तारिकी जातिकी परास्त कर राजाकी समीप पहुँचे, उसी दिन नजर-बे और उनसे तीन पुत्र कानगर-बे, शादि-बे और बाको-बे की अकबरसे आज पहचान हुई थी। सम्झाटू उनके योरत्वादि सुन कर बहुत समुद्र हुए और उनकी खूब खातिर की। बादशानामामें नजर-बे हजारों मनसबदार नामसे प्रसिद्ध है।

नजर महबूद खाँ—१ बलखके अधिपति। १६४६ ई०में दिल्लीके मुगल-सम्राट् ने इन्हें परास्त कर राज्य छीन लिया था। २ भूपालके एक नवाब। १८१६ ई०में भूपालके नवाब अजीर महबूदके मरने पर उनके पुत्र महम्मदखान वहाँके नवाब हुए।

नजरसानी (५० खी०) पुनर्विचार या पुनरावृत्ति, किसी किये हुए कार्य या लिखे हुए लेख आदिके उसमें सुधार या परिवर्तन करनेके लिये फिरसे देखना।

नजरहाया (५० वि०) नजर लगानेवाला, जो नजर लगावे।

नजराना (हि० क्रि०) जुरी दृष्टिके प्रभावमें आना, नजर लग जाना।

नम्राना (प० पु०) १ भेंट, उपहार । २ जो यशु भेंटमें दी जाय ।

नम्राना (प० पु०) १ युवाग्री वृक्षमूलके पशुपार एक प्रकारका रोग, इसमें गरमोंके कारण मिरका विकारयुक्त पागो टस कर मिय भिन्न चट्टीकी पीर प्रसृत होता और जिस चट्टीको पीर दृढता है उसका अणित कर देता है । कहते हैं, कि यदि नम्रानेका पागो मिरमें ही रह जाय, तो बाल मफेद हो जाते हैं, चांगों पर सतर बाधे, तो दृष्टि कम हो जाती है, कान पर सतर, तो आदमो चट्टा हो जाता है, नाक पर सतर, तो लुकाम होता है, मलेमें सतर तो छोसी होती है और पण्डकीम में सतर तो ससको छिड़ हो जाती है । २ लुकाम, मरही ।

नम्रानावट (फा० पु०) अफ्रीम और चूने आदिका मट्ट फाहा जो नम्रालेको गिरनेसे रोकनेके लिये दोनों जगह पट्टियों पर लगाया जाता है ।

नम्राकत (फा० खी०) सुकुमारता, कोमलता, नाजुक होनेका भाव ।

नम्रात (फा० खी०) १ मुक्ति, मोक्ष । २ छुटकारा, रिहाई ।

नम्रात (प० खी०) १ नाजिमका विभाग या मडकमा । २ नाजिमका पद ।

नम्रात (प० खी०) १ नाजिरका पद । २ नाजिरका विभाग । ३ नाजिरका यह आफिस जहाँ वे बैठ कर काम करते हैं ।

नम्राता (प० पु०) १ दृष्ट । २ दृष्टि, नजर । ३ खी या पुरुषका दूसरे पुरुष या स्त्रीकी प्रेमकी दृष्टिसे देखना । नम्रातेबाजो (फा० खी०) स्त्री या पुरुषका दूसरे पुरुष या स्त्रीकी प्रेमकी दृष्टिसे देखनेकी क्रिया या भाव । नम्रावत्ता खानखाना—सखाट, खानमगीरके समसामयिक एक भान्त व्यति और हजारो मनसबदार । ये नवाब हैं । सखाट, इनकी लूब खातिर करते हैं । ये चक्रवर्तके समसामयिक मित्रां सुलेमान बदनखानेके प्रपौत्र हैं । इनका असल नाम मिर्जा सुजा था । १६६४ ई०की उल्लापनी नगरमें इनको शत्रु हुई । इनके पिताका नाम था मिर्जा ग़ाहदर । मिर्जा ग़ाहदरमें पञ्चवाको कन्या मनुबबिसा बेगममें मादी की थी । ग़ाहदर केकी ।

मजीब उल्ला खाँ—कपाट प्रदेशमें मन्दाव मडकद पनोके भारी । इनमें पपने भरख पोपके लिये बड़े भारी १०१३ ई०में नेजर नामक स्थान पाया था । १०१० ई०में मजीबउल्लाई भारीके विशद पड़पत्ता रखा, लेकिन उसमें क्षतताय न हो कर पुनः संतकी शरण ली ।

मजीब उल्ला बेगम—चक्रवर्त बादशाहकी बहन और खोजा हुसैन मक़शबदीकी स्त्री ।

मजीब खाँ—एक रोहिला सरदार । ये अपनी महकदखीके शासनकालमें रोहिलखण्ड आये थे और अपने साहस तथा कार्यदक्षता द्वारा योद्धे की समयके भीतर संभाल सच पद पर नियुक्त हुए थे । बाद इन्होंने दिल्लीमें प्रवेश किया । मफदरजहके बिद्रोही होने पर ये सनके विशद भेजे गये और इन्होंने उसे अच्छी तरह परास्त किया । १०१३ ई०में बादशाह चक्रवर्त ग़ाहने इन्हीं मजीब उल्लाकी उपाधि दी थी । चक्रवर्त ग़ाह चमदनीके साथ मसाराष्ट्रकी जो लड़ाई लड़ी थी, उसमें ये भी पड़ते हुए थे । १०१० ई०में इनका देहान्त हुआ ।

मजोर (प० खी०) १ उदाहरण, दृष्टान्त, मिसाल । २ किसी मुकदमेका वह फैसला जो उसी प्रकारके किसी दूसरे मुकदमेमें वैसा ही फैसलेके लिये उपयुक्त किया जाय ।

मजोरी—एक कवि । इनका जन्मस्थान निमापुरांम था । ये भारतवर्षमें था कर गुजरातके पन्नागत चक्रवर्तग़ाहदरमें रहने लगे थे । यहाँ हि० १०२२ सालमें इनका प्राधान्त हुआ ।

मजूम (प० पु०) ज्योतिषविद्या ।

मजूमो (प० पु०) ज्योतिषी ।

मजूम (प० पु०) १ मरकारो जमीन । २ नक़्सा देखो ।

मज. (प० पण्य०) १ पभाव-मंजूर । मज. मज्जकी समान होनेमें यदि उसमें वाद स्वरूप रहे, तो मज्जकी जगह पन् और यदि शब्दमन्त्र रहे, तो विशदमें पड़ता है । यथा—न-पत्त पनत्त, नात्त, न-पत्त पण्य त मज्जु । मज्जे के पण्य हैं, यथा—१ साहग, २ पभाव, ३ पण्य, ४ पण्य, ५ पण्यसल और ६ विरोध । उदाहरण—पणा पण्य, यहाँ पर मज्जका पण्य महम है, पणापण्य मज्जे आकाशके महम नहीं ऐसा समझना चाहिये ।

अपाप, न-पाप, यहाँ पर नञ्का अर्थ अभाव है, अर्थात् अपाप शब्दका अर्थ पापमात्रका अभाव होता है। अघट, न-घट, घटसे अन्य, इसीसे यहाँ पर अघट शब्दका अर्थ अन्यत्व है। अनुदरी कन्या, अनुदरी, न-सदरी, यहाँ पर अनुदरी शब्दके नञ्का अर्थ अद्वयत्व अर्थात् अद्वय सदरविशिष्ट है। अकेली न-केली, यहाँ पर अग्रसङ्गकेली, ऐसा अर्थ होगा। असुर, न-सुर, यहाँ पर नञ्का अर्थ विरोध है, अर्थात् असुर शब्दसे सुर-विरोधी ऐसा अर्थ होगा। (मुण्डकोपनीका दुर्गादास०)

गिरोमणिने नञ् बादमें पहले 'अभावमात्र' नञोऽर्थः अभाव ही नञ्का अर्थ है, ऐसा अर्थ किया है।

नञ्का अर्थ अभाव है। अभाव दो प्रकारका होता है, स'सर्गाभाव और अन्योन्याभाव। अभाव यह शब्द जाननेके पहले कुछ नैयायिकोंकी परिभाषाका अर्थ जानना आवश्यक है, यथा जिसका अभाव होता है, उसे 'प्रतियोगी' और जिसमें अभाव रहता है, उसे अनुयोगी कहते हैं। अधिकरणका नाम अनुयोगी और अधिक्य नाम प्रतियोगी है।

स'सर्गाभाव—स'सर्ग सम्बन्ध, स'सर्गके आरोपजन्य ज्ञान विषयका अभाव यो स'सर्गाभाव है। स'सर्गका आरोप अर्थात् प्रतियोगितावच्छेदकके सम्बन्धमें प्रतियोगीका आरोप, जैसे यहाँ पर यदि घट रहता, तो घटकी उपलब्धि होती, 'स'योग सम्बन्धमें घट नहीं है' यहाँ पर प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध-स'योग जानना चाहिये।

उक्त स'सर्गाभाव तीन प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसाभाव और अत्यन्ताभाव।

पहले कहा जा चुका है, कि जिसका अभाव रहता है, उसे 'प्रतियोगी' कहते हैं। जो अभाव अपने प्रतियोगीको उत्पन्न करता है, उसका नाम 'प्रागभाव' है। जैसे इस मिट्टीसे घट होगा, अभी घट नहीं है, भविष्यमें होगा, इसी अभावसे घटकी उत्पत्ति है, इसीसे इसका नाम 'प्रागभाव' है। जहाँ वा. जिस मिट्टीसे भविष्यमें घट होनेकी सम्भावना है, वहाँ वा. वह मट्टी उक्त प्रागभावकी अधिकरण वा अनुयोगी है। घटकी उत्पत्ति करने प्रागभाव स्वयं नष्ट हो जाता है। प्रागभावका नाश है, उत्पत्ति नहीं।

ध्वंसाभाव—जिस अभावकी उत्पत्ति है और नाश भी है, उसे 'ध्वंस' कहते हैं। उक्त अभावका आकार ऐसा है, जैसे 'इस कपाले घटे ध्वस्त' दण्डघातसे इस कपालमें अर्थात् कटहटसे घट नष्ट हो गया है, पहले घटका अभाव नहीं था, घट था, पीछे दण्डघात द्वारा घटका अभाव हुआ। किन्तु सङ्ख्यगुर्गमें भी उक्त अभावका अभाव नहीं होगा। ध्वंसकी उत्पत्ति है, नाश नहीं है प्रागभाव और ध्वंसाभाव यही दो अभाव अनित्य हैं। अत्यन्ताभाव, जो स'सर्गाभाव गित्य है, उसोकी अत्यन्ताभाव कहते हैं। अत्यन्ताभावका आकार इस प्रकार है "अत्र घटो नास्ति" यहाँ पर घट नहीं है, अर्थात् स'योग-सम्बन्धमें यहाँ घट नहीं है, यही सम्भ्रान्त होता है। इस जगह घटका अभाव सम्भ्रान्त गया है, अतएव इस अभावका प्रतियोगी घट है। जैसे ब्राह्मणमें ब्राह्मणत्व, गौमें गौत्व और मनुष्यमें मनुष्यत्व एक एक धर्म अवश्य रहैगा, जिस सम्बन्धमें अभाव माना जाता है, उस सम्बन्धको प्रतियोगिताका अवच्छेदक सम्बन्ध और प्रतियोगीके स'स'में विशेषणीभूत जो धर्म है, उसे प्रतियोगिताका अवच्छेदक धर्म कहते हैं। सुतरां प्रतियोगिताके अवच्छेदक दो व्यक्ति हुए, धर्म और सम्बन्ध। "अत्र घटो नास्ति" यहाँ पर घट नहीं है, प्रतियोगिताका अवच्छेदक सम्बन्ध स'योग और अवच्छेदक धर्म घटत्व है। फिर एक नियम यह भी है, कि जो जिसका अवच्छेदक होता है, वह उसका अवच्छिन्न भी होता है और प्रतियोगिता तथा अभाव इन दोनोंका परस्पर निरूप्य निरूपकभाव सम्बन्ध है, अर्थात् प्रतियोगिताका निरूपक अभाव होता है। -

अभी सबके मिलनेसे "अत्र स'योग स'योगावच्छिन्न और घटत्वावच्छिन्न जो घटनिष्ठ (घटमें) प्रतियोगिता है, उस प्रतियोगिताका निरूपक जो अभाव है, वही यहाँ पर मौजूद है।

इस अत्यन्ताभावके साथ प्रतियोगिताको अधिकरणताका विरोध है। एक समय, एक स्थान पर जो दो पदार्थ नहीं रह सकते, उन्हीं दो पदार्थोंका परस्पर विरोध-व्यवहार हुआ करता है। जिस तरह कुछ और

दुःखकी विरोधिता। जहाँ प्रतियोगी (घट) की अधिकरणता रहती है, वहाँ उसका अभाव नहीं रहता, जहाँ घटका अभाव रहता है, वहाँ घटकी अधिकरणता नहीं रहती, यही विरोध है।

पहले कहा जा चुका है, कि मंसर्गाभाव नित्य है, यह नित्य इस अत्यन्ताभाव सम्बन्धमें जानना चाहिये, अर्थात् अत्यन्ताभावकी उत्पत्ति और विनाश नहीं है। सभी समय सब वस्तुओंका अत्यन्ताभाव सब जगह रहता है।

सभी प्राप्ति इस बातकी हो सकती है, कि यदि सभी जगह सब वस्तुओंका अत्यन्ताभाव है, तो जहाँ घटकी वर्तमान देखते हैं, वहाँ घटका अभाव प्रत्यक्ष नहीं होता, लेकिन देखा जाता है, कि वहाँ घट नहीं है अर्थात् घटका अभाव है। फिर क्यों ही वहाँ दूसरा वहाँ ला कर रखा, त्योंही उस वड़ेका अभाव दूर हुआ, फिर वड़ेका अभाव नहीं रहा। लेकिन पुनः वड़ेकी उस जगहसे भलग रखने पर ही वहाँ वड़ेका अभाव हो जाता है। अतएव जिवकी उत्पत्ति और नाश है, उसे किस प्रकार नित्य कह सकते, इसके उत्तरमें नैयायिक लोग कहते हैं, कि जहाँ घट है, वहाँ तब भी घटका अभाव है सही, किन्तु उसकी उपलब्धि नहीं होती, घटका अभाव उस समय भी देखा जाता, यदि वह घट वहाँ प्रतिबन्धक रूपसे बैठा न रहता। इस प्रकार प्रतिबन्धकवशतः ही घटके अभावकी उपलब्धि नहीं होती है। घटकी वटा लेनेसे ही प्रतिबन्धक नहीं रहता और तब घटाभाव प्रत्यक्ष हो जाता है।

अन्योन्याभाव—तादात्म्यसम्बन्धमें सम्बन्ध जो अभाव रहता है उसे अन्योन्याभाव कहते हैं, जिस तरह अयोग्य सम्बन्धमें घट पृथ्वी पर रहता है, उसी तरह तादात्म्य सम्बन्धमें आप आपमें रहता है अर्थात् तादात्म्य सम्बन्धमें घट घटमें रहता और पट पटमें रहता है। अन्योन्याभावका आकार इस प्रकार है “अथ घटो न” यह वस्तु घट नहीं है, तो क्या पट है? “घट नहीं है” इसी नञ्का अर्थ अन्योन्याभाव है। अन्योन्याभावका दूसरा नाम “भेद” है। अतः जिस अभावकी वलसे परस्परका भेद प्रतीत होता है, उसका नाम अन्योन्याभाव है।

यह वस्तु घट नहीं है, अर्थात् घट भिन्न है, तो क्या पट है? यहाँ पर घट और पटकी भिन्नता प्रतीत होती है। अभी सब भिन्न कर “यह वस्तु तादात्म्यसम्बन्धमें घट नहीं है” इसका अर्थ ऐसा हुआ, तादात्म्यसम्बन्धविच्छिन्न और घटत्वाविच्छिन्न प्रतियोगिताका निरूपक भेद-विशिष्ट यही पट है।

उक्त अन्योन्याभावके साथ विरोध प्रतियोगितावच्छेदकके साथ प्रतियोगितावच्छेदक घटत्व जहाँ रहता है वहाँ घटका भेद नहीं रहता, घटत्व है घटमें, इस घटमें घटका भेद नहीं रहता। घटका भेद रहेगा सिर्फ घटके सिवा पटादि सभी वस्तुओंमें। इसी प्रकार नञ् अर्थका विचार नञ्वादमें अति विस्तृतरूपसे लिखा है। विस्तारके भयसे उनका उल्लेख नहीं किया गया। यही नञ्वाद नैयायिकका प्रधान ग्रन्थ है।

जहाँ विधिकी प्रधानता और निषेधकी अप्रधानता जानी जाती है तथा समान्त पदमें नञ्का प्रयोग नहीं होता, वहाँ उसे पर्युदास नञ् कहते हैं। यथा—“रात्रौ आह न कुर्वीत” रातमें आह नहीं करना चाहिये, यहाँ पर यह समझा जाता है, कि रात छोड़ कर और सभी समयमें आह कर्त्तव्य है। क्योंकि शास्त्रात्मरमें सभी जगह आहकार्यका विधान है, इसीसे हम आहकरणके साक्षात् सम्बन्धमें अन्वय हुआ है, विधायक लिङ्ग प्रत्ययमें अर्थात् ‘कुर्वीत’ इसो लिङ्ग प्रत्यय द्वारा यहाँ पर विधिकी प्रधानता समझी जाती है। आह करना ही होगा, रात्रि छोड़ कर दूसरे समयमें आह कर्त्तव्य है और यहाँ प्रतिषेधकी अप्रधानता हुई है। साक्षात् विधायक वाचक लिङ्गमें नञ् अर्थका अन्वय नहीं होनेसे ही निषेधका अप्राधान्य हुआ। जैसे “रात्रौ आह न कुर्वीत” रातमें आह नहीं करना चाहिये, यहाँ पर नञ्का अर्थ अन्योन्याभावभेद है अर्थात् नहीं करना चाहिये, यह न जान कर रात्रि भिन्न कालमें करना चाहिये, यही भेद नञ्का अर्थ हुआ। भेद रूप निषेधका साक्षात् अन्वय हुआ है, विधायक वाचक लिङ्गमें अन्वय नहीं होता, इसीसे निषेधकी अप्रधानता हुई और यहाँ पर पर्युदास नञ् हुआ।

जहाँ विधिकी अप्रधानता और निषेधकी प्रधानता

तथा नञ्-अर्थ का अन्वय क्रियामें होता है, यहाँ अने प्रसव्य प्रतिषेध कहते हैं । यथा—“नातिरात्रं पोडुगिनं गृह्णाति” अतिरात्र शब्दका अर्थ अतिरात्र नामक ग्रह और पोडुंगो शब्दका अर्थ सोमलतारसंपूर्ण पाल है । अतिरात्र नामक ग्रहमें सोमलतारसंपूर्ण पाल ग्रहण नहीं करना चाहिये । यहाँ पर विधेय कर्म पोडुगि-ग्रहण है, इसकी साक्षात् सम्बन्धमें विधार्थवाचक ‘लट’के साथ अन्वय नहीं होता, इसीसे विधिकी प्रप्रधानता हुई और नञर्थ न निषेधका विधार्थवाचक लट् अर्थके साक्षात् सम्बन्धमें अन्वय हुआ है, इसीसे निषेधकी प्रधानता हुई है । अर्थात् अतिरात्र ग्रहमें सोमलतारसंपूर्ण पाल ग्रहण करना निषेध बतलाया है, ‘न गृह्णाति’ ग्रहण नहीं करना चाहिये, दूसरे शालोमें सोमलतारसंपूर्ण पाल ग्रहण करनेका विधान है, किन्तु अतिरात्र ग्रहमें इसे ग्रहण नहीं करना चाहिये । दूसरे शालोमें इसका जो विधान बतलाया है, वही विधेय यहाँ पर अमाधान्य और प्रतिषेधका प्राधान्य हुआ । ग्रहण मत करो, यही निषेधका प्राधान्य है, इसीसे यहाँ पर प्रसव्य-प्रतिषेध हुआ ।

फिर ऐसा भी स्थान है, जहाँ एक ही जगह, प्रयु-दास और प्रसव्य-प्रतिषेध दोनों होते हैं । यथा भोजराज —

“वीपे चैत्रे कृष्णपक्षे नवान्नं नाचरेदुपुः ।

मधेयन्मासन्दरे रोगी पितृणां गोपतिष्ठे ॥”

यहाँ पर “न आचरेत्” इस नञ्-ज्ञा अर्थ प्रसव्य और प्रयु-दास दोनों होता है । अर्थों कि पोष और चैत्र मासमें, तथा कृष्णपक्षमें नवान्न आह नहीं करना चाहिये जो करता है, वह जन्मान्तरमें रोगी होता है और आह-दुष्टिके लिए पिछनोक्तमें नहो पड़ता ।

नवान्न आह दीपादिमें नहीं करना चाहिये, क्योंकि जन्मान्तरमें रोगी होता है, इससे यही समझा गया कि यह निन्द्यास्ति है । विधाय यह प्रसव्य-प्रतिषेध है और सत्त आह पिछनोक्तमें उपस्थित नहीं होगी, इससे जाना जाता है, कि आह सिद्ध नहीं होगी । सुतरां प्रयु-दास अर्थात् जहाँ कार्यकी सिद्धि है, और कुछ प्रत्यय भी है, यहाँ प्रसव्य-प्रतिषेध है और जहाँ कार्यकी सिद्धि नहीं है तथा कोई प्रत्यय भी नहीं है, यहाँ प्रयु-दास होता

है । सारांश यह है, कि प्रसव्यकी जगह कार्यकी सिद्धि होती है सही, लेकिन, दोषयस्त होना पड़ता है । प्रयु-दासकी जगह न कार्यकी सिद्धि होती और न कार्यके लिए कोई प्रत्यय ही होता है । ‘रात्रौ आह’ न कुर्वति’ यहाँ पर रात्रिकालमें आह करनेसे आहकी सिद्धि नहीं होगी और रात्रिकालमें आहके लिए प्रत्ययप्रभागी नहीं होना पड़ेगा । ‘नातिरात्रं पोडुगिनं गृह्णाति’ यहाँ पर कार्यकी सिद्धि होगी । किन्तु प्रत्यययस्त होना पड़ेगा इसकी साधारणतः प्रयु-दास और प्रसव्यप्रतिषेध जानना चाहिये । रुद्रगय, जगन्नाथ पण्डित, पदामिराम, वैष्णवाचार्य, गदाधर, विश्वनाथ आदि रचित नञ्वाह सम्बन्धी ग्रन्थोंमें विस्तृत विवरण देखे ।

नञ्जगद - १ महिसुर राज्य महिसुर जितका एक तालुक । यह पचा० ११° ५१' और १२° १४' उ० तथा देश० ७६° २७' और ७६° ५६' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमण ३८४ वर्गमील और लोकसंख्या १०८१० के लगभग है । इसमें दो शहर और २०६ ग्राम लगते हैं । राजस्व १७१००० रु० है । कन्नो नामकी नदी तालुकके पश्चिमसे पूर्वकी बह गई है ।

२ सत्त तालुकका एक शहर । यह पचा० १२° ७' उ० और देश० ७६° ४१' पू० कन्नो नदीके किनारे अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ५८८१ है । यहाँ नञ्ज-देखर नामक ग्रिवका विख्यात मन्दिर है । सत्त मन्दिरकी लम्बाई ३८५ फुट और चौड़ाई १६० फुट है तथा यह २४० स्तम्भोंसे वेष्टित है । मार्च मासके शेष भागमें यहाँ रथयात्रा होती है जिसमें हजारों मनुष्य समागम होते हैं । १८७३ ई०में यहाँ म्यूनिपलिटिटी स्थापित हुई है ।

नञ्जराजपत्तन - दक्षिणात्यके अन्तर्गत कूर्ग राज्यका एक तालुक । यह पचा० १२° २१' और १२° ५१' उ० तथा देश० ७५° ४१' और ७६° ५' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमण ३५५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ४२७२० है । इसमें तीन शहर और २८० ग्राम लगते हैं । तालुकका पश्चिमांग पूर्व समय है । हेमावती और कुमारी नामकी दो प्रसिद्ध नदियाँ इस तालुकके पश्चिम और दक्षिणमें बहती हैं ।

नट (सं० पु०) नमतीति नम-उट । (ननिदपुञ्जिति ।

उप. ४। (०४) १ श्रोत्राकहं । वा नटति त्वंति इति-
नट-प च । २ नसं क, वड जो नाच करता हो । पर्याय—
मोलाली, मेलू, जायाजीव, कृपाश्री, भरत, सर्वेश्वरी,
भरतपुरक, धात्रीपुर, रत्नाजीव, रत्नवतारक । ३ प्रगोक
हस । ४ किंजुपर्वा, नल नामकी घास । ५ वर्षमहर
जातिविशेष । इसकी उत्पत्ति शोचिककी स्त्री और शोचिक
पुरुषसे मानो गई है और जिसका काम गाना बजाना
बतलाया गया है । ६ ब्राह्म क्षत्रियसे उत्पन्न क्षत्रिय जाति
विशेष, मनुके पतुसार क्षत्रियोंकी एक जाति जिसकी
उत्पत्ति ब्राह्म क्षत्रियोंसे मानो जाती है । ७ रागविशेष,
सम्पूर्ण जातिका एक राग । नारदपुराणके पतुसार ये
रागके पुत्र माने जाते हैं । रागमालामें इसे रागिणी बत-
लाया है ।

स्वरगाम—"स नट ग म प ध नि :"

नटनारायण ही नट समझे जाते हैं । सभी नट जाति-
का राग भी प्रकारका प्रचलित है जिसे सङ्गीतशास्त्र-व्यव-
साधिगण नवनट कहते हैं । यथा—हृदयनट, केदारनट,
छायानट, कदम्बनट, हाथीरनट, और बाहीरीनट ।
(सङ्गीतशास्त्र) इसके गानका समय तीसरा पहर और
सन्ध्या है ।

८ नृत्यगीत व्यवसायी जातिविशेष, नीच
जाति जो गा बजा कर और तरह तरहके खेल तमासे
आदि करके अपना निर्वाह करते हैं । पूर्व बङ्गालमें इस
जातिके लोग अधिक संख्यामें पाये जाते हैं । प्रवाद है,
कि पश्चिमोत्तर प्रदेशकी कथक-जातीय ब्राह्मण श्रेणी
ही नवाबी समयमें ठाका भा कर जातिभ्रष्ट हुई और
नट जातिमें परिणत हो गई । फिर किसीका कहना
है, कि गंसेकी घुड़ी बनानेवाली तुगी जातिकी एक
शाखा ही अपनी हस्ति छोड़ कर नाच गान करने लगी
और नट जाति कहलाने लगी । मि० वार्ड कहते हैं,
कि उनके समयमें बङ्गाल देशमें नट नामकी कोई स्वतन्त्र
जाति नहीं थी ।

पुराणमें मालाकारके औरस और शुद्राके गर्भसे नट
जातिकी उत्पत्ति वर्तमान है । नट जातिके लोग कहते
हैं, कि वे भरद्वाज मुनिके औरस और किसी पक्षराके
गर्भसे उत्पन्न हुए हैं । बिक्रमपुरके नटोंका कहना है,

कि इन्द्रसभामें किसी देववतके कने आपभ्रष्ट हो कर पृथ्वी
पर जन्म लिया था । उनकी वंशधर यह नट जाति है ।
नट लोग स्वानमिदसे नट, नट, नटक और नाटक नाम-
से पुकारे जाते हैं । इनकी छोड़ी संख्या होनेके कारण
ये लोग निम्न श्रेणीकी हिन्दू कन्यासे शादी करके और
भी नीच हो गये हैं । इन लोगोंके गोत्र होता है ।
सर्वोका एक गोत्र भरद्वाज है । इनकी उपाधि नट्यो और
भल्ल है । जो नाच गानमें प्रवीण होते, वे 'उप्पाट' कह-
लाते हैं । ये लोग शुद्रको नाई तोष दिन तक पशोच
मानते हैं और साधारणतः बैथाय हैं । चाण्डाल तथा
इसो प्रकारकी दूसरी नीच-जातिके यहां ला कर ये नाच
गान नहीं करते । फिलहाल इनका आदर घट जाने-
से इन्होंने सुसलमानके यहां भोजाना बंद कर दिया
है । सुसलमानोंमें भी बाबुनिया नामक नट सरोखा एक
सम्प्रदाय है ।

बचपनमें नट बालक नाच गान सीखते हैं । इस
समय इन्हें 'बागातों' कहते हैं । किन्तु जवान होने पर
भी ये लोग गीत सीखते और जीविकाके लिये सुसलमान
नर्तकोंकी गीत सिखाते हैं तथा उनके साथ जा कर जहां
तहां सफरदारोंका काम करते हैं । एक नर्तकी और
कई एक नटोंसे एक सम्प्रदाय बनता है । जो नाच गान
सीख नहीं सकते, वे खेतो धारी करके अपना गुजारा
करते हैं । पहले कोई हिन्दू रमणो नर्तकी नहीं होती
थी, किन्तु सभी बैथवी और बैथ्या हिन्दू कन्याएं भी
यह व्यवसाय करने लग गई हैं । ये लोग भी मारहू,
बेहला, मंजीरा, डुग्यो, तबला आदि वाद्ययन्त्रका
व्यवहार करते हैं । नट लोग प्रति दिन सुबहमें बिहा-
वनसे उठ कर अपने बाथरूमोंको प्रणाम करते हैं । यो-
पधमोंके दिन जब तक सरस्वती पूजाका शेष नहीं होता
तब तक ये लोग गीतवाद्यका जिक्र तक भी नहीं करते ।
नट जातिकी स्त्रियां नाच गान सीखती हैं, सही, किन्तु
जीविकाके लिये वे कभी इधर उधर नाचने गाने नहीं
जातीं । वे केवल विवाह आदि प्रसंगोंमें अपने घरमें
ही नाचती गाती हैं । अपने नट-युवक सुसलमानों
नर्तकोंकी सिखाते समय उनके प्रेममें फँस कर सुभग-
मान बन जाते हैं ।

संस्कृत नाटकादिमें नटनटीका उल्लेख देखनेमें आता है। बहुतोंको विश्वास है, कि हिन्दू राजाके राजत्वकालमें नाटकाभिनय करना इस नटजातिका एक और भी व्यवसाय था। संस्कृत नाटकमें गान्दीपाठी नटकी ब्राह्मण वसलाया है। जिसको किसी नाटकमें नटकी सुवधर भी बतलाया है। अभी अभिनयविद्यावित् व्यक्तिको भी नट कहने लग गये हैं, किन्तु इस नटमें नट जातिका बोध नहीं होता। क्योंकि पाश्चात्य प्रणाली द्वारा अभिनयकी प्रथा प्रचलित हो जानेसे अभी ब्राह्मणादि सभी जातिकी लोग उस कलाविद्याका पशुशीलन करते हैं।

८ मध्य रात्रिं सरमुण्डनामक पर्वत पर अवस्थित बौद्ध लींगोंका एक विहार। कहते हैं, कि बुद्धदेवने यहाँ आकर नट और भट नामक दो नागोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया था। उस दीक्षाको चिरस्मरणीय करनेके लिये ही नट और भट नामक दो विहार बनाये गये थे। १० देवनाल, बड़ा भरकट। ११ लोभप्रच। १२ परिपेक्ष लण, केवटीसीधा।

नटकमेलक (सं० स्त्री०) हास्यरसप्रधान दृश्यकाश्चमेदः साहित्यदर्पणमें इस पुस्तकका उल्लेख देखनेमें आता है। नटखट (हिं० वि०) १ लक्ष्मी, उपद्रवी, चंचल। २ भूत, चालाक, चालबाज, मझार।

नटखटो (हिं० स्त्री०) बदमाशी, शरारत, पाजीपन। नटगति (सं० स्त्री०) कन्दोमेद, एक वर्णवृत्त। इसके प्रति चरणमें १४ अक्षर रहते हैं।

नटचर्या (सं० स्त्री०) नटस्य चर्या इत्यतः। अभिनय, नाटक।

नटता (सं० स्त्री०) नटस्य भावः नट-तत्त्व-टापः। नटत्व, नटका भाव, नटका काम।

नटन (सं० स्त्री०) नट भावी श्रुट्। नृत्य, गाय।

नटना (हिं० स्त्री०) १ नाच करना। २ चलोकार करना, काह कर बटल जाना, सुकरना। ३ नृत्य करना, नाचना। ४ मट करना।

नटना (हिं० पुं०) १ मझली पकड़नेका एक बड़ा टोकरा जिसका पेंदा कटा होता है, टापः। २ इस ज्ञाननेका नासकी धनी बखानो।

Vol. XI, 11

नटनारायण (सं० पुं०) नटानां नारायण इत्यः। राग विशेष। हनुमत्के मतसे यह मेघरागका तोमरा पुत्र और भरतकी मतसे दीपकरागका पुत्र है। लेकिन सोमेश्वर और कल्लिनाथके मतसे यह छः रागोंमेंसे एक है। यह राग हास्य समयमें गिरिजाके मुखसे उत्पन्न हुआ था। इसकी कः पञ्चयों हैं, यथा, कामोदी, कल्याणो, चामोरी, नाटिका, सारङ्गी और नटङ्गयोरा। इसके यह, चं च और व्यास यहूज हैं। यह सम्पूर्ण जातिका राग है।

रत्नमालाके मतसे मूर्त्ति वा ध्यान—

“जो वेशधारी पुखो नवीनः सङ्कोतशास्त्रे भ्रमिनाध्यातः।

गायन् सतालं शलयं मनोहः स्थान्द्वानारायण राग एव ॥”

(रत्नमाला)

स्वरयाम—“स षट् ग म प वि नि सः”

(सङ्कीर्तधारमं)

यह हिमन्त ऋतुमें रातके समय २१ दण्डसे २६ दण्ड तक गाय जाता है। कुछ लोग इसे मधुमाधव, विलावल और शङ्कराभरणके मेलसे बना हुआ और कुछ लोग कल्याण, शङ्कराभरण, नट और विलावलके मेलसे बना हुआ मङ्गर राग भी मानते हैं। एक और शास्त्रकारके मतानुसार यह ऋद्धव जातिका राग है। इसमें निषाद वर्जित है और यह वर्षाऋतुके तृतीय प्रहरमें गाय जाता है। इनके मतानुसार विलावल, कामोदी, चावरी, सुहवी और सोरठ इसकी रागिनिधा तथा शङ्कनट, हकीरनट, सारङ्गनट, कायागट, कामोदनट, केदारनट, मंचनट, गोडनट, भूपालनट, जयजयनट, शङ्करनट, होरनट, श्यामनट, वराहीनट, विभासनट, विहागनट और शङ्कराभरणनट इसके पुत्र हैं। लेकिन यद्यार्थमें ये सब शङ्कर राग हैं जो नट तथा भिन्न भिन्न रागोंके मेलसे बनते हैं।

नटनो (हिं० स्त्री०) १ नटकी स्त्री। २ नट जातिकी स्त्री।

नटपतिका (सं० स्त्री०) वाचाङ्कु, बैंगन, भाँडा।

नटपण (सं० स्त्री०) मुहुलक, दालचीनी।

नटभटिकविहार (सं० पुं०) उपसुण्डस्थित बौद्धविहार, बौद्ध लींगोंका वह विहार जो उपसुण्ड पर अवस्थित है।

नटभूषण (सं० स्त्री०) नटानां भूषणं यस्मात्। हरिताल, हरताल।

नटमण्डन (सं० स्त्री०) हरिताल।

नटमल (स० पु०) एक प्रकारका राग ।

नटमलार (स० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक सङ्कर राग । इसमें सब राग स्वर लगते हैं । यह नट और मलारके योगसे बनता है ।

नटमलारि—रागिणीविशेष । नट और मलारके योगसे इसकी उत्पत्ति हुई है ।

नटरङ्ग—नटके जैसा रङ्ग वा अभिनय कार्य ।

नटवट्ट (स० पु०) १ अभिनेताका पुत्र । २ युवक अभिनेता ।

नटवर (स० पु०) नटपु वरः । १ प्रधान अभिनेता, नायक नामों बहुत प्रवीण मनुष्य । २ नटके जैसा चङ्ग भङ्गी और बोलनेमें चतुर । ३ यौक्त्य जो नायकला और नाटकशास्त्रके आचार्य थे । (त्रि०) ४ बहुत चतुर, चालाक ।

नटवासरसी (हि० पु०) साधारण सरसी ।

नटसंज्ञक (स० पु०) नटस्य संज्ञा यस्य कप् । १ गोदन्तास्य हरिताल, गोदन्ती हरताल । २ नट ।

नटसाल (हि० स्त्री०) १ कटिका वह भाग जो निकाल लिये जाने पर भो टूट कर चट्टी जगह रह जाता है । २ मानसिकव्यथा, कसक, पीड़ा । ३ वाणकी गाँधी जो शरीरके भीतर रह जाय । ४ वह फाँस जो बहुत छोटी होनेके कारण नहीं निकाली जा सकती ।

नटसूत्र (स० स्त्री०) नटस्य तत्कृत्यस्य आपकं सूत्रं । शिलालिखित नटकृत्यशापक ग्रन्थभेद ।

नटाई (हि० स्त्री०) किनारेका ताना ताननेका जुलाहींका एक बीजार ।

नटान्तिका (स० स्त्री०) अन्तयति नाशयति इति अन्त-ण्वल्, टाप् अन्त इत्वं ; नटस्य नटकृत्यस्य अन्तिका इत्यत् । 'लज्जा, शरम । लज्जा होनेसे नायक नहीं हो सकता । नटकार्य एकमात्र लज्जासे ही विनष्ट होता है, इसीसे नटान्तिका शब्दका अर्थ लज्जा रखा गया है ।

नटिन् (हि० स्त्री०) १ नटकी स्त्री । २ नट जातिकी स्त्री ।

नटो (स० स्त्री०) नट-अच् डीप् । १ नलो नामक गन्धद्रव्य । २ वेष्टा । ३ नटपन्नो, नट जातिकी स्त्री । ४ रागिणीभेद, एक रागिणीका नाम । अनुमतके मतसे यह दीपक रागकी रागिणी माना गई है । यह सम्पूर्ण

जातिकी है । योष्यस्तुमें सन्ध्य समय यह गाई जाती है । रागमालामें इसका रूप रत्नवर्णा, युवती, विविधा-लङ्कारसे सुशोभिता, चम्पारुढ़ा, पुरुषके समान दिग्परिधाना वतलाया है । ५ नन्तकी, नाचनेवाली स्त्री । ६ अभिनेत्री, अभिनय करनेवाली स्त्री । ७ प्रयोजक ।

नटुषा (हि० पु०) नटदेखी । २ नटदेखी ।

नटेश्वर (स० पु०) नटाना ईश्वरः । शिव, महादेव । शिवजी नाच गानके बड़े प्रिय थे, इसीसे इसका नाम नटेश्वर पड़ा है ।

नट (हि० पु०) नट देखी ।

नट्या (स० स्त्री०) नटाना समूहः पाशादित्वात् य टाप् । रागिणीविशेष, सङ्गीतमें एक प्रकारकी रागिणी जो प्रायः नटके सामने होती है ।

नङ्ग (स० पु०) नलतीति नल-अच् नल्य इत्वं । १ नल-क्षण, नरसल, नरकट । २ गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिभेद, एक गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिका नाम । ३ एक जाति जिसका पैगा शीशेकी चूड़ियां बनानां है ।

नङ्गक (स० स्त्री०) नल अन्ते अच् संज्ञायां कन् । दो अंगोंके बीच वर्त्तमान नलाकार अक्षिभेद ।

नङ्गकीय (स० त्रि०) नङ्गाः सन्तात्र नङ्ग-कुप् अ । (नङ्गरीनां कुक्च । पा ४।२।११) नलसमूह दिग्, नल नल या नरकट बहुत होता है ।

नङ्गप्राय (स० त्रि०) नङ्गः प्रायेण यत्र । नलबहुल दिग्, जहाँ नरकट बहुत उपजता है । पर्याय—नङ्गकीय, नङ्गवान, नङ्गवल ।

नङ्गभक्त (स० स्त्री०) नङ्गस्य विषयो दिग्; ऐषादित्वात् भक्तत्वा । नङ्गविषय ।

नङ्गमय (स० त्रि०) नङ्ग-स्वरूपे मयट् । नल समूहयुक्त, जहाँ नरकट बहुत पाया जाता हो ।

नङ्गमीन (स० पु०) नङ्गस्थितो मीनः । मत्स्यविशेष, भौं गा मछली ।

नङ्गश (स० त्रि०) नङ्ग अन्त्यर्थे त्रयादित्वात्-य । नङ्ग-युक्ता नरकटसे आच्छादित ।

नङ्गमंहति (स० स्त्री०) नङ्गानां मंहतिः समूहः । नङ्ग-समूह, नरकटका टेर ।

नङ्गह (स० त्रि०) नङ्ग अपरिप्लवत्स्थानं हन्ति इति नङ्ग-सन्निह, कान्त, तीको, चमक दमक ।

नडागिरि (स० पु०) नडप्रधानो गिरिः, किंशुकादित्वात्
संज्ञायां पूर्वस्य दीर्घः । नडप्रधान गिरिभेदः, वड पर्वत
जिस पर नरकट बहुत होता है ।

नडादि (स० पु०) पाणिनि उक्त गणशब्द समुह ।

नडादिगण ये हैं—नड, चर, सक, सुक्त, इतिक, इतिश,

उपक, एक, लमक, गलङ्, गलङ्, समल, ब्राजय, तिक,

प्राय, नर, साकय, दास, मित्र, द्वीप, पिङ्गव, पिङ्गल,

किङ्कर, किङ्गल, कातर, कातल, काश्यप, काश्य, काव्य,

पञ्ज, वसुध कृष्णरथ, ब्राह्मणयामिष्ठ, अमित्र, निगु,

वित्र कुमार, कोष्ट, श्रोष्ठ, लोष्ट, दुर्ग, स्तम्भ, मिश्रपा,

अष्टवर्ण, शकट, सुमन्म, सुमत, निमत, कटच, जलन्धर,

अध्वर, युगम्बर, ईसक, दण्डन, इस्तिन्, पिण्ड, पञ्चान,

चमनिन्, सुलल्य, स्थिरक, ब्राह्मण, चटक, बदर, अश्वल,

खरप, लङ्, इन्ध, अन्ध, कामुक, ब्रह्मदत्त, उदुम्बर,

शोण, पत्नीष्ट, दण्ड । पाणिनिमें लक्षणयके लिये और

एक गण देखनेमें पाता है । यथा—'नडादीनां कृकृ'—

यहां नडादिगण यों हैं—नड, इन्ध, विन्ध, वेण, वेव, वेनस

इष्ट, काष्ठ, कपीत, लण, कृष्ण, तलन् । (पाणिनि)

नडाल—१ बङ्गालके यमोर जिलेका एक उपविभाग । यह

अक्षा० २२° ५८' और २३° २१' उ० तथा देशा० ८८° २३'

और ८८° ५०' पू०के मध्य अवस्थित है । लोकसंख्या

३५२२८१ और भूपरिमाण ४८० वर्ग मील है । इसमें

नडाल नामका छोटा शहर और ८१० ग्राम लगते हैं ।

यमोरके अन्य भागोंमें यहांकी प्रायश्चवा कुछ अच्छी है ।

२ उक्त विभागका एक शहर । यह अक्षा० २३° १०'

उ० और देशा० ८८° १०' पू०के मध्य अवस्थित है ।

लोकसंख्या लगभग १२२५ है ।

नडिनी (स० स्त्री०) नडा सन्त्यव्यं इति इति । नडयुक्त

नडा, वड नदी जिसमें सरपत अधिक हो ।

नडिल (स० स्त्री०) नडस्यादूरदेशादि, इति नड-इलच् ।

नडसमोपस्थ आदि, सरपतके समोपका ।

नड्डी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी जातिग्रवाजी ।

नड्या (स० स्त्री०) नडार्ना समूह पोशादित्वात् य ।

नडसमूह, सरपतका डेर ।

नडूत् (स० स्त्री०) नडाः सन्ति प्रायेणाव नड-डुत्प ।

(कुतदनैवेतवेष्ठी इवुत्प । पा ४।२।८०) ततो मध्य व ।

नडसमूह देव, जहां सरपत बहुत होता है ।

नडवल (स० पु०) नडाः सन्त्यव नड-डवलच् । (नड-

वाराव डवलच् । पा ४।२।८८) नल-वहुल देव, वड देव

जहां पर सरपत बहुत अधिक हो । (स्त्री०) २ वैराज

मनुकी पत्नी भेद, वैराज मनुकी स्त्रीका नाम । (पु०)

३ सरपतकी चटाई । ४ एक वैदिक देवताका नाम ।

नडामु (स० स्त्री०) कुटिम, सरपतकी भोंपड़ी ।

नत (स० स्त्री०) नम कर्तरि क्त । १ नमोभूत, कृता

हुषा । २ कुटिल, वक्र, टेढ़ा । (स्त्री०) ३ तगरपादो ।

४ दृष्टघटोद्दीन दिवारात्राई काल । ५ छाया द्वारा

दिन ज्ञानार्थ धनुःकलामेद ।

इसका विषय ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है—जिस

जिस अमावस्याके दिन ग्रहण लगनेकी सम्भावना रहती

है, उस दिन अमावस्याके स्थिति दृष्टादि जितने हो उन्हें

पहले एक जगह रखते हैं, पीछे उस दिनके दिनमानको

दो भाग करके उसका एक भाग उस अमावस्याके दृष्टमें

घटाते हैं । घटाव-फल जितना होगा, वही नतदण्ड

कहा जाता है । यह नतदण्ड दो प्रकारका है, प्राङ् नत

और पश्चात् नत । यदि उस दिनकी अमावस्याका स्थिति

दृष्ट उस दिनके प्राधेसे कम हो, तो उसे प्राङ् नत और

यदि अधिक हो, तो उसे पश्चात् नत कहते हैं । (कलितर्गो०)

नतकोटिग्र—दाक्षिणात्यकी एक जाति का नाम । इस

जातिके लोग हिन्दूधर्मावलम्बी हैं । इनकी भाषा

तामिल है ।

नतहुम (स० पु०) नतः हुमः नित्यकर्मधा० । एक

प्रकारका शालवृक्ष जिसे खतामाल कहते हैं ।

नतनाड़िका (स० स्त्री०) दो पहरसे लेकर रातके दो

पहर तकका समय ।

नतनाड़ी (स० स्त्री०) जन्मनाड़िका विशेष ।

ज्योतिषीको नत और उन्नतादिका निर्णय करके

तत्वादि हादय भाव आदिका वलसाधन स्थिर करना

चाहिये ।

दिनमें जन्मादि होनेसे दृष्ट दण्डादिमेंसे उस दिनका

यामार्क घटनेसे जो अवशिष्ट रहेगा, उसका नाम नत-

नाड़िका है । यदि दिनके पूर्वोदमें जन्म भयवा प्रश्न

हो, तो प्राङ् नत नाड़ी और यदि पश्चात्तमें प्रयात् दिनके

दो पहरके बाद जन्म वा प्रश्न हो, तो उक्त ग्रीष्मा-

जग नाड़ी होगी। - रातको जगनादि होनेसे रातके प्रथमार्द्ध मानका जितना दण्ड बीत गया है उसके साथ दिनार्द्धका योग करनेसे जो दण्डादि होगा, वह पद्याक्षत नाड़ी और रातके द्वितीयाहमानके दण्डादिके साथ दिनार्द्ध योग करनेसे जो दण्डादि होगा, वह प्राङ्मन्त नाड़ी कहलाता है।

१०मेंसे नतदण्डादि घटानेसे जो अवशिष्ट रहेगा, उसका नाम उन्नतनाड़ी है। इसका विषय कुछ बढ़ा बढ़ा कर कछना आवश्यक है।

सूर्यके उदयसे ले कर जव से ठीक मस्तकके ऊपर आ जाते हैं, तब तकके दिनार्द्धमानकी प्रथम दिनार्द्ध और मस्तकके ऊपरसे अस्त हो जाने तकके दिनार्द्धको शेष दिनार्द्ध कहते हैं। इसी प्रकार अस्तसे ले कर जव से पातालमें हम लोगोंके पैरतले आ जाते हैं, तब तकके निगार्द्धमानको निगार्द्ध और फिर वहाँसे उदय तकके निगार्द्धको शेष निगार्द्ध कहते हैं।

प्रथम दिनार्द्धमान प्राङ्मन्त नाड़ी और शेष दिनार्द्ध पद्याक्षतनाड़ी कहलाता है। इस प्रकार शेष दिनार्द्धमानके साथ प्रथम निगार्द्धमानको संयुक्त करनेसे उसे पद्याक्षतनाड़ी अर्थात् हम लोगोंके मस्तकोपरसे जव सूर्य हम लोगोंके पैरतले आ जाते हैं, तब तकके समयकी पद्याक्षतनाड़ी और शेष निगार्द्धमानकी प्रथम दिनार्द्धमानके साथ संयोग करनेसे अर्थात् उस पादतलसे हम लोगोंके मस्तकके ऊपर आने तकके समयकी प्राङ्मन्त नाड़ी कहते हैं। (कोटीवर्षी)

नतनासिक (सं० त्रि०) नता नासिका यस्य । अथ नासिकायुक्त, छोटी नाकवाला। अर्थात्—अधट्ट, अधमाट, अधम्रट।

नतपत्र—नारियादका प्राचीन संस्कृत नाम।

नतपाल (हि० पु०) प्रपतपाल, प्रणाम करनेवालेका पालन करनेवाला।

नतपुर—नारियादका आधुनिक संस्कृत नाम।

नतभाग (सं० पु०) नत । (Zenith distance)

नतम (हि० त्रि०) बाँका।

नतमी (हि० स्त्री०) आसाम प्रदेशमें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसकी छकड़ी चिकनी, मजबूत और

खाल रंगकी होती है और उससे भिज, कुरसिया तथा नावें अच्छी बनाई जाती हैं।

नतराम (सं० अव्य०) न पासु तप्य । १ प्रतिगम मजर्थ, प्रतियोग समानाधिकरण-अभाव । २ नितरा, संपदा, सदा, हमेशा।

नतार्ग (सं० पु०) वह वृत्त जिसका केन्द्र भूकेन्द्र पर होता है और जो विषुवत् रेखा पर संव होता है। यह वृत्त यहाँ आदिको स्थिति जाननेके काममें आता है।

नतासल (हि० पु०) पश्चिमीघाट पर्वत पर होनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसकी लकड़ी नरम होती है जिससे भिज कुरसी आदि बनती हैं। इसकी रेश मजबूत होती है और बड़े बड़े रस्से बनानेके काममें आते हैं। इससे पेड़से एक प्रकारकी जहरोली रान निकलती है जिसे तीरोंमें लगा कर उन्हें जहरीला बनाते हैं। इसका दूसरा नाम जहद है।

नताङ्गो (सं० स्त्री०) नत-अङ्ग यस्याः स्त्री । १ नारी, औरत । २ कर्कटपङ्क्ति, काकड़ासिंगी।

नति (सं० स्त्री०) नम-भावे तिन् । १ नमन, नमस्कार, प्रणाम । त्रिकोण, पटकोण, भईचन्द्राकार, प्रदक्षिण, दण्ड, घटाङ्ग और छत्र ये सात प्रकारकी नति अर्थात् प्रणाम हैं।

त्रिकोण—यदि पूर्व मुख पूजा हो, तो पश्चिमसे ईशानकोणमें जा कर रही और यदि उत्तर मुखमें पूजा हो, तो दक्षिणसे वायुकोणमें जा कर रही। ये छे वायुकोणसे ईशानकोणमें और तब दक्षिणसे अग्निकोणमें जायो। बाद अग्निकोणसे नैऋतकोणमें और नैऋतकोणसे उत्तर तथा उत्तरसे अग्निकोणमें जायो। ऐसा करनेसे त्रिकोणगति अर्थात् नमस्कार होता है। इसी प्रकार दो बार करनेसे पटकोणीय नमस्कार होता है। यह नति पावतों और महादेवकी प्रतिगम प्रीतिपद है। दक्षिणसे वायुकोणमें और फिर वहाँसे दक्षिणकी ओर वापिस आ कर जो नमस्कार किया जाता है, उसे भईचन्द्र और वस्तुसाकारमें प्रदक्षिण करके जो नमस्कार किया जाता है, उसे प्रदक्षिण कहते हैं। अपना आसन त्याग कर बिना प्रदक्षिणके पृथ्वी पर दण्डवत् पतित हो कर जो नमस्कार किया जाता है, उसका नाम दण्ड है। पूर्वी

प्रकारसे पृथ्वी पर दण्डवत् पतिन हो कर हृदय, चित्तुक, सुख, नासिका, हनु, ब्रह्मरन्ध्र और अण्ड द्वारा यथाक्रम भूमि स्पर्श करने जो नमस्कार श्रिया जाता है, उसे साष्टाङ्ग नमस्कार कहते हैं। जिस नमस्कारमें वस्तुलाकार तीन बार प्रदक्षिण करके ब्रह्मरन्ध्र द्वारा भूमि स्पर्श को जातो है, उस नमस्कारका नाम उग्र है। यह उग्र नमस्कार सबसे अष्ट है। त्रिकोणादि नमस्कार एक एक महायज्ञके स्वरूप है। अष्टोष्ट देवीहोशसे ये सब नमस्कार करनेसे कामना पूरी होती है। (कालिकापुराण ६६ अ०)
नमस्कार और गणना देखो।

२ ज्योतिषोक्त गणनाभेद, ज्योतिषमें एक प्रकारको गणना। फलित ज्योतिषमें इनका विषय इस प्रकार लिखा है—पहले स्फुट दशमीदय स्थिर करना होता है। पीछे उस स्फुट दशमीदयके साथ १५ जोड़नेसे यदि योगफल तोससे अधिक हो, तो उसमेंसे ६० घटावो। अब अवशिष्ट जो रहेगा उसको प्रथम अङ्क मन्त्र्याकी फिरसे क्वालिखण्डा और अनुखण्डा ले कर एक दूसरेमें घटावो। अब घटावफल जो होगा उससे उसकी दूसरे और तोसरे अङ्कको गुणा करके एक जातिका बनावो। पीछे उस अङ्ककी ६०से भाग दो, भागफलको खण्डके साथ योग करनेसे जो अङ्क होगा, उसका नाम क्वालि है। उस क्वालिमें १५०० जोड़ कर योगफलसे ७८५१२ अष्टाङ्कको घटानेसे जो अवशिष्ट रहेगा उसमें १००से भाग दो। बाद भागफल सन्ध्याकी नतखण्डा और अनुखण्डा ले कर एक दूसरेमें घटावो अब विद्योगफल जा होगा, उसका नाम भीय है। उस भीय द्वारा शतद्वत शेषाङ्कमें गुणा करके जो होगा, उसे १००से फिर भाग दे। अनन्तर उस भागफलको नतखण्डाके साथ योग करनेसे जो होता है, उसको नाम नति है।

भास्कराचार्य मतमें नतिगणना इस प्रकार वर्णित है—
पहले गणना द्वारा शरसाधन स्थिर कर लो। पीछे उस शरको दो जगह रख दो। एक स्थानके अङ्कको एक सो से भाग दो। लब्धाङ्कमें ११ जोड़ कर दूसरे स्थानके अङ्कसे भाग दो। अब भागफल जो होगा उसे एक स्थान पर रख दो। बाद अपने अपने देगेके अष्टांशके साथ उसका योग वा वियोग करो अर्थात् अब और शरके

याम्य और साम्य होने पर भी योग करो। ऐसा नहीं होने पर वियोग करना पड़ता है। विपुत्ररेखाके उत्तरका देग याम्याच और दक्षिणका देग सोम्याच कहलाता है। पूर्वोक्त प्रकारसे योग अवधारणविद्योग करनेसे जो अङ्क होता है, उसका नाम नति है। (माधवी) यह्यादि गणनामें इसकी आवश्यकता होती है।

नतिगणनाका एक उदाहरण दिया जाता है।—जिस समय इसकी गणना करनी होगी, उस समयका मध्योदय मान लिया ४२०४८ है। इसमें १५ जोड़नेसे ४२०६३ हुआ। इसके प्रथमाङ्क ५०मेंसे ६० निकाल लेते पर शेष २५२१२ रहता है। इसका प्रथमाङ्क २ है, इसलिये क्वालिखण्डाका २ कोटकी खण्डा ८ अनुखण्डा २१ दोनोंको घटानेसे घटावफल १२ होता है, यही भीय है। इस भीय द्वारा शेष ५२१२ में गुणा कर गुणफलको ६०से भाग देनेसे भागफल १०१२ होता है। इसे खण्डा ८से साथ जोड़नेसे १८१२ हुआ। फिर १८१२ के साथ १५०० जोड़ कर योगफल ३३१८१२ में अष्टाङ्क ७८५१२ घटानेसे शेष २४३२९४ रह जाता है। अब इसमें १००से भाग देने पर भागफल २४३२ हुआ। इसी प्रकार नतिखण्डाकी २४३२ खण्डा और अनुखण्डा २४३२४को आपसमें घटानेसे शेष १२ होता है। अब १२से द्वातीय ३०५४को गुणा करके गुणफल १०० द्वारा भाग करनेसे लब्ध ०५८१८ हुआ। अब इसको जब खण्डा २३०३४के साथ जोड़ते हैं तब योगफल २४३२३८ होता है। इसीका नाम नति है। ३ शृङ्गाव, उत्तार। ४ विनय, विनती। ५ मज्जाता, खाकसारी।

नतिक—दक्षिणके गुलमध्यदखाका दूसरा नाम। इनका बनाया हुआ अक्षर-अल् मोषाफि, म नामक ग्रन्थ मिलता है। १८४८ ईमें इनको मृत्यु हुई।

नतिगे—सुगलोके एक उपाख्य देवता जो भूमिके अधिपति और शस्य, सम्पत्ति तथा पशुपक्षोंके रक्षक माने जाते हैं। किसी समय प्रत्येक घरमें इसकी प्रतिमूर्ति रहती थी और पूजा होती थी।

नतिगे (हि० खी०) लड़कोकी लड़की, नातिन।
नतीजा (फा० पु०) परिणाम, फल। २ हेतु, कारण।
३ प्रतिहिंसा। ४ पुरस्कार, इनाम।

नतु (मं० पृ०) पत्न्या, नहीं तो।

ननै (हिं० पु०) मन्थन्धी, रिजोदार, नातेदार।

नन्य (हिं० स्त्री०) नन देखो।

नन्यौ (हिं० स्त्री०) १ कागज या कपड़े आदिके कई टुकड़ोंको एक साथ मिला कर और धार पार छेद करके मक्की छोरे या पालपीन आदिमें एक हीमें बांधना या फँसाना। २ इस प्रकार एक हीमें नाथे हुए कई कागज आदि जो प्रायः एक ही विषयसे सम्बन्ध रखते हैं, मिला।

नन्यु (सं० पु०) कठकोड़ना नामकी पत्नी।

नय (हिं० स्त्री०) आभूषण विशेष, एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ नाकमें पहनती हैं। यह बहुत कुछ गोचर वालीने मिलता जुलता है और सोने आदिका तार और धातु का बनाया जाता है। इसमें प्रायः मूँजके भाग पन्दर, तुलाक या मोतियोंकी जोड़ी पहनाई रहती है। छोटी गहना नाम बेसर है। हिन्दुधर्ममें नय सोभाग्यका चिह्न समझी जाती है।

नयना (हिं० पु०) १ नासिकाका अग्रभाग, नाकका अग्रभाग। २ नासिकादि, नाकका छेद।

नयना (हिं० स्त्री०) १ किसीके साथ नयनी होना, नाथी जाना। २ छिदा, छेदा जाना।

नयनी (हिं० स्त्री०) १ वह छोटी नय जो नाकमें पहनी जाती है। २ तुलाक। ३ वह छत्ता जो तनधारकी मुठ पर लगा रहता है। नयकी धाकारकी कोई चीज। ४ वह स्त्री जो बैलकी नाकमें पिरोई जाती है।

नद (मं० स्त्री०) १ पूजा करना। २ स्तुति करना, भक्त्योप करना।

नद (सं० पु०) नदति शब्दायते 'पचाद्यच्' इति च्। १ पुंवाचक पुल्लिङ्ग स्वातायच्छिष्य जनप्रवाह, बहुते नदी भयवा एषो नदी जिसका नाम पुंलिङ्गवाचो हो। जो जनप्रवाह पर्वत, ऊँट आदिमें निकल कर खोनेके रूपमें बहुत दूर बह जाता है तथा किसी दूसरे खोत वा समुद्रमें मिलता है, उसको नद कहते हैं। पर्वतीय—पुनर्नाथ, भिच, छय, चरखान, सिन्धु, भैरव, मोघ, दामोदर और दमप्रभ आदि नद हैं।

पप्रुराये नदको संख्या दशकोई मतलाया है। नद सुतो पच्। २ एक श्रविका नाम।

नदयु (मं० पु०) नद शब्दका शब्दे वादुलकात् पय्, न्। हयभङ्गित।

नदन (सं० पु०) शब्द करण, शब्द करना, धावा करण।

नदनटोपति (मं० पु०) नदनटोना पतिः १ तत्। समुद्र सागर।

नदनिमन् (मं० स्त्री०) शब्दात्मान, शब्द करनेवाला।

नदनु (सं० पु०) नदतोति नद-पनुड्, (अगुङ् नदेश्च। वण-शेखर) १ मिथ, वादन। २ सिंघ, गिर। ३ शब्द, धावाज।

नदनुमन् (मं० स्त्री०) नदनुः मिथति इत्य गनुप्, शब्द-युक्त, शब्द करनेवाला।

नदम (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी कपास जो दक्षिण देशमें उत्पन्न होती है।

नदर (मं० स्त्री०) नदस्य चतुर देगादि चम्रादित्वात् १ नद-नद्विहित देगादि, नद या नदीके चान घातमें प्रवेश। नास्ति ठरी भयं यस्य। २ भयगुण, निडर, जिसे किसी प्रकारका भय न हो।

नदराज (मं० पु०) नदानां राजा टच्, समासान्तः। समुद्र, सागर।

नदागत (हिं० स्त्री०) नदारद देखो।

नदारट (फा० स्त्री०) चप्रचुन, गायक, लुम, जो मोझूट न हो।

नदाल (सं० स्त्री०) नद-वाहलकात् धान। भाग्ययुक्त, सोभाग्यवान्, तकदीरवाला।

नदि (सं० पु०) नद सुतो ३। स्तुति, प्रशंसा, तारोफ।

नदिया—बहुदेशका एक जिला। यह पचा० २३' ५१' और २२' ११' उ० तथा देगा० ८८' ८' और ८८' २१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २०८१ वर्गमील है। इसमें पश्चिममें भागोरथो या हुगली नदी, दक्षिणमें २४ परगना, उत्तरमें राजमहल जिला, पूर्वमें पायना और यमोरी तथा उत्तर-पश्चिममें सुर्गदादाद जिला है। पद्मा नदी इस जिलेकी पायना और राजमहलमें अन्तर्ग करती है। जलप्री नदी नदिया और सुर्गदादादके सीमाना देशमें बहती है। नदिया वा नदपोप नामक नगरके नामानुसार इस जिलेका नामकरण हुआ है। अष्टमी

नदीके तीरस्थिते क्षणनगर इसका प्रमाण है।

जिलेमें नदी तो अनेक है, पर वे सभी कछेलो हो गई हैं। केवल वर्षाकालमें बड़ी बड़ी नावें बोझ लाद कर जातो आतो हैं, दूसरे समय ये सूख कर बहुत सड़ीए हो जातो हैं। उस समय इनमें अनेक घर पड़ जाते हैं।

यहां चीता और जङ्गलो वराह बहुत देखे जाते हैं; कभी कभी बाघ भी मजर आता है। लोगोंकी यहां सांपका बड़ा डर रहता है। मकल्लो पकड़ना जिलेका एक प्रधान और पर्यकार व्यवसाय है। वार्षिक छष्टिपात ५० इंच है।

इस जिलेका बहुत प्राचीन इतिहास मिलता है। William the conqueror के समयमें बङ्गालके मेन-वंशीय राजाओंकी राजधानी गौड़से यहां चटा कर लाई गई। ११८८ ई० में अल्तिस राजा लक्षणसेन मुहम्मद-बख्तियार खिलजी नामक प्रसिद्ध लुटेरेसे पदच्युत किये गये। फिर उसके बादसे १५२२ ई० तकका कोई विवरण नहीं मिलता। यहांका वर्त्तमान राजवंश प्राचीन और पवित्र है। बङ्गालके राजा आदिशूर हिन्दुधर्मको पुनर्जीवित करनेके लिये कान्यकुब्जमें पाँच ब्राह्मण लाये थे। उनमेंसे एकका नाम भद्रनारायण था और वे ही इस वंशके आदिपुरुष समझे जाते हैं। यहांके महाराज ब्राह्मण वंशके हैं। इन्हें लक्षणसेनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। १६वीं शताब्दीके अन्तमें इस वंशके राजानी सुगल-सेनापति मानसिंहकी योगीश्वरकी राजा प्रतापादित्यके विरुद्ध खासो सहायता पड़वाई थी। इस प्रत्युपाकरणमें उन्हें जहाँगीरकी ओरसे १४ परगने मिले थे। १८वीं शताब्दीमें यह वंश अन्तही एक चरम सीमा तक पहुँच गया था। इस वंशमें जितने राजा हो गये हैं, उनमेंसे कण्ठचन्द्रने बहुत ख्याति लाभ की थी। उन्होंने पलाशी-युद्धमें अंगरेजोंका तन मन धनसे साय दिया था। इस कारण क्लाइवने उन्हें राजेन्द्र बहादुरकी उपाधि और पलाशीयुद्धमें व्यवहृत १२ बन्दूकों दो दीं। कुछ बन्दूक बाल भी महाराजके भवनमें देखी जातो है। कण्ठचन्द्र संस्कृत साहित्यके परम हितैषी और पण्डितके प्रतिपालक थे। वे धार्मिक

और विद्वानोंको निष्कर भूमि और पधर्षित किया करते थे। उनके वंशधर साहित्यानुशासो और धार्मिक समझे जाते हैं। वर्गीय शासनपरिपक्वके वर्त्तमान दमस्त महाराज चौथीशचन्द्र हैं।

इस जिलेमें ३३६२ और ३४११ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या लगभग १६०४८१ जिनमेंसे सैकड़ों पोछे ४० हिन्दू हैं। आर्य और ऐमन्तिक धाम यहांका प्रधान उत्पन्न द्रव्य है। विस्तृत विवरण नवद्वीप शब्दमें देखो। नदी (वं० सत्री०) नदतोति नद-अश् ततो डोप। स्त्रीवाचक जलप्रवाह। जिन सब जल-प्रवाहोंकी पश्चिमात्रा-देवी स्त्री हैं, उन्हें नदी और जिनके पश्चिमात्रा देवता पुरुष हैं, उन्हें नद कहते हैं। जिसका जल-प्रवाह कमसे कम ८०० धनु है, उसीको नदी कहते हैं।

पर्वत—सरित्, तरङ्गिणी, शैबलिनी, तटिनी, इदिनी, धुनी, स्त्रोतस्त्रती, होपवती, स्रवन्ती, निम्नगा, मयगा, पापगा, झादिनी, धुनि, स्त्रोतस्त्रिनी, स्त्रोतवहा, सागर-गामिनी, निर्भरिणी, सरस्वती, समुद्रा, क्षुल्लहा, कूलवती, शैवालिनो, सिन्धु, समुद्रकात्मा, सागरगा, क्षणा, मोघावती, वाहिनी।

अथवा पदार्थोंको नाई माध्याकर्षणके बलवर्ती हो कर जनको भी नीचेको ओर गमन करनेकी प्रवृत्ति है। इसी प्रवृत्तिवश जलप्रवाह नदीके रूपमें गिरा जाता है। जिस प्रकार किसी क्षमनिष्ठ समतलके ऊर्ध्व प्रान्तर एक वस्तुसंस्थापन करनेसे वह निम्न-प्रान्तमें जा पड़ता है, उसी प्रकार जलविन्दु भी क्षम-निम्न भूमिके ऊर्ध्व प्रान्तसे हो कर जब चलने लगता है, तब वह निम्नतम प्रदेशमें जा पड़ता है। मध्य, प्रस्रवण और ऊँचसे घबघा तुपारके गहनेसे नदीका जल संचरीत होता है। उत्पत्ति-स्थानके निकट नदी बहुत सड़ीए रहती है, पीछे वह जितनी ही नीचेकी ओर जातो है, उतना ही अनेकों प्रस्रवण और उपनदियोंके लक्षसे उसका कलेवर बढ़ता जाता है। नदी जिस राह हो कर बहती है, उस राहकी उसकी गति और उस प्रवाहसे जो गन्ध-बनता है, उसे उसका गर्भ तथा जिस प्रदेश हो कर नदीका जल बहता है, उस गर्भ-सहित-सभी स्थानोंको अववाहिका कहते हैं। अववाहिका क्रमशः ऊँची हो कर एक घीघमें बस जातो

है। इस सोधको जल-बाध कहते हैं। भववाहिकाका प्रायतन और जलबाधकी उत्पत्ति देख कर नदीका परिणाम भवधारित होता है। वर्षाके भीतर भिन्न भिन्न समयमें नदीका जल घटता बढ़ता है। जिन सब गाति-गोतीण देगोंके पर्वतशिखर पर सब दिन तुषार नष्ट रहता, यहाँ नदीकी वृद्धि केवल वृष्टिके ऊपर निर्भर करती है। वृष्टिका जल एक ही बार नदीमें आ नहीं गिरता, कमशः जम कर वा चरित हो कर धीरे धीरे उसमें गिरता है। इसी कारण उन सब देगोंको नदियाँका परिमाण सब दिन एक सा रहता है और वर्षा जाने पर भी दूर स्थानोंसे जल आ कर नदीको पुष्ट रखता है। किन्तु यह प्रक्रिया देशको उष्णता, वाष्पोद्गमकी शक्तता, वायुकी चार्द्रता और भूमिकी सच्छिद्रताके ऊपर निर्भर है। ग्रीष्मप्रधान देगोंमें वर्षाके समय नदीकी वृद्धि और शीतलके समय उसका घाट होता है। वह वृद्धि उत्पत्ति-स्थानके निकट सबसे पहले मालूम पड़ती है। लेकिन नदीसे दूरवर्षी स्थानोंमें तथा वाष्पोद्गमप्रयुक्त निम्नस्थ देगोंमें यह वृद्धि देरोंसे मालूम पड़ती है। इसी प्रकार बंशाक्ष सामनें बाविसिनियाके निशट नीज नदीकी वृद्धि होती है। किन्तु ज्यैष्ठ्य मासके शेष हुए बिना यह वृद्धि कायरी नगरके निकट प्रसृत नहीं होती। प्राचीन लोग इस बहुत ध्यावारको देख कर विस्मित होते थे, और इसे देवकार्य समझते थे। प्राधुनिक देग-पर्याटकोंने पन्थान्थ अनेक नदियोंमें इस प्रकारका ध्यावार देखा है। नोलकी वृद्धिकी चरम सीमा ४० फुट है और इसमें बाढ़ आ जाने पर २१०० वर्गमील तकको भूमि जलमग्न हो जाती है। अमेरिकाकी चरिनकी नामक नदीका जल-परिमाण १०० से १५ फुट तक है, लेकिन जब इसमें बाढ़ आती है, तब यह ४५००० वर्गमील भूमि जल-प्रापित कर देती है। ब्रह्मपुत्रको बाढ़से उत्तर भामामका सभी स्थान दस फुट नीचे जलमें चला जाता है। किन्तु अट्टेलियाको नदियोंको बाढ़ इन सबसे कहीं बड़ी पड़ती है। यहाँकी हकमशरी नामक नदीका जल परिमाण १०० फुट तक बढ़ता है। शीत कालमें वर्षाके मसनेसे प्रत्येको और भी वृद्धि होती है, किन्तु इन समय वर्षा भी धीने लगती है। इसीसे द्रवतुषार और वृष्टि द्वारा कितना जल बढ़ा, इसका निर्णय नहीं

किया जा सकता। किन्तु गङ्गा, ब्रह्मपुत्र आदि कितनी नदियोंमें इस कारण कितना जल बढ़ता है वह मनुष्यमें मासूम हो जाता है, क्योंकि वर्षा पारधाते बाढ़में उन सब स्थानोंमें तुषारका गमनो शक होता है। जिन सब स्थानोंमें वर्षाके समय तुषारके मसनेसे जलको वृद्धि नहीं होती, वहाँ वर्षा भरने दो बार बाढ़ देखनेमें आती है। टाइग्रिस, इरफ्रेटिस और तिसिसिपस इस प्रकारको घटना होती है। इन सब नदियोंमें वर्षाके मसनेसे जो बाढ़ आती है, वही उनको बड़ी बाढ़ समझी जाती है।

नदी द्वारा धनिक प्रकारको नैसर्गिक क्षिण सम्पन्न होती है। नदीके जलमें पंकके जम जानेसे वह जमीनमें बहुत फायदा पहुँचाती है। नदी-दूरवर्षी पार्वतोप प्रदेशोंकी महीको अपने साथ बहा कर समतलके ऊपर छोड़ देती है जिससे जमीन बहुत उर्वरा हो जाता है। नदीकी गति पनवरत परिवर्तित होनेसे पृथ्वीका ऊपरी भाग भी निरन्तर परिवर्तित होता है। सभी नदियाँ देगोंको मेल अपने साथ बहा कर समुद्रमें डाल देती हैं। नदीके रहनेमें वाणिज्यकार्यको प्रयोग सुविधा हो गई है। अधिकांश नदियाँ समुद्रमें गिरती हैं, बहुत थोड़ी नदियाँ ऐसी हैं जो देशाभ्यन्तरस्थ जड़ोंमें मिल गई हैं।

देशके नाबिको और छो नदीकी गति होती है और अधिकांश नदी पर्वत आदि उच्चस्थानसे निकलती हैं, इन कारण थोड़ी दूर तक ता उनको गति बहुत प्रखर रहती है, लेकिन थोड़े समयतन भूमिमें आ कर मन्द हो जाती है। देशको महीको प्रक्षालितके ऊपर नदीकी गति बहुत कुछ निर्भर करती है। पनिक समय भूमि-सम्पन्न हवा नदीकी गति परिवर्तित न पुरा करती है, और बहुतसो नदियाँ प्राचीन गड्ढे आने, मही आदि द्वारा भर जानेसे वे मरे गड्ढे हो कर रहती हैं।

जिन नदोंमें नदी नहीं चलती, ऐसी नदी जब दो जमीनदारीके मध्य पड़ती है, तब उस नदीमें पार्वतके प्रसृत दोनो जमीनदारीका बराबर बराबर संचर रहता है। किन्तु उस नदीके दोनो पार्वत यदि एक ही जमीनदारीको सम्पत्ति हो, तो सम्पूर्ण नदी उनी जमीनदारी सम्पत्ति मानी जायगी। इसी नियमके अनुसार नदी-गर्भका विभाग हुआ करता है। जिन सब नदियोंमें नाबिक

जातो भातो हैं, वे सब राजाको सम्पत्ति हैं। जन साधारण केवल उन नदियोंका जल काममें ला सकते और मकली पकड़ सकते हैं। नाव चलाना और मकली पकड़ना इन दो सत्वोंमें नाव चलानेका सत्व ही प्रधान है। धोवर नाविकको रास्ता देनेमें बाध्य है।

नदीका जल दूषित वा अपरिष्कृत करना किमोका अधिकार नहीं है। यदि कोई ऐसा करे, तो तोरस्थित ग्रामके मनुष्य क्षतिपूर्णके लिये उस पर अभियोग ला सकता है। किन्तु यदि वे सब मनुष्य २० वर्ष तक बिना किसी आपत्तिके उस अपकारको सहाय्य कर लें, तो उन्हें अभियोग करनेकी क्षमता नहीं रहती।

भूमण्डलके प्रधान नदियोंके नाम और देर्घ्य इस प्रकार हैं—

एशिया।

नाम	देर्घ्य।
इन्डसि	३३२२ मील
इय'सि-किय'	३३१४ "
लेना	२७६२ "
आमुर	२७२८ "
ओबी	२६७० "
हो'ही	२६४४ "
सिन्ध	२२५६ "
मछामुत्र	१८०० "
गङ्गा	१८३३ "

यूरोप।

वल्गा	२७६२ "
दानियुब	१७२२ "
नीपर	१२४३ "
डान	११०४ "
ड डना	१०४१ "

अफ्रीका।

नील	२०७२ "
आम्बेजी	२५७८ "

अमेरिका।

मिसिसिपि	३७१६ "
यानिगन	३५४५ "

मेक्सीको	२४४० मील
लाप्लेटा	२२१० "
राइनेमोडेल्गुनट	२१३४ "
सेण्ट लारेंस	२०७२ "

वैद्यकके मतसे नदीका जल स्वच्छ, लघु, दीपन, पाचन, रुचिकर, दृष्ट्यानायक, पथ्य, मधुर और कुछ उष्ण होता है। (रामनिर्णय)

पुराणादिमें नदीके असंख्य नाम देखनेमें भाते हैं। किन्तु उन सब नदियोंमेंसे अधिकांशके प्राधुनिक नाम वा अवस्थान जाननेका कोई उपाय नहीं है। इनमेंसे कितनी ऐसी हैं जो पूर्व नामसे ही चली आ रही है और कुछके नाम बदल गये हैं। कितनी नदियोंको गतिमें अधिक परिवर्तन नहीं हुआ और कितनीके गर्भमें विलकुल परिवर्तन हो गया है। पुराणके सिवा वैद्यक चरकादि ग्रन्थोंमें भी अनेक नदियोंके नाम पाये जाते हैं।

नदी शब्दके वैदिक पर्याय ३७ हैं, यथा—प्रवनि, यज्ञ, ख, सोर, स्तोत्र, एणौ, धुनि, रुजान, धवण, स्वादोषर्ष, रोधवका, हरित्, सरित्, अयव, नभन, वधू, हिरण्यवर्ष, रोहित्, समुत, अर्ष, सिन्धु, कुली, सर्वर्ष, इरावती, पावतो, स्वन्तो, कर्षस्वती, पयस्वती, सरस्वती, तरस्वती, वरस्वती, रोधस्वती, भास्वती, अजिर, माछ और नदी। (वेदनिर्णय)

पुराणादि अर्णित प्रत्येक नदीका नाम विस्तार हो जानेके भयसे नहीं दिया गया। केवल प्रधान प्रधान नदियोंके नाम दिये जाते हैं—गङ्गा, सिन्धु, सरस्वती, शतद्रु, विवाथा, चन्द्रभागा, यमुना, इरावती, देविका, कुङ्कु, गोमती, धृतपापा, बाहुदा, ह्यवती, कोशिकी, निचोरा, गण्डकी, चक्षुस्मती, सदानीरा, लोहित्य, ये सब नदियाँ हिमालय पर्वतके पाददेशसे निकली हैं। वेदस्मृति, वेदवती, सिन्धु, अपर्णा, चन्द्रना, धृतपापा, चमस्वती, विटिशा, वेदवती, जयन्तो ये सब नदियाँ पारिपात पर्वतसे उत्पन्न हुई हैं। शोणा, ज्योतिरथा, नर्मदा, सुरसा, मन्दाकिनी, दशाणी, चित्रकूटा, तमसा, पिप्पला, करतोया, दिशाचिका, चित्रोत्पला, विशाला, मञ्ज सा, बालुका, वाहिनी, शक्तिमती, विरजा, पद्मिनी इन सब नदियोंका उत्पत्ति-स्थान अज्ञप्यते है। मणि-

आला, शभा, तागे, पयोणो, गोघोटा, धणा, पागा, चैतरणी, येदो, पाना, कुसुदतो, तोया, दुर्गा, चन्वा चोर गिरा ये सब नदियाँ विन्ध्य पर्वतके पाददेगमे निकली हैं। गोदावरी, भीमरयो, कल्या, वंणा, वञ्ज ला, तुङ्गभद्रा, सुपयोगा, ब्रह्माकाशरो, कृतमाना, ताम्बपर्णी, पुष्यावती चोर उत्पन्नावती ये सब नदियाँ मलय पर्वतमे निःसृत हुई हैं। विदोसा, ऋषिकुन्धा, बहुरा, त्रिविटा, लोक्मन्निनी, वंशधारा, महेंद्रनया, ऋषिका, चतु-मती, मन्द्यामिनी चोर पञ्जागिनी ये सब नदियाँ शुक्ति-मत् पर्वतमे उत्पन्न हुई हैं। कुन पर्वतमे उत्पन्न होनेके कारण ये सब प्रधान नदियोंमें गिनी जाती हैं। इनके सिवा चोर भी अनेक नदी हैं, लेकिन वे बहुत छोटी हैं।

(बहाधुराण)

कालिकापुराणमें ७ प्रधान नदियोंका उत्पत्ति-विवरण इस प्रकार लिखा है—

ब्रह्मा, विष्णु चोर महादेवके कर्तव्यविगलित वसिष्ठ चोर परमेश्वरकी विवाहबान्धन स्नानोपलक्ष्य चोर शक्तिजल पक्षमे मानस-पर्वत-कन्दर पर गिरता है, पीछे वह जल फिर सात भागोंमें विभक्त हो कर मानसपर्वत-से हिमालय पर्वतकी गुहा, सानु चोर सरोवरमें पृथक् पृथक् भावसे गिरा करता है। इनमेंसे जो जल देव-भोग्य गिरा सरोवरमें गिरता है, उसोसे गिरा नदीकी उत्पत्ति हुई है। विष्णु गिरा चोर इस नदीकी भू-मण्डल पर भिजते हैं। जो जल महाकीयो प्रपातमे गिरता है, उसोसे कौगिकी नदीकी उत्पत्ति है। विष्णामिन् इस नदीकी दृष्टो पर अवतारित करते हैं। जो जल उमा-देवके महाकाल सरोवरमें गिरता है, उसमे काशरो नदी निकली, हिमालय पर्वतके दक्षिणे बगल शिवदेव समोपमे जो जल गिरता है वह जल 'गोमती' नामक शैलजलसे निकलनेके कारण गोमती कहलाया। मेनाक जो सानुसे भूमिष्ठ हुई थी, उस स्थानसे जो जल निकला था, उसका नाम देविका है। हंसावतीके समोपवर्ती गुहासे जो जल गिरता है उसमे सरयू चोर जो जल भाण्ड्य समके निकट हिमालय पर्वतके दक्षिण पाख-वर्ती गुहासे शरावतमे गिरता है, उसमे शरावती नदीका उत्पत्ति हुई है। दक्षिणभागमामिनी ये समो नदियाँ

गङ्गाकी नदें मुख्यवदा है। परमेश्वर चोर वसिष्ठका विवाहवस्तु स्नान-जल हो इन सात नदियोंको उत्पत्ति-का कारण है। ये सब नदियाँ विरकास तक रहेंगी।

(कालिकापु० २४ अ०)

इनके सिवा कालिकापुराणके ८० अध्यायमें, प्राण्य-पुराणमें चोर ब्रह्माण्डपुराणमें नदीका विवरण मिलता है। समो पुराणोंमें छोटी बहुत नदी-प्रसङ्ग है।

२ कन्दोविगीय, एक कन्दका नाम। इससे प्रतिपादमें १४ पक्षर रहते हैं, सात पक्षोंमें यति होता है। इन कन्दके प्रथममे से कर पठ, नवम, दशम चोर द्वादश वर्ष लघु चोर शेष समी वर्ष सुब है।

नदीकदम्ब (सं० पु०) नदीनां कदम्बं समूहो यतः। १ महाश्याविका, बड़ी गोरखमुण्डी। (की०) नदीनां कदम्बं ६-तत्। नदीसमूह।

नदीकान्त (सं० पु०) नदीनां कान्तः ६-तत्। समुद्र, सागर। नदी कान्ता यस्य। २ विजय हय। ३ मिन्धु-वारक हय, मिन्धुवार नामका पक्ष। ४ जम्बुकहय, जामुनका पक्ष। ५ काकजलान्ता। ६ लताविशीय, एक लताका नाम। ७ जनयैतम, जनयैत।

नदीकान्ता (सं० श्री०) १ जम्बुकहय, जामुनका पक्ष। २ काकजलान्ता। ३ कृष्णकारयैतक, छोटा बैलक। नदीकाग्रप (सं० पु०) शाक्यमुनिसे समयका एक मनुष्य। नदीकुठिरक (सं० पु०) नन्दोत्पत्ति।

नदीकूल (सं० श्री०) नद्या कूलं। तीर, तट, किनारा। नदीकूलमिय (सं० पु०) नदी कूलं प्रियं चमिमतं यस्य। जनयैतम, जनयैत। यह विधेयतः नदी किनारे लगता है, इसीमे हमका यह नाम पड़ा।

नदीकूलम्य (सं० त्रि०) नदीकूलमे तिष्ठति स्या-क। तटका, किनारेका।

नदीकूलजल—नेपाळी बोहोडा एक तीर्थ। कहते हैं, कि एक विशिष्ट योगमें यहाँ स्नान करनेमे श्री चोर ऐश्वर्यकी प्राप्ति तथा अन्न भोजन प्राप्त होता है।

नदीगर्भ (सं० पु०) नद्याः गर्भः ६-तत्। नदीका गर्भ, नदीके दोनों किनारोंके बीचका स्थान।

नदीगायन—मध्यभारतके पञ्चगवत दत्तियाराज्यका एक नगर।

नदीगूलर (हि० पु०) लिसोड़ा ।

नदीज (म० क्लो०) नद्या जायते जन-ड । १ स्त्रीतोष्ठम, काला सुरमा । २ सैन्धव लवण, सेंधा नमक । (पु०) ३ यजुर्न वृक्ष । ४ विटमाषिक । ५ यावनाल । ६ हिलाल वृक्ष । ७ नदीनिष्पाव, जोरो नामका धान । ८ खजूरवृक्ष, खजूरका पेड़ । ९ नृपतिविशेष, एक राजाका नाम । १० भौष्म, ये गङ्गाके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, इस कारण इनका नाम नदीज पड़ा । (त्रि०) ११ नदीजातमात्र, जो नदीसे उत्पन्न हुआ हो ।

नदीजल (स० क्लो०) नदीका पानी ।

नदीजा (स० स्त्री०) नदीजा-टप । १ अग्निमन्त्रवृक्ष, चरणोका पेड़ । २ जलवृत्ति, सीप ।

नदीजामुन (हि० स्त्री०) छोटी जामुन ।

नदीतर (म० त्रि०) नदी-तट-प्रश्च । नदीके दूसरे किनारेका ।

नदीतरस्थान (स० क्लो०) नद्याः तरस्थानं अवतरणस्थलं । नदीसे अवतरण स्थान, वहाँ स्थान जहाँसे नदी पार की जाय, घाट ।

नदीदत्त (स० पु०) बुद्धदेवका एक नाम ।

नदीदोह (स० पु०) नदीतरयाथे' दोहः शकपाथि'वादि-त्वात् कर्मधारयः । वहाँ कार जो नदी पार करनेके बदलेमें दिया जाय, नदी पार होनेका मरचल ।

नदीधर (स० पु०) धरतीति धृ-प्रच, नद्याः धरः । गङ्गा-धर शिव, महादेव ।

नदीन (स० पु०) नदीनां नद्यः पतिः इ-तत् । १ समुद्र, सागर । २ वर्षण देवता । ३ वर्षणवृक्ष, बन्वा नामक जंगली पेड़ जो पलायकों तरङ्गका होता है । ४ अनेक-वर्षीय सङ्घदेवका पुत्र । (हरिवंश २५।४) (त्रि०) न-दीन इति सङ्क्षेपेति-समासः । ५ दक्षिण, जो दक्षिण हो ।

नदीनिष्पाव (स० पु०) नदीसम्मुखजातो निष्पावः । धान्यमेद, जोरो नामका धान । पर्याय—कटुनिष्पाव, कर्तुर, नदीज । इसका गुण—तिक्त, कटु, अस्त्रप्रद, रुच, वातन, कफप्रद, रुच, कपायः और विषदोषनाशक है । नदीपङ्क (स० पु० क्लो०) नद्याः पङ्कः इ-तत् । १ नदीकी कोवड़ । २ नदीतीरस्थित कर्दमयुक्त स्थान, नदी किनारेका पङ्कमय स्थान ।

नदीपति (स० पु०) नदीनां पतिः । १ समुद्र, सागर । २ वर्षण ।

नदीपुर (स० पु०) नद्याः पूः प्रच-समाधानात् । वह नदी जो बाढ़के जलसे तटस्थित ग्रामोंकी भ्रूषित करती है ।

नदीभसातक (स० पु०) जलके किनारे होनेवाला एक प्रकारका भिजावा । इनके पत्ते गूमाके पत्तोंके समान होते हैं और फल लान-रंगका होता है । इसका गुण कटु, पा, कषौला, मधुर, ठंडा, आड़ी, वातकारक और कफपित्त, रक्तपित्त तथा व्रणनाशक है, नदीमिलाना । नदीबड़ल (स० पु०) मेषशृङ्गी ।

नदीमध (स० पु०) नद्यां भवति भू-प्रच । १ सैन्धव लवण, सेंधा नमक । २ सुदृगङ्ग, छोटा शङ्ख । (त्रि०) ३ नदीजात मास, जो नदीमें उत्पन्न हुआ हो ।

नदीमाष्टक (स० त्रि०) नदीमातिव पोषिका यस्य, ततो वाप । नद्यम्बुसम्पन्न मोहिषाखित देव, वह देव जहाँ की खेतों वारोंका सारा काम केवल नदीके जलसे होता हो और जहाँ वर्षोंके जलकी कोई आवश्यकता न हो, जैसे मित्र-देव ।

नदीमाषक (स० पु०) मानकन्द, मानकचू ।

नदीमुख (स० क्लो०) नदी मुखमिव निःसरणमार्गः । वहाँ स्थान जहाँ समुद्रमें नदी गिरती हो, नदीका मुहाना । २ नदीका जल निकालनेका द्वार ।

नदीया (स० स्त्री०) अग्निमन्त्र, चरणोका पेड़ ।

नदीवङ्क (स० पु०) नद्याः वङ्कः । बङ्गूर, नदीका टेढ़ापन । नदीवट (स० पु०) नदीसमीपजातो वटः । वटवृक्ष, वट या बड़का पेड़ ।

नदीश (स० पु०) समुद्र, सागर ।

नदीष्ण (स० त्रि०) नद्यां स्वातोति स्वा-ज्ञ, ततो पत्नं । (निवर्ध्यां स्वातोः कौशिके । वा ८।१८८) १ नदीमें पच-गाहनदक्ष, जो नदीमें स्नान करनेमें खूब चालाक हो । २ नदीवृक्ष, जो नदीसे जानकार हो ।

नदीभज (स० पु०) नद्या भजते इव । अर्जुन वृक्ष ।

नदीया (स० स्त्री०) नद्यां भवा टक् । (न्यादिप्रो ६६ । वा ४.२।८३) ततो ध्रुवोदरादित्यात् ऋक्षः । नादियौ, भूमिजम्बू, छोटी जामुन ।

नदीयौ (स० स्त्री०) १ जलवेतस, जलवेत । २ भूमि-जम्बू, छोटी जामुन ।

नदयः (नदेयः)—एक तान्त्रमयो शिवमूर्ति । तन्त्रोदके किमो मनुष्यने जमोन खोदने समय इम मूर्ति की पाया था । शिवके मिर पर जटा है और हाथ चार हैं । एक हाथमें डमरु, दूसरेमें माप और तीसरेमें चम्रि है । वे एक पतिन राक्षसके ऊपर नाच कर रहे हैं । मूर्ति की ऊँचाई ३ फुट ७ १/२ इंच और चौड़ाई ३ फुट ३ इंच है । किमो समय तन्त्रोदके एक शिव-मन्दिर था । मानस पहता है, कि यह प्रतिमा उसी मन्दिरकी होगी । कब और क्यों यह मूर्ति जमीनमें गाड़ो गई थी, इसका कुछ पता नहीं है । यह तीन फुट घालूके नीचे पाई गई थी । उक्त स्थानमें कलकत्ता महावने हमे खरोद कर मन्त्राजकी चित्रगानिकामें रख दिया है ।

नदीना (हि० पु०) मिष्टीकी छोटी नदी ।

नह (सं० त्रि०) नष्ट इति नहः । १ वह, बँधा हुआ, मड़ा हुआ, मछा हुआ ।

नहि (सं० स्त्री०) नह-क्ति । बन्धन, रस्सी, नाथ ।

नही (सं० स्त्री०) नष्टतेऽनया नह-इत्, ततो डीप् । चर्म निर्मित रज्जु, चमड़ेकी डोरी, ताँत ।

नद्यम् (सं० स्त्री०) जगन्नाथन, काला सुरमा ।

नद्यादि (सं० पु०) नदी चाटियस् । पाणिनि उक्त ढक् प्रत्यय-निमित्त शब्दगण । यथा—नदी, मही, वाराणसी, गायत्री, कौगम्भी, कागफरो, खादिरो, पूर्वनगरो, पाठः, माया, ग्राहवा, दार्भा, सेतकी । (पाणिनि ४।२।८३)

नद्याम्ब (सं० पु०) नद्या पाम्ब इव । समलिला वृक्षः कीकुष्माका पौधा । वैद्यकमें यह दाहो, दीपन और शफ-वातघ्न माना गया है ।

नद्यामर्त्त (सं० पु०) मस्यभिद, एक प्रकारको मछली । नद्यामर्त्तक (सं० पु०) यात्राकानोन ज्योतिषोक्त योगभेद-फलित ज्योतिषमें यात्राके लिये एक शुभ योग । यह योग हम समय होता है, जब बुध पणनी राशि पर हो वृहस्पति या शुक्र लग्नमें हो यद्यपि मङ्गल उच्चस्थित हो और गति कुम्भ-राशिमें हो । इस योगमें यात्रा करने में हमकी सब कामनाएं पूरी होती हैं । यात्रा जिस प्रकार घासकी जला देतो है उसी प्रकार उसका गन्तु विनष्ट होता है । हमे नद्यामर्त्तक भी कहते हैं ।

नद्यागुष्ट (सं० त्रि०) नद्या उगुष्टः । नदी द्वारा त्वक्

भ्यान, वह स्थान जो नदीमें डूब जानेसे निकल पाया हो, चर, गंगवरार । यह चर जिसको जमीनमें ला मिलता है, उसीका वह चर होता है ।

नघना (हि० क्रि०) १ रस्मी या तन्त्रके द्वारा धर्म छोटे पादिका उस यन्त्रके साथ जुड़ना या बँधना जिसे रस्में खोंच कर ले जाना हो, लुप्तता । २ सम्पन्न होना, जुड़ना । ३ किमो कार्यका अनुष्ठित होना, कामका ठगना ।

नघान (हि० पु०) किमो जलाशयमें जब ऊँचो भूमि पर जन चढ़ाना होता है, तब दो या तीन गहरे बनाने होते हैं । पहले एक गहरेके जलसे घास घासकी जमीन लीच कर फिर उसे दूसरे गहरेमें ले जाते हैं और तब वहाँसे तीसरे गहरेमें ला कर जमीन सींचते हैं । इनमें सबसे नीचेके गहरेको नघाय कहते हैं ।

नघिया—उत्तर पश्चिम प्रदेशके तथा बिहारके स्थानोंकी एक शैली ।

नधी (सं० स्त्री०) चर्मबन्धनी, चमड़ेकी डोरी, ताँत ।

ननन्द (सं० स्त्री०) न-नन्दति सेवयापि न तुष्यति इति नन्द-इत् । (नञि च नन्ते । ण, २।८८) भक्त-भगिनी, पति-की बहन, ननद । न-नन्द पर्याय-वे किसीसे परिश्रम नहीं करते, इसीसे इसका नाम ननन्द पड़ा है । पर्याय—ननान्द, नन्दिनी, नन्दा, पतिलक्ष । (गार्धर०)

ननद (हि० स्त्री०) पतिकी बहन ।

ननदीर् (हि० पु०) पतिका बहनोई, ननदका पति ।

ननमार (हि० स्त्री०) ननिहाल, नानाका घर ।

नना (सं० स्त्री०) न नमति नमः-इ, उच्चसुपेति समासः, ततो टाप् । १ वाक्य । २ माता । ३ दुहिता, कन्या, लड़की । माता और दुहिता ये दोनों ननोभूत होती हैं, इस कारण इनका नाम नना रखा गया है । माता मत्तानकी स्नान पिलानेके लिये और दुहिता घट्टपाके लिये नत या मन्नीभूत होती है ।

ननाग (सं० स्त्री०) न-नन्द-इत्, प्रपोदरादित्यात् दीप य । ननद, ननद ।

ननिगेरि—टलेमीके भारत-वृत्तान्तमें इस नामका उल्लेख है । हमने जाना जाता है, कि कुमारिका पनारीय और सिंदलके सम्पर्कमें एक द्वीपको ले कर इसका स्थान निर्दिष्ट हुआ है ।

ननिगेन- तलेमीके भारत-भूगोलमें उल्लिखित गङ्गासामरके तीरवर्त्ती एक बहुत प्राचीन नगर।

ननियामसुर (हि० पु०) स्त्री या पतिका नाना।

ननियासास (हि० स्त्री०) स्त्री या पतिकी नानी।

ननिहारो (हि० स्त्री०) एक प्रकारको ईंट।

ननिहाल (हि० पु०) नानाका घर, ननमार।

ननु (सं० अथ) १ प्रश्न। २ अवधान। ३ अनुज्ञा। ४ विनय। ५ आत्मन्य। ६ अनुमय। ७ विनिग्रह। ८ पर-हृति। ९ अधिकार। १० सम्भ्रम। ११ आचेष। १२ प्रत्युक्ति। १३ वाक्पारम्भ।

ननुच (सं० अथ) विरोध उक्ति, लट्ठी मत।

ननोई (हि० पु०) एक प्रकारका जंगली धान। यह बिना जोते भीए वर्षाकालमें जलानदीमें भापसे भाप होता है, पसहो, तिक्त।

नन्द (सं० त्रि०) नम प्राप्तिनात् कर्मणि लृ। १ नमनीय, आदरणीय पूजनीय। २ भुक्तानि योग्य, जो कुछ भुक्तया जा सके।

नन्द (सं० पु०) नन्दतीति नन्द-प्रचादयत्। १ हर्ष, पानन्द, खुशी। २ णैकक परमेश्वर। परमेश्वर मन्दिनानन्द स्वरूप है, इसीसे उनका नाम नन्द पड़ा है। नन्दति से चर्षणात् अथ। ३ भक्त, मैत्रिक। पानो पढ़ने पर यह बहुत खुश होता है, इसीसे इसका नन्द नाम रखा गया है।

४ कुमाराशुचर, कात्तिकी एक अनुचरका नाम। ५ वेष-विशेष। महाभन्द, नन्द, विजय और जय ये चार प्रकारकी वीणा उत्तम हैं। इनमेंसे जो वीणा शराह उगमो की होती है, उसीका नाम नन्द है। ६ नृदङ्गविशेष, एक प्रकारका नृदङ्ग। ७ यक्षेश्वरका अनुचरविशेष, भागवतके अनुसार परमात्मकी एक अनुचरका नाम। ८ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। ९ मदिरागर्भजात वासुदेवका पुत्रविशेष, वसुके एक पुत्रका नाम जिसको उत्पत्ति मदिराके गर्भमें मानो मानो है। १० क्रोध हीपका वर्ष पर्वतविशेष, क्रोधहीपके एक वर्षपर्वतका नाम।

११ खनामख्यात दत्तक-भौमाभा-ग्रन्थके प्रणेता। १२ गोपभेद, गोकुलके गोपोंके मुखिया। १३ पुराणानुसार नो निधियोंमेंसे एक। १४ एक नागका नाम। १५ विष्णु।

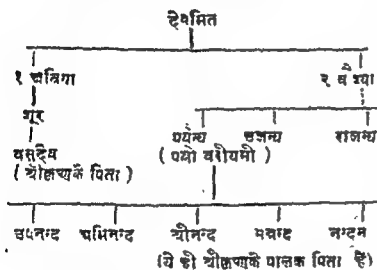
१६ एक रागका नाम। इसे कोई कोई मानकीय रागका

पुत्र मानते हैं। १७ पिङ्गलमें ढगणके दूसरे मैदका नाम। इसमें एक गुरु और एक लघु होता है। कोई कोई इसे ताल और ग्वाल भी कहते हैं।

नन्द—यति प्राचीनकालमें वर्त्तमान मथुरा जिलेके घन्सर्गत यमुनाके उस पार 'गोकुल' नामका एक नगर था; नन्द उसी गोकुलनगरके गोपोंके अधिपति थे। इनको पत्नीका नाम था यमोदा। उस समय मथुरामें देवकीके गर्भमें भगवान् श्रीकृष्णने जन्मग्रहण किया। पिता वसुदेव कंसके हाथसे शिशु कृष्णकी रक्षा करनेके लिए उसी रातको सद्यज्ञात शिशुकी नन्दके घर ले गये। गोवाधिपति नन्दके बहुतसो मायें थीं, शिशु कृष्ण उन्हें धनुषोंका रक्षणालक्ष्य करते थे। इधर कंसने श्रीकृष्णके जन्म पोर शुभ-हस्तात्मकी जान कर उनसे बंधके लिए गोकुलनगरमें अपने कृष्णेशी घर भेजने लगे। ऐंगिक-प्रभासम्बन्ध श्रीकृष्ण मायावी चरोंकी चमत्कृत कर ले गये। परन्तु गोपराज नन्द कंसके उपद्रवीसे डर गये। उन्होंने शालकको उपद्रुत स्थानमें रखना उचित न समझ कर हन्दावन भेज दिया और आप भी वहीं जा कर रहने लगे। इतने स्थानमें श्रीकृष्णने अपना बाल्यकाल प्रति-वाहित किया था। कृष्णको उम्र जिस समय बारह वर्षकी थी, उस समय नन्द उनकी ले कर देवोमन्दिरमें पूजा करने गये थे। वहाँ पर रातको एक सर्पने उनकी पैरमें घोट की थी। श्रीकृष्णने आकर जब सर्पके फण पर लात मारी, तब उसने मनुष्याकार धारण कर लिया। यह देख कर सबकी सायस डूबा। एक दिन नन्द कंसके साथ यक्षमें निमग्नित हो, कृष्णको साथ ले मथुरा गये थे। वहाँ श्रीकृष्णने अपने मातुल कंसका बंध कर सिंहासन अधिकार कर लिया। इसके बाद श्रीकृष्ण फिर कभी हन्दावन नहीं मोटे। दुःखदस्ता नन्द उन्हें वहाँ छोड़ कर अपने घर गये। किन्तु श्रीकृष्णके हन्दावन-त्यागके साथ साथ नन्दकी जीवनी भी अन्धकारमें डूब गई। इसके बहुत समय पछे श्रीकृष्ण एक दिन हंस और हिवक नामक दो व्यक्तियोंके दमनाय गोवर्धन पर्वत पर उपस्थित हुए। इस संवादके पाते हो नन्द और यमोदा दोनों उन्हें देखनेके लिए दोहरे भारे और उनके दर्शन कर प्रसन्न हुए। महाप्रभाव श्रीकृष्ण नन्द और

यगोदाको देख कर चलाता पातन्त्रित हुए और कुमन सेमादि पूर्ण। नन्दने कहा—“यदुपेठ! सब कुछ कुमन है। गोधन सर्वथा बीरोग और सुखी है। केवल दुःख इतना ही है कि तुम्हारे सब दर्शन नहीं मिलते। इस दुःखमें मेरी बुद्धि लुप्त हो गई है। तुम्हारे सब दा दर्शन होते रहें, यही मेरी ऐकान्तिक कामना है।” ओलूख रुई बाग्याभन दे कर घर सीटे। इस माघात के बाद नन्दका ओलूख के साथ शेष आघात प्रभावमें हुआ था।

‘हृन्दावनसीलायन’में इनका वंशक्रम इस प्रकार लिखा है—



इन्हीं नन्दके पालयमें ओलूखने नामा प्रकारको लोना की थी। एक दिन नन्द एकादशी उपवास कर जेपरात्रिको यमुनामें स्नान करने गये। इस बीचमें वरुण देवता नन्दको वरुणमभामें ले गये। वोले ओलूखने जा कर वरुणसे नन्दका उधार किया। इस दिन नन्दने जिस स्थान पर स्नान किया, उसका नाम नन्दघाट पड़ गया। ये पूर्व जन्ममें द्रोण नामक वसुधि, फिर ये और इनकी पत्नी नन्द और यगोदाके रूपमें भवताथे हुए।

(भाग १०८ अ०)

नन्दके पिताने जब नन्द पर तज्ज्ञास्यका गामनभार होड़ दिया, तब अन्याय्य आता भी इनके अनुगत हो गये थे। वसुदेवके साथ इनका विशेष बन्धुत्व था। ओलूखने प्रजपुत्रीत्याग कर चले आने पर नन्दने उनके शोकमें अपना भीतर विमर्जन कर दिया था।

(हृन्दावनसीलायन)

महाभागवतपुराणमें नन्दके विषयमें इस प्रकार विव-

रक पाया जाता है—नारदने एक दिन महादेवसे सा-
नय प्रण किया कि “ममयम्! नन्द और यगोदा र-
दोनो-ऐसा कौनमा पुत्र किया है, जिनमें महाभावा-
ख्य” नन्दरुद्धमें यगोदाके गर्भमें जन्मग्रहण किया था
और नन्द वा यगोदा पूर्व जन्ममें कौनने महापुत्र से
और कौ” में महाभावाको जन्म ममयमें देख न सके थे।

महादेवने उत्तरमें कहा—“तुममें सब कहना है
‘जानने सुनो’। नन्द पूर्व जन्ममें दल-प्रजापति से जो
यगोदा उनकी पत्नी। दलपक्षमें शिवनिष्ठा सुन
मनोके प्राणत्याग करनेके बाद प्रजापति दलकी नव य-
यात मानस पड़ी कि ‘सुनो मातात्पुं परा-प्रकृति है’। त-
दलके दुःखकी सीमा न रहे। दलने मन की म-
प्रतिष्ठा को कि ‘जिनमें मनो फिर कल्याणमें प्रकट-
करें, सुनि ऐसा हो प्रयत्न करना होगा’। परन्तु ऐ-
विना तपस्याके ही नहीं संकता, ऐसा विचार कर द-
और दलपत्नी दोनों हिमालय पर जा महादेवके वरुण-
तपस्या करने लगे। इस तरह सो वर्ष तपस्या की थी
इस पर महाभावाने प्रसन्न हो कर दर्शन दिये। दर्श-
पाते को प्रजापति दलने सातुनयन कर भागा कि यदि
जन्म लोनीकी वर प्रदान करना चमिकवित हो, तो वह
वर दोजिए कि बाप फिर हमारे घर कन्या रूपमें जन्म
ग्रहण करें। महाभावाने उत्तर दिया कि ‘बापके प्र-
भागमें तुम्हारे चोरस और यगोदाके गर्भमें मैं जन्मग्रहण
करूंगा, पर चपत्यान न करूंगा और न तुम लोग सुनि
पंचान ही मकोगे। देवकार्य सत्यन करके मैं निर्गोहित
होऊंगा। कानान्तरमें दलने नन्दके रूपमें और दलपत्नी
ने यगोदाके रूपमें जन्मग्रहण किया। महाभावाने भी
नन्दरुद्धमें जन्म लिया, इस कल्याण होने की वसुदेव
येही ओलूखकी रूप कर इस कल्याणकी से गये। नन्द
महाभावाके वरके प्रभावमें इस बातको जान न सके।

(महाभागवतपुराण १० अ०)

नन्द—कपिन्यदलके राजा यदोदनके पुत्र और भावा-
बुद्धके संमात्रेय आता। इनकी माताका नाम माया था।
बुद्धने बोधिप्राप्त प्राप्त कर कपिन्यदलमें जा नन्दकी
दीक्षित किया था। नन्दकी दोह धर्ममें दीक्षित होनेकी
विधिय इन्हीं न थी। बाप अपनी ही भ्रात्रे प्रजाप-
ति

में से भी पाँचवें थे। चाणक्य कई बार पत्तोमें शेष साक्षात् करनेके लिए लौटनेकी चेष्टा की थी, परन्तु बुद्धने इनकी वटकुक्षमें से वा कर मित्तु बना दिया और सामारिक प्रेमका प्रकटित्वालय प्रतिपादन करनेके लिए आपकी स्वर्ग और नरकके चित्र दिखवाये थे।

नन्द—सगधके सुप्रसिद्ध राजा। इस नामके ८ राजाओंमें पाटलीपुत्रके सिंहासनकी सुशोभित किया था। इनकी उत्पत्ति और इतिहासके विषयमें नाना मुनिके नाना मत हैं। विष्णुपुराणमें लिखा है—महानन्दिके पुत्र शूद्रा-गर्भोत्पन्न नन्द वा महापद्म परशुरामकी तरह समस्त क्षत्रियोंका विनाश कर एकच्छेदा पृथिवीका भोग करेंगे। महापद्मके सुमासी चादि षाठ पुत्र, उनके श्रुत्युक्त बाद पृथिवीका भोग करेंगे। महापद्म और उनके पुत्रगण कुल १०० वर्ष राज्य करेंगे। कौटिल्य इन ८ नन्दोंका विनाश करेंगे। इनके बाद मौर्यगण-राजा होंगे।

(विष्णुपुराण ४।२४।६)

भागवतमें भी ठीक इसी प्रकारका विवरण है। ब्रह्मावतपुराणमें ऐसा विवरण मिलता है—राजा विश्व-सार २८ वर्ष, उसके बाद उनके पुत्र अजातशत्रु ३५ वर्ष, उनके बाद दशक ३५ वर्ष, उदायी २३ वर्ष, उनके बाद नन्दवर्धन ४२ वर्ष और उनके बाद महानन्द ४० वर्ष राज्य करेंगे। शैशुनागगण कुल मिला कर ३६२ वर्ष राज्य करेंगे। उसके बाद महानन्दिके शौम्य और शूद्राके गर्भसे मिलित क्षत्रियान्तकारी नन्द जन्म ग्रहण करेंगे। ये नन्द तथा उनके ८ पुत्र कुल मिला कर १०० वर्ष राज्य करेंगे। इन सबका कौटिल्यके हाथसे उद्धार होगा। (ब्रह्मावतपुराण उपसंहारपाद)

मत्स्यपुराणमें (२।२ च०) यह विवरण पाया जाता है, परन्तु राजाओंके राजत्वकालकी संख्याओंमें कुछ हीर फेर है।

कहनेका तात्पर्य यह है, कि सभी हिन्दू पुराणमें लिखा है, कि महापद्म नन्द शूद्राके गर्भसे उत्पन्न होने पर

* मुद्रित, मत्स्यनागवतदिमें उदायी वा अजेय रूप पाठ देखा जाता है, परन्तु यह लिपिकरका प्रमाद है। कारण जैन और बौद्धोंके प्राचीन ग्रन्थों तथा हस्तलिखित प्राचीन महापद्म-पुराणदिमें 'उदायी' ऐसा ही पाठ है।

भी महानन्दिके पुत्र थे। परन्तु जैन और बौद्ध ग्रन्थकार गण इसे स्वीकार नहीं करते। प्रसिद्ध हेमचन्द्राचार्य अपनै स्थविरावलीचरितमें नन्दके विषयमें बहुतसी बातें लिखे हैं, जिसका सारांश नीचे लिखा जाता है—

उदायी पिताकी श्रुत्य के बाद पित्रगोकुलमें अधोर हो उठे। जहाँ उनके पिता शासनदण्ड परिचालन करते थे, वहाँ रहना उनके लिए बड़ा ही कष्टकर हो गया। वे सोते, जागते, स्वप्नमें रात दिन पिताकी ही देखते थे। इसके बाद वे पिताकी राजधानीको त्याग कर गङ्गाके किनारे पाटलीपुत्र। नगर स्थापन कर, वहाँ राज्य करते रहे। क्रमशः बहुतसे राजा इनके पराक्रमसे हत-राज्य हो गये। इस पर वे उदायीको मारनेकी तरकीब सोचने लगे। एक राज्यभ्रष्ट राजकुमारने उदायीके पास आ कर उनसे सेवक होनेकी प्रार्थना की। राजाने उसकी मोठी बातों पर सुग्ध हो कर उसे अपने गुरुको सेवक लिख नियुक्त किया। दुष्ट राजकुमार अत्यधर्ममें दोषित हो गया। उसको मोठी धानों पर राजा मोहित हो गये। धनमें उसी दुष्ट राजकुमारने उदायीको हत्या की। इसी पाटलीपुत्र नगरमें देवाकीर्तिके भोरन-ने एक गणिकाके नन्द नामक एक पुत्र हुआ था। उस नापित कुमारने सुबह उठ कर देवा, सेनभ्रमण नगरके चारों ओर दौड़-धूप मचा रहा है। नन्दने विस्मित हो कर उपाध्यायसे इसका कारण पूछा। उपाध्यायने उसे अपने घर में आ कर अपने दुहिता ब्याह दो और नवीन कामाताको एक डोनोंमें बिठा कर नगर परितन्मय कराने लगे। राजा उदायीके कोई पुत्र न था। मन्त्रों ज्ञान राज-हस्तों, प्रधान चाख, कुम्भ और चामर ये पाँच अभि-प्रेक-द्रव्य ले कर जिसको राजा बनाया जाय उसी सोच रहे थे। इतनेमें यामारीहो नन्द दिखलाई दिये। पाटलानोंने

‘तत्राहिते भूयदेशे शृणु पुरमकारयत्।’

तदभूतशब्दो नाम्ना पाटलीपुत्र नामकम्।’

(स्थविरावलीचरित वा परिशिष्टपत्रे; ३।१८०)

‘उदायी मरिता तस्मात् त्रयोविंशत्यवधायः।’

स वै पुनरे राजा पृथिव्यां कुम्भपादकम्।

गङ्गाया दक्षिणे कृते चतुरस्रः करिष्यति॥’

(ब्रह्मावतपुराण उपसंहारपाद)

मोक्ष की कुछ बातें कर नन्दको समझाकर चले चले करके पर विठा लिया। इसी समय राजाके भगने पानन्दमें ऊँपावर किया और चारों ओर मङ्गल ध्वनि होने लगी। पोरजनोंने यह सब देख माल कर नन्दको समझाकर-पूर्वक सिंहासन पर बिठाया। इस प्रकार महावीर स्वामीके निर्वाणके ६० वर्ष बाद (धर्मात् ई० ४६६ वर्षके पहले) नन्द राजा हुए। †

प्रमाणपुराणमें भी उदायी द्वारा पाटलीपुत्र निर्माणका उल्लेख पाया है, जो इस प्रकार है—

उस समय कल्पक नामका एक षण्पे शास्त्रावित् पण्डित रहते थे। एक दिन नन्दने उन्हें बुला कर मन्त्रिपद ग्रहण करनेके लिये उनमें, अनुरोध किया। परन्तु उन्होंने अवज्ञापूर्वक मन्त्रिपद ग्रहण करना अच्छी तरह किया। इस पर राजाने उन्हें तंग करनेके लिए एक उपाय निकाला। जो धोषी कल्पकके बन्धु होता था, उन्होंने उसमें कह दिया, हमारे पादिकके बिना तुम कल्पकके कपड़े न देना। धोषीने राजाका आदेश पालन किया। दो वर्ष बीत गये, धोषीने किसी तरह भी कल्पकको कपड़े न दिये। कल्पक बड़े आसनमें पड़े, ऊपरमें गृहस्थीकी 'उत्त-जनाये' और भी नाकी दम पा गया। पाण्डुर एक दिन सुषुप्तिमें था तब कल्पकने धोषीका वीक्षा किया और कटारमें उनका सिर उड़ा दिया। धोषीने रोती हुई बोली, "भाऊ कीजिये महाशय ! हममें हमलोगोंका कुछ कसूर नहीं, राजाकी आज्ञासे आपके कपड़े रोके गये हैं।"

परमवादी कल्पकने शीघ्र ही राजाके समीप जा कर अपनी अपराध स्वीकार किया। इस बार राजाके आदेशसे कल्पकने मन्त्रिपद ग्रहण कर लिया। इससे पहलेके मन्त्रीको बड़ा कट हुआ। उन्होंने कल्पकको धोखा देनेके लिये उनकी चेष्टाकी बर्णना कर लिये। कल्पकके पुत्रका शुभ विवाह-दिन उपस्थित हुआ। कल्पकको इच्छा थी, कि राजाको निमन्त्रण दे कर अपने पत्नः-पुरमें बुलावे। राजाकी अभ्यर्चनाके लिए उन्होंने दण्ड, समर और सुहृद दनवा लिये था। भूतपूर्व मन्त्रीने चेटीके सुँहने यह

समाद पा कर राजाके कंधा, "कल्पक राजा बननेको नैयारियाँ कर रहे हैं।" नन्दने गुमचर भेजे। मित्रान राजाके आदेशसे कल्पक पुत्र मरित पम्पकूप (कारागार)-में डाल दिये गए। पान्डुके लिए उन्हें कोटाके सिवा और कुछ न मिलता था, वह भी पेट भर नहीं। इससे दोनों-मेंने किसी भी ओरनेको उम्मीद न थी। राजाके इसका बदला लेनेके लिए कल्पकने पहले की उस पचही ला कर किसी तरह अपनी जान बचा ली। इधर कदम्बको अनुपस्थितिमें मौका समझ सामन्तोंने पाटलीपुत्र पर धावा मार दिया। इस विपत्तिमें नन्द बड़े चिन्तित हुए। उन्होंने विचारा, कि कल्पकके सिवा इस विपत्तिमें सिवा उधार कर ऐसा और कोई भी नहीं है। राजाने कारागारमें कहा, "कल्पकमें सब कोई सब दण्ड करता है या नहीं ? उसे निकाल कर मेरे सामने आज़िज करो।"

राज-आदेशसे कल्पक पम्पकूपमें निकाले गये। राजा-सुखरगण उन्हें शिविकाके गिठा कर तमाम नगर-प्राकार-को प्रदक्षिणा करने लगे, विपत्तिके मोग कल्पकको देग कर डर गये। चतु राजाने उन्हें बड़े आदरके साथ मन्त्रिपद प्रदान किया। कल्पक विपत्ती राजाघो' पर शान्त करनेके लिए अपना दण्ड। कल्पकका नाम सुनते ही सामन्तगण भाग गये।

कल्पकके पोछे और भी कई पुत्र हुए थे। नन्दराजने उन सबको धनरत्नसे समृद्ध किया था। नन्दके म'गमें ७ नन्द राजा हुए थे, कल्पकके पुत्रों'में उनका मन्त्रित्व किया था। पत्नमें नवम नन्द राजा हुए। उनमें मन्त्री हुए शकटान जो कल्पकके पुत्र थे। शकटानके दो पुत्र थे, स्युन्मभद्र और श्रीधर।

नवम नन्दको सभामें सुविज्ञात कवि वरहवि रहते थे। वे प्रतिदिन १०८ मन्त्रों की श्लोक बना कर राजाको सुनाते थे। राजाको कविता प्रच्छी लगने पर भी, मन्त्री कभी उनकी कविताको प्रशंसा न करते थे और इसलिये वरहवि को कुछ प्राप्ति न होती था। पत्नमें राज-कविने शकटानको स्त्रीको शरणा ली। शकटान पत्नी की बातों को न माने। इससे बन्द नव वरहविने राज-सभामें अपनी कविता पढ़ी, तब मन्त्रीने उसको खूब प्रशंसा की। नन्द राजाने भी वरहवि को कर पुरस्कारमें १०८ दीनार दिये।

† 'अनन्तर बर्द्धमानमहाशिवने राजासद्वत्।

शकटान' विप्रदायक'निर्वाण'को पुत्र'पुत्रः ॥'

(रक्षितारकोष २१२४२)

इस तरह वररुचिकी प्रतिदिन १०८ दीनार मिलने लगे। एक दिन मन्त्रीने राजासे पूछा, 'यह पाप प्रतिदिन वररुचिकी दीनार देते हैं, किन्तु पहले क्यों नहीं देते थे?' राजाने उत्तर दिया, 'तुम उसको कविता अच्छी बताते हो, इसीलिए देते हैं।' मन्त्रीने फिर कहा, 'दूधरेकी रचना है, इसलिए मैं प्रशंसा करता हूँ।' राजाने 'पूछा, तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि यह दूधरेकी रचना है?' चतुर शकटालने उत्तर दिया, 'मेरी लड़कियाँ भी इन कविताओं की सुनाया करती हैं।'।

शकटालकी यक्षा, यक्षदत्ता, भूता, भूतदत्ता, एणिका, विणा और देणा ये ७ कन्याये थीं। उनमेंसे कोई एक बार, कोई दो बार और कोई तीन बार सुन कर किसी भी श्लोककी कण्ठस्थ कर सकती थी। वररुचिके पूर्ववत् मन्त्रीने श्लोक रचनाकी सुनाने पर, राजाका सन्देश दूर करनेके लिए शकटालकी कन्याओंने यथाक्रमसे उन श्लोकों की सुना दिया। राजाकी मन्त्रियोंकी बात पर विश्वास हो गया, उन्होंने दोनार देना बन्द कर दिया। वररुचि अत्यन्त रुष्ट हुए। इसके बाद वे एक यन्त्रमें १०८ दीनार रख कर उसे गुप्तरीत्या गङ्गामें रख पाते थे, दूसरे दिन सबके सामने गङ्गाका स्नान करते समय यन्त्रकी सहायतासे उसे पानीकी लपार ला देते थे और फिर उन दीनारोंको ग्रहण करते थे। वररुचिने घोषणा कर दी थी कि राजा नहीं देते तो क्या, गङ्गा उनके स्तनसे सुप्त हो कर दीनार प्रदान करती है। राजाको यह बात मालूम पड़ी। एक दिन मन्त्रीसे बात ज्ञप्त किया और कहा कि, 'तुम स्वयं जा कर इसकी परीक्षा करो।' स्वचतुर मन्त्रीने गुप्तचर भेज कर सब हाल जान लिया।

एक दिन गङ्गामें वररुचिके दीनार रख कर चले जाने पर, गुप्तचर उन्हें छठा लाये और मन्त्रीको सौंप दिया। दूसरे दिन राजा मन्त्रीके भाग्य गङ्गाकिनारे पहुँचे। कथिवरने भा कर पूर्ववत् गङ्गाका स्नान किया, किन्तु सबकी बार गङ्गाने दीनार प्रदान नहीं किया। राजाके सामने वररुचिकी उद्धत सज्जित होना पड़ा। इतनेमें शकटालने उन दीनारोंको दिखा कर कहा, "ये हो, तुम्हारे दीनार तुम्हें ही सौंपता है।" इस प्रकार

वररुचिका कल एकट्ठा गया। वररुचि मन ही मन शकटाल पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और किस तरह उनको सर्वनाश हो, यह सोचने लगे। अन्तमें कुछ मूर्ख लड़कोंको उन्होंने यह रटा दिया कि, "राजाकी मालूम नहीं" शकटाल क्या करेगा, नन्दका अच्छेद कर श्रीयककी गद्दी पर बिठायेगा।" लड़के जहाँ तहाँ यहो गीत गाने लगे। बाद राजाके कानमें पहुँची। राजाने सोचा जो बात लड़कोंमें भी फैल गई है वह कभी भूठो नहीं हो सकती। राजाने गुप्तचर भेजे। शकटालने पुत्रके विवाहमें राजाको उपहार देनेके लिए उत्तमोत्तम यस्त्र संप्रह किए थे। गुप्तचरोंने यह बात राजासे कह दी। राजाको विश्वास हो गया। परन्तु शकटाल भी काम न थे, वे ताड़ गये। उन्होंने अपने प्रिय पुत्र श्रीयकको बुला कर कहा— "वत्स! हमलोगोंको मृत्यु प्राप्त है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि यदि मेरे मरनेसे सब क्रुद्ध बच जाय, तो मैं मर जाऊँ। राजाके पास जा कर जब मैं उन्हें अभिवादन करूँगा, तब तुम मेरे मस्तक पर तलवार मार देना।" श्रीयकने रीते हुए कहा— "तात! यह काम तो चण्डालसे भी नहीं हो सकता; इसलिए सुप्त पर ऐसा कठोर आदेश मत कीजिए।" शकटाल बोले— "दूसरा कोई उपाय नहीं है। आखिर मरना तो है ही, तुम्हें मेरा आदेश पालन करना ही चाहिए। यथासमय श्रीयकने पिताकी आज्ञा पालन की। राजा आश्रयमें पहुँच गये, उन्होंने इसका कारण पूछा। श्रीयकने उत्तर दिया— "देवक हो कर जो प्रभुने यन्त्रिकी चेष्टा करता है, वह पिता होने पर भी मार देने योग्य है।" नन्दराज श्रीयकके उत्तरसे सन्तुष्ट हुए और उन्हें मन्त्रिपद प्रदान किया। किन्तु श्रीयकने पिछले जन्म भ्राताके रहते हुए स्वयं मन्त्रिपद लेना पसंदीकार किया। राजाने उनसे बड़े भाई स्वसुभद्रको बुलाया। परन्तु धर्मोत्साह स्वसुभद्रने मन्त्री होना स्वीकार न किया। आखिरकी श्रीयकने राजदत्त सुद्राधिष्ठारपद ग्रहण किया।

यह श्रीयक कथकसे बदना लेनेको तरकीब ढूँढ़ने लगे। श्रीयकने बड़े भाई स्वसुभद्र पहले एक कोया नामकी वेश्यासे आसक्त थे, बादमें पिताकी मृत्युसे उन्हें वैराग्य आ गया और वे दोषित हो गये। श्रीयक एक

दिन सभी धानां पाम गए और रोते हुए उसमें बोने—
पड़े भाई पिनाई मोरुमें जो सब छोड़ टाड़ कर वनकी
धने गए। दुष्ट बरहचि हो पिताजी मृत्यु का कारण है
रमसिंह उसमें बदला लेना हम लोगों का कर्त्तव्य है।

बरहचिकी कोमाकी छोटी बहन उपकीमा बहो
प्यारा हो। कोमाने उससे मिखा टिखा कि आज किसी
तरह बरहचिकी गराव पिनाना चाहिए। उपकीमाने
कोमानेमें बरहचिकी गराव पिनाना मिखा दिया।

गड्डानकी मृत्युके बाद नन्दकी सभामें बरहचिकी
विग्रह स्थापन होने लगा था। सभास्य सभी लोग वनकी
पूज्य भगवा १२ने थे। यथासमय कोमाने शीयकके पाम
बरहचिके मध्यमानका मन्त्राद पढ़ा दिया। शीयकने
राजाने कह दिया। बरहचिके सभामें उपस्थित होने पर
नन्दने उन्हें एक फूल सुघन्धे लिए आदेश दिया।
फूलके सुघन्धे ही उगाने के कह कर दो। बरहचिके सुघन्धे
ग्रासको धू निकलने लगी। राजाने उन्हें गरम गरम
मीठा पिनानेके लिए आदेश किया। बरहचि मर गए,
और मात्र ही शीयक भी मर्याधिकार-सम्पन्न हो गए।

चब बारह वर्ष का पकाम पड़ा। राजाजी आदेशों
भोजनके पभावसे मरने लगे। इसी समय गोजवियवसे
चण्ड नामक ब्राह्मणकी पत्नी चचेरारीके गर्भमें चाण्डका-
ने जन्म लिया।

चाण्ड यावक और सब विद्याओंमें पारदर्शी हो
गये। यथासमय उन्होंने एक कुलीन कन्याका पालि-
बहण किया। एक दिन चाण्डकी स्त्री अपने भाईके
विवाहमें पीहर चली गई। चाण्डको जनसभा बहुत मोच-
मोच था। इसलिए वे स्त्रीकी पीहर जाते समय कुछ
गहना वा वस्त्रादि न दे सके थे। उनकी स्त्री मैला लहंगा,
मैला चादर, रिद्ध पत्रके बसुन्धार और जूतोंके पङ्कल
पहन कर गई थीं। परन्तु उनकी अन्य बहनें, उस
सोत्तम बच्चा और बलदासीमें विभूषित थीं। उनकी
पाशाककी देण कर सब बंसा उड़ाने लगीं। जिसमें
उन्हें बड़ा काट हुआ। मसुरान पड़ने पर ब्राह्मणोंमें
सब बात अपने प्रति (चाण्ड)ने कहा। चाण्डकी बड़ा
प्रेम हुआ। वे धर्मपात्रांसे लिए बाहर चले दिये। राजा
जाना था, नन्दान ब्राह्मणकी बहुत दान दिया करने लगे।

चाण्ड पाटलीपुत्र जा कर नन्दकी सभामें उपस्थित हुए
और कहा उसमें पामन पर बैठ गये। नन्दकी छाया
कम करके उसमें पामन पर बैठनेके कारण नन्दपुत्रजी
चाण्ड पर बड़ा क्रोध था। उन्होंने एक दामोने पा
कर ब्रह्म-पूर्वक चाण्डके लक्ष्य—“पण्डितजी, हम
पामनमें उठ कर यहाँ पाकर बैठे, यह पामन चाण्ड
लिए नहीं है।” चाण्ड ने नहीं उठे। दामोने, हमका
कमपटल, दण्ड, जवमाना और चराने उपसीत पकड़
कर उठाया, पर तो भी वे टमने मम न हुए। चाण्डकी
दामोने उन्हें पागल समझा और घेर पकड़ कर चौपला
शुद्ध किया। फिर कहा था। चाण्ड पागलपूना हो
कर उन पड़ें हुए और बोले—“मैं प्रतिष्ठा करता हूँ,
कि नन्दकी बन्धु वास्तव, पुनःमित्र और यंग प्रदिन
मिर्मान कहंगा।” यह कह कर चाण्ड बहने धन
दिये और मयूरवीण नामक पाममें पड़ें। हम पाममें
महत्कारके घर चन्द्रगुप्तने जन्म लिया था। उधे बरह
विवरण ‘चन्द्रगुप्त’ और ‘चाण्ड’ धर्ममें रचना चाहिए।
पुनरुक्त करना व्यर्थ है।

चन्द्रगुप्त और पर्वतकी महायतने चाण्डके नन्दका
समूह छोड़ कर अपनी प्रतिष्ठा का पालन किया।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है, वह हिमचन्द्रके अनुसार
है। धर्मघोष गणि और विमल गणिने भी अपने अपने
ग्रन्थमें ऐसा ही विवरण लिखा है। गोमदेव-ज्ञान, कणा-
भरितुमागरमें नन्दका विवरण हम प्रकार लिखा है—

इन्द्रदास, व्याडि और बरहचि चर्च-नामका पात्रांमें
जिम समय नन्दकी सभामें उपस्थित थे, उसमें कुछ समय
वहने ही नन्दकी मृत्यु हो चुकी थी। सबकी मलात्र
और रताय देण कर इन्द्रदानने कहा—“हम लोगोंकी
हतायत कोमा चाहिए। मैं मायावन्धने नन्दके शरीरमें
प्रविष्ट होता हूँ। फिर बरहचि, गुप्त, चर्चके लिए
प्रायश्चित्त करना, मैं तुम्हें चमोड, पय, प्रदान कर पुनः
अपने शरीरमें पा लाऊंगा। हतायत कर कर इन्द्रदास
नन्दके शरीरमें प्रविष्ट हो गये और व्याडि उनको प्राय-
श्चित्त देहकी रक्षा करने लगे।

नन्दके पुनः जीवित हो जानेमें राज्य भरमें, मन्त्रीक
होने लगा। हिन्दु विचक्षण नन्दकी गड्डानकी मृत्यु के

मन्देह हुआ। उस समय राजपुत्र नितान्त शिथिल थे।
पेरि राजपुत्रका कोई अनिष्ट हो इस व्याससे शकटाल-
ने नवराजकी राज-सिंहासन पर ही रक्खा। परन्तु राज्य-
में जितने भी शत्रु (मुर्दे) थे, उन्हें जला डालनेके लिए
पादिये दिया। इस प्रकार इन्द्रदत्तकी देह भी भस्मीभूत
हो गई। फिर व्याधि घोर बरसचि उन्हीं (नवमर्द) के
पास रही।

इन्द्रदत्त राजासन पर बैठ कर ओ वर्तमान अवस्थामें
सन्तुष्ट न थे। ब्राह्मणत्वकी खो कर शूद्र-देहमें वास करना
उनके लिए बड़ा ही कष्टकर था। व्याधि उससे अर्थ ले
कर अपने शत्रु उपवर्षके पास चले गये। चकेले बरसचि
ही उनके पास रहे और मन्त्री बन गये।

मन्ददेहधारी इन्द्रदत्त योगनन्द नामसे प्रसिद्ध हुए।
शकटालने ब्रह्महत्या की थी, उस अपराधसे उन्हें पुत्र
सहित अव्ययूपमें डाल दिया गया। छानेके लिए बहुत
ही थोड़ा भस्म मिलता था। छानेके न मिलनेसे शकटाल-
के सब पुत्र मर गये, चकेले शकटाल बदला लेनेके लिए
जीते रहे। धनके मदमें मत्त हो कर योगनन्द क्षमशः
अत्याचारी हो उठे। बरसचि राजाके व्यवहारसे अत्यन्त
दुःखित हुए। राजाके दोषसे मन्त्रीको बदनामो होती
है। इस लिए बरसचिने राजासे अनुमोद किया कि
शकटाल पक्ष छोड़ दिये जाय। शकटाल मन्त्री हो गये।
कुछ दिन बाद राजा बरसचिसे अमन्तुष्ट हो ग्रंथे और
उनके विनाशकी लिये चेष्टा करने लगे। इस समय शक-
टालने बरसचिकी अपने घर छिपा कर उनके प्राण
बचा लिये। कुछ दिन बाद ही राजपुत्र हिरण्यगुप्त
संज्ञाहीन (बिहोश) हो गये। योगनन्द इस समय बर-
सचिके लिये बड़े तंड़फड़ाने लगे। शकटालने राजाके
कष्टकी देह कर बरसचिकी बाहर निकाला। बरसचिने
राजपुत्रकी चपट्टा कर दिया। परन्तु बरसचिकी इस
कुटिल संसारसे अरुचि हो गई। उन्होंने मन्त्रिपद त्याग
कर वानप्रस्थ ग्रहण किया। लोगोंने बरसचिकी न देख
अनुमान किया कि राजाने उन्हें मार डाला। उनके
घर भी यह संवाद पहुँचा। बरसचिकी स्त्री उपकोश-
की बड़ा शोक दुःखा; यह अग्निमें जल कर मर गई।

शकटाल मन्त्री तो हो गये, पर उनकी बर-निर्यातन-

दृष्टा दूर न हुई। एक दिन उन्होंने देखा, कि एक कदा-
चार ब्राह्मण खेतमें बैठ कर गूढ़ा खोद रहा है।
कारण पूछने पर उसने उत्तर दिया, 'यह कुछ मेरे पैरमें
चुभ गया है इसलिए इसे ममून उखाड़ कर फेंक रहा
हूँ।' शकटालने निश्चय कर लिया कि इसी व्यक्तिसे
उनका अभिप्राय सिद्ध हो सकता है। उन्होंने ब्राह्मणको
बहुत रुपयेका लोभ दे कर चाणामो वसावस्थाके दिन
यादकी उपलक्ष्यमें राज-मन्त्रमें आनेके लिए निमन्त्रण
दिया। ब्राह्मण घोर कोई नहीं, चाणक्य ही थे। चाणक्य-
ने मोचा था राज-मन्त्रमें उन्हें प्रधान भासन मिलेगा।
परन्तु शकटालके परामर्शसे योगनन्दने सुवन्धु नामक
एक ब्राह्मणको पहलसे ही प्रधान भासन देनेका संकल्प
कर रक्खा था। चाणक्य राजप्रासादमें पहुँच कर उस
भासन पर बैठनेवाही चाहते थे कि इतनेमें नन्दने उन्हें
रोक दिया। इससे चाणक्यने अपना अपमान समझा और
क्रोधमें आ कर मातृदिनके भीतर मन्दका मृत्यु होगी
ऐसा श्राप दे डाला। नन्दने भी उन्हें निकाल बाहर
करनेके लिए आदेश किया। इधर शकटाल चाणक्यकी
अपनी वर ले गये और उन्हें मन्दके विरुद्ध भड़काने
लगे। चाणक्यने समिवार-क्रिया द्वारा मातृदिनमें ही
मन्दका प्राणसंहार किया। बाद शकटालने योगनन्दके
और मन्त्रात पुत्र हिरण्यगुप्तका विनाश कर प्रकृत मन्दके
पुत्र चन्द्रगुप्तको सिंहासन पर बिठाया। यह चाणक्य
चन्द्रगुप्तके मन्त्री हो गये। इस प्रकार शकटालने अपना
उद्देश साधन कर वानप्रस्थका आश्रय लिया।

(कथाविराजसार)

मिहलकी महावर्गदीवा और उत्तर-विहारकी
पत्थकशामें मन्दका विवरण इस प्रकार लिखा है,—
कालाशोकके बाद धर्माशोक पर्यन्त १२ राजाओंने
राज्य किया। कालाशोकके १० पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्रका
मातृकुल पति नीच जातीय समझा जाता था। इसलिये
वह पुत्र धन्य प्रदेशमें रहता था। कालाशोककी मृत्युके
बाद (चुङ्ग-निर्वाणके १०० वर्ष बाद ?) उनके ८ पुत्र
एक साथ राज्य करते रहे। इस समय एक व्यक्ति बह-
वल-संग्रह कर द्रष्टुं क्षिति द्वारा देशको रसातल पहुँ-
चाने लगा। द्रष्टुपति नगरदिशत कर वनमें चला

मन्देश हुआ। उस समय राजपुत्र नितान्त शिथिल थे।
वेही राजपुत्रका कोई अनिष्ट हो इस ख्यालसे शकटाल-
ने नवराजको राज-सिंहासन पर ही रखा। परन्तु राज्य-
में जितने भी शत्रु (सुदे) थे, उन्हें जला डालनेके लिए
आदेश दिया। इस प्रकार इन्द्रदत्तकी देह भी भस्मीभूत
हो गई। फिर व्याधि और वररुचि उन्हीं (नवमन्द) के
पास रहे।

इन्द्रदत्त राजासन पर बैठ कर भी वर्तमान अवस्थामें
सन्तुष्ट न थे। ब्राह्मणत्वको खो कर शूद्र-देहमें बास करना
उनके लिए बेड़ा ही कष्टकर था। व्याधि उनसे अर्थ ले
कर अपने शूद्र उपर्यर्षके पास चले गये। अकेले वररुचि
ही उनके पास रहे और मन्त्री बन गये।

मन्देशधारी इन्द्रदत्त योगनन्द नामसे प्रसिद्ध हुए।
शकटालमें प्रसन्नता को थी, उस अपराधसे उन्हें पुत्र
सहित अश्वरूपमें डाल दिया गया। खानेके लिए बहुत
ही थोड़ा भोजन मिलता था। खानेके न मिलनेसे शकटाल-
के सब पुत्र मर गये, अकेले शकटाल बड़ेला केनेके लिए
जीते रहे। धनके मन्दमें मत्त होकर योगनन्द क्रमशः
अत्याचारी हो उठे। वररुचि राजाके व्यवहारसे असन्तुष्ट
हुआ। राजाके दीपसे मन्त्रियोंकी बदनामी होती
है। इस लिए वररुचिने राजासे अनुरोध किया कि
शकटाल भोजन कोट्टी दिये जाय। शकटाल मन्त्री हो गये।
कुछ दिन बाद राजा वररुचिसे असन्तुष्ट हो गये और
उनके विनाशके लिये चेष्टा करने लगे। इस समय शक-
टालने वररुचिकी अपनी चमछिया कर उनके प्राण
बचा लिये। कुछ दिन बाद ही राजपुत्र हिरण्यगुप्त
संज्ञाहीन (बिहीन) हो गये। योगनन्द इस समय वर-
रुचिके लिए बड़े तड़फड़ाने लगे। शकटालने राजाके
कष्टकी देह कर वररुचिकी बाहर निकाला। वररुचिने
राजपुत्रको भस्मा कर दिया। परन्तु वररुचिकी इस
कुटिल संसारसे अरुचि हो गई। उन्होंने मेन्विपद त्याग
कर योगप्रस्थ पश्य किया। लोगोंने वररुचिकी न देख
अनुमान किया कि राजाके उन्हें सारे डाला। उनके
चेर भी यह संज्ञा पड़ चुकी। वररुचिकी स्त्री उपकोशा-
की बड़ा शोक हुआ; वह अग्निमें जल कर मर गई।

शकटाल मन्त्री तो हो गये, पर उनकी वैर-निर्वातन-

स्पष्टा दूर न हुई। एक दिन उन्होंने देखा, कि एक कंद-
कार ब्राह्मण खेतमें बैठ कर गद्दा खोद रहा है।
कारण पूछने पर उसने उत्तर दिया, 'यह कुश मेरे पैरमें
जुब गया है इसलिए इसे ममून उखाड़ कर फेंक रहा
हूँ।' शकटालने निश्चय कर लिया कि इसी व्यक्तिसे
उनका अभिप्राय सिद्ध हो सकता है। उन्होंने ब्राह्मणकी
बहुत वर्योका लोभ दे कर आगामी भवावस्थाके दिन
आदिके उपलक्ष्यमें राज-भवनमें आनेके लिए निमन्त्रण
दिया। ब्राह्मण और कोई नहीं, चाणक्य हो थे। चाणक्य-
ने सोचा था राज-भवनमें उन्हें प्रधान पासन मिलेगा।
परन्तु शकटालके परामर्शसे योगनन्दने सुश्रु नामक
एक ब्राह्मणकी पहलसे ही प्रधान पासन देनेका संकल्प
कर रखा था। चाणक्य राजप्रासादमें पहुँच कर उस
आवन पर बैठना ही चाहते थे कि इतनेमें नन्दने उन्हें
रोक दिया। इससे चाणक्यने अपना अपमान समझा और
क्रोधमें था कर मातृदिनके भीतर नन्दको मृत्यु होगी
ऐसा थाप दे डाला। नन्दने भी उन्हें निकाल बाहर
करनेके लिए आदेश किया। इधर शकटाल चाणक्यकी
अपने घर ले गये और उन्हें नन्दके विरुद्ध भड़काने
लगे। चाणक्यने अभिचार-क्रिया द्वारा मातृदिनमें ही
नन्दका प्राणसंसार किया। बाद शकटालने योगनन्दके
पौरुषजात पुत्र हिरण्यगुप्तका विनाश कर प्रजात नन्दके
पुत्र चन्द्रगुप्तको सिंहासन पर बिठाया। अब चाणक्य
चन्द्रगुप्तके मन्त्री हो गये। इस प्रकार शकटालने अपना
सद्देश साधन कर वानप्रस्थका आश्रय लिया।

(इषासिद्धागर)

सिंहशकी मङ्गलशटीका और उत्तर-विहारकी
पञ्चक्यामें नन्दका विवरण इस प्रकार लिखा है,—

कालाशोकके बाद धर्माशोक पञ्चाङ्ग १२ राजाधर्मा
राज्य किया। कालाशोकके १० पुत्र थे। उद्योत पुत्रका
मातृकुल भर्ति नीच जातीय समझा जाता था। इसलिये
वह पुत्र अन्ध प्रदेशमें रहता था। कालाशोककी स्त्रियोंके
बाद (कुह-निर्वाणके १०० वर्ष बाद ?) उनके ८ पुत्र
एक साथ राज्य करने लगे। इस समय एक शक्ति बड़-
बल-वर्धक कर दण्डवर्ति द्वारा देगको रसातल पड़-
चाने लगी। दण्डपति नगरादि लूट कर वनमें चला

जाता था। एक दिन एक अपरिचित व्यक्ति उसी मन्द मन्द कोर उम्माके उनके भीषण कार्य में योग दिया। जिसमें वह मन्का प्रमत्त भाजन हो गया। उस व्यक्ति ने एक दिन दण्ड चौक साय यन्त्रों का कर लन लोकोपे पड़ा। "तुम लोग जिस तरह रहते हो ? उन लोगों ने उत्तर दिया। "तु वरा जानिगा जितो-बारी करना, गय-मैं म चराना, यह सब हम लोगों की चला नही मगता। तुने जेमा देना, जमी तरह महर मूट कर हम लोग लोग करते हैं—वह चारामने रहते हैं। दण्ड चौकी बाल सुन कर उनका मन मचला उठा। वह दण्ड चौकी में मिल गया और चारामने रहने लगा। एक दिन दण्ड चौकी में मिल कर नगर धातमय किया। नगरवासियों की मावधानी और मावधिकतासे दण्ड उनका कुछ भी न कर सके; उनका उनसे दण्डपति की ही मागरिकोने मार डाला। दण्ड मय सटारके मरनेसे बिलाप करने की और कहने लगे, अब कौन हम लोगों को रचा करेगा ? उसी समय नवागत व्यक्ति ने बड़े उत्साहके साथ कहा, "कुछ चिन्ता मत करो, मैं तुम लोगों को रचा करूंगा मुझे ही दण्डपति समझो।" दण्ड मय "वाक, 'वाक' करके लगे और उम्माको अपना दण्डपति बना लिया। बाद में ये ही दण्डपति मन्द नामसे प्रसिद्ध हुए। मन्द ने जगह जगह दण्डपति कर बहुत धनरत्न मँदक किया और चलाते नामा राज्य मय कर पाटलीपुत्र में अपना राजधानी स्थापित की। बहुत दिन राज्य करनेके बाद उनकी मृत्यु हुई। मन्द के बाद उनके भाइयोंने (एक के बाद एक) २८ वर्ष तक राज्य किया। ये ही मन्दमन्द नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। शिव वा मयम मन्दका नाम धन-मन्द है। हमने बहुत धन मयय किया था, इसीलिए हमका नाम 'धनमन्द' पड़ा। चाणक्यके लोकावले ये धन-मन्द को निन्दित हुए हैं।

चाणक्य, मन्दमन्द और वसिष्ठ कह देते।

मन्द—उम्माके ओषध साधकों को एक ओको।

मन्दक (मं० पु०) मन्दपतीति मन्द-क, ल. १ विद्यामय विष्णुका मय. २ मिक, मंदक. ३ मन्दगोव. ४ नामदेव, एक नामका नाम. ५ चमिता. ६ कुमारामुखरियेय. ७ चाणिकके एक मन्दरका नाम. ८ धनराइका एक

पुत. ८ मन्दोदर. (मि०) ९ मन्दोदकारक, दिवासा देनेवाला। १० चामन्ददायक। ११ कुल-पामक, मन्द-की रचा करनेवाला।

मन्दकवि—१ हिन्दीके एक कवि। मयत् १९२१ में इनका जन्म हुआ था। इनकी गयना उत्तम कवियों में की जाती थी। हमारा मैं इनका नाम पाया जाता है।

२ ये भी हिन्दीके कवि हैं। हमने 'रामकण्ठपुत्र-मान' नामक ग्रन्थ बनाया है।

मन्दकि (मं० स्त्री०) विपत्ति, विपत्ति।

मन्दकिन् (मं० पु०) मन्दक; यह; विपत्तिस्थ इति-इति। विपत्ति।

मन्दकिगोर—१ ओष्ठदावनमीमात्रके रचयिता। २ मुखबोके परिगिट और मन्काभारते डोकावर।

मन्दकुमार (मं० पु०) मन्दके पुत्र, ओष्ठपुत्र।

मन्दकुमार गाय—महाराज मन्दकुमार रायने ईसाके १८वें शताब्दीके मारभमें जन्मग्रहण किया था। पात्र बंगाली थे। जिस विषयके समय चंगलमें मुनलमानों राज्यका धर्म कर चले-जोके राजत्वका श्रुतपात हुआ था उस समय महाराज मन्दकुमारके समान चमत्तावालो, प्रतिभावान्, सम्माना और गौरवान्वित व्यक्ति बंगालियोंमें और कोई भी न था।

महाराज मन्दकुमार पीतमुष्ठीपामी काश्य गोत्रोव राष्ट्रीय साधककुलमें उत्पन्न हुए थे। पीतमुष्ठीपामी कुलोन लगे, पहले गोपकुलोन और चलाते योतिग नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। पीतमुष्ठीमें दो मायाये हैं—एक धवन और दूसरी मलिन। मन्दकुमारका जन्म धवन मायमें हुआ था। कौनिक तथाचि पीतमुष्ठी होने पर भी बहुत दिन हुए, यह वंश "राठ" तथाचि मान कर जमी नामने परिचित होता पाया है।

मन्दकुमारके पूर्वपुत्रवयस मुनिदावाद जिनेके लड़ोपुर अवस्थामाके चलाते बहाला ग्रामके निष्ठक जन्म नामक ग्राममें रहते हैं। मन्दकुमारके प्रवितामव रामगोपाल रायने मद्रपुरके मयरागाय मयमशारकी कलाके साथ विवाह किया था। मद्रपुरग्राम पहले मुनिदावाद जिनेमें ही था, यह वंशभूय जिनेमें था गया है। इसकी पाचारणता कोय "भाद्रा" कहते हैं। मन्दरा-

नाथ अनाचारदोषके कारण कुलमयीदामें हीन थे, सुतरां उनकी अन्धका पाणिग्रहण करनेसे रामगोपाल की ममाजमें कुछ अपदस्य होना पड़ा था। इसी अपराधके कारण यामके ब्राह्मणोंने उनके साथ खान-पान भी बन्द कर दिया था। इसजिये बाध्य हो कर रामगोपालकी भद्रपुर जाना पड़ा। आश्वीय-श्रवणनेके व्यवहारसे दुःखित और चरयत्ता हो कर ही रामगोपालने सुवर्णान्न निकट बावभयन बनवाया था। किन्तु जल्दका वास भी उन्हें न मिलकुल छोड़ा न था, कभी कभी वहां जा कर भी कुछ दिन बिता पाते थे। रामगोपाल के दो पुत्र थे;—द्वितीय पुत्र चण्डीचरणके दो विवाह हुए थे, जिनमें प्रथमा पत्नीके गर्भसे पद्मनाभका जन्म हुआ था। नन्दकुमार इन्हीं पद्मनाभके पुत्र (द्वितीय पत्नी) थे।

महाराज नन्दकुमारके एक पुत्र और तीन कन्याएँ थीं। पुत्र-गुरुदासकी गोष्ठपतिकी उपाधि मिली थी, इनके कोई पुत्र नहीं हुआ था। इस कारण, यहाँसे नन्दकुमारके वंशका अन्त हुआ। पुत्रियोंमें श्याममणि बड़ी थी। इनका विवाह जगन्मन्द बन्धोपाध्यायके साथ हुआ था। इस व्यक्ति-साथ महाराज नन्दकुमारकी जीमनी विशेष रूपसे संश्लिष्ट है। गृहेष्टा कन्या श्याममणिके पुत्र राजा महानन्द मातुल (गुरुदास)के उत्तराधिकारी हुए थे। सब भी उनकी वंशपरगण उसका भोग कर रहे हैं।

नन्दकुमारके बादसे जल्द ग्रामका वास मिलकुल उठ हो गया। नन्दकुमारने राजकार्यके अनुरोधसे सुगिंदकुली खाँके छोड़ा, असकता और हुगलीमें वास स्थापन बनवाया था। भद्रपुरके भद्रासनकी ही प्राय अपनी पेंटक वासभूमि समझते थे। जल्द ग्राममें जब भी इन पीतमुखो रायोंकी कीर्तिका अवश्य देखनेमें आता है। महानन्द नामकी एक पुष्करिणी और उसके पासकी वासभूमिके विस्तृत भू-भोग विद्यमान हैं।

जिस समय महाराज नन्दकुमारका जन्म हुआ था, उस समय बौद्धजैवकी मृत्यु हो जानेसे मुगल-शासनाज्यमें सर्वत्र विद्रोह उपस्थित हुआ था। केवल बङ्गाल ही नवाब सुगिंदकुली खाँके अधीनतामें निरपद्रव था।

नवाब सुगिंदकुली खाँ राजस्व-विभागका कार्य अच्छी तरह समझते थे और इसीलिए उस समय जो भी कर्मचारी उस विभागमें नियुक्त होना चाहते थे, उन्हें उस विषयमें अपनी यथेष्ट योग्यताका परिचय देना पड़ता था। नन्दकुमारके पिता पद्मनाभ इस विषयमें अपनी पारदर्शिताका परिचय दे नवाब-सरकारके अमीन हो गये और अपने समान पुत्र नन्दकुमारकी भी उस विषयकी यथेष्ट शिक्षा दी थी। पद्मनाभ क्रमशः फतेसिंह, घोड़ाघाट और सातसहका इन तीन परगनोंके अमीन हुए। सुगिंदकुली खाँने बहुतसे जमींदारोंसे जमींदारी खोज ली थी। इन्हीं जमींदारियोंका कर वसूल करनेके लिए नवाबने उन्हें नियुक्त किया था। पद्मनाभ जिस समय उक्त पदके अधिकारी हुए, इनका कहीं कुछ लक्ष्य नहीं मिलता। उक्त तीन परगनोंसे उन्हें कुछ लाख रुपये वसूल करना पड़ता था।

नन्दकुमार पिताके यत्नसे राजस्वविवरण कार्यमें विशेष शिक्षा लाभ कर, उनके कार्यादिमें सहायता पहुँचाते थे। पद्मनाभने कई विषयोंमें पुत्रकी सहायता प्रणिभाका परिचय वा कर उन्हें अपना सहकारी वा नायब-अमीन बना लिया। इस प्रकार पिता और पुत्र मिल कर कुछ दिनों तक कार्य करते रहे। बादमें नन्दकुमारकी इच्छाकी बात क्रमशः नवाबके कानों तक पहुँच गई।

बङ्गालके सिंहासन पर जिस समय नवाब अलीवर्दी खाँ उपविष्ट थे, उस समय नन्दकुमार हिजली और मछियादल इन दो परगनोंके अमीन नियुक्त हुए। नन्दकुमार स्वयं अमीन हो कर नवाब-सरकारकी आय बढ़ानेके लिए सचेष्ट हुए। इससे उन्हें प्रजा और जमींदारोंकी सुविधा पर इच्छेव भी करना पड़ा और इसी कारण वे प्रजा और जमींदारोंके विरागभाजन हो गये।

अलीवर्दी खाँके समयमें रायराया चैनराय खालसाके दीवान थे। प्रजा और जमींदारगण नन्दकुमारके विरुद्ध उनके पास अभियोग करने लगे। एक साथ बहुतवी शिकायतें आनेके कारण चैनराय कुछ नाराज हो गए। नाराज होनेका और भी एक कारण था; वह यह कि नन्दकुमार पर करोंव ८० हजार रुपये पावने हो गये

मे। पापिर दो शान चैनरायने लम्बे पट्टबद्ध कर मुगिंदा-
बाद मुनया। मुगिंदाबाद उपस्थित होने पर दोबागने
वपने टांगिन करनेके लिए इन पर बड़ा टबाब आया।
मरमा पट्टा न होनेके कारणसे रुपये भक्षान देने
मर्क। जब दोबागने किसी तरह भी न माना, तब इनके
नितामि रुपये देकर इन्हें बन्दमुक्त किया। ० मन्-
कुमारने प्रथम ही कर मयाव गीह परमदण्डने
गायब दुमनकुली खांके पास कोई कार्य होनेके लिए
पराजो भेजा। परन्तु दोबाग चैनरायको मान्यम पठने
हो, उन्होंने दुमनकुलीका पत्र लिख दिया कि मन्दकुमार-
को कोई भी काम न दिया जाय। दुमनकुलीने दोबाग-
की इच्छाके विरुद्ध इन्हें काम देना परमद न किया और
इसलिए मन्दकुमारको भी भोक्तो न मिली। फिर पापने
प्रधान सेनापति मुस्ताफा खांके पास काम आना शुरू कर
दिया।

मुस्ताफा खांके साथ इस समय फिर चलोअर्दी खा-
कं विरोधको छद्मता हुई। मुस्ताफा खांकी पधो-
नस्य मनाको चेतन न मिला था। मुस्ताफाने
इसके लिए मयावकी सत्याग्रह आना; इस पर मयावने
लम्बे जमींदारोंसे बहुत कारिजके लिए आदेश दे दिया।
मैजिफा विभागके कर्मचारों पर रुपये बहुत करनेका भार
देनेमें प्रत्याहार होना अनिवार्य है, इस कारण जमीं-

० १ म गर्वर-बनारस बरिन देहिगुली प्रमि-ववाके
अवगत पत्र पि० बापेकने इस समय अपनी बहनको मिलने
गो घर मिले थे, उनमेंसे कुछ सुनिह हुए हैं। उनमेंसे एक
बापेकने इस पत्रका उत्तर दे कर लिखा है कि, "इस समय
अलीन पञ्चराम अपने पुत्र पर इनके मारण हो गये थे कि
उन्होंने फिर पुनः पुनः देखा था।" बापेक देहिगुलीके
अनुगत से और मन्दकुमारके विरोधी। इसलिये उनकी बात
पर विश्वास नहीं किया जा सकता। - इस प्रकार दसै बहावा
पटना तब समयके राजवर-दिनगके कर्मचारियोंके लिये मामूली
बात थी—मयाव धर्म पर जाने रहते थे। पदमनाम इस
अमीन हो कर इस बातको न समझते थे, यह बात अवगत
है, हरिी दुग पद उदासी दसै बहावा होनेके कारण उन्हीं
पुनः पुनः देखा जा कर ही दिया था, यह बात विश्वासयोग्य
नहीं है।

दर भीम आसक्त विरुद्धको आसक्ताने चढ़ाने की। परन्तु
इन विपत्तियोंने उन्हें बचाये कौन ? एवं मयावका आदेश
था। दोबाग चैनराय कुछ भी न कर सकत थे। इसलिये
वे मुस्ताफा खांको आश करनेके लिए उपाय देखने लगे।
इस समय मन्दकुमार मुस्ताफा खांके अग्रगत थे। इसलिये
जमींदारोंने लम्बे हो मयाव का उन्हींको मान्य भेजा।
इसो कार्यसे मन्दकुमारने चपनी विपत्तियोंको उन्नीषा
कर परहितमने मतो होना प्रारम्भ किया। मन्दकुमार-
की चपनी चपस्या तब समय चपनी गयी, तथापि जमीं
दारोंको मयाव चपस्या देन मुस्ताफा खांके पास
पहुँचे और जमींदारोंको तरफसे जामिन होनेका प्रस्ताव
दिया। मुस्ताफा खांका उद्देश्य तब समय हुआ था।
था। वे जल्दी अन्दा सी निजोंका चेतन हुआ और उन्हें
मनुष्ट रचना चाहते थे और फिर उनकी सहायतासे
विचार पर प्रत्यक्ष शासनकर्त्ता बननेके लिए भीतरों को
भीतर तैयारियाँ कर रहे थे। इसलिये तब समय जामिन
में कर जमींदारोंको छोड़ देना उनसे लिए एक चपराय
था, किन्तु तो भी उन्होंने मन्दकुमारके सम्मान और अग्र-
रोधकी रक्षा की। मन्दकुमार जामिन तो हो गये, पर
मुस्ताफा खांकी अन्दी अन्दी रुपये बहुत कर देने मर्क।
जमींदारण्य भी जामिन को जामिने कुछ निश्चित ही
गए, जब जमीनमें यथासमय रुपये दे कर उपचारोंके
यत्नकी रक्षा करनेमें भी शिथिलता कर दी। इसका
फल यह हुआ कि मुस्ताफा खां माराण हो गए और
मन्दकुमारको बन्दी कर दोबाग चैनरायके पास भेजनेके
लिए उपाय हुए। मन्दकुमार इस संवादको वा कर
कलकत्ता भाग पाए। किसीही इनके भाग जानेकी
खबर न लगी। मयावतः इसी समय उन्होंने कलकत्ता-
में वासभवन बनवाया होगा। कुछ दिन इसी तरह
जीतनेके बाद मुस्ताफा खांके पाप चलोअर्दी खांका पुत्र
हुवा। इस अन्तर्द्वारे मुस्ताफा खां मारे गये। दोबाग
चैनरायकी भी इसी समय शत्रु हो गई। चतुर्थ मोका
देख मन्दकुमार फिर मुगिंदाबाद पहुँचे और मुसदिया-
की गुलामद कर किसी तरह मयाव-मरहाको तरफसे
जातारका परगनासे पसीम हो गये। यह पद पदमें इनके
दिनांक ज्ञातमें था। वे जिस समय यह पद पर निकुन इस

धै, सन्ध्यातः उस समय इनके पिताकी मृत्यु हो गई होगी।

इस समय आपने श्रेष्ठ-वृत्तचक्रासे दो हजार रुपयेका कर्ज लिया। कुछ दिन सातशहकाका काम कर आप सुर्मि-दाबाद गए और वहाँ हिसाब बगैरह सम्भलवा कर हुगली चले गए। सातशहकाकी भामदनीसे इनकी पूर न पहुँची थी, सन्ध्यातः इसीलिए अधिक भायकर जोविकाकी तलाशमें आप हुगली गये थे। परन्तु श्रेष्ठ वृत्तचक्रा ने आपने रुपये वसूल करनेके अभिप्रायसे इन्हें पाँच दिन तक रोकर रखा। श्रेष्ठ वृत्तचक्रा नामक एक व्यक्ति, इनका जामिन दे कर ५ दिन बाद इन्हें सुक्त किया। इस समय आप इतने तंग थे कि आपके पास हुगलीसे सुर्मिदाबाद तक जानिका भी खर्च न था। यही कारण है कि आपको चन्दननगर जा कर अपने भोजनेका २ हजार रुका दुगला १२०० रु० में बेच देना पड़ा, जिनमेंसे १००० रु० तो वृत्तचक्राकी भिज दिए और २०० रु० खर्चके लिए अपने पास रखे। इसी समय हुगलीके फौजदार महम्मद यारवैग खाँ पदच्युत किये गए थे और उनके स्थान पर हिदायत खली नियुक्त हुए थे।

नन्दकुमार सुर्मिदाबाद पहुँच कर प्रायः युवराज शिराज-उद्दौलाके साथ मुलाकात करने जाते थे। किन्तु इस समय वे रुपये कैसे इतने तंग थे कि युवराजकी साथ मुलाकात करनेके लिए न उनके पास छोड़ा हुआ और न पोशाक। इसलिए वे प्रत्येक बार छोड़ा और पोशाक उधार खरीदते थे और मुलाकात करके लौटनेके बाद उन्हें भाँसे दासी पर बेच कर कर्जका कुछ भंश चुका देते थे। जब भाग्य विपरीत होता है, तब सभी कार्याणि विपत्तिका सामना करना पड़ता है। एक दिन नन्दकुमारने युवराजके काम-में कोई बात कही, उसमें युवराज उर्मकी खर्चा देख क्रुद्ध हो गए और उन्हें मकड़ीसे पीटनेके लिये बाँदेय दिया। नन्दकुमार मरीरके मजबूत थे, इसलिये किसी तरह अपनी जान बचा कर वहाँसे चले आये।

इस घटनाके बादसे शिराज नन्दकुमार पर हमलाके लिये नाराज हो गये थे, ऐसा नहीं। कुछ दिन बाद नन्दकुमार शिराजके भादियागुमार नौकरी पानेकी यागसे हुगलीके फौजदारके पास गये। नन्दकुमारने

हुगलीके दीवानका पद पानेके लिए प्रार्थना की; परन्तु हिदायत खलीको इच्छा नहीं थी कि वह पद नन्दकुमारको मिले। इसलिये वे नन्दकुमार पर भयाचार करने लगे। आखिर आपकी वहाँसे निराश हो कर सुर्मिदाबाद लौटना हो पड़ा। इस समय भी आपकी आर्थिक स्थिति शोचनीय थी।

कुछ दिन बाद हिदायत पदच्युत हुए और उनके स्थान पर महम्मद यारवैग खाँ नियुक्त हुए। नन्दकुमार यारवैगके मित्र सादफउल्लाके पास जाने पाने लगे। सादफउल्ला आपको कार्य-कुशलतासे परिचित थे। उन्होंने यारवैगसे इनका परिचय करा दिया। परन्तु जब नन्दकुमारने उनसे दीवानोका पद माँगा, तो उन्होंने देना खोकार नहीं किया। उस पद पर उन्होंने अपने विप्राकी सखीमलकी नियुक्त किया। फिर आपको हुताय हो कर सुर्मिदाबाद लौटना पड़ा।

इसके कुछ दिन बाद सखीमलकी विष्ठावधातकतासे असन्तुष्ट हो कर यारवैगने उन्हें पदच्युत कर दिया। सादफउल्ला ने इस समय नन्दकुमारके लिए पनुरोष किया, यारवैग राजी हो गये। नन्दकुमार बहुत दिनोंके बाद ईशित पदकी पा कर सर्वान्तःकरणसे फौजदारकी सन्तुष्ट रहने लगे। यारवैग भी गये दोबानकी कार्य-कुशलतासे अत्यन्त खुश हुए। इस समय दीवान नन्दकुमारके भाग्यने फिर पलटा खाय।

तीन वर्ष बाद यारवैगका भाग्य फूटा, वे मुतः पदच्युत किये गये। यारवैग दीवान नन्दकुमारके साथ हिसाब सुलझानेके लिए सुर्मिदाबाद पहुँचे। वहाँ उन्हें एक वर्ष लग गया। इसी समय नवाब खलीवर्दी खाँको मृत्यु हो गई। शिराजउद्दौला जेबोब हुए।

कलकत्ते में मंगेरोंको दमन कर शिराज जब लौट रहे थे; उस समय हुगलीमें कोई फौजदार न था। नवीन नवाब मंगेरोंकी दुरमिस्त्रि समझ गये और उन्होंने हुगलीकी भयासित रखना उचित न समझा। मिर्जा मुहम्मद हुगलीके और राजा भाणिकर्चंद कलकत्तेसे फौजदार नियुक्त हुए। परन्तु मिर्जा मुहम्मद बन्दरका शासन न कर सके; बहुत गड़बड़ फैल गई। तब शेर-उमरउल्ला फौजदार बनाये गये। इसी बीचमें यारवैग-

का हिसाब भी निवृत्त गया और वे चले गये। नन्दकुमार इस समय ठासे बैठे थे, उन्होंने पुनः दुर्गलोक दीवान बननेके लिए पर्जी पेश की और वह मंजूर हो गई। कुछ दिन बाद उमरसला पदपुत्र हुए और उनके स्थानमें सिराजन नन्दकुमारको नियुक्त किया, क्योंकि नवाब साहब उनकी कर्मठता, विचक्षणता आदि गुणोंसे परिचित थे।

इस समय कर्नल क्राइव फरासीसियोंसे चन्दननगर छीन लेनेकी कोशिश कर रहे थे। इस घटनाके कारण नवाबके राज्यमें अंग्रेजों द्वारा बहुत उपद्रव होने लगा। इससे पहले १७५७ ई०में ८ फरवरीको अंग्रेजोंके साथ नवाबकी एक सन्धि हुई थी, जिसमें स्थिर हुआ था कि अंग्रेज लोग किसी कारणसे नवाबकी राज्यमें कहीं भी कुछ गड़बड़ नहीं फैलावेगे। परन्तु अंग्रेजोंने यह सन्धि तोड़ दी। नवाब साहब भी समझ गये और उन्होंने अंग्रेजोंको निषेध किया। राजा दुर्गभराम एक दल सेना लेकर दुर्गलोकको रवाना हुए। नवाबने फौजदार नन्दकुमारको भी आदेश दिया कि यदि आवश्यकता पड़े तो नन्दकुमार सेना लेकर फरासीसियोंकी सहायता करें।

अंग्रेजोंने नवाबकी इस व्यवस्थाको सुन अपनेको विपदापन्न समझा। वे सोचने लगे, 'इस समय यदि नवाबकी सेना दुर्गलोकमें आ जावे और नन्दकुमार जैसे सुचतुर फौजदार यदि हम लोगका उद्देश्य समझ लें, तो फिर चन्दननगर पर आक्रमण करना: सुशक्ति हो जायगा।' इसलिए अंग्रेजोंने कसकत्ता-निवासी राजा हजारीमण (दुर्जुरीमण)के बहोदर, अमीरचन्दकी (इतिहासमें 'उन्निष' नामसे प्रसिद्ध) अपने पक्षमें मिला लिया और उनके द्वारा फौजदार नन्दकुमारकी हस्तगत करनेके लिए कोशिश करने लगे। समिचन्द्र देवी।

अमीरचन्दने दुर्गलोक आ कर नन्दकुमारसे 'कहा, कि जगत्सेठ आदि सभी प्रधान कामचारियोंने अंग्रेजोंकी सहायता देना शुरू किया है। जिस पक्षमें जगत्सेठ, ई, उसी पक्षकी विजय है, इसलिए अपने मङ्गलके लिए यह अंग्रेजोंके विरुद्ध लाना उचित नहीं है। जगत्सेठ देवी। अमीरचन्दने इसी प्रसङ्गमें सिराजउद्दौलाकी सिंहा-

सन-व्युतिकी बात भी छेड़ दी थी। इससे नन्दकुमारने समझा, कि निराश्रयके विरुद्ध वास्तवमें ही चक्रान्त चल रहा है और उनका पतन भी अवश्य होगा। परन्तु इसमें बाधा देना उन्होंने उचित न समझा, क्योंकि अंग्रेज कामगार बलशाली हो रहे थे और देशीय राजस्व-वर्ग उनका सहायक था। इस कारण नन्दकुमारने कोमलसे उन्हें दमन करनेको ठानी और इसीलिए अमीरचन्दका प्रस्ताव खोकार कर लिया। किसी किसी अंग्रेज ऐतिहासिक अर्मे (Orme) का कहना है, कि अंग्रेजोंने अमीरचन्दको मारफत नन्दकुमारको १२००० रु०की रियायत दी थी, इसीलिए उन्होंने उनका प्रस्ताव खोकार दिया था। परन्तु यह बात असत्य है, क्योंकि उस समय नन्दकुमारको आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी और स्वभावतः वे सोमप्रदायक भी न थे। उनके शत्रु पक्षके लोग भी जय इस बातकी खोकार नहीं करते, तब इसमें सत्यांश कितना है, यह संदेह ही समझमें आ जाता है। ऐतिहासिक गुलाम हुसैनने अपने 'सैर-उल-मुताखरीन' नामक इतिहासमें नन्दकुमारकी काफ़ी निन्दा की है, किन्तु उसमें इस बातका उल्लेख तक नहीं है। यदि यह बात सत्य होती, तो वे उसका उल्लेख किये बिना कभी न रहते।

कुछ भी हो, नन्दकुमारने इसके बाद फरासीसियोंकी सहायताके लिए सेना भेजनेका जो आदेश दिया था, वह रद्द कर दिया और दुर्गभरामके सेना-सहित उपस्थित होने पर उन्हें लौट जानेके लिए आदेश दिया। उन्होंने नवाबकी भी इस आग्रहका पत्र लिख दिया कि अंग्रेजोंके बनावजका विचार कर फरासीसियोंकी सहायता करना उचित नहीं, यदि को जायगो, तो अपनाहित होना पड़ेगा।

सिराजउद्दौलाकी पदस्थितिके पक्षधर्ममें नन्दकुमारके इस कार्यने बड़ी सहायता पहुँचाई। चन्दननगर आक्रमण और अधिकार कर अंग्रेज और भी बलवान् हो उठे। अमीरचन्दकी बातमें विश्वास ही नन्दकुमारने जिस कोमलसे काम लिया पादा था, वह ही न सदा कारण सिराजउद्दौलाने उनकी भूल पकड़

ही और उन्हें पदच्युत कर दिया। नन्दकुमार पदच्युत होनेके बादके कहां किस प्रकार रहे थे, यह बात मालूम नहीं हो सकी है। सम्भवतः उन्हें अपने भ्रमके लिए भाग्यवानि हुई होगी और इसीलिए ऐसे विप्लवके समय उन्होंने किसी राजकार्यमें हस्तक्षेप करना उचित न समझा होगा।

पलाशोके युद्धके बाद अंग्रेजोंने विजयी हो कर मीरजाफरकी वफाालके सिंहासन पर विजया। इसी समय झाइवने नन्दकुमारकी अपना दीवान बनाया। नन्दकुमार भ्रममें पड़ कर, जिस कौगलसे काम सेना चलाया था, उसमें व्यर्थ मनोरथ हुए थे, पर उससे अंग्रेजोंकी भलाई हुई। सम्भवतः इसी उपकारका स्मरण कर झाइवने उन्हें अपना दीवान बनाया था। जिस झाइवने अपने उपकारी अमीनचन्दकी जाल दलील बना कर ठगा था, उस झाइवके लिए नन्दकुमारके प्रति ऐसी क्षतव्रताका दिखाना अवश्य ही आवश्यक है। परन्तु ऐसा करनेका एक कारण था। मीरजाफर नवाब हो कर जब पटनेके शासनकर्त्ता राजा रामनारायणका सत्तेद करनेके लिए कटिबद्ध हो गये तब अंग्रेजोंके लिए रामनारायणकी रक्षा करना आवश्यक था। ऐसी दृष्ट्यामें झाइवकी एक सुचतुर और सूक्ष्मकीय व्यक्तिकी जरूरत थी। इसलिए उन्होंने नन्दकुमारकी ही इस पदके लिये चुनाव किया कि इनमें यह एक विशेष गुण था कि ये जब जिस प्रभुके अधीन कार्य करते थे, तब उन्होंने कार्य ऐकान्तिक भावसे करते थे। नन्दकुमार झाइवके दीवान होनेके उपरान्त, उनकी तरफसे सकील बन कर कई बार नवाबके दरबारमें गये थे। किन्तु जब नवाब किसी तरह भी विचलित न हुए, तब झाइव सेनासहित पटना पहुँचे। नन्दकुमार भी उनकी साथ

गये थे। झाइव इनकी कार्यदक्षता और बुद्धिमत्तामें बड़े खुश थे और सब विषयोंमें आपसे परामर्श लेते थे। मीरजाफरकी दीवान राजा दुर्लभरायने नन्दकुमारकी पटना जाते देख झाइवके पास उन्हें ही अपना वकील बना कर भेजा था। इस समय नन्दकुमारकी चमत्ता इतनी बढ़ी चढ़ी थी कि लोग उन्हें "काला कर्नल" कहते थे। बादमें पटनेका कार्य सम्पन्न कर झाइव इन सहित सुग्रीदावाट पाये और अपनी प्रीति निदर्शनस्वरूप नवाबसे पत्रोपदेश कर नन्दकुमारकी हुजारी, हिजली आदि स्थानोंकी दीवानी दिलवा दी। इस तरह नन्दकुमार पुनः अपने चिरन्तन प्रभु नवाबके अधीन कार्य करने लगे। अमीरकी खाँ उस समय हुजारी, हिजली आदिके कौजदार थे। नवाब-सरकारमें कार्य पा कर नन्दकुमार अपने नवीन प्रभु (कम्पनी) के स्नेहसे वसित हुए हीं, ऐसा नहीं। कम्पनीके अधीन भी उन्हें एक प्रधान पदकी प्राप्ति हुई। मीरजाफरने सन्धिमें लिखे हुए कुल रुपये राजकोषसे चुकान सकनेके कारण, उसने बढते गदिया और बड़ेमानका राजस्व अंग्रेजोंको छोड़ दिया। नन्दकुमार १७५८ ई० की १८वीं अगस्तको अंग्रेजोंके अधीन इन दो स्थानोंके तहसीलदार हो गये। इन्होंने जिसकी समय पर राजाओंको बुला कर राजल वसूल करनेका पक्षकार दिया गया। इस प्रकार दोनों प्रभुके अधीन उस पद पर कार्य करने लगे।

पलाशो-युद्धके बाद नवाब-दरबारमें अंग्रेजोंकी तरफसे एक रेजिडेंटका रखना अवधारित हुआ। १७५८ ई०में बारम्बे हेटिंग्स, उक्त पद पर नियुक्त हुए। वर्षमान और मद्रियाहके राजस्व वसूल करनेके सल्लभमें नन्दकुमारकी साथ हेटिंग्सके प्रतीमान्मित्रका सूत्रपात हुआ। जिस कारणसे ऐसा हुआ, यह बात पीछे कही जायगी।

मीरजाफरकी आर्थिक स्थिति इस समय बड़ी सोचनीय थी। वे संवदा रूपसे लिए राजा दुर्लभराम और जगतसेठकी तंग शिगा करते थे। क्रमशः नवाबके साथ दुर्लभरामका विवाद हो गया और उत्तरोत्तर वह बढ़ने लगे। इस समय मीरन ठाकाने शासनकर्त्ता थे और

पूर्वोक्त कारणोंके सिवाय इसके हुए एक प्रश्नमें प्रकट हुआ है कि "नन्दकुमारने ही अंग्रेजोंसे मित्रता करनेके लिए स्वतः प्रसन्न हो कृष्णकुमार वल्लभ नामक एक व्यक्तिसे झाइवके पास भेजा था।" यह बात शिलकुल सिद्धा है, क्योंकि सामयिक अंग्रेज ऐतिहासिक अर्थ नन्दकुमारके पिदयने दिखलती बात तब लिख गये हैं, किन्तु वे भी इस बातको नहीं कहते और न धैर-उक्त सुवादीने" हो इसका ऊँझ उलझे हैं।

राजा राजवत्सल, उनके दीवान। मीरनने रायदुनभसे
टाका-विभागका हिसाब तलब किया। इस तरह चारों
ओरसे तिंग भा ज्ञानके कारण उन्होंने कलकत्ते भानिका
विचार किया, किन्तु मीरनने नवाबकी सेनाकी तन-
खाह न चुकने तक उन्हें रोक रखनेकी कोशिश की।
दुर्लभरायने इस विपत्तिसे रक्षा पानेकी इच्छासे नन्द-
कुमारकी शरण ली। शरणापन्नको रक्षा करनेके लिए
नन्दकुमार हर हालतमें तैयार रहते थे, जिसका एक
दृष्टान्त पहले भी आ चुका है। नवाबकी धार भी ने नवाब
असमृद्ध हो गये और अनिष्ट करनेकी कोशिशमें रहे।
राजा दुर्लभरायके इस प्रलायनसे नवाब भी उन पर
असमृद्ध हो गये और अनिष्ट करनेकी कोशिशमें रहे।

इसी समय एक विलक्षण घटना हो गई। नवाब एक
दिन असजिदगी जा रहे थे, कि रास्तेमें खोजाघादी
नामक एक कर्मचारीके कुछ आदमियोंने उन्हें रोक
लिया। नवाबने किसी तरह कौशलसे उनके कान्तसे
निकल कर कुछ प्रसिद्ध कर दिया कि राय-
दुर्लभनी ही नवाबकी हत्या करनेके लिए उन आद-
मियोंकी तैनाति किया था और इस बातको प्रमाणित
करनेके लिए एक पत्र भी प्रकाशित किया। नन्दकुमारकी
क्षात्रता दाहिना हाथ गाल नवाबने वह पत्र उनके
पास भेज दिया और लिख दिया कि, "यदि आप किसी
तरह इस पत्र पर क्षात्रको विश्वास दिला सकें, तो मैं
आपको उपाधि और जागीर देनेके लिए तैयार हूँ।"

नन्दकुमारने नवाबका यह अनुरोध पर क्षात्रकी टिखा
दिया था, जिसे दुर्लभ रायका भविष्यतः भय तो जाता
था पर नवाब नन्दकुमारसे खूब नापसन्द हो गये।
किन्तु शंभोजीके भयसे वे उन्हें पदच्युत न कर सके।
नन्दकुमार जिस समय यारवेल खाके अधीन हुगलीको
फौजदारी दीवान थे, उस समय उन्हें १४००० रु.
दिये थे। वे रुपये इतने दिन बाद चबसर और समता पा-
कर सुचल कर लिये। वर्तमान फौजदार यमोदसिंग रा-
भी नन्दकुमारके परामर्शानुसार कार्य करते थे। इस
लिए मोरजाकर नन्दकुमार पर कद हीनेके कारण उनमें

परामर्श होनेवाले यमोदसिंग पर भी खड़ा हो गये और
उन्हें पदच्युत कर अपने दिलको जलन मुभाई। फिर
नन्दकुमारके कार्यमें दीप निकासने लगे, जिससे
नन्दकुमार काम छोड़ कर कलकत्ते चले गए। इस
समय नवाबके प्रधान हरकरा राजाराम सिंह भी पद-
त्याग कर कलकत्तेमें आ कर रहने लगे। बादमें दुर्लभ-
राय, नन्दकुमार और राजाराम ये तीनों नवाबके पास
यकौल भेज कर दुर्लभराम बंगाल, बिहार और उड़ीसा-
की दीवानीके लिए, नन्दकुमार नायब दीवानीके लिए
और राजाराम अपने पूर्व पदके लिए प्रार्थी होनेकी
तैयारियां करने लगे। यारवेलके पतने प्रकट हुआ है
कि इन्हींके साथ नन्दकुमारने अपने पुत्र गुरुदासके लिए
काननगो-पद दिलाना चाहा था, जिससे दुर्लभरामके
साथ उनकी मित्रता थिथिल हो गई थी।

नन्दकुमारने नवाब-सरकारकी दीवानी छोड़ कर
शंभोज-सरकारकी तहसीलदारीके काममें मन लगाया।
नदियाके राजा पर बहुत दिनोंका कर बकाया था।
नन्दकुमारने उनको कहला भेजा, कि नियमित समयमें
भीतर कम्पनीकी राजस्व न देनेसे उन्हें बन्दी रहना
पड़ेगा। राजा हर कर कलकत्ते दीर्घ पाये और
क्षात्रके शरणापन्न हुए तथा किसी तरह राजस्वका बन्दी-
वस्तु कर अपने राज्यको लौट गये। वर्षमानके राजाके
पास पियादा भेजने पर उन्हें ने महीने महीने कर देना
स्वीकार कर लिया।

नवाबके साथ इन दो स्थानोंके विषयमें शंभोजीकी
यह बात हुई थी कि पहले कर वसूल हो कर कुछ
सुविधावाद भेजा जाय और वहाँ जमा हो कर फिर
शंभोजीके पास पावे। इसमें कार्यकी सचविधा होनेमें
कारण शंभोजी कोमिलने परधारा वसूल करनेके लिए
कर्मचारी नियुक्त करनेकी व्यवस्था कर दी और क्षात्र-
के अनुरोधसे नन्दकुमार ही उस पद पर नियुक्त हुए
तथा उन्हें जिलदर भी मिली नन्दकुमारने वर्षमा-
नरूपसे राजस्व मांगा था उन्होंने यह बात सुनिश्चिता
लिख भेजी। शंभोज-रेमिटेन्स मि. इटिंशकी उस
समय तक कलकत्तेकी कोमिलके बन्दीवस्तुकी बात
मान्य नहीं थी। इसीलिए नन्दकुमार पर बड़े नाराज

हुए और उनसे इसका कारण पूछा। नन्दकुमारने उसके उत्तरमें अपनी नियुक्ति और खिलपत प्राज्ञिका हाल लिख भेजी। परन्तु इस पर भी हेडि'ग्स सन्तुष्ट न हुए। उन्होंने क्लाइवकी लिखा कि, 'पहले के बन्दोबस्तकी परवाह न कर नन्दकुमारने मासगुजारी वसूल करनेके लिए वर्धमान नरेशके पास पियादा भेजा है और सुना है कि इस कार्यके लिए आप ही ने उम्मेद' नियुक्त किया है।' उत्तरमें क्लाइवने लिख दिया कि, 'कोन्सिलके सम्मेलन ही नन्दकुमारकी नियुक्ति को है और उम्मेद'के द्वारा उन्हें खिलपत मिली है। हुगलीमें वर्धमान और नदियाकी मासगुजारी वसूल हो; यह व्यवस्था कोन्सिल द्वारा हुई है। इस व्यवस्थाका उद्देश्य इतना ही है कि उक्त स्थानोंमें हमें कितने रुपये मिलते हैं; यह बात नवाब-साहबकी मान्यता न होने पावे। आप वर्धमान-नरेशको नन्दकुमारका आदेश पालन करनेके लिए लिख दें।' इसके उत्तरमें हेडि'ग्सने फिर एक पत्र लिखा कि, 'नन्दकुमारने महिषादलके गुमास्तीसे हिसाब तलब किया है। सम्भवतः यह आपकी बिना अनुमतिसे हुआ है। जब तक नन्दकुमार अपने भवसरके अनुसार मेरे हाथसे समस्त कार्यभार ग्रहण न कर लेगी, तब तक मुझे मुरादाबादमें रहना पड़ेगा। शायद इस बात पर आपने ऐसा विचार न किया होगा।' इस पत्रका क्लाइवने क्या उत्तर दिया, यह बात प्रकाशमें नहीं आई। अन्तमें हेडि'ग्सने नन्दकुमार पर नवाबकी विरक्तिको बात लिखी, जिसके उत्तर में क्लाइवने यह लिख दिया कि, 'नन्दकुमार पर नवाबकी नाराजीका कारण उनका दुर्लभगय और शंभेजी' पर अनुरक्त होना है; इसके सिवा, अन्य कोई भी कारण नहीं।'।

नन्दकुमारके प्रभुत्वकी खबर करनेके लिए हेडि'ग्स इतना कोशिश क्यों करते थे? उसका एक गूढ़ कारण था। वह यह कि वर्धमान और नदियाकी मासगुजारीके रुपये अगर मुरादाबाद हो कर जाते, तो वह मोटा रकम हेडि'ग्सकी मारफत ही कलकत्ता भेजी जाती और उससे व्यवसायी हेडि'ग्सको कितना लाभ पहुँचता इसकी व्याख्या करना व्यर्थ है। इस व्यक्तित्वगत स्वार्थमें विघ्न पड़नेके कारण ही हेडि'ग्स नन्दकुमार

पर संशत नाराज रहते थे और इसी नाराजी वा विधिपकी बीजसे अन्तमें नन्दकुमारके जीवमर्नाशी हत्या का उद्गम हुआ था।

क्लाइवके बाद मि० बन्सिटाट कलकत्तेके गवर्नर हुए। ये पहले तो नन्दकुमारको दण्डनाभे' सन्तुष्ट हुए, किन्तु हेडि'ग्सको मिल होनेमें इनमें भी बड़ी ग्राति आ गई जो हेडि'ग्समें थी। क्रमशः बन्सिटाट भी हेडि'ग्सकी कुपरात्मगर्भसे नन्दकुमारकी निहो' हो गये। बन्सिटाट ने ही मोरजाफरकी हटा कर मोरजाफिसकी गद्दी पर बिठाया था। मोरजाफर पदच्युत हो कर किम कच्चे भाई और चितपुर नामक स्थानमें रहने लगे तथा नन्दकुमारको प्रति हुया विधिप त्याग कर उम्मेद'की शरण आ पन्न हुए। भूतपूर्व प्रभु पर अत्याचारको प्रति 'सुनने तथा शंभेजी'के सहवाससे दिनोंदिन उनको उद्देश्योंसे परिचित होनेसे नन्दकुमारकी आँखें खुल गईं। ये समझ गये कि दिन-पर-दिन शंभेजी हो द्रिग'त' सय'मय कर्त्ता होते जाते हैं, जब जिसको चाहते हैं उसीको नवाब बना देते हैं। इसी समय नन्दकुमारकी हृदयमें शंभेजी'को समता घटानेकी वासना उत्पन्न हुई। उन्होंने मोरजाफरको पुनः वि'शेषन' दि'क्षान'के लिये बचन दिया। मोरजाफर डर गए, किन्तु नन्दकुमारने उन्हें साहस दिया। इसके बाद आपने फरामोसी और बिहार-प्रवासी सन्नाट' शाहचनोके साथ पत्रव्यवहार जारी कर दिया। दैव-दुर्विपाकसे एक-पत्र शंभेजी'के हाथ पड़ गया। बन्सिटाट'की भावने मेंकोन'पर और कई एक पत्र मिले। हेडि'ग्सने उन पत्रों पर भारी दण्ड लगाया; किन्तु भगवान्की क्षमासे उनकी पिहृयस्यसे आप बाल बाल बच गए। किसी किसीको कहना है कि नन्दकुमारने इस सम्बन्धमें महाराष्ट्रनायको'के साथ भी पत्रव्यवहार किया था।

इस समय शंभेजी'कर्मचारियोंके गुप्त व्यवसायके कारण इट-इण्डिया-कम्पनीको यथेष्ट क्षति और द्रिगमें बहुत अन्धाकार हो रहने लगे। इस विपत्तकी चिट्ठी-पत्रों नन्दकुमारके हाथ लग गईं। कुछ प्रति-दि'शोपरेश' हो नन्दकुमारने जाफर खाँको मोहरयुक्त एक चिट्ठी क्लाइवके पास भेज दी और उसी विपत्तकी एक चिट्ठी कम्पनीके

दशम में टाखिन को । इस कार्रवाई में 'चंगरेज' कर्मचारी-गण आप पर बड़े गुस्सा हुए । इसी समय उनमें दो टन हो गये; एकमें बमोटार्ट पोर हैटिंग्स मुख्य थे और दूसरेमें पमिण्ट पोर एलिस । इसी समय नवाब मोर-कासिमके साथ चंगरेजोंके विवाहका सूचनापत्र हुआ और कर्मचारी भी इसी समय जनकत्ते पधारे । विहारकी गड़बड़ों मिटानेके लिये कूटकी पटना भेजनेका नियम हुआ । एलिस और पमिण्टके परामर्शानुसार सुचतुर नन्दकुमारको उनके साथ प्रधान कर्मचारीके वतोर भेजे जानेकी व्यवस्था हुई । कूट नन्दकुमारको जानते थे, उन्होंने आनन्दके साथ स्वीकार कर लिया । परन्तु बमोटार्टमें बाधा दो । पन्तमें कूटके भागदूबे नन्दकुमारका जाना ही स्थिर हुआ, किन्तु गवर्नरके आदेशसे वे उनके साथ न जा सके, पीछेसे भेजे गये । नन्दकुमार मोर-कासिमकी चंगरेजोंके विरोधी समझ उनके अधीन कार्य करनेके लिये उत्सुक थे । उनकी इच्छा थी कि मोर-कासिमकी उपयुक्त परामर्श दे चंगरेजोंके दमनमें सहायता पहुँचावे । इसी उद्देश्यसे उन्होंने कूट साहबकी सारफत नवाबसे पुनः दुगनोकी फौजदारों मांगी, किन्तु नवाबने उन्हें 'चंगरेजोंके अनुरक्त समझ तथा सिवाजके समय दुगनोकी फौजदारकी' हेतियतसे किये गये व्यवहारका स्मरण कर उनकी चर्जी मजूर न की ।

इसी समय रामचरण रचितके छत्तापारका एक पत्र चंगरेजोंके हाथ पड़ा, उसमें वादशाहके सेनापति कामगोश्वालीके लिये चंगरेजोंके विरुद्ध बहुतसी बातें लिखी गई थीं । इसके सिवा और भी एक चिट्ठी पकड़ी गई, जो फरासीसी लांसाह्व और बादशाहका दल उस समय मिल कर चंगरेज-दमनका आयोजन कर रहे थे । चंगरेजोंने ये दोनों पत्र नन्दकुमारके लिखे हुए बतलाये और पुनः उनके पीछे प्रहरी लगा दिये । इसी क्षणतमें एक वर्ष बीत गया । आखिरकी नन्दकुमारने बग्दी टशम में की गवर्नरकी लिखा कि, "ये सब मेरे नाम पर मिया पमिणोग लगाये गये हैं यह मेरे शत्रुओंको रचना है । यदि चंगरेजोंकी मुक्ति पर विश्वास न हो, तो मुझे छोड़ दिया जाय, मैं सपरिवार अन्यत्र जा कर रहूँगा ।" गवर्नरने इस आशेदन पत्रपर कुछ भी उत्तर नहीं दिया ।

इसके बाद मोरकासिमके साथ चंगरेजोंको लड़ाई फिड़ी । चंगरेजोंने पुनः मोरजाफरकी नवाबी देनेके लिये प्रस्ताव किया । मोरजाफर राजा हो गये, किन्तु नन्दकुमारकी चर्कोने अपना दीवान बनाया चाहा । चंगरेजोंने पक्षे तो इस पर आपत्ति की, पर पीछे नवाबके अत्यन्त आपस करने पर राजा हो गये । मोरजाफरने नवाबी पानेके पक्षे ही आपकी अपना दीवान बनाया और मोरकासिमके विरुद्ध युधयात्ना की । सुबहमें मोरकासिम हारे और उन्हें वादशाह शाहपालम और नवाब-जोर शूजाउद्दीनाकी गरण सेनी पड़ो । इस समय मोरजाफरके साथ सन्नाटकी सन्धि होने पर मोरजाफरने नन्दकुमारको 'महाराजा' की उपाधि दी । तबसे आप 'महाराजा नन्दकुमार' कहलाने लगे । नन्दकुमार विहारमें रहते समय फिर वादशाहके साथ चंगरेज-दमनका आयोजन करने लगे । काशीनरेश बनवन्त सिंह मत्स्य हुए । इस सम्बन्धमें काशीनरेशकी लिखा हुआ एक पत्र फिर पकड़ा गया । श्वको बार चंगरेज लोग बहुत ही बिगड़े । जनरल कार्नकने नन्दकुमारकी भरी-बैठित कर कलकत्ता भेजना चाहा, पर राजा नयलक्ष (उस समय मेजर पांडम्वके वेनियन थे) तथा अन्य सम्मान्य व्यक्तियों ने अनुरोध कर कार्नकी माना किया । बक्सरके युद्धके बाद वादशाह और चंगरेजोंके बीच एक सन्धि हुई । मोरजाफर और नन्दकुमार कलकत्ता होते हुए सुमिदाबाद पहुँचे । मोरजाफरने नवाब हो कर नन्दकुमारकी सलाहकी दोबारा दी । नवाब मोरकासिमने कुछ हिन्दू जमींदारोंको, राजस्व वसूल करनेके लिये, सुबहके दुर्ग में बग्दी कर रखा था । नन्दकुमारने उन्हें छोड़ दिया । 'अन्यान्य जमींदारोंने भी सालगुजारी दृष्टीसे तंग आ कर आपकी गरण ली । नन्दकुमारने किमकी कुछ छोड़ कर और किसीकी किसी बांध कर भगड़ा तय किया ।

इसके बाद दो वर्ष तक नवाबकी प्रमत्ता अनुसरणनेके लिये नन्दकुमारने चंगरेजोंमें सिर्फ तर्क-वितर्क किया था । चंगरेज लोग नवाबकी कठपुतली बनानेकी कोशिशमें जितने भी आगे बढ़ते थे, नन्दकुमार शक्ति अनुसार उतना ही समय बिना डाले बिना नहीं रहते थे,

घोर भंगरेज भी उत्तरी ही इनसे नाराज होती जाती थे। अन्तमें २ वर्ष बाद १७६५ ई० में मोरजाफरको मृत्यु हो गई। सैर-उल्ल-मुताक़-खुरीनमें लिखा है, कि नवाब नन्दकुमार पर इतना विश्वास घोर हो चुक करे कि अन्तमें समय उन्होंने मुनलमान हो कर भी नन्दकुमारके भनुरोधसे किरैटिखरो देवोका चरणामृत पीया था, इससे बाद ही उनकी मृत्यु हुई थी।

मोरजाफरकी मृत्युके बाद अंग्रेजोंने उनके पुत्र नजम-उद्दौलाको नवाब बनाया। नन्दकुमार मोरजाफरके हितके लिये जो कोशिश किया करते थे, नजमउद्दौला उनसे वाकिफ थे, इसलिए यही पर बैठते ही उन्होंने नन्दकुमारको जालसाजी का दोषान्न बनानेके लिए क्लाइवसे भनुरोध किया। मोरजाफरकी मृत्युके समय क्लाइव दूसरी बार गवर्नर हो कर आये थे। भूतपूर्व गवर्नर बन्सी-टाट विसादत जाते समय एक बहीमें नन्दकुमार द्वारा किये गये स्वतः परतः समस्त दोषोक्त विवरण लिख कर अपने भाई जार्ज बन्सीटाटको भे दे गये थे, और कह गये थे कि क्लाइवके आने पर कौन्सिलमें उनके सामने यह प्रश्न हो पड़ कर सुनाया जाय। यथासमय जार्ज-ने उसे कौन्सिल और क्लाइवको पढ़ कर सुनाया। जिसो बादमीने सिर्फ दोष सप्रसन्न करके यदि इस प्रकार सुनाया जाय, तो कौन ऐसा होगा जो सहसा उस पर प्रविष्टास कर सके? क्लाइवकी भी यही दया हुई। वे नन्दकुमारके विशेष बन्धु होने पर भी प्रबन्धों वार इस दोषमांसा-को चुन कर उनसे नाराज हो गये और इसीलिये उन्होंने नवाबका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया।

मोरजाफरके समयमें महम्मद रजा खाँ टाकाके शासन-कर्ता थे। वे मजा पर बड़ा प्रत्याचार करते थे, इसलिए नन्दकुमारने मोरजाफरके अधोन खालसाकी दीवानो या कर रजा खाँके प्रत्याचारसे प्रजाकी मुक्त करनेकी प्रमिमायसे नवाब कह कर उन्हें पदच्युत कर दिया था। अब रजा खाँने मौका देख खालसाकी दीवानो पानेके लिये प्रार्थना की। क्लाइवने नन्द-

कुमारको उक्त पद में दे कर रजा खाँको खालसाका दीवान बना दिया तथा जयलुध और राजा दुर्गभराम-की उनका सहायक नियुक्त किया।

क्लाइव नन्दकुमारको पदच्युत करके दो मिथिला में हुए। उनको संदेह हुआ, कि कहीं फिर वे कलकत्ते या मुर्शिदाबादमें रह कर वादगाह और फरासोसियोंके साथ परामर्श न करे, इसलिए उन्हें दूर हटा देना जरूरी है। इस स्थानसे क्लाइवने उन्हें चट्टग्राम भेजना चाहा। समाचार सुन उनका परिवारवर्ग बहुत व्याकुल हुआ। राजा नवकृष्ण चादि भी दुःख हो गए और ऐसा न करनेके लिए क्लाइवसे भनुरोध किया। इस भनुरोधसे या और किसी कारणसे, उस समय नन्दकुमार निर्वासित नहीं हुए।

इससे बाद इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने बादगाहसे बङ्गाल और उड़ीसाको दोबारा प्राप्ति की। नवाब नजमउद्दौला सुबेदार और नाजिम साब रहें। अब तक जिस कार्यको रापरार्थीयण, बादमें महाराज नन्दकुमार और उनके बाद भंगरेजोंके भनुरोधसे रजा खाँ कर रहे थे, अब उसी कार्यका मार भंगरेज-कम्पनीने स्वयं ग्रहण कर लिया। महम्मद रजा खाँने नायब सूबादारी करते समय बुद्धि और समताके बल पर अपनेकी सुसलमान सम्राजका नेता बना लिया था। भंगरेज लोग कौयसी हैं, उन लोगोंने रजा खाँके इस प्रभुत्वसे वाकिफ हो सहसा उन्हें दीवानी पदसे प्रसंग न किया। इष्ट-इण्डिया-कम्पनीने नाम मात्रके लिए दीवान रखी, उर्दोंकी पूर्ण समता दे नायब-दोवान कर दिया। नवाबको पक्षीनतासे मुक्त और भंगरेजोंके बलसे वलवान हो कर नायब-दीवान महम्मद रजा खाँ तीस सौ बोंके इत्ता इत्ता बन गए। टाकाके शासनकालमें उनकी प्रवृत्त प्रत्याचार-प्रवृत्ति अब बिना बाधके चारों तरफ फैल गई। इस समय सुसलमान-प्रमाज जैसे महम्मद रजा खाँकी पपना नेता या प्रहपोषक समझता था, उसी प्रकार हिन्दू-समाज भी महाराज नन्दकुमारका प्रवलम्बन ले अब-स्थान कर रहा था। दोनोंमें इस सामाजिक नेतृत्वकी प्रतिद्वन्द्वतामें उस समय न गेदयमें बहुत उपद्रव हुए थे।

* सैर-उल्ल-मुताक़-खुरीनमें जार्ज बन्सीटाटका "दोसियांर भंग" और गवर्नर बन्सीटाटका "समस उद्दौला"के नामसे वर्णन है।

नन्दकुमार नवाब-मरकादका काम खोदनेके बाद प्रायः कलकत्तेके प्रासादमें रह करती थे। इस समय झाड़वने बम्बोटाटके शासनकी जिम्मा सुनी। इसके अनुसन्धानके लिए प्रहस होने पर वे इसके लिए एक उपयुक्त व्यक्ति तन्नाममें रहे। अन्तमें महाराज नन्दकुमारकी ही सम्पूर्ण उपयुक्त समझ उन्होंने की यह भार झोपा। पहले वहल नन्दकुमारने जो अनुसन्धान किया, उस पर झाड़वकी विश्वास न हुआ, वे शुभरीतिसे नन्दकुमारके कार्यके सत्यासत्यके सम्बन्धमें खोज करते थे इस प्रकार बम्बोटाटके कार्यानुसन्धानमें नन्दकुमार पर लगाए गए बहुतसे दोष मिथ्या प्रमाणित होने लगे। झाड़व बम्बोटाटकी प्रतारणा समझ गए और नन्दकुमार पर क्रमशः विश्वास करने लगे, अन्तमें झाड़वने उन्हेंकी बम्बोटाटके राजत्वका एक विवरण लिखनेके लिए आदेश दिया। नन्दकुमारने निरपेक्ष भावमें विवरण लिख दिया। झाड़व उसे ले कर विनायत चले गए।

झाड़वके बाद भैलेंट गवर्नर हुए। भैलेंटकी पहले पहले नन्दकुमार पर अच्छी निगाह थी, पर पीछेसे शत्रुकी भी ओरसे उत्तेजना दी जाने पर उनकी निगाह बदल गई। सुना जाता है, कि इस समय नववर्ष भोतर ही भोतर उनकी जड़ काटते थे और मौका पाने पर प्रकाशमें सम्बन्ध बन कर निष्पक्षताका खान्ति दिखाने थे।

१७६८ ई. में काटियर कलकत्तेके गवर्नर हुए। इन्हींके समयमें (वर्णनमें) "हिवत्तरिया" (वहला सन् ११०६ ई.) प्रकाश पड़ा था। नायब-दीवान महम्मद रजा खांके अन्धा-चारसे इस समय प्रकाश और भी भोषण हो गया था। काटियरके पास बहुतोंने रजा खांके विरुद्ध अभियोग उपस्थित किये, जिनमें दो बड़े थे—रजा, महम्मद रजा खांने दुर्भिक्षके समय बाजारसे सब चावल खरीद कर बहुत ज्यादा भावमें बचे थे, और रजा साधारण तहवीनसे बहुत रुपये खर्च कर गये थे। काटियरने पास अभियोग तो पढ़े, पर १७७२ ई. में उन्हें पदत्याग पूर्वक विनायत सोट जाना पड़ा।

सारेने हेटिंग्स गवर्नर हुए। विनायतमें अन्धनीके डिक्रेटोने उन्हें भवसे पहले रजा खांका विचार करनेके लिए आदेश दिया। हेटिंग्सने मुर्शिदाबादके

तदानीन्तन रिसिडेण्ट मिडल्टनकी, महम्मद रजा खांको बंदी करके भेजनेके लिये आदेश दिया। मिडल्टनने निमातवागसे रजा खांकी कैद कर कलकत्ते भेजा।

प्रजाके कष्टसे विजोप कातर हो महानुभाव नन्दकुमारने रजा खांकी कारगुत विनायतके डिक्रेटोके कष्ट गोचर करानेके लिए अपने ही व्ययसे एक एजेण्ट भेजा था। डिक्रेटोने उस एजेण्ट द्वारा पैग किये गये प्रभूत प्रमाणों पर विश्वास करके ही हेटिंग्सकी भवसे पहले रजा खांके लिये नियुक्त किया था।

इस समय ब्रह्मसम हैतशासन (Double Government) चल रहा था। राजस्व-विभाग अंगरेजोंके हाथमें था और निजामत-विभाग नवाबके हाथमें। निजामतका भार अपने ऊपर न होनेसे अंगरेजी कम्पनी बन्दसूर शासन नहीं कर सकता था। इस कारण हेटिंग्स आदि हैतशासनमें बड़े नाराज थे। डिक्रेटोका आदेश पा कर इसी सुझसे हेटिंग्स हैतशासनकी जड़ खोदने लगे।

डिक्रेटोने सिर्फ रजा खांकी पदस्थ त कर उनके कृतकर्म पर विचार करनेका आदेश दिया था, किन्तु हेटिंग्सने ऐसा न कर उन्हेंके शासनकर्ता राजा सिताबरायको भी पकड़वा डाला था। सिताबरायके विरुद्ध भी तहवील चटतीकी नालिग हुई थी।

हेटिंग्सने उन लोगोंकी गिरफ्तार तो कर लिया, पर किस तरह उनके दोष प्रमाणित करेंगे, यह न सोच सकी। राज्यमें सर्वत्र रजा खांके कर्मचारी मौजूद थे। सुतरां हेटिंग्सकी समस्यामें पड़ना पड़ा। डिक्रेटोने आदेश देनेके साथ यह भी कह दिया था कि यदि आवश्यकता पड़े तो, वे नन्दकुमारको सहायता से मन्त्री हैं। हेटिंग्स पहले तो नन्दकुमारसे सहायता देनेमें इतन्तर्त करने लगे पर पाखिरकी मजबूर हो कर उन्हें नन्दकुमारको बुलाना पड़ा और उनमें सहायताके लिये कहना ही पड़ा। इस समय हेटिंग्सने नन्दकुमारसे यह भी कहा कि, "मैं कलकत्तेकी कोमिश्नरी महानुभावसे आपकी बहादुरता अमोम बनाऊंगा और राजा सिताबराय तथा महम्मद रजा खां आपकी हिमायत में रहेंगे।"

समभाये नी। इस कार्यके लिये मैं अपने पदके अनुसार आपको सहायता पहुँचानेके लिये सम्पूर्ण क्षमताका उपयोग करनेके लिये तैयार रहूँगा।" गवर्नरको इस प्रतिश्रुति पर विश्वास करके महाराज नन्दकुमारने दोनों 'अभिमियो'को तहशील घटतीको एक फट्ट बत्ता दी। महरमद रजा खाने नवाब सरकारके बहुत कोमलते ज़ेवर, चाय, घोड़े और बङ्गला सन् ११७२ से ११७८ तक छः वर्षमें बङ्गाल और टाकाकी तहशीलसे २० करोड़ रुपये आम्नासात् किये थे। दुर्भाग्यकी समय चावल खरोद कर बहुत ज्यादा भावसे बँचे थे। इसके सिवा व कई सरकारी सम्पत्तिका भीग कर रहे हैं। इत्यादि बहुत सी बातोंकी खोज की और उस विषयके गवाही भी काफी सत्याममें इकट्ठी किये नन्दकुमारकी कोशिशसे दोष प्रमाणित होने पर रजा खाने नन्दकुमारकी दो लाख और 'हेटि'ंग्सकी दस लाख रुपये की रिशवत देनी चाही। नन्दकुमारने यह बात 'हेटि'ंग्ससे कही। 'हेटि'ंग्सने उत्तर दिया कि, "एक करोड़ रुपये देने पर भी मैं निर्दोषिताका समूत बिना पाये उम्हें छोड़ नहीं सकता।" फसली सन् ११७३के प्रारम्भसे ११८१के अन्त तक राजा सिताव रायने लगभग नब्बे लाख रुपये आम्नासात् किए थे, उन्होने भी 'हेटि'ंग्सकी चार लाख, नन्दकुमारकी एक लाख और रोड साइवकी १० हजार रुपये घूस देने चाहे, पर 'हेटि'ंग्सने इस पर भी घूसवत् महाशुभमता दिखाई।

अन्तमें विचार शुरू हुआ। जिस समय यह विचार चल रहा था, उस समय नयाब नजरम उद्दोहाकी नाबालिग पुत्र सुवारकउद्दोहा सिंहासन पर बैठे थे। उनके अभिभावकको नियुक्तिके बारेमें बड़ा तर्कवितर्क चल रहा था। सुवारकउद्दोहाकी माता बाब बेगम और विमता मनि बेगम दोनोंने अभिभावक बननेके लिए आवेदन किया था। कम्पनोकी डिक्रेटरी ने इस विषयकी मीतांसा और नवाबके दीवान नियुक्त करनेका भार 'हेटि'ंग्स पर ही डाल दिया।

मनिबेगमने नन्दकुमारकी सहायतासे २० लाख रुपयेकी घूस देनेका प्रस्ताव किया। 'हेटि'ंग्सकी मति मारी गई, भवकी धार बँटाल सके, स्त्रोकार कर

लिया। नन्दकुमारने गवर्नरके खानसांभा, जगदाय और बालकृष्ण तथा अपने कर्मचारों सदानन्द और नरसिंहको मारफत ये रुपये भेजे थे। इसी समय आपने अपने पुत्र गुरुदासको नवाबके दीवान बनानेके लिये 'हेटि'ंग्ससे अनुरोध किया। यद्यपि इस समय 'हेटि'ंग्स नन्दकुमारसे खुश थे, क्योंकि उन्होने काफी प्राप्ति करा दी थी और रजा खाने मामलेमें उन्हें यथेष्ट सहायता पहुँचाई थी, किन्तु तो भी एक बार रिशवत ले कर लालसाका द्वार खोल दिया था, इसलिये 'हेटि'ंग्सने प्रकारान्तरमें नन्दकुमारसे भी कुछ नजर चाही। गवर्नरने जब खय हो प्रकारान्तरमें नजरकी बात छेड़ी, तब नन्दकुमारने भी स्त्रीकार कर ली। मनिबेगम और राजा गुरुदासको इस नियुक्तिके लिए उक्त २० लाख रुपयेके सिवा नन्दकुमारने और भी १०४१०५ रु०) 'हेटि'ंग्सको दिये थे।

इसके बाद राजा सिताव राय और रजा खाना विचार होने लगा। इसके विरुद्ध खड़े किए गए मुकदमेको सत्य प्रमाणित करनेके लिए नन्दकुमारने बे-शुमार गवाहियाँ एकट्ठी की थीं। रजा खानेकी तरफ कुल दो सौ गवाहियाँ थीं। इस मामलेमें करीब दो वर्ष समय लगा था। अन्तमें 'हेटि'ंग्सने दोनोंको निर्दोष कह कर छोड़ दिया। समस्त अपराधोंके चकाचक प्रमाण मिलने पर भी 'हेटि'ंग्स ने उन्हें बंधों छोड़ दिया, यह समझनेमें किसीको देर न लगी, सब समझ गए। राजा सिताव राय छूट तो गए, पर स्थानिके मारे बीछ ही उनका खयवास हो गया। इनके पुत्र कल्याणसिंहकी विहारके रायरायाँ पद पर नियुक्त कर 'हेटि'ंग्सने कुछ मनुष्यत्वका परिचय दिया। रजा खाने छूट जाने पर लोग दंग हो गये, महाराज नन्दकुमारकी पाँच चादमियोंमें कुछ अवतिष्ठ होना पड़ा, वे 'हेटि'ंग्सका स्वभाव के सा जटिल हैं, इस बातको खूब अच्छी तरह समझ गये। रजा खाने और सितावराय विचारमें किसी भी कारणसे सुल्ल बंधों न हुए हो, इस मुकदमेकी तद्वीरमें महाराज नन्दकुमारने 'हेटि'ंग्सको जिस तरह सहायता पहुँचाई थी, उसके लिए 'हेटि'ंग्सकी कम-से-कम इनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए

मन्दकुमार नयाव-मरकारका काम छोड़

प्रायः कलकत्ते में प्रसाद में रहा करते थे।

क्राइम वन्डोर्टाट के शान्तकी निम्न

पत्रसम्मानके लिए प्रवेश होने पर वे

उपयुक्त व्यक्ति की तलाश में रहे। पत्र में

कुमारकी ही सम्पूर्ण उपयुक्त समझ

मोवा। पहले पहले मन्दकुमारने जो

उस पर क्राइवकी विधान न दुषा, जो

कुमारके कार्य के सत्यासत्यके सम्बन्ध

इस प्रकार वन्डोर्टाट के कार्यानुसन्धान

नगाए गए बहुतसे दोष मिया प्रमा

वन्डोर्टाट की प्रतारणा सम्भव ग

क्रमशः विज्ञाप करने लगे, वन्डो

वन्डोर्टाट के राजत्वका एक

पादित दिया। मन्दकुमार

निष् दिया। क्राइव उस के

क्राइवने बाद में

पहले पहले मन्दकुमार

गवुषोंकी ओरसे

बदल गई। सुना जा

ही भीतर इनकी

प्रकाशमें मध्य

१०१८ ई.

समयमें (वह)

अकाल, पर

पारसे इस

फाटि घर

उपस्थित

आद रखा

गुरौद कर

रण तहसी

पास अभियो

पूर्वक विना

वारन हि

के डिरेक्टरी

करनेके लिए पादे

मन्दकुमार नयाव-मरकारका काम छोड़

प्रायः कलकत्ते में प्रसाद में रहा करते थे।

क्राइम वन्डोर्टाट के शान्तकी निम्न

पत्रसम्मानके लिए प्रवेश होने पर वे

उपयुक्त व्यक्ति की तलाश में रहे। पत्र में

कुमारकी ही सम्पूर्ण उपयुक्त समझ

मोवा। पहले पहले मन्दकुमारने जो

उस पर क्राइवकी विधान न दुषा, जो

कुमारके कार्य के सत्यासत्यके सम्बन्ध

इस प्रकार वन्डोर्टाट के कार्यानुसन्धान

नगाए गए बहुतसे दोष मिया प्रमा

वन्डोर्टाट की प्रतारणा सम्भव ग

क्रमशः विज्ञाप करने लगे, वन्डो

वन्डोर्टाट के राजत्वका एक

पादित दिया। मन्दकुमार

निष् दिया। क्राइव उस के

क्राइवने बाद में

पहले पहले मन्दकुमार

गवुषोंकी ओरसे

बदल गई। सुना जा

ही भीतर इनकी

प्रकाशमें मध्य

१०१८ ई.

समयमें (वह)

अकाल, पर

पारसे इस

फाटि घर

उपस्थित

आद रखा

गुरौद कर

रण तहसी

पास अभियो

पूर्वक विना

वारन हि

के डिरेक्टरी

करनेके लिए पादे

हिटिंग्स के अत्याचारका विवरण लिखनेका भार दिया गया। कारण नन्दकुमार नवाब भलोबर्दी खांके समयसे उस समय तककी देशकी शासनविधि और राजस्वविधिसे खूब परिचित थे। उन्हें तत्कालीन राज्य-सम्बन्धी सभी बातें मालूम थीं; उनके समान उपयुक्त, राज्यकी व्यवस्थाकी जाननेवाला राजकर्मचारी उस समय कोई था नहीं। इसीलिए मन्त्रियों ने उन्हें ही इस कार्य के लिए योग्य समझा। हिटिंग्स की अज्ञतप्रतापसे नन्दकुमार भी उनसे सन्तुष्ट न थे, इस लिए उन्हें भी प्रधानतः देशमें फैले हुए अत्याचारके दमनके लिए हिटिंग्स के विरुद्ध कार्य करना स्वीकार कर लिया। हिटिंग्स इन्हें चक्रान्तकारी समझते थे, पर वास्तवमें इनमें यह दोष नहीं था। वे जिस कामकी करती थी उसे खलो तौरपर करती थी, दुबका-चारी—निष्ठाघघातकता इन्हें बिल्कुल पसन्द न थी। इसी मोचमें और भी एक मोका मिल गया। बहैमान-राज महाराज तिलकचन्द्र बहादुरको विधवा पत्नीने हिटिंग्सके अत्याचारके कारण कौन्सिल में एक अभियोग उपस्थित किया। बहुतांका कहना है कि यह काम महाराज नन्दकुमारका ही था; परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। नन्दकुमार यदि ऐसा करना चाहते, तो वे एक वर्षभरमान ही क्यों, बंगाल-के सम्पन्न जमींदारोंके द्वारा अभियोग करा सकते थे। परन्तु उनका ऐसा उद्देश्य न था। वे अत्याचारोंके अत्याचारकी दमन करनेके लिए स्वयं अभियोगी हो कर खड़े होनेके लिए प्रस्तुत रहते थे। पुरुषोचित सम्साधस उनमें मौजूद था।

१८७५ ई. में ८ मार्चकी एक अभियोगका आवेदन-पत्र बना कर नन्दकुमार स्वयं ही कौन्सिलके एक सदस्य मि॰ फ्रांसिसके हाथ दे भाये। इस आवेदनमें आपने हिटिंग्स के लल्लोच ग्रहण, अत्याचारियोंकी भवैध रूपसे निष्कृति दान और देशव्यापी अत्याचारके अनुष्ठानकी प्रिकायतकी थी। हिटिंग्सने उनका भी जो अनिष्ट किया था, उसका भी विशेष रूपसे उल्लेख किया था। यह पर्ची फारसीमें लिखी गई थी। मि॰ फ्रांसिस ने ११ मार्चको इसे कौन्सिलमें पढ़ा था।

इस आवेदनमें नन्दकुमारने मोरकासिमके युद्धके

समय अंगरेजोंके उपकारार्थ जो कार्य किया था, प्रथमतः उसका उल्लेख किया; उसके बाद मरहमद रजा खाने देशमें किस तरह भोषण अत्याचार किया था, उसका भी वर्णन किया। बाद उसके हिटिंग्सने उनके प्रति कैसा अत्याचार किया था, एक एक करके सब लिख दिया। कौन्सिलके सभ्योंके विन्यायतसे आने पर हिटिंग्सने स्वयं उन लोगोंके साथ बंगालके अन्यन्य सम्मान्य शक्तियोंसे परिचय करा दिया, पर नन्दकुमारसे नहीं कराया। नन्दकुमारके इस बारेमें प्रार्थना करने पर गवर्नरने उत्तर दिया कि, 'मेरा एक शत्रु है, उसके साथ आपकी बड़ी घनिष्टता है, आप लोगोंने उसे मन्त्रि-सभाके सदस्योंके पास पठादि से जाननेके लिए नियुक्त किया है। आप उसकी सहायतासे उनके साथ परिचित क्यों नहीं होते?' उसके बाद गवर्नरने ऊपर दिखा कर कहा था कि, 'मैं अपने मानकी रक्षाके लिए और चपनो सुविधाके लिए सब तरहको चेष्टाएं करूंगा, किन्तु उससे आपकी ही चतियस्त होना पड़ेगा।' इसके बाद हिटिंग्सने इलियट साहबको मारफत कौन्सिलके सभ्योंसे महाराजका परिचय करा दिया।

इसके बादसे, विशेषतः हिटिंग्सके प्रतिद्वन्द्वी मि॰ फ्रांसिसके साथ नन्दकुमारका विशेष सौहार्द हो जानेके कारण, हिटिंग्स नन्दकुमारकी दमन करनेके लिए नाना उपाय अवलम्बन करने लगे। रिविडिण्ट गेहमके साथ बहैमानका मालगुजारी वसूलीके विषयमें नन्दकुमारका विवाद था। बैठ बुलाकीदास नामक एक पणवाल जो हरौकी मृत्यु के बाद हिसाब प्रादिके बारेमें मोहनप्रसाद नामक सत्त जोहरौके भामसुधनारकी साथ भी नन्दकुमारका झगड़ा था। वर्तमान कुञ्जवाट-राजवंशके प्रादिपुरुष जगबन्धू बन्धोपाध्याय नन्दकुमारके दामाद थे। इनको महाराज नन्दकुमारने, जो बाल्यकालसे पुत्रकी तरह पाला-पोसा, लिखाया-पढ़ाया और कन्या व्याही थी; अन्तमें बहुतांसे अनुरोध कर उनको नोकरी भी लगवा दी थी। जिस समय महाराजने यह अभियोग उपस्थित किया था, उस समय भी जगबन्धू नवाबके दोबान राजा गुब्बदासके अधीन नवाब-सरकारमें नायबी कर रहे थे, किन्तु वे ऐसे असन्तुष्ट प्रकृतिके भादमी थे

या; परन्तु उनकी, कतल होना तो दूर रहा, १९०४ ई० के माघ मासमें जो इस मुकदमेका विवरण बिलायन भेजा, उसमें उन्हें गठ, प्रवचन, पक्षतल पादि लिख कर उनकी निन्दा की। किन्तु इटिंग्सने किस व्यवहार या कार्यके आधार पर यह लिख मारा, उसका कुछ सबूत ही नहीं दिया। इटिंग्सने राजा खाँ और सिताय रायकी मुकदमेकी तदवीरकी लिए जब नन्दकुमारकी नियुक्त किया था, उस समय जो बचन दिये थे, उनका भी पालन नहीं किया।

इसी समय विधायकके प्रधान मन्त्री लार्ड नर्वने भारतकी कार्य व्यवस्थाकी सुव्यवस्था के लिए "नियामक विधि" (Regulating Act) विधिवत् किया। उस विधिके अनुसार इटिंग्स, भारतके गवर्नर जनरलके पद पर नियुक्त हुए और उनका मन्त्रित्व करनेके लिए जनरल लॉरिड, कर्नल, मनसन और फिलिप फ्रांसिस थे तोन व्यक्ति प्रतिरिक्त सभ्य कोन्सिलमें चुने गये। इसी समय सुप्रीमकोर्टकी विचार-प्रणालीकी भी सुसंस्कृत करनेके लिए सर इलाहाअली खानकी प्रधान विचार-पति और हाइड, लिमेटवर और चैम्बर्सकी विचार-पति के पद पर नियुक्त किया गया। प्रधान विचारपति सर इलाहाअली खान गवर्नर-जनरल इटिंग्सके सहपाठी और घनिष्ठ मित्र थे।

१९०४ ई०में एकदम आठके प्रारम्भमें उपयुक्त नव-नियुक्त काम वारिगण कमजोरके बादपालघाटमें था का, सारे। उनके सम्मानार्थ फोर्ट विलियममें २० बार तोप दामो गई, पर इटिंग्सने उनके सम्मानार्थ कुछ सामान्य काम वारिगणके घाट पर भेज दिया था। इस कारण गवर्नर जनरलके समान समताविशिष्ट नवागत मन्त्रि-सभाके सदस्यगण इटिंग्ससे कुछ दुख हुए। उन लोगोंमें समझा, कि इटिंग्सने अपनी श्रेष्ठता और प्रभुता दिशानेके लिए ही ऐसा किया है। एक तरफकी कुछ भूल और दूसरी तरफकी कुछ विवेचनाकी छुट्टी से उन प्रारम्भिक दिनों ही मन्त्रि-सभामें मतभेदका बीज पड़ गया। कोन्सिलमें उस समय 'मि० बारबेले नामक एक व्यक्ति इटिंग्सके पक्षमें थे।

कुछ भी हो, जब तक कोन्सिलमें गवर्नरके पावमके

पादमो की सभ्य होते थे। सुनरा गवर्नर द्वारा किये गये पन्थायका कोई प्रतिवाद करनेवाले न रहता था। मूल मन्त्रि-सभामें नवागत मन्त्रियोंने उस कार्यमें हस्तक्षेप किया। रोहिता-गुहमें गवर्नर-जनरलने जिन मार्गाका प्रयत्न किया था, नवागत मन्त्रिगण उसके ग्राह्य-पन्थाय पर तर्क-वितर्क करने लगे। लोगोंकी भरोसा हो गया कि सबसे 'चंगरेज-मासफर्न'के पन्थाचारसे सहसा लोगोंकी मरना पड़ेगा।

इस समय इटिंग्सके दनबलके पन्थाचारमें लोगों-द्वारा और प्रजा बड़ी तंग था गई थी। दोबान गज्ज-गोविन्द सिंह, राजा देवी सिंह, लक्ष्मकान्त मन्त्रो, मि० गुडसेड आदि इटिंग्सके सहायक थे और उनके ऊपर मुक्तिप्राप्त राजा की और नव-पन्थुदित राजा नव-लक्ष्म भी कार्यक्षेत्रमें आ गये थे। पन्थाचारमें उत्पन्न हो कर जन साधारणोंकी महाराज नन्दकुमारकी शरण लीने पड़े। नन्दकुमार यद्यपि समताहीन और शासकी-की दृष्टिमें गिरे हुए थे, तथापि देशकी लोग इन्होंने पर विश्वास रखते थे, विपत्ति पड़ने पर इन्हींकी राय लेते थे, क्योंकि इससे पहले भी कई बार इन्हींके उनका काम निकला था। इसकी सिवा उस समय दिग्गमें ऐसा कोई बड़ा पादमो नहीं था जो गरीबी का पन्थाचारसे पोषितोंकी सुनवाई करता हो, इसलिए भी लोग प्रायःको राय लेते थे। नवजन्म गज्जगोविन्द पादिने भी उस समय पन्थाचारका बीड़ा हाथमें उठा लिया था। नाटो, ई-मान आदि बह्मसंघीय पन्थाचार जलोदारीने भी नन्दकुमारकी राय ली थी। नन्दकुमार, क्या करें क्या न करें, इसी समस्यामें पड़ गये। इटिंग्स इन समाचारोंकी सुन कर उससे उत्तर इन पर चिट्ठे ही जाते थे। इटिंग्स उस समयसे नन्दकुमारकी पक्षमें विद्वत् बह्मसंघातारी समझने लगे।

उधर कोन्सिलमें मन्त्रियोंके साथ नन्दकुमारकी भी परिचय हो गया। किसी किसीके साथ बन्धुन भी हो गया। मन्त्रियोंकी क्रमशः इटिंग्सके पवित्रान्त उत्कीर्ण-पक्षका संघाट मिनने लगा और उससे अनुमत्यापन के माना प्रकारसे प्रयत्न करने लगे। यन्त्रमें नन्दकुमारने परिचित हो जाने पर उन्हें ही इस कामके लिए उपयुक्त समझ

हेटिंग्स के भत्याचारों का विवरण लिखने को भार दिया गया। कारण नन्दकुमार नवाब अलौवर्दी खान के समय से उस समय तक की देश की शासनविधि और राजस्वविधियों से परिचित थे। उन्हें तत्कालीन राज्य-समस्याओं से भी बातें मालूम थीं। उनके समान उपयुक्त, राज्य को प्रशिक्षण को जाननेवाला राजकर्मचारी उस समय कोई था नहीं। इसीलिए मन्त्रियों ने उन्हें ही इस कार्य के लिए योग्य समझा। हेटिंग्स की प्रकृत प्रवृत्ति ने नन्दकुमार को उनसे प्रभावित न था, इस लिए उन्होंने भी प्रधानतः देश में फैले हुए भत्याचारों के दमन के लिए हेटिंग्स से विरुद्ध कार्य करना स्वीकार कर लिया। हेटिंग्स उन्हें चक्रान्तकारी समझते थे, पर वास्तव में इनमें यह दोष नहीं था। वे जिस काम को करते थे उसे खुले तौर पर करते थे, दुबका-चारी—विश्वासघातकता उन्हें बिल्कुल पसन्द न थी। इसी कारण ही भी एक मौला मिल गया। वर्तमान-राज महाराज तिलकचन्द महाराज को विधवा पत्नी ने हेटिंग्स के भत्याचारों के कारण कोन्सिल में एक अभियोग उपस्थित किया। बहुतांश कष्टना है कि यह काम महाराज नन्दकुमार का ही था; परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। नन्दकुमार यदि ऐसा करना चाहते, तो वे एक वर्तमान ही क्यों, बंगाल के समस्त जमींदारों के द्वारा अभियोग करा सकते थे। परन्तु उनका ऐसा उद्देश्य न था। वे भत्याचारों के भत्याचारों के दमन करने के लिए स्वयं अभियोग ही कर खड़े होने के लिए प्रवृत्त रहते थे। सुप्रसिद्ध कलकत्ता उसमें मौजूद था।

१८७१ ई. में न. स. च. की एक अभियोग का आवेदन पत्र बना कर नन्दकुमार स्वयं ही कोन्सिल के एक सदस्य मि० फ्रांसिस के हाथ दे गये। इस आवेदन में आपने हेटिंग्स के उल्लेख प्रथम, भत्याचारों को अपने ही रूप से निष्कृति दान और देशव्यापी भत्याचारों के अनुष्ठान की प्रकाशित की थी। हेटिंग्स ने उनका भी जो अनिष्ट किया था, उसका भी विशेष रूप से उल्लेख किया था। यह अर्जी फारसी में लिखी गई थी। मि० फ्रांसिस ने ११ मार्च को इसे कोन्सिल में पढ़ा था।

इस आवेदन ने नन्दकुमार ने मीरकासिम के युद्ध के

समय में गैरजोके उपकारार्थ जो कार्य किया था, प्रथमतः उसका उल्लेख किया; उसके बाद महम्मद रजा खान ने देश में किस तरह भोपण भत्याचार किया था, उसका भी वर्णन किया। बाद उसने हेटिंग्स ने उनके प्रति कैसा भत्याचार किया था, एक एक करके सब लिख दिया। कोन्सिल के सभ्यों के विचारों से जानें पर हेटिंग्स ने स्वयं उन लोगों के साथ बंगाल के भत्याचार सम्बन्धित शक्तियों से परिचय करा दिया, पर नन्दकुमार से नहीं कराया। नन्दकुमार के इस बारे में प्रार्थना करने पर गवर्नर ने उत्तर दिया कि, 'मेरा एक शत्रु है, उसके साथ आपकी बड़ी अनिष्टता है, आप लोगों ने उसे मन्त्रि-सभा के सदस्यों के पास पठा दिया है, जानने के लिए नियुक्त किया है। आप उसकी सहायता से उनके साथ परिचित क्यों नहीं होते?' उसके बाद गवर्नर ने उद्घोषित कर कहा था कि, 'मैं अपने मामलों के लिए और अपनी सुविधा के लिए सब तरह को चेष्टाएं करूंगा, किन्तु उससे आपकी ही प्रतिष्ठा होना पड़ेगा।' इसके बाद हेटिंग्स ने इलियट साहब को मारफत कोन्सिल के सभ्यों से महाराज का परिचय करा दिया।

इसके बाद ही, विशेषतः हेटिंग्स के प्रतिहङ्गों मि० फ्रांसिस के साथ नन्दकुमार का विशेष शोकाय हो जाने के कारण, हेटिंग्स नन्दकुमार को दमन करने के लिए नाना उपाय अवसरान्वय करने लगे। रिविडिण्ट प्रेस के साथ वर्तमान को मालगुजारी वृद्धों के विषय में नन्दकुमार का विवाद था। सेठ बुलाकीदास नामक एक भयवाक जोहरों की मूल्य के बाद हिसाब आदि के बारे में मोहनप्रसाद नामक उल्लेख जोहरों के आममुफ्तारों के साथ भी नन्दकुमार का भगड़ा था। वर्तमान कुल्लुवाटा-राज्य के बाद प्रमुख जगज्जन्द बन्धोपाध्याय नन्दकुमार के दामाद थे। इनको महाराज नन्दकुमार ने ही वास्तविक रूप में पुत्र की तरह पाला-पोसा, लिखाया-पढ़ाया और कन्या व्याही थी। अन्त में बहुतांश से अनुरोध कर उनको नौकरी भी सयवा दी थी। जिस समय महाराज ने यह अभियोग उपस्थित किया था, उस समय भी जगज्जन्द नवाब के दीवान राजा मुहम्मद के प्रधान नवाब-सरकार में नावही कर रहे थे, किन्तु वे ऐसे अननुष्ठान प्रकृतिके आदमी थे

कि श्यामक ने पक्षीन वाम करना पड़ता था, इसलिए वह चुप रहते थे। पक्षीन दूसरा कोई उपाय न देख में पाक-श्रीही हो गये। हेटिंग्स, प्रेम्स, मोहनप्रसाद और जगन्नाथजी हस्तगत कर नन्दकुमार के मर्त्यभाग के लिए सर्वदा परामर्श करने लगे। मोहनप्रसाद प्रवचक और धक्कानाकारी थे, इसलिए उस समय क्या प्रंगरेज और क्या बंगाली, सब उन्हें छत्राकी दृष्टि में देखते थे; और तीनों का हेटिंग्स ने स्वयं भी एक टफा उन्हें अपने मकान से निकाल दिया था और पाहन्दा फिर कभी न जाने के लिए कह दिया था। किन्तु जब उन्हें हेटिंग्स ने अपना अभीष्ट सिद्धि के लिए—नन्दकुमार को नष्ट करने के उद्देश्य से फिर उन्हें पत्तर और पान दे कर बुला लिया। जगन्नाथ ने क्रमशः प्रत्यक्ष के साथ साक्षात् करना बन्द कर दिया और उनके विरुद्ध मोहन और हेटिंग्स के साथ परामर्श-पूर्णक पड़गन्त रचने लगे।

नन्दकुमार ने अपने भाव्यदम में इन सब बातों का वर्णन कर गवर्नर के फूट उद्देश्य की बात प्रकट की थी; जिस समय दिल्ली के बादशाह ने नन्दकुमार को "महा राजा" की उपाधि और खिलत दी थी, उस समय प्रयागपुर बादशाह ने एक आलरदार पालकी और सम्मान्य राजसम्मान विरुद्ध प्रदान किये थे। यह सामान जब पटना आया, तब मीरजापुर की मृत्यु हो चुकी थी, नन्दकुमार की नायक-सुषेदारी जाती रही थी। उस समय नये नायक सुवेदार महम्मद रजा खाँ की उत्तेजना और भयने पटने के मामलकर्ता राजा सिताब राय ने नन्दकुमार के उस बादशाही उपटोहन को रोक लिया। नन्दकुमार को मालूम पड़ने पर उन्होंने हेटिंग्स के कहा। हेटिंग्स ने उन्हें मंगा तो लिया, पर नन्दकुमार को न दे कर अपने काम में लगा लिया। महा राजा नन्दकुमार ने अपने परिचय में इस बात का भी उल्लेख कर दिया था। ये बातें उनकी व्यक्तिगत थीं। हमने अपना उद्देश्य रजा खाँ और सिताब राय की ओर हेटिंग्स के कम्पनी के धारणा तथा साधारणका क्षितता पनिट किया था, यह बात भी सिद्ध हो गई।

काशी के राजा बलदेव सिंह के उत्तराधिकारी की

तरफ प्रंगरेजों के पक्षीन चेष्टा-मागुदा और विजयगुरु नामक दो परगनों के निमित्त, कम्पनी को दोशनी मिलने की तारीख से प्रकट की सन् ११०८ तक २४ लाख रुपये बकाया निकलते थे, परन्तु चेतसिंह द्वारा गुप्तरीत्या उपहार पा कर हेटिंग्स ने कम्पनी के इस बकाया रुपये के लिए कोई विशेष प्रवचन नहीं किया और तबसे उक्त दोनों परगने बागी-राज के हो पड़ गये हैं। रंगपुर का बहारबन्द परगना रानी भवानी से फोगन से छोन कर हेटिंग्स ने उसे अपने दोषान लणकात्ता नन्दो को दे दिया। इससे रानी भवानी को बहुत क्षति हुई है। परिचय-पत्र में ये सब बातें भी लिखी गई थीं। पक्षीन नन्दकुमार ने यह निवेदन किया था कि, "गवर्नर हेटिंग्स साहब के विरुद्ध यह परिचय पत्रा करके मैं भी मोघन विपद-सागर में डूब-पूरक कूदने के लिए प्रयत्न हो रहा हूँ इस बात की मैं जानता हूँ, पर क्या करूँ दूसरा कोई उपाय नहीं है। गवर्नर के पत्रवित्तापत्रों में परिचित हो कर भी यदि चुपचाप बैठा रहूँ, तो सम्भव है मैं निम्न में उनके द्वारा और भी पनिट हो। इसलिए पाक-रचार्य और न्याय-धर्मगुरीध वगैरे में पाप कीर्तिका समय यह परिचय पत्र लिखित करता हूँ। जब मैं पाप कीर्तिका से इस विषय में विशेष ध्यान देने के लिए प्रार्थना करता हूँ।"

इस परिचयपत्र के पढ़े जाने के बाद हेटिंग्स ने मोन भर्त्ता करके पूछा—"मैं कौतूहलवश पूछता हूँ कि पाप पत्रलेखे इस परिचयपत्र के बारे में कुछ जानते थे या नहीं?" प्रान्सिमने उत्तर दिया—"कौतूहलका उत्तर देने के लिए मैं बाध्य नहीं हूँ। हाँ, गवर्नर पूछ रहे हैं, इस बात से मैं इतना कह सकता हूँ कि नन्दकुमार ने जब इसे भेजा था, उस समय उनकी पूर्ण रूपना और व्यवस्थादि देख कर मैं समझ गया था कि यह गवर्नर के विरुद्ध निवेदन हो परिचयपत्र पूर्ण है। हाँ, ये परिचयपत्र कौन कौन से हैं और किस दम से लिखे गए हैं, यह बात मुझे नहीं मालूम थी।" इसके बाद उस दिन सभा भङ्ग हुई।

ता० १२ मार्च की मन्त्रिमण्डल परिचयपत्र नन्दकुमार

का और एक पत्र पढ़ा गया। इसमें भी नन्दकुमारने पूर्व पत्रके अभियोग मूव सत्य हैं, इसका हट्टाके साथ समर्थन किया था। इसमें एक जगह लिखा था, कि 'हेटि'ग'मने बंगालमें था कर राजस्व और देगकी प्रवस्था के विषयमें ज्ञातव्य विषय जाननेके लिए सुभसे सहायत मांगी थी, मैं भी उनकी इच्छाके अनुसार कार्यमें प्रवृत्त हुआ था, उसके बाद जब तक कार्याधार नहीं हुआ, तब तक 'हेटि'ग'स सुभ पर बड़े सन्तुष्ट रहे और मेरे परामर्शानुसार चलते थे, किन्तु ज्यों ही मतलब निकल गया, त्यों ही उन्होंने सुभसे मित्रता नहीं रखी, बल्कि शत्रुताका आचरण करने लगे। मेरे लिखनेका उद्देश्य मात्र इतना ही समझें कि जिससे देग और प्रजा तथा कम्पनीके सुख और स्वाच्छन्द्यको हानि हो। ऐसी परतिसे आप लोग कार्य करें।

इस पत्रकी सुन कर कर्नल मनसमने, नन्दकुमारकी अपने अभियोगके प्रमाणों से कर बोर्डके सामने उपस्थित होनेके लिए प्रस्ताव किया। गवर्नरने इससे विरुद्ध प्रतिवाद किया, जिसका सारांश इस प्रकार है—नन्दकुमारकी बोर्डके सामने तुलवानिके प्रस्तावका समर्थन होनेके पहले ही मैं कह देता हूँ कि नन्दकुमार मेरे अभियोगोंके रूपमें बोर्डके सामने था कर खड़े होंगे, यह मैं जीते जी नहीं सह सकता। इसमें बोर्डके सामने सामान्य अपराधीकी तरह विचार-प्राप्ति हो कर मैं कदापि खड़ा नहीं हो सकता। अथवा मेयरोंकी मैं अपने चरित्र और जनताका विचारक कदापि नहीं समझ सकता। प्रसङ्गवश यह बात भी मुझे कहनी पड़ती है कि यद्यपि मैं महाराज नन्दकुमार मेरे अभियोगों नहीं हूँ, जबरन ही भरिष्ठ कर्नल मनसम और फिलिप फ्रान्सिस की ही मैं वास्तवमें काय शारक समझता हूँ। कानूनके अनुसार इस बातकी प्रमाणित न कर सकने पर भी मेरे हृदयके हट्ट विस्वासके अनुसार मैं इसे ही अपना अभियोग समझता हूँ। इनकी इस गंभीर उद्देश्य-साधनके अनुकूल कई सहायक भी मिल गए हैं। जिनमें महाराज नन्दकुमार, वैदमानकी महारानी, दीवान रूपनारायण चौधरी और फाउक भी शामिल हैं।..... फ्रान्सिस इस प्रकारका पत्र बोर्डके सामने रख्य उपस्थित

करके एक मानहानिकर कार्यमें हाथ डाल रहे हैं, यह भी उनके पदमें योग्य नहीं है।.....मैंने यह भी सुना है कि नन्दकुमार इन सब कागजातोंकी ले कर मनसम साहबके घर गए थे और उनसे बहुत देर तक परामर्श कर यह सब बनाया है। इससे पहले किसी विशेष सुत्रसे मुझे नन्दकुमारके अभियोग-पत्रकी दो नकलें प्राप्त हुई थीं, अब देखता हूँ कि मुलांगमें हमसे कुछ परिवर्तन हो गया है। मैं फिर भी कहता हूँ, कि मैं बोर्डके सामने अपराधीकी हैमियतसे किसी भी प्रकार खड़ा नहीं होऊंगा, और न बोर्डकी ही नन्दकुमारकी गवाही लेने दूंगा। बोर्डकी इस प्रकारसे विचार करने का गवाही लेनेका कोई भी अधिकार नहीं है।"

इस पर बोर्डके सदस्योंमें बड़ी वाक्-वितण्डा हुई। कर्नल मनसमने गवर्नरने संवाददाताका नाम पूछा। परन्तु 'हेटि'ग'मने यह कह कर कि आपसे उन व्यक्ति पर विपत्ति या सक्ती है, उसका नाम नहीं बताया। बारबेल साहबने गवर्नर साहबके बातकी पुष्टि की। मनसमने उस बातकी सम्पूर्ण चर्चा उठायी। बारबेलने भी नन्दकुमारकी उपस्थितिके विरुद्ध आपत्ति की और कहा, "नन्दकुमारकी कोई अभियोग करना हो, तो वे गवाही और प्रमाणों से कर सुप्रीम-कोर्टमें जा सकते हैं।" यन्तमें बहुत तर्क-वितर्क के बाद जब नन्दकुमारकी बोर्डके समक्ष उपस्थित करना ही परामर्श प्रिड हुआ, तो सैक्रेटरीसे नन्दकुमारकी बुलवा लेने लिए कहा गया। अब गवर्नर 'हेटि'ग'स उपाध्यायान्तर न देख सहसा बोल उठे, "मैं आजकी यह मन्त्रिसभा भङ्ग करता हूँ।" मेरी अनुपस्थितिमें इस प्रसम्पूर्ण सभामें यदि कुछ कार्य हुआ, तो वह कानून न्यायसङ्गत नहीं समझा जायगा।" बारबेलने कहा, "जब सभापति द्वारा सभा भङ्ग की चुकी, तब मैं भी जाता हूँ और पुनः प्रथम-नसार गवर्नरका आदेश न मिलने तक मैं इसमें शामिल न होऊंगा।"

दोनोंके चले जाने पर अन्य तीन मन्त्री 'हेटि'ग'मने इस प्रकार उक्त कार्यकी व्यायसङ्गत न समझ रख्य' ही अवशिष्ट कार्य चलाते गये। नन्दकुमार भी उठकर कर

उमकी गवापोती गई। बायझकतानुसार नन्दकुमारने प्रमाणरूप मृत दमोसे दाखिल की। किसी दमोसे प्रमाणार्थ छणकाल नन्दोको उपस्थिति और गवाहीको ज़रूरत पड़ी। मरिचमाने यह बुझा भेजा, किन्तु उन्होंने जवाबमें दिया कि, 'मैं इस समय गवर्नरके पास हूँ, उनके निवेद करनेमें मैं नहीं' था सका।' मरिचोने विस्मित और क्रुद्ध हो कर कान्त बाबू और गवर्नरके विरुद्ध इस प्रकारके कार्यमें विषयमें चर्चा मन्त्रा निवृत्त कर मभा भङ्ग कर दी।

इधर हेटिंग्स, कौन्सिलमें उपस्थित हो कर नन्दकुमारके मरणावधि के लिए कटिबद्ध हो गए। यह हम, उनके सुग्री मटरउद्दीन, गद्दागोविन्द, छणकाल, नव-छण बादि उनको सहायताके लिए प्रवृत्त हुए। कमान्त उद्दीन खा नामक एक व्यक्ति उस समय हिजरीउ नमक-गोलाके इजारादार थे। टावान छणकाल ही इस व्यक्ति से बेनामी पर उस इजाराका भोग करने थे। इस व्यक्ति के पितामें नन्दकुमारकी मित्रता थी। जिस समय कर्जेके रूपोंके लिए दुगनीके श्रेष्ठ दलत उक्ताने नन्दकुमारको पिघाटा मशीन द्वारा ५ दिन बाबद्ध रखा था, उस समय इस कमान्त उद्दीनके पिता श्रेष्ठ दलामने नन्दकुमारको जमानत दे कर छुड़ाया था। कमान्त पसल प्रकृतिका बादमी था, इस कारण नन्दकुमारके साथ उसकी मित्रता अधिक दिन न रही। अन्तमें उसके कृपाकामका बे-नामी-दार हो कर हिजरीके नमकके गोलेका इजारादार होने पर कान्त बाबू, भारबेल, हेटिंग्स आदिने उससे बहुत धूस लेनी शुरू कर दी। बाविलको यह सहा उद्योहित हो कर गद्दागोविन्द और चर्चडिकन साहबके नाम कौन्सिलमें अभियोग उपस्थित करनेके लिए उद्यत हो गया। नन्दकुमारके साथ उस समय हेटिंग्सका विवाद शुरू हो चुका था। उसमें मोका देव नन्दकुमारके साथ परामर्श करना चाहता। नन्दकुमारके कामाता राय राधाचरणके साथ बातचीत कर कमान्तउद्दीन महाराजके पास जा कर कहा, 'यह फाउक साहबकी मारफत कौन्सिलमें अपनी पत्नी पेश करना चाहता है, अतएव यदि आप उसके लिए फाउकमें तथा अनुरोध करें, तो अच्छा हो।' नन्दकुमार आतंकित बायझ से,

उद्दीनने सुननेके साथ ही राय राधाचरणके साथ उनके फाउकके पास भेज दिया। फाउकने भी नन्दकुमारके अनुरोधमें उसके अभियोगकी कायस्थितमें उपस्थित करना स्वीकार कर लिया। तीन वर्षके भीतर उसने बार-बारने ४५ हजार, गवर्नरने बतौर नज़रके १५ हजार, बसोटाटने १२ हजार, राधा राजवज्रमें ० हजार और छणकालमें ५ हजार रुपये भिजे थे। हेटिंग्सकी यह बात मान्यम पड़ते ही, उद्दीन परेडमके सुनो मटर-उद्दीनकी मारफत कमान्तको हस्तगत कर लिया। हेटिंग्सने इसके द्वारा नन्दकुमारके विरुद्ध एक बड़े भागे और भयङ्कर अभियोगका सुवर्णत किया। उद्दीन (१७०५ ईमें १८ पचीसको) सुप्रीम कोर्टके जजोंको इस बायझका एक पत्र लिखा, कि कमान्तउद्दीनने था कर कहा है कि नन्दकुमार और फाउकने हमसे बलपूर्वक हेटिंग्स, भारबेल आदि नाम पर रिश्वत लेनेका एक झूठा अभियोगपत्र लिखवा लिया है और वे गद्दागोविन्द आदिके नामका अभियोगपत्र बाविस नहीं दे रहे हैं। अन्तमें इसको गवर्नर आदिके विरुद्ध पड़्यन्तकी चेटा मसहो और इसको लांच करनेके लिए प्रवृत्त हुए। पहले कमान्तउद्दीनको बावेदन करनेके लिए कहा गया। बावेदनपत्रमें अभियोगकी खूब सजा दिया गया। गद्दागोविन्द और चर्चडिकनके नाम कमान्तने जो अभियोग पत्र नन्दकुमार और फाउकको दिया था, वह भिक् उन्हे छरानेके लिये लिखा गया था, वस्तुतः यह कौन्सिलमें उपस्थित करनेके लिए नहीं दिया गया था। अन्तमें यह जब नन्दकुमारके पास उन्हे बापस भोगनेके लिये गया, तब नन्दकुमारने उससे कहा कि, 'यदि यह गवर्नरके विरुद्ध कोई अभियोगपत्र लिख दे, तो पहलेका अभियोगपत्र बाविस कर सकते हैं।' कमान्तको बायझ हो कर अपने सुनो द्वारा नन्दकुमारके अभिप्रायानुसार गवर्नरके विरुद्ध अभियोगपत्र लिख देना पड़ा। उसके बाद राधाचरणके साथ वह फाउकके घर गया, फाउकने उससे पूछा, कि गवर्नरको जितने रुपये दिए हैं? उसने जब यह कहा कि, 'मैंने कुछ नहीं दिया', तब सुनोने था कर फाउकने एक जितना उठा कर उसके हाथ पर मारी और फिर उससे गवर्नर आदिके नाम रिश्वत

लेनेका एक रक्का लिखा लिया। इसके बाद भी कमालने उस अभियोग-पत्र वापस पानेके लिए बहुत कोशिश की थी; किन्तु कुछ फल न हुआ।

यथासमय मुकदमा कोर्टमें उपस्थित हुआ। नन्दकुमारने कहा कि कमाल उद्दोन्ने गङ्गागीन्द्र आदिके विरुद्ध लिखा हुआ अभियोग-पत्र किसी दिन वापस नहीं मांगा है, वरिष्ठ कोमिसनमें पेश करनेके लिए 'ही' बार बार अनुरोध किया है। गवर्नरके विरुद्ध अभियोग-पत्र लिखानेके लिए किसीने भी उसे साक्ष्य नहीं किया, उसने स्वतः ही लिख वार मुझे दिखाया था। मैंने उसको वर्णना पच्छी न होनेके कारण उसमें दो एक जगह परिवर्तन करा कर कमाल उद्दोन्ने के मुन्दीके हाथसे उसकी किरबे निकल करा दी थी। फाटक साहबने भी साक्षी दी। अन्तमें प्रमाणादिके बलसे मुकदमेकी प्रवस्था ऐसी हो गई कि नन्दकुमारके विरुद्ध उसका टिकना मुश्किल देखने लगा। नन्दकुमार बिना किसी विघ्नके छुट जायगे, यह समझ इष्टि'स' दूसरी तजवीज सोचने लगी।

मीरकासिमके समयसे कासिमबाजारमें पूर्वोक्त बुलाकी दास बैठकी अफाहरातकी दूकान थी। नन्दकुमारके शत्रु मोहनप्रसाद ही सत बुलाकीदासके भ्रामसुधार थे। नन्दकुमारके साथ बुलाकीदासका लेनदेन था। मीरकासिमके समयमें नन्दकुमारने बुलाकीदासके पास एक मोतीकी कण्ठी, एक कलका, एक शिरपेच और चार डोरीकी चंगूठी ये सात चीजें बेचनेके लिए रख दी थी। चंगरेजीके साथ मीरकासिमका कुछ झिड़ जानेसे कासिमबाजार छुट गया और उसीके साथ नन्दकुमारका माल भी लूटा गया। पीछे बुलाकीदासने नन्दकुमारको उसके बटके ध०२१) रुपये देना मंजूर कर एक बाड़ी-कार-पत्र लिख दिया और चार आने भेकड़ा ब्याज देना भी कबूल किया। उस समय कम्पनीके पास बुलाकीदासके २ लाख रु० लगा थे। बुलाकीदासने, कम्पनीसे रुपये मिलने पर ब्याज संचित उसके रु० बुकामेके लिए वाटा कर दिया। इस दलील पर मरताबराय, महम्मद कमान और बुलाकीदासके पकील मिलावतने (ब-तोर गवाहोंके) दस्तावेज जिये थे। उसके बाद बुलाकीदास-

ने नीचे अपना दस्तावेज और सुधार संग्रह कर नन्दकुमार-को दिया था।

बुलाकीदासके मरनेके बाद पद्ममोहनदाम उसकी सम्पत्तिके तत्त्वावधारक हुए और उनकी मृत्युके पश्चात् बुलाकीदासकी पत्नी और गङ्गाविष्णु नामक एक निकट सम्बन्धी सम्पत्तिके अधिकारी हुए। इनके समयमें भी मोहनप्रसाद भ्रामसुधार थे। पद्ममोहन जिस समय तत्त्वावधारक थे, उसी समय कम्पनीमें २ लाख रु० वसूल हो गये थे। पद्ममोहनने उसमेंसे नन्दकुमारका कर्ज चुका दिया, परन्तु गङ्गाविष्णुने अधिकारी हो कर मोहनप्रसादके परामर्शानुसार नन्दकुमारके नाम एक टीवानो मुकदमा दायर कर दिया। जिस समय यह घटना हुई थी, उस समय तक सुप्रीमकोर्ट नहीं हुआ था, मैजिस्ट्रेटकोर्ट था। गवर्नर स्वयं ही मैजिस्ट्रेटकोर्टके सभापति थे। इस मुकदमेमें बुलाकीदासके अधीकार-पत्रके बल पर नन्दकुमारको जीत हुई थी। इष्टि'स'की यह बात मालूम थी, क्योंकि वे उस समय मैजिस्ट्रेटकोर्टके प्रेसीडेण्ट थे। अब उन्हें उस अधीकारपत्रकी बात याद आ गई; उन्होंने मोहनप्रसादकी बुझवा भेजा। मोहनप्रसादके उपस्थित होने पर सन्धि कुछ सलाह हुई। उसके बाद मोहनप्रसादके सुप्रीमकोर्टमें नन्दकुमारके नाम, बुलाकीदासके दस्तावेज और सुधार जान बना कर दलोल बनाना और उसकी जरिये बुलाकीदासके उत्तराधिकारीसे रुपये इकट्ठेपनका एक अभियोग उपस्थित किया। इष्टि'स'की मान्यता थी कि पंखेली पदार्थके मुकदमे पार न पा सकते हैं, इसीलिए उन्होंने यह चाल चली। मैजिस्ट्रेटकोर्टके उस पुराने मुकदमेसे यह कूट निष्कासा गया।

उस समय इंग्लैण्डके भारतीयों के अनुसार जालके अपराधमें प्रायदण्ड दिया जाता था; इसलिये ऐसे अपराधीको उस समय खूनी ससामोकी तरह जावतेसे साथ रखा जाता था।

मोहनप्रसादका अभियोग १८७५ ई०को हठी मईकी कोर्टमें उपस्थित हुआ। नन्दकुमार सवादा पा कर कहीं भाग न जाय, इस ब्याजसे जजोंने उसी समय कलकत्तेके गरीफके पास एक परवाना लिख कर भेजा,

जिसमें आदेश था कि, 'चाप इस पक्षको पाने को मन्दा-
राज मन्दकुमारको साधारण कारागारमें पावह रखने
में चाप भर भी विनम्र न करे'। मोहनप्रसाद जो।
सामान्यहोने लगे नामक दो व्यक्तियों के इस्तेमाल में कुछ
कुछ प्रभावित होता है, कि उन्होंने जान लिया है,
इसमें विचारार्थ उन्हें पावह रखने के लिए चापको
आदेश दिया गया है। प्रधान मन्त्री इन्हीं परवाने
पर दस्तावेज करके ही चप दिये। जब परमाना निकाली
जाने ली तो यागियां होने लगी, तब मि० क्लैरेंट नामक
एक प्रसिद्ध पत्रकारों ने स्वतः प्रवृत्त हो जजोंसे यह कहा
कि, "मन्दकुमार साधु-गण्य सम्मानास्पति है, दण्डार्थ
है। यदि सामान्य अपराधियों की तरह उन्हें साधारण
कारागारमें भेजा जायगा, तो वे जातिभ्रष्ट हो जायेंगे।
विचारके बाद सुनिश्चित होने पर भी उन्हें सम्भवतः
समाजमें रोप भी कर रहना पड़ेगा। अतएव चाप
लोग क्षमा कर उन्हें अन्यत्र पावह रखने के लिए आदेश
दे दिया।" जजों ने उत्तर दिया, "तो गामको इन्हीं के
मकान पर जा परामर्श कर जैसा होगा, वैसा किया
जायगा।" रातको छह बजे मन्दा आया कि जजों के पूर्व
आदेशानुसार जो कार्य होगा। - यह सुबह चीन की
कमलकली के चारों ओर जाहिर हो गई। तत्काल मन्दकुमार
मनमानी फैल गई। मन्दकुमारके घर मन्दमन्त्रिणी होने
लगी। रातको दस बजे शरीर मन्त्री मन्दाकुमारके
मकान पहुँचे और उन्हें वहाँ विचारण कारागारमें ले
गये। उस दिन राजा मुहम्मद, राय राधाचरण, सयुक्त
फावक माहद तथा और भी कुछ आलोच-पूजन अधिक
रात्रि तक कारागारमें मन्दाकुमारके पास थे। सोठे
समय मुहम्मदसे मन्दाकुमारने कहा था, "छेड़-छेड़ की इस
प्रवृत्तिके विधाता है, यह मैं अच्छी तरह समझता
हूँ; परन्तु यह मेरी अहंतिनिधि है—दोष उठका नहीं
है। तुम लोग धरना नहीं, भगवान् मेरी रक्षा
करेंगे।"

दूसरे दिन मन्दकुमारके आचार्य साधारण बहुतने मन्द-
कुमारके निकले पाये। बहुतों की प्रवेष्ट करनेमें रोका भी
गया। मन्दकुमारने चुन लिया, पर वे धैर्यवान् न
हूँ। पूर्व रातको वहाँ ने जल, खाना न किया था।

मन्दाकुमार साधारण कारागारमें पूरा पात्रिक नहीं
कर सकते, सुतारों पात्रादि भी नहीं करेंगे, ऐसा
उन्होंने निश्चय कर लिया। लोको लोको दिन बढ़ने लगा,
लोको लोको उनकी ध्याना में बढ़ने लगे। परिवारको भी
लोको देखा करते रहने के लिए कचरा पाप पुप-चाप
बैठे रहे। राजा मुहम्मद आदिने फिर कोमिग की जि
मन्दाकुमार कुछ खा-पी नें; कोमिगने सन्ध्या में जजों-
में अनुरोध कर दोढ़-धुप करने लगे, परन्तु कुछ फल न
हुआ, प्रयुक्त जजों ने पण्डितों में एक व्यवस्थापक लिखवा
कर दिखा दिया कि कारागारमें रहने में मन्दकुमारकी
जाति नष्ट नहीं हो सकती। कोमिगने मुहम्मदों ने जिस
समय जजों में मन्दकुमारके तीन दिन निजाल उप-
वासकी बात कह कर अनुरोध किया, उस समय छेड़-छेड़
भी वहाँ उपस्थित थे। किन्तु जजों ने किसी तरह भी
धरना मत न बढ़ना और फिर वे पण्डितों का व्यवस्था-
पक दिखा दिया।

इन्हीं यदि चाहते, तो मन्दकुमारकी इस कालेज
में सक्त कर सकते थे। अन्य किसी स्थान में वा उनमें
मकान पर ही प्रहरी-वेस्टिड कर रच सकते थे।
ऐसा करने में उनके कर्तव्यमें कुछ त्रुटि न होती। यत्कि
यह ही बढ़ता। परन्तु वे ऐसा कर न सके; क्योंकि
उन्हें डर था कि कहीं उसमें छेड़-छेड़की ये रनिर्वातन-
रहस्यकी सम्पत्ति, यजिमें कुछ व्याघात न पड़े।

जजों के अनुरोध करने पर लष्करजीवन शर्मा, साधुशिव
शर्मा, लष्करजीवन शर्मा, गोरोजान्त शर्मा आदि कुछ
पण्डितोंने व्यवस्था दी कि, 'कारागारमें जैसा ध्यानीने,
जिसकी इत लुटो हो ऐसे घरमें, छेड़-छेड़ मन्दा-रहित
हो कर गजान्तमें ध्यान-पूजा आदि करने में पण्डित
नहीं होता और कारागारके बाद बिना प्रायश्चित्त
समाजमें रहने की सकता है।' मन्दकुमार इस
व्यवस्थाकी पड़ कर हँस दिये। पण्डितोंने मन्दकुमारका
कारागार देख कर कहा कि, 'मन्दाकुमारका यहाँ आहा-
रादि नहीं हो सकता, पर करने में जातिभ्रष्ट नहीं हो
सकते, निर्दोष आहारपादि करने मात्र ही यह हो सकता
है।' कुछ भी हो, मन्दकुमारने यह व्यवस्था पात्रा नहीं
की, वे पूर्ववत् उपवास हो करने लगे। तीसरे दिन

भाषा की पीड़ा हुई। इन्हीं ने डर कर जहाँ नर्दिसनसे रोगीकी चमत्ता पूछी। डाक्टर साहबसे थोड़ीनीय दगाका परिचान होते हो इन्हीं ने काराध्यक्ष मैथ डय एडलकी बुलवा कर कारागारके बाहरवाले बागानमें एक तम्बू लगा देनेके लिए कह दिया। पोछे महाराज उस तम्बूमें खान-पूजादि करने लगे।

उधर पड़यत्नका मुकदमा पहली दायर होने पर भी, 'हेटिंग्स' को प्रोचनसे जाल करनेके मुकदमेकी तारीख उससे पहले ही डाल दो गई। ८ जूनको विचार शुरू हुआ। ८ जूनको एडवर्ड स्टाट, रबार्ट मैक्फार्लन, टमस स्मिथ, एडवर्ड एलरिंजन जोसेफ, वण्डर स्मिथ, जन रविनसन, जन फर्गुशन, भायर भाट्टी, जन फालिष, सैमुयल टाचवेट, एडवर्ड सटरथोथेट मोर चर्च वंडन ये १२ जूरी तथा सुप्रीमकोर्टके चेम्बर, टाइट, लेमिटर ये तीन जज और प्रधान विचारपति इन्से विचारसन पर बैठे। इतिवृत्त साहज हिमायो थे। तथा नन्दकुमारकी तरफ घटना की जैठ और बरिटर फरार नियुक्त हुए। फरियादीकी तरफ कमाल, उद्योन् खाँ, उनका मौकर हुसैनप्रसी, खाभा पिक्कस, सदरउद्दीन्, मोहनप्रसाद, राजा नवलक्षण, कृष्णजीवनदास और सज्जत पाठक ये पाठ व्यक्ति मूल शक्ती थे। नन्दकुमारकी तरफ भी बहुतसो गवाहियाँ थीं। फरियादीकी तरफसे यह प्रमाणित करनेकी कोशिश हुई, कि अह्मीकार-पत्रके तीन साक्षियोंमेंसे सितावत पकीन मर गये हैं, महतावराय नामका कोई व्यक्ति नहीं था और महम्मद कमाल ही कमालउद्दीन् खाँ हैं। नन्दकुमारकी तरफसे कहा गया कि अह्मीकारपत्रके तीनों साक्षी मर चुके हैं। महम्मद उद्दीन् खाँ नहीं हैं। फरियादीकी तरफकी साक्षियोंमें गवाही देते समय यही गड़बड़ी को यो। दोनों पक्ष द्वारा मनोमन साक्षी कृष्णजीवनकी गवाहीसे भी असामी पक्षकी सुमिता, बुभा। परन्तु इन्हीं जूरियोंको बाज समझाते वखु सिर्फ फरियादी-पक्षकी गवाहियोंकी बात ही व्याख्या-पूर्वक समझा दी थी। आखिर १५ जूनको अधिक रात्रि तक विचार होता रहा। दूसरे दिन राय सुनाई गई। महाराज नन्दकुमारके लिए प्राणदण्डका आदेश हुआ।

नन्दकुमार कारागारमें जा कर एक दुमज्जि मकान पर रहने लगे। आदेशके बाद २२ दिन तक पाप उसी कारागृहमें थे। इसी बीचमें आपने फ्रांसिस और लेमिटर की एक पत्र लिखा था, जिसमें आपने अपनी दोष हीनताकी बात लिखी थी। नवाब सुमारक उद्दीवाने भी इस समय कौन्सिलको पत्र लिखा कि 'हर्गै एडा-विपकी सेवामें यह संवाद भिजा जाना चाहिए, और जब तक उनका आदेश न आवे, तब तक नन्दकुमारकी फाँसी स्थगित रखी जावे। परन्तु कुछ फल न हुआ।

इसी बीचमें, जब कि नन्दकुमार कारागारमें थे, पड़यत्नवाले मुकदमा भी फैसला हो गया। उसमें 'हेटिंग्स'के विरुद्ध अभियोगमें कोई भी दोषी नहीं ठहरा। किन्तु बारवेलके विरुद्ध अभियोगमें नन्दकुमार और राधाचरणको दोषी ठहराया गया।

शरीफ मैकवी नन्दकुमारके उन दिनोंके साहज, चरित्रकला और गाभीर्यका विषय विशेष रूपसे लिख गये हैं। ता० ५ अगस्तकी प्रातःकालके समय शरीफ साहब कारागारमें उपस्थित हुए। यही दिन फाँसीका दिन था। महाराजने रात्रिकी घपना हिंसायकिताना देखा था। महाराजने शरीफकी देखते हो गोचे कर कर एक घंटेमें बैठ गये और प्रसन्नचित्तसे अपने तीन ब्राह्मण अनुचरोंको अपनी चूत-देह बहन करनेके लिए इशारा किया। इस समय आपने शरीफके समक्ष लेमिटर, मनुसन्के लिए सम्मान-सूचक शब्द कहे थे। उन-लोकीकी गुहदासका तत्वावधान करने और उन्हें ब्राह्मण समाजका नेता समझनेके लिए आपने शेष अनुरोध किया था। उस समय भी आप यत्न और स्थिर थे। शरीफसे समय पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया कि अभी समय नहीं हुआ। यह चुन कर आप कैमर-चिकामें निविष्ट हो गये। कुछ देर बाद महाराज उठे और उनके परित्यक्त द्रव्यादि राजा गुहदास से जायेगे, ऐसा भाव प्रकट कर पासकीमें जा बैठे। खिदिरपुरके पास कुली-वाजारे (बांझुनिक 'हेटिंग्स') फाँसीका स्थान निर्दिष्ट हुआ था। अनुचर ब्राह्मणोंके उपस्थित होने पर आपने कुछ देर कर तक जप किया। पोछे इशारा करने पर हाथ बाँध कर आपकी मज पर

मया। उससे बाद महाराजका हमारा पाने की सगडे पशुचराने सनहा मुं'ह टक दिया। शरोकने उस समय आपके मुख पर प्रगान्त भाव देखा था। उससे बाद आपकी जानी हो गई। निर्दिष्ट ब्राह्मण पशुचरगण आपसे शवको ले गये।

दम कोमिसे बहुतोंने गङ्गास्नान कर महाहत्या-दण्ड न-लानित पापको गान्ति की। बहुतोंने महाहत्यासे कलहिन कलहनेमें रहना हो छोड़ दिया और वे गङ्गाके उस पार चले गये। इसी घटनाके बाद बानी और उत्तर-पादामें ब्राह्मणवासका प्रादुर्भाव हुआ।

उस समय कलकत्तेमें एक रक्षास्य (चियेटर) था, पंगरेज लोग हो उसके अभिनेता थे। उन दोनोंने इन्हे और हेटिंसके चत्पाचारोंके आधार पर रक्षानाय बना कर उसका अभिनय भी किया था। *

महाराज नन्दकुमारके पिछे सब भी विद्यमान हैं, कोर्ति भी मौजूद है। आपने भद्रपुरवासे सक्कानमें लख ब्राह्मणोंको एकत्र कर उनकी पदधूनि संघट की थी। इस पदधूनिका कुछ पंगु कुच्छपाटाके राजभवनमें सब भी विद्यमान है। एक लाख ब्राह्मणोंके बैठनेके लिए काष्ठान्न समवाये थे, जिनमेंसे दो-चार सब भी मौजूद हैं। जिव दारसे एक लाख ब्राह्मणोंने प्रयोग किया था, वह तोरबहार भी मौजूद है। महाराज वैष्णव थे। भद्रपुरमें आपके द्वारा प्रतिष्ठित नवरत्न-मन्दिरमें लक्ष्मीनारायण और हनुमानचन्द्र नामक दो विपक्ष विराजमान थे। गौरीगढ़र नामक ग्राम और चकासोपुरकी भद्रकासी भी आप हीके द्वारा स्थापित हुई थीं। भद्रकासीका मन्दिर सब भी ज्योंका ज्यों मौजूद है। नवरत्न-मन्दिरका ध्वंसावशेष रह गया है। लक्ष्मीनारायण, हनुमानचन्द्र और गौरीगढ़रकी प्रतिमा-को राजा महानन्द (नन्दकुमारके दोहित) भद्रपुरसे कुच्छपाटामें लै पाये थे, जो सब तक बची है। उनकी सिंघा और भी आपके कई स्मृतिचिह्न हैं, जिनके देख कर आप पर हेटिंस, और इन्हे द्वारा किये गये चम्पाय-का हमराव हो जाता है।

हेटिंस को विचार-प्रणालीकी निर्दोष निष्ठ करनेके

नियत समय विभाषणमें हेटिंसका विचार हुआ था, उस समय राजा महानन्द तथा चम्पाय हेटिंस-प्रिय लोगोंने भारतमें एक पापेदनयत्र भेजा था। नन्दकुमार विद्याभूषण—राधामानतराष्ट्रियो नामक संस्कृत काव्यके रचयिता।

नन्दगढ़—एक ग्राम। कानिधर्मपदमनके रीज मन्दादि गोपीने इसे चुनन कर जल घोड़ा था। (अध्यात्म) नन्दगढ़—वर्षके प्रदेशके वनगाम जिनमें चत्पागौत नामा-पुर तालुकका एक शहर। यह पचा० १५' ४४" उ० और देशा० ७४' ४५" पू० वनगाम शहरसे ५१ मील दक्षिण-में अवस्थित है। लोकसंख्या ६२५० है। यह शालिग्रामका प्रधान केन्द्र है। सुवारी, नारियल, नारियलका तेल, एजूर और लकड़ से सब सब दूसरे दूसरे देशोंसे यहां आती है और यहांसे गङ्गा तथा और दूसरे चत्पागौतकी रफ्तगी होती है। यहां बहुतसे धनी ब्राह्मणोंका वास है। शहरके पास ही प्रतापगढ़ नामक मन्त्र दुर्ग देखनेमें आता है। कहते हैं, कि १८०८ ई०में ब्रित्तरके सम-सरय देशाईने इस दुर्गको बनवाया था।

नन्दगढ़—भरतपुर गिरिमाथाके ग्रामादेश पर अवस्थित एक ग्राम। यहां श्रीकृष्णके पानक पिता नन्दबोध रहते थे, इस कारण यहांके लोग इसका यथेष्ट आदर करते हैं। यहां नन्दरायजीका एक मन्दिर है। कर्पसिंह नामक किसी एक जाटने इस मन्दिरकी बनवाया था। एक चबूतरके ऊपर मन्दिर अवस्थित है और बड़ी बड़ी लंघो दोवारोंसे घिरा हुआ है। इसमें ऊपर चढ़नेमें मोर्चनसे लं कर भयुरा जिनके सभा भू-भाग देखनेमें आते हैं। यह ग्राम उत्तमा गोभा संघट तो नहीं है, लेकिन सुन्दर सुन्दर मकानके रहनेसे कुछ न कुछ गोभा पा जाते हैं। समसादेवीके मन्दिरके सिवा और जिनके मन्दिर हैं वे एक ही लक्ष्यके भिन्न भिन्न नामों पर प्रतिष्ठित हैं, यथा—नारसिंहका मन्दिर, गोपोगावका मन्दिर, यमोदानन्दका मन्दिर, नन्दनन्दनका मन्दिर, राधामोहन मन्दिर, इत्यादि। यमोदानन्द-मन्दिरको नरम नन्दराय-जोके मन्दिर-भी है। यह भरतपुरके पश्चिम में बना हुआ है। ११४ मीट्रियों पर श्रद्ध कर मन्दिरके ऊपर जाता पड़ता है। ये सब मीट्रिया १८५८ ई०में खनकनेके

रामेन्द्रसाद बाबूने बनवाई है। पर्यन्त नीचे व्यवसायों और यात्रियों के ठहराने के लिए अनेक पथर के घर हैं और पास ही एक लम्बा चौड़ा उद्यान भी है। उद्यान के बाद पानमरीवर है जिसका घाट बहमान के किन्हीं राजानों बंधवा दिया है। वहाँ के लोगों का कहना है, कि नन्दगाँव में ५६ कुण्ड हैं, किन्तु इन पापयुग्मों में से सब कुण्ड देखने में नहीं आते। यहाँ से पाँच मील की दूरी पर वर्षा नाम का एक स्थान है, जहाँ क्षणिकी प्रणयिनी राधिका का जन्मस्थान समझा जाता है।

नन्दगायन—भारतवर्ष के मध्य प्रदेश के पन्ना जिले का एक छोटा करद राज्य। यहाँ के राजा ब्रह्मचारी के रावों हैं। इनके पोथपुत्र उत्तराधिकारी होते हैं।

नन्दगिरि—एक प्राचीन नगर जो किसी समय चित्तोर के निकट बसा हुआ था।

नन्दगोपित (सं० स्त्री०) नन्दाय वर्षा गोपिता। राधा, रायसन नाम की देवी।

नन्दग्राम (सं० पुं०) १ नन्दगाँव। २ नन्दगाँव, अयोध्या के समीप का एक गाँव जहाँ बैठ कर राम के वनवास-काल में भरतने तपस्या की थी।

नन्दघु (सं० पुं०) नन्द-अश्व (द्वि० अश्व)। पा १।५।८८) आनन्द, सुखी।

नन्द (सं० पुं०) आनन्द देनेवाला, पुत्र, बेटा, लड़का।

नन्ददास—१ एक प्रसिद्ध संस्कृत पण्डित। इन्होंने निम्बार्क तत्त्वनिर्णय और प्रकाशिमिनी नामक तत्त्वसारटीका रची है। किसीका मत है, कि ये दोनों ग्रन्थ दो मनुष्यों के बनाए हुए हैं।

२ रामपुर-निवासी एक ब्राह्मण, विद्वत्मान्य जौ के मित्र। इनकी गणना अष्टकापके कवियों में की जाती थी इनके बनाए ग्रन्थों के नाम ये हैं,—नाममाला, अनेकार्थ, पञ्चाध्यायी, ब्रह्मसिद्धि, दशमस्कन्ध, दानतोषा और मानलीला। इन ग्रन्थों के अलावा इनके बनाए अनेक पद भी पाये जाते हैं, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं।

“भाज भरण वरण घोर लाठ के दगति लागत हैं भले।

वदन परे वसन अलि मानो कंज दलनि पर चले ॥

छास की वगियामें न समात कुटिल अलि चक्षि है।

नन्ददास मधुर पुंज शान्ति घोरतवे कलल छे ॥”

Vol. XI, 98

नन्ददाससाधु—एक वैष्णव साधु। भक्तमाल में इनका उल्लेख देखा जाता है। किसी समय कुछ दुर्भिक्षा में इनके नाम पर कलहारीपण करने के लिए एक मरे हुए बड़की को इनके घर में छिपा कर रख दिया। पीछे वे गाँव के बड़मे लोंकों को वहाँ बुला लाए। यह पड़वन्ध जान कर साधुने शोकस्थ की शरण ली और वह बड़का तुरन्त जिंदा हो गया। (मणमाठ)

नन्ददेव—नेपाल के ठाकुरी-वंशीय चतुर्थ राजा। इनके समय में नेपाल में शकाब्द प्रचलित हुआ था।

नन्दन (सं० स्त्री०) नन्दयतीति नन्द-घु (नन्दि-अश्व-पञ्चादिभ्यो ह्युत्पन्नम्;। पा १।१।१४) १ नन्दवन, नन्दका उद्यान जो स्वर्ग में माना जाता है। पुराणानुसार यह सब स्थानों से सुन्दर है और जब मनुष्यों का भोगकाल पूरा हो जाता है तब वे इसी वन में सुखपूर्वक विहार करने के लिए भेज दिए जाते हैं। २ हृन्दवियप, एक वर्षा ऋतु। इसके प्रत्येक चरण में १८ बरस रहते हैं जिन में से ५।०।११।१२।१५।१६ और १८वाँ वर्ष शुभ और श्रेष्ठ समी वष लहते हैं। इसके ग्यारहवें और सातवें बरस में यति होती है। (पुं०) ३ सुत, लड़का, बेटा। (स्त्री०)

४ सुता, लड़की, बेटो। (पुं०) ५ भेक, मँडक। ६ विष्णु। ७ महादेव। ८ कुमारानुचर, कार्तिक के एक अनुचर का नाम। ९ कामाख्या स्थित पर्वतविशेष, कामाख्या देव का एक पर्वत। यह पर्वत चन्द्रकुण्ड के किनारे अवस्थित है। इस पर कामाख्या देवी की सेवा करने के लिए सुरपति इन्द्र सदा रहते हैं। चन्द्रदेव प्रति

समावस्या को तीन बार चन्द्रकुण्ड और नन्दन पर्वत का प्रदक्षिण करते हैं। चन्द्रकुण्ड के जल में स्नान कर पीछे इस पर्वत पर चढ़ करके इन्द्र को पूजा करने से महाफल प्राप्त होता है। नन्दन के पूर्व भाग में भस्मकूट नाम त एक दूसरा पर्वत है। (कालिकापुं० ७८ अ०) १० साठ बरसों में से छत्तीसवाँ संवत्सर। कहते हैं, कि इस संवत्सर में भय खूब होता है, गोएँ खूब दूध देती हैं और लोग

नीरोग रहते हैं। ११ गरुडविशेष, एक प्रकार का विप। १२ वसुधाश्व के अनुसार वह मकान जो पटकोण हो, जिसका विस्तार उत्तरीय हाथ हो और जिसमें सोलह खंभे हों। १३ केसर। १४ चन्दन। १५ पञ्चविशेष, एक

प्रकारका पन्था । १६ मण्डिण्याव । १० मरम देगदाह ।
१८ रत्नाग्रज, मानसुरमा । (वि०) १८ हृषिक, पानन्द
देनेवाला, प्रमथ करनेवाला ।

मन्दन—इस नामके पन्थको 'पन्थकारी' के नाम मिलते हैं ।
इसमें एक व्यक्ति जो कष्टकरिमते रचयिता कमि मद्रक
समभामयिज थे । दूसरेने मंरुत 'वर्णाभिधान' नामक
पन्थको रचना की और तामरेकी बनारि दुई आहचन्द्रिका
मिलती है ।

इस नामके एक और व्यक्ति थे जिन्होंने महाभारत-
की टीका और मनुसंहिताको मन्दनो नामक पन्थको
रचना की है । ये पोरमल नामक एक सामन्तगजके
बन्धु थे । इनके पिताका नाम मध्यम था । कोई कोई
कहते हैं, कि मध्यम इनके भाईका नाम था ।

मन्दनचक्रवर्ती—दाक्षिणात्यके विजयनगर प्रबलके एक
राजा । इन्हीं १२०६ ई०में कागुगुणामे हरिहरके
मन्दिरकी प्रतिष्ठा की ।

मन्दनज (म० क्री०) मन्दने जायते इति जन-ड । १
हरिचन्दन । २ ओलण्य । (वि० १ पानन्दजातमाव ।
मन्दनन्दन (म० पु०) मन्दन्य मन्दन; पानन्दजनकः ।
१ श्रीलण्य । कण देवी ।

भागवतके १०१ पाद्यायने 'ओलण्यका' जन्म विवरण
लिखा है । (प्लो०) २ योगमाया ।

मन्दनमन्दिनी (वि० स्त्री०) मन्दन्य मन्दिनो ६ तत् ।
योगमाया । योगमायाने मन्दकी कन्या हो कर उनके
घरमें जन्म लिया था । यहदेव कंसके भयसे ओलण्य-
की मन्दके घर रण कर इसी कन्याको माय ले गये थे ।
योगमायाके प्रभावसे यह हस्ताला कोई नहीं जान
सका था । जब कंसने इसे पटना था, तब यह वृद्ध कर
प्राज्ञागमे पकी गई थी । १८८ देवी । हरिवंशके १८
पाद्यायने इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—

"मन्दोपशुदे माता यमोशमर्देमया," (मार्वण्डिपु०)

मन्दनप्रधान (म० पु०) मन्दन यमके आसो, इन्द्र ।
मन्दनमाता (म० स्त्री०) मन्दना पानन्दजनिका
माता । मातामर्दे, एक प्रकारकी माता जो ओलण्य-
की बहुत दिव थी ।

मन्दनमित्र—दाक्षिण्य मित्रके पुत्र । इन्होंने मंरुत रचयित ।

इत तन्ममदीपनी तन्ममदीपोदीपन नामके टीकाकी
रचना की है ।

मन्दनवन (म० पु०) इन्द्रको वाटिका । २ वर्षाव,
रघाव ।

मन्दनधर—कागोरेका एक छोटा ऋत । हरिपुर मदी
इसी ऋतमे निकली है । यह हिन्दुकी एक तीर्थ है ।

मन्दनाय—भास्करलक्ष्मण नवरत्नमासाके एक टीकाकार ।

मन्दनायामो—बहने शास्त्रिण्यगोमोय मारिन्द्र साधनाका
एक यामी ।

मन्दना (म० पु०) मन्दन्यनेनेति मन्द-यत्, मय, यित् ।
(हरिनिर्दि जीवगणः विराजिभि । ४८, ११२३) १
पुत्र, भैया, लड़का । २ राजा । ३ मित्र ।

मन्दपण्डित—इस नामके दो पण्डित हो गये हैं । प्रथम
मन्दराम पण्डित धर्माधिकारीके पुत्र थे । ये १५६८ने १५८८
ई०के मध्य नियमान थे । इनका दूसरा नाम था विनयक
पण्डित । कागोप्रकागनस्वमुत्तावलो, दत्तकचन्द्रिका,
दत्तकमौमोना, नवरात्रमदीप, पाराशरमृतिटीका, माध्या-
मन्दकाण्य, प्रमिताक्षरा नामक मितारवाही टीका, विष्णु-
स्मृतिटीका, आहकल्पमता, भावमीमासा, स्मृतिमित्र
और हरिवंशविनाश ये सब पन्थ इन्हींके बनावे हुए हैं ।
इनमेंसे कागोराज के मन्थनयकके पादेगमे १६०८ मन्थनमें
मन्थवैजयन्ती नामक मन्थुस्मृतिटीका और पञ्चरात्र-
पुत्र तथा हरिवंश वमोंके पादेगमे स्मृतिमित्र एवं
मंरुता-निर्णयकी रचना की है ।

हिन्दीय मन्दपण्डित श्रीराम शर्माके पुत्र थे । इन्होंने प्लोनि
सारसमुच्चय, प्लात समुच्चय आदि पन्थ बनाये हैं ।

मन्दपान (म० पु०) मन्द पानन्दे निधि वसिष्ठ पालयनि
पाणि-पय, बहद ।

मन्दपुत्री (म० स्त्री०) मन्दन्य पुत्री ६ तत् । दुर्गा, पोर-
माया, मन्दपुत्री ।

मन्दप्याग—बदरिनाथमके निजटका एक तीर्थ जो मान
प्रयागमेंसे है । यह धनंजनन्दा और मन्दाके योगसे
उत्पन्न माना जाता है । प्रयाग देवी ।

मन्दप्रभञ्जन यमो—कर्मिष्ठके एक राजा ।

मन्दपक (म० पु०) मन्दयनेनेति मन्दि यत्, मय, यित् ।
(तामरेदी । ४८, ११२८) पानन्दजनक, प्रमथ करने-
वाला ।

नन्दराज—१ सन्देश प्रदेशके अन्तर्गत खानदेश जिलेका एक उपविभाग। २ छत्ता विभागका एक नगर। यह अक्षा २१° २६' १०" उ० और देशा ७४° १८' ४५" पू० के मध्य अवस्थित है। यह खानदेशका एक अत्यन्त पुरातन स्थान है।

नन्दराज—सिन्धु प्रदेशके उत्तरका एक नगर। कहते हैं कि सत्ययुगमें यहाँ नन्दराज नामक एक राजा रहते थे। उनके मत कल्याण थीं, पुत्र एक भी न था। मन्मुना नामक बड़ी राजकुमारी जयसमरीके अन्तर्गत कल नामक स्थानकी गई थी। वहाँ उस देशके एक राजपुत्रके साथ उनका विवाह हो गया था। प्रवाद है, कि यहाँ जितनी सम्पत्ति थी सभी राजकुमारीके साथ साथ गायब हो गई। लक्ष्मी वृद्धिक रूप धारण कर हम स्थानमें चली गई थी।

नन्दरानो (हि० खो० ' नन्दकी स्त्री, यथोदा।

नन्दराम—एक विख्यात ज्योतिषी। इन्होंने इष्टदर्पण ग्रन्थप्रवृत्ति, चौर प्रवृत्तचक्र की रचना की है। यथोक्त ग्रन्थ १७६८ ई०में लिखा गया था। इस नामके एक और व्यक्ति थे जिन्होंने बालतत्त्वप्रकाश नामक ग्रन्थ रचा है।

नन्दरामदास—महाभारतके रचयिता ब्रह्मगोी सुविख्यात काशीरामदासके पुत्र। ये योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। पिताकी तरह इन्होंने भी महाभारत की रचनाकी थी। विश्वकोप-कार्यालयमें इनका बनाया हुआ महाभारतके द्वीप पर्वका हस्तलिखित ग्रन्थ संशुद्ध हो हुआ है। उस ग्रन्थका पश्चिमांग पूर्णचन्द्रोदय प्रेममें छपे हुए काशीराम दामके महाभारतके साथ मिलता जुलता है। किन्तु छापा ग्रन्थके इनके ग्रन्थमें कहीं कहीं कम श्लोक देखे जाते हैं। लेकिन जितना अधिक है, उसका प्रत्येक चरण छापा पुस्तके प्रत्येक चरणसे मिलता है। इसके सिवा काशीरामके छापा ग्रन्थमें जो सब सामान्य सामान्य घटनाएँ हैं अर्थात् अमिश्रणके रणमें दुर्योधनके पतनामक एक पुत्रकी मृत्यु, दुर्योधनभ्राताभोके ८८ पुत्रोंकी मृत्यु आदि विषय इस ग्रन्थमें हैं। इसके अलावा छापा पुस्तकमें जो अध्याय जिस छत्रमें लिखा गया है, इस ग्रन्थका भी वह अध्याय वहीं छत्रमें है। परं हाँ हस्तलिखित ग्रन्थमें अध्यायकी संख्या अधिक है।

नन्दराम कायस्थदेवश्रीय काशीरामके सहृदके थे, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। नन्दरामका कोई विशेष परिचय नहीं मिलता। पिताके मरनेके बाद इन्होंने महाभारतकी रचना की, इसका यह भी एक प्रमाण है, कि पिताके लिखित अनेक भविष्यवाणी इन्होंने उद्धृत किये हैं जो मुद्रित पुस्तककी प्रत्येक पंक्तिसे मिलते जुलते हैं। काशीरामके अन्याय आशोक भी इस प्रकारका महाभारत रच गये हैं सही, लेकिन ऐसा माह-श्रव किमीमें देखा नहीं जाता। विश्वकोप-कार्यालयमें काशीराम दासके महाभारतका प्रति पुरातन एक ग्रन्थ संशुद्ध है, जिसमें काशीरामका पूरा परिचय दिया हुआ है। हमने जाना जाता है, कि काशीरामके प्रपितामहका नाम प्रियाकर वा प्रियद्वर नहीं था। विश्वकोपके "काशीराम देव" शब्दमें "तनुज कामला-कान्त कृष्णदाम पिता" इस पाठके नीचे हममें "मह्य तात कामलाकान्त कृष्णदाम पिता" ऐसा पाठ है। काशीरामके अनुज गदधर दामके जगत्समल नामक ग्रन्थमें उनके वंशका कृष्ण परिचय मिलता है। किन्तु नन्दराम चक्रवर्तके नरमिह राजाके समयमें अर्थात् १०५० सन् वा १५६७ शकाब्दमें विद्यमान थे।

नन्दराम हलदिया—प्रायः राजाके मन्त्री दोस्त सिद्धके भाई। ये उत्तराखण्डमें सेनापति का काम करते थे। शीकरके अधिपति देवीमिहने जिस समय सिखावाटी प्रदेशमें अपना भस्मक उठाया, उस समय आमेरराजने इन्हें दलबलके साथ उसे दमन करने और कर लेनेके लिए भेजा था। जिस समय इनकी सेना उत्तर प्रदेशमें पहुँची, उस समय देवी सिहका स्वर्णवास हो चुका था। शीकरके सिंहासन पर एक पक्षीय शालक विराजमान था। सिखावाटी प्रदेश कुन सामन्त देवीमिहके विरुद्ध थे, किन्तु नीतिज्ञ देवी सिहने आमेरकी राजसभाके सदस्योंसे प्रेम कर रखा था। नन्दराम हलदिया और उनके भाई राज-मन्त्री दोस्तमिह देवीमिहके मित्र थे। शीकरकी सरहदमें देवीमिहके पहुँचने पर वहाँके दीवान बाटि इनके छत्रों पर गये। नन्दराम हलदियाके परामर्शसे उन लोगोंने युद्धकी तैयारी कर ली। नन्दराम भी सिखावाटी सह्राई सहने लगा, अन्तमें वे अपने लिये साव

घोर राज्यके निचे दो लाख रुपये में कर देन पीटे।
महाराजकी जगह यह नाम मान्य हो गया, तब चन्कीने
नन्दनाम ही सम्पत्ति जगह पर भी घोर चुरे कट कामकी
पाठा दी। परन्तु धूर्त नष्ट करने की भाग गया था।

नन्दनाल (हिं० पु०) नन्दन पुत्र। आरुण्य।

नन्दनाल—१ एक हिन्दी कवि। इनकी कविता मराठामात्र
कीनी थी, उदाहरणार्थ एक मौखे देते हैं—

"भव सः त्रिदशो मोरे (शरे) तुम देखने को जि- तरनई।

शुभ विद मोको इन न वरन है हनि- परावरनई ॥

इसो मेरे दुःख हरेको पानी पटवत रो।

हो" तो गिहारी नन्दनाल दरबारे सुधीयता कीने यही ऐसे
अपार ही ॥"

२ हिन्दीके एक कवि। इनका स० १९११में जन्म
हुआ था। इनकी कविता सुन्दर कीनी थी, उदाहरण
इसके कविता पाये जाते हैं।

३ एक हिन्दी कवि। इनका जन्म-मरण १७०४में
हुआ था। इनकी कविता मराठ कीनी थी।

नन्दन-१ युक्त प्रदेश तथा विहारके ग्वालोक। एक
विभाग। २ मगधका एक विख्यात राजवंश। इस वंश
का अन्तिम राजा उस समय सिंहासन पर बैठे थे जिस
समय निकटवर्ती ईसासे ३२० वर्ष पूर्व पञ्चाय पर
चढ़ाई की थी। विशेष विवरण नन्द चरमे देखो।

नन्दक—यैश राजपूतोंकी एक गोष्ठा।

नन्दन—नन्दन-कानन, इन्द्रकी यादिका। मनुष्योंका
भोगकाम जग श्रेष्ठ की जाता है, तब ये इसी शर्णीय
काननमें या कर अपना पूर्व-रूप धोड़ देते हैं घोर नवा
रूप धारण कर लेते हैं। (उरण)

नन्दना—पञ्जमीर घोर समके निकटवर्ती स्थानवासी
जनिकोंकी एक श्रेणी।

नन्दनियर—राजपूतानेका एक श्रेणीका ब्राह्मण। इस
श्रेणीके ब्राह्मण विशेषतः मारवाड़में देखे जाते हैं।

नन्दनरिह—तेलङ्ग नियोगी ब्राह्मणोंकी एक गोष्ठा।

नन्दनईल—मगधके एक शासक। कहते हैं, कि इसीने
पटोथ्यामें मगधवंश नामक एक अन्तिम परबतकी
निर्माण किया था घोर मगधमें ब्राह्मण-धर्मकी जगह कर
आतिभेद नहीं रहा था।

नन्दसुन्दर—एक श्रेष्ठ पण्डित। ये जैनसम्प्रदायी बन्धु-
भासम मयुतुराकी चतुर्वि बनावे हैं।

नन्दा—नन्दा घोर समकी बहन नन्दयामा। ये दोनों
मेमाकी नामक धर्मके किसी सम्प्रदाय धार्मिकी कथासे
हो। उन्होंने सुना था, कि बोधिमत्त भविष्यमें एक राज-
पक्षवर्ती होगे। इसीसे चन्कीने एक दिन घोर बना कर
उन्हे प्यारकी दी थी। बोधिमत्तने एक मन्त्रिमुद्राधारित
रुद्रिक-पाषाणमें उन्हीं घोरकी से कर भोजन करने बाद
मदीमें डिक दिया था। पीछे चन्कीने दोनों बहनीमें पूजा,
'तुम लोग कौनसा घर चाहते हो' इस पर ये 'मौनी',
'पाप जब राजपक्षवर्ती होगे, तब हम दोनों' पापकी
पयी छोड़गी, यही घर हम चाहती हैं।" बोधिमत्तने
उन्हे समझा कर कहा कि वे कैवल्य प्राप्त करने में
ये छ छोड़ें, न कि विषयनिमग्न। "पापकी यह रिष-
याग बहुत प्राप्त हो" इस प्रकार पाणीबाँट दे कर वे
दोनों चली गईं। (नरदान)।

नन्दा (सं० स्त्री०) नन्दयतीति नन्दि-घञ्-टाप्। १
दुर्गा। ब्रह्माने देवी भगवतीसे कहा था, 'हे देवि!
तुमने देवताओंका मरत्कार किया है, अब शेष एक
कार्य करनेकी बाकी रह गया है। यह यह है कि तुम
भविष्यमें महिमासुरका वध करना।" ब्रह्माकी यह बात
सुन देवगण देवीको हिमालय पर्वत पर नन्द्यापिन कर
ययासानकी अल दिये। देवीको हिमालय पर स्थापित
कर वे बहुत प्रसन्न हुए थे, इस कारण देवीका नाम
नन्दा पड़ा।

दूसरी जगह ऐसा भी किया है—देवी सुरभीक, नन्दन
कानन घोर अति पवित्र हिमालय पर रह कर बहुत
पानन्दित हुई थी, इसी कारण इनका नाम नन्दा रखा
गया है। २ अलिच्छर, मोका गढ़ा या भौंकर
जिसमें पानी रहने है। ३ तिमिर्भेद, एक निमित्त
प्रतिपद, एकादशी घोर यही तिथिका नाम।
शङ्कराकी यदि यह नन्दा तिथि पड़े, तो
है, यह याता अर्द्धमैद्यमनक है। ४ शङ्करा
दीपन। ५ शङ्कानिर्मित, एक प्रकारकी
६ कामधेनुविशेष, एक प्रकारकी कामधेनु।
७ राज हर्षकी पत्नी। ८ एक गुरुका या शक्तिधर

विषयमें ऐसा कहा जाता है, कि इसके कारण बालक अपने जीवनके पहली दिन, पहली मास और पहली वर्ष में प्यारसे पोषित हो कर बहुत रोता और भूखेत हो जाता है। ८ वर्ष की स्त्री, प्रसवता। १० महीने में एक मूर्च्छा-माका नाम। ११ एक भूषराका नाम। १२ विभीषणकी कन्याका नाम। १३ वर्तमान भव-सर्पणिके दशवर्ष पञ्चमी माताका नाम। १४ नदी-विशेष, एक नदी जो कुवेरकी पुत्रीके निकट बहती है। १५ पुराणानुसार शाल्कीपत्री एक नदीका नाम। १६ बरवे छन्दका एक नाम। १७ पतिका बहन, ननद। १८ तोयविशेष, एक तोय का नाम। १९ सुरसा, साय तुलसी। २० योनिरोगविशेष, योनिका एक रोग।

नन्दातीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थरूप नदीविशेष। महा-भारतके वनपर्वमें इस तीर्थका उल्लेख है। ईमकृत पर्वत-के पास ही नन्दा और अपरनन्दा नामको दो नदियाँ बहती हैं। यहाँ सदा बहुत तेजसे हवा बहती रहती है, जोरसे पानी बरसता रहता है, साधारण लोग पहुँच नहीं सकते और सर्वदा वेदभ्रमि सुगई पड़ती है, पर कोई वेद पढ़नेवाला दिखाई नहीं देता। यहाँ बैठ कर यदि कोई तपस्या करना चाहे, तो मर्कटियाँ उसे बाधा डालती हैं और काटने लगती हैं। सर्वेष्ट और सन्ध्या यहाँ भक्तिदेवके दर्शन होते हैं। बुधधिरने अपने भार्यों के साथ एक बार इस तीर्थमें गए थे। यहाँका पाषर्य हम देख कर उन्होंने क्षोभ सुनिसे इसका कारण पूछा था। इस पर सुनिने कहा था, "राजन्। इस कथभकुण्डमें श्रेष्ठम नामक बहुत क्रोधो एक सुनि सदा तपस्या किया करते थे। उन्हें यानो लोग तरङ्ग तरङ्ग-की शक्ति पूछ कर तंग करते रहते थे। इसी कारण उन्होंने, जिससे साधारण मनुष्य यहाँ न जा सके, वैसा ही करनेके लिए पर्वतकी प्रादेश दिया।—तभीसे इस पर्वतमें ऐसा रूप धारण किया है। इसके सिवा यह भी सुना जाता है, कि पुराकालमें देवगण नन्दाकी ओर जा रहे थे। बहुतसे लोग उनके दर्शनके लिए साथ हो लिए। किन्तु नन्दादिने उन्हें अपना दर्शन देना न चाहा, इस कारण इस स्थानकी पर्वत-परिधि द्वारा दुर्गाकारमें बना दिया। इस तीर्थमें जो स्नान करते, उसी समय उनके

पाप जाते रहते हैं। बुधधिरने अपने भार्योंके साथ इस तीर्थमें स्नान किया था। (भारत वनपर्व-११ अ० १-नन्दावन (सं० पु०) नन्दस्य भावजः १-तत्। १ श्रीकण्ठ। (स्त्री०) २ योगमाया।

नन्दादेवी (सं० स्त्री०) दक्षिण हिमालयकी एक चोटी। यह २५०० फुटसे अधिक ऊँची है और जो यमु-नोत्तरीके पूर्व है।

नन्दापुराण (सं० स्त्री०) एक उपपुराण। मत्स्य और शिव-पुराणके मतसे यह तोसरा उपपुराण है। इसके ब्रह्मा कासिक हैं और इसमें नन्दामाहात्म्य दिया गया है।

नन्दायनोय (सं० पु०) वाष्पसिका एक ग्रिष्म।

नन्दार्क—विहारमें शाल्कीपत्रीनामकी एक सम्प्रदाय।

नन्दावर्त्त (सं० पु०) १ तगरपुष्पवृक्ष। २ मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली।

नन्दायम (सं० पु०) नन्दस्य धाम्यः १-तत्। तीर्थभेद, महाभारतके अनुसार एक तोय का नाम।

नन्दाकदतीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थभेद, एक तीर्थ का नाम।

नन्दि (सं० पु०) नन्दयतीति नन्द-इन् (वर्षानुषण इत्। उण् ४।१७) १ विश्व, परमेश्वर। २ नन्दिकेश्वर, शिवकी शारपाल-बैष्णवका नाम। ३ श्वताङ्ग, एक प्रकारका सुवा। ४ नन्दवर्भेद, एक नन्दवर्भ का नाम। ५ महादेव, शिव। ६ भानन्द, प्रसवता। ७ नन्दको भानन्दस्य ही।

नन्दिक (सं० पु०) नन्द-भानन्दकारचलनात्मक इति नन्द-ठन्। १ नन्दोद्वह, तुलना पेड़। २ भानन्द। ३ भववृक्ष, भवका पेड़।

नन्दिकर (सं० पु०) शिव, महादेव।

नन्दिका (सं० स्त्री०) नन्दिक-टाप। १ रत्नकीड़ाका नाम, वह स्थान जहाँ रत्न क्रोड़ा करते हैं। २ नन्दनवन। ३ पल्लिवर, महीका नद जिसमें पानी रहता है। ४ किसी पत्नीके प्रतिपद, बही और एकादशो तिथि। ५ नन्द-मुखा स्त्री।

नन्दिकाधार्यतन्त्र—एक संस्कृत वैष्णव धर्म। दोहरा-नन्दमें इसका मत उद्धृत हुआ है।

नन्दिकावर्त्त (सं० पु०) एक प्रकारका मत्स्य।

नन्दिकुण्ड (सं० स्त्री०) नन्दिक-कुण्ड। तीर्थभेद,

एक तीर्थ का नाम। इस कुण्ड में खानादि करनेसे अणु-
हत्या का पाप नाश होता है।

नन्दिकेश (स० पु०) नन्दिकेश्वर, शिवकी हारपात।
नन्दिकेश्वर (स० पु०) नन्दिकेश्वरेश। १ शिवदा-
पात, शिवकी हारपात बैलका नाम। पर्याय—मन्दी-
शान्दायन, ताण्डवतामिक, नन्देश्वर, तण्डु। २ शिव-
धर्माख्य उपपुराणमें, एक उपपुराण जो नन्दोका
कहा हुआ है और जोया उपपुराण माना जाता है। इसे
नन्दोखर और नन्दपुराण भी कहते हैं।

नन्दिकेश्वर—एक संस्कृत ज्योतिषी, वेदाङ्गराजके पुत्र।
इन्होंने १६४ ई० के बाद गणकमण्डल और ज्योति-
स ग्रन्थों का नामक ग्रन्थ रचना की है।

नन्दिकेश्वर—बम्बईके बीजापुर जिल्लातर्गत बादामी
तालुकका एक ग्राम। यह भन्ना १५ ४७ और देगा ०
७५ ४८ पू० बादामी शहरसे तोम मोलकी दूरी पर
अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ११२० है। यहांकी
महाकूट नामक स्थानमें अनेक मन्दिर और शिवलिंग
हैं। इसी कारण उस स्थानका महाकूट नाम पड़ा है।
कोई कोई इस महाकुण्डकी दक्षिणकाशी भी कहते हैं।
महाकूटके बीच विष्णुतीर्थ नामक एक तालाब है।
कहते हैं, कि भगवत्पुत्र सुनिने वह तालाब खुदवाया था।
उसकी गहराई सदा एकघी रहती है। पुष्करिणीमें
जहां बौद्धा हुआ था, वहां एक शिवमन्दिर प्रतिष्ठित
है। मन्दिरका प्रवेशद्वार जलके भीतर है। प्रवाद है,
कि देवदास नामक वाराणसीके किसी राजाकी
कन्याका मूँह वानरसा हो गया था। राजाकी स्वप्न
हुआ था कि वह कन्या यदि महाकूटमें खाने करे, तो
उसका मुँह मनुष्यसा हो जायगा। तदनुसार राजा
कन्याको वहां ले गये और उन्होंने महाकूटेश्वरका
मन्दिर बनवा दिया। पीछे कन्याका मुँह एक सुन्दर
स्तोत्र हो गया था। प्रवेशद्वारके उत्तर-पूर्वमें लज्जा-
गोरीका मन्दिर है। लज्जागोरीकी मूर्ति काले पत्थर
पर छोटी हुई है, वह नंगी है, और उसके मस्तक
नहीं है। कथित है, कि किसी समय देवी और शिव-
पुष्करिणीमें झोड़ा कर रहे थे। इसी बीच कोई भक्त वहां
पूजा करने आया। शिवमन्दिरकी भांग गये और पर्वती

उसी जगह भी घे मुँह पड़ रही। वन्ध्या स्त्रियां उस
मूर्ति की पूजा करती हैं।

नन्दिकेश्वरकारिका—पाणिनिने षष्ठाध्यायीमें वर्णित शिव-
श्रवकी गूढ़ व्याख्या। यह कुल २० श्लोकोमें रची हुई
है। नागेशभट्टके शब्देन्दुशेखरमें यह कारिका उद्धृत
है। उपमन्युने इसकी टीका की है।

नन्दिकेश्वरपुराण—एक प्राचीन उपपुराण, यह नन्दोखर
और नन्दपुराण नामसे प्रसिद्ध है। देवीभागवत,
शक्तिरत्नाकर, निर्णयसिन्धु, आचारादगं आदि ग्रन्थोंमें
तथा हेमाद्रि, भावशाचार्य, रघुनन्दन आदि समाप्तोंमें
उद्धृत हुआ है।

कालान्तरद्वीपनिषत्, दत्तात्रेयोपनिषत्, दशगोत्री
(वेदान्त), दशममाहात्म्य, शिवस्तोत्र आदि विभिन्न
ग्रन्थ नन्दिकेश्वरपुराणके अन्तर्गत माने गए हैं। फिर
शिवधर्म और शिवधर्मोत्तर ये दोनों नन्दिकेश्वरसंहिताके
अन्तर्गत हैं। भागवतस्वविश्वास और तन्त्रसारमें नन्दि-
केश्वरसंहिताके वचन उद्धृत हैं।

नन्दिकेश—काश्मीरके एक प्राचीन स्थान। यहां विज-
येश्वरका मन्दिर है।

नन्दिगढ़—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत खानापुर उपविभागका
एक नगर। यह भन्ना १५ २४ उ० और देगा ० ७५
३० पू० के मध्य अवस्थित है। इस नगरके पास ही
भग्नावशिष्ट प्रतापगढ़ दुर्ग विद्यमान है।

नन्दिगाम—मन्द्राजके कन्नडा जिल्लाका एक तालुक। यह
भन्ना १५ ३६ और १० ३७ उ० तथा देगा ० ८० १
और ८० ३२ पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६००
वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ११८८५८ है। इसमें
एक शहर और १६८ ग्राम लगते हैं। यहां बौद्धोंके
अनेक भग्नावशेष देखनेमें आते हैं।

नन्दिगिरि—इसका दूसरा नाम नन्दिदुर्ग है।

नन्दिदुर्ग देखो।

नन्दिगुप्त—काश्मीरके एक राजाका नाम। इनके पिताका
नाम परमिमन्यु गुप्त था। पिताके मरने पर ये काश्मीर-
सिंहासन पर बैठ गये। अनन्तर इनकी पितामही
दिहाने स्वयं राज्यभोग करनेकी इच्छासे परमिषार
द्वारा इनके मारनेका प्रयत्न किया। खेदकी बात है, कि

वह धाराधारिणी अपनी दुर्भीलाया मकल करनेमें समर्थ भी हुई । १ वर्ष १ महीना ११ दिन राजासन पर बैठ कर नन्दिगुप्त परलोकवासी हुए ।

नन्दियाम (सं० पु०) ग्रामभेद, धर्मोपदेश चार कोश पर अवस्थित एक गांव । इसी स्थान पर भरतने रामके वियोगमें चौदह वर्ष तक तप किया था ।

नन्दियामो—वज्रके भरहाज गोत्रीय वारेन्द्र ब्राह्मणोंकी एक वस्ती ।

नन्दिवीप (सं० पु०) नन्दिः हर्षजनको घोषः यस्य ।

१ चतुर्नका रथ । यह रथ उन्हें बन्दिदेवने प्रसन्न हो कर दिया था । २ बन्दिजनकी घोषणा । ३ मङ्गलघोषणा ।

(त्रि०) ४ हर्षघोषयुक्त ।

नन्दिन (सं० त्रि०) चानन्दित, सुखी, प्रसन्न ।

नन्दिनस्य (सं० पु०) नन्दिरानन्दजनकस्तस्य । चवहृष्य, धवका पेड़ ।

नन्दितूर्य (सं० पु०) नन्दिमियं तूर्यं । वाद्यभेद, प्राचीन कालका एक प्रकारका बाजा । (इतिव' ४ ८० भ०)

नन्दिदुर्ग—महिषरुके प्रसंगत कोक्षार जिलेका एक गिरिदुर्ग । यह प्रचा० ११° २२' ४०" और देशा० ७७° ४१' पूर्वमें

वज्रगुह्ये ३१ मील उत्तरमें अवस्थित है । इसके गिखर-देय पर एक विस्तृत मालभूमि और पुष्करिणी है ।

१७८१ ई०में लार्ड कर्नावालिसने इस दुर्ग पर अपना अधिकार जमा लिया । पर्वतके नीचे नन्दो नामक एक

ग्राम है जहाँ शिवरात्रिके दिन एक परमेश्वर लगता है । हैदराबली और उनके पुत्र टीपूने यह दुर्ग बलबाया

था । दुर्गके भीतर एक विख्यात शिवमन्दिर और पांच प्रसन्नवर्णके उत्पत्ति-स्थान हैं । उन पांच प्रसन्नवर्णोंके नाम

ये हैं,—उत्तर-पिणाकिनी, दक्षिण-पिणाकिनी, चित्रवती, चोराभन्दो और चक्रेवतो पहाड़ पर नन्दिका एक मुँह

खोदा हुआ है जिससे चोराभन्दो निकलता है । उक्त पहाड़ोंकी भाँझा 'नन्दिगिरिमाहात्म्य'में विस्ताररूपसे वर्णित है ।

नन्दिभज—जनाड़ी भाषामें लिखित भक्तभक्त-प्रिया-मणि नामक एक ग्रन्थमें नन्दिभजके विषयमें निम्न-

लिखित उपाख्यान पाया जाता है । लोकमाया नामक एक दुरन्त राक्षस था । वह अत्यन्त गर्वित और पराक्रान्त

हो कर देवताओंकी तंग किया करता था । इस पर देवता लोग इन्द्रके पास गये और अपना दुखड़ा रोने

सगे, 'हे देवेन्द्र ! हम लोगोंका जो दुःख है उसे ध्यान दे कर सुनिये । दुरन्त लोकमाया, हम लोगोंकी निरादर

कष्ट दे रहा है । उसके दोरामासे हम लोग अपना अपना वासस्थान छोड़ कर निधर तिधर मारे फिरते हैं ।

यह सुन कर इन्द्रने ऐरावतकी मञ्जीभाति सज्जित कर लानेके लिये हुक्म दिया और कहा, 'भाज ही मैं उसके

बलवीर्यकी परीक्षा लूँगा ।' इसका कह देवराज इन्द्र गजपट पर सवार हुए और अमरसेनाके साथ तुरन्त, ही

उस दुष्ट राक्षसके पास पहुँचे । राक्षसने उन्हें बहुत कटुवचन कहे । धीरे जब देवेन्द्रने उस भोवण जाय

राक्षसकी प्राणें होती देखा, तब ये डरके मारे हाथी पर पड़े रहे और उसी समय ब्रह्माके पास भाग गये । ब्रह्मा

उन्हें साथ ले श्रीरोदसमुद्रके किनारे भगवान् विष्णुके हमीप पहुँचे और कृतान्त्रलि हो निवेदन करने लगे । इस

पर भगवान् विष्णु गहड़ पर सवार हुये और लोकमाया के समीप था कर उससे युद्ध करने लगे । लड़ते लड़ते

जब शरीरमें क्षान्ति पा गई, तब वे बोले, 'इसे बध करनेमें हम बिलकुल असमर्थ हैं, विशालाक्ष (शिव) इसे अवश्य बध कर सकते हैं ।' यह सुन कर देवगण नील-

कण्ठके पास पहुँचे और आद्योपान्त सब बातें कह सुनाई । शिवजी उसी समय हथभ पर सवार हुए और

एक ही बारमें राक्षसका शिर धड़से चला कर दिया । बाद वह ह्विच मस्तक उसकी स्तुति करने लगा । महादेवने

प्रसन्न हो कर जब उसे वर माँगे कहा, तब वह बोला, 'हे शिव ! मेरी इस देहसे प्रभोकी पवित्र कीर्ति ।' इस

पर महादेवने उसके पृष्ठवर्षसे दण्ड, मस्तकसे कलस और चर्मसे पताका प्रसन्न कर उसका नाम नन्दिभज रखा ।

नन्दि और भज शिवजीके प्राणें बलने लगे । नन्दिन् (सं० त्रि०) नन्द-पिनि । १ हर्षयुक्त, की

प्रसन्न हो । (पु०) २ शालहायण-शिवका चारपात । ३ मुनिभेद, एक मुनिका नाम । नन्दिकेश्वर देवी ।

४ शिवगणविशेष, शिवके एक प्रजाके गण । ये तीन प्रकारके होते हैं—जनकनन्दी, गिरिनन्दी और शिव-

नन्दी । ५ गर्दभाण्डहृष्य, पाकरका पेड़ । ६ धवहृष्य,

भवका पैड़। ७ बटवस, बरगटका पैड़। ८ नन्दिहस, तुनका पैड़। ९ विष्णु। १० एक प्राचीन संस्कृत वैयाकरण। इन्होंने धीरस्वामी, सायण, रायसुकुट आदि छद्म किये हैं। ११ अभिनवदर्पण नामक नाट्यशास्त्रकार। १२ जै निर्वोका एक नृत्यपारंग। १३ शिवके नाम पर दाग कर उसमें किया हुआ कोई बँस। १४ वह बँस जिसके शरीर पर गोठे हों, ऐसा बँस खेतोंके कामका नहीं होता। इसे फकीर लोग ले कर हुमाते और लोगोंको उसके दर्शन कराके पैसे मांगते हैं। १५ छद्म। १६ शुक्लकरज, एक प्रकारका करंज। १७ शुक्ल अपा मार्ग, समुद्र सतजीरा।

नन्दिनी (सं० स्त्री०) नन्द-णिनि-ङोप्। १ गङ्गा। २ ननद, ननद। ३ ऐणका नामक मन्त्रद्वय। ४ कन्या, पुत्री, भेटी। ५ जटामांसी। ६ वशिष्ठकी कामधेनु जो सुरभिकी कन्या थी। रघुवंश पढ़नेसे जाना जाता है कि राजा दशोपने इसी गौकी वनमें सराते समय सिंहसे उसकी रक्षा की थी और इसीकी प्रार्थना करके उन्होंने रघु नामक पुत्र पाया था।

महाभारतमें लिखा है कि यी नामक वसु अपनी स्त्रीके कहनेसे इसे चुरा लाये थे। वशिष्ठके श्रापसे उन्हें भोष्म बन कर इस पृथ्वी पर जन्म लेना पड़ा था।

भारत १।८८ अध्यायमें विशेष विवरण देखी।

विश्वामित्र और वशिष्ठके भगड़े को जड़ यही नन्दिनी थी। रामायणमें इस प्रकार लिखा है—एक दिन विश्वामित्र बहुतसी सेनाओंकी साथ ले वशिष्ठके यहाँ गये। वशिष्ठने इसी गौके प्रभावसे उन्हें इच्छानुसार भोजन कराया। यह विशेषता देख कर विश्वामित्रने वशिष्ठसे यह गो मांगी, पर उन्होंने जड़ नहीं दिया, तब विश्वामित्र उसे ज्वरदन्तो ले चले। रामने नन्दिनीके चिह्नानि से भिन्न भिन्न जहाँमेंसे स्त्रियाँ और यवनोंकी बहुतसी सेनाएँ निकल पड़ीं। उन सब सेनाओंके पराक्रमसे विश्वामित्र डार गये। रामायण आदिकाव्य और भारत १।७७ अध्यायमें विस्तृत विवरण देखी। ७ पत्नी, स्त्री, छोटी। ८ तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम। ९ स्कन्धावतर मातृगवविशेष, पार्श्ववैयकी एक मातृकाका नाम। १० व्याङ्गि सुनिकी माताका नाम। ११ त्रयोदशार्च

स्तुति विशेष, तैरह पक्षोंके एक मण्डलका नाम। इमेंसे प्रत्येक पदमें १३ पक्षर रहते हैं जिनमेंसे १।३।२।१।२।३।४।५।६।७।८।९।१०।११।१२।१३।१४।१५।१६।१७।१८।१९।२०।२१।२२।२३।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१।३२।३३।३४।३५।३६।३७।३८।३९।४०।४१।४२।४३।४४।४५।४६।४७।४८।४९।५०।५१।५२।५३।५४।५५।५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३।६४।६५।६६।६७।६८।६९।७०।७१।७२।७३।७४।७५।७६।७७।७८।७९।८०।८१।८२।८३।८४।८५।८६।८७।८८।८९।९०।९१।९२।९३।९४।९५।९६।९७।९८।९९।१००।

नन्दिनीतनय (सं० पुं०) नन्दिन्यास्तनयः। व्याङ्गि सुनिके पुत्र। इनकी कथा हनुमन्नितामें इस प्रकार लिखी है,—नन्दके राजत्वकालमें उपवर्ष पण्डितके तीन छात्र थे, एकका नाम था पाणिनि, दूसरेका बरहचि और तीसरेका व्याङ्गि। उपवर्षका दूसरा नाम कात्यायन था। इन तीन छात्रोंमें पाणिनि अत्यधिक थे। तब बित्तकमें पराजित हो कर महादेवकी तपस्या करके ये बड़े विद्वान् हो गये। पीछे इन्होंने सुवपाठ, गणपाठ, धातुपाठ और अनुशासन इन चार भागोंमें व्याकरणशास्त्र समाप्त किया। यह देख कर बरहचिने इनका अवधि छाया परिपूर्ण करनेके लिये संचिपमें मार्त्तिक प्रस्तुत किया। पीछे व्याङ्गिने इन दोनोंकी उक्तियोंके व्यायपरिदग्गनके लिये लक्ष श्लोकमध्यमह ग्रन्थकी रचना की।

नन्दिनीतोष (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम।

नन्दिपाट (सं० पुं०) नन्दवस, तुनका पैड़।

नन्दिपुराण (सं० स्त्री०) नन्दिना प्रोक्त पुराण। एक उपपुराणका नाम। नन्दकेवर देखी।

नन्दिपोतवनी—पद्मवर्गशाय एक राजा। चातुर्वर्गशाय राजा द्वितीय विक्रमादित्यने इन्हें सुहृद पालन कर मार डाला था।

नन्दमित्र—जेन नृत्यपारंगोंमेंसे एक। पद्मसुन्दके बनाये हुए रायमन्त्राभ्युदयकाव्यमें इनका उल्लेख है।

नन्दिमुख (सं० पुं० स्त्री०) १ पश्चिमिध, एक प्रकारका पत्थी। २ लोहिधान्यमेद, एक प्रकारका चावल। ३ महादेव, शिव।

नन्दिमुवा (सं० स्त्री०) शुकुरहितदीर्घ गोधूम, बिना दूधका गेहूँ।

नन्दमुखी (सं० स्त्री०) १ तन्त्रा, जंघ, उँचाई। २ अवध पश्चिमिध, भावप्रकाशके अनुसार वह पत्थी जिसकी

चौं चका जंपरी भाग बहुत कड़ा और मोल हो। ऐसे पत्नीका नाम पित्रनायक, चिन्ना, भारी, मोठा और लघु, कफ, बल तथा शक्तवर्धक माना जाता है। (भावप्र-)

नन्दिवाल—मन्दालके कर्णूल जिलेका एक शहर। यह पचा० १५' २०" उ० और देशा० ७८' २८" पू० कुन्देर नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १५१३० है। यहां १८८८ ई०में म्यूनिशपलिटी स्थापित हुई है। राजस्व २३५००० रु०का है। दक्षिणी महाराष्ट्र रेलवेके खुल जानेसे यह शहर दिनों दिन वाणिज्यका प्रधान केन्द्र होता जा रहा है। यहां एक हाई-स्कूल तथा मनुसिपलकी औरसे एक दातथ्य चिकित्सालय है।

नन्दिद्व (स० पु०) शिवका एक नाम।

नन्दिल—जैनोंका एक ध्वजिरे। ध्वजिरावकीचरितमें इनका विस्तृत विवरण पाया जाता है।

नन्दिबहन (स० पु०) नन्दि वक्ष्यति-हृष-णिच-स्यु। १ शिव, महादेव। २ पत्मात्स। ३ पुत्र, बेटा, लड़का। ४ मित्र, दोस्त। ५ विमानविशेष, प्राचीन कांसिका एक प्रकारका विमान। ६ निमित्तयोगीय राजविशेष, निमित्तवर्धक एक राजाका नाम। ७ मगध देशके मौर्यवंशीय एक राजाका नाम। ८ प्राचीन बाहुगण्डके अनुसर वह मन्दिर जिसका विस्तार चौबीस हाथ हो, जो सात भूमियोंसे युक्त हो और जिसमें २० शृङ्ग हों। (त्रि०) ९ भानन्दवर्धक, भानन्द बढ़ानेवाला, जो भानन्द बढ़ावे।

नन्दिवर्मा—पञ्चवर्माश्रीय एक राजा।

नन्दिवर्मा पञ्चवर्मा—पञ्चवर्माश्रीय एक राजाका नाम।

नन्दिवारलक (स० पु० स्त्री०) मत्स्यभेद, समुद्रमें अनुसार एक प्रकारकी मछली जो समुद्रमें होती है। तिमि, तिमिजल, निवारक और नन्दिवारलक ये सब मछलियां समुद्रमें होती हैं।

नन्दिहृष (स० पु०) नन्दीहृष-देखो।

नन्दिहृष (स० पु०) कलायं, उद्दह।

नन्दिवेग (स० पु०) कलियुगका अणुकट नृपतिभेद।

नन्दिषेण—१ अजित-शान्तिस्तवधन्यके प्रणेता। २ कुमारके एक अनुसरका नाम।

नन्दिस्वामिन्—एक वैष्णवकरण। श्रीरत्नरत्नियोंमें इनका नामोक्ते है।

नन्दी (स० पु०) नन्दिन् देखो।

नन्दी—१ बङ्गालके सावर्णगोत्रीय राष्ट्रीय-प्राज्ञियोंका एक ग्राम। २ बङ्गालके कट वैद्य, कायस्थ, मोदरा, नापित, शांखारो, तांतो, तिलि और वासुदेवोंकी एक उपधि। ३ बङ्गालके वाहावजाति क्षत्रियोंकी एक उपधि।

नन्दीकोटझर—मन्दाजके कर्णूल जिलेका उपविभाग और तालुक। यह पचा० १५' २८" और १६' १५" उ० तथा देशा० ७८' ४" और ७८' १४" पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १३५८ वर्गमील और लोकसंख्या १०४१६७ है। इसमें १०२ ग्राम लगते हैं। राजस्व प्रायः २८०००० रु०का है। जिला भरमें यह सबसे बड़ा तालुक है, लेकिन इसका अधिकांश लक्षणमय है। तुलामद्रा और लण्णा-नदी इसके मध्य हो कर बह गई हैं। यहाँका वाय्विक दृष्टिपात २८ इंच है। भावबहा पक्षास्थलकर है। मनुष्य हमेशा पर्वतसे घेरित रहते हैं।

नन्दीट (स० पु०) इन्द्रलुग व्यक्ति, गंगा सिखावा।

नन्दीपति (स० पु०) शिव, महादेव।

नन्दीमुखो (स० पु०) नन्दिमुख देखो।

नन्दीहृष (स० पु०) १ कौटिल्यदेशप्रसिद्ध सुगन्धि हृष-विशेष, कौटिल्य देशमें होनेवाला सुगन्धित तुल नामक पेड़। (Cedrela toona) पर्याय—तूपोक, तूची, पोतक, कच्छप, नन्दी, कुठेरक और कान्त। २ गुण—यह कटु, तिक्त, शीतल, पित्त, रक्त, दाह, शिरःपीडा, खेद और कुष्ठ-नाशक, सुगन्ध, पुष्टि तथा वीर्यदायक माना गया है। विशेष विवरण द्रुत शब्दमें देखो।

२ अथर्वशास्त्रकार औरवान्-सनामप्रसिद्ध हृषविशेष, पोपलके आकारका घूब देनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसका पर्याय—तुल, कुठेरक, कुनि, कच्छ, कान्तलक, तुषि, नन्दिहृष, क्षुषि, तुन्द, नन्दिक और नन्दि हृषक है।

मिथिलादि प्रदेशोंमें यह तुषी या तुष नामसे प्रसिद्ध है। इस हृषके विषय मतभेद पाया जाता है।

अमरसिंहने इससे कई एक पर्याय स्थिर किये हैं जिन्हें राजनिघण्टोत्त पर्यायके साथ मिलानसे कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है। कोई कोई कहते हैं, कि तूत और तूल ये दोनों प्रयत्न प्रयत्न-जातिके हल हैं। जिनमेंसे तूल

नामक वृक्ष समीप लुप्त वा तुल्य शब्दका और राज-
निर्घण्टोक्त तृती शब्दके अपभ्रंशसे तुल्य शब्द हुआ है।
अमरटीका में भरतमल्लिकने इसे धोपनके आकारका और-
वान् वृक्ष बतलाया है। यह अस्त्रत्याकरवृक्ष भावप्रका-
शील स्थानीवृक्ष है और स्थानभेदसे लोग इसे नन्दीवृक्ष
भी कहने लगे हैं। अमर और राजनिर्घण्टोक्त नन्दीको
तृती कहते हैं। १ मेघश्री, मेदादिगी।

नन्दीश (सं० पु०) नन्दी ईश्वर। १ नन्दी। २ भरतीक्ष
तालभेद, तालीके सात भेदोंमें एक। ३ शिव, महा-
देव।

नन्दीश्वर (सं० पु०) नन्दिनः गणविशेषस्य ईश्वरः। १
शिव। २ नन्दीगताक्ष। ३ शिव-हारपाल। इनका विषय
बराहपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

वैतागुप्तं नन्दी नामक एक मुनि शिवको तपस्या
कर रही थी। तपस्यासे समुद्र हो कर शिवने
उक्त अभिमन्यु वर मांगनेको कहा। इस पर नन्दीने
कहा था, 'यदि आप सृष्ट पर समुद्र हैं, तो मुझे
यही वर दीजिये जिससे आपके प्रति मेरी अचला भक्ति
हो।' यह सुन कर शिवजी बोले, 'तुम मेरे समान रूप-
विशिष्ट और विलोचन होगे, तथा सब गुणोंसे विभूषित
और लरामरणीरहित हो कर सुखपूर्वक रहोगे। देव-
दानध सभी तुम्हारे सम्मान करने लगे और तुम पाश्र्वचरी-
में प्रधान समझे जाओगे। आजसे तुम्हारा नाम नन्दीश्वर
रखा गया और तुम देवताओंमें प्रधान हुए। यदि कोई
तुमसे ईष्य करेगा, तो वह मानो मुझसे ही ईष्य करता
है। आजसे तुम मेरी दाहिनी ओर रहो। (बराह०)
कूर्मपुराणमें भी इनका विवरण लिखा हुआ है।

४ एक कामशास्त्ररचयिता। चातस्यायनके काव्य-
सूत्रमें और पञ्चभाष्यक नामक ग्रन्थमें इनका मत उद्धृत
है। ५ शिवका एक गण। पुराणानुसार यह लोटकका
अवतार माना जाता है। कहते हैं, कि यह वामन है,
इसका रंग काला है और गिर मूँड़ा हुआ तथा सुँह
बन्धर-सा है।

नन्दीश्वरपाचार्य गोपालाश्रमरूप—यद्ये तद्वद्विद्यापद्धति
नामक दार्शनिक ग्रन्थके रचयिता।

नन्दीसरस (सं० स्त्री०) नन्दरीसर।

नन्दर—नन्दर देको।

नन्दीङ—नन्दीङ देखो।

नन्दीङ्ग—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक खेणी। सरतसे १६
मील उत्तर-पूर्व राजपिण्यतार राज्यको राजधानी नन्दीङ्ग
स्थानके नामानुसार इस खेणीका नाम पड़ा है। इनमें
से अनेक क्षत्रिजोंको और कुछ भिक्षु भी हैं।

नन्दादि (सं० पु०) पाणिनि उक्त शब्दगणविशेष। इस
नन्दादिगणके बाद द्यु प्रत्यय लगता है। यथा—नन्दन,
वाशन, मदन, दूषण, साधन, बहैन, शोभन, रोचन
(संज्ञा धर्ममें यह तप और दम घातु) सहन, तपन,
दमन, जल्पन, रमण, दर्पण, संक्रमण, सङ्घर्षण, संह-
र्षण, जगर्दन, यवन, मधुसूदन, विभीषण, लवण, वित्त-
विलासन, कुलदमन, शत्रुदमन। (पाणिनि)

नद्यावर्त्त (सं० पु०) नन्दी नन्दिलनकी आवर्त्तों यत्न।
रुद्रविशेष, एक प्रकारको इमारत। ऐसी इमारतके
पश्चिम और द्वार नहीं रहना चाहिए। यह समुद्रोंके
लिए शुभजगह है। २ ईश्वर-सप्तविशेष। ३ तगरवृक्ष,
तगरका पेड़। ४ मत्स्यभेद, एक प्रकारकी मछली। इसका
गुण—घंषाही, कफ और पित्तनाशक है। ५ यात्रायोग-
भेद। इसे नद्यावर्त्तक योग भी कहते हैं।

नद्यावर्त्त देखो।

नवय (नवभट्ट)—एक वैद्याकरण। ये जातिके ब्राह्मण थे।
इन्होंने सबसे पहले तैलङ्ग भाषामें व्याकरण, तथा
महाभारतका अधिकांश अनुवाद किया था। ये राज-
महेंद्रीके चालुक्य-वंशके राजा विष्णुवर्धनके समयमें
आधिभूत हुए थे।

नवसरि—४० देवके गुरु और चन्द्रगणके आचार्य। ये
व्यपभट्टरुकि शिष्य थे। ८८५ संवत्में इनकी मृत्यु
हुई।

नविलम्ब—१ मन्द्राजके लक्ष्मी-जिलान्तर्गत एक तालुक।
यह पचा० १०° ४४' से ११° १' उ० और देशा० ७८° २०'
से ७८° ५१' के पूर्वमें अवस्थित है। भूपरिमाण २८१
वर्ग मील और लोकसंख्या २१६११८ है। इसमें दो शहर
और २४२ ग्राम लगते हैं। राजस्व ११११००० रु० है।
यहां वर्षाको शिकायत नहीं है।

२ उक्त तालुकका एक शहर, यह पचा० १०° ५१'

सं० चौर देयां० ७८० ३६ पू० के मध्य अवस्थित है। लोक-
संख्या प्रायः ६७२७ है। मधुबनीखरखामोका यहाँ एक
प्राचीन मन्दिर है।

नमक—महर्षि श्रुतिके पुत्र। चन्द्रालेख्य ग्रंथमें यह मन्त्रमें
गुणवान् राजा भिक्खु है। सुन्दरखण्डके अन्तर्गत कन्न-
पुर राज्यमें खासुगोरी नामका एक अत्यन्त प्राचीन नगर
है, जहाँ एक शिलाफलक पाया गया है। उस शिला-
फलकमें नमस्कृता श्रृंगपरिचय उल्लेख है।

नमोरा (हि० पु०) नमिहाल देखो।

नम्रा (हि० वि०) छोटा।

नम्राई (हि० स्त्री०) १ छोटापन, छोटाई। २ अप्रतिष्ठा,
बदनामी, टेढ़ी।

नम्रिया (हि० पु०) १ एक प्रकारका धान। २ इसी धानका
चावल।

नपत (हि० स्त्री०) नगई देखो।

नपता (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी। इसके डेनों पर
कासो या लास चितियाँ होती हैं।

नपरका (हि० पु०) एक प्रकारका पत्ती। इसकी गरदन
घोर चेट लाल तथा पैर घोर लाल होती है।

नपराजित् (सं० पु०) न पराजयते पराजित्-कर्मणि
क्रिप् 'सहस्रपति' न शब्देन सह समासः। महादेव,
शिव।

नपाई (हि० स्त्री०) १ नापनेका काम। २ नापनेका
भाव। ३ नापनेकी मजदूरी।

नपात (प्रा० वि०) नापाई देखो।

नपात् (सं० वि०) पाति रचति या शब्द-ततो नभाङित्या-
दिना नञ् प्रकृतिभावः। १ अरचक, जो रचक या
पालनेवाला नहीं है।

नपात् शब्दका रूप शब्द प्रत्यागन्त शब्दके जो वा होता
है, जैसे 'नपात् नपात्तो' इत्यादि। न पातयति पाति
क्रिप्। २ अपातक। (पु०) ३ पुत्र, बेटा, लड़का।

नपात (सं० पु०) नास्ति पातो यत्। देवयानपथः। 'नास्ति
पातो यत् न पातो देवयानपथः यत् गतानां पातो नास्ति'
(वेदरीय) जिस राह की कंर चलनेसे पतन न हो, उसे
नपात अर्थात् देवयान कहते हैं।

नपुंसक (सं० स्त्री०) न स्त्री न पुमान् (नभाज नपादिति।

या ६।३।७५) इति निपातनात् स्त्रीपुंसयोः पुंसक
पादेमा। १ पत्नीय, पित्रडा, नामदे।

पिण्का वीर्यं चौर माताका रज जव दोनों बराबर
होते हैं तब पत्नान नपुंसक होती है।

नपुंसकी उत्पत्तिका विषय भावप्रकाश आदि
वैद्यक ग्रंथोंमें द्रुम प्रकार लिखा है—मैथुनकालमें
यदि शुक्रकी अधिकता हो, तो पुत्र, आर्त्तवकी अधिकता
हो, तो कन्या और यदि शक्योष्णिन दोनों बराबर हो,
तो नपुंसक उत्पन्न होता है, अथवा परमेश्वरके इच्छा-
नुसार वृषा करता है।

नपुंसक पाँच प्रकारके माने गये हैं। आसिक्व, सुगन्धि,
कुम्भीय, ईर्ष्य और पण्ड। इनमेंसे पण्डके भिन्ना और
सभीको शुक्रधातु उत्पन्न होता है।

द्रुमका संज्ञक—पितामाताके अश्ववीर्य द्वारा जो
ननान उत्पन्न होती है, उसे आसिक्व कहते हैं। शुक्र-
भोजन करनेके इस आसिक्व पुरुषका ध्वज उत्पन्न होता
है, अर्थात् यही आसिक्व पुरुष है,—दूसरे पुरुष द्वारा
अपने सुखमें मैथुन गारानेसे शुक्रभोजन कराया जाता
है, उससे ध्वजकी उत्पत्ति होती है।

जो अन्तान प्रतियोगिनिमें जल सेतो है, उसे सौगन्धिक
अथवा नासायोगि कहते हैं। इस प्रकारकी अन्तान जन-
नेन्द्रिय प्रसन्न कर मैथुन-कर्म करतो है।

जो व्यक्ति गोंडू है अथवा पुरुषके जो ना दूसरी स्त्रीके
साथ सहम करनेमें प्रवृत्त हो जाता है, उसे कुम्भीय
कहते हैं। इसका दूसरा नाम शुद्ध्योगि है। दूसरेका
मैथुन देख कर जो व्यक्ति कामातुर हो जाता है, उसे
ईर्ष्य कहते हैं। इसका दूसरा नाम दृष्टयोगि है।

भोहवग श्रुतमनी स्त्रीके साथ नीचे रह कर सम्भोग
करनेसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह ठोका स्त्रीके जैसे
देखनेमें लगता है, काम काज भी स्त्रीके सरोखा करता
है, जबकी सूँठ दाढ़ी नहीं होती और न ससमें पुरुषत्व
ही होता है। ऐसे पुत्रको पण्ड कहते हैं। किन्तु यह
पण्डसंज्ञक नपुंसक अघोभूत हो कर दूसरे पुरुषसे
सहमकी इच्छा करता है।

वीर्य और रक्त दोनोंके समान होनेसे पुरुष स्त्री
प्रकृतिपा होता है और उसको नपुंसक कहते हैं, यह
न तो पूरा पुरुष हो सकता और न स्त्री।

नपुंसक गमनरोगका लक्षण—जिस गर्भवती स्त्रीके गर्भकोपमें पशुंदाकार अर्थात् गोलाकृति पाछे भागके फलके सदृश मालूम पड़ता है और दोनों पार्श्व उभरत दोग्र पड़ते तथा पेटका अगला भाग कुछ ऊँचा हो जाता है, उसीके गर्भमें नपुंसक मन्त्रान उत्पन्न होते हैं।

महाभाष्यमें इस शब्दको पुंलिंग बतलाया है।
२ कायर, डरपोक।

नपुंसकता (सं० स्त्री०) १ नपुंसक होनेका भाव, हिजड़ापन। २ एक प्रकारका रोग। इसमें मनुष्यका वीर्य बिलकुल नष्ट हो जाता है और यह स्त्री-संभोगके योग्य नहीं रह जाता। ३ नामर्दी।

नपुंसकत्व (सं० पुं०) नपुंसकता, नामर्दी।

नपुंसकमन्त्र (सं० पुं०) जैनियोंके अनुसार वह मन्त्र जिसके अन्तमें 'नमः' हो।

नपुंसकवेद (सं० पुं०) जैनियोंके अनुसार एक प्रकारका 'हीनबीज कर्म'। इसके उदयमें स्त्रीके साथ भी संभोग करनेकी इच्छा होती है और बालक या पुरुषके साथ भी।

नपुंसक (सं० पुं० स्त्री०) न पुमान् आपत्वात् न नपुंसकभावः। स्त्री, हिजड़ा।

नन्ना (हिं० स्त्री०) लड़की या लड़केकी सत्ताग, माती या पोता।

ननू (सं० पुं०) न पतन्ति पितरो येन नपुंसक, प्रत्ययेन माधु (ननू, नेटृत्ववृत्ति। उग, २।८६) पुत्र वा कन्याका पुत्र, माती या पोता।

पोतके जैसा माती भी उधार करता है, इसीसे दुहितृ-के पुत्रको भी ननू कहा है। शास्त्रमें भी लिखा है—

"रौहित्रोऽपि ह्यपुत्रेन सन्तापयति पौत्रवत्" (यजु)

नष्टका (सं० स्त्री०) १ चटप्रविशेष, गोरैया नामकी चड़िया। इसका मांस हलका, ठंडा, मीठा, कसेला और दीपताश्च माना जाता है। २ शुद्धिका, शुद्ध, गिनोय।

नन्दी (सं० स्त्री०) नष्ट-डीव, (कृष्णेश्वरी डीव)। प। ४।१।५। पोती या नातिन। पर्याय—पोती, सुताम्बजा, पोत्रिका।

नफर (फा० पुं०) १ दास, सेवक, नोकर। २ व्यक्ति, जैसे दश नफर मजदूर। इस अर्थमें इस शब्दका व्यवहार

देवस बहुत छोटा काम करनेवालोंकी संख्या आदि प्रकट करनेके लिये होता है।

नफरत (फा० स्त्री०) छुपा, घिन।

नफरी (फा० स्त्री०) १ एक मजदूरकी एक दिनकी मजदूरी। २ मजदूरके एक दिनका काम। ३ मजदूरीका दिन।

नफसानकमी (फा० स्त्री०) १ वह विवाद जो देवमध्यस्थित स्वार्थका ध्यान रख कर किया जाय, खींचतान। २ वैमनस्य, लड़ाई, चला चली।

नफा (फा० पुं०) लाभ, फायदा।

नफासत (फा० स्त्री०) नफोस होनेका भाव, उमड़ापन।

नफीरी (फा० स्त्री०) तुरही, शहनाई।

नफस (फा० वि०) १ उलस, उमड़ा, बढ़िया। २ सज्ज, साफ। ३ सुन्दर, बढ़िया।

नबो (फा० पुं०) ईश्वरका दूत, पैगम्बर, रसूल।

नवेइना (हिं० स्त्री०) १ निपटना, तै करना। २ अपने मतसबकी चीज ले लेना और मेषकी छोड़ देना, चुनना।

नवेइना (हिं० पुं०) न्याय, फैसला, निपटारा।

नवेरा (हिं० स्त्री०) नवेइना देखो।

नवेरा (हिं० पुं०) नवेइना देखो।

नव्दीगर (फा० पुं०) वह मनुष्य जो चारजामा बनाता हो।

नल (फा० स्त्री०) हाथकी रक्तवहा वाली जिसकी चालसे रोगको पहचाना जातो है, नाड़ी।

नल्ल (हिं० वि०) १ जो गिनतीमें पचास और चाकोस हो, छीसे दस न्यून। (पुं०) २ वह संख्या जो चाकोस और पचासके मेलसे बनती हो।

नभ (सं० वि०) नभ-पच। १ हिंसक, मारनेवाला। (पुं०) २ आचम्य मास, सावनका महीना। ३ भाद्र मास, भादोका महीना। ४ पाशाग, शून्य स्थान। ५ चातुषमन्त्रारम्भे सप्तर्षिभेद, चातुषमन्त्रारम्भे सप्तर्षिर्षोभिरे एक

का नाम। ६ चातुष मुनिरे एक पुत्रका नाम। ७ महादेव, शिव। ८ रामचंद्रोय राजभेद, हरिवंशके अनुसार रामचन्द्रके वंशके एक राजाका नाम। ९ शून्य, सूना, निरर। १० पाश्र्व, पार्श्व। ११ दास, निरुद्ध, नरदेव।

१२ राजा नलके एक पुत्रका नाम। १३ पुत्रक, पचरक।

१४ जल, पानी। १५ जगद्गुणहीने क्षयस्थानसे दृश्यता
स्थान। १६ मेष, बादल। १७ वर्षा। १८ विषयस्तु। १९
चणालस्तु।

नमःकेतन (सं० स्त्री०) सूर्य।

नमःप्राप्तिन् (सं० पु०) नमःप्राप्तिं गगनात्प्रपन्नमस्त्य-
स्येति इति। सिंहर, मिर।

नमःप्राप्त्य (सं० पु०) सूर्य।

नमःप्रभेद (सं० पु०) विरूपके वंशधर। एक वैदिक
श्रद्धिका नाम जो विरूपके वंशज थे। शत्रुवेदसे इनके
कार्य सम्पन्न मिलते हैं।

नमःप्राण (सं० पु०) नमसः प्राण इव। पवन, हवा।

नमःसद (सं० पु०) नमसि सीदति सद-क्षिप्। १ देव,
देवता। २ खगादि, आकाशमें विचरनेवाले पक्षी
आदि।

नमःसरित् (सं० स्त्री०) नमसः सरित् इत्यत्। गङ्गा,
आकाशगङ्गा, मन्दाकिनी।

नमःसुत (सं० पु०) पवन, हवा।

नमःस्य (सं० स्त्री०) नमःस्थित देखो।

नमःस्थल (सं० पु०) नमःस्थलमिव यस्य। महादेव, शिव।

नमःस्थित (सं० पु०) नमसि स्थितः। नरकविशेष, एक
नरकका नाम।

नमःस्वयम् (सं० स्त्री०) नमःस्वयति स्वयम्-क्षिप्। आकाश-
स्पर्शी, आकाश छूनेवाला।

नमःस्वयम् (सं० स्त्री०) नमःस्वयति स्वयम्-क। गगन-
स्पर्शी, आसमान छूनेवाला।

नमः (सं० पु०) १ वैवस्वत मनुके पुत्रभेद, वैवस्वत
मनुके एक पुत्रका नाम। २ पक्षी, चिड़िया। ३ पवन,
हवा। ४ मेष, बादल। (स्त्री०) ५ आकाशगामी,
आकाशमें विचरनेवाला। ६ भाग्यहीन, भगमा।

नमःनाय (सं० पु०) गवड़।

नमःगामी (हिं० पु०) १ चन्द्रमा। २ पक्षी। ३ देवता।
४ सूर्य। ५ तारा।

नमःनेय (सं० पु०) गवड़।

नमःचर (हिं० पु०) नमःचर देखो।

नमःभज (हिं० पु०) नमोभज देखो।

नमःनीय (हिं० पु०) चातक, पपीहा।

नमः (सं० स्त्री०) नमःहिंसायां वायुनकात्पुनः। १
हिंसक। भन्-वाहु० पुनः। २ शब्दकारक।

नमःन्य (सं० स्त्री०) नमःहिंसायां कनिन्, नमिन् साधु यत्
वा नमिन् हित इति श्रुयोदरदित्वात् साधुः। १ आकाश-
भव, जो आकाशमें उत्पन्न हो। २ हिंसक, भारनेवाला।

नमः (सं० स्त्री०) कमल।

नमःचक्षुस् (सं० स्त्री०) नमःचक्षुरिव प्रकाशकत्वात्।
सूर्य।

नमःयमस (सं० पु०) नमःयमस इव। १ चन्द्रमा २
चित्रापूष। ३ इन्द्रजाल।

नमःचर (सं० स्त्री०) नमसि चरति चर-ट। १ गगनचारी,
आकाशमें चलनेवाला। (पु०) २ पक्षी। ३ मेष, बादल।

४ पवन, हवा। ५ देवता, गन्धर्व और ग्रहादि।

नमः (सं० स्त्री०) नमस्ते मेघे रिति नमः वन्यने नमः-पसुन्
भक्षान्तादिभ्यः (गृहेदि) विभज्य। छण् ४। २१०) नम देखो।

नमः (सं० पु०) नमः शब्दे पसच्। १ शब्दाश्रय गगन।
२ दृश्य सम्बन्धीय सन्नविभेद, हरिवंशके पशुसार
दृश्य सम्बन्धीय सन्नविधोमिसे एकका नाम।

नमःसङ्गम (सं० पु० स्त्री०) नमसं गच्छतीति नमः-सङ्घ-
ततोऽसुम्। खग, पक्षी, चिड़िया।

नमःस्थल (हिं० पु०) नमःस्थल देखा।

नमःस्थित (हिं० पु०) नमःस्थित देखो।

नमःस्वयम् (सं० पु०) नमो स्वयते मय गतो पच् वेदे न पदत्व
आदित्य, सूर्य।

नमःस्य (सं० पु०) नमसे निघाय साधुः नमः-यत् (तत्र
साधुः। पा ४। ४। ५८) १ भाद्रमास, भादोका महीना। २
क्षारीय मनुके पुत्रभेद, हरिवंशके पशुसार क्षारीय
मनुके एक पुत्रका नाम।

नमःक्षत् (सं० पु०) नमः उत्पत्तिकारणत्वेनाप्यस्य इति
नमः-मनुप, मस्य वा। १ वायु, हवा। आकाशसे
वायुकी उत्पत्ति है, इसलिये वायुकी उत्पत्तिका कारण
आकाश है। इसी कारण नमःक्षत् शब्दसे आकाशका
बोध होता है। (रङ् ४। ८) क्षियां क्षीय। २ नम-
स्वती, अन्तर्धानकी पत्नी। (भागवत-४। २। ४। ८)

नमः (सं० पु०) १ श्रावणमास, सावनका महीना। २
प्राण, गन्ध। ३ विषयस्तु। ४ पक्षिमयी।

नभा—एक पंगवा नाम। सोधरीकुनकी प्येष्ठ पुत्र तिलकसे नभापंगकी उत्पत्ति है। तिलकके पोत्र हमोर सिंहेने १०५५ ई०में नभा नामक नगर बसाया। हमोर एक साधवी पौर उद्योगीन सरदार थे। ये कई गांव जीत कर पतियालाके चालासिंहके साथ मिल गये पौर सर-हिन्दके पफगान शासनकर्त्ता जेनखाके साथ लड़ाई छिड़ दी। उस युद्धमें जेनखा मारे गये पौर हमोरने धामदो नामक प्रदेशकी अपने स्वत्वमें कर लिया।

१००४ ई०में हिन्दके राजा गजपति सिंहने हमोर-की पराजित पौर कैद कर उनकी सङ्ग्रह नामक नगर लिया था। हमोरके पुत्र यमोवन्त सिंहने पंगरेजोंसे मित्रता कर ली। गवर्नर-जेनरलकी पौरसे उन्हें एक मनद मिलो जिसमें लिखा था, कि उन्हें किसी प्रकारका कर नहीं देना होगा पौर वे अपने सभी पूर्व स्वत्वोंका उपभोग कर सकते हैं। १८०४ ई०में होलकरने जब नभा-में पहुँच कर पंगरेजोंके विरुद्ध यमोवन्तसे सहायता मांगो थी, तब उन्होंने सहायता प्राप्त न होने पर नभा नाम-जूर कर दी थी। गोरखा-संग्राममें यमोवन्तने पंगरेजोंकी खास मदद दी थी पौर कानुल युद्धमें उन्हें क्षताग्रस्त करने काज दिया था। १८४० ई०में यमोवन्तका देहान्त हुआ। उनके पुत्र देवेन्द्रसिंहने शासनकर्त्ताके उपयुक्त गुण न थे, सचपनसे वे सुगमामदो टेङ्गुमीसे चिरे रहते थे, इस कारण उनकी सत्ता पौर प्रभुत्वके विषय-में कुछ अमात्मक विम्वार जम गया था। उन चापलूसों-ने देवेन्द्रसिंहकी विश्वास दिमागी था, कि पंगरेजोंको शक्ति दिनों दिन क्रास होती जा रही है। चौड़े हो दिनेके भोमर नभाराज्य सारा पञ्जाबका प्रधान हो जायेगा। इस भ्रममें पड़ कर १८४५ ई०के सिख-युद्धमें पंगरेजों सेनाकी न तो खायका प्रस्थ कर दिया पौर न किसी प्रकारकी सहायता दी। इस अपराधमें पंगरेजोंने देवेन्द्रसिंहकी सिंहासनसे उलट कर दिया पौर उनके सङ्के भरणसिंहकी जिसकी समर सेना सात वर्षकी थी, उनकी जगह पर बिठाया। भरणसिंहकी नावा-लिनी दूर होनेके कुछ समय बाद ही सिपाहोविद्रोह पर हुआ। युवा राजाने इस समय जहाँ तक हो सका, पकड़ पकड़ कर पौर रसद दे कर पंगरेजोंकी

विशेष सहायता की। उस उपकारके प्रत्युपकार स्वरूप पंगरेजोंने उन्हें सुधियाणा प्रदेशका प्रधान बना कर बहुत प्रकारसे राजसम्मानोंसे विभूषित किया था। पन्नाला दरबारमें साईं कौनहने उनकी कार्यावलीका उल्लेख करते हुए उन्हें यथेष्ट धन्यवाद दिया। १८६३ ई०में राज-प्रतिनिधि साईं एसगिनने उन्हें ध्वजपाक समाका पासन प्रदान किया। किन्तु उसी वर्ष उनकी देहान्त हुआ। वे अपुत्रक थे इस कारण उनके मरने पर उनके छोटे भाई भगवानसिंह राजगद्दी पर बैठे। नामा देखी।

नभाक (सं० स्त्री०) नभनाति ध्याप्रोतीति नभ-भाक (विनाकादश्च। उग. ३। १५) १ तमस, अन्धकार, अंधेरा। २ राहु। ३ श्रवणविशेष, एक ऋषिका नाम।

नभि (सं० स्त्री०) चक्षुः, पक्षि।

नभीत (सं० वि०) न भीतः, बाहुलकात् नभी न भ। जिसे डर न हो, निडर।

नभीग (सं० वि०) नभीगच्छति गम-ङ। १ नभसर, पक्षी, देवता पौर यह आदि। (पु०) २ जम्बुकुण्डलोर्ध्वं लम्ब-स्थानस्य दशधा स्थान। ३ दशम मन्त्रन्तरीय सप्तभिर्भेद, दशम मन्त्रन्तरसे सप्तभिर्भेदसे एकका नाम।

नभीगज (सं० पु०) नभसि गज इव। शिघ्र, वादल।

नभीगति (सं० स्त्री०) नभसि आकाशे गतिः। १ आकाश-गमन। (वि०) नभसि गतियं स्त्र। २ जो आकाशमें विचरण करता हो।

नभज (सं० वि०) नभसि आकाशे जायते जन-ङ। आकाश जात, जो आकाशमें उत्पन्न हो।

नभीजू (सं० वि०) नभस-सु-क्लिप्। आकाशमें व्याप्त, जो आकाशमें हो।

नभीद (सं० पु०) विश्वदेवभेद, हरिवंशके प्रथम एक विश्वदेवका नाम।

नभीदुह (सं० पु०) नभसः क्षीयि प्रपूरयति नभादि-कमिति नभस-दुह-क। शिघ्र, वादल।

नभीक्षीप (सं० पु०) नभसि क्षीप इव। शिघ्र, वादल।

नभीधूम (सं० पु०) नभसि धूम इव। शिघ्र, वादल। शेष आकाशमें धूपकी तरह फैला रहता है, इसीसे इसकी नभीधूम कहते हैं।

नमोभज (सं० पु०) नमोभज ध्वज इव । भेद्य, वादिष ।
 नमोनदी (सं० स्त्री०) नमसो नदी । खगैः, आकाश-
 गङ्गा, मन्दाकिनी ।
 नमोमणि (सं० पु०) नमसो मणिरिव । सुय ।
 नमोमण्डल (सं० स्त्री०) नमो मण्डलमिव । गगन-
 मण्डल ।
 नमोमण्डलोप (सं० पु०) नमोमण्डले दीप इव, प्रका-
 शकत्वात् । चन्द्र, चन्द्रमा ।
 नमोऽम्बुप (सं० पु०) नमसः अम्बुजले पियति पा-क ।
 चातकपत्नी, पपीहा ।
 नमोयोनि (सं० पु०) महादेव, शिव ।
 नमोरजस् (सं० स्त्री०) नमसो रज इव । अभ्यकार,
 चर्वरा ।
 नमोरूप (सं० त्रि०) नमसो रूपं भरोपितं रूपमिव रूपं
 यस्य । १ नीलवर्णयुक्त, नीले रंगका (पद्म आदि) । (स्त्री०)
 २ नीलवर्ण, नीला रंग ।
 नमोरूप (सं० स्त्री०) नमसि रूपरिव आचरकत्वात् ।
 मोक्षार, कुहरा, कुहासा ।
 नमोलय (सं० पु०) नमसि लयो यस्य वा नमसि लीयते
 सो-भय । १ धूम, धूप । आकाशमें लीन होनेके कारण
 इसका नाम नमोलय पड़ा है । (त्रि०) २ गगनलीन-
 मान, जो आकाशमें लीन हो जाय ।
 नमोवट (सं० पु०) आकाशमण्डल ।
 नमोवीथी (सं० स्त्री०) नमसि वीथि इव । आकाश-
 स्थित वीथिरूप पथ ।
 नमोजसु (सं० त्रि०) नम आकाशं जीकस्थानं यस्य ।
 अन्तरीक्षचरं पक्षी प्रभृति, अन्तरीक्षमें विचरण करनेवाला
 पक्षी आदि ।
 नम्य (सं० पु०) नामये हितं नाभि-यात् (उरगादिभ्यो वट्) ।
 वा ५।१।२ ततो 'नाभिन्मभञ्ज' इति नभादेशः । १, २ आदि
 पक्षावयवके हितकर सेवादि, वज्र सेल या चिकनाई
 जो पक्षियोंमें दी जाय । २ भय, घृणी । ३ पक्षियोंके बीच-
 का भाग ।
 नम्राज. (सं० पु०) नम्राजते इति न्राज-क्षिप. । भेंच,
 बादल ।
 नम्—नम् देखो ।

नम (फा० वि०) १ धातु, नीला, तरे ।
 नम (सं० पु०) नमस् देखो ।
 नमक (फा० पु०) १ एक प्रसिद्ध चार पदार्थ । इसका
 व्यवहार भोज्य पदार्थोंमें एक प्रकारका स्वाद उत्पन्न करनेके
 लिये थोड़े मानमें होता है । विशेष विवरण सत्रण शब्दमें
 देखो । २ कुछ विशेष प्रकारका सौन्दर्य जो अधिक
 मनोहर या प्रिय हो, लावण्य, सलीमापन ।
 नमकधवार (फा० वि०) नमक खानेवाला, पालित होने-
 वाला, जिसका पासल पोषण किसी दूसरेके द्वारा हो ।
 नमकदान (हि० पु०) वह धरतन जिसमें पिशा हुआ
 नमक रखा जाता है ।
 नमकसार (फा० पु०) वह स्थान जहाँ नमक निकलता
 या बनता हो ।
 नमकहराम (सं० पु०) वह मनुष्य जो किसीका दिया
 हुआ चय खा कर उसीकी पाँखोंमें सँगलो करे, छतल ।
 नमकहरामी (सं० स्त्री०) छतलता, नमकहरामपन ।
 नमकहसाल (सं० पु०) स्वामिनिष्ठ, स्वामिमत्त, वदा
 अपनी आत्मिककी भलाई करनेवाला मनुष्य ।
 नमकहसालो (सं० स्त्री०) स्वामिनिष्ठा, स्वामिमत्ति ।
 नमकीन (फा० वि०) १ जिसमें नमकके जैसा स्वाद हो ।
 २ जिसमें नमक पड़ा हो । (पु०) ३ नमक डाला हुआ
 पकवान । जैसे, पापड़, सेव, समोसा आदि ।
 नमगदसमुद्र—यद्यौर घोर चीवीव परगनेके मध्य कपो-
 ताक्ष घोर खोखपेड़ा नामक दो नदियाँ मिल कर
 नमगदसमुद्र कहलाने लगी हैं । इसका दूसरा नाम
 पाङ्गाथी है ।
 नमगीरा (फा० पु०) १ बांस आदिसे बचनेका वह कपड़ा
 जो पक्षियोंके ऊपरो भागमें तान देते हैं । २ पाल या
 तिरपाल आदि जिसे धूप घोर वर्षासे बचनेके लिये किसी
 स्थानके ऊपर तान देते हैं ।
 नमत्खौ—इनका दूसरा नाम मिर्जासुखभद बा । सिराज-
 में इनकी जन्मभूमि थी । १५८३ ई० में इन्होंने नमत्खौ-
 की उपाधि पाई और उसी साल ये सम्राट्, आनमगीर-
 की पाठशालाके महावधायक और पाठ्यपर नियुक्त
 हुए । आनमगीरके मरने पर बहादुरशाहने इन्हें नवाब
 कीनिसमन्द खौ अलीकी उपाधि दी थी । इन्होंने आदिमने

इन्होंने 'शाहनामा' नामक ग्रन्थ लिखना शुरू कर दिया था। किन्तु कुछ दिन बाद ही इन्की मृत्यु हो गई। इन्की वग़ाई हुई पनेक कविता-पुस्तक मिलती हैं जिनमेंसे एकका नाम हसन-वश-इस्क है। शाहमगीरसे मोलकुण्डा जीते जाने पर इन्होंने जो एक विदूषण-सभ्य काव्य लिखा था, उसीका सबसे अधिक भाग ही होता है। इस काव्यमें ग्रन्थकारने सुदूर मेनापतिसे ले कर सन्नाट, तककी भी बनानेसे न छोड़ा था। उन्होंने प्राच्य पाकप्रणालीके मन्थनमें एक उत्कृष्ट पुस्तक भी लिखी है। कोई कोई इसे नमस्फली भी भी कहते थे।

नमन (सं० पु०) नम्यते इति नम-प्रत्यय- (घृ-प्र-रुक्) क्रीति। वज्र. १।११०) १ प्रभु, स्वामी। २ धूम, धूप। ३ नम। (ति०) ४ नम, जो झुकें।

नमदा (फा० पु०) जमाया हुआ जमी काव्यलका कपड़ा।

नमदेव—महिम्नके दर्जियोंका एक विभाग। ये सबके सब क्षत्रियवर्णक हैं।

नमन (सं० स्त्री०) नम-प्रत्यय। १ प्रणाम, नमस्कार। २ श्रद्धा।

नमनकुल—सिंहनक्षत्रका एक पर्वत। यह प्रायः ७००० फुट ऊँचा है।

नमनीय (सं० स्त्री०) नम-प्रतीत्यय। १ नमनीय, जो झुक सके या झुकाया जा सके। २ नमस्कार करने योग्य, आदरणीय, पूजनीय, माननीय।

नमश्चिन्तु (सं० वि०) नम-प्रत्यय-वाङ्मयात् इण्युच्। नमनीय, आदर करने योग्य।

नमस् (सं० अव्य०) नाम वाङ्मयात् चसुन्। १ नमन, नमस्कार। अपनी हीनता दिखलाये बिना प्रणाम नहीं हो सकता, इस कारण स्वापकर्ष-बोधक व्यापारका नाम नमः है। २ त्याग, छोड़ देना। 'पुष्पमिदं विष्णवे नमः' विष्णुके उद्देश्यसे पुष्पका त्याग, यहाँ पर नमस्कारके प्रयोगसे त्यागका बोध होता है, अर्थात् पुष्पमें अपना स्वत्व नहीं रखा, यह विष्णुका हो गया। नम्यते इति कर्मणि चसुन्। ३ भक्त, भनाज। ४ वयः। ५ यत्। ६ कृत। ७ स्तोत्र।

नमस (सं० पु०) नमनीति नम-प्रत्यय- (घृ-प्र-रुक्) क्रीति। वज्र. १।११०) पशुकृत।

नमस्नान (सं० ति०) नमस्य इति आम धातोः चानच्, ततो भक्तोपयोगी। नमस्कारयोगिन, नमस्कार करने योग्य।

नमसित (सं० ति०) नमस्य कर्मणि क्त, ततो य लोपः। कृत-नमस्कार, जिसे नमस्कार किया गया हो, पूजित। पर्याय—पूजित, नमस्सित, चर्हित, अपचायित, चर्चित और अपचित।

नमस्कृष्ट (सं० पु०) महादेव, गिव।

नमस्कार (सं० पु०) नमः शब्दस्य कारः, करणं यत्। १ विषमदे, एका प्रकारका दिव। नमः करणं, नमः-क-प्रत्यय। २ नति, प्रणाम, स्वापकर्ष-बोधक व्यापार, झुक कर भूमिवादन करनेकी क्रिया। इसका विषय कालिका-पुराणमें इस प्रकार लिखा है,—नमस्कार तीन प्रकारका है, कायिक, वाचिक और मानसिक। फिर हर एकके तीन तीनभेद हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। दोनों जातु और मनुष्यके पृथ्वी स्पर्श कर जो प्रणाम किया जाता है, उसे उत्तम कायिक नमस्कार, केवल जातु द्वारा पृथ्वी स्पर्श कर जो नमस्कार किया जाता है, उसे मध्यम और जातु या मनुष्य इन दोनोंमें किसी द्वारा भूमि स्पर्श न अथवा केवल दोनों जातुयोंसे मनुष्यके लगा कर जो नमस्कार किया जाता है, उसे अधम नमस्कार कहते हैं। स्वयं गन्ध या पदमय उत्तम श्रोत्रादि की रचना कर जो नमस्कार किया जाता है, उसे उत्तम वाचिक, घोराणिक वा वैदिक नमस्कार मन्त्र पढ़ कर जो नमस्कार किया जाता है, उसे मध्यम वाचिक और भावा वाक्य उच्चारण करके जो नमस्कार किया जाता है, उसे अधम वाचिक नमस्कार कहते हैं। इदं, मध्य और अधमगत मनोभेदप्रत्यक्ष विविध मानस नमस्कार भी तीन प्रकारके हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। विविध नमस्कारोंमें कायिक नमस्कार सर्व श्रेष्ठ है। इस प्रकारका नमस्कार करनेसे देवगण समुत्पन्न होते हैं। (लघुशब्द-७१ अ०)

रातकी नमस्कार या चाणोर्वादि करना निषिद्ध है।

करनेसे 'मानः' इस शब्दका व्यवहार करना होता है।

"रात्री नैव नमस्कृत्योक्तं शस्त्रेभिर्गिरिभिः।

अथ प्रातःपरं दक्षत्रयोक्तं च ते कर्म।" (भारत)

देवतां, ब्राह्मणं श्रीरंशु इमं परं जय नम्रं पठे तस्मै
उन्हे नमस्कार करना चाहिये। जो घमण्डमें भा कर
प्रणाम नहीं करता, वह जय तक चन्द्र और सूर्यकी
स्थिति है, तब तक कालध्वनि जाता और अशुचि तथा
यवन हो कर रहता है।

“दैव विप्रः शुभं दृष्ट्वा न नमोयतु सम्भवात् ।

य कालसुभं व्रजति यावच्चन्द्रदिवाकरो ॥

ब्राह्मणस्य शुभं दृष्ट्वा न नमोयि नराधमः ।

यावज्जीवनपर्यन्तमशुचिर्यवनो भवेत् ॥”

(ब्रह्मवैवर्तपु० श्रीकृष्णजन्म)

देवायतन और दण्डोकी भी प्रणाम करना चाहिये,
नहीं करनेसे वह प्रायश्चित्तके योग्य होता है। किसीके
मतानुसार देवायतन-नमस्कार निषिद्ध है। यमा, यज्ञ-
शाला और देवायतनकी देख कर प्रणाम नहीं करना
चाहिये। शूद्र यदि बैठ कर प्रणाम करे और ब्राह्मण
‘दोषाद्यु’ लाभ करे, इस प्रकार आग्नीर्वाद दे, तो दोनों
नरकगामी होते हैं। दूरस्थित, जलमध्यस्थ, वसित, मद्-
गर्हित, क्रुद्ध और ध्वित व्यक्तिकी प्रणाम करना मना
है। हाथमें पुष्प या जल लिए और शरीरमें तेल लगाए
प्रणाम करना भी निषिद्ध है। जो ऐसी भवस्थानों प्रणाम
करता है अथवा आग्नीर्वाद देता है, दोनों ही नरक-
गामी होते हैं।

प्रणाम करनेके पक्षसे ही अभिवादन करना चाहिये,
नहीं करनेसे उसके दुष्कृतका भागी होना पड़ता है।
ब्राह्मणके नमस्कार करने पर उसे स्वस्ति, चन्द्रियकी
आयुष्यत्, वैश्यकी ‘वर्द्धताम्’ अर्थात् वृद्धि हो और शूद्रकी
आरीर्य लाभ करे, इस प्रकार आग्नीर्वाद देना चाहिये।

(मत्स्यपुराण)

पिता या माताका कोटा भाई यदि उससे उमरमें कम
हो, तो उसे प्रणाम नहीं करना। किन्तु गुरुपत्नी, व्येष्ट
भ्रातृवधू और विमाताकी उमर कम होने पर भी उसे
नमस्कार करना होता है।

“मातुः पित्रः कनीयाश्च” म नमोद्वयसाधितः ।

नमस्तेर्वाद्यु परोऽपि अस्तुनाया विमातरम् ॥” (यम)

नमस्कार करनेयोग्य ये सब व्यक्ति हैं—उपाध्याय,
पिता, व्येष्ट भ्राता, महीपति, समेरा श्वर, मातामह,

पितामह, वन्धु, व्येष्ट चाचा और माता, मातामही,
पितामही, बड़ी बहन, चास, ददिया मास, चातो और
गुरुपत्नी इन सब गुरुजनोको देखनेके साथ ही खड़ा
हो कर कृताञ्जलि हो प्रणाम करना चाहिये।

(कर्मपुराण ११ अ०)

गुरुपत्नी यदि युवती हो, तो उसे पैर छू कर प्रणाम
नहीं करना चाहिये।

“शुक्लतीन्दु युवतीं नाभिवाधेत पादयोः ।

कुर्वीत वन्दनं भूयो भगवोऽहमिति मुवन् ॥”

(कर्मपु० ११ अ०)

नमस्कारो (सं० स्त्री०) नमस्कारस्तदञ्जलिनिध पत्र-
सङ्कोचोऽल्लव्या इति, पञ्च गौरादित्वात् लोपः । १ खदि-
रिकाशक, मन्त्रावर्ती, सजालू । २ बराहकान्ता ।
भमरटोकामें भरतने लिखा है, कि इसकी पत्तिर्वा
पञ्जनिही होती है, और पञ्जलि शब्द नमस्कारव्यञ्जक
है, इसीसे इसका नाम नमस्कारो हुआ है । ३ नील
दुर्वा, मौली घास ।

नमस्कार्य (सं० त्रि०) नमस्कार्यत् । पूष्य, नमस्कार
करने योग्य, वन्दनीय ।

नमस्क्रिया (सं० स्त्री०) नमस्कारोति, नमस्कार, श,
टापः । नमस्कार, पूजा ।

नमस्ते—एक वाक्य जिसका अर्थ है—पापकी नमस्कार ।

नमस्य (सं० त्रि०) नाम धातु, कर्मणि यत्, प्रसीप-
लोपी । पूष्य, नमस्कारयोग्य, पादरणीय ।

नमस्या (सं० स्त्री०) नमस्य भावे-प, स्त्रियां टापः । पूजा ।

नमस्यु (सं० त्रि०) नमस्य ण्यन्वि च । १ नमस्कारयोग्य,
नमस्कार करनेके योग्य, पादरणीय । (पु०) २ सुवर्णयोग्य
नृपभेद, सुवर्णश्रेष्ठ एक राजाका नाम ।

नमस्वत् (सं० त्रि०) नमस्, सतुप, मस्य व । अश्वत्, अश्वविशिष्ट, जिसमें अनाज हो ।

नमस्विन् (सं० त्रि०) नमस्, मत्वर्थे विनि । नमस्कार-
स्त्वोत्पन्न ।

नमाज (फा० स्त्री०) उपासना, सुसलमानोंकी ईश्वर-
प्राथना । कुरानमें दैनिक चार बार नमाज पढ़नेकी
व्यवस्था है, यथा—सायहान्तमें (ससा) और मातःकालमें
(समा) ईश्वरका महिमा-श्लोकन, पपराजमें (पासर)

घोर मध्याह्नमें (जहर) ईश्वरका स्तोत्रपाठ । इसके प्रति-
रिक्त रातके प्रथम भागमें एक बार घोर भी नमाज पढ़ी
जाती है । नमाजके पहले हाथ पैर धो कर पाचमन करना
होता है । इस प्रकारके पाचमनको 'वतु' कहते हैं ।
पहले सीधा खड़ा हो कर पश्चिम अर्थात् मक्काकी ओर मुंह
किये नमाज पढ़ते हैं । काम धूना, घुटने टेक कर बैठना,
शरीरको आधा झुका कर खड़ा होना, जमोन पर सेट
रहना और सीधा खड़ा होना, ये सब नमाजके प्रधान
अङ्ग हैं ।

नमाजके समय एक सुन्ना मस्जिद पर चढ़ कर बहुत
जोरसे ईश्वरका आवाहन करता है । इस आवाहनको
'आजान' और आवाहनकारीको मुखेद्दिन कहते हैं । मुख-
जिहित वाक्य उच्चारण करके आवाहन किया जाता है ।
जैसे—ईश्वर सभीसे बड़े हैं (चार बार), मैं प्रमाण देता
हूँ, कि एक ईश्वरके सिवा दूसरा देवता नहीं है (दो
बार), मैं प्रमाण देता हूँ, कि महम्मद ईश्वरके प्रेरित हैं
(दो बार), उपासनाके लिये यहां आओ, (दो बार) ।
सुन्निके लिये यहां आओ (दो बार), ईश्वर सभीसे बड़े
हैं । प्रातःकालमें जो उपासना की जाती है, उसमें कहा
जाता है, कि निद्राकी अपेक्षा उपासना श्रेष्ठ है । भारत-
वर्षके युक्त-प्रदेशीय मुसलमान कई प्रकारकी नमाज
पढ़ते हैं; यथा—फजरकी नमाज अर्थात् प्रातःउपासना,
जहरकी नमाज मध्याह्नोपासना, आसरकी नमाज अर्थात्
अपराह्नोपासना, मन्त्रिकी नमाज—अस्तीपासना,
आयसाकी नमाज—सन्ध्यापासना, नमाज इसराय—
सवेरे ७ बजेके समय, नमाज चास्त—सवेरे ८ बजेके
समय, नमाज ताहाज़ूर—रात १२ बजेके बाद और
नमाज ईयमाज़ा अर्थात् सन्धारकालीन उपासना ।

नमाज समाप्त हो जाने पर उपासक ईश्वरका अनुग्रह
मानों हस्तगत करनेकी आशासे अपने दोनों हाथ ऊपर
उठाता है और पीछे उस अनुग्रहकी चपने सर्वाङ्गमें सधा-
रित कर देता है । मुसलमानोंका स्तोत्र परवी भावामें
लिखा है ।

नमाज़गाह (फा० खी०) मस्जिदमें नमाज पढ़नेकी
जगह ।

नमाज़बंद (फा० पु०) कुछोका एक प्रकारका पेश ।

नमाज़ी (फा० पु०) १ नमाज पढ़नेवाला । २ वह जगह
जिस पर खड़े हो कर नमाज पढ़ी जाती है ।

नमि—एक साधु, रुद्रदेवके काव्यालङ्कारके एक टीकाकार ।
ये गाज़िपुरिके छात्र थे । दर्शनसन्नतिकार नामक ग्रन्थमें
इनका उल्लेख है । इन्होंने उक्त पलहारटीका १२२५ ई०
में बनाई है । यह टीका बड़े कामकी चीज है ।

नमि—एक कवि । इनका पूरा नाम चमोर सुहृद्
भाजम नमी था । ये भक्तिकी राजमभाके एक मभा-
सद थे । इनके बनाए हुए पाँच काव्य मिलते हैं । जिनमें
दस हजार श्लोक हैं । १५१३ ई०में इनकी मृत्यु हुई ।
नमिउल्लाम—एक विख्यात परब देसीय कवि । १००८
ई०में इनका देहान्त हुआ ।

नमित (सं० त्रि०) नमोऽस्य सञ्ज्ञातः इति तारकादि-
त्वादित्य, वा नम-विष-ञ, बाहुलकात् ऋलः । नमित,
सुज्ञा हुआ ।

नमिस (फा० खी०) जाड़ेमें खाये जानेका दूधका दिन
जो विशेष प्रकारसे तैयार किया जाता है । पहले दूधकी
छतार कर उसमें चीनी या मिसरी, हलायचो, केसर
आदि मिला देते हैं । बाद उसे रात भर ओसमें लोड़
देते हैं और बहुत सखे उसे मयानीसे मघते हैं । ऐसा
करनेसे उससे किन निकलता है ।

नमी (सं० पु०) नम बाहुलकात् है । नदिभिर्दः एक नदिये
नाम । ये इन्द्रके उपासक थे । इन्द्रने इन्हींके लिये
नमुचिको मारा था ।

नमी (फा० खी०) पाइता, तरी, गोलापन ।

नमीनाथ—जैनोके चत्तमान् चवसचिंथोके इकोसवा
तीर्थंकर । इनका जन्म इक्ष्वाकु-वंशमें हुआ था । इनके
पिताका नाम विजय और माताका नाम विद्या था ।
इनकी चवनतिथि आश्विनी पूर्णिमा है और विमानका
नाम है प्राणतदेव । यावन्तो जन्माष्टमीके आश्विनी नक्षत्र
की मीरागिमें मरुग नगरमें इनका जन्म हुआ । ८ मास
८ दिन ये गर्भमें रहे थे । इन्हें कमलदा बिजय, शरीर-
मान १५ धनु, गायवर्ष पोका और आहुकाल १०००
वर्ष था । इन्हें राजाको उपाधि दी और इन्होंने विनाइ
भी किया था । मयरा नगरमें इनकी दीक्षा हुई । इनका
दीक्षासङ्ग १००० है । २० दिन उपास रह कर इन्होंने

दिनकुमारके घरमें दूध पीया था। चापाको क्षायावर्षमें 'हो'ने दीक्षा ग्रहण की और ८ मास कष्टग्रस्तमें रहे। मयुरा इनको ज्ञाननगरी मानी जाती है। इनको गणधर संख्या १०, साधुसंख्या २० हजार और साधोषंख्या ४१ हजार है। इनके समयमें ४५० मनुष्य १४वीं पूर्वी, १६०० केवली, १७०००० यावत्त और ३४८००० याविका थे। भयहायणी शक्त एकादशो इनको ज्ञानतिथि यकुल-वृक्ष इनका दीक्षावृक्ष और कार्योत्कर्ष हो इनका मोक्षासन माना जाता है। वैशाखी क्षणादशमी इनकी मोक्षतिथि है। समेतशिवरमें इनोंने मोक्ष लाभ किया। इनकी प्रथम गणधरका नाम शुभ और प्रथम भार्याका नाम भमिला है। (जैनशास्त्र)

नमुचि (सं० पु०) न मुच्यतेति मुच-इत्, सच क्ति। १ कन्दर्प, कालदेव। २ दैत्यमेद, एक दानवका नाम। वामनपुराणके अनुसार यह शुभ और निशुभका तोसरा भाई था। कश्यपके दश नामक एक स्त्री थी। इनो देवुके गर्भसे तोन पुत्र उत्पन्न हुए, जिनमेंसे बड़ा शुभ, मंभला निशुभ और छोटा नमुचि था। (वामनपु० ५२ अ०) ३ विप्रचित्ति नामक दानवका पुत्र। यह दानव पहले इन्द्रका सखा था। इसने सोमरमके साथ इन्द्रका वन हर लिया था। इन्द्रने सख्यती और अग्निनौकुमारद्वयसे समुद्रके किनारे समान वल्गाएँ ले कर उसीके द्वारा मारा था। महाभारतमें लिखा है कि जब नमुचिने इन्द्रसे भयभीत हो कर सूर्यरश्मिका पच-लाभन किया, तब उसी जगह इन्द्रके साथ मित्रता कर ली। इन्द्रने इससे प्रतिज्ञा की थी, कि मैं न तो तुम्हें दिनमें मारूंगा और न रातमें, न सुखे पल्लवे मारूंगा न गीरी पल्लवे। पीछे उन्होंने समुद्रके भागके समान एक वल्गाएँ इसका वध किया। (भारत १४३ अ०) ४ पुष्पधनु, फलका धनुष।

नमुचिद्विप (सं० पु०) नमुचिं दृष्टि द्विप-क्तिप। इन्द्र, नमुचिसूदन।

नमुचिसूदन (सं० पु०) नमुचिं दैत्यमेदं स दूयति सूद-त्यु। नमुचिकी मारनेवाले इन्द्र।

नमुर (सं० पु०) नम वाडुलकात् चर। नमुचि नामका पशु।

नमूदार (फा० वि०) दृग्गोचर, प्रकट, जो उदित हुआ हो।

नमूना (फा० पु०) १ वह पदार्थ जिसके अनुकरण पर वैसे ही और पदार्थ बनाये जाय। २ टाँचा, ठाठ, छाका। ३ वह पदार्थ जिससे उसके मध्य दूसरे पदार्थोंके स्वरूप और गुण आदिका ज्ञान हो जाय। ४ किसी बड़े या अधिक पदार्थमेंसे निकला हुआ वह छोटा या थोड़ा अंश जिसका उपयोग उस मूलपदार्थके गुण और स्वरूप आदिका ज्ञान करानेके लिये होता है, नमूना।

नमो (सं० पु०) नम्यते इति नम वाडुलकात् एह। १ हृदयविशेष, एक प्रकारका पुष्पाग। २ ब्रह्मचका पैड़। ३ सरल देवदार।

नमोगुरु (सं० पु०) नमः नमस्कारणोयः गुरुः। ब्राह्मण। ये सभी वर्षोंमें गुरु हैं, इनसे सभीसे नमस्कार करने योग्य हैं। इससे कारण नमोगुरु कहनेसे ब्राह्मणका बोध होता है।

नमोवाक (सं० पु०) वच-भावे घञ्, नमसो वाक् वा। नमस्काराय उच्यते या वाक्, कर्मणि घञ्। १ नमोवचन, नमस्कारका वाक्य। (त्रि०) २ नमस्कारार्थ कथनीय वाक्य, प्रणामके लिए कहने योग्य वचन।

नमोवृक्ष (सं० पु०) वृक्ष-भावे क्तिप, नमसोऽवृक्ष वृक्ष-वर्धनं यत्तमात्। यज्ञ, यज्ञानुष्ठान करनेसे गस्यादि खूब उपजते हैं। इसलिये यज्ञको अववर्धक भी कहते हैं। क्योंकि शास्त्रमें लिखा है—

“अग्नी मास्ताहुतिः सम्यगादिरमुपतिष्ठते।

आदिश्यायायवे वृष्टिं हृष्टे रन्तः ततः प्रजाः ॥” (गीता)

अग्निमें जो आहुति दी जाती है, वह सूर्यलोकको जाती है, सूर्यसे वृष्टि होती है, वृष्टिसे भव उपजता है और भवसे प्रजा पलती है। एक मात्र यज्ञ ही सबका मूल है।

नम्विराज—मन्त्राज प्रदेशके अन्तर्गत कीयम्बपुर जिलेका एक शहर। यह अक्षांश ११° २१' ३०" उ० और देशांश ७०° २२' ५०" के मध्य अवस्थित है।

नम्विराज—दाचिषाख्यके गोदावरी प्रदेशका एक राजा। द्राचाराज नामक स्थानमें भीमेश्वरका जो एक मन्दिर है, उस मन्दिरमें इनका दिया हुआ (१०५३ शकमें उत्कीर्ण) एक दानपत्र मिलता है।

नम्बिमाह्वार—एक साधु पुरुष। इनका दूसरा नाम सुन्दरमूर्ति है। इनसे बनवि हुए कुछ स्त्रीय मिलते हैं। ये सोमवंशीय राजा राजदेवके पहले विद्यमान थे। नम्बुरी—मनहार उपरूप (प्राचीन बैरनदेव) का उद्योग्योका ब्राह्मण। महात्मा शङ्कराचार्य नम्बुरी ब्राह्मण थे।

नम्बुका पञ्च वेद और तिथीका धर्म प्रवर्णन होता है, पर्याप्त ये लोग वेदसे खानकार हैं। इसीसे इन योषीके ब्राह्मणोंका नाम 'नम्बुत्तिरी' पड़ा है और इसीका विकृत रूप नम्बुरी है।

बैरनदेव ही इन योषीके ब्राह्मणोंकी आध्यात्मभूमि है। जहाँ पर ये लोग घर देते हैं, वह स्थान 'मन' वा 'इलोम' कहलाता है। इनके घरका प्राङ्गणदेव बहुत बड़ा होता है जिसके एक ओर मागोंके लिए स्थान और दूसरी ओर शवदाहके लिए घर प्रशमनरूपमें निर्दिष्ट रहता है। इनको स्त्रियोंको 'अन्तर्जना' अथवा 'अन्तर्-मार' कहते हैं। स्त्रियाँ मोटा कपड़ा पहनती, हाथों में पीतलका कंकण, गलेमें सुवर्ण-अण्डभूषण और कानोंमें कनेडियोंका व्यवहार करती हैं। ये लोग सभी नाक नहीं छिदाती और न कपाल पर कुङ्कुम भी पहनती हैं। केवल सजाट पर चन्दनका तिलक और आँखोंमें कातल लगाती हैं।

हर एक अन्तर्जनाके पास एक एक दासी रहती है, जिसे हथेली वा पिपती कहते हैं। जब ये बाहर निकलते, तब हथेली इनके आगे आगे चला करती है। राहमें वे अपना समुचा बदन ठके रहती हैं और ताक्षपत्रकी छतरी व्यवहार करती हैं। यह छतरी इस प्रकार बनी होती है, कि बाहरमें इनका मुख दिखाई नहीं देता।

नम्बुत्तिरीब्राह्मण १४ प्रकारके नियमोंका पालन करते हैं, यथा—

१। मार्गनीकाष्ठ द्वारा दंतुषन न करना।

२। खानके समय परिधेय वस्त्रिष्वंश पर्याप्त लुंगीको छतार न रखना।

३। वस्त्रिष्वंश पर्याप्त लुंगी द्वारा गायमज्जन न करना।

४। सूर्योदयके पहले स्नान न करना।

५। खानके पहले रसोई न करना।

६। पूर्व रात्रिके सट्टा जनकी काममें न लाना।

७। खानके समय किसी प्रकारकी चिन्ता न करना।

८। किसी विशेष उद्देश्यमें नाये हुए लज्जकी दूसरी कामोंमें न लाना।

९। ब्राह्मण भिन्न अन्य जातिकी स्त्रियाँ करनेमें स्नान प्रशम्य करना।

१०। अश्वर्योय जातिके निकट पानिमें स्नान कर लेना।

११। पतितजातिसे सट्टा पूष वा सरोवरका स्नान स्त्रय करनेमें स्नान करना।

१२। जिस स्थान पर झण्डू दिया गया हो, उस स्थान पर बिना लज्ज छिड़कके पैर न रखना।

१३। अपने सम्प्रदायका चिह्न कपाल पर धारण करना।

१४। जाटू टोना न करना।

१५। पयुपितास ग्रहण न करना।

१६। सन्तानका कूठा न खाना।

१७। शिष्योपासक कभी शिक्षप्रसादका परित्याग नहीं कर सकता।

१८। हाथमें धन न प्ररोधना।

१९। भौंसके घोड़े होम न करना।

२०। वास्तविक आहमें भौंसके घोड़ेका व्यवहार न करना।

२१। सम्प्रदाय-नियमानुसार भोजन करना।

२२। पतित जातिकी स्त्रय करके बिना स्नान छिपे न खाना।

२३। पाठावस्थामें ब्राह्मण्यका पालन करना।

२४। यथाशक्ति शुद्धविद्या देना।

२५। राहमें खड़ा हो कर वेदमन्त्र न पढ़ना।

२६। कन्याविक्रय-निषेध।

२७। व्रतानुष्ठान करके प्रतिष्ठा करना।

२८। रजःस्त्रसा अथस्थामें शलग न रहना।

२९। स्नान न कातना।

३०। ब्राह्मणकी अपना वस्त्र धोना निषेध।

३१। गूदके वास्तविक आहमें दान ग्रहण न करना।

३२। पिता, पितामह, मातामह, माता, पितामही आदिका वास्तविक आह प्रशम्य करना और पित्रर्क्षके उद्देश्यसे शास्त्रानुसार पिण्ड देना।

११. अमावस्याको वास्तविक कार्यका ग्रिव न करना ।

१४. स'वस्तर वीत जाने पर सपिण्डदान पर्याप्त परिष्कार करना ।

१५. नतलागुमार वास्तविक आह करना, न कि तिथिसे अनुसार ।

१६. जाताग्रोच वीत जाने पर आम्बुदयिक आह करना ।

१७. दत्तक अपितां और गृहीत-पिता दोनोंका आह कर सकता है ।

१८. अन्तर्गो अपने दसोमके प्राङ्गणमें दाह करना ।

१९. स'ग्यास ग्रहण कर स्त्रियोंके प्रति हठिनिर्दिष्ट न करना ।

२०. परजन्मके लिए कामना न करना ।

२१. पिताके स'ग्यास ग्रहण करने पर पुत्र उसका आह नहीं कर सकता ।

२२. अन्तर्गो नामधेय परपुरुषका सुख न देखे ।

२३. अन्तर्गो अपनी हृदयी और तालपत्रकी छतरीकी भाय लिए जिना बाहर नहीं निकल सकती ।

२४. श्रियां नाक न छिदवाये और घौतलके कङ्कण, चांदीकी बानी तथा कण्ठहारके निम्बा दूसरा आभरण पहन नहीं सकती । किन्तु अन्य श्रियां कण्ठादिमें नाना प्रकारके पल्लवार पहन सकती हैं ।

२५. मादक द्रव्य सेवन करनेसे समाजज्य त होगा ।

२६. ब्राह्मण परस्त्रीका स'सर्ग न करे, करनेसे समाजज्य त होना पड़ेगा ।

२७. गृहदेवता स्नान न करना ।

२८. जो द्रव्य एक बार देवताको चढ़ाया गया हो, उसे दूसरी बार न चढ़ाना ।

२९. विवाहादि कार्यमें होम करना ।

३०. भट्ट ब्राह्मणके साथ रह कर अन्य स्त्रियोंको ब्राह्मणकी तथा किसी अन्य ब्राह्मणकी पत्नीवादि वा परिग्रह न करना ।

३१. पुरुष और स्त्री यज्ञवस्त्र पहने स्त्रियोंके लिए अन्तर और वहिर्वास रहे, अन्तर्वासका परिमाण ५ हाथ हो । स्त्री वस्त्रसे हिन्दुस्तानी पुरुषके जैसे काष्ठ बांधे साधारण ब्रह्मचारोको तरह कमरमें तहिवीस बांधे रहे । पुरुष स'गोटी पहने और वहिर्वाससे साधारण ब्रह्मचारोकी तरह कमर बांधे रहे ।

३२. ब्राह्मणके विषे गोमेष निषेध ।

३३. एक ही मनुष्य ग्रिव और विष्णु की पूजा नहीं कर सकता ।

३४. विवाहित ब्राह्मण केवल एक यज्ञोपवीत और भट्ट ब्राह्मण कमसे कम दो ग्रन्थयुक्त यज्ञोपवीत पहने ।

३५. ब्राह्मणका बड़ा लठका यथाविधान पाणिग्रहण करे ।

३६. ब्राह्मणको बड़े लठकोकी छोड़ कर, ग्रिव लठके वेदाध्ययन और समाजसंनक्तियोंके बाद नार्यर स्त्रीसे गन्धर्व-विवाह करे ।

३७. अन्तर्गोको सहेयसे पक्कान पिण्ड दे ।

३८. अन्तर्गोनाका मन्त्रक न सुंढवाये, उसे ब्रह्मचारिणी भवस्थामें रहने दे ।

३९. सतीदाह निषेध ।

४०. सभी पुरुष लू को ।

४१. जो 'इतोम' 'मन' वा 'तारवद' सम्पत्तिका भोग करना चाहे, उसे समाजज्य त कर दे ।

४२. कन्याका विवाह रजोद्वयनके बाद करे । नार्यर और सतिय जातिकी तालिबन्धनिया पुण्ड्रिमके पहले हो । पीछे जहानी जाने पर गन्धर्वविधानसे ब्राह्मणके साथ कर दे ।

४३. नार्यर रमणी अन्तर्गोनाको प्रसवावस्थामें सेवा करे और उसे पसादि पण्य दे । इनका पक्ष ग्रहण करनेसे भी पतित नहीं हो सकता ।

४४. नम्बुरी ब्राह्मण मन्थाङ्ग भोजनके बाद और-कर्म कर सकते ।

सभी इन ४४ प्रकारके नियमानुसार चलते हैं ।

ये लोग ब्राह्मण सृष्टमें 'उठ कर यथाविधि प्रातः-श्रीवादि समाज करके सुयोदयके बाद ज्ञान करते, पीछे नंगे घेर देवालय जाते और वहाँ गन्धर्वदनादि लगा कर ग्यारह बजे तक वेदपाठ पढ़ते हैं । तदनन्तर घर या कर भोजन करते हैं । अथरात्रमें तेल लगा कर ज्ञान करते हैं और सम्थावन्दनादि समाज करके रातकी ८ बजेके बाद खा कर सो जाते हैं । ये लोग संस्कृत भाषामें पारदर्शी हैं । ब्राह्मण केवल हिन्दु राजाओंको यहाँ नौकरी करते । आज तक नम्बुरी ब्राह्मणने अंगरेजोंके अधीन नौकरी नहीं की है ।

नम्बुरीरि ब्राह्मणाय 'उपमयनके बाद' से ही ब्राह्मणायन्यम पहन करे हैं। वेदाचार्य ग्रिथके मन्त्रक पर हाथ रख कर धीरे धीरे ताल द्वाारा वेद सिखाते हैं। गिर्य भी उसी तालमें वेदाभ्यास कर लेते हैं।

इन लोगोंका ज्येष्ठ पुत्र ही विवाह करता है। इन कारण इनमें पनेक लड़कियां कुमारी रहती हैं। बहुत विवाह भी इनमें प्रचलित है।

रजोदश नके बाद जिस कन्याको अविवाहितावस्था में मृत्यु होती है, उसके गलेमें कोई ब्राह्मण ताली नामक मङ्गलसूत्र बांध देते हैं, पीछे उसकी पार्श्वोद्वि-
क्रिया होती है।

कन्याके विवाहमें पिताकी बहुत खर्च करना पड़ता है। पहले घर और कन्याकी कोठी मिलाई जाती है। पीछे यौगकका मूल्य कमसे कम २०००) रु० स्थिर होता है। यह विवाह कन्याके 'इत्तम'में बहुत धूमधाम से होता है। घरकाना पुत्रके जिये कन्याकानाके निकट प्राचीं होती हैं। उनकी स्त्रोकारता ही बाकदान समझी जाती है। बाढ विवाहका दिन स्थिर होता है। उसी शुभदिनमें घर कलामें मङ्गलसूत्र बांध हाथमें व'शदण्ड ले कर नार्य'र जातिकी स्त्रियाँके साथ कन्याके इत्तममें जाता है। इधरसे भी नार्य'र जातिकी स्त्रियाँ नम्बुरीरि ब्राह्मणोंकी घोषाक पहन कर वरकी जाने जाती हैं। दोप द्वाारा भारति उतारते हैं और 'पट्ट-माङ्गणम्' नामक गीत गाती हैं। बाद घर और कन्या को पलग पलग गोद पर चढ़ा कर लाते हैं। वहाँ वे दोनों भर पेट खा लेते हैं। इस प्रकारके भोजनका नाम "वयो निवृत्त" है। पनत्तर घर अपने हाथमें व'शदण्ड ले कर तथा कन्या दण्ड पर भीर ले कर विवाहमभामें जाती है। कन्याका पिता वरके घर भी जाता है। कोई नार्य'र युवती कन्याकी माता बन कर वहाँ जाती है और दोपानोक्त सुनाती है। इसी समय दूसरी और पारिकी पादसे धनी नार्य'र युवती एक छरसे गीत गाती है। इधर कन्या वरके सामने पा कर उसके पैरों पर पुष्पाञ्जलि देती और गलेमें माला डालती है। इन समय वेदमन्त्रका पाठ भी होता है। बाद कन्याका पिता यथाविधान वेदमन्त्र पढ़ कर यौगकके साथ

कन्यादान करता है। उसी समय सत्रपदोगमन बादि सभी कार्य समाप्त हो जाते हैं। पिता कन्याकी स्त्रामोक्षी सङ्घर्षिणी ही कर ऋणायममें सहायता पढ़ जानेके लिये तरङ्ग तरङ्गका उपदेश देता है। पनत्तर घर कन्या की ले कर अपने इत्तममें जाता है। यहाँ पत्तज'ना कन्याकी घरका काम काज सिखाती है। यह कन्या एक जूही फूलका पेड़ रोपती है और प्रतिदिन उसमें जल देती है। तीसरे दिनमें होम और चौथे दिनमें गर्भाधानक्रिया समाप्त होती है। तब दम्पती जब शय्या पर जाता है, तब दरबाजा बन्द कर दिया जाता है और पुरोहित तत्पानोचित मन्त्रका पाठ करता है। पाँचवें दिनमें घर मङ्गलसूत्र और व'शदण्डका परिव्याग करता है। गर्भावस्थाके तीसरे, पाँचवें और नवें महीनेमें विशेष संस्कारकार्य होता है। प्रसवके बाद पत्तज'ना नार्यास खा सकती है, इसमें कोई दोष नहीं लगता।

मुवादि होने पर पिता ग्यारहवें दिनमें नामकरण, छठे महीनेमें भस्माशन, तीसरे वर्षमें चूड़ाकरण और पाँचवें वर्षमें विजयादशमीके रोज विद्यारम्भ कराता है। सातवें वर्षमें कर्पवैष और उपमयन होता है। पनत्तर वह बालक घरमें रह कर वेदादि पढ़ता है। वेदपाठ हो जाने पर शुद्धचिवा दे कर समावर्त्तनकार्य शेष किया जाता है। यहा लड़का ही विवाह करता है। छोटे लड़के चविया पचवा नार्य'र युवतीके साथ गन्धर्व विवाह करते हैं।

किचीके मरने पर घरके एक पंगमें दाहकर्म किया जाता है। शिताके जपर शव रखनेमें पक्षावधि देना होता है। उस समय सभी वेदपाठ करते हैं और नव-खण्ड सुवर्ष द्वाारा मुखमें अग्नि देते हैं। ये लोग दस दिन पशोव मानते हैं और एकाहारी रहते हैं। पशोवा-यस्या तक कोई नमक नहीं खाता।

ये लोग अपने बाँझोंको उत्तमा सजाते नहीं। दम्प-वर्षका बच्चे व्यवहार करते हैं। पुरुष स'गोटो लगाता है, छपरसे ब्रह्मचारीको तरङ्ग चार हाथको सु'गो पह-नता है और कन्धे पर एक छोटी तोलिया डाने रहता है। कोई कोई कमरमें रखोकी करघनी पहनता है। ब्राह्मणो साधारणतः सती, माया और पतिवैधर्म रत

मैयकड़ा—सम्बन्ध प्रदेय और महाराष्ट्र देशकी एक आदिम प्रसिद्ध जाति।

नययाम—सिन्धु नदीके किनारे अवस्थित वर्तमान नोयराका प्राचीन नाम। टलेमीके भूगोलमें यह नाम पाया जाता है। दोनों नामका अर्थ नया-शहर है। नयचन्द्रसूरि—हमीर महाकाव्यके रचयिता और जयचन्द्रसूरिके वंशधर। ये जैन धर्मावलम्बी थे और तोमर-वंशीय विराम नामक किसी राजाके सभासद थे। विराम अक्षरवत् ७० वर्ष पहले राज्य करते थे। कहते हैं, कि राजा हमीरने स्वप्नमें नयचन्द्रको अपना दर्शन दे कर हमीर महाकाव्य लिखनेकी उपयुक्त शक्ति दी थी। यह भी सुना जाता है, कि विराम राजाकी सभामें किसी मनुष्यने एक दिन कहा था, कि प्राचीन कवियोंकी तरह संस्कृत काव्य कोई लिख सके, ऐसा एक भी देखनेमें नहीं आता। यह सुन कर नयनन्दने हमीरकाव्य लिखनेकी इच्छा की थी। रघुस्तम्भपुरके चौहान-वंशीय हमीर उक्त काव्यके नायक थे। उस काव्यमें अलाउद्दीन द्वारा रघुस्तम्भपुरका पक्षरोध, युद्धमें हमीरका पतन और राज-पूत-महिषाशोका अन्तिम-प्रवेश, ये सब विषय काव्याकारमें वर्णित हैं।

नयन (सं० स्त्री०) नीयते दृष्टिविषयोऽनेनेति नी करणे व्युट्। १ चक्षु, नेत्र, आँख। नो प्रापणे व्युट्। २ प्रापण, ले लाना। ३-प्रापन, बिताना।

नयन (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली।

नयनगोचर (सं० स्त्री०) समक्ष; दिखाई पड़नेवाला, जो आँखोंके सामने हो।

नयनचिन्तक (सं० पुं०) दृष्टिविज्ञान-कुशल।

नयनपट (सं० पुं०) आँखकी पलक।

नयनपथ (सं० पुं०) नयनस्य पथा इ-तत्। जितनी दूर तक दृष्टि जा सके, नभरके सामनेका स्थान।

नयनपाल—कान्यकुब्जके प्रथम राठौरराज। कहते हैं, कि ये ५२६ सम्बत्तमें राजा थे। (Tod's Rajasthan.)

नयनपुट (सं० पुं०) नयनस्य पुटः। आँखकी पलक।

नयनप्रसाद (सं० पुं०) कतकहृत्, निर्मलीका पेड़।

नयनप्रव (सं० पुं०) आँखसे लज्जामय नेत्र।

नयनबुद्ध (सं० पुं०) नयनबुद्ध, आँखका बुद्ध।

नयनवारि (सं० स्त्री०) नयनस्य वारि। नेत्रजल, आँख का पानी, आँख।

नयनविषय (सं० पुं०) नयनस्य विषयः। १ नयनपथ। २ चक्षुवाला।

नयनगोमाञ्चन (सं० स्त्री०) नेत्रगोमाञ्चन, एक प्रकारका सुरमा जो आँखकी बीमारोमें लगाया जाता है।

नयनसलिल (सं० स्त्री०) नेत्रजल, आँखका पानी।

नयनमिह—यखित नयनमिहके नामसे प्रसिद्ध एक चतुष्टयान्ता और भूतत्त्ववित्। लगभग १८२५ ई०में इनका जन्म हुआ था। वर्तमान शताब्दीके मध्य भागमें पाप रवर्ट स्टाजिएटवाइटके साथ हिमालय पर जरीब डालनेके लिये नियुक्त हुए थे। बहुत दिन तक आपने उक्त साइडके सहायकके रूपमें रह कर हिमालयके अनेक प्राकृतिक तथ्योंका आविष्कार किया था। इसकी सिद्धा आपने अपने स्वामीके साथ मध्य-एशियाके प्राकृतिक भूतत्त्वान्तोंकी ख़बर करनेके लिये प्रथम साइडके बहुत-से दुर्गम स्थानोंमें पर्यटन किया था। रवर्टको इत्यादि बाद आपने अपने प्रायमें भा कर कुछ दिन मिल्कका कार्य-सम्पादन किया था।

इटिस गवर्नमेंण्टको त्रिकोणमिति परिदर्शन तथा और भी अनेक बड़े बड़े प्रोजेक्ट आपकी कार्यकुशलतासे परिचित थे। १८६० ई०में त्रिकोणमिति जरीब विभागके कर्नल मण्टगोमरीने आपकी बुना कर कार्यमें नियुक्त किया। पंच तक कोई भी विदेशी तिब्बतको राजधानी लासा नगरके प्रकृति, प्रचक्षानका निर्णय न कर सके थे; किन्तु आप असीम अध्यवसाय, कष्टसहिष्णुता और सतर्कता आदि गुणोंसे १८६६ ई०में लासा नगर में प्रकृत भूतत्त्वान्त प्रकट कर इटिस गवर्नमेंण्टके स्थापिताजन हो गये। इसके बाद दूसरे की वर्ष आपने थोक लंगेतको प्रसिद्ध स्वर्णखनिंका परिदर्शन किया। बादमें सात वर्ष तक तुपारगहरमें रह कर आपने तिब्बतके पश्चिमसे पूर्व होमा तक समस्त स्थानोंका परिदर्शन करते हुए अनेक नवीन तथ्योंका आविष्कार किया। इस सुदीर्घ प्रयासकालमें आपने दस-नामाकी राजधानीका परिदर्शन; नाना विवरणोंका संघट्ट और सानपू नदीकी गतिसे विषयमें अनेक अभिनवतत्त्व प्रका-

मित क्रिये थे। १८०४ ई०के जुलाई मासमें मामाकी योग्य पटन कर पाप नेहमें निम्न निम्न कर तिन्त्र तकौ मोमा पतिक्रम कर गये। पीछे पापको रदखसे १५ मील चल कर ठोक पूव की ओर ८०० मील पश्चात प्रदेशमें लाग पड़ा था। तत्रप्रदेशमें मानपू नामक तिन्त्र-तकी मशानदी प्रवाहित है, जिसके दोनों ओर समुद्र गिरिमाहा भूपित है। पाप जिस मार्गसे गये थे, वह स्थान समुद्रप्रदेश समभग १५०० फुट ऊँचा होगा। इस मार्गमें बहुत सी मीनकी पानि, घसरय ऊँद और स्त्रो-ज्जतो पयं चर्वरा शय्यवेष्ट हैं।

नयनागोर नगरीनर ऊँदके ईशानकीपथसे दक्षिणकी तरफ सासा नगरीको गये और यहाँ उधवशर्म तीन महीने रहे। वहाँ निमोने भी उन्हें भंसेलीका घर न समझा था। इसके बाद एक परिचित सुमलमानके साथ पापकी मुलाकात हुई। उसने इनकी बात प्रकट कर दी। पर ये पहलीसे ही समझ गये और शोध ही निम्नत से चले पाये। पापके प्रयत्नसे मानपू नटोके कुलवर्ती लगभग १०० मील स्थानका आविष्कार हुआ। लोटते समय पाप भूटानगिरिमाहाके ऊपरसे चेतंग और तवंग होते हुए पासाम प्रदेशमें पहुँचे। उदरगिरि पर बैठ कर आपने अपना कार्य समाप्त किया। १८०५ ई०की ११वीं मार्च-को पाप कलकत्ते उपस्थित हुए। इतिव शयभर्मिष्टने पापके महत्कार्यसे सन्तुष्ट हो कर आपको एक जागीर दी थी। इसके सिवा विनायकको रायस जिपोधाफिकल सोसाइटीसे भी पापकी प्रशंसाएवम् एक स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था। १८८० ई०में (माघमासमें) पापको शय्य हुई थी।

नयनागर (च० ब्रि०) नीतिज्ञ, नीतिपुराण।

नयनाभ्रम (च० ब्रि०) १ कल्पनविशेष, काजल। २ शूर्मा, धरमा।

नयनाभ्रम—१ इनका दूसरा नाम ध्रुवानन्द था। ये चाचीआपडे पुत्र और गढ़ाधर पण्डितके सतीने थे। इनकी जन्म और गोरखोद्याविपदक पदावली बहुत मधुर है। पदकल्पतर्हमें इसका पदावली उद्धृत हुई है। २ पसरकीपकी कौमुदी नामक टीकाके रचयिता।

नयनाभ्रम (च० ब्रि०) नयनाभ्र, चाँदनी कोर।

नयनाभ्रिघात (च० पु०) नयनस्थ अभिघातः। कुष्ठरोग नयनादिका घनितकर रोगभेद। इस रोगका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

पाँखोंमें हर तरफसे चीट लगनेकी संभावना है। पाहत होनेसे नेत्रमें मरम्भ, रक्तवर्षा और पथ्यस वेदना होती है। इसमें मल, प्रमेय, परिपेचन, तप, रक्तपित्तका प्रतिकार और इष्टिप्रसादक्रिया कर्त्तव्य है। यह क्रिया स्थि, गीतन और मधुर द्रव्यों को जाती है। खेद, चमि, धूम, भय, ग्रीक या पीड़ा द्वारा अभिहत होने पर भी प्रतिकार करना उचित है, किन्तु इससे यदि अभिघात रोग उत्पन्न हो, तो दीपानुसार प्रतिविधान करना चाहिये। नैत्र यदि कुछ पक्षाघात हो जाय, तो वायु और खेदका प्रयोग करनेसे यह शुरुत पारोग्य हो जाता है। नेत्रपटनमें एक छोड़ा होनेसे वह पक्षाघातसहाय, टी छोड़ा होनेसे कटमाध और तीन छोड़ा होनेसे पक्षाघात हो जाता है।

नेत्रोंके पिच्छ, पयसक, ग्रियिल, स्थानशुत वा इति वत होनेसे यह चिकित्सा द्वारा पाराम हो जाता है। विस्तीर्ण इष्टि, पथ्यरोगविग्रिष्ट पयसा भ्रम इष्टि होनेसे वह पापसे पाप चंगा हो जाता है। प्रायकी उपरीध, यमन, चवयु और कण्ठरीध द्वारा पयसक पर्याप्त पक्ष-प्रथित नेत्र खपर चढ़ जाते हैं। नेत्रके बाहरकी ओर निकल पानेसे श्राव और पक्षाघात पर जल देना कर्त्तव्य है। प्रयुक्तिसे स्तनदुग्ध क्षुपित होनेसे यद्योने नेत्रवर्कमें संधिपातज्ञ ककुलक नामक रोग उत्पन्न होता है। इस रोगमें वे पाँख, नाक और मसूदा इतिहा। मलते रहते हैं और ध्रुव को किरण सृष्ट नहीं सकते। पाँखोंके बीचकी भी ध्रुव निकलता है। ऐसी अवस्थामें लेकन कार्य द्वारा रक्तमोचक कराना चाहिये और कटकीकी सधुके साथ मिला कर प्रत्येक प्रतिपारित करना विषय है। प्रयुक्तिका भी प्रतिकार करना आवश्यक है। इसमें पापाङ्गके फल, मधु और मेथुनको मिला कर उन्हें नय-पात्र कराने पचवा प्रियमी, कवच और मधुर संयोगसे लक्षण कर कर लट्ठी करानेसे शान्ति होती है। यदि

वसन आपसे आप होता हो; तो फिर वसन कानेकी जरूरत नहीं। विशेष विवरण प्रस्तुत उत्तर-उत्तरके १९ अध्यायमें देखो। चक्षुरीग देखो।

नयनाभिराम (सं० पु०) नयनं अभिरमयति चमि-रम-णिव-पण, वा नयनयोरभिरामो यस्मात् । १ चन्द्रमा । (त्रि०) २ नेत्रादुरागकारक, जो आँखों को प्रिय लगे। नयनी (सं० स्त्री०) नोयतेऽनयेति नी कारणे द्युट्, डोप-। नीतकणिका, आँखको पुतली, इस शब्दका प्रयोग योगिक शब्दके अन्तर्में होता है।

नयनी (हिं० वि०) आँखवाली, जिसके आँख हो। नयनू (हिं० पु०) १ नयनोत्त, मकड़न। २ एक प्रकारकी मलमल। इस पर सफेद सुतकी बूटियाँ बनी होती हैं। नयनोत्सव (सं० पु०) नयनयोरुत्सवो यस्मात् । १ प्रदीप, दीया। दोयेकी रोशनीसे नेत्रोंकी दृग्मशक्ति होती है, इसीसे नयनोत्सव शब्दसे दीप समझा गया है। आँखों को एक मात्र दृष्टिका प्रतिकारण है। (त्रि०) २ नेत्रोत्सवकारिमात्र।

नयनोपास (सं० पु०) नयनयोरुपासः १-तत् । अपाङ्ग प्रदेश, आँखका कोना, आँखकी कोर। नयनोद्देशगोमराजि (सं० स्त्री०) भू, भौह। नयनोपध (सं० स्त्री०) नयनयोरुपधं । पुष्पकसौच, पोला कसौच।

नयपाल (सं० पु०) नौडूके पासवंशीय एक प्रसिद्ध राजा। पालवश्रमें विरह्य विवरण देखो। नयपीठी (सं० स्त्री०) नयस्य पीठोव। चूताङ्ग, लुपका एक खेल।

नयलोचन (सं० स्त्री०) नय एव लोचनं । १ नीतिरूप चक्षुः। (त्रि०) २ नीतिचक्षुः, जिसकी आँखें नीति वा न्यायकी ओर जाती हो।

नयवर्ज (सं० स्त्री०) नयस्य वर्ज १-तत् । नीतिमार्ग, नीतिपथ, न्यायका रास्ता।

नयविजयगणि—यमोविजयके शुद्ध और स्वामिजयगणिके मिया, ज्ञानविशुद्धकरणके प्रथिता।

नयविचारद (सं० पु०) नये नीतिशास्त्रे विचारदः कुशयः ७-तत् । नीतिशास्त्रज्ञ, नीतिकुशल।

नयमाध (सं० स्त्री०) नय एव माध १-तत् । नीतिमाध।

नयगीन (सं० त्रि०) १ नीतिज्ञ। २ विनीत।

नयमार (सं० पु०) नीतिचक्षुः।

नया (हिं० वि०) १ नवीन, नूतन, ताजा, हालका। २ पहलेवालेसे भिन्न, पहले या उसने स्थान पर आनेवाला दूसरा। ३ जिसका अस्तित्व तो पहलेमें हो, परन्तु परिचय हालमें मिला हो, जो थोड़े समयमें मानुस हुआ हो। ४ जिसका आरम्भ पहले पहले समयवा क्रिसे, परन्तु बहुत हालमें हुआ हो। ५ जो पहले किसीके व्यवहारमें न आया हो, जिससे पहले किसीने काम न लिया हो।

नयाकनहटि—महिसुरने अन्तर्गत चित्तचदुर्ग जिलेका एक शहर। यह अक्षां १४° २८' उ० और देशां ७६° ३२' पू०के मध्य चक्रकी शहरसे १४ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २४५८ है। यह शहर नायकवे बसाया गया है। नायक कुरनल जिलेके सविस्लमकार होनेवाला था और बहुतसे सिव्-शियोंकी साथ से चरोकी खोजमें यहां आया था। पीछे यह शहर चित्तलदुर्गके सरदारोंके हाथ आया। उन्होंने हैदराबादीके अन्त्युद्य काल तक इसका भोग किया। यहां सिङ्गायतोंके विख्यात महापुरुष तिमिरदुर्गको समाधि है। उनकी रथ-यात्राके उपलक्षमें यहां हजारों मनुष्य एकत्र होते हैं।

नयागढ़—सड़ोसाका एक छोटा राज्य। यह अक्षां १८° ५३' से २०° २०' उ० और देशां ८४° ४८' से ८५° १५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५८८ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः १४०७०८ है, इसने उत्तरमें खण्डवाका राज्य, पूर्वमें रणपुर, दक्षिणमें पुरी जिला और पश्चिममें दशपलाराज्य है। यहां अनेक स्थानोंकी मही चर्चरा है, दक्षिणकी ओर भरखसथ है। यहांका हथ्य बहुत मनोरम है, मध्य की कर गिरिमात्रा दोढ़ गई है जिसकी ऊँचाई कहीं २००० और कहीं १००० फुट भी है। धान, कद्दू, ईख और कई प्रकारके तेलहन फसल यहांके प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं। ११वीं अताब्दीमें रेवाके राजपुत्र राज-वंशीय किमी शक्तिने था कर यह नगर बसाया था। राजस १२००००, रु०का है जिनमेंसे ५५२५, रु० इटिय गवर्नमेण्टको करमें देने पड़ते हैं। इनमें एक शहर

घोर ०५५ घाम लगते हैं। समुने राज्यमें १ मिडिल स्कूल, १ पपर प्राइमरी स्कूल घोर ४९ लोपर प्राइमरी स्कूल हैं तथा एक पब्लिक लायब्ररी है।

२ सप्त राज्यका एक मण्ड। यह पचा० २०° ८' ७०" घोर देगा० ८५° ६' ००" में स्थित परमिष्ठ है। लोक-संख्या लगभग १३४० है। यहाँ राजाका प्रामुख्य है। नयागायन—१ युद्धप्रदेगके प्रस्तावित बाँदा जिल्लाका एक नगर। यह पचा० २५° १३' ७०" घोर देगा० ८८° २०' १०" पू० अक्षांशके कानिचूरके राज्य पर अवस्थित है। प्रोत्साहनमें यहाँ प्रमत्त गरमो पड़तो है।

२ मध्यभारतके प्रस्तावित युद्धनक्षत्रका एक मण्ड राज्य। इसके उत्तरमें छत्तूर राज्य है। भूपरिमाण १६ वर्गमील है। सप्तमण्डल नामक युद्धनक्षत्रके दक्षिणधिवर्तिने प्रालम्भमर्षण करके १८०० ई० में पाँच गाँवों की सन्धि पाई गयी। १८०८ ई० में उसको मृत्युके बाद उसका पुत्र जगत्सिंह उत्तराधिकारी हुआ था। जगत्सिंहके मरने पर हटिय गयेमेंछत्तूरने इसे जपन करना चाहा, किन्तु जगत्सिंह की मरे दुःखदेयाने प्रभुगोत्रमें उसे लोटा दिया। उसमें कुँवर विजयरायसिंहको गोद लिया था और यही राजा बन यहाँके राजा है। यहाँमें इसकी राजधानी है। इसमें सिर्फ ४ घाम लगते हैं। लोकसंख्या ०५० घोर राज्य (११००) कृपा है।

नयादुमका—मन्थान परगने घोर नयादुमका उपविभागका राजकीय प्रधान स्थान। यह पचा० २४° १६' ७०" घोर देगा० ८०° १०' ३०" पू० में अवस्थित है। यह अंग-इंजीका एक प्राचीन स्थान है। १८५५ ई० में मन्थान विद्रोहके समय एक सैनिक कर्मचारिने दुमकाका नाम नयादुमका रखा था। दुमका देखा।

नयादुमपुर—त्रिपुरा जिल्लाका एक नगर घोर प्रधान वाणिज्य स्थान। यह त्रिपुरागात्रके विनारे अवस्थित है। यहाँ विजया पार कार्तिके दा पाट है।

नयादुम (हिं० पु०) नयोनता, नूतनत्व, नया होनेका भाव।

नयाम (फा० पु०) तनपारको स्थान, तनपारको स्थान।

नयपौध (मं० पु०) नयपौध, वटवृक्ष, बरगदका पेड़।

नर (मं० पु०) नृपति, नृ-पति, १ माथी, पति।

“पुत्रे वसति होवे क मरणा पुत्रलक्ष्मणम्।” (भूरि०)
२ परमात्मा, विष्णु। ३ महादेव, शिव। ४ पुरव, मर्त, पाटमी। ५ देवभेद, एक प्रकारका देवता। ६ आरोग्यहाराक पत्र। ७ नरदेवने अवतार लक्ष्मण।

“नरनाशकनी नी तीपुत्रावृत्तिगतनी।

त निगवतुनागेदि हरीदेवपनक्षत्री॥”

(मात ११:४० म०)

श्रीमद्भागवतके मतमें ये चोपे अवतार माने जाते हैं। धर्मकी पक्षी मूर्तिके गर्भमें इनका जन्म हुआ था। ना घोर नागायव दो मूर्ति होने पर भी ये देवमेंमें एकगो लगतो थीं। दूसरे कल्पमें नरसिंहने यह मूर्ति धारण की। महाभारतमें लिखा है, कि स्वयम्भुव मनुके पार्श्व पश्यके समय नागायव धर्मके पुत्र बन कर नर, नागायव, हरि घोर लक्ष्य इन चार अर्थोंमें अवतीर्थ हुए थे। इनमेंमें नर घोर नागायव ये दो बदरिकायम जा कर कठोर तपस्या करने लगे। तपस्याके समय इनका तेज इतना बढ़ गया, कि देवगण भी इनके देख नहीं सकते थे। जिन देवताओं पर ये प्रसन्न होते थे, वे जो इनके देख सकते थे। एक समय देवर्षि नारदने इन दोनोंके दृष्टानुसार सुनिष्ठ श्रद्धा गन्धमादन पर्यंत पर प्रमत्त करते करते इनके पार्श्विक क्रियामें प्रवृत्त देखा था। इन पर इनोंने पूजा था, “मगवन्। वेदादिमें पावको मणिमा गाई गई है। चतुराश्रमवामो मनुष्य पापकी जो उपासना करते हैं। किन्तु पात्र पाव किम देवताकी उपासना कर रहे थे।” इनके उत्तरमें नागायवने कहा, ‘यह प्रत्यक्ष गोपनीय विषय है, किन्तु हम तुम्हारी भक्तिसे निताला प्रसन्न हैं, इस कारण जो कुछ कहते हैं, उसे श्रान दे कर सुनो। जो सुन्य हैं, पवित्र्य हैं, कार्य-विज्ञान हैं, प्रथम हैं, निच हैं घोर त्रिगुणात्मक हैं, विमने महादि गुणमयूह लपव हुआ है, जो प्रत्यक्ष जो कर भी व्यक्त भावने रहते घोर प्रकृति नाममें पुकारे जाते हैं, यही परमात्मा हमारी उत्पत्तिके कारण है। हम जहाँको माना, पिता या देवता जान कर उनको पूजा करते हैं।’ भागवतमें एक जगह लिखा है, कि इनकी तपस्या भद्र करनेके लिये इन्नादि देवताओंने कष्टरूपे पाप प्रत्यारोपीकी भेजा था। बाद इनोंने इनके देख कर

देवताओं के प्रतिमानों की चुर तथा भस्त्राओं की नकलित करने के लिये उसी समय वर्षा भी होती है। यही वर्षा भी भस्त्राओं में होता है। उत्पन्न होने के बाद ही वह देवलोका को भीजो गई। यही नर-नारायण द्वारके शेष भाग में अर्जुन और श्रीकृष्ण के रूप में अवतार हुए।

(भागवत, कालिदास, भारत,)

८ धान्यकपूर लण, एक प्रकारका लण जिसे राय कपूर, रोहिम, सेंधिया और गंधेव भी कहते हैं। ८ छायायवहारोपयोगी कोनकभेद, वह खुटो जो छाया यदि जानने के लिए खड़े बल गाड़ी जाती है, यह सत्व। १० रत्नमिश्रणकारो नरसंख्या, सेवक। ११ गय राजस के पुत्रका नाम। १२ सुष्टुति के पुत्रका नाम। १३ भरतवंशीय भवकान्त के पुत्रका नाम। १४ काशमीर के एक राजाका नाम। इतका दूसरा नाम किन्नर था। ये काशमीरराज द्वितीय विभीषण के पुत्र थे। पिता के मरने पर ये राजा हुए और राज्य भर में उत्थात मचाने लगे। इन्होंने सिर्फ ३८ वर्ष तक राज्य किया। इनकी स्त्री एक चौहसे स्रष्टा हो गई थी, इस कारण इन्होंने कितने बौद्ध-मन्दिर तहस नहस कर डाले और वितस्ता नदी के किनारे नरपुर नामक एक पत्थरमयौय नगरी बसाई। इन्होंने एक ब्राह्मणको कन्या पर बलात्कार करना चाहा था। नागनीलीकी इसकी खबर लगने पर उन्होंने इन्को राज्य समेत दण्ड कर डाला। (राजतरङ्गिणी) १५ काशमीरराज वसुनन्द के एक पुत्रका नाम। इन्होंने कनिगताब्द २५८२ से कर २६४१ तक राज्य किया। (राजतरङ्ग) काशीर देखो। १६ दोड़िका एक भेद। इसमें १५ शुक्र और १८ स्रष्टु होते हैं। १७ प्रत्ययका एक भेद। इसमें १० शुक्र और ११ स्रष्टु होते हैं। १८ मोलहक, मोलका पोष। (वि०) १८ जो (पाथी) शुक्र जातिका ही, मादाका चलता।

नर (हि० पु०) १ पानी जानिका एक मत्त। २ नरकट। नर-बड़ोदा राज्य के बड़ोदा प्रान्त के अन्तर्गत, पेटलाद तालुकका एक शहर। यह सन् १२२८ ई० और देशा० ७२४५ पू० के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६५२५ है। शहर में एक बगिचा और स्कूल और दो धर्मशाला हैं।

नरई (हि० स्त्री०) १ गेहूँ को बालका उठल। २ किसी घासका लपटल जो पन्धरे में पोखा हो। १ जलामयिमें होनेवाली एक प्रकारकी घाम।

नरक (सं० पु०) नृपाति क्रोध प्रापयति नृ-नृन्। (उत्रा-दिग्गः संज्ञायाम् पुनः। उण् ५।१५) १ स्वनामधेयता प्रपुर। इसका विवरण कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—

रजस्वला धरित्री और भगवदवतार वराहके मणोग-से नरकका जन्म हुआ। भगवती धरित्रीका जब वराहसे गर्भ रह गया, तब इस गर्भसे पति पराक्रम-शाली पुत्र जन्म लेगा यह बात ब्रह्मादि देवतागण जान गये और उन्होंने अपना शक्ति प्रभावसे गर्भको कठिन कर प्रसवमें रुकावट डाल दी। इस धरित्रीका प्रसव-समय जब उपस्थित हुआ, तब ये प्रसववेदनसे बहुत वेचन होने लगीं। किन्तु कुछ भी प्रसव कर न सको। यन्त्रपासे स्तम्भाय हो कर उन्होंने भगवान्की शरण ली। भगवान्को वह पड़ुष जानी पर धरित्रीने समझ कहा, 'भगवन्। आपने जिस समय वराहरूप धारण कर रजस्वला पचस्त्रामें मेरे साथ मणोग किया था, उसी समय मैंने गर्भधारण किया है। किन्तु आज तक गर्भ के प्रसव नहीं होनेसे बहुत वेचन हो रही हूँ। जिससे मेरा यह गर्भ बहुत लज्जित भूमित हो, उसीका यथोचित उपाय कर दीजिये।' भगवान्ने कहा, 'वसु-न्धरे, तुम्हें यह दुःख अब अधिक काल तक सहना न पड़ेगा। तुम्हारे रजस गर्भसे महा बलवान् पुत्र जन्म लेगा। इसीसे ब्रह्मादि देवताओं ने प्रसवमें बाधा डाल दी है। यदि छटिये बड़ाईम चतुर्गुण के धर्मार्त में ता-युगमें तुम यह सन्तान प्रसव करोगी। इतने दिनों तक तुम्हें यह गर्भधारण करना पड़ेगा। वेतायुगके मध्यभागमें जब जो रामचन्द्र रावणका वध करेगी, तब तुम्हारे गर्भसे बालक भूमित होगा। अब तुम्हें रजस गर्भधारणका किसी प्रकारका कष्ट भुगतना न पड़ेगा।' इतना कह कर विश्वभगवान् चटख हो गये। इसी ही गर्भ होना भारीकी भारी लज्जासे ही कर सचसे रहने लगे। राजा जनकने जब नारदकी उपदेशानु-सार यज्ञ किया था, तब इस यज्ञ-भूमिसे दो पुत्र और भुवमोहनी एक कन्या-स्त्रीके रूपसे हुई थी। उस

ममय दृष्टीमें वहाँ पहुँच कर राजर्षि जनकसे कहा था, 'राजन्! भुवमसीहिने यह कथा मीने सुने' यहाँ की। इस कथामें मिरा भार हरष होगा और अनैक प्रकारके गहन कार्य माधित होंगे। किन्तु मेरे गाँममें सुने' एक प्रतिष्ठा करनी होगी, वह यह है—राज्य नीरके सारे जगत् पर मैं भाररहित हो कर सुखमें पुन प्रसव करूँगी, तुम उस पुत्रका जब तक उसका योग्य काम दूर न हो, तब तक प्रतिपादन करना।' यह सुन जरा जनरने प्रसन्न हो इस वाक्यको स्वीकार कर लिया। पीछे राजवंशध होने पर दृष्टीमें कहा—'नीताकी प्रसव किया था, वहीं एक पुत्र प्रसव किया। उस पुत्रने जन्म मिलेके साथ ही विष्णुभगवान् की धाराधना की।' वहाँ पहुँच कर विष्णुने दृष्टीमें कहा, 'देवि! तुम्हारा यह पुत्र महा पराक्रमवासी होगा और जब तक मनुष्य भावसे व्यवस्था न करेगी, तब तक बहुत सुखमें तुम्हारा दिन व्यतीत होगा। जब मनुष्य-भावका त्याग कर कोई कार्य करने लगेगी, तभीवे तुम इस पुत्रके जीवनकी साम्राज्य करोगी। सोलह वर्ष की उमरमें तुम धनरत्नादि द्वारा समस्त राज्य भार धारोगी। प्राग-ज्योतिष नामक' उस राज्यकी राजधानी होगी और यह पुत्र नरक नामसे प्रसिद्ध होगा।' इतना कह कर विष्णु पलट्टित हो गये। इधर धरित्रीमें बाभी रातकी जनकके पानीजा कर बहुत छिपके पुत्रका हस्तात्त करने' कह चुकाया। राजर्षि जनक उसी समय यज्ञभूमिको गये और धरित्री-तनयको ले कर पुत्रकी भाँति उसका पालन पोषण करने लगे। जिस समय नरक उत्पन्न हुआ था, उसी समयवे दृष्टी मोहावन्न द्वारा मनुष्यका रूप धारण कर राजात्मा-पुरमें प्रविष्ट हुई। राजर्षि जनकने ब्राह्मण द्वारा उसका यद्योचन संस्कार कार्य कराया और जन्मशालीन इस बालकने नरमदाकमें अपना ममत्त व्यक्त किया था, इस कारण इसका नाम नरक रखा। अविद्याकी विधिके अनुसार सभी कार्य किये गये। गीतमयुत मतानन्द' उस बालकको मिखा देने लगे। उनकी मिखावे नरक बहुत विनोत हो गये। इधर देवी धरित्री मायाकृपसे पन्ना-पुरमें रह कर नरकको पालन और विविध रूपसे सुनौति मिखा देने लगी। पीछे पीछे नरक रूप, लक्षण, बलवीर्य, अनुभूति

वाग्दामुर्धमें अग्राज्य सभी राजपुत्री को प्राप्त मदे। नरक दिनों दिन ऐसे वशाक्रमगामी होने लगे, जि लम्ब भी मनची मन करने लगे। सोलह वर्ष की उमरमें ही नरक पत्नीय हो गये और सोलह वर्ष पुरानेमें तीन मास बाकी हो था, उसी समय धरित्रीने जनकसे जा कर कहा, 'राजन्! बापने प्रतिष्ठा पावन की है, नरक बापने प्रतिपासित हो कर सुनौतिपरायण हुआ है। सभी इसे जानिकी अनुमति देवे।' इतना कह कर धरित्री पलट्टित हो गई। जनकने भी उसे स्वीकार कर लिया। धरित्रीने मायाकृप धारण कर नरकसे कहा, 'पुत्र! तुम मुझे अपने माय से कर गहाकिनारि बनो, वहाँ मैं तुम्हारे पिताको दिखला दूँगी। जनक तुम्हारे पिता नहीं, पालकपिता माय हैं।' नरक धरित्रीकी बात पर विस्मय कर गहनके किनारे पैदल गये। धरित्रीने उस समय मायाकृप परित्याग कर अपनी भूर्ति धारण कर भी और नरकसे उसका जन्म हस्तात्त कह चुकाया तथा उसी समय विष्णुभगवान् का स्मरण किया। विष्णु, उसी समय वहाँ पहुँच कर बोले, 'नरकके लिए राज्य यदि सभी प्रसन्न हैं।' इतना कह कर दोनोंमें गहाजनमें गीता मारा। नरक बातकी बातमें प्राग-ज्योतिष नामक नगरकी पहुँच गये। यह स्थान कामकृपसे मध्य पहुँचा है। वहाँ उस समय निरास जाति प्राप्त करने लगे। चटक नामक इनके एक राजा थे। विष्णु और नरकने सभीको लड़ाईमें मार डाला। बाद विष्णुने अपने पुत्र 'नरक'को इस राज्यमें पमिपन्न किया। प्राग-ज्योतिषपुरमें राजधानी स्थापित हुई। विदम'राजकथा मायाके साथ नरकका विवाह हुआ। विष्णुने दृष्टीके काममें पुत्रकी सम्बोधन कर कहा, 'पुत्र! मैं तुम्हें यह वलि देता हूँ, प्रायके जोखिम पर पानेवे हो इसका व्यवहार करना, दूसरे समय कदापि नहीं। यदि विरहात्त तब जोमकी इच्छा है, तो ब्राह्मण मुनि और देवताओंसे माय कदापि विहावरण न करना। इस नियमका उल्लंघन करनेवे तुम्हारा प्राय नाम होगा।' नरकको इस प्रकार उपदेश दे कर विष्णु पलट्टित हो गये। नरकने विष्णुके अनुमतिपूर्व और मत्त बोले दुर्भेद्य एक रस दाया था। इसी समय राजर्षि जनक इस स्थान पर पहुँचे और इनकी

सेवा सुश्रुतासे नितान्त मीत हो कर कुछ कांक्षितक यहों रहें। नरकने मनुष्य-प्रधानुसार बहुत दिनों तक राज्य किया। पीछे त्रेतायुगके अवसान होने पर बाण राजाके साथ इनकी गाढ़ी मित्रता हो गई। बाण अक्षर भावसे दधर उधर विचरण करता था। नरक भी उसकी संगतिसे बहुत दुर्दान्त हो गये और देवता-ब्राह्मणोंके प्रति भत्याचार करने लगे। इसी बीचमें एक समय बगिछदेव कामाख्यादेवीके दगल करने पाये, किन्तु नरकने उन्हें पुरमें प्रवेश न होने दिया। इस पर बगिछदेवने क्रुपित हो कर नरकको माप दिया, 'तुम भयान्त गर्वित हो कर इस प्रकार ब्राह्मणोंके प्रति भत्याचार करने लग गये हो, इस कारण तुम जिनके औरसे उत्पन्न हुए हो, उनकी आज्ञासे बहुत जल्द मारे जाओगे। मुन्धारी चरुधुद बादमें कामाख्या देवीकी पूजा कइंगा और जब तक तुम जीवित रहोगे, तब तक कामाख्या देवी, परिजनोके साथ इस स्थानकी छोड़ चर्यत जा रहेंगी।' इस पर नरक अपने प्राण समान मनुष्य बाणकी शरयमें पहुँचे और बाणके उपदेष्टानुसार ब्रह्माके तपश्चरणमें प्रवृत्त हुए। ब्रह्मने नरककी तपस्वासे संतुष्ट हो उसे वर मांगने कहा। इस पर नरकने कहा, 'प्रभो! जिससे मैं देव, अक्षर, राक्षस तथा सभी देवयोगिनियों, अवध होकर और जगत्में जब तक अन्ध-धुंध रहें, तब तक मेरी सन्तान-सन्तति अवच्छिन्न भावसे अवस्थान करे' तथा तिलोत्तमाकी जैसी रूपगुणसम्पत्ति १६ हजार स्त्रियाँ और राजलक्ष्मी मेरे घरमें वास करे', यही वर मैं चाहता हूँ।' ब्रह्मा 'तथास्तु' कह कर वर दिये। इस प्रकार अभिलषित वर पा कर नरक बहुत प्रसन्न हो अपने स्थानकी चले गये। कालक्रमसे नरकके भगदस, मछागोव, मदवान् और सुमाली नामक चार पुत्र हुए। ये सभी पुत्र प्रबल पराक्रमशाली और अजीय निकले। जब नरकने हयघोष, सुर, सुन्द, उपसुन्द आदि प्रबल वल-विक्रमशाली अक्षरोको शरारता और सेनापति आदि-कार्यमें निबुद्ध किया। धीरे धीरे अपनी हयघोष आदिकी सहायतासे देवराज इन्द्रकी परास्त किया और पृथ्वीकी माना प्रकारके कष्ट देने लगे। भगवान् विष्णुने पृथ्वीका कष्ट दूर करनेके लिये कृष्णका रूप धारण

किया। देवताओंने सभी और तिलोत्तमा जैसी रूप-गुणसम्पत्ति १६ हजार स्त्रियोंकी सृष्टि की। एक दिन वे हिमालय पर्वत पर उधर उधर भ्रमण कर रह्यो थीं, नरक उन्हें हरण कर अपने पुरकी लाये। यहाँ वे उन्हें बहुत सताने लगे। तब देवताओंके आदेशसे श्रीकृष्ण प्रागज्योतिषपुर गये और नरकके साथ घम-मान युद्ध करने लगे। अन्तमें भगवान् विष्णुने सदृश-चक्र द्वारा नरकका मस्तक दो खण्डोंमें कर डाला। तब पृथ्वी भाररहित हो कर सुख हुई और पुनःकी सृष्टि पर कुछ भी थोकातुर न हुई।

(चण्डिकापु. १६।४०-४०)

(नरकासुरका वृत्तान्त शरिवंशके १२०, १२१, १२२ अध्यायमें वर्णित है।)

नरककी सृष्टिके बाद श्रीकृष्णने इनके धनागारमें जो धनरत्नादि देखे थे, वे कुबेरके भी भण्डारमें न थे। कृष्ण सबके सब धारका पुरोको ले गये।

२ पापभोगस्थान। सृष्टिके बाद जहाँ का कर भोग करना होता है, उसे नरक कहते हैं। नरकके भयसे कितने लोग ऐसे हैं जो दुष्कर्ममें हाथ नहीं छातते। क्या पुराण, या मन्त्रादिसंहिता सभी शास्त्रोंमें योद्धा बहुत नरकका प्रसङ्ग देखनेमें आता है। लेकिन नरकके विषयमें बहुतोंका मतभेद है। दृग्गन्धास्त्रविदोंका कहना है, कि जिव प्रकारके शमाश्रम कार्य किये जायेंगे, मविष्यमें उसी प्रकारके फल सुगतमें होंगे। अर्थात् शमकाय करनेसे स्वर्ग और पाप कार्य करनेसे नरक होगा। जब हम लोगोंकी यह पट्कोयिक देख भस्म हो जाती है, तब हम लोगोंका सूक्ष्म शरीर आकाशस्थ और वायुमृत हो कर अवस्थान करता है। यही सूक्ष्म शरीर स्वर्ग और नरक भोगता है। यह सूक्ष्म शरीर जब प्रकारके लपादानोंसे गठित है, कि जबलत अग्निमें दग्ध हो जाने पर भी यन्त्रवाले विषा और कुछ भी अशुभ नही करता, इसी कारण इस अवस्थामें इसे यन्त्रनामय शरीर कहते हैं। इसी सूक्ष्म शरीरमें स्वर्ग या नरकका भोग होता है। अधर्म हो एक मात्र नरकका कारण प्रमाचित हुआ है।

“अथर्वोऽथर्वशास्त्रं” इत्युक्तिः निरुपपन्नः ।

॥ अथ विष्णोर्दशरूपेणोत्पत्तिरिति ॥

(मासिकारि. १५१.३)

आमोक्तं यदि माम्निष्कण्ठं व्यग्नं नरकाटिकां यमिताम्
श्रीधरं नमो नमते ।

“न स्वर्गो मायवर्गो वा नैवास्मात्प्राप्तोक्तिः ।”

(चार्ज)

ये लोग कहते हैं, कि हम देखते भयम ही जानें पर स्वर्ग नरकादि का भोग समभव है। क्योंकि गुरुदेव बाद और कुछ बच नहीं रहता। ये सब विचार घना-मयका हैं, इन कारण नरकमें विपश्यते भावनोंमें जो कुछ लिखा है, वही यहां पर लिखा गया—

भाग्यवतें नरकका विषय इस प्रकार लिखा है—
 राजा परोक्षितने शुक्रदेवसे पूछा था, 'भगवन् ! नरक क्या
 पृथ्वीका कोई देशविशेष है या ब्रह्माण्डके वहिर्भाग पोर
 पन्तरालमें अवस्थित कोई प्रदेश है ?' इस पर शुक्रदेवने
 कहा था, 'इस भूमण्डलके दक्षिण पोर भूमिरे नेचे पोर
 जलके ऊपर जहाँ अग्निहवाशादि विग्रहण हैं, वहाँ यम
 भी हवगणोंके साथ रहते पोर मृत व्यक्तियोंको स्था कर
 सनके कर्मागुमार दीपगुणका विचार करते हैं।' इसी
 स्थान पर सभी नरक अवस्थित हैं। इस नरकको स'ख्या
 पक्षीस है जिनके नाम ये हैं—तामिस्र, अश्वत्थामिस्र,
 रौरव, महारौरव, कुम्भीपाक, कासपुत्र, पक्षिपतवन,
 शूकरमुक्त, अश्वकूप, लसिमंजजन, सन्द'य, तमगूर्मि, वन-
 सष्टकश्याम्भवी, वीतरथी, पृथोद, प्राणरोध, विग्रसन,
 क्षात्रामघ, सारणीगहन, पक्षीनी पोर अय्याना। इनके
 विहा पोर भी ७ नरक हैं, यथा—चारमर्दन, रत्नगण-
 भोजन, शूलघात, हृदयगुह, पञ्चदशरोधन, पयवर्षाण
 पोर सुवीर्यत। सब मिला कर ३८ नरक हैं।

। लो परम, पाखी और पुष्पा घटहरण करने, यम-
दून उन्हें प्रोत्तर काकापामने बच कर मतपुर्वक
तामिख नरकमें जान देते हैं। यह नरक वनाह तमसा-
मय है। पाषाणमें पतित हो कर ज्ञाने योगमें समाव-
ये तथा दण्डताहम यदि द्वारा भाति भातिको दण्डबाधे
बहुत भोग करने हैं।

मो पति को ठग कर उसको खोले, माघ मन्थन

करना है, सबेरे अथवा मित्र नरकमें भाग करना होता है। यमदूत यहाँ उसे अपने प्रकाश के कट से कर दोहे हम नरकमें कैसे लेते हैं। हम नरकमें गति न पाएँगे, जो योग वेदना होता है, हममें उनको कृति और बुद्धि भट हो जाती है। यही कारण है, कि कृपितो है हम नरकका अथवा मित्र नाम रखा है। जो हम संसार में रह कर 'यही शरीर में है' और 'यह सभी धन मेरा है' ऐसा मान कर मुग्ध हो जाते हैं और प्राणियों के प्रति विद्वान्तरूप कर अपना शरीर तथा जो सुखादिका वासन धोय कर लेते हैं, उन्हें शरीरनरक मिनता है। हम नरकका शरीर नाम पड़नेका कारण यह है, कि हम संसार में मनुष्य जिस प्रकार जिन सब प्राणियों की हिंसा करते हैं, वे स्वल्प कम दोषों के लक्ष यम-पातनात्ता भोग कर चुकते हैं, तब उनको पाटमज्जत हिंसा-कर्म वह रूप में परिणत हो कर उन्को प्रकाश उनकी हिंसा जाती है। हमो कारण कृपितो है हम नरकका शरीर नाम रखा है। (सर्वमें भी अथवा दुष्ट भावनाएँ एक प्रकारका प्राणी है, सभीका नाम वह है)

महाराष्ट्र सरकार भी इसी प्रकारका है। जो इस
संसारमें अपनेके विषयों पर किसीकी नहीं जानते,
उन्हें भी महाराष्ट्र सरकार होता है। यहाँ ज़्यादा मांसक
वृत्तिय मांस पानेके लिए उन्हें धर्मिक प्रकाशकी यात्रा
दे कर मार डालते हैं।

लो हम मंगारम पयलत वय मुनिंक ईं पीर
 मरीरका पानन कमेडे निद वय पयसा वको मार
 कर कयका मनि पाते ईं तथा लो पयसा निदव ईं,
 यमकिङ्क वकी कुभीवाक नरकमे डाल देते ईं पीर
 तत तेतम पाक करते ईं ।

जो समुप्य ज्ञात्राणां प्रति विहाय न चरते' है, वे काम्यस्य नामक नगरकें जामे-जाते हैं। यह नगर चरकस्य भयावह है। इसकी परिधि द्वादश गजोत्तम है। यह काम्यस्य सामुप्य समानसूत्रि है। ज्ञात्रोहो रथं नगरकें गिर जह जउर नृप-किरणसे घोर नादे शब्दसे लतापये घनतापित होती है। भूय घोर व्यामसे चमकी देहका भीतरों घोर बाहरी भाग दृश्य हो जाता है।

आदमी हमें प्रहारकी सम्भावना है।

पण्डितके लोभो के संख्यानुसार उसे नरकमें रहना होता है।

जो अनापदके समय भी इच्छापूर्वक स्वधर्म और वेद-मांग का परित्याग तथा पापदण्डधर्म का अवलम्बन करते हैं, यमदूतगण उन्हें अविपन्नवन नामक नरकमें ठूस देते और अत्यन्त प्रहार करते हैं। पापों वहाँ प्रहारकी यातनासे अस्थिर रहता है।

जो सब राजपुरुष दण्डाहं व्यक्तिको दण्ड न दे कर अदण्डनीय व्यक्तिको दण्ड देते हैं, वे सब राजा या राज-पुरुष अत्यन्त पापी हैं। इस पापसे उन्हें परकाशमें शूकरमुख नामक नरक होता है। मनुष्य जिस प्रकार इच्छुदण्डकी पीरते हैं, उसी प्रकार ये लोग भी यमकिङ्करो-से पीरे जाते हैं। इसमें पापोंकी यन्त्रणाकी कोई नियत अवधि नहीं रहती।

परमेश्वरने जिसको जो वृत्ति स्थिर कर दी है, यदि कोई उसकी वृत्तिमें बाधा डाले, तो उसे अन्धकूप नामक नरक होता है। यह स्थान बहुत अन्धकार है। पापी यहाँ कुछ भी देख नहीं सकते और जिनकी वृत्तिमें बाधा डाली गई थी, वे भी अन्ध बनकर वहाँ लुका जाते हैं।

जो भ्रष्ट द्रव्यको सबके सामने औरोंको न बाँट कर अकेला खा लेता है और पक्ष पशुप्राणान नहीं करता, यह परकाशमें क्षमिभोजन नरकमें जाता है। इस नरकमें सहस्र-योजन लम्बा एक क्षमिकुण्ड है। पापी उस कुण्डमें खरों क्षमि हो कर क्षमिभोजन करता है और सभी क्षमि भी उसे भोजन करते हैं। इसमें पापोंको बहुत कष्ट भुगतना पड़ता है।

जो बीरो करके अथवा बलपूर्वक ब्राह्मणोंके हिरण्य-रत्नादि अपहरण करते हैं और अनापदकालमें किसी मनुष्यकी समीप वसुं पुत्र लेते हैं, यमदूतगण लोहमय अग्निपिण्ड और सन्देश द्वारा उनकी देह क्षिप्त कर डालते हैं।

जो पुरुष भगवत्प्रीति के साथ और जो स्त्री श्रम्य पुरुषके साथ सहवास करती है, यमदूत उन दोनोंको परकाशमें पड़ते बहुत जोरसे पीटते हैं। पीके पुरुषको तप्त लोहमय स्त्रीको प्रतिमासे और स्त्रीको पुरुषाकृति

लोहकी प्रतिमासे चालिङ्गन कराते हैं। जो प्रजादि अयोनिमें गमन करते हैं, यमकिङ्करगण उन्हें नरकमें डाल कर वर्ष-अष्टकमय शास्मलोके ऊपर चढ़ा कर क्षिप्त भिक्ष कर डालते हैं। इस पृथ्वी पर जो सब राजन्य अथवा राजपुरुष धर्ममार्गोदाका उत्सन्न करते, वे वैसे रबी नदीमें पतित होते हैं। यह नदी सभी नरकोंकी खाईस्वरूप है। इस नदीमें सभी जो वज्रगुण उन्हें भक्षण करते हैं और वे अधर्म का विषय स्मरण करते हुए विद्या, भुक्त, पूय, शोषित, केय, गन्ध, अस्थि, मूत्र, मूत्र, मांस और वसावाहिनी नदीमें गिर कर अच्छी तरह वपन्न होते हैं। जो इस लोकमें झूठी गवाही देते हैं अथवा खरोदने वैचनेके समय या दानके समय झूठ बोलते हैं, पर-लोकमें यमकिङ्करगण उन्हें भी 'से सु' ही योजन ऊँचे पर्वत-शिखरसे अत्यन्त सहोष्ण अवोधिमत नरकमें गिरा देते हैं (जहाँ स्थल और अग्निदृश्य जलकी तरह प्रकाश-मान होता है, उसे अवोधिमत नरक कहते हैं।) यमदूत गण पापीको उस नरकमें डाल कर तिल तिल करके उसका शरीर काट डालते हैं, इससे उसकी मृत्यु नहीं होती। फिर उसे पर्वतके ऊपर से जाते हैं और वहाँसे पुनः उसी नरकमें फेंक देते हैं। इस प्रकार पापी अनेक प्रकारके कष्ट पाते हैं।

जो इस लोकमें दम्भान्वित हो कर दूसरोंकी उगनेके निमित्त यज्ञानुष्ठान करते हैं और उस यज्ञमें पशुवध करते हैं, उन्हें विश्वनामक नरक होता है। इस नरकमें यमदूत माना प्रकारका क्रोध दे पापीका अन्न काट डालते हैं।

द्विजकुलोद्भव जो मनुष्य इस लोकमें काममोहित हो कर अश्वत्थारो रमणोंके साथ-सम्भोग करते हैं, यम-पुरुष-रैतसे भरी हुई नदीमें उन्हें डाल कर रैत, पान कराते हैं।

जो ब्राह्मण या ब्राह्मणो सुरापान करतो है वा कोई दूसरा मनुष्य अनेक हो कर और अश्वत्थ वा अश्वत्थ-निमित्त सोमपान कर, अन्नप्राप्त्यनुष्ठान मद्यपान करता है, यद्यपि देवता उसे नरक से जाते समय बच-स्थल पर चढ़ बैठते हैं और अग्निमयोगसे द्रवोद्भूत लक्ष्मणार्थ लोह द्वारा उसके सर्वांगको अभिषेक करते हैं।

जो होनजाति हो कर अपनेकी उम्र बतलाता है

घोर गृहयुद्ध का समाप्ति करना है वह चारकुण्ड मलय नरक में घोड़े मुँह गिरता है घोर वहाँ बहुत कष्ट पाता है ।

जो मय मनुष्य राक्षसों के समान उपसमावले हैं घोर जलनाको कष्ट पहुँचाते हैं, वे मरने पर दग्धक नामक नरक में जाते हैं । इन नामक घोष वा मात मुँह-वाले राक्षस रहते हैं जो उनको चूँरी की तरह पकड़ पकड़ कर गिराते जाते हैं ।

जो वृद्ध लोग वयस्क-रमय गत घोर कुण्ड एवं यक्षदिने प्रायियोंको बँद कर कष्ट देते हैं वे परलोक में विष, धमि घोर भूम द्वारा विषम यातना पाते हैं ।

घर में प्रतिदिन पानि धर जो उस पर गुस्सा करते हैं घोर गृहयुद्ध साल साल पाये कर लगे देवते हैं, वे भगवान्‌में जब नरक जाते हैं तब वहाँ यक्षकुल मूलधारी कक्षादि वायव्य उनको पाये गिराते लेते हैं घोर तरह तरहको यन्त्रणा देते हैं ।

जो मनुष्य इस लोक में धनके धमण्डले में श्रेष्ठ हैं ऐसा स्थान कर देना चाहें बसता है घोर धन धपकरण करणा ऐसा कष्ट कर लोगको डरता है तथा दिन-रात धनकी चिन्ता में व्यथित रहता है, वह भ्रष्टाचारको है । इस पापसे वह सुखी नामक नरकका भोग करता है । यमदूतगण तातिवाकी भाई उसका समूचा घरीर सुईसे भिद कर सुते पाये देते हैं ।

यमाक्षमें जल प्रकारके पशु-पक्ष नरक हैं । सभी पापी पापके तारतम्यानुसार इन सब नरकों में पातित हो कर कष्ट भोगते हैं । वीक्षि पापके जल दोनसे जो वे यन्त्रणासे डूबता पाते हैं । जब तब पाप-भोग में ही नहीं होता, तब तब वे सभी नरक में पहुँच रहते हैं ।

(भागवत १।१६ अ०)

भद्रके वरान्‌पुराणमें नरकका विषय इस प्रकार लिखा है—वायव्य महा यातनाका भोग करते हैं, सभीका नाम नरक है ।

‘नरकान्‌द्रु कुंवाणि जगिन्‌ नाम विवादि च ।

वायव्यपुराणमें नरकके विषय ताति च ।

नरकान्‌द्रु कुंवाणि जगिन्‌ नाम विवादि च ।

मन्‌वराणि केरानि हे वरुण कुंवाणि च ।

वद्वीपान्‌ कुंवाणि मन्‌वराणां पति च ।

विशेष देवा नामानि जगिन्‌ नामानि च ।

(भागवत १० प्रकटि ० १० अ०)

नरककुण्ड नामा प्रकारके हैं, पुराणों में ऐसे उनके नाम भी मिले मिले हैं । यह स्थान लोगोंका पापनाश करके है । इनमें ८६ कुण्ड हैं जिनके नाम नीचे दिये गये हैं । यमाक्षमें जो सब पापी पाप भेदके अनुसार जिन सब कुण्डों में रहते हैं, उनके नरककुण्ड कहते हैं । जिस प्रकारका पापानुसार करनेमें मनुष्य किस नरककुण्ड में जाता है, उसकी एक तात्त्विका नीचे दी जाती है ।

नरककुण्ड

पापी ।

१ । यक्षकुण्ड

अनु यक्षोंके मनुष्योंका हृदय दण्डकारक ।

२ । तप्तकुण्ड

भाद्रव्य घोर चतुर्विधोंको जो भोजन नहीं देता ।

३ । चारकुण्ड

निविष्ट दिनेमें यक्षोंके चार-संयोजन-कारक ।

४ । विटकुण्ड

भाद्रव्योंका विनाशकारक ।

५ । मृतकुण्ड

दुष्टोंका तद्वाग ध्वंस कर जो दण्ड-उत्पन्न करता ।

६ । द्रुमकुण्ड

सर्वके समक्षमें जो चक्रेका मिटान भोजन करता ।

७ । गरकुण्ड

पिता माता आदिना जो पालन नहीं करता ।

८ । दूषिकाकुण्ड

चतुर्विध उदर कर जो विनाश होता ।

९ । दमाकुण्ड

कोई मनुष्य भाद्रव्यकी दान दे कर उसे विर दूषकों दान देनेवाला ।

१० । द्रुमकुण्ड

पारसी-नामी दुष्ट घोर दण्ड-पुन्यमानोंकी ।

११ । द्रुमकुण्ड

गुह्यनर्को मादृशकारी वा भ्रष्टाचारकारी ।

१२ । द्रुमकुण्ड

हविष्यकी दण्ड कर जो उद-वाक करता ।

- ११। गतिमलकुण्ड सर्वदा पण्डित चित्त और खल-
स्वभाव वाला ।
- १४। कर्षविटकुण्ड अधिरकी सपहासकारी ।
- १५। मज्जकुण्ड भोजनार्थ जोयहि भाकारी ।
- १६। मांसकुण्ड भयंभीमसे कन्याविक्रयकारी ।
- १७। नखकुण्ड } याव और उपवासादिमें संयम-
१८। सोमकुण्ड } ल्याये ।
- १८। केयकुण्ड जिसकी सृष्टमय शिवलिंगमें
केयादि रहता है ।
- २०। भरियकुण्ड जो विष्णुपद पर पिलपिण्ड
नहीं देता ।
- २१। ताम्रकुण्ड शुर्विषी भयान् गभं वती स्त्री-
गमनकारी ।
- २२। लोहकुण्ड भक्तुक्षाता और भवोराका ध्वन-
भोजी ।
- २३। तोष्यकण्डककुण्ड जो स्त्री कट, वचनीसे स्त्रामी-
का तिरस्कार करती ।
- २४। विषकुण्ड जो विष प्रयोगसे दूसरेकी जान
लेता ।
- २५। घर्मकुण्ड धर्मयुक्त हाथसे जो देवद्रव्यादि-
स्पर्श करता ।
- २६। तमसुराकुण्ड शूद्राकुशात शूद्राभोजी ।
- २७। प्रतप्तलेकुण्ड दण्ड द्वारा जो हृयको
मार मगाता ।
- २८। क्षतकुण्ड क्षत और लोह वड्डिगादि
द्वारा जीवहन्ता ।
- २९। क्षामिकुण्ड मध्यभोजी, वृषामांस-
भोजी और जो हरि
प्रसाद नहीं खाता ।
- ३०। पूयकुण्ड शूद्रयात्री, शूद्रयावभुक्
और शूद्रयवदाहो ।
- ३१। सर्पकुण्ड जिस मण्डपे मस्तक पर
कण्णपदचिह्न है उसे
भारनेवाला ।
- ३२। मग्नकुण्ड जो सुद्र जीवको भारनेकी
विधि देता ।

- ३३। दंशकुण्ड जो पशुहत्याकी विधि
देता ।
- ३४। गरलकुण्ड जो मधुमखंडी मार कर
मधुमंघ करता ।
- ३५। यषट्द्रकुण्ड पदार्थको दण्डदाता ।
- ३६। वृषिकुण्ड भयंभीमसे प्रजाकी
दण्ड देनेवाला ।
- ३७। गरकुण्ड } शम्भुपांगे, धावक और
३८। शूलकुण्ड } मन्थालीन तथा हरि-
भक्तिविरोध ब्राह्मण ।
- ३९। गोलकुण्ड भस्मदोषसे कारादण्ड-
दाता ।
- ४०। गन्धकुण्ड जन्मोत्थित गन्धादि जनन-
कारी ।
- ४१। काककुण्ड सोलूपनेत्रसे परस्त्रीका
वध, नितम्ब और
सुखदयनकारी ।
- ४२। सद्यानकुण्ड स्पर्शपहारक ।
- ४३। बाजकुण्ड ताम्र और लोहचौर ।
- ४४। वक्त्रकुण्ड देवद्रव्यापहारक ।
- ४५। तोष्यपायाण्डकुण्ड देवता और ब्राह्मणोंका
पीतन वा कांसिका द्रव्य
पुरानेवाला ।
- ४६। तप्तपायाण्डकुण्ड देवता और ब्राह्मणका रौप्य
को भयवा वक्त्रचौर ।
- ४७। लासकुण्ड वंश्याश्रमभोजी और तद्वृत्ति
जीवी ।
- ४८। मसीकुण्ड क्लेशजीवी और मसीभोजी
ब्राह्मण ।
- ४९। चूर्णकुण्ड देवता या ब्राह्मणका मण्ड,
ताम्बूल और चासुनचौर ।
- ५०। चक्रकुण्ड विमद्व्यहरणचक्रकारी ।
- ५१। वक्रकुण्ड वस्तु और ब्राह्मणके प्रति
कुटिल व्यवहारकारी ।
- ५२। क्षमकुण्ड हरिययनमें क्षम मांस-भोजी
ब्राह्मण ।

३४। व्याघ्रकुण्ड	देवता घोर ब्राह्मणके हृत्	३१। शूलशोककुण्ड	विशक्ति प्रकृतने धमकियायो।
३५। भस्मकुण्ड	लेगादि चपलारक। देवता	३२। प्रहस्यनकुण्ड	जो ब्राह्मणकी भय दिग्गजात
३६। दण्डकुण्ड	घोर ब्राह्मणका मन्त्रतेन		ई वा दसापात करता है।
	घोर धामा पुरनिवासा।	३३। उल्लामुपकुण्ड	स्वामीके प्रति जटु भाविता।
३७। तप्तशूलकुण्ड	यक्षरक्ष वा पक्षतापूर्वक	३४। चक्रकुण्ड	शूद्रभोग्या ब्राह्मणो।
३८। पवित्रकुण्ड	दूधको भूमि हरनेवाला।	३५। वैद्यकुण्ड	येना चर्मात् पक्ष वा पट-
	चर्माभमे जो मनुष्य दूध-		पुदपगामिनी।
३९। दूरधारकुण्ड	को पक्ष द्वारा मारता है।	३६। दनाताङ्गनकुण्ड	गुह्री चर्मात् सत्राट-पुं-गा-
	जो घाम घोर लगनादि दाट		मिनी।
४०। शूलोपकुण्ड	करता है।	३७। जालवहकुण्ड	महावेना चर्मात् चटा
	जो मनुष्य एकके सामने		धिक पुदपगामिनी।
	दूधरेको निन्दा वा बंद घोर	३८। देवधूषकुण्ड	कुलटा चर्मात् स्वामीके मित्रा
	ब्राह्मणकी निन्दा करता है।		कोई अन्य पुदपगामिनी।
४१। गोधातुपकुण्ड	जो दूधरेके घरमें मेंध मार-	३९। दहनकुण्ड	नरिचो चर्मात् स्वामीके मित्रा
	वर द्रव्य पुरता वा गो,		अन्य तोन पुदपगामिनी।
	हागादि चपटरक करता है।	४०। शीपवकुण्ड	पुंयचो चर्मात् स्वामीके मित्रा
	सामान्य द्रव्याधारक।		अन्य दो पुदपगामिनी-
४२। गजसूचकुण्ड	गज, मुरग घोर गरघोर।		कारिचो।
४३। गजदंशकुण्ड	जो गवादि पशुको जल पोते	४१। कपकुण्ड	चवर्चा घरपयोगिनी।
४४। गोमुचकुण्ड	समय बाधा देता है।	४२। मूर्धकुण्ड	ब्राह्मणो-गमनकारी जन्मिघ घोर
	गो, स्त्री, भिक्षु, भूच घोर		येश।
४५। कुम्भीपाककुण्ड	ब्राह्मण-वृत्ताकारक। चण-	४३। व्यातामुपकुण्ड	जो वायमें गहराज, तुलसी
	म्यागामी, दोचा घोर मन्त्रा-		घोर शासनागादि ने कर
	होन, तीर्थप्रतिपादो, घाम-		प्रतिष्ठा करने पर मो शरी
	दाजो, देवक, शूद्र-सुपकार		पूरा नहीं करता, वा मिना
	घोर हथभोपनि।		अपव करता है। चववा जो
४६। कालचक्रकुण्ड	ब्राह्मणका पण्डित वा उषो		मित्तोषी, विग्रामपाती है
	प्रकारका गुदतर पाव करने-	४४। त्रिष्टकुण्ड	वा भूठो गवाचो देता है।
	माना।		निष्कृतिपादोन, दिव्यतामें
४७। चर्मदोहकुण्ड	कुलटादि वक्ष्यग्रामामी		अनायाकारी घोर मन्दिरके प्रति
	दिज।		अपहासकारी।
४८। चर्मदुदकुण्ड	चन्द्रधूषदण्ड वा जलो	४५। भूमाधिककुण्ड	देव घोर विरहा भयानकारी।
	प्रकारके निविह क्षाममें	४६। नागवेदककुण्ड	जो ब्राह्मण मोरवग वैद्य वा
	भोजन करनेवाला।		देवक उल्लिख चपलजन करता
४९। घोरभोगकुण्ड	जो मनुष्य बागदूता क्वा-		है वा कार, ओचा घोर रन दि देव
	को दूधरेके दाट कोपता है।		कर जोविवा निवाह करता है।
५०। घोरवेदकुण्ड	दत्ता वाटका चपलारक।		

अन्धश्रुति पुराणोंमें भी नरकके अपनेके नाम लिखे हैं, विस्तारके भयसे सभी नहीं दिये गये, केवल प्रधान प्रधानके नाम दिये जाते हैं।

नरक	पाप
असौमुख	असत् प्रतिपादो, अयाव्य- याजक और अन्नदत्तमूचक।
अन्धतामिच्छ	जो अपना स्वार्थ मिट करने- के लिये दूसरोंका अनिष्ट करता है।
अग्निप्रव्रतन	दृष्टा मनच्छेदनकारी।
कालसूत्र	जो अपने पिता और ब्राह्मणके प्रति द्वेष करता है।
कुभीषाक	दत्तापहारी।
तन्त्रकुण्ड	ससागामी।
तामिच्छ	परविष और अपत्य-कलत्राप- हारी।
पुत्रवहा	जो पुत्रोंको न दे कर मिष्टान्न भोजन करता है और जीवन- स्यकर कार्य करनेमें साहस करता है। जो ब्राह्मण हो कर लासा, मांस, रस, तेल, मिश्र और सबषय विक्रय करता है, जिसका जो जातीय व्यव- साय है उसे न कर जो भाजार्, कर्कट, हाग, कुकुर, बराह और पक्षोपसन आदि व्यवसाय करता है। जो अभिनय कार्य करके भ्रष्टा- चार द्वारा उपाजित धनसे जीविकानिर्वाह करता है।
महाव्याता	कन्या वा पुत्रवधूगामो।
महारीष	जीविकाके लिये जन्तुघातो।
रुधिराश्र	जो कैवल्य भ्रष्टादि ब्रह्म कर अपनी जीविकानिर्वाह करता। कुण्डामी अर्थात् जीवितभ्रष्टाकाके गर्भसे

रीरव

शूकरमुख

नारजात व्यक्तिका नाम कुण्ड
है, उल्टीका अन्न खागैवाका।
माद्विषिक अर्थात् जो पत्नीके
भ्रष्टाचार द्वारा उपाजित धन-
से अपना गुजाग करता है।
पर्वकारी, गृहदाहो, मित्र-
घातक, पाकुनिक, ग्राम-
याजक और होमविक्रयकर्ता।
कूटघातो, पक्षघातो, मिया-
बादो और दृष्टाजन्तुवध-
कारी।
सुरापायो, ब्राह्मघातो, सुवध-
और और इन सब व्यक्तियोंके
साथ मित्रताकारी। राजा
हो कर अदण्डाकी दण्डप्रदान
और ब्राह्मणकी दैहिक दण्ड-
दाता।

(विष्णुपुराण और पद्मपुराण)

शास्त्रके अनुसार पाप करने करनेसे ही किसी न किसी
नरकका भोग अवश्य होता है।

अद्वैतजीमें नरकको 'हेल' (Hell) कहते हैं। इस
शब्दका मौलिक अर्थ पर्वतगुहा है, गभीर अन्धकारमय
दृष्टव्य है। इससे समाधि-गहरका भी बोध होता है।

क्रमशः इस शब्दसे मरनेके बाद जीवात्माकी अवस्थाका
ज्ञान होता है। जो ऐश्वर्यिक वा प्राकृतिक नियमोंका
अनुकूलन कर मृत्युके बाद शक्ति प्राप्ति की उपपन्न होती
ये, पहले उनकी उस अवस्थाको 'हेल' कहते थे। लेकिन
अधो वह शब्द शक्तिभोगकी जगह अर्थात् नरकका
अर्थ समझा जाने लगा है। मरनेके बाद जिस स्थानमें
आत्माका पापमोचन करनेकी व्यवस्था थी (जिस तरह
Roman Catholic purgatory) उस स्थानकी प्राचीन
ईसाई लोग हेल कहते थे। उसके पीछे मृतको पाप्मा
मरनेके बाद जिस स्थानमें रह कर योग्यपुष्टि पुनरा-
गमन और महाविचारकी प्रतीक्षा करती है (Limbus
Patrum) उस स्थानको भी प्राचीन 'हेल' कहते थे।
जिन सब मिथ्योंका झूठा भी अभिषेक (Baptism)

नहीं होता, मृत्यु के बाद उनकी आत्मा जहाँ रहती है कभी कभी उसे भी प्राचीन ईसाई लोग हेल कहते थे। पन्तर्मे खलत पापके दण्ड भोगार्थ एक प्रकारका कारागार कल्पित होता है, वह भी ईसाइयों के मतसे 'हेल' नामसे प्रसिद्ध था। इस हेल या नरकभोगके समयका परिमाण से कर पनेक सत्रभेद है। खूटागो शास्त्रमें नरकको अवस्थितिके सम्बन्धमें आज तक यही समझा जाता है, कि पृथ्वीके नीचे चिरायुकार गन्त राशि अथवा पन्तरीक्ष तथा पृथ्वी पर जितने पन्थकारपूर्ण गन्त है, वे सभी नरक हैं, वही पापियोंको यथोचित दण्ड मिला करता है। रोमन कैथलिकमें नरक-यन्त्रणाके अनेक प्रकारके विवरण रहने पर भी उनसे यही बोध होता है, कि वहाँ आत्मा-दो प्रकारकी यन्त्रणाओंमें मदा निमज्जित रहती है। इन दो प्रकारकी यन्त्रणाओंके नाम चिरभोग-यन्त्रणा (Pain of loss) और चिरमालि-यन्त्रणा (Pain of sense) है। पहली यन्त्रणामें ईश्वराशुग्रह और स्वर्गसुखकी चिरहानि हो जानेसे तज्जनित चिर-भोग और दूसरीमें खलत पापके लिये चिरमालि होती है।

ईसाइयोंमें पाश्चात्य और प्राच्य (Western and Eastern Churches)के भेदसे इसमें दो मत देखे जाते हैं। प्राच्यके मतमें शैथिल यन्त्रणाका अस्थित्य स्वीकार नहीं किया जाता, किन्तु घोड़ा गौर कर देखनेसे ऐसा बोध होता है, कि दोनों ही यन्त्रणाओं 'दोनो' हल स्वीकार करते हैं, केवल यन्त्रणाभोगकी प्रकृति से कर कुछ विरोध देखा जाता है। प्राचीन ईसाइयोंका मत है, कि महाविचारके दिन एक बार नरकदण्ड ही जानेसे फिर सबसे परित्राण होनेकी सम्भावना नहीं रहती, किन्तु ओरिजन (Origen)के समयसे पर्याप्त सङ्गी तथा उनके शिष्योंके व्याख्यासमे इस प्रकारका विश्वास दूर हो गया है। बहुतांशका मत है, कि नरकभोगसे आत्माका पाप क्षम्य अथ ही कर वह विग्रहता साम करती है। पापविशेषसे विग्रहता लाभके समयकी भी ज्ञास-हवि होती है। इस मतकी चंगरेजीमें Origenistic theory of the Apocatastasis कहते हैं।

ईसाई शास्त्रका मत : नरकास्तितोपनके, द्वितीय

पक्षके मतमें दूषित ठहराया गया है। प्राच्य और पाश्चात्य के मतमें नरककी शास्त्रिकी प्रकृति से कर जो मतभेद चला आ रहा है, वह उनको चिरभोगके विषयमें कोई गहवही नहीं है। न्यूटेनमिष्ट नामक शास्त्रज्ञके लुण्ड विश्वविद्यालयीका शास्त्रस्थान कई जगह जेहेन्ना (Gehenna) नामसे उल्लेख किया गया है। प्राचीन ईसाइयोंके मतसे नरकमें चिरमज्जित भौषण अग्निका दाह और सर्पवत्, कुम्भोराकृति, गरजिह, जुगुप्स नामक भौषण प्राणियोंका दंगन और तीक्ष्ण शूद्रविशिष्ट विकटदन्तपुल हैलोंका पोड़न ही प्रधान भाग गया है।

सुसममान भी चिरनरकमें विमर्शित रहते हैं। इन लोगोंके नरकको 'अहमम' कहते हैं।

३ कलिके एक पौत्रका नाम। इन्होंने कलिके पुत्र भगवे औरम और कलिकों पुत्री मृत्युके गर्भसे जन्म से कर अपनी बहन यातनासे विवाह किया था। (कहलु०) ४ विमर्चित्त दानवका एक पुत्र। ५ निजितिके गर्मजात अमृतका पुत्र।

नरककुण्ड (स० स्त्री०) नरकस्य कुण्डं इत्यु। पापियोंकी यातनाका स्थानभेद, वह जगह जहाँ पापी कट भोगता है।

नरकमति (स० स्त्री०) लेगमात्रके अनुसार वह कम जिसके करनेसे मनुष्यको नरकमें जाना पड़े।

नरकमात्रो (स० द्वि०) नरकमें जानेवाला।

नरकचतुर्दशी (स० स्त्री०) कार्तिक मासा-चतुर्दशी। इस दिन घरका सारा जूड़ा कारकट निकाल कर फेंका जाता है।

नरकचूर (द्वि० पु०) कचूर देखो।

नरकजित् (स० पु०) नरक तन्नाम्ना विख्यात अथवा जयति जिज्जिप्सुस च। नरकासुरजिता, श्रेष्ठपु। असुरदेवके सहक श्रेष्ठपुन नरकासुरकी मारा था, इसी कारण उनका नाम नरकजित् पड़ा है। नरक देखो।

नरकट (द्वि० पु०) बंतीकी तरहका एक प्रसिद्ध पोषा। इसकी पत्तियाँ बांसकी पत्तियोंकी तरह पतली और लम्बी होती हैं। इसके ऊँठन मज्जे, मज्जत और भीषण पीके होते हैं। ये ऊँठन कर्ममें तथा घटाइयाँ खादि बनानेके काममें पाने हैं। इसके मिथा इनका उपयोग

पुष्पकी निगलियां, दीरियां और बैठनेके लिए मोड़ें
आदि बनाने और कर्तव्य पाठनेमें भी होता है। कहीं
कहीं इसके रेशोंसे रस्से भी बनाये जाते हैं।

नरकदेवता (सं० स्त्री०) नरकस्थ अधिष्ठाता देवता।
निरयदेवी। पर्याय—अलक्ष्मी, निवर्तति, कालपत्नी।
(चम्पराणा०)

नरकपाल (सं० स्त्री०) नराणां कपालं इत्यतः। मृत-
व्यक्तिको शीर्षस्थित अस्थिमंड, मुर्देके सिर परकी एक
हड्डी। कोई कोई इसे पवित्र मानते हैं, लेकिन उसका
कोई प्रमाण नहीं है। यह अशुचि है, वृद्धादि पर स्नान
अवश्य कर लेना चाहिये।

नरकभूमि (सं० स्त्री०) नरकस्थ दुःखमंदल भोगयोग्या-
भूमिः। भोगभूमि, वह स्थान जहाँ पापी जा कर दुःख
भोगते हैं।

नरकभूमिका (सं० स्त्री०) नरकलोक।

नरकमुक्त (सं० पुं०) नरकात् मुक्तः। नरकसे मुक्त। नरकसे
मुक्त होने पर पुनः जन्म लेना पड़ता है। पुण्य कार्य
करनेसे स्वर्ग और पाप कार्य करनेसे नरक मिलता है।
जब स्वर्ग और नरकका भोग शेष हो जाता है, तब जीव
पुनः जन्म ग्रहण करता है। इसका विषय गुरुपुराणमें
इस प्रकार लिखा है—

नरकसे मुक्त होने पर पापयोनिमें जन्म होता है। जो
पतित व्यक्तिसे दान लेता है, वह नरकसे मुक्त हो कर
खरयोनिमें जन्म लेता है। उपाध्यायके प्रति आग्निदाचरण
करनेसे अथवा मन हो मगधनको पत्नीके साथ सम्भोगकी
इच्छा रखनेसे तथा सनका कोई द्रव्य खुरानेसे नरकमुक्ति-
के बाद कुक्षुरयोनिमें जन्म होता है।

निम्नकी अपमान करनेसे गर्दभ-योनिमें, पिताकी
तत्संलोक देनेसे कच्छपयोनिमें, प्रभुके अघसे प्रतिपालित
हो कर उन्हें छोड़ किसी दूसरेकी सेवा करनेसे वानर,
गच्छितके अपहरण करनेसे क्षमि, दूसरेकी मित्रता
करनेसे राक्षस, मित्रासहारी होनेसे मोन, जो भान
खुरानेसे मूषिक, परदारके साथ सम्भोग करनेसे हृक,
भामोके साथ गमन करनेसे कोकिल, शुभ आदि
स्त्रीके साथ सम्भोग करनेसे शूलर, यज्ञदान और विवाह-
में विघ्न डालनेसे क्षमि, देवता, पिता और ब्राह्मणको न

दे कर खर्च खा लेनेसे काक, बड़े भाईका अपमान
करनेसे कौचयोनिमें, शूद्रके ब्राह्मणी-गमन करनेसे
क्षमि और उससे उत्पन्न सन्तान कल्याण तक कीट-
योनिमें जन्म लेता है। शस्त्रहीन पुरुषको मारनेसे
गर्दभ, बालक और स्त्री वध करनेसे क्षमि, भच-
वत् खुरानेसे मच्छिका, चम खुरानेसे मार्जार, तिन
खुरानेसे मूषिक, जो खुरानेसे नकुल, मधुर मत्स्य
खुरानेसे काक, मधु खुरानेसे दंश, पूष खुरानेसे पिपी-
लक, कासा खुरानेसे वायस, काचन खुरानेसे क्षमि,
सूती कपड़ा खुरानेसे क्षोब, वर्षाक खुरानेसे मयूर,
शाक, पत्र और रत्न वध खुरानेसे जीवकल, गन्धद्रव्य
खुरानेसे कर्कशूर, बांस खुरानेसे शय, काठ खुरानेसे
काष्ठकोट, पुष्प खुरानेसे टरिद्रुम, जो खुरानेसे पत्र,
शाक खुरानेसे हारीत और जल खुरानेसे चातक योनिमें
जन्म होता है। नरकभोग अर्थात् नरकमुक्तके बाद इन
सब योनियोंमें जन्म लेना पड़ता है।

(गहपु० कर्मविपाक २२८)

नरकल—कोचीन देशका एक वस्त्र। यह प्रचल० १०'
२ ३०" ल० और दैर्घ्य ७ १/२ १२ १/२ फु०के मध्य अवस्थित
है।

नरकल (हिं० पुं०) नरकट देवी।

नरकस (हिं० पुं०) नरकट देवी।

नरकस्थ (सं० लिं०) नरके तद्रूपे तिष्ठति स्था-क । १
नरकभूमिमें स्थित, जो नरकमें हो। (स्त्री०) २ घैत-
रणी नदी।

नरकात्मक (सं० पुं०) अन्तर्गत इति अन्तर्गतः, नरकस्थ
अन्तर्गतः। नरकाजित् विष्णु, श्रीकृष्ण।

नरकामय (सं० पुं०) नरक प्राप्तये इत्ययम्, १ प्रेत।
नरकपयः आसयः। २ निरयरोम, नरककी तरह दुःख-
दायक एक प्रकारका रोग।

नरकासुर (सं० पुं०) नरक देवी।

नरकी (हिं० वि०) नारकी देवी।

नरकीलक (सं० पुं०) नरेण कीलक इव निम्नत्वात्।
शुद्ध, वह जो शुद्धका लक्ष करता हो। इसका दूसरा
नाम शुद्धा है।

नरकुल (हिं० पुं०) नरकट देवी।

नरकेशरी (सं० पु०) नर एव केशरी । १ नरसिंह ।
नरकेशरोव धीरत्वात् । २ मानवश्रेष्ठ, सब जो
मनुष्योंमें श्रेष्ठ हो ।

नरकेशरि (हिं० पु०) नरकेशरी देखो ।

नरकोकस (सं० पु०) नरके शोकः वामस्थानं यस्य ।
नरकवासी, निरयगामी ।

नरकोत्तुक (सं० पु०) मदारीका खेल ।

नरखैर—मध्यप्रदेशके अन्तर्गत नागपुर जिलेका एक
शहर । यह अक्षा० २१° २८' ००" और देशा० ७८° ३२'
५०" नागपुर शहरसे ४५ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित
है । जनसंख्या ७७२६के लगभग है । यहाँ एक
उत्तम बाजार, स्कूल और थाना है । नगरके चारों
तरफ सुन्दर सुन्दर उद्यान रहने पर भी बावड़वाकी
शिकायत नहीं है । प्रति सप्ताह भव्योका बाजार लगता
है ।

नरगण (सं० पु०) नरस्य गणो यसमात् । १ नक्षत्रभेद,
फलित ज्योतिषमें नक्षत्रोंका एक गण जिसमें उत्तर-
फल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, पूर्वफल्गुनी, पूर्वा-
षाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, रोहिणी, भरणी और आर्द्राभिन्न
सम्मिलित है । इस गणमें जो जन्म लेता है, वह सुमील
और बुद्धिमान होता है । राक्षसगणके साथ इस गणका
विरोध माना जाता है । इसे मनुष्य गण भी कहते हैं ।
नराणां गणः ६-तत् । २ नरसमूह ।

नरगिण (फा० पु०) १ व्याजके पीढ़की तरहका एक घोड़ा ।
इसकी जड़ भी व्याजकी गाँठ से होती है । इसमें
कठोरीके आकारका सफेद रंगका फूल लगता है । इस-
की सुगन्ध भी बहुत मनोहर होती है । फारसी और उर्दू-
के कवि इस फूलके साथ भाविकों अपना देते हैं । इसके
फूलका एक प्रकारका बटिया इत्र भी बनाया जाता है ।
२ इस घोड़ाका फूल ।

नरगिणी (फा० पु०) १ एक प्रकारका कपड़ा । इस पर
नरगिणकी तरहके फूल बने होते हैं । २ एक प्रकारका
तना हुआ चप्पटा ।

नरगुन्द—इसका वर्तमान नाम नगुन्द है । यहाँ १०१०
ग्रहमें पश्चिम भागुन्द राजाओंका एक पणहार था ।

नरह (सं० पु०) नृपाति प्रापयतीति नृ-पञ्चत् । पताई-

रंग, इति उपादिकीटीकारण सुशारङ्गं) नगरहं,
नारङ्गीका पेड़ ।

नरचन्द्रसुरि—जैन धर्मपुरीय-गणके अन्तर्गत एक पण्डित ।
ये देवप्रमसुरिके शिष्य नरेन्द्रप्रभके गुरु थे । १६००
पनचराधय नाटककी टीका, न्यायचन्द्रनीकी टीका,
ज्योतिःसारटीका और प्राक्तन-दोषिकाकी टीका बनाई
है तथा अपने गुरुदेव प्रभसुरि-विरचित पाण्डवचरित
काथ और उद्दयप्रमप्रणीत धर्माभ्युदय मशकाम्यका
मंशोधन किया है ।

नरचा (हिं० पु०) एक प्रकारका पाट का पट्टा ।

नरता (सं० स्त्री०) नरस्य भावः नर-तल-टाप । नरत्व,
मनुष्यत्व, मनुष्यका धर्म वा भाव ।

नरतात (सं० पु०) राधा, नृपति ।

नरत्व (सं० स्त्री०) नर-भावे त्व । मनुष्यत्व, मनुष्य होने-
का भाव ।

नरद (सं० स्त्री०) नन्द सख्य र । नन्द देखो ।

नरद (फा० स्त्री०) १ घोसर खेजनेकी गोटी । २ एक
घोड़ा जिसके फूलोंका चरक खोंचा जाता है और जिस-
की पत्तियाँ मसालेके काममें पाती हैं । ३ शब्द, ध्वनि,
गाद ।

नरदन (हिं० स्त्री०) गरजना, नाद करना ।

नरदवा (फा० पु०) पनासा, मत्त ।

नरटा (फा० पु०) सेना पानी खननेकी मशीन ।

नरदारा (हिं० पु०) १ अप्रसन्न, हिजड़ा, जनवा । २
जो पुरुष हो कर भी स्त्रियोंका काम करे, डरपोका,
कायर ।

नरदिक (सं० स्त्री०) नरद किशरदित्वात् नृन् । नन्द-
विक्रता, नन्द बेचनेवाला ।

नरदेव (सं० पु०) नरदेव इव पूज्यत्वात् । १ राजा,
नृपति । २ ब्राह्मण ।

नरदेवकुमार (सं० पु०) एक ऋषि जिसकी कथा श्री-
महागवतमें है ।

नरदेवदेव (सं० पु०) नरः देवदेव इवः । राजा ।

नरदिय (सं० पु०) नरान् वृत्ति दिय-क्रिय । मनुष्यईव-
कारी, राक्षस, चसुर ।

नरनगर (सं० स्त्री०) नरप्रधानं नगरं । नगरभेद, एक

मेनरेको नाम। नरनगरं यहाँ पर नगरका नश्वर 'पूर्व-
पदात् स प्रायाम्' इस सूत्रके अनुसार शब्द हो सकता
था, लेकिन सुम्नादित्यके कारण शब्द नहीं हुआ।

नरनाथ (स० पु०) नरः नाथ इव । नरेश्वर, राजा,
नृपति, नृपाल ।

नरनाथक (स० पु०) राजा, नृप ।

नरनारायण (स० पु०) नरख नारायणश्च । ऋषिभेदः
कालिकापुराणमें इन दो ऋषियोंका उत्पत्ति-विवरण
इस प्रकार लिखा है,—

किसी एक समय महाबल शरभरूपी भग्न महादेव-
ने दम्ताघातसे नरसिंहको दो खण्ड कर डाला। नरसिंह-
के शरभ दम्ताघातसे दो खण्ड होने पर उसकी नररूप
वर्ष देखसे महातपा दिव्याकृति मुनिरूपी नर और सिंहा-
कृति वर्ष देखसे महातपस्वी नारायण नामक जनार्दन
उत्पन्न हुए। महाका नर और नारायणकी छटिके
प्रधान कारण स्वरूप हरिने नर-नारायणकी सप्तविंशत्यल-
के साथ मत्स्यदेवरचित लीला पर रत्न कर शरभ बराहके
निकट गये थे। (कालिकापुराण ३० अ०)

देवी भागवतमें नरनारायणका विवरण जो लिखा
है, वह इस प्रकार है,—

ब्रह्माके हृदयसे धर्म नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ।
यह पुत्र अत्यन्त ब्रह्मनिष्ठ निकला। धर्मने गार्हस्थायम
अवलम्बन कर दस प्रजापतिकी दस कन्याओंसे विवाह
किया। उनके गर्भसे हरि, कृष्ण, भर और नारायण
नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। इनमेंसे हरि और कृष्ण
प्रतिदिन योगाभ्यासमें निरत रहते थे। इधर नर और
नारायण हिमालय पर्वत पर जा कर मदिरिकाश्रम-तीर्थ-
में ध्यायुक्त तपस्या करने लगे।

यहाँ नर और नारायणने सो वर्ष तक कठोर तपस्या
की। इनके तपसे लसे चराचर अखिल जगत् परितप्त हो
उठा। तब देवराज इन्द्र इनका तपोभङ्ग करनेके लिये
काम, क्रोध और अत्यन्त निदाराह लोभकी उत्पादन
कर नर-नारायणके सोमने उपस्थित हुए। यहाँ जा कर
उन्होंने तपोभङ्गके लिए उनके चेष्टायें कीं, किन्तु कुछ
भी फल न निकला।

तब इन्द्र मन्त्रयुक्ती शरणमें पहुँचे। कामदेव वसन्त

और पञ्चराश्रीको साथ ले जहाँ नरनारायण तपस्या
करते थे वहाँ चल दिये। वसन्तके जानिसे ही वहाँ
वसन्तऋतु-सी भीमा होने लगी। सङ्गोतमिषुणा रथा
और तिलोत्तमादि प्रधान प्रधान पञ्चराशेँ उस मनोरम
आश्रममें सुमधुर गीत गाने लगीं। उस सुमधुर स्तुतिको
तथा कोकिलोंके मनोहर कूजन और भ्रमरोंकी सुमधुर
कलध्वनिकी सुन कर उन दोनों ऋषियोंका ध्यान टूट
गया। नरनारायण दोनों ऋषि प्रकालमें ऋतुराज वसन्त-
का उदय और वनवादपद्मसुहा पुष्पोदय देख कर
चिन्तित हो पड़े। तब नारायणने अत्यन्त विस्मित हो
नरऋषिसे कहा, 'भाई! देखो, ये सभी हृत्त पुण्यित हो
रहे हैं और प्रकालमें वसन्तऋतुका आगमन देखनेमें आ
रहा है।' इसी बीच कन्दर्प तथा सभी पञ्चराशेँ उन्हें
देख पड़ीं।

इन्हें देख कर दोनों मुनि बड़े विस्मित हुए।
मेनका, रथा, तिलोत्तमा आदि षाठ हजार पचास पञ्च-
राशेँ ने मुनिकी घेर लिया और नाच गान करने लगीं।
उनके नाच गानसे खुश हो कर मुनियोंने उन्हें भाति-
यायें की लिये अनुसूचित किया।

नर-नारायणकी जब मालूम हुआ कि देवराज
इन्द्रने उनको तपस्या भङ्ग करनेके लिए इन सब पञ्च-
राशेँकी भेजा है, तब उन्होंने इन्द्रकी लज्जित क्रमोंके
लिये हुरन्त अपनी जाँघसे एक बहुत सुन्दर पञ्चरा उत्पन्न
की। यह वाराहना महर्षिके रहस्य उत्पन्न होनेके कारण
सर्वेशी नामसे प्रसिद्ध हुई।

पौष्टि नारायणने इन्द्रकी भेजी हुई पञ्चराशेँकी
सेवा करनेके लिए उनसे भी अधिक सुन्दर षाठ हजार
पचास दासियोंकी छटिकी। इस पर पञ्चराशेँने अपने
अपने हाथमें उपहार द्रव्य ले कर दोनों मुनिकी प्रणाम
किया और इस आशयें दृष्ट्यकी देख से उनकी
सुति करने लगीं। मुनियोंने प्रसन्न हो कर कहा, 'तुम
लोग समिवर्षित वर माँगी और सर्वशोको अपने साथ
ले जाओ, इसे हमने देवराजको उपहारमें दिया।'

पञ्चराशेँने यह सुन कर कहा, 'प्रभो! हम लोगों-
की अत्यन्त कष्ट और तपस्याके फलमें आपके चरणोंका
दग न हुआ है; आप यदि सन्तुष्ट हो कर हमें आश्रित वर

दे, तो जो कुछ हम लोगोका अभिप्राय है, उसे कहें।
 हे देवग ! पाप लगतके पति हैं, अतएव हमलोगोके
 भी पति हुए। हमलोग सर्वदा पापकी सेवामें नियुक्त
 रहेंगे। ये सब सत्य वचनार्थ पापकी पाश्चात्ते स्वर्ग-
 की चली जाय और हम सोनह हजार पचास वचनार्थ
 यहाँ रह कर पापकी सेवामें लगे रहें। पाप देवताओं-
 के प्रभु हैं, अतः हमें वाञ्छित वर दे कर सत्य धर्मकी
 रक्षा कीजिये। धार्मिक सुनिधोने कहा है, कि जो
 श्रियां कामातुर हैं, उनको पापा भङ्ग करनेसे हिंसा
 जमित पाप लगता है। अतः पाप हमलोगोको परिवाग
 न करे।' इस पर नरनारायणने कहा था, 'हे अप्सरो-
 गण ! हम दोनोने यहाँ पूरा एक हजार वर्ष जितेन्द्रिय
 हो कर तपस्या की है, अभी किस प्रकार विषयाभङ्गमें
 लित हो कर उस तपस्याकी भङ्ग कर सकते ?' कि
 अप्सराओंने प्रार्थना की, 'यदि पाप स्वर्गकी कामनामें
 तपस्या करते हैं, तो यह नियम समझ लें, कि गन्ध-
 मादनकी प्रपन्ना वल्लभ स्वर्ग दूसरा नहीं है। पाप
 इस परम मनोहर सुगोभन स्थानमें सुराङ्गनाओंके साथ
 परम सुखसे विहार कर परमानन्द रसका अनुभव
 कीजिये।' तब नारायण मन ही मन सोचने लगे—किस
 उपायसे ये यक्षिणि विमुख होटाई जाय। चहद्धार हो
 संचारवृत्तका मूल है। मैं सुराङ्गनाओंको देख कर तुम
 पाप रह न सका, उनके साथ सम्भाषण किया है, इसीसे
 दुःखभाजन हुआ। मैंने धर्मव्यय करके नारियोकी
 छटि की। इन्द्रने रित से उत्तम और मनोरम प्रमदागण
 कामातुर हो कर तपोभङ्गमें प्रवृत्त हुई हैं। यदि चह-
 द्धारवय इन्हे उत्पादित न करता, तो मेरा यह दुःख
 प्रसङ्ग उपस्थित न होगा। अभी मैं जर्णनामको नाई
 निजकृत सुहृद् कालमें पापसे भाप फैल गया। इस
 प्रकार बहुत देर तक सकल-वितर्कके बाद उन्हींको ध-
 र्मक उन काम-नामिणियोंकी सोटा देना ही अच्छा
 समझा।

नर नामक कनिष्ठ धर्मतनयने भाईकी चिन्तातुर
 देख कर कहा, 'महाभाग ! पाप कोधभावका परित्याग
 कर गान्धभावका अवलम्बन कीजिये, जिससे हम दुर्भाग
 चहद्धारका विनाश हो। पापकी क्या यह मासूम

मर्ही कि पहले चहद्धार देवसे हो हम लोगोको
 तपस्या विनष्ट हुई हो और दिव्य सहस्र वर्ष तक चह-
 द्द्रेन्द्र प्रज्ञादके साथ अत्यन्त चङ्गत संयाम हुआ था।
 उस संयाममें हमलोगोकी यथेष्ट कष्ट भुगतने पड़े थे।
 प्रज्ञादके साथ इनका जो युद्ध हुआ था, उसमें दानवेन्द्र
 प्रज्ञादकी हो हार हुई थी। भगवान् नारायणने स्वयं
 रणक्षेत्रमें जा कर इन्हे युद्धसे निवृत्त किया था।'

स्वर्गीय सुराङ्गनाओंने कामातुर हो कर पुनः पुनः
 नारायणने कृत्त किया था। इस पर नारायण सुनि चङ्गे
 गाप देनेकी उद्यत हुए। लेकिन उनके छोटे भाई
 नरने चङ्गे देवा करनेसे रोका। वेहि नारायण अपने
 रोषभावका परित्याग करके इस संस्र कर सधुर वचनों-
 में उनसे कहने लगे, 'हे सुन्दरीगण ! इस जन्ममें हम
 दोनोने तपस्या करनेका सहस्र किया है, सुगरी ऐसी
 अवस्थामें हमें संसारी होना किसी प्रकार कर्त्तव्य नहीं
 है। अतः अभी क्षमा करके तुम लोग अपने स्थान स्वर्ग-
 की चली जा। यह नियम जानना कि जो धर्मज्ञ हैं,
 वे कदापि दूसरेका मतभङ्ग करना नहीं चाहते। तुम
 लोग सौभाग्यवती हो, अतः क्षमा कर हमारे मतकी
 रक्षा करो। हमारी यही प्रार्थना है, कि जन्मातुरमें
 हम तुम लोगोके पति हो सकते हैं। हे विद्यामाधि-
 सुन्दरीगण ! प्रज्ञादके दायरगुमें देवताओंकी कार्य-
 सिद्धिके लिये मैं धरातल पर अवतर हो अवतीर्ण
 होऊंगा। उस समय तुम लोग भी पृथ्वीतल पर राज-
 कन्याके रूपमें प्रयत्न प्रयत्न ग्रहण करोगी। तभी
 तुम लोग मेरो पत्नी होगी, इसमें सन्देह नहीं।' यह सुन
 कर अप्सरायें वहेगरहित हो स्वर्गकी चली गईं। देवराज
 इन्द्र यह तवःप्रभाव सुन कर और उर्वशी पारिदी देव
 कर नरनारायणकी भूयसी प्रशंसा करने लगे। ये दोनो
 सुनि भूयुके गापके कारण और पृथ्वीका भारहरण
 करनेके लिए अर्जुन और लक्ष्य हो कर अवतीर्ण हुए थे।

(देवीभाग ४४।१० अ०)

नरनारि (मं० स्त्री०) नर (पुरुष) को स्त्री, प्रोपदो,
 पाश्चात्ती ।

नरनाह (हिं० पु०) नृप, राजा ।

नरनाहर (हिं० पु०) नृपिंह भगवान् ।

नरनी (हि० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा ।
 नरन्ध्रि (स० पु०) नरी धीयन्ते भारीयन्ते अस्मिन् धा
 आधारि कि प्रयोदशादित्वात् मुम् । स० शरं ।
 नरन्ध्रि (स० पु०) जगत्पालक विष्णु ।
 नरपति (स० पु०) नरस्य पतिः ६-तत् । राजा । राजा
 सर्वोको देख देख करते हैं, इस कारण राजाका नरपति
 नाम पड़ा है ।
 नरपति—कर्णाटका एक राजवंश । इस वंशके केवल
 २० राजा हुए जिनमें २६६६ ई० तक अर्थात्
 ५३३ वर्ष तक राज्य किया था ।
 नरपति—इनाका वृषरा नाम हरिवंश कवि था । ये आन्ध्र
 देशके पुत्र और ज्योतिष-कल्पवृक्षके प्रणेता थे ।
 नरपतिजयचर्या (स० स्त्री०) सरोदयमूलक ग्रन्थभेद
 नरपद (स० पु०) १ नगर । २ देय ।
 नरपाश (स० पु०) नरः पशुरिव । १ मानवाधम, निकट
 मनुष्य, जिस मनुष्यका आचरण पशुके जैसा हो, उसे
 नरपाश कहते हैं । २ दृष्टि ।
 नरपास (स० पु०) नरान् पालयति पालि-पुल्ल् । मानव-
 रक्षक, नृप, राजा ।
 नरपालि (स० पु०) नृपगण, छोटा शंख ।
 नरपिशाच (स० पु०) जो मनुष्य को कर भों पिशाचों का-
 सा काम करे, बड़ा भारी दुष्ट और नीच मनुष्य ।
 नरपुङ्गव (स० पु०) नरः पुङ्गवः ह्य इव शूरत्वात् । नर
 श्रेष्ठ, मनुष्यों में प्रधान ।
 नरपुर—१ वितस्ता नदीके तीरवर्षी एक नगर । काशीर-
 की राजा नरने यह नगर बसाया था । २ भूलोक, मनुष्य-
 लोक ।
 नरप्रिय (स० पु०) नराणां प्रियः ६-तत् । १ नीलवस्त्र,
 नीलका पेड़ । २ पारायंत, कनूतर । (ति०) ३ जो
 मनुष्योंको पच्छां सने ।
 नरवदा (हि० स्त्री०) नर्मदा देखे ।
 नरवसि (स० पु०) देयताकी वह पूजा जिनमें नरहत्या
 को जाती है । नरमेघ देखे ।
 नरवधो (स० पु०) मनुष्योंकी खानेवाला, राक्षस, दैत्य ।
 नरभू (स० स्त्री०) नराणां मनुष्याणां भूमिः । १ भारत-
 वर्ष, हिन्दुस्तान । २ मनुष्योंको उत्पत्ति ।

नरमूलक शाह—एक गोरखाराजा । निपासराज (भाटगां-
 वंश) १८वीं या अन्तिम राजा) रणजित्मल्लके राजत्व-
 कालमें इन्होंने नेपाल पर चढ़ाई की थी ।
 नरभूमि (स० पु०) नराणां भूमिः । भारतवर्ष ।
 नरभ (हि० वि०) षकटिन, मुनायम ।
 नरमट (हि० स्त्री०) वह जमीन जहाँकी मछी मुनायम हो ।
 नरमदा (हि० स्त्री०) नर्मदा देखे ।
 नरमरोषा (हि० पु०) एक प्रकारका सज्द वा सास
 मुनायम रोषा जो दुनाईके काममें आता है ।
 नरमलोहा (हि० पु०) वह लोहा जो अग्निमें सास करके
 ठण्डा किया जाता है ।
 नरमा (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी कपास । २ वे कोई
 कोई मनवा, देयकपास या रामकपास भी कहते हैं ।
 ३ चेमरकी फर । ३ कानकी नीचेका भाग, लोल ।
 नरमाना (हि० स्त्री०) १ नरम करना, मुलायम करना ।
 २ शान्त करना, धोसा करना ।
 नरमानिका (स० स्त्री०) नरं मन्यते या मन-जुल्ल,
 टापि भत हलं । नरमानिनी, वह स्त्री जिसे मूढ़ या
 दाढ़ी हो ।
 नरमानिनी (स० स्त्री०) नरं पुहयमिव मन्यते मन-
 णिनि-डोप् । मन्युयुक्त नारी, वह स्त्री जिसे मूढ़ या
 दाढ़ी हो ।
 नरमासा (स० स्त्री०) नराणां तन्म ज्ञानां माला । नर-
 मुण्डकी माला ।
 नरमासिनी (स० स्त्री०) नरस्यैव मासा कैशममुहो
 मुखेऽस्त्यस्य इति इनि-डोप् । १ मन्युयुक्तवदना नारी,
 वह स्त्री जिसे मूढ़ या दाढ़ी हो ।
 नरमावही (हि० स्त्री०) वनकपास ।
 नरमी (का० स्त्री०) श्रुतश, कोमलता, मुलायमियत ।
 नरमेघ (स० पु०) मेघ्यते इति मिध हिंसायां भावे घञ्,
 नराणां मेधो हिंसनं यत् । नरवधामक यन्नमिरेय,
 एक प्रकारका यन्न जिसमें प्राचीन कालमें मनुष्यके मांस-
 की आहुति दी जाती थी । इस यन्नमें पुष्टय वन्न किया
 जाता था, इस कारण इसका नाम नरमेघ पड़ा है । शक्र
 यजुर्वेदके ३० और ३१ अध्यायमें लिखा है—मांसक
 और घन्त्रिय ये दो वर्ष अतिष्ठकामन्न करके यह यन्न

कर सकते थे। यह यज्ञ क्षेत्र शुद्धा दग्नीने धारण होता था और पानीस दिनमें समाप्त होता था। शम्भरीय, हरिचन्द्र और यदातिने नरमेघयज्ञ किया था। कस्मिं यह यज्ञ निषेध है।

नरमन्त्र (सं० पु०) धारमानं नरं मन्त्रेण नृ-मन्त्रं यज्ञं मुमुषु। नृपाभिमानो, यह जो अपनेको राजा कह कर अभिमान करता हो।

नरयन्त्र (सं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, सूर्यसिद्धान्तके अनुसार एक प्रकारका यन्त्र-यन्त्र। इसका व्यवहार भूयमें समय जाननेके लिए होता है। जिस दिन आकाश साफ रहे, उस दिन १२ वर्गलोके गङ्गा यन्त्रकी तरह इस यन्त्रसे ज्ञाया द्वारा समयका निरूपण किया जाता है।

नरयान (सं० पु०) नरवाद्यं यानं। यानभेद, मनुष्य दोनोंको एक प्रकारकी सवारी।

नरराज (सं० पु०) नाराणां राजा, टप, समाधानः नरयेष्ठ।

नरराज्य (सं० स्त्री०) नरस्य राज्यं इत्यतः। मनुष्यराज्य। नररूप (सं० त्रि०) नरस्य रूपमिव रूपं यस्य। नराकार, मनुष्यके जैसा आकृतियाला।

नररूपिन् (सं० त्रि०) नररूप भूतव्ययं इति। मनुष्यके जैसा आकृतियाला।

नरयम्भ (सं० पु०) नरयाभो कृपमयेति। १ नरयेष्ठ।

२ महादेव, शिव।

नरभोक (सं० पु०) नराधिष्ठितो लोकः भुवनं। दुष्वी-
लोक, संसार।

नरवर—देशविशेष, एक देशका नाम। भक्तमालमें इस देशका उल्लेख है। किसी समय यहां भव्यता विष्णुभक्ति-परायण एक राजा रहते थे। जब ये पूजा करने बैठते थे, तब कोई भी इनसे मुलाकात नहीं कर सकते थे। यहां तक कि प्रायश्चानि होनेकी सम्भावना रहते भी ये पूजा समय ध्यानभङ्ग नहीं कर सकते थे। एक दिन वे पूजा करनेसे लिये बैठे ही थे, कि दूरी बोध बादगाहने रहे दुलचा भिजा। लेकिन नरवर न गये। इस पर बादगाह कुपित हो कर छत्र पूजास्थान पर आये और इनके पैर काट डाले। इस पर भी वे पूजा परसे न उठे, पूर्ववा ध्यान लगाए बैठे रहे। पीछे पूजा समाप्त हो

जाने पर जब ये उठे, तब पैरकी बंदनासे भूक्षित हो उसी जगह गिर पड़े। बादगाहने इनकी भविष्य-प्रसन्न हो कर पूजा प्राप्त करने दान दिये।

नरवर—१ मध्य भारतके खालिदर राज्यका एक जिला। यह भूभाग २४°३२' से २५°५४' उ० तथा देशो ७०°१२' से ७०°३२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०४१ वर्गमील और लोकसंख्या ३८८३६१ है। जिलेका अधिकांश जङ्गलमय है। जमीन बहुत उर्वरा है, यतः समय समय पर अच्छी फसल लगती है। यहांकी प्रधान नदियाँ सिन्ध, पार्वती और धेतवा हैं। इसमें चन्देरी और नारार नामके दो शहर तथा १२८४ ग्राम लगते हैं। यह जिला चार परगनोंमें विभक्त है, सीपरो, पिथोर, कोलाम और करेरा। राजस्व प्रायः ६५००० रु०का है।

२ उक्त जिलेका एक शहर। यह भूभाग २५°३८' उ० और देशो ७०°५४' पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४८९८ है। कहते हैं, कि पुराकालमें यहां निपादके राजा नर रहते थे। इसका प्राचीन इतिहास बहुत कुछ खालिदरसे मिलता मिलता है। १०वीं शताब्दी के मध्यभागमें नरवर और खालिदर ये दोनों स्थान एक-साथ राजपूतके हाथ लगे। पीछे ११२८ ई०में परिवारों ने इस पर अपना आधिपत्य जमाया और १२३३ ई० तक राज्य किया। अनन्तर पल्लवमण्डी गूनी बोली। उन्होंने परिवारकी निकाल भगाया। और पाप खुद राजा बन बैठे। तेमूरके आक्रमण-कालमें नरवर तोलपरीके हाथ लगा और १५०० ई० तक उन्हींके दखलमें रहा। बाद सिक्खर सोदीने बारह महीने तक यहां घेरा लाते रहने के बाद इसे अपने कब्जेमें कर लिया। पक्षधरके समयमें यहां मालवा सुबेके नरवर सरकारकी राजधानी थी। पीछे यह स्थान पुनः पक्षधरा राजपूतोंके अधीन आ गया और १८वीं शताब्दी तक उन्हींके दखलमें रहा। बाद हलाहाबाद-सन्धिके अनुसार यह नदाके लिये सिन्धियाके हाथ आ गया।

इस शहरमें जो एक प्राचीन दुर्ग है वह समुद्रतलसे १५०० फुट तथा सरजमोमे ४०० फुट लंबा है। यह दुर्ग ५ मील तक दीवारसे घिरा हुआ है। सिक्खर सोदी यहां का मांस तक रहे थे। इनमें समयमें उनकी

यहकि प्रायः सभी मन्दिर, मरिज्ज तथा अच्छे अच्छे भवन तोड़ फोड़ डाले थे। जाते समय मन्दिरमें जितनी वहु मूल्य चीजें थीं उन्हें भी अपने साथ ले गये। दुर्गमें १६८६ ई. की एक चट्टान पाया तब मौजूद है जो एक समय जयपुरके राजा सिवाईसिंहकी थी। दुर्गके सामने ही एक स्तम्भ खड़ा है जिसमें नरवरके लोगवरो-के नाम खुदे हुए हैं। यहकि पर्वतों पर मुख्यकोछा पाया जाता है।

३ मध्य भारतके अन्तर्गत आसवा एलेन्सीकी एक ठकुरायत।

नरवरी (हि० स्त्री०) चन्द्रियोंकी एक जाति।

नरवर्मन्—निवारके गुहिलवंशीय एक राजा।

नरवसन्त (सं० पु०) कपोत, कबूतर।

नरवा (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी।

नरवाह (हि० स्त्री०) नरई देखो।

नरवाह (सं० पु०) वह सवारी जिसे मनुष्य खींच या डो कर ले चले।

नरवाहन (सं० पु०) नरो वाहन यत्न, सुभूदित्वात् न पत्वं । १ कुबेर। २ नृपतिविशेष, एक राजाका नाम।

नरवाह्य वाहन। ३ नरवाह्यायान, वह सवारी जिसे मनुष्य खींच या डो कर ले चले। ४ किन्नर।

नरवाहन—निवारके गुहिल वंशीय एक राजाका नाम।

नरवाहन—१ हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। ये भीमवर्मेके शिष्यही थे। इनका जन्म सम्बत् १६००में हुआ था। ये हितहरिवंशरायजीके शिष्य थे। इनकी कथा अन्त-मालमें भी मिलती है।

२ एक हिन्दी-कवि। इनकी कविता सरस होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

“हुनहिं राधिके हजान तेरे दिव सुखनिधान

राघरको रसमण्डल डिग्नमिदनी।

नृत्य सुवती समूह राग रंग अति कद्व

बापूर मुख मूँलिका बगन्दिनी॥

बंशीट निकट जहाँ परम रमण मूँल तहाँ

सकल सुखद बड़े मकर वासु मदिनी।

बातोहूद विक्रम धानन अतिसे सुखाय

राका रुचि घरर भाषं विमल चांदनी ॥

नरवाहन प्रभु मिहिर लोचन भरिनि नाति

नख सिख सौन्दर्य काम दुःख निहमिदनी।

विजयय मुख भोज मेदि भासिनी सुखविन्दु सेति

नख निजुअ इषाम कति जगत बदिनी ॥”

नरवाहनदत्त—बकराज उदयनके पुत्र। उदयनकी पटराजो वासवदत्ताके गर्भसे ये उत्पन्न हुए थे। इनका अन्ध पाण्डववंशमें था। इनकी ओढ़नकी पत्नीकि कथाको से कर कायासरित्-भागवत का उद्धृतकता रचो गई है।

यहाँ इनका विष्णु कूल विवरण दिया जाता है। ये कामदेवके पंथमें उत्पन्न हुए थे। ये अपने बलसे मानव की कर विद्याधरीके एक माय भक्तवर्ती सम्पाद हो गये थे। इनके विजयपरिपदके पुत्रगण पारिवर्त बने थे अर्थात् योगेश्वरायकपुत्र हरिश्चिन्ध सेनापति थे, विदूषक वसन्तकके पुत्र तपान्तक वयस्य और प्रतीहार नित्यो-दितके पुत्र गोमुख प्रतीहार थे। स्वयंरति सदनमन्त्र का नामकी भद्रक नामक विद्याधरीकी कन्या इनकी सहेली थी। बाद ये उत्तरप्रभा आदि भनकी विद्याधर और नर-कन्यापोंका पाणिग्रहण कर अन्तमें विद्याधर-भक्तवर्ती हुए। (कथापरिवाहार)

नरवाहिन (सं० वि०) नरवाहनी नर-वह-यिनि। नरवाहक-जिसे मनुष्य डो चले।

नरविष्णव (सं० पु०) नर विष्णवति भक्षयति हिमक्षि वा विस्मन-प्रक्ष। नरविष्णव, राक्षस।

नरवृष (सं० पु०) नौलोहव, नौवका-पिङ्ग।

नरव्याघ्र (सं० पु०) नरो व्याघ्र इव, उपमित-वर्मभा०।

१ बौद्ध मानव, मनुष्योंमें से २। २ एक प्रकारका जानवर जो जलमें रहता है और जिसके शरीरके नीचेका भाग मनुष्यके धाकारका और ऊपरका भाग बाघके धाकारका होता है।

नरगन्त (सं० पु०) नरगन्त, राजा।

नरगन्त (सं० स्त्री०) नरगन्त ६-तत् । १. पत्नीक पदार्थ, माकाय कुलमादिकी तरह सिन्धवांसु, ३ विर पेरका पदार्थ। २. मेषां-देवीय तात्पर्यनिर्मित नृगयन्त्र-भेद, नेपाल-देवका नरसिंहा नामका वक्ष राजा जो लविका बना होता है।

नरमय (नं० पु०) नरमय धरा, 'राजाधःनखिभ्यटय' इति टच्, समासात् । मनुष्यका सत्ता, मानवबन्धु, नागवध ।

नरमंग (नं० पु०) नरमय मंगलः इति । मनुष्यो-
क्ता मंगलः ।

नरमरोपट—मन्त्राज प्रदेशके पन्तर्गत क्षत्रा जिनके का
एक उपविभाग । इसका क्षेत्रफल ७१२ वर्ग मील है ।

नरसत्त (हि० पु०) नरसत्त देवी ।

नरमादर (नं० पु०) १ नरमाद, नोमादर । २ महायज्ञ
द्रावक ।

नरमार (नं० पु०) नरवत् शरी सारो यत्र । वपिक,
द्रव्यविशेष, नोमादर । पर्याय—हिदन, गोपक, पिण्ड,
मोल, गुम्बरम, रम ।

धौयघादिने इसका व्यवहार होता है । प्रयोग
करते समय यह गोघ लिया जाता । छूनेसे जलमें इसे
पाक कर पीछे यत्तुयक दोलायनकी विधिसे अनुसार
गोधनेमें यह विरुद्ध होता है । निपातक देखो ।

नरमिं (हि० पु०) एक प्रकारका विधायतो फूल ।

नरमिं (हि० पु०) नरमिं देवी ।

नरमिं (हि० पु०) नरमिं देवी ।

नरमिं (हि० पु०) तुरहीकी तरहका एक प्रकारका
बाजा जो जलके आकारका तबिका बना होता है और
झुक कर बजाया जाता है । यह जिस स्थानमें फुक
कर बजाया जाता है, उस स्थान पर बहुत पतला होता
है और उसके आगेका भाग बराबर चौड़ा होता जाता
है । बीचमेंसे इसके दो भाग भी कर लिये जाते हैं और
बजानेके बाद पतला भाग, चलन करके मोटे भागके
अन्दर रखा लिया जाता है । पूर्व समयमें यह बाजा रथ-
चित्रमें व्यवहृत होता था । आजकल यह देहातमें
विवाह आदिमें खसमर पर बजाया जाता है ।

नरमिं (नं० पु०) नरमिं देव, उपमित-कर्मभा ।
१ नरमिं, मिं पादिकुल गन्ध सुखयने योहाय-
मात्रक है ।

नरमिं मिं देव च पाकितयैष । २ विष्णु । इसका
आधा शरीर मनुष्य-सा और आधा मिं-सा था । यह
अवतार भगवान् का चौथा अवतार माना जाता है ।

हिरण्यकशिपुका यह अवतार ले लिए भगवान् विष्णुने यह
रूप धारण किया था ।

इसका विषय हरिश्चन्द्रमें इस प्रकार लिखा है—
मत्तमुग्धं दैत्योके आदिपुत्र हिरण्यकशिपुने कठोर
तपस्या करके ब्रह्मानि यह वर मांगा था, 'हे प्रभो ! मैं
देव, असुर, गन्धर्व, उरग, राक्षस या मानव किसीमें
वध्य न होऊँ । सुनिगम सुमिं ग्राह्य न मरूँ । चण्ड,
गन्ध, गिरिणादय, शृङ्ग और आर्द्रपटार्द्र द्वारा भी मेरा
विनाश न हो और सर्गादि दिग्भी लोकमें, दिन या रात
किसी समय मेरी मृत्यु न हो ।' ब्रह्मानि भी उसे यह
सुखमांगा वर दे दिया । हिरण्यकशिपु इस वरसे प्रभावमें
आनन्द प्रवृत्त हो उठा और स्वर्गलोकका उपयोग ही
कर देवताओंको ज्ञाना प्रकारमें विद्विष्यत और आश्रित
करने लगा । देवगण इस परदाचारको सह न सके और
विष्णुकी गरममें पहुँचे । विष्णुने उन्हें धमयन दे कर
कहा, 'इस बहुत बड़का वर-दणित दानवेन्द्रको मर्त्य
के माघ विनाश करने में ।' इतना कह कर उन्होंने देव-
ताओंको बिदा किया और हिरण्यकशिपु जिस प्रकार
मारा जायगा यह सोचते हुए आप क्षिमाय प्रवृत्त पर
चल दिए । वहाँ उन्होंने देव, दानव और राक्षसोंको
भयावह एक समूह नरसिंहमूर्ति धारण करनेकी
विधारा । उसी समय उनका आधा शरीर मनुष्य-सा
और आधा मिं-सा हो गया । एकमात्र आकार ही
उनका महायज्ञ हुआ । इनमें तेजने सूर्य भी धरा बैठे ।
क्रमशः यह नरसिंहमूर्ति हिरण्यकशिपुके समीप
पहुँची । विष्णुने देखा, कि दानवपति समूह समामें
बैठा हुआ है । देवता, गन्धर्व और असुराये नाच गान
कर रही हैं ।

भगवान् उस समामें पहुँच कर हिरण्यकशिपुको एक
टकसे देखने लगे । इसी समय हिरण्यकशिपुके पुत्र
मन्त्रादने दिव्यचक्षुसे उस भयानक देवमूर्ति को देग कर
अपने पितासे कहा, 'महाराज ! आप देखो' दे प्रभात
है । यह मूर्ति देग कर मायूस पड़ता है, कि यह कोई
पद्मक टिप्प-प्रभाववाली है और इसीमें हम लोगोंका
दोषपूर्ण निन्द होता है । हम महाभावे गरीब मानो
स्वावर्ज्यमानक सभी जगत् विद्वान् हैं, ये कोई
असाधारण सुख कीर्ति ।

दंभुर्जवर्तिने प्रज्ञादकी बात सुन कर अपने भयचर-
को डक दिया, कि तुम लोग इस सिंहको इसी समय
मार डालो। दानवगण प्रबल विक्रमसे उस सिंह पर
टूट पड़े और बातकी बातमें दलबलके साथ नष्ट भी हो
गये। नरसिंहने अपने शरीरको फैला कर घोरतर सिंह
भाद करते हुए देखसभाको क्षिब्ध-भिन्न कर डाला। तब
हिरण्यकशिपु स्वयं उन पर कठिनसे कठिन चर्खोंकी
वर्षा करने लगा। दोनोंमें कुछ देर तक घमसान युद्ध
होता रहा।

दानवोंने था कर विष्णु पर आक्रमण किया, किन्तु
अन्तमें ये सबके सब लड़के तथा डेर ही रहे। इस पर
हिरण्यकशिपु भागवतूला की साल साल पाखें कर सभी
चोजोंकी दाब करने लगा। पृथ्वी ऊँचाडोल हुई, समुद्र
का जल खलबल उठा, सकागन भूधरगण विचलित होने
लगे, सारा संसार तमसाच्छन्न हो गया, कुछ भी नजर
आने न लगा। घोर उपास और भयसूचक वायु बहने
लगे। प्रलयकाशके जितने लक्षण हो सकते, वे सभी
दिखाई देने लगे। सूर्य प्रमादोन और अस्तवर्ण हो
कर भयङ्कर धूमगिठा निकालने लगे। समस्त्यने भी
तिमिरवर्णका आकार धारण कर लिया। आकाशमें
घन घन चक्रोपात होने लगा। तब हिरण्यकशिपु सहा-
क्रोधसे उद्दीप्त हो बाधमें नदा से कर तोषवेगसे दौड़ा।
इस पर अत्यन्त भयभीत हो देवताओंने भगवान् नर-
सिंह देवसे प्रार्थना की, 'देव! दुष्टमति हिरण्यकशिपु-
को भयचरोंके साथ मार डालिए। भावर्षी सिवा दूसरा
मोड़ इस मार नहीं सकता, पनः लोकहितके लिए इने
मार वर त्रिलोकमें शान्ति-प्रदान कीजिये।'।

देवताओंका आर्त्तनाद सुन कर नरसिंहदेव
अत्यन्त भोषण गर्जन करने लगे। इस प्रकार एकमात्र
ओङ्कारकी सहायतासे ये उस दुष्ट देव पर भयपट्टे ओ
उसका पेट उन्कोने नालोंसे फाड़ डाला।

भोषण इव, दानवेन्द्र हिरण्यकशिपुके मारे जाने पर
पृथ्वी, पृथ्वीके सभी मनुष्य, चन्द्र-सूर्य, यदन्तवादि और
नदी गैलादि सभी फुले न समायें। देवगण नरसिंह
देवकी स्तुति करने लगे, चण्डार्ये नाच गान करने लगे।
इसके बाद गन्धर्वाज नारायणने नरसिंह रूपका परिचाय

कर अपनी मूर्ति धारण की और सो और सटचक्र तथा
अत्यन्त प्रदीप्त भूतवाहन रथ पर चढ़ कर चोरोद सागरके
उत्तरोर किनारे, जहाँ उनका स्थान था, चल दिये।

(हरिवंश ३०-३८ म०)

श्रीमद्भागवतमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—
हिरण्यकशिपु प्रज्ञासे घर था कर बहुत प्रदीप्त हो
उठे। पौछे खर्गादि राज्योंकी जीत कर उन्कोने स्वयं
इन्द्रत्व ग्रहण किया। हिरण्यकशिपुने चार पुत्र थे, जिनमें
से प्रज्ञाद परम धार्मिक और विष्णुभक्ति-परायण था।
शक्राचार्य दानवोंके पुरोहित थे। उनके पुत्र नैतिकुमल
सुपण्डित पण्ड और अमार्कन दैत्य मुनेको विद्या-विद्या-
का भार लिया था। प्रज्ञाद भी उन्कोने निकट पढ़ने
लगा। हिरण्यकशिपु आष्टवधके कारण विष्णुसे डरनेवा
हो गइता था।

दैत्यराजने एक समय सब लड़कोंकी जांचनेके
लिए सभास्थलमें बुलाया। जब प्रज्ञादसे प्रश्न किया गया,
तब उसने विष्णुके गुण-कीर्तनके सिवा और कुछ भी न
कहा। इस पर हिरण्यकशिपु बहुत विगड़। लेकिन
प्रज्ञादने हरिकीर्तन न छोड़ा, बल्कि बड़ धीरे धीरे
और लड़कोंभी अपने मतमें लाने लगा। इस कारण
हिरण्यकशिपुने प्रज्ञादको बहुत संताया, लेकिन प्रज्ञाद-
का बात भी बाँका न हो सका। प्रज्ञाद देखो।

जब दूसरे दूसरे लड़के भी प्रज्ञादके साथ मिल कर
विष्णुभक्त हो गये, तब हिरण्यकशिपुने एक दिन बहुत
क्रुपित हो कर प्रज्ञादसे पूछा, 'तुम, 'रे मुड़। निरंक्रोध करनेमें
विशुद्धन काय उठता है और तुमिर्भय हो कर मेरे विरुद्ध
चल रहा है, अतो बतला, तू किसके वन कूदता है?'
इस पर प्रज्ञादने कहा, 'राजन्! वह भगवान् केवल मेरा
ही वन नहीं है, बल्कि पापका और चराचर-जगत्का;
यहाँ तक कि प्रज्ञादि देवताओंका भी वन है। उन्कोके
बल पर सभी कूदते हैं। क्यों कि वे ही ईश्वर हैं, वे ही
कोश हैं, उनका पराक्रम पथीर है। प्रज्ञादका सिद्धा
अपन सुन कर हिरण्यकशिपु अत्यन्त क्रुपित हो बोला,
'रे दुष्ट'। तू बार बार ईश्वर ईश्वर करके मेरो पक्षपा
कर रहा है, तैरा ईश्वर कहाँ है, अभी जल्दी बोल।'
प्रज्ञादने कहा, 'ईश्वर सर्वत्र विराजमान है। इस पर

देवराज दत्त दीने कर पावे। जोस सोस कर बोला,
 'यदि मेरा ईश्वर सबेरे निधमान है, तो क्या इस स्थिति
 भी है?' प्रजापति ज्ञातार्थी हो उत्तर दिया, 'भवम्'।
 इस पर हिरण्यकशिपु ज्ञायमें प्रसन्न हो कर बार बार उस
 लक्ष्मी को रस्य करने लगा और बहुत बीरसे उसमें
 मुट्टि प्रहार किया। इसी समय उस लक्ष्मी ने एक भयानक
 शब्द निकला। यह शब्द सुनते ही देवराजका हृदय
 मानो कांपने लगा। शब्दसे नरसिंह-मूर्ति को निकलने
 देस हिरण्यकशिपु पाषाणान्वित हो बोला, 'बहो, कैसा
 पापयुक्त रूप! यह सिंह भी नहीं है और न मनुष्य हो
 है, जो न हो वह अवश्य सिंह-मूर्ति है।' हिरण्यकशिपु
 ऐसा सोच कर रहा था, कि इसी बीच नरसिंह-रूपी हरि
 उस स्थिति निकल पड़े। उसको पावे। तत्कालावधि
 तरह विग्रहबन्धी थीं, वदन देदीप्यमान था और जटा
 ध्रुव लम्बी थी। इनका शरीर लक्ष्मी था, पीला छोटी
 पर मोटी थी, वस्त्राभूषण विग्रह था और सभी जाचून
 पञ्चमे समाप्त तेज थे। इस अवतार बोले।

ऐसा रूप देख कर हिरण्यकशिपु ताने मार कर
 बोलने लगा। भगवान् नरसिंह देवने देवराज हिरण्य-
 कशिपुकी पकड़ कर भरी सभामें अपनी जगह पर से
 लिहा और तेज नाखूनोंसे उसका पेट काट डाला।

इस प्रकार नरसिंहदेवने पशुचरीने साथ हिरण्य-
 कशिपुके सारे जाने पर त्रिभुवन भ्रान्त हुआ तथा सभी
 और प्रसन्नता जा गई। तब नरसिंहदेवने श्रेष्ठ सिंहासन
 पर बैठे। जहाँ पावे सभी देवगण उसकी श्रुति करने
 लगे, 'भवम्'। इस सींगोंसे सभी लक्षिकार देखीं
 बिनट कर लाले हैं, सभी इस सींगोंको बहा करना
 चाहते हैं। जयदा बतला दे।' इसी वार्ता की देवताओंमें
 कही थीं, वह दूरसे ही रह कर, नजदोक जानेका किछी-
 का साहस नहीं होता था। बाद उन्होंने श्रीको नरसिंह
 देवसे पास मेला, किन्तु श्री भी वहाँ जान नहीं। उन
 बाद ज्ञानसे कहनेसे प्रज्ञाद उनसे पास गया और श्रुति
 करने लगा। इस पर भगवान् का श्रोत्र भ्रान्त हुआ और
 प्रज्ञादकी गर दे कर चलाईत हो गये।

भागवत ७।१-१० अ० ६०।

विष्णुपुराणके १।१०-२१ पञ्चायमें भी प्रज्ञादका,

नारायणकी मूर्ति-मूर्ति धारण करनेका
 हिरण्यकशिपुके सारे जानेका पूरा विवरण
 प्रायः सभी पुराणोंमें नरसिंहावतारका
 बहुत वर्णित है।

नरसिंह—यूएनपुत्रके भारत-उत्तमानमें जिन
 का उल्लेख है, उनमेंसे पञ्चायके नरसिंह
 उल्लेख देवनेमें पाता है। यूएनपुत्र
 धागे तक छोटे हुए इस नगरमें पाये थे।
 ८ मोल दक्षिण, पश्चिमसे २५ मोल पूर्व
 जाओरसे भी २५ मोल पश्चिममें रगसे
 ही कनिं हम इसी नरसिंह नगरका
 मानते हैं। यहाँ दक्षिण-पूर्वमें ६ नगर
 पश्चिममें ५०० फुट विस्तृत और ११ मासिक
 ईंटों का स्तूप पड़ा है। मोरान न चने घो
 निकट माचीन सुदादि पाया गयावर दे कर
 पर्याप्त हो गज सब्जे देहधारी नवेन्द्रकी गण
 नरसिंह—कनाडो भाषामें मार उभोंने देव-
 कवि पम्पके प्रतिपादक चालुक्य किस प्रकार
 ईंटों पुदयमें नरसिंहका नाम दृश्यत पर
 चालुक्यराज गुहमजसे पोत्र थे। बाद में
 नरसिंह—१ चानन्दनपुरीके एक टीकाकार
 धेदिकसिंहान-प्रयेता। २ गुणरत्नाकरके
 प्रकाशकके प्रयेता। ३ पारिजातके रचयिता। ४
 चम्पूके टीकाकार। ५ वासन्तिका-नरिषयके
 ८ श्रीनिवास-रचित शिवभक्तिविज्ञानके
 काव्यादग सुकावलीके प्रयेता। इनके पिताका
 घर, पितामहका कण्ठयमी, प्रपितामहका
 हस्तपितामहका नाम श्रीशंकर था। १०
 प्रयेता। इनके पिताका नाम रामचन्द्र था। ११
 प्रकाशिकाके प्रयेता। इनके पिताका नाम वरदाय
 नरसिंह—विजयनगरके नरसिंह-मोय एक
 कर्पू-नराज ईश्वरके पुत्र थे। ये ही प्रथम नरसिंह
 'नरसिंह' और नरसिंह यवनीपाल नामसे प्रसिद्ध थे।
 १५८ ई०में ये वरमान थे। इनके दो
 पिताश्रीदेवी और मागपादेवी। मागपादेवी
 नरसिंह नामसे मयूर हो।

नरसिंह—मिथिलाके राजा। ये कवि विद्योपति प्रति-
पालक राजा नरसिंह, रूपनारायणके पित्रव्य-पुत्र थे।
नरसिंहके बाद राजा पद्मावती, राजा सखीदेवी और
राजा विद्यासदेवोंने राज्य किया। पोछे १४०३ ई०में ये
राजा हुए।

नरसिंह या नरसा रेखि—कायें टीनगर नामक जमींदारी-
के स्थापनकर्ता। प्यारहवीं शताब्दीमें प्रायः चालुक्य-
वंशीय राजा विमसादित्यने (१०१६-१०२१ ई०में)
इन्हें तिरुपति प्रदेशका शासनकर्ता बनाया। वहाँ
इन्होंने अपने नाम पर नरसापुर नामक एक नगर
बसाया। इनका आदिवास गोदावरी तीरस्थ पिडापुर
नगरमें था। ये शास्त्रवंशीय थे। इनका पूरा नाम शास्त्र-
नरसा रेखि था। १०२१ ई०में ये प्रथम सरदार माने
गये लगे।

इनके वंशके ७ सरदारोंका विवरण मिलता है।
नरसा रेखिके बाद जो विपयाधिकारी हुए उनके
नका पता नहीं चलता। पोछे शास्त्र वैद्यपति
पद, बोल राजाओंसे अधिकार प्राप्त हुए। किन्तु
उनके पुत्र शास्त्र भीम, नायडूने पैत्रिक सम्पत्ति पुनः
वापिस कर ली। इनके पुत्र शास्त्र नरसिंह नायडू
भारत पराजित थे। चेरराज कौत्तिवर्माकी किसी
समय इन्होंने घेष्ट सहायता की थी, किन्तु इस प्रत्युप-
कारके बदले सन्धीमें इनके राज्य पर चढ़ाई कर दी।
युद्धमें शास्त्र भीमकी जीत हुई और इन्होंने स्वाधिनता
बनसम्भन कर बहुत विचक्षणतासे ३५ वर्ष तक राज्य
किया। इनके पुत्र शास्त्र भुजङ्ग नायडूने पाश्चात्य चालुक्य
वंशीय राजा भीमेश्वरसे परास्त हो कर उनको अधीनता
स्वीकार कर ली।

राजा सोमेश्वरने शास्त्रभुजङ्गकी कन्याएँ नगरमें
कैद कर रखा और वहाँ पर उनकी श्रुत्य भी हुई।
इनके बाद ही राजाओंके नाम नहीं मिलते। पश्चिम
राजाने पैत्रिक सम्पत्ति खार की। १२३० ई०में सोल-
राज द्वितीय शालराजने इस वंशके राज्यको अपने
अधिकारप्राप्त कर केवल २४ ग्राम उनके लिये छोड़
दिये। पोछे चोलराज्यके अधःपतनके समय १११४
ई०में इस वंशका पुनः प्रभुत्व हुआ। खोफाजीडू

रेखिवंशके प्रथम पुरुष प्रलय रेखि इस समय शास्त्र
सरदारोंके जामाना हुए। इसके अनन्तर यह वंश पुनः
विजयनगरके अधीन हुआ। गेहिंमखराज और खोप्प
राजु नामक दो चविय भाइयोंने इस राज्यको सोमा पर
उके तोके एक दलको भेज कर छापा था। पोछे शास्त्र
सरदारोंने उन्हें अपने राज्यमें पात्रय दिया। क्रमशः
मखराज प्रधान मंत्री हुए और अपुत्रक राजाके मरने
पर राजा भी सती हो गई। बाद मखराज ही राजा
बन बैठे। उन्हींका वंश अभी वर्तमान है।

नरसिंह भस्मिचित् वाग्देवी—मिथ्याचारप्रदीपके प्रणेता।
नरसिंह पाचार्य—१ कनारीय नामक धर्मशास्त्रके प्रणेता।
२ सम्भविजयके टीकाकार। ३ त्रिमुद्राविसास नामक
तान्त्रिक ग्रन्थके प्रणेता। ये नृसिंह नामसे भी मशहूर
थे।

नरसिंहकवि—१ नक्षत्रालयशोभूपणके प्रणेता। २ वर्ण-
फल नामक ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता।

नरसिंह कविराज—समुद्रमते नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता।
ये नीलकण्ठभट्टके पुत्र, रामकृष्ण भट्टके मित्र और विद्या-
चिन्तामणिके शुरु थे।

नरसिंहस्वर (सं० पु०) वैद्यकके अनुसार एक प्रकार-
का स्वर। यह स्वर चोथिया या चातुर्थिका सङ्गता
है और तीन दिन तक चढ़ा रहता है। चौथे दिन वह
उतरता है और फिर वही क्रम चलता है।

नरसिंहठकुर—१ तारापञ्चाङ्ग, तारामन्त्रिपञ्चाङ्ग और
महाविद्याप्रकरण नामक तान्त्रिक ग्रन्थके प्रणेता। २
प्रमाणपञ्च नामक धर्मशास्त्रके रचयिता।

नरसिंहदयाल—एक हिन्दी-कवि। इन्होंने सं० १८००के
पूर्व बहुत सी कविताएँ रचना की। इनके पद राग-
सागरोद्भवमें पाये जाते हैं।

नरसिंहदेव—मिथिलाके राजा। इन्होंने राजपट्टित
रामेश्वरदेवकी कन्या घोरमतिदेवीसे विवाह किया
था। राजा घोरमति विदुषी थी। धर्मार्थ दानके विषयमें
रानोंने दानवाक्यावली नामक सुप्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकी
रचना की।

नरसिंहदेव—नेपालके एक राजा। ये शकुन्तीवंशके
द्वितीय शाह्यके ५वें राजा थे। इनके पिताका नाम

मानवदेव था। १४०३ ई० वर्ष राज्य किया। पीछे इनके महुके बहूदेव राजा हुए। नेरज देखो।

नरसिंहदेव—१ नरसिंहदेव चण्डगर्भ-संगोय एक राजा। २ विजयनगरके एक राजा। इन्होंने विजयनगरके नरसिंहवंशको स्थापित कर दिया। १४८० ई० में ये राज्य करने लगे।

नरसिंहदेव—उत्कलमें इस नामके बनेक राजाओंने राज्य किया। गिरीनिधि चोर ताम्रशासन पट्टमेंसे जाना जाता है कि चण्डगर्भोय १३ नरसिंहने तुषानगरीको जीत कर गोलुनगरके तोरण-हार तथा धावा मारा था। कनारकका जगद्विद्यात सुयंमन्दिर इन्हींकी कीर्ति है। गोविन्द चौर कोनाई देखो।

नरसिंहदेव—मैदाधिकारम्यक्षारनिकुण्य नामक ग्वाय घन्टके प्रतीति।

नरसिंहनायक—पाण्डुरंगगंभी एक राजा। इन्होंने विजयनगरके राजा प्रथम नरसिंहके हाथमें पाण्डुराज्यका सत्कार कर १४८८ ई० से कर १५०८ ई० तक राज्य किया। इनके बाद तैलनायक (१५००-१५११) चौर तैलनायकके बाद नरसिंह (१५११-१५१८ ई०) राजा हुए। इनके समयकी उत्कीर्ण सिधिये जान पड़ता है कि नरसिंह विजयनगरके राजा छप्पदेवरायके भ्राता थे।

नरसिंहपण्डित—“दोषिकाप्रकाश” नामक दार्शनिक घन्टके प्रतीति। वैशेषिक दर्शनका तर्कसंग्रह नामका एक ग्रन्थ है, जिसकी दोषिका नामकी एक टीकाकी पाक्षीचना चौर व्याख्या करके नरसिंह पण्डितने दोषिका-प्रकाशकी रचना की है। ये राधनरसिंह पण्डित नामके भी प्रसिद्ध थे।

नरसिंहपट्टायमिन्—बहैतरोतिके प्रतीति।

नरसिंहपुर—मध्यप्रदेशके नरुद विभागका एक जिला। यह पचा० २२° १०' चौर २१° १५' उ० तथा देशा० ८०° २०' चौर ८८° ३०' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८०१ वर्ग मील है। इनके उत्तर भूपाल राज्य, सागर, रमोड चौर अन्तर्पुर जिला, पूर्वमें सिन्धु नदी चौर अन्तर्पुर, दक्षिणमें हिन्दवाहा चौर पश्चिममें हीमडवाहा तथा दुधो नदी हैं। यह नदी नरसिंहपुरको हीमडवाहा सिन्धु नदी तक बहती है। समुद्रा जिला नर्मदा नदीके

दक्षिणमें बहता है। यहाँ बनेक नदियाँ बहती हैं, यदा, नर्मदा, मीर, गङ्गा, माचारीवा, वितारीवा, दुधो चौर मोनर। ये सभी नदियाँ मत्तपुरा पहाड़में निकली हैं। इनके पलावा चिरन चौर सिन्धु नदियाँ उत्तरसे आ कर नर्मदा में मिल गई हैं।

यहाँका जङ्गल उतना घना चौर विस्तीर्ण नहीं है, पर तो मो बाय, चीता, सांभर चौर मोलगाय घघेट मिलती हैं। चावइया घन्ट तथा स्थापत्य है। वार्षिक उष्टिपात ५१-५४ है।

गडमण्डल संगोय ४८८ ई० राजा सदासिंहने यह स्थान अपने राज्यमें मिला लिया था। चौरागढ़ दुर्ग उत्कीर्ण बनाया हुआ है। १५४४ ई० में रामो दुर्गावतीचौ पराजय चौर मृत्युके बाद चावइया चौर चौरागढ़ पर आक्रमण कर वहाँसे प्रभु राय सुद्धा चौर बायीं लूट ले गये थे। १५८३ ई० में जब युद्धारविने इस दुर्ग पर आक्रमण किया, तब प्रेम नारायणने कई मान तक दुर्गकी बचाये रखा था। १६०२ ई० में मोराजी नामक सागरके महागङ्गोय शासनकर्त्ता इसे जीत कर अपने दखनमें लाये। पीछे १० वर्ष तक यह उत्कीर्ण हाथमें रहा। उसी समय उत्तरसे बनेक हिन्दू आ कर यहाँ रहने लगे। मोरला राजाओंने पुनः महागङ्गो की बचाये निकाल बाहर किया। १८१८ ई० में यह चंगरेजीके शासनार्थमें हुआ। किसी समय विण्कारियोंका यहाँ खूब प्रादुर्भाव था।

१६ जिलेमें १ गहर चौर ८११ ग्राम संगत हैं। लोकसंख्या लगभग ३१५११८ है। जिनमेंसे ब्राह्मण, राजपूत चौर बनियेकी संख्या सबसे अधिक है। गिह, धान, ईन्ध, कोदों चौर कई बहाके प्रधान उत्पाद हुए हैं। घी, तिलहन, चमड़ा चौर इन्हींको दूर दूर दिगों में रफ्तारो होता तथा दूध, मक्का, पीनो, मछीका तेल, तमाकू, गुड़ चौर चायकी आरम्भकी चीनी है। घंट उष्टिपन-पनिमसुता रेलवे जिलेके मध्य हो कर दोड़ गई है। यहाँ बड़ी महुबकी सम्बाई ८८ मील चौर कको १३५ मील है।

राजकार्यको सुविधाके लिये यह जिला दो तहसीलों में विभक्त है। हरद्वार तहसील तहसीलदार चौर

नायब तहसीलदारके अधीन है। नरसिंहपुर और गादर-बाड़ा ये दो नगर इस जिलेके प्रधान वाणिज्य स्थान हैं। नर्मदा नदीके किनारे बर्मन-घाट नामक स्थानमें शीतकालमें एक बड़ा मेला लगता है। विचलोके पीतल-काशिका वरतन, गादरबाड़ेका एक प्रकारका सूतो कपड़ा और नरसिंहपुरका तसर इस जिलेका प्रधान शिल्प-जात द्रव्य है। मोहपानीमें कीयला और नर्मदाके उत्तर तटुखिरा नामक स्थानमें उष्ण जल मिलता है।

जिले भरमें ७ चिकित्सालय, २ अस्पताल और ६ वर्ना-क्लब्स स्कूल और ८३ प्राइमरी स्कूल हैं।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील यह भूभाग २२° ३०' और २३° १३' उ० तथा देशा० ७८° १' और ७८° ३८' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११०६ वर्गमील और लोकसंख्या १५८७३८ है। इसमें नरसिंहपुर और जिल्द-बाड़ा नामके दो शहर तथा ३२१ ग्राम लगते हैं।

१ नरसिंहपुर तहसीलका एक शहर। यह भूभाग २२° ५०' उ० और देशा० ७८° ११' पू० के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या ११२३३६ लगभग है। पहले इस शहरका नाम गदरिया-खेरा था। योहे नरसिंहदेवका एक मन्दिर तैयार हो जानेसे यह नरसिंहपुर कहलाने लगा है। १८६७ ई०में यहाँ म्युनिसिपलिटी स्थापित हुई है। शहरमें एक जल्लास, एक मिडिल इङ्ग्लिश स्कूल तथा और दूसरे दूसरे स्कूल एवं तीन चिकित्सालय हैं।

४ पूना जिलेके उत्तर-पूर्व प्रान्तमें मोमा और नीरा नदीके बहम स्थल पर स्थापित एक नगर। यहाँ ओ-ल्लमोनरसिंहका एक मन्दिर है। मन्दिरकी सोपान-अधी नदीके गर्भ तक चली गई है। मन्दिर चटकोपी है और काले पत्थरसे बना हुआ है। इसकी चूड़ा खण्ड मण्डित और प्रायः ४६ हाथ लंबी है। वंशाख भासको यक्षा चतुर्दशीकी यहाँ दो दिन तक मेला लगता है जिसमें पार हजारसे अधिक मनुष्य समागम होते हैं।

५ उड़ीसाका एक दीर्घ राज्य। यह भूभाग २०° २२' और २०° ३०' उ० तथा देशा० ८४° ५' और ८५° १०' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८८८ वर्गमील और लोकसंख्या ३८६१३ है। इसमें १८२ ग्राम लगते हैं।

जिनमें कानपुर सबसे प्रसिद्ध है। उत्तरकी पराजित पर्वतश्रेणी इसे चङ्गल और हिन्दोलसे घृत्य करती है इसके पूर्वमें बहुखा, दक्षिण और दक्षिण-पश्चिममें महा-नदी तथा पश्चिममें बङ्गाल है। लगभग १६वीं शताब्दीमें धर्मसिंह नामक राजपूतने इस नगरको बसाया था। राजस ६६००० रु० का है जिनमें १४५० रु० हटिम गवर्नमें एण्टी करस्वरूप देने पड़ते हैं। यहाँ एक मिडिल वर्नाक्लब स्कूल, एक अपर स्कूल और ३६ और प्राथमारी स्कूल तथा एक दातय चिकित्सालय है।

नरसिंहपुराण (सं० श्लो०) नरसिंहोपवर्णनात्मकं पुराणं । उपपुराणमेदं । मत्स्यपुराणमें इस उपपुराणका उल्लेख देखनेमें आता है। इसमें कुल १८०० श्लोक हैं जिनमें नरसिंहका विषय वर्णित है।

जिन सब विषयोंका इसमें वर्णन किया गया है वे ये हैं—प्रथम अध्यायमें महात्माचरण, भरद्वाज ऋषीर प्रधान तत्त्वादि; २य अध्यायमें युगादि परिमाण; ३य अध्यायमें सृष्टिविवरण; ४वें अध्यायमें पशुसृष्टिकथन; ५म अध्यायमें वृद्धसर्ग; ६म अध्यायमें मित्रावरुणके औरस-से अमृत और वसिष्ठकी उत्पत्ति; ७म अध्यायमें मार्कण्डेयकी सृष्टिविजय और नारकियोंका उद्धार; ८म अध्यायमें मार्कण्डेयके प्रति नारायणकी प्रसन्नता; ९म अध्यायमें मार्कण्डेयका विष्णुस्तोत्र; १०म अध्यायमें मार्कण्डेयका नारायण-दर्शन; ११वें अध्यायमें यम और यम्रीका उवाचन; १२वें अध्यायमें ब्रह्मचारी और पति-व्रत-सम्वाद; १३वें अध्यायमें संसारतृष्णा लक्ष्य और नारायणमन्त्र; १४वें अध्यायमें दोनों पक्षिणकुमारकी उत्पत्ति; १५वें अध्यायमें मरुहणको उत्पत्ति; १६वें अध्यायमें राजाभोका वंश-विवरण; १७वें अध्यायमें मन्त्र-कथन; १८वें अध्यायमें वंशावृत्तित और इक्ष्वाकु विवरण; १९वें अध्यायमें विनायकस्तव; २०वें अध्यायमें सोमवंशावृत्तित और निर्मात्यनहनका फल; २१वें अध्यायमें भूगोलविवरण; २२वें अध्यायमें सहस्रानौक-वर्तित; २३वें अध्यायमें हरिकी अवर्णन; २४वें अध्यायमें कोटिहोमविधि; २५वें अध्यायमें विष्णुका अमृतार कथन; २६वें अध्यायमें मत्स्यावतार वर्णन; २७वें अध्याय-

में कुमावतारवर्षण, १८८६ पञ्चायमें वराह-चवतार-
चवत। १८८६ पञ्चायमें नरसिंह चवतार पौर प्रकाट
पति; १८८६ पञ्चायमें मामलावतार; १८८६ पञ्चायमें
जामदग्न्यावतार; १८८६ पञ्चायमें वसरावतार पौर लक्ष्मका
चवतार; १८८६ पञ्चायमें कस्तुरि-चवतार; १८८६ पञ्चायमें
दक्षका पञ्चिनाभ; १८८६ पञ्चायमें विष्णुमन्दिर-प्रतिष्ठा;
१८८६ पञ्चायमें नरसिंह भक्तोका लक्ष्म पौर पुष्पवरा-
धवाय; १८८६ पञ्चायमें ब्राह्मण-धर्म; १८८६ पञ्चायमें
कतिष्ठ, धौत पौर गुरु-धर्म; १८८६ पञ्चायमें मद्रक्षर्या-
यम-चवत; १८८६ पञ्चायमें क्षानप्रत्य-धर्मलघन; १८८६
पञ्चायमें यति धर्म; १८८६ पञ्चायमें पाकनाभ; १८८६
पञ्चायमें विष्णुको चर्चमा-विधि; १८८६ पञ्चायमें विष्णु
पूजाकी आचारण विधि; १८८६ पञ्चायमें गुह्यदेव पौर
तनके स्थानकी नामायनो; १८८६ पञ्चायमें पुष्पमय
भूमिक तीर्थकथन; १८८६ पञ्चायमें मानसिक तीर्थ-
विचारण वर्णित है। इन सब वर्णन-प्रसङ्गमें पौर भी
चनेक विषयोंका वर्णन किया है।

नरसिंह चोतवर्मन्—काचिपुरके एक धनव-वर्ग्रीय
राजा।

नरसिंहमह—ए यलुवेंदविनामयिके प्रवेता। १ घटैत-
वास्त्रिकाभेदाधिकारटोकाके प्रवेता। ये रघुनाथमहके
पुत्र, रामचन्द्रायम पौर नानेधरके गिण थे। इन्हींने
निष्पत्ती-वर्ग्रीय राजा जगन्नाथके कहनेसे उक्त पुस्तककी
रचना की।

नरसिंह भूपति—धननाद प्रदेशके एक राजा। लोग इन्हें
काचिचोयागुनके वर्गस्था वतनाते हैं। धानमावपुत्रम्
नामक स्थानमें हम वर्गके राजाओंको राजधानी थी।

नरसिंहमित्र—चतुर्वेदनात्यर्थ वर्गके प्रवेता।

नरसिंहमूर्तिदान (सं० क्रो०) काचिकापुराणोक्त दान-
मैद। इसमें वर्षादि द्वारा नरसिंहको मूर्ति बना कर
दान करते हैं। ईसापूर्वके दानपण्डमें इसका विषय हम
प्रकार लिखा है—

जोमे या चादीही चतुर्भुज मूर्ति बनाये। इसमें
हात चादीके, पाँखें धातुके मणिको, कण्ठ विद्रुमके,
भूदेम पुष्पराग मणिके पौर दोनों कान सोहरे के हों।
बाद सबे नाममात्रमें रख कर प्रतिगुरुवर्ष दान करें।

विष्णुधर्मोत्तरमें इसका विधान इस प्रकार लिखा है—
मगवान् विष्णुको नरसिंहमूर्ति कोमे या चादीको
हो। मूर्तिको पण्डितदेव योगः कटि, पीडा पौर मूत्र
त्रय है, यह ओम मन्त्र पढ़न कर तथा मन्त्र प्रकाश
चामुण्यको विष्णुपति को सिंहासन पर बैठी हुई है।
पण्डित गणोंके हिरण्यकशिपुका वस्त्रावच्छिन्न विदारण कर
रही है। ऊपरके दोनों हाथोंमें शङ्ख-पौर चक्र है।
देवगण हिरण्यकशिपुके चतुर्गुण को कर रखे हैं।
इसो प्रकार नरसिंहमूर्ति वर्षादि द्वारा बना कर सब
पादको मधु पौर पाण्डित्यमें भर देते हैं। तदनंतर मन्त्र,
पुष्प, धूप, दीप पौर विभिन्न नैवेद्यादि द्वारा यथाविधि
उम मूर्तिकी वैष्णव मन्त्रसे पूजा करते हैं। मूर्तिदान-
के समय चठइत्तर को तिसाण्ड होम करना होता है।
कार्तिक चवमा वैशाख मासको पूर्णिमा या श्रावदी
तिथिको इसका अनुष्ठान करना उचित है। जो इस
प्रकार अनुष्ठान करते हैं, उन्हें चरक पादि बिशेष
स्थानमें भय नहीं रहता है तथा ये चनेक प्रकारके सुख
लभ करते हैं पौर चतको विष्णुपद पाते हैं।

(विष्णुधर्मोत्तर)

नरसिंहमुनि—महोत्तमवर्षक पौर भेदाधिकारतत्त्वविदे-
चना नामक धर्मके प्रवेता।

नरसिंहयति—विद्याधोमनायके मित्र। इन्होंने पाचवें
चोपनिषद्पण्डितप्रकाश, ऐतरेयोपनिषद्पण्डितप्रकाश
पौर जयतोयुक्त तत्त्वोद्योतविमरवर्गी मन्त्रप्रवीण
नामक टीका बनाई है।

नरसिंहयतोन्—न्यायतत्त्व-विमरवर्षके प्रवेता।

नरसिंहराज—सर्वार्थसिद्धिके टोकाकार।

नरसिंहराय—शैलगाँव निसेके बतनागन बदासीननरके
पहाड़ पर धामनबसोटीटो (बाबाब चर्वत दुर्ग) पौर
रचमण्डलकोटो (गुह्यदेवदुर्ग) नामक दो स्थान हैं।
नरसिंहराय नामक एक सन्त ब्राह्मणने बहुतसी चरनी
सेनाओंकी साथ से १८८१ ई०में ये दोनों दुर्ग (बदासीन)
पण्डित पण्डितारमें कर लिये थे। बाद शैलगाँवमें चर्वत जो
शैलनिजा कर लगे हैं फिर जागिन कर लिया।

नरसिंहराय—महिषदुरके पण्डितधर्म आरहनों बतनागोको
चर्वमण्डलनाम नामक एक विष्णुनाम शङ्खवर्ष-राज्य

करता था। 'ये लोग देवगिरिके यादववंशके थे।

हनुमाल बहाल देखो।

इस वंशके जितने प्रामाणिक राजाओंके नाम पाये गये हैं, उनसे ज्ञात होता है, कि इस वंशमें प्रथम विख्यात राजा विनयादित्य १म विभुवनमल्लके चषस्तन छनौय, ५म और ७म पुत्रयमें नरसिंह नामके तीन राजा हुए थे। १म नरसिंह औरनरसिंह और विजयनरसिंह नामसे भी मशहूर थे। एषल देवीसे इनका विवाह हुआ था। इन्होंने ११४२ ई० से ११८१ ई० तक राज्य किया। बहुतेरोंका मत है, कि इन्होंने जो यादवोंको विख्यात राजधानी हारसमुद्र (आधुनिक हलीबिहूर) बनाई थी।

२य नरसिंह १म नरसिंहके पौत्र थे। इन्हें भी लोग औरनरसिंह कहते थे। देवगिरिके यादवोंसे युद्धमें परास्त हो कर ये अपने अपने राज्यों छोड़ बैठे थे। १२२३ ई०में ये राजसिंहासन पर अधिष्ठित हुए। इनके समयकी प्रतीक चत्वार्य लिपियाँ मिलती हैं। ३य नरसिंह २य नरसिंहके पौत्र थे और हारसमुद्रनगरमें राज्य करते थे। १२५४ ई०से लेकर १२८५ ई०के मध्य चत्वार्य इनके समयकी प्रतीक लिपियाँ पाई गई हैं। इनके वंशमें रायकी उपाधि भी थी। हारसमुद्र देखो।

नरसिंह बाजपेयी—आमोग और वेदान्तकल्पतरुपरिमल-खण्डन नामक ग्रन्थके रचयिता।

नरसिंह विष्णु—इनका दूसरा नाम नरसिंहपोतवर्मन् था। नरसिंहपोतवर्मन् देखो।

नरसिंहमाधवी—१ न्यायप्रकाशिका और न्यायसिद्धान्त-सूत्रावलीकी प्रमा नामक टीकाके प्रणेता। २ जातक-शिरोमणिके प्रणेता।

नरसिंहमिश्रा—हिमालयतोयमालाके मध्य बदरीचैत्यके अन्तर्गत भारद्वाज प्रधान चैत्योंमेंसे एक। बदरीनाथ देखो।

नरसिंहसेन—१ वासवदत्ताके एक टीकाकार। ये वैद्य थे। २ पद्याप्यव्यवस्थिके प्रणेता विष्णुनाथसेनके पिता-मह।

नरसिंह सरि—सरमञ्जरीके प्रणेता। ये ब्रह्मचार्यके पुत्र थे। लोग इन्हें 'सरि' सरि भी कहा करते थे।

नरसिंह—जुनागढ़निवासी एक भगवद्भक्त। ये काम

धन्वा कुक्ष भी नहीं करते थे, रात दिन भगवद्भक्तिमें मग्न रहते थे। एक दिन इनकी भाभी इन पर बहुत भिड़की और कहो 'ये कुक्ष कामाख्याकी कथा। भाभीको लगती बातोंसे इन्हें इतना दुःख हुआ कि इन्होंने पाषाणोंमें करनेका सङ्कल्प कर लिया। इन्हीं उद्देश्यसे एक दिन ये किसी एक निविद्ध वनमें चले गये। वहाँ जा कर इन्होंने अपने सामने एक मन्दिरको देखा और उसी मन्दिरके प्राङ्गणमें बैठे खड़े रहे। ऐसे पवित्र आश्रयमें इन्हें 'पंथक भवस्थामें देख स्वयं शिवजी इनके सामने प्रकट हो बोले, 'महा! मैं महादेव हूँ, तुम्हें धर देने पाया हूँ; अभी जो चाहो सो कर मांगो।' इस पर नरसिंह कहें, 'देव! मैं अच्छा बुरा कुक्ष भी नहीं जानता, मैं 'सार' मैं जो छल्ला बसू है, वही सुम्ति देनेको छपा करे।' यह सुन कर महादेव इन्हें उपावनको ले गये और वे दोनों 'श्रीलक्ष्मण'के सामने उपस्थित हुए। इस प्रकार शिवजी इन्हें जगत्का साररत्न लक्ष्मणसे भर्पूर कर पंक्त, हित हो गये। इस अनुभव रखकी पा कर नरसिंह 'आत्म-भोला' हो गये और सदा 'श्रीलक्ष्मण'के प्रेममें लयमग्न रहने लगे। कुछ दिन बाद जब ये देवको लौटे, तब सब कोई इन्हें पागल समझ कर उपहास करने लगे।

एक दिन किसी परम वैष्णवको 'हारका' जानकी इच्छा हुई। चोरके डरसे उसने मजदूर एक को रुपये किसी महाजनके पास जमा कर दिये और उसमें से छतने रुपयेकी एक छल्ली मांगी। हारकोमें महाजनका कोई परिचित मनुष्य था जो बोले 'कि वह छल्ली देना, इस कारण उसने ताने मार कर कहा, 'तुम नरसिंहके पास जाओ, वही तुम्हें छल्ली दे देगा।'

वह साधु वैष्णव उसकी बातों पर विस्मय कर गरुजके पास गया और बहुत विनोत भावसे बोला, 'महाजन! यदि पाय मेरे इस रुपयेकी अपने पास रख कर इसके बदले हारकावासे किसी महाजनके नामसे एक छल्ली दे, तो मैं लक्ष्मणदर्म कर सकता हूँ, पंथका नहीं।' नरसिंह हरिममें सेन्ये थे। वे साधुकी बातें सुन कर सोचने लगे, जगत्के 'ये' महाजन हरि हैं। वे सचमुच हारकामें रहते हैं और सुम्ति भी पड़वाते हैं। मालम पड़ता है कि वह मनुष्य 'छल्ली' के नाम पर

दुष्टो आहता है। यह मोक्ष कर देनेमें हरिसे नाम पर
एक दुष्टो इस प्रकार लिख दो, "योगो ग्राहमदुष्ट
जगत्। इस समुद्रमें पायसे उद्देश्यमें मेरे पास एक लो
हपत्र जमा कर दिये है। यतः पाप ऐसा कोई बन्धोबन्ध
कर देगे जिसमें हमें हतमें रूपसे यहाँ मिल जाय।"
मिश्रामी ये पाप, जो कुछ दुष्टोमें लिखा था उसे न
देख सीधे द्वारकाको चला गया। जहाँ नरसिंह बहुत
चिन्ताकुल हो कर सोचने लगे, कि जिनके उद्देश्यसे ये
रूपसे गये गये है वे किस तरह हके पारंगत।
ग्राह्य या हरिदोको देनेसे ही ये रूपसे उद्देश्य
मिल जायगे। ऐसा भोच कर हकेमें उन रूपसेको उसी
समय ग्राह्य भेषावोंमें बाँट दिया। उधर वह भेषाव
अब हाका पढ़ था, तब कहते हैं, कि यो कृष्णने उसने
रूपसे उसे द्रिदप, ये। नरसिंह दोहिनके विवाहमें यो-
कृष्ण काय लघोर्गो यो। यतमें हमको दो कथाएँ कृष्ण
मेममें दीवान की पित्तके साथ हरिनामकी स्तन करके
कानि धर्मधामको मिथार गई। देमके राजासे हमको
चक्रमशति पोर काय देय कर कहा था कि जो कोई
हमका प्रपन्न करेगा, उसे उचित राजदण्ड दिया
जायगा। (अनन्ताक्षरीलीला)

नरसिंहा कवि—१ हिन्दोके एक कवि। ये भक्त कवि
वृत्तान्त काटियावाड़के रहनेवाले थे। इनके यह राग-
भंगारोहमें पाये जाते हैं।

२ एक हिन्दो कवि। इनकी कविता मराठनीय होती
होती। उदाहरणार्थ एक गीते देते हैं—

"काला सेरे भीरीं हापी।

हच वही पूत मायन सेरे और मिठी हापी।

यामराग विन भावो डुंबर भी ही हचे हाच कुशी।

ही हापी और विहापी हटी विरहकी हापी।

हो हचकी टावर हलासीही हापी ब्रिहापी।

नरसिंहा की रसायी कविताये माय के विविध हलापी।

नरसिंह (विं. पु.) लिखाया नामके यूरर जिसे पत्ते
महो होतु। कविधारा देखो।

नरसिंह (विं. पु.) लिखाया नामके यूरर जिसे पत्ते
महो होतु। कविधारा देखो।

नरसिंह—बोलापुरके बड़े कित्ता एक मन्दिर। यह

मन्दिर लक्ष्मीदेवी भोग्य, चारों ओर एक दीपन

दृष्टसे तसे प्रतिष्ठित है। तिसुन देवता दत्तात्रेय एक
मन्दिरके पवित्रता है। भीकुर देवी।

गुहचरित नामक एक ग्रन्थमें लिखा है, कि कथा मरीके
जिहारे बाधो नामक एक नाम है जहाँ बाधो नामके
एक भीरो रहता था। यह भीरो दत्तात्रेयका परम भक्त
था और हमेशा उनके साथ साथ घूमने जाया करता था।
पहले दत्तात्रेय भीरोके इस व्यवहार पर बहुत आश्चर्य
रहते थे; पीछे जब उन्हें मालूम पड़ा कि भीरो बहुत
धर्म कामनासे लम्बा चतुर्मास करता है, तब उनके
मति से बहुत प्रसन्न हुए। एक दिन दत्तात्रेय मरीमें
प्राप्त कर रहे थे और जब भीरो वाम भी चला था।
हमी बीच राजाको नाम यहाँ पहुँच गई। यह देव
कर राजा बोल उठा, 'यहाँ। हम राजाका जीवन कैसा
सुखमय है, पोर मीरा कौसा गुहमह तो पकर।' राजकी
यह बात सुन कर दत्तात्रेयने उससे पूछा, 'क्या तुम अभी
राजा कोना चाहते चयवा मरनेके बाद?' राजकी मन
की मन मोच कर देवा, कि उनके अधिक दिन जीनेकी
सम्भावना नहीं है, तब फिर हम जन्ममें छोड़े दिनेके
लिये राजा जीनेसे क्या फल, दूसरे जन्ममें ही राजा कोना
पच्छा है। यह मोच कर उसने दूसरे जन्ममें ही राजा
कीनेके लिये दत्तात्रेयसे प्रार्थना की थी। उसीके फलसे
लक्ष्मी मन्दिर बनाया गया।

नरसिंह (मं. पु.) नर-मनुष्योक्तम्। नरमनुष्य,
धर्मी मनुष्य।

नरहल—भविष्य ब्रह्मवैवर्त महापुराणके एक नाम।
इसके नाम रामपुर नाम प्रसिद्ध है।

नरहल (मं. पु.) पण्डितो मनुष्य, यह मनुष्य त्रिविक्र
मुह घोड़ेके नामा हो।

नरहर—ग्राह्यकुलमन्त्र पादालवासी। यद्यपि दत्तके
पत्तान्त पायसोचनमें हमें मरहर को मया
है। कुलमें पढ़ कर पहले ये देवदत्तहारा, विद-
गन्धुक, कपोलक पोर कथाकारी को गये थे। पीछे
यद्यपि पा कर हम पायसोचन तोपमें प्राप्त करके
माय की लम्बा मय पाय दूर ही गया पोर वहीं समस्त
धर्ममें उनके लक्ष्य पुण्यदि कीने लगे। तभीसे पाय-
सोचन तोपमें भी ब्रह्मि नाम को है।

(अनन्ताक्षरीलीला)

नरहर (हिं० स्त्री०) पैंरको वह हड्डी जो पिंडकी कपर होती है ।

नरहरि (सं० पु०) नर इव हरिः मिह इव च भाकतिर्यस्य । नरसिंह भगवान् जो दश अवतारोंमेंसे चौथे अवतार हैं ।

“केशव वृत्त नरहरि रूप जय जगदीश हरे ।” (गीतगो० १।८)

नरहरि—१ काव्यप्रकाशके टीकाकार । ये अपने ग्रन्थमें अपना परिचय दे गये हैं,—पद्मदेशमें काव्य मोक्षमें रामेश्वर उत्पन्न हुए । उनमें पुत्रका नाम नरसिंह और नरसिंहके पुत्रका नाम सतिनाथ था । सतिनाथके भी दो पुत्र थे, नारायण और नरहरि । नरहरिका जन्म १२८८ संवत्में हुआ था । संन्यास-धर्म ग्रहण करनेके बाद इन्होंने अपना नाम सरस्वतीतोष रखा था । जब ये काशीमें रहते थे, तभी इन्होंने उक्त टीका रचो थी । इसके सिवा इन्होंने मिष्टदूतकी टीका भी बनाई है । २ अभिनवरासकाव्य और कविकौमुदीके प्रणेता । ३ शब्दचक्र नामक व्योतिष्यके प्रणेता । ४ भाष्यरूपोपनिषद्वाक्यावलीके प्रणेता । ५ चन्द्रलक्ष्मीतृप्तायतक और नृत्तार-यतक नामक काव्यके प्रणेता । ६ बोधसार नामक काव्य, साधवसिद्धान्तसार और विधिष्टाईतविजयवाद नामक दागनिष्ठ ग्रन्थप्रणेता । ७ भगवद्गीता-सार-संक्षेपके प्रणेता । ८ संस्कारदर्शि नामक ग्रन्थके प्रणेता । ९ राजनिघण्टु, या निघण्टुराज नामक अभिधानके प्रणेता । ये ईश्वरचरित्रके पुत्र थे । १० नरपतिजयचरित्रोदयके टीकाकार । ये मिथिला-बासी गणेशके पौत्र और नरसिंहके पुत्र मानी जाते हैं । ११ कुमारसम्भवके टीकाकार, भास्करके पुत्र । १२ अनुमान-खण्डदूषणोद्धार नामक ग्रन्थके प्रणेता । इनके पिताका नाम यशपति था । १३ भावप्रकाश और भागवतसारपर्य-दीपिकाके प्रणेता । इन्होंने भानन्दतोष प्रणीत ब्रह्मसूत्रानुभाषके व्याख्यान भावप्रकाश और उक्त भानन्दतीर्थकृत भागवतसारपर्य-दीपिका बनाई है । इनके पिताका नाम सरदाधाय था । लोग इन्हें नरहरि, नृहरि या नृसिंह भी कहा करते थे । १४ वांगभट्टमण्डन नामक न्यायदर्शनय ग्रन्थके प्रणेता । इनके पिताका नाम संक्षेपभट्ट था । १५ नैपथीयटीकाकार । ये स्वयम्भूके पुत्र और विद्या-

रण योगीके समसामयिक थे । ये तैलङ्ग ब्राह्मण थे ।

नरहरि—आदिशूरने यज्ञ करानेके लिए जिन पांच कनोज ब्राह्मणको मार दिए, वे उनमेंसे पामादि दानमें पाकर बहुरूप देवमें बस गए थे । उनमेंसे एकका नाम भट्टनारायण था जिन्होंने तिलोत्थ नामक शृंगयात्रीका पुत्र और धर्म-यात्री होनेके कारण दान ग्रहण नहीं किया था । उन्होंने कुछ निष्कर जमीन खरीद कर एक छोटा राज्य बना लिया । यह राज्य आधुनिक विक्रमपुरके निकट है । भट्टनारायणके निपु नामक एक पुत्र था । निपुकी निन्त्र हठी पीढ़ीमें नरहरि नामक राजा हुए थे । इन्होंने वांग-ये नदीया-राजवंश उत्पन्न हुआ है ।

नरहरि उपाध्याय—द्वे तनिर्णय नामक ग्रन्थके प्रणेता ।

नरहरि चक्रवर्त्ती—बहुरूप भक्तिरत्नाकरके प्रणेता । ये जगन्नाथ चक्रवर्त्तीके पुत्र थे । इनका दूसरा नाम धन-ज्ञान था । इनके भक्तिरत्नाकरका वैष्णवसमाजमें यथेष्ट आदर होता है । ये बड़े भारी कवि थे । इनकी कवितायें सारगर्भ तथा सराहनीय होती थीं । मैलिङ्ग-भादलके जेहजसेमकी तथा गुपनपुवङ्गके हगोनगरकी वर्णना विद्वत्समाजमें कैसी प्रशस्त होती है, नरहरिके जवहोप और हन्दावनकी वर्णना उसमें नहीं चमत्कार और आदरपाव्य है । वैष्णव ग्रन्थमें सुखत शोकादि उद्धत कर प्रमाणादिका उल्लेख करना विनकुल नियम-वद् है । नरहरिने इसे भी कर डाला है और वैष्णव नवोन प्रथा भी प्रवर्त्तित कर गये हैं । इनकी रचना बड़ी ही सरल होती थी, परन्तु इनमें पर भी वह गण्यो मालूम पड़ती थी । ये प्रसिद्ध विष्णुनाथ चक्रवर्त्तीके मित्र थे । “नरोत्तमविज्ञान” और “नोरचरित्रविज्ञानमणि” ये दोनों प्रसिद्ध ग्रन्थ इन्होंने बनाए हुए हैं ।

नरहरितीर्थ—इत्यर्थ सागर ग्रन्थमें इनका उल्लेख है । ये भानन्दतीर्थके मित्र और पटनाभार्यके उत्तराधिकारी थे । इनका पुत्र नाम राममाधवी था ।

नरहरिदास—इन्हींमेंसे एक कवि । इन्होंने संवत् १८१२ में नरहरिदासकी बानो नामक दो ग्रन्थकी रचना की ।

नरहरिभट्ट—१ आम्बलायनीय दर्शपूर्ण-मासपौत्र नामक ग्रन्थके प्रणेता । २ मण्डकुण्डप-संक्षेपकागिराज नामक ग्रन्थके प्रणेता । ३ रघुयोग-मुक्तावली नामक वैद्यकीग्रन्थके

प्रज्ञेता । ३ जनपदमूलविद्वत्सुखमल्लनके एक
टीकाकार ।

नारदिकावली—श्रुतिं च चर्युके प्रज्ञेता ।

नारदिकारकार—श्रीपैतृक्यके आविर्भावप्रसङ्गमें पद-
साहित्य चलेइ रसिका अधिकारी हुआ था । बहुतसा
साहित्यमें वैष्णव कवियोंका अधिकार बहुत जैसा हुआ
है और आत्मन भी बहुत जैसा है । इन मन्त्रोंके पद-
प्रदर्शन नारदिकार ठाकुर थे । इनके विताका नाम नारायण
था । नारदिकारे दो पुत्र थे, बड़ेका नाम मुकुन्द था और
छोटेका नारदिकार । नारदिकार कारक विद्वान् और सु-
पुत्र थे ।

श्रीमहाप्रभुके भाव वचनमें श्री इनकी माकी मिलता
थी । इन्होंने श्री मन्त्रोंके पदके गोरक्षोन्माका पद लिखना
प्रारम्भ किया था । इनके पद बड़े ही मधुर होते थे । ये
महाप्रभुमें पाठ वर्षके बड़े थे, यह वैष्णव सन्यासियों
पदमेंसे मान्य होता है । अतएव लोग इनका जन्मकाल
१४०० अर्धमें बतलाते हैं ।

श्रीपैतृक्यके आविर्भावमें महासाहित्यमें श्री नवस्त्रोत
प्रवाहित होता है, नारदिकारी उनमें सादिप्रवर्णक वा
सादि शुद्ध माने जाते हैं ।

नारदिकारकार बन्दीजन—हिन्दीमें कवि । ये पनमोके
निवासी थे । इनका जन्म स० १८८८में हुआ था । ये
धनान्तर्होन चक्रवर बाद्याहके दरबारमें थे । पनमो गाँव
इनकी माकीमें मिला था । इनके पुत्र हरिनाथ महाकवि
और उदार थे । इस समय भी इनके वंशज बनारस
सादि आश्रितमें पाये जाते हैं । पनमोवाला इनका घर
कुहर परा हुआ है । इनके किसी पन्थका पता नहीं
लागता, परन्तु इनके पन्थके वचन सुने जाते हैं ।

नारदिकारी (स० पु०) एक कव्यका नाम । इनके प्रत्येक
पदमें १४ और ३६ बिगममें १८ मात्राएँ तथा चतुर्ध्व
१ नगव और १ शुद्ध होता है ।

नारदिकार—पटना जिलेका एक परगना । इस जिलेका
अधिकार्य काम पनो गया जिलेके दरबारमें आ
गया है ।

नारदिकार—नारद जिलेका एक परगना । अन्तः सुन्दरी,
काम, ईश्वर, श्री, चमीन और ईश्वर दे मन्त्रवर्णके प्रधान
वृत्तप्रमाण है ।

नारदिकार (हि० पु०) पाठ या का पदलगा बड़ा होता है ।
इसके जिनारे मृदु तेज होते हैं । कहते हैं, कि ऐसा
श्रीराम भिमके पास होता है वह राजा हो जाता है और
समका वैभव बहुत अधिक बढ़ जाता है ।

नारा (हि० पु०) नारकटी एक छोटी मनी । इसमें
खपर चुन सपेटा रहता है ।

नाराज (स० पु०) नरमजगति पद-पद । १ मी,
नाभि, टीढ़ी । २ नरपद, एक प्रकारका झोका ।

नाराय (हि० पु०) १ तोर, बाज, गर । २ पदवासर वा
नागराज नामक वृक्ष । इसमें प्रत्येक पराधमें नगव,
रगव, जगव, रगव जगव की। चतुर्ध्व एक शुद्ध
होता है ।

नारायिका (स० स्त्री०) वितालवृक्षका एक भेद । इसमें
प्रत्येक पराधमें नगव, रगव, मधु और शुद्ध होता है ।

नाराची (स० स्त्री०) नारिणाधिनीति रोमभिरिव कण्टकैः
चा-चि-ठ गोरान्दित्वात् कण्ठ । १ चमूना कण्ठकरोहण,
एक प्रकारकी कटोरी जिसे जड़ नहीं होती । २ तोरिणी
एक स्त्रीका नाम । (हरिवं १२२ म०)

नाराज (स० पु०) वीरगाथापाठक वृत्तभेद, मोनक
चरणीका एक वृत्त । इसमें प्रत्येक पराधमें १६ चक्र
होते हैं ।

नाराज (का० वि०) नाराज देखो ।

नाराधन (स० पु०) नरेपु चरमः ७ तत् । निरुद्ध मागव,
नीच मनुष्य ।

नाराधिन (स० पु०) नरेपु अधिन ७ तत् । १ नाराधिन,
राजा । २ वृत्तविधेय, मोनापाठा । ३ महापदवृत्त,
बड़ा चरमिणाम ।

नाराधन (स० पु०) ब्रह्मदेवके एक पुत्रका नाम ।

नाराधन (स० पु०) चरमवति रतिवति चरम, नाराधन
चरमः १ तत् । १ राधनके एक पुत्रका नाम । यह राध-
नचक्र-वृत्तमें पदके वाच्ये गारा गया था । (हि०) १
नाराधन-पाठ, मनुष्यकी संहार करमिणाम ।

नाराधन (स० पु०) नाराधन चरम चरमिणाम वा
नाराधन चरम । नाराधन, विरुद्ध ।

नाराधन (स० पु०) नाराधन चरम मोनके पद, नारा-
धनी, राधन ।

नरास (सं० पु०) १ यज्ञ । २ यज्ञि । या यन्त्र-
भावे यज्ञ । ३ मनुष्योका प्रायश्चन पर्याप्त पूजन ।

नरासन (सं० स्त्री०) नराकार-भासनमैद-मनुष्यके
आकारका एक प्रकारका भासन । इसका विषय रुद्र-
यामलमें इस प्रकार लिखा है—यह नरासन १६ प्रकार-
का है । इस पर बैठ कर साधन करनेसे बहुत लब्ध
सिद्धि लाभ होता है । इनमेंसे एक मासमें कथ, दो
मासमें हृतकथ, तीन मासमें योगकथ, चार मासमें
स्थिराशय, पांच मासमें सूक्ष्मकथ, छः मासमें विषिकषो
सात मासमें ज्ञानयुक्त, आठ मासमें मन्त्रसंयुक्त और जिते-
न्द्रिय, नौ मासमें सिद्धि लाभ, दश मासमें चक्रमन्दयुक्त,
ध्यान मासमें महाभोर और बारह मासमें खेचर होता
है । कौंसा की कोई क्सी न हो, नरासन पर जो बैठ
कर योगसाधन करता है, उसे भवश्रुति सिद्धि लाभ होती है,
इसमें तनिक भी सन्देह नहीं । नरासनायक्यामें भौषे सुं ह
करके साधना करनी होती है । (ब्रह्मसूत्र)

नरिन्दकवि—१ हिन्दुके एक प्राचीन कवि । इनका
जन्म सं० १८८८में हुआ था ।

२ एक हिन्दु-कवि । इनका जन्म-सम्वत् १८१४
में हुआ था तथा ये पटियावाके महाराज थे । इनकी
कविता सरस होती थी ।

नरिया (हिं० पु०) एक प्रकारका मछीका खपड़ा । यह
मकानकी छाजन पर रखनेके काममें आता है । यह भई
हवाकार और लम्बा होता है और इसे 'यमुना' खपड़े-
की छंथियों पर चौड़ा कर रख देते हैं । ऐसा करनेसे
उन छंथियों मेंसे पानी नीचे नहीं टपकने पाता ।

नरियाद—१ स्वर्ण प्रदेशके पन्नागंत खेड़ा जिलेका एक
उपविभाग । इसके उत्तरमें कपादमण्ड, पूर्वमें ताम्र और
पानम्, दक्षिणमें बरीदाराज्य और पश्चिममें मतार और
महमुदाबाद है । इसका क्षेत्रफल २२४ वर्ग मील है ।

२ एक विभागका एक नगर । यह मण्डा २०
४० ४५' उ० और देशा० ७२ ५५' २०" पू० के मध्य
पद्मदासादे २८ मील पूर्व-दक्षिणमें अवस्थित है ।
यहां तमासू और घीका खूब व्यवसाय होता है ।

नरिसेमरी—मधुरातोय राजके मध्य एक ग्राम । यहां
क्षेत्र ज्ञापकको एक भारी मेला लगता है जिसे नय-

दुर्गा मेला कहते हैं । 'सेमरी' शब्द 'श्यामला-वि'
शब्दका अपभ्रंश है । पहले यहां श्यामलादेवीका एक
मन्दिर था, उसीके नामानुसार इस ग्रामका नाम पड़ा
है । मेला भी उत्त देवीके उद्देश्यसे ही लगता है । देवी-
का वर्तमान मन्दिर बहुत प्राचीन है । उत्तरेखोख
विषय इसमें कुछ भी नहीं है । यह एक दीर्घिकाके
किनारे अवस्थित है । अभी आगरेके वषिकों ने यहां दो
कोटी कोटी धर्मशालाएं बनवा दीं हैं । देवीके मन्दिर-
से यात्री द्वारा वार्षिक २०००, ४००० पामदनो होती
है । देवीके मेवकमण अभी ३ अंगियोंमें विभक्त हो गये
हैं : सेमरीके प्राचीन जमींदार, ब्रजनगरके जमींदार
(ब्रिजका-नगर) और देवीमिह नगरके जमींदार (देवी-
सिंहका-नगर) । यहां प्रभावशाली मेला आरम्भ होता
है और ८ दिन तक रहता है । यहीका दिन ही मेले-
का प्रधान दिन है । उस दिन सर्वोत्तम मन्दिरमें बहुत
भीड़ रहती है । यहां यात्री लोग ठहरते नहीं, दयानकी
बाद ही चले जाते हैं । विभिन्न स्थानकी यात्रियोंके
लिखे विभिन्न दिन निर्दिष्ट रहता है । पञ्चयज्ञतीयाके
दिन भी मेला लगता है ।

नरी (सं० स्त्री०) नरस्य पत्नी डीप । १ मानवपत्नी
स्त्री, नारी । २ हन्दावनस्थित एक ग्राम, हन्दावनका
एक गांव । श्रीहन्दावनकोलाश्रितमें इसका उत्पन्न है ।
राजा कंसको प्राप्तावे जब यज्ञ र योद्धव्य और बल-
शालकी से कर मधुराकी खले और उनका रथ पदस्थ
हो गया, तब ब्रजपुरीकी कया पुरुष वयांको सभी 'निर
नरि' शब्दकरते हुए घूमने लगे रहें । तभीसे यह स्थान
नरी नामसे मशहूर हो गया है । ३ त्वक, चमड़ा ।

नरी (फा० स्त्री०) १ बकरी या बकरेका रंगा हुआ
चमड़ा । २ काल रंगका चमड़ा । ३ सिद्ध किया हुआ
चमड़ा, मुनायम चमड़ा । ४ ताल वा नदीके किनारे
होनेवाली एक प्रकारकी घास । ५ ठरकीके भीतरकी
नयी जिस पर तार खपेटा रहता है, नार ।

नरी (हिं० पु०) १ एक प्रकारका वगुला । (फा०) २
नदी, नाली, कुच्छी । ३ एक प्रकारकी दामकी मनी
जिससे सुनार भोग ग्राम सुसज्जित हैं, पुकनी ।

नरुई (हिं० स्त्री०) कुच्छी, कोटी, मनी ।

महर (ई० पु०) पनाहको घोषाकी टण्ठी को भीनरने
दीसी होती है।

मैमन—बम्बईके पारवार जिलेका एक शहर। यह
पना० १५° १४' उ० और देशा० ७५° ४८' पू०के मध्य भार
भार महरमें १५ मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या
८४२०६ जनसङ्ख्या है। यह एक प्राचीन शहर है। यहां
१२वीं और ११वीं सताब्दीकी अनेक मिलावियां
और मन्दिर मिलते हैं। शहर भरमें खेप एक स्कूल है।
मैमन (ई० पु०) नर इन्द्र-यवा मरावांसिन्धो का १ नर-
यौत, राजा। २ नियमेष, यह जो सांप बिच्छू आदिके
काटनेका इलाज करे। ३ भोजनाक छप, भोजपाठा।
४ पारवप, पवित्रताम। ५ काष्ठगुदुप, पगरका
पिंड। ६ इन्द्रोमिट, एक प्रकारका वर्षासत्र। इसके
प्रत्येक चारमें २१ माताएँ होती हैं जिनमें १४१/१४४।
१००० और २१वीं पक्षरगुह और मेष सभी पक्षर
जगु होती हैं।

मैमन—एक कवि। सुभाषितव्याकर ग्रन्थमें इनको
कवितावनो उद्धृत हुई है।

मैमन पापाय—एक वैद्यकरण। विद्वानके ग्रन्थमें इनका
उल्लेख है।

मैमनदेव निपाकके एक राजा। इनके पिताका नाम
समयदेव था। नैराह देखी।

मैमनभवन—एक विहार-स्थानका नाम। काशीमें
राजा मैमनने यह विहारभवन बनवाया था।

मैमनग्राम—हर्षपुरीय नरचन्द्रपुरिके गिण्ट। इन्होंने
“पलहारमोदधि” नामक पलहारगाकोय और
“काकुत्स्थकेलि” नामक काकुत्स्थी रचना की।

मैमनग्राम—नेपालके एक राजाका नाम। नैराह देखी।

मैमनगुराज—भाषा वास्तुशराज मित्रवादित्यकी उपाधि।
कादर देखी।

मैमनगिह—पटियावाडी एक राजा। १८४४ ई०में अपने
पिता कामसिंहके मरने पर ये पटियावाडी राजसिंहासन
पर बैठे। उस समय इनकी उमर २१ वर्षकी थी।
काशीके राजाके भाग प्रिय समय पंगरेजोंको लड़ाई
दिही थी, उस समय इन्होंने पंगरेजोंको लड़ाई तक की
जता था, मर गई थी। इस उपकारमें उस समय

मैमनगिह निरनने १८४० ई०में इन्होंने एक भवन दी।
पंगरेज मयमभियाने राजाको रक्षा तथा जनता की
कार स्थिर करनेके लिये बहुत दिये थे। राजसिंहा
अनेक राज्यमें उगो, मनीटाहा, मिथलावा और दाम-
विष्णुकी रोकनेकी प्रतिज्ञा की थी। १८४०-४८ ई०के
मिर्जापुरीविद्रोहके समय इन्होंने पंगरेजोंको बाको महा-
यता पक्षपाई थी।

ये पंगरेजित माहम और सीरलका काम कांडे
मभी पंगरेजोंके विपदाय हुए थे। विद्रोह के समय जब
पंगरेजोंके अनेक कपटी मित्रोंने पीठ दिखाई थी, तब
इन्होंने पक्षपर ही कर अपने धनागार और पन्थाक युद्ध
सामग्रीकी पंगरेजोंके कार्यमें लगाने कर दिया था।
दिहोके राजसिंहा इन्होंने पंगरेजोंको मदद पक्षपाईने
पक्ष पार। नियम किया था और इससे निवेध पुरस्कार
देनेकी भी राजा को गये थे। महाराजने उस पौर
तनिक भी ध्यान न दिया और उस पक्षकी पंगरेजोंके
पान भेज दिया था। इन्होंने सरदार प्रतापसिंहके अधीन
दिहोकी और एक दल भेजा-भेजा। उस भेजाने दिहो
पर पढ़ाई करके पूरा सकसता प्राप्त की। उस समय
इन्होंने पंगरेजोंको साथ साथ दण्डने लगे दिये थे। इस
उपकारके लिये उस मयमभियाने इनकी मूर्त धारित
की थी तथा पुरस्कार भी मूर्त दिये थे। १८४२ ई०में
इनका देहाल हुआ।

मैमनगिह—दिहोके एक कवि। इनकी मयमा उत्तम
कवियोंमें होती थी। इन्होंने मयम १८०३में मान-
विज्ञान नामक एक ग्रन्थ बनाया।

मैमनगिह—काशीमें एक राजा। ये मोक्षके दुर्ग
थे। इन्होंने ३ मास १० दिन तक राज्यदासन किया
था। शासनकालमें इन्होंने मुन्तर और पल्लवों
नामक द्वि और द्वि मूर्तोंका प्रतिष्ठा की थी। इनके
दोसगुह समदेवने अपने नामक एक देवगुर्त को
भाषावक नामक दम देवोमूर्ति का स्थापित की थी। ये
अनेक पुत्र मुनिहरिरी राज्यपालनका भार जोर का
इस लोकने पक्ष किये।

२ काशीमें एक दिहोय मुनिहरिके पुत्र नामक म'
इहो नामके कवि हैं। दिहोके मयमने यह इन्होंने ११

भयं तत्क राज्यं कियत् । इनके सख और कनक नामक दो मन्त्री थे । इनकी मन्त्रियोंका नाम विमलप्रभा था । नरेंद्रादित्यकी मृत्युके बाद इनके छोटे भाई रण्णादित्य राजसिंहासन पर बैठे । (राजतः)

नरेंद्राह (सं० पु०) नरेंद्रः प्राज्ञा यस्य । आश्वमेध, एक किस्मका अगार ।

नरेंद्र (हि० पु०) एक प्रकारका पेड़ । इसकी कालसे एक प्रकारका खाकी रंगका गोद निकलता है जो मीस खूब जाता है और घसकोना होती है । यह पेड़ शिव-नागर और सिलहट (बासाम) में मिलता है ।

नरैय (सं० पु०) नराणा ईयः इत्यम् । नरेंद्रः राजा, नृप ।

नरैयकवि—हिन्दीके एक कवि । लोगोंका अनुमान है, कि इन्होंने नायिकाभेदकी कोई पुस्तक लिखी होगी, क्योंकि इनके पद्य सभी प्रकारके पाये जाते हैं ।

नरैयार—शिवस्वतके एक टीकाकार ।

नरैय—राजपूतानेके अन्तर्गत जयपुर राज्यका एक नगर । यह अक्षां २६°४८' उ० और देशां ७५°११' पू०के मध्य जयपुर शहरसे ४१ मील पश्चिम और अजमेरसे ४३ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । लोकसंख्या लगभग ५२६६ है । यह नगर दूधपत्तिसम्प्रदायका एक प्रधान स्थान है । इस सम्प्रदायकी लोकसंख्या अधिक नहीं है । ये लोग निराकार एकेश्वरवादी हैं । इनके याजक विवाह नहीं करते । शहरमें कुल पाँच स्कूल हैं ।

नरोत्तम—पञ्जाबके अन्तर्गत गुरुदासपुर जिलेको पठानपुर तहसीलका एक नगर । यह अक्षां ३२°१०' उ० और देशां ७५°१०' पू०में अवस्थित है । यहांसे धान और कच्चे साँघर तथा अमृतसरमें भेजी जाती है ।

नरोत्तम (सं० पु०) नरैय, उत्तमः उत्तमम् । १. पुत्रोत्तम नारायण, ईश्वर, भगवान् । २. नरथोष्ठ, मनुष्योंमें श्रेष्ठ ।

नरोत्तम—१ एक राजा । ये विख्यात नाटककार शेष-लक्ष्मण या लक्ष्मणपण्डितके प्रतिपादक थे । इन्होंने अश्वमेध-ने पण्डितजीने पारिजातहरणकथाम्बुकी रचना की । ये १६वीं शताब्दीके शेष भागमें वर्तमान थे । २ अध्यात्म-सामायक एक टीकाकार ।

नरोत्तमठाकुर—ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो आपका

नाम न जानता हो । आपकी जन्मकी तिथि निर्दिष्ट तिथि मालूम नहीं । लेकिन जब ओषधतन्त्र महाप्रभुके समयमें ये प्राविर्भूत हुए, तब १४५३ ई० तकमें आपका जन्म हुआ होगा इसमें सन्देह नहीं । उत्तर-राष्ट्रीय कायस्थवंशीय जमींदार राजा लक्ष्मणानन्द उक्त आपके पिता थे । मानाका नाम था नारायणो ।

बचपनमें ही नरोत्तमके असाधारण गुण और अद्भुत प्रतिभासे सभीको विस्मित कर दिया था । श्री-गौराङ्ग प्रभुमें आपकी विशेष श्रद्धा थी । यहां तक कि, जहाँ कहीं उनका कीर्तन होता वहाँ आप बिना पिता माताकी अनुमतिके ही चल देते थे । जब इन्होंने सुना, कि महाप्रभुके अन्तर्धान होने पर कितने भक्त और प्रधान प्रधान पाश्चात्यगण हस्तावनमें जा बसे हैं, तब वहाँ जानेकी इनको इच्छा इच्छा हो गई ।

एक दिन सवेरे नरोत्तम पठानदीमें स्नान करने गये । स्नान कर चुकनेके बाद जब ये किनारे पर खड़े हुए, तब एकाएक महाप्रभुके प्रति इनके हृदयमें प्रेम समझ पाया और ये सभी लज्जा नाचने लगे ।

इधर घरमें बहुत देर तक रुकेंगे न देख उनकी तलाशमें लोग चारों ओर छूटे । यहां तक कि स्वयं रामो नारायणो भी उन्हें दूकते दूकते पमावतीके किनारे पहुँचेंगे । बहुतसे लोगोंकी अपनी सामने खड़े देख उन्हें चैतन्य हुआ । माता पुत्रकी गोदमें ले कर बार बार चूमने लगीं । एक दिन हस्तावन जानेकी इनकी प्रवृत्ति इच्छा हुई । फिर कौन रोकनेवाला था, अनेक सम्भ्रान्त लोगोंकी बातों पर जरा भी ध्यान न देते हुए नरोत्तम पिता-मातासे सदाके लिये विदाप ले कर हस्तावनकी चल पड़े । एक तो आप राजकुमार थे, दूसरे उमर केवल सोनहकी थी, पैदल चलनेका अभ्यास नहीं था, इस कारण बहुत कष्टसे तथा धीरे धीरे रास्ता ले करते जाते थे ।

अनेक कष्ट झेलते हुए नरोत्तम हस्तावन पहुँचे । उस समय वहाँ रूप सनातन नहीं थे, ओजस्य-यः । उनके पास पड़ोच कर वह अपरूप बालक ह्रिस्मृत तद-के जैसा गिर पड़ा । पीछे परिचय होने पर श्रीजीव उन्हें और बातोंसे अधिक धार करने लगे । अन्त में

प्रतिभासे पीढ़े की समग्र कल्प चाप एक चरितोप-
चरित हो गये। श्रीशिव शीघ्रमर्ति उपगुप्त देव पर
रनी समग्र १४६ 'आह भवामर' को उपविष्टा को
पौराणिक बहालमें भक्ति प्रत्यक्ष प्रसार करने में निवे-
मेका। १५०४ मन्त्रों चाप दो चोर सवर्णितोने भाग
सम्प्राप्तने रवानी हुए। कुछ समय बाद चापके पनेक
मिथ हो गये। चाप कविताको बहुतमी कितने बना
गये हैं जिनमें प्रधान ये हैं—आयनापन, लक्ष्यमका
भार चरित प्रेमभक्तिचरित, काटपतन, चोर कीतोना-
पदावली। कापिक सामको लप्ता पदमों तिवित्री
मन्त्रों कितारे चापने देहत्याग दिया। इस तिवित्री
चाप भी ठकुर महायका महोत्सव हुआ करता है।
नगोत्तमशाल—एक हिन्दी-कवि। ये साधनबाड़ी जिला
मौतापुरमें रहते थे। इनका बनाया हुआ एक ग्रन्थ है
जिसेका नाम है सुशमाचरित। इसको कविता मधुर
चोर नाम है।

मंगलमपुरी—वेदाम्नाविषयक 'विद्यारामाक्ष' नामक ग्रन्थके
प्रतिता।

नगोत्तमशाल—तत्परय नामक तान्त्रिक ग्रन्थ-प्रचेता।

नगोर—बुद्धप्रदेशके पत्तनगत बुद्धनगर जिनका एक
नगर। यह पचा० २८° १२' उ० चोर देगा० ७४° २३'
४३' पू० के मध्य अवस्थित है।

नगौर (मं० शी०) १ वि०लोको बड़ा, नवी २ रम-
निकलनेकी कोरककी नवी।

नगोनी—बुद्धप्रदेशके पत्तनगत मुगदापाद जिनका एक
नगर। यह पचा० २८° २८' उ० चोर देगा० ८८° ४३'
पू० के मध्य अवस्थित है।

नगोट (हिं० पु०) नगर देखो।

नगुंठक (मं० शी०) प्राविष्टिष्ठ, नाक, जानिका।

नगिंय (हिं० पु०) नरसिंह देखो।

नगिंयो (हिं० वि०) नरसिंह देखो।

नगुंठ—बम्बईके धारवार जिनके पत्तनगत नवबुद्ध
ताम्रका एक नगर। यह पचा० १३° ४३' उ० चोर देगा०
७३° २३' पू० चारनार नगरके २५ मील उत्तर पूर्वके
अवस्थित है। बीचमें बड़ा प्रायः १०४१ ई०
के मुसलमान राजाओं ने निर्मा

या। सिवाजीने इसे बमराय भावेके हाथ सुपुर् कर
दिया। बाद कटिग मन्त्रोंमिथने इसे चरने दण्डने ला-
का इन मन्त्रों पर दादाजी रावटे हाथ लगा दिया
कि ये प्रयोगन पकमें पर कटिग मन्त्रोंमिथने महायका
पदुंथानि दण्ड तथा विरामन तत्त तन्ने विरामा यने
रहे। सेरिम १८५० ई० के सिवाजी-विद्रोहमें दादाजी-
ने तत्त मन्त्रों तोड़ दो चोर ये चरने खास माधने में जा-
गये। इस पर कटिग मन्त्रोंमिथने एक दम भिनामगुंठ-
को भिन्नो चोर इने लोग कर चरने मानवनी कर
दिया। यहां भद्राभिज्ञ चोर दण्डेयारके दो प्राचीन
मन्दिर हैं। इनके सिवा १०५० ई० का बना हुआ
बहुतेमका एक मन्दिर पहाड़के ऊपर एक दुर्गमें अवस्थित
है। यहां चापिनको पूर्वमार्ग प्रति भवे एक भारी
भिला मगना है जिनमें हजारों मनुष्य-प्रमाणों की है।
महर्षि का मन्त्र है इनमें एक प्रासिका मन्त्र भी है।
नर्चान—धरारके पकोना जिनके पत्तनगत पकोट ताम्र-
का एक निरिदुर्ग। यह पचा० २१° १३' उ० चोर
देगा० ७०° ४' पू० के मध्य उत्तरपुर्वा पहाड़के ऊपर
अवस्थित है। इसको लंबाई ११११ फुट है। जिनके
मार्गमें वही व्यान मन्त्रों लंपा है। विरिष्ठाके विरामने
पत्ता मगना है कि यह एक प्राचीन दुर्ग है। साधनों-
के राजा पद्मसद गांव मन्त्रों के लंबा मन्त्रार दिया था।
नर्चानके भिना पहाड़ पर दो चोर छोटे दुर्ग हैं जो इनके
दोनों बगलमें घेरे हुए हैं। इनमें का बड़े चोर बड़ीय
छोटे प्रवेष्टार है। इनके मोतर १८ फुटचिरो हैं, जिनमें
किन्न चापों बारों माध लम्ब रहता है। दुर्गके चर-
वार चापका सुन्दर प्रसारनिमित्त प्रनाधार हैं। बहुनीका
अनुमान है, कि जिनियोंके पविष्टारके दमर ये मन्त्र
प्रनाधार बनाये गये थे। सुराजन राजापाद, मन्त्रिद,
पत्तामार, बारहुद्वारो, राजाका, मन्त्रागद चोर
पत्तामर यह मन्त्रावलीमें पड़े हैं। दक्षिण दिशाका
आहमूरदार जो मन्त्रों सुन्दर है। यह चरिः पदरका
बना हुआ है। इनकी दोषाई मन्त्र भोगा ला रही हैं।
चोरी दुर्गमें कोई नहीं रहता।

नगा (मं० वि०) मुसलि मुन मन्त्र। (मुसलमानों, नाक
करनेवाला।

नर्चक (सं० पु०) नृत्यतीति नृत्यन् । (सिंहिणि चतुर । पा ३।१।१४५) १ नट, नाचनेवाला । २ ननद्वय, एक प्रकारकी नर्चक । ३ चारण, वन्दोजन, भाट । ४ केलक, खज्जी की धार पर नाचनेवाला । नृत्यकर्त्ताका सङ्घ—

“शास्त्रं नृत्यपात्रं द्यात् गोतं योगश्च साहसम् ।

नृत्यस्य धारणात् पात्रं नर्चकः परिकीर्तितः ॥

बीर भी

भक्षन्मन्त्रप्रलापीव वदा भ्रुकुटीतरवरः ।

हासप्रहासचतुरो वाचाद्यो नृत्यधीविदः ॥”

(संगोतदामोदर)

जैसा नृत्यपात्र होगा, वैसा हो गोत होगा । इस चवस्थामें नृत्यपात्र नाम धारण करनेसे नर्चक नाम हुआ है, अथवा जो चवस्थामन्त्रप्रलापो है, सर्वदा भ्रुकुटी परावण है, हँसने और बोलनेमें खूब चतुर है उसे नर्चक्योक्त कहते हैं । ये लोग नाचगान कर अपना गुजारा करते हैं । ५ छद्मोक्त जातिभेद, एक प्रकारकी मङ्गरजाति । इसकी चपत्ति धोबी पिता और विद्या मातासे मानो जाती है । ६ गज, हाथी । ७ नृप, राजा । ८ महादेव । ये नृत्यविद्यामें बड़े निपुण हैं और अपने समय नृत्य भी करते हैं, इसीसे इनका नाम नर्चक भी पड़ा है । (भारत १३।७।४८) ८ मयूर, मोर । ९ देव-नल, नरकट । ११ महुषा । १२ महुषा ।

नर्चकी (सं० स्त्री०) नर्चक पितृवृत्त की । नृत्य-कारिणी, नाचनेवाली, रंडी, वैश्या, नटी । संस्कृत-पर्याय—सासिका, लघुपुत्री, नटी, लक्षा । २ करेण, हस्तिनी, हथिनो । ३ नक्षिकानाम गन्धद्रव्य, नखो ।

नर्चन (सं० स्त्री०) नृत्य-भावे द्युट । १ यष्टुनीविद्येन-भेद, नृत्य, नाच । (त्रि०) २ नर्चक, नाचनेवाला । नर्चनप्रिय (सं० पु०) नर्चन नृत्य प्रिय । १ नृत्यप्रिय मास, वह जो केवल नाचना पसन्द करता हो । २ मयूर, मोर ।

नर्चनगाना (सं० स्त्री०) नर्चनस्य गाना इत्यत् । नर्चनगट्ट, वह स्थान जहाँ पर नाच होता हो, नाचघर । नर्चनगार (सं० पु०) नर्चनस्य आगारः । नर्चनगट्ट, नाचघर ।

नर्चापहारक (सं० पु०) धूलीकदम्ब, एक प्रकारका कदम्ब ।

नर्चित (सं० त्रि०) नृत्य-विषयार्थणि क्त । कृतताण्डव, जो नचाया गया हो ।

नर्द (फा० स्त्री०) चोसरकी गोटी ।

नर्दकी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी कपास । कोई कोई इसे कटील, निर्भरी और बगई भी कहते हैं ।

नर्दटका (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक प्रकारका नर्च-सप्त । इसके प्रत्येक चरणमें १० चसर होते हैं जिनमेंसे ५।०।१।१।४वाँ चसर शुभ और जीव सभी चसर लघु होते हैं ।

नर्दन (सं० स्त्री०) नर्द-भावे द्युट । शब्द, भीषणध्वनि, गरज ।

नर्दवान (हि० पु०) १ काठकी सीढ़ी । २ भाग, रास्ता ।

नर्दा (हि० पु०) मैला बहनेकी जाली ।

नर्वादा (हि० स्त्री०) नर्वादा देखो ।

नर्म (सं० पु०) नृ-मन् । पुरुषमेव यत्किं वध्य पशुदे-हहृगक देवभेद, नर्ममयधत्ता यह देवता जिनके देहस्थले पशुका वध किया जाता है ।

नर्मकोन (सं० पु०) नर्मणः परिहासस्य कोन इव, मन्मथान्मत्वात् । पति, स्त्री ।

नर्मट (सं० पु०) नर्म-घटन् । छपीदादित्वात् साधुः । १ छपर, खपड़ा । २ चुर्च ।

नर्मठ (सं० पु०) नर्मणि कुमलः, नर्मन्-घटन् । १ नर्मकुमल, वह जो परिहास आदिमें कुमल हो । २ उप-पति, जार, स्त्रीका यार । ३ परिहासक, वह जो हँसी लगाता हो, दिक्कगीवाज । ४ चिबुक, टोट्टी, हुड्डी । ५ चुचूक, कुचाय भाग, टिपनो । ६ मधुन, स्त्रीप्रद ।

नर्मद (सं० त्रि०) नर्म-ददानि दा-क । १ कलितचिह्न, आनन्द देनेवाला । (पु०) २ नर्मकुमल, दिक्कगीवाज, मसखरा, भड़ि ।

नर्मदा (सं० स्त्री०) १ पद्मा, अक्षयणी नामक गन्धद्रव्य । २ भारतवर्षकी एक बड़ी नदी । टलेसीके इतिहासमें इसका नाम नर्मदम्ब रखा गया है । पड़ले यह नदी पार्यावर्त्त और दाहिनात्यको सीमानर्देशक थी । रवा

प्रतिभासे घोड़े को समयके चन्द्र चाप एक चक्षुतीय पण्डित हो गये। श्रीशेष गोखामोने उपयुक्त देख कर इसी समय १२६१ 'ठाकुर महाशय' की सपाधि प्रदान की और धार वहालमें भक्ति धन्यता प्रचार करनेके लिये भेजा। १५०४ शकमें चाप दो और महापाठियों के साथ छन्दावनसे रवाना हुए। कुछ समय बाद चापके धनैक शिष्य हो गये। चाप कविताकी बहुतसी किताबें बना गये हैं जिनमें प्रधान ये हैं—प्रायः नामन्य, लक्ष्यग्रयका सार, अक्षत प्रेमभक्तिचन्द्रिका, छापसन, और चौतीमा-पदावली। काचित्क मामकी कृष्ण पञ्चमी तिथिकी गङ्गाके किनारे चापने देहत्याग किया। इस तिथिकी आज भी ठाकुर महाशयका महोत्सव हुआ करता है।

नरोत्तमदास—एक हिन्दी-कवि। ये ब्राह्मणवाड़ी जिला मोतापुरमें रहते थे। इनका बनाया हुआ एक ग्रन्थ है जिनका नाम है सुदामाचरित। इसकी कविता मधुर और मरस है।

नरोत्तमपुरी—वेदान्तविषयक 'विचारमाला' नामक ग्रन्थके प्रणीता।

नरोत्तमशक्त—तन्त्ररत्न नामक तान्त्रिक ग्रन्थ-प्रणेता।

नरोर—युक्तप्रदेशके भन्तगंत बुलन्दशहर जिलेका एक नगर। यह अक्षा २८° १२' उ० और देशां ७४° २५' ४५' पू० के मध्य अवस्थित है।

नरोर (स० स्त्री०) १ पिंडलोकी हड्डो, नलो। २ रस निकलनेकी कोरझकी नली।

नरोली—युक्त प्रदेशके भन्तगंत सुशदाबाद जिलेका एक शहर। यह अक्षा २८° २८' उ० और देशां ७८° ४५' पू० के मध्य अवस्थित है।

नर्कट (हि० पु०) नरकट देखो।

नकुंठक (स० स्त्री०) प्राणिन्द्रिय, नाक, नासिका।

नर्मिन् (हि० पु०) नरमिन् देखो।

नर्मिनी (हि० स्त्री०) नरमिनी देखो।

नगुन्द—अव्ययके धारवार जिलेके भन्तगंत नवलगुन्द तालुकका एक शहर। यह अक्षा १५° ४१' उ० और देशां ७५° २४' पू० धारवार शहरसे १२ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १०४१६ है। गौआपुर-के मुखसमान राजाओंसे शिवाजीने यह नगर जीत लिया

था। शिवाजीने इसे रामराव भावेकी हाथ सुपुर्द कर दिया। बाद इटिग गवर्नमेण्टने इसे अपने दखलमें ला कर इस शर्त पर दादाजी रावके हाथ लगा दिया कि वे प्रयोजन पड़ने पर इटिग गवर्नमेण्टको सहायता पहुंचाने रहें तथा शिरकान तक उनके विस्तृत होने रहें। लेकिन १८५० ई०के सिपाही-विद्रोहमें दादाजीने उक्त शर्त तोड़ दी और वे अपने स्वयं साधनमें लगे गये। इस पर इटिग गवर्नमेण्टने एक दल सेना नगुन्द-को भेजी और इमे जीत कर अपने मातङ्गमें कर लिया। यहां ब्रह्मलिङ्ग और दण्डेश्वरके दो प्राचीन मन्दिर हैं। इनके सिवा १७५० ई०का बना हुआ बहटेशका एक मन्दिर पहाड़के ऊपर एक दुर्गमें प्रतिष्ठित है। यहां ब्राह्मणकी पूर्वमार्ग प्रति वर्ष एक बारो मेला लगता है जिसमें हजारों मनुष्य-वसामन होते हैं। शहरमें छः स्कूल हैं इनमेंसे एक बालिका स्कूल भी है। नर्पाल—बैरारके पकोला जिलेके भन्तगंत पकोट तालुकका एक गिरिदुर्ग। यह अक्षा २१° १५' उ० और देशां ७७° ४' पू० के मध्य सतपुरा पहाड़के ऊपर अवस्थित है। इसकी ऊँचाई ११६१ फुट है। जिसे भरमें यही स्थान सबसे ऊँचा है। किरिस्ताके विवरणसे पता लगता है कि यह एक प्राचीन दुर्ग है। दादाजी के राजा परमद शाह यहीने इसका संस्कार किया था। नर्पालके सिवा पहाड़ पर दो और छोटे दुर्ग हैं जो इमे दोनों बगलसे घेरे हुए हैं। इसमें छः बड़े और इन्को छोटे प्रवेशद्वार हैं। इनके मोतर १८ फुटारिणी हैं, जिनमेंसे केवल चारमें बारहों मास जल रहता है। दुर्गके चन्द्र चार चत्वन सुन्दर प्रसारनिर्मित जलाधार हैं। बहुतोंका अनुमान है, कि जो नियोंके पवित्रारके समय ये सब जलाधार बनाये गये थे। पुरातन राजप्रासाद, मस्जिद, अस्नानगार, बारहदुपारी, रक्षासय, सङ्गेतेश्वर और अन्त्याश्व गृह मन्नावस्थामें पड़े हैं। दक्षिण दिगाका शाहनूर द्वार को सबसे सुन्दर है। यह सङ्गेतेश्वरका बना हुआ है। इसकी दोवारों नट होती जा रहो हैं। अभी दुर्गमें कोई नहीं रहता।

नर्त्त (स० स्त्री०) नृत्यति नृत्य भव्। १ नृत्यकला, नाच करनेवाला।

नर्तक (सं० पु०) नृत्यतीति नृत्तञ्च नृ । (गिरिनि श्वन् ।
पा ३।१।१४५) १ नट, नाचनेवाला । २ ननट्य, एक
प्रकारकी नरकट । ३ चारण, चन्दोजन, भाट । ४
केलक, खज्जरी धार पर नाचनेवाला । नृत्यकर्त्ताका
सङ्घ—

“यादृशं नृत्यपात्रं स्यात् शीतं योग्यञ्च तादृशम् ।

नृत्यवध्वं चारणात् पात्रं नर्तकः परिकीर्तितः ॥

और भी

अधम्बन्धप्रकापी च ददा भ्रूकुर्यतरारः ।

हासप्रहासचतुरो वाचाको मूलकीर्तिदः ॥”

(चं गीतरामोदर)

केसा नृत्यपात्र हीगा, वैसा हो मोत हीगा । इस
चवस्थामें नृत्यपात्र नाम धारण करनेसे नर्तक नाम
हुपा है, चयवा जो असम्बन्ध-प्रसाधो है, सर्वटा भ्रूकुटी
परावण है, हंसने और बोलनेमें खूब चतुर है उसे
नर्तककथि कहते हैं । ये लोग नाचगान कर अपना
गुजारा करते हैं । ५ सहृणी जातिभेद, एक प्रकारकी
सहरजाति । इसकी उत्पत्ति घोड़ी पिना और वैष्ण
मातासे मानो जाती है । ६ गज, हाथी । ७ नृप, राजा ।
८ महादेव । ये नृत्यविद्यामें बड़े निपुण हैं और बनेक
समय नृत्य भी करते हैं, इसीसे इनका नाम नर्तक भी
पड़ा है । (भारत १।१।०।४८) ८ मयूर, मोर । ९ देव-
नन, नरकट । ११ महुषा । १२ महुषा ।

नर्तकी (सं० स्त्री०) नर्तक विलात् ऊप । नृत्य-
कारिणी, नाचनेवाली, रंडी, वैष्ण, नटी । संस्कृत-
पर्याय—सासिका, खडगुर्वी, नटी, सखा । २ करेण,
हस्तिनी, हथनी । ३ नर्तकानाम् गन्धद्रव्य, मत्तो ।

नर्तन (सं० स्त्री०) नृत्त-भावे ण्युट । १ नर्तु, नीविचय-
भेद, नृत्य, नाच । (त्रि०) २ नर्तक, नाचनेवाला ।
नर्तनप्रिय (सं० पु०) नर्तनं नृत्यं प्रियं । १ नृत्यप्रिय-
मात्र, यद्य जो केवल नाचगा पसन्द करता हो । २ मयूर,
मोर ।

नर्तनवाला (सं० स्त्री०) नर्तनस्य गाना इ-तम् ।
नर्तनगट, वह स्थान जहाँ पर नाच होता हो, नाचघर ।
नर्तनागर (सं० पु०) नर्तनस्य भागारः । नर्तनगट,
नाचघर ।

नर्त्तापहारक (सं० पु०) धूसीकदम्ब, एक प्रकारका
कदम्ब ।

नर्त्तित (सं० त्रि०) नृत्त-ण्यच् भर्त्तयि ण । छतताण्व,
जो नचाया गया हो ।

नर्द (फा० स्त्री०) चौसरकी गोटी ।

नर्दकी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी कपास । कीई कीई
इसे कटील, निम्बी और बगई भी कहते हैं ।

नर्दटक (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक प्रकारका वर्ण-
हृत्त । इनके प्रत्येक चरणमें १० अक्षर होते हैं जिनमेंसे
५।०।१।१।१४वां अक्षर गुरु और शेष सभी क्षर लघु
होते हैं ।

नर्दन (सं० स्त्री०) नर्द-भावे ण्युट । गन्ध, भीषणध्वनि,
गर्जन ।

नर्दवाग (हिं० पु०) १ काठकी सीढ़ी । २ मार्ग,
रास्ता ।

नर्दा (हिं० पु०) मैसा बहनेकी नाली ।

नर्दा (हिं० स्त्री०) नर्दा देखो ।

नर्म (सं० पु०) नृ-मन् । दुःखमिष यस्मै बध्य पशुने
सहैगक देवमिद, नर्ममिषयस्मा यद्य देवता जिसके
सहैगमें पशुका बध किया जाता है ।

नर्मकोल (सं० पु०) नर्मणः परिहासस्य कोल इव,
बन्धनस्थानत्वात् । पति, स्त्री ।

नर्मट (सं० पु०) नर्म-चटन् । हृयोद(ादित्वात् साधुः ।
१ खपर, खपड़ा । २ सूर्य ।

नर्मठ (सं० पु०) नर्मणि कुमलः, नर्मन्-चटन् । १
नर्मकुमल, वह जो परिहास आदिमें कुमल हो । २ उप-
पति, जार, स्त्रीका थार । ३ परिहासक, वह जो हँसी
लगता हो, दिक्कगीवाज । ४ चिबुक, ठोड़ी, हुड्डी । ५
बुलूक, कुचाय भाग, टिपनो । ६ मूत्र, मूत्रप्रपाद ।

नर्मद (सं० त्रि०) नर्मददानि दा-क । १ केलिसविव,
चानन्द देनेवाला । (पु०) २ नर्मकुमल, दिक्कगीवाज,
मसखरा, माँड़ ।

नर्मदा (सं० स्त्री०) १ एका, चसवर्ग नामक गन्धद्रव्य ।
२ भारतवर्षकी एक बड़ी नदी । टलेमैके इतिहासमें
इसका नाम नर्मदम्ब रखा गया है । पछले यह नदी
पार्श्ववर्त्त और दाक्षिणात्यकी सीमानिर्देशक थी । रेवा

राज्यके अन्तर्गत अमरकण्टक नामक ३४८९ फुट ऊँचा एक पहाड़ है। यह पहाड़ इस नदीका उत्पत्तिस्थान है। यह पश्चिमी घोर ८०० मील बरफ कर भरोचके निकट समुद्रमें गिरती है। इसके उत्पत्तिस्थानके चारों ओर जङ्गल तथा जलशून्य है। किन्तु इस पवित्र नदीके उत्पत्तिस्थानकी रक्षा करनेके लिए कितने धर्मयात्रक इस निर्जन स्थानमें कुटी बना कर वास करते हैं। उपरीत पर्यन्तके गिखरदेग पर एक तालाब है, उसी तालाबसे नर्मदा नदी निकल कर प्रायः ३ मील तक लघुपूर्ण प्रान्तके ऊपर वक्रगतिसे बहती हुई अमरकण्टक मालभूमिके प्रान्तदेगमें गिरती है। इसी तीन मीलके भीतर बहुतसे स्त्रीतीका जल आ कर इसमें मिल गया है। मालभूमिके प्रान्तदेगसे ७० फुट नीचे गिर कर यह एक जनप्रपात उत्पन्न करता है। इस जनप्रपातका नाम है कपिनधार। यहाँसे थोड़ी दूर घोर घागे जा कर एक दूसरा जनप्रपात बन गया है जिसका नाम है दुग्धधार। कहते हैं, कि किसी समय यहाँ नदीमें दुग्धस्रोत बहता था।

जब यह अमरकण्टकसे निकली है, तब कहीं तो इसका योग तेज हो गया है, कहीं यह बहुत नीचे बह चली है, अन्तमें मध्यप्रदेगकी पार कर मण्डला पर्यन्त होती हुई रामनगरके भग्नावशेष-राजशासकके निकट पहुँच गई है। उत्पत्तिस्थानसे ले कर यहाँ तक नदीको लम्बाई प्रायः एक सौ मील है। एक विस्मृत पार्श्व-तोय प्रदेशमें जितना जल जमा होता है, वह यहाँ पर, इस नदीमें मिल जाया करता है। तेज धाराके अनेक शाखाओंमें विभक्त होनेसे बीच बीचमें अरुणसय होप बन गया है। इसके किनारे निबिड़ वन है, जिसके बड़े बड़े हवादि ऐसे वादसकी तरह ऊपरसे ठके हुए हैं। इसके दोनों किनारे जहाँ तक नजर दोढ़ाई जाती है, वहाँ तक पहाड़ ही पहाड़ देखनेमें आता है। रामनगरमें मण्डला पर्यन्त तक नदीमें न तो तेजधार है और न जनप्रपात की है। इस अंगका जल नीला है और इसके दोनों किनारे सुन्दर सुन्दर हवादिसे सुशोभित हैं। मध्य-प्रदेगमें जितनी नदियाँ बहती हैं उनमें यही सबसे बड़ी तथा सुन्दर है। अम्बसपुरके निकट ग्वारोघाट पर इस-

में वाणिज्यकार्य आरम्भ हुआ है। देखा जाता है, कि नदीमें बहादुरी काठकी बहा कर लोग अम्बसपुरसे वाजारमें बेचा करते हैं। अम्बसपुरमें ८ मील दक्षिण-पश्चिममें घुरन्वर नामक एक दूसरा जनप्रपात है जिसकी गहराई लगभग ३० फुट होगी। यहाँसे यह नदी प्रायः दो मील तक पहाड़के मध्य होती हुई सद्गोष्पातके ऊपर प्रवाहित होती है। इस स्थान पर इसकी लम्बाई ४० हाथसे अधिक नहीं होगी। बाद यह दो सौ मील तक उर्वरा उपत्यकाके ऊपर बह गई है। इस उपत्यकाके एक ओर विन्ध्य और दूसरी ओर मत्तपुरा पहाड़ है। वर्षा-कालमें इसमें सामान्यरूपसे वाणिज्यकार्य चल सकता है। अगहन महोत्समें ब्रह्मचाराके निकट एक भारी मेला लगता है। मोहपानो घोर तन्दुलराने कीयसे तथा मोहिकी खानके निकट होती हुई यह होमद्वाबाद, हन्धिया, निमावर और योगोगढ़की पहुँच गई है और फिर वहाँसे एक बार जङ्गलमें प्रवेग करती है। जङ्गलसे निकल कर यह एक गभीर और योग्यती धाराके रूपमें गाम्वाता होप पार कर बह चली है।

जब यह मध्यप्रदेग की कर आई है, तब राएमें इसके कई एक जनप्रपात हो गये हैं। नरसिंहपुर जिसके उमरिया नामक स्थानमें जो जनप्रपात है उसकी गहराई १० फुट है और मन्थार तथा दादरीके जनप्रपात ४० फुट गहरे हैं। मन्थार, चम्पार, खर्भार, कुङ्कनोर, बन्धुर, तिमार, सोनार, वेर, मकार, दूधि, कीरामो, मचना, तथा, गङ्गाल और चजनाल ये सब नर्मदाकी शाखा नदी हैं।

मन्थारके निकट नर्मदा मालवकी मालभूमिकी छोड़ कर गुजरातके विस्मृत प्रान्तमें प्रवेग करती है। पहले यह ३० मील तक राजपिपसाह राज्यकी गायकवाड़ राज्यमें प्रवृत्त करती है, पीछे ७० मील तक भरोच जिला होती हुई यकगतिमें प्रवाहित हो कर काश्चे समुद्रमें गिरती है। भरोचसे प्रायः २५ मील दूरान्त रायपुर तक खार भाटाका प्रतीप देखनेमें आता है। भरोच जिलेमें इसकी तीन उपनदियाँ हो गई हैं, धाई और कावेरी और अमरावती तथा दाहिनी घोर नदी। इन सब नदियोंकी लम्बाई ८०१ मील है।

क्रियाकार्यके लिये नर्मदाका जल कहीं भी व्यय-
हृत नहीं होता। गुजरातके अन्तर्गत जो प्रांत है उसमें
नावें आ जा सकती हैं। वर्षाकालमें बड़ी बड़ी भारवाहो
नावें भरोचमें ६५ मोल तलकघारा तक जाती हैं। २००
मन भारविशिष्ट समुद्रोत्त ज्वारके समय भरोचके बन्दर
में पाते जाते हैं। नर्मदाके तीरस्थ खोमीका विश्वास
था कि नर्मदा कभी समक ऊपर पुन बनाने नहीं देती;
किन्तु वर्ष १८६० ई.में भरोचके निकट
दूर कार दिया है। उन्होंने १८६० ई.में भरोचके निकट
जो पुल बनाया था वह बाढ़से टूट फूट गया। योहि
बहुत खर्च करके उन्होंने फिरसे एक दूसरा पुल तैयार
किया है। इसकी सिवा नर्मदाके ऊपर तीन और पुल
हैं, एक सोलत कामें, दूसरा होयव्वावादनमें और तीसरा
पेनिनसुला रेलवे का।

इस नदीके घोर कई एक नाम हैं, यथा—रेवा,
मखलकान्वा घोर सोमसुता। पुराणके मतानुसार नर्मदा
विजयपर्वतसे निकल कर पश्चिममें तमसा नदीमें जा
गिरी है, स्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें नर्मदाका
सप्तविधविवरण जो लिखा है, वह इस प्रकार है—

नर्मदा तीन बार पृथ्वी पर आई। पहली बार राजा
पुह्रवाकें समयमें, दूसरी बार सोमयशोध चिरञ्जिवेज
नामक एक राजाके समयमें और तीसरी बार इक्ष्वाकु-
वंशीय राजा पुबकुलके समयमें। ये ही तीनों राजा-
गण महादेवको तपस्यासे समुष्ट कर नर्मदाको स्वर्ग में
पृथ्वी पर भाये थे। देवी नर्मदा महादेवके अशुरोघसे
ही प्रवर्तित हुई थी। विश्वामित्रिने इनका प्रसन्न
वेग धारण किया था। रेवाखण्डमें ये शिवसीमन्तिनीके
रूपमें वर्णित हुई हैं। इनका रूप—

“स्वामिर्गो महादेवी चर्माभरणमृषिता।

मकरासनमाकृष्टा शिवस्यामे भवविधता ॥”

(रेवाखण्ड ३५ अ०)

मकरपुराणमें इनका विषय इस प्रकार लिखा है—
नर्मदा समीप नदियोंमें ओष्ठ घोर पापविनाशिनो है।
गङ्गा और कुशचेतनमें सरस्वती ये दोनों भी पुण्या हैं,
लेकिन ग्राम घोर प्रणव मभी स्थानोंमें नर्मदा पुण्य-
प्रदा है। सरस्वतीका जल तीन दिन और यमुनाका
जल सात दिन काममें लानेसे, गङ्गाजल सत्र्य मात्रसे तथा

नर्मदाका जल देखनेसे ही आत्मा धवित्र होती है।
कलह देवके पयाहागमें भ्रमरकण्ठक पर्वतसे यह नदी
निकली है। इस नर्मदाके किनारे यदि देवता, भ्रमर,
गन्धर्व, ऋषि घोर तपोधम यदि तपस्या करें तो उन्हें
भी बहुत बलद सिद्धि लाभ हो सकती है। जो नर्मदा
नदीमें स्नान करके इन्द्रिय संयमपूर्ण एक दिन उप-
वास करता है, उसके सो कुल सद्धार होते हैं। इस
नदीमें यथाविधि पित्रादिका पिण्डदान या तर्पण करने-
से कल्पके फल तक पित्रागण परितप्त होते हैं।

यह नदी गङ्गाको देहमें उत्पन्न हुई है, इसीसे
जितनी नदियां हैं सर्वमें यह परमन्त पुण्यप्रदा है।
इसमें स्नानादि कोई पुण्यकार्य करनेसे प्रलय फल प्राप्त
होता है। नर्मदाका स्तव।—

“नमो पुण्यजले गङ्गा नमो वागारामिनी।

नमस्ते पापघातनि नमो देवि वरानने ॥

नमोऽस्तु ते ऋषिगणधरिदेवि

नमोऽस्तु ते शंकरदेहिनिःसुते।

नमोऽस्तु ते परमं पदं वरप्रदे

नमोऽस्तु ते सर्वपापविनाशने ॥

यस्मिन् पठते स्तोत्रं तिलं हृद्ग्रसना नरः।

महायोगे वेदमार्गो विज्ञानो विजयी भवेत् ॥

वैश्वस्तु समते स्वामं गृह्येण धृमां गतिम्।

अथार्था उभये धामं समरगदधे तिलपः।

नर्मदां श्रवते तिलं स्वयं देवो महाेश्वरः ॥

तेन पुण्या नदी सेवा महाेश्वराधारिणी।

नर्मदायां जले पीत्वा अर्घ्ययिक्ता तृपन्धनम्।

दुष्टविघ्नं न पश्यन्ति तस्य तीर्थप्रभाततः।

एतत्तीर्थं समाधाप यस्तु प्रणान् पतितजैव ॥

सर्वपापविनाशाय प्रपते ह्रस्वन्दिरम्।

जलप्रवेष्टे च कुर्वीत तस्मिन्तीर्थे नराधिपः।

हंसयुक्तेन गानेन करलोके च गच्छति ॥

यत्पश्येत् सर्वश्रेष्ठ दिग्दर्शं महोदधिः।

गङ्गायां सतिता यावत् तावत् स्वयं महीयते ॥

अनघनन्द यः कुर्वीत तस्मिन्तीर्थे नराधिपः।

नर्मदायै नमः राजेश्वर न पुनर्भावे नरः ॥”

(मत्स्यपुराण १८० अ०)

जो प्रतिदिन इस स्तौतिका पाठ करते हैं, उनका मन विरह रहता है। ब्राह्मण वेद स्नान करते हैं, स्त्रिय विजयी होते हैं, वैश्य धर्म स्नान करते और गृह्य शुभगति पाते हैं। जो चरप्रार्थी हो कर नर्मदाका स्नान करते हैं, उन्हें प्रतिदिन प्रसन्न मिलता है। अन्य महादेव प्रति दिन नर्मदाको मेया किया करते हैं, इसीसे नर्मदा अत्यन्त पवित्रा और ब्रह्महत्यादि पापनाशिनी है। नर्मदाका जलपान करनेसे मया जलसे महादेवको पूजा करनेसे सभी प्रकारको दुर्गतियां नाश होती है। इस तीर्थमें जो प्राण त्याग करते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त हो कर शिवलोकको जाते हैं।

नर्मदाजलमें प्रविष्ट हो कर जो प्राण त्याग करते हैं, वे हंसयुक्त यान पर चढ़ कर रुद्रलोकको जाते हैं और वहां तब तक ठहरते हैं जब तक चन्द्र धर्म मौजूद है। नर्मदाके उत्तरी किनारे सो योजन विस्तृत जो एक तीर्थ है, वह महेश्वरतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है। यह तीर्थ भी पापनाशक माना गया है।

(रैवातगुहमें और मत्स्यपुराणके १८६ अध्यायमें १८६ अध्याय तक नर्मदा-महात्म्य वर्णित है।)

नर्मदा—मध्यप्रदेशका एक विभाग। इस विभागमें ५ जिले लगते हैं; यथा, होशंगाबाद, नरसिंहपुर, बेतुल, छिन्दवाड़ा और निमार्। इसका परिमाणफल १०५११ वर्ग मील है। इसमें ११ नगर और ६१४४ ग्राम लगते हैं। इस नगरके कई एक नाम हैं। यथा—बहानपुर, होशंगाबाद, खण्डवा, हर्द, नरसिंहपुर, छिन्दवाड़ा, गढ़वाड़ा, सोरागपुर, सेवनी और मोहगांव। यहां सिद्ध, धाम्य, चम्पाम्य बाबायें शस्य, कपास और ईश उपजती हैं। नर्मदा विभागका खोसल कुल १०००१८० वर्ग है।

नर्मदासमर्थ (सं० स्त्री०) नर्मदायां सन्धयते सम्-भू-प्रच्। नर्मदानदीस्थित बाधलिङ्गभेद। यह लिङ्ग अत्यन्त प्रसन्न है। इसकी स्थापति पञ्च जम्बूफलका तरह है। वर्ष मधुमा पक्षका कृति, मीन वा मकरतर्क जैसा है। जो नाम देवाचलिङ्ग स्थापित किया जाता है, उसका स्थापति पञ्चलिङ्गकी तरह होनी चाहिये। यह लिङ्ग पर्वतवर्ग नर्मदा नदीके जलमें स्थापित थाव निम्नगता है। पुराण-कालमें बाबासुरने मपदा करके महादेवसे प्रायश्चा

की थी। संतो प्रायः नाथ संतुमारे महादेव लिङ्गमें सम पर्वत पर अवस्थान करते हैं, इसी कारण इस लिङ्गकी पूजा करनेमें जो फल मिलता है, एत बाधलिङ्गको पूजा करनेसे भी वही फल प्राप्त होता है। इस बाधलिङ्गको वेदो मीने, चारो, तांघे वा पत्थरकी होनी चाहिये। सभी धर्मोंमें इस लिङ्गको स्थापना करके पूजा करना होती है। जो प्रतिदिन नाम देवान-लिङ्गकी पूजा करते हैं, उनको मुक्ति सन्धि प्राप्त है, ऐसा जानना चाहिये। (हेमाद्रि) विशेष शिवान बाधलिङ्गमें देखो। नर्मदेय (सं० स्त्री०) नर्मदाया स्थापितो ईयो वन। काशीस्थित शिवलिङ्गभेद। इस लिङ्गको नर्मदाने प्रतिष्ठित किया है, इसीसे इसका नाम नर्मदेय वा नर्मदेयार पड़ा है। इसकी उत्पत्तिका विवरण काशीवृषभमें इन प्रकार लिखा है—

एक समय मुनिवर्गने मार्कण्डेयकी प्राप्त पट्ट'स कर उनसे पूजा या, 'प्रभो! इस पृथ्वी पर कौन नदी खोटा और पापनाशिनी है?' उसमें मार्कण्डेयने कहा था, 'पृथ्वी पर अनेक नदियां हैं उनमेंसे जो समुद्रगामिनी हैं, वही खोटा हैं। फिर इनमेंसे सो गङ्गा, यमुना, सरस्वती और नर्मदा प्रधान हैं। गङ्गा कृष्णवेदकी, यमुना यशुवेदकी, नर्मदा सामवेदकी और सरस्वती ऋग्वेदकी मूर्ति है। इनमेंसे गङ्गा ही सर्वप्रधाना है। पुराणकालमें नर्मदाने बहुत काल तक ब्रह्माके चह्नेयसे तपस्या की थी। ब्रह्मा जब वर देनेके लिये उद्यत हुए, तब नर्मदाने प्रार्थना की, 'यदि पाप मुझ पर प्रभव हैं, तो जिसमें मैं गङ्गाको बराबरी कर सकूँ, वही वर देनेकी कृपा करे।' यह सुन कर ब्रह्माने कुछ मुनिकुल कर कहा, 'जगत्में यदि कोई महादेवकी बराबरी कर सके, तो भव्य नदी भी गङ्गाका बराबर कर सकती है।' ब्रह्माके यथन सुन कर नर्मदा काशी गई और वहां पितृपिता तीर्थमें विधि-उपकी निवृत्ति विधिपूर्वक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की। इस पर महादेव नितान्त प्रसन्न हो नर्मदाने पाप जा कर बोले, 'नर्मदे! मैं तुझ पर बहुत प्रसन्न हूँ, पतः पवि-साधन कर मांगो।' नर्मदाने विनीतमाधमे कहा, 'मैं दूसरा कोई वर नहीं चाहते, सिवा इसका, कि पापके चरममें मेरी भक्ति सदा बनी रहे।' दिव्यज्ञा बोले,

‘नर्म’ दे। जो कुछ तुमने कहा, वही होगा, किन्तु मैं इसको तब एक दूसरा वर भी देता हूँ। तुम्हारे जनमें जितने पत्थर हैं वे हमारे वरसे लिङ्गरूपो होंगे। गङ्गा सदापाव हरण करती है, यमुना एक सप्ताहमें घोर सर-स्वती तीन दिनमें। किन्तु दग्ध नमात्रसे ही तुम मनुष्योंको पाप हरण करोगे। तुमसे स्थापित नर्मदेश्वर नामक यह पवित्र लिङ्ग भक्तोंके लिङ्गदायक होगा। इस नर्मदेश्वर लिङ्गका माहात्म्य बहुत बहुत है।’ इतना कह कर शिवजी कुरुलिङ्गमें प्रकटित हो गये।

जो नर्मदेश्वरका यह माहात्म्य सुनते हैं, वे सब प्रकारके पापोंसे रहित हो कर लकृष्ट ज्ञान लाभ करते हैं। (काशीखण्ड १२ अ०)

नर्मदेश्वर (सं० पु०) एक प्रकारके शिवलिङ्ग जो नर्मदा नदीसे निकलते हैं। नर्मदेश देखो।

नर्मन् (सं० स्त्री०) नृ नये मनिन् (सर्वपात्रुणो मनिन्। उण् ७।१३) परिहास, हँसो।

नर्मरा (सं० स्त्री०) नर्मन् भस्वर्थे र, टाप्। १ दूरी, शुभा, खोब। २ भण्ड, वस्त्रतन। ३ निष्कला, हठा स्त्री, सुद्विधा। ४ सरसा, एक प्रकारका पेड़। ५ भस्त्री, भावी, धौकनी।

नर्मवत् (सं० त्रि०) नर्मं विद्यतेऽस्य नर्मं मनुष्य, मस्य व। १ नर्मयुक्त, जिसमें भानन्द मिले। (स्त्री०) २ नर्मवती, भानन्द, हँसी, दिव्यगी। ३ नायिकाभेद, एक नायिकाका नाम। ४ तदाख्यायिकाकृप रासक नाटकभेद, साहित्यद्वयं नर्मं इति नाटकका उल्लेख है।

नर्मसचिव (सं० पु०) नर्मसु सचिवः अन्तर्। परिहास-सहाय, यह मनुष्य जो राजाके साथ उसे हँसानेके लिये रहता है, विदूषक।

नर्मसाचिव्य (सं० स्त्री०) नर्मसु साचिव्यं। विदूषकका कार्य, हँसो मजाक करानेका काम।

नर्मसुहृद (सं० पु०) नर्मसु सुहृदः। नर्म सचिव, वह जो हँसी मजाक करता हो, विदूषक।

नर्मस्फूर्ज (सं० पु०) भयान्त सुख वा आनन्द।

नर्मस्फोट (सं० स्त्री०) सामान्य आनन्द, साधारण हँसो दिव्यगी।

नर्मान्—यूरोपीय जातिविशेष। फ्रान्स देशके उत्तरमें

नर्मान्दि नामक एक प्रदेश है। वहाँके अधिवासी इति-हासमें नर्मान् जाति नामसे मयहूर है। फ्रान्समें जिस समय चार्ल्स-दि-सिम्यल राज्य करते थे, उस समय अर्थात् ८७० ई०में रोनी नामक कोई नौरवेके सरदार डेन्मार्कके राजासे भगाये जाने पर फ्रान्सके किनारे उपस्थित हुए और इङ्गलिश वैनलके पार्श्ववर्त्ती स्थानोंमें उपान्त मचाने लगे। उसके समान उस समय पराक्रान्त जलदस्य दूसरा कोई नहीं था। उसके पत्न्याचारसे उत्तर और दक्षिण फ्रान्स, इङ्ग्लैण्ड और वेल्सजिबम आदि निम्न देश तंग भा गये थे। ये लोग नोर्थमेन अर्थात् उत्तर देशके मनुष्य कहलाते थे। अन्तमें रोनीने ८११ ई०में बहुतसे लोगोंको साथ ले फ्रान्सकी राजधानी पैरिस नगरीको घेर लिया। राजा चार्ल्स-दि-सिम्यलने उसे झूक भाग नर्मान्दिकी सपाधि दे कर नर्मान्दि प्रदेशमें बसाया। यह राज्य पा कर रोनी दस्युवर्त्तकी परित्याग और खूटधर्मको पक्ष्य करनेमें राजी हुआ। पीछे चार्ल्सने अपना बहुतको जिसलके माथ उसका विवाह कर दिया। ८१२ ई०में रोनी रबर्ट नाम धारण कर ईसाई हुए। बाद उन्होंने ख्याती दिये हुए सोन नदीसे ले कर अपने नदी तक विद्यत नर्मान्दि राज्यका शासन-भार ग्रहण किया। वहाँके समयमें नर्मान्दिमें विदेशी लोग आने जाने लगे और बहुतसे लोग यहां बस भो गये। वहाँने अपने सेनापतियोंकी सारा राज्य बांट दिया। अनन्तर वे सब सेनापति उस समयके यूरोपीय सामन्तराज्योंके नियमानुसार रीलोंके अधीन सामन्तरूपसे देशाधिकार कर रहने लगे। रोनीको पोतो एमाके साथ इङ्ग्लैण्डाधिप हितोय एथेलरेडका विवाह हुआ। १००२ ई०में नर्मान्दिके झूक २५ रिवाइडके साथ उनके भगिनोपति इङ्ग्लैण्डके राजाका विवाह दिव्य। इसी सु-भवासरमें इङ्ग्लैण्डराजने नर्मान्दि पर चढ़ाई कर दी। किन्तु पाप हो परास्त हुए। १०१२-१४ ई०में जब डेन्मार्कके राजा सोयेंने इङ्ग्लैण्ड पर आक्रमण किया था, तब एथेलरेड परास्त हो कर पला-पुत्रकी साथ ले ख्यालके निकट रहने लगे थे। अन्तमें नर्मान्दिके झूक रयर्टने राजा हो कर अपने पित्र-सहायके पुत्रोंके लिये इङ्ग्लैण्डमें सेना भेजी, किन्तु राइ-

में ऐसा भारो मुकान सठा, कि समो जड़ी जहाज विपरीत दिशाको जाने गयी। इनके बाद इनके पुत्र विनिदम-दि-वाटर्ब राजा हुए। इन्होंने ही १०६५ ई० में इङ्ग्लैण्ड के माघ प्रथम युद्ध पारम्भ किया था। दूसरे वर्ष अर्थात् १०६६ ई० में इन्होंने बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर गेष्ठ-मारक्रमण नामक वर्ष-दिनमें इङ्ग्लैण्ड की यात्रा की और उसी मास इङ्ग्लैण्ड जीत लिया। बाद के विलियम "दि कन्करर" (विजेता) नामसे इङ्ग्लैण्ड के राजा हुए। नर्मन्दीकी घूक-कुमारी एथाके विवाहमें लेजर विलियम कन्करर इङ्ग्लैण्ड जीते जाने तक इङ्ग्लैण्ड के माघ नर्मन्दीकी विशेष घनिष्टता हो गई। इस खूबमें इङ्ग्लैण्डमें दिनों दिन नर्मन्दीका प्रभुत्व हीने लगा। अन्तर्ग १०६६ ई० में इङ्ग्लैण्ड नर्मन्-राजके हाथ आ गया। विलियम-मंशने इङ्ग्लैण्डमें राज्य पारम्भ कर दिया।

नर्य (सं० लि०) दृढो हितं यत्। १ मनुष्यचित्त, जो आदमिके लायक हो। २ साहस, धोर। ३ वलवान्, ताकतवर।

नर्य (हि० स्त्री०) १ जबर जमोजमें होनेवाली एक प्रकारकी बारहसामो घास। २ हिमालय पर्वत पर होने-वाला एक प्रकारका पहाड़ी घास।

नर्मपुर—१ ईशरावाद राज्यके निजामाबाद जिलेका पूर्व-वर्ती तालुक। भूपरिमाण ५१० वर्ग मील और लोकसंख्या ५५०५६ थी। इसमें १३८ ग्राम लगते थे और राजस्व एक लाख रुपयेमें अधिकका था।

२ सप्त तालुकका एक प्रधान नगर। यह पचा० १६° २६' ०" और देशा० ८२° ४४' ०" के मध्य अवस्थित है। १९६४ ई० में पोन्दाग्रीमें यहां कोहिलो ठण्डाईका कारगुजाना खोला था। १९०७ ई० में इसका उत्तरोत्तर भाग चण्डेश्वरीके अधिकांशमें आ गया था। आसन्न वर्ष चण्डेश्वरी चण्डेश्वरी गाँव बनाई जाती है।

नर्मपुर—१ महिपुर राज्यके हसन जिलेका एक नगर। यह पचा० १२° ४७' ०" और देशा० ७६° १६' ०" के मध्य हसनती नदीके किनारे अवस्थित है। यह नर्मपुर तालुकका प्रधान व्यापार मार्ग मार्ग है। १९६४ ई० में नर्मपुर नामक किसी मनुष्यने यहां एक किंसा बनवाया

था। महरमें स्त्री कहने और तसरका ध्वसाय चन्दा चलता है।

२ महिपुरके हसन जिलेका एक तालुक। भूपरिमाण ४७६ वर्ग मील है।

नन (सं० स्त्री०) नन्वतीति नन्-पच०। १ पद्म, कमल। (पु०) २ लघुविशेष। संस्कृत पर्याय—पद्मन, चोटगन, नान, नङ्ग, कुचिरग्न, कीचक, दीर्घवंग, शून्यमध्य, विभोपण, छिद्रान्त, मृदुपत्र, पंगपत्र, मृदुच्छद, लालवंग। गुण—शीत, कषाय, मधुर, रुचिकर, रक्तपित्त प्रमन, दीपन और योग्य हृदिहारक। (भाष०)

नन—१ चन्द्रवंशीय निपधाधिपति चोरसेनके पुत्र। भारत-खण्ड (१।५।११) में लिखा है—

"जाघीर राजा नलो नाम चोरसेनपुत्रो वही।

उपगन्तो गुणिरिष्टे हावानरकोपिदः॥"

चन्द्रवंशीय निपधाधिपति चोरसेनके पुत्र का नाम नन था, जो चन्द्रवंशी के समान रूपवान् तथा सङ्गत गुण-धामविभूषित, चण्डकी परोक्षा और परिचासनविषयके प्रसाधारण पण्डित थे। ये ब्रह्मनिष्ठ, वेदज्ञ और च्युत-नियानुरक्त थे। इनकी गुणानुरागसे देवगण भी इन पर अनुसृत थे।

उस समय विदम्भदेवमें भीमवराक्रम राजा भीम राज्य करते थे। राजा भीमने तपस्या द्वारा तीन पुत्र और एक अनीलसामाया कन्या प्राप्त की थी। इस कन्याका नाम था दमयन्ती। महामति नन, दमयन्तीके रूप और गुणकी कथा सुन, उन पर आगस्त हो गये। यह आसक्ति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। नन मनका भाव गोपन रखनेके परिणामसे दमयन्ती पर आश्रयमें रहने लगे। एक दिन वहाँ कुछ सुन सी रंगके वस्त्र दिएवाड़े दिये। ननने उनमेंसे एकको सठा लिया। उस वस्त्रमें मनुष्यकी स्त्रियोंमें ननने कथा, "अयं मुझे छोड़ दे" में आपका उपकार कर्तगा। विदम्भदेवमें जा कर मैं दमयन्तीके समस्त आपके रूपगुणोंको देखो प्रमत्ता कहंगा कि किर के निवा आपके पथ किमोको भी धन्य पति न बनाने।" ननने तात्परात् हँसको छोड़ दिया। हँस भी निमग्न न कर मोक्ष की विदम्भदेवकी ओर चक दिया। वही

जा कर उसने दमयन्तीसे कहा, "दमयन्ति ! निवधाचि-
पति नल रूपमें कन्दर्प सहज हैं। तुम भी रमणियोंमें
श्रेष्ठ हो। तुम यदि नलको अपना स्त्री बनाओ तो
विशिटके साथ विशिटका संयोग हो जाय।" दमयन्तीने
हँसके सुँहसे यह बात सुन कर कहा, "मैं पहलसे ही
नल पर अनुरक्त हूँ, अब तुम्हारे सुँहसे उनको प्रगंसा
सुन प्रतिज्ञा करती हूँ, कि नल ही मेरे पति हैं, नलके
सिवा अन्य किसीके भी साथ मैं विवाह न करूँगी। तुम
कृपा कर मेरी यह प्रतिज्ञा नलको सुना देना।" हँसने
बा कर अब हास नलसे कह दिया। नल बड़े आनन्दित
हुए।

उधर महाप्रति भोसने दमयन्तीको प्राप्तयोगना देख
स्वयम्बरजी तैयारियाँ कीं। स्वयम्बरके लिए सब
राजघोषोंकी निमन्त्रण दिया गया। नल राजा भी चले।
राक्षसोंमें देवोंसे उनको भेंट हो गई। 'देवोंने नलसे
कहा, "तुम हमारी ओरसे दूत बन कर दमयन्तीके
पास जाओ और कहो, कि इन्द्र, अग्नि, यम और वरुण
ये चारों लोकपाल स्वयम्बरमण्डपमें उपस्थित हुये हैं;
चारोंमेंसे जिसकी चाहे, उन्हें वरण करो।' नल 'तथास्तु'
कह कर चल दिये। देवताओंके प्रभावसे उन्हें कोई
देख न सका।

नल दमयन्तीके पास पहुँच कर उनसे कहने लगे—
"अयि कल्याणि ! मेरा नाम नल है, मैं देवताओंका दूत
बन कर यहाँ आया हूँ; इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम ये
चारों लोकपाल तुम्हें पानेकी इच्छासे स्वयम्बरमण्डपमें
पधारे हैं वनमें किसी एकको अपना पति बनाओ। मैं
देवताओंके प्रभावसे लोगोंमें अवचित हो कर यहाँ
तक आया हूँ। जो कुछ कहना हो सब निवेदन
करूँगा।" इसके उत्तरमें, दमयन्तीने देवोंके लिए कोटि
नमस्कार कहा, "मैं हँसके सुँहसे आपकी प्रगंसा सुन-
कर प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ कि नल ही मेरे पति हैं। अब
किस तरह मैं अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग कर द्विचारिणी होऊँ ?"
इस पर नलने देवोंकी तरफसे दमयन्तीको भनके उपदेश
दिये, परन्तु दमयन्ती पर कुछ भी असर न पड़ा। वे
बोलीं— "मैं नलकी वरण कर चुकी हूँ, अब किस तरह
देवोंको वरण कर सकती हूँ ?" देवगण धर्मरक्षक हैं,

उनकी कृपासे मैं अपने धर्मकी रक्षा करनेमें समर्थ
होऊँ, यही मेरी कामना है।" दमयन्तीको स्थिर-
सहस्य देख नल खोट पाये और देवोंसे अब वृत्तान्त
कह सुनाया।

ग्राममुहूर्तमें राजा नल विविध भूषणोंसे विभूषित हो
स्वयम्बरमण्डपमें उपस्थित हुए। देवगण भी नलका रूप
धारण कर वहाँ मण्डपमें बैठे थे। इधर दमयन्ती भी
मखियोंके सहित स्वयम्बर-सभामें आ पहुँची। एक सहा
राजाओंकी नाम और गुण वर्णन करती हुई चलने लगी।
नलके प्रति अत्यन्त अनुराग होनेके कारण दमयन्तीने
अन्य राजाओंकी तरफ सुँह ठठा कर भी नहीं देखा।
चलते चलते जब नलके पास पहुँची, तब वहाँ उन्हें
एक साथ पाँच नल बैठे दिखाई दिये। दमयन्ती
देवोंको माया समझ गई और परम भक्तिके साथ
उनकी स्तुति करने लगी। देवगण समुद्र हुए। तब
उन्होंने देवोंके स्नेह-रहित और स्वाधनेन इन नल-
को देव प्रजात नलको पहचान लिया और उन्हींके गतिमें
वरमाला डाल दी। इन घटनासे देवगण दमयन्ती पर
अत्यन्त प्रमत्त हुए और नलकी उनकी गुणोंके लिए
पुरस्कारस्वरूप ८ वर प्रदान किये। शचीपति इन्द्रने
खुश हो कर यज्ञमें प्रत्यक्ष दर्शन देने और उत्तम गति
होनेका वर दिया। अग्निने, नल जहाँ चाहेगी वहाँ
अग्निका आभिर्भाव होगा और लोग अग्नि सहस्र दीप्य-
मान होगा, ऐसा वर दिया। यमने यज्ञमें विशिट रस
पाने और धर्ममें उत्कृष्ट मति होनेका वर दिया तथा
वरुणने नल जहाँ चाहेगी वहाँ जलका आभिर्भाव होने
तथा उत्तम गन्धान्वित माल्य पानेका वर प्रदान किया।
इस प्रकार नलकी आठ वर प्राप्त हुए।

शास्त्रानुसार नलका दमयन्तीके साथ विवाह हो गया।
राजगण दमयन्तीका विवाह देख विस्मित एवं विषण-
न-दयने अपने अपने स्थानकी चले गये। इन्द्रादि देवगण
जिस समय सूर्यको जा रहे थे, उसी समय काल और
हापरका स्वयम्बर-खनमें आना हुआ। मार्गमें देवताओंके
साथ उन दोनोंका साक्षात् हो गया। देवताओंसे स्वय-
म्बरका वृत्तान्त सुन कर दोनों नल पर अत्यन्त कुपित
हुए। देवीने उन्हें समझाया कि दमयन्तीने हम लोगोंको

पटुमति के अनुसार जो ऐसा किया है, पर तो भी उसका क्षोभ शांत न हुआ। सर्वदा वे मन में छिद्र टूटने लगे; क्योंकि बिना पाप के प्रविष्ट हुए उनके शरीर में प्रयोग करने की उनमें क्षमता हो न थी। जानाघर में राजा मन्त्र एक पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई। पुत्र का नाम रज्जु गया। इन्हींमें और कन्याका इन्दुमेना। इन प्रकार द्वादश वर्ष व्यतीत हो गये, तथापि मन्त्र के शरीर में पाप प्रविष्ट न हो सका। बारह वर्ष की लाने पर एक दिन नम मूलशोध त्याग कर पाद प्रक्षालन करके ही मग्न्या करने बैठ गये। कर्मिन् इसी सुख में लगे शरीर में प्रवेश किया। इनके बाद कलि अन्य रूप धारण कर मन्त्र के भ्राता पुष्कर के पास गये और बोले, “तुम मेरी सहायता में पञ्चक्रोड़ में मन्त्र को परामर्श कर निषेधका राज्य लाभ करो।” पुष्कर इस बात पर राजी हो गये और मन्त्र के साथ पञ्चक्रोड़ में प्रवृत्त हुए। मन्त्र के शरीर में कलि के प्रविष्ट हो जाने से, वे दमयन्ती के सिवा राज्यादि सम्पूर्ण सम्पत्ति द्यूतक्रोड़ में हार गये। इधर दमयन्ती ने राजा के पास बार बार पादमी भेजा और निषेध किया। किन्तु मन्त्र को किसी तरह भी चेतन्य न हुआ। दमयन्ती की जब मालूम हुआ कि पति द्यूत में सब हार गये हैं, तब उन्होंने पुत्र-कन्या को साथ-साथ अपने पीछे भेज दिया। मन्त्र ने दूतसर्वस्व को दमयन्ती के साथ रह त्याग दिया और नगर के प्रास्ताभ्यास में तीन दिन रहे। इधर पुष्कर ने नगर-वासियों के लिए पाद्रेय मित्राणां कि, ‘यदि कोई मन्त्र को सहायता या पाहासादि देगा, तो वह जानने मार दिया जावेगा।’ राजा के भय से कोई भी मन्त्र की सहायता न कर सका।

मन्त्र तीन दिन तक सुषामे पीड़ित हो कम नून की शोष में लक्ष्मी बन दिये। दमयन्ती भी उनके साथ चली। सुषामाहित मन्त्र की बहुत दिन बाद सुनकर रंग-के कुछ पत्नी हीन पड़े, क्योंकि लक्ष्मी मन्त्र द्वारा उन पतिव्रतों की पाप्मादिना किया, लक्ष्मी की पत्नीगण सब मन्त्र की से कर बाधायें लड़ गये। लक्ष्मी समय प्रसिद्धि में सम्बोधन-पूर्वक मन्त्र के पास, “तुम जो पञ्चक्रोड़ में सर्वस्वगत हुए हो, वर भी हमारे द्वारा ही हुआ है—इस योगी ने पत्नी को कर तुम्हारी ऐसी बख्शा कर दी

है। अब तुम सब पढ़न कर निको, यह हम योगी की मन्त्र नहीं हुआ और इतनी दम मन्त्र की भी हम योगी ने हार कर लिया।” इस घटना ने मन कि कर्तव्यविमूढ़-ने हो गये और दमयन्ती की विद्वत्-मन्त्र जगति के लिए उप-देग देने लगे। परन्तु दमयन्ती ने निराशा कातर हो कर कहा, “यदि पाप भी चले तो मैं चम सकती हूँ। पाप की छोड़ कर स्वर्ग-राज्य की भी मुझे क्षमिताया नहीं है।”

मन्त्र नम और दमयन्ती एक ही मन्त्र पढ़न कर चले लगे। कुछ दूर जा कर दमयन्ती ने चला न गया, वे नितान्त परियाता हो कर बैठ गईं। फिर दमयन्ती ने मन्त्र के जड़देग पर मन्त्र रख कर मो गईं। दमयन्ती ने सो जाने पर नम विचारने लगे—दमयन्ती को पशियाग करनेका यही अवसर है। परन्तु मन्त्र एक ही ही छोड़ तो कैसे छोड़ें? इस प्रकार चिन्ता करते करते नम चरित्र हो उठे। शरीर में कलि के रहने से उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी और इसीलिए उन्होंने दमयन्ती की त्यागनेका निषेध कर लिया। यथासमय सामने एक कोपमुक्त राजा दीन पड़ा, मन्त्र ने भट्ट में उठा वर लक्ष्मी के दो लण्ड कर डाले। फिर पत्न्या सावधानी से दमयन्ती को मन्त्र जमीन पर रखा। दमयन्ती की इन दुर्दशा को देख नम नितान्त भयसक्त हो रोने लगे। एक बार दमयन्ती को छोड़ कर कुछ दूर चले जाने और फिर लौट कर व्याकुल हो रोने लगने थे। इसी प्रकार बार बार जाने पाने लगे। मन्त्र ने दमयन्ती को कुछ दूर कर के यह कह कर, ‘दमयन्ति। तुम नितान्त पतिवरायण हो, इसलिये पादित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, महागण और पशुगणकुमारदय तुम्हारी रक्षा करेंगे,’ वराने चम दिये। मन्त्र की बुद्धि क्षति हारा परन्तु जेने के कारण वे अनुपनीय नियतमा भार्या को छोड़ कर पाने चले लगे। कलि उस समय मन्त्र के हृदय में विमोह-रूप से पादित है, इसलिये मन्त्र की बुद्धि विनष्ट हो गई। वे अगम्य यम में चले गये। प्रचलित भार्या की निद्रितावस्थामें छोड़ कर पत्नीविराज करने हुए वराने चम दी दिये, फिर न मोटे।

मन्त्र ने चले जाने पर दमयन्ती की काल मित्रा मन्त्र

हुई। ठठकर देखा तो नल नहीं। सतो दमयन्ती कहण-
भावसे रोने लगीं, उनके रोदनसे वनके पशु पक्षी भी मानो
रोहयमान हो उठे। इसके बहुत दिन बाद दमयन्ती
सुवाहुनगरमें उपस्थित हुई। और वहाँ राजगृहमें कुछ
दिन खैरिभीके बेगमें रह्यो। विदर्भाधिपति भोमने कार्य
कुशल ब्राह्मणोंको इन दोनोंको टूटनेके लिए देशा-
दिगान्तर भो भेजा। सुदेयने सुवाहुनगर पहुँच कर दम-
यन्तीका पता लगाया। उसके बाद दमयन्ती भोमके यहाँ
लाई गईं और वहाँ रहने लगीं।

राजा नलने दमयन्तीको त्याग कर गहन वनमें
प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने देखा, भयानक दावानल
जल रहा है और उस प्रवृत्तित अग्निमेंसे कोई धोल रहा
है कि 'हे नल! हे पुण्यशोक! भोज भाषो।' यह सुन
कर नलने, 'कुछ भय नहीं है,' ऐसा भाव्य दे उस अग्निमें
प्रवेश किया। उसमें एक महानाग जल रहा था। नलको
देख उसने कहा, 'राजन्! नारदके शापमें सुभनें एक
कदम भी चलनेकी शक्ति नहीं रही, भोज ही तुम मेरा
रक्षा करो। मेरा नाम कर्कोटक है, मैं तुम्हारा महल
विधान करूँगा।' इतना कह कर कर्कोटकने अपना शरीर
अद्भुत-प्रमाण कर लिया। नल उसे उठा कर निकल
पाए। तब कर्कोटकने फिर कहा, 'महाराज! आप कुछ
कदम भागे बढ़िये।' ल्यों ही नलने १०वीं कदम बढ़ाई,
ल्यों ही कर्कोटकने उन्हें हँस लिया। कर्कोटकके हँसते
ही नलका रूप बदल गया। नलको बड़ा आश्चर्य और
दुःख हुआ। तब कर्कोटकने कहा—'राजन्! लोग
आपको पहचान न सकें, इसीलिए मैंने आपको हँस
कर आपका रूप बदल दिया है। आप जिसके कारण
कष्ट पा रहे हैं, वह मेरे विपक्षे सन्तप्त हो कर आपके
शरीरमें अवस्थान करेगा। मेरे प्रसादसे आप किसी भी
शत्रु, दुष्ट और वेदविद्वेष्टमें भीत न होंगे। आप
भाज ही यहाँ भयोध्या चले जाइये और वहाँके राजा
ऋतुपर्ण के बाहुक नामक सारथि वन जाइये। राजा
ऋतुपर्ण द्यूतविधाविशारद हैं, उनके पास रह कर
द्यूतविधा सीखनेसे आपका महल होगा। फिर पत्नी
और पुत्रादिक साथ भी आपका मिलन हो जायगा।
जब आपकी अपना प्रकृत रूप बनाना हो, तब मेरे दिए

हुए वस्त्रयुगलकी आप अपने ऊपर डाल दीजिएगा।
वस, फिर आपका रूप पहले जैसा हो जायगा।' अन-
न्तर कर्कोटक उन्हें दीवस्त्र प्रदान कर वहाँसे चल दिया।

राजा नल दस दिनमें भयोध्या पहुँचे और राजा
ऋतुपर्ण के यहाँ सारथिका कार्य करने लगे। धीरे धीरे
राजासे उनका मोह्य हो गया। परन्तु दमयन्तीके
समावेश से सर्वदा विमर्ष रहते थे और प्रतिदिन सोने-
के पहरे इस शोककी पट्टा करते थे,—

"कवचु सा क्षुत्पिपासार्ता भ्राता छेते तपरिवनी।

स्मरश्री तस्य मन्दस्य कं वा घाघोपतिष्ठते ॥"

(यात वनपं ७६ भं.)

अर्थात् वह तपस्विनी आत्मा और क्षुत्पिपाससे कातर
हो कर इस मूढ़को स्मरण करती हुई कहाँ हो रही
है, और न मानूँ मैं किसी उपसिन्ना कर रहो है।

दमयन्तीके पित्रभवनमें जा कर नलको दूढ़नेके लिए
मातासे प्रार्थना करने पर, भोम-महिषीने राजासे कह
कर चारों ओर कार्यकुशल ब्राह्मणोंकी भेजा। दमयन्ती-
कथित कुछ गायार्थ उन लोगोंने याद कर लीं और
उन्हें पढ़ते हुए वे नाना स्थानोंमें पर्यटन करने लगे।
परन्तु कोई भी नलका पता न लगा सका।

पर्षाद नामक एक ब्राह्मण नलकी खोजमें भयोध्या
पहुँचे। वहाँ राजा ऋतुपर्णके बाहुक नामक एक सारथि-
ने उनको गाथा सुन कर दीर्घनिद्रास त्याग किया
और कहा, "पतिपरायणा कुकीर्ण-स्त्रियां विप्रमावस्याको
प्राप्त होने पर भी अपने आप ही प्रयत्नी रक्षा करती हैं,
इस कारण उन्हें स्वर्गको प्राप्ति होती है। पति यदि
किसी विपत्तिके पा पड़ने पर उसे त्याग दे, तो उस पर
क्रोध करना उचित नहीं। जो व्यक्ति प्राणरक्षाने लिये
छेटा करने पर भी पत्नियों द्वारा हतवस्त्र हो कर नाना
प्रकारको मानसिक पीड़ाओंसे दण्ड होता है, उस पर क्रोध
करना श्यामास्त्रोके लिए उचित नहीं है। श्यामास्त्रोकी,
चाहे वह पति द्वारा सक्त हो या असक्त, राज्यभ्रष्ट
व्यसनानुर पति पर क्रोध न करना चाहिये।"

पर्षादने जब इस ब्रह्मचरको दमयन्तीसे जा कर
कहा, तो दमयन्ती समझ गई कि ये नलके पिता और
कोई नहीं है। नलको बुलानेके लिए उन्होंने एक

यज्ञ में गया निजामा । नदी में मुटवकी मुना कर कहा,
 "तुम नीचे चलो ध्याना कर अतुल्य राजाकी संथाद
 हो नि दमयन्तीने पुनः स्वयम्बरकी प्रतिभाया की है।
 चल जो स्वयम्बर होगा।" राजा अतुल्य इस संवाद-
 को पा कर विदग्धः देवकी भान्सी नैयारिया करने लगे।
 मादृशने गया ऐसा बोले या नहीं जो एक दिनमें
 विदग्धनगर पहुँचा भके। बादृकने भी यह संवाद
 सुना, उसका हृदय विदीन हो गया। राजा अतुल्य
 बादृक और वार्ष्णेयके साथ विदग्धनगरकी चल दिये।
 रथ बढ़ो तेजोमें चलाने लगा। मार्गमें राजा अतुल्यने
 नलकी अवबिज्ञान मिलाया। तब कनि नलके हृदयमें
 निकल कर विषयमन करने लगा। नल कनिकी गाव
 देना चाहते थे, किन्तु कनि उनके शरणाग्रह को गथा और
 कहने लगा, "राज्ञन् ! जो तुम्हारा नाम स्मरण करेगा,
 उसे कनिका भय न रहेगा।" इस पर नलने उसको समा-
 प्रदान की। अब नल कनिने सुक्त हो गए। गावहा-
 ली सब विदग्धनगर पहुँच गये।

नलने नगरमें जा कर देखा, कहीं भी कोई लक्ष-
 य विज्ञ नहीं है। इतनेमें दमयन्तीने केमिनी नामकी
 एक सखीकी बादृकके पास भेज दिया। केमिनी का कर
 बादृक नामधारी नलने नामा प्रकारके प्रथ करके लगी,
 उसने उसका सन्देह प्राप्तः बढ़ने ही लगा, उसने जा
 कर सब वृत्तान्त दमयन्तीके कहा। सब वृत्तान्त सुन
 कर दमयन्तीने केमिनीकी मारफत माताके कहला भेजा,
 "माता ! मैंने बादृककी भन समझ कर अनेक प्रकारमें
 परीक्षा की, परन्तु देवन उसके रूप पर मुझे सन्देह है,
 इसलिए मैंने इच्छा है कि मैं स्वयं उसकी परीक्षा
 करूँ। विनामे कह कर चलायी ही, वहाँ अन्तःपुरमें
 बुझने चलायी मुझे उसके निश्चय जानिकी अनुमति
 दीजिए।" रानीने विदग्धराज्ञने दमयन्तीकी बात कह
 दी। राजा भीमने कन्याकी शायंता स्वीकार कर अनु-
 मति दे दी।

दमयन्तीने माताका आदेश ले कर नलकी अपने
 चानचमें बुलाया। नल दमयन्तीकी देख कर सहसा
 मोह और दुःखमें प्राकुल हो गए, उसकी चाँदोंमें आँ-
 स्रुते लगे। दमयन्ती भी लोकोचिक मोहमें सुखमान हो

कर कहा, "बादृक ! क्या तुमने कभी किसी ऐसे धर्म-
 पुत्रकी देखा है कि जो यममें निश्चिता स्त्रीकी होड़
 कर चला गया हो ? मुत्तलोका मनके सिवा कौन व्यक्ति
 ऐसा है जो यमलोहिता प्रियतमा भायाँकी विना स्व-
 राधके निर्जन यममें होड़ कर जा सकता है ? मैंने वा-
 कानमें उस सखीपालका ऐसा कौन-सा अवराध किया
 है कि जिसमें वे मुझे चानचमें निश्चिता देख परिवाग
 पूर्वक चले गए हैं ? मैंने पहले साक्षात् देवीकी होड़
 कर जिनकी वरण किया है—"कहने कहने दमयन्ती-
 का गला भर आया। नलने वहाँ दुःखके साथ कहा,
 "भोव ! मेरा जो राज्य नष्ट हुआ था और मैंने जो तुम्हें
 त्याग दिया था, यह सब मेरा काम नहीं था, सब कुछ
 कनिने किया है। पापी कनिने सब मुझे होड़ दिया
 है, इसीमें मैं तुम्हारे पास आ गया हूँ। परन्तु तुम जिस
 प्रकार अनुमत और अतुरत कनिने त्याग कर स्वयंकी
 वरण करनेके लिए उद्यत हुई हो, क्या गरीबी कभी इस
 प्रकार कर सकती है ?" दमयन्तीने नलकी इस प्रकार
 परिदेवित वाक्यकी सुन डाय जोड़ कर आपने हुए
 कहा, "निषधनाय मैंने देवीको उपेक्षा कर पावकी
 वरण किया है, ऐसी अवस्थामें मुझे होप देना उचित
 नहीं है। आपकी पानिके लिये प्राप्तागम्य भेगे कहीं हुई
 गायायोंकी पकृते हुए चारों तरफ घूमे थे। अन्तर
 पर्ण्डने कीवलनगरीमें पावकी देखा, आपने मेरी
 गायायें उत्तर दिये हैं। मैंने पावकी बुलावके लिए यह
 उपाय निकाला है; क्योंकि इस पृथिवी पर पावके सिवा
 अन्य कोई भी चला, चला कर एक दिनमें भी योजन नहीं
 चल सकता। मैंने मगनमें भी कभी समझमें की चिन्ता
 नहीं की है। सायु, पानि और सूर्य ये सभी मावों हैं।
 ये तीन देवता लोग मोहकी धारण किये हुए हैं। या
 तो वे गयार्थ कहें, या मुझे परित्राग कर दें।" इतनेमें
 यादुने अन्तरीक्षमें कहा, "नल ! मैं तुम्हें माल जगता
 हूँ, दमयन्तीने मगनमें भी कभी समझमें नहीं किया।
 इन तीन वर्षोंमें हम दोनोंने एक-दूसरे को है। तुम्हें
 पानिके लिए जो दमयन्तीने ऐसा उपाय चलाया है
 है।" इसी समय स्वयंसे पुनर्जित होने लगे। देवदुन्दुभि
 यमने लगे। नलने भी कर्कटकका स्मरण कर नल

द्वारा शरीर आच्छादन किया और उसी समय उन्हें स्वीकृत रूप प्राप्त हुआ। दमयन्ती प्रकृत नलको सामने देख उसके चरणों में गिर कर उस स्वरसे रोने लगी।

यह मन्वाद् शीघ्र ही चारों ओर फैल गया। निष्पाधपति नल तीन वर्ष तक नाना प्रकारके कष्ट सहनेके बाद भार्यसि मिल कर परम आनन्दित हुए।

इधर राजा ऋतुपर्णने जब सुना कि राजा नल बाहुकके रूपमें उन्होंने राज्यमें अवस्थान करते थे, तब वे दमयन्तीसे मिले और अत्यन्त आनन्दित हो नलसे वसना मांगने लगे। नलने भी उनसे वसना मांगी और पचविद्याके बदले उन्हें पचविद्या प्रदान की। राजा ऋतुपर्ण प्रसन्नचित्त हो अपने राज्यको लौट गए।

नल एक मास विदग्धनगरमें रहे, फिर कुछ धन और सेनादि ले कर अपने देशकी चल दिये। स्वदेश पहुँचने पर उन्होंने अपने माई पुष्करकी द्यूतक्रीड़ाके लिए आह्वान किया। दोनोंमें द्यूत प्रारम्भ हुआ। अवकी बार पुष्कर पराजित हुए। पुष्करकी नल पुनः अपने राज्यमें अभिषिक्त हुए। देवगण आनन्दमें आ कर पुष्पवृष्टि करने लगे। राजा नलने पुष्कर पर किसी प्रकारका अत्याचार नहीं किया। वरन् आत्मभावसे आलिङ्गन-पूर्वक उन्हें अपने पुरमों ही रखा। पहलेकी तरह फिर नल-दमयन्ती सुखसे राज्य करने लगे।

जो लोग नल-दमयन्तीका उदात्तान सुनते हैं, उनका कलिजन्य भय जाता रहता है। (भारत वनपर्व ५२-६००)।
अकबरके सभा-कवि प्रसिद्ध शिखरजीने इस नल-दमयन्तीके उदात्तानके आधार पर फारसीमें 'नलदमन' नामका एक मनोरंजन काव्य रचा है।

२ सूर्यवंशीय निपधराजके पुत्र। (वत्सपु० १२ अ०)

३ सूर्यवंशीय निपधराज वीरसेनके पुत्र। (हरिवंश १५।६४)

उपर्युक्त दोनों नल सूर्यवंशीय थे। दमयन्तीके पति पुष्पश्लोक नल चन्द्रवंशीय थे।

॥ रामका एक बानर से निक। विश्वकर्माका पुत्र। इसी नलने श्रीरामवन्दके लिये लंका जानेका सेतु बनाया था। (रामायण)

वामनपुराणमें इसका विवरण इस प्रकार मिलता है—नलने ऋतुपर्ण मुनिके शापसे विश्वकर्माके धोरम

और हृताचो अपहराके गर्भसे गोदावरीके किनारे बानर-रूपमें जन्मग्रहण किया था। (वामनपु० १२ अ०)

५ दानवविशेष, विप्रचित्तिका चतुर्थ पुत्र। सिंहिकाके गर्भसे इसका जन्म हुआ था।

६ यदुके पुत्र।

७ भारतवर्षीय आनन्द यन्त्रविशेष। यह यन्त्र युद्धके समय छोड़े पर रख कर धजाया जाता है। (यन्त्रकोष)
नल—दाक्षिणात्यका एक पराक्रान्त राजवंश। इन वंशके राजा कोङ्कण-प्रदेशमें राज्य करते थे। बादमें, चालुक्योंने आ कर इनको राजच्युत किया था (५५०-५६० ई०)।
नल—बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत अहमदाबाद जिलेका एक क़द। अहमदाबादसे यह करीब १८ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। इसका परिमाण प्रायः ४८ वर्गमील होगा। इसका पानी बारहो महोना तुनखरा रहता है। गरमियोंमें चौर भी तुनखरा हो जाता है। क़दके किनारे नाना प्रकारके वृक्ष हैं, जो कि अकर्मण्य किन्तु सतेज हैं। क़दमें बहुतसे छोटे छोटे टाट्टू हैं, जिनमें गरमियोंमें पण बाढ़ि चराये जाते हैं।

नलक (ब० को०) नल इव कायति कै-क। आवाहि, नलोके आकारकी वृद्धा।

नलक—आलदेवलके एक भतीजेका नाम। ये बुद्धदेवके समसामयिक थे। कालदेवल अपने दैवगति-प्रभावसे जानते थे, कि कुछ दिनोंके बाद बुद्धोदनके एक पुत्र होगा जो एक असाधारण समुत्थ हो कर ज्ञानालोक प्रकाश करेगा। किन्तु उस पुत्रके जन्म लेनेके पहले उनकी मृत्यु होगी, इन कारण से उक्त आलोकको प्राप्त कर न सकेगे। इस लिये एक दिन उन्होंने अपने भतीजे नलकको बुला कर कहा, 'नलक! आलोकमय बुद्धोदनके ऐश्वर्यगति-सम्पन्न एक पुत्र जन्म लेगा। वही पुत्र ज्ञानालोक-सम्पन्न बुद्ध होगा।' नलक एक सखी दिनके आदीनी थे। वे अपने चाचाके कहनेका तात्पर्य अच्छी तरह समझ गये थे। एक दिन वे यतिके उपयुक्त गैरिक वस्त्र पहन और हाथमें मण्डप पात्र ले कर विमानतयके लङ्कलमें चल दिये और वहाँ कठोर ब्रह्मचर्य द्वारा दिनों दिन पवित्रता लाभ करने लगे। इस प्रकार बहुत दिन बीत जाने पर जब उन्हें खबर लगी कि बुद्धदेव पविर्भूत हुए हैं,

तब ये छत्रने समीप पाये और बहुत दिनों के इस्ति
छपदेग छत्रने सुनने मने। उस छपदेगायकी का नाम
मलक-पतिपद है। छपदेगके समान हो जाने पर छत्रों ने
बुद्धदेवने विद्या भाग कर निर्विघ्नतामें तत्त्वविज्ञा करनेके
निये पुनः हिमानयके जङ्गलमें प्रवेग्न किया था। बुद्ध-
देवके छपदेगके प्रभावमें छत्रों ने ही सबसे पहले परम
विद्वद्भि प्राप्त की थी। इसके सात मास बाद हिमानयके
मिथूर पर पहुँच कर ये स्वर्गधामकी पधारि।

नमका (हि० को०) मनी, नाल।

नमकानन (म० पु०) १ दिग्विद, एक दिगका नाम।

(को०) २ नमवन, नरकटका जङ्गल।

नमकिनी (म० को०) नमकानि मन्त्राणां, नमक रनि
होय। १ जहा, जोय। २ जागुदेग, घुटना।

नमकीन (म० पु०) नमवत् कीनी यत्। जागु, घुटना।

नमकूर (म० पु०) १ बुद्धके एक पुत्रका नाम। भवि-
ष्य नामक इसके एक भाई था। एक बार यह अपने
भाईके साथ मूष गराय वा कर अभ्यास पर्वत पर गङ्गाके
दिनारे एक छपवनमें स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा कर रहा था।
उन दोनोंको ऐसी चक्षुष्यामें देख नारदने गाय दिया
था, कि तुम पशुमनुष्य हो जाओ। कहते हैं, कि इसी
माघमें ये दोनों इन्द्रायनमें यमसाजुंन हुए। यहाँ श्री-
राजमें इन्हें स्वर्ग करके भाग्यशुक्त किया।

(भागवत १० ६३०)

रामायनमें लिखा है, कि एक बार जय रामाय दिग्वि-
जय करके मोट रहा था, तब राक्षसों ने उसे रक्षा नामक
चण्डालिनी को नमकूररहे यहाँ जा रही थी। रामच
उधे जबरदस्ती पकड़ कर अपने साथ ले गया। उसी
समय रक्षाने उसे गाय दिया था, कि यदि तुम किसी
कीके साथ बलात्कार करोगे, तो तुरंत तुम्हारे शत्रु हो
जायगी। कहते हैं, कि इसी भयमें रामचने सीताके
साथ बलात्कार नहीं किया था। (रामायन उत्तर)

भारतवर्षके पञ्चदशमस्कन्धमें लिखा है, कि नम-
कूर भारतके शासने भवान्दमनुमदार हो कर उत्पन्न
हुए थे। उनको दो शिष्योंने पादमुखा और पद्ममुखी
नाममें श्रद्धापूर्वक किया था। भवान्द मनुमदार देखते।
नरेश्वर—द्वय राज्यका एक शासक। यहाँ नरक नरेश्वरी

पकड़ी मिलती है। इसका परिमाण लगभग ४० वर्ग-
मील होता है।

नमकीन (हि० पु०) एक प्रकारका मेल।

नमगङ्गा—बराबर बुलढागा जिलेकी एक नदी। यह बुल-
ढागा नगरके पासमें हो निकल कर बगार नदीमें मिलती
है। योषकासमें यह नदी सुख जाया करती है।

नमगौद—१ देहराबाद राज्यके मिरक गुप्तगनाबाद विभाग-
का एक जिला। यह पचास १५' २०" से १०' ४०" उ०
और देगा ०८' ४५" से ०८' ५५" पू०के मध्य पश्चिम
है। भूपरिमाण ४६४३ वर्गमील है। यह जिला चारों
ओर पर्वतमें घिरा है। यहाँको प्रधान नदी कल्या जिलेके
दक्षिण हो कर बह गई है। पश्चिममें पञ्जाब तक
यहाँ मरेरियाका प्रकोप अधिक देखा जाता है। केवल
नक्षत्रमें से कर मरेर तक पायबना अच्छी रहती है।
योग्यस्तुमें पमदा गमी पड़ती है, उस समय तापपरि-
माण ११० रहता है।

यह जिला पूर्व समयमें वरहान राजाके अधिकारमें
बाधर था। पीछे वरहानके एक शासनकर्त्ताने नमगौद
शहरसे ६ मील उत्तर-पूर्व पाटन नामका एक शहर
बसाया और वहाँ अपने राजधानी कायम की। पीछे
ये राजधानी उठा कर नमगौदनी ले गये। बादामीराज
पहमदयादयलोकें शासनकालमें शत्रुओंने हमें एक बार
कोता था। बादामीराजके अधःपतनके बाद यह जिला
मीनकुण्डाके कुतुबशाही राज्यका एक अंग हो गया।
दक्षिण वरहानके राजाने इस पर पुनः अपना अधिकार
जमाया, पर अधिक काल ये इसका भोग कर न सके।
यह पुनः सुलतान कुनो कुतुबशाहकी शायमगा। मीन-
कुण्डाके अधःपतनके बाद पोरबुर्गने हम जिलेकी
दक्षिण-पूर्वमें मिना लिया। लेकिन १८५० गताब्दीमें
देहराबाद राज्यके संस्थापित होने पर यह जिला
यास्याज्यमें प्रयत्न कर दिया गया।

जिलेमें नमगौद, देवरगाँव और चर्मगौद नामके
श्री तीन दुर्ग हैं उनको स्थिति और आवश्यक देख कर
पायर्ग होना पड़ता है। देवरगौद दुर्ग मात पहाड़में
घिरा है। एक समय यह भवान्द लदा पक्षीय दुर्ग
समझा जाता था, लेकिन अभी यह भवान्दशायी
पड़ा है।

इसमें २ शहर और ८०२ ग्राम संगते हैं। जनसंख्या सात लाख की लगभग है। सैकड़ों पीछे ८५ हिन्दू हैं, तेलगु उनकी भाषा है। खरीफ, ज्वार, बाजरा और कुल्मी यहाँका प्रधान उत्पन्न शस्य है। जिलेकी भाय चौदह लाख रुपयेसे अधिककी है। जिले भरमें २८ प्राइमरी स्कूल, २ मिडिल स्कूल, ८४ बालिका स्कूल और १ विनिकासय है।

२ उता जिलेका एक तालुक। यहाँका भूपरिमाण ८०४ वर्ग मील और जनसंख्या छिट्ठ लाखसे ऊपर है। इसमें एक शहर और २१६ ग्राम संगते हैं। भाय वार्षिक तीन लाख रुपयेसे अधिक है।

३ उता जिले और तालुकका एक शहर। यह भत्ता १०° ३' ८०" और देशा ०८° १६' पूर्वक मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ६ हजारकी करीब है। यह शहर दो पहाड़की बीचमें बसा हुआ है। उत्तरके पहाड़ पर शाह-सलीककी समाधि है और दक्षिणका पहाड़ ईं'टो'को दोवारसे चिरा हुआ है। पहले जब यह शहर राजपूतों-की अधीन रहा, तब इसका नाम नीलगिरि था; पीछे अक्बरोनू यहमनशाहके समयमें इसका वर्तमान नाम पड़ा है। यहाँ भीरभालमकी बगई हुई एक सराय, एक हिन्दूमन्दिर, डाक-बंगला, डाकघर, भस्-ताल, कारागार, मिडिल स्कूल और एक बानिका स्कूल है।

नलह—मध्यभारतके अन्तर्गत धार-राज्यका एक विध्वस्त नगर। यह भत्ता २२° २५' ८०" और देशा ०३° २८' पूर्व, नीचे मन्दू जानिवाली रास्ते पर अवस्थित है। यह मालव-मालभूमिके दक्षिण प्रांत पर बसा हुआ है, इस कारण इसका दृश्य बड़ा ही रोमणीय है। इसके पास ही एक छोटी नदी बह गई है।

नलहिटी—पूर्वी-महाल और आसामके बाकरगञ्ज जिले-का एक शहर। यह भत्ता २२° ३८' ८०" और देशा ८०° १८' पूर्व इसी नामकी नदीके किनारे बसा हुआ है। लोकसंख्या प्रायः २२४० है। एक समय यह एक प्रधान वाणिज्य स्थान था। आज कल यहाँसे सुपारी और धान दूसरे दूसरे देशोंमें भेजा जाता है। यहाँ १८०५ ई०में

भू-निषपलिटी स्थापित हुई है। भाय दो हजार रुपयेसे अधिककी है।

नलडह्रा—१ यगोर जिलेका एक प्रसिद्ध ग्राम। यहाँ बहुतसे लोगोंका वास है। यगोरके प्राचीन राजाओंका यहाँ प्रासाद है।

२ वङ्गान्तके बारिबन्दका एक प्राचीन ग्राम। भविष्य ब्रह्मण्डमें लिखा है, कि यहाँ एक समय नरकटका एक हठवृत्त जन्म था। शबोदनके पुत्र बुद्धदेवके भयसे यहाँ अनेक ब्राह्मण भा कर रहने लगे थे।

(भविष्य ब्रह्मण्ड १८।१८-२०)

नलगिरि—उड़ीसाके कटक जिलेका एक पहाड़। इसके दो शिखर हैं जहाँ चन्द्रके कुछ हस्त देखनेमें आते हैं। पहाड़ पर बहुतसे होट-मन्दिर हैं जो अभी भग्नावस्था-में पड़े हुए हैं। उनमेंसे कुछ ऐसे भी हैं जिनको यज्ञ-पूर्वक रक्षा की जा रही है।

नलद (स० स्त्री०) नल द्यति भयखण्डयतीति दो० क। १ गुप्तरत्न, मकरन्द । २ उगीर, खस । ३ जटामांशो, बालकड़ । ४ कामजक नामक द्रव्य । (ति०) नल ददाति दा० क। ५ नलदाता ।

नलदम्बु (स० पु०) निम्बवृक्ष, गोमका पेड़ ।

नलदा (स० स्त्री०) १ जटामांशो, बालकड़ । २ राजा रुद्राश्वके पोरस और छताचीके गम्'से उत्पन्न एक कन्या-का नाम ।

नलदिक (स० ति०) नलद किमरादित्वात् छन् । नलद-विक्रतो, नलद वेषनेवाला ।

नलदियर—तामिल भाषाका एक आदिपत्य। इसमें सब समेत चालोस अध्याय हैं और प्रत्येक अध्यायमें नीति-विवरण दिये गये हैं। ग्रन्थके नामकरणकी विषयमें निम्नलिखित दन्तकथा प्रसिद्ध है—

किसी एक साध्वीसाक्षी राजाकी समाधि एक दिन टाढ़े सो कवि पड़ूचि । राजाने उनका पवित्र स्कार कर उत्तम भासन बैठनेको दिये । किन्तु राजाके पूर्वजन्म कविकोग इस व्यवहार पर क्रुद्ध ठठे । उन्होंने थोड़े ही दिनोंके अन्दर तरह तरहके कोपल रच कर नवागत कवियोंके ऊपर-राजाकी अप्रीति जप्ता दी । अन्तमें राजाकी अप्रीति यहाँ तक बढ़ गई कि नवागत

कहि लोग राजाके भयमें निरुद्ध दो पक्ष राजकी साम
में कर भागे। भागनेके पक्षमें परदेक कमिने एक एक
टुकड़े कागज पर एक छोड़ लिख कर अपने तख्तेके
भीमें रख छोड़ा था। जब राजाको इसकी खबर मगी,
तब उसमें अपने कमियोंके परामर्शानुसार उन सब
कागजोंकी मदमें किं किया दिया। कागजके किं करनेके
साथ ही नदीमें सजानकी धोरने एक भारी बाट था गई।
इस पराधार्मिक घटनाको देख कर राजा विह्वल हो
पड़े और उसी समय उसमें उन कागजके टुकड़ोंकी
बटोर लानेकी कहा। उन रचित श्लोकोंकी ले कर यह
अन्य रखा गया है, इसीमें इसका नाम नलद्विपर पड़ा है।
नलदुर्ग—१ देवराबाद राज्यका एक जिला। इसका
प्राचीन नाम धौमसागाबाद जिला है।

२ उक्त जिलेका एक प्राचीन तालुक। लोकसंख्या
५६११५ और भूपरिमाण १०० वर्ग मील है।

३ उक्त तालुकका दुर्ग द्वारा संरक्षित एक
नगर। यह पचा० १०° ४८' उ० और देश० ७१° २८'
पूर्वके मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या ४१११६ सग-
भग है। स्थानीय इतिहासमें यह नगर बहुत प्रसिद्ध है।
१८वीं शताब्दीमें मुसलमानोंके शासनपक्षके पहले यह
यहांके हिन्दूराजाओंके अधिकारगत था। बाद यह
बाहमनी यंत्रके हाथ लगा और १४८० ई० तक उसीके
अधिकारमें रहा। बाद १४८० ई०में जब बाहमनीराज्य
विभक्त हो गया, तब नलदुर्ग बीजापुरके आदिलशाही
राजाओंके भागमें पड़ा। १८५१ ई०में निजामने जब
दुर्ग जिला धौमसजीकी समर्पण कर दिया। लेकिन
१८६० ई०में पंथेजानि पुनः इसे लौटा दिया।

नलना (सं० स्त्री०) नलिन देवा।

नलमोचक (सं० पु०) मृदात्त, कमलकी जाल।

नलपट्टिका (सं० स्त्री०) नलनिर्मिता पट्टिका। नल-
निर्मित पट्टिका, भरकटकी मनी हुई चट्टाई।

नलपुर (सं० स्त्री०) बौद्धशास्त्रोंन एक प्राचीन नगर।

नलमोच (सं० पु०) नलायथी मोचः। सन्नामिद, भींगा
महमो।

नलपत्र—बिल्ला भीमका एक बीज, इसकी परिधि पाँच
मीलकी है। यह समुद्रोका बाग मर्दा है। दूर दूर

स्थानीने लोग यहां या कर भरकट काट में जाते हैं।

नलवा (हिं० पु०) बैलोंकी धो दिवानेकी बीमकी
टोटी।

नलसेतु (सं० पु०) नलवानरस्तः सेतुः, मध्यउदभोधि-
कर्मपा०। समुद्रोपर नलवानर क्षम सेतु, रामेश्वरके
निकटका समुद्र पर बांधा हुआ यह पुल लो रामचन्द्रने
मन मोन आदिने बनवाया था। जब रामचन्द्रजीने समुद्र
बांधनेके लिए उनमें प्राणना की थी, तब समुद्रने कहा
था, 'गिरि श्रम विग्रह कर्मोंके पुत्र गन नामका जो वानर
है वह काष्ठ, तृण, या मृत्प्रादि जो किंकेगा, उसीमें मैं
बंध जाऊंगा और इस प्रकार जो पुन मेघार हो जायगा,
वह नलसेतु नामसे प्रसिद्ध होगा।' रामचन्द्रने भी उसी
उपायमें सेतु बंधवाया था। यह सेतु लो योजन लम्बा
और दम योजन चौड़ा है। (भारत बन० १८२२ न०)

नला (हिं० पु०) १ पेंडूकी पन्धरकी वह नालो जिसमें
हो कर पैशाव नाथे उतरता है। २ हाथ या पैरकी
नलीके आकारकी मन्थी धडो।

नलाई (हिं० स्त्री०) १ नलाने या निरानेका भाव। २
नलानेकी क्रिया। ३ नलानेकी मजदूरी।

नलाना (हिं० क्रि०) फलन बीई हुई जमोनकी निर-
यंक घास आदि दूर करना, निराना।

नलायाधि—उत्तर-पश्चिम प्रदेशके अन्तर्गत देवराष्ट्र
जिलेका एक गिरिदुर्ग। यह पचा० १०° २०' उ० और
देश० ७८° ८' पूर्वके मध्य अवस्थित है। गोरगा लोनोंमें
नेपाल युद्धके प्रारम्भमें यह दुर्ग बगवाया था, लेकिन
उसकी रक्षा कर न सके।

नलिक (सं० पु०) नल, भरकट।

नलिका (सं० स्त्री०) नल इव पाकरोहमस्या इति नल-
टन्-टापू। १ नाडा नामक सुगन्धद्रव्यमिश्र। उत्तरा-
पथमें यह मन्थी नामसे प्रसिद्ध है। इसकी आकृति प्रवाल
(मूँगी)की सी होती है, इसीमें लहरी कहें इसे प्रवाली भी
कहते हैं। पर्याय—निद्रमनलिका, कपोतपत्रा, लज्जिनी,
निम्बपत्रा, श्वविरा, पाषाण, सुखा, रक्तकला, नर्पाक्षी
और नटी। गुण—तिष्ठ, कटु, तीक्ष्ण, मधुर, लघु, वात,
कफ, पित्त दोष शूलरोगनाशक तथा मलमोचक। भाव-
प्रकाशमें इसे मीठा, लज्ज, चट्टा इतिक्कर, कफ और

विस्तारमय, दृष्ट्या, कृष्ट, कण्ट, और और मायका माना है। २ पञ्चविंशतः, माचोन कालका एक वधियार। इस पञ्चको साधारणतः तीन नाम देखे जाते हैं। नलिका, नालीक और नाल। वैश्यायनकृत धनुर्वेद, शाङ्गधर संहतीत धनुर्वेद, शक्रनीति और वीर-चिन्तामणि आदि ग्रन्थोंमें इस यन्त्रका उल्लेख देखनेमें आता है। इसका उल्लेख रामायण और महाभारतमें भी पाया है। पुरा कालमें असुरगण इसी पञ्चका व्यवहार करते थे। इस पञ्चका आकार प्रकारादि देख कर कुछ लोगोंका भ्रम मान है कि यह आज कलकी बन्दूककी समान होता था और इसके द्वारा लोहेकी बहुत छोटी छोटी गोलीयां या तीर छोड़े जाते थे।

“नलिका ऋतुदेशो ह्याय तत्त्वज्ञी प्रधरनिधवा।

मर्वच्छेदकरी नीला ॥” (वैश्यायनोक्त धनुर्वेद)

देख लक्ष, मध्यदेश रश्मिनिधित, आकार सुदूर और मर्मच्छेदकारका अर्थात् नलिकापञ्चकी काया ठीक सोधी और पतली है, गठन मलकी तरह है, इसी कारण इसका नाम नलिका पड़ा है। इसका मध्यदेश रश्मिनिधित है, यर्ष काळा है, इससे अयःकरण अर्थात् लोहेकी गोलीयां तीरकी समान अत्यन्त वेगसे छूटती और गन्तुका मर्म-च्छेद करती है। इसीं सब कारणोंसे जाना जाता है कि यह नलिका एक प्रकार बन्दूक जातीयकी विधा और कुछ भी नहीं है।

“ग्रहणं धर्मापनं चैव स्यूतानेति गतिरयम्।

तामाधिल विदित्वा तु ज्ञेयसामान् रिपुं पुनः ॥”

(धनुर्वेद)

पहले ग्रहण, पीछे ध्यापन अर्थात् प्रवृत्तिकरण, अर्थात् स्यूत अर्थात् विहकरण,—नलिकाकी ये तीनों क्रियाएँ भलीभांति जान लेनेसे आसन्न गन्तुकी जय किधा सकता है। शाङ्गधर-संहतीत धनुर्वेदमें यह पञ्च नालीक नामसे उल्लिखित है।

नालीक—इसका माथ सधु अर्थात् छोटा वा पतला होता है। यह सधु नालीक बाण नलयन्त द्वारा फेंका जाता है। यह बाण छद्म और दूरकी लक्षमें तथा दुर्ग-युद्धमें व्यवहृत होता है। इस नलिकापञ्चका वैदिक नाम ‘सुमी’ है। पुराकालमें असुरगण इसी ‘सुमी’को से

कर देवताओं के साथ लड़ते थे। भविष्यपुराणमें ‘सुमी’ शब्दका अर्थ ‘लौहप्रतिमूर्ति’ लिखा है। वैदिकग्रन्थोंमें इसका अर्थ लोहस्यूता वा स्यूताकार यन्त्रविशेष लगाया है। पहले जिस नलिकापञ्चका व्यवहार होता था और अभी जिस बन्दूकका व्यवहार देखा जाता है, वे दोनों एक प्रकारके नहीं हैं। परन्तु, हमें बन्दूक-जातिका छो कइ सकते हैं।

मायणमें लिखा है कि लोहनिर्मित वस्तु, स्यूता पदवाच्य है। उसकी मध्यप्रदेश अर्थात् भीतरमें छिद रहता है इसके मध्य प्रवृत्तिनित कृताशन है, जो बाहर निकलता है वह भी प्रवृत्तिनित होता है। असुरगण इसी सुमीकी आघातसे एक बारमें सैकड़ों शत्रुका विनाश करते थे। देवगण भी उसी तरह उन्हें मारनेके लिये ग्रन्थों नामक यन्त्रका व्यवहार करते थे। अथर्ववेदमें लिखा है, कि सीसक द्वारा शत्रु विनष्ट हो सकता है, यथा—

“सीसायापाह वरुणः सीसायागिहवावति।

भीर्व स इन्द्रः प्रवच्छ्रुत तद्वज्रायु चातनम् ॥

यदि नो गां हवीं यपरं यदि पृथगम्।

तं हरा सीवेन विधामो यथानोसो अगेहवा ॥”

(अथर्व १।१६।१-४)

इन सब वैदिक मन्त्र आदिका विषय देखनेसे ऐसा मालूम होता है कि यह स्यूता होनेके लक्ष्मणों के जैसा होता है, इसमें मध्यदेशमें सुपिर वा रश्मि रहता है। मध्य-देशसे प्रवृत्तिनित पदार्थ निकलता है जो एक ही समयमें सैकड़ों शत्रु नाश करता है। मध्यागत पदार्थ सीसका बना होता है। इन सब वचनोंसे यह साफ साफ मालूम होता है, कि यह बन्दूक-जातीय किन्हीं प्रकारका आन्वेषास्त्र है। शकनोतिमें इस पञ्चका अर्थ अर्थन है।

महासति शुक्राचार्यने युद्धास्त्रके वर्णनकी जगह पर कहा है, कि युद्धास्त्र प्रधानतः दो प्रकारका है, नालिक और मान्दिक। जो सब पञ्च मन्त्रपाठ करके फेंके जाते हैं, उन्हें मान्दिक कहते हैं। मान्दिकापञ्चके नहीं रहने पर नालिकापञ्चका प्रयोग करते हैं।

नालिकापञ्च दो दो प्रकारका है, हृदनालिक और सुदनालिक। इनमेंसे सुदनालिकका परिमाण पञ्च वित्तित

पदांश्च चारुं चारुं है । अथाभासने इमं पद्यको 'पद्यः
पद्यः' नामने चलेन शिवा है । यथा—

“अथः पद्यः पद्यः पद्यः पद्यः पद्यः ।

इत्येवार्थं शिवाः पद्यः पद्यः पद्यः पद्यः ॥”

(मरत १।२२।२३)

टोकाकार मोनकण्ठने भी 'पद्यःकण्ठ' इमं मन्द-
को नायिक मन्दे पद्यापदपदमे निर्देश किया है और
इमका व्यपत्ति भी इम प्रकारकी है, 'पद्यःकण्ठ पद्य-
कण्ठ' मोहगुनिकात् पद्यतोति तत् तदाविधि' मोहमयं
यत्' येन चान्ते योपपद्यने मर्ममन्त्रता मोहगुनिका
विद्यमाने ।' (नीलकण्ठ)

प्राचीनकालमें कृटयुद्ध नहीं होनेके कारण इम पद्य-
का विविध प्रकार नहीं था । किन्तु बड़े बड़े दुर्गादि
निर्ग पर छहवालीक रहते जाते थे, ऐसी वर्षणा कई
जगह मिलती है । किन्तु काल-प्रभावसे चार्प जातिकी
पगमतिसे साथ साथ यह पद्य भी एकवारगी विलुप्त
हो गया है । मार्कंडेयो ।

१ जननिर्गमपद्य, जनप्रवासीको, माला, कुंज । ४ मलके
पाकारकी कोई मनु, चांगा, लमी । ५ तरकम जिसमें
तार रहते जाते हैं । ६ करेमुका माग । ७ पुटोना । ८
ये पद्यमें एक प्रकारका प्राचीन यन्त्र जिसकी मछायता-
से जलोदरके रोगोंके पेटने पानो निकाला जाता था ।
नलिकापद्य (सं० स्त्री०) दकोदररोगमें प्रयुक्त यन्त्र-
विशेष, एक प्रकारका चोखार जो दकोदर रोगमें खांम
पाता है ।

नलित (सं० पु०) नलपति इति मन्त्र यन्त्रे म् । माक
विशेष, एक प्रकारका माग जो नाटिका माग भी कह
जाता है । ये पद्यमें यह निम्न, विज्ञानायन और दृक्-
पद्यक माना गया है ।

नलित (सं० स्त्री०) मन्त्र यन्त्रे इत्यर्थः (बहुलमन्त्रयति ।
७७२।४८) १ पद्य, कम्पन । २ जल, पानी । ३
नीलिका, मोल । (पु० स्त्री०) ४ मारमयद्यो । (पु०)
५ लक्ष्मणकण्ठ, कर्णोद्गार । ६ किष्कंधक, पद्यकण्ठ । ७
निद्र, मोम ।

नलितः (सं० स्त्री०) नलपति पद्यानि कण्ठयन् नल-पति,
लमी कोय । (पुनः शिवादेवो । वा ३।२।१३) १ पद्य-

गुह देय, बह देय अर्थात् कम्पन अधिकतासे कोने हो ।
२ पद्यमूह, कम्पनका टेर । ३ पद्यमता । ४ पद्य, कम्पन ।
५ नदी । ६ नलिका, नलिनो नामक मन्त्रद्वय । ७ मोम-
निष्पन्न, मन्त्राकी एक धाराका नाम । मन्त्रपुराणमें लिखा
है, कि पूर्वकी चोर मन्त्राको जो तीग धाराएं गई हैं
उन्मेंसे एकका नाम नलिनो, दूसरीका जादिनो और
तीसरीका पावनी है । रामायणमें भी नलिनोकी मन्त्रा-
की एक धारा बतनाया है । यह धारा हिमाद्रिमें प्रवहति
है । विन्दुमरीचमें मन्त्राकी जो मात धाराएं निकली हैं
उन्मेंसे एक नलिनो भी है । (रामायण भारि०) ८ नारि-
क्षित-सुरा, नारियलकी एक मराम । ९ वामनासिका,
नाकका बायां नयना । १० हन्त्रोर्ध्व, एक छतका नाम ।
इसके प्रत्येक चरणमें पाँच मण्य होते हैं । इन्में मन्-
हरण और भ्रमरावली भी कहते हैं ।

नलिनोपद्य (सं० स्त्री०) नलिनोनी समूह, समुदाय
कम्पनादित्यात् पद्यत् । पद्यनोपमद्य ।

नलिनोमन्द (सं० स्त्री०) नलिन्या मन्दयति मन्दि-भ्यु ।
ऐशोपानमेट, कुबेरके उपवनका नाम ।

नलिनोपमकीय (सं० पु०) नलिन्या कीय इत्यनुक्तिः पद्यनो
प्राप्ति, नाचनेके समय हाथकी एक विशेष प्राप्ति ।
नलिनोदक (सं० स्त्री०) नलिन्या रोहतीति दृक्-क । १
मृषाल, कम्पनकी माल । (पु०) २ मन्त्रा । ३ मन्त्रागिना ।
नलिनोगय (सं० पु०) नलिते मन्त्रागामिपते मितं मी-पद्य ।
विष्णु ।

नलिया—१ बम्बई प्रदेशका एक सुद्र राज्य । भूविभाग
१ वर्गमील है । यहकि अत्याधिकार ठाकुर कहलाते हैं ।
राजपू ०४० ई० है ।

२ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत पद्मना उपविभागका एक
नगर । यह पक्षा २१° १८' स० और देशा ७८° १४'
पू० के मध्य अवस्थित है । यह कच्छका एक महिष्ठ
स्थान है । यहां चनेक व्यवसायो रहते हैं ।

नली (सं० स्त्री०) नल-पद्य, मोटादित्यात् कोय । १
मन्त्रागिना, मन्त्रागिना । २ नलिका, एक प्रकारका मन्त्र
द्वय । पद्याव—शुविना, विदुमन्त्रता, कपोतादि, नटी ।

नली (हिं० स्त्री०) १ कोटा या पतना मन्त्र, कोटा कीना ।
२ मन्त्रके पाकारकी एक प्रकारकी इन्दी जो मोतरके

पोलो होती है और जिसमें मञ्जा भी होती है । १
कुलाहोकीं नाम । ४ वन्दूककी नली जिसमें जो कर
गोली पहले गुजरती है । ५ घुटनेमें नीचेका भाग, पैरकी
पिण्डली ।

नलीमोज (फा० पु०) एक प्रकारका कबूतर जिसके पंजे
तक पर होते हैं ।

नलुवा (हि० पु०) १ पशुचोका एक रोग जिसमें सूजन
पड़ जाती है । २ बांसकी पोर, बांसकी दो गठिका
टुकड़ा । ३ छोटा नल या चोंगा ।

नलुका (हि० स्त्री०) १ नलिका, एक प्रकारका गन्ध-
द्रव्य । २ जातोष्ठक, जायफलका पेड़ ।

नलीश्वर (सं० पु०) मल्लप्रस्थापित शिवलिङ्गभेद, एक
शिवलिङ्गका नाम जिसे राजा नलने स्थापित किया था ।

(शिवपु०)

नलोत्तम (सं० पु०) नलपु लक्ष्मः ७-तनु । देवनल ।
बड़ा नरसल ।

नलोदय—एक संस्कृतकाव्य । इसमें राजा नलका चरित्रव्य-
विवरण लिखा है । यह रघुवंशके कवि कालिदासके
रचा गया है । किन्तु बम्बईके पहलमदाबाद नगरमें देह-
लानो उपन्याय नामक एक जैन मण्डार है जिसमें नलो-
दयके दो हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ मिलते हैं । उन
ग्रन्थोंमें नारायणके पुत्र रविदेव नामक कविको इसके रच-
यिता बतलाया है । डाक्टर भाण्डारकर इसे देख आये हैं ।

नलोपसन्नम्—पहली मलवार उपज्जन्तमें इस नामका एक
बन्दर था । इस बन्दरमें फिनिकीय और अरब्या
प्राचीन पाद्याभ्य जातिके लोग वाणिज्य करने आते थे ।

नल्य (सं० त्रि०) नलस्यादूरदेगादि वनादि० य । नलके
भट्टर देगादि ।

नल्लमल्ल ('लण्णमैल')—मन्द्रज प्रदेशके कर्णूल जिलेकी
एक गिरिमाता । यह सन् १४०३ से १६०१ ई०
तक देगा० ८८० ४१' से ७६' ३६' पू०के मध्य कर्णूल
जिलेके दक्षिण प्रान्तमें छया नदीके किनारे तट विस्तृत
है । बड़ाया जिलेमें इस गिरिमाताका लड्डामल्ल नाम
रखा गया है । यह समुद्रतलसे १५०० से २०००
फुट तक ऊँची है । इसकी ऊँची चोटोका नाम बारिणी-
कुण्ड है जो ११११ फुट ऊँची है । गिरिमाताके मंथा

गुण्डना ब्रह्मेश्वर प्रधान है जिसकी ऊँचाई तीन हजार-
फुटसे ज्यादाकी होगी । इस पर्वतके ऊपर प्राचीन ब्रह्म-
ेश्वर मन्दिरके समीपसे गुण्डलाकामय, लम्पनिक और
पानेरु ये तीन नदियाँ निकलती हैं । हिन्दुओंके लिए
यह स्थान महातीर्थ माना गया है । यहांके स्थलपुराणमें
इसका माहात्म्य वर्णित है ।

इस पर्वत पर दानेदार तथा चमकीले पत्थर और
लोहके साथ रूपे पाये जाते हैं । बाघ आदि विंध्यज
जन्तु, वनसुरी तथा तरङ्ग तरङ्गके पक्षी नजर आते हैं ।

पहाड़ पर केवल 'तैल' और 'यनादि' नामक पशुभ्य
जाति बाघ करती है । शिकारमें ये बड़े खिदकस्त होते
हैं । ये लोग कपड़े पहनते हैं नहीं, लेकिन वह
नहीं पहननेके बराबर है । केवल कमरमें कपड़ेका एक
टुकड़ा बांध लेते हैं । ये लोग छोटी छोटी भाँपड़ोंमें
रहते हैं । दूध और फलमूलादि इनका प्रधान खाद्य है ।

पहाड़ पर योगेश, महानन्दो ब्रह्मवल्गु नामक तीन
प्रधान देवमन्दिर भो हैं ।

नल्लानुषकोशिक—एक नाटककार । ये रामचन्द्रके पोश
और नल्लानुषको पुत्र थे । नृहरिचरित्र नामक भाष-
णातीय नाटक इन्हींका बनाया हुआ है ।

नल्लादोचित—एक नाटककार । इनके बनाये हुए "चित्त-
वृत्तिकव्यास नाटक" और "जीवन्मुक्तिकव्यासनाटक"
नामक दो ग्रन्थ मिलते हैं ।

नल्लापण्डित—एक दार्शनिक पण्डित । इन्हींमें "बहैत-
रमसूत्रो" नामक वैदार्थिक ग्रन्थ रचा है ।

नल्ली (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी घास जिसे पत्तवान
भी कहते हैं ।

नल्ल (सं० पु०) नल्ल वाहनकात् य । चतुःशत हस्त
परिमाण, प्राचीन कालकी एक प्रकारकी नाव जो चार
सौ हाथकी होती है ।

नल्लकी (सं० स्त्री०) नल, नरकट ।

नल्लवण (सं० पु०) द्रोणपरिमाण, प्राचीन कालका एक
प्रकारका माग जो किशोके मतमें सोनह सेरका और
किशोके मतमें बत्तीस सेरका होता है ।

नल्लवर्त्मगा (सं० स्त्री०) नल्लपरिमित वर्त्म गच्छतीति
गम्-ड । काकात्री, काकजम्बा ।

नवंबर (स० पु०) चंद्रमा को ध्याय करने का सोना । जो
२० दिनांक तथा चतुर्दशी बाद चौर दिनअंशमें पड़ने
सोना है ।

नव (स० पु०) नव नवो भावे अर्थ । १ नवम, दशम ।
२ नवपुत्रार्थ, नाम रंग को गदहपूरना । ३ शरिर्बन्धने
अनुसार समोत्तर राजाके पुत्रका नाम । (ति०) नवयते
नवयते इति न-अप । ४ नूतन, नया, नवीन । नव, नत्, नू,
नूतन, नव्य, इदा, इदानीं ये छः नव अर्थके धैरिक
पद्यांश हैं ।

क्रियाविधिमें नवोन द्रव्य प्रगप्त है, केवल घो, गुड़,
माधु, घाल चौर हल गिरुका ये सब द्रव्य अर्थमें अच्छे
नहीं होते ।

नव (हि० ति०) जो, बाट चौर एक, दशमें एक कम ।
'नव' अर्थमें कहीं कहीं एक चौर दश आदि पदार्थोंका
भी अभिप्राय लिया जाता है जो गिनतीमें जो होते हैं ।
नवक (स० की०) नवार्थ समर्थकः संख्यायाः कन् । १
नवमंभ्या, एक की तरहकी जो चीजोंका समूह ।
(ति०) नव परिमाणस्य कन् । २ नव संख्यावित्त,
त्रिगुणों में संख्या हो ।

इस नवकका विषय कागोपपत्तिमें इस प्रकार लिखा
है—नवक चर्मांतु जो पदार्थ ग्रहणोंके मङ्गलके कारण
दत्तमाये गये हैं । यथा, अध्यागत व्यक्तिजो शक्ति
अनुसार चामनदान, वाट-गोच, भोजन, घाल, शय्या,
छल, जल, चम्पक चौर देव । इन जो पदार्थ दारा
अध्यागतकी अध्यागमा करनेमें ग्रहण्य भोग सिद्धिनाम
करते हैं । वे शुभ, परदारसेवा, दोह, कोष, मित्राकपन,
परिवाराजन, देव, दम्भ चौर माया ये जो महिंत कावे
हैं । ये ऐश्वर्यशाली व्यक्ति जिसे परिग्रह्य है । प्रतिदिन
घाल, मन्त्र, जल, होम, वेदाध्ययन, देवतापूजा, वैश्व
देव, विजयार्थ चौर अतिदिसेवा ये जो कार्य प्रादिक
ग्रहण्यके मुक्त कर्त्तव्य हैं । जलनवक, सौंदर्य, मन्त्र,
ग्रहण्य, चर्मा, घाल, धन, चयमान चौर फी इन जो
विषयोंकी हमारा हितमें रचना चाहिये । निर्वृत्तान-
दाय, अक्षितवृत्ति, पापोंपर, अन्तरिमोष, संयमप्राप्ति,
कष्ट, विपत्ति, कष्टादान चौर मुनीश्वर्य ये जो विषय
प्रदान करने योग्य हैं । स्यात्, मित्र, विनोद, दोन,

अन्य, उपहार, माता, पिता चौर गृह इन सबोंकी दान
देना चाहिये । वाचान, सुनिपात, मन्त्र, कुपेय, वपुः,
धूर्त, मठ, मन्त्र चौर तोषामोदहारो इन सबोंकी दान
देना निश्चय है । पावदक्षानमें चर्मांतु भारी विपद् गुरुमें
पर भी चर्मांतु जोषा रचना । दारा, मरणागतशक्ति,
माम चर्मांतु महिंत द्रव्य, वपुः दान, कुपेय, मित्रेय
चर्मांतु बहुत समयके लिए निहित पर द्रव्य, कापन चौर
पुत्र इन सबोंका रवाग नहीं कर सकते । स्यात् करने
पर प्रायश्चित्त करना होता है । सब जो विषयका नाम
नवक है । इन नवकका अनुष्ठान करनेमें शुभ होता है ।
इनमें मित्रा एक चौर प्रकारका नवक दत्तमाया गया है,
जो सभी लोगोंका मङ्गलप्रद है । भय, मोघ, चर्मांतु,
चमा, दान, दया, दम, चर्मांतु चौर दम्पत्य ये जो सबके
भोगानन्ददायक हैं । यह नवक ग्रहणोंके चर्मांतुका
प्रदोष, माधुर्माका चर्मांतु चौर पुत्रजनक है । इनका
अनुष्ठान करनेमें अनेक प्रकारके मङ्गल होते हैं ।
(चर्मांतु० ४०-४०)

शक्तिरत्नका नवक, धोतमशक्ति नवक, श्रद्धाशक्ति
नवक आदि सबोंका नाम नवक है । इनमें शक्ति-
तरका नवक इन प्रकार है—सर्वज्ञानम् परमेश्वरमें
शक्ति वपुः हुई हो । फिर शक्तिमें माद चौर नदमें
विन्दुकी उत्पत्ति हुई । इन तीनोंकी गुणा करनेमें जो
जो संख्या बनती है, समोका नाम नवक है ।

घ, क, च, ट, त, घ, य, म चौर इन जो चर्मांतुकी
वर्ग-नवक कहते हैं । नवक इन अर्थका तात्पर्य यह
है कि जिन जो पदार्थोंकी एकत्रित करनेमें एक अर्थके
वैसा व्यवहार होता है उन्हें नवक कहते हैं । यथा—
नवप्रद, नवदुर्गा, नवधातु, नवाद्य, नवाम, नवराज,
नवमन्त्र आदि इन सब अर्थोंकी नवक कहते हैं । इन
सब अर्थोंका विवरण महाद्वयमें देवों ।

नवकार (स० पु०) जैनियोंका एक मन्त्र ।

नवकारिका (स० की०) नव करोति जन्मशुभ-टाट,
टापि पत इव । १ नवोद्गा चो, नव विचारिता चो ।
नवकारिगुप्त (स० पु०) वैष्णवोंका एक प्रकारका मन्त्र
इसमें गुप्त, त्रिकला चौर विष्णुका नाम आने पर दारा
होता है । इसका व्यवहार भोग, पुत्र, भगद्वर चौर
वैवाहिक आदिको दूर करनेमें होता है ।

नवकालिका (सं० स्तो०) नवक नूतन भवति भक्त-
भूषणे युक्तः टापः । १ नवोन, युवा स्त्री, नाजवान औरत ।
२ वर युवतो जो जालमें पड़ने पड़न रजखला हुई हो ।
नवकुसारी (सं० स्तो०) नी-रात्रमें पूजनोय नी कुमारिणी ।
इनमें निम्नलिखित नो देविदो को कल्पना की जाती
है—कुमारिका, विमूर्ति, कल्याणी, रोहिणी, काली,
चण्डिका, शाश्वती, दुर्गा और सुमद्रा । नवरात्र देखो ।
नवरात्र देव—कलकत्ते की शोभावाजार-राजवंश के पादि
राजा । ये ईसाकी १८वीं शताब्दी के मध्यभागमें
अर्थात् बंगालमें अंगरेजों राजत्व की सुरुवात के समय
विद्यमान थे । सुमिदावादे के पास कानसोना नामक
कायस्थप्रधान ग्राममें आपकी पूर्वपुरुषों का वास था ।
आपकी पूर्वपुरुषोंमें से अधिकांश ही सम्भ्रान्त और गल्ल
मान्य थे ।

इनके वंशजी, ऊर्द्धतन जिनको भी पोड़ियोंका विवर-
ण मिला है, उनमें पादि पुरुषका नाम ओहरि है । ओ-
हरिके बाद ६६० पोड़ोंमें पोताम्बरदेवने जन्म लिया ।
इनके चार प्रपौत्र थे—शिवदाम चौबण्डी, नित्यानन्द,
चतुर्भुज और श्रीनाथ । नित्यानन्द रायके दो बृहत्प्रपौत्र
थे—काशीनाथ सन्निक और विजयवल्लभ राय । विजय-
वल्लभके प्रपौत्रका नाम विद्याधर था । इनके छः पुत्र
थे, जिनमें चतुर्थ देवोदास राय 'सल्लमदार' उपाधि प्राप्त
कर वर्तमान चौबीस-परगना जिलेके अन्तर्गत मूढ़ा-
गाछा परगनाके कानून-गो निवृत्त हुए थे । इनके भी कः
पुत्र थे, जिनमें से चतुर्थ सख्ताथकी नवाब मुहम्मद-
जंगने कानून-गोता पद दिया था । पंचम पुत्रका नाम
राजिन्द्रनाथ था और उनसे छोटीका रुक्मिणोकांत ।
रुक्मिणीकांत 'सल्लमदार' उपाधि प्राप्त कर मूढ़ागाछा
ग्राममें रहने लगे । इन्होंने कम-प्राप्तिको भागसे नवाब-
के पास भर्जो भेजी । नवाबने उन्हें मूढ़ागाछा परगनाके
अप्राप्तव्यवहार अर्थात् जमींदार केशवराम राय-चौधरी-
की तत्त्वावधारक बना दिया और व्यवहत्ता'को उपाधि
प्रदान की । इनके बाद इनके ज्येष्ठ पुत्र रामेश्वर व्यव-
हत्ता उक्त पदके अधिकारी हुए, परन्तु उनके तत्त्वावधार-
कतामें नवाब-सरकारका राजस्व न चुकाया गया, इनलिये
जमींदार केशवरामने उन्हें अपने मकाम पर कौद कर

रक्का । रामेश्वर व्यवहत्ता'को छः पुत्र थे । उनमें से द्वितीय
वामचरणदेवने सुमिदावाद जा बहाकि रायरायसे परि-
चित हो, मूढ़ागाछाका जो राजस्व है, उससे ५० हजार
रुपये ज्यादा देना कबूल कर उसका भार मंगा । नवाब
साहबने उन्हें उक्त परगनाका उद्देगारी (कमिश्नर) बना
दिया । इस पद पर नियुक्त होते ही उन्होंने अपने पिता-
को सुक्त कर केशवरामकी काराबंद किया । परन्तु कुछ
दिन बाद केशवरामके छूट जाने पर रामचरणने मूढ़ा-
गाछाका वास छोड़ दिया और गङ्गाके किनारे गोविन्दपुर
ग्राममें जा कर रहने लगे । यही गोविन्दपुर सत्तामुटीका
गढ़ गोविन्दपुर है । इसके बाद रामचरणके पुनः कार्य के
लिए प्रार्थना करने पर नवाबने उन्हें हिजली, तमाचुक्त,
सहिवादाद आदि स्थानोंके निम्नकामहलके करब-पा-
हकका पद दिया । इस कार्यमें उन्हें विशेष पटुता
देखी, जिससे नवाब मुहम्मदजंगने उन्हें कटक के
खुवेदारका दीवान बना दिया । चार्जट के नवाबके भाई
मनोरउद्दीन खाँ भाईसे विवाद करके सुमिदावाद
भाग पाये थे । नवाब खलौसदों खाने उन्हें यथेष्ट मालान
की साथ साथ दिया था । इसी समय उड़ोसमें बंगिया-
का भगड़ा चल पड़ा । नवाबने मनोरउद्दीनको कटक का
खुवेदार बना कर भेज दिया । इन्हींके साथ रामचरण
दीवान बन कर गये थे । मार्गमें पिण्डारी डकैतों द्वारा
ये दोनों ही मारे गये ।

रामचरण व्यवहत्ता'की मृत्युके बाद उनके परि-
वार पर बड़ा भारी कष्ट आ पड़ा । उनको पत्नी तोन पुत्र
और पांच कन्याओंको से कर सत्तामुटीके मध्य शोभा-
वाजारमें जा कर रहने लगे । इस समय इनको पचत्था
इतनी शोचनीय थी कि स्वयं-मोलिक होने पर भी
आपको सामाजिक प्रथाका उल्लङ्घन कर अर्थात् भावके
कारण कनिष्ठा कन्याको मोलिक कायस्थके घर देने के
लिए बाध्य होना पड़ा था । कुछ भी हो, रामचरणकी
विधवा पत्नीने इतने कष्टों भी पुत्रोंको उर्द, फारमो
आदि अन्य भाग्योपमें कृतविद्य बनानेमें कोई बात उठा
न रखी । अन्तमें ज्येष्ठ रामसुन्दर प्राप्तव्यक्त हो पद-
कोट नामक स्थानके दीवान हुए । इनसे बृहत्शोको
हासत सुधर गई । मध्यम माणिक्यचन्द्र ज्येष्ठ भ्राताके

जाग गये गये। ११८८ हिजरीमें इस भीमों की टिहोके
बादशाहकी छात्राये रायको उपाधि और इसीसे मनम-
दागोत्रा पद मिल गया। इनके कनिष्ठ भ्राताका नाम भी
नरहृत्तदेव कहा पुरा था।

नरहृत्तदेवका लगभग १०३२ ई.के लगभग दूपा
था। चायने यमनीमाताके यमने उठूँ और कारमो
भा.मिं व्युत्पन्न होमे समय परबो और पकड़ेसो भाया
भी मोघ भी यो। रामसुन्दरके दोमान होनेसे पहले
तंगोके वाराण मयेक भारीको रोजगारको कुछ न कुछ
तजवीज करकी पड़ी यो। नरहृत्त उस समय कमरुत्त-
के धनक्षेत्र मजूर धरने परिचित हुए। उन्होंने प्रधान
प्रधान चंगरेजोंने इनका परिचय करा दिया। इनसे परि-
चयने कमने पाप वारेनू छिटिंग्गके कारमीके मिलक
घन गये थे। छिटिंग्ग उस समय कमरुत्तके दह-इलिया-
मध्यमीरे यथोक्त एक फूके थे। तीन वर्ष बाद जब
छिटिंग्ग कागिमशाज़ारको कीर्तमें भेजे गये थे, उस
समय नरहृत्त उसके साथ थे। नरहृत्तने कागिमशाज़ार
में रह कर कारमी भाषामें विविध व्युत्पत्ति माभ थी यो।

कागिमशाज़ारमें रहते समय छिटिंग्ग विविध कथनो-
पकड़नादिसे लिए नरहृत्तकी बीच बीचमें कलकत्ते
भेजा करने थे। नवाब गिराज उहोनाके पदस्थान करमे-
के लिए पहले पहले जो पदस्थान हुआ, उसकी बहुत-सी
बातें नरहृत्तकी मान्य थीं।

इस पदस्थानमें पूर्वोक्ता शासनकर्ता नैयद मरहदके
पुत्र मोहम्मदजीको बग़ाल, बिहार और उड़ीसाका सूबे-
दार बनानेकी कल्पना हुई थी। नवाब गिराजउहोना-
की इस पदस्थानका जाल मान्य होमे थे। उन्होंने
मोहम्मदजंगके निदह सेवा भेज दी। इसी समय कम-
रुत्तके चंगरेज गवर्नर के बहादुरने राजपक्षमें पुन
लखनऊको मुग़लशाह भेजने और मुग़लशाह बन्द
करनेके लिए पत लिखा। नवाब मारि कोषके पागलपन
की ठेके और पूर्वोक्त शयं जा कर कमरुत्त पर भाया
मारनेके लिए दोढ़े। उन्होंने मार्गमें कागिमशाज़ारके
चंगरेजो को भी लूट भी और वारेनू छिटिंग्ग, चादि
कोशोको भी और फिटिहपुरकी ओर कर लिया। नरहृत्त
पक्षमें ही थे इस विपदाका सामना वा चुके थे।

छिटिंग्गको कोशोका बचनेसे लिए तथा कोशोको
सबका परिचय करा कर सौदा देनेके लिए कमरुत्त
यमे चाये, जिसमें कमरुत्तके चंगरेज भी पक्षमें ही
मनके हो गये।

नरहृत्तके कमरुत्तके चंगरेज बाट नवाबने कमरुत्त
वा कागिमशाज़ार करनेके लिए मजदूर उत्तारमें (चोतपुरमें)
पड़ाव लगाया। इनके कुछ दिन पहले मुग़लशाहमें पोर
एक पदस्थान दूपा था। राजा राजपक्षमें चंगरेजके
पान मुग़लपक्षमें एक पक्ष भेजा था। नवाबके दामनीश-
गानमें पदस्थानमें पहले ही राजपक्षका दूत पत भे कर
गवर्नर के उके पान पदस्थान और भीमा, "किसी विपदा
दिन्दूने यह पत पदस्थान जाना चाहिये और उत्तार
भी उन्होंनेको मारकत निपाजाना चाहिये।" उस समय
मुग़ली ताजउद्दीन ग़ाज़ीनार एक व्यक्ति दह-इलिया
कम्पनीका (कमरुत्तमें) मुग़ली था। पहले तो वह
मुग़लमान था और दूसरे राजा राजपक्षका निवेद; इम-
लिए गवर्नर पाहव किसी दिन्दूको तनायमें रहे।
उन्हें नरहृत्तको बात याद था गई, चाकि वारेन-
छिटिंग्गके मिलक होनेसे तथा नरहृत्तके परिचय का
देनेसे ये बात भी जानने थे। कुछ माहबहा बादमें नर-
हृत्तको गोत्रमें निरुत्त। मंशोगवरा ये उस दिन किसी
कामने बड़े बाज़ार गये थे, वहाँ रातोंमें उनमें कुछ
बादमें मुग़लशाह हो गई। उसी समय नरहृत्त बाट
यादवने माद मुग़लशाह जाने पन दिये। कुछने मुग़
रीतिमें उनके द्वारा पत पदस्थान और उन्होंने
समझा उत्तार लिखवाया। यही मिहलउद्दीन-
के मरणादका व्युत्पत्ति था। उनसे बाद उनके देवा
कि इस पदस्थानके सम्बन्धमें पानी निपा-पदोका काम
बहुत कराना थे और मुग़ली ताजउद्दीन और नरहृत्त
दोनोंके रहने पर बहुतही कोमकी मयागना थे। इन-
विषे ताजउद्दीनको बरवादा करके उनकी जगह नर-
हृत्तको रखा गया। इनका पतन १०४० सादिक रखा
गया। इस पदके पानेके बाद पाद "नर मुग़ली" कहलाने
लगे।

मुग़लीका काम जारी रहनेसे नरहृत्त कुछ और पत-
पतके विविध सीति और विपदासामना हो गये। नर-

भूमि में जिसे परराष्ट्रसचिव (Foreign Secretary) कहते हैं, क्रमशः आपके हाथमें उसी पदके योग्य कार्य सौंपे जाने लगे । सिराजउद्दौला अवधी वार कलकत्ता लूट कर और कलकत्ते का अलीनगर नाम रख कर लौट गए । मन्दाजसे कर्नल क्लाइव और अडमिरल वाटसन कलकत्ते के सहायके लिए भेजे गए । उन लोगों-ने भा कर कलकत्ता पर पुनरधिकार किया और डूक, हलवेल और मुन्गी नवछत्तसे सब हानि सुन कर वे भी मुर्शिदाबादके पड़वन्तमें शामिल हो गए । क्लाइव नव-छत्तकी कार्य-दृष्टासे उन पर विशेषरूपसे विश्वास करते थे । १७५० ई.में क्लाइवने नवाबकी आदेशकी परवाह न कर चन्दननगर पर आक्रमण किया । इस पर नवाबने फिर कलकत्ते पर आक्रमण करनेके अभिप्रायसे फरवरी महीनेमें पूर्वोक्त 'डालही बागान'में भा कर छावनी डाली । क्लाइवने नवाब सरकारके बसावली की जांच करनेके लिए नवछत्तकी नाना उपद्रोकनके साथ नवाबकी पाख दूत बना कर भेजा । नवछत्तने प्रकाशभावसे दूतरूपमें जा कर नवाबका स्वीकृति मान्य कर दिया और सन्धिके लिए प्रार्थना की, किन्तु भीतर ही भीतर नवाबके सैन्यबलका विस्मृत विवरण मालूम कर लिया और भा कर सब क्लाइवसे कह दिया । दूसरे दिन सवेरे बहुत कुहरा हुआ । क्लाइवने मोक्षा देख ली समय भागे बढ़ कर पसतक पवद्यामें नवाब पर आक्रमण किया ।

इसकी पहली नवजायमें नवहोवाधिपति ज्ञानचन्द्रकी यथासि ३०० गौड़ बुला कर, उन लोगोंको हालसोबागान, नन्दमहागान् गौर बजबजकी तरफ जंगलोंमें बिपा रखा। नवाबको आदमियोंको इसकी जरा भी सनाख न थी। चंगरेजोंकी फौज कलकत्ता आक्रमण कर ज्यों की त्यों बढ़ने लगे, तो हो वे लोग उनकी अनुबलरूप में नाना स्थानोंसे निकल पड़े। इससे नवाबकी मेजा चंगरेजोंकी बलयुक्त समझ साफसहीन हो गई, जिससे क्लाइवने भनायास हो कलकत्ता उधार कर लिया। इस समय नवजाय यदि उनके सहायक न होती, तो ब्रिटिशकी भाग्यलक्ष्मी हमेशाके लिए बङ्गभूमि छोड़ देती, इसमें सन्देह नहीं। इस बात पर क्लाइव नवजायसे इतने सुग दुपे कि वे उनसे प्रायः कहा करते थे, 'कोई मोका

हाथ लगते ही मैं भापक्री बड़ा आदमी बना दूँगा ।'

रमैरेण्ड लड् माहवने जिन्हा है, कि १०५६ ई०में
जब गिराजने कनकत्ता आक्रमण किया था, उस समय
नवकृष्ण अपने ज़िन्दगीकी परवाह न कर फलताके
जहाजवासी पंगरेजोंकी जुलाईमें दिमाग्र तक छः
महीने बराबर रमट पड़्वाते रहे थे । इस समय नव-
कृष्ण यदि दुर्दान्त भवावके बादेशमें विरह पंगरेजोंकी
इस तरह रक्षा न करते, तो वे अपने अभ्यासे किस तरह
कष्ट पाते, यह सहज ही समझा जा सकता है।

पचाशीके युद्धमें पहले सिराजहोलाके विरुद्ध जो पड़्यन्त हुआ था, उसमें नवज्जाण भगरेजीके पक्षके यन्त्रस्वरूप थे। जगत्मेंठ भादिके साथ सब बन्दोबस्त कारनेके लिए स्थापनमें इन्हें लक्षप्रवेशमें सुविधावाट भेजा था। इस पड़्यन्तको सम्पूर्ण खिला-पड़ो मयजगन्नी ही काराई गई थी। गौरजादरके साथ बन्दोबस्त, समोचन्दके नामका सफेद और लाल 'बुक्कनो पत्र' सब नवज्जाणसे लिखाये गए थे।

नवक्षत्रोंके सुग्रीं दाहादने लौटने पर, उनके सुँहसे भावो-सुसंवाद सुननेके बाद क्लाइव युद्धयात्राकी लिए साहसी हुए थे। जब पन्थाशोक रणक्षेत्रमें क्लाइव उपस्थित हुए थे, तब नवक्षत्रोंको उनके साथ थे। उनके परामर्शसे अनेक जमांदारोंने चंगरेजोंको मदद की थी। कहा जाता है, कि इस समय वर्तमानके राजाने कुछ अन्धकारोके घोर नवदोषाधिपति क्षत्रपन्धने, कई तीर्थ भेजे जो थीं। चंगरेजोंसे पहले नियम कर रखा था, कि जैसा वन्दोवस्तु कर दिया है, उसमें अब युद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी; किन्तु समर-क्षेत्रमें जब भोपष गोलाधोंकी वर्षा होने लगी, तब दंग रह जाना पड़ा। चंगरेजोंका पद पद पर पदस्खलन घोर पतन होने लगा। विषम भनिष्ठ्टिके सामने अचसर हो ऐसा किशोर्में साक्ष्य नया। क्लाइव पादिने ऐसे विषम-मण्डटके समय नवक्षत्रोंको ही भीरुजाफरके पास भेजनेका नियम किया। सुग्री नवक्षत्र मानिकके कामके लिए जिन्दगीको परवाह न कर भीरुजाफरके गिरिर्में उप-

स्मिन् रूप। मविनमि मि'कामन पानिकी पागाने मोर-
काकाकी मुप कर दिया, ये तो ये-म-मविन दुब-देत-
मे भले गये। मरुत्तपुमें उठ च'वाट काइवकी मुनायः।
काइव वहु सुग दुप। इस तरह पनामोके पुइमी चट्ट-
रेकोको मय घोपित हुई।

पनामोके मुइके बाद काइवने प्रकाश दरवारमें
मोरकाकरकी मुमि दापाटके समजद पर बिनाया। मुगी
मरुत्तपु भी इस दरवारमें उठस्थित थे। दरवार उठ
जाने पर अब माय, म., गाट, म., मुमि'टन., काइव और
चट्टरेकोको दोबान रामचन्द राय (पादुमकी राज-
गोत्राके पूर्व-पुइय) मरावका धनागार देपने गए थे,
उम समय भी मरुत्तपु उनके साथ थे। इस समयारमें-
ने करीब २ करीक रूपये काइव चादिने पापमर्मा बाट
छाए थे। तत्कालीन इतिहास-पेशापोका कहना है,
कि इस प्रकार धनागारके सिवा मिश्र-उद्योगाकी
पना:पुममें भी एक गुम-धनागार था। उसका नाम चट्ट-
रेकोको मातु, म. मर्को था। मोरकाकर, चमोरवेग गो,
चट्टरेगांके दोबान रामचन्द राय और मुगमी मरुत्तपुको
उम धनागारमें करीब ८ करीक रूपयेका भोगा, चादी
और रत्न चादि प्राप्त हुआ था।

नून समयमें पनामोका मुइ हुआ, सुतां शादीय
पूजाके दिन करीब पा जाने पर भी मरुत्तपुने विराट,
धवस्या करके हस्त चण्डीमण्डपकी मोर्ये जाल दो और
बहुतसे पादमी लगा मोप्रतामें बनवा कर उसी मर्प
नये मण्डपमें मरुत्तपुमारीइके पाप मरुत्तपुकी मर्षका
की। मोभाभाज्राके राजभ'मकी पुरातन पशालिकामें
पह भी उक्त मण्डप विद्यमान है। मरुत्तपु, मुमि'दा-
वाट चादि प्यानेमि इस उक्तममें मर्पकी और मोहन
मर्गरेइ दुनाई गई थी। लप्पानमर्गमें पल्लवान तक
यह उक्तद कायम रहा था। यह भी इस राजभ'ममें
उक्त निपन जारी है। मरुत्तपुका प्रथम पूजामें कमल
काइव चादि बागो च'वेर उठस्थित थे। ७

पनामोके मुइके बाद मोरकाकर मराव तो ही गये,

पर च'मरेकोको उक्तोने जितने रुपये देने का वचन दिया
था तनने वे दे न मने, इमनिच मादेमिज शासनकालोंवा-
के साथ उनका विवाद हो गया। इस समय महाराज
मन्दकुमार दुगको, द्विजो चादि प्यामोके दोबान थे।
इसके बाद १०६० ई०में काइव विनायत चले गये।
बम्बोटाटें कलकत्ताके मयनर हुए। मोरकाकरने
मन्थिकी मर्गोंमें च'मरेकोको को रूपये देने वचन क्रिदे
थे, ये न दे मर्गमें के कारण, उक्तें मदिवा और च'र-
मानका राजप वचन कर लेनेका हक दे दिया। महा-
राज मन्दकुमार तकमोनदार (काइवके समयमें) हुए।
परन्तु बम्बोटाटेंके समयमें इससे भी दिगांव चुकता न
होने पर, मोरकाकरके दमाद मोरकामिम मरुत्तपुके वृत्त
बन कर च'मरेकोका विमाय चुकानेके लिए उनकमो
पाये। च'मरेकोने देवा कि मोरकाकिमको घोषणा
मोरकाकरके करीं पधित है। वस फिर क्या था, भट
उनके साथ मरुत्तपु की मरुत्तपुमर्गमें बातचीत और मन्थि
पिर कर च'मरेकोने मोरकाकाकी पदच'त कर दिया।
मोरकामिमने १०६० ई०में ही मवाव हो कर च'मरेको-
की २० लाख रुपये और बर्तमान, मैदिनोपुर और वा-
पाम ये तीन स्थान दिये। परन्तु इसके बाद १०६८
ई०में मोरकामिमने च'मरेकोका मुइ दिव गया और
उसमें च'मरेकोको भीत हुई। महाराज मन्दकुमार
दोबान हुए। उक्तोने मोरकाकरके करके २० लाख
रुपयेमेंसे एक सुम्मा २ लाख रुपये भेज दिये। जिस
विशेषे साथ ये भेजे गये थे, उस बिहीम मन्दकुमारने
लिवा था, 'मरुत्तपुके पास इसकी एक मिहिरिया भिजी
जाती है।'।

१०६४ ई०में काइव पुनः भारतके मयनर हुए। इस
समय मवाव-मरकारमें भी मरुत्तपुकी मिदिन प्रतिष्ठा
थी। पाप जेथे च'मरेकोके पदको खींच करते थे,
उसी प्रकार मवाव मरकारका भी। खय काइव इस
कालकी स्वीकार कर गये हैं। इस समय मोरकोप पञ्जाबि

भी नवकुल की मुग्धिदावाद ले आया करते थे।^१ जिस समय मीरकासिमके साथ अंगरेजों का युद्ध हुआ था, उस समय मेजर अडमस् सेनापति बन कर गये थे। नवकुल उनके धनियन (राजनीतिक सुलही) हो कर साथ गये थे। युद्धमें आहत और पौड़ित होने पर मेजर अडमस् को ले कर आप जिस समय कलकत्ते आ रहे थे, उस समय नवाबके एकदल लुटेरों ने आप पर धावा किया। आपने जिन्दगीकी परवाह न कर कौयलसे मेजर साहबको बचा लिया। इस समय नन्दकुमार बिहार-प्रवासी दिल्लीके बादशाहके साथ पड़वन्त कर अंगरेज-दमनकी चेष्टा कर रहे थे। जनरल कार्नवालिस को मालूम पड़ते ही, उन्होंने नन्दकुमारको बन्दी कर कलकत्ता भेजना चाहा। इस अवसर पर मुन्गी नवकुल तथा अन्धान्य सभ्रान्त पुरुषोंने मध्यस्थ बन कर कार्नवालिस को मान्य किया था। इसके बाद बन्दोबस्त-लिखित विवरण पढ़ कर क्लाइवने जब नन्दकुमारको सुबेदारोंके पदसे हटा कर चट्टपामने निर्वासित करनेका संकल्प लिया था, उस समय भी राजा नवकुल पाटिने मध्यस्थ हो कर अनुरोध किया था, जिससे क्लाइव वैसा करनेसे बाल पाये। नन्दकुमार देखो।

इस समय दिल्लीके बादशाह अंगरेजोंकी सहायतासे दिल्लीकी बादशाहतको सुदृढ़ बनानेकी कोशिशमें थे। १७६५ ई०के मई महीनेमें क्लाइवने मुग्धिदावाद जा कर नये नवाब गज़मउद्दौलाके साथ मुलाकात की। वहाँकी व्यवस्था कर फिर वे दलाहावाद गये। नवकुल उनके साथ थे। अयोध्याके नवाब और मुगल-बादशाहके प्रधान मन्त्री गुजाउद्दौलाके साथ बादशाह शाहआलमका विवाद चल रहा था। गुजाउद्दौलाने बादशाहका इनामा बाट और कड़ा-प्रदेश अधिकार कर लिया था। अंगरेजोंने मध्यस्थ बन कर यह विवाद मिटा दिया। इसी अवसर नवाब गुजाउद्दौलाने उल्ला दोनो प्रदेश अंगरेजों को दे दिया। अंगरेजोंने उल्ला दोनो प्रदेश बादशाहको दे दिये और उनके बदले उनके बिहार, उड़ीसा और

बंगालकी दीवानी दे दी। इन कामोंमें जितनी भी लिखा-पढ़ी हुई थी तथा समविदा किया था, उन सबमें नवकुल का हाथ था और तो क्या, क्लाइवकी कड़ा और दलाहावाद दे कर इसके बदलेमें बिहार, उड़ीसा और बंगालकी दीवानी सेनाका परामर्श भी इन्होंने दिया था।

ये सब महत्कार्य मुन्गी नवकुलके द्वारा सुचारुपक्षे सम्पादित होते देख लाई क्लाइव उनके विशेष सन्तुष्ट हुए और बादशाहसे उन्हें "राजावहादुर"की उपाधि दिला दी। बादशाह भी आपसे खुश थे, इसलिए उन्होंने आपको पांच हजारों मनसबदारीका पद दे कर अपने दरबारका उमराव बना लिया। इस उपलक्षमें नवकुलको ३ हजार घुड़सवार, भालारदार पालकी, नगाड़ा, तोग नामक ध्वजा, घामा-छोटा आदि प्राप्त हुए थे। गुजाउद्दौलाने भी उन्हें भस्म खुलभत दी थी।

इसके बाद लाई क्लाइव राजा नवकुल वहादुरके साथ काशी लौट-पाये और वहाँ उन्होंने राजा बलबन्तसिंहके साथ उनकी जमींदारी और कम्पनीके अधोनय्य स्वा बिहारके भीमान्त-विषयक बन्दोबस्त करनेको व्यवस्था की। यहाँ भी सब कार्य राजा नवकुलने ही किये थे। इस समय बिखेडरके नाट-मन्दिरमें राजा नवकुलने अपने नामसे "नवकुलेश्वर" नामक एक शिवमूर्ति की प्रतिष्ठा की थी। उसके बाद पटना आ कर वहाँके शासन-कर्त्ता राजा सितारामके साथ बन्दोबस्त हुआ। यहाँ भी राजा नवकुलने ही सब काम किया था।

तदनन्तर कलकत्ते आ कर क्लाइवने महम्मद रेजा खाँ की सुखलमान समाजका नेतृत्व करते देख उन्हें ही नायब दीवान बनवा दिया। उस समय नायब सुबेदार मान थे। परन्तु कम्पनीको दीवानों मिन जानेसे वास्तवमें नायब सुबेदारोंका पद (खानसाही दीवानों) कम्पनीका ही रहा। सुतरां क्लाइवने नायब सुबेदारोंका पद उठा कर नायब दीवानोंके पदको सृष्टि कर उस पद पर महम्मद रेजा खाँको नियुक्त किया।

महाराज नन्दकुमार उस समय हिन्दू-समाजके नेता थे। क्लाइवने कलकत्ते आ कर राजा नवकुलकी कम्पनीकी ओरसे उनके कृतकर्मके लिए पुरस्कार देनेका विचार किया। इसी सूत्रसे उन्होंने फिर सम्राट् शाहआलमको

सामाजिक विधियोंके लिए नन्दकुमारको ही प्रारण लेते थे, इसलिए देगको भाष्यत्तरीय प्रभुता उस समय नन्दकुमारको ही प्राप्त थी। इतने पर भी नवकृष्णको उस समय भूस्मृति विधेय न थी, नवापाड़ा नामकी छोटो-सी एक जमींदारी मात्र थी, सुतरां 'अतुल भय' होने पर भी देशीय लोगोंमें उनका विधेय सम्मान न था। राजकीय क्षमता यथेष्ट थी। प्रभुत्वलोचुष अंगरेज-कम्पनीकी भाव इच्छानुसार उंगली पर नचा सकते थे, नवाब-सरकारमें भी भाव इच्छानुसार सुझ-घटना घटा सकते थे। परन्तु स्वदेशीय समाजकी स्वस्थितीमें उस समय भावकी कुछ भी प्रतिपत्ति न थी। माद-श्राद्धका आयोजनमें उन्होंने इन क्षमताका अभाव खूब ही अनुभव किया था। यद्यपि उनको राज्यके समस्त राजा, महाराज और जमींदारोंको अपने मकानपर बुलानेमें सफलता प्राप्त हुई थी, तथापि उन्होंने अपनेको सामाजिक सम्मानके अधिकार प्राप्त भी नहीं माने थे। उनका उद्देश्य वे दुःखित भी हुए। वह समय कोलोन-मर्यादाके पूर्ण आदरका समय था। उस समय नवकृष्ण जैसे एक नूतन प्रभुत्वित मोलिक कायस्थके माद-श्राद्ध जैसे सामाजिक व्यापारमें इस तरहके विपुल आयोजनके लिए उन्हें कितना विनय और होनता खोकार कारना पड़े थी इसका अनुभव वे ही कर सकते हैं जो उस जमानेकी हस्तियोंसे वाकिफ हैं। कुछ भी हो, माद-श्राद्धके आदेशे भाव सामाजिक प्रभुता प्राप्त करनेमें सचेष्ट हुए। इस चेष्टाके सुत्रपातमें ही भावको दृष्टि महाराज नन्दकुमार पर पड़ी। आपने देखा कि मद्रासमें ले कर चण्डान तक सब उन्हींके हाथमें हैं। इसके सिवा नन्दकुमारको राजनीतिक क्षमता भी उनसे कम न थी। नवकृष्णने नियत किया कि नन्दकुमारको किसी तरह मोचा न दिखाए उनका उद्देश्य सिद्ध होना कठिन है, सुतरां वे उस चेष्टामें परोक्षरूपसे नियुक्त हुए। उदीयमान अंगरेज-प्रभुत्व उनकी सुझोंमें था, फिर उन्हें फिक्र किम बातकी ?

नन्दकुमारका उस समय भाष्यवक्त भी फिर रहा था। अंगरेज लोग कभी उन पर खूब और कभी नाखुश रहते थे। वेरलेटने भी क्लारकको तरह पहले उन पर ऊपा-

दृष्टि रखी थी, परन्तु पाँके शत्रुओंके कान भरने पर वे उनसे नाराज हो गये। सुंकोशली नवकृष्णने इस गुप्त अवसरकी हावसे जाने न दिया। वेरलेट जिससे फिर नन्दकुमार पर अनुग्रह न कर सके, इस बातका वे स्थान रखने लगे। यहीसे नन्दकुमार और नवकृष्णमें परस्पर विवादका सूत्रपात हुआ।

इस समय और भी एक घटना हो गई, जिससे उक्त विवाद दृढ़ीभूत हो गया और नन्दकुमारकी समर्पित हाजि हुई। नवकृष्ण इस समय विधेय क्षमताप्राप्ती हो गये थे। क्षमता प्राप्त होने पर मनुष्यमें कुछ न कुछ अत्याचारप्रवृत्ति जाग उठती है, महाराज नवकृष्णके चरित्रमें भी वही कसक घुस पड़ा। बहुतसे लोग उनके अत्याचारसे दुःखित हो अंगरेजी अदालतमें उनके नाम नालिम करने लगे। अवश्य ही उन अभियोगोंके सम्बन्धमें दोनों पक्षोंके घनेक प्रवाद और प्रमाद है। केवल प्रवाद होने पर उनका बिना उल्लेख किये ही काम चल जाता। परन्तु अब देखते हैं कि उस समयके अदालती कागजातोंमें उनके विरुद्ध उक्त अभियोगोंका उल्लेख है, तब वह बात केवल प्रवाद कह कर उड़ाई नहीं जा सकती। उन अपराधोंके लिये वे अंगरेजी अदालतमें ब-दस्तूर अभियुक्त हुए थे। उस जमानेके मेम्बर-कोर्ट-के एक जजने उन अभियोगोंके कुछ कागजात देखा मो दिये हैं। उन्हींके आधार पर नवकृष्णके दो सुदतर अपराधोंका विवरण लिखा जाता है। इसका उद्देश्य केवल उनके दोषादोषका अनुसन्धान करना नहीं है, प्रत्युत इतिहासकी पवित्रता-रक्षा और सत्यावधारण मात्र है।

उस समय कलकत्तेमें एक प्रकारकी श्रेयण अदालत थी, जो वर्षमें चार बार खुलती थी। उसका नाम था Court of quarter Sessions (कोर्ट-ऑफ-क्वार्टर श्रेयण)। इसमें कलकत्तेके गवर्नर प्रधान विचारपति और तीन कौन्सिलके सदस्य विचारक नियुक्त होते थे। विचारमें सहायताके लिए शरीफ द्वारा जूरी नियुक्त होती थी। १७७० ई०में शरीफों को जूरी के नामक एक व्यक्ति नवकृष्णके नाम उक्त अदालतमें बैठे जूरीके पास नालिम की। मोहम्मद हुसैनने अभियोगपत्र नियमानुसार किछो अष्टि-आफ-दो-पीनके

मनोकेष्ट दूर हुआ। सुतानटीका तालुकदारी और जाति-माला कचहरोका भार पानेसे उनकी सामाजिक मान-सम्मान धीरे धीरे बढ़ गया।

वर्षमानको साजावली ही महाराज नवकृष्णको राज-नीतिक कार्यका प्रियकार्य था। इसके बाद, उन्होंने भीर किसी राजनीतिक कार्यमें हाथ नहीं डाला।

‘महाराज वहादुर’को उपाधि पानेके कुछ समय बाद ही उन्होंने अपने घरमें विग्रहकी प्रतिष्ठा की जिसमें लाखों रुपये खर्च किये थे। विग्रहके क्लृप्त अक्ष-हारादि होरा-मौतोंके थे। यह देवताकी पार्थिव सेवाके लिए इन्होंने विस्तर व्ययका व्यर्थवस्तु कर दिया।

महाराज नवकृष्णने वैशाखा घामसे ले कर कुलपौ तक १६ बीसको एक सन्ध्या सड़क तैयार कराई। वह सड़क आज भी ‘राजाका जाग्राव’ नामसे प्रसिद्ध और वर्तमान है। वर्तमान शोभावजार राजभवनको सोप-मालाके मध्य ही कर अभी जो सड़क राजा नवकृष्ण-फ्रीट नामसे पूर्व-पश्चिमकी चली गई है, वह भी महाराज नवकृष्णकी ही बनाई हुई है।

इन्होंने सात विवाह किये थे। पर अष्टवैगुण्य-वयस; सन्तान एक भी नहीं। इनके बड़े भाई राम-चन्द्रदेवके पांच सन्तान थे जिनमेंसे नवकृष्णके छतरीय भ्राताके पुत्र गोपीमोहन देवकी मोद लिया। किन्तु इसके कुछ दिन बाद ही नवकृष्णकी चौथी स्त्री भैरवी-गिवासे रामकनारि वसु मल्लिकको कन्याके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस पुत्रका नाम था श्रीमराध राजा राजकृष्ण बहादुर। इस पुत्रके जन्मोपलक्षमें इन्होंने प्रजाकी बाकी मातृगुजारी भाँक कर दी।

१८८० ई०, २२ नवम्बरकी महाराज नवकृष्ण इस धराधामकी छोड़ स्वर्गधामकी सल गये। जिस शीघ्रसे इनकी मृत्यु हुई, मानस नहीं। मृत्युके दिन अग्न्यासा-नुसार दिनचंदां बर्ज से रहे थे। सन्ध्याके बाद देखा गया कि वे अग्न्या पर अतावस्थामें पड़े हैं।

नवकृष्णके विद्याभुराग यथेष्ट था। कृष्णचन्द्रको तरह उनकी पण्डित-सभा थी।

उनको सभामें जगदाय तर्कपद्धानन, राधाकाका तर्क-वागीश, वादप्रार विद्यालङ्कार, चमत्कार विद्यावागीश,

श्रीकण्ठ, कमलाकान्त, बलराम, गङ्गाधर, चतुर्भुज न्याय-रत्न पादि पण्डितगण सर्वदा उपस्थित होते थे। नवकृष्ण पण्डितोंका अथवा आदर करते थे, जैसे उनके गुणका प्रशंसा भी करते थे।

नवकृष्ण पण्डितोंकी तरह सद्गीतज्ञ और वादकोंका भी आदर करते थे। सुर्विदावाद, लखनऊ, दिल्ली पादि प्रसिद्ध गायक उनके यहाँ हमेशा आया करते थे और पारितोषिक पाते थे।

एतद्विषय नवकृष्णकी और भी अनेक सत्कृतियाँ थीं। जातिधर्मनिर्विषयमें उनकी दान था। सिद्धहोलाके कलकत्ता आक्रमणके समय कलकत्तामें अंगरेजोंका जो गिर्जा था वह नष्ट किया गया। तभीसे अर्थभावके कारण वह गिर्जा फिर बन न सका। नहीं बननेका दूसरा कारण स्थानामाव भी था। १८८१ ई०में ईटिङ्गस-ने उसी सद्देशसे एक सभा की और उस सभामें अंग-रेजोंके दोष देकर, सत्का चम्पा उठा। नवकृष्णने अनेक जमीन देना चाहा और अंगरेजोंके कथानुसार मङ्गलसे वसिष्ठ लडा इनकी जमीन्दारी नहीं दो, ४५०००) रु०में एक टुकड़ा जमीन खरीद कर गिर्जा बनानेके लिए उन्हें दो। वहाँ जो गिर्जा बनाया गया, वही सैण्ट्रलस चर्च कहलाता है।

नवकृष्ण जैसे चतुर, कार्यदक्ष और तीक्ष्णबुद्धि थे, जैसे ही विद्याभुरागी, दयावान और आश्रित-प्रतिपालक भी थे।

नवकृष्ण (सं० पु०) भूमिके नौ विभाग, यथा—भरत, इन्द्रावत, किंपुरुष, मद्र, केतु मान, हरि, हिरण्य, रम्य और कुय।

नवखान—हिन्दीके एक कवि। ये हुन्देलखण्डके रहने-वाले थे। संवत् १८८२में इनका जन्म हुआ था। इनको खविता सुन्दर होती थी।

नवगङ्गा—नदिया जिलेमें प्रवाहित माताभद्रा नदीकी एक शाखा। यह नदी यमोरे जिलेके पश्चिम मोमाने प्रवेश कर पड़के पूर्वकी ओर पोछे दक्षिणकी ओर भिन्नार्द्रदक्ष, मायुरा, मङ्गाटो, नन्दी और सद्योपागा होनी हुई मधुमतीके साथ मिल गई है।

नवपद (सं० पु०) १) शर्वादिके नौ पदोंका नाम नवपद है।

जो कर प्रायः नाकी थी, 'प्रभो ! हम लोगो'का काम भलग भलग बाँट दीजिए ।' स्कन्ददेवने उन्हें शिवजीके पास भेज दिया । शिवजीने उनसे कहा था, 'तिर्यक योनि, मनुष्य और देवता यह त्रिविध सृष्टि एक दूसरेके संप्रकार द्वारा व्यवस्थित है । देवगण शीत, शीघ्र, वर्षा और वायु द्वारा मनुष्य तथा तिर्यक जातिको प्रसन्न रखते हैं एवं मनुष्य यथादि द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करते हैं । सर्वोको हृत्ति इसी प्रकार विभक्त हो गई है, अभी प्रिय कुल भी न रहा । अतः तुम्हारी हृत्ति बालकोके ऊपर निर्धारित हुई । जो कुलदेवता, पित्रगण, मातृगण, साधु और अतिथिको पूजा नहीं करते, योचाचाररहित होते तथा भग्न कांक्ष-प्राप्तमें भोजन करते, उनके सृष्टस्थित बालकोके ऊपर तुम निराग्रहचित्तसे आक्रमण कर दो । इसी हृत्तिसे तुम्हारी पूजा होगी ।' इस प्रकार प्रहृष्ट उत्पन्न हो कर बालको पर आक्रमण करती हैं । जो बालक ग्रहमें आक्रान्त हो जाता है, उसकी चिकित्सा भी नहीं हो सकती । यद्यो-मित्रे स्कन्द प्रहृष्टो सबसे व्यर्थ है । उन जो ग्रहोके नाम ये हैं—स्कन्द, स्कन्दापहार, शक्रनीयग्रह, पूतनाग्रह, अम्बपूतनाग्रह, शीतपूतना, श्वेतोग्रह, सुखमन्तिकग्रह और नैगमग्रह । यही नौ यह क्रमशः बालको पर आक्रमण करते देखे जाते हैं ।

नवग्रहा आकृति-ज्ञान ।—अद्विष्टाचरण करनेसे अथवा बालक भीत, डट्ट वा तर्जित होनेसे ये सब ग्रह उनके शरीरमें प्रविष्ट होते हैं । शरीरमें जब ग्रहोके लक्षण मालूम पड़ने लगे, तब पहेले सात्वता वाक्मका प्रयोग अवश्य करना चाहिये । उस समय प्रहृष्टचित्त बालकके हीनो नेत्र शीत होने लगते हैं, देखमें शोणितगन्ध आती है, स्नानमें विक्षेप होता है, सुख मल मालूम पड़ता है, भोजनका एक पक्ष स्थिर हो जाता है, उद्विग्नता भा जाती है, दोनों पक्ष भारी हो जाते हैं, मल गाढ़ा हो जाता है तथा बालक थोड़ा थोड़ा रीने भी लगता है । ये सब लक्षण स्कन्दग्रहके हैं । कभी मधेतन, कभी अचेतन, सर्वत्र हस्त, पद कम्पन, मसमूह निःशरण, शब्दके साथ लुब्धक, सुखमें किमोन्नत ये सब लक्षण स्कन्दापहार ग्रहके समझे जाते हैं । (अष्टम २०वे, ३० अध्याय)

नव-जन्म प्रहो ग्रहणं यम् । (त्रि०) ३ नूतन नव

वा धृत, जो ज्ञानमें ही बाँधा था पकड़ा गया हो । नवग्र (सं० त्रि०) नवभिर्मासैर्गच्छति गमः । नव-मास भ्रमावता द्वारा उत्थित, नौ मासमें फल प्राप्त नहीं होनेसे जो उत्थित होता है, उसे नवग्र कहते हैं । २ नवीन गतिनक्ष, नयी चाचवला ।

नवचक्राङ्ग (सं० पु०) शिष्य, महादेव । नवचत्वारिंश (सं० त्रि०) नवचत्वारिंशत् सख्यायां पूरणं । जनपञ्चागत् सख्याका पूरण, उनचासवाँ । नवचत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) नवाधिका चत्वारिंशत् । जनपञ्चागत् सख्या, चाक्रीस और नौको सख्या । नवक्षत्र (सं० स्त्री०) नवीन विद्यार्थी । नवक्षिद्र (सं० स्त्री०) नव क्षिद्रानि यत्र । नवहार । देखमें नौ क्षिद्र भयात् हार है ।

नवज (सं० त्रि०) नव-जन-ज । नवजात, जो हालमें पैदा हुआ हो ।

नवज्वर—ज्वरभेद । इसका सामान्य लक्षण चर्म रौध, देह, इन्द्रिय और मनका संताप है तथा उस समय शरीरमें वेदना भी मालूम पड़ती है । देह-सन्तापसे देहको उष्णता, इन्द्रिय संतापसे इन्द्रियको विकृति और मनके संतापसे मनोविकृति होती है । मनकी अस्थिरता और ग्लानि ही मनको विकृति है । जो ज्वर सात दिन तक रहता है, उसे तरुणज्वर कहते हैं ।

निकिरसा-विधान ।—ज्वर आने पर चिकित्सकको पहले यह अवश्य जान लेना चाहिये, कि यह ज्वर वात, पित्त, कफसे उत्पन्न हुआ है वा उनमेंसे किसी दोसे अथवा यह त्रिदोष ज्वर है । यदि चिकित्सक किन दोषसे ज्वर उत्पन्न हुआ है, इसका स्थिर कर न सके, तो सर्वे साधारण चिकित्सा अर्थात् परस्परकी अवरोधो चिकित्सा करनी चाहिये । रोगीको ऐसे स्थानमें रहना चाहिये जहाँ हवा न जाती हो ।

ज्वररोगीके लिये वायुशून्य स्थान वायुवर्द्धिकारक और आरोग्यजनक है ।

ज्वररोगीके लिये पेटकी वायु उपकारो है । उनमेंसे ताड़के पत्तेके पंखेकी वायु वायुनाम और विद्रोप प्रशंसित होता है । बाँके पंखे जो हवा की जाती-है वह बहुत गरम होती है तथा रक्तपित्तके प्रकोपको

रवि, शीम, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन नी पक्षोंका नाम नवग्रह है। जो कोई काम्य-कर्म करना होता है उसके पहले नवग्रहयज्ञ अवश्य करना चाहिये, नहीं तो वह काम्यकर्म फलदा नहीं होता है।

सभी ग्रह रथ पर चढ़ कर आकाशमण्डलमें विचरण करते हैं। इनहीं नी पक्षोंकी दया मनुष्य भुगते हैं। प्रदोष दण्डका विवरण 'दण्ड' शब्दमें देखो। कुलगण्डिका चादि होम करनेमें भी नवग्रह होम करना होता है।

प्रतिदिन नवग्रह-स्तवका पाठ करना हरएकका अवश्य कर्तव्य है। स्तव—

“नवाङ्गुलमयङ्गात् काश्यपेयं महापुतिम् ।

अन्तादि सर्वपापघ्नं व्रणतोऽस्मि विधाकारम् ॥

रिभ्यगङ्गुवारामं क्षीरोदार्णवधमवम् ।

ममामि राधिम भवत्वा रामोऽमुं कुटुम्भयम् ॥

धरणीगमंभूतं विष्णुपुत्रं लक्ष्मणम् ।

कुमारं शक्तिहस्तं मोहिताङ्गं नवग्रहम् ।

त्रिभुक्तिकारयामं कृपेनाप्रतिमं बुधम् ।

शौभ्यं सर्वगुणोपेतं ममामि रुशिमः सुतम् ॥

वैवतानामृषीणां शुक्रं कनकशिमम् ।

वज्रभूतं यितोकेन्द्रं तं ममामि हृदयपतिम् ।

हिमकुन्दमृगालम् वैवतानां परमं शुभम् ।

सर्वशास्त्रप्रकारं भाग्यं प्रणमायहम् ॥

नीलाजनयप्रभं रविपुत्रं महाप्रभम् ।

कायाया गमंभूतं मन्दे भवत्वा शनैरवरम् ॥

मन्देकामं महाधोरं वज्रादित्यविमर्दकम् ।

सिंहिकायाः सूर्यं रौद्रं तं राहुं प्रणमायहम् ॥

पत्तालधूमचक्राय शापमहविमर्दकम् ।

रौद्रं द्रवममं कूरु तं केतुं प्रणमायहम् ॥

व्यासेनोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठेत् प्रयत्नः क्षयिः ।

दिवा वा रात्रि वा रात्रौ शान्तिस्तपस्य च यतः ॥

देवदेवमनुजं चारी भाग्यम् प्रतिवर्द्धनम् ।

मन्त्रादिप्रदत्तं मित्रं तद्विषयवाच्यम् ॥

तच्छब्दोऽस्मिन्नेव वायुर्वायुं वायुं ग्रहणं कृत्वा ।

ते पदं प्रथमं याति त्रयोऽनुवाकं संशयः ॥”

(इति भीष्माचार्यविरचितं नवग्रहस्तोत्रं समाप्तम् ।)

जो रात या दिन किसी समय इस नवग्रह-स्तोत्रको पाठ करते हैं, वे अतुल्य ऐश्वर्य, आरोग्य और पुष्टिनाम करते हैं तथा उन्हें किसी दूसरे परेशान भय नहीं रहता।

ग्रहगण यदि अश्वत्थामानेन रात्रिचक्रके गोचरमें शुभ वा अशुभ हो, तो मनुष्योंका जन्मफल भी शुभ वा अशुभ होता है। इन सब ग्रहोंकी शान्ति करनेसे पराम पूर होता है।

ग्रहोंके सहेय्यने यज्ञ करनेमें प्रत्येक ग्रहका विभिन्न मन्त्रसे होम करना होता है। यह मन्त्र प्रत्येक वेदानुसारसे विभिन्न है।

ग्रहोंकी गति ८ प्रकारकी है, यथा—वक्र, प्रतिवक्र, कुटिल, मन्द, मन्दतर, सम, शीघ्र, शीघ्रतर। ग्रहगण इन ८ प्रकारकी गतियोंसे ख-मण्डलमें विचरण करते हैं।

गणिका विशेष विवरण खगोल शास्त्रमें देखो।

“विश्वे शुक्र-शुक्र क्षत्री कुमार्कं गृहहन्तुना ।

रघुर्बुधः स्मृतौ उल्लेख्यौ सिंहद्वेषणैरपरा ॥”

(ब्रह्मवैवर्तम्)

शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण, मङ्गल और रवि क्षत्रिय, केतु गुरु, चन्द्र वैश्य तथा राहु और शनि श्लेष्म जाति हैं। प्रदोष विशेष विवरणदि तत्तद् शब्दमें देखो।

२ बालकोंके अनिष्टकारक ग्रहविषय। इसका विषय सुन्तमें इस प्रकार निम्ना है—बालग्रह जो हैं। ये दिव्य देहविगिट हैं। इनमेंसे कुछ तो नारो और कुछ गुरुय हैं। शरवन्स्थित सद्योजात काचित्केवको रक्षासे मिले क्षत्तिका, अग्नि और महादेवके तेजसे उसको स्रष्ट हुई है। जो सब ग्रह स्त्रीदेहविगिट हैं, वे गङ्गा, यमा और क्षत्तिकाके रजोभागसे उत्पन्न हुई हैं। नैमिष यह पावतीसे उत्पन्न हुआ है और उसका मुख नीपके सदृश है। स्कन्दपाय्यार यह अन्निके समान यातिविगिट है। यह स्कन्दका सखा है और इसका नामासार है विगाण। भगवान् विपुलरानि स्वयं स्कन्दग्रहको स्रष्ट को है। इसका दूसरा नाम कुमार है। कोई कोई पत्र अग्नि इस स्कन्दको काचित्केय बतनाते हैं। लेकिन यथार्थमें यह नहीं है। स्कन्ददेव जब देवताओंके सेवा-पतित्व बने थे। तब दोत गन्धिमारी पक्षोंने उनके पाप

को कर प्रार्थना की थी, 'प्रभो ! हम लोगों का काम बलम
भलम बाँट दीजिए ।' स्कन्ददेवने उन्हें शिवजीके पास
भेज दिया । शिवजीने उनसे कहा था, 'तिर्यक शोनि,
मनुष्य और देवता यह त्रिविध सृष्टि एक दूसरेके उप-
कार द्वारा अवस्थित है । देवगण शीत, ग्रीष्म, सर्पा और
वायु द्वारा मनुष्य तथा तिर्यक् जातिको प्रसन्न रखते हैं
एवं मनुष्य यन्त्रादि द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करते हैं । सर्वोंकी
वृत्ति इसी प्रकार विभक्त हो गई है, प्रभो श्रेष्ठ कुल भी न
रहा । अतः तुम्हारी वृत्ति बालकोंके ऊपर निर्धारित हुई ।
औ कुलदेवता, पित्रगण, ब्राह्मण, साधु और भक्तियोंको
पूजा नहीं करते, मीवाचाररहित होते तथा भग्न कांक्ष-
प्राप्तमें भोजन करते, उनके अदृष्टित बालकोंके ऊपर
तुम निःस्पृहचित्तसे आक्रमण कर दो । इसी वृत्तिसे तुम्हारी
पूजा होगी ।' इस प्रकार मन्त्रगण उत्पन्न हो कर बालकों
पर आक्रमण करते हैं । जो बालक पहले आश्रमात् हो
जाता है, उसकी चिकित्सा भोग नहीं हो सकती । यहाँ-
मेंसे स्कन्द पहली सबसे ब्रह्म है । उन जो ग्रहोंके नाम
ये हैं—स्कन्द, स्कन्दापभार, शकुनीघट, पूतनाग्रह,
अश्वपूतनाग्रह, ग्रीतपूतना, देवतीग्रह, सुखमन्त्रिकग्रह
और नैगमग्रह । यही नौ यह क्रमशः बालकों पर आक्र-
मण करते देखे जाते हैं ।

नवग्रहा आकृति-ज्ञान ।—पड़िताधरण करनेसे प्रत्येक
बालक भीत, डूट या मर्जित होनेसे ये सब ग्रह उनके
शरीरमें प्रविष्ट होते हैं । शरीरमें जब ग्रहोंके लक्षण
मात्र मूल पड़ने लगे, तब पहले सन्ताना वाक्पत्ता प्रयोग
प्रवर्धन करना चाहिये । उस समय यहप्रवृत्ति बालकके
दोनों नेत्र शक्ति होने लगते हैं, देखने शोणितगन्ध आती
है, स्पर्शमें विक्षेप होता है, सुख वक्त मात्र मूल पड़ता है,
नैतत्ता एक पक्ष स्थिर हो जाता है, अदृग्गता भा जाती
है, दोनों चक्षु भारी हो जाते हैं, मल गाढ़ा हो जाता
है तथा वाक्पत्त योड़ा योड़ा होने लगेता है । ये सब
लक्षण स्कन्दग्रहके हैं । कभी सचेतन, कभी अचेतन, सबह
हस्ता, पद कम्पन, मसमूच निःसरण, शब्दके साथ लुब्धक,
सुखमें किमोषम ये सब लक्षण स्कन्दापभार ग्रहके लक्षण
जाते हैं । (द्रुपद २०७ १० अध्याय)

नव-नूतन ग्रहों ग्रहण यस्य । (त्रि०) नूतन ग्रह

वा धृत, जो हालमें ही बाँधा या पकड़ा गया हो ।
नवम्ब (स० त्रि०) नवममार्गसंगच्छति गम-डु । नय-
भास भ्रामसता द्वारा उत्पन्न, नो मासमें फल प्राप्त नहीं
होनेसे जो उत्पन्न होता है, उसे नवम्ब कहते हैं । २
नवीन गतिनक, नयी चात्रवाला ।

नवचक्राङ्ग (स० पु०) शिव, महादेव ।
नवचत्वारिंश (स० त्रि०) नवचत्वारिंशत् सख्यायां पूरणः
छट् । जनपद्वाग्यत् सख्याका पूरण, उनचासवाँ ।
नवचत्वारिंशत् (स० स्त्री०) नवाधिका चत्वारिंशत् ।
जनपद्वाग्यत् सख्या, चालीस और नौको सख्या ।
नवक्षत्र (स० स्त्री०) नवीन विद्यार्थी ।
नवकिङ्ग (स० स्त्री०) नव किङ्गानि यव । नयहार ।
देहमें नौ किङ्ग भर्मात् हार हैं ।

नवज (स० त्रि०) नव-जन-ज । नवजात, जो हालमें
पैदा हुआ हो ।

नवज्वर—ज्वरमेद । इसका सामान्य लक्षण घर्म रोग, देह,
इन्द्रिय और मनका सन्ताप है तथा उस समय शरीरमें
वेदना भी मालूम पड़ती है । देह-सन्तापसे देहको
उष्णता, इन्द्रिय सन्तापसे इन्द्रियको विकृति और मनके
सन्तापसे मनोविकृति होती है । मनकी अस्थिरता और
स्थानि ही मनको विकृति है । जो ज्वर सात दिन तक
रहता है उसे तत्पञ्चर कहते हैं ।

चिकित्सा-विधान ।—ज्वर होने पर चिकित्सकको पहले
यह अवश्य ज्ञान लेना चाहिये, कि यह ज्वर वात, पित्त,
कफसे उत्पन्न हुआ है वा उनमेंसे किसी दोसे प्रत्येक
यह त्रिदोष ज्वर है । यदि चिकित्सक जिस दोषसे ज्वर
उत्पन्न हुआ है, इसका स्थिर कर न सके, तो सर्व
साधारण चिकित्सा भर्मात् परस्परकी अवरोधो चिकित्सा
करनी चाहिये । रोगीको ऐसे स्थानमें रहना चाहिये
जहाँ हवा न जानी हो ।

ज्वररोगीके लिये वायुगन्ध स्थान वायुवर्द्धिकारक
और भारीभोजन न है ।

ज्वररोगीके लिये पंखेकी वायु उपकारो है । उनमें-
से ताड़के पत्तोंके पंखेकी वायु वायुनाम और त्रिदोष
प्रशमित होता है । बसके पंखेसे जो हवा की जाती है
वह बहुत गरम होती है तथा रक्तपित्तके प्रकोपको

बढ़ानी है। कपड़ों की हवासे त्रिदोष नाश, शरीर रक्षण और मन ठाम होता है। नवम्बर की शुरु और अन्त वर्षा द्वारा टंके रहना चाहिये और ऋतुके अनुसार उसे गरम पानी पीनेको देना चाहिये।

तत्त्व ज्वरमें कपायका प्रयोग नहीं करना चाहिये, करनेसे सोए हुए कालसर्पको हाथसे स्पर्श करनेके समान हो जायेगा। पीछे भारीसे भारी चिकित्सा करने पर भी बहुरोग्य नहीं होता। सोत्तद्युग्ण जलमें पाचन सिद्ध करके चतुर्थांश वा षष्ठमांश रहते जो उत्तार लिया जाता है, उसे भी कपाय कहते हैं। अतः तत्त्व ज्वरमें उसका भी प्रयोग नहीं करना चाहिये। कपाय रसयुक्त द्रव्यका भी प्रयोग निषिद्ध मतलाया है।

नव ज्वरमें दिवानिद्रा, स्नान, तैलादि मर्दन, भैद्युन, क्रोध, प्रसव वायु और अमजनक कार्य नहीं करना चाहिये। द्विभोजन पर्याप्त प्रातः और रात्रिमें भोजन, शुरुपाक भोजन और श्लेष्मवर्धक द्रव्यादि-भक्षण भी निषिद्ध है। तत्त्वज्वरमें वमन, विरेचन, वस्ति और शिरोविरेचन ये चार प्रकारके शोधन नहीं कराने चाहिये, करानेसे सुषुप्तोप, वमि, मसृता, मुर्च्छा और परुषि आदि होती है। हारीतके मतमें—तत्त्वज्वरमें व्यायाम करनेसे ज्वरकी हृदि, भैद्युन करनेसे श्वेतता, मुर्च्छा और अत्युत्तक भी हो जाती है। शीतलपानादि करनेसे भी मृत्यु की संभावना है। शुरु द्रव्य खानेसे मुर्च्छा, वमि, मसृता और परुषि तथा दिवानिद्रासे विट्प्रभ, दोषका प्रकोप, अग्निमान्द्य, ज्वराधिष्ठ और धर्मविमूलन का अवरोध होता है। अवस्थाविशेषसे विश्व चिकित्सक वमन कराते हैं। वाग्भट कहते हैं कि यदि भोजन करनेके बाद ही ज्वर आ जाय अथवा समतप्य क्रियासे (रसादि धातुममूलकी हृदिजनक क्रियासे) किसी व्यक्ति को ज्वर आ जाय, तो वमनयोग्य (गर्मिचौ, लघु, हृद आदि भिन्न) व्यक्तिकी वमन कराना आवश्यक है।

तत्त्व ज्वरमें पाचनादि निषिद्ध है, किन्तु तीक्ष्णप्यादि निषिद्ध नहीं। पक्व पानीय तत्त्वज्वरमें देना उपकारो है। (सोपा, सेतुपापक्वा, चन्दन, वासा, खीर प्रत्येक द्रव्य दो दो तोला से कर कूटते हैं। बाद उसे ५४ गेर जलमें सिद्ध करके ५२सेर अवशिष्ट रहने पर उसे उत्तार

लेते हैं। ठण्डा हो जाने पर उसे पिताते हैं, इसीका नाम पक्व-पानीय है।) नवज्वरमें शीतल जलका प्रयोग विलक्षण निषिद्ध है। सुतरां यह पक्व-पानीय एकात्म प्रयोजनोप है। शरीरमें यदि अधिक वेदना, मालूम पड़े, तो गोक्षर, कण्टकारी और रत्नशाओ इन्हें पीस कर पिलाना चाहिये।

औषधादि.—तत्त्व ज्वरमें औषधका प्रयोग प्रायः नहीं करना चाहिये। लहान, पथ्य, पानीय आदि द्वारा ही ज्वरकी तरुणावस्था में (पर्याप्त प्रथम सात दिन) चिकित्सा करने चाहिये।

नवज्वरमें रसघटित औषधका प्रयोग कर सकते हैं। रसका प्रयोग करनेमें दोष, रोग, व्यक्ति, देश और कालका विचार कुछ भी नहीं किया जाता।

नवज्वरमें रसघटित तत्त्वज्वरादि, नवज्वरमर्षि, त्रिपुरमैरव, अर्युज्वरस, नवज्वराह्वय, वैद्यनाथ-वटो, रत्नगिरिरस, ज्वरसिंहरस, ज्वरधूमकेतु, ज्वरलो-पटिका, नवज्वरहरवटि और नवज्वररस प्रयोज्य है।

ज्वरके पाँचवें, छठे वा सातवें दिनमें तत्त्व ज्वरादि औषधका प्रयोग करना चाहिये। औषध-सेवन करनेके बाद विरेचन होनेसे ज्वर दूर हो गया, ऐसा समझना चाहिए। नवज्वरमर्षि हका अनुपान बदरखका रस है। त्रिपुरमैरवका अनुपान बदरखका रस अथवा सैन्धवियों से चीनीके साथ खीर, पोपल और मिर्च है। यह औषध खिलानेके बाद रोगीको तत्त्व देना आवश्यक है। अर्यु-ज्वररसका साधारण अनुपान मधु है। यदि रोगी औषध न हो अथवा उसे कफका अंश अधिक न रहे, तो चीनी और मारियतका पानी देना उचित है। उससे वातपैक्षिक दाह जाता रहता है। चीनीके जलके साथ नवज्वराह्वय भी रोगीको दे सकते हैं। वैद्यनाथपटिका अनुपान पानका रस वा गरम जल है। दोषका समाप्त जान कर उसे ४ घंटे तक गोलीका प्रयोग कर सकते हैं। यह औषध सुखविरेचक है। रत्नगिरिके रसका पोपल वा धनियाके आढ़के साथ सेवन करना होता है। ज्वरसिंहरस ज्वरोत्पत्तिके चौथे दिनमें वा उससे बाद देना कर्तव्य है। ज्वरधूमकेतुका अनुपान बदरखका रस है। तीन दिन तक सेवन करनेसे नवज्वर नष्ट हो

जाता है। ज्वरघोषटिका भगुपान गुल्लिका रस है। इसके सेवनसे ज्वर छठी समय जाता रहता है। नवज्वर-रसघटि और नवज्वररस चत्वाररसके साथ सेवनीय है। नवज्वररस—नवज्वरमें प्रयोज्य रसघटित वैद्यक औषध-विशेष। भावप्रकाशमें इसके प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार लिखी है,—

शोधित पारद १ तोला, शोधित गन्धक २ तोला, गरस (सर्पविष) १ तोला, स्वर्णक्षीरो ४ तोला, जयपाल ५ तोला इन्हें नारंगी नीबूके रससे घोल कर बिड़ङ्गके परिमाणकी बड़ी गोली बनाते हैं। प्रतिदिन एक एक गोली चदरखके साथ सेवन करनेसे नवज्वरके सिवा कौण ज्वर, आमघटित ज्वर, सम और विषम ज्वर तथा सभी प्रकारके ज्वर जाते रहते हैं। दावानलके लीसा यह ज्वरनाशक है।

नवज्वरवटि—नवज्वरमें प्रयोज्य रसघटित औषधविशेष। भावप्रकाशमें इसकी प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकार लिखी है,—

शोधित पारा, शोधित गन्धक, शोधित विष, सोंठ, पीपल, मिर्च, इड़, बड़ड़ा, भावना और शोधित दन्तौ-बीज बराबर बराबर भाग ली कर चूर्ण करते हैं। बाद उस चूर्णकी द्रोणपुण्डीके रसमें घोंट कर गुटप्राक करते हैं। पीछे एक चड़्दके बराबर गोली बनाते हैं। यह औषध नवज्वरमें फायदामन्द है।

नवज्वरैर्भसिंह—नवज्वरमें प्रयोज्य औषधविशेष। भैषज्य-रत्नावल्लोमें इसकी प्रस्तुत-विधि इस प्रकार है,—

शोधित पारा, शोधित गन्धक, शोधित लोह, शोधित ताम्र, शोधित सीसा, मरिच, पीपल और सोंठ बराबर बराबर भाग, विष अर्धभाग (किसीके मतसे समष्टिके अर्धभाग)की ली कर कलसे पीसते हैं। बाद २ रक्ती प्रमाणकी गोली बनाते हैं। इसके सेवन करनेसे कठिनसे कठिन नवज्वर आदि रोग दूर हो जाते हैं।

नवड़ा (हि० पु०) मरसा।

नवत (सं० पु०) नू-पतच. १ कुय, हाथीकी भूस। २ कौपियवृक्ष, रंगमो वपट्टा। ३ कम्बल।

नवतन्तु. (सं० पु०) नवः, तन्तुः कर्मधा०। १ नूतन, तन्तु, नया सूता। नवः तन्तु यत्न। २ नूतन तन्तुयुक्त पट, नये सूतका कपड़ा। ३ विशा-

मित्र पुत्रभेद, विश्वामित्रके एक सङ्केका नाम। नयता (हि० पु०) १ दासुर्ध्व जमीन, उत्तार। (छो०) २ नवीनता, नयापन।

नवति (सं० स्त्री०) नव दशतः परिमाण यस्य, (पङ्क्ति-विंशति-त्रिंशदिति। पर। प्रा० १५८) इति निपातमात् साधुः। १ संख्याविशेष, नवके संख्या। (त्रि०) २ पक्षी और दश, सोसे दश कम।

नवतिका (सं० स्त्री०) नव नूतन तैकते करोतीति, तिक-क-टाप्। १ तुलिका, रंग भरनेकी चितकारोकी कुँची। २ नवति संख्या, नवके संख्या।

नवतिशस् (सं० ध्व०) नवति नवतोति बोधार्था वगवः। बहुनवति।

नवती (सं० स्त्री०) नवति छदिकारादिति वा छोप.। नवति, नवके संख्या।

नवदण्ड (सं० स्त्री०) राजाश्रीका क्षत्रविशेष, राजाश्री-के तीन प्रकारके क्षत्रोंमेंसे एक प्रकारके क्षत्रका नाम।

नवदल (सं० स्त्री०) नव दलमिति कर्मधा०। १ पत्रके केशर समोपस्य दल, कमलका यह पत्ता जो उसके केशरके पास होता है। २ पद्मादिके जटिलाकार नवपत्र। पश्या—संवर्तिका, संवर्ति, संवर्ती। ३ सामान्य नूतन पत्र। ४ दलमात्र, पत्ता।

नवदशान् (सं० पु०) नवाधिका दश। १ जगत्विंश संख्या, उन्नीसकी संख्या। (त्रि०) २ दश और नौ, उन्नीस।

नवदोषिति (सं० पु०) नवदोषितयोऽप्य। मङ्गल यद्।

नवदुर्गा (सं० स्त्री०) नव संख्यान्विता दुर्गा। पुराणा-नुसार नौ दुर्गाएँ जिनकी नवरात्रमें नौ दिनों तक क्रमशः पूजा होती है। यथा—शैलपुत्री, वज्रधारिणी, चन्द्रघण्टा, कुम्भाघ्ना, स्कन्दमाता, कालायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धि। नवपत्रिका देखो।

नवदेवकुल—प्राचीनकालमें गङ्गाके किनारे इस नामका एक नगर था। युएनचुवङ्गने यह नगर देखा था। उस समय यह बल्लभ समृद्धिशाली स्थान था। वर्तमान नवन इसी नवदेवकुलका नामान्तर है।

नवदोला (सं० स्त्री०) नवा नूतना दोला। नवीनदोला, नया हिंडोला।

नवहार (सं० स्त्री०) नव हारानीय चित्तहत्यादेर्विहंसन-

नाथमत्ताम् यम् । देहव्यं ८ द्विः, यदीरेके नो द्वार ।
दो चरिं, दो कान, दो नाक, एक मुख, एक गुदा चोर
एक निद्रा या भग यही नवद्वार हैं । इन्हींका नाम नव-
द्वार है । प्राचीनोंका विश्वास था चोर चव भी कुछ
मोनोंका विश्वास है, कि जब मनुष्य मरने लगता है,
तब उसका प्राण इन्हीं नो द्वारोंमेंसे किसी एक द्वारसे
निकलता है । अर्थात् टि-क्रियाके समय इन नो द्वारोंमें नो
चण्ड सुवर्ण देने चाहिए ।

“नवद्वारे देही ह'गे देखावते यदि ।” (तेतारतर०)

नवदीप—बङ्गालकी एक विख्यात नगरी चोर सेनराज-
नक्षत्रमनेनको जीव राजधानी । यह साधारणतः भदिया
नामसे प्रसिद्ध है । यह चला २३° २४' चोर दिया ८८°
२३' पू० भागीरथीसे किनारे अवस्थित है । जनसंख्या
लग्ग हजारसे ज्यादा है ।

नामकरण—कोई इसे भदिया वा नवदीप, कोई नून-
दीप वा नो दीपसे नवदीप नामको उत्पत्तिकी कल्पना
करते हैं । जो नोदीपसे नवदीपका नाम पड़ना खोकारते
हैं, उनका कहना है कि गङ्गाके मध्यस्थ चरके ऊपर
भदिया अवस्थित है । इस चरके पश्चिम चोर गङ्गा प्रवस-
वर्गसे बहती थी, सुहरा पूर्वार्ध क्रमशः खोतीहीन हो
कर चर पड़ गया है । घेरे घेरे उस चरमें खेतीशरी
करनेके लिये अनेक लोग बस गये । उस समय एक
सन्ध्यासो चरके किसी निर्जन स्थानमें नोदीप जाल कर
रातको योगसाधन करते थे । नाविक लोग उन दीपों-
को देख कर चलती भाषामें इस स्थानकी नदिया कहने
लगे । कोई कोई नोदीपसे नवदीप नामका पड़ना मानते
हैं । उन नो दीपों वा धामोंके नाम ये हैं,—१ चन्त-
दीप, २ सोमनाथदीप, ३ गोदुमदीप, ४ मण्डीदीप, ५ कोल
दीप, ६ मण्डीदीप, ७ मोददुमदीप, ८ जङ्गदीप चोर
९ बद्धदीप ।

नरहरिने भदिरसाकरमें नवदीपके विषयमें जिस
व्याख्याना का वर्णन किया है, दत्तिकासमें उसका कहीं
भी जिक्र नहीं है । नरहरिको वर्णनमें मालूम होता है
कि नवदीप नामका कोई स्वतन्त्र नगर या धाम नहीं
था, उपरीत स्थान से कर नवदीप नाम पड़ा है । लेकिन
वेतम्यदेयके बहुत पक्षसे नवदीप एक स्वतन्त्र नगरमें

गिना जा रहा है । इसी नगरमें नक्षत्रमनेनकी राजधानी
थी । मालूम पड़ता है कि राजधानीके नाम पर ही
राज्यका नाम पड़ा है । हिन्दूराजत्वकालमें नवदीप नगर
चोर समके चतुष्पार्श्ववर्ती उपकण्टक्ष धाम भी नवदीप
कहलाते थे ।

सेनराजाओंके पहले नवदीप नगरीका अस्तित्व था
वा नहीं, उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता । इस
पक्षकी भूतत्त्वकी पर्यालोचना करनेमें यह सङ्गतिमें
अनुमान किया जाता है कि पहले यह पञ्चम समुद्र-
मग्न था । ७वीं चोर ऽवीं शताब्दीमें समुद्रके बट जाने-
में यह चरमें परिणत हो गया । इस समय समुद्रसुहा-
स्थित बहुतसो नदियाँ इस पञ्चम हो कर बहती थीं ।
वर्तमान शहरके दक्षिण-पश्चिमको चोर समुद्रगङ्गा नामक
धामके निकट एक चर है जिसे त्रिसुहानी कहते हैं ।
यहां पहले तीन नदियोंका सुहाना था ।

वर्तमान नगरसे प्रायः दो कोस पूर्व 'सुवर्णविहार'
नामक एक छोटा धाम है । बहुतोंका विश्वास है कि
धानवर्धनीय राजाओंके समय यहां बीहोंका 'विहार' था ।
आज भी उस स्थान पर प्राचीन महालिकाओंका भग्ना-
वशेष देखनेमें आता है । वे सब भग्न प्रभार, इटक
चोर स्तम्भादि बीहोंके उपकरणसे देखनेमें आते हैं ।
चित्तोग्यशास्त्रो-चरितमें लिखा है कि राजा कृष्णचन्द्र
पूर्वपुरुषोंने इस स्थानमें अनेक भाल भाला से कर अपने
अपने मजानोंमें लगाया है । पहले भागीरथीकी एक
शाखा मायापुरके उत्तर हो कर सुवर्णविहार तक बहती
थी । उसी शाखामें खुड़िया नदी गिरती थी चोर यह
मन्दाकिनी नामसे श्वालपाड़ाके उत्तर भागीरथीके साथ
मिल गई थी । सभी भागीरथीकी गति परिवर्तित हो
जानेमें प्राचीन गर्भमात देवनेमें आता है ।

भागीरथीके तटस्थ पुष्पस्थान होने तथा तीन नदियोंके
सुहाने पर आश्रित्यदि की सुमिधा रहनेके कारण राजा
नक्षत्रमनेनमें यहां राजधानी बसाई थी । यहां नवदीप-
के उत्तर-पूर्व पाप कीसको दूरी पर बहामदीकी नामक
एक दीपो है चोर दीपोके उत्तर बहामनेनकी दीपी'
नामक एक भूमि है । प्रवाद है, कि यहां बहामनेनका
मकान था चोर उन्हीं ही यहां अपने नाम पर 'दीपी'

खोदवाई थी। किमीका मत है कि लक्ष्मणसेनने पिताके नाम पर उक्त दीधी उद्गर्ग को और इसके तीरथर्तियों परवर्तीकालमें बल्लालकी टोपी पहनाती थी। वास्तविकमें यह लक्ष्मणसेनका प्रासाद था। सेनराजके समय जहां नगर अवस्थित था, वह स्थान अभी भागीरथीके किनारे विलुप्त हो गया है।

उस समय इस स्थान पर भागीरथी द्वारा युक्त प्रदेशके साथ समग्रामका और जलही नदी द्वारा पूर्व वङ्गके साथ वाणिज्य सम्बन्ध होता था। इस वाणिज्यके कारण और पुण्ययोगादिमें स्नानादिके उपलक्षमें यहां बहुतसे मनुष्य एकत्र होते थे और भागीरथी-गर्भमें सेकड़ों नावें शोभा पाती थीं। सुसलमानोंके शासनका काल पर सेनराजके हाथसे नवद्वीप जाता रहा और उसकी पूर्व-समृद्धि भी विलुप्त हो गई थी। उस समय हजारों गण्यमान्य मनुष्य नवद्वीपको छोड़ अन्यत्र जा बसे थे। उसी समयसे पूर्ववङ्गकी समृद्धिका क्षयपात हुआ। महम्मद-बख्ति-यारके बाद जिन सब सुसलमानोंने लक्ष्मणावतोंका शासनधिकार पाया था, वे अपनी अपनी राजधानीमें ही अधिकार्य समय बतियाहित करते थे, नवद्वीपके प्रति उतना ध्यान नहीं करते थे।

सेनराजाधीनते पञ्चपतनके बाद नवद्वीपमें विलक्षण सुसलमान-प्रत्याचार जारी था। पर जहां, उस समय यहां वाणिज्यका स्थान था, इस कारण व्यवसायिक अपमानित होते हुए भी दूसरी जगह जा नहीं सकते थे।

तीन चार सौ वर्ष पहले नवद्वीपकी जैसी समृद्धि थी वैसी आज कल नहीं है। प्राचीन नवद्वीपके अधिकांश गङ्गागर्भमें विलीन हो गया है। भागीरथीकी गतिका परिवर्तन, वाणिज्यका ज़रा और प्राचीन भवित्तिकादिका गङ्गा-गर्भ-प्राप्ति हो जानेसे नवद्वीपकी लोकसंख्या घोर घटती जा रही है।

चेतन्यदेवके बाधिर्भावके पहले यहां सैकड़ों टोल थे और दूर दूर देशोंसे हजारों मनुष्य विद्याध्ययन करने आते थे। वासुदेव साधुभोमके समयमें नवद्वीप शास्त्र-चर्चाका केन्द्रस्थान समझा जाता था, नवद्वीपके इसी उज्ज्वल समयमें सुसलमानोंने इस पर दारुण प्रत्याचार किया था।

चेतन्यदेवके पञ्चद्वयके पहले सुसलमानों प्रत्याचार होने पर भी उनके बाधिर्भाव-कालमें नवद्वीपने शान्त-भाव धारण किया था।

उस समय रघुनाथ-शिरोमणिने मिथिलाके पञ्चधर मिश्रको तर्कशुद्धमें परास्त कर नदियामें न्याय-प्राधान्य स्थापित किया। इस समय नवद्वीपमें रघुनन्दनकी स्मार्त्त-व्यवस्थाके परिवर्त्तनमें वङ्गमें नवयुगकी छटि हुई। इस समय महप्रभु चेतन्यदेवके अपारिष्व प्रेमके प्रवाहसे नवद्वीप वैष्णव जगत्के शीर्षस्थानकी पहुँच गया था और वैष्णवोंके निकट नवद्वीप हृन्दावनकी तरह महान्तोय समझा जाने लगा था। उस समय यहां वैष्णवकी जैसी प्रधानता थी, वह आज भी विलुप्त नहीं हुई है। रघुनाथशिरोमणि यहां न्यायका टोल स्थापन कर जो प्रतिष्ठा लाभ कर गये हैं, आज भी उनके भावोपादसे भारतके मध्य नवद्वीप की ग्यायका प्रधान स्थान समझा जाता है। आज भी काशिकाछोड़ाविकादि नाना स्थानोंसे छात्रगण यहां ग्याय पढ़ने आते हैं। अभी यहां १४ टोल देखनेमें आते हैं जिनमेंसे न्यायके ४, स्मृतिके ५, प्रागवतके २ और साहित्यके १ हैं। काशिकी संख्या भी दो सौसे कम नहीं होगी। बङ्गालीके प्रतिष्ठित इन मठ छात्रोंमें मैथिल, तैलङ्गी, मारवाड़ो, उड़िया और गोड्वीय आदि हैं। गवर्नमेण्टको धोरसे विदेशीय छात्रोंकी २०० हज़ारों मासिक हस्तिसिन्तो है।

राक्षसका संसित इतिहास—यह वंश अपनेकी भङ्गाशायणके पुत्र निपुकी सन्तान बतलाता है। उनके पूर्व-पुरुषगण पूर्ववङ्गमें रहते थे जहां उनकी षट्पट भूस्वप्ति थी। भङ्गाशायणसे नोचे तेरहवीं पीढ़ीमें विष्णुनाथने जन्मग्रहण किया। १४०० ई०में इन्होंने सुसलमान राजाओंके पनुग्रहसे कौकड़ों आदि परगने पाये थे। विष्णुनाथके प्रपौत्रके प्रपौत्र काशोनाथके समयमें १५८० ई०की विपुलाधिपतिके हाथों उनकी अमींदारो हो कर जा रहे थे। उनमेंसे एक मतवाला हाथी था, जिसने शाममें प्रवेश कर प्रजाका विशेष पणित किया। इस कारण काशोनाथके आदेशसे वह हाथी मार डाला गया। यह सम्वाद था कर नवाब बहुत विगड़े और काशोनाथकी कौद कारनेके लिये आदमी भेजा। यह

घर पाते ही काशीनाथ सपरिवार दर्शन देगकी भाग गये। कुछ दिन बाद ये जन्तो नदी के निकटवर्ती वागवान परगने के पन्ना में त पान्दुनिया ग्राम में नवाब के लीगों में चन्दे हुए। रास्ते में ये राजपुत्रों के हाथ से मार डाले गये। काशीनाथ की गर्भवती स्त्री ने पान्दुनियावासी हरिहर सम्राट् का प्रायश्चित्त लिया। कुछ समय बाद रानी ने एक पुत्र प्रसव किया जिसका नाम रखा गया रामचन्द्र। रामचन्द्र को हरिहर पक्षी तरह पालनपोषण करने लगी और उनके कोई पुत्र नहीं रहने के कारण रामचन्द्र को ही अपना उत्तराधिकारी बनाया। इसी कारण रामचन्द्र रामसम्राट् नाम से प्रसिद्ध हुए।

रामचन्द्र के चार पुत्र थे, बड़े का नाम भवानन्द था। भवानन्द बाल्यकाल से ही असाधारण धी-शक्ति सम्पन्न थे। बड़े होने पर उन्होंने नवाब को खुश कर १६०४ ई० में कानून-गोका पद और मलूमदार की उपाधि प्राप्त की। इस समय प्रतापदित्य ने अपनी स्वाधीनता घोषण कर दी। उन्हें दमन करने के लिये दिल्लीखाने मानसिंह को भेजा। भवानन्द उस समय कानूनगो थे। मानसिंह का सम्मान करने के लिये ये बर्हमान गये और उनके साथ साक्षात् किया। मानसिंह ने भवानन्द की अनेक विषयों में अभिप्राय और विचक्षणता देख उन्हें अपने साथ रख लिया। प्रतापदित्य की दमन करने में उन्होंने मानसिंह की काफी सहायता पहुँचाई थी। इस कारण मानसिंह ने यशोसे लौटते समय भवानन्द को १४ परगनों की जमींदारी परंपर की और दिल्लीवालों से समय उन्हें अपने साथ ले गये। दिल्लीखाने उनके कुल और गुण का परिचय पा कर मानसिंह मठ सं १४ परगनों का करमान देने का आदेश दिया।

सच प्रकृति, तो भवानन्द को अत्यंत मान नवही-राजवंश के स्थापित था। उन्हें के समय में इस वंश की स्वाति, प्रतिपत्ति और मर्यादा स्तुति प्राप्त हुआ। उनके तीन पुत्र थे जिनमें मँहले गोपाल कायकुमार और बुद्धिमान निकले। इस कारण भवानन्द ने उन्हें ही अपना उत्तराधिकारी बनाया। बादशाह के दरबार में इनकी पिता से बड़ कर प्रतिद्वंद्वी थी। इनके मरने पर छोटे बड़े का राजमंशायन पर बैठे। उन्होंने बुद्धि और

कौशलता से सम्राट्, शाहजहान से कुछ परगने पाये। उन्होंने अपने वाम-याम में मालाओं की बसाया और उसके चारों ओर चारों पुत्रों को 'महाराज' नाम से प्रसिद्धि। जनता का जनक दूर करने के लिये उन्होंने हजारों रुपये खर्च करके गान्धपुर और जयपुर के मध्य दिग्गम नाम में एक बड़ी दोघो पुत्रों के और अपने पत्नीपत्नी को विचार 'माला' दिव्य। इस वंश में उन्होंने ही पहले पहल बादशाह से सम्मानपत्र 'हस्त' उपहार में पाया था। इनकी मृत्यु के बाद बड़े लड़के रत्न सिंह नाम पर अधिकार हुए। उन्होंने जयपुर से गान्धपुर तक एक पक्के सड़क बनवा कर जनता का कष्ट दूर किया था।

रत्न के दो रानी थी—बड़ी रानी के गर्भ में रामचन्द्र और रामजीवन तथा छोटी के गर्भ में रामकृष्ण उत्पन्न हुए। रामचन्द्र अत्यन्त साहस और मृदुतायुक्त थे। रत्न की यह इच्छा थी कि उनकी मृत्यु के बाद रामचन्द्र उत्तराधिकारी हो। ये रामजीवन को जमींदारी देने के लिये बादशाह से अनुमति ले चुके थे। मृत्यु के बाद सचर रामचन्द्र ने दुर्ग की कोजदार और ठाकुर नवाब की सहायता से पैतृक जमींदारी हस्तगत की। कुछ दिनों के बाद रामजीवन ने दसवस वर्ष कर रामचन्द्र से जमींदारी छीन ली। रामचन्द्र भी लड़ने लगे। लेकिन वे भी अधिक दिन तक राज्य भोग कर न सके। उनके बेटे मातंग भाई रामकृष्ण ने नवाब के साथ कोशिश करके उन्हें ठाकुरों के दार लिया और जमींदारी पर अधिकार जमाया। ये नवाब की यथा-नियम राजस्व नहीं देते थे, इस कारण नवाब ने उन्हें ठाकुरों के दार रखा और वहीं वे पल्लव को प्राप्त हुए।

रामकृष्ण के बाद रामजीवन कारागृह हो कर जमींदारी का उपभोग करने लगे। लेकिन कुछ दिनों के बाद ही ये इस धराधाम की छोड़ कर अग्रेषण की निधारे।

रामजीवन के तीन पत्नी थीं और उन तीनों में से चार बड़े थे। उनमें से दूसरी पत्नी के गर्भ में राजाराम

सेवापेक्षा कार्य दर्श और प्रजारणक थे, इस कारण राम-जीवन मरते समय उन्हें ही अपना उत्तराधिकारी बना गये।

पत्यन्त साहसी और बलवान् होनेके कारण लोग उन्हें 'रघुवीर' कहा करते थे। एक समय नवाब मुर्शिदा-कुली खांके साथ राजगारीके राजाका युद्ध हुआ था। युद्ध में रघुराम नवाबके सेनापतिके साथ गये थे। उनके भसाधारण साहस और वीरत्वकी देख कर नवाबने उनकी भूरि-प्रशंसा की और गुणके पुरस्कारस्वरूप उन्हें कारा-मुक्त करनेका हुक्म दिया। ये बड़े दानवीर थे। पूर्व-पुत्रपक्षा ऋण-परिमोघ नहीं करनेके कारण वे भक्तसर मुर्शिदाबादमें कैद किए जाते थे। किन्तु इस बन्दी पथस्थान भी दानयोग्यताका ज्ञास नहीं हुआ था। १७२२ ई०में उनकी मृत्यु हुई।

रघुराम अपने वैमात्य भाई रामगोपालकी बहुत चाहते थे, इस कारण पुत्र क्षणचन्द्रकी उत्तराधिकारी न बना कर रामगोपालकी ही अपना उत्तराधिकारी बना गये। किन्तु इस समय क्षणचन्द्र नामक एक व्यक्ति के कोपसे ताम्बकूट-प्रिय रामगोपाल अधिकारी न हो कर नवाबके आदेशसे क्षणचन्द्रने ही सारी सम्पत्ति लाभ की। राजराजेश्वर क्षणचन्द्र महादुरके समय नदिया-राज्य स्वतन्त्रिकी धरम सीमा तक पहुँच गया। अपने प्रतापसे हिन्दू-समाजके ऊपर उन्होंने जैसा आधिपत्य जमा लिया था, वे सा और किसीके भागमें पड़ा नहीं। वे अपने प्रचुरहीन व्यक्तियों और पण्डितोंकी बहुतसी जमीन दान कर गए हैं, जिनके उत्तराधिकारी आज भी बड़ निष्कार जमीन भोग कर रहे हैं। नदिया जिसेमें ऐसा एक भी गण्डयाम नहीं है, जहाँ नदिया-राजप्रदत्त निष्कार जमीन न हो। बहुतांशका कहना है कि यह अपरिमित दानयोग्यता ही नदियाराजके अधःपतनका मूल है। क्षणचन्द्र देखी।

राजराजेश्वर क्षणचन्द्र महादुर १७२२ ई०में ७३ वर्षकी अवस्थामें इस लोकसे चल गये। पीछे शिवचन्द्र राज्यके अधिकारी हुए। इनके समयमें नवहोष की भवा-मन्दके समयसे ले कर राजा क्षणचन्द्रके समय तक पुण्यानुक्रमसे चलता था रहा था, अब बीना पारध

हुआ। यहाँ तक कि राजसूय वाजी पट्ट जतनेके कारण जमींदारी नीलाम पर चढ़ गई। इसी विन्ताके मारे १० वर्षकी उमरमें (१७८८ ई०की) इनका देहान्त हुआ। उनके एकमात्र पुत्र ईश्वरचन्द्र पैठक-सम्पत्तिके अधिकारी हुए। वे सुरापानमें मत्त रहा करते थे, जमींदारीकी ओर जरा भी ध्यान नहीं देते थे। १८२२ ई०में गिरिशचन्द्र नामक पुत्र बड़ो भाव परलोककी सिधारे।

गिरिशचन्द्रने जब देखा, कि उनके प्रधान कर्मचारियों और फाँखीय खजनोंके दीपमें ही महाभूष सम्पत्ति गट्ट होती जा रही है, तब उनके मनमें वैराग्य उत्पन्न हो पाया। वे अपना समय देवार्चनामें बिताने लगे। पत्यन्त धार्मिक होने पर वे बड़े ही निर्बोध थे, उनकी बुद्धिके दीपसे पैठक जमींदारी की ८४ परगनोंको धो, पाव कोवल ५१० परगनेकी हो गईं। 'अयं कट्ट होने पर भी वे धर्म-कर्मसे हाथ नहीं खींचते थे। नवहोषमें वे दो बड़े बड़े मन्दिर बनवा गए हैं। ५० वर्षकी उमरमें उनका शरीरवसान हुआ।

पीछे उनके दत्तकपुत्र श्रीगचन्द्र राजा हुए। इन्होंने जमींदारीका पुनर्धार करनेकी विशेष चेष्टा की और आखिरकी गजबता मिल भो गई। प्रायः ब्राह्मणधर्मके विशेष पक्षपाती थे। जनसाधारणके लिए ये बनेक हितकर कार्य कर गए हैं। श्रीगचन्द्रकी मृत्युके बाद बड़े खट्टके सतीशचन्द्र राजा हुए। ये भी अपने पिता-मह गिरिशचन्द्रके समान बड़े खर्चाले थे। पतिगय सुरापानजनित रोगसे आत्मात्त हो कर १८७० ई०की इनका देहान्त हुआ। इनके कोई सम्मान न थी। मृत्युके बाद कनिष्ठा पत्नी मशारानी भुवनेश्वरी सारी सम्पत्तिकी उत्तराधिकारिणी हुईं। इन्होंने सतीशचन्द्रको गोद लिया। राजा सतीशचन्द्र बुद्धिमान् और सच्चि-चेत्क थे। इनके यन्त्रसे क्षणनगर राज्यकी विशेष शो-हृष्टि हुई। नदिया देखी।

नवधा (सं० च०) नव प्रकारे धातु। नव प्रकार, नौ गुण, नौ धार।

नवधा-पट्ट (सं० पु०) शरीरके नौ चट्ट, यथा—दो पाँव, दो कान, दो हाथ, दो पैर और एक नाक।

नवधातु (सं० पु०) नवगुणिता धातु। नौ प्रकारकी

चातु । मन्त्र, शीघ्र, मोह, मोसक, नाम्ब, रत्न, तीक्ष्ण (दृष्टांत), कांक्ष्य और कान्तिमोह इन नवोंको नव-चातु कहते हैं ।

नवव्यापक्ति (मं० स्त्री०) नौ प्रकारकी भक्ति, यथा—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, चर्चन, वन्दन, सख्य, दास्य और प्रायश्चित्त । भक्ति देखो ।

नवन् (मं० द्विव०) नृ-कविन् । १ मं० व्यामद, नौ । २ मयमंस्यायुक्त, जिसमें नौ संख्या हो ।

नवनवक (मं० स्त्री०) नवगुणित नवकम् । दससं-हितोक्त सप्तत्य एकाशीति पदार्थ, दससं-हितके अनुसार लानने योग्य इषासो पदार्थ ।

गृहस्थोंके उत्पत्तिकारक ८१ पदार्थ बतलाये गए हैं, यथा—नौ चमृत, चम्यविध नौ प्रकारके पल्पदान, नौ कर्म, नौ विकर्म, नौ प्रकाश कार्य, नौ सफल कार्य, नौ निष्फल कार्य, नौ अदेय वस्तु और नौ गुप्त कार्य । विभिन्न व्यक्ति के घर पाने पर मन, पशु, सुख और वाका ये चार पदार्थ उसे सुन्दर रूपसे दे, चर्चात प्रसन्न मनसे, प्रसन्न दृष्टिसे, मानन्द सुखसे और सुमित वाक्यों द्वारा उसका स्वागतकरे । तदनन्तर प्रत्युत्थान हो कर, 'आइये, बैठिये,' ऐसा करे । पीछे स्वागत प्रश्न, मिठाखाप और भोजनादि द्वारा सेवा करे । बाद जाने समय उसे थोड़ा दूर तक पहुँचा पावे । ये नौ कार्य गृहस्थोंके लिए सुधा-स्वस्व हैं । अतः इन्हें यत्नपूर्वक करना जरूरक गृहस्थका अवश्य कर्त्तव्य है ।

अन्यविध नौ प्रकारके भगवान्—बैठनेका स्थान, पैर धोनेका जल, बैठनेके लिये कुशासन, पादप्रक्षालन, शरीरमें लगानेके लिए तैलदान, धर्म व्यासदान, सोनेके लिए शय्याका प्रबन्ध कर देना, यथाशक्ति खाद्यवस्तु प्रदान, पतिविकी बिना छिल्लये खाप खा न लेना, पतिविकी पाने पर उसे आश्रमनके लिए मही और जल देना ये नौ कार्य भी गृहस्थोंके लिए अवश्य कर्त्तव्य हैं । ये कार्य भी सुधास्वस्व माने गए हैं ।

८ वने—प्रतिदिन यथासमय मन्त्रानुष्ठान, स्नान, जप, होम, धेनुपाठ, देवपूजा, यज्ञिकेष्ट, पतिविवेका, पित्र-लोक, देवगण, मनुष्यगण, हरिद्र व्यक्ति, तपस्विमण्य और ब्रह्मन्त्र गुह्यनोंको यथायोग्य विभाग कर देना ये नौ

गृहस्थोंके नियोज्य कर्म हैं । इनका नाम नौवने है । जो ये नौ कर्मागुष्ठान करते हैं, उन्हें इस नौवने कीर्ति और धर्म प्राप्त होता है ।

नौ रिद्धि—मित्रा-साख्यप्रयोग, परस्त्रीगमन, अभरण वस्तुभक्षण (गोमांस खाति), चण्ड्यागमन, अपेय पान, चौर्य, जीवहत्या, चकार्यानुष्ठान और वस्तुमनोके माय चकत्तव्य कार्य इन नौ कर्मोंका नाम विकर्म है जो गृहस्थोंके लिए निषिद्ध बतलाया गया है ।

नौ ग्रन्थारव—मनुष्यको परमायु, धन, गृहविद्वत्, मन्त्रज्ञा, मैथुन, शीघ्र, तपसा और मन्थानमात्रि ये नौ गृहस्थोंके गुप्त कार्य हैं अर्थात् ये नौ कार्य छिपके करने चाहिए ।

नौ प्रकार कर्म—प्राशस्त्र, कृत्तदान, पशुपयन, निज वस्तुविक्रय, कन्यादान, हृषीकर्म, अनेक लोगोंका अज्ञात पापप्रकाश और जनताके सामने निन्दनीय न होना, ये नौ गृहस्थोंके प्रकाशकर्म हैं ।

नौ सफलकर्म—माता, पिता, चण्ड्यान्त्र गुह्यजन, वस्तु-गण, विनीत व्यक्ति, उपकारो व्यक्ति, हरिद्र मनुष्य, अपनाय लोक और विभिन्न व्यक्ति जो जो दान दिया जाता है वह सफल कर्म समझा जाता है ।

नौ रिक्तकर्म—धूत, सुतिषादक, सूत्र, चर्ममिश्र, दिकित्सक, कितव, वस्त्रक, चाटुकार, पारव और चौर-गण इन्हें दान देनेसे कोई फल नहीं होता है, इसीसे इसे रिक्तकर्म कहते हैं ।

नौ अदेयवस्तु—याचक, लभ, शङ्कित, चम्बको, स्त्री, स्त्रीधन, निषेध, उत्तराधिकारवृत्तसे धर्म प्राप्त अन्व-सर्वस्व और साधारण सम्पत्ति इन्हें पादुतामने नौ दान नहीं कर सकती । जो कोई माधव्य करता है, उसे प्रायश्चित्त लेना पड़ता है ।

इन नौ नवों इत्यादि कर्मोंको नवनवक कहते हैं । नवनवकवेत्ता मनुष्यके साथ लगता इन सोअर्थ और पर-लोकमें हमेशा साथ रहता है । जो इस नियमका पालन करते हैं, उन्हें सुख सम्पत्ति प्राप्त होती है और मरने पर वे स्वर्गलोकको जाते हैं । (दसवर्णि ३ भ०)

नवनवति (मं० स्त्री०) नवाविंश नवतिः । १ एकोनवत्त मं० व्या, निगानवेका संख्या ८८ । २ तपस, तपस तपस, तपस तपस निगानवे संख्या हो ।

नवनाडीचक्र (स० स्त्री०) नवनवतयुक्त नाडीचक्रम् ।
चक्रमेद, राजाघोका नवनवतयुक्त और वक्ररेखावक
चक्र ।

नवनिधि—एक हिन्दी-कवि । इनकी गणना उत्तम
कवियोंमें की जाती थी । इनको कविता सरस तथा
मधुर होती थी । उदाहरणार्थ एक भीषे हँसि हैं—

‘‘शरीर मत योशोकी वै न बनाय ।

सुनत कामकी पीर उठत है निशिदिन कछु न सुनाय ॥

दिन नहीं वै न रात नहीं निद्रा तबफत नित्य अङ्गनाय ।

मेरी बहो तु मान सखीरी ब्रजनिधि बैग मुलाय ॥’’

नवनिधि (स० स्त्री०) निधि देखी ।

नवनिधि—हिन्दीके एक कवि । इनकी कविता बाल्यत्न
मधुर होती थी ।

नवनी (स० स्त्री०) नव नीयते इति भौण्ड, ततो गौरादि-
त्वात् ङीप् । नवनीत, मखन ।

नवनीत (स० स्त्री०) नव नीयतेनेन, नव-नी-त ।

१ गन्धविशेष, मखन । पर्याय—दक्षिण, मार, दैव्य-
वीनक । सामान्य गुण—मीतल, वषणप्रसाधक और
बलकारक, संमधुर, हृथ, संधाक, कफ और रुचिकारक;
वात, सर्वाङ्गशूल, कास और श्मशानागक, सुखकर, कान्ति-
पुष्टिप्रद, चक्षुका हितकर और समस्त दीपनागक है ।

नवीकृत गाय और भैंसका मखन बालक तथा वह
दोनोंके लिये प्रयुक्त है । यह बलकारक और वातवर्धक
माना गया है । भैंसका मखन कपाय, मधुर, मीतल,
बलकारक, वषण, पाहो, पित्तनागक और सुन्द है ।

बकरीके मखनका गुण—स्रवकाय, नेत्ररोग और
कफनागक; दीपन तथा बलकारक है । भैंसके मखन-
का गुण—मीतल, स्रव, योनिशूल, कफ, वात और शुद्ध-
शूलमें हितकर है । जङ्गली भैंसके मखनका गुण—
क्षिप्त गन्धयुक्त, मीतल, मेधागनागक, शुरु, पुष्टि और स्थो-
कारक तथा मन्दग्निदीपन है । इधनीके मखनका
गुण—कपाय, मीतल, स्रव, तिक्त, विष्टि, सन्तु, पित्त,
कफ और क्षमिनागक है । घोड़ेके नवनीतका गुण—

कपाय, कफ और वातनागक, चक्षुका हितकर, कटु,
रूण, ईष्य वातनागक है । गदहीके नवनीतका गुण—
कपाय, कफ और वातनागक, बलकर, दीपक, पाकमें

क्षु और मूत्रदीपनागक है । उटनीके नवनीतका
गुण—पाकमें मीतल, वषण, क्षमि, कफ और मखदीप-
नागक है । गरीके नवनीतका गुण—रुचिकर, पाकमें
स्रव, चक्षुका हितकर, दीपक और विपनागक है । दूध
मय कर जो नवनीत तैयार होता है, वह चक्षुके लिए
विशेष उपकारी और रक्तपित्तनागक, क्षिप्त, मधुर, पाह,
मीतल, वषण और हृथ है ।

प्रस्तुत प्रणाली ।—साधारणतः प्रायः इसी प्रकारसे
नवनीत तैयार करते देखा जाता है । पहले पहले
दूधको उबाल कर उसे एक भस्मयुक्त बर-
तनमें छोड़ते हैं । एक दो दिनके बाद उस दहीको
मयनेसे सार भाग नवनीत ऊपर उठ जाता है और जो
भसारभाग रह जाता है, वह मट्टा कहलाता है । उस
उद्धृत नवनीतको विषय जनमें कुछ काल तक रखनेसे
वह खूब सख हो जाता है । बिना उबाले हुए दूधको
मयनेसे भी नवनीत तैयार होता है । इस प्रकार दूधका जो
भसार भाग रह जाता है, वह किसी काममें नहीं जाता ।
कोई कोई ग्वाला कच्चे दूधमें थोड़ा मखन मिलाकर उस
दूधको उबाल लेता है और दही जमाता है । वह दही
खानेमें खादिष्ट नहीं होता । कोई कोई मखन निकाले
हुए दूधको थोड़े सोलमें डूब लेते हैं । एक और प्रकारसे
नवनीत तैयार करते हैं । पहले दूधको उबाल कर उसमें
झाली जमने देते हैं । बाद इसी तरह तीन चार दिनकी
झालीको एक साथ पीस कर सामान्य जलमें मिला देते
हैं । पीछे उसे मयनेसे सार भाग नवनीत ऊपर उठ
जाता है । तदनन्तर उसे एक दो दिन तक जलमें छोड़
कर कठिन बना लेते हैं । इस प्रकार झालीके मखनमें
जो जो बलता है उसकी गन्ध और दूसरे प्रकारसे प्रयुक्त
घोड़ों अथवा कर्षो अच्छी होती है ।

नवनीतका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा
है—मूत्रण, सरज, दैव्यवीन और नवनीतक पर्यायक
शब्द हैं ।

गन्ध नवनीत—हितजगक, पुष्टिकारक, वषणप्रसाधक,
बलकारक, भस्मिवर्धक, धारक, वायु, रक्तपित्त, स्रव,
भय, धर्हित वायु और कामनागक है । नवनीत
बालक और वह दोनोंके लिए उपकारी है, छोटे बच्चोंके
लिए यह भस्मके समान फलप्रद है ।

मध्य नवनीत—वायुयर्दक, कफकारक, गुरु, मिटो-
यर्दक, शुक्रजनक और दाह, पित्त तथा यमनायक है।

दुग्धोद्भूत नवनीत—चक्षुका हितकारक, रक्तपित्त-
नाशक, शुक्रवर्द्धक, वनकारक, पतिग्रह विघ्न, मधुररस,
धारक और शीतवीर्य है।

मध्य उद्भूत नवनीत—मधुररस, धारक, शीतवीर्य, मधु
और मिधाजनक होता है। मट्टिका कुछ चर्म रक्त जानने
कारण उसका स्वाद कमेला लिए कुछ कड़ा होता है।

बहुत दिनका नवनीत—गुरु, चारमगुरु और कट,
होता है। चतुरस रश्मिसे यह वमि, कुष्ठरोग, कफ और
मिटकी हृदि करता है। (आश्विन द्वितीय भाग)

सुन्दरतम नवनीतका गुण इस प्रकार लिखा है—मधो-
जात नवनीत मधु, कोमल, मधुर, कषाय, कुछ चर्म,
शीतल, पवित्र, पवित्रहृत्कार, सुगन्धिय, मलमूत्रसंघा-
हक, वायुपित्त-दमनकारो, तेजस्कर, पवित्राही और चर्च-
काय, शास, मृण तथा चर्मरोगका शान्तिकर, कफ और
मिदयर्दक, वन और पुष्टिकर तथा शीघ्ररोगनायक है।
यह जालकीके लिए विमेष उपकारो है। कषये दूधसे जो
मस्तक बनता है, वह चर्मल विघ्नकर, मधुर, शीतल,
कोमलता सम्पादक, चक्षुका दीप्तिकर, मलसंघाहक,
रक्तपित्त और चक्षुरोगका शान्तिकर तथा चक्षुप्रसादक
है। (सुन्दर) २ श्रीछण्ड।

नवनीतक (सं० स्त्री०) नवनीतात् कायति प्रकाशते क-
क। १ छत, घी। नवनीत आर्घ्यं कन्। २ नवनीत,
मस्तक। ३ मन्त्रक।

नवनीतगणप (सं० पु०) पुराणानुसार एक गणेश या
गणपतिका नाम।

नवनीतत्र (सं० स्त्री०) छत, घी।

नवनीतधेनु (सं० स्त्री०) नवनीतल ज्ञाता धेनुः मध्यवद-
क्षोपी कर्मधा०। दानार्थं छत नवनीतमय धेनुविमेष,
दानार्थं लिए एक प्रकारको कल्पित गो जिसको कल्पना
मन्त्रमंत्र टेरने की जाती है। मरहपुराणमें इसका
विवरण इस प्रकार लिखा है—

पहले जिस स्थान पर यह धेनु दान करनी होती है,
उस स्थानको मोहरसे परिष्कार कर लेंगे। पक्षि उस
परिष्कृत भूमि पर मृगचर्मके ऊपर नवनीतका प्रका

रखते है। नवनीत दो भेदने कम नहीं होना चाहिये।
नवनीतके चतुर्थांशमें एक बड़हकी कल्पना करते है
जिसे छत्तर दिगामें खड़ा कर देते है। बाद एक धेनुको
कल्पना करते है। इसमें शींग सीनेके, चक्षु मणि और
मुक्ताके, जिह्वा सुदकी, दोनों घोंठ पुष्पके, दांत फमके,
स्थान नवनीतके, दोनों पैर हंसके, घोंठ ताँबेकी, पञ्चान
कामिका और शूर चाँदीके बने होते है। धेनुके साय चार
तिनके पात्र रख देते है। बाद चारों ओर दोष जथा
कर और दो बल्लोंमें उस धेनुको ठँक कर निम्नलिखित
मन्त्रसे वेदविद ब्राह्मणको दान देते है। मन्त्र—

“पुरा देशाद्वैः पथैः वागारस्य ह मयने।

वरश्च दिव्यममृतं नवनीतमिदं दानम्॥

आध्यायनस्य भूतानां नवनीत नमोस्तुते॥”

इस प्रकार नवनीत धेनु दान करके तोम दिन तक
धोम करना होता है। जो यथाविधि यह धेनु दान करते
है, वे समस्त पापोंसे रहित हो कर मिससाधुव्यक्ताकी
प्राप्ति होते है और कल्याण तक विष्णुलोकमें वास करते
है। जो यह धेनु दान करनेदेवते है वा इसका उत्तमान
सुनते है अथवा दूसरे मनुष्यको सुनाते है, वे सब पापोंमें
विसृज्य होते है। (वराह०)

नवनीतोद्भव (सं० स्त्री०) १ दधि, दही। २ छत, घी।

नवनेन्द्रिकुल—एक पार्वत्य देग। राजेन्द्रचोलदेवने अपने
राज्यकालके ७वें और १०वें वर्षके भीतर इससे कतह किया
था। इस स्थानको लोत कर वे चातुर्व्यसज ततोय
जयसिंहको लोतने गये थे।

नवन्दगद—एक भग्न सुगं जिसको लंघार्दे ३२ हाथकी
है। यह लावरिया नामक पासके निकट अवस्थित है।
यहाँमें गण्डको नदी केवल पाँच मानकी दूरी पर है।
प्राचीन मन्त्रायोगोंमेंसे एक सुन्दर मन्त्रस्थान है।
कम स्तम्भके ऊपर एक सिंहकी मूर्ति है और मातृमै
अमीकको पादेमायमो छोदी हुई है। यहाँ मरीके पनेक
स्तूप दिखनेमें आते है। बहुतोंका अनुमान है, कि ये
सब स्तूप बौद्धधर्मके चम्पूदण्डके पूर्वतन राजाओंके
समाविष्यान निर्देशक है। यहाँ बौद्धभोगोंके पत्थर और
ईंटोंके बने पनेक स्तूप हैं।

नवपत्रिका—युवनपुत्रके भ्रमपञ्चसन्तर्पण इस राज्यका उल्लेख है। निम्नो देयमें पर्यटन कर वं प्रायः एक हजार लोग उत्तर-पूर्वका रास्ता तै कर इस राज्यमें आए थे। यह नवपुर शब्दका अपभ्रंश है। इस राज्यको लिखलान वा शिनशेन भी कहते हैं। यहांके लोग जंगली स्वभावे के हैं, पाचार-व्यवहार भी जङ्गली-सा है।

नवपञ्चम (सं० ५०) नव च नवमश्च पञ्चमश्च-यत्न योगी। विवाहाद्वाराणि कृतमेव। नवपञ्चम देख कर विवाह स्थिर करना सूचित है। यदि धरारागिकी अपेक्षा कर कन्याके नवम और पञ्चम स्थानको रागि हो तथा कन्याको रागिकी अपेक्षा कर यदि धरको रागि नवम या पञ्चम स्थानमें हो अर्थात् वरको रागिसे कन्याको रागि नवम और कन्याको रागिसे वरको रागि प्रथम स्थानीय हो, तो यह नवपञ्चमयोग होता है। इन योगमें यदि विवाह हो, तो बहुत फायदा नही होता, सन्तान ज्ञान होती है।

नवपञ्चाशत (सं० स्त्री०) नवाधिका पञ्चाशत्। संख्या विशेष, सनसठकी संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है, ५८।

नवपत्रिका (सं० स्त्री०) नवमिता पत्रिका। कदली आदि नो पदार्थ।

कौला, बनार, धान, इन्दो, मानकचू, कच्चा, विल, अमीक और जयन्ती इन नवोंका नाम नवपत्रिका है। इस नवपत्रिकाका दूसरा नाम नवदुर्गा वा नवपत्रिकावासिनी दुर्गा है। दुर्गापूजामें नवपत्रिका स्थापन करके इसकी पूजा करनी होती है।

आग्निनकी शुक्लाश्रमनोकी पूर्वाङ्गमें नवपत्रिका प्रवेश अर्थात् स्थापित करना होता है। यदि इस समझी तिथिको मूलानक्षत्र पड़े, तो वह दिन बहुत प्रशस्त माना जाता है। नक्षत्रका योग नही होने पर भी समझी तिथिको नवपत्रिका प्रवेश कर सकती है। दोनो दिन यदि समझी तिथि पड़े, तो दूसरे दिन पत्नी-प्रवेश होगा। क्योंकि पूर्वाङ्ग समय की पत्नी-प्रवेशके लिये शुभ है।

पूर्वाङ्ग छोड़ कर जिस किसी समयमें पत्नीप्रवेश वा विधर्जन किया जाय, वह अनिष्टप्रद होता है।

“पत्नीप्रवेशनं रात्रौ विवर्गः ना करोति यः।

तस्य राज्यविनाशः स्याद् राजा च विकलो भवेत् ॥”

(तिथितत्त्व)

यदि कोई रातकी पत्नीप्रवेश वा विधर्जन करे, तो उसका राज्य नष्ट होता है। मूलानक्षत्रके अनुरोधमें यदि कोई समयमें न कर केवल मूलानक्षत्रमें पत्नीप्रवेश करे, तो उसे चारों ओरसे आपत्तियां घेर लेती हैं। समझी तिथिमें हो पत्नीप्रवेश करना चाहिये, मूलानक्षत्र भी इससे लिये प्रशस्त माना गया है।

यह नवपत्रिका जिसका जैसा कुलाचार है, तदनुसार देवोकी बार्द या दाहिनी ओर स्थापित करते हैं। इस नवपत्रिकावासिनी दुर्गाको ‘कला बहु’ ओर कोई गणेशकी स्त्री बतलाते हैं, लेकिन यह निमित्तान् मूल है। नवपत्रिकाकी स्थापना करके विहित मन्त्र द्वारा यथाविधि स्नान करा कर पूजा करनी चाहिये।

नवपत्रिकाकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा लिखा है—

देवीने रश्माके रूपमें भवत् शान्ति स्थापना की थी, इसीसे रश्मा नवपत्रिकामें एक है। इसकी अष्टिधात्री देवी ब्राह्मणी है।

“दुर्गे देवि समाराच्छ जगिन्मध्यस्थि कल्पय।”

रश्मारूपेण सर्वत्र शान्तिं कुरु नमोस्तु ते ॥”

महिषासुरके साथ युद्धानामें देवीने कच्चीका रूप धारण किया था, इसीसे कच्ची नवपत्रिकाकी द्वितीय है।

‘ओ महिषासुरयुद्धे कच्चीभूतासि ध्रुवते।

मम वायुर्ग्रहायै आगतासि इतिप्रिये ॥”

इसकी अष्टिधात्रीदेवी कालिका है। उग्रामे इन्दी-का रूप धारण किया था, इसलिये इन्दी तृतीय है। इसकी अष्टिधात्री देवी दुर्गा है।

“ओ हस्ति वरदे देवि उमाकृपासि ध्रुवते।

मम विघ्नविनाशाय शुभं शुभं प्रदीद मे ॥”

निरुध्वाश्रमके युद्धमें जयन्तीकी पूजा की गई थी, इसीसे जयन्ती चतुर्थ है। इसकी अष्टिधात्री देवी कालिका है।

“ओ निरुध्वाश्रममयने सेन्द्रै देवतैः सह।

अवन्ति। शुक्तिविलसमन्तात् वरदा भव ॥”

वित्त्वहस महादेव है और वासुदेव तथा पाशुतोका

मिय है, इसीसे विद्वत्पुत्र पदम है। इसको पधित्तालो देवी मियालो है।

“ओ महादेवमिदको बापुदेवमियः पदा।

समाधिनिदरो ह्यो विद्वत्पुत्र मनोऽनु से ॥

अर्धाग्रज युद्धमें दाहिमोने समाको मचायता की थी, इसीसे दाहिमो पद है। इसको पधित्तालोदेवी रत्न-दत्तिका है।

“ओ दाहिमि त्वं पुरा युदे रत्नरीमहा सम्पुते।

रमाचार्यं हतं यत्सादरमाकं वरदा भव ॥”

पगोक महादेवका पत्न्या मिय और ओकनागक है, इसीसे यह पद सम है।

“ओ हर्षीतिहरो ह्योमोकोकः ओकनाशनः।

दुर्गागेनिहरो यत्सादरमाकं वरदा भव ॥”

मानपत्रमें देवी मास करती है, इसीसे मान पदम है।

“ओ ययय यये ययेह्यो मानहसः रायोमियः।

मम बापुमहार्माय पुत्रीं एत प्रसीद मे ॥”

जगतकी मायारक्षाके लिये प्रह्मनि धान्यपुत्र निर्माण किया था, इसीसे यह मयम है, इसको पधित्तालो देवी लक्ष्मी है।

“ओ जगतः शानरचार्यं प्रह्मना निमित्तं पुराः।

रमागेनिहरो धान्यं तामासं रक्ष मां वदा ॥”

जिन मय हर्षाकं नाम कहते मये हैं, उन सभी हर्षाकी पधित्तालो देवी म पत्तिकायासिना दुर्गा हैं।

ओ द्रव्य द्वारा तथा ओ मय्योने नवपत्रिकाको ध्यान करना चाहिये। मय्य यथा—

“ओ वरतीतरङ्गस्यामि सिन्धोवैतःस्वकाशये।

मदाते मय्यशित्वं नमस्ते वरदायिके ॥१॥

ओ वरिय त्वं द्यावरापासि वदा विद्विषदायिनी।

दुर्गादेवेय सर्वेय स्यानेव विरम्यं वर ॥ २ ॥

ओ ह्रीदे वर रुगादि प्रह्वरह्य वरा भिये।

वररुचिं देहि त्वं वरंशानितं प्रयत्नमे ॥ ३ ॥

त्रयन्ता वरदादि जगती नवपत्रिका।

रत्नारवापीदे देहि त्वं वरं देहि पदे मय ॥ ४ ॥

ओ गीतकभीनिहरीणि वदा वि

देहि मे विद्वत्पुत्र पदमो भव

दाहिम्यस्य विनायाय सुभगायाय च देवय।

मिमिंताकल कामाय प्रसीद त्वं ह्रीमिने ॥ ५ ॥

वियरा भव वरा दुर्गे अगोके ओकदारिणी।

मायातरं द्यागिता दुर्गे मोमोके मरा कृद ॥ ६ ॥

ओ मानोमानेपु ह्येय माननीयः सुहाहरीः।

स्नारयामि महादेवि मानं देहि मयोस्तु ते ॥ ७ ॥

ओ लक्ष्मीस्वरं धान्यरूपाणि शानिनां मानदायिनी।

विषासन्तं हि मे भूत्वा पदे काममा गव ॥ ८ ॥”

(दुर्गापञ्चपदमि)

इन जो मय्योने नवपत्रिकाका ध्यान कराना होता है। दुर्गा-पूजाके समय नवपत्रिकापूजा होती है। कहीं कहीं कोजागरी लक्ष्मीपूजाके साथ भी नवपत्रिकापूजा होती है।

नवपद (मं० पु०) लैनिगोके वयास्य नवमूर्तिभेद, एक प्रकारकी मूर्ति, जिनकी उपासना जैन लोग करते हैं।

नवपद (मं० स्त्री०) मावाहृत वृत्तभेद, मावाहृत नामका एक छन्द।

नवपदी (मं० स्त्री०) चोपाई या जनकरी छन्दका एक नाम। चोपाई देखो।

नवपाठक (मं० पु०) नूतनाध्यापक, नया गिचक।

नवपात्र—मविजब्रह्मवज्रोक्त वज्रदेगानार्गत वरद देवका एक याम। यह मेषना नदीके किनारे पवस्थित है।

ब्रह्मवज्रमें लिखा है कि इस नवपात्रके निकटवर्ती कपिलेश्वर मन्दिरमें एक शिवरात्रिकी गरनारी उपवास जागरण करेगी। उभे देख कर यदि मन्दिरके ब्राह्मण कामातुर हो जायेंगे, तो गिवके लोभमें सभी ब्राह्मण मारे जायेंगे। (प० ब्रह्मवज्र १८।४५-५६)

नवपायन (मं० स्त्री०) नवय नवपायन प्रागमन। नवाक-भोजन, नया भोजन या फल आदि खाना।

नवकलिका (मं० स्त्री०) नव कलं यस्याः कल्पि चत इत्यं। १ नव्या, युवा स्त्री, नवयोवना। २ नवजातवयस्का स्त्री, बच्ची स्त्री ओ हासमें पड़ते पड़न रत्नलया हुई हो।

नवभक्ति (मं० स्त्री०) नवभक्ति देवी।

नवभाग (मं० पु०) १ रागिका नवम भाग, विमगिका-कल रागिका नवम भाग। नवम देखो। २ नवम भाग

, नवो भाग।

नवम (सं० त्रि०) नवानां पूर्णः षट् । १ नवः सख्याका
पूर्ण, जो गिनतीमें नौके स्थानमें हो, नवां । (पु०) २
मन्त्रसे अधिक नवम राशि । इस नवमस्थानको लक्षास्थान
कहते हैं ।

नवमल्लिका (सं० स्त्री०) नवा नूतना सुत्या वा मल्लिका ।
१ नवमालिका पुष्प, चमेली । २ नैवारो ।

नवमालिका (सं० स्त्री०) नवा नूतना मालिका मल्लिका
पुष्पम् । १ नवमल्लिकापुष्प, चमेली । इस फूलमें चमेली गन्ध
है । लोग इसे धास्रो, नैवारी धा नैवार भी कहते हैं ।

इसका चमेली नाम Jasminum Sambac है ।
पर्याय—प्रतिलोदा, यैको, प्रीसोद्वाध, सयता, सुकु-
मारो, सुरभि, सुचिमलिका, सुगन्धा, प्रिखरिषो, नवालौ,
भद्रवर्मा, देवप्रता, गन्धनिकरा, मालिका, नवमल्लिका ।
यह पति शैत्य, सुरभि और रोगनाशक माना गया है ।
२ छन्दोग्रिषो, एक वर्णवृत्तका नाम । इसके प्रत्येक
चरणमें गण, जगण, भगण और यगण होता है । कोई
कोई इसे नवमालिनो भी कहते हैं ।

नवमालिनो (सं० स्त्री०) नवमल्लिका देखो ।

नवमी (सं० स्त्री०) नवम तिस्तावृत्तौ । तिथिग्रिषो,
चान्द्र मासके किसी पक्षको नवमी तिथि । नवमकलाचया-
मक तिथिका नाम कृष्णानवमी और नवमकलावर्द्ध-
माक तिथिका नाम शुक्लानवमी है ।

नवमोऽथवस्था—धार्मिक कर्त्तव्ये निवेष्टमो-
विहा नवमी प्राह्य होता है अर्थात् जिस दिन नवमीका
पटमीके साथ योग रहैगा, उसी दिन धार्मिक कार्य
होती । क्योंकि नवमीके साथ पटमीका शुभादर है ।
पशुपरायके निष्कलित यजमानुसार भी पटमोविहा
नवमी प्राह्य है ।

“अष्टम्या नवमी विदा नवम्या पाठमीयुता ।

अर्धनारीश्वरप्राया उर्ध्वानन्देश्वरी शिभि ॥”

(काव्याधारीवृत्त पशुपरायनवचनम्)

माघमासकी शुक्ला नवमीका नाम महानन्दा है ।
यह नवमी मंगुलीकी अर्धरात्रि आनन्ददायिनी है । इस
दिन ज्ञान, दान, जप, होम, देवाचन, उपवास जो कोई
धर्मकार्यगृहण किया जाय, वह अशुभ होता है ।

“भाष्यमात्रे तु या शुक्ल नवमी शोङ्कयिता ।

महानन्देति वा प्रोक्ता महानन्देश्वरी युष्मा ॥

स्नानं दानं जपो होमो देवाचनमुपोषणम् ।

सर्वं तदाद्यं प्रोक्तं यदस्यां कियते नरैः ॥” (निरुद्ध)

नवमी तिथिसे ले कर नौ वर्ष तक पिछेतर भोजन-
निवृत्ति है अर्थात् पिछे द्रव्यके सिवा अन्य कोई द्रव्य
खाना निषिद्ध है । यह नवमी व्रत करनेसे पार्वती बहुत
प्रसन्न होती है और उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं ।

इस व्रतका सङ्ख्य इस प्रकार किया जाता है,
“अथेत्यादि नवम्यां तिथावारम्य नववर्षाणि यावत् प्रतिशुद्ध-
नवम्यां पिछेतरभोजननिवृत्तिव्रतमिति चक्षते विशेषः ।”

(तिथितर)

काचित् कामाक्षी शुक्लानवमीमें जगदातोपूजा करने
चाहिये । उस दिन प्रातः, मध्याह्न और सायं इन तीनों
कालमें पूजा करनेका विधान है ।

तन्त्रके मतानुसार काचित्ककी शुक्लानवमीके दिन
प्रथम त्रेतायुगोत्पत्ति हुई थी और उसी दिन पहले पक्ष
जगदात्मिका पूजन हुआ था । (उत्तरकामाख्यपु० १। पटवः)
नवयष्ट (सं० पु०) नवधाम्यनिमित्तः यष्टः । नवाव
निमित्तक यष्ट, वह यष्ट जो नये अक्षते निमित्त किया
जाय ।

नवयुवक (सं० पु०) तद्वत्, नौजवान ।

नवयुवा (सं० पु०) तद्वत्, जवान ।

नवयोनिन्यास (सं० पु०) तन्त्रसारोक्त न्यासमेदः, तन्त्रके
पशुसार एक प्रकारका न्यास । यह न्यास बीजमन्त्र द्वारा
तीन बार करके कहना होता है । पहले दोनों कानोंमें,
पछे चिबुकमें और उसके बाद गण्ड, नेत्र, नासिका, जठर,
कुहरो, कुक्षि, जानुद्वय, मूर्धा, पादद्वय, शुभ्रदेग, पाश्र्व-
द्वय, हृदय, मूलद्वय और कण्ठदेग इन सब स्थानोंमें मूल
मन्त्रका तीन बार न्यास करनेसे नवयोनिन्यास होता है ।
नवयौवन (सं० स्त्री०) नव यौवन । अभिनव यौवन,
तद्वत्, जवान ।

नवयौवना (सं० स्त्री०) नव यौवन यस्याः । युवतो,
अभिनव यौवनवती स्त्री, वह स्त्री जिसके यौवनका
पारम्भ हो, नौजवान औरत ।

नवरंग (हिं० वि०) १. सुन्दर, रूपवान्, नई कंटा वाला ।

२ नई गोमायुक, नये ढंगका, नवेसा ।

नवरत्नी (हि० वि०) १ नित्य मण्यमान्य करमेवासा ।

२ चन्द्रमण, रत्नी, मृगमित्राज ।

नवरत्नी (हि० स्त्री०) नारत्नी देखो ।

नवरत्न (म० स्त्री०) नव यन्त्रात् । कायस्य मुख्य कुलीनों-
का पददान चौर चतुर्थद्वयामक कुलविशेष ।

नवरत्न (म० स्त्री०) नवगुणित रत्न । १ नवविध माणिक्य-
व्यादि रत्न, नौ प्रकारके मणिमाणिक्यदि रत्न मोती,
पद्मा, मानिक, गोमेद, चौरा, मृगा, पद्मराग, कङ्कनिया
चौर मोक्ष ये नौ प्रकारके मणियोंका नाम नवरत्न है ।

भावप्रकाशमें चौरा, पद्मा, माणिक, पद्मराग, इन्द्रनील,
गोमेद, नैर्दुर्य, मोती चौर मृगा इन नौ रत्नोंको नवरत्न
माना है । इनमें पाँच महाराज चौर चार उपराज हैं ।
पद्म, मोती, माणिक्य, नील चौर मरकत ये पाँच महाराज
तथा गोमेद, पद्मराग, नैर्दुर्य चौर प्रवाल ये चार उपराज
हैं । महाराज चौर उपराजको मिलानेसे नवरत्न होता है ।
विष्णुधर्मोत्तरमें नवरत्नके नाम ये हैं—सुक्राकस, चौरक,
नैर्दुर्य, पद्मराग, पुष्पाग, गोमेद, मोक्षकान्त, पद्मा चौर
मृगा ।

पुराणके अनुसार ये नौ रत्न चलग चलग एक एक
पद्मे दोषांकी शान्तिके लिये उपकारी हैं । जैसे, सूर्यके
लिये मङ्कनिया, चन्द्रमाके लिये नीलम, मङ्गलके लिये
माणिक, बुधके लिये पुष्पराज, बृहस्पतिके लिये मोती,
शुक्रके लिये चौरा, शनिके लिये नीलम, राहुके लिये
गोमेद चौर वैकुण्ठके लिये पद्मा । २ राजा विजयमादित्यकी
एक कल्पित सभाके नौ पण्डित जिनके नाम ये हैं—
धर्मनारि, स्वर्णक, चमामिन्द, गङ्गु, धैर्यमहा, घट-
मण्डर, कान्तिदाम, वराहमिहिर चौर सरस्वति ।

ये सब पण्डित एक ही समयमें आविर्भूत नहीं हुए
हैं, बल्कि भिन्न भिन्न समयमें हुए हैं । लोगोंने इन सबको
एकत्र करके कल्पना कर ली है कि ये सब राजा विजयमा-
दित्यकी सभाके होवाये । ३ एक प्रकारका द्वार जिसे
गमने पङ्कनमें है चौर जिनमें नौ प्रकारके रत्न या कलाहि-
रात होते हैं ।

नवरात्रदेवता (म० पु०) नौ रत्नोंके पवित्रादेवता ।

नवरत्न (म० पु०) नवगुणित रत्न । चक्रद्वारमाळिक

शुद्धादि नौ प्रकारके रत्न ।

शुद्धा, हास्य, कश्यप, रोद्र, वीर, भवान्तर, मोक्षक,
चक्रुत चौर शान्ता यद्यो नौ रत्न हैं । काव्यप्रकाशमें मना-
नुवार माटकमें पाठ रत्न होते हैं ।

“मथ्यो माट्यो रत्नाः रम्यतः ।” (वाचस्प०)

किन्तु साध्यमें नौ रत्न जेनि, माटकों शान्तिरत्न
मिटोंका चमिमयचौर नहीं है । प्रबोधचन्द्रोदय माटक
शान्ति-रत्नात्मक है, यह माटक समप्रधान है, इमोसे यह
भरतादिके नाव्यामाधौक विरुद्ध है ।

नवरत्नमें नौ स्थायी भाव हैं, यथा—शुद्धारत्नमें रति,
हास्यरत्नमें हस, कश्यपरत्नमें शोक, रोद्ररत्नमें क्रोध, वीर-
रत्नमें वक्राह, भवान्तररत्नमें भय, मोक्षरत्नमें श्रुगुहा,
चक्रुतरत्नमें विरमय चौर शान्तिरत्नमें शम व्याधिभाव है ।
इन नवरत्नमें स्थायिभाव, चान्दमन, विभाव, अनुभाव
आदि वर्णित हैं । विशेष विवरण २७ अध्यामें देखो ।

नवरात्र (म० स्त्री०) नवरात्री रात्रौषा समाहारः । तत्-
साधनमन्त्रावस्थेति चत्, वा नवमि रात्रिभिर्निर्गुलं ।
१ नव रात दिनसाध्य यक्षमेद, एक प्रकारका यज्ञ जो नौ
दिनमें समाप्त होता है ।

ऐतरेय-ब्राह्मणमें नौ रत्न यज्ञका विषय निरुद्धा है ।

२ नवरात्रसाध्य व्रतमेद, एक प्रकारका व्रत जो नौ
दिनोंमें समाप्त होता है । चाग्रिमकी यज्ञाप्रतिपदमें से
कर नवमी तक यह दुर्गाव्रत किया जाता है ।

यह प्रतिपद यदि समायुक्त हो, तो उस दिन इस
व्रतका अनुष्ठान नहीं करते । द्वितीयायुक्त प्रतिपद को
इसके लिए प्रयुक्त है । दूसरे दिन यह तिथि यदि एक
मुहूर्त भी रहे, तो उसी दिन नवरात्रव्रत पारम्भ होगा ।
निश्चितचित्त वचनसे समायुक्त प्रतिपद निदिष्ट मानी
गई है ।

“अमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपद एवमेवम ।

पुनर्मेवात्रा वरंसा द्वितीयादि पुनर्गतिना ॥”

(दीपु०, वामदेव)

“पूर्वदिना पुनरावृत्त्या मन्त्रे प्रतिपदादिभिः ।

नवरात्रव्रतं तस्या वचनं दृढमिच्छता ॥”

(माहेश्वरु०)

समायुक्ता विद्या प्रतिपद तिथिमें यह व्रत करनेसे

धनिक प्रकारके समझल होते हैं। इस व्रतमें प्रतिपदकी चटस्थापन करके सवेरे देवीका आवाहन और पूजन करना होता है।

जो इस व्रतकी करते हैं, उन्हें नौ दिन तक केवल एक गम खाना पड़ता है। रातको भूमिभयन, कुमारी, भोजन, प्रतिदिन वस्त्रादि दान, बलि और त्रिकालमें देवीका पूजन करना होता है।

"कन्याधरये रवौ शत्रुशुक्रामारभ्य नमिदधौ।

अथशो ह्यथ वै काशो नकासी वाय वायवदः॥

भूमौ श्रमीत चार्धेन्रप कुमारीर्भञ्जयेन्मुदा।

वज्रात्कारदानैश्च सन्तोषया प्रतिवाचमू॥

वलिश्च प्रहस्य दयादीदनं मांसमायवद।

त्रिकालं पूजयेद्देवीं नवस्तोत्रपरायणः॥" (देवीपु०)

जगन्तीत्यादि मन्त्र पद्यवा नवाक्षरमन्त्र द्वारा देवीकी पूजा करनेका विधान है। इसमें सङ्कल्प कारके चटस्थापन, यथाविधि देवीका आवाहन और पोद्दुशोपचारसे पूजन करते हैं। बाद मायभातबलि चयवा कुम्भाप्यबलि दे कर कुमारीकी पूजा करते हैं।

देवीभागवतमें नवरात्रव्रतके विषयमें एक उपाख्यान दिया गया है तथा इसके कुछ नियम भी बतलाए गए हैं जो इस प्रकार हैं,—

पुराकालमें एक धनहीन दुःखी वक्त्रि कोयलराज्यमें रहता था। उसके घनिक परिवार थे। वह पत्यन्त धर्मशील था। जटये जो कुछ बच प्रतिदिन उपाजन करता था, उसमेंसे कुछ तो देवता, पित्र और चतियियाँको समर्पण करता, बाद परिवारवर्गकी खिशाता, पीछे जो कुछ बच जाता उसे आप खा लेता था। इस वक्त्रिका नाम था सुमील। चित्ताग्रदा हो कर एक दिन इसने किसी ब्राह्मणसे पूछा, 'भूदेव। ऐसा कौनसा उपाय है जिससे मेरी दरिद्रता दूर हो। मैं धनी होना नहीं चाहता; जिससे मेरे मानकी रक्षा हो, वही उपाय आप जपया वतला दीजिए। मेरी सन्तान सुधातुर हो कर हमेशा रोती रहती है। घरमें उतना भनाज नहीं कि उन्हें भर पेट खिला सकूँ।' इस पर ब्राह्मणने बहुत प्रसन्न हो कहा, 'यदि तुम अपनी दरिद्रता दूर करना चाहते हो, तो नवरात्रव्रतका अनुष्ठान करो। यह नवरात्र-

व्रत ज्ञान और मोक्षप्रद है, शत्रुनाशक है तथा सुख और सन्तान हृदिकनक है। पुराकालमें रामने सोताके विरहसे कातर हो इस व्रतका अनुष्ठान किया था। जिससे उनके सब प्रकारके दुःख दूर हो गए थे।'

वक्त्रिकने उस ब्राह्मणकी बात सुन कर उन्हें अपना गृह बनाया और उनसे मायाबोल मन्त्र पढ़ाए किया। पीछे उसने नवरात्रव्रतका अनुष्ठान किया। तदनन्तर नौ वर्ष बीत जाने पर देवो महेश्वरी दो पहर रातकी उसने सामने प्रकट हुईं और उसे घनिक प्रकारके वर दिए। उस वरके प्रभावसे उस वक्त्रिकने नाना प्रकारकी सुख-समृद्धिका भोग कर अन्तमें स्वर्गलाभ किया था।

जन्मजयमें व्यासदेवसे जब नवरात्रका विषय पूछा था, तब व्यासदेवने यों कहा था, 'यह व्रत प्रतिपूर्वक वसन्तकालमें पद्यवा शरत्कालमें ही कर्त्तव्य है। वसन्त और शरत् ये दो ऋतु यमदंष्ट्रा नामसे प्रसिद्ध हैं। ये दो ऋतुएँ विषेयरूपसे प्रथम फल देती हैं। इसी कारण जो मनुष्य मङ्गलकी कामना करता हो, उसे यज्ञपूर्वक व्रत दो ऋतुओंमें नवरात्रव्रतका अनुष्ठान करना चाहिए। शरत् और वसन्त ऋतुओंमें मनुष्य घोरतर रोगोंसे आक्रान्त रहते हैं, यहां तक कि उनके प्राण भी नष्ट हो जाते हैं। अतः इन सब रोगोंकी शान्तिके लिए भक्तिपूर्वक नवरात्रव्रतका अनुष्ठान करना मनुष्योंका एकान्त कर्त्तव्य है। प्रतिपद तिथिमें समवेगमें विद्या स्थान पर मोक्ष हाथका एक स्तम्भ और ध्वजसमन्वित एक मण्डल प्रस्तुत करे। देवीका पूजाकुमल ब्राह्मण द्वारा पूजन करावे और उन्हें प्रसन्न रखनेके लिए नौ, पाँच, तीन वा एक ब्राह्मणसे चण्डीपाठ वा देवीपाठ भी करावे। इस प्रकार कार्यारम्भ हो जाने पर वेदीके ऊपर सिंहासन स्थापन करके उस पर पाशुवधिमृदा भुजचतुष्टय-सम्पत्ता वा भटादगभुजा सुताहार पादि मर्षाभरण-विभूषिता, सर्वलक्षणआज्ञा विहीनपरिमंस्थिता, शङ्ख-चक्रगदापद्मधारिणी देवीकी प्रतिष्ठा करे। यदि प्रतिमा-का अभाव हो, तो उस मित्रासन पर पोठपूजार्थ नवाक्षरसंयुक्त मन्त्र और उसकी वगलमें पद्मपत्रसमन्वित कुम्भकी स्थापना करे। नाना प्रकारके उपहारोंमें देवी-पूजा विधेय है। जो भावभोजी है, वे देवीकी पूजामें

पट्टि'मा कर सकते हैं। पट्टि मन्दिशमं हाग और वन्धु-
 माराहा मन्दिशमं हो एकमकल्प है। देवीके आगे त्रिम
 पट्टि'मा मन्दिशमं दिया जाता है, वे स्वर्णमास करते
 हैं। यद्यो कारव है, पट्टिपत्तीको बसका पाप नहीं लगता।
 याज्ञिको हि'मा पट्टि'मा समझी जाती है। मधराव-
 प्रतमें जोमने लिए परिमाणानुसार एक चायने में कर
 दस हाथ तक। त्रिकोणकुण्ड और त्रिकोण क्षण्डित
 मन्ता उचित है। इस प्रतमें कुमारोपूजा, वैभवा-
 नुसार प्रतिदिन एक एक चयया एक एट हडि करके
 वा नी नी करके कुमारोपूजा करनी चाहिए। कुमारी-
 पूजाका नियम इस प्रकार है—एक वर्षकी कुमारीपूजा
 कर्त्तव्य नहीं है। दो वर्षने से कर दस वर्षकी कुमारी-
 का पूजन उत्तम माना गया है। इनमेंसे दो वर्षकी
 कन्या को कुमारी है, तीन वर्षकी त्रिमूर्ति, चार वर्ष-
 की कल्याणी, पाँच वर्षकी रोहिणी, छः वर्षकी कान्तिका,
 सात वर्षकी यष्टिका, आठ वर्षकी गायत्री, नौ वर्ष-
 की दुर्गा और दस वर्षकी कन्या शुभद्रा कहलाती है।
 एमरके चतुमार एक नाम से मे कर कुमारीपूजा को
 जाती है। होमाङ्गी, कुठरीगिणी, मन्वावित्ता, दुर्गा-
 मूदिनाङ्गी और दुष्टकुलमन्वा कुमारीका पूजन मधराव-
 प्रतमें निविष्ट माना गया है। जो कन्या जन्माया, देक-
 राणी, कापी, कृष्णा, बहुरोमावित्ता, रीगिणी वा किणी
 प्रकारके धीयन-चिह्नयुक्ता वा धर्मवाहिता चयवा विधवा-
 क्त गर्भमें उत्पन्न हुई है, वे कुमारी नहीं हो सकती।
 मधरावप्रतमें भी उद्योग नहीं कर सकते, वे यदि भगमी
 भटगो और नवमीये तीन उपवास करें, तो कामना
 सिद्ध होती है।

एसा पर जो कुछ प्रत और दाग वस्त्र जिसे जानि है
 उन सबमें यह नवपातप्रत विशेष फलदायक है। इस
 प्रतमें करतमें धन, धान्य, समानहडि, सुखमयवि, पापु,
 चारोग्य और सीध मिलता है। (रि'कीभा' १२४-२०७)

त्रिम प्रकार बहःसदेमं दुर्गाव्र होता है, एमो
 प्रकार गृहसदेमं, राजपूतानि, दण्डपदेमं और सङ्कासं
 मधराव उत्पन्न होता है। बहःसदा दुर्गाव्र पाणिम-
 के दण्डपदेमं होता है, मेदिम नवरात्र सभी जगह
 पाणिममायमें नहीं होता, जहाँ तो पाणिममें, जहाँ
 पदमें मान्य। पूजाके समय होता है।

राजपूतानिमें येस सुंदरी प्रतिपद तिथिमें मधराव
 उत्पन्न दण्ड होता है और दण्डरा चयौ विजयादमयो
 उत्पन्नमें समान होता है। एमोत्र नामक स्थानमें हो
 यह प्रत बहुत समारोहमें किया जाता है। - दण्डपदमें
 मङ्गावानीके घरमें इस समय तनवाको पूजा होती है।

प्रथम दिन मगरके सुपुरुष नर तथा मारिवा सपा-
 विहार तथा भगवतो गोरोक सद्भ्यमे स्तोत्रपाठ करती
 हैं और चयनेकी चनेक प्रकारको पुष्पमालायां तथा
 पुष्पगुच्छमें सजा कर सवागमें चामन्द झूटती हैं। भूदे
 पर झूलती और गान करती हैं। यह उत्सव मनुष्या दिन
 रहता है, जोहि गामनी ये सबके सब चयने घर- मोटती
 हैं। इनमें कोई कोई "गोपुंस्तन" भी कहते हैं। मेदिम
 राजपूत स्त्रोम वीस चामने हमें "गाङ्गोङ्ग" कहते हैं।

एवमेंके मधरागिमें म'कमिन जांतिमें मगरके विहिदे'ममें
 गोरों और ईश्वरको प्रतिमा मन्तानें लिए सही जाते हैं।
 प्रतिमाके तैयार हो जाने पर हमें सि'हामन पर प्रति-
 स्तिम करते हैं। मूर्ति'के सामने एक जगह घोड़ा कोड़
 कर उभरने जो नुन देते हैं। जब जोका घोड़ा कुछ बढ़ा
 हो जाता है, तब स्त्रियां एक दूसरेका हाथ पकड़ती
 दूरे, देवीके नाममें जाती हैं और यहाँताय मान करती
 हैं। बाद में गोक उन छोटे छोटे घेरेकी सपाङ्क कर
 घर लाती और चयने चयने चामो पुतकी देती हैं।
 मन्त्र आ घामें धारिधारिक प्रतिमा रहती है और जहाँ
 मगरके बाहर जनमाधारपके लिए प्रतिमा प्रतिस्तिम की
 जाती है। जोहि एक दिन भीकयासाया पावीजन होता
 है। देवदेवोकी भतीमांति सजा कर किमो नामःबने
 किलारी भी जाते हैं। दण्डपु-मधरागोकी प्रतिमा-
 की भीकयासाया हो बहुत धुमधाममें मय्यव होती है।
 गुरुणा, भगनपमी और भागिनी येभीनिमिटा पुत्रनिडा
 देशोकी मन्ताके रूपमें जहाँमें एमर किए चामो चामो
 चयती है। याज्ञिके पदमें मगाङ्का बजता है और एक
 निङ्गमङ्कले तोपकी पावाज होती है। जब समय एक
 प्रतिमाको नो कर किमो निङ्गट तासापको और टाका
 करती है। मधरावता मय्यव नामकोके भाव भावदा यह
 दर यहाँ पड़'क जाते हैं। रात्रमें, पाट पर और चालि-
 कापीकी इनपर दण्डकीकी चमार भीड़ रहती है।

स्त्रियां फूलकी माना पहनी हुई चलती है। सृष्टजित-
सिंहासन पर प्रतिमा वाहित होती है और उसके दोनों
बगल रमणियां चामर डुलाती जाती हैं तथा ग्रामि-
न आयासोटा किये स्त्रियां हो पांगे पांगे चलती हैं। घाट
पर जब प्रतिमा पहुंच जाती है, तब महाराना पारिषद-
के साथ नाच पर खड़े हो जाते हैं। घाटके जलकी
किनारे प्रतिमा रखनेके लिए एक सुन्दर मण्ड बना होता
है। प्रतिमा जब मण्ड पर बैठ गई जाती है, तब महा-
राना अपना आसन ग्रहण करते हैं। स्त्रियां एक
दूसरेका हाथ पकड़े मूर्तिका प्रदक्षिण और
साथ साथ तांकी बजा बजा कर स्तोत्रपाठ करती हैं।
सामन्तगण गान सुन कर अपने अपने वंशके गौरवसे
लज्जित होते और शिर नीचे कर उन रमणियोंकी सन्म-
दना करते हैं। स्त्रियां भी शिर नीचे किये हुए वीरोंका
प्रत्यभिवादन करती हैं। उत्सवके सभी कार्य स्त्रियों
द्वारा ही किये जाते हैं। गौरी और ईश्वर भक्तपूर्वकों
आकारमें बने होते हैं। प्रतिमा जब तक घाट पर रहती
है, तब तक गौरीदेवी स्नान करती हैं, ऐसा उन लोगो-
का विश्वास है। इसी कारण कोई पुरुष उस समय
देवक्षेत्रमें जाय नहीं जाते, लाकड़से पट्टी होती है,
ऐसी सभी की धारणा है। कुछ समय बाद महारानाकी
प्रतिमा राजमणनकी लौटाई जाती है। उस समय महा-
राना दलबलके साथ नाच पर चढ़ घाटके नाना स्थानो-
के अधिवासियोंका उत्सव देखने निकलते हैं। सप्तमी,
अष्टमी और नवमी केवल तीन दिन ही इस प्रकारकी
धूमधाम होती है। कर्णेल टाड अनुमान करते हैं, कि
"गङ्गा" और "गौरी" इन्हीं दो गर्दीके संयोगविकारसे
"गाङ्गोई" शब्द निकला है। अष्टमीके दिन अशोकाष्टमो-
का विशेष उत्सव होता है और नवमीके दिनको नव-
रात्रिका विविध दिन समझ कर उस दिन होम किया
जाता है। इस दिन सब कोई भगवतीकी पूजा बढ़ाते
हैं। इस दिन रामनवमीके लिए रामका लक्ष्मीरूप होता
है। उदयपुरके राजमाहात्ममें उसदिन हाथी घोड़े, पादि-
को भवोभाति सजा कर तथा भक्त शस्त्रको परिष्कार कर
उनकी पूजा करते हैं। विजयादशमीके दिन "दशहरा"
होता है। इस दिन उदयपुरमें मैथ्यपरिवाहन और
जड़िम युवाभिनय होता है।

पूर्वामें नवरात्र आश्विनमासमें होता है। प्रतिपद्वि-
नवमी तक "नवरात्र" और दशमीको "दशहरा" उत्सव
होता है। प्रभु नामक कायस्थोंमें बहुतसे ऐसे हैं, जो
फलमूल खा कर नौ दिन विमाते हैं। नवमीके दिन होम
होता है। इन दिनों विवाहिता कोढ़णो-भाइयन रम-
णियां घर घर घूमती हैं और भगवतीके नाम पर फरहमें
भोख मांग लाती हैं। गृहस्थके घरोंमें इन दिनों सधवा
हस्त करवाकी पूजा करती हैं। इस पूजामें एक भाइयन-
दम्पतीकी बुला कर सबके सामने खड़ा करती हैं और
उनका फरह एक चौकोर जपूर रखा जाता है। जो
स्त्रियां पूजा करती हैं वे फरहमें जपूर तेल, हल्दी
और सिन्दूर छेप देती हैं, एक टिकुनी भो साट दो जाती
है। बाद में घरवा चावलसे फरहकी भर कर उसकी
पारती उतारती हैं। बाद भाइयन रमणों पूजाकारिणीके
कपास पर तेल, हल्दी, सिन्दूर और टिकुनी लगाते हैं।
पुरुष लोग भी इस समय गृहस्थसे चावल और तेल पादि
पा कर उन्हें भागीर्वाद देते हैं और गङ्गा बजा कर शुभ-
की सूचना करते हैं। इस दिनके सिवा किवीके घरमें
किसी उत्सवमें गङ्गाध्वनि नहीं होती। उनका विश्वास
है, कि दूसरे समय गङ्गाध्वनि कान्नेसे लक्ष्मी भाग जाती
है। कुमारी और सधवा इन दिनों एक दूसरेके घर
इशिया जाती जाती हैं। जिसके घर वे जाती हैं उस
घरकी रमणियां उन्हें बँडनेके लिए चटाई देती हैं और
तेल, हल्दी, सिन्दूर, फूलकी माना और टिकुनी पादिसे
उनका स्वागत करती हैं। बाद जाते समय उनके
पञ्चनमें मूँदी, सुपारी और पैसा बांध देती हैं।

दशहराके दिन कायस्थ लोग प्रातःस्नान कर गृहदेवता-
की पूजा करती हैं। स्त्रियां पांगनमें मण्डल करके उसमें पद्म
पाण्डवोंके नाम पर पांच जगह गोबर एक पत्ते पर रखती
हैं और उस पर फूल, सिन्दूर वा धूपी छिड़क देती हैं।
जिनको छोड़े होते, वे उन्हें पक्षवससे ला कर घरके
सामने खड़ा करती हैं। बाद में उनके गले तथा चारों
पैरोंमें फूलकी माना पहना देती और पीठ पर शाल पादि
बिछा देती हैं। तदनन्तर सधवा गृहस्थों दीप, मारियन,
बतासा, सिन्दूर, भरवा चावल, पान, सुपारी और रत्न-
मुद्रा दे कर उनका वरण करती हैं। जिस रत्नमुद्रा

राग चोरीको बरत किया जाता है वह समुदायजडा होता है। चतुर्दशको दशदेक चतुर्दश चतुर्दश चोर भीतो भी मिलतो है। इन दिन ये लोग मांस मिठायादि ब्रह्म खाते है। मांसको रसबिया पचने पतोको भाव ये मन्दिर जाती है चोर पूजा चतुर्दशी है। महीमें मोठ करके टारानी पर बैठनी चोर छाभीको पचिया करती है। गामीके पाने घर में लगे एक चोरी पर बिठा कर कपान पर मन्दिर भगती, मन्त्र पर पाया पावन बिह्वली, वताना चोर मारियन पानिको देती है। तदनन्तर ये चोरी चारती टारती है। छाभी कोके चतुर्दश पावनी २० दशके तक देते है। बाद ये गुरुदेवताके निकट जाकर रचित तनवार, बन्दूक, खम्भ, टवात, कुरी, भाषा बन्ध पादिकी पूजा करती है। इसी प्रकार नवरात्रिको भी दिन तक भगवतीकी पूजा, होम, अष्टोपावादि होती है चोर खिया हरिदादि मांस चोर मन्त्रानुष्ठान करती है।

दाक्षिणात्य प्रदेशमें नवरात्रतकी ० वैदिक ब्राह्मण प्रती होती है। इनमेंसे एक चोरीदित्य करते, दूसरे तन्त्रपारक होते, तीसरे सतिनपाशायकके पर्याप्त चतुर्दश जल जयपाव भूषिका स्त्रीय प्रतिदिन तीन बार पढ़ते, चौथे चाम्पेदीक्ष मन्त्रपूज १०८ बार, पांचवें चौपूज १०८ बार, छठे मन्त्रपूजपाठ चोर मातमें वैदिक ब्राह्मण पचास शिवमन्त्र पर्याप्त 'श्री लमः गियाय' यह मन्त्र चार दिन तक बारह हजार बार पाठ करते है। देवोकी चौपूजोपचारसे पूजा होती है। रातको पूजा समाप्त हो जाने पर १२ घेदगायक स्तुतिपाठ करते है। स्तुति-पाठका नियम—१०८ दिन ग्रामको पक्षमें चित्ति, गिया, ब्रह्मविद्या, भगवती चोर नारायण उपनिषद्का प्रथमांग मन्त्रोके दिन ग्रामको मन्त्रोके चोर 'चत्ति होप्रवम्' तथा चतुर्दशके दिन ग्रामको पुरोडासका प्रथमांग चोर नारायण उपनिषद्का चतुर्दश, 'विश्व-उपपन्न' एवं नवमोके दिन मन्त्रा समय 'चतुर्दश' 'चतुर्दश लम्भ', चतुर्दश ब्राह्मणके चतुर्दश चतुर्दश चोर द्वितीय 'चतुर्दश' पाक्षेयका प्रथम 'चतुर्दश' अन्तिम मन्त्रका प्रथम चतुर्दश द्वितीय 'चतुर्दश', तथा प्रथम गान करते है। इस प्रकारसे चतुर्दशका प्रथम है।

स्तुतिपाचन। स्तुतिगान चोप को जामे पर चारनी चतुर्दशी जाती है। चौथे मन्त्रपूजके माव चौपूज चोर भू-चतुर्दश पाठ करके पुष्पाञ्जलि देते है। इसके बाद पूजा चोर को जाती है चोर चतुर्दश महामेवैद्य भोग भगवा है। भोग-के बाद वसोगच बाहार करते है। दशमोके दिन १० वैदिक ब्राह्मण पा कर निराश्रम करने है। ये मन्त्र ब्राह्मण पक्षके घरमें पचादि पाक करके देवोकी भोग देते है। बाद सभी चोरी चोरी निर्विघ्न भग्न पर बैठ, समचारसे घेदगान कर भोजनादि करते है। प्राय सभी जगह इस नवरात्रप्रथमें, पचपनि नहीं होती। विजयनगरके महाराजकी घर तीन दिनमें तीन पचपनि दी जाती है। इसमें तैलको ब्राह्मण गामिन नहीं होती, केवल उल्लभ ब्राह्मण सनिकाय करता है।

महाराष्ट्रदेशमें से कर दक्षिण भारतमें ब्राह्मणोंमें चित्ति-दानकी प्रथा नहीं है। यह प्रथा केवल उत्तर प्रदेशमें से कर पूर्व चोर उत्तर भारतमें प्रचलित है।

नवराष्ट्र (मं० लो०) उगीनर राजाका एक देग जिसे नव-देवने दक्षिणकी चोर दिग्विजय करती समय प्रोता मा।

नवम (मं० पु०) १ नवीन, नूतन, नया, नया। २ सुन्दर। ३ नवयुवक, युवा, लयान, ४ उत्पन्न, दृढ़, माफ।

नवम (मं० पु०) मासका किराया जो नवरात्रवालीको दिया जाता है।

नवर्ष (मं० लो०) नव वर्षो वर्ष, वर्ष, समामान;।

नव मन्त्रपूजक चतुर्दश, एक प्रकारका सुत जिसमें नौ चतुर्दश होती हैं।

नवम—नवमजके उभाव जिलागांत एक प्राचीन जल-पट्टा विद्यमान भगवतीय। यह जगदीश्वरी मन्दिर के किनारे बाहरमोसे एक कोम उत्तर पश्चिममें प्रवहित है। है। यहकि कोमोका कहना है, कि बाहरमोके पञ्चदशके पक्षमें यह देव बहुत महत्त्वमाना था। कोम-पश्चिमजके सुपनचुबड़ने इस देगको नवदेवकुल बना लाया है।

नवमपक्ष—एक विशेष-कवि। इसीमें बहुत-सी कविताएं रचीं; चतुर्दशवाले पक्ष कीसे देते हैं—

"रंग भरे लाल रंग भरी राधा रंगीली प्यारी राधा ।
एकतन एकमन एक ध्यान दोउ
नेहट न ग्यारे होत सकत पल अगाधा ॥
छविछो छवीली भंति नैननिछोमे
मुयिक्कात मुचकनमें मन बहोई रहू बगापा ।
तेसेई नवल सखी तेसेई कृष्णविहारी
तेही मेरी प्राणप्यारी पगोमन साधा ॥"

नवलभवनमा (स० खो०) कोशवकी अनुसार सुग्धा
नायिकाकी चार भेदोंमेंसे एक ।

नवलकिशोर सुग्धी—चाप एक साधारण व्यक्ति थे, किन्तु
निज पञ्चवसाय और प्रतिभासे चाप बहुत बड़े धनी हो
गए । आपने सखनकमें एक छापाखाना १८५८ ई०में
खोला । उत्तरी-भारतमें यह पक्षला हो छापाखाना है
जिसमें भाषाकी पन्नोंके प्रकाशनकी और सबसे प्रहसे
ध्यान दिया है । आज सुग्धी नवलकिशोरका छापाखाना
सारे भारतवर्षमें सबसे बड़ा पब्लिशिंग हाउस है ।
इसके हिन्दू, उर्दू, फारसी और संस्कृतके सब मिला
कर चार हजारसे अधिक ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं । इस
प्रेसके वर्तमान अधिपति रायबहादुर सुग्धी प्रधामनरा-
यण साहय भी निवृत्त नए नए ग्रन्थ प्रकाश कर रहे हैं ।

जिस समय यह प्रेस स्थापित किया गया था, उस
समय पत्रध सिपाही-विद्रोहके उपद्रवींसे भले प्रकार
शान्त नहीं हो पाया था । इस प्रेसमें पञ्चरेज सरकार-
के सदुद्देश्योंका सर्वसाधारणमें प्रचार कर विरसरणीय
देश-सेवा की । उसीके फलसे और ब्रिटिश-सरकारकी
कृपादृष्टिसे इस प्रेसकी उत्तरोत्तर चर्चा होती गई ।
इससे मालिक सरकारके विशेष कृपापात्र बने और इन्के
मान प्रतिष्ठा भी मिली ।

जिस समय यह प्रेस खोला गया था, उस समय इस
देशमें रेलका प्रचार नहीं हो पाया था, तथापि सुग्धीजी-
ने सरकारों उच्च कर्मचारियोंकी सहायतासे, कलकत्तेसे
छापिखानेकी भारी भारी कर्तें तथा टाइप चादि अन्य
सामान सप्लनक तक मंगवा लिए ।

१८५८ ई०में इस छापिखानेसे एक पत्र पञ्चरेजोंमें
निकाया गया । इसका उद्देश्य था कि प्रजाके उत्ति-
जित विचको सरकारकी शान्तनीति समझा कर शान्ति

स्थापित करे । जब यह उद्देश्य पूर्ण हो चुका, तब बंद
बन्द कर दिया गया । तथापि उसकी शृंग्य पासनकी उर्दू
भाषाके एक दैनिक समाचार-पत्र "पञ्चध-समाचार"ने
ग्रहण किया । इसकी नीति प्रजाके मनमें सरकारकी
भोरसे विश्वास उत्पन्न कराना है ।

सरकारने सुग्धीजीकी राजभक्ति और देशसेवा देख
कर उनको सी० आई० ई०को उपाधिसे पसकृत
किया था ।

नवलचण (स० खो०) नवलमिंत लक्षणम् । नौ लक्षण ।
विश्वका संग, स्थिति, प्रलय और इसका उपादान,
गोचर, अपरोच ज्ञान, विकीर्ण और कृत्रिमत्व इन नौ
लक्षणोंमें ब्रह्म प्रमाणित हुए हैं । एक ब्रह्मसे ही संसार-
की सृष्टि, स्थिति और प्रलय होता है । जिससे यह विश्व
होता, जोवित रहता और विनष्ट हो जाता है इत्यादि
नवलचणलक्षित ब्रह्म वेदान्तपरिभाषा आदि ग्रन्थोंमें
प्रतिपादित हुआ है ।

नवलगुम्ह—१ बम्बई प्रदेशकी अन्तर्गत धारवारकी इसी
नामका तालुकका एक शहर । यह जमा० १५३३ उ०
और देशा० ७५२१ पू० धारवार शहरसे २४ मील
उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ७८६२
है । यह शहर सूती फर्शके शिप प्रसिद्ध है । यह विभाग
तथा इसके चारों ओरके और कई एक स्थान पहले
नवलगुम्हके देगाई नामक देवीय राजाकी अधीन थे ।

बाद यह टोपू सुनतानके अधिकारमें आया । तदनन्तर
महाराष्ट्रने इसे टोपूके हाथसे खोन लिया । मराठी लोग
देगाई वंशधरोंको वार्षिक २३००० रुपये वार्षिकके लिये
देते थे । १८७५ ई०में पुनः देगाईके वंशधरों और महा-
राष्ट्रोंमें विवाद किड़ा । यह विवाद पाँच वर्ष तक चलता
रहा । अन्तमें हनुमन्त गोखलेने नवलगुम्ह और गद्ग
देगाइयोंसे खोन लिया । १८३० ई०में जेनरल सुनरोने
गुम्हमें एक फौजी पफसर नियुक्त किया । इस पफसरने
अपने बाहुबलसे जिलेका अधिकार अपने अधिकारमें
कर लिया और गोखलेको इसको खबर लगी, तब से उसी
समय वदामीसे यहाँ आए और जेनरल सुनरोने मिह
गए । इस युद्धमें भी गोखलेकी ही हार हुई । यहाँ

देगाई बाग तक भी हमका कुछ पंख आगे। दुगमें भीम
हर रहे हैं। १८०० ई० में यहां भूमिस्वामिनी व्यापिन
हुई हैं। राज्य (१००) न० का है। मरुमें एक चिकित्सा-
लय और तीन स्कूल हैं।

२ बम्बईके आरमार प्रिन्सेज एव तातुल। यह चपा०
१४२ ई० १४२ ई० चोर देगा० ०१ ई० में ०५ ई० ३१
पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११५ वर्गमील
और जनसंख्या लगभग १०५८०१ है। हममें १ शहर
और ८१ ग्राम मगती हैं। यहां छोटा नरगुन्द, बड़ा नर-
गुन्द और मवलनगुन्द नामके तीन महाद्व हैं जो उत्तर-
पश्चिम और दक्षिण-पश्चिममें निम्नतम हैं। मरुके जनसे
को क्षयिकाय भगता है।

नवसप्तम—एक हिन्दू-कवि। ये गुरांगीव बाराबन्कीके
निवासी थे। हमोंने जालमरीवर, भागवत दशमस्कंध-
भाषा और भागवतपुराण भाषा जलमकाण्ड नामक ग्रन्थ
प्रचलन किये।

नवलपुर—बम्बई प्रदेशके प्यान्डेग्रुके चमार्गत्त मेरुवाम
विभागका एक छोटा भौल राज्य। जनसंख्या दो तीन
लाखों के अधिक नहीं है। यहां भीम नगरोंको पोष-
क मेरुका अधिकांश नहीं है।

नवलपु (न० प्यो०) केमरके चनुगार मुन्धानाविक
चार मीलमें एक।

नवलराज—हिन्दूके एक कवि। ये रामचरचके निवृत्त थे।
हमको नवलराज वल्लभ कविश्रीमें भीतो थी तथा हमोंने
सर्वाङ्गार और नवलभार नामक दो ग्रन्थ रचाए।

नवलनाम—हिन्दूके एक कवि। हमको बम्बई हुई
पनेक कविता पाई जाती है। वेदाहरणार्थ एक भी
देते हैं,—

“निय मनहरनो न दूधनपनी

मन करी दो बराबरनो नु निविच तरनी।

ये नो बरवनाम है सो पुनर केतु नु चरुचो

ये जान गरव तरव निय दोर सेनवनी ॥”

नवलसिंह—भारतवर्षके एक शूद्र राजा। हमके बड़े भाई
रतनसिंह एक छोटा सफ़ाई छोड़ कर परमेश्वरको
विश्वारी थे। बाद नवलसिंह एक दिवसे चमियारक को
कर राज्य चलाये गये। १०१८ ई० में अमीरको नन्द

की गई। बाद चाप ही राजा बन गये। हम समय महा-
राष्ट्रगण नुच चढ़े बड़े थे। उन्कोने भारतपुर राज्य पर
चाक्रमण कर राजासे कर वसूल किया था। नवलसिंह
और उनके भाई रतनसिंहोंने वल्लभनदु नाम। दा।
वस दुर्गके पुर्वाधिकारीने अब दिनोंमें महापता मीनो,
तब उनको महापतासे लिए एक दल नेता मेरी गई
थी। मेडिन वह नेता हम दो भाइयोंको परास्त कर न
सकी। बाद १००१ ई० में हमोंने दिनों पर बढ़ाई
करकेके लिए जाता थी। राजमें ही नजक पाने हमने
परास्त किया और ये किसी तरह जान बचा कर दिवसे
दुर्गमें जा कर रहे। १००१ ई० में हमो दुर्गमें हमको
मृत्यु हुई।

नवलसिंह—हिन्दूके एक कवि। ये अमीरके निवासी
थे और राजा साधरके दरबारमें मौजूद थे। हमका जन्म
सं० १८०८ ई० में हुआ था। हमको मथला जलम कविश्रीमें
की जाती थी। हमोंने नामरामायण और हरिनाम-
सभी नामक दो ग्रन्थ भी बनाए हैं।

नवना (सं० प्यो०) तद्वत्, नवोन प्यो।

नवलनिरु—अथर्व, पुराणिक वाचपतो नदीतीर्थभाषाके
चमार्गत्त वेदतोर्विषय। वह पुराणमें लिखा है, कि
मन्त्र, दण दिव्यात्म और जलराधिका ये सब हम
तोर्वमें स्नान करने गये थे।

नवलपु (सं० प्यो०) नवा नूतन परिणीता मयू। नूतन-
परिणीता प्यो, नव प्यो जो राजमें ही व्यापी गई है।

नववधभागम (सं० छी०) नूतन परिणीता स्त्रीका
व्याप्तिहमें प्रथमागमन। विवाहके बाद स्त्री विवाह
घरमें पहली बार जो ग्रामिके घर जाती है, उसीका नाम
नववधभागम है।

स्त्रीके रविद्विहीमेंसे प्रथम, प्रातुन और बेयाव
हम तीन महोत्सवके किसी एक महोत्सवमें विविध प्रति
श्रीमम दण्ड और संक्रान्तिदिन छोड़ कर जाता प्रहरचोर
और गृहवर्षमोक्ष समदिनमें नवलपूजा चामनम वसुध
है। एक घामसे चमका एक घरसे दूसरे घर हममें प्रति
दण्डका दोष नहीं लगता। यात्रा प्रहरचोर समदिनमें
विश्वरूपमें जाता और गृहवर्षमोक्ष समदिनमें व्याप्तिह-
प्रयोग करता है।

“देवागारे कुनकुसुमयोः समग्रो वा नदिस्यात्
कालः शुद्धो न भवति यदा सम्पुष्टो वापि शुक्रः ।
मेघे कुम्भे द्विजि च न भवेत् अक्षररचैत्तपापि
स्वावी भवेद्भूति नववधू येद्येयमस्मिन् रश्मि ॥
भर्तुर्माचरामोमे दिनपतो वास्तं गते मार्गवे
सूते कीटवृत्तानि शुभदिने पक्षे च कृष्णतरे ।
दिन्या च प्रतिलोमनीं सुपथितो जीवस्य शुद्धो तथा
वासीताः पुण्यघातिनी नववधू नित्योत्सवा भवेत् ॥”

(ज्योतिस्तत्त्व)

विवाहके बाद स्त्रीके यदि गिह्युत्तमं भूतोद्गम और
रजोदग्गं नका नभव हो, उस समयमें तथा यदि विरुद्ध
काल न पाया जाय चर्धात् कागुन, वैशाख और भगवन्
मान न हो, तो स्त्रामो यात्रोत्तं शुभदिन देख कर नववधू-
को अपने घर ला सकते हैं। यदि ऐसा भी न हो, तो
गोचर-शुद्धिं शुभदिनमें शुक्लपक्षमें नववधू अपने घर ला
सकती है।

“काश्यपेयु वशिष्ठे पु नववधूस्त्रिदिवः च ।

भारद्वाजेयु वास्त्येयु पुराः शुक्ले न दृष्यति ॥”

(ज्योतिस्तत्त्व)

काश्यप, वशिष्ठ, कृष्ण, आदित्य, अश्विना, भारद्वाज और
वास्त्य इन सब गोत्रोंका पुराः शुक्ल दोषावह नहीं होता।

इसका विषय सुवृत्तं विन्तामणि और उसकी
टीकामें इस प्रकार लिखा है। नवविवाहिता कन्याके
स्वामिगृहमें पानिका नाम नववधू-प्रवेश वा नववध्या-
गमन है। विवाह दिनसे लेकर १५वें दिनके अन्दर नव-
वधूका प्रवेश कराना होता है। इसमें यदि चन्द्र तारा
शुद्धिं और सुलग्नमें समदिनके मध्य हो, तो दूसरे, चौथे,
छठे, आठवें, दसवें, बारहवें, चौदहवें और सोलहवें दिन
और यदि विषम दिनमें हो, तो पाँचवें, सातवें और नव-
दिनमें नववध्यागमन कराना चाहिये।

यदि किसी प्रतिबन्धकवश १५वें दिनके अन्दर
नववध्यागमन न हो, तो विषम मास, विषम दिन और
विषम वर्षमें नववध्यागमन कर सकते हैं, लेकिन
यह कार्य विवाहवर्षसे ५वें वर्षके मध्य होना चाहिये
यदि यह विवाह वर्षमें करना चाहें, तो विवाह माससे
प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम और एकादश मासमें

तथा दश मासोंके विषम दिनमें नववधू-प्रवेश शुभ है।
इसमें यदि किसी कारणवश न हो, तो प्रथम, तृतीय वा
पञ्चम वर्षके शुभ दिनमें नववधू-प्रवेश करा सकते हैं।
पाँच वर्षके अन्दर भी यदि किसी प्रतिबन्धकवश नव-
वध्यागमन न किया जाय, तो उसके पौर कोई विशेष
नियम नहीं है; केवल रज्ज्वातुष्टा शुभदिनमें करा सकते
हैं। (वीर्यपारा)

नववध्यागमनके विहित अष्टम भूति-उत्तरफलांशो,
उत्तराषाढा, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी, अश्विनी, पुष्या,
इत्या, चित्रा, अश्लेषा, रेवती, श्रवणा, धनिष्ठा, मूला
और स्वाति इन सब नक्षत्रोंका नववधू-प्रवेश शुभप्रद
है। रिक्ता भिन्न तिथि, रवि, मङ्गल और शनि भिन्न वार
इसके लिये प्रशस्त है। कोई कोई बुधवारको नववधू-
प्रवेशके लिये निषेध बतलाते हैं। बुध भुङ्गसक है, इस
कारण उस दिन नववधू-प्रवेश शुभप्रद नहीं होता और
शनिवार भी इसी कारण वज्रभय है। (वीर्यपारा)

विवाहके बाद किम किम मासमें नववधूका पति-
गृहमें रहना अच्छा नहीं है, इसका विषय सुवृत्तं-
विन्तामणिमें इस प्रकार लिखा है—

“ज्येष्ठे पतिगृहप्रवासिके पति दयाक्षिणे भर्तृगृहे बधूः शयनी ।
शत्रूः सख्ये शत्रूरे ख्ये तत्र तातं भवो तातएते विवाहः ॥”

(मनुस्मृति)

विवाहके बाद नववधू यदि प्रथम ज्येष्ठमासमें स्वामि-
गृहमें रहे, तो पतिसे बड़े भाईकी जगह, आषाढमास-
में रहे, तो सासकी जगह; पौषमासमें रहे, तो ब्रह्मरकी
जगह होती है। प्रथम पक्षिक मासमें रहनेसे पतिका
और चण्डमासमें रहनेसे स्वयं अपने शरीरका नाश होता
है। इसी प्रकार चैत्रमासमें नववधूको पित्रगृहमें नहीं
रहना चाहिये, रहनेसे पिताको ज्ञान होता है।

विशेष विवरण द्विगमन रश्मिमें देखो।
नववधिरा (स० स्त्री०) नवो वरः पारस्वाः नव-वर-
ठन्। नवोदः, नवविवाहिता वधू।
नववर्ष (स० पु० स्त्री०) नवमितं वर्षम्। १ भार-
तादि नव वर्ष। २ नदी, वर्षा। ३ नूतन वर्ष, नया
वर्ष।
नववत्सभ (स० पु०) एक प्रकारका अगर जिसे दाह-

सगुण जीव निगुण जीवकी नहीं समझ सकता। हमीसे भारतवर्षमें देव-देवियोंकी सृष्टि हुई है। जीवन साकार है, मानस है और सगुण है, जो सा ही समझ में, वैसे उसका आकार है। अतः वह जीव ब्रह्म नहीं हो सकता। जो प्यासमें नहीं पा सकते, वैसे निगुणकी, जीवका कोई प्रयोजन नहीं, पर्याप्त है जीवके किसी काममें नहीं पा सकते। अतः नवविधानसे सगुण ब्रह्म ही उपास्य और ध्येय हैं, ऐसा समझा जाता है।

अनन्तकी धारणा कैसी है उसकी भी नवविधानाचार्य ने ऐसी व्याख्या की है। हम लोग आकाशका अन्त नहीं कर सकते, कालका अन्त कहाँ है यह भी नहीं जानते और न दया पुण्य आदि गुणोंका श्रेय ही जानते हैं। सर्वज्ञ सुन्दरता अन्त नहीं है। अतः हम लोगोंके सगुण मनमें ही इनका अन्त है। हम शान्त रह कर ही अनन्तका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। नवविधान पर विश्वास करनेसे सगुण परमेश्वर पर विश्वास करना होता है। ऐसा विश्वास करनेसे ही हम लोगोंके सुन्दर मनमें अनन्त ज्ञान पा जाता है, परमेश्वर भी अनन्त है यह भी माना जाता है।

यूरोपका ब्राह्मवाद भारतवर्षके औसत नहीं है। जहाँ भी निगुण ब्रह्मकी कल्पना की जाती है। यूरोपके ब्रह्म निगुण होने पर भी सृष्टि करनेके समय इच्छा प्रबलम्बन करके सगुण हो जाते हैं, मायाका प्रबलम्बन नहीं करते, किन्तु सृष्टिके बाद उनमें और सृष्टिमें एकत्व नहीं रहता और न रूपान्तर ही रहता है। ये सृष्टिके प्रतीक, नित्य और स्थायी हैं। सर्वाने जगत्की सृष्टि करके उस पर अनेक नियम चलाये थे। उनको नियमोंके अधीन संसार चल रहा है और चिरकाल तक चलेगा। जब ईश्वर भी हम नियमोंकी परिवर्तन नहीं कर सकते। सुतरां इस प्रकारके ईश्वरमें भी जोयका प्रयोजन नहीं है। जोय चाहे उनको पूजा करे, चाहे उनसे प्रार्थना करे, वे कुछ भी कर नहीं सकते। क्योंकि वे नियमाधीन हैं, नियमका उल्लङ्घन किसी हाथसे जर नहीं सकता। भक्तोंकी प्रार्थना सुनना उनके लिये अव्यभव है। नियम पालन करना ही उनका एक मात्र धर्म है। धर्म धाबित होनेसे जीवका कर्त्तव्य किया गया, ईश्वरके निकट प्रार्थनाको

आवश्यकता नहीं रही। यूरोपके वैज्ञानिक पण्डितोंका कहना है कि सृष्टिके पहले परमाणुसमि विस्फोट भावसे थी, ब्रह्माने उसे एक बार उगलने द्वारा ठीकाया। उसीसे परमाणु राशि संसृज्य हो शक्ति और गतिविशिष्ट हो कर घूमने लगी। उसके घूमनेसे तापकी उत्पत्ति हुई। यह उत्ताप घनीभूत हो कर एक अग्निमय मण्डलके रूपमें दिखाई दिया। वही आदि सूर्य है। क्रमशः सूर्यका मध्य भाग स्फीत और विस्फुट हो कर दूरमें गिरा, और सूर्यके आकर्षणसे वह वही पर घूमने लगा। हमी प्रकार ग्रह-उपग्रहकी सृष्टि हुई। पीछे ग्रहविशेषके ताप—क्रांति वायुकी, वाष्पसे जलकी, जलसे उद्भिदकी, उद्भिदसे जल-जन्तु आदि जीवोंका और पीछे मनुष्यकी उत्पत्ति हुई। तदनन्तर मनुष्य भी बहुतेरे प्राकृतिक नियमोंके अधीन हुए। उन नियमोंका पालन करना उनका धर्म है। अतः ईश्वरकी स्थिति हो सकती है, और है नहीं, लेकिन उनसे साथ जीवोंका सम्बन्ध नहीं हो सकता। यही कारण है, कि यूरोपके ब्राह्मवादमें जन्म, मृत्यु, विवाह, मोति और प्रतीति से सब ईश्वरके हाथसे बाहर है, केवल अवस्थाका फल है।

नवविधानाचार्य कहते हैं,—ईश्वर चाहे भारतीय दर्म अनुसार निगुण ब्रह्म हो, चाहे यूरोपीय दर्म अनुसार नियमाधीन हो; पर जीव पाद्वन नहीं हो सकता। वे प्राणस्वरूप हैं, सारे संसारमें वर्तमान हैं। यूरोपीय वैज्ञानिक पण्डित लोग उदात्त, तादृश, माध्याकर्षण, पुम्बक और प्राणविक आकर्षण आदिको ही पदार्थिक शक्ति वा अवस्थायत गुण मानते हैं, वे नव विधानाचार्यके मतानुसार उन उन पदार्थोंकी शक्ति स्वरूप हैं—परमभक्तिके ही रूपान्तर हैं। वे प्राण और शक्ति रहने निराकार हैं। वे ही भाव और विन्ता है। अतः वे अनन्त हैं। सारी शक्तियाँ उनसे निकली हैं। हम कारण वे सन्त हैं।

वे अनन्तशक्तिका प्रबलम्बन करते हुए विश्वसंसार बना रहे हैं। बहुतों ने बहुतों तागामण्डलमें ने कर लोटेने लोटे परमाणुपुष्प-तककी वे अपने हाथमें चला रहे हैं। नवविधानाचार्यका यह भी कहना है, कि ईश्वर उनके भक्त हैं पर्याप्त प्रकाशितसे निश्चय तोन भावोंमें

प्रकाशित होते हैं—जिन्हावमें, पुत्रमासमें और पवित्र मासमें। एतके सभी मन्त्रोंका एकका अष्टाक्षर प्रतिपादन करना विविध कर्मकायमें है और इसका प्रतिपादन करना भी विविध कष्टसाध्य व्यापार नहीं है। प्रति मुहूर्तमें प्रति निम्नप्रकारमासमें ये चपने अष्टाक्षरका प्रचार करते हैं। (जिन्हावमें ये इसी प्रकार प्रकाशित होते हैं।) ये छी एकमात्र संभारके एक और भयंकर हैं, इसीसे ये विनाशक शब्द हैं। इसका प्रचार करना महत्त्व नहीं है। एक बार यदि पाकामको और नजर दोड़ाई जाय, तो देखनेमें पाना है कि ये प्रकाश जगत्की सृष्टि केरके जन्मा रहे हैं। एक एक मन्त्र और सूर्य त्रिजोमय तथा गोलाकार है। एतके पार्श्व और कितने एक उपपक्ष घूम रहे हैं। उन नक्षत्रों और सूर्यादिकी गतिके विषयमें यदि एक बार विचार किया जाय, तो विचारगति ध्यायन हो रहती है। इन सब गतिवीरका विषय योद्धा और का देमिए। पृथ्वी सूर्यमें ८३०००००० मील दूर है। सूर्यको यदि एक गोलाकारका अन्धविन्दु मान लें, तो उसका व्यास (Diameter) ८८०००००० मील होगा। व्यास मानूँगे तो पर गोलाकारको परिधि मन्त्रमें स्थिर की जा सकती है। उस व्यासकी २३६ गुना करने पर परिधि निकल आयेगी, अर्थात् २८५०००००० मील होगी। इसी गोलाकारकी परिधि को कर पृथ्वी सूर्यके चारों ओर घूमती है। २८५०००००० मील घूमनेमें पृथ्वीको एक वर्ष लगता है। एतने मील घूमनेमें यदि ३६५ दिन लगते हैं, तो २८ घण्टेमें यह ६००० मील घूमती है। इस विचारके पृथ्वी एक मिनटमें ११६ मील और प्रति मुहूर्तमें १८ मील जाती है। मान लो, जितने समयमें 'एक' गोला, एतने समयमें पृथ्वी १८ मील जगती रहे। यह क्या कल्पनामयिका विषय है? ईश्वरके चपने कार्यमें दिन, रात्रि, मिनट, मुहूर्त और सुहूर्तका अन्वय हीन कर रहा है। जोकि जिस समय पृथ्वी किस स्थान पर रहेगी, सूर्य किस लक्षमें रहेगी, कोन पर कहां रहित हो कर कहां गया होगा, इन सबकी लक्षणा करने हम लोग पाकामको और इष्टिगत करनेमें ऐक्य है, कि जोकि लक्षों समय के एक कष्टमूल्य और सामान्योद व्यापार होते हैं। अन्वयानुके अन्वय एक मुहूर्तका

अन्वय भी अर्ध काँसेकी अन्वयना नहीं। यदि लक्षों बना रहती, तो एतके अन्वयके प्रति हमेंका अन्वय बना रहता। मुहूर्त भरमें अन्वयका अन्वय प्रचार होता रहता। निम्नप्रकारमें सभी कार्य करी है, कोई भी विन्दु बना नहीं है। इसीसे ये प्रति मुहूर्तमें विद्यमान है, एकका प्रचार पाते हैं।

भगवान् विना हो कर जो सब कार्य करते हैं, वे सब चपने जायमें स्थित, हमारे विचारों को जायमें नहीं देते। एक उदाहरण देनेमें मानूँगे जो जायगा। किसी एक लक्षकी और नजर दोढ़ानी। यह जड़ और बाहुने लक्षानुक्रम के प्रतिनित होता है, अन्वयानु यही दिया जायगा किन्तु भी नहीं। यह लक्ष प्रति मुहूर्तमें बढ़ता है। इसका जीवन प्रति पक्षमें, प्रति मासमें और वर्ष में गिराते हैं। यह लक्ष पृथ्वीमें मूल द्वारा हम जोंन कर जाता है और बाहु द्वारा निम्नप्रकारमास दिन लेता है। ये सब व्यापार किन्हीं शक्तिमें सम्पादन होते हैं। एक बार मनुष्यके शरीरको और इष्टिगत करो। हम लोग कार्य करते हैं यह मन्त्र है और कार्य करनेमें हम लोगोंका शरीर भी बढ़ता है। किन्तु लीनका बार भगवान् हम लोगोंके जायमें नहीं रहते। शरीरको शिष्टा लक्षमें लक्ष पक्षित हो जाते हैं, लक्ष क्या हम लोग चपनेको बना सकते हैं? हम समय हम लोग अन्वयानु रहते हैं, किन्तु निम्नप्रकारमासके निम्न एक मुहूर्त भी जायगा नहीं, यह बार भगवान् के कार्य चपने जायमें है। ये हम लोगों के शरीरको एक दिन राम बना रहे हैं। हमका ज्ञान हम लोग कुछ भी नहीं जानते और लक्षों को सकते हैं। ये सब कार्य लक्षानुक्रममें चपने देवते हैं और हमके लक्षों कोन है सो नहीं जानते।

एकमात्र ईश्वर जितने मन्त्र हैं और सभी कार्य बना रहे हैं। यह हम लोग विज्ञानके काम करते हैं। जिस प्रकार लक्षानुक्रमित होता है, जिस निम्नप्रकार में निम्न व्यापार बन रहा है, विज्ञानमात्र ही हम लोगोंको बतला देता है। मान लो—जगत्में और एक लक्ष कार्य चल रहा है। इसी लक्ष लक्ष मासमें प्रसिद्ध है। ये विज्ञान है और जगत्के विज्ञान है, हम लोगोंके लक्षों को लक्षों लक्षों हैं, एतना ही हमने प्रति हम लक्षों का

विश्रांस बढ़ता है। विज्ञान द्वारा यथा संगता है, कि वे सभी व्यवस्थाओं में इन लोगों के भीतर कार्य करते हैं। वे भीतर बाहर सभी जगह वृत्तिमान हैं, बिना उनके कोई भी जी नहीं सकता।

ईश्वरका द्वितीय प्रकाश—पुत्रभावमें। सभी ने ही हम लोगोंको कहा है, कि उनका नियम पालन करना पुत्रका धर्म है। नियम पालन करनेसे पुरस्कार और नहीं करनेसे दण्ड मिलता है। परलोकमें पापका दण्ड और पुण्यका पुरस्कार प्राप्त होता है, यह भी हम लोग उन्हीं से जानते हैं। परलोक नहीं है, इसका प्रतिपाद प्रसिद्ध दार्शनिक सक्नेतिय नहीं कर सके थे।

भगवान् हम लोगोंको विशुद्ध ज्ञानमें आलोकित करने के लिए पिताके राज्यपयकी प्रदोषके निकट प्रकाशित करनेके लिए, बीच बीचमें पुत्रभावसे प्रदोष पर दिखाई देते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि वे मनुष्य हो कर जन्मग्रहण करते हैं। नवविधानाचार्य एक प्रकारके अवतारवादको स्वीकार नहीं करते, बल्कि इस प्रकारके अवतारवादको समूल नष्ट करना ही नवविधान दुषा है, ऐसा बतलाते हैं। अनन्त निराकार ईश्वर किस प्रकार सत्ता हो कर संसारारूपमें जन्म ग्रहण कर सकते ? मनुष्य सभी धर्मोंके पथ सञ्चल करनेके लिए ईश्वरको मनुष्यत्व धारित कर उनके अनन्तत्वकी भाव कर आसते हैं। मनुष्य ईश्वर ही सत्ता है वा ईश्वर मनुष्य हो सकते हैं, यह नवविधानाचार्य स्वीकार नहीं करते। ईश्वर जग देखते हैं, तब सभी मनुष्य नितान्त हीनबल हो जाते हैं। सभी पाप या कर उन्हें अनन्तकी ओर जाने नहीं देते। जड़ पदार्थ आकाशके पक्षमें नितान्त व्याघात हो कर छड़ रहते हैं। उस समय वे पुत्रभाव भेज कर जगत् की पापभारसे मुक्त करते हैं। इस प्रकार भगवान् सैकड़ों बार पुत्रभावमें प्रकाशित हो कर जगत्का उबार करते हैं। किन्तु वे स्वयं गरीररूप धारण नहीं करते। वे अपना एक भाव महापुत्र्यकी प्रकृतिमें प्रविष्ट करा देते हैं। वह भाव उन्हीं का है और वह या कर प्रदोषकी, संसारकी, जड़पदार्थकी भयावृत्त कामना ही विनाश कर आसता है। वे स्वयं पुत्र हो कर अवतारों होते हैं।

महापुत्र्यकी से कर माना प्रकारके कुपकार देखने-

में पाते हैं। ईश्वर अवतारों हुए हैं, यह कहनेमें ही लोग कहेंगे, कि उन्हें कोई पनीतिक कार्य करना उचित है। कोई कोई पनीतिक गद्दका अर्थ पनेपगिक लगाते हैं, किन्तु नवविधानाचार्य इसे स्वीकार नहीं करते।

ईश्वर जन-समाजके उपकारार्थ मनुष्यकी मुक्ति के लिए उनका प्रकाण्ड लक्ष्य पूरा करनेके लिए हमेशा विधान करते हैं। बहुतसे विद्वान् ऐसे हैं, जो धर्मसम्बन्धमें विधान स्वीकार नहीं करते। किन्तु नवविधानाचार्य साधारण विधान और विशेष विधान सुक्तकण्ठसे स्वीकार करते हैं। जो धर्मविधान स्वीकार नहीं करते, वे ही सामाजिक विधान, वैज्ञानिक विधान आदिकी स्वीकार करते हैं। गैनीलिषी, न्यूटन, गार्डाराचार्य आदि महापुत्रोंकी ओर यदि स्थान किया जाय, तो क्या कभी देवगति के ऊपर चविश्वास कर सकते ? कभी नहीं। उनको पसाधारण बुद्धि, ज्ञानको दीर्घ आदि देखनेसे मानून पड़ता है कि वे सब गुण देवगति के सिवा और कुछ नहीं हैं। न्यूटनने जमीन पर फलका गिरना देख कर अनुमान किया था, कि प्रदोष और चन्द्रमामें आकाशगति है। उसी आकाशगति-गतिसे आकाशमें सूर्य यह आदि अपने निर्दिष्ट स्थान पर निवह हैं। ये सब विधाता ही मोता हैं। यदि वे सब विधान हम लोग मान लें, तो धर्मविधान माननेमें क्या दोष है ?

जब ही देखते हैं, कि कोई देव भयानक दुराचारसे आक्रान्त है, चहद्वार आदिमें खोम डुबे हुए हैं, तब ही उन पापोंके मोचन करनेके लिए एक एक महापुत्र्य एक एक विधान से पाते हैं। जब रोम और रोस देगोंमें भयानक पापका राज्य था, तब ईसा परिवाता ही कर आविर्भूत हुए थे। इसी प्रकार धरव देगोंमें पोस्तिकता नष्ट करनेके लिए महम्मद, भारतकी आराधम प्रयाजोधि रक्षा करनेके लिए बुद्ध और बह्मदेयकी आनाभिमानधे बचानेके लिए चैतन्य आविर्भूत हुए।

धर्मराज्यमें धर्म ले कर बहुत विवाद दुषा करता है। सब कोई अपने अपने धर्मको अच्छे बतलाते हैं। इस प्रकार धर्मके साथ तुलना करना महा भ्रम है, सभी धर्मोंमें एक एक विशेष देवभाव है और बहुतसे क्रमस्वार

घोर न बोधधर्म है, वल्कि उसमें ये सभी धर्म हैं। इसी नूतन धर्मका नाम है नवविधान।

१। कोई धर्म कदा न हो, वह मिथ्या नहीं है। सभी धर्मोंमें सार है।

२। सभी धर्मोंमें पर्याप्त उल्लेख श्रेणीका भक्त है।

३। सभी धर्मोंमें पापको शान्ति है।

ये तीनों वचन सुषममान, ईसाई, बौद्ध आदि कोई भी प्रस्तीकार नहीं कर सकता। प्रत्येक पर जितने धर्म हैं वे एक एक मन से करके हैं। कोई धर्म तो ज्ञानका, कोई भावका घोर कोई इच्छाका है। किन्तु नवविधानमें सभी गुण हैं। इन तीनोंको यदि एक साथ किया जाय, तो एक प्रकृत धर्म होता है। जिस धर्ममें ज्ञानकी प्रधानता है, लेकिन भक्ति नहीं है, वह धर्म 'सम्यक्' है और जिसमें भक्ति है, लेकिन ज्ञान नहीं है, वह धर्म 'प्राग्विकमात्र' है। जो धर्म कोई कार्य से कर है, लेकिन उसमें भक्तिकी नदी प्रवाहित नहीं होती, वह शून्य है। वही धर्म 'सर्वाङ्गसुन्दर' है जिसमें उक्त दोनों गुण सम्यक् रूपसे पाये जाते हैं। उस धर्ममें एकका बादर घोर दूधरेका जनादर नहीं है, वल्कि ज्ञान, भक्ति और कर्मयोग ये तीनों गुण प्रकाशित होते हैं। वही मनुष्य श्रेष्ठ है, जिसके मनमें उक्त तीनों भाव समानरूपसे प्रस्तुत हैं। वही धर्म सब धर्मोंमें श्रेष्ठ माना जाता है। नवविधान ही एक ऐसा धर्म है जिसमें सब धर्मोंके सार पाये जाते हैं। एक एक देवभाव से कर एक एक धर्म बना है। किन्तु सभी धर्मोंके देवभाव को कर नवविधान हुआ है। यह सर्वाङ्गसुन्दर धर्म किस प्रकार प्राप्त हो सकता है,—पहली मनका एक भाव स्थिर करना होता है, कोई धर्म ऐसा नहीं है जो अनादरकी दृष्टिसे देखा जाय। विज्ञानमें एक धृतिवृत्तकी भी चपटा नहीं कर सकते। जीवमात्रमें एक कीटका भी मूल्य है। मनुष्यसमाजकी भित्ति नीति है, उस नीतिकी भोत ईश्वरका आदेश है। लोकसमाज प्रतिष्ठित करनेके पहले नीतिकी प्रचार होना आवश्यक है घोर नीतिप्रचार करने में ही ईश्वरकी मानना होना। यदि कोई प्रभावामाव समझ कर उनके शक्तित्वमें शत्रिपक्ष करे, तो उसके लिए भगवान् ने स्वयं कहा है, 'मैं ज'। मनुष्यने सबसे

पहले आदेशशास्त्रका प्रचार किया। ये ही एश्वरवाटके प्रधान-मिथक माने जाते हैं। मुझे निर्वाण-तत्त्वका प्रचार किया। पोछे भगवान् ने उस निर्वाणतत्त्वके पथसे आध्यात्मिक प्रकृतिके निशम चलाये। मनुष्यकी प्रकृतिमें एक एक भाव प्रवृत्त है जो देवभाव भी हो सकता है घोर परभाव भी। परभावका चर्च कामना है। यदि धर्म जीवन लाभ करना हो, तो सभी कामनाओंको दूर कर दो। कामनाको दूर करनेसे ही यह शून्य हो जायेगा। यह शून्य होनेसे प्रकृतिका यह नियम है, कि एक दूसरा पदार्थ बाहरसे या जर उस यह को पूर्ण करेगा। सुतरां भगवान् ने हम लोगोंको कह दिया है कि यदि तुम लोग अपनेकी सुचारना चाहते हो, तो कामनाको दूर हटाओ, मन को शून्य करो। शून्य करनेसे हो देखो कि देवभावने मनमें अधिकार जमा लिया। यही आध्यात्मिक जगत्का प्रधान नियम है। मन कामनाशून्य होनेसे ही क्या उन्नति चरम सीमा तक पहुँच गई? कभी नहीं। कामनाशून्यता ही धर्मपरका पारम्पर्य है। इसी समयसे धर्म जीवन शुद्ध होता है।

मिथ मिथ धर्मोंके भावोंको एकत्र करके यदि उनके भीतर ही कर क्लृप्त्युपे ताड़ित चाड़ित कर दे, तो वह एक ऐसा सन्तत धर्म हो जायगा, जो न तो ईसाई धर्म है, न सुषममान धर्म है घोर न बौद्ध तथा हिन्दू धर्म ही है, वल्कि उसमें ये सभी धर्म विद्यमान हैं। यह जी नूतन धर्म है इसका नाम नवविधान है।

विश्वासियोंके मध्य एकतासाधन करना ही जीवनका एकमात्र कार्य है। एकतासाधन शब्दका अर्थ है ईश्वरमें विश्वास करना। हम लोगोंको विश्वास नहीं होता, हम कारण हम लोग धर्मकी उपकारिता समझ नहीं सकते। भक्तोंके जीवनमें केवल ईश्वरका आधिपत्य प्रबल होता है। प्रत्येक पर जितने महापुरुषोंने अभिप्रेत किया है, मानवजातिका दुःखभार दूर करनेके लिये जो जो महापुरुष जीवन विसर्जन कर गये हैं, उनका जीवन-हत्याना सुचाररूपसे जानना हम लोगोंको उचित है। इसी कारण नवविधानाचार्य तीर्थयात्राका विशेष पालन करते हैं। भारतवर्षमें माना प्रकारके धर्मसत प्रचलित हैं। यदि कोई धर्मनिन्दनोय न हो, तो इस

नवग्रह (सं० पु०) युवक, तरुण, नई शोभावाला ।

नवग्रह (सं० स्त्री०) मृत्यु के बाद विषम दिवसमें प्रती-
हृगक आहविशेष । मरनेके बाद विषम दिनमें प्रतीके
छद्मशमे जो आह किया जाता है, उसका नाम नव-
ग्रह है ।

निर्णयमिन्नुमें लिखा है, कि मृत्यु के पहले, तीसरे,
पाँचवें, सातवें, नवें और ग्यारहवें दिनमें प्रतीके छद्मशमे
जो आह किया जाता है, उसे नवग्रहा कहते हैं । मरने-
के बाद विषम दिनमें नवें दिनके पक्षर एक आह किया
जाता है । कायवश यदि उस दिन आह कर न सके, तो
ग्यारहवें दिन अवश करना चाहिये । इस आहको
विषमग्रह भी कहते हैं । पाँचवें, सातवें, नौवें, नवें
दशवें वा ग्यारहवें दिनमें जो आह किया जाता है, उसका
नाम नवग्रह है ।

काव्यायनके मतसे—चौथे, पाँचवें, नवें, तथा ग्यारहवें
दिनमें प्रतीके छद्मशमे किये जानेवाली आहका नाम नवग्रह
है । इस नवग्रहात्ममें पहले दो दो करके पिण्ड देना
चाहिये, शेष लगेप दिनमें एक पिण्ड देनेका विधान है ।
यह नवग्रहा मलमासमें भी हो सकता है । नवग्रहाक्षिप्त
कीई वस्तु क्यों न हो, उसे न खाना चाहिये ।

प्रायश्चित्त-विवेकमें लिखा है, कि यह नवग्रह पाहि
ताम्रिदोका भी होगा । चौथे, पाँचवें, नवें और ग्यारहवें
दिनमें जो आह होता है, उसे नवग्रह कहते हैं । यह
नवग्रह पाहिताम्रिदोका मलमासमें भी होना
चाहिये और अगुम ब्राह्मणोंकी भोजन कराना
चाहिये । यह नवग्रह साग्निक ब्राह्मणोंके लिये भी
वतकाया है ।

नवपट (सं० स्त्री०) छः गुणित नवसंख्या, यह संख्या
जो छः और नीके गुणा करनेसे बनती हो ।

नवपटि (सं० स्त्री०) नवाधिका पटिः । जनसंप्रति संख्या,
६८ संख्या । २ तसंख्यायुक्त । (त्रि०) है ६८ संख्याका
पूरण, उनहत्तरवा ।

नवसंगम (सं० पु०) प्रथम समागम, नवाभिलाप, पति-
से पत्नीकी पहली मीठ ।

नवसंहाराम (सं० पु०) बौधविहारमैद, बोद्धोंके एक
विहारका नाम ।

नवसप्त (सं० पु०) नौ और सात, सोलह सप्तार ।

नवसमति (सं० स्त्री०) नवाधिका सप्ततिः । जनामीति
संख्या, सप्त्यासो संख्या, ७८ ।

नवसप्तदश (सं० पु०) नव च सप्तदश च, समाप्तान् ८ ।
अतिरात्रयागमद । पुत्राभिनायो यह यज्ञ करता है ।

नवसर (सं० पु०) नौ सप्ताहवार ।

नवसारा—१ बड़ोदा राज्यका एक प्रान्त वा जिला । इससे
उत्तरमें भरोच और रेवाकाण्डा-एजमो ; दक्षिणमें छरत
जिला, बाँसरा और दानस; पूर्वमें छान्देस और पश्चिममें
छरत तथा चरबसागर है । इसका भूपरिमाण १८५२
वर्गमील है । यहाँ किम, तापतो, मिनघोल, पूर्णा और
पश्चिका नदो बहती हैं । इसमें छः शहर और ७७२ ग्राम
भगते हैं । लोकसंख्या प्रायः ३००४४१ है । मैकहें पोछे
७५ मनुष्य गुजरातो भाषा बोलते हैं । ज्वार, धान, गेहूँ,
बाजरा, कीदो, नागकी, मटर, चना, कड़ई, तमाकू, ईख
और जेला ये सब यहाँके प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं ।

यह प्रान्त जङ्गलके लिए प्रसिद्ध है । जङ्गलका रकबा
५४७ वर्गमील है और लाखोंकी घासभूसो होती है ।
यहाँ पक्के पक्के झरो कपड़े बुने जाते हैं । यहाँ यहाँ-
का प्रधान व्यवसाय है । राजस्व १८ लाख रुपयेमें पश्चिम-
का है । विद्यापिशाकी जिलेमें विशेष उन्नति है । यहाँ दो
हाई स्कूल, तीन एङ्गलो-वर्नाकुलर स्कूल और २११
वर्नाकुलर स्कूल हैं ।

२ उक्त प्रान्तका एक तालुक । भूपरिमाण १२५
वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ५८८७५ है । इसमें नव-
सारी नामक एक शहर और ६० ग्राम भगते हैं । यहाँ
दो नदियाँ बहती हैं, उत्तरमें मिनघोल और दक्षिणमें
पूर्णा । ज्वार, धान, कड़ई और ईख ये सब यहाँके प्रधान
उत्पन्न द्रव्य हैं । राजस्व २१०८००, ६० है ।

३ उक्त तालुकका एक शहर । यह पचा० २०° ५०'
उ० और देगा० ७२° ५६' पू०, बम्बईसे १४० मीलकी
दूरी पर अवस्थित है । यह एक बहुत प्राचीन शहर
है । योक्त भौगोलिक दृष्टिसे इसका नाम मगरिया रखा
है । यहाँकी जनसंख्या लगभग २१४५१ है जिनमेंसे
हिन्दू, सुसलमान और पारसीको संख्या सबसे अधिक
है । पारसके कुछ जोरोस्त्रियन (Zoroastrian) ने जब

। खोड्डिग मान्यदेवके पक्षिपति राष्ट्रकूटके सिवा और कोई नहीं थे।

२. वाक्पतिके बाद उनके भाई सिन्धुराज राजा हुए। ये नवसाहसिक और कुमारनारायण नामसे विदित हैं। उदयपुरकी प्रशस्तिमें लिखा है कि इन्होंने गुण-सौगोंकी परास्त किया था। नवसाहसिकचरितमें उपजयके सिवा कोमल, वागवृ, लाट, मुरल खादि देवोंकी नयकी बातें भी लिखी हैं। यह वागवृ प्राधुनिक राज-प्रान्तोंके अन्तर्गत छुड्डरपुर है। मूरखदेश केरलका नामान्तर है। नवसाहसिकचरितमें लिखा है—नर्मदा-केनारसे ५० गज्युति दूर राजावती नामक एक नगर है जहाँ किसी समय ब्रह्माङ्ग नामक एक चसुर रहता था। यह चसुर नागराजकुमारी यशोवतीकी घर लाया था। सिन्धुराजने उस चसुरकी मार कर राज-कुमारीका उद्धार किया था। उस युद्धमें जिन्नाधरो ने सिन्धुराजकी सहायता की थी।

यशोवती नामक सिन्धुराजके एक मन्त्री थे जिनको उपाधि रामाङ्ग थी। प्रबन्धचिन्तामणि पदनेसे मालूम होता है, कि सिन्धुराज पहले पहल बड़े हो दुर्दान्त थे। वाक्पतिने इनके परयाचारसे विरक्त हो कर इन्हें राज्यसे निकलवा दिया था। सिन्धुराज गुजरातमें जा कर रहने लगे। कुछ दिन बाद वे पुनः भार्येसे युक्ताये गये, किन्तु राज्यमें कदम रखते न रखते फिरसे उत्पन्न भयाने लगी। इस पर वाक्पतिने इन्हें काठके पिंजरेमें बन्द कर रखा। इसी बन्दो अवस्थाके समय सिन्धुराजके पुत्र भोजने लक्ष्यग्रहण किया। जवान होने पर भोजने वाक्पतिकी सावधान हो जानिकी सूचना दी। इस पर वाक्पतिने भोजका मिर काट डालनेका हुक्म दिया। भोजकी अब इसकी धर लगी, तब उन्होंने अपने चाचाके पास एक कविता लिख भेजी। कविता पढ़नेसे ही वाक्पतिके हृदयमें स्नेहका सञ्चार हो पाया और उन्होंने भोजको योग्यराज्यमें अभिषिक्त किया। तत्पश्चात् वाक्पति मारे जाने पर भोज सिंहासन पर बैठे। नवसाहसिकचरितमें इनकी बन्ध्या देखी जाती है।

नवसाहसिकचरितकार परमेश दोनो भाइयोंके राजत्व-कालमें ही राजकवि थे। सिन्धुराजने इन्हें कविराज की उपाधि दी थी।

सिन्धुराजने अपने मन्दिर बनवाये। सिन्धु-रामेश्वरका मन्दिर भी उन्होंने बनाया हुआ है। नवसाहसिकचरितमें लिखा है, कि सिन्धुराजके वैदेशिक युद्धमें प्राण गये थे। उनकी अत्युक्ते बाद राजधानी धारांगनगर शत्रुओंके हाथ लगा। सिन्धुराजने कम तर्क राज्य किया, मालूम नहीं।

नवसाहसिकचरित—नवसाहसिक देखा।

नवसिखा (हि० पु०) नवसिखा देखो।

नवसू (सं० स्त्री०) नव सृति सु-विश्रु। अभिनवप्रसवा स्त्री और गो, वध औरत और माय जो शत्रुमें विधार्द्र हो। नवसूतिजा (सं० स्त्री०) नवा सृति: प्रसवो यस्याः वा कपः। १ धेनु, माय। २ नवप्रसवा स्त्री।

नवाहत—दाक्षिणात्यवाचो एक श्रेणीके सुमलमाग। लगभग सवा तीन सौ वर्ष हुए, ये अवधि भारतमें आये थे। ये अन्ध्याश्रय सुमलमानोंके साथ गये। आये हैं, हमलिये इनका नाम नवाहत पड़ गया है। ये सभी सुपुत्र होते हैं, और इनके शरीरका रंग गोरा होता है। इनकी स्त्रियां बहुत ही सुन्दरी होती हैं; उनके शरीरका रंग दूधिया गुलाबी—देखनेमें अत्यन्त रमणीय होता है। इनमें ऐसी किम्बदन्ती है कि “हजार वर्षसे भी अधिक समय हुआ, सिध्दाकके शासनकालमें दामि-वर्गोय किसी किसी व्यक्तिको फारससे निकाल दिया था। उनमेंसे कितने ही तो परिवार-सहित जहाजमें बैठ कर पारससागरके मार्गसे भारतके पश्चिमार्धमें, काह-न-प्रदेशमें और कितनेको कन्याकुमारीमें उतर पड़े। पूर्वोक्त व्यक्तियोंके वर्गधर नवाहन कहलाते हैं और शेषोक्त व्यक्तियोंके सम्बन्ध” इस प्रकारके सम्बन्ध लोग अपना परिचय देते हैं और अपनेको नवाहत वर्गके बता-लाते हैं, किन्तु सम्बन्धोंकी प्राकृति देखनेसे यह सिद्धा प्रतीत होती है और मालूम होता है कि ये पक्षीगोय हैं। नवाहत लोग सम्बन्धोंको अपने वर्गका नहीं मानते। उन लोगोंका कहना है, कि सम्बन्ध लोग उनके पूर्वपुरुषके रक्त हुए क्रीतदास और क्रीतदामियोंके वर्ग-धर हैं। नवाहत लोग भारतीय अन्य-सुखमानों वा उच्च सम्पदायोंके साथ-से वास्तविक-सुत्रसे आया नहीं हुए हैं। इसलिए इन अर्थोंमें पक्षीगोय पक्षपुत्रोंका

इस प्रकार मंथादि नौ राशियोंके च'शक्तममे जिन जिस राशिका जो जो यह अधिपति होता है, वे हो उन सब च'शो'के अधिपति होते हैं। इस प्रकार मकर, हय और कन्या इन तीन राशियोंके मकरादिसे; तुला, कुम्भ, मिथुन इनके तुलादिसे और कर्कट, हस्तिक तथा मीन इन तीन राशियोंके कर्कटादिसे नवांशकी गणना करनी होती है।

१. हस्तिक—मेघ लग्नका परिमाण ४।७० विपल है। इसका नवां भाग २७ पल २७ विपल २६ चतुपल और ४० प्रत्यनुपल होता है। इसका प्रथम च'श मेघ है, मेघका अधिपति मङ्गल है, अतएव मङ्गल ही इस प्रथमशका अधिपति होगा। सुतरां उक्त २७ पल २७ विपल २६ चतुपल और ४० प्रत्यनुपलमें यदि किसी बालकका जन्म हो, तो उस जात बालकका मङ्गलके नवांशमें जन्म हुआ है, यह स्थिर करना होता है। यह समय जीत जाने पर यदि ५४ पल ५४ विपल ५३ चतुपल और २० प्रत्यनुपलमें जन्म हो, तो मेघका द्वितीय च'श हय है और हयका अधिपति शुक्र है। अतएव इस समय जात बालकका जन्म शुक्रके नवांशमें हुआ है, ऐसा जानना चाहिये। जन्मः ४।७० विपलसे ले कर मेघ लग्नके पूर्ण तक च'शाधिपकी गणना करनी होती है। इन अवशिष्ट राशियोंका नवांश करके गणना करते हैं, नवांशके अधिपतिकी सहजमें जाननेके लिए एक चक्र दिया गया है। इसे देखनेसे ही किस च'शमें कौन यह अधिपति होगा, यह सहजमें मालूम हो जायेगा।

नवांशफल—मंथादि द्वादशलग्ने नवांश द्वारा जात बालकके चरित्र, भावति और चिन्तका विचार किया जाता है। यदि नवांशका अधिपति यह सबसे अधिक बलशाली हो, तो बालकके नवांश कायित चिन्तादि हुआ करते हैं और इस समय चन्द्र यदि सबसे अधिक बलशाली हो, तो बालकके नवांशोक्त स्वभावादि न ले कर चन्द्राधिष्ठित राशिका जो भा लक्षण लिखा है, वही सब फल होगा।

नवांश द्वारा जातबालकके केवल फलाफलकी गणना की जाती है, मो नहीं; इससे प्रत्यविषयक फलाफलका विचार भी किया जाता है।

नवाङ्क (हि० स्त्री०) विनीत ज्ञानिका भाव।

नवागढ़—पञ्चाङ्कके अन्तर्गत बगलहर राज्यका एक दुर्ग। यह मोरलका कान्दा नामक पर्वतश्रेणीके पूर्व-दक्षिणमें एक ऊँचे बाँधके ऊपर पचा० ३१° १५' ४०" और देशा० ७७° ४०' पू०के मध्य अवस्थित है। १८१४—१५ ई०में मोरलानुद्धके समय मोरलवा लोमोने इस दुर्ग पर अपना अधिकार जमाया था। किन्तु जब बगलहरके लोमोने दुर्ग चेर लिया, तब दुर्गस्थ मोरलवा सेनाओंने पालसमर्पण किया था।

नवागत (सं० त्रि०) जो अगो आया हो, नया आया हुआ।

नवागायन—चन्द्र और रायपुरके बीचमें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहाँ देशराताल नामक एक सुन्दर पुष्करिणी है। इस पुष्करिणीके पूर्वी किनारे पर अनेक देवालये हैं। प्रवाद है, कि सोताराम और वीणाराम नामक दो ब्रह्मियोंने मिल कर ये सब मन्दिर बनवाये थे।

नवाङ्क (सं० त्रि०) नवविध चक्र यक्ष। १ नवविध चक्रयुक्त। (स्त्री०) २ सोड, पोपल, सिर्वा, बड़, चट्टा, चावला, चाव, चौता और बावविड़ङ्ग। ये नौ पदार्थ। ३ पावनविशेष, सोड, चन्द, चन्द, भूमिस्थ और पञ्चमुनी इन सब द्रव्योंको मिश्र कर कपाय तैयार करनेसे जात और पित्तोद्भव ज्वर निवृत्त होता है।

नवाङ्का (सं० स्त्री०) नवाङ्क-टाप। कर्कटशुद्धो, दाकड़ा-सिंगी।

नवाज (फा० वि०) दया दिखानेवाला, क्षमा करनेवाला। इस च'शमें इस शब्दका प्रयोग केवल धार्मिक शब्दोंके अन्तर्में होता है, जैसे गरीब-नवाज, बंदा-नवाज।

नवाजिय (फा० स्त्री०) क्षमा, दया, मेहरबानी।

नवाजिय, खाँ—१ एकबरकी समाके पाँचहजारी मनसबदार सैयद खाँके पुत्र सादुल्ला खाँका १०१० हिजरी यन्में नवाजिय, खाँ नाम पड़ा।

२ गुजरातराज्य नामक पारस्य राज्यके प्रदेता।

नवाजिय मेहरबान—टाकाका एक नवाब, पसोवर्दी खाँके जमाई।

नवाङ्का (हि० पु०) एक प्रकारकी नाव।

दिन आह करके नया-अनाज-खाना-चाहिये। धान पकने पर उसकी चावलसे देवता और पितरों को निवेदन करके नया भस्म आनेका विधान है। शास्त्रमें नवावर्णन का व्यवहृत स्थिता वतसाई गई है।

“नवीदके नवाक्षे न यद्वप्रच्छादने तथा।

पितरः इद्वद्वप्रच्छादनात्सु-मपासु च ॥” (याज्ञवल्क्य)

नवीदक अर्थात् वर्षापकमानमें, नवाक्ष अर्थात् नया भान पकाने पर और यद्वप्रच्छादन आदिमें पिष्टवण अथवा लिये-प्रायेणा करते हैं। नवाक्षमें पितरों के लक्ष्मणसे पावण विधि द्वारा आह करना होता है।

विना नवाक्ष आह किये जो नया भस्म खाता है, वह पापका भागी होता है। यह नवाक्ष विशेष दिनमें करना आवश्यक है। इसका विषय ज्योतिःशास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—

सूर्य-विश्रावा नक्षत्र गत-होनेसे त्रयोदशो, रिक्ता और नक्षत्रातिथिमें, शनि, मङ्गल और शुक्रवारमें, चैत्र, पौष और कार्तिक मासमें, हरिश्चन्द्रमासे, कृष्णपक्षको शुक्लपक्षमें,

पक्षमा और ज्येष्ठ-चन्द्रमें तथा ज्येष्ठमासमें, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफल्गुनी, मघा, भरणी, अश्लेषा और आश्विनमासमें नवाक्ष आह वा नवाक्षमचय नहीं करना चाहिये, कानिसे पुत्र और अर्थका भाग होता है। इनके विना और सब तिथियों, नक्षत्रों और वारादिमें नवाक्ष

आह वा नवाक्ष मचय प्रशस्त है।

जो आह करनेमें असमर्थ है वा आहके अनधिकारी हैं उन्हें देवता और ब्राह्मणको दाग करके नया भस्म खाना चाहिये। विधवाओं के लिए यही नियम जानना चाहिये, क्योंकि वे नवाक्ष आहको-अनधिकारी हैं।

पक्षसे कहा जा चुका है, कि धान पकने पर नवाक्ष-गमकाल उपस्थित होता है। यह नवाक्ष आह प्रत्येक व्याहिका कक्षा में नहीं है। घरके जो सुखिया हैं अर्थात् जो पार्वण आहके अधिकारी हैं, पक्षसे अर्थको पार्वण आह करके नया भस्म खाना चाहिये, पक्षसे घरवालों को।

ज्येष्ठानक्षत्रके विषाहमें सूर्यके गमन समयका नाम शुक्लपक्ष है। जलिका, ज्येष्ठा, मूला और पूर्वाभाद्रपदमें नया भस्म नहीं खाना चाहिये, किन्तु नवाक्ष आह कर सकते हैं। आह करनेके बाद नया भस्म आनेको विधि है।

सही विधानके अनुसार आहकर्त्ता दक्षिण-मुख नवीदन-को ब्राह्मणसे अभिमुखित करा कर खा सकता है।

जो आह करनेमें निष्कुल असमर्थ है, वे देवता और ब्राह्मणको दे कर तथा पितरों के लक्ष्मणसे भोज्यो-प्यर्ग करके नया भस्म खा सकते हैं। इसे गोपकल्प जानना चाहिये। अगहन, माघ और फागुन ये तीन मास नवाक्षके लिए प्रशस्त हैं। यदि इन तीन मासों में न कर सकें, तो वैशाखमासमें नवाक्ष-आह करके नया भस्म खा सकते हैं।

यह नवाक्ष-निमित्तक पार्वण आह नये-चावलसे किया जाता है। यदि आरोग्ययोगी नया चावल न मिले, तो पुराने चावलसे काम चल सकता है।

नवाक्ष (अ. पु.) १ वादमाहका प्रतिनिधि जो किसी बड़े प्रदेशके शासनके लिए नियुक्त हो। २ एक छपाई जो राज-कल कोटि मोटे सुपुत्रमानो राज्यों के सांख्यिक अपने नामके साथ लगती है। ३ एक छपाई जो भारतीय सुपुत्रमान-परीशद की अंगरेजी सरकारकी ओरसे मिलती है और जो प्रायः राजा की छपाईके समान होती है। (वि.) ४ जो बहुत शास्त्र-शोकित और अमोघी

दंगसे रहता हो तथा खूब खर्च करता हो।

नवाक्षगच्छ—१ युक्तप्रदेशके बरेली जिलेकी एक तहसील। यह अक्षांश २५°४३' और २७°०' उ० तथा देशांश ८१°१' और ८१°२६' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १६१ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः २५४२६० है। यहां रोहिलसण्डका कृषिक्षेत्र बहुत समृद्ध बड़ा है। बीच बीचमें अनेक नदी और नहर हैं। यहांकी देवदा, पछरा, पड़नि, काधुल, नकतिया, देवराजिया आदि नदियां प्रधान हैं जो पूर्वसे पश्चिमकी बह गई हैं। इसमें १०१ ग्राम लगते हैं। शारद ग्रंथों में धान, ऐंघ, बाजरी और वासन्ती ग्रंथों में गेहूं और जो-मधान है। नवाक्षगच्छ, मेखन, बरौर, हाकिमगच्छ आदि स्थानों में बाट लगती है। बरेलीसे दोसोनीत तक पक्की सड़क चली गई है।

२-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

३-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

४-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

५-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

६-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

७-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

८-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

९-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

१०-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

११-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

१२-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

१३-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

१४-उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षांश २६°५२' उ० और देशांश ८२°१५' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १४४० है। यह नगर नवाक्ष भागकटहोनासे बसाया है। सिपाहीविद्रोहके समय सर होप प्रायः

देगां ७५' ४०' से ७६' १६' पू० के मध्य सतलज नदीके उत्तरीय किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ३०४ वर्ग-मील और लोकसंख्या १८६३२८ है। इसमें नवाशहर, राहोन और बड्ड नामके तीन शहर और २७४ ग्राम लगे हैं। ग्रामटनी चार लाख रुपयेमें अधिककी है। गेहूं, ज्वार, चना, जौ, ईख और फर्रि ये सब यहांके प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं।

२ सतल तहसीलका एक शहर। यह भत्ता ३१' ८' ७" और देगां ७६' ७' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ५६४१६ के लगभग है। मुगल-सम्राट् बाबरके समयमें नौशेर खां नामक एक चफगानने इस नगरको बसाया है। यह शहर दिनी दिन उत्पत्ति कर रहा है।

३ उत्तर-पश्चिम प्रदेशके हजारा जिलेके पन्तर्गत पबोटावाड तहसीलका एक शहर। यह भत्ता ३४' १०' ७" और देगां ७६' १६' पू०, पबोटावाडसे ३ मील पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या ४११४ है। यहांके सक्रिय व्यवसायी ही मैसमके खनिज खणनका व्यवसाय करते हैं, विनायती कापड़ें बना कर सुजपकरावाड और कामोरीमें भेजते हैं तथा कामोरीसे घो बाने हैं।

नवाग्नीति (सं० स्त्री०) नवाधिका अग्नीतिः। नव अधिक अग्नीति संख्या, नौ और अस्त्रोंकी संख्या, ८८।

नवासा (फा० पु०) दौहित्र, भैयाका भैया।

नवाधिका (सं० स्त्री०) मात्रावृत्तभेद, एक प्रकारका वर्णवृत्त।

नवासी (हिं० वि०) १ नौ और अस्त्री, एक काम करने। (पु०) २ नौ और अस्त्रीकी संख्या, ८८।

नवान्न (सं० पु०) नव घस; टब् ममासान्तः। १ नव दिन, किसी समाह, घस, मास या वर्ष आदिका नया दिन। २ नव दिनका माध्य यागादि, एक प्रकारका यज्ञ जो नौ दिनमें समाप्त किया जाता है। ३ रामायणका यह पाठ-जो नौ दिनमें समाप्त किया जाता है।

नवि (हिं० स्त्री०) वह रहस्य जिससे गांधी के पैरों में चढ़ेका मंशा बांध कर दूध दूहते हैं, नोई।

नविका (सं० स्त्री०) नवोऽस्त्राख्या इति नव-ठन्-टाप्, नवि नव कायति इति वा। नवशब्दयुक्ता, वह जिसमें नौ शब्द पाये हो।

नविन् (सं० स्त्री०) १ नौ संख्याका युग्मक। २ नवमंख्या युक्त, वह जिसमें नौ संख्या हो।

नविपुना (सं० स्त्री०) वैदिक कण्ठभेद, एक प्रकारका वैदिक कण्ठ।

नविष्टि (सं० स्त्री०) नवा इष्टिः वेदे गन्तव्यादित्वाद-लोपः। अभिनव इष्टिभेद।

नविह (सं० वि०) पतिग्रयेन नविता स्तोता इहन् लपो-लोपः। पत्युक्त स्तोतृतम।

नविकवि—एक हिन्दी-कवि। इसीने 'नवग्रिह वर्णन' पर एक ग्रन्थ बनाया है।

नवीगञ्ज—१ युक्त प्रदेशके मेनपुरी जिलेका एक ग्राम। यह भत्ता २७' ११' ५०' ७" और देगां ७७' २५' २५" पू० के मध्य, गेण्डाहा रोडके ऊपर अवस्थित है। जनसंख्या १५०० है। हिन्दूकी संख्या ही सबसे अधिक है। यहां एक सराय है। २ बङ्गालदेशके यो-हट जिलेका एक ग्राम। यह सुर्मानदीकी बाएँ नामक शाखाकी बगलमें अवस्थित है। यहांसे चावल, मीतल-पाटो और नाना प्रकारके तेलहन अनाजोंकी रफ्तानी होती है।

नवीन (सं० वि०) नवमेव नव-अन्त्यः आदेशः। १ नूतन, नया। २ अर्जुन, विद्यमान। ३ तरुण, जवान, नवयुवक।

नवीन—मिर्जा प्रह्लादे पैगू विभागके पन्तर्गत प्रेम जिलेकी एक नदी। उत्तर नवीन और दक्षिण नवीन नामक दो शाखाओंके मिलनेसे इस नदीको उत्पत्ति हुई है। पैगूके पन्तर्गत योसापर्वत पर पा-दोकाशुङ्गके उत्तरमें इसकी उत्तरी शाखा निकली है। यो-सा पारमे बाघ कोम दूरमें दो शाखाएँ बापसमें मिल गई हैं। दक्षिणी शाखा भी इसी शृङ्गके दक्षिणसे उत्पन्न हुई है। प्रेम-नगरके निकट यह नदी इरावतीमें मिल गई है। योसापर्वत परसे इसी नदी द्वारा लकड़ी बहा कर लाते हैं।

नवीन कवि—हिन्दीके एक कवि। इनकी गचना उत्तम कवियोंमें होती थी। इनके बनाए शृङ्गारसके सुन्दर कवित्त पाये जाते हैं।

नवीनचन्द्र राय—हिन्दीके एक कवि। सन् १८८४में इनका जन्म हुआ था। श्रीश्यामश्याम ही इनके पिता-को मृत्यु हो जानेसे इनकी शिक्षा अच्छी न हो सकी,

पथीन पंगरीजी सेना कई बार यहां सांग्रिमें लड़ी थी। १८१८ ई० में यहां म्युनिमिपलिटो स्थापित हुई है। शहर में एक बाढ़ ब्रह्म, चार दूसरे दूसरे ब्रह्म और तीन मराठ हैं। इसके सिवा मर्दा और चौरतके निये लग्न चलाय चित्रालाय है। पनाज और कपड़े का व्याप्य भी ज़ीरो में चलता है।

१ पयोध्याके वागावली जिल्हा एक परगना। इसके उत्तर में रामनगर और कर्नेरपुर, पूर्व में दरियाबाद; दक्षिण में प्रतापगञ्ज और पयिम में देवा परगना है। म्युनिमिपल ७२ वर्ग मील है। कल्याणो नदी इस परगनेके उत्तर की ओर बह गई है। यहां चीनी और सुनी कपड़े का व्यवसाय ही प्रधान है।

नवाबगञ्ज शहर गारावली शहरके समोप की मल्लमके माढ़े पास कोम पूर्व में अवस्थित है। इसके निम्न की ओर कसुरिका नामकी नदी बह चली है। इसके निकट बर्ली स्थान समुद्र है। शहर में १४ हजार लोगोंका वास है। जिनमें हिन्दूकी संख्या भी सबसे अधिक है। चीनी और कपड़े का व्यवसाय अच्छा चलता है।

४ पयोध्याके गीण्डा जिल्हाकी तारागञ्ज तहसीलका एक परगना। इसके उत्तर में मराठे और सांग्रिपुर, पूर्व में युक्त-प्रदेशका बर्ली जिल्हा, दक्षिण में घर्वा गढ़ो तथा पयिम में दिगमर और मराठे परगना है। म्युनिमिपल १४२ वर्ग मील है। गत मराराज मानसिंह के, सी. एम. चार्ड, यहांके प्रधान तालुकदार थे।

५ उक्त परगनेका एक शहर। यह पचा० २६°५२'२०" और देशा० ८२° ८' पू० गीण्डा में फैलावादेके रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या ७०४० है। १८वीं शताब्दी में नवाब गुलाब-उद्दौलाने यह नगर बसाया था। यहां एक बहुत बड़ा बाजार है। जिनमें मरमें यही बाजार सबसे बड़ा है। चावल, तेलहर बीज, गेहूँ, गोबरम पादिका व्यवसाय जोरोंमें चलता है। मिर्जापुर और भाग्यबलानगरसे यहां लकड़, विलायती कपड़े और अन्य वस्तुआदिकी बामदगी जाती है। यहां मिर्का टी स्टूल है।

६ पयोध्याके उनाव जिल्हाका एक शहर। यह उनाव शहरमें ६ कोम उत्तर-पूर्व मल्लमके रास्ते पर स्थित है। जनसंख्या प्रायः २६०० है। पहले यहां तहसील

की एक सदर कचहरी थी। चैतमासके देवमें दुर्गा और कुमारीदेवोके उद्देशसे एक भारी मेला लगता है। जगननज और कानपुरमें बहुत लोग इस मेलेमें लुटते हैं।

७ पुर्निया जिल्हाका एक गाँव। यह पुर्नियामें १० कोम गङ्गादे किनारेसे ६ कोसको दूरी पर अवस्थित है। इस घाममें दूपरे किनारे गङ्गाके तीरे पर अवस्थित सुप्रसिद्ध नाहमगञ्ज है। राजमहलमें पुर्निया तक जो सड़क गई है वह पहले डाकुओंमें भरो रहती थी। इस कारण उन्हें दमन करनेके लिये राजमहलके नवाबने यह शहर बसा दिया है। यहां प्राचीन किलेका भग्नावशेष देखनेमें आता है। चावल, पटसन, तमाकू, मोक और सेलहन पनाजकी यहांमें रफ्तानी होती है।

नवाबगढ़ा (फा० पु०) १ नवाबका पुत्र, नवाबका बेटा।

२ वह जो बहुत गोलोम हो।

नवाबपमन्द (फा० पु०) भादोंके चला या क्षारके चारफने होनेवाला एक प्रकारका धान।

नवाबो (हि० स्त्री०) १ नवाबका पद। २ नवाब कीनेकी दगा। ३ नवाबोंका शासनकाल। ४ नवाबका काम। ५ नवाबोंकी की दुकमत। ६ एक प्रकारका कपड़ा जिसे पहले घमोर लोग पहना करते थे। ७ बहुत अधिक बसीरों या बसोरोका-सा अवस्था।

नवाबम (स० स्त्री०) भवभाना आयना यत्र। बीबभेद, एक प्रकारकी दवा। प्रद्युत प्रवाली—बिजट, बिजना, मोथा, चीतामूल और विड्डा प्रत्येक एक एक तीता, मोठा नो तोना इन्हे जल्दी पीस कर गोदी बनाते हैं। १ रत्ती में केरकमगः ८ रत्ती तक मात्राको व्यवसा है। यह वाण्टू और कमनशई रोगोंमें मधु और पीने माय सेवनीय है। (मिथ्यारवावली वाण्टूगो०)

नवारा (हि० पु०) एक प्रकारकी बड़ी नाव।

नवारी (हि० स्त्री०) नवारी देवी।

नवाचिन् (स० पु०) नव चर्चोंपि यत्र। १ मङ्गलपद। (स्त्री०) नव जनन चर्चिः। २ नवशिक्षा।

नवागणन—मविथगण्टोका बिहारके चलागं, घाममिपि। यहांके मूमिहार मण्डलमें बसते हैं।

नवाग्रहर—१ पन्नाके चलागं जालापर जिल्हाके दक्षिण पूर्व तहसील। यह पचा० २०°१८' में ८१°१०' और

देगा ०५' ४०' से ०६' १६' पू० के मध्य संतनज नदी के उत्तरीय किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ३०४ वर्ग-मील और लोकसंख्या १८६३३८ है। इसमें नवाग्रहर, राधोन और बड़ नाम के तीन शहर और २०४ ग्राम लगते हैं। ग्रामटनी चार लाख रुपये में अधिक की है। गेह, ज्वार, चना, जौ, ईश और कूई ये सब यहां के प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं।

२ सप्त नक्षत्रोत्तका एक शहर। यह पचा० ३१' ८' ८" और देगा ०६' ७' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ५६४१ है लगभग है। सुगल-सखाट, बाबर के समय में नौशेर खां नामक एक भक्तगानने इस नगर को बनाया है। यह शहर दिनों दिन उत्पत्ति कर रहा है।

३ उत्तर-पश्चिम प्रदेश की हजारा जिले के पन्तर्गत पबोटावाद तहसीलका एक शहर। यह पचा० ३४' १०' ८" और देगा ०३' १६' पू०, पबोटावाद से ३ मील पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या ४११४ है। यहां के पशुधन व्यवसायी हैं मीलम के खनिज खननका व्यवसाय करते हैं, विलायती कपड़े मंगा कर मुजफ्फराबाद और काशी में भेजते हैं तथा काशी से घो लाते हैं।

नवाभीति (सं० स्त्री०) नवाधिका पशोतिः। नव अधिक पशोति संख्या, जो और पशोको संख्या, ८८। नवासा (फा० पु०) दोहिन, बैठोका बैठ।

नवासिका (सं० स्त्री०) मात्रावृत्तिभेद, एक प्रकारका वर्णवृत्त।

नवामी (हिं० दि०) १ जो और पक्षी, एक काम नब्बे। (पु०) २ जो और पक्षी की संख्या, ८८।

नवाह (सं० पु०) नव अक्षरः टव्, ममासान्तः। १ नव दिन, किसी समाह, पक्ष, मास या वर्ष आदिका नया दिन। २ नव दिनका माध्य यागादि, एक प्रकारका यज्ञ जो नौ दिनमें समाप्त किया जाता है। ३ रामायणका वह पाठ-जो नौ दिनमें समाप्त किया जाता है।

नवि (हिं० स्त्री०) वह रस्सी जिससे गाव के घेरने बद्धेका गला बांध कर दूध दूतते हैं; जोड़।

नविडा (सं० स्त्री०) नवीन्द्राव्या इति नव-उन्-टाघ्, नवि नव व्यापति इति वा। नवशब्दयुक्ता, वह जिसमें नौ शब्द पाये जाते हैं।

नविन् (सं० स्त्री०) १ नौ संख्याका गुणक। २ नवसंख्या युक्त, वह जिसमें नौ संख्या हों।

नविपूना (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोभेद, एक प्रकारका वैदिक छन्द।

नविष्टि (सं० स्त्री०) नवा इष्टिः वेदे गन्ताध्यादित्वाद-लोपः। अभिनव इष्टिभेद।

नविष्ठ (सं० लि०) पतिग्रयेन नविता स्तोता इष्टन् तपो-लोपः। पत्युक्त स्तोत्रतम।

नविकवि—एक हिन्दी-कवि। इनकी 'नवग्रिह वर्णन' पर एक पद्य बनाया है।

नवोग्रह—१ युक्त प्रदेशों में नपुरी जिलेका एक ग्राम। यह पचा० २०' ११' ५०" ८" और देगा ०७' २५' २५" पू० के मध्य, बैष्णुगढ़ रोड के ऊपर अवस्थित है। जनसंख्या १५०० है। हिन्दू की संख्या ही सबसे अधिक है। यहां एक सराय है। २ ब्रह्मादित्य के ज्योतिष जिलेका एक ग्राम। यह सुमनदी की बाएँ नामक शाखा की बगल में अवस्थित है। यहां से चावल, शीतल-पाटो और नाना प्रकार के तैलहन चमानी की रफ्तानी होती है।

नवीन (सं० लि०) नवमेव नवःखः नूदिमसः। १ नूतन, नया। २ श्रुत, विदित। ३ तरुण, जवान, नवयुवक। नवीन—निम्न ब्रह्म के देव विभाग के पन्तर्गत प्रोम जिले की एक नदी। उत्तर नवीन और दक्षिण नवीन नामक दो शाखाओं के मिलने से इस नदीको उत्पत्ति हुई है। वेगू के पन्तर्गत योमापर्वत पर पान्दीकशृङ्ग के उत्तर में इसकी उत्तरी शाखा निकली है। योमा ग्राम से पांच कोस दूर में दो शाखाएँ पापस में मिल गई हैं। दक्षिणी शाखा भी इसी शृङ्ग के दक्षिण से उत्पन्न हुई है। प्रोम-नगर के निकट यह नदी इरावती में मिल गई है। योमापर्वत पर से इस नदी द्वारा लकड़ी बहा कर लाते हैं।

नवीन कवि—हिन्दी के एक कवि। इनकी गणना उत्तम कवियों में होती थी। इनके बनाए शृङ्गारसुखे सुन्दर कवित्त पाये जाते हैं।

नवीनचन्द्र राय—हिन्दी के एक कवि। सन्वत् १८८४ में इनका जन्म हुआ था। श्री महावस्य में ही इनके पिता की मृत्यु हो जाने से इनकी पिता-पक्षी न हो सकी,

पर इन्होंने अपने ही लोगमें से १६, ६० मासिकमें से कर ०००, ६० मासिक तकका वेतन भोगा और विद्याभ्यास में कारण पड़नेकी प्रतिरिक्त संस्कृत तथा हिन्दीकी बहुत पक्की योग्यता प्राप्त कर ली। आपने इन दोनों भावार्थोंमें प्रकट पत्र बनाए और मिथवा-विवाह पर भी एक पुस्तक रखी। इन्होंने पञ्जाबमें स्त्री-शिक्षा पाठशाला कीज बोधा और लाहौरमें नाम संघ फीसिक स्कूल स्थापित किया। हिन्दीमें आपने ज्ञानप्रदायिनी पत्रिका भी निकाली। परीपचारमें ये सदा लगे रहते थे। इनका मर्यादा १८४०में देहान्त हुआ।

नवीनगर—पड़ोश्याके पन्नागंत कीतापुर जिलेका एक शहर। यह लोहारपुर शहरसे ११ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। लोक-ख्याया प्रायः तीन हजार है। यहां फतेमरदे तातुकदारकी सदर क्लबहरी है। टाईर सो वर्ग हुए कि मनिहाबादके नवाब सफ़ार खांके पुत्रने यह नगर बनाया था। किन्तु आजमें सो वर्ग पहले गोड़राजाजीने इस शहरकी सुमल्लमातीके ब्यापसे कीज अपने उपलब्धमें कर लिया था। आज भी गड़लकीके अधिकांशमें है।

नवीनता (हि० स्त्री०) नूतनत्व, नूतनता, नया होने का भाव।

नवीनन्दर—मन्थर प्रदेशके आदिवासी प्रदेशका एक नन्दर। यह पुरानन्दरसे ८ कोस दक्षिण-पूर्व, अक्षा० २१° २१' उ० और देशा० ६८° ५' पू०के मध्य अवस्थित है। माटरनदीके सुबाने पर यही एक प्रधान नन्दर है। मोहममे समय इस नदीमें भी कोस तक नावें आती पाती हैं। नदीका सुबाना सनता गहरा नहीं है लेकिन पथर-मय है। इसी कारण छोटी छोटी नावोंके सिवा यहां पड़ती नावें नहीं आ सकती हैं। शहरका व्यवसाय पहले-से कुछ कम हो गया है।

नवीनभाव (सं० पु०) नव-भू-प्रभूत तत्वासे किंवा पन-मोमका नवभाव, नया होनेका भाव या क्रिया।

नवीनमन्दर—पट्टेके एक नवि। इन्की बहुतकी कविता बनाई है। उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

“नरे रथ मारी के पचग मरगरी करे।

नवीन मन्थर नवान नविनी मोहिनिक कोइ छुपने ॥”

नवीनय (सं० वि०) नव-प्रतिमये ईयसुत् । १ मन्थर, बहुत नया। २ प्रतिमय मुख्य, बहुत प्रमंथनीय।

नवीनतोय—वेतनगाम जिलेके मन्थर ज्ञानप्रदा नामक एक प्रसिद्ध नदी है। मोन्दर नामक स्थानमें २ कोस उत्तरमें यह नदी मनोनी पर्वतको दो गिछोंके बीचसे गढ़ी हो कर बह गई है। पड़ने यहां एक पाथर जड़ था। नदी सम जड़में मिल कर समका बहुत जल अपने साथ ले जाती थी। कालक्रमसे पहाड़ पर कई प्रकारकी पाकृतियां बन गई हैं। इसी स्थानको नवीनतोय और मयूरसोवर कहते हैं। प्रवाद है, कि पड़ने नदी पहाड़की चारों ओर घूम कर बहती थी। एक दिन एक मयूर पर्वतके गिछर पर था पैठा और अपनी पूँछ फीकाकर नदीका उपहास करते हुए बोला, ‘इतना पैग रहते घूम कर क्यों बहती हो?’ यह सुन कर नदी बहुत बिगड़ी और जिस गिछर पर मोर पैठा हुआ था, बातको बातमें उस गिछरको भेद करतो हुई वहां था गिरली। मयूरने लड़नेका प्रवकाश नहीं पाया। समको देख पर्वत-विदारणके साथ साथ हिक हो कर बांधी एक ओर और बांधी दूसरी ओर हो गई जो अभी पथरको पाकारमें विद्यमान है। यह मन्थर और दूसरे प्रकारमें भी बना जाता है। तभीसे इसका काम नवीनतोय पड़ा है। यह गढ़ा १०० फुट गहरा है। ऊपरको ओर समका विस्तार १५० फुट और नीचेकी ओर उससे भी ज्यादा है।

नवीन (प्रा० पु०) नैपक, कातिथ, जितनेनाका। इस शब्दका प्रयोग योगिक शब्दोंके अन्तमें होता है।

नवीनर—सिन्धुप्रदेशके घर जिलागंत पमरकोट तातुकका एक शहर। यह अक्षा० २५° ४' उ० और देशा० ६८° ४१' पू०के मध्य पमरकोट शहरसे १० कोसकी दूरी पर अवस्थित है। नवीनकोटसे लो कर चेनरकी ओर एक सड़क चली गई है। जनसंख्या प्रायः दो हजार है। अधिकांश विधेय कर देते, पट्टागन और चीका व्यवसाय करते हैं। मन्थरदि रंगना भी यहांका प्रधान मित्यकाय है। शहरमें कई, गारियल, पन्नाज, लैंट, गाब, बेल, गोबर, चीनी, तमाकू, पदक और भातुका कारबार होता है।

नवोमी (फा० स्त्री०) तिज्जारी, लिखनेकी क्रिया या भाव ।
 इस शब्दका प्रयोग शब्दोंके अन्तमें होता है ।
 नवेद (हि० स्त्री०) १ निमन्त्रण, न्योता । २ निमन्त्रण-
 पत्र ।
 नवेदस् (सं० त्रि०) न विपरोतं वेत्ति-विदं प्रसुम्
 नभ्राद्व्यादिना, नज-प्रकृतिभावः । विपरोत ज्ञान-
 शून्य, मेधावी, बुद्धिमान् ।
 नवेक्षा (हि० वि०) १ नवीन, नया । २ तरुण,
 जवान ।
 नवेक्षी (हि० वि०) १ तरुणी, नई उत्तरकी । (स्त्री०)
 २ तरुणी, युवती, नई स्त्री ।
 नवोद्धा (सं० स्त्री०) नवा नूतना ऊढ़ा विधाडिता । १
 नव विधाडिता, नव । पर्याय—नव, जनी, नववारका,
 दिक्करी, नवयोधना । २ सुधं नायिकाभेद, साहित्यमें
 सुधाके अन्तर्गत वह नायिका जो सत्ता और भयके
 कारण नायकके पास न जाना चाहती हो ।
 नवोदक (सं० स्त्री०) नव उदकम् । १ नूनन जल, नया
 पानी । वर्षाकालका नवोदक वर्षात् नया जन तीन दिन
 और दूसरे समयका दस दिन तक भण्ड रहता है । २
 वह जल जो नये गड्ढेमें जमा हो गया हो । नवोदक
 पीनेसे पक्षगव्य द्वारा उसकी शुद्धि होती है । ३ नवोदक
 निमित्त पावण-आह । तिथितत्त्वमें लिखा है कि वर्षा-
 कावके चारभरमें नवोदक-आह करना चाहिए । यह
 आह सबोंके लिए कर्त्तव्य है । 'वदायुजः' इस वाक्य
 द्वारा इसका नित्यत्व प्रतिपादित हुआ है । इस आह-
 कावके सावकाशके लिए त्रयोदशो भादि तिथियोंमें नहीं
 कर सकते ।
 त्रयोदशी, जन्मदिन, नन्दातिथि अर्थात् प्रतिपदा,
 एकादशी और पक्षी, जन्मराशि, जन्मतारा और शुक्लवार
 छोड़ कर श्रवणा, पुष्या, श्रमशिरा, ज्येष्ठा, ऐश्वरी,
 राधा, उत्तराषाढा, उत्तरभाद्रपद, उत्तरफल्गुनी और
 कृष्णपक्ष नवोदक आहके लिए प्रशस्त माना गया है ।
 नवोद्धत (सं० स्त्री०) नवमुद्धतम् । १ नवनीत, मज्जन ।
 २ नूतनोत्थित, जो तुरन्त निकाला गया है ।
 नवीनवसर—वै मिलनके एक राजा । इनके समय काल-
 दियाई अतिपवित्राकी विशेष पालीचना हुई थी ।

६४० ई०की २६वीं फरवरी बुधवारसे इन्होंने एक शब्द-
 का प्रचार किया । इस शब्दकी गणना ६६५ दिनोंमें होती
 थी, किन्तु प्रति चौथे वर्षमें थाल कलके जैसे एक
 दिन नहीं बढ़ता था ।
 नव्य (सं० त्रि०) नूयते स्तूयते इति नु-यत् (अनो यत् ।
 पा ३।२।८०) यौ नवमेव यत् (शाखादिभ्यो यत् । पा
 ३।१।०३) १ नूनन, नया, नवीन, ताजा । २ सुख, सुति
 करनेयोग्य । (पुं०) ३ रत्नपुनर्वा, गर्दहपूर्ण ।
 नव्यवर्धमान (सं० पुं०) स्थितिनिर्वन्धकारभेद । ये गन्त-
 शोषाध्यवस्ये पुनर्वा ।
 नज्जुस—पासेस्तिन प्रदेशके प्राचीन राज्य समरियाकी
 प्राचीन राजधानी । यह नैपेत्सुं शब्दका अपभ्रंश है ।
 यहां दस प्रकारकी आतिथ्यकी राजधानी थी । प्राइमलके
 पूर्वभागमें इसका नाम सेजेम और उत्तरभागमें साह-
 चर बतलाया है । यह एक और योरिजिन पहाड़के मध्य
 अवस्थित है । इसका वर्त्तमान नाम सुबुली है । अभी
 यह एक छोटे ग्राममें परिवर्तित हो गया है ।
 नव्याव (हि० पुं०) नयाव रेवो ।
 नव्यावो (हि० स्त्री०) नयावो देखो ।
 नय (सं० लि०) नय-क्षिप् । १ नायप्रतियोगी, नायके
 नायक । भावे क्षिप् । २ नाय, बरबादी ।
 नयन (सं० स्त्री०) नय-ज्जुट । नागमीन, जिसका नाय
 हो, नायके नायक ।
 नया (फा० पुं०) १ मादक द्रव्यके व्यवहारसे उत्पन्न होने-
 वाली दवा । शराब, गाँजा, माँग, पफीम आदि एक
 प्रकारके विष है । इसके व्यवहारसे शरीरमें गरमी आ-
 जाती है जिससे मनुष्यका मस्तिष्क दुब्ल और उत्तेजित
 हो उठता है । इतना ही नहीं याद या धारणाशक्ति भी
 कम हो जाती है । इसी दवाकी मया कहते हैं । साधा-
 रणतः लोग मानसिक बिस्वासेमें झूटने या शारीरिक
 श्रमिलता दूर करनेके लिये ही मादक द्रव्यका व्यवहार
 करते हैं । बहुतसे लोगोंको इन द्रव्योंका ऐसा अभ्यास पड़
 गया है कि बिना उसे पीये तनिक सो उन्हें सैन नहीं
 पड़ता । साधारण मनुष्योंके पक्षमें चित्तमें घने प्रकार-
 की लगने उठती है, बहुत ही नई नई और विचलन
 बर्तन प्रकट होती हैं तथा सब साथ चित्त भी प्रसन्न रहता है ।

मेकिन सब मग्य बहुत हो जाता है, तब मनुष्य उठती करने लगता है चपटा बेहोश हो जाता है । २ मादक द्रव्य, मग्य चढ़ानेवालों चीज । ३ चम, चिया, प्रमुख या रूप वादिका घमाउ, चमिमात्र, गर्व, अट ।

मगाक (मं० पु०) मग्यतीति- मग्य जाये-पाक (आकः चकारे; एण् क्ति । १।२२६ इति श्रुतिघोषटीकासु च) काश्चिद्, एक प्रकारका कोष । मगाधोर (का० पु०) वह जो किसी प्रकारकी मग्यका सेवन करता हो, मग्यवाज ।

मगिय (मं० त्रि०) मग्य-कर्त्तरि लच् । नागायय, जिसका नाम हो ।

मगोम (का० वि०) बैठनेवाला, इस अर्थ में यह योगिक शब्दोंकी सभ में व्यवहृत होता है ।

मगोमी (का० स्त्री०) बैठनेकी क्रिया या भाव ।

मगोमा (का० वि०) १ मग्य जाननेवाला, मादक । २ जिस पर मग्यका प्रभाव हो ।

मग्यवाज (का० पु०) वह जो हमेशा किसी न किसी प्रकारके मग्यका सेवन करता हो, वह जिसे कोई मग्य करनेकी पादत हो ।

मगोहर (वि० वि०) नाम करनेवाला ।

मग्यर (का० पु०) एक प्रकारका बहुत तेज, कोटा चाकू । इसका चमका भाग मुकोला धोर टेढ़ा होता है धोर प्रायः इसमें सिरे दोनों धोर धार रहती है, कोई पादिके धोरने धोर फसद धोरनेमें इसका व्यवहार होता है ।

मग्यतृप्पतिका (सं० स्त्री०) मग्यकी प्रसुति सन्तति-यस्मात् कप, तनटाप, मृतवत्ता, यह जिसका अन्ध भर गया हो । पर्याय—मन्द, मृतपुटिका ।

मग्यर (सं० वि०) मग्यतीति मग्य-करणे । (एण् नचवशि-यतिभ्यः ङाच् । वा ३।२।१६) नामप्रतिपदो, मट होनेवाला, जो मट हो जाय ।

मग्यता (मं० स्त्री०) मग्यर होनेका भाव ।

मट (मं० त्रि०) मग्य- १ चटर्गनविमिट, जो चटर्ग हो, जो दिखाई न दे । २ चटर्ग, नीच, पादर । ३ चटर्ग, जिसका प्रचार हो गया है । ४ चटर्गित, जो भाग गया हो । ५ नामप्रतिपदो, जिसका नाम हो गया हो,

जो बरबाद हो गया हो । ६ निम्नतर, पतन । (स्त्री०) ७ नाम, बरबादो ।

मटचन्द्र (मं० पु०) मट्टे दुष्टचन्द्रः । मोर-भाद्रमासके चमयपक्षकी चतुर्थीमें उदित चन्द्र-भाटों मण्डोने दोनो पक्षकी चतुर्थीको दिखाई पड़नेवाला चन्द्रमा । इसका दर्शन पुराषाणानुसार निषिद्ध है ।

रविं विहरायिमें जानने पर्याप्त भाद्रमासके दोनो पक्षकी चतुर्थी तिथिमें जो चन्द्र उदय होता है उसे देखना नहीं चाहिये । जो प्रमादवश देखता है, उसे कोई न कोई कलह या अपवाद चमय लगता है । यहाँ तक कि नारायणने भी एक बार इस चतुर्थी चन्द्रमाको देखा था जिससे ये मिथ्यापवादपक्ष हुए थे ।

इस मटचन्द्रके दर्शन करनेसे इसके प्रादुर्भूत स्वरूप धार्मिकता वाक्य पच करना होता है । उसके दूसरे दिन सवेरे पूर्व सुख वा चटङ्गमुख हो कर कुम्भ तिनादि ज्ञायमें से करके 'धो' पद्येत्यादि 'मिहाक' चतुर्थीचन्द्र-दर्शनश्रवण पापचयकामः धार्मिकता-वाक्यमहं पठि-ष्यामि' इस प्रकार सङ्कल्प करना होता है । बाद धार्मिकता वाक्य पढ़ कर जल पीने है । मन्त्र—

"विहसनेममपीदं विदो वाग्यवता इतः ।

मृदमारुहः सागेरीस्तत्र धीव रवमस्तकः ॥"

(इत्यन्तर)

पुराकालमें चन्द्रमासे भाद्रमासकी चतुर्थी तिथिमें ताराका इतप किया था, इसी कारण उस दिनकी चतुर्थी तिथि दुष्टा समझी जाती है । मङ्गल वक्ता पुराणके श्री-लक्ष्मणमखण्डमें ८० धोर ८१ पञ्चायमें इसका विवरण विस्तृत रूपसे वर्णित है ।

मटचित्त (मं० पु०) उरमस ।

मटचेतन (मं० पु०) चेतन, बँहोम, बेधवा ।

मटचेत (सं० त्रि०) जिसकी चेता या मति मट हो गई हो, जिसमें जिसमें जोधनेकी शक्ति न रह गई हो ।

मटचेतता (मं० स्त्री०) मटा चेता पक्ष, तत्त्व भावः, मग्य तनो टाप । १ चम मोखादि द्वारा घर चेतापोका नाम, मूच्छा, बेहोमी । २ प्रलय । ३ सात्विक भाव-भेद, एक प्रकारका सात्विक भाव ।

मटचमम् (सं० स्त्री०) मारुत, मर्यादर, योग्यता ।

मैत्रातक (सं० स्त्री०) नष्टं न ज्ञानं जातं जन्म जन्मा-
धानकालो यत्र कप् । १ जन्म और जन्माधान कालका
अपरिज्ञान, जन्म समयका विवरण नहीं जानना ।
२ प्रश्न सन्नादि द्वारा जन्मकाल-ज्ञानार्थ उपायभेद, एक
प्रकारकी क्रिया या उपाय जिसके अनुसार ऐसे मनुष्यको
जन्मकुण्डली आदि बनाई जाती है जिसके जन्मके समय
और तिथि आदिका कुछ भी पता नहीं रहता । इसीको
नष्टकीष्टी उद्धार कहते हैं ।

विशेष विवरण कोणी ग्रन्थमें देखो ।

नष्टता (सं० स्त्री०) १ नष्ट होनेका भाव । २ दुराचारिता,
बाह्यावापन ।

नष्टदृष्टि (सं० स्त्री०) जिसकी दृष्टि नष्ट हो गई हो,
दृष्टिहीन, अन्धा ।

नष्टप्रभ (सं० वि०) कान्तिरहित, तेजोहीन ।

नष्टबुद्धि (सं० स्त्री०) बुद्धिहीन, मूर्ख, मूर्ख, बेवकूफ ।

नष्टघट (सं० स्त्री०) जो बिलकुल नष्ट या टूट फूट
गया हो ।

नष्टमार्ग (सं० स्त्री०) नष्टस्य अदर्शनं यतस्य मार्ग-
वन्म । अदर्शनगत वस्तुका अन्वेषण, खोई हुई वस्तुको
तलाश ।

नष्टराज्य (सं० स्त्री०) १ अन्धदेशके उत्तर-पूर्व स्थित
अनपदविशेष । २ विध्वस्त या हनराज्य ।

नष्टरूप (सं० स्त्री०) १ जिसका रूप मनुष्यको दृष्टिसे
अगोचर हो, मृत, मरा हुआ ।

नष्टरूपा (सं० स्त्री०) अमृतपु, हन्वभेद, अमृतपु, हन्वके
एक भेदका नाम ।

नष्टविय (सं० स्त्री०) विपहीन सर्वादि, यह जहरीला
आमकर जिसका विष नष्ट हो गया हो ।

नष्टबीज (सं० स्त्री०) नष्ट बीज बीजभावो यस्य ।
निष्फल, बीजभावशून्य, फलस या फल जो बीजे पर न
पड़ा हो ।

नष्टवेदन (सं० स्त्री०) हतवस्तुका अन्वेषण, खोई हुई
वस्तुकी तलाश ।

नष्टशक (सं० स्त्री०) जिसका शीर्ष नष्ट हो गया हो ।

नष्टा (सं० स्त्री०) १ अविचारिणी, कुसटा । २ वेण्या,
रंडी ।

नष्टानि (सं० पु०) नष्टो लुप्तः प्रमादालस्यादिना अग्निः
वैतानिकोऽग्निर्यस्य । प्रमादादि द्वारा लुप्तानि हिज,
यह सामानिक ब्राह्मण या हिज जिसके यज्ञकी अग्नि
प्रमाद या आलस्यके कारण लुप्त हो गई हो ।

नष्टातद्ध (सं० स्त्री०) आतद्ध या चिन्ताका अभाव ।

नष्टात्मा (सं० स्त्री०) दुष्ट, खल ।

नष्टानिधुव (सं० स्त्री०) नष्टस्य चौरंणापह्नपस्यामे साधनं
धुवं चिह्नम् । अपह्नत द्रव्यका लाभसाधन चिह्नभेद,
खोई हुई चीजोंका कुछ पंथ मिलना जिससे भाकी
चीजोंका भी धुव मिले ।

नष्टागद (सं० स्त्री०) नष्टा आगदता यस्य । निर्मय,
निष्ठर ।

नष्टाय (सं० स्त्री०) नष्टधन, जिसकी अवस्था शोचनीय
हो गई हो, दरिद्र ।

नष्टाखदधरयन्याय (सं० पु०) न्यायभेद, एक प्रकारका
न्याय । यह न्याय निम्नलिखित छटना अथवा कदाचित्के
आधार पर है । दो बादमी द्रव्यक द्रव्यक रथ पर सवार
हो कर किसी यन्त्रमें गए । यहां संयोगवश आत लगनेके
कारण एक बादमीका रथ और दूसरेका घोड़ा अलग
गया । कुछ समय बाद जब दोनों मिले, तब एकके पास
केवल घोड़ा और दूसरेके पास केवल रथ था । दोनोंके
मेलसे घोड़ा रथमें जोता गया और वे दोनों निर्दिष्ट
स्थानको पहुंच गये । इस न्याय द्वारा यह प्रतिपादित
हुआ है, कि निष्काम शुद्ध धर्मरूप रथमें आनन्दरूप
अथ संयोजित करने सभी मनुष्य ईश्वरको अवश्य प्राप्त
कर सकते हैं । वैदान्तिक पण्डितोंने इस न्याय द्वारा
यही प्रतिपक्ष किया है । १५११ देखो ।

नष्टासु (सं० स्त्री०) नष्टयः पशवो यस्य । जिसको प्राय-
वायु सड़ गई हो, मृत, मरा हुआ ।

नष्टि (सं० स्त्री०) विनाश, ध्वंस, बरबादी ।

नष्टेन्दुकला (सं० स्त्री०) नष्टा इन्दुकला यस्यम् । कुङ्क,
यह अमावस्या जिसमें चन्द्रमा बिलकुल दिखाई न दे ।

नम (सं० स्त्री०), नमःक्रिय । नासिका ।

नस (सं० स्त्री०) १ पुरुषकी मूर्तेन्द्रिय, निष्ठ । २
शरीरके भीतर तन्तुओंका मज्जा जो पैगियोंके होर पर
उन्हे दूसरी पैगियों या अस्थि आदि कठिन स्थानोंसे

कोट्टनेने मिले होता है। आधारन बोलचालमें हमें गरीबनय या रजवादिनी मनी कहते हैं। १ पतले रंग या तनु जो पत्थों के बीच बोलने होते हैं।

मसकटा (हि० पु०) मनुष्य, हिन्दू।

मसरतग (हि० पु०) एक प्रकारका बाजा जो पोतनका बना हुआ गहनाई के पाकारका होता है। इसके पतले निरि पर एक छोटासा छेद होता है। इस छेद पर मजदूरी के पत्थों के ऊपर मकंद दत्ता रखते हैं। बाट मन्द करके समय सम निरकी गलेकी घंटों के पासतो जमी पर रख कर गलेमें चर भरते हैं। इसी प्रकारके दो बाजि गलेकी घण्टों के दोनों ओर रख कर एक साथ ही बजाए जाते हैं।

मसनामिका (ब० पु०) १ फारसी या चरबी मिलि लिपिने-का एक टंग। हममें पसर खुब साफ और सुन्दर होते हैं। २ वह जिसका रंग टंग बहुत पक्का और सुन्दर हो।

मसकाष्ट (हि० पु०) हाथियों का एक रोग। इस रोगमें सनके पैर घुन जाते हैं।

मसर (ब० स्त्री०) १ गध। २ ईस पत्थी, प्राचीन चर-दियों की देवमूर्ति। चनसरिया प्रदेशका धर्म भी मसर पत्थीपर भामने प्रसिद्ध था। मसर मन्दने घुएँ का बोध होता है। ईस पत्थी प्रकाश और सूर्य का चिह्न समझा जाता है। बनबैरनगरके भ्रंसावगिट घुएँ मन्दिरके इटकादिमें ईश्वरवाहन सूर्यमूर्ति पात्र भी पाई जाती है।

मसर बाँ—मसरके एक सुसज्जमान शासनकर्ता। मिरशाहके राजत्वकालमें सुसज्जमानो रतिशम तारिख-ई-मिरशाहमें लिखा है, कि मिर मसामाचिपति मसर गाँवी विधवा पत्नीने गहर कुमानो बनि विवाह कर ६० मन सोना पाया था।

मसरतगक—रोहिण्यपुत्र विभागके बरैको जिलेके धना-मंत रामनगरके उत्तरका एक ग्राम। प्रवादःनुसार यहाँ रामनगर महाभारतोत्तर उत्तरवाकालकी राजधानी बहिष्कारानगरी है। यह बरैको मन्दरे १० कोस पश्चिम-में अवस्थित है। परिच्छेदा नाम पात्र भी सुननेमें आता है। रामनगर ग्रामके उत्तर एक बड़ा धन है। यह धन

रामनगरके उत्तर धानमपुरकोट और मसरतगक बाँक के बीचमें पड़ता है। यमी इसी धनकी बहिष्कारान कहते हैं। इस सब कानोमें प्राचीन नगर और दुर्गके भग्नावशेष तथा बौद्धयुगके स्तूपदि के भ्रंसावशेष यथेष्ट देखनेमें आते हैं। भग्नावशेष दुर्गके दक्षिण-पश्चिम कोणमें ४० फुट लंबा साढ़े-बुद्ध नामक एक स्तूप है, यहाँकी जमीन खोदनेसे बीच बीचमें मित्र राजाओंकी सुश्रादि पाई जाती हैं, दुर्ग-भग्नावशेषके उत्तर प्राचीरके निकट एक मित्रमन्दिरका खण्डहर है। केवल ६८ फुट लंबा ईंटोंकी दोवार रह गई है। कनि-उम माहब अनुमान करते हैं कि वह मन्दिर भी कुतरे भी पड़ावा लंबा था। मन्दिरका निर्माण और उन्नति का प्राज्ञ भी वर्तमान है। निम्नकी टूट जाने पर भी वह अभी ८ फुट लंबा रह गया है। इसका विरा ११ फुट है इस भग्नावशेषकी भोग यमी भीमकी गदा कहते हैं। यहाँ एक स्तूपके ऊपर एक बुद्धमूर्ति है जिसे हिन्दू लोग शिव-देवता समझ पूजते हैं। मसरतगकमें जितने देवगव हैं वे भी बौद्ध-हिन्दू मन्दिरने मन्द होत हुए हैं। स्तूपके ऊपर गोसाकार ठालकी तरह जो क्षत थी, वह अभी भग्नावशेषके ऊपर पड़ी हुई है। यहाँके भोग उम कानो "पिसनरारीका क्षतर" कहते हैं। उस क्षतका भग्नाव-गिट अभी जितना रह गया है उसका व्यास १० फुट है। इसमें अनुमान किया जाता है पहले यह क्षत १० फुटमें कमका नहीं होगा। कनि-उमका कहना है, कि यही २५० ई० मनुके पहलीका बना हुआ पयोग-स्तूप है। इस स्तूपकी गुणगुणने देखा था। मसरतगकमें प्रायः एक ही गज पूर्वको ओर एक दूसरे दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है जिसका नाम है कोटारी केरा वा भ्रंसावगिट स्तूप। यहाँ पहले दिग्धर बगदाशे जेनि योंका एक मन्दिर था। एक बटपका स्तूपमें लम्बी एक चरब मिलि देवनेमें मालूम होता है, कि महादारी नामके इन्द्रमन्त्रीके मित्रने यहाँ पात्र नामका एक मन्दिर बनवाया था। यहाँ नवपक्ष पिकित एक पसर भी पाया गया है। जेनि योंके निकट बहिष्कारा पात्र भी लम्बी तीर्थ समझा जाता है।

मसरत गाँव—नोकोबर बुधेन गाँवके पुत्र। बुधेन गाँवके

मरने के बाद ये सद्भाव के मि'हासन पर बैठे। पहले पहल इन्होंने पच्छी खानो पाई थी। भागीय सजन इनके प्रेम से मुग्ध हो गये थे। इस समय इन्होंने मिथिला, झांझीपुर, सुन्नेर आदि की ओत लिया था।

ये कवि भी और पछिमें कि उल्लाह-दाता थे। इन्होंने आदि से बड़ा भाषा में महाभारत का अनुवाद किया गया था।

नसरत खां के कहने से ही परागल खां और छोटी खां नामक उनके दो सेनापतियों ने कथेन्द्र और श्रीकरगन्दी द्वारा महाभारत का प्रचार कराया था। भेषक कवियों की पदावली में भी नसरत का नाम देखा जाता है।

१५२६ ई० की कुछ समय बाद बाबर ने बंगाल पर चढ़ाई करने का उद्योग किया था। नसरत ने उन्हें दो बार रिश्वत भी भेजी थी, लेकिन कुछ फल न निकला। पन्त में १५७८ ई० की इन्होंने बाबर के साथ सन्धि कर ली। इसी समय से इनकी प्रकृति कुछ बदल गई। जैसे ही ये सङ्ग-सम्पन्न थे, वैसे ही अत्याचारी हो गये। इनके अत्याचार से उत्पन्न हो कर प्रजा उन्हें मार डालने की कोशिश करने लगी। पन्त में १५९३ ई० की ये किसी एक शोजा के हाथ से मार डाले गये।

गोड्डा विख्यात 'सीना सजिद' इन्हें का बनाया हुआ है। इनको मृत्यु के बाद इनके भाई मज्जुद याद अपने भतीजों को मार कर आप मि'हासन पर बैठ गये।

मसल (अ० खी०) खानदान, वंश।

मसवार (हि० खी०) सूचने के लिये तमाकू के गोरे हुए पत्ते, सुँवनी, मास।

मसहा (हि० पु०) जिसमें नहीं हो।

मसा (अ० खी०) मस-वा टाप, यहा नरुते कुटिलता प्रकाशयति, मस कीटिष्ये चच, गतो-टाप। नासिका, नाक।

नसिरखां—१७५० ई० से से कर १७६० ई० तक रिवाज हुकिर बन्द के गवर्नर थे। उस समय बन्दर चाम्बासी नामक स्थान में जो अंगरेज कमचारी कहान थे उन्हें नसिर खां नामक पारसराज के पयोन्ख एक सामन्त राजने रामावशी के निकट परबो डकैतों को दमन करने का हुक्म दिया था। इन्होंने अपने को उष्य देमाधोखर बतसाया है।

नसिरजङ्ग—१७४८ ई० में निजाम उख. मुल्त के मरने पर उनके द्वितीय पुत्र नसिरजङ्ग दक्षिण प्रदेश के स्वादारी-मसनद के पद पर नियुक्त हुए। इन्होंने अर्काटकी कड़ाई में महशद चलो और अंगरेजों का साथ दिया था। कुछ दिन ये अर्काट में रहे थे। १७५० ई० में ये फ्रांसियों के विरुद्ध लड़ने गये थे और वही कड़ापाके पठान-नवाब के हाथ से मारे गये। इनकी मृत्यु पर चाँद साहय, डूंग्र और मुन्दिचेरी के लोग प्रमथ हुए थे।

नसिरपुर—बम्बई प्रदेश के अन्तर्गत हैदराबाद जिले का एक नगर। कहते हैं, कि यह नगर ८८८ ई० में बसाया गया है।

नसिरपुर (नसरपुर)—मिन्धप्रदेश के हैदराबाद जिले के अन्तर्गत पन्नाहयार तालुक का एक शहर। यह अक्षा० २५°३१' ३०" और देशा० ६८° ३८' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ४५११ के लगभग है। इसी के खिलजो अंग्रेजों के अन्तर्गत सन्तान फिरोजशाह ने ११५३ ई० में बसाया था। इन्होंने गुजरात से लौटते समय शहरानदी के किनारे एक दुर्ग भी बनवाया था। पहले यहां तरब तरब के कपड़े बुने जाते थे, पर अभी कर के पर सामान्य होती साड़ी प्रचलन होती है। यहां का राजस्व ६०००) रु० है। शहर में एक छोटी पदावत, अस्सतां तथा एक स्कूल है।

नसिरशाह—उड़ीसा के पठान नवाब फतन खां का बड़ा लड़का।

नसिरि—भ्रमणकारों अकगान की एक जाति। ये लोग औष्मकाल में टीकी और हटकी में रहते हैं। जाड़ा पढ़ने पर सुलेमान पर्यत के नीचे दामन प्रदेश में जाते जाते हैं।

नसिरि खजु—हिजरी पद्यम शताब्दी के एक कवि। अकबर के समय में इनकी कविता का खूब आदर होता था। नसिरुद्दीन—मध्य एशिया के पखासी नामक स्थान के सुलतान। इनका असल नाम इस्तेन खां था। ये एक समय अकबर की समाधि विना चाखा लिये चले पाये थे, इस कारण मस्जिद ने हसनिये जदकशो नामक मोशती मनसबदार को इन्हें दमन करने के लिये भेजा। इसका अंग इन्हें अच्छी तरह पालत करके कुछ दिन इन्होंने

राज्यमें ठहर गये थे। किन्तु जब ये भारतको छोड़ आए, तब फिर नसिहरीनमें छोड़ दुर्य प्राचीनता प्राप्त की और हमनकी योजनाकी निजाम भगाया। चन्नेने हमनने का कर पुनः हमनका मान मर्नेन किया।

नसिहरीन् मद्रुद—याम राजाघोमें एक भारतोय मन्त्राट। राजिया वेमनके बाद इन्नेने जो दिसोवा मिंशामन सुगो-मित किया। १२४६ ई०में जो कर १२६६ ई०के करवरो मान तक इनका राजस्वमान था। इनका पाचारुधवदार लक्ष्मीन मरोषा था। राज्यकी पायमें ये एक पैसा भी अपने काममें नहीं लाते थे। मुत्तकाटिकी नकल करके जो कुछ उसमें मिल जाता, उसीमें अपना गुजारा करते थे। और सब राजाघोकी तरह इन्ने एकसे अधिक स्त्री वा रविनी न थी। इनकी जो सवें अपने रावने इनका पाला पकती थी।

नसिहरीन्-पावदावा-विन-उमर-चन्-मैत्रभो—एक सुमनमान ऐतिहासिक। इनने पारस्य भाषामें निजाम लक्ष्मन्पाविन नामका इतिहास रचा है। ये एक काजी थे। इन्नेने एमियाके मन्त्राट, विनेपतः मुगलीका जो विवरण विस्तार रूपमें लिखा है। मन्थवनः तात्रिज नगरमें १२८६ ई०की इनकी मृत्यु हुई।

नगो (हि० खो०) कुम्भीकी लोक, इनने फारुका पगला भाग।

नमीठ (हि० पु०) दुहा मकुल, चमगुन।

नमीनी (हि० खो०) साड़ी, जीना, निसेली।

नमोपूजा (हि० पु०) इनकी पूजा। यह पूजा कोनके कोमिमके पोदेकी जाती है।

नमीव (च० पु०) भाग्य, प्रारब्ध, हिदमत, तकदोर।

नमीवज्जना (च० वि०) जिसका भाग्य घराब हो, चमगा।

नमीववर (च० वि०) नमीभाग्यमानो, भाग्यवान।

नमोवा (हि० पु०) नमीव देवी।

नमोम (च० पु०) ठंडा, भीमी और बकिया कबा।

नमीराबाद—१ बङ्गाल प्रदेशके मैमन्निङ जिलेका एक शहर। यह पचा० २४° ४६' उ० और देगा० ८०° १४' पू० के मध्य बङ्गालुयके पश्चिम हिस्से परवर्तित है। जनसंख्या प्रायः १४६८८ है। यहां १८६८ ई०में

म्युनिसिपलिटो स्थापित हुई है। राजस्व ०००००० ६०६ लगभग है। यहां कीर्ति विमोच ऐतिहासिक स्तूप न घरी। प्राचीन मानविषयमें यमो येवन दो मन्दिर न गये हैं।

२ बम्बई प्रदेशके पन्नागंत पान्देम जिलेका एक शहर। यह पचा० २१° ४०' और देगा० ०१° ४०' पू० के मध्य भादमीने २ मील दक्षिणमें परवर्तित है। यहां प्राचीन कालकी चनेक समाधियां देखनेमें आती हैं। सातमान वर्षतके भीतनें हटिया प्राधिपत्यके पक्षे १५ शहरमें कई बार लक्षम मचाया था। १८०१ ई०में लूर नामक एक प्रसिद्ध सुटेनें इगे पक्षी तरह मूटा। १८०१ ई०में यहां एक भयानक दुर्घटना भी पड़ा था, शहरमें कईका एक कारवागा चोर का स्तूप है।

३ बलुचिस्तानके सीवे जिलेका एक उपविभाग और तहसील। यह पचा० २०° ५५' और २८° ४०' उ० तथा देगा० ६०° ४०' और ६८° २०' पू०के मध्य परवर्तित है। भूपरिमाण ८५२ वर्गमील और जनसंख्या १५०१६ है। इसमें एक शहर और १०० ग्राम लगते हैं।

४ बम्बईके लरकाना जिलेका एक तालुक। यह पचा० २०° १६' और २०° ३३' तथा देगा० ६०° १६' और ६८° ६' पू०के मध्य परवर्तित है। भूपरिमाण ४१० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५१४४ है। इसमें कुल ६१ ग्राम लगते हैं। राजस्व दो लाख रुपयेमें अधिकका है। यहां का प्रधान उद्योग कृष्य धान है। इस तालुककी दक्षिणकी मही घाटी है, यहां वहां कीर्ति फसल नहीं लगती।

५ राजपूतानेका एक मन्थ-निवास। यह पचा० २६° १८' उ० और देगा० ०४° ४३' पू०के मध्य परवर्तित है। लोकसंख्या प्रायः २२४८४ है। हिन्दूकी संख्या को सबसे अधिक है। १८१८ ई०में बाङ्गलालीनोने यह निवास संस्थापित किया है।

६ मियुदेमके पन्नागंत गिहारपुर जिलेका एक उपविभाग। भूपरिमाण प्रायः १४३ वर्गमील है। इसमें ८ विभाग और ५४ ग्राम लगते हैं। इसके प्रधान नगरका नाम भी नसीराबाद है। और नजिर रजि-तकपुरके प्रायः ४० वर्ष पहले इस नगरकी बसाया था। यहां एक उत्तम दुर्ग है।

० वक्ता निमागका एक नगर । यह अक्षा २०°२३' ०" और देशा ६०°५०' पू० के मध्य पड़ता है ।

८ चयोध्याके अन्तर्गत रायपुरेसी जिलेका एक नगर । यह अक्षा २६°१५' ०" और देशा ८१°३६' पू० के मध्य अवस्थित है ।

नसीराबाद—१ भविष्य ब्रह्मचण्डोक्त वरद देशान्तर्गत ग्रामविशेष । यह ग्राम कलिके ४००१ वर्षे बीत जाने पर स्थापित हुआ था और हजार वर्षे तक इसका अस्तित्व रहेगा ।

२ कयोध्याके सीतापुर जिलेका एक ग्राम । यह सिरोही तहसीलके मधुवा ग्रामसे ३ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है । यहाँ कलापदेवी और आस्तिकका एक एक छवक-मन्दिर है । ये दोनों मन्दिर १० मीं शताब्दीके जने हुए हैं । मन्दिरकी अवस्था अच्छी है तथा इनके आराध्य भो देखने लायक हैं ।

३ अजमेर-मेरवाड़ा जिलेका एक स्वाम्यार । नसीरा (हि० वि०) जिसमें नसें हो, नसदार । नसीरत (प्र० स्त्री०) १ उपदेश, शिक्षा, मोक्ष । ३ अच्छी सम्मति ।

नसीरा (हि० पु०) सुलायम मिट्टीके जोतनेके लिये हलका हल ।

नसीरा (हि० वि०) जिसके देखने, कूने पथवा किसी प्रकारके सम्बन्धके कोई होय या जानि हो, मजहूँ ।

नसर (हि० पु०) नसर देना ।

नसा (सं० पु०) नसते कुटिलता प्रकाशमन्त्रनेन नमन्त, बाहुनकात् इष्टभावः । १ नासिका, नाक । २ नख-विशेष, एक प्रकारकी सुंघनी ।

नसाकरण (सं० पु०) एक प्रकारका यन्त्र जिसका व्यवहार मिश्र लोह नाकमें दबा डालनेके लिये करते थे ।

नसारण (फा० पु०) १ सफेद गुलाब, सेवती । २ एक प्रकारका फपड़ा ।

नसा (सं० स्त्री०) नसा-टाप । नासाकन किन्तु पशुओंकी नाकका छेद जिसमें रखी जाती जाती है ।

नसित (सं० पु०) नसा नासाच्छिद्र जाता अथ ता-कादि तत् । अथ पशु जिसकी नाकमें छेद करके रखी जाती जाय । अर्थात्—नसित और नस्योत ।

नस्योत (सं० पु०) नस्यो नासिकायां कृतं वयनं यस्य । नसित देखो ।

नख (सं० स्त्री०) नासिकायां हितं नासिका-यन्त्रं, नसा-देश्यः । १ नासिकामें देय घूर्णादि, नास, सुंघनी । अर्थात्—नसा और नसाण ।

‘वयनं’ रेवनं नखं निरुद्धावतुशासनम् ।

किये पञ्चविधं कर्म माना तद्वयं प्रवक्षते ॥”

(वेदव्याख्या)

इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है,—घोषघ घयवा घोषघके साथ पाक किये हुये घी पादि को नाकके रास्ते प्रयोग करनेका हो नाम नख है । यह दो प्रकारका है—गिरोविरचन और खोह । इन्हीं दो प्रकारके नस्योके फिर पांच भाग हैं—नख, गिरोविरचन, प्रति-मर्म, पथपोड़ और प्रधमन । इनमेंसे नख और गिरो-विरचन ही प्रधान हैं । नखका प्रतिमर्म और गिरोविर-चनका पथपोड़ तथा प्रधमन विकल्प है । इनके मध्य शून्यगिरः व्याक्तिके (अर्थात् जिसको खोपड़ी खाली जान पड़ती हो) नस्योको छिद्र करनेके लिये, घीया, स्तम्भ तथा वचस्कनको मजबूत बनानेके लिये और दृष्टि प्रसा-दनेके लिये खोह प्रयोज्य है ।

नस्योत वायु द्वारा अभिभूत होनेसे दन्त, केश और श्मश्रुपपातमें, दाहक कर्णशूल और कर्णश्लेष्म, तिमिर-रोग, स्वरभङ्ग, नासारोग, मुखग्रीव, नासुरोग, अकान्त-जात बलिपलित, कठिन वातपित्तरोग, सुखरोग पादि रोगोंमें वातपित्तनाशक द्रव्यके साथ खोहको पाक कर इसका प्रयोग करना चाहिये ।

तात्तु, क्षण और नस्योत कफ द्वारा अभिभूत होनेसे बन्धु, गिरोवरवशूल, घीनस, अर्धावधेदक, क्रिमि, प्रतिश्याव, घणघार और गन्धघान नसी होनेसे इन सब रोगोंमें तथा स्तम्भ-मन्धिके ऊपर अन्य प्रकार कफके विकारमें गिरोविरचक द्रव्य घयवा समके नाथ पाक किये हुये खोहका प्रयोग करना विधेय है । इन दो प्रकारके नस्योका खोह-रोगीकी आँखोंके पड़ने, पित्त-रोगीकी दो पहरमें और वातरोगीकी तीसरे पहरमें प्रयोग करना चाहिये ।

खोहप्रयोगकी प्रणाली—दन्तकाष्ठ या धून्-

गम द्वारा यदि मनेको नामी प्रगति विमोघिन की जाय, तो वाणिज्य द्वारा समवेग कथोपदेश और समष्टिदेग छिप्य और मनु करके बायु, पानर और रलोपीन गदमें रोगीको उन्नतभावमें सुना दे। सम-ना दृष्टवत् प्रसारित, मनुक किछि विमोघिन और पद्य तन्त्रमें पाच्छादित रहे। गामद्वयकी प्रदेगिनी द्वारा मानापकी दीक्षा अवमिन करके एकके और में ही दृष्टिप दृष्टा द्वारा नामिकाके विरुद्ध खोलके मय निरमष्टिप भागमें खेद मन्वकी दे दे। देमके समय इस मात पर विमोघ प्यान रहे कि वर पद्य तक न पद्येय जाय। खेदामनेषन करके निरःश्व, क्रोध, भावप, चययु या ह्यम नहीं करना चाहिए। इसका परिमाण देगिनीके दोनों वर्गोंमें निःश्वन पटविन्दु प्रथम माता, मुक्ति परिमाण मध्यमाया और करतल परिमित लथोय माना है। रोगीके बन्ने समुसार इन सब माताओंका प्रयोग करना चाहिये। खेद-दृष्टका किसी तरह मनेके भावे जाता पच्छा मर्ति है। प्रयोजित खेद श्रृङ्गाटकमें प्रारित होकर जब सुप्तमें निकलता है, तब उसे निरःधारण न कर निद्रोन्न कर दे; ऐसा नहीं करने में एक पक्रिष्ट हो जाता है। इस प्रकार खेदका प्रयोग धर चुकने पर मना, कथोन पादि लानोंमें खेद-का प्रयोग करके पुनराग करे और पमिष्यन्दी द्रव्य मन्व करे। इस समय रोगीको रजः, भूम, रुहेद, पातप, मन्व-पात, निरःश्वान और क्रोधका परिणाम करना चाहिए।

जब निरोविरेषनके योग और पमिष्योगका कम लिपा जाता है। उग्रशुक्र परिमाणमें सेवित होमिने मन्वकी मनुता, मन्वन्दी निद्रा, प्रयोध विकारकी नाति, इन्द्रियकी शक्ति और मनका सुग ये लभ लिपामे होती है। पञ्चिक परिमाणमें सेवित होनेसे कक-प्रमेक, मन्वमकी मुद्रका और इन्द्रिय विभ्रम होती है। मूर्ध्निदेमके पति छिप्य होने पर दस क्रिया कर्त्तव्य है। पति पण परिमाणमें सेवित होनेसे इन्द्रियका देमुत्त, रचना और रोगकी पयाति ये सब लक्षण दिखने के पति है। रोगी ह्यलक्षमें निरःश्व मन्वका प्रयोग करना हचित है। निरोविरेषनमें खेदका परिमाण रोगीके बन्ने समुसार पार, द्य और पाठ विन्दु निर्दिष्ट हुआ है।

मादाशोनि मन्व प्रयोगमें भी द्य, रोग और पमिष्योग ये तीन मन्व वतमाने हैं। यह उग्रशुक्रदेम मन्वोघिन होने पर मन्वकी मनुता, खोलपकी दूरि, प्याधिप, मन और इन्द्रियकी प्रमथता, निरःश्व ये सब लक्षण होते हैं। मन्वकके रोगदपमें गोघिन होने पर कण्ट, उपदेह, द्युता और खोलपमें लफका मन्व पादि लक्षण तथा पतिमोघित होने पर मनुमन्व, चरद, यागुवति, इन्द्रियविभ्रम, मन्वककी मन्वता पादि लक्षण देखनेमें पाने हैं। रोग और पतिश्विकी शमन कर-वातनागक प्रकिण करभी होती है। मन्वकके मन्वह, विमोघिन होने पर उस पर सुप्तनेपन कर्त्तव्य है। वद्य-वर्द्धक देह पायना पमिभूत होने पर एक दिनमें, दो दिनमें, समाहमें या पुनः पुनः पद्यना दिनों दो बार मन्व प्रयोग किया जा सकता है।

निरोविरेषनकी तरह पमयोद्ध भी पमिष्यन्दीमें तथा सर्वदेगनमन्व पमैतन्त्रमें प्रयोग है। निरोविरे-षक द्योमिने कोई द्रव्य पीन कर चुर्ब करे। पिता-निकार, क्रुति और विषामिपवरोधी नामःरगमें मनने द्वारा उस चुर्बका प्रयोग करे। चीप प्याधिक रक्षित-रोगमें मन्वर, इक्षारम, दुष्य, द्यत और मानरम इनमेंसे किसी एकका मन्व प्रयोग वितकर है। लय, दुर्बल, भीद, समुसार और स्त्रियोंकी निरःश्वदिके निप चोपधे चुर्ब-के साथ पजखेद पयात्त पकाय द्युप तेन पादिका प्रयोग करे।

भुक्त, अपमवित, पति तन्व, प्रतिग्रावो, ममिषी, पोतखेद, पोतोदक, पोतमय, पमोच, मनुक, विषाण, द्यवित, मोखाभिभूत, श्वात्, पातन, द्य, वेदावरोधिन और निरःश्वानामिष्यो इन सब द्यवितोंकी मन्वप्रयोग न करना चाहिये। जिन दिन पाज्या निरःश्व रहे, उन दिन भी मन्व प्रयोग विधिय नहीं है।

मन्व या भूम रोगमाता, पतिमाता, मीनन, द्यन वा मन्वमा प्रदस होनेसे या मशोगकाममें मन्वकके पति विमोघिन रहनेसे या विमोघित होनेसे पद्यना निरः-भाकीं मुक्त होनेसे प्याद्व रोगा है। निरोविरेषनमें दो प्रकारसे प्याद्व रोगा है—दीमके मन्वका और चीपकके कारण। उत्तमके कारण होनेसे मन्वमोघनी द्यन

घोर चयके कारणे होनेसे ठ'हणोय द्रव्य द्वारा प्रतिविधान करना विधेय है ।

प्रतिमय' चोदक कालमें प्रयोज्य है, यथा प्रातःकाल-
में निद्राभङ्गके बाद, दन्तधावनके बाद, घरसे बाहर
निकलनेके समय, मृदुपुरीपरयागके बाद, कवलप्रहण
घोर चञ्चन प्रयोगके बाद, यथायथ, यथायथ या पथ-
भ्रमणके बाद, अभुक्तकालमें, वमनान्तमें घोर दिवा-
निद्राके बाद तथा सायंकालमें । इन सब समयोंमें प्रयोग
करनेसे निश्चलित फल होते हैं । निद्राभङ्गमें सेवन
करनेसे रातको नासारभ्रमें सञ्चितमल परिष्कृत होता है
घोर मन प्रकुल रहता है । दन्तप्रचालनके बाद सेवन
करनेसे दन्त दृढ़ होते हैं घोर सुखमेंसे सुगन्ध निकलतो
है । गृहसे निर्गतकालमें सेवन करनेसे रजोभूय आदि
नासारभ्रमें प्रविष्ट नहीं होते । मलमुत्रावसानमें प्रयोग
करनेसे पाँखका भारोपन जाता रहता है । अभुक्तकालमें
सेवन करनेसे स्तितपयकी विशिष्टि घोर लघुता होती है ।
वमनान्तमें सेवन करनेसे स्तितपय-संछन्न श्रेष्ठा परि-
ष्कृत हो कर पचकी रुचि होती है । दिवानिद्राके बाद
सेवन करनेसे निद्राजग्य सुख घोर मलनाश होता है
तथा चित्तको एकाग्रता उत्पन्न होती है । सायंकालमें
सेवन करनेसे सुखसे निद्रा घोर प्रबोध होता है ।

इयत् उच्छिष्टित यथा नस्यको सांस भरके खींच
लेनेसे यदि वह सुख तक पहुँच जाय, तो उसे प्रति-
मय कहते हैं । इसमें क्लेशपरिमाणका भेद है ।

नस्य ग्रहण करनेसे स्वस्थस्थि के जर्दगत रोगोंको
शान्ति होती है, इन्द्रिय निर्मल होती है, सुख सुगन्धित
होता है; हनु, दन्त, गिर, घोषा, नाडु घोर वधमें ताकत
पहुँचतो है तथा वसिपलित, खालिय आदि रोग नहीं
होते ।

नस्यके पक्षमें कफजन्य रोगमें तैल, वायुजन्य रोगमें
यस, पित्तमें छत घोर वायुयुक्त विसरोगमें मज्जा प्रयोज्य
है । (सुश्रुत चिकित्सितरण ४० अ०)

नासिकायाद्व अधोत् जो ओषध नाकमें प्रयोग की
जाय, उसीका नाम नस्य है । छत, तैल घोर चूर्ण आदि
को सब ओषध नासिकामें व्यवहृत होती हैं, चर्मीको
नस्य कहते हैं ।

"नस्यगतं दृश्यते पीरिनीयामात्रं तदौषधम् ।

नाशनं नस्य कर्मेति तस्य नामद्वयं मतम् ॥"

(चरक)

चरक-सुखस्थानके पञ्चम अध्यायमें नस्य-विषयका
विस्तृत विवरण लिखा है ।

"क्षिप्तस्य गृह्यते नस्यं रसो वाष्पुःकटे गदे ।"

(चरक चिकित्सा ५ अ०)

दिनमें ही नस्य लेना प्रगुप्त है, यदि पीड़ाकी शक्ति
ग्रह छवि हो तो रातको भी ले सकते हैं । गिरोगमें
ही नस्य विशेष उपकारो है ।

मैयण्यरद्रावकीमें नस्यका विषय इस प्रकार लिखा
है—सैन्धवस्रवण, सोहिजनका बोज, श्वेतसर्पप घोर
कुटका बराबर बराबर भाग ले कर एक साथ मिलावे
घोर छागमुत्रमें उसे पोस कर नस्य दे । इससे तन्द्रा नष्ट
होती है । मधुक्तसार, सैन्धवस्रवण, वध, मिर्च घोर
घोरके समभागको पोस कर जनके साथ नस्य देनेसे
रोगो चेतनलाभ करता है ।

पिप्पलीमुल, सैन्धवस्रवण, पिप्पली घोर मधुक्तसार
का समभाग चूर्ण घोर छतना ही मिर्च चूर्ण, दोनोंको
एक साथ मिला कर कुक गरम जलके साथ नस्य प्रदान
करनेसे रोगी बहुत शब्द चेतनलाभ करता है घोर
तन्द्रा, प्रलाप तथा मस्त्रकका भार जाता रहता है ।

लहसुन घोर मिर्चके समभागको पोस कर कपड़े
बांध कर गल लेनेसे श्रेष्ठा भट होती है । कानो
सुरभीके डिम्बके तरलागका नस्य लेनेसे दुःपाण्य सादि-
पातिकाज्वर भी शक्तिशाली प्रशमित होता है ।

गिरीष पुष्पके रसमें हरिद्रा घोर दारुहरिद्राका चूर्ण
तथा छत मिश्रित करके नस्य ग्रहण करनेसे चातुर्थक
ज्वर दूर हो जाता है ।

वकपुष्प हृद्यके पत्तोंके रसका नस्य लेनेसे चातुर्थक
ज्वरकी शान्ति होती है । (मैयण्यरद्रावकी उपराध)

पक्ष पीनसरोगमें पाठादितैलका नस्य ग्रहण करनेसे
वह शक्ति शीघ्र उपशमित होता है । व्याघ्रितैलका नस्य
भी पूतनासारोगमें हितकर है । त्रिकटु, विद्रुन,
सैन्धव, छहतीफस, सोहिजनको छाग घोर दन्तोमूल
मल्यक २ तोलाको पोस कर १ घेर तैल घोर ४ घेर

मोक्षार्थं पाद धरते मध्य भेदेमे पूजितामोम नट हो
जाता है। इन्द्रवर, विद्व, निर्ध, मातामस, कटकम,
निरट, मध, मोहिन्द्रको प्राप्त होर विद्व इन्ने द्वारा
मध्य भेदा प्रयाप्त है।

१८. तेन १ मेर, मोमूत्र ४ मेर, आचारम ४ मेरमे
 रत्नपत्र, चिंशु, मिषे, घटुफल, तिक्कटु, यव, मोहि-पत्रको
 क्षाम धीर विद्वत् कृष्ण मिषा कर १ मेरको पाक कर
 गन्ध बन्धिमे योत्रम धीर पृतिनामशेग स्यामिति हो
 जाता है ।

पराशरिना जसके रमका मण्डलमे चयथा समको
 मण्डलमे बाँटनेमे मित्रावैद्याको मानि होई छै ।
 मित्र को मद्राजके मण्डले भी मिरका दई दूर होला
 छै । गौतको भीम घर दूधके साथ मण्डल लेनेमे जाना
 होयोपस मित्रावैद्याको निद्रासि होई छै ।

तिष्ठतैव ४ मेर, प्रागदुग्ध ४ मेर, भीमराजके २५
१६ मेरमें परण्डमूल, तगर-पादुका, गुदका, जौवन्तो,
राखन, रेशव, गुडवह, विदुङ्ग, गटिमधु घोर मीठ
प्रत्येक ६ तोला १ माग घोर २ रसीकी घूर पर पाक
करे। दोहे दमका मध्य भेमेंमे गिरका रोग दूर होता
६, दम गतिम घोर दमादि हट्ट हो कर हट्टिमति
घोर मादुमयों बुद्धि होती है।

कोकोकी भद्रम २४ तोला, सोबागिकी कोर २४ तोला, मिर्च ४० तोला और विष १४ तोला इन सब द्रव्यों की साहाय्यार्थ मर्दन कर लक्षण छेदने मिश्रण प्रशमित होता है । (अथर्वसंग्रह १० भाषाणीय और विरोधमधिकार) २ वैद्यको भावको रक्षणी, भाव ।

नरयदान (सं. पु.) भाय रत्नमहा पाषाण, सुंयनी-
की प्रिथिवा, मादयन । भारतमासी नय रत्नमहे प्रिथ
माया प्रकाशके नरयदान बनाने हैं । केशके भीतमि
मुद्रा निजाल कर एम भीतमि भागके लपर तरह ताह-
की लोटेई करके एक प्रकाशका द्युतर नरयदान प्रपुन
कामि है । मापायनतः काठका पोषण हिमाद्रिका
रभा धरके भीत लमोरे नय रत्नमि है । इसमि एक हिंद
नीला है जो हिमिमि बन्द रहला है । नय निजालमि समय
एक हिमि की निजाल कामि कीर जिर बन्द कर देने हैं ।
कहीं कहीं मय कहे सोषिमि भा नय रत्नमा जाला है ।

[illegible]

मन्त्रधारि (मं० द्यो०) गम्पाधार, गुं पमो रमईहा वा
तन, नामदाभी ।

नम्या (स० स्तो०) मानिजायेषिता दत् (शरीरपदः
मात् । मा ५११६) १ मानिका, माह । २ मानादिन,
माहका हेतु ।

मन्त्राधार (मं० पु०) मन्त्राधारः (मं० पु०) नद पत्र
जिममें सुंघनी रणी जाती है, नामदागी ।

महोत्त (मं० ति०) मन्मथा मातारण्या जना। मन्मथा
मह पण जिनभी मातमं रम्यो यादि डानमंके निवे द्द
जिया मया हो।

महं (दि० पु०) मंगुल प्रदेशी श्रीमयाया एक प्रचारक
मद्रिया सावय ।

मह (मं० पद्यः) ग य हय । प्रताप ।
महा (वि० पु०) महापौर, विनायकी पक्ष दत्त । इमं
महाजी राजाजन बनती है, मायूम काटि जाती है थोरा पसे
महाजी पादि मगाई जाती है ।

महा (दि० पु०) मन्त्रम, मातृगणे की हृदं मरीच ।

महम (द्वि० पु०) पुरदह गाँवनेको मोटो रक्ती, नगर ।

महाराज - यत्तु मातृशुभाशङ्कते निरुद्धं यत्तु गोपयितुं

हम भाषाओं के दो समूहों में से एक में प्रविष्ट हैं। दूसरा समूह

६ त्रिभुजेषु स्पर्शरेखा तन्मोध्यमद पङ्क्तिं धोर भट्टार-भूमीः।

मय पीछे राजा करने दी । पहामांगनने चादिनुय

पट्टाभने एक रात्रि प्रथम श्रिया, तदपमने पुनः पदने

[illegible]

साईं गये । जन्म (१९५५) मल्लाह । पत्नी साधना

મૂર્તિ જે, બોઈ, શ્રોઈ યનુનામ જાતેઈ, જિ શદમામ

बंशोव ज्ञानः गुरु भवतु भाषा धीवि , पद्मोद नारायण भवतु

[illegible]

ਦਿਵਸ ੨੧। ਭਾ. ਸਾਹਿਬਾਬਾਦੀ ਨਸ ੬, ੧੬ ਉਪਰ।

नहयानकी राजधानी थी। ई० मन्के पहले ४०० से ले कर १२० ई० के अन्दर नहयान वर्तमान थे।

इनके अमाई उग्रवदात (षट्पभदत्त) अपने श्वशुरके अधीन कोङ्कण प्रदेशके शासनकर्त्ता थे। इन्होंने सोमनाथ-पत्तनमें यष्टि दानादि किये थे। नहयानके मन्त्री वासना-गोत्रीय आयमने क्षत्रकी सममोद-गुणवन्तोंके मध्य एक गुहामण्डप निर्माण किया, जिसमें संन्यासी लोग रहते थे। इनके राजत्वकालके ४६० वर्ष में गुहामण्डप और उसके पासका एक जलाधार बनाया गया था। यह गुहा यात्रा भी वर्तमान है तथा उसके निर्माणकालकी उत्कीर्ण लिपि अब भी अच्छी तरह नजर आती है। गुहामें जो स्था स्तुति हुए हैं, वे देखनेमें बहुत मनोरम लगते हैं। नासिक देखो। जट्टिस लूटनका क्षहना है, कि जिस सम्प्रदायी विप्रम सन्तान कहते हैं, वह इन्हीं नहयानका बनाया हुआ है। भिक्षादि देखो।

नहय—मध्य प्रदेश अष्टाष्टोक्त कौकट-देशान्तर्गत महा-ग्रामविशेष। इन्द्रप्रस्थमें जब विप्रवर्धनीय राजा राज्य करते थे, उस समय विजयदत्त नामक एक राजपुत्रने इस देशमें या कर युद्ध किया। उसके समय जिस स्थान पर उनका लोड़ा मारा गया, वही स्थान 'नहय' वा 'नहयि' ग्राम नामसे प्रसिद्ध है। सर्पाघातसे जब विजयदत्तको मृत्यु हुई, तब यह ग्राम तबसे नहय हो गया। (महा व०) नहर (फा० स्त्री०) जल बहानेके लिए खोद कर बनाया हुआ रास्ता। यह खेतोंकी सिंचाई या यात्रा आदिके लिये तैयार की जाती है। बड़ी बड़ी नहरें प्रायः साधारण नदियोंके समान बना करती हैं और उनमें बड़ी बड़ी नावें भी चलती हैं। कहीं कहीं दो भोली या यह जलाशयोंका पानी मिश्रानेके लिये भी नहरें काटी जाती हैं।

नहरनी (हि० स्त्री०) १ जलमोका एक भोजार। यह भोजार झींझका एक लम्बा गोम टुकड़ा होता है और इसका एक सिरा चपटा और धारदार होता है। इससे माछून् काटे जाते हैं। २ इसी प्रकारका एक भोजार जिससे पोस्तको टोड़ो घोंघो जाता है।

नहरम (हि० स्त्री०) भारतकी नदियोंमें मिश्रितवाली एक प्रकारकी मछली। पहाड़ी भूतलोंमें यह अधिकतासे होती है।

नहरी (फा० स्त्री०) यह जमीन जो नहरके पानीसे सिंचा जाय।

नहश्वा (हि० पु०) कसरके नीचसे भागमें होनेवाला एक प्रकारका रोग। पानीके साथ एक विषय प्रकारका कीटा शरीरमें प्रविष्ट हो जाता है, उसीसे इस रोगकी उत्पत्ति है। इसमें पहले किसी स्थान पर छजन होती है। बाद कीटासा घाव होता है और तब उस घावमें से छीरोको तरहका कीटा घोंघो घोंघे निकलने लगता है जो प्रायः गंभीर लम्बा होता है। इस रोगमें कभी कभी पैर आदि अङ्ग बेकाम हो जाते हैं।

नहश्वा (हि० पु०) नहश्वा देखो।

नहना (हि० पु०) १ तांगके छिनमें यह पत्ता तिन पर गी चिड़ या घुटियां हो। २ नहानी बनानेका एक प्रकारका भोजार जो करनीकी तरहका होता है।

नहनाई (हि० स्त्री०) १ नहानीको क्रिया या भाव। २ वह धन जो नहलानेके बदलेमें दिया जाय।

नहलाना (हि० क्रि०) खान करना, नहवाना।

नहवाना (हि० क्रि०) नहलाना देखो।

नहयुत (हि० पु०) १ नहयुतोंका, नायूकका निगान। २ पशुशक्ती तरहका एक पंख जिसे फरहद भी कहते हैं। फरहद देखो।

नहं (हि० पु०) १ धुरी पहनाई जानेका पहिएके ठीक बीचका छिद। २ घरके चामेका चामन।

नहान (हि० पु०) १ नहानेको क्रिया। २ खानका पर्व।

नहाना (हि० क्रि०) १ खान करना। शरीरमें जितने रोमवृक्ष हैं, नहानेमें उन सबका मुँह पुन और साफ हो जाता है तथा शरीरकी धकावट भी दूर हो जाती है। भारतवर्ष खरोखे गरम देशोंमें लोग नित्य खड़े बैठ कर शीत आदिसे निवृत्त हो कर खान करते हैं और कभी घातःकात तथा मर्याद दोनों समय खान करते हैं। लेकिन ठंडे देशोंके लोग प्रायः नित्य नहीं नहाने, सप्ताहमें एक या दो बार नहाने हैं। २ शराबोर हो जाना, विनकुल सर हो जाना। इस अर्थमें 'नहाना' मद्यके साथ प्रायः 'उठना' या 'जाना' अर्थात् क्रिया लगाई जाती है। ३ रजोचर्ममें निवृत्त होने पर स्त्रीका खान करना।

महानी (हि० श्री०) १ दसखण सी। २ सीका रत-
नना होना।

महार (का० वि०) विषमें अमृतान खादि कुछ न किया
हो, बरमे मुँह।

महार—बसई इंदुमने देवादाजके साथ धान्नुमिह-
रागनका पट छोटा राग। भूरिमान इ बर्गमोन है।
इसके प्रधान सामना नाम भी महार है। इस रागमें दो
चपिकारो है जिनको उपाधि ठाकुर है। रागाकी पाय
हः भीनी है। बहोनाके मायकपाहुकी १५० न० कारमें
देने पड़ते हैं।

महारी (का० श्री०) १ जलशान, कमेवा, माता। २ बच
मुकु मिना पाटा को घोड़े की बंधे चयवा चाया सामान
दार कर केन पर गिलाया जाता है। ३ सुमन्मानीके
यहां बसनेवाला एक प्रकारका मोरबेदार सामान जो रात
भर पहना है और जिसके साथ बंधे रामीरो रोटी खाई
जाती है।

महि (म० चम०) न च हि च। निधि, बरमे मधी,
पमान। पयाय—घ, मो, न, चन, चना, ना।

महिचम (हि० पु०) विविधाको तरहका एक महना भी
पौरन छोटी चमत्तोंमें पहना जाता है।

महिच—घरघके बाघोन दीक्षान्त धर्मके धनार्गत देवता-
विशेष। इसका दूसरा नाम है मुहादजीर। अमरयोग
मुहादेने जो तीन देवमूर्तियां प्रपविग की चमत्तोंमें से
दूसरे हैं।

महिचा (हि० श्री०) बरिगर देवी।

महिरनी (हि० श्री०) बररी देवी।

महा (हि० चम०) एक चन्द्रय जिसका व्यवहार निधि
या चर्चोक्ति प्रकट करनेके लिये होता है।

महुव (म० पु०) महुने इति ज्ञातं हि कर्मणि या उपपत्ति।
(दूरदिवि० १८४५, ३५, ४१५) १ नाममिद, एक नामका
नाम। २ चन्द्रमंडप रागमिद, चन्द्रमंडके एक रागाका
नाम।

चन्द्रमंडप राहुको लड़की प्रभाके समक्षे पंच पुत्र
सामक पुत्र। जिनमें से लहुव प्रथम है। इनके साथ चार
भारतीने नाम प्रमदः सुहसर्ग, बभ, रति और चरिता
है। (दिवि० १८५०)

चन्द्रमंडप राहु रागाके पुत्र, सुहरराके पोत। इनको
माताका नाम कर्मावरो और श्रीका नाम चरीर-
सुन्दरी या। इनके लः पुत्र से जिसके नाम से हैं,—यति,
पयाति, मयाति, पायाति, विपति और कति। इनमें
मुण्ड नामक एक देवता मय किया या। ये बड़े म्हा
परायण और प्रथम-उराजाना रागा से। इनके सुमान-
से उक्तोका नाम-विमान तक भी न था। इनमें पच,
नपला, वेदगाठ, इन्द्रियनिपच और पराक्रम द्वारा
तेलोनका स्मरण प्राप्त किया था। एक समय चन्द्रात-
मय इन्हीं गोवध किया था। इस पर मन्विंदीने
इनके हय गोवध पावको एक भी एक चापिधर्म विमान
कर पावमुख किया था। जिनो समय महर्षि कवन
प्रयागभीषमें जनके चन्द्र तगना कर रहे थे। धीवरीने
इन्हें मन्वीके साथ पचकु राजाके साथ भेग छाना। पुराव-
में एक जगह और लिखा है, कि जब इन्द्रने उरावुरकी
मारा था, तब समय इन्द्रको मन्वीका लगी थी। तबके
भयने इन्द्र १००० वर्ष तक कामलनाममें श्रित कर रहे थे।
उक्त समय इन्द्रागन पर जब कीर्त न रहा, तब मुह मुह-
मतिने लहुवकी योग्य जान कुछ दिनोंके लिये इन्द्रपद
दिया था। यहाँ इन्द्रावा पर मोहित हो कर इन्हीं पद
चरने पास बुलाना चाहा। तब उहमतिको मनाहके
पर इन्द्राकीने कहना प्रेक्षा कि, “यदि जानकी पर बैठ
कर मन्विंदीके कन्धे पर हमारे यहाँ पावो, तो हम
तुम्हारे साथ चलें।” यह सुन कर राजाके तदनकार को
हिया और छहराहटमें था कर मन्विंदीके कहा—वर्ग,
मयं पयातुं जन्दी चनो, जन्दी चनो। इस पर चरख
मुनिने इन्हें माय दे दिया कि, “वो मर्ग को ना।” तब से
यद्यपि वसति हो कर बहुत दिनों तक मयं योनिमें रही।

महाभारतमें इनका विवरण इस प्रकार दिया है—
पापप्रमन सब होतबनमें रहते थे तब समय एक
दिन मोममेन निहारको बाहर निकले। तहाँ जिनो
महाभारत मयंमें उम्हें एककु लिया। भेदके पानेमें
विमान होता देव मुक्तिर होय पुरोहितके माय इन-
को तनाममें निहले और जहाँ से मयंसे पचकु महे से
बहा हो पचकु महे। मयं बहुत बड़ा था। विविध
ऊपरसे उम्हें मरीको उकी हुई थी। मरीका

धमड़ा मित्र भिव रंगोंसे सुगोभित था। कान्ति सोने-
की थी, सुख गुदाकार और चतुर्दन्तायुक्त था। युधिष्ठिरने
अपने प्रिय भाईकी मांसे घिरा देख कहा, "तुम किस
प्रकार इस जासमें कंसे गये ?" भीमने उत्तर दिया, 'वे
नहुप नामक राजर्षि हैं, ब्राह्मणोंके शापसे सांध हो गये
हैं।' इस पर युधिष्ठिरने मापकी सम्बोधन कर कहा,
'तुम कौन हो, देवता हो, या दैत्य हो, या सरग हो ?
सब सब कहो। तुम भीमसेनकी क्यों निगल रहे हो ?
ऐसी कौमसी बल है जिससे देनेसे तुम प्रमथ हो सकते
हो ? ऐसा कौमसा उपाय है जिससे तुम इसे छोड़
सकते हो ?'

इसके उत्तरमें सर्वने कहा, "हे जनक ! मैं तुम्हारे पुत्र-
पुरुष सोमवंशीय चायु राजाका पुत्र हूँ ; सोमसे निम्न
पञ्चम पुरुषमें नहुप राजा नामसे प्रसिद्ध था। मैंने यज्ञ,
तपस्या, आध्याय, दम और विक्रमसे सहजमें त्रैलोक्यका
ऐश्वर्य प्राप्त कर लिया था। उस समय वे सा ऐश्वर्य पा-
कर सुभक्तोंके कुछ समष्टि हो गये। तब मैंने अपनी
शिविका ढोनेके लिये हजारों ब्राह्मणोंको नियुक्त किया
था। पूर्व कालमें मैं स्वर्गके दिव्य निगान पर चढ़ कर
अधर अधर घूमा करता था, अभिमानसे सत्त हो कर किसी-
की परवाह नहीं करता। ब्रह्मर्षि, देव, गन्धर्व, राक्षस
और पद्मगण सभी त्रिलोकयात्री सुभक्त कर देते थे। सुभ-
क्तोंसे ऐसी दृष्टि-शक्ति थी कि जब मैं कभी किसी प्राणीकी
एक बार देख लेता, तब उसी समय उसका तेज-हरण
कर लेता था। हजारों ऋषि मेरी शिविका ढोते थे, इसी
कुनीतिमें मैं शोषित हो गया। यथा समय अगस्त्य मुनि
मेरी शिविका ले जा रहे थे कि उस समय मेरे पैर उनके
शरीरमें झू गये। इस पर वे बहुत विगड़ें और "तुम
ध्वंस हो जा", "तुम सर्व हो जा" ऐसा शाप दे दिया।
उसी समय मैं उस पापसे मैं शोषित हो कर विमान
परसे भीधे मुँह गिर पड़ा। जब मैंने अपनेकी सर्पके
रूपमें देखा, तब अगस्त्य मुनिकी जाना प्रकारसे सुनि-
की। अगस्त्यने संतुष्ट हो कर सुभक्तोंके कहा कि, धर्म-
राज युधिष्ठिर तुम्हें इस शापसे मुक्त करेंगे। तुम्हारे
और अभिमान स्वरूप पापका चय हो आनेसे पुनः तुम
पुण्यकर्म प्राप्त करोगे। किन्तु इतना होने पर भी मैं

ज्ञानगुण नहीं हुआ था। तुम मेरे कुछ प्रयोंके सम्यक्
उत्तर दे कर अपने भाईको छुड़ा ले जा।" जब युधिष्ठिर-
ने प्रश्न पूछनेके लिये उससे कहा, तब सर्वने इस प्रकार
प्रश्न किया ब्राह्मण कौन है और वेद कौन है ? उत्तर-
में युधिष्ठिरने कहा, 'मत्स्य, दान, क्षमा, शोभता, अक्रूरता
तपस्या और दया ये सब जिनमें विद्यमान हैं वे ही
ब्राह्मण हैं—जो सुख-दुःख-रहित हैं और जिन्हें जानने-
से मनुष्यका शोक दूर हो जाता है वे ही परब्रह्म वेद
हैं।' नागराजने और भी कई प्रश्न किये थे जिनका
उत्तर युधिष्ठिरने सम्यक् रूपसे दे दिया। इस पर सर्व-
रूपो नहुपने संतुष्ट हो कर कहा, 'यदि सभी मनुष्य गुरु
और सुबुद्धिमान् ही और ऐश्वर्य मंद रहें' सोहित करता
हो, तो ऐश्वर्य सुखमें समाप्त सभी पुरुष मोहसे मुग्ध
हो सकते हैं। इसका प्रथम उदाहरण मैं हो हूँ। मया-
बल ! तुम्हारा भाई निरापद है और तुमसे मेरा भाव
दूर हो गया। यतः तुम्हें अंधविवाद है। इतना कह कर
नहुपने सर्वरूपका परिवर्तन करके दिव्य-शरीर धारण
किया और उसी समय वे स्वर्गको चले गये। (भात
आदि, वन, शान्ति और अनु० १०, भागवत, १६मनु०)

ऋक्संहितामें भी ये चायुके पुत्र और ययातिके पिता
माने गए हैं। (ऋक्ष १।१।११।१.१।१।१)

३ सूर्यवंशीय अश्वरीपके एक पुत्रका नाम। इनके
पुत्रका नाम ययाति था। (रामायण बाल० ७० व०)

४ मनुपुत्र ऋक्संहिताका एक ऋषि। इन्होंने ऋक्-
संहिताके ८ मण्डलके १०१ सूक्त बनाए हैं।

(भागवतपर्वी अथर्ववेदानुक्रमिका)

५ कुशिक-वंशीय एक ब्राह्मण राजा। सप्ताष्ट्रि-
खण्डमें पाठारीय जातिके विश्वरथमें लिखा है कि कुशिक
राजाके पुत्र नहुप, नहुपके पुत्र जात्राति और जात्राति-
के पुत्र कुण्डिन थे। यद्यपि योग कोशिकराज वा दोग-
राज नामसे प्रसिद्ध हैं। कुशिक वंशकी कोनिक देवी
दुर्गा मायी जाती हैं, इस लिये यह वंश दोग कह-
लाता है।

६ राजर्षिभेद, एक राजर्षिकी नाम। ७ मरुत्तुभेद,
मरुत्तुका नाम। ८ परमेस्वर। ९ हय, विशुका नामा-
न्तर। १० मनुष्य, पादमी।

प्रकार परस्पर हजामत करते करते ये लोग अन्य छत्र जातियों की भी अन्य नाथों की तरह हजामत करने लगे। अन्तमें इस प्रकार करते करते अपनी असलियतों को भूल कर अपनेकी नाई ही समझने लगे। परन्तु इनके साथमें इनके ब्राह्मणत्वका पुष्टता "पांडे" शब्द ज्यों का त्यों बना रहा। इस संपाधिसे ये लोग ब्राह्मण समझे जाते हैं। ये लोग केवल हजामत ही नहीं करते, बल्कि कुछ छेनी-बारो, कुछ सेवावृत्ति और कुछ मित्यकारी करते हैं। युक्तप्रदेशके फर्रुखाबाद, कानपुर तथा प्रयाग आदि जिलोंमें ये लोग अधिक संख्यामें रहते हैं।

नाउत (हि० पु०) मन्त्र-यन्त्रसे भूतमेत आहूतनेवाला मनुष्य, भोक्ता।

नाउन (हि० स्त्री०) नाहन देश।

नाउन्द (फा० वि०) निराश।

नाउन्दो (फा० स्त्री०) निराशा।

नाऊ (हि० पु०) नाई देखी।

नाऊँ (फा० वि०) अगिस्तित, बिना सिखाया हुआ।

पहलू।

नाऊ (सं० पु०) नऊं सुखमिति अऊं दुःखम्, तदास्थ-
त्वेति मन्त्रादित्यादिना निपातनात् प्रकृतिभावः। १ स्वर्ग,
लहं दुःख नहीं, भविष्यत्तुं दुःखकी सम्भावना नहीं,
उसी स्थानका नाम नऊक है। २ अन्तरोच, आकाश। ३
अस्त्रपातविशेष, अस्त्रका एक आघात, जो इस अस्त्रसे
विद्य होता है, उसकी मयस्थ मरुतु होता है।

नाऊ (हि० स्त्री०) १ नासा, नासिका। नासिका देखी।
२ कपालके कोशों आदिका मल जो नाऊसे निकलता
है, रेट, नेटा। ३ लसकीका यह डंडा जिस पर चढ़ा
कर बरतन धरादे लाते हैं। ४ चरखेमें लगे हुई एक
चिपटी सऊड़ी जो अगले खूँटेके आगे निकले हुए
थेलाके निर पर लगी रहती है और जिसे एकद्वार कर
चरखा घुमाते हैं। ५ प्रतिठाकी वस्तु, गोमाकी वस्तु। ६
प्रतिष्ठा, इज्जत, मान। ७ मगरकी जातिका एक जन्तु।
मगर और नाऊमें फर्क यह है कि यह उतनी लम्बी
नहीं होती, पर चौड़ी अधिक होती है। मुँह भी इसका
अधिक चिपटा होता है और उस पर चढ़ा या घुंघन नहीं
होता। पूर्वमें काटि प्यट नहीं होती। यह जमीन पर

मगरसे अधिक दूर तक जा कर जानबरो की खींच ला
सकती है। चरखू तथा उसमें मिसनेवाली और कोटी
कोटी नदियोंमें यह बहुत पाई जाती है।

नाऊ—चातुक्ष राजवंशके एक राजपुत्र। ये चातुक्ष-
राज प्रथम आचुगिदेव और प्रथम चातुन्दके भाई थे।
निजाम राज्यके अन्तर्गत वर्तमान एलनुर्ग नगरमें
इसकी राजधानी थी।

नाऊचर (सं० पु०) नाके स्वर्ग नभसि या चरति चर-ट।

१ मगनचर देवता और महादि, आकाशमें विचरण
करनेवाले देवता और यह आदि। २ पिउदेवमंद।

नाऊड़ा (हि० पु०) नाऊका एक रोग। इसमें नाऊके
बाँसके भीतर जलन और सूजन होती है और नाऊ पक
जाती है।

नाऊतीर्थ—धारापतनीर्षके निकट एक तीर्थका नाम।

नाऊमटी (सं० स्त्री०) स्वर्गकी नऊको, अमरा।

नाऊनाथ (सं० पु०) नाऊअथ स्वर्गस्थ नाथः नाथकः

५-तत्। इन्द्र।

नाऊनाथक (सं० पु०) नाऊअथ नाथकः। इन्द्र।

नाऊनाथक-पुरोहित (सं० पु०) नाऊनाथकस्य पुरोहितः

५-तत्। ब्रह्मसि।

नाऊपाल (सं० पु०) नाऊं पालयति पाल-अच्। देवता।

नाऊपुर—अयोध्याके अन्तर्गत फैजाबाद जिलेका एक
शहर। यह फैजाबादसे २६ कोस दूर तमसा नदीके
किनारे अवस्थित है। तीन सौ वर्ष पहले महम्मद नाऊ
नामक किसी मनुष्यने इसे बसाया। शायद पहले इसका
नाम मकिपुर था, पीछे अफगन्यसे नाऊपुर हो गया है।

नाऊपुट (सं० स्त्री०) स्वर्गलोक।

नाऊनुदि (हि० वि०) जिसका विशेष नाऊ ही तक ही,
पुद्गुद्विवासा, पीकी समझका। जियोंकी निन्दामें
लोग कहते हैं, कि उसकी बुद्धि नाऊ ही तक होती है,
पर्यात् यदि उन्हें नाऊ न हो, तो वे अन्धामास्य सब
खा जाय।

नाऊरा—देवाकाष्ठमागे भोसोंकी एक शाखा। ये लोग
नाथक और नाथकी नामसे भी प्रसिद्ध हैं। "काशी प्रसा"
नामसे भी ये लोग पुकारे जाते हैं। भीरु देखी।

नाऊशोक (सं० पु०) नाऊं शोक, आह्वानशोक।

नहुपाख्य (मं० स्त्री०) नहुप आख्या यस्य । तगरपुष्प ।
नहुपात्मज (मं० पुं०) नहुपस्य आत्मजः । नहुप राजाके
पुत्र, राजा ययाति ।

नहुष्य (मं० स्त्री०) नहुष्य सम्बन्धी ।

नहर (हिं० स्त्री०) निज्जन्मसे मित्रनेवाली एक प्रकार-
की भेड़ । ये कभी कभी निपालमें भी पा जाती है ।
जब यहाँ अधिक पड़ने लगता है, तब इसके भूख पर्वत-
की चोटीमें उतर कर सिन्धुनदीके किनारे तक भी पा
जाते हैं ।

नह्मन (मं० पुं०) १ खिन्नता, उदासोन्नता, सनह्मणी । २
अशुभ लक्षण ।

नाडं (हिं० पुं०) नाड देवी ।

नागा (हिं० स्त्री०) १ नागा देवी । (पुं०) २ एक प्रकार-
के साधु जो नागों की रक्षी हैं ।

नागी (हिं० स्त्री०) नागी देवी ।

नाट (हिं० स्त्री०) पशुघोंकी चारा खादि देगका मिट्टी
या एक बड़ा घोर बीड़ा बरतन, छोटी ।

नांदोड़—अंग्रेजोंके रियाकान्य एजिप्सोके अन्तर्गत राज
वीपला राज्यकी राजधानी । यह पचा० २१° १४' उ०
घोर देगा ७१° १४' पू०, सूरतसे १२ मील पूर्व-उत्तरमें
अवस्थित है । जनसंख्या ११२१६ है । कहते हैं, कि
११०४ ई०में सुसलमान-शासनकर्त्तापनि नांदोड़के प्रधान
को यहाँसे निकाल भगाया और नांदोड़ पर अपना पूरा
दखन जमा लिया । पोंछि सुसलमानोंके अधःपतन होने
पर १८३० ई०में नांदोड़ पुनः उनके हाथ आ गया । यहाँ
छोटीका मोटा यपड़ा तैयार होता है ।

ना (मं० पद्य०) एक शब्द जिसका प्रयोग पक्षीजति या
निषेध सूचित करनेके लिए होता है, नहीं, न ।

नाइसिकाकी (का० स्त्री०) मेनका अभाव, विरोध, फूट,
समर्पण ।

नाइन—अष्टावक्र अन्तर्गत समूर् रा नामक देशीय राज्यकी
राजधानी । यह पार्श्व राज्य है और हिमालयके उत्तर
हिमन्तामे २० कोस दक्षिणमें अवस्थित है । यह बहुत
परिष्कार नगर है । यहाँके गृहवादि पत्थरके, बने हुए हैं ।
राजप्रासाद नगरके बीचमें दृष्टायमान है । १८१४ ई०के
नेपाल-युद्धमें यह नगर अंग्रेजोंके अधिकारमें आया ।

गोरखा लोगोंने इसे समूर् रा राजासे ले लिया था । युद्ध-
के समय ही ज्ञाने पर यह फिर राजा को दे दिया गया ।
समूर् देवी ।

नाइन (हिं० स्त्री०) १ नाई आतिथी स्त्री । २ नाईको
स्त्री ।

नाई (हिं० स्त्री०) १ समान दगर, एकही गति । (वि०)
२ समान, सुख ।

नाई (हिं० पुं०) नापित, हज्जाम ।

नारिपांडे—काश्याकुल ब्राह्मणोंका एक भेद । लगभग चार
सौ वर्ष व्यतीत हुए कि सुसलमान लोगोंके साथ मदारा-
पुरके अधिराति भूमिहार ब्राह्मणोंका भीषण युद्ध छिड़ा ।
युद्धमें ब्राह्मण परास्त हुए और सबके सब काट मरे । केवल
एक भगन्तराम ब्राह्मणकी स्त्री जो गर्भिणी थी बच गई
थी । सुसलमानोंके उपद्रवके भयसे वह स्त्री स्वःना नामक
किसी नाईके साथ उसकी ससुरालमें आ बसी । युद्धमें जो
उसके पति, पुत्र, देवर आदि मारे गए थे, उससे वह बहुत
दुःखित रहती थी और भोजन नहीं करनेके कारण वह
दिनों दिन दुर्बल और मृत्तिकीन हो चली । गर्भके दिन
पूर्ण होने पर बहुत कष्टसे उसकी एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।
प्रसव करनेके बाद वह ब्राह्मणी इस लोकसे चल बसी ।
नाईने उसकी किये ब्राह्मण द्वारा कराई घोर बालकदा
जातसंस्कार भी ब्राह्मणोंकी रीतिके अनुसार कराया ।
बालकका नाम रखा गया गर्भू । गर्भूने जब पाठसे वर्षमें
कदम रखा, तब उस नाईने अपने पुरोहित सुसमनि
तियारोंकी वह बालक समर्पण कर दिया, क्योंकि उनके
एक भी समान न था । सुसमनि तियारोंजीने उस गर्भू
बालकका यज्ञोपवीत वेद रीतिमें किया और उसे धेनु-
ध्यान भी कराया । काश्या उसका गोत्र रखा गया ।
गर्भूके वर्षमें बटोरो घोर पशुरेकी पूजा प्राप्त भी शुभ-
कार्यमें होती है । यह बटोरो-पशुरेका पूजन सम नाईके
उपकारके स्मरणका हेतु है ।

इसके दो भेद हो गए हैं । जो बड़े लिये मनुष्य के,
वे तो अपनेको ब्राह्मण समझ कर काश्याकुलोंमें मिल
गए और जो पट्टे-लिये न थे, वे एक पक्षी घोर बटोरो
का पूजन करते करते परस्पर अज्ञाति वर्गकी हज्जाम
भी बनने लगे, यही नारिपांडे नामके प्रसिद्ध हुए । इस

प्रकार परस्पर हजामत करते करते ये लोग अन्य छत्र जातियों की भी अन्य नाइयों की तरह हजामत करने लगे। अन्तर् में इस प्रकार करते करते अपनी असलियत को भूल कर अपनेकी नाई ही समझने लगे। परन्तु इनके साथमें इनके ब्राह्मणत्वका पुष्टता "पांडे" शब्द ज्योंका त्यों बना रहा। इस उपाधिसे ये लोग ब्राह्मण समझे जाते हैं। ये लोग केवल हजामत ही नहीं करते, बल्कि कुछ खेती-बारो, कुछ सेवावृत्ति और कुछ शिल्पकारी करते हैं। युक्तप्रदेशको फर्रुखाबाद, कानपुर तथा प्रयाग आदि जिलोंमें ये लोग अधिक संख्यामें रहते हैं।

नाउत (हि० पु०) मन्त्र-यन्त्रसे भूतमेत आहूतनेवाला मनुष्य, भोक्ता।

नाउन (हि० स्त्री०) नाउन देखा।

नाउन्द (फा० वि०) निराश।

नाउन्देदी (फा० स्त्री०) निराशा।

नाऊ (हि० पु०) नाई देखी।

नाऊँ (फा० वि०) अगिस्तित, बिना सिखाया हुआ।

अवहट्ट।

नाक (सं० पु०) नकं सुखमिति अकं दुःखम्, तथास्य-तेति नञ्वाङित्यादिना निपातनात् प्रकृतिमात्रः। १ स्वर्ग, लक्ष्मी दुःख नहीं, भविष्यत्में दुःखकी सम्भावना नहीं, उची स्थानका नाम नरक है। २ अन्तरोक्ष, आकाश। ३ भस्मपातविशेष, अरुणका एक भावता, जो इस पक्षसे विद्व होता है, उसकी पयस्य स्तरु होती है।

नाक (हि० स्त्री०) १ नासा, नासिका। नासिका देखी। २ कपालके कोमो आदिका मल जो नाकसे निकलता है, ईंट, नेत्रा। ३ लकड़ीका बड़ डंडा जिस पर चढ़ा कर बरतन खरादे लाते हैं। ४ घरखेमें लगे हुए एक विपरीत मकड़ी जो घगले खूँटेके बागि निकले हुए धूलनकी छिरे पर लगी रहती है और जिसे पकड़ कर चरखा घुमाते हैं। ५ प्रतिष्ठाकी वस्तु, मोभाकी वस्तु। ६ प्रतिष्ठा, इज्जत, मान। ७ मगरकी जातिका एक जन्तु। मगर और नाकमें फर्क यह है कि यह चतनी चखी नहीं होती, पर चोड़ी अधिक होती है। सुँह भी इसका अधिक विपदा होता है और उस पर चढ़ा या घूँस नही होता। पूँखमें काटि पट्ट नहीं होते। यह जमोत्र पर

मगरसे अधिक दूर तक जा कर जानबरी की खींच ला सकती है। चरघू तथा उसमें मिसनेवाली घोर छोटी छोटी नदियोंमें यह बहुत पारि जाती है।

नाक—चातुस्य राजवंशके एक राजपुत्र। ये चातुस्य राज प्रथम आधुनिदेव और प्रथम चातुन्दके भाई थे। निजाम राज्यके अन्तर्गत वर्तमान एलतुर्ग नगरमें इनकी राजधानी थी।

नाकचर (सं० पु०) नाके स्वामी नमसि वा चरति चर-ट।

१ गगनचर देवता और महादि, आकाशमें विचरण करनेवाली देवता और यह आदि। २ पित्रदेवभेद।

नाकड़ा (हि० पु०) नाकका एक रोग। इसमें नाकके बाँधके भीतर जलन और सूजन होती है और नाक पक जाती है।

नाकतीर्थ—भारापतमतीर्थके निकट एक तीर्थका नाम।

नाकनटी (सं० स्त्री०) स्वर्गकी नत्तकी, पसरा।

नाकनाथ (सं० पु०) नाकस्थ स्वर्गस्थ नाथ; नायकः

इत्थं। इन्द्र।

नाकनायक (सं० पु०) नाकस्थ नायकः। इन्द्र।

नाकनायक-पुरोहित (सं० पु०) नाकनायकस्थ पुरोहितः

इत्थं। वृहस्पति।

नाकपाल (सं० पु०) नाकं पालयति पाल-अप्। देवता।

नाकपुर—अयोध्यासे अन्तर्गत फैजाबाद जिलेका एक शहर। यह फैजाबादसे २६ कोस दूर तमसा नदीके किनारे अवस्थित है। तीन सौ वर्ष पहले महम्मद नकी नामक किसी मनुष्यने इसे बसाया। शायद पहले इसका नाम नकिपुर था, वीक्षि अवस्थंशसे नाकपुर हो गया है।

नाकट्ट (सं० स्त्री०) स्वर्गलोक।

नाकट्टि (हि० वि०) जिसका विशेष नाक ही तक हो, सुदुर्बुद्धिवाला, भोकी समझका। जिवोंकी निन्दामें लोग कहते हैं, कि उनकी बुद्धि नाक ही तक होती है, अर्थात् यदि उन्हें नाक न हो, तो वे भन्ध्यामत्तर सब खा जाय।

नाकरा—देवाकाण्डनामो भोक्ताकी एक शाखा। ये लोग नायक और नायकी नामसे भी प्रसिद्ध हैं। "काशी प्रज्ञा" नामसे भी ये लोग पुकारे जाते हैं। भीठ देखो।

नाकलोक (सं० पु०) स्वर्गलोक, आकाशलोक।

नाकवनिता (सं० स्त्री०) नाकस्थ यनिता ॥ तत् । स्वर्गिय स्त्री, यन्त्र ।

नाकवेधक (सं० पु०) ॥ इन्द्र ।

नाकसदृ (सं० पु०) नाके स्वर्ग सोदति सदृक्षिपु । स्वर्ग-यासी, देवता ।

नाका (हिं० पु०) १ प्रवेगदार, मुशाना । २ यह मुख्यस्थान जहाँमें किसी नगर बस्ती आदिमें जानेके मार्गका पारम्भ होता है, मजो या रास्तेका आरम्भ स्थान । ३ नगर दुर्ग आदिका प्रवेगदार, फाटक । ४ जुलाहोंका एक भीजार जो बाठ गिरह मन्त्रा होता है पोर जिसमें तानेकी तानि बांधी जाते हैं । ५ सूईका छेद । ६ यह प्रसिद्ध स्थान जहाँ निगरानी रखने या किसी प्रकारका महसूल आदि वसूल करनेके लिए बिपाही तैनात हो । ७ मगरकी जातिका एक जनजन्तु, नाक ।

नाकापगा (सं० स्त्री०) नाकस्थ स्वर्गस्थ पापगा नदी । स्वर्गनदी, मन्दाकिनि ।

नाकापदी (हिं० स्त्री०) १ प्रवेगदारका अवगोध । २ फाटक आदिका छेका जाना । (पु०) ३ यह बिपाही जो फाटक पर पहरके लिए खड़ा किया गया हो । ४ बिपाही, चौकीदार, पहरदार ।

नाकाबिल (फा० वि०) चयोज्य ।

नाकाबरा (फा० वि०) बुरा, खराब, निकम्मा ।

नाकिनू (सं० पु०) नाकः स्वर्गः वासस्यान्तर्वासास्त-प्यति नाकः इति । देवता ।

नाकिनाय (सं० पु०) नाकिना स्वर्गवासिना नायः । इन्द्र ।

नाकिस (फा० वि०) निकम्मा, बुरा, खराब ।

नाकी (हिं० पु०) देवता ।

नाकु (सं० पु०) मन्त्रेऽनेनेति नमः-ह (कडिगडिगडिगडि-गनामिति । वग, १।१८) १ सुनिविशेष, एक मुनिका नाम । २ पर्वत, पहाड़ । ३ वन्यीक, दीमककी मछीका टूट, बेमोट । ४ मोटा, टीला ।

नाकुन (सं० पु०) नकुपस्य गोत्रापत्यमियपु । १ नकुल-पुत्र, नेवलेकी मन्तति । (स्त्री०) २ गौमाध्याविशेष, गौव सोनीके एक भाषाका नाम । ३ राखा । ४ मेमरका मूदना । ५ चप । ६ यवतिन्ना । (त्रि०) ७ नकुलपञ्चम्य, नेवलेके देश ।

नाकुन (नाकुर) — १ युक्त-प्रदेशके सहरामपुर जिलेकी एक तहसील । यह पचा० २८° ३४' ३०" उ० पोर देगा० ७७° ७' ३०" ३४ पू०के मध्य अवस्थित है । यह तहसील चार परगने ले कर बनी है जिनके नाम ये हैं,—सुलतानपुर, सरसावर, नाकुर पोर गहो । जन-संख्या प्रायः २०३४८४ है । इसमें ३८४ पाम पोर ८५४४ खगते हैं । कहते हैं, कि ४४ पाण्डव नकुलने यमुनाके किनारे अपने नाम पर नाकुन नामका एक नगर बनाया था, यायद इसीमें इस प्रदेशका नाम नाकुर या नकुर पड़ा । यहाँ एक सुन्दर जैनमन्दिर है ।

२ सत तहसीलका एक नगर । यह पचा० २८° ३६' ३०" उ० देगा० ७७° १८' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ५०३० है जिसमेंसे हिन्दूकी संख्या ही सबसे अधिक है । यहाँ एक प्रसिद्ध, सराय पोर स्कूल है ।

नाकुलि (सं० पु०) नकुलस्येदं चपयं ना चत इज । १ नकुल सम्बन्धी । २ नकुलापत्य, नेवलेकी मन्तति ।

नाकुली (सं० स्त्री०) नकुलेन दृष्टा, पीता वा नकुल-अप-डीव । १ कुल-टोकन्द, एक प्रकारका कन्द । यह सब प्रकारके विषों, विशेष कर सर्पके विषकी दूर करती है । इसके दो भेद हैं, एक नाकुली पोर दूसरी गन्ध-नाकुली । गुण दोनोंका एकसा है । गन्धनाकुली नाकुली-से अच्छी होती है । पर्याय—सर्पगन्धा, सुगन्धा, रक्त-पत्रिका, ईश्वरी, नायगन्धा, अहिभुक्, सरसा, सर्पादनी, व्यान्तगन्धा । गुण—तिक्त, कटु, उष्ण, विदोष पोष विर-नायक । २ राखा । ३ चविका, चप । ४ यवतिन्ना, यवतिन्ना । ५ ज्वेतकपट्टकारी, सफेद भटकटैया । (त्रि०) ६ नेवला सम्बन्धी । ७ नकुल नामक पाण्डवका बनाया हुआ ।

नाकुलान्ध (सं० स्त्री०) दृष्टिको खराबता ।

नाकुलपन् (सं० पु०) सर्प, साँप ।

नाकेदार (हिं० पु०) १ फाटक पर रहनेवाला बिपाही । २ यह कर्मचारी जो पाने जानिके प्रधान प्रधान स्थानों पर किसी प्रकारका महसूल आदि वसूल करनेके निवे तैनात हो । (वि०) ३ जिसमें नाका या छेद हो ।

नाकेवन्दी (हिं० स्त्री०) नाकेवन्दी देली ।

मार्कण्ड (सं० पु०) स्वर्ग की अधिपति, इन्द्र ।
 नाकेश्वर (सं० पु०) नाकस्य ईश्वरः । इन्द्र ।
 नाकोदर (नकोद) — १ पञ्चावक भूतगर्त जलश्वर जिले-
 की तहसील । यह भूभा० २०° ५६' से २१° १५' उ०
 और देशा० ७५° ५' से ७५° ३०' पू० के मध्य अवस्थित
 है । भूपरिमाण २०१ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग
 २२२४१२ है । इसमें २११ ग्राम लगते हैं । पाय चार
 लाख रुपयेसे अधिककी है ।

२ सहा तहसीलका एक शहर । यह भूभा० २१° ८'
 उ० और देशा० ७५° २८' पू० के मध्य अवस्थित है । जन-
 संख्या लगभग ८८५८ है । यह एक बहुत प्राचीन शहर
 है । कहते हैं, कि पहले हिन्दू-काली राजाओंके अधि-
 कारके समय यह नगर वर्तमान था । कोई राजपूत
 सरदार सुसलमान की गया था और उसीने पहले पहल
 इसे अपने अधिकारमें लिया था । जहानगीरके समय यह
 स्थान उसी राजपूतवंशीय सुसलमान शासनकर्त्ताकी
 जागीरके रूपमें दे दिया गया । सिख-सरदार तारासिंहने
 यहांसे सुसलमान शासनकर्त्ताकी निकाल कर इसे अपने
 अधिकारमें कर लिया । पीछे धैबा नामक किसी व्यक्तिने
 यहां एक दुर्ग बनवाया, उस समय समूचा प्रदेश पर अपना
 पूरा अधिकार जमा लिया । पञ्चावकेश्वरी स्थितिसिंहने
 १८१६ ई०में इसे जीता । यहांके व्यवसायमें पनाज,
 चीनी और तमाकू प्रधान है । नगरके बाहर दो सुन्दर
 मस्जिदें हैं जो जहानगीरके समयमें बनाई गई हैं । उन
 मस्जिदोंमें बहुत प्राचीन कालकी अनेक सुन्दर तस्वीरें
 सुरक्षित हैं ।

उन दो मस्जिदोंमेंसे एकमें मध्ययुग दुर्गने नामक
 एक व्यक्तिको कब्र है । १६१२ ई०में जहानगीरके शासन-
 कालमें उनकी मृत्यु हुई थी । प्रयत्नसिन्धु कनिंङम
 अनुमान करते हैं, कि ये दो धार्मिक-प्रचुरोंके लिखित
 विष्णुत तन्त्र-रावादक महम्मद सुमीन हाफिजक
 हंगि । यहांके लोग भी उस कब्रकी उत्साहकी कब्र कहते
 हैं । दूसरी मस्जिदमें हाजी जमास नामक एक व्यक्ति-
 की कब्र है । हाजीजमासकी खोज सहा "उत्साह"के एक
 भाव मानते हैं । १६५० ई०में उनकी मृत्यु हुई थी ।
 कोई कोई कहते हैं, कि वे दो शाहजहानकी धर्मोपदेष्टा

थे । यहां १८६७ ई०में म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई है ।
 शहरमें एक रेड्डी बर्गीशयूलर मिडिल स्कूल और एक
 सरकारी अस्पताल है ।

नाकोकस् (सं० पु०) नाक भोजः वासस्थानं यस्य ।
 देवता, स्वर्गवासी ।

नाचत्र (सं० स्त्री०) 'नचत्रस्य' नचत्र-पण्य । १ नचत्र-
 सम्बन्धीय । २ नचत्रघटित चक्रके परिवर्त्तनार्थक काल-
 दिनसंज्ञा । नचत्र द्वारा परिमित समयका नाम नाचत्र-
 काल है । यह नाचत्रकाल दो तरहसे ज्ञिया जाता है ।
 प्रथम नचत्रसे नि कर जेय नचत्र तक २० नचत्रोंका भोग
 द्वारा जो नाचत्रकाल पूरा होता है, उसे नाचत्रमास
 कहते हैं अर्थात् प्रथमसे जेय पर्यन्त २० नचत्रोंका भोग
 जब जेय हो जाता है, तब नाचत्रमास होता है । यह
 नाचत्रमास नाचत्रयाग आदिमें प्रयोजनीय है ।

एक नचत्रकी किसी निर्दिष्ट स्थानसे पुनः उसी स्थान
 पर आनेमें जो समय लगता है, उसको नाचत्र-पक्षो-
 रात्र कहते हैं । इसी प्रकार तोसं दिनोंका जो महीना
 होता है, उसे नाचत्रमास और १२ महीनेका जो वर्ष
 होता है उसे नाचत्रवर्ष कहते हैं । आयु-गणना नाचत्र
 मासांशुवार की जाती है ।

सत्तारिस नचत्रात्मक नचत्र मासके यदि महीन या
 शनियारमें जन्मनचत्र पड़े, तो उस मासका नाम कर्मय
 है । यह मास कष्टदायक माना जाता है ।

नाचत्रिक (सं० पु०) नचत्रादायकः, नचत्र-उग, नाचत्र-
 मास ।

नाचत्रिकी (सं० स्त्री०) नाचत्रिक-डीय, नचत्रदशा,
 पक्षोंकी एक दशाका नाम ।

सत्ययुगमें सप्तदशा, त्रेतामें षडशीरदशा, द्वापरमें
 योगिनी और कलिकालमें नाचत्रकी दशा होती है ।

दशा देखो ।

नायनखोम—काश्मीरियाके भूतगर्त प्राचीन नगर घोडौर
 या घोडार नगरका नामान्तर । इसका देवीय भाषामें
 इसका पर्यं होता है प्रधान नगर । बाखरो देखो ।

नाखन-वट—काश्मीरियाकी प्राचीन राजधानी घोडौर
 नगरके बाहर भैरवदेवीसे समीप तालिकाव नामक एक
 ऋद है । यह ऋद ६० कोस लम्बा है । इसका विस्तार

कहीं कहीं १५ से २० फीट तक है। इस ऋद्धके सत्ती किनारे एक विस्तृत समतल क्षेत्र है। उस क्षेत्रमें पनेक प्राचीन कोत्तिर्याँके भग्नावशेष देखनेमें आते हैं। काम्बोजगण काश्मीर प्रदेशमें भाग कर जब काश्मीरियाँमें रहने लगे थे, तब इस देशमें नागपूजा प्रचलित हुई। १० यों-से १४वीं शताब्दीके मध्य यहाँ पनेक मन्दिरादि बनाए गये जिनमेंसे नागन-वटका मन्दिर ही सबसे बड़ा है। यह मन्दिर ताम्रपाषाण ऋद्धके किनारे चोढ़ोर नगरसे २ कोसकी दूरी पर अवस्थित है। मन्दिर की भूमि चौकोर है और चारों ओर पाँच कोस तक दीर्घ है। मन्दिर देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है और आनन्ददायक किये विशेष प्रयोजनीय है। इसके चारों ओर २२० गज विस्तृत एक खार्द है। पश्चिमकी ओर प्रधान प्रवेश-द्वार है जो छः से फुट ऊँचा है। कुछ पागि ला कर एक दूसरा क्रमाकार सड़ पथ है। इसके दोनों बगल दो छोटे छोटे मन्दिर हैं। थोड़ी दूर ओर जाने पर भूतमन्दिरका बहिःप्राचीर पाता है। यह बहिःप्राचीर १५ फुटके लगभग ऊँचा है। इसके एक ओरकी लम्बाई ६५ फुट और चौड़ाई ५० फुट है। इसके बीचकी जमीन २ कान्ठ ७० हजार वर्ग फुट है। इसमें तीन प्रवेशद्वार लगते हैं। हर एक ओर ऊँचा स्तम्भ दण्डायमान है। इन सब स्तम्भोंमें बरामदे लगे हुए हैं। इन सब बरा-भदोंके कामकाय और निर्माणकोशल ही इस मन्दिरके विगियत्व निर्देशक ओर प्रधान शोभावर्कक है। बहिःप्राचीर पार करने पर एक दूसरा प्राचीर मिलता है, फिर उसके बाद सभी तरहका एक ओर प्राचीर है। ये तीनों प्राचीर एक ऊँचाईके नहीं हैं, पर क्रमशः हैं। ग्रंथ पन्नाःप्राचीरकी ऊँचाई २० फुट है। इन तीनों प्राचीर-में तीन प्रवेशद्वार हैं। रामेश्वर बाटि स्थानोंके भारतीय मन्दिरोंके कारकाय सुदृश होने पर भी ये विगिय शिल्पशैल्यमय नहीं हैं। उन सब मन्दिरोंमें पक्के पक्के चित्र नहीं दिये गये हैं, जो कुछ हैं भी वे सुगुह्या-में नहीं हैं। ऐजिन नागनवट मन्दिरके कार-कायमें उदात्तमाशोमक, चित्रकोमल और शिल्पकोमल पूर्य मातामें विराजित हैं। उक्त प्राचीरोंमें भरोसा एक भी नहीं है। ये बड़े बड़े पत्थरोंसे बने हुए हैं। वे सब

पत्थर पत्थर कर ओर काट कर इतनी सूधीसे मिलाने गये हैं कि मालूम नहीं पड़ता इसके जोड़के सुं-ह कहां हैं। समूची दोवारमें समशीर्ष मयंभुक्ति पड़ित है। दोवारका वैसा चरमोत्कर्ष भास्कराग्न्य ओर कहीं भी देखा नहीं जाता। यहाँ तक कि इन मन्दिरके चरमोत्कर्ष स्थानोंका शिल्पचातुर्य भी संपत्ती मान कर हुए है। प्राचीरमें रामायण-महाभारतोप युद्धादिकी छवि इन प्रकार खींची हुई है, कि ये मानो पथ भी जीवित हैं। एक दूसरी जगह स्वर्ग, नरक और पृथ्वीकी छवि खींची है। क्षमावतार और समुद्रमन्थनकी छवि भी भरोसा मिलती छोटी हुई है, किन्तु सब अपूरा ही है।

मध्य खण्डमें प्रवेश करनेमें ही प्रधान मन्दिर मिलता है। इस मन्दिरमें पाँच मित्र हैं। प्रत्येक मित्र १०० फुट ऊँचा है। सदरोके जैन मन्दिरके साथ इसका आकार बहुत कुछ मिलता चुलता है। उन पाँच मित्रोंके मध्य चार जस्ताशय हैं। कभी कभी उन जनाशयोंमें इतना जल भर जाता है, कि यह नीचे गिर कर मन्दिर-का निम्न मंथ कुछ बरबाद कर देता है।

उन सब स्तम्भोंका शीर्ष ओर निम्न भाग देखनेमें मालूम होता है, कि ये रोमक-ओरियन शैलीके स्तम्भोंके जैसे हैं। भारतवर्षमें उस तरहके स्तम्भ कहीं नहीं मिलते। काश्मीरके नागमन्दिरमें जो स्तम्भ लगे हुए हैं, वे ही योज-ओरियन शैलीके हैं। यहाँ इन प्रकारके स्तम्भोंकी संख्या १५२२ है। इनकी गठन-प्रणाली देखनेमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह मन्दिर सुरापोय भास्कर द्वारा बनाया गया है। इसमें खियोंकी जो भुक्तिर्याँ छोटी हुई हैं, वे तातारोप-भी प्रतीत होती हैं, क्योंकि उनकी नाक चपटी है। मन्दिरका प्राचीन मय-देवना तबस नहस हो गया है। वीहें यह बोझों अधिकारमें आ गया। उनमें अधिकारमें आने पर भी इसमें सब मय-विश्रुति दिखाने देते हैं।

यहाँ पयोगके विषयमें बहुतमी दत्त जडागियाँ सुनी जाती हैं। कुछघोषके पागमनके प्रारम्भमें भी प्रवाद है। १२८१ ई०में कोई चीन परित्राजक इस मन्दिरके चरित्व ओर भोन्द्यको बाने किया गये हैं। इस नगरसे ७१ कोस पूर्व पन-ता-कोम (प्रवरतान)

नामक एक नगरका भग्नावशेष देखनेमें आता है। यहाँ पहले ब्रह्माका एक मन्दिर था। षोडश नगरके ब्रह्म-पत्तनमें भी ब्रह्माका मन्दिर था।

नाखुना (फा० पु०) १ नाखुना एक रोग। इसमें एक साल भिक्षी-सो नाखुना मफेदोमें पैदा होती है और बढ़ कर पुतलीबो भी ठक लेती है। २ मोटे खाल डोरे जो घोड़ोंकी नाखमें पैदा हो जाते हैं। ३ चौरा बाँवनेका नोकदार अंगुष्ठाना।

नाखुर (हि० पु०) नखुर देखो।

नाखुग (फा० वि०) अमरस, नाराज।

नाखुगी (फा० स्त्री०) अमरसता, नाराजी।

नाखून (फा० पु०) १ नख, नख। नख देखो। २ चोपायोंके खुरका भड़ाह्मा किनारा।

नाखुना (फा० पु०) १ नाखुना देखो। २ बड़खोंकी बहुत पतली लुगानो जिससे बारोक काम किया जाता है। ३ एक प्रकारका कपड़ा जो गबरुनकी तरहका होता है। इसका ताना मफेद होता है और बानेमें अनेक रंगकी धारियाँ होती हैं। इस प्रकारका कपड़ा आंगरेमें बहुत बनता है।

नाग—(सं० स्त्री०) नगी पर्वत भवः पर्व। १ रांगा। २ सीसक। पर्याय—नाग, महाबल, चीन, पिट, योगिन्ट, सीसक। (वैपवर०)

रानी और सोनेके अर्थमें नाग शब्द कहीं कहीं पुलिह भी व्यवहृत होता है। इसकी उत्पत्तिका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है,—वासुकि किसी नागकायकी असोकसाम्राज्य रूपकी देख कर काम-मोहित हो गये थे। इससे वासुकिका शक्त निकल पड़ा और वह शक्त नाग अर्थात् सीसकरूपमें परिणत हो गया। यह मानवोंके लिये रोगविनाशक है। पर्याय—सीस, ब्रह्म, योगिन्ट, भुजङ्ग और मानेर। यह रत्न मृदम शृणदायक और प्रमोदनायक है। इसके सेवन करनेसे शत नागोंके समान बल होता है, इसीलिये इसका नाम 'नाग' पड़ा है। इससे समस्त रोगोंका नाग, शरीरका उपचय, पम्पिदोनि, काम और बलको हर्षित होता है। इसके द्वारा मृत्यु तकका नाग होता है, अर्थात् सतत जीवन करनेका अभ्यास हो जाने पर मृत्युसे मुक्तकारा

मिल सकता है। रांगा और सीस यदि पाकविहीन अर्थात् अमोहित हो, तो समस्त दारा पति कष्टतम कुट, गुल्म, कण्डू, प्रमेह, वायुरोग, चवससता, शीघ्र और भगन्दर रोग उत्पन्न होता है। (भावव० प्रथमभा०)

सीसक देखो।

३ सर्प, सर्प। ४ हस्ती। ५ मेष। ६ नागेश्वर। ७ पुत्राग। ८ नागदन्तिक। ९ सुस्तक। १० देहस्थित वायुभेद। शरीरके पन्दर नाग, क्रूर, लहर, देवदत्त और धनञ्जय ये पाँच वायु हैं। जहाँ नाग शब्द सर्प और हस्ती वाचक होगा, वहाँ यह शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुलिङ्ग होगा। जातिवाचकत्वके कारण 'स्त्रीलिङ्ग' होय' होगा। (वि०) ११ मूराचारी। १२ तिर्यङ्गरूप करणभेद।

"नाग" न पुंसके रीति सीसके करणान्तरे।

नागः पद्मभातङ्गकूराचारिणो तोयरे ॥

नागकेशरपुत्रनागनागदन्तकद्रुस्तके।

देहानितप्रमेदेन श्रेष्ठे क्स्यादुत्तरे स्थितः ॥"

(मेदिनी)

नागोंका उत्पत्ति-विवरण बराहपुराणमें लिखा है, जो इस प्रकार है—

ब्रह्माने पहले पहल जब यह जगत् बनाया था, उस समय पहले कश्यपकी उत्पत्ति किया था। इनके कट्टु नामकी एक स्त्री थी। इस कट्टुके गर्भसे महापराक्रान्त पुत्रोंका जन्म हुआ, जिनके नाम ये हैं—पनता, वासुकि, कम्बल, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, ब्रह्म, कुलिश और पपराजित, ये ही कश्यपके प्रधान वंशधर थे और सब नागके नामसे प्रसिद्ध थे। इनके पुत्रपौत्रादिसे जगत् क्रमशः नाग-परिव्याप्त हो गया था। ये सब नाग पति कुटोक्त, तीक्ष्ण-कर्म और वसिष्ठय विप्रोत्पन्न थे। इनके काटने मात्रसे मनुष्य भस्म हो जाया करते थे। क्रमशः नागोंके प्रभावसे विप्र द्वारा बहुत प्रजापत्योंकी जानि होने लगी। तब प्रजापत्योंने ब्रह्माकी शरण को और उनसे प्रार्थना की कि, "नागोंसे पापकी छाट प्रतिदिन होयकी और पपसर हो रही है, पाप इन तीक्ष्ण-विपधरोंके कराल गालसे त्रम योगोंकी रक्षा कीजिये।" ब्रह्माने कहा, "तुम लोग निर्भय हो कर भयव्याप्त करो जिससे तुम लोगोंकी यह भीति शीघ्र ही दूर हो, इसका मैं विधान करूँगा।" फिर

ब्रह्मने वासुकि आदि नागों की बुलावाया और अत्यन्त क्रोधके साथ गावटिया कि, "तुम लोग जिस प्रकार प्रति दिन मेरी छटिका माग कर रहे हो, उसी प्रकार कल्याणारामें सुश्रावण माघमासे तुम लोग भी चणकी प्राय होयोगे।" नागोंने ब्रह्मके मुँहमें उक्त गावकी सुन भयभीत हो उनके चरणों की मन्दना की और स्तव करने लगे, "गच्छन्! आपहीने हम लोगों की कुटिल और विधोषण बनाया है। अब पाप हम लोगों के लिए दृश्य स्थान निर्दिष्ट कर दीजिए, हम लोग वहीं पर सुश्रुषे अवस्थान करेंगे।" तब ब्रह्माका क्रोध गान्त हुआ चक्रीने नागों के निचे पाताल, वितल और सुतल इन तीन लोको में रहनेका आदेश दिया और कहा कि "जो लोग कालकी प्राप्ति हुए हैं, तुम लोग वहीं मनुष्यों को भक्षण कर सकते हो। गन्तु जो लोग मन्त्रोपवध और गार्हपत्य धारण करते हैं, उनका धर्म भी नहीं कर सकते।" इस प्रकार ब्रह्माका गाव और प्रसाद प्राप्त कर नागोंने पातालका आश्रय लिया। (शंखपुराण)

कद्रुतगर्वासे माता के आदेशसे उषःत्रयाको पूर क्षयवर्ण करना लोकार न किया था, इस कारण उनकी गावसे वे अननेशयके सर्पसममें गूढ हुये थे। प्रायः नागों के नाम प्राप्त होने पर आत्मीकण्य उनका उद्धार करते हैं। जनमेजय, आतोड और इन्द्र देखी।

वे नागण्य भूमिके नीचे वामनोपवध (रमणक) होपमें रहते थे। गहड़ने इन लोको के लिए अमृत पाहरण कर अपनी माता विनाता का दाख मोचन किया था। इन्द्र के आदेशसे सर्पगण गहड़के भक्षण बल गये। इन नागों के गहड़-आहत अमृतकी कुशा पर रण खाग पूजादिके लिए चले आने पर इन्द्रदेवने उन्हें हरण कर लिया। नागोंने आमादिसे सोट कर देखा तो वहाँ अमृत नहीं। तब वे जिस कुशासन पर अमृत रख गए थे, उस कुशासे ही अमृतलता करने लगे जिससे उनकी जिह्वा के दो लच्छ हो गए। तभीसे सर्पों की दो जिह्वाये हो गई हैं। (भारत)

माता पुराणों में बहुमख्यक नागों का उल्लेख है, जिनमेंसे कुछ प्रधान प्रधान नागों के नाम दिये जाते हैं। यथा—चक्रवर्त, वज्रिन्, अयागिन्, अश्वतर, आरुण्य, पात्र, पार्थक, उषक, उग्रसेन्द्र, उग्रल,

एताग्र, कम्बन, कर्षोर, कर्कटक, कर्कट, कर्कर, कर्दम, कलमपोतक, कर्कमय, कांशोयक, कुकुर, कुकुर, कुकुर, कुकुर, कुकुर, कुसुद, कुसुदाय, कुम्भ, कुम्भीर, कुषाण्डक, कुहर, लङ्गक, कैलासक, कोटरक, कोषपायन, चैमक, खगप्रय, ज्योतिष्क, तितितिर, दधिमूल, दिशोप, धारण, मन्द, मन्दक, निहानल, निहानिक, मोक्ष, पद्म, पद्मदय, पिङ्गल, पिङ्गरक, पिठरक, पिण्डारक, पुण्यरीक, पुष्य, पुष्यदंष्ट्र, पुष्यभद्र, प्रभाकर, मणि, मणिनाम, मणिभद्र, महापद्म, महोदर, मातृपिण्डक, सुवर, सुरारिण्डक, सुहरण्यक, सुप्रीकाद, अधिरात्र, बहुमन्त्रक, वामन, वासिमित्र, भाद्रकृष्ण, विमलपिण्डक, विरज, विरज, विरजक, विष्णुवज्र, विष्णुपाण्डर, विष्णुज, हस्त, शक्र, शक्रपालक, शक्रपिण्ड, शक्रमुख, शक्रगिरा, गावन्, शान्तिपिण्ड, गिच्छी, गिरोपक योवध, सधर्तक, मन्त्रत, समनोमुख, सुमुख, सरसा, सुरमुख, सुवाह, हरिद्रक, जलिक, हरितपद, हरितपिण्ड, हरिभद्र, हंसमुख, आदि।

विविध पुराणों में इन सब अनेक जातों का विवरण तथा अमृतान्य अनेक नागों का उल्लेख पाया जाता है।

नागों में अमृत, वासुकि, पद्म, महापद्म, तच्छक, कर्कटक और गहड़ ये पाठ प्रधान भाग पटनग नामसे प्रसिद्ध हैं। इनसाको पूजा करते समय इन ही पूजा की जाती है।

कमल और अश्वतर इन दो नागों को सरस्वती के वर से ममल्लर राग, मूर्च्छना आदि मन्त्रोताङ्गका ज्ञान हो गया था। (मार्कण्डेयपुराण)

कालिवध-अज्ञात नागों की हनन करनेसे ब्रह्महत्या के समान पाप होता है। यदि कोई कालिवधापदप्रवेश स्थानमें दण्डापात करे, तो उसे दिगुल ब्रह्महत्याका पातक लगता है। उसके घरसे गोप हो सफा दूर हो जाते हैं।

"मर्त्यव्यसर्गात् पार्श्वेन हन्ति सो मानवावधः।

ब्रह्महत्यायाम् पापं भविता तस्य निश्चितम्॥

वधारावदुपनिषत् ४: कौटिल्यद्वारावन्तम्।

दिगुल-ब्रह्महत्याका भविता तस्य दिग्विषयम्॥

लक्ष्मीशक्ति तन्त्रोपाय पापं दारा पुराणम्।

वैशाखर्षो ह्यभिनिविश तस्य विनिर्वाणम्॥

(नरकवर्णन ० श्रीकृष्ण १८ ४०)

वास्तुकि भादि नाग महादेवके भूवर्ष हैं, अर्थात् इन सब नामोंको महादेव बलद्वारा स्वरूप धारण करते हैं।

“वासुदेवायान्य ये सर्वा यथा स्थानधत्ते ह्यम् ।

भूयश्चक्रुर्दहस्य शिरो वाह्यादिषु हृतम् ॥”

मन्वीन गृहादि वनानिसे पहले नागशुद्धि देखनी चाहिये। नागशुद्धिके बिना गृहादि प्रयुक्त करनेसे नाना विध अनिष्ट होते हैं। नागशुद्धि देखो।

१३ देशभेद । १४ वर्षांतविशेष । (भारत)

“शङ्खक्रीडय नगमो हंलोनागस्तथापरः ।

काशशरायाश्च तपो वसरे केसरचक्राः ॥”

(विष्णुपु० २।२।८)

१५ ज्योतिषोक्त करणवियोग । यह करण यात्रा भादि शुभकार्यमें शुभ समझा जाता है। इस कारणसे उत्पन्न बालक कुमोल, मित्रोंके प्रति विद्विष्ट और भग्न रहता है। (श्रीमद्भागवत)

१६ राजवंशविशेष, एक राजवंश । नागवंश देखो।

नाग—एक वै याज्ञरण्या नाम। श्रौतछन्दश्चितमें इनका प्रसङ्ग है।

नागक (सं० पु०) काञ्चीरके एक राजाका नाम।

नागकन्द (सं० पु०) नाग इव कन्दं मूलं यस्य । उल्लिखित ।

नागकन्द (नरकन्द)—पञ्चाशक्ति कुमारसेन राज्यका एक गिरिपथ । हात् शिखरसे उत्तर-पश्चिमकी ओर यह पथ ११° १५' ३०" की ओर दिसा ७०° ११' ५०" के मध्य समुद्र-पृष्ठसे ८-१६ फुटकी ऊँचाई पर अवस्थित है। सिमसा यात्रो विरतुपाराहत पर्वतमानाको सुन्दर दृश्यावलोकित करनेकी लिये हमो राह की ओर जाते पाते हैं। यहां यात्रियोंकी सुविधाकी लिये एक सुन्दर डाकघर बना दिया गया है।

नागकन्याका (सं० स्त्री०) नागानां कन्याका इत्यतः। सर्पोंकी बहन।

नागकन्या (सं० स्त्री०) नाग जातिकी कन्या। पुराणमें नागकन्याएँ बहुत सुन्दर बतलाई गई हैं।

नागकर्ण (सं० पु०) नागस्य गजस्य कर्णः तदाकारः पतेत्यर्थः। रक्त परच्छद, लाल पक्षोका पेड़। २ उल्लिखित कर्ण, पलायन, टाकका पेड़। ३ इन्दीका कान।

नागकर्णो (सं० स्त्री०) १ वास्तुकर्णो सता। २ मृतोपराजिता, संकेत उपराजिता।

नागकिञ्चुक (सं० स्त्री०) नागस्यैव किञ्चुकी यस्य। नागकेशर पुष्प, नागकेशर।

नागकुमारिका (सं० स्त्री०) नागस्य कुमारोक्तकन्टापः पूर्व-ऊर्ध्व। १ गुड़ची, गुड़च, गिरीप। २ मञ्जिठा, मजीठ।

नागकेशर (सं० पु०) नागस्यैव केशरी यस्य। नागकेशर, एक सोधा सदावहार पेड़ जो देशमें बहुत सुन्दर होता है। पर्याय—चाम्पय, ईशर, काश्चानाद्वय, केशर, नागकेशर, किञ्चुक, नागकिञ्चुक, नागीय, काश्चन, सुवर्ण, हेमकिञ्चुक, कश्क, हेम, पिञ्जर, फणिनेसर, पद्मकेशर। पुष्पका गुण—घृण्य, चख्य, लघु, तिक्त, कफ, वक्षि, वात, पामय, कण्ठ और शोर्परोगनाशक। लव यह शब्द लीवल्लिङ्ग होता है, तब नागकेशर पुष्पका बोध होता है।

पायान्त उल्लिखित शास्त्रानुसार इसका साधारण नाम मेसुपा (Mesua) है। यह हिन्दुस्तानमें उत्पन्न होता है। वसियां इसकी बहुत यतनी और घनी होती हैं, जिससे इसके नीचे बहुत पत्तरी छाया रहती है। लकड़ी इसकी दंतनी कड़ी और मजबूत होती है कि काटनेवालेको कुहवाड़ियोंकी धारें सुड़ सुड़ जाती हैं। इसीसे इसे लव्हाट (Iron-wood) भी कहते हैं। विहलमें इन्जिनियरिंग कामोंके लिए इसकी लकड़ी बहुत व्यवहृत होती है। यह पेड़ भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न नामसे पुकारा जाता है यथा, नागकेशर, नागाच (हिन्दी और वारवा), नागेशर, नागकेशर और नागचाँपा (बङ्गाल और चट्टीसा), नाहोर (पाषाण), नागचम्पा, मोरलाचम्पा (बम्बई और महाराष्ट्र), नागाच-माख, नागाच, शिबनागपू, नागमयू (तामिल), नागकेशरम, मजुपुत्रम (तेलगू), नागमयिज (कर्नाट), केन्दुचम्पग, सेलुचम्पकम् (मलय), ऊँडो (मग), वेङ्ग, (मद्रा), ना-देयनो, ना-गाडा (सिङ्गल)।

पायान्त उल्लिखित शास्त्रोंमें वैज्ञानिक रूप से मनेद ने कर इसके कई भेद यतनाएँ हैं,—१ Mesua ferrea (साधारण नागेशर), २ M. speciosa (नेवास और विहलमें उत्पन्न), ३ M. coromandeliana

ब्रह्मने वासुकि चादि नागों की कुलपाया घोर चण्डना
 मोक्षके माय भाव दिशा कि, "तुम लोग जिस प्रकार प्रति
 दिन मेरी छटिका माय कर रहे हो, उसी प्रकार कल्या-
 नार्थमें सुहावले मायभावे तुम लोग भी सबकी प्राप्ति
 होओगे।" नागोंने ब्रह्मके मुँहमें चण्ड भावकी सुन
 भयभीत हो उनके चरणों की बन्दना की घोर स्तुति करने
 लगे, "ब्रह्मन्! पापहीने हम लोगों की छटिका घोर
 विधोषण बनाया है। अब पाप हम लोगों के लिए
 दुष्टक, स्थान निर्दिष्ट कर दीजिये, हम लोग वहीं पर
 सुप्तमें चयस्थान करेंगे।" तब ब्रह्माका मोक्ष शाला पुषा
 चण्डोंने नागों के लिये पाताल, विमल घोर सुतल इन
 तीन लोकोंमें रहनेका आदेश दिया घोर कह्य कि
 "जो लोग कालकी प्राप्ति हुए हैं, तुम लोग चण्डों मनुष्यों
 को मलय कर सकते हो। परन्तु जो लोग मन्त्रोपव घोर
 गहङ्गमण्डल धारण करते हैं, उनका स्थान भी नहीं कर
 सकते।" इस प्रकार ब्रह्माका भाव घोर प्रसाद प्राप्त कर
 नागोंने पातालका आश्रय लिया। (ब्रह्मसूत्रः)

कद्रुतगर्धाने माताके आदेशसे चण्डोऽश्वको पूर
 कल्याण करमा स्वीकार न किया था, इस कारण चण्डोंके
 भावसे वे जन्मजन्मके सर्वसर्वमें नष्ट हुये थे। प्रायः
 नागोंके भाग प्राप्त होने पर आत्मीकगण उनका उद्धार
 करते हैं। जनमेजय, नागीच और कद्रु देवो।

ये नागगण भूमिके नीचे रामवीर्यक (रमणक) होवमें
 रहते थे। गहङ्गने इन लोकोंके लिए अमृत पाहरण कर
 चण्डों माता विमलताका दास्य मोचन किया था। इन्द्रके
 भावसे सर्वगण गहङ्गके भक्ष्य बन गये। इन नागोंके
 गहङ्ग-पाकृत पशुकी कुशा पर रज्जु खान पूजादिके लिए
 चले आने पर इन्द्रदेवने उसे इच्छा कर लिया। नागोंने
 खातादिमें सोट कर देखा तो बड़ा अमृत नहीं। तब
 वे जिस कुशामन पर चरमा रख गए थे, उस कुशामनी
 चरहणना करने लगे जिससे चण्डों की जिह्वा के दो छेद
 हो गए। तभीसे चण्डों की दो जिह्वाएँ हो गई हैं। (भाग)

नागा पुराणोंमें बहुतसे लोक नागोंका उल्लेख
 है, जिनमेंसे कुछ प्रधान प्रधान नागोंके नाम दिये
 जाते हैं। यथा—चण्डकैर, चण्डिक, चण्डाजित,
 चण्डतर, चण्डरुच, चण्ड, चण्डक, चण्डक, चण्डक, चण्डक,

पनाग, कम्बल, काशीर, कर्कोटक,
 कर्तम, कलमपोतक, कलमप, क
 कुकुर, कुम्भर, कुटर, कुम्भोदर, कुसुद,
 कुमीर, कुचाण्डक, कुहर, लङ्क, दे
 कोषवामन, चमक, चण्डगण, च्योतिर,
 दिनेष, धारण, नन्द, नन्दक, मिहाम
 पद, पदपद, पिहल, पिहलरक, पिहल
 रोक, पुष्य, पुष्यदेव, पूर्णभद्र, प्रभा
 मविभद्र, महापद्म, महोदर, मान्यपि
 पिण्डक, मृहवरणक, मृदिकाद, म
 वामन, मानिगिर, भाद्रकुण्ड, वि
 विरस, विमरक, विमरक, विमरक
 श्रद्ध, गह्वरालक, गह्वरपिण्ड, गह्वरु
 मानिपिण्ड, मिषी, मिरोपक शीव
 सुमनोसुख, सुसुख, सुरसा, सुरासु
 हतिका, हतिकाद, हतिकापिण्ड, हति

विभिन्न पुराणोंमें इन सब नागों
 तथा अग्राण्य चण्ड नागोंका उल्लेख
 नागोंमें चण्डा, वासुकि, प
 कर्कोटक घोर गह्वर ये पाठ प्रधान
 प्रसिद्ध हैं। मनसाकी पूजा करने
 जाते हैं।

कमल घोर चण्डतर इन दो
 वे चण्डतर नाग, मृच्छा आदि
 गया था। (मार्कण्डेयपुराण)

कालियम गजना नागोंकी
 के समान पाय होता है। यदि
 स्थानमें दण्डपात करे, तो
 पातक लगता है। उसके चरण
 जाता है।

"मद्रंकाशरीर चण्डिय

हमरवाचनं चण्डे मद्रि

चण्डतराचण्डिके चण्डे

चण्डे चण्डतराचण्डिके

चण्डे चण्डतराचण्डिके

चण्डे चण्डतराचण्डिके

(भाग)

नागज (मं० स्त्री०) नागात् सोमकात् जायते जन० उ० । १ सिन्दूर । २ रत्न, फूला दुधारा रंगा । (त्रि०) ३ नागजात माय, जो सर्व वा हाथीसे उत्पन्न हो ।

नागजम्बू (मं० स्त्री०) भूमिजम्बू. एक प्रकारका सामुन ।

नागजिह्वा (मं० स्त्री०) नागस्य सर्पस्य जिह्वेय । १ चन्द्रमास । २ स्वर्णचोरा, शरिया । शरिया देखो ।

नागजिह्विका (मं० स्त्री०) नागस्य जिह्वेय रक्तता यस्या, कप, टावि भत इत्यं । मन्मथिला (Red arsenio) मैनेसिल ।

नागजीवन (मं० स्त्री०) नागः सोमकं जीवनं यस्य । रत्न, फूला दुधारा रंगा ।

नागजीवनगन्धु (मं० पु०) हरिताल, हरताल ।

नागभारी—वज्रविनीके पञ्चश्रीयके मध्य एक नदी ।

नागतीर्थ (मं० स्त्री०) तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम ।

नागसुखे (मं० स्त्री०) सुखे, छोटा कट्टा का कट्टा ।

नागसुख—मन्त्राजके कण्ठज जिह्वात्मक एक ग्राम । योलचालमें इसे नागसुर कहते हैं । यहाँ बहुत प्राचीन चार मन्दिर हैं ।

नागसर—गङ्गाश्रीय एकेन्द्रस्य वा एकेन्द्र नामक सम्राट्के एक सेनापति । धोरमहेश्वर नामक एक राजाके सेनापति प्रथमदेवके साथ इन्होंने युद्ध किया था । उस युद्धमें प्रथमदेव ही मारे गए थे । इस पर सम्राट्ने बहुत प्रसन्न हो इन्हें नागसरमहको उपाधि दी और विसपुर खादि बारह ग्राम दानमें दिये । यही बारह ग्राम मिल कर यहाँके कलमाङ्ग लिखिका प्रधान पञ्च दुषा है ।

नागद—पणलिखवाङ्गके राना विद्याकदेवके एक मन्त्री । ये जातिके ब्राह्मण थे ।

नागदत्त—१ सुगन्धीय महाभोज समुद्रयुक्तके समसामयिक एक राजा । ये धार्वाकर्त्तमें राज्य करते थे और युद्धमें समुद्रयुग्ममें परास्त हुए थे ।

२ राष्ट्रभूतराजपञ्चमी एक शाखा पुष्पाट वा पुष्पाङ्ग, नामक स्थानमें राज्य करते थे । काम्पराष्ट्रवर्मा इस राजवंशके प्रतिष्ठाता थे, नागदत्त इन्हींके पुत्र माने जाते हैं । पुष्पाङ्ग देखो ।

नागदन्ता (मं० पु०) नागस्य गजस्य दन्ताः । १ इन्द्रिदन्त,

हाथीके दाँत । नागदन्तः साधनत्वे मास्यस्येति चम् । २ गृहान्तर्गत द्वार, दीवारमें गई हुई छूटो ।

नागदन्तक (मं० पु०) नागदन्त स्त्राय कम् । १ इन्द्रिदन्त, हाथीदाँत । नागदन्ते न कायनीतिकेक । २ भित्ति दाहद्वय, मिथूँक, दीवारमें गई हुई छूटो जिसके ऊपर कोई चीज रखी या बन्दई जाय ।

नागदन्तिका (मं० स्त्री०) नागस्य सर्पस्य दन्त इव पोद्गाटावकं पत्रं यस्याः, खावि भत इत्यम् । वृषिकासीका पोद्गा । (*Tragia Involucrata*)

नागदन्तो (मं० स्त्री०) नागस्य गजस्य दन्त इव फसाद्याकारे यस्याः डीप । १ कुत्तास्य पोपधि । २ ओहन्तिनी । पर्याय—विगन्था, पर्वपुष्पो, विदोपधि, शुद्धपुष्पा, इभदन्ताङ्ग, काण्डेरी, कामदूतिका, खैतापुष्पा, मधुपुष्पा, विमोचिनी, नागस्कोता, विद्यालाची, नागच्छदा, बिचवणा, सर्पपुष्पी, शुद्धपुष्पी, झाडुका, मन्दमिका, सितपुष्पी, सर्पदण्डो, नागिनी । गुण—कटु, तिक्त, रक्त, वात, कफ, शुल्म, शूल, उदररोग और कण्ठदोषनाशक ।

नागदमन (मं० पु०) नागदोनेका पोद्गा ।

नागदमनो (मं० स्त्री०) नागो दम्पतेऽनया दम्पत्युदोप । शुद्ध सुगन्धिय, नागदोनेका पोद्गा । संस्लान पर्याय—जम्बू, जाम्बवती, वला, नागाङ्गा, दमनो, नागम्या, लडा, रक्तपुष्पा, काम्बो, मोटा, विद्यापना, नागपुष्पी, नागवला, महायोनिखरो, मल्लो, दुःखदा, दुईवा । गुण—कटु, तोषण, इस्का, विक्त, कफ, मूत्रकण्डू, त्र्य और सर्वप्रहदोष खादि नागक और सर्वत्र जय, धन और सुमतिवर्दायक है । (भावव० राजनि०)

नागदला—एक पेड़ जो बङ्गाल, पाषाण, बरमा, मलबार और सिङ्गलमें होता है । बङ्गालमें इसे 'मोसुर' कहते हैं । पणकाठ नामके इसकी एकही बिकतो है जो बहुत कड़ो और मजबूत होती है । यह पानीमें डालने से अधिक दिनों तक रह सकतो है । इससे माफ़ीने पहिये, नाव और पनेक प्रकारके सामान बनाते हैं । इसकी संकड़ी संकेद होती है, लेकिन हवा लगने पर नोकी हो जाती है । इसके बीजोंका गाढ़ा रस जमाने और मरीरमें लगानेके काममें आता है । इसके बिल्लीका रस तिष्ठ तो होता है, लेकिन बहुत सड़ोचक है ।

(हासियावर्धन, शम्भु, इमके पक्षे और फूल बहुत छोटे होते हैं), ४ M. Roxburghii (मूलत Iron-wood), ५ M. Salicina, ६ M. Walkeriana, ७ M. Pulchella, ८ M. Sclerophylla और ९ M. Nagana ।

हिमालयके पुराने माग, पुराने बडान, पाचाम, बरमा, दक्षिण भारत, सिन्धुस घाटिमें इमके पेड़ बहुत पावतये मिलते हैं । इममें बार दसों के बड़े और सफेद फूल गरमियोंमें लगते हैं जिसमें बहुत अच्छी सेंदक होती है । इमके प्रायेक फलमें दो बीज रहते हैं । जब फल एक जाता है, तब बीज उसे फाड़ कर बाहर गिर पड़ता है । बीजसे तेल निकलता है जो चर्मपोड़ामें बहुत उपकारी माना जाता है । इसके सुखे फूल औषध समाने और रंग बनानेके काममें पाते हैं । कसे फलसे एक प्रकारकी तेलाह रान निकलती है ।

रंग—नागकेसरके फूलमें भारतवर्षमें एक प्रकारका रंग बनता है, जिससे रंगम रंगा जाता है ।

तेल—सिन्धुसमें इमके बीजसे एक प्रकारका गाढ़ा तेल निकलता है जो दीया जलाने और दवाके काममें पाता है । तेलका रंग होना होता है । कनाड़ामें यह चार रुपये मनके बिसावसे विक्रता है ।

औषध—अधिराज बीज बहुतसे रोगोंमें इसके फूल व्यवहृत करते हैं । कई जगह तो दवाकी सुगन्धित करनेके लिए ही इसे काममें लाते हैं । यह सद्योचक है । पाकामघटित रोगोंमें यह बहुत उपकारी है । प्यास और अधिक पधोना निजलमें पर भी इसका प्रयोग किया जाता है । मरुतन और बीनोके साथ इसके फूलोंको घोल कर यदि रक्तशयो चर्मकी बलिमें चववा डाल्ये परमें जब जलन मान्यम पड़े, उस समय उसमें इसका प्रसेव देनेसे वह बहुत जल्द पाराम हो जाता है । साँवके काटनेमें भी इमके फूल और पत्तोंका रस बहुत उपकारी है ।

रास—इमके कसे फलोंसे एक प्रकारकी तेलाह रान तैयार होती है । उस रासकी तारविन तेलके साथ मिला कर एक प्रकारका चर्निगल तैयार करते हैं । रेशे और दातसे भी इसी प्रकारकी रास निकलती है । यह रास

कसे जलमें नहीं मिलती, सिद्ध करने पर मिला जाती है ।

दिनाजपुर, राजपुर और उत्तर बङ्गालमें इमके फूलोंके हिलके का तेल घाय पर लगाया जाता है और उससे लिए रामबाण-का काम करता है । चर्मरोगमें यह तेल विविध लाभदायक है । इसकी छान और शीसे जो कय बनाया जाता है, उसका भुवन करनेसे रिकानके रोगोंका रोग दूर हो जाने पर उससे दुर्बलता जाती रहती है । काढ़का छेद तीता होना है । इसके फल लोग खाते भी हैं ।

यह पेड़ दीपनेमें बहुत सुन्दर होता है तथा इसकी सेंदक भी अच्छी होती है । इस कारण संस्कृत कवियोंने कामदेवके वाँध मरामें इसे भी एक घर माना है ।

नागकीविन—तामिल प्रदेशको एक प्रकारकी नागपुत्रा । मयुराके निकटवर्ती वेगो नदीके किनारे जो मांवा मन्दिर है, वहाँ यह समस्त खूब धूमधामसे मनाया है । इसमें बहुतसे यात्री जमा होते हैं । नागपुत्रा देखो ।

नागचक्रिय—नागचक्र देखो ।

नागघेन—नागाइव देखो ।

नागचण्ड (सं० पु०) पुराणागुमार जम्बूद्वीपके चत्तर्गत भारतवर्षके नौ चण्डों या भागोंमें एक ।

नागगन्धा (सं० स्त्री०) नागस्य गन्ध इति गमो यस्याः । नाकुलीकन्द, नकुलकन्द ।

नागगति (सं० स्त्री०) यहकी एक गति । यह गति वन समय होती है, जब यह नचत्र पश्चिमो, भरणी और क्षतिका नक्षत्रमें रहता है ।

नागगर्भ (सं० स्त्री०) नागः कौलकं गर्भं ह्यपि तादृशं यस्य । मिन्दूर ।

नागचन्द्र—एक कलाको जैनपन्थकार । इसीमें १० छाण्डोंका जो जिनस्तोत्र बनाया है, वह बहुत प्रसिद्ध है ।

नागचम्पक (सं० पु०) नगचम्पकद्रव्य ।

नागचम्पा (हि० पु०) नागकेसरका पेड़ ।

नागचक्र (सं० पु०) नागः चक्रः चक्रावापण्य । दिग, मार-द्विष ।

नागचक्रता (सं० स्त्री०) नागस्य चक्रं कृतं जादुमं यत् यस्याः । १ नागदर्शी । २ नागवर्ती ।

नागज (म'० स्त्री०) नागाय सोसकाय् आयते जन-ड । १
मिन्दूर । २ रत्न, फूला कुषा रंगा । (त्रि०) ३ नागजात
मात, जो सर्प वा नागीने उत्पन्न हो ।

नागजम्बू (स'० स्त्री०) भूमिजम्बू. एक प्रकारका
जामुन ।

नागजिह्वा (स'० स्त्री०) नागस्य सर्पस्य जिह्वेव । १ पगन्ता-
मूल । २ खर्णक्षीरा, शरिवा । वारिवा देखो ।

नागजिह्विका (स'० स्त्री०) नागस्य जिह्वेय रक्तता यस्या.
कप, टावि पत इत्वं । मन्-गिला (Red arsenio)
मैनेसिल ।

नागजीवन (स'० स्त्री०) नागः सोमकं जीवनं यस्य ।
१ रत्न, फूला कुषा रंगा ।

नागजीवनगन्धु (स'० पु०) हरिनाल, हरतान ।

नागभारी—वज्रविभीके पञ्चक्रोशके मध्य एक नदी ।

नागतीर्थ (स'० स्त्री०) तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम ।

नागतुम्बो (स'० स्त्री०) तुम्बो, छोटा कङ्कूषा कङ्कू ।

नागतुह—मन्द्राजके कण्ठस जिनान्तर्गत एक ग्राम ।

नीलचालमें इसे नागतुर कहते हैं । यहाँ बहुत प्राचीन
चार मन्दिर हैं ।

नागत्तर—गङ्गावर्गीय एकेश्वरस्य वा एकेश्वर नामक
सम्राट् के एक सेनापति । बेरमहेश्वर नामक एक राजाके
सेनापति प्रथमदेवके साथ इन्होंने युद्ध किया था । उस
युद्धमें प्रथमदेव ही मारे गए थे । इस पर सम्राट् ने बहुत
प्रसन्न हो इन्हें नागत्तरभट्टको उपाधि दी और बिमपुर
आदि बारह ग्राम दानमें दिये । यही बारह ग्राम मिल
कर यहाँके कलमाड़ जिलेका प्रधान पंच कुषा है ।

नागद—पण्डितनवाड़के राना विद्यालदेवके एक मन्त्री ।
ये जातिके ब्राह्मण थे ।

नागदत्त—१ गुजरातीय महाभाज समुद्रगुप्तके समसाम-
यिक एक राजा । ये भार्यावर्त्तन राज्य करते थे और
युद्धमें समुद्रगुप्तमें पराजित हुए थे ।

२ राष्ट्रकुट्राजवंशकी एक माया पुषाट वा पुषाड़,
नामक स्थानमें राज्य करते थे । कामरपराधवर्मा इस
राजवंशके प्रतिष्ठाता थे, नागदत्त इन्हींके पुत्र माने जाते
हैं । पुषाड़ देखो ।

नागदन्त (स'० पु०) नागस्य गजस्य दन्तः । १ हस्तिदन्त,

हाथीके दाँत । नागदन्तः साधनत्वे मास्यस्येति चण्ड । २
गृहान्तर्गत दाह, दीवारमें गई हुई छूँटी ।

नागदन्तक (स'० पु०) नागदन्त स्त्रायें कन् । १ हस्ति-
दन्त, हाथीदाँत । नागदन्तेन कायतीति कै-क । २ भित्ति
दाहदह, नियुक्त, दीवारमें गई हुई छूँटी जिसके ऊपर
कोई चीज रखी या बन्वाई जाय ।

नागदन्तिका (स'० स्त्री०) नागस्य सर्पस्य दन्त इव पोषा-
दायकं पत्रं यस्याः, कावि पत इत्वं । हृदिकासीका
पौधा । (*Tragia Involucrata*)

नागदन्तो (स'० स्त्री०) नागस्य गजस्य दन्त इव फलाद्या-
कारे यस्याः, डीय । १ कुत्ताख्य पोषधि । २ ओहस्तिनी ।
पर्याय—विगन्था, पर्वपुष्पी, विद्योपधि, शुद्धपुष्पा, इम-
दन्ताक्षा, काण्डेरो, कामदूतिका, रत्नतापुष्पा, मधुपुष्पा,
विद्योचिनी, नागस्रोता, विद्यालोचि, नागच्छदा, त्रिच-
चना, सर्पपुष्पी, शुद्धपुष्पी, सादुष्पा, मन्दतिका, सित-
पुष्पी, सर्पदण्डो, नागिनी । गुण—कटु, तिक्त, रक्त, वात,
कफ, शुष्म, मूल, उदररोग घोर कण्ठदोषनाशक ।

नागदमन (स'० पु०) नागदोनेका पोषा ।

नागदमनो (स'० स्त्री०) नागो दम्पतेऽनया दमन्मुट-
डोप । शुद्ध शुष्पविशेष, नागदोनेका पोषा । संहलग
पर्याय—जम्बू, जाम्बवती, वला, नागाक्षा, दमनी, नाग-
गम्भा, हवा, रक्तपुष्पा, जाम्बोवो, मोटा, विद्यापहा, नाग-
पुष्पी, नागपदा, महायोगेश्वरी, मल्लो, दुःसहा, दुर्द्धवा ।
गुण—कटु, तोषण, हल्का, पित्त, कफ, मूत्रकृच्छ्र, मूत्र
घोर सर्वप्रहदोष आदि नाशक घोर सर्वदं नय, धन
घोर सुमतिप्रदायक है । (भावव० राजनि०)

नागदला—एक पेड़ जो बङ्गाल, पाछाम, बरमा, मल-
बार घोर सिंहराममें होता है । बङ्गालमें इसे 'पोहर'
कहते हैं । पण्डकाठ नामके इसकी लकड़ी बिकती है जो
बहुत कड़े घोर मजबूत होती है । यह पानीमें साबू-
से सो अधिक दिनों तक रह सकती है । इससे माँकीने
पहिये, नाव घोर पनेक प्रकारके सामान बनाते हैं । इसकी
लकड़ी सफेद होती है, लेकिन हवा लगने पर नीली हो
जाती है । इससे जोड़ीका गाढ़ा तेल बनाने घोर गरीर-
में लगानेके काममें आता है । इससे जिसकी का रस
तिक्त तो होता है, लेकिन बहुत मद्धोचक है ।

नागदोषम (सं० स्त्री०) नागदत्तस्य तादृशत्वात्पदा
यत् । परजन्म, फलमा । पर्याय—सन्ध्यासि, प्रथम,
मृदुल, परापर, यम, नीलवर्ण, निरविशु, पारावत,
नीलमण्डप । कश्चि फलका मुख—सख, पक्ष, पित्तकर
घोर मृग । पक्षे फलका मुख—महुर, गीतन, विटभी,
धातुवर्क, द्रव्यका हितकारक, विवाहा, पित्त, दाह,
रक्त, स्वरज्य, सत, शिथिल घोर वातनामक ।

(नागवशात्)

नागदा (सं० स्त्री०) इरीतको, दृढ़ ।

नागदास—दीव्यमण्डित एक राजा । बारह वर्ष राज्य कर
जुक्ति पर पर्याप्त बुद्धिगर्वासे ५० वर्ष बाद इन्कोने
स्वविर शीघ्रक उपसम्पदा प्राप्त को ।

नागदुसा (हि० वि०) त्रिमयी धूलका विरा सर्वके फल-
की तरहका हो । ऐसा दाघो ऐसी ममभा जाता है ।

नागदेव—१ पावकस्य पादुके चातुर्वर्णाश्रमं गते चादि
मुख्य मुनिराजके एक पोत । ये १०१ ई० में वर्षमान
ये । २ एक शास्त्रार्थकार । इनके बनाए हुए पाचार-
दोषिका घोर निर्णयतत्त्व नामक दो ग्रन्थ मिलते हैं । ३
चित्त-सन्तोषविनिर्मुक्तके प्रविता । ४ त्रिविक्रममण्ड-
प्रधीत दमघोषीकया नामक चम्पूकाव्यके टीकाकार ।
५ एक ज्योतिषिक पाचार । इन्होंने "प्रविततिवि-
निर्णय", "सुवर्णदोषक", "सुवर्णविधि", "रत्नदोषक",
"मन्त्राक्षि कण" घोर "लोभाप्रदोष" नामक ग्रन्थ बनाए
हैं । ६ घोरहन नामक स्थानके गणपति-वर्गीय चालिस
राजा । इनका नामान्तर विनायक है । १२०१ ई० में
बादघोरराजके साथ इनका युद्ध हुआ था । उसी युद्धमें
ये मारे गये ।

नागदेवभा—१ पाचारदीप नामक शास्त्रग्रन्थके प्रविता ।
पाचारदीप घोर निर्णय-तत्त्वकारप्रणीत पाचार-दोषिका
ये दोनों एक हैं, भा दो, माल मन्त्री ।

नागदोष (हि० पु०) त्रिमये घोर ज्वालेमें मिलने-
वाला एक प्रकारका पहाड़ी पिट्ट । इसकी लकड़ी भोतर-
में सजिद घोर सुनायम होती है घोर विविधतः कड़ियां
वर्णमें काममें आती है । लोरीका विषास है, कि इस
लकड़ीके पास रांप नहीं आते । २ नागदोष ।

नागदोषादोष ।

नागदोषा—१ एक प्रकारका कष्टबीजक, इसका वैज्ञानिक
नाम पायात्वा अहिं मास्कासुसार Artemisia foli-
guar. है । स्थानमें देते इसके नाम—नागदोषा (ब्रह्म),
नागदोषा, भाजतरी, मागुह (हिन्दो), ततो, वाशिर,
तपो, (पञ्चाषी), बुई मादाय, चकसुमनित् (पञ्चाषी),
बाजारमें इसी नामसे खरोटा घोर वैषा जाता है),
तिता घात (निवाल), नागदमनो, घन्नीपर्वी (मंरुत) ।
मन्त्राजमें नागदोषा घोर चन्निपर्वीमें प्रभेद है । महा
नागदोषाको मारिकुयन्दु (तामिस) घोर टवनाह, तैलमू,
घोर कषाट) कहते हैं । पारसी घोर परसीमें इसीका
नाम मारानजोन है । जो घन्नीपर्वी है, उसे तामिस,
तैलमू, कषाटो चादि मन्त्रात्री भाषाओं में मणि-पत्तार, परसी
घोर पारसीमें चकसुमनाहन कहते हैं । अङ्गरेजीमें इसे
Worm-wood कहते हैं । पश्चिम हिमालय, चाग्निदा
पहाड़, मणिपुर घोर उत्तर ब्रह्मके पर्वत पर यह बहुत-
यत्ने पाया जाता है ।

इसमें क्षान्ति घोर टहनि घोर नहीं होती । जड़के
जवसे ग्यार पाठेकी-से पत्तियां सारी घोर निरुपलती हैं ।
ये पत्तियां हाथ हाथ भर पर घोर दो टाई पड़, ल पोकी
होती हैं । त्रिम तरह ग्यारपाठेकी पत्तियोंमें गुहा नहीं
होता, उसी तरह इनमें भी । पत्तियोंका रंग गहरा हरा
होता है, पर बीच बीचमें इनको चित्तियां भी होती हैं ।
नागदोषेकी जड़ कन्दर्प रूपमें नीचेकी घोर आती है ।
यह चरपरा, कड़वा, जलका, त्रिदोषनाशक, जोड़ेकी
गुह करनेवाला, विपनाशक तथा शुभन, प्रभेद घोर
ज्वरकी दूर करनेवाला माना जाता है । २ एक प्रकार-
का बहुत घोर कटीला दोष । इनके पिट्ट लकड़ी साथ
होते हैं । इसकी सखी पत्तियां लोग कागजों घोर कपड़ों
को तहनेके जोष इसलिये रख देते हैं, कि कोई उन्हें
काट न जाय ।

नागदोषा—उल्लयकोके चत्तर्गत नागधारी नदीका नामा-
न्तर ।

नागदुम (सं० पु०) १ में दृढ़, गूहर । २ नागजनी ।
नागदीप—विष्णुपुराणोक्त भारतवर्षके जो भागोंमें यह
भागका नाम, विष्णुन दोषका एक पर्व ।

नागधर (सं० पु०) महादेव, विष्णु ।

नागध्वनि (सं० स्त्री०) मिथरागिणीविशेष, एक सहर-
रागिणी जो मत्तार और केदार वा सुधा बधवा काहड़े
और सारंगके योगसे बनो है। स्वरग्राम—

“नि सा ऋ ग म प ० :: १”

मत्तान्तरसे यह टडाद्वयसम्भव है, रिप वर्जित है। यह
घोररसके साथ दिनको गाया जाता है। स्वरग्राम—

“स ० ग म ० ध नि सा :: १”

नागध्वनिकानड़ा—मिथरागिणीविशेष। यह भठारहूँकानड़ा-
मैसे एक है। सुतरां यह कानड़ाके समय पर्यात् रातके
११से १५ दण्डके मध्य गाया जाता है। यह कानड़ा और
सारङ्गके योगसे उत्पन्न हुआ है। स्वरग्राम—

नि सा ऋ ग म प ० । (सन्नोतर०)

नागनक्षत्र (सं० स्त्री०) नागाध्वित्त नक्षत्रम्। असेवा-
नक्षत्र। इस नक्षत्रका अधिपति नाग है।

नागनदी—१ विशारप्रदेशके दक्षिण रामटेकके निकटवर्ती
एक नदीका नाम। यह नदी जङ्गलके बीच हो कर बहो
गई है। इसके किनारे को-ग्राम पड़ता है। वहाँ किसी
समय कोत्ति नामक राजा राज्य करते थे। उन्होंने
भीमकी युद्धमें पराजित किया था।

नागनक्ष—छाया जिसके वायव्यता तापुकके भन्तर्गत एक
ग्राम। यहाँ ३५० वर्षके दो प्राचीन मन्दिर हैं जिनमें
बहुतसी सिधियाँ भी उल्लेख्य हैं, लेकिन वे अस्पष्ट हैं।

नागनाय (सं० पुं०) नागानां नायः इत्यत्। नागोंके
अधिपति।

नागनाय—१ गणिततत्त्व चिन्तामणिके प्रणेता सत्तोदायके
प्रतिपादक। २ पर्वप्रदोष नामक ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता।
३ माधवकरनिदागके ‘निदान-प्रदोष’ नामक टीकाकार।
ये कृष्ण पण्डितके पुत्र और योगचन्द्रिकाके प्रणेता सत्सम-
के गुरु थे।

नागनामक (सं० स्त्री०) धौलक, सीसा।

नागनामन् (सं० पुं०) नागानां नामयति नामि-कासन।
तुलसी।

नागनायक (सं० पुं०) नागानां नायकः इत्यत्। नागोंका
नायक, अर्थात् सप।

पगना, वासुकि, पद्म, महापद्म, तच्चक्र, कर्कोट,
कुलिक और गङ्ग ये आठ पञ्चनाग माने जाते हैं। यही

नागोंके नायक अर्थात् प्रधान हैं। पटनागोंकी पूजा
करना एक एक गृहस्थका कर्त्तव्य है।

नागनामा (सं० पुं०) १ श्वेत तुलसीवृक्ष, श्वेत तुलसी।
२ कृष्ण तुलसीवृक्ष, काली तुलसीका पेड़।

नागनायक—पूनाप्रदेश जब देवगिरीकी यादवोंकी हाथ
था, उस समय मराठी वा कोली जातिके सरदार हम देव
पर कई एक स्थानोंमें स्थापित हो गए थे। नागनायक
उन्हींमेंसे एक थे।

नागनासा (सं० स्त्री०) हस्तिपुच्छ, हाथीकी सूँड़।

नागनियूँड़ (सं० पुं०) नाग इव नियूँड़ः। नागदस्त।

नागनुर—बम्बई प्रदेशके धारवार जिलेकी भन्तर्गत महा-
पुरकी समीप एक ऊँड़। इसमें एक बाँध दिया हुआ है
जो ३४०० फुट लम्बा है। इसका लाल पारो और पत्थर-
की दीवारसे घिरा हुआ है। बाँधके ऊपर पाने जलने-
के लिए २४ फुट चौड़ा एक रास्ता है। ऊँड़ उतना
गहरा नहीं है। वर्षाके बाद जल भास तक इसमें जल
रहता है, पीके सुख जाता है।

नागपञ्चमी (सं० स्त्री०) नागप्रिया पञ्चमी, वा नागपूजात्र
पञ्चमी। पावाड़ मावकी कृष्णपञ्चमी। इस पञ्चमी
तिथिमें मनसा और नागपूजा की जाती है इसीसे इस
पञ्चमीका नाम नागपञ्चमी पड़ा है।

जब विष्णु शयन करते हैं, उस समय कृष्णपञ्चमी
तिथिकी खूबो (बीज) के पेड़की स्थापना करके मनसा
और नागपूजा करनी होती है। मनसादेवीकी पूजा
और उन्हीं प्रसन्न करनेसे सर्पका भय नहीं रहता।
इस पूजामें जो और दूधका नैवेद्य लगता है।

इस दिन अपने घरमें नीमकी वृत्तियाँ रखनी चाहिये
और ब्राह्मण तथा वात्स्योंके साथ भिन्न कर उन्हें खाना
चाहिये।

वराह पुराणमें लिखा है, कि पञ्चमीकी नागपञ्च
जन्माका माप और प्रसाद पाते हैं, इसीसे यह तिथि इन-
की बहुत प्रिया है। इस तिथिकी दुग्ध द्वारा नागोंको स्नान
करानेसे सर्पोंका भय नहीं रहता। इस दिन भनना,
वासुकि, पद्म, महापद्म, तच्चक्र, कुलीर, कर्कोट और गङ्ग
इन आठ प्रकारके नागोंकी पूजा की जाती है। पट-
नागके सिवा और भी कितने नागोंके नाम तिथितत्त्वमें
देखनेमें पाते हैं। यद्यपि—

मिय. पत्र. मशायद कुलिक, मधुमदक. सामुक्ति
तत्त्व, कानिम्न, मचिमदक, एशवत, धृतराष्ट्र, कर्कोटक
घोर भनक्य। (मदकपुराव) चनका, मय, पत्र. कचन,
कर्कोटक, धृतराष्ट्र, मय, कानिम्न, तत्त्व, विद्वान् घोर
मचिमदक इन सब नामोंकी पूजा करनेमें दटमुख होता
है परन्तु पहले दोगिन होनेके बाद पीछे मुक्त हो कर
सर्गसाम होता है।

भारतवर्षके प्रायः सभी देशोंमें यह मत किश जाता
है। शिवाई ही विशेष कर यह मत करनी है। चन्दाव्य
धो-वर्तकी तरह यह मत भी उनके लिये सुलभ है।
सम्बन्धको प्रमुकायव्य-रमणियां यह मत जिस प्रकारसे
करती है, उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है,—

प्रत्येक दिन प्रभुरमणियां एक काठकी थोकीमें चन्दन
वा सिन्दूर लगा कर ८ माँवोंके पित्त चक्षित करती हैं।
इसमें दो बड़े होतेशे घोर मात छोटे। इनके पाद-
मूर्धन एक दूसरे पूँछकीन सापका पित्त बना होता
है। उनके घाम की हाथमें दोप लिये एक थोकी
मूर्ति भी वहाँ रखी रहती है घोर एक प्रसार-
पुण्ड तथा सर्वविवर भी बनाया रहता है। विवाहिता
शिवाई प्रत्येक माँवके पित्त पर भुगा हुआ चना, छरद,
केला, मारियन आदि रख होइती हैं। घाम की पत्तीके
दोनोंमें दूध भी दे देती हैं। तदनन्तर धे फूल चन्दन घोर
सिन्दूर द्वारा लनकी पूजा करती हैं। पूजा की जाने
पर सब कोई मिल कर माँवोंमें प्रार्थना करनी है कि
उनके बाल बर्षाका माँव कोई धमिट कर न सके घोर
घामें सापका भय भी न रहे। बाद यहियो करया मृग
आदिको एकत्र कर मतकी जाया कहने बैठती हैं।
कदा इस प्रकार है,—

किसी मण्डलके मात पुनबधू थी। छोटी बधू ने न
बाप मा न मा थी। घामें सर्वाने छोटी होनेके कारण
घरके सभी काम-काज उसे ही करने पड़ते थे। एक
दिन सब कोई मिल कर ताकाशमें खान करने गईं।
वही कः बह विजमादहीना घामकी बहकी दुना रुना
कर कहने लगी कि उन लीगके बाप भाई सब कुट्ट हैं।
मैं समस्त समय पर उन्हें निमन्त्रण दे कर बुला ले
जाती हूँ।

यह सुन कर छोटी बधू भोजित हो रही। जहाँ से
सब वार्ते होती थीं, उससे घाम की एक गर्दनिघर या।
विवरवासी सर्प घोर सर्पोंमें उन लीगोंकी सब वार्ते
सुन लीं। उस समय सर्पों गर्भिणी थी। गर्भमें बड़ा,
'इस पञ्चालामें तुम्हारी सेवाके लिये एक चादमीकी
लहरत है। इसलिए इस विजमादहीना मनुष्य गया हो
यहाँ ले जाता हूँ। मैं अपनेको लकड़ा भाई बनना कर
तुम्हारे घाम ससे ले पाऊँगा घोर तुम्हारे प्रमथन न भ
यहाँ रख कर पीछे भिजवा दूँगा।' इस पर गर्भिणी लो
हो गई। बाद एक दिन छोटी बहू माँव घामोंके निम
बाहर निकली। इसी समय उस सर्पोंने एक टिप पुनब-
मूर्ति धारण कर लम्बे समोप या कर कहा, 'बहनः
मैं तुम्हारा भाई हूँ। दूर देग बना गया था, इस
कारण इतने दिनों तक मैंने तुम्हारी कुछ भी खोज-
खबर न ली। अब तुम बहुत छोटी हो सभी समय मैं
परदेस बना गया था। तुम्हारी तुमने मुझे लम्बी गर्बी
देवा। जो कुछ हो, एक दिन तुम्हारी मनुष्यता का कर
तुम्हें अपने यहाँ ले पाऊँगा। तुम चाहेंगे निम तैयार
हो रहना।' एक दिन घरके सब सब भीड़ें रा पुन-
थे, तब अपने जूठा पल सठा कर कछी रख दिया घोर
घाव भरन मनने तथा खान करनेके लिए बाहर लगी
गई। इसी बीच यह सर्पों या कर उस जूठे पनाजकी
या गई। जब यह खान कर भीठी घोर उस जूठे
पनाजकी कछी न देवा, तब घामोंकी लीगों न दे
कर बहुत विनीत स्वरसे कहा,—'बहाना। जिये मेरी भूख
लगी थी, जिसने जूठा या लिया उसकी भूख मान की
भाय।' उसको सोने बात सुन कर सर्पों बहुत खुश हुईं
घोर सभी दिन उस बधूकी घामें पर कामके निम अपने
अपने लीगोंमें चतुरीप किया। पूर्णता दूर बना कर
नव माँव उस मण्डलके घर गया घोर अपनेकी छोटी
बधूका भाई बनना कर अपना परिचय दिया। दीर्घ
समयमें जब सब अपने घर में जानेकी इच्छा प्रकट
की, तब घरवालोंमें भी वास्तु दे दी। छोटी बहू विना
किसी प्रकारका सम्बन्ध लिये अपने मूलज भाईकी जाय
चली गई। शहरमें सर्पोंने इस बधूकी घामा प्रजन
परिचय दिया घोर कहा, 'लगा-नदेस करने समय मैं

साँवका रूप धारण करूँगा और तुम मेरी पूँछ पकड़ कर मेरा अनुसरण करना।' बाद बैधा ही हुआ भी। वहने विधरमें जा कर देखा कि सुवर्णमय प्रासादमें रत्न-सुचित डिङ्गोलेक जपर गर्भिणी सर्पों सोई हुई है। बहूके पानिके साथ ही सर्पोंके सात सन्तान भूमिष्ठ हुई। बहू हाथमें एक दोपले कर ज्योंही उन्हें देखने गई, ज्योंही उनमेंसे एक शिशु उछल कर उसके शरीर पर चढ़ पाया। वह बहू बहुत डर गई और हाथका दोप नीचे गिरा दिया। दोप जो नीचे गिरा उसके पार्श्वमें एक सर्प शिशुको पूँछ कट गई। क्रमशः जब वह शिशु बढ़ा हुआ, तब श्रेय कः शिशु उस पूँछ-हीन शिशुका उपहास करने लगे। इन पर वह बहुत क्रुपित हो गया और उस बधूको काटनेका पक्का इरादा कर लिया। इसी उद्देश्यसे उस सर्प शिशुने मण्डलके अन्तःपुरमें प्रवेश किया। उस दिन नागपञ्चमी थी। जब छोटी बहू अपने घरमें बैठ कर नागपञ्चमीका मत करने सर्पोंके उद्देश्यसे दूध, केला आदि उद्योग कर रही थी, उसी समय क्रोधित सर्पशिशु वहाँ पहुँच गया। किन्तु मानवीकी सर्पकी पूजा करते देख उसका क्रोध शान्त हो गया। पीछे वह उसके प्रदत्त भोजन खा कर अपने घरकी चत दिया। घर पहुँच कर उसने सारा विवरण अपने मातापितासे कह सुनाया। सर्प-सर्पों बहुत खुश हुई और उन्होंने उस बधूको यथेष्ट धन रख आदि दिये तथा अनेक पुत्रवत्तों होनेका वर भी दिया।

यह पुण्यकथा सुन कर मनु रमणियाँ चावलके लड्डू खाती हैं। पूजा आदि स्थानोंमें उस दिन सर्पनर्तक दर दर घूमते और अपने साँवोंकी पूजा करते हैं। गृहस्थकी स्त्रियाँ भी उन जीवित सर्पोंको दूध, केला, कावा आदि खानेकी देती और एक एक पैसा भी देती हैं। इस दिन प्रमुखरमणियाँ पानीके दोनोंमें दूध भर कर उसे घरके एक कोनेमें डालके उद्देश्यसे रख छोड़ती हैं। इस दिन वे जाता नहीं चलाती और न रखी ही करती हैं। उनका विग्रह है कि ऐसा करनेसे सर्पोंको दुःख पहुँचता है।

ग्रहास देवमें नागपञ्चमी मतकी जो कथा होती है,

उसमें इस देशकी कथासे कुछ फर्क पड़ता है। सतारा पञ्चनमें भी नागपञ्चमी-त्रय खूब धूमधामसे होता है। इस प्रदेशमें बहुतसे स्पर्शमन्दिर देखनेमें पाते हैं। जहाँ स्पर्शमन्दिर है, वहाँ स्त्रियाँ मटोके सर्प बना कर वा काष्ठामन पर बन्दन और सिन्दूरसे चरित सर्प-चित्र और पूजा-द्रव्यादि ले कर जाती हैं। जब कभी ये सर्पविधर देखती हैं, तब घने साटाड़ा प्रणाम करती और उस गर्भमें दूध और केला फेंक देता है। बलिया मिरा-मोन नामक नगरमें नागकुनि नामक एक जातिका नाग है, जिसका विशेष चतना अगिष्टकर सर्पों होता है। वहाँके लोग नागपञ्चमीके पूर्व दिन उस सर्पको पकड़ कर हड्डी-में रखते हैं, पूजाके दिन उसे खातेकी देते हैं और दूसरे दिन पुनः वनमें छोड़ देते हैं।

दक्षिण प्रदेशोंमें कई जगह नागमन्दिर हैं। मन्दाज यक्षमें इसकी संख्या सबसे ज्यादा है। वहाँके बसरावाड़ नामक ग्राममें एक बड़ा नागमन्दिर है जहाँ प्रति रवि-वारके सबसे ब्राह्मण-रमणियाँ पूजा करनेके लिये पातो हैं। मन्दिरके पुजारी जंगली बैलको जातिके हैं।

विशेष विवरण नागपूजा देखो।

नागपति (मं० पु०) नागागोपतिः १-तत् १ सर्पोंका अधिपति वासुकि। २ शत्रुधर्माका अधिपति ऐरावत। नागपरात्म-देवीय लोग इसे नगाईपरात्मन् और परवी भौमोलिक साधियतन कहते हैं। पहले पोर्तुगोज इस नगरको चोरमण्डल नगर (City of Choramandel) कहते थे।

यही नगर अभी मन्दाजके अन्तर्गत तञ्जौर जिलेका एक प्रधान बन्दर हो गया है और पचास १०५५ वर्ग तथा देगा ७८५३३ पूँछके मध्य तञ्जौरमें २४ कोस पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ४० हजार है। यहाँके बन्दरमें विश्व, मद्य आदिसे साथ वाणिज्य चमत्ता है। यहाँसे प्रधानतः सुपारी और वस्त्रादिकी आमदनी तथा चावल और धातुकी रफ्तानी होती है।

करमण्डल उपक्षेत्रके मध्य पोर्तुगोज लोग बहुत पहिले यहाँ आकर बस गये थे। १५६० ई०में पोर्तुगोजोंने यह स्थान जीत लिया। पीछे १८०१ ई०में यह पंगरेजोंके अधिकारमें आया है। तरङ्गवाड़ी नगर खरीदनेके पहले इस नगरमें तञ्जौरके कलकटर रहते थे।

सन्धर नामक एक ओबीक सुननेमान अधिक गन्धामें यहाँ नाग रहते हैं। ये लोग घरकी ओर हिन्दू के भेजेमें चन्दन हुए हैं। यहाँ लोग नगरका पवित्राय माधव्य काव' चलाते हैं। यभी इनमें कुछ लोग प्रया ओर समय प्राद्वीपमें जा कर रहने लगे हैं।

इस बन्दरमें ८० फुट ऊँचे मीन स्तम्भके ऊपर चतुस्य ओबीका मीन चालोक गृह, light house of white light) है। इसकी दायरेका नागौर नामक बन्दर भी इस नगरका पश्चिमविष्ट भागभा जाता है।

यहाँ बहुत प्राचीन १४ मन्दिर हैं जिनमेंसे १२ विष्णु-मन्दिर और २ विष्णुमन्दिर हैं। जेनामनाय चामोके मन्दिरकी दीवारमें चोनन्दको मायामें जो एक विना-मित्र देखा जाता है, वष १००७ ई०में नृत एक चोन-न्दानको ध्यायाय' होदा गया था। यहाँ पहले चोना पागोड़ा नामक एक स्तम्भ था। च'गरेज गवर्नमेंपट्टने मेष्टाभके कावेजको मादरियो'उ कयनेमें १८१० ई०में उमेतोड़ फोड़ डाला। चोनपागोड़ाका प्रकृत नाम जिनपागोड़ा है। एक समय यहाँ बोधधर्म पूर चढ़ा चढ़ा था। स्थानोय लोग जिनपागोड़ाको 'गुदुवेनि गोपु' और च'गरेज लोग कृष्णपागोड़ा (Black pagoda) कहते थे। स्तम्भ तोड़नेके समय प्रच्छातुको एक प्रतिमा पाई गई है जिसे कीई ती बोध और कीई गैव प्रतिमा समझते हैं। प्रतिमाके निम्न भागमें प्राचीन तामिसाचरमें उलोच'निधि है। यटेमियाकी धि-मासिकामें हो रीयसमक है। इसमेंसे एक तथोरे चलिम नामक मित्रराधम द्वारा प्रदत्त निगापाटम् दानका दानपत्र है और दूसरा महराष्ट-राज एकात्री द्वारा प्रदत्त उम दानका प्रतिपोषक चनुप्रापत्र।

रामचन्द्रसे राजा धर्मचैतो (धर्म'ओ)ने सिंहनने महाविहार सम्प्रदायकी बोध रीतिनीतिका प्रचार करने राज्यमें करवाया था। इसके लिये उन्होंने सिंहनराज भुवनेश्वराहुके समीप ३४ मन्दिर दब' गिराहुन और राम दूरा नामक दो दूत भेजे। ओटने समय ब्रम्हूरोव और सिंहनराजके बीच मित्रा सम्प्रदायमें जब उनका प्रयास हुआ, तब एक भाग' दूतका बाधा और दूसरेमें यह कहाज टकरा कर चुर चुर हो गया। चारीविगत

काठ पाटिका धेड़ा बना कर किसी तरह ब्रम्हूरोव के किनारे पहुँचे।

सिंहन-राजदूतके पास जो कुछ भेंटके सामान थे उनके धो ज्ञानिने ये यहाँमें माधिम चले गये। चित्रदूत और उनके साथी स्वविरगव पेदल की नागपत्तनकी पहुँचे। यहाँ उन स्थितिरिमें पहरिका नामक होडाध-का दग्ग किया और शुभामधक्य बुद्धमूर्ति'की पूजा की। चोनदेयाधिगति महाराजके चादेमने यह मूर्ति बनवाई गई थी। यह स्थान, जहाँ एक मूर्ति स्थापित है, समुद्रके किनारे पड़ता है। कहते हैं, कि इन्तजुमार और जेममाला (वतिपवी)के तत्त्वाधानमें जब बुद्धन सिंहनको लाया गया, तब पहले वह इसी स्थान पर रखा गया था।

यह नागनाय नामक एक प्राचीन नाममन्दिर है जिनमें नागनाय चनगतकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। उस प्रतिमाके निकट एक उच्च यन्त्रीक स्तूप है। लोग कहते हैं, कि उस यन्त्रीकमें वायुदेवता रहते हैं। इस कारण जेवियादि सभीके निकट चढ़ाया जाता है। यहाँ 'गङ्गा-हुम' नामक १०० फुट ऊँचा जो एक बटवरतथ है यह जैन का बोदाका बनाया हुआ है।

नागपत्तनमें ६ मोन पूर्व-उत्तरमें समुद्रके किनारे नागौर नामका एक स्थान है जहाँ कादेरविमिर मंदर, उनके लड़के मरुचद दसुक भेयद और पुत्रवधू' होदार बीभीके प्रविष्ट समाधिगृह विद्यमान हैं। इन सबकी क्या हिन्दू, क्या मुसलमान सभी कादेरविमिरकी जहा-भाति करते तथा उनको समाधि देवने पाते हैं।

नागपत्तनका दिग्मलक्षामो और कायारीहचक्षामो का मन्दिर बहुत समझर है। प्रवाद है, कि महाबुद्धने जहा टपिचमसुद्धके किनारे महाविष्णु के चरेउधे लपसा करके थे। तपसाये समुद्र की ओर विष्णुने उन्हें दग्ग दिया। ज्ञानिने उणी समय यहाँ एक विष्णुमन्दिर बनवा दिया। उनी मूर्ति'का नाम यभी दिग्मलक्षामो पड़ा है। कायारीहच क्षामोकी मूर्तिका नाम भीक्ष' यतायो है। इसका-ब्राह्मण लोग उनकी विदेव मूर्ति और लक्षान करते हैं।

नागपत्तनी (१०० मी०) जलनामक।

नागपत्र (सं० स्त्री०) ताव्यसदृश, पानका पत्ता ।
नागपत्ता (सं० स्त्री०) नागदमन परं यस्याः, टाप । १
नागदमनी ।

नागपत्नी (सं० स्त्री०) नागवत्पत्न्यं यस्याः स्त्री । सप्तषा-
कन्द, सप्तष नामका कन्द ।

नागपद (सं० पुं०) नागवत्पदं स्थानं यस्य । १ मोसस
प्रकारके रतिवन्धोर्मेसे दूसरा रतिवन्ध । (स्त्री०) २
इतिपद, हाथीके पैर ।

नागपर्षी (सं० स्त्री०) १ ताव्यस, पान । २ नागवन्नीलता ।
नागपाल—काश्मीरके एक राजा । ये सोमपालके सहो-
दर भाई थे ।

नागपाश (सं० पुं०) नागः पाश इव । १ वस्त्रको एक
पञ्चका नाम । इस पञ्चसे वे शत्रुओंको बांध लेते
थे । रामायणमें लिखा है, कि इन्द्रजित्ने इन्द्रसे यह
पञ्च प्राप्त किया था । प्रायः सभी पुराणोंमें इस पञ्च-
का उल्लेख देखनेमें आता है । तन्त्रमें लिखा है, कि टाई
किरेकी बन्धनका नाम नागपाश है । नागपाशसे बन्धन
कहनेमें टाई किरे दास बंधा है, ऐसा बोध होता है ।
नागपाशक (सं० पुं०) नागपाश इव इति कन् । रति
बन्धविधेय ।

नागपुत (सं० पुं०) हृषविधेय, एक पेड़का नाम (Ba-
binia Anguina)

नागपुर (सं० स्त्री०) नागानां पुरं इत्युक् । १ पातास । २
देवविधेय, एक देवका नाम । यमिपुराणमें इस देवका
उत्पत्ति-विवरण जो लिखा है, वह इस प्रकार है—
जब गङ्गा महादेवकी जटासे निकल कर हिमकुट हिमा-
लय आदिकी ओर कर आई, तब स्वर्लोच नामक एक
हानवपर्वतके रूपमें मार्ग रोकनेके लिये खड़ा हो
गया । भगीरथने कौशिकको प्रसन्न करके उससे एक
नागवाहन प्राप्त किया । उस वाहनने पर्वतकूची दैत्यको
विदीर्ण कर डाला । जिस स्थान पर वह दैत्य विदीर्ण
किया गया उसका नाम नागपुर रखा गया । ३ इतिना-
पुरका नामाकार ।

नागपुर—१ मध्यप्रदेशका उत्तरीय विभाग । यह अक्षा०
१८° ४२' से २२° २४' उ० और देशा० ७८° ४' से ८१° ३'
पू०के मध्य अवस्थित है । उपरिमाण २६३२१ वर्ग-

मील और लोकसंख्या प्रायः २०,६१,८५ है । इस
विभागके उत्तर हिन्दवाड़ा, सेवनी और मण्डला जिला ;
पूर्वमें रायपुर जिला, कवाही और खैरागढ़ कांठेर
नामक तीनों देगोय राज्य ; दक्षिणमें निजामप्रभृत
प्रदेश और पश्चिममें रेवारके अन्तर्गत अमरावती तथा तुल
नामक जिला है । इस विभागमें विरोधतः गौड़, ठेगा,
कवार, कोरुं, कोल, भोल आदि अमध्य जातियोंका वास
है । हिन्दूमें क्षत्रिजौबि कुर्मीको संख्या सबसे अधिक है ।
इस विभागमें २४ मण्डल और ७८८८ ग्राम समिते हैं ।

२ उक्त विभागका एक जिला । यह अक्षा०
२०° ३५' से २१° ४४' उ० और देशा० ७८° १५' से ७८° ४०'
पू०के मध्य अवस्थित है । इसके पूर्वमें भण्डारा, उत्तरमें
हिन्दवाड़ा और सेवनी ; दक्षिण-पश्चिममें यहाँ, दक्षिण-
पूर्वमें अन्ध्रा और पश्चिममें रेवार पड़ता है । सतपुरा
पहाड़के निम्न समतलक्षेत्रमें यह जिला अवस्थित है ।
उत्तर, पश्चिम और पूर्वमें इन जिलेका सीमांग स्वरूप उक्त
पर्वतमाला विस्तृत है । इन पर्वतमालासे मझुषा जिला
तीन समतल विभागोंमें बँट गया है । दक्षिण-पूर्वके
समतलमें नन्दानदीकी अववाहिका है । विस्कापर-
गिररके पश्चिममें यहाँनदीकी अववाहिका और यहाँ
नदीको उपनदिषा नाम और मदारसे भी उपेष्ट जलसङ्ग्रह
होता है । पूर्वीय समतलक्षेत्रमें वेशगढ़ाकी उपनदिषा
खजूरानसे जलका काम चल जाता है । इस जिलेके विन-
कापर (१८८८ फुट), उन्दीनी (१३०० फुट) और रामटेक
(१४०० फुट ऊँचा) नामक तीन प्रधान पहाड़
हैं । रामटेक पहाड़ छोड़के नामके जैसे दिखनेमें लगता
है । इसके ऊपर प्राचीन दुर्ग और प्राचीन मन्दिरादि
बनी हुए हैं । घोषरुतुमें यहाँ भारतवर्षके सब छात्रों-
से अधिक गरमी पड़ती है । उस समय यहाँका ताप
परिमाण ११६° हो जाता है ।

इतिहास—अत्यन्त प्राचीनकालमें इस देशमें गोत्रीजातिके
सरदार राज्य करते थे । देगोय नाममें इन सरदारोंकी
बीरताका सर्वत्र देवताको तरह किया गया है । १६वीं
शताब्दीके पहलेका जोह विष्णु इतिहास नहीं मिलता ।
उस समय देवगढ़—गोड़गण्यमें यह जिला अवस्थित था ।
उसी समय जटवा नामक राजगोड़ जातिय एक राजा

घोर पोछे सोतावः दो दुग जो जोत लिया। अण्णसाहन
इम उपद्रवकी मूल कारण थे, यह उन्होंने स्वीकार नहीं
किया। जो कुछ हो, जब थोड़ी घोर चंगरेजी मेना
रेसिडेंटको दबाके लिये पहुँची, तब रेसिडेंटने राजा-
से आत्मसमर्पण करने घोर सैन्यसमावेशकी सलह कर
देनेके लिये धनुरोध किया।

अण्णसाहने आत्मसमर्पण किया सही, किन्तु
सैन्यसमावेशकी घोर कुछ भी ध्यान न दिया। अन्तमें
नागपुरमें लड़ाई हिट गई जिसमें महाराष्ट्रको हार
हुई। पहरजेनी पुनः अण्णसाहको गहो पर बिठाया।
इस समय पावजीकी विपत्ति देनेकी यात खुन गई घोर
चंगरेजीके विरुद्ध जो नवोन पहयन्त्र कर रहे थे, वह
भी सब किसोको सामूम हो गया। इस पर चंगरेजीने
उन्हें कैद कर लिया। किन्तु अण्णसाहव बहुत सानाको
से महादेव पर्वतके समीप भाग गये घोर वहाँसे सीधे
पञ्जाबको चले आए।

२५ रघुजीके एक मिश्र पोत्र ३२ रघुजी नामसे
मिह्रासन पर अधिबद्ध हुए। १८३३ ई०में अण्णसाह
अवस्थामें इसका देशना हुआ घोर यह राज्य इटिंग
गवर्नमेंटके हाथ लगा। १८६१ ई०में यहाँ कमिश्नर
नियुक्त हुए।

इसमें १२ शहर घोर १६८ ग्राम लगते हैं। शहरमें
८ ही प्रधान हैं, यथा—नागपुर शहर, कामठी, समर,
खण, रामटेक, भरखेर, नोडिया, कर्मेश्वर घोर सोमर।
जनसंख्या प्रायः ७५,१४४४ है जिनमेंसे ब्राह्मण, कुनबी
घोर महाराष्ट्रको सन्ध्या अधिक है। स्वार घोर रुई ही
यहाँकी प्रधान उपज है। डिपटी कमिश्नर घोर उनके
कुछ तहसीलदारों द्वारा विचारकार्य सम्पन्न होता
है। विद्यामें भी यह जिला बढ़ा बढ़ा है। यहाँ ५ हाई
स्कूल, १६ मिडिल स्कूल, १० वर्नाकुलर
स्कूल घोर १४७ प्रायमरी स्कूल हैं। इसके पञ्जाबा
मोरिस नामका एक कालेज है जिसमें कानून भी पढ़ाया
जाता है। यहाँ दो मिश्र विद्यालय भी हैं।

३ नागपुर जिल्हके मध्यकी एक तहसील। यह
पचा० २०° ४६' ८" घोर २१° २३' ८" तथा देशा०
७८° ४४' घोर ७८° १८' पू०के मध्य अवस्थित

है। भूपरिमाण ८०१ वर्गमीन घोर लोकसंख्या लग-
भग २८,६११० है। इसमें ४ शहर घोर ४२० ग्राम
लगते हैं। यहाँ ११ डोवानी घोर १५ फोन्नदारी
पदासन, ३ घाना तथा ६ चौकी हैं।

४ नागपुर जिल्हका एक प्रधान शहर। यह पचा०
२१° ८' ८" तथा देशा० ७८° ०' पू०के मध्य अवस्थित
है। यह शहर नाग नामसे नदीके किनारे बसा हुआ है
इसीसे इसका नागपुर नाम पड़ा है।

जनसंख्या लगभग १२,७३४ है। यहाँ हिन्दू, जैन,
बौद्ध, सिख, पारसी, यज्ञदी, ईसाई घोर मुसलमान आदि
के लोग रहते हैं। गेहूँ, सब्ज, दाली घोर बिलायती
कपड़े तथा रेशम घोर मसालेकी आसानी होती है।
१८वीं शताब्दीके आरम्भमें गोखु राजा बल्लुनन्दने
यह शहर बसाया गया। घोर घोर यह भौमलाके अधीन
आया। यहाँ चौक कमिश्नरको कचहरो, छोटी पदासन,
तहसीली मजिस्ट्रेटकी पदासन, पुलिस, कारागार,
अस्पताल, पण्डागार, कुहायम, मीताबदे-पातुराय
घोर अनेक विद्यालय हैं। इसके प्रतिनिधि तीन सराय
घोर धर्मशास्त्र हैं। शहरमें कालि पत्थरके बने हुए
भौमलाका प्रासाद, गौडतखाना, महाराजगण, तुलसी-
बाग आदि मशहूर स्थान देखने योग्य हैं। भौमला
राजाजीके समय यहाँ अनेक उद्यान लगाए गए थे।
उद्यानके सिवा उनके बनाए हुए लमा तालाब, अम्मा-
झारो घोर तेलिखेरो नामक तीन कलाशय भी नगर
आते हैं। शहरको आसपास आसपास जनक है।

नागपुरगम् (स० ज्जी०) गीम धातु, सोमा।

नागपुरी—नेपालके ख्यप्रचुरके पन्तर्गर्ती एक पत्थर
प्राचीन बौद्ध देवमन्दिर। यहाँ बस्य घोर पटनागतो
मूर्ति प्रतिष्ठित है। ख्यप्रचुराणके मतानुसार नेपाल-
धिप गुप्तकालके समय शान्तिकरने लक्ष मूर्तियोंकी
स्थापना की थी।

नागपुर (स० पु०) नागस्य जन्तिनः सदागन्धुर् पुष्पं
यस्य। १ पुष्पागुल। २ नागकेसर। ३ चम्पक, चपा।
नागपुरपत्र (स० पु०) १ अविशुद्ध, कथका पेड़। २
स्वर्णशुद्धिका, पीसी लुई। ३ कुशाष्ट। ४ पुष्पाग
हय। ५ नागरेसरहय।

घोर पोलि सोतावादे दुग की जौत लिया। अण्यभाहव
इम उपद्रवकी मूल कारण थे, यह उन्होंने सोकार नहीं
किया। जो कुछ ही, सब छोड़ी घोर चंगरेजी सेना
रेसिडेण्टको रक्षाके लिये पहुँचो, तब रेसिडेण्टने राजा-
से आत्मसमर्पण करने घोर सैन्यसमावेशको अनुरोध
देनेके लिये अनुरोध किया।

अण्यभाहवने आत्मसमर्पण किया सही, किन्तु
सैन्यसमावेशकी घोर कुछ भी ध्यान न दिया। अन्तमें
नागपुरमें लड़ाई छिड़ गई जिसमें महाराष्ट्रों को हार
हुई। अन्तर्जोने पुनः अण्यभाहवको गद्दे पर बिठाया।
इस समय पाषाणकी विष देनेकी बात सुन गई घोर
चंगरेजीके विरुद्ध जो नवोन पक्षधर कर रहे थे, वह
भी सब किसोकी मालूम हो गया। इस पर चंगरेजीने
उन्हें कैद कर लिया। किन्तु अण्यभाहव बहुत चालाकी
से महादेव पक्षके समीप भाग गये घोर वहोंने सोचे
पक्षावकी चले आए।

२५ रघुजीके एक मित्र पोत २५ रघुजी नामसे
निहासन पर अधिकार हुए। १८५२ ई०में अणुसक
अवस्थामें इनका देहान्त हुआ घोर यह राज्य ब्रिटिश
गवर्नरीण्टके हाथ लगा। १८५१ ई०में यहां कमिश्नर
नियुक्त हुए।

इसमें १२ शहर घोर १५८१ ग्राम लगते हैं। शहरमें
८ ही प्रधान हैं, यथा—नागपुर शहर, कामठी, उमरेर,
चवा, रामटेक, नरखेर, नोड्या, कस्मेश्वर घोर सोनेर।
जनसंख्या प्रायः ७५१४४४ है जिनमेंसे ब्राह्मण, कुनबी
घोर महाराष्ट्रोंको सन्ध्या अधिक है। स्वार घोर फदे ही
यहांकी प्रधान उपज है। डिपटी कमिश्नर घोर उनके
कुछ तहसीलदारों द्वारा विधायककार्य सम्पन्न होता
है। विद्यामें भी यह जिला बढ़ा बढ़ा है। यहां ५ हाई
स्कूल, १५ मिडिल स्कूल, १० वर्नाकुलर
स्कूल घोर १४७ प्रायमरी स्कूल हैं। इसके अलावा
मोरिस नामका एक कॉलेज है जिसमें कानून भी पढ़ाया
जाता है। यहां दो मिल्स विद्यालय भी हैं।

१ नागपुर जिलेके मध्यकी एक तहसील। यह
अक्षा २०° ४१' ०" घोर २१° २१' ०" तथा देशा-
०८° ४४' घोर ०८° १८' पू०के मध्य अवस्थित

है। भूपरिणाम ८७१ वर्गमील घोर लोकसंख्या लग-
भग २८६११० है। इसमें ४ शहर घोर ४२० ग्राम
लगते हैं। यहां ११ देवाली घोर १५ कोजदारी
पदान्त, १ घाना तथा ६ चौकी हैं।

४ नागपुर जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा-
२१° ८' ०" तथा देशा- ०८° ०' पू०के मध्य अवस्थित
है। यह शहर नाग नाम से नदीके किनारे बसा हुआ है
इसीसे इसका नागपुर नाम पड़ा है।

जनसंख्या लगभग १२७३४ है। यहां हिन्दू, जैन,
बौद्ध, सिख, पारसी, यक्षदी, ईसाई घोर मुसलमान जाति-
के लोग रहते हैं। गेहूं, सब्ज, दालो घोर बिलायती
कपड़े तथा रेशम घोर मसालेकी आमदनी होती है।
१८वीं शताब्दीके चारधर्म गोष्ट राजा अणुसकान्दवे
यह शहर बनाया गया। घेरे घेरे यह भोंसलाके अधीन
पाया। यहां चौक कमिश्नरको कचहरी, छोटी पदान्त,
तहसीली मजिस्ट्रेटकी पदान्त, पुलिस, कारागार,
अस्पताल, पगलागार, कुहायम, मीतावन्दो-प्रातुरानव
घोर अनेक विद्यालय हैं। इससे प्रतिष्ठित लोग सराय
घोर धर्मशालाएं हैं। शहरमें काली पत्थरके बने हुए
भोंसलाका प्रानाद, गोवतखाना, महाराजबाग, तुलसी-
बाग आदि मगधर स्थान देखने योग्य हैं। भोंसला
राजाधेके समय यहां अनेक उद्यान लगाए गए थे।
उद्यानके सिवा उमके बनाए हुए जमा तालाब, अण्य-
भाहो घोर तेलिगु खेरो नामक तीन जमागय भी शहर
पाते हैं। शहरको आबहवा आस्वरजनक है।

नागपुरगम् (सं० क्री०) कीम धातु, मोम।
नागपुरी—नेपालके खयभू क्षेत्रके अन्तर्गत एक अत्यन्त
प्राचीन बौद्ध देवमन्दिर। यहां बरुण घोर पटनागको
मूर्ति प्रतिष्ठित है। खयभू पुराणके मतानुसार नेपाल-
धिप गुणकामके समय शान्तिकरने उक्त मूर्तियोंकी
स्थापना की थी।

नागपुर (सं० पु०) नागस्थ इन्द्रिणः मदगन्धुक्तं पुष्पं
यस्य। १ पुवागुत्त, २ नागकेयर, ३ अण्यक, अणा।
नागपुरक (सं० पु०) १ कपिशुत्त, कपिका पेह। २
अण्यधुत्तिका, धीमी खुटी। ३ कुभाष्ट। ४ पुवाग
हच। ५ नागरेसरहच।

नागपूजा (मं० श्री०) नागपूजा नागदेवदेव पुष्प-
पत्रिका । पुष्पावली ।

नागपूजा (मं० श्री०) १ नागदमनी, नागदेवा । २
३ नागदमनी ।

नागपूजा (मं० श्री०) नागपूजा पुष्पमित्र पुष्प-
पत्रिका । १ नागदमनी, नागदेवा । २ नागदमनी, नागदेवा । ३ नागदमनी, नागदेवा ।

नागपूजा (मं० श्री०) नागपूजा नागदेवदेव पुष्पमित्र पुष्प-
पत्रिका । १ नागदमनी । २ नागदमनी, नागदेवा । ३ नागदमनी, नागदेवा ।

नागपूजा—नागपूजा में नाग देव नागपूजा प्रचलित है ।
वेदम आरतमें मंत्री, बलिद दूधरे देवीमें भी नागपूजा-
की प्रथा देखीमें पाती है । ईसा लगभग २००० वर्ष
पहले यह पूजा यक्षदेवोंमें मूल हुई थी । रोमनगण
१६ तीस शूरवीरों नागपूजा नामक स्थानमें एक निविड़
पञ्चक्रासग निहृष्ट था जिसे लोग मनीको पश्चिमाती
दिने लुता (Jutta) कहते थे । उसने दास की एक
छायादार पत्रपरका पाव था । रोमनगण उस पत्र-
परकी घंट्ट भलि करते थे । प्रायः सभी हिन्दू विमर्ष
कर्मों पूजा करते हैं और कभी कभी भारतवर्षके
नामा दासवानी हिन्दू रमनिषा नागपूजाके निवे वन
जाती है ।

हिन्दू जिस तरह मनुष्यकी वृत्तदेवता स्तुति करते
हैं, उसी तरह मनीक स्थानोंमें निवृत्त सर्वका भी स्तुति
हिया जाता है । हिन्दू, बौद्ध, जैन आदिकी देव-
देवियोंकी प्राचीन मूर्तियोंके मन्त्रक पर दासा-
कारमें सर्वप्रथम देखीमें पाते हैं । कहीं तो १ सर्व-
प्रथम, कहीं कहीं २, कहीं ८ या ११ सर्वप्रथम जैसे रूप
रहते हैं ।

प्रायः सभी पौराणिक स्थानोंमें सर्व परमस्वका निवृ-
त्त नागपूजा माना गया है । सर्वत्र मनीके जो बार बार
मनुष्य निवृत्तको है और सब विमर्षा को पश्चिमाती होता
है जगमें सब मनुष्यका हिदा जाता है कि सर्व विम-
र्षक तदा विमर्षक है । हिन्दू और बौद्ध इतिहासमें
भी मनीके सर्वप्रथम स्तुति देखी है ।

मनुष्य नाग मनीको की दृष्टकता कभी कभी

है और मनुष्यमें भी नागदमन हिदा था । नागपूजा पश्चि-
मीक एककी व्याख्या इस प्रकार करते हैं । मनुष्य विम-
र्षासकके दृष्टकतापर है और नागपूजा कर्ममें नाग
मनीके प्रतिष्ठित बौद्ध-धर्मीयमन्त्री मनुष्योंका बोध होता
है । मनुष्यमें मनुष्य नाग प्रथम हिदा था, पश्चिमी देव
मनुष्यधर्ममें निवृत्त बौद्धधर्मकी दासा हिदा था ।

महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है, कि पौ-
तितके पुत्र जनमेजयने सर्वप्रथम हिदा था । उस
ग्रन्थमें राजा जनमेजयने प्रायः सभी सर्वको निवृत्त कर
छाता था । यदि मनुष्य देवा प्राय, तो सब पश्चिमाती
पट्टना तदानीमान एक यदाय पट्टनादा प्राप्ता मे वर
वर्धित हुई है । जब जनमेजयने नागपूजा दम्भ कर दी,
तब समय स्थानीय कुम्हार की दूर काँडे मंदिर मन्त्र-
तन धर्मने उस स्थान पर चयना पश्चिमाती जमा निदा ।

काश्मीर प्रदेशमें मनीके वृत्तमें नागपूजा और मन्त्रा-
पूजा प्रचलित थी । पञ्चमन्त्रकमें कहा है, कि ई० श०
के १२००० वर्ष पहले आर्यों पश्चिमके प्रायः गण
तो स्थानोंमें नागपूजा होती तो । तब समय भार आर्य-
धर्ममें नागपूजाकी प्रथा प्रचलित थी ।

कहीं तो प्रचित योगुर सर्वको और कहीं मनीक
प्रतिमूर्तियोंकी पूजा होती है । प्रायः सर्वत्र प्रायः मन्त्रा-
देवोंके प्रतिष्ठित मन्त्राका एक पक्ष रहता है । कई
जगह सभी पक्षकी पूजा होती है । कहीं कहीं तो देवी
प्रतिमूर्तियों है कि एक सर्व प्रथम प्रथम केलाव रूप है
और कहीं पट्टनाकी प्रतिमूर्तियों कभीय है । पश्चि-
मीक जगह दो सर्व एक प्रायमिने रूप देने पाते हैं ।
दाक्षिणात्यमें सब ही जगह जहाँ गति रहता है वहाँ
पूजाको नाग और मनुष्य लगाने हैं । पौरोहित्यमें
और जगहोंके पक्षमें वहाँ सर्वत्र विमर्षा पश्चिमाती करते हैं
और सुमन्त्रि कर्मको माना मनुष्य पर सभी जगह
मन्त्रा दिने हैं ।

महाभारत रमनिषा नागपूजाके दिन एक प्राय मन्त्र
कर नागपूजा जगहों है और एक दूधरेका दास पक्ष
कर गीत मानी हुई मन्त्रिका मन्त्रिक जाती है । पक्ष
है पक्षमें प्रायः प्रायः नाग विमर्षा माना जाता है और
मन्त्रिक की सभी प्रथम करते हैं । नागपूजा मन्त्रमें नाग-

पञ्चमी नामका एक हिन्दू पर्व है। उस दिन हिन्दू लोग सर्पों की तलाशमें बाहर निकलते हैं। घोर सर्परेजों सहायतामें सर्प पकड़ कर घर लाते हैं। बाद में मन्त्रिपूर्वक उसकी पूजा कर उसे दूध और चन्दा चूने द्रव्य खाने देते हैं। उस दिन बर्षाई प्रदेशके प्रत्येक हिन्दू गृहस्थ काठ संयथा कामजमें सर्पों की मूर्ति पण्डित कर उसे दोबार में लटका देते हैं और उसकी पचना करते हैं। अजन्तावे शुद्धामन्दिरमें इस प्रकारको नागपूजाका प्राचीन निदर्शन देखनेमें आता है। ज्वरग्रामके पश्चिम दोबारमें एक केवट सर्पों की मूर्ति पण्डित है। सर्प जिन प्रकार वस्त्रगतिसे चलता है, उसी प्रकार चिह्न भी है। सर्प उपासकका कहना है, कि ये सब सर्प लड़ाकों घोर जा रहे हैं। घोर लड़कने कहा जाता है, कि लड़ा जनिमें बहुत दिन लगेगे, तब वे बहुत समसम दोष पड़ते हैं।

कागज पर चढ़ित शिवलिंगके ऊपर जो सर्वभूति
 है उसकी फन ऊपरको ओर फैली हुए है। कागज पर
 जो शिवभूति है वह व्याघ्रचर्मके ऊपर बैठे हुए है
 और उसकी मंदाकार पर सर्व भयना फन फैलाए हुए
 है तथा गेव भद्र उसकी गलेमें लिपटा हुआ है। कहते
 हैं, कि समुद्रमयने समय जो विष निकला था, महा-
 द्वेज सब पी गए थे। उस घटनासे चिन्तन हो कर ज्ञाना
 निवारणके लिए उन्होंने सर्वको अपने गलेमें लिपटा लिया
 था। भगवान् विष्णु जब भक्तभाव्या पर सोए हुए थे,
 तब सर्वोंने अपने फन फैला कर उन्हें छाया की थी।
 उन्होंने अपने फनको तब तक फैलाए रखा था, जब तक
 भगवान्ने दूसरा समयतार न लिया।

दक्षिण भारतमें महिषासुर के पश्चिमांग सुब्रह्मण्यदेवो-
का एक मन्दिर है। उस मन्दिरमें मही की बनी हुई एक
प्रतिमूर्ति स्थापित है। पश्चिमाभिगण 'मागो' की उद्देश्यसे
उक्त सुब्रह्मण्य की पूजा करते हैं। आज भी वहाँ नागपूजा-
परति पूर्ववत् चल रही है।

१९४१ ई. को पद्मदत्तनगरमें एक दिन पोर्षमासी-
निमिषको किसी घरसे दम सूर्य बाहर निकसे। चायप-
का विषय था, कि सूर्य सूर्य सुलग-पवसामें जा रहे थे।
इस प्रकार नागमिन्दु अक्षर कर एक युरोपीय मृतक बच्चे
को पाश्चात्यनित रूप और उन्मेषित यह आपस्य सत्ता समन

एक मिनटसे कह चुनाई। इस घर उनके मितन कह, 'महाशय। मैं भी एक दिन दो सर्पों की दुगल पचस्यामि देखा था। इस समय ये लेजके लपर भार देकर सीधे खुड़े हो गए। भारतवासो इस पचस्या की सपिका नाच कहने हैं। उनका मिश्रास है, कि इस पचस्यामि सपिका देखना सोमाग्यसुचक है। इस समय यदि कोई एक नवीन वस्त्रसे सज्जे टक दे, तो उसे पचीमकस प्राप्त होती है। बाद उस वस्त्रको ला कर घरमें रखनेसे सज्जो विर दिन तक उससे घरमें भावहर रहतो हैं।'।

हिन्दू साधारणतः सर्वज्ञा विनाश करना नहीं चाहते, मर्य देहनेसे वे दूसरा रास्ता पकड़ लेते हैं। पापुनित चंगरी की भाषात हिन्दू-युवक प्राचीन प्रणालीका उल्लंघन कर संयोग के प्राणनाश कर जानते हैं। किन्तु प्राचीन कालमें हिन्दू कभी संयोग के प्राणसंहार नहीं करते थे। किसी समय एक गृहस्थके घरमें दो पतिय पढ़ते। घरका मासिक आयक बनिषा बाजारका मोटा करने गया था और उसकी स्त्री अन्न खानेके लिए बाहर गई थी। जब वे दोनों पतिय गृहस्थामेकी अपने-आपमें बैठे हुए थे, उसी समय एक बड़ा भीमप्र पर्व उनके सामने पड़ गया। उसे देखनेके साथ ही उनमेंसे एकने डंडेसे उसका धड़ टबाया और दूसरा डंडा ले कर क्यों की उसे मारनेके लिए उद्यत हुआ, त्योंही आयक बनिषेको स्त्री, जो गव से कर पोछेसे पार रही थी, पिशा उठी, "महाशय ! ठहर आइये, ठहर आइये ! इसका प्राणनाश मत कीजिये। यह मर्य हम लोगोंके पूर्वज देय है। मैं मेरी सामने गरीर पर चढ़ जाते और मनुष्याका नाम ले कर कहते हैं, कि उन्होंने ही मर-देहत्याग कर सर्व-देह धारण की है।" एक दिन उन्होंने हमारे किसी एक पड़ोसिको काटा, अब विय भ्रातृनेके लिये प्रोभा सुनाये गये, तब उन्होंने कहा, "मेरे पुत्रके साथ इसने विवाद किया था, इस लिए मैंने इसे काटा है। यदि यह मेरे पुत्रके साथ कभी न भगड़े, तो मैं उसे छोड़ सकता हूँ, अन्यथा नहीं।" तभीसे अब एक चञ्जर किसीके घर जाता है, तब कोई उसे फटीर मचन नहीं कहता। कुछ दिन हुए हम लोग इसे दग कीम दूरमें छोड़ पाये थे। लेकिन पाण्डेयोंकी बात है कि उन्होंने

ग्रीक देवर्ग Esculapius के दण्डवदित दोनों सर्प देवता के समान सम्मानित होते थे। कहते हैं, कि रोमनगरमें ४६२ ई० में जब हेजेनी बीमारो फँसो, तब योससे एक कोवित सर्प वहाँ लाया गया था। नगरके सभी मनुष्यों ने तथा राजसभाके सदस्यों ने मिल कर ययाविधि सम्मानपूर्वक उसकी अभ्यर्थना की थी। इस घटनाके बाद एक दिन रोमनगरके किसी स्थानमें एक सर्प देखा गया। वह सर्प बहुत चायय भवस्थामें वहाँ रहता था। यही देख कर रोमवासो उस स्थानको पुण्यक्षेत्र मानने लगे हैं।

पशुपुराण और गरुडपुराण इन दो पुराणोंमें कालिय नागका विवरण है। श्रीकृष्णने श्रीगवाक्ष्यामें उसे मारा था। भारतवर्षमें आज भी कालिय नागको पूजा होती है। यावत् मासकी शुक्लपक्षमीको 'नागपक्षमी' होती है। भारतवर्षके उत्तरमें, मसाराष्ट्रमें और तेसईमें नागपक्षमीके बदले नागचौथो उत्सव प्रचलित है। यह उत्सव यावत् मासको शुक्ल चतुर्थीमें होता है, इसीमें इसका उत्सव नाम पड़ा है। नागचौथो जल भारतवर्षके कई स्थानोंमें होता है। नागपक्षमी-पूजाके दिन हिन्दू रमणियों स्नान कर बहुमूल्य वस्त्र भूषणोंसे सज्जित हो कर नागपूजा करने वारह निकलती हैं। बाद जहाँ नाग-मूर्ति स्थापित रहती है, वहाँ जा कर दूध, पिटक, फल, मूल, पान, सुपाड़ी आदिका भोग लगाती हैं और नाना प्रकारकी पुष्प-मालाएँ चर्पण करती हैं। इस दिन पूजा करनेके बाद वे नागराजसे अपने अपने समीप वरके लिये प्रार्थना करते हैं।

हिन्दुओंका विश्वास है, कि नागपूजा करनेसे कौटु, पाँखका पाना, बन्ध्यादोष आदि रोग जानि रहते हैं। किसी ब्राह्मणने दोनका नगरमें एक पुराना घर खरोदा था। उसने उस घरकी ध्वस्त कर वहाँ एक नया घर बनाना चाहा। जब वह अभीमें कौटुने लगा, तब उसने बहुत स्यक्त स्त्रिय सुश्रुविगिट एक कन्यीको बैठान लिये हुए एक प्रकाण्ड पत्रगर सर्व देखा। रातकी उसे स्वप्न हुआ, "तुम इस भस्ममन्दिरकी वरवाद मत करो। यह सम्पत्ति मेरो है और मैं ही इसकी रक्षा करता हूँ। यदि तुम मेरी बातका उल्लङ्घन करोगे, तो मैं तुम्हारा

सत्यानास कर डालूँगा।" सबरे ब्राह्मणने छठ कर मानके शरीर पर गरम तेज डाल दिया और उस भस्ममन्दिरको तहस नहस करके धन-रत्न अपने साथ ले बहुत चामन्द्ये घर आया। इसका फल यह हुआ कि उस ब्राह्मणके एक भी पुत्र न हुआ और जो पक्ष नटकी थी उसे भी कोई सन्तान न हुई। यहाँ तक कि जिन्होंने उस धनका थोड़ा भाग लिया था चयथा जो उनके कर्मचारी और भृत्य हुए थे चयथा जिन्होंने उनके कुलपुरोहितका काम किया था, वे सबके सब निःसन्तान हुए। १८१ ई० में यह घटना हुई थी। मन्दाजनके निकट त्रिधेतु, पेशा-स्वर, वासरवाको और पश्चिमघाटमें बहुतसे नागमन्दिर देखनेमें आते हैं। कितने हिन्दू यात्री पश्चिमघाट के सुवर्ण-मन्दिरमें जा कर रहते हैं और चाते समय वहाँने अपने साथ कौचड़ लाते हैं जिसे बन्ध्या-स्त्री तिलक लगाती और कुठरोमें चर्पने शरीर पर लेवते हैं।

काशगुप्त साहबने लिखा है, कि उच्चपूजा और नागपूजा सभी मनुष्यजातिका आदिधर्म है। जहाँ मरवलि दी जाती थी, वहाँ भी नागपूजाका प्रचार था। मेक्सिको और दाहोमी नामक देशोंमें नागपूजा सर्वसाधारणका प्रिय धर्म था। दाहोमी नागपूजाका एक प्रधान स्थान है। वहाँ आज भी नागपूजा पूर्ववत् बहुत समारोहसे होती है।

१८०२ ई० में मन्दाजनगरमें किसी एक पसाधारण धीमन्धव ब्राह्मणके एक कन्या उत्पन्न हुई। गर्भधारणकालमें एक सर्प देखा गया था, इन कारण उस लड़कीका नाम "नागका" रखा गया। ये सब घटनाएँ देख कर यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारतवर्षमें नागपूजाका प्रभाव खूब बढ़ा बढ़ा था। बौद्ध तथा जैन धर्म-ग्रन्थोंमें भी नागपूजाका उल्लेख है।

नागपूत (सं० पु०) कचगरकी जातिको एक सत्ता जो सिद्धिम, बहान्य और वरमामें बहुत होती है।

नागकण (सं० पु०) उच्चविषय, एक पंहुका नाम।

नागफनी (हि० स्त्री०) १ मि० के पाकारका एक जाड़ा।

इमज व्यन्धर मेवासेमें पधित होती है। यह तविका बना होता है। इसकी ध्वनि उनमें मोठो नहीं होती।

२ धृङ्गकी जातिका एक पोधा। इसमें टहणियाँ नहीं

दूरसे यह फिर यहाँ मोट बाया। भिने कई बार इसके गरीर पर पेर रखा है, लेकिन इसने कुछ भी भेरा चमिट नहीं किया। जब कभी मैं जल स्नान बाहर जाती हूँ, तब भीरो संग्रामन उसने कान पकड़ कर खेला करती है।" ०

यह सुन कर उन दो पतिविवशेने उस सर्पको छोड़ दिया और बहुत विभोत भावसे उसमें प्राश्न की।

कुछ दिन बाद एक विद्वानने उस सर्पको मार डाला। गृहस्थानीने उसको मृतदेह का पविर्मंज्जार किया और चित्ताननमें चन्दनकाष्ठ, नारियल और घी केक दिया। ऐसी प्रथा आज भी बहुत जगह प्रचलित है।

मागपूजा तमाम प्रचलित नहीं थी, पृथ्वी पर ऐसे कम स्थान थे जहाँ मागपूजा होती थी। समस्त ऐगियाके देवल्य चीन देगमें कहीं कहीं यह पूजा प्रचलित नहीं थी। इसके सिवा पत्रिका, कालदोश, फोलेन्तान, वासिलन, पारस्य, कास्मोर, कान्बोज, तिब्बत, भारतवर्ष, लद्दाखीय आदि सभी स्थानोंमें तथा यूरोपके भग्यपाती पनक स्थानोंमें यहाँ तक कि अमेरिकामें भी कहीं कहीं मागपूजाका प्रचार था, इसका स्पष्ट प्रमाण पाया जाता है।

राजपूत लोग मर् देवताको प्रतिभूति जो बनाते हैं, उसमें प्राधा मनुष्यका आकार रहता है। दिवदोर-ने स्त्रियो (अक) सातिका सर्प-जननीकी आकृति भी इसी प्रकार भवता है। हिन्दुओंके मतमें मन्सादेवी मागमाता मानो जाती है। उसके भाई अन्तनाग सर्पोंकी राजा है। अन्तनाग सर्प हीमारहित है। सर्पोंकी गीलाकार चबस्मामें रहनेसे ही उस नाम पड़ा है।

यद्यपि कहीं ऐसा भी उल्टा है, कि सोरोदयायो विष्णुको अन्तनागने भतलभय समुद्रकी बीच पाधय दिया था, तो भी पुराणमें एक जगह लिखा है, कि अन्तनाग ही स्वयं विष्णु है। अर्थात् उसी अनादि महापुरुष विष्णुका दूसरा नाम 'अन्तनाग' है।

जिस प्रकार हिन्दुओंमें सर्पोंके पुत्र पतिनिहुमार-

यव देवयैव यह कर प्रसिद्ध है, उसी प्रकार ओष और रोमनमें एमकुलपिषम् (Esculapius) देव यैव माने जाते हैं। इनके हाथोंका दण्ड दो सर्पोंमें घेरित है। फिनिकियोंके मागदेवताका नाम है एवमन्; तिथ वासियोंका हार्मिम् (Hermes), कालदियोंका ओष, वासिलनवासीका वेल इत्यादि विभिन्न देगोंमें मागदेव विभिन्न नामोंसे पुकारे जाते हैं।

लद्दाखीय तथा गुजरातवासो प्रायश्चना तथा मूखोंका माग करनेके लिये अपने अपने घरमें सर्प रखते हैं। गुजरातवासी कीर्ति भी सर्प नहीं मारता, लेकिन कभी कभी उसे पकड़ कर गाँवके बाहर छोड़ जाता है। 'मिह'में कीड़ा आदि मारनेके लिये सर्प पाया जाता है। बहुत प्राचीन कालमें से कर अनेक मन्दिरके समय तक टावरे नामक सर्पका विशेष आदर होता था। यद्यपि आज कल वहाँ मागपूजा नहीं होती, तो भी एक समय ओफाइट (Ophites), निकोलेटन (Nicoletans) और गनष्टिक (Gnostics) नामक ईसाई मन्त्रियोंमें मागपूजा प्रचलित थी। ओफाइट लोग सर्पोंकी ईसासे बड़ कर भक्ति करते थे। वे प्रथममें मजोब सर्पोंको पकड़ कर रखते और उन्हींको ईश्वर मानते थे। दोनए देगमें उसीमयी गताष्टीके पालन समय तक भी मागपूजा होती थी। म'सारमें जितनी जातियाँ हैं वे सर्पोंके प्रति अथवा और भक्ति की करती थी, वह निम्नलिखित घटनाओंसे स्पष्ट जाना जा सकता है। पृथ्वीके बहुतसे समाधारण लोगोंमें सर्पोंके जन्म-यज्ञ किया है, उनमेंसे कितने अपना परिचय दे गये हैं। रोमक-सेनापति सिपियो (Scipio Africanus) नागकी सन्तान माने जाते हैं। Augustus का कहना है, कि उसकी माता अटिया (Asia) नामक सर्पोंके गर्भ-वती हुई थी। बहुतोंका विश्वास था, कि अनेकमन्दिर मागपूजाके थे।

इन्दोर (Endor)की जिया चौबकी कदमों मानी जाती है। इसराइलके राजा योयसने मागपूजाके लिये सर्प देवताका एक मनीषर मन्दिर बनवाया था।

ऐगिया माहमरकी कितनी प्राचीन मुद्राओं पर सर्पोंकी आकृति देखी जाती है। ईसा जन्मसे बाद

शोक देगमें Esculapiusके दण्डवैष्टित दोनो संप देवताके समान सम्मानित होते थे। कहते हैं, कि रोमनगरमें ४६२ ई०में जब हेन्रीको बीमारो फौजो, तब घोसे एक कीवित सर्प वहाँ लाया गया था। नगरके सभी मनुष्यों-ने तथा राजसभाके सदस्योंने मिल कर यथाविधि सम्मानपूर्वक उसकी पध्दयना की थी। इस घटनाके बाद एक दिन रोमनगरके किसी स्थानमें एक सर्प देखा गया। वह सर्प बहुत पाचर्य चवस्यामें वहाँ रहता था। यही देख कर रोमवासो उस स्थानको पुण्यक्षेत्र मानने लगे हैं।

पुत्रपुराण और मनुस्मृत्युक्त हन दो पुराणोंमें कालिय नागका विवरण है। यौक्षान्यमें यौगवायस्यामें उसे मारा था। भारतवर्षमें आज भी कालिय नागको पूजा होती है। याचण मासकी शुक्लापक्षमीको 'नागपक्षमी' होती है। भारतवर्षके उत्तरमें, महाराष्ट्रमें और तेलङ्गामें नाग-पक्षमीके बहुत नागघोषो उत्सव प्रचलित है। यह उत्सव याचण मासकी शुक्ला चतुर्दशीमें होता है, इसीसे इसका उत्त नाम पड़ा है। नागघोषो व्रत भारतवर्षके कई स्थानोंमें होता है। नागपक्षमी-पूजाके दिन हिन्दू रम-णियों स्नान कर बहुमूल्य वसन भूषणोंसे सज्जित हो कर नागपूजा करने धारह निकलती हैं। बाद जहाँ नाग-स्तुति स्थापित रहती है, वहाँ जा कर दूध, घिठक, फल, मूल, पान, चुपाड़ी आदिका भोग लगाती हैं और नाना प्रकारकी पुष्प-मालाएँ चर्पण करती हैं। इस दिन पूजा करनेके बाद वे नागराजसे अपने अपने चमोटे वस्त्रके लिये प्रार्थना करती हैं।

हिन्दुओंका विश्वास है, कि नागपूजा करनेसे कोढ़, पाँखका पाना, मन्दादोष आदि रोग जाति रहते हैं। किसी साम्राज्यमें टोन्का नगरमें एक पुराना घर खोदा था। उसमें उस घरकी ध्वजा कर वहाँ एक नया घर बनाना चाँहा। जब यह जमीन कोढ़ने लगा, तब उसने बहुत-स्तक स्वर्णमुद्राविष्ट एक कलमीकी बेटन क्रिये हुए एक प्रकाण्ड पत्रगर सर्प देखा। रातको उसे स्वप्न हुआ, "तुम इस भग्नमन्दिरको बरबाद मत करो। यह सम्पत्ति मेरी है और मैं ही इसकी रक्षा करता हूँ। यदि तुम मेरी बातका उल्लङ्घन करोगे, तो मैं तुम्हारा

सन्तानाश कर डालूँगा।" भवरे ब्राह्मणने उठ कर साँवके गरीर पर गरम तेल डाल दिया और उस भग्नमन्दिरको तदनु नष्ट करके धन-रत्न अपने साथ ले बहुत पानन्दमें घर आया। इसका फल यह हुआ कि उस ब्राह्मणके एक भी पुत्र न हुआ और जो एक लड़की थी उसे भी कोई सन्तान न हुई। यहाँ तक कि जिनोंने उस धनका थोड़ा भाग लिया या चयया श्री उसके कर्मचारी और अन्य हुए वे चयया जिनोंने उनके कुनपुत्रोहितका काम किया था, वे सबसे सब निःसन्तान हुए। (८१ ई०में यह घटना हुई थी। मन्दाजके निकट त्रिबेतुर, पैरा-स्वर, बामरवाड़ा और पयिमघाटमें बहुतसे नागमन्दिर देखनेमें आते हैं। कितने हिन्दू-यात्री पयिमघाटके स्वर्ण-मन्दिरमें जा कर रहते हैं और प्राति समय वहाँने अपने साथ कीचड़ लाते हैं जिसे मन्दा-स्त्री तिलक लगाती और कुठारीको अपने गरीर पर लेवने हैं।

फारगुसन साहबने लिखा है, कि हजूरजा और नाग-पूजा सभी मनुष्यजातिका प्रादिधर्म है। जहाँ मरवलि हो जाती थी, वहाँ भी नागपूजाका प्रचार था। मेक्सिको और टाकोमी नामक देशोंमें नागपूजा सर्वसाधारणका प्रिय धर्म था। दाकोमी नामपूजाका एक प्रधान स्थान है। वहाँ आज भी नागपूजा पूर्णवत् बहुत समारोहसे होती है।

१८०२ ई०में मन्दाजनगरमें किसी एक ससाधारण धीमस्वय ब्राह्मणके एक कन्या उत्पन्न हुई। गर्भधारण-कालमें एक सर्प देखा गया था, इस कारण उस लड़कीका नाम "नागस्त्री" रखा गया। ये सब घटनाएँ देख कर यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारतवर्षमें नागपूजाका प्रभाव खुद बढ़ा चढ़ा था। होइ तथा जैन धर्म-ग्रन्थोंमें भी नागपूजाका उल्लेख है।

नागपूत (सं० पु०) कश्मीरकी जातिकी एक सता जो सिक्किम, बङ्गाल और बरमामें बहुत होती है।

नागफण (सं० पु०) हज्रविमेष, एक पेड़का नाम।

नागफनी (हि० फी०) १ सिन्धे पाकारका एक धाजा।

रमशा व्यवहार नेपालमें अधिक होता है। यह तथिका बना होता है। इसकी ध्वनि उत्तमो सोको नहीं होती।

२ धूरकी जातिका एक पोषा। ३ धर्मद्वयिनी नहीं

हीने। माँके कनके प्राकारके मुँदेदार मोटे दस एक दूसरेके ऊपर निकलते चने जाते हैं। ये दस कुछ नोवा-वन लिये छरे घोर काटिदार होते हैं। काटि बड़े विषेने होते हैं। दमोके सिरे पर दोने रंगके बड़े बड़े फूल लगते हैं। पुष्पका नियम छोटी गुमीके रूपका होता है। सबमें मांस रंगका रस भी भरा रहता है। जब फूल झड़ जाते हैं, तब यहो गुमो बड़ कर गोल कनके रूपमें परिणत हो जाती है। ये फूल खानेमें खटमोटे होते घोर दवाके काममें पाते हैं। इन फलोंका प्रचार घोर तरकारी भी बनाने है। इनके बोधे किसी स्थानकी घरेलूके लिये बाड़ोंमें लगाए जाते हैं। काटोंके कारण इन्हें पार परना कठिन होता है। १ एक प्रकारका गहना जो खानामें पटना जाता है उ नामी माधुवी का कोवीन।

नागकल (मं० पु०) नागव्य पुषागल्येय फलं यस्य। पटोल, परमल।

नागकल (हिं० पु०) नागमल देगो।

नागकल (मं० पु०) नागकल, पकीम।

नागधु (मं० स्त्री०) नागानां ध्रुः १ तत्। नागोंकी स्त्री।

नागधुमि (मं० पु०) मल की गिर्याम, धूना।

नागव्यक्त (मं० पु०) यह जो जंगली हाथो पकड़ता हो।

नागबन्धु (मं० पु०) नागव्य कस्मिन् बन्धुरिव तत्परोपक-त्वात्। १ पशुव्यवस्था, पोषणका पेड़। २ सदुप्यवस्था, ठूसरका पेड़। ३ नागोंका निव।

नागबल (मं० पु०) नागानां हस्तिनामयुतस्य बलं यस्य। १ भीमका एक नाम। भीमकी दस हजार हाथियोंका बल था। इनका निवय महाभारतमें दस प्रकार लिखा है—एक समय दुर्वाधनने इन्हें विष मिना कर जलोमें फेंक दिया घोर से नागलोकेमें पहुँच गये। नागलोकेमें गिरने पर नागोंने उन्हें बहुत उमा जिससे उनके शरीरके

एकवार निपका प्रभाव उत्पन्न गया घोर से खस हो कर उठ बैठे। बाद उनके शरीरमें जितने बन्धन लगे हुए थे सबोंको उन्होंने दातकी दातमें तोड़ डाला। नागोंने इनको पशुवैद्यक द्रव्य देखा बाहुकिक धाम यह प्रचार भीतरा हो। पीछे बाहुकिके का ३२ भीमकेनेके दमोके लिये। इन समय कुलीके पिताके मातामह बापके नामसे एक नाग-

राज थे। इन्होंने दोहियके दोहित भीमकी पक्षपात कर उसका पालन किया। इस पर नासुकि बहुत प्रसन्न हुए घोर भीमकी धनखादि देना चाहा। पर बापकेने कहा, 'जब बाप प्रसन्न हैं, तो धनकी देने कोई जरूरत नहीं। बल्कि ऐसा घर दोजिए जिससे यह बहुत धनवान हो जावे। इस कुण्डमें सहस्र हाथियोंका बल है, पतः यह बालक जहाँ तक इसका जल पो मने वहाँ तक पोनेकी पाशा दोजिये।' इस पर नासुकि रागो हो गये। भीम पूर्वकी घोर मुँह कर एक निगमसे उस कुण्ड का सब रस पान कर गये। रत हो कर ये सात दिन तक सोए रहे।

बाद भुजङ्गोंने भीमसेमने कहा, 'तुमने नागदल जो चीर्यकर रसपान किया है, उससे तुम्हारे शरीरमें एक हजार हाथियोंका बल होगा।' भीमका नागबल नाम पढ़नेका यही कारण है। (भाव १।१२८ १२९ अ०) (वि०) २ हस्तिनाय बन्धुना, जिसे हाथियोंके समान बल हो।

नागबला (मं० स्त्री०) नागल्येय बलं यस्याः। बला-भेद, गुणवक्त्रो, गरीरल। (Sid alba) पयोव—पतिवला, महाबला, गात्रोदरो, भवता, कलमयेपुका, गोरघतण्डुला, भद्रोदनी, परगन्धा, चतुर्गन्धा, मद्रोदया, महायता, महागन्धा, महाकला, विग्रहेवा, पणिटा, देयदन्ता, महागन्धा, चण्डा। गुण—ऊषा, उष्ण, गुरु, पाकी, हृष्य, क्षिप्त, मूत्रकण्डू, मूत्राघात, पमेह, उदर, कण्डू, कुष्ठ, वात, मूत्र, सत, चर्मरोग घोर विषनागक, पावुवैद्यकर, सोय घोर चर्मरोगमें हितकर है।

नागबलाचुल (मं० स्त्री०) चक्रदत्तोक्त पकृतमभेद।

नागबलातेज (मं० स्त्री०) १ तेजविशेष, एक प्रकारका तेज जो दातनालमें काम आता है। २ तिलतेज, तिलका तेज।

नागबुध (मं० पु०) एक बोधधर्म-प्रसारक। इनका दूसरा नाम नागबोध है।

नागबुधि (मं० पु०) एक वैद्यमायके प्रमेया। इनका दूसरा नाम नागबोधि है।

नागदैन (हिं० स्त्री०) १ दातकी दिन। २ खोई मगोसार दिन नागोंकी मनु पर बगई आता है। ३ चन्द्रमा की तिथी वाला।

नागभंगिनी (सं० स्त्री०) नागस्य भंगिनी इत्यतः। वासुकि-
की वहनं जारत्नात्।

नागभिद्र (सं० पुं०) दम्भिष्वंसकारो सर्पविशेष, एक
प्रकारका सारो सर्पः। (Amphisbaena)

नागभू (सं० स्त्री०) शुद्र पाषाणभेदः।

नागभूषण (सं० पुं०) नागो भूषणं यस्य। महादेवः।
महादेवके सर्पगणं धनके भूषणं स्वरूपः।

नागभृत् (सं० पुं०) नागः क्रूराचायी सन् विभक्तिं धाम्ना-
मिति व्युत्पन्नः। ङुपुभूय सर्पः, एक प्रकारका सर्पः।

नागभीम (सं० पुं०) सर्पविशेष, एक सर्पका नामः।

नागमहन्त्र—१ महिषुराष्टके पन्नामसं महिषुरा जिनका
एक तालुकः। यह पचा० १२° ४०' से १३° २' उ० और
दिगा० ७६° १५' से ७६° ५६' पू०के मध्य अवस्थित है।
भूपरिमाण ४० ई० वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ७५५८१
है। इसमें नागमहन्त्र नामका एक शहर और १६६ ग्राम
लगते हैं।

२ एक तालुकका एक शहर। यह पचा० १२° ४८'
उ० और दिगा० ७६° ४०' पू०के मध्य श्रीरङ्गपत्तनसे १४
कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहां प्राचीन हिन्दू-राज-
धानीका निदर्शन पड़ा हुआ है। बहुतसे प्राचीन देवा-
लय और राजप्रासाद भी हैं। यहां एक प्राचीन मन्दिर-
में कोङ्कुराजप्रदत्त एक बहुत पुराना ताम्रगासन पाया
गया है। यहां पहिले पालिगाके सरदार रहते थे। शहर-
का पन्नास्थित दुर्ग बहुत प्राचीन है। कोई कोई कहते
हैं, कि दुर्गका भीतरी भाग १२०० ई०में और बाहरी
भाग १५०८ ई०में बनाया गया है। १६६० ई०में महि-
सुरकी राजाने इस दुर्गको जीता था। पीछे १०८२ ई०में
टीपूसुलतानने साथ युद्धके समय भरहोने यह नगर
तहस महस कर डाला; तभीसे यह सामान्य पामके
रूपमें परिचित हो गया।

नागमण्डन—कुमारिकाभक्त चम्पकसुनिकुलजात एक
राजा, परावर्तनके पुत्रः।

नागमण्डलिक (सं० पुं०) चङ्कितुण्डक, सर्प पकड़ने वा
रखनेवाला, सर्पिया।

नागमनी (सं० स्त्री०) १ मत्तमैड, एक मत्तका नाम।

(Ocimum Sanctum) २ जङ्गलतुलसी, काशी तुलसी।

नागमय (सं० स्त्री०) दम्भिसंहत, दायीने, भरा हुआ।

नागमरोड (हिं० पुं०) कुत्तोका एक पेश। इसमें जोड़की
पपनी गर्दनके ऊपरसे या कमर परसे एक छायसे घनीकृत
हुए गिराते हैं। यह पेश घनीकृष्टाङ्ग हीकी तरहका
होता है। फर्क इतना ही है, कि घीभीपट्टाईमें दोनों
छायोंसे जोड़की पीठ पर चलीकृत हुए किं करते हैं।

नागमल्ल (सं० पुं०) नागेषु दम्भिषु मयः। ऐरावतः।

नागमहासेन—सिंहलके एक विद्याल राजा। महाबंशके
मते ई०पू० २०५ से ३०२ ई० तक शासन किया।

नागमाता (सं० स्त्री०) १ मनःमिता, मनमित्र। २
मनसादेवी। ३ नागोंकी माता, कट्टा। नागमाष्ट देवी।

नागमाष्ट (सं० स्त्री०) नागानां दम्भिनां मातेषु भूषण-
त्वात्। १ मनःमिता, मनमित्र। नागानां सर्पाणां माता।
२ मनसा देवी। ३ सुरमा। रामायणमें लिखा है, कि
जिस समय पशुमान् समुद्र प्राधि रही थे, उस समय देव-
ताम्रोंने उनके बन्कों परोक्षाने त्रिदे नागोंकी माता
सुरमाकी भेजा था। (रामायण ६।१।१३१) ४ कट्टा। महा-
भारतमें लिखा है, कि कट्टाके गर्भमें नागोंको उत्पत्ति
हुई थी।

नागमार (सं० पुं०) नागं मारयतीति व्युत्पिच-वच्च्।

१ केसरराज, काला भंगरा, कुकुर भंगरा। (त्रि०) २
दम्भिमारक। ३ सर्पमारक।

नागमुख (सं० पुं०) गणेशः।

नागपट्टि (सं० स्त्री०) नागाधिपतिता पट्टिः। पुष्करिणी
पादिमें स्थित बाह्यभेद, लकड़ों या पत्थरका यह पृष्ठा
जो पुष्करिणी या तालाबके बीचो बीच जलमें खड़ा
किया जाता है, छाटः। तालाब पाटि उत्तरगं करमें
नागोंके रहनेके लिये तालाब पादिमें काठका स्तम्भ
खड़ा किया जाता है। जलामयोर्ध्वगतत्वेन इसका
विषय इस प्रकार लिखा है—पट्टनागोंके नाम पृथक्
पृथक् पक्षोंमें लिख कर उन्हे जलमें भर एक घड़ेमें डाल
देते हैं। पीछे नाथलोक पाठ करते हुए घड़ेमें स्थित-
पक्षोंको बिछाते हैं और उनमेंसे एकको बाहर निकाल
लेते हैं। उस पक्षमें जिस नागका नाम लिखा रहैगा, वही
जलाधिप होगा। बाद उस नागको यथाविधि पूजा करके
दूध और खीर नैवेद्य लगानेका विधान है।

वेल्ड, यादव, पुत्राग, नागेश्वर, यकुल, चम्पू, विरय और पट्टर इन्हीं सब जातों को नागपट्टि बनाने चाहिये। ये सब जात यदि टेढ़े या पोते हों, तो उन्हें काममें नहीं माना चाहिये। उस जातमें गुप्त और चक्रका पित्र करके जन्माश्रयमें गढ़ा कर देना होता है। एक वनजिका नियम यह है—मोहा, तांवा या पोतलका चक्र ही प्रगल्भ है। इनमेंसे बापों उत्तम करनेमें १२ वंशकीता, पुत्रविधोमें १६ वंशकीता, मरीचरमें २० वंशकीता और नागर उत्तम करनेमें एक वृद्धका चक्र होना चाहिये।

जो नाग जन्माश्रयके अधिष्ठाता होंगे, वे ही उन जन्माश्रयकी रक्षा करेंगे। पट्टनामके नाम ये हैं—चनना, वासुकि, पद्म, महापद्म, तपन, कुलीन, कर्कोट और गड। नागर (गं० त्रि०) नगर भवः चणू। १ नगरमध्यभी। २ नगरमें रहनेवाला। (पु०) ३ देवर। ४ नागरज्ञ, नारंगी। (झी०) ५ मोठ। ६ नागरमोघ। ७ मोघा। ८ रतिभयभीद। ९ जनयभीद, एक देवका नाम। १० नगर नामक स्थानमें प्रचलित चणभेद। नगराय हितं चणू। ११ नगरहित, नगरकी भलाई। १२ नगरमें रहनेवाला मनुष्य। १३ चतुर-पादमी। नागर (टि० पु०) दीवारका टेढ़ावन जो जमीनकी तंगीके कारण होता है।

नागर—१ गुजरातवासी एक ओषधी प्राण्य। यहां जितनी ओषधी प्राण्य हैं, उनमेंसे ये ही प्रधान माने जाते हैं। स्कन्दपुराणके नागरपत्रमें २५ ओषधी चण्वित और मोहादिका विषय विस्तार रूपसे वर्णित है। देवनागर देखो।

नगर वा बहुनगरमें वाम कीर्तिके कारण वे लोग नागर नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। परमर्षिक्रान्तमें गुजरातके विभिन्न स्थानोंमें रहनेके कारण वे लोग बहुनगर, त्रिभुवननगर, पड़ोश, पड़ोश, विष्णोश और चिरोश आदि स्थानीय नामोंसे प्रसिद्ध हैं तथा विभिन्न शाखाओंके मिले जाते हैं। आज कम बचक प्रदेशके सभी प्रधान स्थानोंमें जोड़ा पदत नागर प्राण्य देखे जाते हैं।

इन लोगोंकी मवांश आचार्य, भद्र, पाण्ड्य, रावण, डाहुर, व्यास आदि हैं।

ये लोग देखनेमें सुथी, सुठोन और मझोने होते हैं। इनके मझाकका ज्योतीर्ष गिणावटित रहता है। पुरुषकी प्रथमा विधा अधिक सुथी और क्षयवती होती है। इनके हाथ पैर छोटे कदमे और नाक लम्बी होती है।

नागर प्राण्यमें अधिकांश निरामियाही हैं। बहुतसे ऐसे हैं, जो मेलका भी व्यवहार नहीं करते।

इन लोगोंमें अधिकांश मेश हैं, ये पशुको संस्था छोड़ते हैं। बहुतसे ब्रह्मचर्याना धारण करते हैं। श्रिगं भी कुत्तों और वाइरका व्यवहार करती हैं, लेकिन वे अपने बालोंको कर्मांसे नहीं मजाने और न कोई पनदार ही पहनती हैं।

इन लोगोंकी वयस्या बहुत अच्छी है। जिनकी वयस्या निहायत तराव है, वे भी यजमान गुजरानी बिनियोंके विवाह दूबरेके यहां भीय नहीं मंगते।

उनमेंसे कुछ शाखायन शाखाके स्वरूपों हैं और कुछ साध्विन्दु याजमनेय शाखाके यजुर्वेदी; अधिकांश जो स्मार्त हैं, और गडरावाय की परमपुत्र मानते हैं। इन लोगोंमें जिनकी वयस्या अच्छी है, वे वीरव प्रकारके संस्कारोंका पालन करते हैं और जिनकी वयस्या अच्छी नहीं, वे उपनयन, विवाह और पोषादिक से ही लोग प्रकारके संस्कार करते हैं।

मन्तान भूमिह होनेके पाँचवें दिन पट्टी-पूजा छोड़ कर और सभी कार्य उस ओषधी हिन्दुकी तरफ करते हैं। बारहवें दिनमें ५ घण्टा पिता या कर गिरको भूमे पर झुकाते हैं। उसी दिन बच्चा नाम रखा जाता है। ये सब श्रियां इनके और एक दूबरेकी मंग पर भिन्न लगती हैं। उपनयनादिमें देशस्थ प्राण्यके अधिक फल नहीं पड़ता, केवल ये दोहे बटन चौकीन भूमिह चारों बगल कलस रखते हैं। इस समय वे स्त्रियोंकी प्राण्योंकी भोजन देते हैं।

इनमें विधवा-विवाह प्रचलित नहीं है। विधवा मिरकी सुंकाया जाती है। प्रमजपुत्र ना किसी प्रकारका पनदार नहीं पहनती। उन्हें ब्रह्मचर्य बरकरार करना होता है।

भावनगर-शाखाके प्रधान सभी भावनगरमें ही होती हैं और इनके नागर-वंशमें उन्मथ हुए हैं।

२ मैथिल ब्राह्मणों की एक थोड़ी।

१ गुजराती वनियों की एक थोड़ी।

नागर—१ उत्तर बङ्गालमें प्रवाहित एक नदी। यह पूर्वीय हिमालय जिलेमें प्रवेश कर प्रायः ८० मील दक्षिण की ओर बह करके महासन्ध्यामें गिरती है। बंगालमें बौद्धों से दो बड़े बड़े बड़े नदियाँ मिलती जाती हैं। उत्तरागमें यह नदी का गर्म पत्थरमय है, किन्तु दक्षिणमें बालुकाभय। इसके किनारे की पथिकों में जमीन बासाद नहीं होती।

२ उत्तर बङ्गालमें प्रवाहित एक नदी। यह बगुडा जिलेके उत्तरमें निकल कर राजमहो जिलेमें प्रवेश करती है। पीछे यह सि २० मील जा कर शुद्ध नामक प्रायद्वीपमुनामहामें मिल गई है।

३ लखनपुर और मण्डला जिलेके मध्य विरक्त गिरिमाता। नमदाकी उपत्यका इसके नीचे अवस्थित है। नागर—सन्ध्या परगने की भागलपुरवासी एक थोड़ी के अधिजीवी। ये लोग पाँच भाषाओंमें विभक्त हैं—जिहोत, मुलूम, नागवंदो, कथोतिया और भटनागर। इन सबोंका केवल एक मोत्र का प्रयोग है। प्रथम दो भाषा कोष्ठ कर एक दूसरेमें बादात प्रदान हुआ करता है। बहुविधा उत्तम प्रचलित नहीं है। पर हँ, प्रथम की वस्तु होने पर अन्य की वस्तु की जा सकती है। दूसरे दूसरे नीचे हिन्दुओं के ऐसा इनके विवाहादि होते हैं। सिन्दूरदानही विवाहका प्रधान पद है। विधवा सगाई कर सकते हैं।

इनके पुरोहित ब्राह्मण होते हैं। समाजमें ये बहुत हीय समझे जाते हैं, पर दुष्टाधकी अपेक्षा ये लोग कुछ श्रेष्ठ हैं।

ब्राह्मण थपवा अन्तर्धारीय किसी दूसरी जाति के लोग इनके हाथका जल नहीं पीते और न किसी काममें जो भाते हैं। इनमेंसे बहुत कुछ ऐसे हैं जिनकी बचसंवा अच्छी है। पथिकों में मजदूरी करके अपना गुजारा करते हैं। सारे बङ्गालमें प्रायः कसोस हजार नागोंका नाम है।

नागर—राजपूतानेके लघुपुरके अधीन सनियारा राज्यके पत्तनगत पञ्चायत एक प्राचीन नगर। यह सनियारा में ७२ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है।

प्रवाद है, कि मान्याताके पुत्र सुपुत्रमुदने यह नगर बसाया है। प्रजतस्त्रान्धों को कानिहित साधव, यहांसे प्रायः ६०० प्राचीन मुद्राएँ संकलन कर गये हैं, उनमें प्रायः ४० प्राचीन राजाओंके नाम मिले हैं। जो सब मुद्राएँ बहुत प्राचीन कालकी हैं वे हिन्दोसे कटो हुई हैं और उनके बादके प्राचीन मुद्राओं पर बोधिदृष्ट पद्धति है। इनमेंसे किसी किसी मुद्राके ऊपर "जय मानवार्ग" ऐसा लिखा हुआ है। इसके सिवा स्वतन्त्रराज नवपागकी मुद्रा भी पाई गई है। पुराविदोंका अनुमान है, कि यह नगरी ईसा-जन्मके बहुत पहले स्थापित हुई थी। बाद किसे नैसर्गिक आन्ध्रय उत्पन्नसे यह ध्वस्त या ध्वस्त भूतान्धमें विच्छन्न हो कर भूगर्भमायी हो गई है। अभी जहाँ कर्कटगिरिमाता विद्यमान है, वहाँसे प्रायः ४५ वर्ग मील पूर्वमें एक प्राचीन नगरी अवस्थित थी। कर्कटगिरिके पास इसे कोनेके कारण कोई कोई इसे कर्कटनगर भी कहते थे।

प्रवाद है, कि यहाँ कर्कट-नागवंशों पर राजात् नागराज्यसे बहुत काल तक राज्य कर गये हैं। कोई कोई अनुमान करते हैं कि ये लोग थे, क्योंकि यहाँसे जितनी मुद्राएँ पाई गई हैं, उनमें बोधित, बोधिचक्र और बोधिदृष्ट पद्धति है।

वर्त्तमान शहर बहुत दिनोंका नहीं है। कोई कोई कहते हैं, कि प्राचीन नगरसे पश्चिममें इसीका उपकरण से कर वर्त्तमान शहर बनाया गया है।

वर्त्तमान शहरमें कई एक प्राचीन मन्दिर हैं। यहांसे जो प्राचीनतम विस्तारिणी पाविष्ठत हुई है, उनमें १००० सम्बन्ध पद्धति है। प्राचीन नगरकी ओर भी इन मन्दिरोंकी दोवार देखनेमें पाती है। यहांका सुपुत्रमुद-मन्दिर स्थानीय लोगोंके निश्चय बहुत पवित्र माना जाता है। यहांसे १२२० मन्त्रमें उत्तम विस्तारिणी पाई गई है।

क्रि.श. ७५ वर्षे हुए भीषण ज्वालामुखी वर्त्तमान शहर प्रायः लुप्त हो गया है। अभी शहरकी अवस्था और बावजूब बहुत मोचनीय है। (विस्तारित विवरण Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol. VI, p. 162-195 देखो।)

भागर—हिन्दो के एक क्षत्रिय । इनका जन्म सन् १६४२ में हुआ था । इनके बगाने हुए कुछ क्षत्रिय राजाराम हैं । इनकी कविता अच्छी होती थी । उदाहरणार्थ— एक शेषि देने है—

“भायी रात कागरी छः रही ।

जबि धुइमागि कहे की प्यारी भीमम छर छपटाव रही ॥

इनकी मृत्यु नेमली नामा तनवी तन वरकाव रही ।

भागरिया भागर दोर राखत जन्मव मुहु सुखदाय रही ॥”

भागर (स० ति०) नगरे भवः कुम्भितो प्रवीचो वा मुञ्ज । १ चोर, चोर । २ मिथी, कालीगर । नगर मन्दका अर्थ जहाँ कुम्भित चोर प्रवीच होता है वहाँ पुत्र प्रत्यय लगता है । ३ रतिव्यभिगेय । ४ भागरमण्ड्य ।

भागरकोटन—त्रिवाङ्गुलराज्य के अन्तर्गत एक नगर । यह पचा० स० १२० चौर देगा० ७० २८ ४४ पूर के मध्य अवस्थित है । यह प्यान् त्रिवाङ्गुलकी प्राचीन राजधानी चोर वर्तमान महर कोटानगरका उपरुण्ड माना जाता है । यहाँ विद्यालय चौर सुद्रावल्यालय है । त्रिवाङ्गुलमें देवम रही स्थानसे संवादपत्र प्रकाशित होता है । जनसंख्या प्रायः १११८० है, जिसमें हिन्दूकी संख्या ही सबसे अधिक है ।

भागरकीमति—तेलङ्गकी कीमतिजातिकी एक अंचो । कीमति देवो ।

भागरल (स० की०) नागकृतं रत्नम् । १ मित्र । २ मर्त्य या दायीका रत्न ।

भागरपण्ट (स० की०) भागर नाम पण्टम् । कल्पपुराणके अन्तर्गत बरनामण्यात पण्टमेद । इस नगरपण्टके प्रतिपाद्य विषय सभी भारतीयपुराणोंमें इस प्रकार लिखे हैं—

“भक्तः परा भागारः कथः कजोमितीवते ॥” (नारदपु०)

पक्षि २४में सिद्धोत्पत्ति है, जो कि हरिश्चन्द्रोपाख्यान, विष्णुसप्तमहाकाण्ड, त्रिपुङ्गु का चर्गमयम, तारदेवरका भाषाभाषा, हस्तासुरपथ, भागविष, गङ्गातीर्थ, अथवेसर-मर्चन, अमरपुरराजका, गणगीर्ण, धान्नाप्य, भास-मन्द, अनाहय, विष्णुपद, गोजर्ण, सुगन्धपञ्चात्रि, निहैरवर्चन, भादम, समारण-विषय, अमरपुर-विषय, सुचर्मा, महेय, मासिक, भीमनाथ, समदमि-अध्यायान, निःसमिदकन, रामकद, जगपुर, अकलि,

यक्षमूमि, मुष्टीरादि तीन काञ्चुभास, गतोपिण्ड, धान्निपु-विषय, लक्ष्मीदाय, ममविम नामदाय, अमरपुर, वादुकाण्ड, धान्निप, मण्डकट २, दोमन, सोहवटपण्ड, अत्रापासिमो, भासचर, भासचो, रामेय, कुम्भाप्य चोर मन्त्रागण्य पादि निहैरव, अटपटि समाप्यान, दमप्योका सोप्रातक, देवो भद्रिकातीर्थोत्पत्ति, सेमदरो, कंदार, राजतीर्थ, सुमार-तीर्थ, सत्वमय्याराग्यान, कर्षापमाकया, अटमर पात्रवल्का, गोर्ण, गाधिय, वासुपदाग्यान, अथम-कया, भीमाप्यप्युक्त, गूमैय चोर धर्मराजकया, मिटावदेमराग्यान, गावपत्यय, काथानिधित, मकरैयकया, कान्तिमय्यकाग्यान, पक्षःपुण्ड, पुंया दित्य, रोहिताय, भागीरथोत्पत्तिभीर्ण, अमुचरित, विष्णु-मित्रकया, मारकत, विष्णुपाद चोर कंमारोमयचन, मद्रावे अमुचरित, भावितो-पाठ्यान, देवत, भद्रदहाय, प्रधानतीर्थ दमन, कोरव, वाटकेसर, प्रधानसेव, पुंर, नैमिषारण्य, धर्मारण्य पादिका विषय, धारावती, दारका, अथमोवर्चन, मद्रावन, वाप्य चोर देवक-वर्चन, कल्या, भाग चोर नन्द ते तीन धाम, पति, अथ चोर विष्णुका ये तीन तीर्थ, श्री, अमुच चोर देवत ये तीन पर्वत, गङ्गा, नर्मदा चोर भासतो इन तीन गदिश-का विषय, गङ्गातीर्थ, बासमण्डन, पाटकेय, सेवक-प्रद, विषय, भासनादित्य, आहकता, योधिहर चोर अथकविषय, अनागवोत्पत्ति, वातुमाय, अमुचमयन-मत, मद्रासेय, विषयति, तुनापुवन, पलादान, भासकेय, कयासोवर्चन, पात्रिण्ड, भासवेद चोर सुगमापादि कोचन, दानमाहात्म्यकयन चोर दादमादित्यकीर्ण । भागर भासवोका विषय इनमें विस्तारपूर्वक विव-गया है, इसीमें इसका नाम भागरपण्ट पड़ा है ।

भागरघन (स० पु०) भागर एव घनः सुता । मद्रा सुता, भागरमीया ।

भागरज (स० पु०) भागवत भागमभूतप मित्रात्मन-रजोपण्ड । कृष्णविदेय, भागीका पंड । (Citron Amra-
tium) पर्याय—भाहज, भायज, भागर, पिरावन, भागज, अथविषयो, सुरज, लक्ष्मण, भाहज, भाहज, मद्रिका, मोरच । १ वने मंडि, सुगमिन चोर इसीसे घन अर्थात्

५५५-इसका पैड़ गरम देशोंमें होता है। सम्यक् प्रतिरिक्त-यूरोपके दक्षिण भाग, अफ्रीकाके उत्तर भाग और पश्चिम रिकाने केई भागोंमें इसके पैड़ बगीचोंमें लगाए जाते हैं और फल चारों ओर भेजे जाते हैं। नारङ्गीका छिलका सुनायम और पोलायन विषे हुए साल रंगका होता है और गूदेमें अधिक लगा न रहनेके कारण बहुत सफ़ेदमें चमक हो जाता है। भीतर पतली छिलकोमें सड़े हुए फलके होती हैं जिनमें रससे भरे हुए गूदेके रवे होते हैं। भारतमें जो मोठो नारंगियां होती हैं वे और कई फलोंके समान अधिकतर आसाम की कर्चीनसे घाई हैं, ऐसा बहुतसे लोग कहा करते हैं। भारतवर्षमें नारंगियोंके लिये मिलहट, नागपुर, सिद्धिम, नेपाल, गढ़वाल, कमाऊ, दिल्ली, पूना और कुण, प्रधान स्थान हैं। नारङ्गीके प्रधान चार भेद कहे जाते हैं— सत्तरा, कंबला, माछा और चीनी। इनमें सत्तरा सबसे उत्तम जातिका है। सत्तरा भी देश भेदसे कई प्रकारके होते हैं।

चीन और भारतवर्षके प्राचीन ग्रन्थोंमें नारंगीका उल्लेख मिलता है। संस्कृतमें इसे नागरङ्ग कहते हैं, नागना शब्द है मन्दूर। हिलकेडे साल रंग होनेके कारण यह नाम दिया गया है। संस्कृतमें भी नागरङ्गका नाम पाया है। इसके खड़े फलका शुष्क—चमक, चमक, लवण, दुर्गन्ध, वातनाशक, रेषक, हृष्य, पचनेमें शुक्र, कुक्ष, नष्ट और सुगन्धित है। मोठे फलका शुष्क—लवण, शुक्र, बल-कारक, चमक और दक्षिण, आम, कृमि, शूल, त्रस और वातनाशक।

नागरता (सं० स्त्री०) १ नागरिकता, गृहरातीयन। २ नगरका रीतिव्यवहार, सभ्यता।

नागरदील—दोसयन्त्रभेद, एक प्रकारका भूला।

नागरबेल (हिं० स्त्री०) ताम्बूल, पानकी बेल, पान।

नागरमुस्ता (सं० स्त्री०) नागर रस मुस्ता। नागरमोथा।

(Cyperus pertenuis) घणीय—नागरीया, नाग-रादिघनमें घका, चक्राद्या, नादेयो, चुहांसा, पिण्ड-मुस्ता, मिमिरा, हृष्यदी, कच्छरुषा, चारुदेवरा, चरुटा, धूषकोठसंज्ञा, कयासिनो। शुष्क—तिल, कटु, कषाय, गीतल और कफ, पित्त, खर, पतलोहार, दधि, तणा, दाँडे और भ्रमनामक। (राजनी०)।

इसमें इधर उधर फैलो या निकली हुई टहनियां नहीं होतीं, जड़के पास चारों ओर सीधो सवो पत्तियां निकलती हैं जो शर या मूँजकी पत्तियोंकी तरह मोड़-दार और बहुत कम चौड़ाईकी होती हैं। पत्तियोंके ठीक बीचमें एक सोधी सीक निकलती है जिसके गिरे पर फूलोंको ठोस मंजरी होती है। इस छगकी लंबाई ढाई भर होतो और यह प्रायः तानोंके किनारे मिलता है। इसकी जड़ सतमें फूलों हुई गाँठोंके रूपकी और सुगन्धित होती है। इसकी जड़, ससाले और बीपद्यके काममें पाती है।

नागरमोथा (हिं० पु०) एक प्रकारका छग या घास।

नागरवस्ता देखो।

नागरवस्ति—तिरहुत जिलेमें छोटी गण्डकी किनारे पव स्थित एक छोटा नगर। यह पचा २४° ५२' ७०" पौ। देशाः ८५° ५२' पू०के मध्य फैला हुआ है। यहां एक धाना और विद्यालय है जो दरभंगा नगरके खर्चसे चलता है।

नागरवास—गोढ़ आड़यो का एक कुल नाम। इन कुल लोग सासन, कुल पल और कुल बंका कहते हैं। गोढ़ोंके १४४४ घासोंमेंसे नागौर भी एक नगर था। वहांके गोढ़ नागौरवाल कहाने कहाने नागरवास कहाने लग गये हैं। यह नागौरनगर पाजवल लोधपुर राज्यमें रहने स्टेगन और सख्तवाली परगना है।

नागरस्त्री (सं० स्त्री०) नागराणी स्त्री इंगल। नागरीकी पत्नी।

नागराज (सं० पु०) नागानी राजा इ-तत् टच्, सम-शाम्बा; १ श्रेष्ठनाम। २ शर्पमें बड़ा सर्प। ३ हाथियोंमें बड़ा हाथी। ४ ऐरावत। ५ पञ्चमार या नागचन्द्रका दूसरा नाम। ६ चन्दोपत्यकारक पिण्डनाम।

नागराज—१ भावयतक, श्रुतारमतक आदि ग्रन्थोंके प्रेषिता। ये टाकवर्षमें उत्पन्न हुए थे। इनके पिताका नाम आसप और पितामहका नाम त्रिधाधर था। २ पद्मावतीभक्त सोमप सुनिश, वंशज एक राजपुत्रका नाम। इनके पिताका नाम श्रीवदन था।

नागराजकेषः—काव्यप्रकाशको पदवृत्ति नामक टीकाकार।

है। इसका पैड़ गरम देगोंमें होता है। एशियाके पश्चिम-यूरोपके दक्षिण भाग, अफ्रीकाके उत्तर भाग और अमेरिकाके कई भागोंमें इसके पैड़ वगैरोंमें लगाए जाते हैं और फल चारों ओर भेजे जाते हैं। नारङ्गीका फलका सुनायम और पोलायन जिये हुए साल रंगका होता है और गूदेमें अधिक लगा न रहनेके कारण बहुत सज्जमें पगल हो जाता है। भीतर पतली झिल्ली मढ़ी हुई फाँके होती है जिनमें रसके भरे हुए गूदेके रवे होते हैं। भारतमें जो मोठे नारंगियाँ होती हैं वे और कई फलोंके समान अधिकतर चासाम हो कर चीनके पाई हैं, ऐसा बहुतसे लोग कहना करते हैं। भारतवर्षमें नारंगियोंके लिये मिराष्ट, नागपुर, सिद्धि, निपाळ, गढ़वाल, कामाज, दिल्ली, पूना और कुर्ग प्रधान स्थान हैं। नारङ्गीके प्रधान चार भेद कहे जाते हैं— सन्तरा, कांबला, माछा और कीकी। इनमें उत्तरा-सबसे उत्तम जातिका है। सन्तरा भी देश भेदसे कई प्रकारके होते हैं।

चीन और भारतवर्षके प्राचीन ग्रन्थोंमें नारंगीका उल्लेख मिलता है। संस्कृतमें इसे नागरङ्ग कहते हैं। नागका पद है मन्दूर। फलके लाल रंग होनेके कारण यह नाम दिया गया है। सुत्रुतमें भी नागरङ्गका नाम आया है। इसके लई फलका गुण—पक्व, प्रत्यक्त, लज्ज, दुर्जर, दातनायक, रेषक, स्थ, पक्वमें शुक, कुछ अक्षुर और सुगन्धित है। मोठे फलका गुण—स्थ, शुक, बन-कारक, पक्व और रुचिकर, आम, क्षमि, शूल, अम और दातनायक।

नागरता (सं० स्त्री०) १ नागरिका, प्रहरीतीर्थन। २ नागरका रीतिव्यवहार, सभ्यता।

नागरदेश—दीनयन्त्रभेद, एक प्रकारका भूमा।

नागरबेल (हि० स्त्री०) ताम्बूल, पानकी बेल, पान।

नागरमुस्ता (सं० स्त्री०) नागर इव मुस्ता। नागरमोथा।

(Cyperus pertenuis) पर्याय—नागरमोथा, नागरादिघनमेघका, चक्राद्या, नादियी, चुड़ियां, पिण्ड-मुस्ता, मिमिषा, सपभादी, कच्छरेश, चारुकेसरा, चयटा, पूरुकोष्ठप्रभा, कपालानो। गुण—तिक्त, कटु, कषाय, शीतल और कफ, पित्त, ज्वर, पथीघार, रुचि, खपा, दाह और भ्रमनाशक। (शब्दार्थ)।

इसमें इधर उधर फँको या निकली हुई टहनियाँ नहीं होतीं, जड़के पास चारों ओर सीधे समो पत्तियाँ निकलती हैं जो गर या भुंजकी पत्तियोंकी तरह मोरदार और बहुत कम चौड़ाईकी होती हैं। पत्तियोंके ठीक बीचमें एक सीधे सीक निकलती है जिसके गिरे पर फूलोंको ठोम मँकरी होती है। इस छपकी चारों ओर घाय भर होते और यह घाय तातोके किनारे मिलता है। इसकी जड़ छतमें फँको हुई गाँठोंके रूपको और सुगन्धित होती है। इसको जड़ मछाले और औषधके काममें आती है।

नागरमोथा (हि० पु०) एक प्रकारका छप या चाम। नागरमुस्ता देखो।

नागरवस्त—तिरहुत जिलेमें छोटी गण्डकीके किनारे अवस्थित एक छोटा नगर। यह अक्षा० २४° ५२' उ०, पौ० देशा० ८५° ५२' पू०के मध्य फँको हुआ है। यहां एक थाना और विद्यालय है जो दरभंगा नरेशके अधीन चलता है।

नागरयाल—गोह बाड़ाओंका एक कुल नाम। इसे कुछ लोग सासन, कुल पक्ष और कुछ बंक् कहते हैं। गोहोंके १४४४ समूहोंमेंसे नागौर भी एक नगर था। वहाँके गोह नागौरवाल कहलें कहलें नागरवाल कहलाने लग गये हैं। यह नागौरनगर आजकल जोधपुर राज्यमें रेलवे स्टेशन और सड़कवाली परगना है।

नागरस्त्री (सं० स्त्री०) नागराया स्त्री अन्तः। नागरीकी पत्नी।

नागराज (सं० पु०) नागार्ना राजा अन्तः टच, समा-सासः। १ शेषनाग। २ सर्वमें बड़ा सर्प। ३ हाथियोंमें बड़ा हाथी। ४ ऐरावत। ५ पञ्चमार या नाशक छन्दका दूसरा नाम। ६ अष्टोपन्यकारक पित्रुलगा।

नागराज—१ मावप्रतक, श्रद्धाप्रतक आदि पत्थोंके प्रथेता। ये टाकवर्गमें उत्पन्न हुए थे। इनके पिताका नाम आनप और पितामहका नाम निवाधर था। २ पद्मावलीभक्त सोमप सुनिसे, वर्गजन एक राजपुत्रका नाम। इनके पिताका नाम श्रीवटन था।

नागराजकेवध—काव्यप्रकाशकी पदवृत्ति नामक टीकाकार।

भागद्वय (सं० पुं०) नागं स्वते सोद्वेष्ट्येन प्राप्नोतीति व
गती वाहुं क प्रत्ययेन साधुः । नागराष्ट्र, नागरी ।
नागरूपप्रभम् (सं० क्लो०) हरिताल ।
नागरेण (सं० पुं०) नागस्य सीसकस्य रणः । धीसक-
सम्भव, सिन्दूर ।
नागरेयक (सं० त्रि०) नगरे भवः नगरेस्थायं वा नगर-
टकज । नगर सम्बन्धी, नगरका ।
नागरोत्था (सं० क्लो०) नागरादुत्पद्यति सद्-स्थाः क ।
नागरमुखा, नागरोष्ठी ।
नागय (सं० क्लो०) नागरस्य भावः यक । १ बुद्धिमान्,
चतुरार्ह । २ नागरिकता, गृहप्राप्तिपत्र ।
नागल (सं० पुं०) १ वृत्त । २ जूयुक्ती रस्सी जिससे
बैल जोड़े जाते हैं ।
नागलक्षणं (सं० क्लो०) नागानां सर्पाणां लक्षणं । सर्पिके
भेदादि ज्ञापक चिह्नभेद ।

नागलक्षणका विधय यन्त्रिपुराणमें इस प्रकार लिखा
है—नाग, उसके शरीरादि, मावादि, दंशस्थान, कम
सूतक और दण्ड चेष्टा ये सब नागके प्रधान लक्षण
हैं । शेष, वायुकि, तसक, कर्कोट, पक्ष, महाभुज,
गृहपाल और कुक्षिक ये तो श्रेष्ठ नाग हैं । इनमेंसे
प्रत्येक दोसे क्रमशः हजार, पाठ सो, पाँच सो
और १० मस्तक हैं तथा प्रत्येक दो दो करके यथाक्रम
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रजाति है । इनके पाँच
सो वंश हैं और पीछे उनसे पशुव्य हो गये हैं । कपी,
मण्डली और राजिन ये क्रमशः शत, पित्त और कफात्मक
हैं । इनमेंसे बहुत कालजात दीपमित्र नागमय दर्बीकर
नामसे प्रसिद्ध हैं ।

नागोंके ब्रह्म, ब्राह्मण, क्षत्र और स्वस्तिक चिह्न होते
हैं । मोनस नागमय दीर्घ और मन्दगामी होते तथा
नागा प्रकारके मण्डसाकारमें रहते हैं । राजिन नाग-
मय क्षिप्र, ऊर्ध्व और वक्रमात्रसे नागा रंगमें चित्रित
होते हैं । अन्तर नागमय मित्र चित्रविशिष्ट होते हैं
तथा वे भू, वर्ष, पञ्चि और वायुके भेटसे चार प्रकारके
माने गये हैं । इनके फिर २६ भेद हैं । मोनसमय
१६ प्रकारके, राजिन ११ प्रकारके और अन्तरमय २१
प्रकारके हैं । जो सब सर्वे अमृतकायमें उत्पन्न होते
हैं, उन्हें अन्तर कहते हैं ।

नागिनियोंके पापादादि तीन मांसमें गर्भ रहता है ।
चार मास तक गर्भधारण करके वे २४० डिग्री प्रसव
करती हैं उनमेंसे वे पुं और नपुंसक बच्चोंको निगल
जाती हैं, केवल नागकन्या जीवित रहती हैं । क्षण-
सर्पोंके ३० दिनमें सर्प फूटती हैं । एक मासके बाद
ही वे बाहर निकलने लगते हैं । १२ दिनमें उन्हें श्माम
होता है, सूर्यके दर्शन करनेसे ही उनमें दाँत निकलते
हैं । इनमेंसे किसीके १२ दिनमें और किसीके २२ दिनमें
चार बड़े दाँत होते हैं । करालो, मकरो, कानरावो
और यमपूतिका नामक सर्पोंके दाँतोंमें विष होता है ।
ये सब बाईं और दाहिनी राह हो कर चलते हैं । ६
मासके बाद के पुंस निकलते हैं । नागकी परमायु १२०
वर्ष है । दिन और रातको समभाग सूर्यादि वागाधिपति
होते हैं । इनमेंसे छः तो प्रतिवारके और सभी कुलिक
उन्मत्त समयके अधिपति होते हैं । (अग्निपुं० ३०४ अ०)

पूर्विका नागलक्षण—दंशन और उसकी चिकित्सा
आदिशा विस्तृत विवरण यन्त्रिपुराणके ३०४, ३०५,
३०६, ३०७, पद्यायमें लिखा है,—

जितने नाग हैं, वे सभी पक्षो प्रकारके हैं । उनमेंसे
दर्बीकर २६ प्रकारके, मण्डली २२, राजिमत्त १०,
वेकारण १ और निर्विष १२ प्रकारके हैं । वेकारण
जातिसे सात प्रकारकी चित्राकी उत्पत्ति हुई है । वे
मण्डली और राजिमत्त दोनों गुणविशिष्ट हैं ।

जिन सब सर्पोंके मस्तक पर रयाङ्ग, लाङ्गल, क्षत्र,
स्वस्तिक वा चक्र गये चिह्न होते हैं, उन्हें दर्बीकर कहते
हैं । वे कल्पविशिष्ट और मीघगामी होते हैं । जो
विविध प्रकारके मण्डलाकारोंमें चित्रित, स्थूल, मन्द-
गामी और दीर्घसर्पके समान प्राभाविशिष्ट होते हैं, उन्हें
मण्डली कहते हैं । जिन सब सर्पोंके शरीरमें पञ्चक-
दमक रहती तथा जिनके ऊपर मोचे तमाम भिन्न भिन्न
वर्णोंमें चित्रित रहते हैं, वे राजिमत्त कहलाते हैं । जिनके
शरीरसे पक्षो गन्ध निकलती है तथा जो मोनके समान
चलकते हैं, वे ब्राह्मण जातिके । जो क्षिप्रवर्षाविशिष्ट
और अग्नी कुपित हो जाते हैं, वे क्षत्रिय जातिके,
जिनका शरीर क्षणवर्ष, सोहित, पून वा क्षत्ररके
जैथा तथा बख्खो तरह मजबूत होता है, वे वैश्य

भागारमरही—कुछा त्रिकेके नगरावधिसे ८ लोड दक्षिण-
में अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहां नाग, विष्णु और
ब्रह्माका मन्दिर है। उन सब मन्दिरोंमें लक्षोंके
प्राचीन खालकी दिनामित्रियां भी देखी जाती हैं।

नागादिहाय (सं० पु०) चौखर्भेट, एक प्रकारकी टक्का।
प्रमुख प्रवासी—मोह, चन्द्रप्रभाकी बहू, बेलका दिवहा,
मोवा, चनिया, मोवाय और बाका इनका समान समान
भाग है और काढ़ा बर्तन है। इसके स्थान करनेमें सभी
प्रवासाका लवर और दाहण चलोमार गट होता है।

नागादिहाय (सं० लो०) चौखर्भेट। प्रमुख प्रवासी—
मोह, चनिया, मोवा, बेलका कून्, रसाधन, इन्द्रो,
चक्रवर्त, बेलमोह, कुटकी इनका बराबर बराबर भाग
बुद्ध करत है। इनका अनुमान मनु और चावलका जल
है। १ वा ८ गुल जलमें चावलको रातमें भिगो रचना
चाहिये। पीछे सभी जलसे साथ सेवन करनेसे रक्तगुल
पेशित-पक्ष्मचोरीय जाता रहता है।

नागादिहाय (सं० पु०) मोहक चौखर्भेट।

नागाहा (सं० लो०) नागरिनि बाह्या यस्य। टण्डो,
मोह।

नागरिक (सं० लि०) १ नगर सम्बन्धी, नगरका। २ नगरमें
रहनेवाला, ग्रहणको। ३ चतुर, मध्य। (पु०) नगर-
निवासी, ग्रहणका रहनेवाला प्रादमी।

नागरी (सं० स्त्री०) नगरी भवा, नागर-पक्ष-टोप।
१ घुड़ोप, घुड़र। २ विद्वानारी, चतुर स्त्री, प्रवीण
स्त्री। ३ नागरपत्नी, नागर स्त्रायकी स्त्री। ४ चहार-
भेट, भारतवर्षकी यह प्राचीन विविध जिलमें संस्कृत
और हिन्दो लिखी जाती है। देवनागरी देखी। ५ पदर-
की मोटारकी यह बड़ी भाग। ६ पक्षकी बहुत मोटी
पटिया, बड़ा भोट। (लि०) ७ नगरभज, जो ग्रहणमें
एकच हो।

नागरी—१ उत्तर पार्श्व त्रिकेके अन्वर्तों एक निरि-
माणा। यह निरिमाणा पश्चिमपट्ट पर तले दक्षिण-पूर्वमें
छेको हुई है। यहां पीले, लाले पत्थि जलवा बर्तन
उत्पन्न होते जाते हैं। भूतल-विशेष निदर किया है, कि
इसकी स्थल सतहमादा पत्थारिसे परतकी तरह है।

२ एक निरिमाणाका स्थान मध्य। यह पत्थार १३

२२' ३३" उ० और दूरा ०८' ३८' २२' पूर्व में
अवस्थित है। यह समुद्रतलमें २२२५ फुट ऊंचा है।
समुद्रतलमें १० मील दूरमें हीनेके जाल लक बाहर-
कादन गयीं रहती, तब यहांमें यह माक माक देवने
जाता है। हमने नीचे नागरी ग्राम अवस्थित है। लक
ग्राम की मन्दार रैनकेही नागरी नामक एक स्थान
है। उक्त ग्राममें ग्रामकी जमन पत्थरी लगती है।

३ राजपुतानिसे विस्तार मध्यमें ५ कोस दूरीमें
अवस्थित एक सुंदर नगर और चमत्का प्राचीन ग्रहण
अवस्थायी। प्रवाद है, कि राजा हरिचोदेने यह नगर
बसाया था। इनका प्राचीन नाम है ताम्रवनी नगरी।
यहांमें प्रमुखके समयकी बाह्यो पक्षमें लक्षोंके बर्तन
सुन्दर आभूषण हैं। इसके विवा यहां ठारै हजार
वर्षकी प्राचीन हिन्दुओंकी स्तूपोंमें लगी हुई मूर्त
और बौद्धमूर्त भग्नावशेष पाये जाते हैं। जिसमें प्राचीन
मन्दिरोंके भग्नावशेष और भास्वरकर्म एक नगरका
परिचय देने हैं। अब यह स्थान मध्यकी लक जाल,
तब यहांकी जितनी प्राचीन देवने, योग्य वस्तुएं भी, लकी
विस्तार लक गईं। (Cunningham's Archaeolo-
gical Survey Reports, Vol. VI, p. 126-126.)

नागरीदहा (सं० लो०) १ नगरा लकटी, यह लकटीकी
लता की जलती पुनको कुक सो न हो।

नागरीट (सं० पु०) नागरीमेति ३८ लकी क। १ लकट,
अभिप्राय। २ लक, दीनता। ३ नागरीकन मध्यलक्षित।
नागरीदास—एक हिन्दी-कवि। पाप लक्ष्मणके निरासी
तथा लामो पोतामरदामकीके दिव्य थे। चार्म लक्ष्मण
१८२०में लामोकीके पदमकी टोका रवी है। १८३०में लामो
हरिदास, विशारिनिदास, विष्णुविष्णु, नरनदास,
नरहरिदास तथा लव पापके पदकी टोका विष्णुदाम
की गई है। यह लक्ष्मण और लामोके ३३३ पदोंमें है।
इनकी कविता-मरिमा माचारण अर्थकीकी बड़ी न
सकती है। लक्ष्मणपाप यह नीचे देने हैं—

“बर्तन दन लामन लक लामो।

नेते ही लक लक ही लकी विर लोके लामो।

विष देवे मुकलक्ष्मण लकी लोके लो न लो।

लकटीदक ही विष लक लोके लक लक लो।”

नागदक्षिण (सं० पु०) नाग रवते सोदृश्येन प्राप्नोतीति व
गती वाह० क प्रत्ययेन साधुः । नागराष्ट्र, नारह्णी ।

नागरूपप्रभम् (सं० क्री०) चरितात् ।

नागरेण (सं० पु०) नागस्य शीघ्रकस्य रेणुः । भीसक-
सम्भव, सिन्धूर ।

नागरेयक (सं० त्रि०) नगरे भवः नगरेस्थायं वा नगर-
टकम् । नगर सम्बन्धी, नगरका ।

नागरोत्था (सं० क्री०) नागरादुत्पत्ति सद्-स्था-क ।
नागरमुत्था, नागरमोया ।

नागर्य (सं० क्री०) नागरस्य भावः यक । १ दुर्हिमाग्री,
चतुरार्ध । २ नागरिकता, गृहरातीपन ।

नागस्य (सं० पु०) १ वृत्त । २ लूपको रस्ते निघने
बेल जोड़े जाते हैं ।

नागस्यचय (सं० क्री०) नागानां सर्पाणां सचयः । सर्पकि
भेदादि आपक पित्रभेद ।

नागस्यचयः विषय अग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा
है—नाग, सबसे शरीरादि, भाषादि, दंशस्थान, कर्म
सुतक और दण्ड चेष्टा ये सब नागोंके प्रधान लक्षण
हैं । शेष, वासुकि, तल्लक, कर्कोट, चक्र, महाभुज,
शङ्खपाश और कुलिश ये नौ श्रेष्ठ नाग हैं । इनमेंसे
प्रत्येक दोसे क्रमशः हजार, पाठ सौ, पाँच सौ
और १० मस्तक हैं तथा प्रत्येक दो दो करके यथाक्रम
म्राज्य, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रजाति हैं । इनके पाँच
सौ बंश हैं और जोके उनसे अवस्थ हो गये हैं । कवी,
मन्त्रिणी और राजिन ये क्रमशः वात, पित्त और कफामक
हैं । इनमेंसे अनुक्त आनजात दोषमित्र नागगण दर्शिकर
नामसे प्रसिद्ध हैं ।

नागोंके चक्र, काङ्क्ष, ह्वर और स्वर्णिक चिह्न होते
हैं । गोनस नागगण दीर्घ और अन्धगामी होते तथा
नामा प्रकारके मण्डलाकारमें रहते हैं । राजिन नाग-
गण क्षिप्र, लज्ज और वक्रभाजने नामा रंगोंमें चित्रित
होते हैं । ध्वनर नागगण म्रिय चिह्नविशिष्ट होते हैं
तथा वे भू, वय, अग्नि और वायुके भेदसे चार प्रकारके
माने गये हैं । इनके फिर २६ भेद हैं । गोनसगण
१६ प्रकारके, राजिन ११ प्रकारके और अन्धगण २१
प्रकारके हैं । जो सब सर्प अनुकृतात्मने उत्पन्न होते
हैं, उन्हें अन्धकार कहते हैं ।

नागिनियोंके चापादादि लोन मांसमें गर्म रहता है ।
चार मास तक गर्भधारण करके वे २४० डिग्री प्रभव
करती हैं उनमेंसे वे पुं और नपुं मक वर्षोंको निगम
जाती हैं, केवल नागकन्या जीवित रहती हैं । क्षत्र-
सर्पके ७ दिनमें बाँव फूटती है । एक मासके बाद
होते हैं बाहर निकलने लगते हैं । १२ दिनमें सर्पे प्राण
होता है, सर्पके दर्शन करनेसे ही उनके दाँत निकलते
हैं । इनमेंसे किसीके ३२ दिनमें और किसीके २२ दिनमें
चार बड़े दाँत होते हैं । करासो, मकरो, कानरासो
और यमपूतिका नामक सर्पोंके दाँतमें विष होता है ।
ये सब बाँहें और दाँतनी राह डो कर चमते हैं । ६
मासके बाद केवल निकलतो है । नागकी परमायु १२०
वर्ष है । दिन और रातको समनाग सूर्यादि वागाधिपति
होते हैं । इनमेंसे छः तो प्रतिवारके और सभी कुलिक
सन्ध्या समयके अधिपति होते हैं । (अग्निपुरा १०४ अ०)
पूर्वोक्त नागस्यचय—दंशन और चक्रकी विविधता
आदिका विस्तृत विवरण अग्निपुराणके ३०४, १०५,
३०६, ३०७, अध्यायमें लिखा है,—

लिनने नाग हैं, वे सभी पक्षी प्रकारके हैं । उनमेंसे
दर्शिकर २६ प्रकारके, मण्डनो २२, राजिमन्त १०,
वैकराज १ और निर्विष १२ प्रकारके हैं । वैकराज
जातिसे सात प्रकारकी चिद्राकी उत्पत्ति हुई है । वे
मण्डनो और राजिमन्त दोनों सुषविशिष्ट हैं ।

जिन सब सर्पोंके मस्तक पर रयाङ्ग, लाङ्गल, ह्वर,
क्षिप्रक वा चक्र शके चिह्न होते हैं, उन्हें दर्शिकर कहते
हैं । वे क्षविशिष्ट और शीघ्रगामी होते हैं । जो
विविध प्रकारके मण्डनाकारोंमें चित्रित, ह्यूस, मण्ड-
गामो और दोनसूर्यके समान धामाविशिष्ट होते हैं, उन्हें
मण्डनो कहते हैं । जिन सब सर्पोंके शरीरमें चमक-
दमक रहती तथा जिनके ऊपर मोक्षे तमाम भिन्न भिन्न
वर्णोंसे चित्रित रहते हैं, वे राजिमन्त कहलाते हैं । जिनके
शरीरमें अच्छी गन्ध निकलती है तथा जो गोनके समान
चमकते हैं, वे त्राघ्रण जातिके । जो क्षिप्रवर्षविशिष्ट
और लज्जो कुपित हो जाते हैं, वे क्षत्रिय जातिसे ।
जिनका शरीर क्षत्रवर्ष, कोहित, पूष या कथूरके
जैसा तथा बलको तरह मजबूत होता है, वे वैश्य

भागदकं (सं० पु०) भाग रवते सांध्यं न प्राप्नोतीति व
 गतो वाङ्म० क प्रत्ययेन साधुः । नागरहः, नारहो ।
 नागरूपप्रभम् (सं० क्री०) हरिताल ।
 नागरेण (सं० पु०) नागस्य सीसकस्य रेणुः । सीसक-
 सम्भव, मन्दुर ।
 नागरेयक (सं० त्रि०) नगरे भवः नगरेस्यायं वा नगर-
 टकस्य । नगर सम्बन्धी, नगरका ।
 नागरीया (सं० क्री०) नागरादुत्पिठति उद्-स्थाः ।
 नागरमुखा, नागरमोधा ।
 नागयं (सं० क्री०) नागरस्य भावः यकः । १ बुद्धिमान्,
 चतुरार्हः । २ नागरिकता, गृहरातोपम ।
 नागस्य (सं० पु०) १ वल । २ जूएकी रस्सी जिससे
 बैल जोड़े जाते हैं ।
 नागस्यचय (सं० क्री०) नागानां सर्पाणां सचयः । सर्पकि-
 मेदादि शायक चिह्नमेद ।

नागसचयका विषय चरित्रपुराणमें इस प्रकार लिखा
 है—नाग, उसके गरीरादि, भावादि, दंशस्थान, कम
 सुतक और दण्ड सेटा ये सब नागोंके प्रधान लक्षण
 हैं । शेष, वासुकि, तसक, कर्कोट, भज, महागुज,
 गृहपाल और कुक्षिक ये जो श्रेष्ठ नाग हैं । इनमेंसे
 प्रत्येक दोसे क्रमशः हजार, पाठ सो, पाँच सो
 और १० मन्त्राक हैं तथा प्रत्येक दो दो करके यथाक्रम
 ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रजाति है । इनके पाँच
 सो वंश हैं और पोलि उनसे असंख्य हो गये हैं । फलो,
 मण्डली और राजिस ये क्रमशः बात, पित्त और कफालक
 हैं । इनमेंसे बहुत कालजात दोषमित्र नागगण दर्शिकर
 नामसे प्रसिद्ध हैं ।

नागोंके बज्र, बाहक, हथ और स्थितिक चिह्न होते
 हैं । गोत्रस नागगण दोष और मन्त्रागामी होते तथा
 नामा प्रकारके मन्त्रसाकारमें रहते हैं । राजिस नाग-
 गण क्षिप्र, लघ्वं और वक्रभावसे नामा रंगोंमें चित्रित
 होते हैं । अन्तर नागगण मित्त चिह्नविशिष्ट होते हैं
 तथा श्वेत्, कर्ष, चम्पि और मायुके भेदसे चार प्रकारके
 माने गये हैं । इनमेंसे २६ भेद हैं । गोत्रमगण
 १६ प्रकारके, राजिस ११ प्रकारके और अन्तरगण २१
 प्रकारके हैं । जो मन्त्र सर्व अनुक्तकालमें उत्पन्न होते
 हैं, उन्हें अन्तर कहते हैं ।

नागिनियोंके पायाङ्गादि तीन मांसोंमें गर्भ रहता है ।
 चार मास तक गर्भधारण करके वे २४ दिव्य प्रसव
 करती हैं उनमेंसे वे पुं और नपुंसक बच्चोंको निगल
 जाती हैं, केवल नागकन्या जीवित रहती हैं । जन्म-
 सर्वेके ७ दिनमें पाँच फूटती हैं । एक मासके बाद
 ही वे बाहर निकलने लगती हैं । १२ दिनमें उन्हें स्नान
 होता है, सूर्यके द्यौन करनेसे ही उनके दाँत निकलते
 हैं । इनमेंसे किसीके १२ दिनमें और किसीके २२ दिनमें
 चार बच्चे दाँत होते हैं । करासो, मकरो, कालरात्रो
 और यमपूतिका नामक सर्पोंके दाँतमें विष होता है ।
 ये सब बाईं और दाहिनी राह हो कर चलते हैं । १
 मासके बाद केवल निकलती हैं । नागकी परमायु १२०
 वर्ष है । दिन और रातको समानाग सूर्यादि यागधिपति
 होते हैं । इनमेंसे छः तो प्रतिवारके और सभी कुलिक
 सन्ध्या समयके अधिपति होते हैं । (अग्निपु० १०४ अ०)
 पूर्वोक्त नागसचय—दंशन और उसकी चिकित्सा
 आदिका विस्तृत विवरण चरित्रपुराणके १०४, १०५,
 १०६, १०७, अध्यायोंमें लिखा है,—

जितने नाग हैं, वे सभी अच्छी प्रकारके हैं । उनमेंसे
 दर्शिकर २६ प्रकारके, मण्डली २२, राजिस १०,
 वैकराज १ और निर्विष १२ प्रकारके हैं । वैकराज
 जानिसे बात प्रकारकी चिदाकी उत्पत्ति हुई है । वे
 मण्डली और राजिस १० नामों गुणविशिष्ट हैं ।

जिन सब सर्पोंके मन्त्राक पर रघाङ्ग, लाङ्गल, लव,
 स्रक्षिक वा चङ्ग शब्द चिह्न होते हैं, उन्हें दर्शिकर कहते
 हैं । वे कषयविशिष्ट और मीषगामी होते हैं । जो
 विविध प्रकारके मन्त्रसाकारोंमें चित्रित, स्थल, मन्त्र-
 गामी और दोषपूर्णके समान पाभाविशिष्ट होते हैं, उन्हें
 मण्डली कहते हैं । जिन सब सर्पोंके शरीरमें चमक-
 दमक रहती तथा जिनके ऊपर मोक्ष तमाम मित्त भिन्न
 बर्णोंमें चित्रित रहते हैं, वे राजिसमन्त्र कहलाते हैं । जिनके
 शरीरमें अच्छे गन्ध निकलते हैं तथा जो मोक्षके समान
 चमकते हैं, वे ब्राह्मण जातिके । जो क्षिप्रवर्णविशिष्ट
 और जट्टी कुपित हो जाते हैं, वे क्षत्रिय जातिके,
 जिनका शरीर लघ्ववर्ण, मोहित, भुल्ल वा कटुतरके
 लोका तथा बज्रको तरह मजबूत होता है, वे वैश्य

आतंकि को भी गहिर, हमो पदवा पदवा तिमो मरानः
के पदं तिमिह कोने मरान तिमो के बुध बहन बहो
कोने, बिमरुआतंकि मरान आतंकि है ।

દર્શકાર્થે કાટનેમે તાદ્ય મળ્યુંએ કાટનેમે વિત
 એ. રાત્રિભાગે કાટનેમે એવા કુતિમ હો જાતા છે.
 તો મગ જાત પદ્યનેએ મદામનેમ ડાલ્ય હોત છે.
 મગને વિવેકે દો દોષ કુતિમ હો જાતે છે. તમ દોષકે
 ભવલકા વિચાર કર જામેએ માનગિતાઓ જાતિ જામે
 જાતે છે. રાત્રે મેવ ભાગમે વિજાગ્રાતિ એવ પદ્યવિટ
 ભાગમે મળ્યુંએ જાતિ તદા દિવાભાગમે દર્શકાર જાતિ
 જુદ જુદ વિષય કરતો છે. દર્શકાર્થે તદવ.
 મળ્યુંએએ હા એવ રાત્રિભાગે મગવચન હોતે વર મો
 વડે ને કાટને, તો તાદ્ય પદ્ય હોતો છે.

यदि सर्वोद्दिष्ट मनुष्य द्वारा प्राकृतिकिनी की व्यवस्था अथवा
ना बाधक प्रत्येक परिस्थिति की तथा कष्ट, बाधक और हानि
प्रतिबंधों की, तो जानना चाहिये कि इन सर्वोद्दिष्ट मनुष्य
अथवा विषय हैं।

[illegible]

सुदृढतमं लक्ष्मणायाम ३, ३ ओर ५ अध्यायमं नाग-
लक्ष्मण, दंशन ओर लक्ष्मण विविधता वादिका विषय
विद्यालयमं वर्गित ६। एवं देवते ।

भाग्यता (नं० स्त्री०) भाग्य मयं प्राप्तुं कृता । भाग्य
दोषी कृता, पातकी कृता ।

मालमर्मा—एक प्राचीन ग्राम । यह दक्षिण में ३३ मील उत्तर में अवस्थित है । इसमें पत्तार-पूँच घनेक मिश्र मिट्टि की भूतल आती है । इस सब पहाड़ी की पश्चिम पट्टाल में एक लकड़वा है, जहाँ बहुतसे गहूँ पैदा होते आते हैं । इस सब पहाड़ी टेकसाइर घसित है ।

१०८५—सम्राट् १५५५-५६ १५५५-५६ १५५५-५६ १५५५-५६ १५५५-५६
 १०८६—सम्राट् १५५६-५७ १५५६-५७ १५५६-५७ १५५६-५७ १५५६-५७
 १०८७—सम्राट् १५५७-५८ १५५७-५८ १५५७-५८ १५५७-५८ १५५७-५८
 १०८८—सम्राट् १५५८-५९ १५५८-५९ १५५८-५९ १५५८-५९ १५५८-५९
 १०८९—सम्राट् १५५९-६० १५५९-६० १५५९-६० १५५९-६० १५५९-६०

गिरि धीरे धीमे गिरने लगे। गिरने के साथ ही धीरे धीरे
 गिरने के साथ ही धीरे धीरे गिरने के साथ ही धीरे धीरे
 गिरने के साथ ही धीरे धीरे गिरने के साथ ही धीरे धीरे
 गिरने के साथ ही धीरे धीरे गिरने के साथ ही धीरे धीरे

[illegible]

मालमोड (मं० पु०) मागासरी मोड ६-१११ । माग विहित
भांश, दातास ।

पातानमोक्षमं मातगव रहति है, मन्मसि एव' इति
रहति कहा था। एक एक पातान दस हजार मोक्ष
विरह्यत है। पातान मात है, पतन, मितन, तिष्ठन,
ग्राहिमत्, महापतन, येत सुतन और मातवा पातान
मात पातान वही पक्षी पक्षिमहापक्षी सुमोक्षित है।
यहांकी भूमि मन्द, कामो, काम, मोक्ष, मर्कटा, मीमांसा
और काश्मीरी होती है। यहां पानन, पैंप, पण और
महापानन पक्षी पक्षरको आतिथीका काम है। मन्मसि
एक बार मातको पक्षिमामूमिका परिश्रमन करके
मन्मसि ही जा कर कहा था, कि पातान मन्मसि ही
भी मन्मसि है। (पृष्ठ २१५ अ०)

of 1864)। इस नवनागको-राजधानी कहाँ थी, इस विषयमें मतभेद देखा जाता है सही, किन्तु बहुत तर्क वितर्क के बाद यह स्थिर हुआ कि भरवरमें उनकी राजधानी थी। विष्णुपुराणमें भरवर पर्वतों नामसे प्रसिद्ध है। यह नागवर्गशरीरों के वास्तुपुरोषीर मयूरामें विजयपत्तिका उड़ाई थी। जो जो सब स्थान भरतपुर, डोलपुर, खालियर, बुन्देस, उज्जयिनी, भिन्सा और सागर कहलाते हैं, वे पश्चिमी नवनागों के अधिकारभूत थे। सुना जाता है, कि मात्स्यका कुछ भाग भी उनके अधिकारमें था। इलाहाबादकी खोजित लिपिमें लिखा है, कि समुद्रगुप्तने गणपतिनागकी पराजय किया था, गणपतिनागका दूसरा नाम था गणेश्वर। भरवर राजाओं की ओर से सुदूर पूर्व पार्श्व गङ्गा है, अतः गणपति-नागके प्रचलित-सिक्कों की संख्या भी अधिक है। मगध राज्यमें एक नागवर्गकी कथा सुनी जाती है। इनोंने अपने बाहुबलसे बहुत दिनों तक मगधको अपने अधिकारमें रखा था। किन्तु अन्तमें प्रभुत पराक्रमशाली पाण्डुपति उनके हाथमें मगधराज्य जीत लिया। गङ्गा और यमुनाके मध्य स्थान पर पाँच और पाण्डुओं के साथ मगधके नागवर्गीय राजाओं की लड़ाई छिड़ी थी। महाभारतमें पाण्डवमगध-दाहक का विषय किसी भार-वाही हिन्दू ने दिया नहीं है। उस समय बहुतसे नाग मगध हुए थे और स्वयं योक्षणे काशिय आदि भागों का; इसमें किया था। कोई कोई पाशाल्य पण्डित इसकी आध्यात्मिक व्याख्या इस प्रकार करते हैं, कि आर्य-वर्गोद्भव लक्ष्मणने अनार्यसंभूत नागवर्गीय राजाओं को पराजय किया था। इसके सत्यान्वय का विचार पाठकों के ऊपर निर्भर है, हम इस विषयमें कुछ भी कहना नहीं चाहते। पर हाँ, इतना अवश्य कह सकते हैं कि ई. सन् १८९ वर्ष पहले नाग-राजगण प्रथम प्रतापसे यहां राज्य-शासन करते थे। इसके पनेक प्रमाण भी मिलते हैं। महावीर पसेकमन्दर जब मगध राज्य पर चढ़ाई करने के लिये उद्यत हुए, तब नागवर्गके मन्दराजने उन्हें रोक्कने के लिये प्राणवचनमें सेटा की थी। रामगढ़ और सौराष्ट्र के नागवर्गीय राजा लोग अपने सिक्के पर सर्वसुखी चिह्नित करते थे। इसका कारण

यह था कि वे लोग नागवर्गके थे। सुत रा पूर्व पुरुषों के सम्मानार्थ नागसुखी चिह्नित करते थे। सिंहासनमें नागवर्गीय लोगों को संस्था इनको अधिक है, कि यह स्थान 'नागदीप' कहलाता है। भारतवर्ष के अन्यान्य देशोंमें भी नागवर्गकी पड़चूँ थी, इसमें सन्देह नहीं। पाषाण-कालमें इनके लिखा है, कि उत्तर अमेरिकामें ग्रक-जातीय नागवर्गका आधिपत्य हुआ था। इस नागवर्गने हिंदोयानों का राज्य भी जीत लिया था। (Cyclopaedia of India, Vol. 11 p. 1042)

नागवर्ग (मं. वि०) नागों के वर्ग या कुल का।
नागवह (मं. पु०) काशीराज कल्पनापतिके एक मन्त्रोका नाम। ये जातिके कायस्थ थे। (राजतरंगिणी)
नागवदन—विंशतके एक बन्दरका नाम। सुप्तसुवहके कुछ समय बाद यह बन्दर बसाया गया था।
नागवर्जन् (मं. पु०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। यह तीर्थ सरस्वती नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। यहां पवनराज वासुकि स्वयं बहुतसे नागों के भाग रहते हैं। हजारों मूर्ति और देवता यहां आ कर नागराज वासुकि का यथाविधि अभिषेक करते हैं। इस तीर्थमें साँवका कुल भी डर नहीं होता। (भारत शा. १८४०)
नागवहन—वासुकिवर्गीय एक राजाका नाम।
नागवनि—मन्दाग प्रदेशकी एक नदी। इसका दूसरा नाम 'वाहनिया' है।

मध्य प्रदेशमें गोण्डवाना पहाड़के तीन जलधोती के पाँचमें मिलनेसे यह नदी उत्पन्न हुई है। वहाँसे यह दक्षिण-पूर्व की ओर घूम कर जयपुर होती हुई चिका कोलके समीप मयूरमें गिरती है। इसकी लम्बाई १४० मील है। इसके किनारे जितने प्रधान नगर बसे हुए हैं उनसे नाम ये हैं—मिहानपुर, मिरदा, रायगढ़, पार्श्व तोपुर, पामकण्डा और चिकाकोल। इसकी प्रधान उपनदियाँ साप्तर और मन्दा हैं।

नागवसरी (मं. स्त्री०) नाग इस दोषों वजरी। नागवसरी, पान।

नागवज्रिका (मं. स्त्री०) नागवसरी, पानकी मृता।
नागवस्री (मं. स्त्री०) नाग इस दोषों वस्री मता।
नागवस्री, पानकी मृता, पान। देवभेदसे यह मता भिन्न भिन्न गुणों की होती है।

of 1864)। इस मगधनामकी राजधानी कहाँ थी, इस विषयमें मतभेद देखा जाता है सही, किन्तु बहुत तर्क वितर्क के बाद यह स्थिर हुआ कि नरवरमें उसकी राजधानी थी। विष्णुपुराणमें नरवर पञ्चाशती नामसे प्रसिद्ध है। वह नागवंशधरों के पालिपुरी और मधुबनी विजयपताका उड़ाई थी। भो जो सब स्थान भारतपुर, ठोसपुर, ग्वालियर, बुन्देलखण्ड, उज्जयिनी, भिलसा और हारग कहलाते हैं, वे पहले नवनगर के अधिकारस्थ थे। सुना जाता है, कि मानवका कुछ पंथ भी उनके अधिकारमें था। इलाहाबादकी खोजमें निम्नलिखित है, कि, समुद्रगुप्तने गणपतिनामकी परास्त किया था, गणपतिनामका दूसरा नाम था गणेश। नरवर राजाओं की जो सब सुधारें आई हैं, उनमें गणपतिनामके प्रचलित सिक्कों की संख्या ही अधिक है। मगध राज्यमें एक नागवंशकी कथा सुनी जाती है। इसीने अपने बाहुबलसे बहुत दिनों तक मगधकी पगमें पवि-कारमें रखा था। किन्तु अगामे प्रभुत पराक्रमशाली पाण्डवोंने उनसे हाथमें मगधराज्य छीन लिया। गङ्गा और यमुनाके मगध स्थान पर पाय और पाण्डवों के साथ मगधके नागवंशीय राजाओं की लड़ाई हुई थी। महाभारतमें पाण्डववन-दाहनका विषय किसी भारत-यानी हिन्दूसे दिया नहीं है। उस समय बहुतसे नाग मर चुके थे और स्वयं योक्त्याने कालिय आदि नागों का दहन किया था। कोई कोई पाण्डव पण्डित इसकी आध्यात्मिक व्याख्या इस प्रकार करते हैं, कि पार्य-यशोद्वय जन्मने अनायसम्भूत नागवंशीय राजाओं को परास्त किया था। इनके सत्याभ्युक्त विचार पाठकों के ऊपर निर्भर है, हम इस विषयमें कुछ भी कहना नहीं चाहते। पर यह, इतना अवश्य कह सकते हैं, कि ई. सन् ६८९ वर्ष पहले नाग-राजगण प्रवल प्रतापसे बड़ा राज्य-शासन करते थे। इसके अनेक प्रमाण भी मिलते हैं। महाभारत के अनेक स्थान पर उदाहरण करने के लिये उदात्त हुए, तब नागवंशके अन्धराजने उन्हें रोहम-के लिये प्रायश्चित्त सेठा की थी।

रामगढ़ और मीरगुजाके नागवंशीय राजा लोग अपने सिक्के पर सर्वमूर्ति चित्रित करते थे। इसका कारण

यह था कि वे लोग नागवंशके थे। सुत रां पूर्व पुराणों के सम्मानार्थ नागमूर्ति चित्रित करते थे। सिंहलमें नागवंशीय लोगों को संस्था रहनी अधिक है, कि वह स्थान 'नागदीप' कहलाता है। भारतवर्ष के अन्धराज्य देशोंमें भी नागवंशकी पड़च थी, इसमें संदेह नहीं। आर्यो डमोनेकने लिखा है, कि उत्तर अमेरिकामें अक-जातीय नागवंशका आधिपत्य हुआ था। इस नागवंशने निदोयानों का राज्य भी जीत लिया था। (Cyclopaedia of India, Vol. II p. 1042)

नागवंश (सं. त्रि.) नागों के वंश या कुलका। नागवंश (सं. पु.) काश्मीरराज कल्याणपति के एक मन्त्रोका नाम। ये जाति के कायस्थ थे। (राजतरंग. ८। ६९) नागवंश—सिंहलके एक मन्दिरका नाम। गुप्तपुराणके कुछ समय बाद यह मन्दिर बसाया गया था। नागवंश (सं. पु.) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। यह तीर्थ सरस्वती नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। यहां पद्मराज वासुकि स्वयं बहुतसे नागों के साथ रहते हैं। इसीसे श्रद्धा और देवता यहां आ कर नागराज गणेशका यथाविधि पवित्र करते हैं। इस तीर्थमें सावका कुछ भी डर नहीं होता। (भारत सा. ६८ अ.) नागवंश—वास्तव्ययोग्य एक राजाका नाम। नागवंश—मन्दाकिन प्रदेशकी एक नदी। इसका दूसरा नाम 'ताहानिया' है।

मध्य प्रदेशमें गोगयाना पहाड़के तीन जलस्रोतोंके पांवलमें मिलनेसे यह नदी उत्पन्न हुई है। यहांसे यह दक्षिण-पूर्व की ओर घूम कर जयपुर होती हुई बिका शीशके समीप समुद्रमें गिरती है। इसकी लम्बाई १४० मील है। इसके किनारे जितने प्रधान नगर हैं, वे हुए हैं, उनसे नाम ये हैं—मिह्रापुर, विरदा, रायगढ़, पारमतीपुर, पालजगढ़ और बिकाकोन। इसकी प्रधान उपनदियाँ कान्हा और मन्दाकिन हैं।

नागवंश (सं. स्त्री.) नाग इव दोषा वन्ती। नागवंशी, पान।

नागवंशिका (सं. स्त्री.) नागवंशी, पानकी लता।

नागवंशी (सं. स्त्री.) नाग इव शीश वन्ती लता।

नागवंशी, पानकी लता, पान। देशमें देवे मित्र मित्र गुप्तों की होती है।

कंसके पश्चिमभागे नीनद्योति-सम्पन्न एक प्रकारका मोतो निकलता है।

नागसरम् (सं० स्त्री०) तोयभेद, एक तोयका नाम। नागसाय (सं० स्त्री०) नागेन क्षतिना समानः प्राकृतो संज्ञा यथ्य। क्षतिनापुर।

नागसिन्दूर (सं० स्त्री०) सोमक सम्भव-सिन्दूर।

नागसुगन्धा (सं० स्त्री०) नागस्यैव सुगोभनो गन्धः यस्याः। भुञ्जन्नाचोलता, भर्ष सुगन्धा, एव प्रकारकी राखा, राखमन।

नागमेन (सं० पुं०) १ एक बौद्धविग्रह। इनके चमत्त्वके विषयमें मतभेद देखा जाता है। किसीका मत है, कि नागालुंग और नागमेन दोनों एक ही व्यक्ति थे। किन्तु नागमेनकृत मिनिन्द प्रथ पद्धतिसे साम्यम होता है, कि नागमेन उत्तर भारतवासी एक बौद्ध थे। लेकिन कुमार-कीवल्लभ नागालुंगकी जोखनोमें नागालुंगको दक्षिण भारतवासी बतनाया है। फिर कहीं ऐसा भी लिखा है, कि नागमेन मिनिन्द (Mennier) के समसामयिक थे। मिनिन्द ईसा जन्मके १४० वर्ष पहले प्राविर्भूत हुए, किन्तु नागालुंग (सो वा दूसरी) प्रत्याप्तिमें उत्पन्न हुए थे। इनके विद्या दोनोंके चरित्रमें विभेद भी देखा जाता है। २ नवका विचार करनेमें दोनोंके चमत्त्वमें कोई गड़बड़ है, ऐसा नहीं कहा सकता। महावीरके जन्म केनके ३५८ वर्ष बाद प्राचार्य नागमेनने १८ वर्ष तक धर्मका प्रचार किया। मिनिन्द-प्रथमे राजा मिनिन्दके साथ नागमेनके धर्म-विषयक तर्कोंका सम्बन्ध है। उन्कोने भारतवर्षके शाक्यदेशमें सितिका-मन्दिरमें प्रात्य सिधा था।

२ मनुस्मृतिके ममसागयिक प्रायोगिक एक राजा-का नाम

नागमोतस (सं० पुं०) १ क्षमाप्राप्त विषय, च्युतविषय।

नागमान—मयूरके सज्जित एक पाम।

नागदकीता (सं० स्त्री०) नाग इव दकीता। १ नागदकी-वृक्ष। २ दन्तीवृक्ष।

नागदण्ड (सं० पुं०) नागस्य दन्तिना दण्डिव। नग्न नामक सम्प्रदायविशेष, मत्सी।

नागदन्तो (सं० स्त्री०) नागान् दन्तीति दन्त-वत् इव। चमत्कारिणी, वामिककीड़ा, वामिककीड़ा।

नागरी (फा० लि० वि०) चक्रस्मात्, पद्योपक, एका-एक।

नागदानी (फा० वि०) चक्रस्मात् पार्श्व द्वे, जो एका-एक टूट पड़ते हो।

नागदण्ड—१ मन्दपाटकी राजधानी। २ मन्दा वस्त्रमान नाम नागरी है। २ रीवापट्ट वस्त्र एक तीर्थ।

नागा—एक प्रकारका सन्ध्यालो। 'नङ्गा' शब्दका 'पय' 'चन्द्र' है। २ न सम्प्रदायका गैरसाधु कर्मो पक्ष धारण नहीं करते थे, एकदम नंग रहते थे, इसीसे इनका नाम 'नागा' पड़ा। उसी पक्षको राज्यमें नंगा धूमना मना है, इसलिये ये राजदण्डप्रभे एव कोपीन नागा कर निकलते हैं तथा चन्द्राव्य पक्ष भी धारण करते हैं। उक्त कोपीनको 'नागफर' कहते हैं। 'नागा पहने नग-कर्म'।

ये धर्मको जडाओंकी रखाकी तरह बट कर पगड़ी-के प्रकारमें लगे रहते हैं। अन्य सम्प्रदायके जिनने सन्ध्यालो हैं वे दो पक्षगुण पहनते हैं, जिनमेंसे एकका नाम धोर धोर दूसरेका नाम कोपीन है। नागोंकी एक नागफरों ही धोर धोर कोपीन दोनोंका काम करते हैं।

ये लोग धरौरीमें गिरमदो धोर भस्म पोतते हैं। ये पपने पास भस्मका एक गोत्रा रखते हैं जिसकी निच पूजा करते हैं। निचाके समथ भस्मका गोत्रा हाथमें ले कर सभी घर भीच ग्रहण करते हैं। सुनते हैं, कि रोष-मुद्राके विद्या धोर कीर्ति दूसरी निकटतर मुद्रा है गोत्रेमें ग्रहण नहीं करते।

नागा सन्ध्यालो स्वयं लिख नहीं बनते। जब नागा-दन्तमें किसीकी प्रविष्ट होना होता है, तब चन्द्राव्य सन्ध्यालो-का पयनम्बन कर इस-दन्तमें घां लाते हैं। २ न प्रधाकी शुरुपक्ष (दोधा शुरुका प्रात्यका परित्याग करके देव-पक्षका पयनम्बन कहते हैं। २ न समय इन्के निर्जन स्थान-में नंगी दो मास तक कठोर तपस्या करना पड़ती है। नागादण्डभुक्त करनेमें मन्त्रका बहुत पछ होता है।

इनकी चण्डता धोर वीरता प्रविष्ट है। पक्षेत्रजी राज्यके पक्षे से बड़ा उपद्रव भी करते थे। इनको चण्डता देख कर कबीरने इन्के तिरस्कार करते हुए कहा था,—

चादि बनी होती है। घरकी सच्चाई २०१२५ हाथ और चौड़ाई ८१० हाथ होती है।

इनका पहराब मोने भयवा काने रंगका होता है। घरमें ये लोग एक प्रकारका मोटा कपड़ा बुनते हैं और उसीका चंगरावा चादि बनवाते हैं। जो लोग योद्धा हैं, वे कागचीगनिर्मित सासवण की एक चादर-का व्यवहार करते हैं जिसे गलेमें लपेट कर कमर तक लटका लेते हैं।

पुरुषगण घोवनायसामे भो नागा प्रकारके अश्वदार पहनते हैं। बाहुमें गजदन्त चयवा काठका बना कुपा पदक धारण करते हैं। हड्डोको मासा और सास रंगके बेंतको तड़को यको इनके प्रधान अस्त्रधार हैं। ये घेरमें बेंतका कड़ा और कानमें पीतलको कनेडो पहनते हैं। शूशरदन्तसे भो एक प्रकारका लणभूषण बना लेते हैं।

स्त्रियां खोवा बांधती हैं। इनके अन्तर्द्वारादि विलकुल पुसपसे होती हैं। सुग्में गोदना गोदवाती हैं। कहते हैं, कि गोदना गोदवाए बिना नागा बालिकाको का विवाह नहीं होता।

लज्जा जिवे कहते हैं, नागा लोग यह जानते ही नहीं। जो लड़की घूबघूरत होती है अथवा जिसके साथ दगाका मन गड़ जाता है उसीको ये अपनी स्त्री बना लेते हैं।

नागा लोग कभी दूध नहीं पीते; गाय मेंसका जो पानन-पीपण करते हैं, यह पीतेबारी करनेके लिये नहीं, केवले बलिदान और मांसके लिये। ये लोग सब प्रकारके मांस खाते हैं, लेकिन हाथोका मांस विगेष पसन्द करते।

इनका धर्म विविध ज्ञान बहुत सामान्य है। इनका विश्वास है, कि जो इस जन्ममें अकार्य करता है, वह मरने पर पाशाप या कर नवत होता है और जो पसम करता, वह सात बार भूतगोनिर्मित लथ से कर पीछे मधुमक्खो होता है। जब सन लोचोंसे पाशाकी बात पूछो जाती है, तब वे कहते हैं कि पाशा यन्त्रमें रखी हुई है, पीछे बहामे जाई अनी गई मानूम नहीं।

मिकार और कविशाय हो इनको प्रधान उपजीविका

है। ये लोग बाघ, भालू, हरिण, हाथी आदि अश्वनी जन्तुओंका शिकार करते हैं। हाथीके शिकार करनेमें ये बड़े ही होमियार होते हैं। गह्रा बना कर उसमें बांसके नोकोसे खुँटे गाड़ते हैं और ऊपरसे कीरे सामान्य वस्तु टक देते हैं। हाथी उसे समतल सेव समझ कर ज्योंही उस पर पैर रखता है, त्योंही वह वंशविह हो कर वहां खड़ा रह जाता है। ये तीन तीन वर्षमें जङ्गलको काट कर वहां खेतो बारी करते हैं। इस सम्प्रदायके सभी घनिक नागा वाणिज्यादि करने लग गये हैं।

नागाप्य (सं० पु०) नाग एवं पाश्या यस्य। नागदेयर।

नागाहना (सं० स्त्री०) नागानां चण्डना। नागीकी स्त्री।

नागाचना (सं० स्त्री०) नागयष्टि।

नागाचन (सं० स्त्री०) १ वस्त्रिनी, हथिनी। नागस्यैव चचनं लक्षणवर्णत्वं यकाः। २ नागयष्टि।

नागाधिप (सं० पु०) नागानां अधिपः। १ नागीके अधिपति, घनस्त। २ हाथी और सर्पके अधिपति।

नागाधिपति (सं० पु०) नागानां अधिपतिः। नागाधिप, घनस्त।

नागानन (सं० पु०) नागस्यैव घनानं सुखं यस्य। गजानन, गधिश।

नागास्तक (सं० पु०) नागानां अस्तकः। १ गड़ड़। २ मयूर। ३ सिंह।

नागापहाड़—बङ्गाल और सासामका एक जिला। यह अक्षा० २४° ४२' और २६° ४८' उ० तथा देशा० ८६° ०' और ८८° ५०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरि- माप १०० वर्गमील है। इसके उत्तरमें नयगङ्गा और गिबसगिर; पश्चिममें कङ्काड़ पहाड़; दक्षिणमें मचिपुर राज्य और पूर्वमें दिणो और तिजूर नदियां हैं।

अहोम राजाके समय यहाँ नागाजातिने बहुत उत्थम अवस्था में तथा सर्वोर्ध्वे इससे कुछ पंग कीत भो लिये थे। १८३२ ई०में पहले पहल कप्तान जेनकिंग और पैम्बरटन इस देशमें पाये और उसीमें नागापोंके साथ खड़ाई हुई थी। युद्धमें बहुतोंकी जानें गई थीं। अन्तमें नागापोंकी ही हार हुई। इसमें १ गहर और २८२ ग्राम समते हैं। लोकसंख्या प्रायः १०२४०२ है। यहाँ नागापोंकी संख्या सबसे अधिक है, इस कारण जिलेका

नाजिवंशोना—रोहितखण्डके एक शासनकर्ता। अपनी मरुभूमिके शासनकालमें ये रोहितखण्ड था कर पहले सामान्य सेनानोके पद पर नियुक्त हुए। धीरे धीरे सैनिक विभागमें उच्च पद पाते हुए अन्तमें राजा बन गये। उस समय इनकी उपाधि 'खो' थी। चौड़े असोम माहल और पराक्रमका परिचय दे कर इन्होंने १७५० ई०में 'उद्योना' की उपाधि पाई।

१०११ ई०में महाराष्ट्रो और पद्मदगाध अवन्तीके साथ जो लड़ाई किङ्गो धी उसमें ये भी मौजूद थे। युद्धके बाद ये पुनः अमीर सल्तनमराके पद पर नियुक्त हुए। इस समय इनके साथ दिल्लीनगरका शासनभार और राजपरिवारका तत्त्वावधान-भार सौंपा गया। इन्होंने लजोशबाद नामका एक नगर बसाया और वहाँ १७७० ई०में इनकी कब्र हुई।

नाजिस—दाक्षिणात्यकी भूतयोनियोग्य। वह कि लोगोका विश्वास है, कि यदि कोई मनुष्य हमेशा रोये, अधिक बड़ बड़ाये, शरीरको इधर उधर हिलावे, लम्बे धागोंमें घुमिच्छा प्रकट करे, तो जानना चाहिए कि उसके शरीरमें भूतने पाश्र्व लिग है। उसका कहना है, कि सभी मनुष्योंको भूत लग सकता है, लेकिन मुख्यकी अपेक्षा छोटे बच्चोंको और छोटे बच्चोंकी अपेक्षा बड़ोंकी अधिकता से सम्भावना रहती है। विशेषतः बड़ोंकी गर्भावस्थामें और बालक बालिकाओंकी लम्बे से कर बारह वर्ष तककी उमरमें भूतोंका अधिक लग रहता है। प्रेताणा प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है, एक घरभूत और दूसरा बाहरी भूत। यदि घरमें सभी इच्छाएँ पूर्ण होनेके पहले किसीकी मृत्यु हो जाय, तो वह घरभूत होता है। इस प्रकारका भूत कभी कभी अपना नाम 'सम्बन्ध' बतलाता है, अर्थात् परिवारके साथ उसका सम्बन्ध है। यह भूत बिना कारणके किसीको कुछ नहीं कहता, लेकिन अपने परिवारके लोगोंके प्रति अत्याचार किया करता है।

बाहरके भूतोंमें मिश्रलिखित भूत प्रसिद्ध हैं। यथा—परायुग, पसरम, मद्रासपुत्र, मद्रासापस, चयया जविस, सुडेन, सन्दुकाई, दक्षिण, हाइस, यचिन्, सायव, मङ्गोया, मस्कोया, मुज, नाजिस इत्यादि।

यदि किसी सुसज्जनको उसका मनोरथ पूर्ण हुए बिना मृत्यु हो जाय, तो उसकी आत्मा भूतयोनिमें जन्म ले कर 'नाजिस' नामसे प्रसिद्ध होती है। नाजिस एक बार जब किसीके हृदयमें अधिकार कर लेता है, तब उसे भगवाना कठिन हो जाता है। केवल सुसज्जन भीभा रचे भगः सकती हैं।

नालुक (फा० वि०) १ सुकुमार, कीमल। २ पतला, महीन, बारीक। ३ सुख, गूद। ४ छोटी समान-धानोसे जो जिसके टूटनेका डर हो, छोड़े ही पाघातसे नट हो जानियामा। ५ जिसमें हानि या अनिष्टकी आशङ्का हो।

नालुकदिमाग (फा० वि०) १ जो रुचिके प्रतिश्रुत छोटी-सी बात भी न सह सके, जो लड़ा भी बात पर नाक भी मिकोड़े। २ तुलकमिजाज, विद्विद्ध।

नालुकवदन (फा० वि०) १ कीमल और सुकुमार शरीरका। २ डोरिएसी तरहका एक महीन कपड़ा। ३ एक प्रकारका गुनसाता।

नालुकमिजाज (हि० वि०) नालुकदिमाग देखी। भाजो (फा० श्लो०) १ नाज करनेवाली स्त्री, उसकावाली स्त्री। २ लाहली प्यारी स्त्री।

नाट (सं० पु०) नटभावे चञ्चल। १ नृत्य, नाच। २ देग-विशेष, नाट, एक देगका नाम जो पहले कर्णाटकके पास था। ३ रागविशेष, एक 'रागका नाम। इसे कोई मिश्ररागका और कोई दीपकरागका पुत्र मानते हैं। इस रसमें वीररस गाया जाता है। (वि०) ४ तद्देग-वासी, उस देगका रहनेवाला।

नाटक (सं० श्लो०) नट-स्तु, नृत्त। १ नर्तक, नाच पर अभिनय करनेवाला। (श्लो०) २ कामाख्या-पर्वतके निष्ठस्थित पर्वतभेद, एक पहाड़ जो कामाख्या पर्वतके समीप अवस्थित है। इस पर्वत पर महादेव और पार्वती रहते हैं। ३ रङ्गनाम्ने नटीकी प्राकृति, हावभाव, वेग और बलन आदि द्वारा घटनाओंका प्रदर्शन, वह दृश्य जिसमें स्वांगके द्वारा चरित्र दिखाए जाय। ३ गद्य पद्य और प्राकृत भाषादिमय पद्यविशेष, वह पद्य या काव्य जिसमें स्वांगके द्वारा दिखाया जानेवाला चरित्र हो, दम्भकाय, अभिनयपद्य। पर्याय—रूपक, महारूपक।

नाजिबउद्दीन—रोहिलखण्डके एक शासनकर्त्ता। प्रथी महम्मदके शासनकालमें ये रोहिलखण्ड था कर पहले मामान्य सेनानोके पद पर नियुक्त हुए। धीरे धीरे मैनिज विभागमें उस पद पाते हुए अन्तमें राजा बन गये। उस समय इनकी उपाधि 'खो' थी। पीछे प्रथम साइम खोर पराक्रमका परिचय दे कर इन्होंने १०५० ई०में 'उद्दीन' की उपाधि पाई।

१०६१ ई०में महाराष्ट्र के खोर अहमदशाह भवटनोके साथ जो लड़ाई हुई थी उसमें ये भी मौजूद थे। युद्धके बाद वे पुनः खमौर उल-खमौरके पद पर नियुक्त हुए। इस समय इनके साथ दिल्लीनगरका शासनभार खोर राजपरिवारका तत्त्वावधान-भार सौंपा गया। इन्होंने मजोराबाद नामका एक नगर बसाया खोर वहाँ १०७० ई०में इनकी कब्र हुई।

नाजिस्—दाक्षिणात्यकी भूतयोनिविशेष। यहाँके लोगोका विश्वास है, कि यदि कोई मनुष्य हमेशा रोये, अधिक बड़ बड़ावे, शरीरको इधर उधर हिलावे, छुलावे धानमें पनिल्ला प्रकट करे, तो जानना चाहिये कि उसके शरीरमें भूतने पायव निवास है। उनका कहना है, कि सभी मनुष्यों की भूत लग सकता है, लेकिन प्रत्यक्ष की अपेक्षा छोटे बच्चों की खोर छोटे बच्चों की अपेक्षा बड़ों की अधिक को सम्भावना रहती है। विशेषतः बच्चों की गर्भावस्थामें खोर बालक बालिकाओं को लक्ष्मि ले कर बारह वर्ष तककी उमरमें भूतोंका अधिक ल रहता है। प्रेतात्मा प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है, एक घरभूत खोर दूसरा बाहरी भूत। यदि घरमें सभी दृष्ट्या पूर्ण होनेके पहले किसीको मृत्यु हो जाय, तो वह घरभूत होता है। इस प्रकारका भूत कभी कभी अपना नाम 'सम्पन्ध' बतलाता है, पर्याप्त परिवारके साथ उसका सम्पन्ध है। यह भूत बिना कारणके किसीकी कुछ नहीं कहता, लेकिन अपने परिवारके लोगोंके प्रति बलाघार किया करता है।

बाहरके भूतमें निम्नलिखित भूत प्रसिद्ध हैं। यथा—
पलायुय, पसरस, प्रह्मपुरुष, ब्रह्मराक्षस, अथवा अविष, पुङ्गेन, अन्दकाई, दक्षिण, हाङ्गन, यचिन, सायन, मङ्गोपा, मन्तोपा, मुसा, नाजिस् इत्यादि।

यदि किसी मुसलमानकी उसका मनोरथ पूर्ण हुए बिना मृत्यु हो जाय, तो उसकी आत्मा भूतयोनिमें लम्ब से कर 'नाजिस्' नामसे प्रसिद्ध होती है। नाजिस् एक बार लम्ब किसीके हृदयमें अधिकार कर नेता है। तब उसे भगवान कठिन हो जाता है। केवल मुसलमान कोभा इसे भग्न सकते हैं।

नालुख (फा० वि०) १ सुकुमार, कोमल। २ पतला, महीन, शरीरक। ३ सुष्म, गूढ़। ४ थोड़ी चमक धानोसे भी जिनके टूटनेका डर हो, थोड़ी हो पाघातसे नट हो जानेवाला। ५ जिनमें जानि या पनितकी पागडा हो।

नालुकदिमाग (फा० वि०) १ जो हृदिके प्रतिकूल थोड़ी-थोड़ी बात भी न सह सके, जो जरा भी बात पर नाक भीँसि कोड़े। २ तुलकमिजाज, चिढ़चिढ़ा।

नालुकवदन (फा० वि०) १ कोमल खोर सुकुमार शरीर-का। २ खोरिखी तरहका एक महीन कपड़ा। ३ एक प्रकारका गुलसावा।

नालुकमिजाज (हि० वि०) नालुकदिमाग देखो।

नाजो (फा० खो०) १ नाज करनेवाली स्त्री, उसकवासी स्त्री। २ नाहूली प्यारी स्त्री।

नाट (घं० पु०) नटमाये प्रज्ञा। १ नृत्य, नाच। २ देग-विशेष, नाट, एक देगका नाम जो पहने कपाटकके पास था। ३ रागविशेष, एक 'रागका नाम। इसे कोई शिष्यागका खोर कोई दीपज्वालाका पुत्र मानते हैं। इन रसमें वीररस गाथा जाता है। (वि०) ४ तद्देग-वासी, उस देगका रहनेवाला।

नाटक (घं० वि०) नट-श्रुत्यम्। १ नर्तक, नाट्य पर अभिनय करनेवाला। (स्त्री०) २ कामाख्या-पर्वतके निकटस्थित पर्वतमेद, एक पहाड़ जो कामाख्या पर्वतके समीप अवस्थित है। इस पर्वत पर महादेव खोर पार्वती रहते हैं। ३ रङ्गशालामें गटोंकी प्राकृति, हावभाव, वेग-वीर अथवा पादि द्वारा घटनाओंका प्रदर्शन, यद्यपि जिनमें प्रांगिके द्वारा चरित्र टिप्पण जाय। ४ गद्य, पद्य खोर प्राकृत भाषादिभय सम्प्रविशेष, वह गद्य या काव्य जिनमें प्रांगिके द्वारा दिखाया जानेवाला चरित्र हो, हमराज्य-अभिनयपत्र। पर्याय—रूपक, महाकव्य।

यहने निम्न लुके हैं, कि दृश्यकाव्यके चत्वारिंशत् नाटक :
 है । यह अभिनय है पर्यात् अभिनय करके सामाजिक-
 यगं को दिखाना होता है । एक नट रामका रूप धारण
 करके रामवृत्तान्तका यगं करने लगा । उस समय
 नाट्यदर्शक उसको राम नमस्कृत कर चक्षुस्त्राणुमार हर्ष
 और शोकादि प्रकट करने लगे । नट अन्य रूप धारण
 करके अभिनय करता है, इस कारण उसका नाम रूपक
 रखा गया है । चक्षुस्त्राणु रूप अनुकरणका नाम अभिनय
 है । यह अभिनय चार प्रकारका है—पात्रिक, वाचिक,
 आहार्य और सात्विक । जो अभिनय पात्रको चेटासे
 किया जाता है, उसे पात्रिक, वचनोंसे जो किया जाता
 है, उसे वाचिक, भेष बना कर जो किया जाता है उसे
 आहार्य तथा भावोंके उद्भेदके सम्बन्धे आदि द्वारा जो
 अभिनय होता है, उसे सात्विक कहते हैं ।

यह अभिनय दृश्यकाव्य दो प्रकारका है—रूपक और
 उपरूपक । रूपकके दस भेद हैं—रूपक, नाटक, प्रकरण,
 भाष्य, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहाय्य, चक्षुषी
 और प्रहसन । उपरूपकके पठारह भेद हैं—नाटिका,
 प्रोटक, गोष्ठो, सहक, नाट्यासक, प्रस्थान, सत्ताप्य,
 काव्य, प्रेक्ष्य, रासक, संलापक, योगदित, गम्यक,
 विनासिका, दुर्महिका, प्रकरयिका, हलीया और
 भाषिका ।

जनसाधारण अभिनय काव्यमात्रको ही नाटक कहते
 हैं, लेकिन यद्यप्यं नष्ट नहीं है । नाटक दृश्यकाव्यके
 चत्वारिंशत् है । पर हाँ, नाटक अभिनय काव्यमें सर्वप्रधान
 है । उपरमें रूपक और उपरूपकके जो सब नाम
 बतलाये हैं उनमेंसे प्रत्येकका अलग भिन्न भिन्न है,
 लेकिन सभी भेदोंसे किये जाते हैं । नाटकके जितनेसे
 सत्त्व बतलाये गये हैं, उनमेंसे प्रायः चनेक अलग
 अन्यान्य रूपक और उपरूपकमें रहते हैं तथा उनके
 पलावा और भी जितने विशेष सत्त्व देखे जाते हैं ।

यथाक्रमसे दृश्यकाव्यके कुछ सत्त्व नीचे दिये जाते
 हैं । नाटक-सत्त्व—

“नाटकं नगद्वयं दृश्यं वचनविषयविविधम् ।

विशेषार्थवि श्रवणं युक्तं शान्तिवृत्तिभिः ॥

सङ्घः सङ्घमुख्यविधानादभिप्रेत्यम् ।

वर्वादिना दृश्यपरास्तत्राद्यः परिधीर्निर्वाणः ।

प्रदत्तार्थो राजर्षिर्भीरोदात्तः प्रतापवान् ।

दिश्योऽय दिग्गदिश्वो वा पुणशान्तरको मरुः ॥

एक एव भवेद्गोष्ठ्यगारो वीर एव वा ।

अंगमन्ये रवाः सर्वे चार्थं निर्वहेत्पुनश्च ॥

नरवारः वच वा मुखसः कार्यं स्यात्तत्पुनः ।

गोपुच्छाप्रवृत्तमप्युत्तरं तस्य कीर्ति तम् ॥”

(चाहिलद० ६।२०० अ०)

किसी एक स्थानवृत्त पर्यात् प्रसिद्धवृत्तान्तका चक्षु-
 मन्वय करके नाटक निम्न आदि पर्यात् रामायण,
 महाभारत वा कोई पुराण और वृहत्कथा आदि जितने
 ग्रन्थ चिरमान्य हैं उन सब ग्रन्थोंमें एक वृत्तान्त ले कर
 नाटक तैयार करना चाहिये । स्वकीयकल्पित वृत्तान्त
 होनेसे वह नाटक नहीं कहला सकता । नाटक पक्ष-
 मन्वियुक्त विलास, नाना प्रकारको सम्पत्ति, विभूति,
 सुख-दुःख तथा नाना प्रकारके रसोंमें युक्त होना
 चाहिये । उसमें पाँचसे ले कर दस तक पद होने
 चाहिये । नाटकका नायक भीरोदात्त तथा प्रख्यात-
 वंशका कोई प्रतापी पुरुष या राजर्षि पर्यात् दुष्कृतक
 जैसा नृपति वा रामचन्द्रके जैसे अनौकिक समता-
 गाती राजा अथवा श्रीलङ्केके जैसा महापुरुष होना
 चाहिये ।

नाटकके प्रधान या चक्षु रसगुह्यार और वीर हैं ।
 गोप रस गोथ रूपमें पाते हैं । शान्ति, कष्ट आदि निम्न
 रूपकमें प्रधान हो वह नाटक नहीं कहला सकता ।
 मन्वियुक्तमें कोई विस्मयजनक व्यापार होना चाहिये ।
 उपन्यासमें मन्त्र ही दिग्गया जाना चाहिये । विद्योगान्त
 नाटक संस्कृत सन्दर्भ-साधक विरह है । चार या
 पाँच मनुष्योंको प्रधान स्थिति कार्यमें रहना चाहिये ।
 पक्ष गोपुच्छे जैवे होने चाहिये पर्यात् गोपुच्छ जिस
 प्रकार पक्षमें मोटा-पौर पोछे पतना होता गया है, उसी
 प्रकार सभी पक्षोंकी बड़ा छोटा बनना चाहिये । ५से ले
 कर १० तकके पदमें काम चल सकता है । प्रायः सभी
 नाटकमें ० पद देखनेमें पाते हैं । अभिप्रायगुह्यार और
 उत्तररामचरित आदि प्राचीन सभी नाट्य मोत नहीं
 समान हैं । इन सब पक्षोंमें गमाई करना होता है ।

पहले लिख चुके हैं, कि दृष्टकाव्यके चत्वार्षिक नाटक है। यह अभिनेय है पर्याप्त अभिनय करके सामाजिक-युगकी दिखाना होता है। एक नट रामका रूप धारण करके रामहत्तानाका वर्णन करने लगा। उस समय नाट्यदर्शक उसीको राम समझ कर अवलम्बित रूप धारण करके अभिनय करता है, इस कारण उसका नाम रूपक रखा गया है। पद्यस्यानुसृत्य अनुकरणका नाम अभिनय है। यह अभिनय चार प्रकारका है—प्राक्रिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक। जो अभिनय पशुको चेष्टासे किया जाता है, उसे प्राक्रिक, वचनोंसे जो किया जाता है, उसे वाचिक, भेष बना कर जो किया जाता है उसे आहार्य तथा भावोंके उद्वेगसे कम्पलेद आदि द्वारा जो अभिनय होता है, उसे सात्विक कहते हैं।

यह अभिनेय दृष्टकाव्य दो प्रकारका है—रूपक और उपरूपक। रूपकके दश भेद हैं—रूपक, नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईकाग्र्य, पद्यवीथी और प्रहसन। उपरूपकके पठारह भेद हैं—नाटिका, छोटक, गोट्टी, मटक, नाट्यासक, प्रखान, सत्ताय, काव्य, प्रेक्षण, रासक, सभापक, योगदित, गिम्पक, विनासिका, दुर्मसिका, प्रकरणिका, हसीया और भाषिका।

जनसाधारण अभिनेय काव्यमात्रकी ही नाटक कहते हैं, लेकिन पर्याप्त वह नहीं है। नाटक दृष्टकाव्यके चत्वार्षिक है। पर हाँ, नाटक अभिनेय काव्यमें सर्वप्रधान है। ऊपरमें रूपक और उपरूपकके जो सब नाम बतलाये हैं उनमेंसे प्रत्येकका लक्षण भिन्न भिन्न है, लेकिन सभी नटसे किये जाते हैं। नाटकके जितनेमें लक्षण बतलाए गये हैं, उनमेंसे प्रायः अनेक लक्षण पद्याव्य रूपक और उपरूपकमें रहते हैं तथा उनके पद्यावा और भी जितने विशेष लक्षण देने जाते हैं।

यथाक्रमसे दृष्टकाव्यके कुछ लक्षण नीचे दिये जाते हैं। नाटक-लक्षण—

“नाटकं वृत्तान्तस्य हृदयं पञ्चविंशत्यङ्गम्।

त्रिगुणवर्णनं पुनरुक्तं नायकचरित्रम्॥

उपश्रवणप्रवृत्तिनामरसविरसम्॥

पञ्चादिका दशपरास्तत्राङ्काः पश्चितीति॥

प्रदयातव्यो राजर्षिर्भरोदातः प्रतारका॥

दिग्गोडय दिग्वादिभ्यो वा गुणवान्नापको मठः॥

एक एव भवेद्गो गृध्रादौ वीर एव वा।

अङ्गमन्ये रक्षाः सर्वे कावेर् विह्वलेद्युग्मम्॥

नत्वारः पञ्च ना मुखवाः कार्यं वापृष्टवत्याः।

गोपृच्छामसमप्रत्यु बन्धनं तस्य कीर्ति तम्॥”

(पादित्द० ६।२०० अ०)

किसी एक व्यासहस्त पर्याप्त प्रसिद्धतन्त्रनाम अभिनयन करके नाटक लिखना चाहिए पर्याप्त रामायण, महाभारत वा कोई पुराण और उद्धृतया आदि जितने ग्रन्थ चिरमान्य हैं उन सब ग्रन्थोंसे एक हस्तान्त ले कर नाटक तैयार करना चाहिये। श्रुतपोसकस्थित हस्तान्त हीमेंसे वह नाटक नहीं कहना सकता। नाटक पद्य-मन्थियुक्त विन्यास, माना प्रकारको सम्पत्ति, विभूति, सुख दुःख तथा माना प्रकारको रसोंसे युक्त होना चाहिये। उसमें पाँचसे ले कर दस तक पद्य होने चाहिये। नाटकका नायक धीरोदात्त तथा प्रख्यात-वंशका कोई प्रतापी पुरुष या राजर्षि पर्याप्त दुष्टमात्रके जैसा वृत्ति वा रामचन्द्रके जैसा पत्नीसक समता-मानो राजा अथवा योद्धाके जैसा महापुरुष होना चाहिये।

नाटकके प्रधान वा पद्मो रमयुद्धार और वीर हैं। श्रेय रस गोण रूपमें पाते हैं। मान्ति, कष्टवा आदि त्रिष रूपतमें प्रधान हैं वह नाटक नहीं कहना सकता। मन्थिस्थलमें कीड़े विस्मयजनक व्यापार होना चाहिये। उपमंकारमें मन्त्रन की दिशाया जाना चाहिये। विद्योगान्ता नाटक संस्तृत पनद्वार-व्यापारके विद्वद् हैं। चार वा पञ्च मनुष्योंकी प्रधान व्यक्तिसे कार्यमें रहना चाहिये। पद्य गोपृच्छा जैसे होने चाहिये पर्याप्त गोपृच्छा त्रिष प्रकार पद्यसे मोटा और पोछे पतना होता गया है, उसी प्रकार सभी पद्योंकी बड़ा छोटा बनाना चाहिये। ऐसे ले कर १० तकके पद्यसे काम चल सकता है। प्रायः सभी नाटकमें ० पद्य देनेमें पाते हैं। पद्मिज्ञानप्रकुलन और उत्तररामचरित आदि प्राचीन सभी नाटक मात पद्योंमें समाप्त हैं। इन सब पद्योंमें गर्भाङ्क करना होता है।

नटविशेषके साथ कथोपकथनमें नाटकप्रवेश-कवि-घोर अभिनय नाटकका उत्प्रेषण करता है तथा प्रसङ्गक्रमसे नाटकीय इतिवृत्त अवतीर्ण कर चुकनेके बाद अपने सह-चरोंके साथ चन्द्रगुप्तसे चला जाता है। यथा नाटक शुरू होता है। इस प्रसङ्गका नाम प्रस्तावना है अर्थात् ये लोग मधुर पानाप करते हुए जनताके समक्ष प्रजन हस्तान्त सुना कर पड़े जाते हैं, इसीको प्रस्तावना कहते हैं। ये लोग परस्परमें जो पानाप करते हैं, वह मधुर होना चाहिये।

पार्श्ववर्ती पटुचरका नाम पारिपात्रिक है। यह प्रस्तावना पक्ष प्रकारको है,—उद्घात्यक, कथोपात, प्रयोगातिशय, प्रवर्तक घोर अवलम्बित। इनमेंसे जो प्रगताय है अर्थात् जिसका अर्थ सम्बन्ध रूपसे समझमें न आवे, उस अर्थको अच्छी तरह जाननेके लिये अन्य पद द्वारा जिस स्थानमें नियोजित किया जाता है उसका नाम उद्घात्यक प्रस्तावना है। अर्थात् एक ऐसे वाक्यको रचना करने की ओर जो जिसका पद प्रगताय है अर्थात् प्रजन विषयके साथ अर्थ को छोड़ सम्बन्ध न हो। इस प्रगताय पदको ले कर प्रकृत विषयका अर्थ जिससे अभिप्राय मासूम हो जाय ऐसे वाक्यका विस्तार कर सूत्रधारकी चला जाना चाहिए, यह पादप्रवेश अर्थात् प्रकृत विषयका पारम्भ होगा, ऐसी प्रस्तावनाको उद्घात्यक कहते हैं।

उदाहरण—सुद्राशय नाटकको प्रस्तावनामें लिखा है—

“कुरुपः ॥ केतुपद” सन्तुष्टमश्नतिदानीम्।

अभिप्रेतमिच्छतिदानीम् ॥

अनर्थक नेपथ्ये—“आः क एष मयि जीवति सति चन्द्रगुप्त-मभिप्रेतमिच्छतिदानीम्” (सूत्रार०)

पतिकूर केतुपद सम्पूर्णमण्डलचन्द्रको वनपूर्वक अभिप्रेत करने की इच्छा करता है। यहाँ पर केतुपद चन्द्रमाको प्राप्त करता है, यही समझा जाता है। किन्तु ठगू सूत्रधारको यह बात सुन कर आकाशमूर्ति उठा—“हरे पापवशसे भ्रमि जो राजा चन्द्रगुप्तको वनपूर्वक अभिप्रेत करनेकी कोश इच्छा कर सकता है? यहाँ पर केतुपदका अर्थ कुरुपद को दूसरा अर्थ मनवकेतु है। केतुपद अर्थात् कूर है, मनवकेतु तो बेला की है।

पूर्वमाका चन्द्र हो पद होता है, राजा चन्द्रगुप्त भी परिपूर्ण-मण्डल है। सूत्रधारके इस अवोधितीय पदको ले कर ही नाटकका प्रस्तावित विषय शुरू हुआ घोर अन्त्य पद द्वारा इस पदके अर्थकी भी सुस्पष्टि हुई अर्थात् मनवकेतुको सहायतामें क्या राजगते परिपूर्ण-मण्डल चन्द्रगुप्तको वनपूर्वक पराभव करनेकी इच्छा की है, यह क्या सुननेके साथ ही सूत्रधार चला गया। यह नाटकीय वस्तुका पारम्भ हुआ। उस समय सभी नट अभिनय करने लगते हैं। अगत्या प्रस्तावनाके अन्त्य तो लिखे गये, किन्तु विस्तारके भयसे यहाँ उनका उदाहरण नहीं दिया गया। जरा गौर कर विचारनेसे ही वह आपसे आप स्थिर हो जायगा।

कथोद्घात प्रस्तावना—

“सूत्रार ररर बाधं वा उवादावापमस्य वा।

मथैव वाप्रवेशादेव कथोद्घातः स इत्येव ॥”

(साहित्यर०)

नट सूत्रधारके यथ वा वाक्यविशेषका अवलम्बन कर यदि पाद प्रवेश करे अर्थात् सूत्रधार जिस वाक्यका प्रयोग करेगा, उसी वाक्य वा उसी वाक्यांशका अवलम्बन कर नाटकीय विषय पारम्भ हो, तो कथोद्घातप्रस्तावना होगी।

अत्रान्तेमें सूत्रधारका वाक्य घोर वीचीरारमें वाक्यार्थ ग्रहण कर पादका प्रवेश है।

प्रयोगातिशय—

“अति प्रयोग एवमित्यु प्रयोगात्यः प्रयुज्यते।

तेन पादप्रवेशादेव प्रयोगातिशयस्य ॥”

(साहित्यर० ६ परि०)

यदि किसी एक प्रयोगमें दूसरा प्रयोग हो जाय घोर उस प्रयोगका लक्ष्य करके यदि पाद प्रवेश करे, तो प्रयोगातिशय-प्रस्तावना होगी है।

प्रवर्तक—

“काले प्रयुक्तमित्य सूत्रार ररर वधेदेव।

सदाप्रवेशादेव प्रवेशात्तर वरतेत्य ॥”

(साहित्यर० ६ परि०)

उपस्थित कालका प्राप्य से तब सूत्रधार वचन करेगा घोर उस वचनका अवलम्बन करके पादके प्रवेश

पद—जहाँ पर नाटकीय इतिवृत्त के एक अंश का श्रेय होता हो, यहाँ परिच्छेदकी कल्पना करने चाहिए। उसी परिच्छेदका नाम पद है। एक अद्वैत के श्रेय होने पर सभी नट रङ्गभूमि में चले जाते हैं। पोछे नये नये नट आ कर अभिनयका भारभ करने हैं। इस पद में नायक के चरित्रका वर्णन रसभावों द्वारा उल्लेख करने करना चाहिए। जिन सब पदोंका प्रयोग करना होगा, उसका पर्यं साफ साफ समझमें आ जाना चाहिए। छोटे छोटे गद्ययुक्त वाक्यका प्रयोग करना चाहिए। अत्यन्त समाप्त-बहुल वाक्य और अधिक पद्य-प्रयोग दोषावह है।

नाटककी प्रस्तावना करनेमें पहले पूर्व-रङ्ग, पोछे समाप्ता अर्थात् समाप्ति लोगोकी प्रशंसा, बाद कवि-संज्ञा अर्थात् नाटकका कथन और प्रस्तावना करने चाहिए। इसी प्रस्तावना द्वारा पात्रप्रवेश अर्थात् प्रकृत दृश्य नाटकका आरम्भ होता है। रङ्गालयकी विप्रगान्ति के लिए जो क्रिया अभिनय के पहले की जाती है, उसे पूर्व-रङ्ग कहते हैं। इस पूर्व-रङ्गका नाम मङ्गलाचरण है। इस पूर्व-रङ्ग के प्रत्याहारादि अर्थात् ध्यान धारणा आदि अनेक पङ्क्तियाँ हैं। ये सब पङ्क्तियाँ पर भी रङ्गालयमें विप्र-गान्तिके लिए शब्दीपाठ अर्थात् देव, द्विज, गृध्र आदिका आनन्दजनक स्तव करना चाहिए। जिसमें देवता, प्राण्य और गृवादिको उपासनाध्यानादिसुति रहती है, उसका नाम नान्दो है। नान्दो, 'नन्द्यति' इति व्युत्पत्ति द्वारा नान्दो शब्द बना है। आनन्द देनेवाली सुतिका नाम नान्दो है। यह नान्दो मात्रालय शब्द, चन्द्र आदिकी सूचक होती चाहिए। इस नान्दोमें बारह वा प्रचारक पद होने चाहिए। सुप, अथवा तिङ्ग विभक्त्युक्त पदकी पद कहते हैं अर्थात् पहले एक ऐसे वाक्यकी रचना करने चाहिए जिसमें देवताओंकी सुति और राजाओं-के मङ्गल वर्णित रहे और जिसमें ८ वा १२ पद हों। जहाँ पर नान्दो ८ पदोंमें समाप्त होती है, वहाँ वह अष्ट-पदा और जहाँ १२ पदोंमें समाप्त होती है, वहाँ द्वादश-पदा कहलाती है।

सुत्रधार रङ्गभूमिमें उपस्थित हो कर अभिनेय अभि-नय कार्यकी विप्रपरिहमनातिके लिए जो मङ्गलाचरण

करता है, उसीका नाम नान्दो है। स्तुतिदि द्वारा देव-ताओंकी आनन्दित अर्थात् प्रसन्न करता है। इसीसे हम मङ्गलाचरणका नाम नान्दो रखा गया है। नाटकादि ग्रन्थके आरम्भमें जो एक वा एकसे अधिक श्लोक रहते हैं, वह नाटककी नान्दो नहीं है।

नाट्यशास्त्रमें नान्दोके जो सब लक्षण वृत्तान्त दिए हैं, वे सब श्लोक उन सब लक्षणोंके नहीं हैं। यथायं वे सब श्लोक ग्रन्थकारके मङ्गलाचरण हैं। 'नान्दो' सुत्र-धार' यही वे ग्रन्थका आरम्भ होता है। ग्रन्थाश्रममें मङ्गलाचरणका होना आवश्यक है, इस कारण कवि लोग स्वप्रणीत नाटकके आरम्भमें मङ्गलाचरण लिख देते हैं। 'नान्दो' नान्दोके बाद अर्थात् अभिनय आरम्भ करनेके पहले देवता प्रणामादिकुल नान्दो कीर्तन करके ग्रन्थाश्रम करना होता है। यह नान्दो नाटकका पद नहीं है। अभिनेतृ-वर्गके अधिशारी सुत्रधारका काम करते हैं। यह काम समाप्त करके वे कहते हैं 'प्रशमतिविस्तरेण' अधिक कहनेकी ज़रूरत नहीं अर्थात् नान्दोका अधिक आडम्बर करने समय नष्ट करना निःप्रयोजन है।

नट पहले पूर्व-रङ्गका श्रेय कर चला जाता है। बाद सुत्रधार पाता है। इसे स्थापक भी कहते हैं। यह भी नाटकीय मधु, बोज, सुत्र और पात्र आदिको प्रवेश करा कर चला जाता है, अर्थात् रङ्गमञ्च पर आ कर उसे पहले काव्याय-सूचक मधुर श्लोक द्वारा रङ्ग प्रसादित करना चाहिए। बाद जो नाटक खेला जायगा, उसका अंश और प्रशंसा आदि कर देने चाहिए। यथा—

“मोक्षो निजुगः कविः परित्यक्तो गुणमार्गिणः।

श्लोकं हारि य वरसरावचरितं नाट्ये य दद्या यमम्॥”

(रत्नावली)

रत्नावलीमें लिखा है, कि “कवि श्रीशर्मा प्रति-सुदृष्ट थे, यह सभी गुणपात्रिणी थे, प्रियोत्तम पर वक्ता राज-चरित पालन मनोहारी थे और हम लोग भी नाट्यकार्यमें दक्ष हैं।” हम वाक्यसे सर्वोत्तम गुण गाया गया।

उसके बाद नट, गटी, विद्वत्, परिपात्रिक या सुत्रधार ये लोग परस्पर जो कथोपकथन करते हैं, उसमें प्रकृत वृत्तान्त जाना जाता है। इसीकी प्रस्तावना कहते हैं। सुत्रधार रङ्गभूमिमें प्रविष्ट हो कर नान्दोके बाद

मटविरोपके साथ कथोपकथनमें नाटकप्रवेशा कावि घोर
पमिनेय नाटकका उल्लेख करता है तथा प्रसङ्गक्रममें
नाटकीय इतिवृत्त पञ्चमीर्ण कर चुकनेके बाद अपने मङ्ग-
चरित्रे साथ रङ्गभूमिमें घना जाता है । यथात् नाटक
शुरू होता है । इस चरणका नाम प्रस्तावना है अर्थात्
ये लोग मधुर पानाय करते हुए जनताके सामने प्रकृत
वृत्तान्त सुना कर पत्रे जाते हैं, इसीको प्रस्तावना कहते
हैं । ये लोग परस्परमें जो पानाय करते हैं, वह मधुर
होना चाहिये ।

पार्श्ववर्त्ता पञ्चमरका नाम पारिपाचित है ।
यह प्रस्तावना पांच प्रकारकी है—उद्घाटनक, कथोद्घाटन,
प्रयोगातिशय, प्रवर्त्तक घोर अवलगत । इनमेंसे जो
चगताय है अर्थात् जिसका अर्थ सम्बन्ध रूपसे समझमें न
पाये, उस अर्थको अच्छी तरह जाननेके लिये अन्य पद
द्वारा जिस स्थानमें निगोजन किया जाता है उसका नाम
उद्घाटनक प्रस्तावना है । अर्थात् एक ऐसे वाक्यको
रचना करनी होगी जिसका पद चगताय हो अर्थात्
प्रकृत विषयके साथ अर्थ को कोई सम्बन्ध न हो । इस
चगताय पदको ले कर प्रकृत विषयका अर्थ जिससे
भकीभाति मालूम हो जाय ऐसे वाक्यका विस्तार कर
मुखधारको बना जाना चाहिये, यह पाठप्रवेश अर्थात्
प्रकृत विषयका पारम्भ होगा, ऐसी प्रस्तावनाको उद्-
घाटनक कहते हैं ।

उदाहरण—मुद्राराक्षस-नाटककी प्रस्तावनामें लिखा है—

“क. रूपः क. केतुपद” उपर्युक्तमवस्थितमिति ॥

अभिहितमिति ॥

अनन्तरं नेत्ये—आः क. एव मयि जीवति इति चन्द्रगुप्त-
मगधिसिद्धिरिति ॥” (मुद्राराक्षसः)

अतिक्रम केतुपद सम्पूर्णमन्त्रचन्द्रको वस्तुपूर्वक
परिभाषा करनेकी इच्छा करता है । यहां पर केतुपद
चन्द्रमाको नाम करता है, यही समझा जाता है । किन्तु
उदात्त मुखधारको यह बात सुनकर पाकाश भूँज उठा—
निराचारके अंतिम ही राजा चन्द्रगुप्तको वस्तुपूर्वक
परिभाषा करनेकी इच्छा कर सकता है ? यहां
पर केतुपदका अर्थ क. रूपक चो. दूसरा अर्थ मन्त्रकेतु
है । केतुपद भेदा क्रूर है, मनवकेतु भी वैसा ही है ।

पूर्वमाका चन्द्र ही पद्म होता है, राजा चन्द्रगुप्त भी
परिपूर्ण-मण्डन है । मुखधारके इस अवधितायें पदको
ले कर ही नाटकका प्रस्तावित विषय शुरू हुआ घोर
अन्य पद द्वारा इस पदके अर्थको भी समझति हुई अर्थात्
मन्त्रकेतुको महायतामें वया राक्षसगे परिपूर्ण-मण्डन
चन्द्रगुप्तकी वस्तुपूर्वक परिभाषा करनेकी इच्छा की है,
यह कथा सुननेके साथ ही मुखधार बना गया । अब नाट-
कीय वस्तुका पारम्भ हुआ । उस समय सभी नट
परिभाषा करने लगते हैं । अर्थात् प्रस्तावनाके लक्षण
तो लिखे गये, लेकिन विस्तारके भयमें यहां उनका
उदाहरण नहीं दिया गया । जरा गौर कर विचारनेमें
ही वह भावने भाव स्थिर हो जायगा ।

कथोद्घाटन प्रस्तावना—

“मृगय रथं वाक्वं वा उवादायार्थमस्य वा ।

नैवै वाक्वंवाक्वंवाक्वं कथोद्घातः क. उवादे ॥”

(साहित्यदर्पणः)

नट मुखधारके यावत् वा वाक्वंविधिका अवलम्बन
कर यदि पाठ प्रवेश करे अर्थात् मुखधार जिस वाक्वंका
प्रयोग करेगा, उसी वाक्वं वा उसी वाक्वंवाक्वंका अवलम्बन
कर नाटकीय विषय पारम्भ हो, तो कथोद्घातप्रस्तावना
होगी ।

रत्नायनीमें मुखधारका यावत् घोर येवीर्णहारमें
वाक्वंवाक्वं प्रकृत कर वाक्वंका प्रवेश है ।

प्रयोगातिशय—

“अति प्रयोग एवमिन्द्र प्रयोगोद्घातः प्रयुज्यते ।

तेन पात्रप्रवेशोत्तरं प्रयोगातिशयमस्ति ॥”

(साहित्यदर्पणः ५ वरिः)

यदि किसी एक प्रयोगमें दूसरा प्रयोग की जाय घोर
उस प्रयोगका लक्ष्य करते यदि पाठ प्रवेश करे, तो
प्रयोगातिशय-प्रस्तावना होगी है ।

प्रवर्त्तक—

“कान्ते प्रवर्त्तकमिन्द्र मुखधृष्टं यत्र वनेष्वेव ।

उदाधरन पात्रवत् प्रवेशोत्तरं प्रवर्त्तकम् ॥”

(साहित्यदर्पणः ५ वरिः)

उपनिर्दिष्ट लक्ष्यका यावत् ले कर मुखधार वर्त्तक
करेगा घोर उस वर्त्तकका उपलक्ष्य करके पाठके प्रवेश

करनेसे प्रयत्नक प्रस्तावना होनी है अर्थात् एक नट उपस्थित स्थानका वर्णन करेगा और उसी वर्णनका मुख्य करके प्रकृत विषय आरम्भ होगा।

अवलम्बित —

‘सिद्धेश्वर मम वेगात् कार्यमन्वत् प्रशङ्कते।

प्रयोगे यत् तद्द्वये नाम्नावलम्बितं पुनः॥’

(आह्वयदर्पण)

जहाँ पर एक विषयका सादृश्य रहता है, वहाँ उस सदृशताका लक्ष्य करके यदि पात्र प्रवेश करे, तो अवलम्बित प्रस्तावना होती है। अर्थात् सूत्रधार एक ऐसे विषयका वर्णन करेगा जो प्रत्याविक विषयके जैसा हो। योही उस वाक्यका मुख्य करके पात्रप्रवेश अर्थात् प्रकृत विषय आरम्भ होगा।

अभिज्ञानमकुन्तलनाटकमें यह अवलम्बित-प्रस्तावना देखी जाती है।

जिन सब प्रस्तावनाओंके लक्षण मिले गये, उनमेंसे किसी एक लक्षणान्तर प्रस्तावनाका होना आवश्यक है। अपने इच्छानुरूप यदि प्रस्तावना हो, तो वह नाटक नहीं कहा जा सकता। सूत्रधार नेपथ्योक्त अर्थात् आकाश-भाषित सुन कर प्रस्तावना करेगा। प्रस्तावनाके समस होने पर सूत्रधार रङ्गालयमें चला जायगा। बादमें प्रस्तावितविषयका प्रकृत अभिनय आरम्भ होगा।

वर्तमान समयमें जो सब नाटकाभिनय होते हैं, उनमें किसी प्रकारकी प्रस्तावना देखी नहीं जाती। आरम्भमें ही ऐसे प्रकृत विषयका आरम्भ होना चाहिये। स्वातन्त्र्यता चयनमन्त्र करके नाटककी रचना करनी चाहिये और स्वातन्त्र्यके साथ प्रासङ्गिक वर्यान्वय मनोहर वाङ्मयासका भी होना आवश्यक है। इस वर्णनमें यदि कुछ अतिरिक्त भी हो, तो भी वह दोषावह नहीं होता।

यह नाटकीय सद्यः दो भागोंमें विभक्त की जा सकती है, एक आधिकारिक और दूसरे प्रासङ्गिक। अधिकारीका जो विषय वर्णनीय होगा, उसका नाम है आधिकारिक और उस अधिकारीके उपकारके निम्ने जो सब विषय वर्णित होंगे उनका नाम प्रासङ्गिक है। मान लो,

रामचरितका अभिनय हो रहा है। राम यहाँ पर अधिकारी हुए और इनके उपकारके निम्ने सुपीठादि चरित्रवर्णन प्रासङ्गिक हुआ।

नाटकमें स्थानका पक्षही तरह विचार करने पताका-स्थान निर्दिष्ट करना होता है अर्थात् जहाँ पर पताका-स्थान सन्निवेश करनेमें वर्णनाका सम्भारित्व हो, वैसे स्थानमें पताकाप्रयोग उत्तम माना जाता है।

पताका—

‘यत्रायं चित्तिरेवमिन् तत्किञ्चिदप्यः प्रयुज्यते।

आगन्तुकेन भावेन पताकाप्रयोगः कृतः॥’

(आह्वयदर्पण)

किसी एक अर्थका विचार करनेमें उस अर्थका लक्षणाश्रित एक दूसरा अर्थ यदि अतर्कितभावसे पा पड़वे, तो पताकास्थान होता है। अर्थात् किसी एक विषयका वर्णन होता है, अतर्कितभावसे एक दूसरा विषय उपस्थित हो कर यदि पूर्व वाक्यका समर्थन करे, तो उसे पताका कहते हैं।

उदाहरण—उत्तर-रामचरितमें निम्ना है,—रामचन्द्र सोतादेवीसे कहते हैं, ‘अयि प्रियतमे! तुम्हारी कोई बात मुझे पसन्द नहीं; यदि पसन्द है, तो देवन तुम्हारा विरह।’ इसी बीचमें प्रतिहारी पा कर कहता है, ‘देव! दुर्मुख उपस्थित!’ जिस समय रामने कहा, कि एकमात्र तुम्हारा विरह ही पसन्द है, उसी समय ‘उपस्थित’ ऐसा शब्द सुननेमें आया। इससे पूर्व कथित पसन्द विरह उपस्थित हुआ यही समझा जाता है। यहाँ पर यही पताकास्थान हुआ। नाटकके बीच बीचमें इस प्रकारके पताकास्थानकी वर्णना करनी चाहिये। यह पताकास्थान भी कई प्रकारका है।

‘वदथैवार्थस्य प्रतिपत्तिरुपपत्तातः।

पताकास्थानविदः प्रथमं परिहीतिं तम्॥’

(आह्वयदर्पण)

यदि अतर्किकभावसे अर्थ-सम्पत्ति नाम हो, तो प्रथम पताकास्थान होगा।

द्वितीय पताकास्थान—नानार्थयुक्त द्विष्ट रचना-वाक्यका आश्रय ले कर यदि वाक्यप्रयोग किया जाय, तो द्वितीय पताकास्थान होता है।

“वचः पातिसमिपुष्टं वानावचममाथयम् ।
पताकास्थानकमिदं द्वितीयं परिचोर्त्तम् ॥”

(सादिरद०)

द्वितीय पताकास्थान—फलरूप कार्य का सूचक होने से द्वितीय पताकास्थान होता है ।

चतुर्थ पताकास्थान—सुष्ठित पर्यटन पदयुक्त वर्णना—नि किसी पर्यान्तरके उमका सूचक होनेसे चतुर्थ पताकास्थान होता है ।

नाटकमें नायक या रसके अनुचित वा विरुद्ध जो सब वर्णना हैं, उनका परिचाय करना उचित है । अथवा किसी दूसरे स्थान पर ऐसे वाक्यों योजना करना चाहिए ।

“यदुत्पादनुचितं वस्तु नायकस्य रसस्य वा ।

विद्वद् तत्परिरिज्यमन्यथा वा प्रकल्पयेत् ॥”

(सादिरद०)

यथा, रामचन्द्र द्वारा किएके बालिवध, इस प्रकारकी घटना आदिको विरुद्ध वस्तु कहते हैं । उदात्तराघव-नाटकमें रामचन्द्र द्वारा बालिवध-वृत्तान्त परिकीर्त्तित हुआ है ।

नाटकीय इतिवृत्तका नीरस चर्चा जब प्रकृत प्रदाय में वर्णित होता है, तब वह कामाजिक-वर्णका विर-लक्षक हो सकता है । यही कारण है, कि नाटक-कर्त्ताओंने समधान व्यक्ति के मुहमें उस चर्चाका संक्षि-पे कीर्त्तन करके मरस-चर्चाका समतल किया है । नाटकके ऐसे चर्चाको विरक्तभक्त कहते हैं । विरक्तभक्त कहको प्रस्तावनाके जैसा होता है । यह चट्टके आदि-में वर्णित रहता है । नाटकमें प्रयोग वर्णना करना होता है ।

प्रयोगकल्प—प्राकृतभाषा रचित कथाविभागका नाम प्रयोगक है । इस प्रयोगकको उभयाङ्गके मध्य और मेषको विरक्तभक्त मध्य जानना चाहिए ।

चुम्बिका—यवनिहाके मध्यस्थित सभी मनुष्य जिस कार्यकी सूचना दे देते हैं, उसका नाम चुम्बिका है ।

चट्टावतार—चट्टावतारमें मुख्यतः जिस चट्टको चमत्कारवा करते हैं, उसे चट्टावतार कहते हैं । जो चट्ट ममात्र हो रहा था, उस चट्टमें जो सब नट अभिनेता

थे, उनकीमें कोई अभिनेता इस चट्टावतारको चमत्कार दे दे । इसको गर्भाङ्ग कहते हैं । किन्तु पात्र कसके नाटक-समूहमें देखा जाता है, कि कई एक गर्भाङ्ग मिल कर एक चट्ट होता है । यह चट्टावतार टीका उन तरङ्गका नहीं है । यह चट्टावतार प्रति चट्टमें करना नहीं होता, किन्तु किसी चट्टमें इसे संक्षिप्त कर सकते हैं । चट्टके मध्य चट्ट रखनेके कारण इसका नाम गर्भाङ्ग रखा गया ।

चट्टमुख—जिस चट्टमें सब चट्टोंकी घटनाएं सूचित रहती हैं उसे चट्टमुख कहते हैं, उसका दूसरा नाम वीरार्थ स्थापक भी है ।

नाटकमें प्रधान व्यक्तिको सब वर्णना नहीं करनी चाहिए और न रस तथा वस्तुका ही परस्पर तिरोधान करना चाहिए । पर्यात् रसमें इतिवृत्तयग और इतिवृत्त-में रसयोग जिसमें हो, इसी भावमें वर्णना करना चाहिए ।

नाटकमें प्रयोजन सिद्धिके कारण ५ हैं—वीर, विन्दु, पताका, प्रकारो और कर्म । इन पाँचोंका यथायोग्य स्थानमें वर्णन करना चाहिए । जो बात सुनने कहते ही चारों ओर फैल जाय और फलसिद्धि का प्रथम कारण हो, उसे वीर कहते हैं ; जैसे, वैद्योपचारनाटक-में मोमके झोले पर युधिष्ठिरका उत्साहपात्र ट्रोपटोके केगमोचनका कारण होनेके कारण वीर है । नाटकके यथायोग्य स्थानमें वीरको वर्णना करना होता है ।

विन्दु—मन्दर्भ समूहका विच्छेद होनेसे परवर्त्तो घटनाके साथ जो सम्बन्ध रहता है, उसका नाम विन्दु है, पर्यात् कोई एक बात पूरी होने पर दूसरे पात्रसे उसका सम्बन्ध न रहने पर भी उसमें ऐसे साक्ष्य माना जिनको दूसरे वाक्यके साथ समझति न हो । वही “विन्दु” कहलाता है ।

वीरमें किसी व्यापक-उपद्रवके वर्णनको पताका कहते हैं—जैसे उत्तरचरितमें सुयोधका और अभिमानवाङ्-न्तर्भमें विदूषकका चरित्र-वर्णन । पताका नायकका लोकोप कनासार नहीं है । यह देगव्यापे परिवर्णनको प्रवृत्ति कहते हैं । परम्प्रे की दृष्टि किशको फलसिद्धिके लिए जो कुछ किया थाय उसे कार्य कहते हैं ; जैसे, रामचौधामें रावणका वध ।

भाषा—विद्यजन प्रभृति के समांगमका नाम उपमूलन, द्विषाककयन और दानादिका नाम भाषण, पूर्ववाक्य के समुचित प्रत्युत्तरदानका नाम पूर्ववाक्य है, अर्थात् नाटक के प्रारम्भ के पक्ष के कट्टिका प्रयोग किया है, दोष्टि इनमें प्रधान स्थितियों की समुचित शान्तिविधान करने उक्त वादपक्षे यथोचित उत्तरदानकी पूर्ववाक्य कहते हैं। अमोघ वस्तुकी शान्तिका नाम वाचमंकार है अर्थात् अन्तिम दृश्यमें जो सब मङ्गल अभिलषणोंय हैं, जिनके साथ शिष्टका निम्नान होना आवश्यक है, उसीकी उपसंहार कहते हैं।

अन्तर—राजा, देव या ब्राह्मण आदिकी शान्तिमूचक प्रायणाका नाम प्रशस्ति है। नाटकीय विषयका उपसंहार हो जानेमें राजापीकी मङ्गलमूचक प्रायणा करने के बाद अभिनेताकी वस्त्रमन्त्रे चला जाना चाहिये।

नाटक के पूर्व लिखित १४ प्रकारके अङ्ग हैं। पञ्च-मन्त्रिमें यथाक्रमसे यही सब अङ्ग विन्यास करने होते हैं। उसके अनुरोधसे जब कोई अङ्ग मिट्टि मन्त्रिमें वर्णित न हो कर अन्य मन्त्रिमें वर्णित हो, तो वह दोषावह नहीं होगा। पक्ष के रसकी ओर मनोभाति लक्ष्य करना चाहिये। रसमङ्गल करके अङ्गादिका प्रयोग सुसङ्गत नहीं है।

नाटकमें यथाविधि सब अङ्गोंका प्रयोग करनेसे ६ प्रकारके फल प्राप्त होते हैं—इष्टार्थरचना, आचर्यसाध, हतात्मविस्तार, रागमात्रि, प्रयोगके मध्य अर्थात् हतात्मके मध्य गोप्यका गोपन और प्रकाशका प्रकाशन। अङ्गोंके यही छः प्रकारके फल हैं।

जिस तरह अङ्गहीन मनुष्य कोई कार्य नहीं कर सकता, उसी तरह अङ्गहीन काव्यका भी अभिनय आदिमें प्रयोग करना सुसङ्गत नहीं है। नायक और प्रतिनायक मन्त्रिका अङ्ग करके सम्पादन करे, उसके अभावमें अन्तर्भाति और अन्तर्भाति के अभावमें वीर आदिका सम्पादन करना चाहिये।

पक्षों जो सब लक्ष्य यत्नासे गये हैं, शास्त्रीकी मर्शादकी रक्षा करनेके निम्ने समझा अन्तः अन्तः विन्यास करना उचित नहीं, किन्तु रसका अनुगामी हो कर जहाँ जिस अङ्गका वर्णन करनेसे रसकी कोई

उत्ति न हो, अन्तिम उसका लक्ष्य हो, ऐसे भावसे अङ्गादि संस्थापन करनेकी 'इष्टार्थ रचना' कहते हैं। रस कार्यके प्राप्तिस्वरूप प्राणका विनष्ट अर्थात् रसमङ्गल करके अङ्गादिका प्रयोग करना सुसङ्गत नहीं है।

जो सब वृत्तियाँ जिन सब रसोंके साथ विनष्ट हैं, उन्हें परित्याग करना चाहिये।

शृङ्गाररस-वर्णनमें कोमिकी वृत्ति, मोररसमें मात्मीय, रोद्र और वीररसमें आभट्टी, रसके मिया अथ रसमें भारती वृत्ति होती है। यही चार वृत्तियाँ नाटककी जननी-स्वरूप हैं, अतः इन्हीं चार वृत्तियोंमें नाटककी रचना करने की चाहिये।

सभी नायिकाओंके मनोहर वैभूषणों विभूषिता, उनके साथको सहचरियोंके भी नृत्य-गीत और कामोपभोगके उपचार तथा मनोहर विद्याभ्युक्त वर्णनाका नाम कोमिकी है। इसके चार अङ्ग हैं—नर्म, नर्मस्फूर्ज, नर्मस्फोट और नर्मगर्भ।

सामाजिक वर्णन मनोरञ्जनकर चतुर्ताके साथ कोमिक-का नाम नर्म है। यह नर्म तीन प्रकारका है—शृङ्गार-हास्य-विहित, सङ्गार-हास्य-विहित और समवशास्य-विहित।

सुखकर भयाङ्ग नव मङ्गलका नाम नर्मस्फूर्ज है। भावादि अर्थात् आकार, इन्द्रित और चेष्टा द्वारा भावाभिज्ञति अथवा भावाङ्ग वृत्ति शृङ्गारकी नर्मस्फोट कहते हैं। नायक-नायिकाके प्रथम दर्शनमें या गुणगती सुन कर एक दूसरेके प्रति जो अनुराग उत्पन्न होता है उसे नर्मस्फोट कहते हैं। नायकका गुणभावनें जो व्यञ्जना करता है उसका नाम नर्मगर्भ है। जिन प्रकार मानसो-साधन नाटकमें साधने मणीका रूपधारण कर मात्मीयकी मरवेक्षणमें उसे निरूपण किया था। इन्हीं प्रकार वर्णनकी नर्मगर्भ कहते हैं।

मत्त, मोघ, त्याग, दया, मरुता, आनन्द, मोह-राहित्य, अमृतारवि और अमृतारवि (युक्त दर्शनका नाम मात्मीय वृत्ति है। अर्थात् मोघ आदिकी वर्णनामें भाववती वृत्ति कह सकते हैं। इस वृत्तिके चार भेद हैं—अत्यापक, मंहास, मंहास और परित्याग।

यह वृत्ति उत्तिजनकी भावका नाम अत्यापक है।

मन्त्रणा आदिक। परस्पर दुंशेक करण संधान्य, नाना भाव समाश्रय पर्याप्त चर्यायुक्त वाक्यमेव मन्त्रापेक्षे प्रारम्भमे (उद्यतकार्यमे) अथ कार्यकरणका नाम परिवर्तनं कृते ।

माया, इन्द्रजाल, संध्याम, क्रोधमे सहेनित, वध, दान्युन आदि इन सब विषयोंको जो वर्णना की जाती है उसे चारमंडोहरित कहते हैं। इसके भी चार भेद हैं; वस्तुस्थान, संकेत, मंचिमि और चयनात्मन। मायादि द्वारा कथ वस्तु उत्थापित होता है, तब उसे वस्तुस्थान कहते हैं। क्रुद्ध और सत्वरहयके समाघात पर्याप्त मन्त्रक प्रहारका नाम संकेत, मन्त्रोपेक्षे वधवा अन्य प्रकारकी वस्तु-रचनाका नाम संचिमि, प्रवेश, दान, निष्कागण, इयं और विश्व सम्भूत होनेका नाम चयनात्मन है। जहाँ पर संकेत वाक्यका अधिक प्रयोग है, वहाँ उसे भारतीकृति कहते हैं।

पक्षमे जो सब सत्तत्वादि निखे गये, नाटकमे ये सब लक्षण वक्ष्य रहने चाहिये। प्रति अभिने प्रत्येक पक्ष, रमादिमें सात्वती आदि कृति और रमका भविष्य यथा स्थान पर उदन्त्याम करनिवे नाटक पदवाच्य होगा, पञ्चादि होन होनेमे अङ्गीकृत होगा।

मन्त्रत नाटकमे ये ही सब लक्षण विनिपतः देखे जाते हैं, हिन्दी तथा यङ्गना आदि नाटकमे उतना नहीं।

गाढीफि—जो दूसरेके सुनमे लायक न हो, उसे स्वगत कहते हैं, पर्याप्त अभिनयके मन्त्र कोई भी नट मंचिहित व्यक्ति छिपानेके लिए जिस विषय विशेषका मनही मन आन्दोलन करता है, उसका नाम स्वगत है।

जो सब कोई सुन सके, उसे प्रकाश कहते हैं अथवा अभिनयके समय कोई भी नट दूसरेके छिपानेके लिए विषय-विशेषका मन ही मन आन्दोलन करके वयवा मंचिहित व्यक्ति मिसने वह सुन न सके, ऐसे चतुष्टयसे सबके सामने जो कहा जाता है उसे प्रकाश कहते हैं।

वस्तुमे लोगोंके बीच यदि किसीके साथ कुछ बात-चीत करनी हो, तो दूसरे मनुष्यों के चोर दृष्टाङ्गुलि निचेप करके चतुष्टयसे उसे कहें, ऐसे कथनका नाम अनात्मिक है।

पात छोड़ कर दूसरेमें जो वचन उच्चारित होता है, उसे आकाशभाषित कहते हैं। जिससे दूसरा सुन न

सके, ऐसे चतुष्टयसे पर्याप्त छिप करके जो कथन किया जाता है उसे अपवाच्य कहते हैं।

नाटकमिमें दत्ता, सेना वा सिद्धा-यन्त्र ये सब नाम वैश्यावोके रहने चाहिये। यथा—कामदत्ता, वमन्त-सेना आदि। वशिष्ठके नाम भी दत्त होते हैं, यथा—धनदत्त आदि। प्रस्तावनामें कथोपकथनके बहाने स्वधार दूसरे नटको मारिष भाषामें सम्बोधन करे। मारिष गद्यका चयं चार्य, माननीय और आदर्शीय है।

प्रस्तावनामें कथोपकथनके बहाने दूसरा नट स्वधारको भावगद्यमें सम्बोधन करे। भाव गद्यका चयं विषय वा बोधा है।

नाटकमें मृत्यु राजाको स्वामी वा देव, पद्मम लाक भट, राजर्षि वा विदूषक वयस्य, वृत्तिगण राजन् चरवा उनको फेरी इच्छा हो, वैसे सम्बोधन कर सकते हैं।

नाटकमें विद्वान् पुरुषोंकी भाषा मन्त्रत और विदुषो स्त्रियोंकी भाषा शौरसेनोमें तथा इनके मङ्गीतमें मशाराष्ट्र भाषाका रङ्गना वाच्यक है। राजान्तःपुरचारियोंकी भाषाये भाषा, चेट (राजमन्त्र), राजपुत्र और ये स्त्रियोंकी अर्धमागधो, विदूषककी भाषा प्राच्या, धूर्तकी भाषा अत्यन्तिका, योध और नागरिकोंकी भाषा दाक्षिणात्या, गङ्गाको भाषा गङ्गाको, दिव्योंकी वाष्ठीक, द्रविड़ोंकी द्राविड़ो, पामीरोंकी पामीर, पुष्पादिकी चाण्डीकी, काष्ठ और पत्रजीयो तथा अङ्गारकारादिकी आभीरी वयवा शावडी, पिगावोंकी पेशाचो, सङ्गटा चेटियाकी शौरसेनिका, जालक, वरर, नोच, दैवज्ञ, अम्भस और पानुराकी शौरसेनिका, ऐगयाम्भस, दारिद्र्यपङ्कत और भिषुषोंकी भाषा प्राकृत होना चाहिये। राज्ञा चोकी तावा मन्त्रत योगी। जिस प्रकारके मनुष्य हैं, उन्हें उसी प्रकारकी भाषाका प्रयोग करना चाहिये। जो सब नियम निखे गये, उन्हींके आधार पर मन्त्रत नाटक प्रस्तुत करना चाहिये।

नाटकके बहुतसे चलद्वार हैं, जिन्हें नाट्यालङ्कार कहते हैं। नाट्यालङ्कार देखा।

यव प्रकरणादि रूपकके विषय यथाक्रममे निर्ये जाते हैं।

प्रकरण—यह दृग्गकायमे द्वितीय है। इसके

चर्यान्वय भवन प्रायः नाटकमें है। कर्क इतना ही है कि इनमें वृत्त लोचिक वा कविकल्पित रोगा पर्याप्त रस प्रकरण नामक नाटकको रचना करनेमें इसका उदात्त लोकप्रसिद्ध या कविकल्पित रोगा प्रायः प्रसक्त है। इसका प्रधान गुद्धार रस रोगा चाहिए। इसका नायक धर्मप्रधाना है पर्याप्त नाटकके लेना उद्योग यो नीला व्यक्ति नहीं है। जिसके दया दानिष्ठ प्रभृति लोचिक साधारण गुण हैं, उभीकी धीरप्रधाना कहते हैं। यह नायक मन्त्री, ब्राह्मण वधवा सम्भ्रान्त-वर्णिक चोर धर्मकामाद्य-पर रोगा तथा धर्मसाधनभूत पञ्चधर्म चोर श्री-पुत्र एवं धनादि विषयोंमें सर्वदा तन्पर रहेगा।

नायिका मेश्वर इस प्रकरणको तीन श्रेणियोंमें विभक्त कर सकत है। किसी प्रकरणमें नायिका कुलजा पर्याप्त कुलीना होगी, किसीमें भद्रवर्णकी प्रतिपासिता कामिनी या सहचरी रोगा चोर किसी प्रकरणको नायिका वैश्या एवं प्रथम दो प्रकारकी पर्याप्त कुलजा चोर वैश्या नायिका हो सकती है तथा इसमें कितने, द्यूतकार, विट, चेट आदि परिग्राम होंगे।

गृह्यकटिक, मानसीमाधव आदि प्रकरण लक्षणा-कृत है। प्रकरणमें समाजकी प्रतिक्रतिकी वर्णना कर सकत है। गृह्यकटिक नाटकमें नायक ब्राह्मण चोर नायिका वैश्या, मानसीमाधवमें चामार नायक तथा 'पुनःभूत' प्रकरणमें वणिक् नायक है।

भाषा—इसमें धूर्त-वर्तन चोर उसको नाना प्रकारकी दयावर्णना होगी। यह एक चट्टमें पूरा होगा। इसमें एक नट पर्याप्त नायक भाव अभिनय कोड़ा करेगी। यह नट रङ्गभूमि पर या कर गाना छरी चोर नाना प्रकारके भाव भङ्गियोंमें विविध यशस्वियोंकी सम्बोधन करके समासदोंकी प्रशंसा करेगी। यह नायक आकाश भाषित गुन हर उत्तर प्रत्युत्तर देगी। इनको भावा विग्रह संस्करण होगी। सीमाव्य चोर शौर्यवर्णभा भाषा गुद्धार या वीर इसकी सुचना करनी चाहिये। सीमाव्यचोर चोर मारदातिलक आदि भाव श्रेयोभुक्त है।

मायोग—इसका इतिवृत्त पुरावादि प्रसिद्ध होगा। यह धर्ममन्त्रि चोर विमर्ष सम्मिरीन रोगा चोर एक

चट्टमें पूरा होगा। श्री लोह कर दूसरे कारवमे श्रद्धा वर्णना करनी होगी। इसका नायक पनोचिक समता-माद्यी पुरुष रोगा। हास्य, गुद्धार चोर मान्तरन भिन्न रस इसका नायक रोगा। भौगविककरण, धनप्रय विजय आदि पराशीन श्रेयोके चर्यागत है।

समयकार—इसका वृत्त स्थात रोगा। देवता चोर चतुरीका युद्ध-वर्णन हो इसका प्रधान उद्देश्य रहेगा। यह आद्योपात्त चोररसमें भरा रहेगा। नाटकोत्त पञ्च-मन्त्रिमें इसमें चार सन्धि सन्निवेशित करनी चाहिए। रेशन विमर्षसन्धि निषिद्ध है। नायक धीरोदात्त रोगा, प्रत्येकका फल भिन्न भिन्न रोगा। उष्णिक, चोर नायकी-च्छन्दमें यह रचा जायगा। चोररस हो इसमें प्रधान है। इसी रथादिने परिपूर्ण युद्धसेव तुमुनसंयाम चोर नग-रादि ध्वंसका उत्तम रूपमें वर्णन रोगा चाहिए। यह तीन चट्टोंमें सम्पूर्ण होगा। 'समुद्रमन्थन' नाटक इसी सम्भवकार श्रेयोके चर्यागत है। यह नाटक सभी दुःप्राप्य है।

डिम, वीर चोर भयानक रसप्रधान रूपक है। यह चार चट्टोंमें समाप्त होता है। चतुर या देवता इसमें नायक है। डिम देखो।

ईशान्य—यह चार चट्टोंमें पूरा होता है चोर करणरसप्रधान है। देव देवी इसकी नायक-नायिका है। प्रेम चोर कोतुक वर्णन इसका प्रधान उद्देश्य है।

ईशान्य देखो।

चट्ट—यह चट्टरूपक एक चट्टमें सम्पूर्ण होता है। किसी प्रसिद्ध वृत्तान्तको ले कर इसकी रचना की जाती है। यह करणरस प्रधान है। इसमें भूरि गुद्धार चोर चलाय रमिका समाधि रोगा चाहिए। 'मर्मिहा-यवाति' एक चट्टनामक रूपक है।

योवि—इसके सभी उद्योग भाष्य है। यह भी एक चट्टमें पूरा होता है। दण्डरूपके मतानुसार इसमें दो चट्ट होने चाहिए।

महसन—यह हास्यप्रधान रूपक है। चोर एक चट्टमें सम्पूर्ण होता है। समाजकी कुलीनिका मन्त्री-धन चोर रहस्यजनकका विचार करना इसका मुख्य उद्देश्य है। राजा, राजपाणिपद, भूत, उदासीन, भक्त

घोर घेरावे से सब प्रहसनके प्राप्त होते। इसमें नोच-कातीय पुरुषगण स्त्रियोंकी तरह प्राकृत भाषामें कथोप-कथन करेंगे। हास्यान्व, कौतुक-सन्निध घोर धूर्त-समागम बादि प्रहसन श्रेणोभूत हैं।

यहो दश प्रकारके रूपक हैं जिनका विवरण स'क्षिप्तभावसे लिखा गया। अभिनेय अन्य मातृका हो जनसाधारण नाटक समझने हैं। इस कारण यहां पर समका सद्य देना दीपावह नहीं होगा।

वररूपक—यह १८ प्रकारका है। प्रत्येकका विवरण स'क्षिप्तभावसे लिखा जाता है। विशेष विवरण तत्तद् पद्धति देखो।

नाटिका—नाटिका देखो।

श्लोक—यह धर्म ८७ श्लोका हो सकता है। पार्थिव घोर स्त्रीय दक्षके प्रधान वर्णनोय विषय हैं। विस्त-मोर्वशी बादि श्लोक पद्य हैं।

गोठी—एक पद्धति सम्पूर्ण होता है। इसके नाट्य-प्रदर्शक ८१० पुरुष घोर ११६ स्त्री हैं। 'वैततमदिका' नाटक गोठीके अन्तर्गत है।

सहस्र—इसमें एक पाद्ययं गण पाथीवानी प्राकृत-भाषामें रचा जायगा। 'कपूरमन्त्रो' इसमें अन्तर्गत है।

नाट्यरासक—एक पद्धति समाप्त होता है। वर्षि-तप्यविषय प्रेम घोर कौतुक है। इसमें शृङ्खले पाकिर तक नृत्य घोर सङ्गीत रहैगा। नर्तकतो घोर विनाम-यनी बादि नाट्यरासक हैं।

प्रस्थान—यह प्रायः नाट्यरासक सहस्र है। किन्तु इसके नायक घोर नायिका बादि नाच जातिके होंगे। यह भी तात्सम्य-चरम-युक्त नृत्यगीतसे परिपूर्ण है घोर हो पद्धति समाप्त होता है।

उत्साह—एक पद्धति पूरा होता है। इसका उत्साह घोरार्थिक होगा। प्रधान वर्णनोय विषय प्रेम घोर हास्य-रस है। शेष क्षेत्रमें सङ्गीत होगा। 'दिवीमहादेवम्' इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

काव्य—एक पद्धति परिपूर्ण होता है। इसमें प्रेम-विषयकी वर्णना होगी। शेष क्षेत्रमें सङ्गीत घोर कविता रहेंगी। 'वादमोदण' एक काव्य नामक उप-पद्धति है।

मैत्रव्य—एक पद्धति पूरा होता है। यह घोररस-प्रधान होगा। नोच श्रेणीकी याति इसका नायक होगा। 'वानियध' इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

रामक—यह हास्य-सौंदर्यक उपपद्धति है घोर एक पद्धति सम्पूर्ण होता है। इसके अभिनेता ५ हैं। नायक नायिका ये दोनों सब वर्णन होंगे। नायिका सुविमती होगी घोर नायक मुखं होगा। 'मिनकाहित' एक रामक है।

संचारक—एकसे चार पद्धति पूरा होता है। इसका नायक प्रचलित धर्मके विरुद्ध मतान्तरात्मी होगा। पधि-कांग जगह मुहादिकी वर्णना रहेंगी। 'मायाकापा-लिक' इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

योगदित—एक पद्धति सम्पूर्ण होता है। इसकी नायिका लक्ष्मी है, पवित्रांग जगह सङ्गीत होगा। 'क्रीडारसात' इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

मित्रक—इसमें चार पद्धति हैं। श्रमगान इसका रहस्य है। नायक ब्राह्मण है घोर प्रतिभापक सङ्गीत। ऐन्द्रजाल घोर पाद्ययं घटनाका वर्णन करना इसका प्रधान लक्ष्य है। 'कलकावतीमाधव' इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

विनामिका—एक पद्धति समाप्त होता है। प्रेम घोर कौतुक इसका वर्णनोय विषय है।

दुर्मिका—यह हास्यरसप्रधान है घोर चार पद्धति समाप्त होता है। "विन्दुमतो" इस श्रेणीके अन्तर्गत है।

हमीश—एक पद्धति पूरा होता है। इसका पाथी-वाला सङ्गीत घोर नृत्यमें भरा रहता है। अभिनेय कार्य-में एक पुरुष घोर ८१० स्त्रियोंकी पापश्रुतता है। यह बहुत कुछ भेरा (Opera) में मिलता जुलता है। 'कैलि-वैतक' इसीके अन्तर्गत है।

भाषिका एक पद्धति पूरा होता है। हास्यरस इसका प्रधान वर्णनोय विषय है। 'कामदत्ता' भाषिकाके ही अन्तर्गत है।

दश प्रकारके रूपक घोर चत्वार प्रकारके उप-रूपक विषय लिखा गया। ये सभी प्रकारके दृश्य-काव्य नटमें अभिनीत होते हैं, इसीसे ये नाटकमें सदि-पिट किए गए।

पद्यान्वय प्रत्यय प्रायः नाटकके है। फर्क इतना हो है कि इसमें हस्त लोचिक वा कविप्रश्रित लोग पद्योंत्तम प्रकारसे नामक नाटकको रचना करनेमें इसका प्रस्ताव लोकप्रसिद्ध वा कविप्रश्रित लोग प्रायः प्रयुक्त है। इसका प्रधान अङ्गार रम्य होना चाहिए। इसका नायक और प्रमाणा है चर्यात् नाटकके जेमा उच्च श्रेणीका व्यक्ति नहीं है। जिसके द्वारा टाटिस्त प्रभृति लोचिक साधारण गुण है, उसीको धीरवशात् कहते हैं। यह नायक मन्त्रों, जादूय पद्यवा सम्मान-वर्षिक और धर्मकामाद्यं पर होगा तथा धर्ममाधमभूत पद्यधर्म और श्रो-गुण एवं धर्मादि विषयोंमें सर्वदा तत्पर रहेगा।

नायिका नेहमें इस प्रकारकी तीन श्रेणियोंमें विभक्त कर सकते हैं। किसी प्रकारकी नायिका कुलजा चर्यात् कुलीना होगी, किसीमें भद्रवर्गकी प्रतिपादिता नामिनी वा महारो होगी और किसी प्रकारकी नायिका वैश्या एवं प्रथम दो प्रकारकी चर्यात् कुलजा और वैश्या नायिका हो सकती है तथा इसमें त्रितय, चतुर्भुज, विट, चेट आदि परिग्राम होगी।

गृहकटिक, माननीमाधव आदि प्रकारके लक्षणा-ज्ञान है। प्रकरणमें समाजकी प्रतिक्रितिको वर्णना कर सकते हैं। गृहकटिक नाटकमें नायक माधव और नायिका वैश्या, माननीमाधवमें प्रमात्य नायक तथा 'पुण्ड्रभूषित' प्रकरणमें वनिक नायक है।

भाण—इसमें धूर्त चरित और उसको माना प्रकारकी दशावर्णना होगी। यह एक चर्यात् पूरा होगा। इसमें एक नट चर्यात् नायक मात्र अभिनय क्रीड़ा करेंगे। यह नट रङ्गभूमि पर या कर माना खर्च और माना प्रकारके भाव भङ्गियोंमें विविध व्यक्तियोंकी सम्शोधन करके समाजकी प्रमत्त करेंगे। यह नायक पाकाग भाषित सुन कर उत्तर प्रत्युत्तर देंगे। इनको भावा विरह संज्ञित होगा। औभाष्य और शौर्यवर्णना दाम अङ्गार वा धीर इसकी सुझना कहनी चाहिए। औभाष्यवर्णन और सारदातिलक आदि भाष्य श्रेणीभुक्त है।

यायोग—इसका इतिहास पुराणादि प्रसिद्ध होगा। यह गर्भसन्धि और विमर्श सन्धिकी होगी और एक

चर्यात् पूरा होगा। श्री लोह कर दूसरे कारवर्णन वर्णना करने होगी। इसका नायक प्रलोचिक समता-गाक्षी सुख होगा। ज्ञाप्य, अङ्गार और शास्त्रान्निध रम इसका नायक होगा। भोगश्रिकरव, धनप्रद विजय आदि यायोग श्रेणीके प्रसंगत है।

समयकार—इसका हस्त श्यात होगा। देवता और पशुरोंका युद्ध-वर्णन हो इसका प्रधान लक्ष्य रहेगा। यह पाद्योपास्य और रसमें भरा रहेगा। नाटकोत्तम पद्म-सन्धिमें इसमें चार सन्धि सन्धिप्रसिद्ध करने चाहिए। केवल विमर्शसन्धि निषिद्ध है। नायक धीरोदात्त होगा, प्रत्येकका फल भिन्न भिन्न होगा। उल्लिख, और मायवी-च्छन्दमें यह रचा जायगा। और रम्य हो इसमें प्रधान है। हस्तो रथादिने परिपूर्ण गुणवत्त सुसुलस-याम और नगरादि ध्वंसका उत्तम रूपमें वर्णन होना चाहिए। यह तीन चर्यात् सम्पूर्ण होगा। 'समुद्रमन्यव' नाटक इसी समयकार श्रेणीके प्रसंगत है। यह नाटक प्रमी दुष्प्राप्य है।

डिम, धीर और भयानक रसप्रधान रूपक है। यह चार चर्यात् समाप्त होता है। पशुर वा देवता इसके नायक हैं। डिम देखो।

ईशान्य—यह चार चर्यात् पूरा होता है और कदपरमप्रधान है। देव देवी इसकी नायक-नायिका है। प्रेम और कोतुक वर्णन इसका प्रधान लक्ष्य है।

ईशान्य देखो।

पद्म—यह पद्मवर्णन एक चर्यात् सम्पूर्ण होता है। किन्तु प्रसिद्ध हस्तान्तको ले कर इसकी रचना की जाती है। यह कदपरम प्रधान है। इसमें मूर्ति अङ्गार और चर्यात् रसोत्ता समाधि होना चाहिए। 'मर्मिष्ठा-ययाति' एक पद्मनामक रूपक है।

योधि—इसके सभी लक्ष्य भावने हैं। यह भी एक चर्यात् पूरा होता है। दण्डनकरी मतानुसार इसमें दो चर्यात् होने चाहिए।

प्रहसन—यह हास्यरसप्रधान रूपक है और एक चर्यात् सम्पूर्ण होता है। समाजकी कुलीनता मन्त्री-धन और रक्षकजनकका विमर्श करना इसका मुख्य लक्ष्य है। राजा, राजप्राप्य, धूर्त, उदासीन, गुरु

फ्राइनिकस, (Phrynichus) ने ५१२ ई.के पहले थेमिस्ती के उस एकमात्र अभिनेता को अभिनेताओं के कार्य में नियुक्त किया। फ्राइनिकस से एक आइसक्युस (Aeschylus) के पहले तक ड्राइडो नाटक के विषय में किसी दूधरे ने कोई विशेष उचितमाधन न किया।

सुसैरियन (Susarion) भ्रमण के उद्देश से जब ग्रीस होते हुए जा रही थी, तब इसा-जम्ब के ५०० वर्ष पहले सन्तो ने अपने समय को दोषावली को विद्वत् करने के लिए वहाँ रङ्गमंच पर जो अभिनय किया था, उसी से (Comedy) की सृष्टि हुई।

गम्भीर भाव या गामोर्ष से परिपूर्ण होने के कारण Tragedy नाटक मगरने सुविचित्र और सभ्य पथि-वासियों का तथा Comedy नाटक हास्यरस और रसिकता से पूर्ण रहने के कारण चरम्य लोगों का चालन प्रिय हो गया है। धीरे धीरे इस विद्वत्तात्मक नाटक का मगर में भी बदल होने लगा है और एविकारमस (Epicharmus), अरिष्टफेनिस (Aristophanes) आदि कितनों ने इस Comedy के अभिनयार्थ चनेक व्यातनामा अभिनेता नियुक्त किये। उस समय Tragedy का अभिनय करते समय अभिनेतागण बड़े बड़े नकाब द्वारा मुख ढक कर, मनुष्यचरित्र में जितने महत् सदगुण होते थे, उन्हें व्यक्त करने की चेष्टा करते थे। इसी प्रकार Comedy के अभिनेतागण कुछ और निम्न-गुणकपाटुका तथा विकटाकार नकाब पहन कर मनुष्य-जातिकी निन्दा करते थे।

यौक लोगोंने Comedy को तीन भागों में विभक्त किया है,—पुरातन, मध्य और नूतन। इसी नूतन Comedy-ने प्राथमिक हास्योपेक्षक नाटक की सृष्टि हुई है। प्राथमिक Comedy यथार्थ में पुरातन Tragedy और Comedy के मेल से उत्पन्न हुआ है। पुरातन Comedy Tragedy के लोक विपरीत है। इस पुरातन और नूतन Comedy की सृष्टि होने के मध्ययुग में मध्य Comedy प्रकाशित हुआ। संभवतः प्लिनीजिनोय गुह मेय होने के बाद ही Comedy का मध्ययुग चारम्भ हुआ है। Comedy के समय से ही प्रकृत यौक Tragedy चारम्भ हुआ है। एक्कार्डस खर्च को पचाहा-घर

(Rehearsal room) से अभिनेताओं को अभिनय करने की रीतिनैतिकी सिखा देते थे। मफोक्लिम (Sophocles) ने रङ्गमंच की यद्येत् उचित को और एक अतिरिक्त नेता को नियुक्त किया। इर्रोपिदिम (Euripide-) Tragedy के चनेक उत्कर्ष गाधन कर गये हैं।

पूर्वोक्त पद्यलेखकों के बाद रोम में Tragedy का एक प्रकार से लोप हो गया, ऐसा कह सकते हैं। उनसे बाद से Tragedy रूपका (Rhetoric) में परिणत हुआ।

रोम में नाटक का प्रचार बहुत पहले से था, ऐसा मान्य नहीं पड़ता। रोम के स्थापित होने के १८१ वर्ष पीछे जब वहाँ भयानक महामारी उपस्थित हुई, उस समय इटलियन के निकट से दो इन लोगों ने पहले पहल अभिनय का भाव प्रवण किया। प्लूटस (Plautus) और टिरेन्स (Terence) के सिवा यहाँ मिनमाग्न नाटक (Comedy) लेखक के और किसी दूसरे का नाम नहीं मिलता। उक्त दो लेखकों ने यौक लोगों से Tragedy का भाव प्रवण किया है। उनके समय की एक भी पुस्तक अभी नहीं मिलती। सेनका मिनेरा (Seneca) नामक एक छोटी पुस्तक देखने में आती है जिसमें केवल १० गोरस नाटक हैं।

रोम में जब देवोपासना बहुत प्रचलन हो उठी थी, उस समय समस्त नाटक एकवारों विस्तृत हो गये थे। यहाँ तक कि, जब वहाँ ख्रिश्चम का प्रचार हुआ, तब जो लोग रङ्गमंच पर अभिनय करते थे, वे अँपटियम (ईसाई) होने से बहिष्कृत हुए। रोम के क्लियसने जब इस मर्म का धारण प्रचलित किया, तब आथनीनारि (Apollinarii) और ग्रेगरी (Gregory of Nazianzen) ने धारवक्त्र से दो एक घटना का प्रवर्णन कर धर्म-मन्त्रमोह नाटक की अवतारणा करने की चेष्टा की दो। किन्तु यथार्थ में वह कार्य के लक्ष्य पर परिणत नहीं हुआ।

इस प्रकार मध्ययुग में (पर्व १५वें शताब्दी का समय) नाटक जब धीरे धीरे विस्तृत हो गया, तब इटली के पविशासित प्रथम नाटक के प्रचार करने में लक्ष्यार्थ हुए। इटली में १५वें शताब्दी की पहले पहल प्राथमिक नाटक सृष्टि हुआ जिसका नाम रग्ना गया

मंस्कृत चन्द्रा-शास्त्रों को सब मन्त्र निवेदि है, यही सब मन्त्र यहाँ निवेदित हैं।

मंस्कृत नाटक जिस प्रणाली में लिखा जाता है, यूरोपीय नाटक उस प्रणाली में नहीं लिखा जाता। हम सोनीके देवों में भी जितने नाटकीय प्रचार दृष्टा है और जो रहा है वे भी मंस्कृत नाटक के आधार पर नहीं लिखे जाते। ये सब नाटक यूरोपीय नाटक के जैसे हैं। हमो वारण यूरोपीय नाटक के कुछ मन्त्र और विवरण यहाँ लिख देना परामर्श है।

पाश्चात्य पण्डितों के मत में नाटक शब्द का प्रकृत अर्थ हम प्रकार है—मित्र मित्र यात्रियों का पायमें जो पोषण वादनाम होता है, यह उनका अभि-मय है। पर्याप्त कोई यात्रि यदि उनके प्रतिनिधि-रूप में वे सब पानाव लगे सब भावों में प्रकाश करे और उनके अभिनय में यदि मूल छटना का विवरण अनुमेय हो, तो उसी को नाटक कहते हैं। साधारण प्रयोग (Dialogue), महाकाव्य (Epic) और गीतकाव्य (Lyric) के साथ नाटक का कुछ सम्बन्ध है। साधारण कथावाचन या कथोपकथन में कथक के समान शोक, दुःख आदि का उल्लास नहीं होता। किन्तु नाटक में भावस्वीत चलाता स्पष्ट है तथा छटनावली का निष्फल बहुत महत्त्व में समझा जाता है। हमो वे पन्थाव्य काव्यों की उपेक्षा नाटक (दृश्यकाव्य) का आधार बहुत बड़ा है। महाकाव्य (Epic poetry) में आधुनिक विदित व्यक्तिगत प्रायः हम पूर्व काव्यशास्त्र में नियुक्त देखे जाते हैं और वह महाकाव्य केवल वर्णन में परिपूर्ण रहता है। गीतकाव्य (Lyric poetry) में अनेक समय वे सब निवृत्त देखे जाते हैं। महाकाव्य यदि तत्रः पूर्व कथा-वाचन में पूर्व रहें और जब अद्विष्ट कार्य वर्णना स्वीत को उपेक्षा करके परिरुद्ध प्रकाशित हो, तो वह नाटक कहना सक्ता है। नाटक प्रधानतः दो भागों में विभक्त है, विद्योगात्मा (Tragedy) और हास्योपेक्ष (Comic)। विद्योगात्मा नाटक एकत्र मन की पान-विदित करना है पर्याप्त जिस छटना का पान्था युग कर समझा निवृत्त भी प्रान्तों की अस्तुता होती है, उसे रोहने की चेष्टा ही नाटक का उद्देश्य है। हास्योपेक्ष नाटक में केवल हास्योपेक्ष करना ही उद्देश्य है।

मनुष्य स्वभावतः अनुकरणीय होते हैं। हम अनुकरणीयता में ही नाटक की सृष्टि होती है। वादनाम की आदिपुस्तक में नाटक के भावों का शब्द (Dramatic dialogue) करने में अनेक उदाहरण मिलते हैं। उस अर्थ में गीतकाव्य के भी अनेक उदाहरण देखने में आते हैं। यथा—सोनेमूनहा गान।

विद्वान् लोग प्रोक्षामियों को दो प्रथम नाटक के रचयिता बतलाते हैं और एथेन्समगर में नाटक में पूर्व प्राय किया ऐसा उन लोगों ने स्थिर किया है। जिस प्रथमावस्था में यहाँ दिग्निजसम् (Dionysus) देव के उद्देश्य में जब कोई उत्सव होता था तब समय समय पर नाटक खेला जाता था। पुराकाव्य में दोषवृत्तों का उल्लास है, कि समवेतवक्त्र (Choral song) वे हमको उत्पत्ति है। परिटल (Aristotle) कहते हैं, कि बाकस (Bacchus) देव के उद्देश्य में जो सब गायक गान करते थे, वे ही गायक इस नाटक के सृष्टा हैं।

यद्यपि आरियन (Arian) ने ईसा-अन्तर्गत ५८ वर्ष पहले कवचरसूत्र (Tragedy) नाटक का आविष्कार किया है, तो भी इस tragedy शब्द का मूल अर्थ ने कर बहुतों ने इस को एक प्रकार की दूसरी व्याख्या की। उन इजिप्टी शब्द का धातुगत अर्थ है, Trago-graph कागज और Ode a song गान। हम अर्थ में वे अनुमान करते हैं, कि जब किसी बच्चे या भेड़ की पवि दो जालो यो, तब पुरातन नाटक जनता को अभिनय के रूप में दिखलाया जाता था। परन्तु अभिनय के भेद के चर्म द्वारा शरीर दृष्ट कर अभिनय करते होंगे, हमो वे वह नाटक का नाम Tragedy रखा है। हमी प्रकार (Comedy) शब्द का अर्थ है Komos a revel पामोदकारी अथवा Komos a village ग्राम। सुतरां Comedy का धातुगत अर्थ होता है पामोदकारी या पको-पामशानियों का गान। क्योंकि वह पामोद-कारिण्य मटर पामोके ऊपर नाटकाभिनय ही समझा दिखलाते थे।

ईसा-अन्तर्गत १११ वर्ष पहले थिएस्पि (Thespis) ने अभिनय में समय सम्बद्ध रूप में कथावाचकों की प्रथा बनाई और गान के साथ एक अभिनय को नियुक्त किया।

प्राइनिकस, (Phrynichus) ने ५१२ ई.के पहले थैस्मिग के उस एकमात्र अभिनेताको अभिनेत्रीके कार्यमें नियुक्त किया। प्राइनिकस ने एस्काइलस (Aeschylus) के पहले तक ड्राइडो नाटकके विषयमें दिवी दूसरेमें कोई विशेष वक्तविभाषन न किया।

सुसैरियन (Susarion) भ्रमणके सङ्गमें जब चीम होते हुए जा रहे थे, तब ईसा-जन्मके ५०० वर्ष पहले उन्होंने अपने समयको दोषावलीको विदूष करनेके लिये वहाँ रङ्गमञ्च पर जो अभिनय किया था, उसोमें (Comedy) की सृष्टि हुई।

गम्भी भाव या गम्भीर्यसे परिपूर्ण होनेके कारण Tragedy नाटक गहरने सुगमिचिन् और सभ्य चर्चा-वाचियोंका तथा Comedy नाटक हास्यरस और रसिकतासे पूर्ण रहनेके कारण चमसभ्य लोगोंका चल्तला प्रिय हो गया है। धीरे धीरे इस विदूषात्मक नाटकका गहरने भी बाढ़र होने लगा है और एपिकारमस (Epicharmus), अरिस्टफेनिज (Aristophanes) आदि कितनोंने इस Comedy के अभिनयार्थ पनेक व्यातनामा अभिनेता नियुक्त किये। उस समय Tragedy का अभिनय करते समय अभिनेतृगण बड़े बड़े नकाब द्वारा मुख ढक कर, मनुष्यचरित्रमें जितने महत्त्व सदृश्य होते थे, उन्हे स्थूल करनेकी चेष्टा करते थे। इसी प्रकार Comedy के अभिनेतृगण सुदृष्ट और निम्न-मुद्रकायोंका तथा बिकटाकार भक्षास पहन कर मनुष्य-जातिकी निन्दा करते थे।

योक लोगोंने Comedy की तीन भागोंमें विभक्त किया है,—पुरातन, मध्य और नूतन। इसी नूतन Comedy में पाश्चनिक हास्योक्षेपक नाटककी सृष्टि हुई है। पाश्चनिक Comedy यद्यपि पुराकाशीन Tragedy और Comedy के मेलमें उत्पन्न हुआ है। पुरातन Comedy Tragedy के ठीक विपरीत है। इस पुरातन और नूतन Comedy की सृष्टि होनेके मध्ययुगमें मध्य Comedy प्रकाशित हुआ। सम्भवतः प्लोपनिथोय गुरु मीप होनेके बाद ही Comedy का मध्ययुग चारम्भ हुआ है। Comedy के समयमें ही प्रसूत योक Tragedy चारम्भ हुआ है। एस्काइलस मध्य ही पञ्चाङ्ग-चर

(Rehearsal room) में अभिनेताओंको अभिनय करनेकी रीतिनीतिकी शिक्षा देते थे। सफोक्लिज (Sophocles) ने रङ्गमञ्चकी यद्येष्ट सचित्र को चोर एक अतिरिक्त नेताको नियुक्त किया। इउरोपिडिज (Euripides) Tragedy के अनेक उत्कर्ष साधन कर गये हैं।

पूर्वार्ध पद्यलेखकोंके बाद चीममें Tragedy का एक प्रकारसे मोप हो गया, ऐसा कह सकते हैं। उनके बादसे Tragedy रूपका (Rhetoric) में परिणत हुआ।

रोममें नाटकका प्रचार बहुत पहलेसे था, ऐसा मान्य नहीं पड़ता। रोमके स्थापित होनेके १८१ वर्षोंके लंबे वहाँ भगवान् महाभारती उपस्थित हुई, उस समय इटालियन के निकटसे ही इन लोगोंने पहल पहल अभिनयका भाव ग्रहण किया। प्लाटस (Plautus) और टेरेंस (Terence) के सिवा यहाँ मिननाम नाटक (Comedy) लेखकों और कितनों दूसरोंका नाम नहीं मिलता। उक्त दो लेखकोंने योक लोगोंने Tragedy का भाव ग्रहण किया है। उनके समयको एक भी पुस्तक अभी नहीं मिलती। केवल मिनेका (Seneca) नामक एक छोटी पुस्तक देखनेमें आती है जिसमें केवल १० ओरस नाटक हैं।

रोममें जब देवोपासना बहुत प्रचलन की उठी थी, उस समय समस्त नाटक एककारणो विलुप्त हो गये थे। यहाँ तक कि, जब वहाँ ख्रिष्टधर्मका प्रचार हुआ, तब जो लोग रङ्गमञ्च पर अभिनय करते थे, वे अपेटिज्म (ईर्षा) होनेसे बञ्चित हुए। रोमके जन्मदिनसे जब हम मर्मका पार्सिन प्रचलित किया, तब पार्सिनीनारि (Apollinarij) और ग्रेगरी (Gregory of Nazianzen) ने बाइबलसे दो एक घटनाका चयनसंग्रह कर धर्म-मन्थनोय नाटककी चयनारण्य करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु यद्यपि वे सब कार्योंके रूपमें परिणत नहीं हुए।

इस प्रकार मध्ययुगमें (जबसे १५वीं शताब्दीका समय) नाटक जब धीरे धीरे विलुप्त हो गया, तब इटलीके पवित्रासिमस प्रथम नाटकके प्रचार करनेमें सनकाय्य हुए। इटलीमें १५वीं शताब्दीको पहले पहल पाश्चनिक नाटक मुद्रित हुआ जिसका नाम रखा गया

सफोनिस्बा (Sophonisba)। इसके सिवा 'ट्रिनिने' (Trisino) से। दोहरे पद्यात्म्य के Tragedy और Comedy के बीच कोने लगभग कई एक पुस्तकों की रचना की।

१८वीं शताब्दी में रिनासिनि (Rinuccini) ने एक नाटक के नीति में बहुत कुछ परिवर्तन करके मेलोड्रामा (Melo-drama) को सृष्टि की।

मिलन (Milan) के समय में रवेना (Ravenna) के समय तक Tragedy और Comedy का विमल रूप पादर नहीं था। मोतिनाटा (Music Opera) का उस समय पच्चा पादर होने लगा। धीरे धीरे बहुतों ने पच्छे पच्छे नाटक लिख डाले थे।

नाटक के विषय में स्पेन का कोई पुरातन इतिहास नहीं मिलता। पर लॉ, लोपेज-दे-वेगा (Lopez-de-Vega), काल्डेरन (Calderon) आदि कितने व्यक्तियों के लिखित नाटकों का उसका स्वास मिलता है।

फ्रांसीसीयों के मत में नाटक में प्रधानतः तीन गुणों का होना आवश्यक है जिनका नाम है ऐकता (Unity) कायन।

(क) नाटक में एकमात्र विषय (plot) रहेगा। यदि हममें छोटी छोटी घटनायों को संयोजित करने की आवश्यकता हो, तो उसे इस प्रकार संयोजित करना पड़ता है जिसमें वह मूल घटना को परिवर्तित हो।

(ख) माय घटनाएं एक जगह संघटित होना आवश्यक है।

(ग) माय घटनाओं का एक ही दिन में और एक ही कारवर्ष होना पड़ता है।

जोदेलो (Jodelle) ने पहले पहल यथार्थता का पक्ष धरकर एक Tragedy नाटक प्रस्तुत कर उसे फ्रांस के राजा दितीय हेनरी के सामने रखा। उसके बाद कर्नेलो (Corneille), मलियर (Moliere), रसिनी (Racine) और वोल्टेयर (Voltaire) आदि कितने ऐसे हुए जिन्होंने Tragedy लिख कर स्वाति प्राप्त की। किन्तु एक नाटक लिखने के दिन, इटली और स्पेन में नाटकों का प्रचुर प्रचार किया है।

लॉमिंग (Loring), गेटे (Goethe),

शिलर (Schiller) आदि अन्य लेखकों ने प्रचुर नाटक लिखकर Tragedy लिखने के समता की प्राप्ति दियी है। किन्तु कबने यहां नाटक का विषय आरम्भ हुआ, उसका ज्ञान बहुत कठिन है।

इटली में धर्ममन्त्रि में पहले पहल नाटक अभिनय प्रदर्शन (Dramatic exhibition) आरम्भ हुआ था नहीं, इस विषय में सन्देह ही हो सकता है। किन्तु यहां के धर्मयात्रा (Clergy) को उस अभिनय का व्यवस्थापन करने से, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। पुरोहित लोग (Ecclesiastics) वह सब धर्म-पुस्तक में दो एक घटनाओं का चरित्र चित्रण कर दो एक पुस्तक लिखा करते थे और अपने आप ही उसका अभिनय भी किया करते थे। उस प्रकार की पुस्तक माध्यामिक दो व्यक्तियों में विभक्त होती थी। एक व्यक्तियों पुस्तक चरित्र चित्रण घटनामय (Miracle) के आधार पर रची जाती थी और दूसरी मोरल (Moral) के अन्तर्गत भाव पर। बाद में जो पद्य, घटनाओं का महा-काव्य के आधार पर प्रयोज्य पुस्तकालयों और घटना-वर्ती का माय काल्पनिक दृश्य (Imaginary features) के संयोग से दितोय प्रकार की पुस्तक लिखी जाती थी।

यूरोप में धर्मसंस्कार (Reformation) प्रवर्तन के पहले पहल ही इस प्रकार की अभिनय प्रवर्तित हो और उस धर्मसंस्कार द्वारा भी उसका व्यवस्था नहीं हुआ। १६वीं शताब्दी के मध्य भाग में फ्रांसिस टॉर्ने नाटक लिखने की यथा योग्यता का काम ही गई और कई प्रयोगों में नाटक लिखे जाने लगे। इटली में १५६० की एक Comedy पुस्तक लिखी है जिसका नाम है राल्फ रॉडर (Ralph Roister Doister)। निकोलस उडल (Nicolas Udall) नामक एक मित्र उसके प्रेषिता है इसके दस वर्ष बाद नॉर्टन (Norton) और मार्क बुकहास्ट (Lord Buckhurst) ने पहले पहल Tragedy लिखी। यह पुस्तक पश्चिमाश्वत्थ में लिखी गई और उसका नाम रखा गया गोरबुडोक (Gorbudoc)। किन्तु यह पुस्तक नीरस, कठिन और पश्चिमाश्वत्थ वर्णन से परिपूर्ण थी। इसी प्रकार के नाटक की इसी प्रकार की प्रवर्तित हो। निम्न लिखित

ग्रामर गार्टनस गिडन (Bishop Stills' Grammar Gurtons' Needle) भी रडटर लडटरको सपेचा उद्यतभावसे लिखी नहीं गई।

मारलो (Marlow) ने पहले पहल रङ्गमञ्चके ऊपर अभिवाचननाट्यकी अभिनय-प्रथाका प्रचार किया। वेष्टि प्रेसबोयने नाटक लिखनेकी प्रक्रिकी पराकाष्ठा दिखलाई। उनके बाद कितनेने मित्राचर और अभिवाचर ग्रन्थमें अनेक नाटक लिखे हैं।

चीनके अधिवासी बहुत प्राचीनकालसे नाटकका व्यवसाय करते पा रहे हैं। ये लोग नाटककी प्रधान धर्मरत्नाकी चेष्टा नहीं करते। उनका नाटक पाँच चहुँ-में चयवा एक प्रस्तावना और छ चयवाओं (Break) में पूरा होता है। ये लोग अभिनयके साथ मञ्चोत्तकी योजना करते हैं और नाटकस्य पद्यका परस्पर मेल रखते हैं। देवके पाचार, व्यवहार, रीति, नीति पादिका वर्णन करना ही उनके नाटकका मुख्य उद्देश्य है और नाटककी घटना भी साक्ष्योक्त-कल्पित और सुकौमलसे पूर्ण रहती है।

यूरोपीय नाट्यशास्त्रज्ञा पूर्ववर्णित इतिहास पद्धतिसे बहुतने लोग कहते हैं, कि प्रोसे की नाटकका प्रथम सूत्रपात हुआ। प्रसिद्ध जर्मन-पण्डित वेबर (Weber) ने लिखा है, 'कालिदासके ग्रन्थमें धोक्तदासो (यवनो) का उल्लेख, प्रियदर्गोकी गितान्निविधर्षित प्राकृतभाषाकी चेतना नातिप्राचीन प्राकृत भाषाका प्रयोग इत्यादि प्रमाणोंसे यह बोध होता है, कि ईसा-जन्मके कई मताब्दी बाद ये सब नाटक रचे गए हैं (१)।

किन्तु हम पायात्वा पण्डिताके मतानुसर्षी न हो सके। सोसदेगमें जब नाटकका नाम तक भी न था, उससे बहुत पहलेसे ही 'नटपुत्र' वा नाटक प्रचलित हुआ है। रामायण, महाभारत, हरिवंश पादि प्राचीन ग्रन्थोंमें नाटकका प्रयोग यद्येष्ट है (२)। पहले की लिखा

(1) Dr. Weber's Sanskrit Literature, p. 203.

(२) रामायण १।५।८, २।६।४, मार्कण्डेयपुराण १०।४ महाभारत, पृष्ठा २५ अ०। हरिवंशमें है—

"रामायणं महाभारतमुद्देशं नटपुत्रम् ॥"

(हरिवंश ८६०२)

जा चुका है, कि हिन्दुशास्त्रके मतानुसार भरतमुनिने ही पहले पहल नाट्यशास्त्र प्रकाश किया। अभी देखते हैं, कि पाणिनि मुनिने गितानिन्धु और लगाम नामक दो नटपुत्रकारोंका उल्लेख किया है (३)।

गितानिन्धु और लगामने नटपुत्रका प्रचार किया। ऐसा कहनेमें मैलान और कार्याय शब्द द्वारा नटका बोध होता है। कात्यायनने वार्त्तिकमें 'गैमान' शब्द प्रकाशित किया है।

नटपुत्रकार गितानिका नाम युक्तप्रभुमेंदोय मतप्रदायक (११।५।३१), सामवेदोय पतुपदस्य (४।५।३।५, ३।५) पादि पद्यमत् प्राचीन वैदिकग्रन्थोंमें देखा जाता है। विख्यात ज्योतिर्विद् शङ्कर बालकृत्य दोषित ने गणना करके बतलाया है, कि चार हजार वर्ष पहले मतप्रदायक रचा गया है (४)। इस हिसाबसे मानित होता है, कि नटपुत्रकार गितानि चार हजार वर्ष पहले विद्यमान थे। उनके समय प्रोभमें किसी प्रकारका नाटक प्रचलित न था।

मैलान शब्दसे नटका बोध होता है। वानमनेय संज्ञितमें लिखा है—

"वृत्तात् सन् गीताय वैद्यप (५) वर्णय वमावर ॥"

(१०।५)

सुतरां देखा जाता है, कि नटका वामनशर वैदिक समयसे भारतवर्षमें प्रचलित है।

बौद्धोंके प्राचीन धर्मग्रन्थमें भी नाट्यरङ्गका उल्लेख देखनेमें आता है। जिस समय भगवान् बुद्ध राजगृहमें उपस्थित थे, उस समय मोक्षत्यागन और उपस्थि नामक उनके दो शिष्योंने सबके सामने अभिनय किया था (६)।

(३) "शाराधर्षितकालिन्ध्या मितुनटपुत्रो।"

(पा ४।१।११०)

"वर्मद्वेष्टाशालिनिः। (पा ५।१।१११)

(५) Indian Antiquary, for 1893.

(६) "वैद्यप नट"—महोदय

(१) Asiatic Researches, Vol. XX, p. 50. अथवा सत्तेने दिया है, "In the oldest Buddhist writings the witnessing of plays is spoken of as something usual" (I. AK, II, p. 61)

हाथ में बरने की छार नहीं करने पर भी पञ्चायत विनम्र पादि पञ्चायतमा पण्डितोंने एक बारके ऐसा बोलार दिया है, कि भारतीय नाटक भारतवासियों का अपना है। नाटकके मन्त्रमें हिन्दुत्व किसी दूसरे प्राणिके निकट परपो नहीं है। विनम्र साहबने माफ माफ किया दिया है—

"Whatever may be the merits or defects of the Hindu drama, it may be safely asserted that they do not spring from the same parent, but are unmingledly its own. The nations of Europe possessed no dramatic literature before the fourteenth or fifteenth century, at which period the Hindu drama had passed into its decline." (०)

प्राचीनकालके हिन्दूराजगण नाटकाभिनयमें उत्साह दिया करते थे। कितने तो व्यरचित नाटक भ्रष्ट रोम कर जनताको प्रसन्न करते थे। उनमेंसे काव्यकुलाधिपति हर्षवर्धन चोर शाक्यभारिके पधिवति चाङ्गमान-मंशीय विपदपाल पदपो है। चञ्चलोरके तारागङ्ग पहाड़के एक कोठेमें एक समजिद है जो प्राचीन हिन्दू-प्रामादके उपरपरमें बसाई गई है। उस समजिदमें पत्थरके ऊपर दो प्राचीन संस्कृत नाटक खुदे हुए हैं जिनमेंसे एक महाकवि मोमदेवरचित 'कलितविश्वराज-नाटक' है चोर दूसरा महाराजाधिराज विपदपाल रचित 'हरकंदिनाटक'। गीतिका नाटक १२१० मन्वत्में (११२१ ई०में) रचा गया है। उस दो नाटकोंमें चनेक ऐतिहासिक कथाएँ हैं। हिन्दूराजगण नाटकका जिन प्रकार पाठ्य करने थे, वह उस पोटिननिधि देवर्तमें हो जाता जाता है (८)। हम प्रकारका निदर्शन मंभारमें चोर नहीं हो नहीं है।

संस्कृत नाटकमें नाट शास्त्रार देवर्तमें जाता है जो कविने पढ़ून कविार मजिहा परिचय है। उत्तर-

(०) H. H. Wilson's Theatre of the Hindus, Vol. I. Preface, p. XI.

(८) इस दो विभाजितियों के अन्तिम नाटकका कुछ अंश Indian Antiquary, Vol. XX. p. 203 में मुद्रित हुआ है।

रामचरितनाटकमें हम प्रकारका नाटकाभिनय देवर्तमें जाता है। कविने हमके मध्य रामभीताका निम्न दिवनाया है। महाकवि मेमगीपर भी सुपण्डित 'हमनेट' नामक नाटकमें हम प्रकारका नाटकाभिनय करते परने पसन्दारण रचनाकीमसका परिचय दे गये हैं।

कानिदास, भवभूति, ज्योह्य पादि प्रधान कवियोंने जो सब नाटक प्रपन्न किये हैं, वे पृथीके सर्वप्रधान कवियोंके नाटकके जैसे उत्कृष्ट हैं, यह सुकल्पनी बोलार करना होगा। टमरुप, माहित्यद्वय, माहित्य नार चोर कुवलयानन्द पादि कव्योंमें जिन सब नाटकों का उल्लेख है, सभी उनका पधिवति दुःप्राण्य है। तो भी यदि उनका अनुमान किया जाय, तो कल्पने कम था। मो संस्कृत नाटक पद्यम मिन गते हैं। कुछ दिन पहले बिदाम् लोग नाटकका कुछ भी पार्श नहीं करते थे। यहाँ तक कि भर विनियम जोमको कोढ़ भी नाटकका प्रकृत विवरण भलीभांति समझा न सके थे। राधाबाता नामक एक ब्राह्मणने नाटक पत्र-वेजो पमिनयके महान है ऐसा समझा दिया था। हम देवर्तमें लोग पहले पद्यम नाटकोंको कपिला प्रयोग-बन्धोदय नाटककी मूब तन समने पढ़ा करीं थे। पीछे वैष्णवगण भक्तिरगमधाम धैतव्यचन्द्रोदय, मन्त्रमधय, विदग्धमाधय, दानकेनिकोगुदो पादि नाटक पढ़ने लगे। किन्तु कानिदास भवभूति पादि प्रधान कवियोंके हम-काव्यमें वे दिनहुन पढ़ा-सुन थे।

यूरोपमें नाटक रोता जाता है, इसीमें वही नाटकका मूब प्रचार है। हम लोगोंने देवर्तमें प्रमिद नाटक पमि-गवके लिये चोर रचा जाता था। भवभूतिने नाट-पारोद पयुरोधमें काव्यप्रियनाथ महादेवके कथा-महोत्सवमें पमिनयके लिये उत्तरपणितो रचना की। मातृगुप्तकी मन्त्रां पमिनयके लिये हयपोषक नाटक रचा गया।

किन्तु पात्रकन रङ्गालमें पणाल् विदेहरमें जैमा पमिनय होता है, पहले वही पमिनय होता मा मा नहीं। उसका निषय करना कठिन है।

महोत्सव-महोत्सवमें हमका निम्न यन्त्रासाया निपा है। रङ्गालय प्रयुक्त करनेके विषयमें मैं हम प्रकार

निष्ठ गये हैं—रङ्गालयका विस्तार कमसे कम २० हायका होना चाहिये। नाटके नायकको पूर्व को ओर मुंह किये बैठना चाहिये। नायक जिस ओर बैठे, उसी ओर नायकको खड़ा रहना चाहिये। वे अच्छी अच्छी योगात्मके अपनेको मज्जाए रहें ओर ताल, लय, ध्वर आदिमें एकदम पट्ट रहें। नायकों के दोनों ओर वाद्यस्थान रहना चाहिये। नाटकों के मध्य कमसे कम ४ स्रद्धाका रहना आवश्यक है। दक्षिणार्धमें तुल्यस्थान ओर पूर्व भागमें यवनिका रहें। पल्ल पट्टको यवनिका कहते हैं। यह यवनिका कपड़े का परदा विभेद है। इससे अभ्यन्तर जेय्य पर्याप्त वैभवाचानाटिका स्थान रहें। तोन या पाँच नट अभिनयकार्य सम्पन्न करें। उन्हें नाट्यविषयमें सुनिपुण रहना चाहिए। धर्मेक शुभधीन नट वा नटीके रहनेसे कोई काम अच्छा नहीं होता।

नाटकका लम्बा चौड़ा होना उचित नहीं। जो नाटक एक घण्टेके अन्दर समाप्त हो, वही नाटक अष्ट-रागका विषय होता है, दोघे नाटक केवल विरागका कारण होता है। जो नाटक जिस रसप्रधानका होना, उसमें उसी रसका सहोपन होता है। नायकको उसी रसके अनुसार गान करना चाहिए। पल्लव प्राचीनकाल में जो अभिनय दृष्टा करते थे, उनमें चित्रपट काममें नहीं लाए जाते थे। सिकन्दरके पानिके बोद्धे उनका प्रचार हुआ। अब भी रामलीला, रासलीला बिना परदेके होती ही हैं।

नाटकलक्षण (सं० स्त्री०) नाटकस्य लक्षणं। नाटकका लक्षण। नाटक देखो।

नाटकमाता (सं० स्त्री०) यह घर वा स्थान जहाँ नाटक होता है।

नाटका-देवदार (हिं० पु०) भारतवर्षके दक्षिण ओर कर्नाटमें मिलनेवाला एक छोटा पेड़ या झाड़ू। इसकी सड़कीये एक प्रकारका तेल निकलता है जो आँखोंमें लगाया जाता है। इस पेड़के फल ओर पत्तियोंमें पाचन, बदन ओर भेदन शक्तियाँ होती हैं। भारतवर्षमें इसकी पत्तियाँ ओर फल दुर्भिक्षमें खाये जाते हैं। गमक ओर मिर्चके साथ लोग पत्तियोंका माक बना कर भी खाते हैं।

नाटकावतार (सं० पु०) किमी नाटकके बीच दूसरे नाटकका अभिनय। शेषविषयके 'टैमसेट'में भी इसी प्रकार अभिनय होना दिखाया गया है।

नाटको (हिं० पु०) नाटक करनेवाला, नाटक करने कीविका करनेवाला।

नाटकोय (सं० वि०) नाटके भवः तत्र मर्त्यः नाटक-ज्ञः। नाटक-सम्बन्धी।

नाटना (हिं० क्रि०) १ प्रतिष्ठा पाटि पर खिर न रहना, इनकार करना। २ अच्छीकार करना।

नाटयमन्त्र (सं० पु०) रागविशेष, एक राग।

नाटा (हिं० वि०) १ छोटे कदका, छोटे डोलका। (पु०) २ छोटे डोलका, बैल या गाढ़।

नाटाकरञ्ज (सं० पु०) हृद्यविशेष, एक प्रकारका करंज। पर्याय—हृत्तपूर्ण, प्रकीर्ण, भूतिकरञ्ज, भूतिका, भूतिका, सकण्ठक, ककुभ, चन्निमिष, शरठ, कनिकाय ओर सोम-वल्क। गुण—खटु, तिक्त कषाय, वनकर, क्षार, मंजी-चक, विरेचक, उष्ण, क्षामि, स्रग्दरोग, चर्मरोग, कुष्ठ, शुक्म, योनिदोष, घर्ष, प्रण, विस्फोटक ओर उदावर्त्त-रोग-नाशक।

नाटागढ़—१४ परगनेके अन्तर्गत एक पक्षीधाम। यहां दोतन ओर मोहिके चक्के चक्के द्रव्य लगते हैं। यहां एक बखून भी है जिसका राखें गवर्नमेंपड़की ओर-से दिया जाता है।

नाटान्न (सं० पु०) तरम्ब, ज, तरबूज।

नाटार (सं० पु०) नट्या नटस्य वा अपत्यम्-नट चारक, (आश्वत्थाम्) वा क्षारि१०) नटोकी सन्तति।

नाटिका (सं० स्त्री०) १ हम्प्रकाव्यभेद, एक प्रकारका हम्प्रकाव्य। साहित्यदर्पणमें इसका लक्षण इस प्रकार निरुद्ध है—यह एक प्रकारका नाटक ही है। नाटकमें जिन सब नट्यलक्षणा विषय निरुद्ध गया है, हममें भी वे ही सब लक्षण होते हैं। केवल एक इतना ही है, कि इसका हस्तान्त कथित होता है, नाटकके अन्त अन्त-हस्त पर्याप्त पुरापादि प्रविष्ट नहीं होता। हममें चार पद होते हैं। नायिका राजकुलोद्भवा ओर नवानुरागिणी तथा नायक ओरललित होता है। इसमें ओ-प्राय अधिक होते हैं। नाटक देखो।

आहार के बारे में भी कहते हैं कि हमारे पास भी वही बात है। विनयन पादि व्यासनामा पण्डितोंने एक बारके ऐसा भी कहा है कि भारतीय नाटक भारतीय भाषा का है। नाटक के सम्बन्ध में हिन्दूगण किसी दूसरी भाषा के निराले नहीं हैं। विनयन साहबों का यह विषय दिया है—

"Whatever may be the merits or defects of the Hindu drama, it may be safely asserted that they do not spring from the same parent, but are unmingledly its own. The nations of Europe possessed no dramatic literature before the fourteenth or fifteenth century, at which period the Hindu drama had passed into its decline." (a)

प्राचीनकाल में हिन्दूराजगण नाटक अभिनय में उल्लास दिया करते थे। जिसमें तो सरस्वति नाटक स्वयं खेल कर जनता को प्रमोद करते थे। उनमें से काव्यकुलाभिनि इषावर्धन और भास्कराचार्य के अधिपति चाणक्यमानवर्णीय विद्वज्जन पदवी हैं। अजमेर के तारागढ़ पहाड़ के एक कोठे में एक ममजिद है जो प्राचीन हिन्दू-प्रामाद के अवशेषों से बनाई गई है। उस ममजिद में पत्थर के ऊपर दो प्राचीन संस्कृत नाटक खुदे हुए हैं जिसमें से एक महाकवि सोमदेव रचित 'ललितविजयराज-नाटक' है और दूसरा महाराजाधिराज विजयपाल रचित 'हरदेवनाटक'। गीतिका नाटक १२० मन्त्रों में (११५१ ई० में) रचा गया है। उक्त दो नाटकों में पत्थर के ऐतिहासिक कलाएँ हैं। हिन्दूराजगण नाटक का जिस प्रकार आधार करते थे, वह उक्त ऐतिहासिक विद्वानों के जो जाना जाता है (c)। हम प्रकारका निर्माण मन्त्रों में और कहीं भी नहीं है।

संस्कृत नाटक में नाटक आधार देवों में पाया है जो कवि ने बहुत कविता प्रशिक्षण परिचय है। उदाहर-

(a) H. H. Wilson's Theatre of the Hindus, Vol. I, preface, p. XI.

(c) इतिहास विभाग में ऐतिहासिक नाटक का कुछ वर्षों का अनुसंधान, Vol. XX, p. 205 में उद्धृत हुआ है।

रामचरितनाटक में हम प्रकारका नाटक पाया है। कविने इसके साथ रामचरितनाटक दिया गया है। महाकवि सोमदेव भी नामक नाटक में हम प्रकारका नाटक पदधारण रचना को प्रशिक्षण परिचय है। कामिदास, भवभूति, सोमदेव पादि प्रसिद्ध नाटक प्रचलन में हैं, ये पुराण कवियों के नाटक के जैसे उल्लास हैं, जो कहार करमा होगा। दमकव, नाट्यकार और कुवलयानन्द पादि पद्यों में जिसका उल्लास है, सभी उल्लास अधिकतर ही यदि उल्लास प्रचलन में किया जाय, तो मो संस्कृत नाटक प्रचलन में महाकवि दिन पहले विद्वान् लोग नाटक का निर्माण नहीं करते थे। यहाँ तक कि सरस्वति को भी नाटक का प्रकृत विवरण भवभूति के सके थे। राधाका नामक एक प्राचीन कवि ने भी अभिनय के महान् है ऐसा समाधान दिया है। देवों के लोग पहले उल्लास नाटकों को पदधारण नाटक को स्वयं तन मन से पढ़ा कर, वे पदधारण भास्करमानवर्णीय पदधारण विद्वज्जन, दानदेव को मुने पादि नाटक किन्तु कामिदास भवभूति पादि प्रधान कवि व्यास ने ने विनयन पहाड़, मुप धी।

यूरोप में नाटक रीति जाना है, हमीने महाकवि प्रकार है। हम लोगों के देवों में प्रसिद्ध नाटक में निम्न दो रचा जाता था। भवभूति के नाटक का रीति यूरोप में कामिदास महादेव के महाकवि में अभिनय के निम्न उल्लास रचा गया है। महाकवि के समा में अभिनय के निम्न उल्लास रचा गया।

किन्तु प्राचीन राजाओं में पदधारण विद्वज्जन अभिनय होता है, पहले मोहा अभिनय होता है, उल्लास निम्न करना कवि है।

महाकवि सोमदेव में हमका विषय पदधारण है। राजाओं प्रचलन करने के विषय में हम

जित गये हैं—रङ्गमञ्चका विस्तार कमसे कम २० फाथका होना चाहिये। नाट्यके नायकको पूर को घोर मुँह किये बैठना चाहिये। नायक जिस घोर बैठेगे, उसी घोर नायकको खड़ा रहना चाहिये। वे अच्छी बच्छी योग्याये अपनेकी सजाए रहें घोर तान, लय, स्वर आदिमें एकदम पट्ट रहें। गावको 'के दोनो' घोर वाद्यस्थान रहना चाहिये। वादको 'के मध्य क्रम' के कम ४ म्दहका रहना आवश्यक है। दक्षिणार्धमें तुयस्थान घोर पूर्वभागमें यवनिता रहें। घना पटको यवनिता कहते हैं। यह यवनिता कपड़ेका परदा विषय है। इसके पश्चात्तर नेपथ्य पर्याप्त धैर्यरचनादिका स्थान रहें। तीन वा पाँच नट अभिनयकार्य सम्पन्न करें, उन्हें नाट्यविषयमें सुनिपुण रहना चाहिए। अपनेक शुष्कीन नट या नटोंके रहनेसे कोई काम अच्छा नहीं होता।

नाटकका लम्बा चौड़ा होना उचित नहीं। जो नाटक एक पहरके पन्दर ममात्त हो, वही नाटक धनु-रागका विषय होता है, दोघनाटक केवल विरागका कारण होता है। जो नाटक जिस रसप्रधानका होगा, उसमें उसी रसका उद्दीपन होता है। नायकको उसी रसके धनुसार गान करना चाहिए। पत्यन्त प्राचीनकाल में जो अभिनय हुआ करते थे, उनमें विषयपट काममें नहीं लाए जाते थे। सिकन्दरके भानेके बाँझे उनका प्रचार हुआ। अब भी रामलीला, रासलीला बिना परदेकी होती ही हैं।

नाटकलक्षण (सं० ली०) नाटकस्य लक्षणं। नाटकका लक्षण। नाटक देखो।

नाटकमात्रा (सं० ली०) यह घर वा स्थान जहाँ नाटक होता है।

नाटकादेवदार (हि० पु०) भारतवर्षके दक्षिण घोर सङ्गामें मिननेवाला एक छोटा पेड़ या झाड़ू। इसकी सकड़ीसे एक प्रकारका तेल निकलता है जो जादोंमें लगाया जाता है। इस पेड़के फल घोर पत्तियोंमें पाचन, खेदन घोर भेदन शक्तियाँ होती हैं। भारतवर्षमें इसको पत्तियाँ घोर फल दुर्भिक्षमें ग्राह्य लाने हैं। ममक घोर मिष्टके साथ लोग पत्तियोंका माक बना कर भी खाते हैं।

नाटकावतार (सं० पु०) किसी नाटकके बीच दूसरे नाटकका अभिनय। 'शेषविषयके 'टैमसेट'में भी इसी प्रकार अभिनय होना लिखाया गया है।

नाटकी (हि० पु०) नाटक करनेवाला, नाटक करनेकी जीविका करनेवाला।

नाटकोय (सं० त्रि०) नाटकके भयः तत्र वर्णः नाटक-क। नाटक-सम्बन्धी।

नाटगा (हि० क्रि०) १ प्रतिष्ठा पाटि पर स्थिर न रहना, इनकार करना। २ पक्षीकार करना।

नाटयसन्त (सं० पु०) रागविशेष, एक राग।

नाटा (हि० वि०) १ छोटे कदका, छोटे डोलका। (पु०) २ छोटे डोलका में लया गया।

नाटाकरञ्च (सं० पु०) हृत्तविशेष, एक प्रकारका करंज। पर्याय—हृत्तपूष्प, प्रकीर्ण, पुनिकरञ्च, पूतिका, पूतिका, सकण्टक, ककुभ, पन्निगिख, गरठ, कानिकान घोर सोम-वस्त। गुण—खटु, तिक्त कषाय, वनहर, प्वर, मंकी-चक्र, विरेचक, उष्ण, क्षामि, उदररोग, चर्मरोग, कुष्ठ, शुक्ल, योनिदोष, पर्याय, व्रण, विस्फोटक घोर उदामत्त-रोग-नाशक।

नाटागद्—१४ परगनेके पन्तगत एक पक्षीग्राम। यहां पोतन घोर सोहेके पच्छे पच्छे दृश्य बनते हैं। यहां एक शकुन भी है जिसका खूब गवर्ननिपटकी घोर-से दिया जाता है।

नाटान्न (सं० पु०) तरबूज, तरपूज।

नाटार (सं० पु०) नट्या नट्य या पयत्यम्-नट पारक, (भारतरीचाम्। प। ४। १। १०) नटोकी सन्तति।

नाटिका (सं० ली०) १ दृश्यकायमेट, एक प्रकारका दृश्यकाय। साहित्यदर्पणमें इसका सत्त्व इस प्रकार लिखा है—यह एक प्रकारका नाटक ही है। नाटकमें जिन सब लक्ष्योंका विषय लिखा गया है, हममें भी है ही सब लक्ष्य होते हैं। केवल फर्क इतना ही है, कि इनका हस्ताना कल्पित होता है, नाटकके जेवा व्यात-हस्त पर्याप्त पुराणादि प्रसिद्ध नहीं होता। हममें बार यह होते हैं। नायिका राजकुमारिका घोर राजागुणियो तथा नायक घोरमन्त्रित होता है। हममें जो-प्राप्त पक्षित होते हैं। नाटक देखो।

२ भागिनीविधाय, एक भागिनीका नाम । यह मन्त्राचार्य, जन्मोः पोर पक्षोः शत्रुं लोगमें बन्तो है पोर मन्त्राचार्य भागिनीको मानी जानी है । इसका अर्थप्राम यह है—“भा ई म म प ध नि मा ॥”

मूर्ति—

“वि” शब्दो सुमं गन्तव्ये विचित्रात्मना कर्त्तव्ये ।

कर्मणां च इव श्रमा माटी सुमारी चरितान्तरा ह”

ये मन्त्राचार्यकी स्त्री हैं । मारदमंदिताम इन्हे कर्त्तव्यकी स्त्री समझा है पोर वज्रमन्त्रनुसार ये दीवजकी स्त्री मानी जाती हैं ।

माटि (मं० वि०) मन्त्रविष्णु । १ कृतमित्रव, त्रिमय चमित्रव किया गया हो । (पु०) २ चमित्रव ।

माटिज (मं० की०) माटिज प्रायं कर्त्तु । मन्त्रकृत, यह भी चमित्रव करता ही ।

माटिय (मं० पु०) मन्त्रा चमित्रव । मन्त्रो-टक् । मन्त्रोकी मन्त्राति ।

माटिर (मं० पु०) मन्त्रा चमित्रव मन्त्रो-टक् । मन्त्रो-कृत, मन्त्रोकी मन्त्राति ।

माटीर—१ ब्रह्मन् प्राज्ञाके अन्तर्गत राजाको त्रिमिका एक उपविभाग । यह अर्थात् २४’ ०” में २४’ ४८’ ०” तथा देगा ८८’ ५१’ में ८८’ २१’ ०” के मध्य अवस्थित है । जलमंथ्या ४२२१८८ पोर भूपरिमाण लगभग ८१६ वर्गमील है । इसमें ११ शहर पोर १०२० ग्राम लगते हैं ।

२ एक उपविभागका एक शहर । यह अर्थात् २४’ २६’ ४०” पोर देगा ८८’ १’ ०” के मध्य अवस्थित है । जलमंथ्या प्रायः ८१५४ है । पहले यही स्थान त्रिमिका प्रधान शहर था । मन्त्रिज यहाँकी पादद्वारा चमित्रो न होनेके कारण रामपुर-बेसियामें शहर बस कर बना गया । यहाँ १८१८ ई० में मन्त्रिजमन्त्रोकी स्थापना हुई है । यहाँ उपविभाग मन्त्रमंथ्य कावर्णिज पोर एक कोटा शासक है त्रिमि वंशक १२ वंसी रहे जाते हैं ।

विशेष—मन्त्राचार्यका मन्त्रो माटीर कोजिमें काम देखाय जायक एक ब्राह्मण रहते हैं । ये पहले बाबुर-जारीके मन्त्रोमन्त्रा हैं । इनके तीन पुत्र हैं, रामजीवन, वज्रमन्त्र पोर विष्णुनाथ । रामजीवन पुत्र पिताके कर्मोंकी इस ओरमें धन बने । दिगीय पुत्र वज्रमन्त्र पुत्रिय-

राजवंशोद्भव दण्डनाथपक्षे यहाँ मुबारका काय करमे लगे । पोर पोर ये सुमममानी पाईलने चको २४४ जगद्वार हो कर जवाब मुमिंदकुभी पाई दोमान भी हो गया है । मन्त्राचार्य इनके व्यवहारमें मन्त्रा हो कर इन्हे मन्त्राचरनके जमींदार बनाया पोर माय माय राजा हो उपाधि भी दो । ये भी माटीर राज-वंशके भादि राजा हैं । योहे वज्रमन्त्रमन्त्र मन्त्राचर मन्त्राचरमें वहु भाई रामजीवनके हाथ बाँध दिया । रामजीवनमें १००४ ई० में राजा हो उपाधि पाई । पोर पोर ये रामरूप भादि अन्त्याय जमींदारोंकी विषय-मन्त्राचर पोर ५२ चमित्र राज्य हो उपाधि करमे लगे । १००६ ई० में दिगीके मन्त्राचर, बहादुरमाइने राजा राम-जीवनको ‘राजाबहादुर’की मन्त्र पोर बाईम विम-पत दी, तथा राजकृत, दण्ड भादि व्यवहार करमेका पादेम दिया ।

राजा रामजीवन पोर राजा वज्रमन्त्र दोनोंके पास राज्यराजाके नियम लगा हो । ये दोनों प्रायः दोनानो पोर कोनराजीका विचार करते हैं । बाद जन्मिःमन्त्राचर-पक्षमें दोनोंकी मन्त्राचर, तथा राजा रामजीवनकी पक्षों में रामकायराजाकी मोद मिया । दुःखका विषय, कि ये भी बिना कोई मन्त्राचर होहुं परमोक्तकी विचार । इनकी स्त्रीका नाम रामी भवानी था । जामोदे मन्त्रोके बाद ये ५८ वर्ष तक पोर कोती रहें । इनकी यमो-कोर्ति ब्रह्मन्त्रमें मन्त्र जगद्वार केको हुई है । इनके जामो-में चनेक मन्त्र, घाट पोर धर्मशास्त्रा पादि का निर्माण किया था । इनके चरित्रिक ब्रह्मदेवके चरित्र पवित्र चमित्र-मि पोर अन्त्याय जामोमें पुत्राचरिनी चमित्र, पायजिवाय पोर चमित्र जामो पादि चनेक प्रकारके मन्त्राचरोंकी बातें सुनी जाते हैं । ब्राह्मण पोर गोपामीकी भी इनके चनेक निःकर जामो दान दो हैं ।

(भी मन्त्रो देखा)

रामा मन्त्रोमें मन्त्राचर रामकायकी मोद मिया था । मन्त्रिज कोनरा उपाधि मन्त्राचर, मन्त्राचरमन्त्रे ‘मन्त्राचरविष्णु मन्त्रोमन्त्रा बहादुर’की उपाधि पाई थी । चमित्रो मन्त्रोमन्त्राकी चमित्र मन्त्रोमें चमित्रो चमित्रो देव इनोने कोनरा चमित्रमन्त्र किया । इनके दोनान

आदि जितने कर्मचारी थे, वे सब कोई उनका राज्य-
वृद्ध करके लगे। पोटे महाराजो भगवतीने फिरने राज्य-
भार ग्रहण करना चाहा, किन्तु कम्पनीने उनका आवे-
दन ग्राह्य न किया।

१८८५ ई०में महाराज रामलखको मृत्यु हुई। पोटे
उनके दो सड़के महाराज विजयनाथ और शिवनाथने
राज्यशासन संचाररूपसे किया। वे दोनों बिलामो थे।
महाराज विजयनाथको निःसन्तानावस्थामें मृत्यु हुई।
उनकी पत्नी महाराजो लक्ष्मणसिन्हे महाराज गोविन्द-
चन्द्रको गोद लिया। वालिग होती न होती ये कलाज-
कालके गानमें कर्म गये। बाद महाराज अगदिन्दुनाथ
राय राजा हुए। किलहाल यहाँकी बाय पक्षसे बहुत
कम गई है।

नाट्य (म० स्त्री०) नटानां कार्यं नट-ञ। (ज्यो गोह-
विह-वाहिक बह-प्रवर्णनाद-ञः। पा ४।१।१२८) १ नृत्य-
गीत और वाद्य, नटोंका काम। इसका नामान्तर तोय-
विक है।

नटलक्ष्यका नाम नाट्य है, नटों द्वारा जो नाच-गान
आदि किया जाता है, उसे ही नाट्य कहते हैं। अमि-
नयको नाट्य कह सकते। २ नटमनुष्य। ३ नाट्य
रम्यक समो नचत्र, वह नचत्र जिनमें नाट्यका चारित्र्य
किया जाता है। पशुराधा, बलिष्ठा, पुष्पा, हस्ता, चित्रा,
स्याती, व्योम्हा, शतभिषा और रेश्मी इन नचत्रोंमें
नाट्यक चारित्र्य करना चाहिये।

नाट्यशास्त्रको सार्वज्ञिक विषय मञ्जीत-दामोदरने
इस प्रकार निषा है,—पूर्व समयमें एक दिन इन्द्रने
ब्रह्मसे नाट्यशास्त्र बतानेका पशुरोध किया था। ब्रह्मा-
ने इन प्रकार पशुरोध को कर समो वेदोंके सार ले कर
पञ्चम नाट्यवेद बनाया। यह उपवेद वागमयवेद नाम-
से प्रसिद्ध है। महादेवने पहले पञ्चम यह उपवेद ब्रह्मा-
को सिखाया था, बाद ब्रह्माने भारतको। भरतमुनिने
ही इस संसारमें नाट्यशास्त्रका प्रचार किया है। गिन,
ब्रह्मा और भरतमुनि इनके मूल माने जाते हैं।

(म० गोवशातेर)

देवर्षि और राजा आदिने पूर्व चरित्रको चामो-
पगा करके नाट्यकादिमें यह अभिनय होता है। इस

अभिनयमें चतुर्वर्गफल प्राप्त होती है। नाट्य मनोका
चित्तस्थूल है। जो मनुष्य जो भाव पश्यत् श्रुता है,
वह समो भावसे नाट्य द्वारा साफ साफ अनुभव कर
सकता है। इस कारण सर्वमनोरञ्जक-नाट्य किनको
अच्छा नहीं लगता। ४ चेटाके द्वारा प्रदर्शन, नकल,
स्वंग। ५ स्वांगके द्वारा चरित्रदर्शन, अभिनय।

नाट्यकार (म० पु०) नाट्यक कर्त्तृनाम्ना, नट।

नाट्यधर्मिका (म० स्त्री०) नाट्य धर्मिष्ठत्वस्थाः क्रियायाः
इति ठ्णु। टगर्नाय शास्त्रोक्त तोयविकल्प नटलक्ष्य,
नाच, गान और वाजिके रूपमें नटकर्म।

नाट्यप्रिय (म० पु०) नाट्य प्रियं यस्य। महादेव,
गिब।

नाट्यमन्दिर (म० पु०) नाट्यमाला।

नाट्यगमज (म० पु०) एक प्रकारका उपद्रवक दृश्यकाव्य।
इसमें किन्तु एक ही चरित्र होता है। नायक बदामत,
नायिका कामकमला, उपनायक पीठमर्द होती हैं। इसमें
अनेक प्रकारके गान और नृत्य होती हैं।

नाट्यमाला (म० स्त्री०) नाट्यमाला नृत्यगीतादिः गाना
वृहत्। १ प्रभातद्वार समोप वृहत्, वह घर जो राज
महलके दरवाजे पर होता है। २ वह स्थान जहाँ पर
अभिनय किया जाय, नाटक-घर।

नाट्यमाला (म० पु०) १ नृत्य, गीत और अभिनयको
किया। नाट्यदेवी। २ एक प्राचीन ग्रन्थ जिसको रचना
भरतमुनिने की।

नाट्यमन्दिर (म० पु०) नाट्यमाला पनद्वारः। नाट्यका
मूलप्रसङ्ग, वह विषय बलद्वार जिसके पानिने नाटकका
शीर्षक अधिक बढ़ जाता है। मञ्जीतदामोदरमें ऐसे
मन्दिरोंका संख्या १८ और साहित्यदर्पणमें ११ मानो
गये हैं। इनके नाम और मूल्य इस प्रकार है—

१ चागीवीर—अभिनयित नामको धृष्टनाको चागी-
वीर कहते हैं। २ पाकन्द—शोक करके विषादका
नाम पाकन्द है। ३ कण्ट—हृत्पूर्वक चमत्कार दृष्ट
करनेको कण्ट कहते हैं। ४ सचय—पत्युता चमत्कार
और परिमय मन्त्र नहीं करनेका नाम सचय है। ५
गर्व—पर्वकारके माय वाक्यप्रयोगका नाम गर्व है। ६
सचय—काव्यरम्यता नाम सचय है। ७ चात्रय—काव्य-

माहिषम (म० पु०) नाडो वंशनेलो धमति नाडी धम,
ततो धमादेगः पूः जन्वथ । १ धर्षकार, मोवार
उघनीयाधरो कान्ता सुदुर्ग पुनिः ज्ञाने नाडो धमति उर-
तावधनि इति । (वि०) २ धावकारक, गानडी अटो
मही चानियाला । ३ भयधर्षणकारी, जिसे देखते
छो नाडी हिन आय, दहन्तिनाला, भयदूर । ४ माहि-
षान्ताकारी, माहिषीयो हिनानियाला । ५ मनोकी
फं कनेयाला ।

नाहिन्त्य (स० पु०) नाङ्गी धरतीति धेट्, पाने खम्,
ततो ऋख्य । नाङ्गीपानकर्त्ता, नन दाश पोनिबाला ।

नाहिपत (म' क्तो) नाहिरिष पत्र' यस्य । नाहीच
गाक्रीट, एष प्रकारका साग ।

नाट्टिया (द्वि० पु०) चित्रितक. वेद्य ।

नाडो (मं० श्रो०) नाडि-डोप् । १ नःन, अषान्तर ।
 दन्तनालोषी भी नाडो कहते हैं । २ गिरा । ३ गण्डदूया,
 गाँह्र घास । ४ कुदमवर्षा । ५ पट, घबकाव ।

शिराय^१ गाढोका पयंग—धमनि, गिरा, गाड़ि.
गानि, धमनी, शिरा, धरपो, धरा, तम्बुकी, जोदितपा,
सिंहा ।

देखित गिरापोशो नाही कहते हैं । सुनुत, भाव-
प्रकाश धीर सत्यमात्रते इसका विशेष विवरण लिखा है—
“गार्हपत्येष्टो नाहीनामात्मनश्च ऋषेभ्यः ।

कमेत धोतुनिष्ठानि तद्दत्तव मयि प्रभो ॥१॥

(ਸੀਨਕਲਮੁਕਤ ੮ ਭੰ.)

भगवतीने महादेवसे पूछा था, "इस शरीरमें माट्टे तीन करोड़ माट्टियों के भाग्य हैं परन्तु इस शरीरमें माट्टी की संख्या माट्टी तीन करोड़ है। उन सबका विषय जाननेको मेरी लक्ष्मण इच्छा है। लक्ष्मण चाप बतला कर मेरे इस कोतुहनकी भागा को जिये।" इस पर शिवजीने कहा था, "शरीरमें जिस जिस स्थानमें माट्टियाँ हैं, उनका जाल कहता है, सुती। श्रीमत्कृष्ण ०१ मात्स्य माट्टी हैं। हाथ, मुँह और पैरों में ३ भाग। उदर और धातुद्वयमें २ भाग। मध्य भागमें ८ भाग। पाश्र्विक, चर्म और समस्त शक्ति स्थानमें ८ भाग माट्टियाँ हैं। इन सब माट्टियोंमें ईडा, विद्रुता, सुद्रुता, चित्तिते और त्रिधा-माट्टी ये पाँच माट्टियाँ तथा कुक्ष, शक्ति, गायत्री,

हृदिनिहित, नर्दनी भोर निद्रा ये ग्यारह नाड़ियां सुख, अघाते वापस हुई हैं। शरीरमें जो नाड़ी तीन करोड़ नाड़ी हैं, उन्हें ध्यान धोर सुप्त समझना चाहिये। ये सब नाड़ियां आभितेयमें निरुक्त कर तिर्यक् धोर ऊर्ध्व-भागमें गारे शरीरमें फैल गई हैं। आभिकन्द ही इन सब नाड़ियों का मूल है। इन सब नाड़ियोंमें ७२ हजार स्थूल नाड़ी हैं। शरीरमें जो नाड़ी धमती कहलाती है, ये पर्वस्त्रियको गुणवाहिनी धोर धव्या हैं। इनमेंसे ७ मो सूक्ष्म नाड़ी हैं। ये सब नाड़ियां पश्चाद्-का रस समूचे शरीरमें बहान करती हैं और शरीरको पुष्ट बनाये रहती हैं। मृदङ्गके धारों तथाक जिस तरह धमड़ा मद्धा रहता है, उसी तरह नाड़ियां भी समूचे शरीरमें फैली हुई हैं। इन ७ सो नाड़ियोंमें २४ परिष्कृत हैं। पुष्पको दाहिनी धोरकी धोर धोरकी धारें धोरकी नाड़ी देख कर परोक्षा करना चाहिये।"

नाड़ोंको गिरा रहते हैं। इसका विषय भावप्रकाश और सुदृढमें इस प्रकार लिखा है,—गिरा या नाड़ोंकी मर्यादा उ सी है। जन्मप्रपञ्चो द्वारा जिस प्रकार वयसमयवा चैत्र सींचा जाता है, उसी प्रकार सम्पूर्ण शरीर उन सब माहियोंमें रनामिषिद्ध होता है। इसमें प्रसन्न प्रत्यक्षकी प्राकृत्य प्रसारवादिहै कार्य सम्पन्न होगे हैं। हृत्पत्रके मध्यस्थित ठंठमें जिस प्रकार माताप्रमाणाः-विमिश्र मूल्य मूल्य गिराये चारों ओर निरुद्ध कर पत्तोंको टकरो रहते हैं, उसी प्रकार नामिषिद्ध नाड़ी मर्यात् गिराये निरुद्ध कर और माताप्रमाणाः विभक्त हो कर चारों ओर शरीरमें फैलो रहते हैं।

मरोही समस्त मित्राये' नाभिमुक्तं स भवतु ॥
जिन प्रकार चक्रके मन्त्राख्यत नाभिदेगके चारों ओर पार
रहे हुए हैं, नाभिके चारों ओर भी उन्ही प्रकार मित्राये'
रहो रहे ॥

મુજ મિશા ૪૦ જે વિષમંતે વાયુવાદિનો ૧૦, વિષ-
 વાદિનો ૧૦, કફવાદિનો ૧૦ યોર રત્નવાદિનો ૧૦ જે ।
 વાયુવાદિનો માટોકો સંખ્યા ૧૦૫ જે । વાયુના મ્હાન
 પાશાયમ જે । વિષવાદિનો માટો ૧૦૫ જે । વાશાયમ
 યોર પામાયમને મધાસ્યાનનો વિષસ્યાન કહતે જે ।
 કફવાદિનો માટો ૧૦૫ જે । પામાયમ નો પ્રેમાશ

जिह्वा में ३६ गिराएँ हैं जिनमेंसे रसवाहिनी दो
घोर वाक्गति-नाहिनी दो ये चार गिराएँ अवश्य हैं।

तालुदेगमें एक घोर दोनो नितकी १८ गिरापोमेंसे
पद्म नामक एक एक करके दो गिराएँ बिह नहीं
करनी चाहिये। भावना करके मर्ममें दो, स्वपनी
नामक मर्ममें एक घोर शब्द नामक मर्मद्वयमें दग
गिरापोमेंसे शब्दपन्थि के स्थानमें एक एक करके दो
गिराएँ अवश्य हैं।

ममता देगमें बारह गिराएँ हैं जिनमेंसे लघ्वेय
नामक मर्ममें दो, प्रत्येक सौमत्याँ एक एक करके पाँच
घोर पश्चिगति नामक मर्ममें एक गिराएँ हैं। ये सब
पर्यवेष्ट हैं।

पदके मूलसे जिस तरह गृहनालकी शाखा-प्रमाण्ड।
निकल कर ललकी टकी रहती है, उसी तरह नाभि-
मूलसे गिराएँ निकल कर देहके चारों घोर फैली हुई
हैं। (छत्र)

गिरा, धमनो, स्रोत आदि सभी नाड़ोके भेद हैं।
धमनीया विषय धमनी और स्रोतमें तथा गिराया विषय गिरा
शब्दमें देवो।

सुशुताचार्यके मतसे नाभिदेग ही गिरा घोर धमनीका
मूल है। तन्मयास्त्रमें भी ऐसा ही लिखा है। किसी
किसी तन्त्रमें ऐसा देखनेमें आता है, कि समस्त नाड़ियाँ
महदण्डसे निकली हैं।

“ह्रिं ह्रिं गिर्यकुण्डे नाड्यो चतुर्विंशतिरुद्वयम्।

महदण्डे स्थिताः सर्वे सुते मणिमन्दाव ॥” (तन्त्र)

महदण्डकी प्रत्येक पन्थिमें दो दो करके नाड़ियाँ
निकल कर प्रत्येक घोर पत्ती गई हैं। प्राधुनिक शरीर-
व्यवस्थाके विद्यामें ऐसा ही देखनेमें आता है। आर्यगणमें
भी, महदण्डके ऊर्ध्वसे पञ्चमार्गमें नाड़ियाँ सम्यक्त हैं,
ऐसा कहा है। यथा—

“ऊर्ध्वमूलमधःशावः हृत्पार्श्वः कटेश्वरम्।

यथाश्वापरदेः तद्वत् शरीरे नाड्यः स्थिताः ॥” (प्रमाण)

इस प्रकार शरीरके अन्तर्गत मस्तिष्क, महदण्ड
घोर तदन्तर्गत गिरापो के विषयमें प्राधुनिक पण्डितकी
धारा एक मत देखनेमें आता।

सुशुताचार्यका परिभाषा—गर्भस्थ बालकको शरीर

गतन घोर भ्रंश-वर्धकमें जिस रसका प्रयोजन पड़ता
है, जननोके शरीरसे यही रस बहान करनेके लिये ओ
नाड़ी है, वह बालकके नाभिदेगमें संलग्न है। इस
कारण नाभिको ही समस्त नाड़ियोंका मूल वतजाया
गया है।

हठयोगमें भी नाड़ीका विषय विमोचकसे लिया
है। किम नाड़ीके किस समयमें किम भावने बहनेसे
शुभ घोर अशुभ फल होता है, उसका विषय हठयोगमें
वर्णित हैं। हठयोग ग्रन्थ देखो।

नाड़ीप्रकाशमें नाड़ी देखनेका नियम इस प्रकार
लिखा है। उसी नाड़ीकी गति द्वारा शरीरका जो
शुभाशुभ फल जाना जाता है, उसका विषय यहाँ संक्षिप्त
भावसे लिखा जाता है,—

“वामनागे शिवा योग्या नाड्यो पुंस्त्वृत्तुं दक्षिणे।

इति शेषा मया देवो सर्वदेहेषु वैदितान् ॥” (नाड़ीप्रकाश)

द्विगोत्री बाई घोरको घोर सुवर्धको दाहिनी
घोरको नाड़ीको परोचा करने चाहिये। पद्म-मूलमें
जोवसाचियों जो धमनो है, उसकी गतिके अनुसार
देहधारिणीका सुख घोर दुःख जाना जाता है; पर्याप्त
नाड़ी देख कर शरीरकी सुखता घोर असुखताका ज्ञान
ही जाता है।

वात, पित्त, कफ, दन्ध, चक्षिपात, माध्य घोर समाध्य
विषय नाड़ी द्वारा जाना जा सकता है।

नाड़ीपरीक्षा समय।—प्रातःकालमें आचारपूत घोर
सुखोपविष्ट हो कर सुषुप्तोन्नत स्थितीकी नाड़ी परोचा
करनी चाहिये। जो नाड़ीको परोचा करेगा, उन्हे घोर
जिमकी नाड़ी देखो जायगे, उसे भी स्थिर भावसे घेतना
चाहिये। प्रातःकाल हो नाड़ी परोचाका उपयुक्त
समय है। मध्याह्न कालादिमें अल्पता अधिक रहती
है, इस कारण उस समय नाड़ी देखना प्रयत्न नहीं है।

नाड़ी देखनेका विधिद्वारा।—मध्यस्थान, मध्यमुख,
सुपायस्थातुर, पातपर्वेयो (जो तुरका भूय घोर पागके
पाखमें पाया हो), तेजःव्यङ्ग, मिश्रित, निद्रावसानकाल
घोर मौनन करनेके बाद नाड़ी परोचा नहीं करने
चाहिये।

वात, पित्त घोर कफ ये तीन नाड़ियाँ यदाक्रम बहती

जिह्वा में ३६ गिराएँ हैं जिनमेंसे रसकाहिनी दो और वायुगन्धि-गन्धिनी दो ये चार गिराएँ अवश्य हैं।

साधुदेगमें एक और दोनो नैऋती १८ गिराओंमेंसे पञ्चाश नामक एक एक करके दो गिराएँ बिन्द नहीं करने चाहिये। पाचका करके मर्ममें दो, स्वपनी नामक मर्ममें एक और शब्द नामक मर्ममें दम गिराओंमेंसे शब्दमन्त्रिके स्थानमें एक एक करके दो गिराएँ अवश्य हैं।

मस्तक देगमें बारह गिराएँ हैं जिनमेंसे उत्पन्न नामक मर्ममें दो, प्रत्येक मर्मगतमें एक एक करके पाँच और पश्चिम नामक मर्ममें एक गिरा है। ये सब अवश्य हैं।

पदकी मूलसे जिस तरह ग्युनानकी शाखा-प्रशाखा निकल कर जनकी टकी रहती है, उसी तरह नामि-मूलसे गिराएँ निकल कर देहके चारों ओर फैली हुई हैं। (छन्द)

गिरा, धमनी, स्त्रोत आदि सभी नाड़ोंके भेद हैं। धमनीका विषय धमनी और स्त्रोतमें तथा गिराका विषय गिरा मर्ममें देना।

सुप्तुताचार्यसे मतमें नामिदेग ही गिरा और धमनीका मूल है। तन्त्रशास्त्रमें भी ऐसा ही लिखा है। किसी किसी तन्त्रमें ऐसा देखनेमें आता है, कि समस्त नाड़ियाँ भिन्नदण्डों निकली हैं।

“हे द्वे त्रिपुण्ड्रके नाड्यो अर्जुनं प्रतिवर्षया।

मेहरदे दिवताः सर्वे सुते मणिगन्धर्वः” (तन्त्र)

भिन्नदण्डकी प्रत्येक पन्ध्रिसे दो दो करके नाड़ियाँ निकल कर प्रत्येक ओर चली गई हैं। आधुनिक शरीर-व्यवस्थाके विद्यामें ऐसा ही देखनेमें आता है। आर्यगणमें भी, भिन्नदण्डके ऊर्ध्वसे अधोभागमें नाड़ियाँ सम्मिलित हैं, ऐसा कहा है। यथा—

“ऊर्ध्वमूलमप ग्राह्यं हृत्पादौ कलेवरम्।

यथाश्वपरके एङ्गः शरीरे मन्दः निषताः॥” (पुमान)

इस प्रकार शरीरके अन्तर्गत मन्दितक, भिन्नदण्ड और तदन्तर्गत गिराओंके विषयमें आधुनिक पण्डितकियाएँ एक मत देखनेमें आता।

सुप्तुताचार्यका अभिप्राय—गर्भस्थ शिशुको शरीर

गठन और भरण-पोषणमें जिस रसका प्रयोजन पड़ता है, ऊनमोह शरीरसे बहो रस बहान करनेके लिये जो नाड़ी है, वह वायुनिक नामिदेगमें सम्मान है। इस कारण नामिकी ही समस्त नाड़ियोंका मूल वतनाया गया है।

हठयोगमें भी नाड़ीका विषय विवेकपूर्वसे लिया है। किस नाड़ीके किस समयमें किस भावने बहनेसे शुभ और पशुप फल होता है, उसका विषय हठयोगमें वर्णित है। हठयोग ग्रन्थ देखो।

भाड़ीप्रकाशमें नाड़ी देखनेका नियम हम प्रकार लिखा है। इसी नाड़ीकी गति द्वारा शरीरका जो शुभाशुभ फल जाना जाता है, उसका विषय यहाँ संक्षिप्त भावने लिखा जाता है,—

“वामभागे शिवा योज्या नाड्यो दुःखदुःखे दक्षिणे।

इति श्रेष्ठा मया देवी वर्णितेष्टु दिदिनाम् ॥” (नाड़ीप्र०)

दक्षिणकी बाईं ओरकी ओर सुप्तुताकी दाहिनी ओरकी नाड़ीको परोक्षा करने चाहिये। पञ्चमूलमें जो वसन्तिनी जो धमनी है, उसकी गतिके अनुसार देहधारिणीका सुख और दुःख जाना जाता है; यथात् नाड़ी देख कर शरीरकी सुखता और असुखताका ज्ञान हो जाता है।

वात, पित्त, कफ, इन्द्रिय, पश्चिमात, साध्य और पश्चिमाध्य विवरण नाड़ी द्वारा जाना जा सकता है।

नाड़ीवरीषाका समय।—प्रातःकालमें पाचार्यपूत और सुखोपविष्ट हो कर सुप्तुताको व्यक्तिकी नाड़ी परोक्षा करने चाहिये। जो नाड़ीको परोक्षा करेंगे, उन्हें और जिसकी नाड़ी देखो जायगी, उसे भी स्थिर भावसे देखना चाहिये। प्रातःकाल को नाड़ी परोक्षाका अव्यक्त समय है। मध्याह्न कालादिमें अज्ञाता अधिक रहतो है, इस कारण सर्वसमय नाड़ी देखना प्रामाण्य नहीं है।

नाड़ी देखनेका विविधकाल।—मद्यस्नात, मद्यभुक्त, सुषायस्नात, आतपवेको (जो सुरमा भूय ओर चामरके पाखसे पाया हो), तेजाभ्यङ्ग, निद्रित, निद्रावसानकाल और मीजन करनेके बाद नाड़ी परोक्षा नहीं करनी चाहिये।

वात, पित्त और कफ ये तीन नाड़ियाँ यथाक्रम बढ़ती

जिह्वामें ३६ गिराए हैं जिनमेंसे रसजाड़ियों दो चोर वाक्गन्धि-नागिनो दो ये चार गिराए पवेध्य हैं।

तालुदेगमें एक चोर टोनी नैतकी १८ गिरापोममें पयाद्र नामक एक एक करके दो गिराए बिह नहीं करने चाहिये। पादचर करके मर्ममें दो, खपनी नामक मर्ममें एक चोर गढ़ नामक मर्मद्वयमें दस गिरापोममें गढ़मन्त्रिके स्थानमें एक एक करके दो गिराए पवेध्य हैं।

मस्तक देगमें बारह गिराए हैं जिनमेंसे छप्पे नामक मर्ममें दो, मत्स्यक शीमस्तमें एक एक करके पाँच चोर पक्षिगति नामक मर्ममें एक गिरा है। ये सब पवेध्य हैं।

पदके मूलमें जिस तरह मृणालकी शाखा-प्रमाण। निकल कर जलकी ठकी रहती है, वही तरह नाभि-मूलमें गिराए निकल कर देखके चारों ओर फैलो फुरे हैं। (सुश्रुत)

गिरा, धमनो, स्त्रोत आदि सभी नाड़ोके भेद हैं। धमनीका विषय धमनी और स्त्रोतमें तथा गिराका विषय गिरा शरीरमें देवो।

सुश्रुताचार्यके मतमें नाभिदेग की शिगा और धमनीका मूल है। तत्त्वगाधर्म भी ऐसा ही लिखा है। किसी किसी तन्त्रमें ऐसा देगमें पाता है, कि समस्त नाड़ियाँ भिददण्डमें निकली हैं।

“इं हं तिरिक्कये नाड्यो यशुर्विशतिवद्वया।

भेददण्डे विवताः सर्वे सुने मतिगनाश्च ॥” (तन्त्र)

भिददण्डकी मत्स्यक शिखिमें दो दो करके नाड़ियाँ निकल कर मत्स्यक चोर बनो गई हैं। बाधुनिज शरीर-आरुचोट विद्यामें ऐसा ही देखनेमें पाता है। चार्यगणमें भी, भिददण्ड छत्रमें १० भागमें नाड़ियाँ सम्मिलित हैं, ऐसा कहा है। यथा—

“ऊर्ध्वमूलमं प्राणं हृत्प्राणं कलेसरम्।

यथाशरपदके एहं जरीरे नाड्यः विवताः ॥” (प्रमाण)

१८ प्रकार शरीरके अलग-अलग मस्तक, भिददण्ड और तटभगगत गिरापोमके विषयमें बाधुनिज पण्डितोंके धारा एक मूल देखनेमें पाता।

सुश्रुताचार्यका अभिप्राय—धर्मस्य वातकको शरीर

गठन और भरच-पोषणमें जिस रसका प्रयोजन पड़ता है, वननोके शरीरसे सरो रस बहान करनेके लिये जो नाड़ो है, वज वातकके नाभिदेगमें संलग्न है। इस कारण नाभिको ही समस्त नाड़ियोंका मूल बतलाया गया है।

इदयोगमें भी नाड़ीका विषय विमिवदण्डमें लिखा है। जिस नाड़ोके जिस समयमें जिस भावमें बहनेमें शुभ और अशुभ फल होता है, उसका विषय इदयोगमें वर्णित है। इदयोग ग्रन्थ देखो।

नाड़ीप्रकाशमें नाड़ी देखनेका नियम इस प्रकार लिखा है। रनी नाड़ोकी गति द्वारा शरीरका जो शुभाशुभ फल जाना जाता है, उसका विषय यहाँ संक्षिप्त भावमें लिखा जाता है,—

“वामभागे शिखा योज्या नाड्यो उ'वस्तु रचिने।

इति प्रोक्ता मया देवी सर्वदेव्यु वैद्विनाम् ॥” (नाड़ीप्र०)

दाहिनीकी बाईं ओरको चोर सुपरीकी दाहिनी ओरको नाड़ीको परोचा करने चाहिये। पञ्चमूलमें जो वसासिखो जो धमनी है, उसकी गतिके अनुसार देहधारियोंका सुख और दुःख जाना जाता है। यद्यत् नाड़ी देख कर शरीरकी सुखता और असुखताका ज्ञान हो जाता है।

वात, पित्त, कफ, इन्द्र, सपिपात, माध्य और असाध्य विवरण नाड़ो द्वारा जाना जा सकता है।

नाड़ीरवीक्षण समय।—प्रातःकालमें पाचार्यपुत्र और सुखोपविष्ट हो कर सुपाशेन व्यक्तिको नाड़ो परोचा करने चाहिये। जो नाड़ीकी परोचा करेंगे, उन्हें चोर जिसकी नाड़ो देखो आयोग, उसे भी स्थिर भावमें बैठना चाहिये। प्रातःकाल की नाड़ो परोचाका अवयुक्त समय है। मध्याह्न कालादिमें उष्णता अधिक रहती है, इस कारण उत्तमसमय नाड़ो देखना प्रयोज्य नहीं है।

नाड़ो देखनेका भिन्नविधान।—अधस्तात, मध्यमूल, सुपायपादुर, पातपवेवो (जो तुलका पूर चोर पागक पासवे पाया हो), तैलाम्बुह, निद्रित, निद्रावसानकाल और नीकन करनेके बाद नाड़ो परोचा नहीं करने चाहिये।

बाधुनिज और कज ये तीन नाड़ियों यदाक्रम बहती

शीघ्रगामी तथा श्लेष्मप्रकीर्णमें नाड़ी तन्तुघन, मन्द और घीतन होती है।

विस्तृप्तमें नाड़ी दृढ, सरल, दीर्घ और शीघ्रगामी होती है।

द्रव्यन्यत्वमें नाड़ीगति।—वात और पित्तके दृढित होनेसे नाड़ी चञ्चल, तरल, स्थूल और कठिन। वात-श्लेष्म-त्वमें द्रवदुग्ध और मन्द तथा पित्तश्लेष्ममें नाड़ी सूक्ष्म, घीतल और स्थिर होती है।

सूतस्वरमें नाड़ी यद्यत् तेजसे चलती है। व्यायाम, भ्रमण, चिन्ता, क्रोध और मोक्षमें नाड़ीकी गति जाना प्रकारकी हो जाती है। कुछ समय बाद वह नाड़ीगति सुखकी तरह चलने लगती है।

अजीर्णरोगमें नाड़ी कठिन, लघु, प्रचण्ड, दृढ, शुद्ध और शीघ्रगामी होती है। अग्निघ्न और घातके चोप होनेसे नाड़ी धीरे धीरे चलने लगती है। (नाड़ीप्रकाश)

यूरोपियोंके मतमें शरीरके अन्दर छोटी बड़ी जितनी धमनियाँ या गिराएँ हैं, उनका साधारण नाम नाड़ी है। समस्त गिराएँ पंचिकाक्त स्थूल हैं, उनमें मध्य छोटी कर रक्तस्रोत रहता है, इस कारण गति का अनुभव सहजमें किया जाता है। विरूपित। बायेंके मध्यावस्थकी निकटस्थ गिराएँ जैसी स्थूल हैं, वैसे ही मासमान (Superficial) हैं। इनकी गिराएँ राखी (Radical bone) के ऊपर रहने के द्वारा बहुत सहज है, इसी कारण शारीरिक श्लाघन व्यवस्था का नियंत्रण करने के लिए साधारणता इन गिराएँ की गतिकी परीक्षा की जाती है। नाड़ी (Pulse) कहनेसे हमें व्यवहार के अनुसार इमी मध्यावस्थके गिराएँ बायेंकी गिराएँ कोच होता है।

नाड़ी या गिराएँ पल्स स्थितिस्थापक है। हम लोगोंके रक्तमाय (Heart) में धमनीके द्विद्वारे रक्तस्रोत हमें सा प्रचिन होता है।

जिस समय यह प्रकार रक्त प्रचिन होता है, उस समय गिराएँ कम चलती हैं, किन्तु तत्पश्चात् ही पुनः धमनी स्थितिस्थापकताके गुणसे पूर्व की तरह मज्जित व्यवस्थामें परिणत हो जाती है।

नाड़ी या धमनीके इस प्रकार प्राकुचन और प्रमा-

रक का नाम नाड़ीकी गति है। सुक्ष्म गिराएँ उस गति का अनुभव करना कठिन है।

डाक्टर लोग नाड़ीको इस गतिकी परिमाण (beat) के निर्णय द्वारा तथा प्रधानतः उसकी गिराएँ रहने एक पक्षस्थाएँ देख कर चिकित्सा किया करते हैं।

१। नाड़ीकी गति का नियम पर्याप्त कभी तो नाड़ी प्रत्यक्षगणे कभी मृदुभावसे और कभी सविश्राम भावसे चलती है।

२। कभी नाड़ी स्थूल (Full) और कभी सूक्ष्म पक्षस्थाएँ रहती है।

३। नाड़ीको दुर्बलता या तरलता।

४। नाड़ीका कठिन्य (Tension)।

उन लोगोंका मत है, कि पक्षस्थाएँ बायें माय नाड़ीकी गतिमें भी अन्तर देखा जाता है। गिराएँ जब साध्यगममें रहता है, उस समय नाड़ी ७ प्रति मिनटमें १४-से १५ बार धड़कती (beat) है। सम्यक् भूमिद्ध होनेसे माय ही उसकी नाड़ीकी गति १२-से १४ बार हो जाती है। जब उसको उमर दो वर्ष की होती है, तब १०-से ११ बार, माय वर्ष से लेकर चौदह वर्ष की उमरमें ८-से ९ बार, चौदहसे दस वर्ष की उमरमें ७-से ८ बार और दसवसे माय वर्ष की उमरमें नाड़ी प्रति मिनटमें ७-से ७ बार धड़कती है। इससे भी अधिक उमरके व्यक्तियों को नाड़ीगति अल्पतः कम होती है। किन्तु सभी समय यह नियम लागू नहीं है। युवकोंमें कभी कभी किमोको नाड़ी १० बारसे भी कम हो जाती है। किसीको नाड़ी तो ४ बारसे अधिक पाण्डित्य होती हो नहीं। फिर किसीको नाड़ी १०० बार धड़कती हुई देखो गई है। यतः सर्वे किमो प्रकारकी पोड़ा है, इसका अनुभव नहीं किया जा सकता।

किर को-सुखसे मेदसे नाड़ी की गतिमें प्रमेद देखा जाता है। युवतियोंकी नाड़ी युवकोंकी नाड़ीसे मिनट में १०-से १४ बार अधिक प्राचात करती है। डाक्टर गार्ड (Dr. Guy) का कहना है, कि पक्षस्थाएँ नाड़ीकी गतिमें भी अन्तर पड़ जाता है पर्याप्त २० वर्ष-

७-८ वर्ष अधिक उमरके गिराएँ नाड़ी का मापन (beat) व्यवस्था बायें।

का कोई पर्यय युगक जब बैठारहता है, तब उसको नाड़ी साधारणतः ७० बार, जब खड़ा रहता है, तब ८१ बार और जब सो जाता है, तब ६६ बार पाघत करती है। उतनी ही उमरको युवनीको नाड़ो उक्त अवस्थाओंमें क्रमशः ८४, ८१, और ७८ बार धड़कती है। आयु पचरचाको प्रथमा निद्रितावस्थामें नाड़ोको गति बहुत कम होती है। पीड़ा होने पर रोगविशेषमें १५० में २०० बार और २० में ३० बार तक भी नाड़ो धड़कती है।

सममानगति विगिट नाड़ीको दो श्रेणियोंमें विभक्त कर सकते हैं। एक श्रेणीमें कभी कभी नाड़ी दूसरीको अपेक्षा बहुत शीघ्र शीघ्र और कभी बहुत धीरे धीरे चलती है।

दूसरी श्रेणीमें कभी कभी नाड़ी कुछ भी पाघात नहीं करती। किन्तु कुछ देर बाद धक धक करने लगती है। एक ही व्यक्तिमें ये दो प्रकारको गतिविगिट नाड़ियां लक्षित होती हैं। केषल कठिन रोग होने पर नाड़ोको ऐसी अवस्था देखी जाती है, जो नहीं। कितने लोगोंकी स्वाभाविक नाड़ीकी गति, ही इस प्रकारकी है। दुर्बलताके कारण भी किसीकी नाड़ोकी इसी प्रकारकी अवस्था हो जाती है। किन्तु मस्तिष्कको पीड़ा और हृद्रोग होनेसे ही साधारणतः नाड़ीकी ऐसी अवस्था हुआ करती है।

रक्तके परिमाणकी कमी वेशीके अनुसार नाड़ीकी कभी परिपूर्ण वा खलू और कभी अपरिपूर्ण वा छद्म कह सकते हैं।

रक्तादिकी आवश्यकता अधिकता होनेसे अथवा हृत्-पिण्डके वामकोष्ठ (left ventricle of the heart) के बहुत क्षान्त तक क्रमागत ओरसे कुक्षित होनेसे तथा सभावतः नाड़ीका आवरण ग्रियिल होनेसे नाड़ोको पूर्वीय अवस्था होती है। साधारणतः रक्तका अभाव होनेसे, हृत्पिण्डके निक्षीज भागमें कार्य करनेसे, गिरा-भण्डनोंमें रक्तके अधिस्त जमनेसे अथवा अधिक ठण्ड लगनेसे नाड़ो सुष्कावस्थाको प्राप्त होती है।

नाड़ीकी दाघनसे यदि उसको गति रुक न जाय, तो उसे कठिन (Hard) नाड़ो कहते हैं। नाड़ोकी कठिन होनेसे रक्तको नििकास (Venesection) देना उचित

है। नरम नाड़ी दुर्बलताको सूचक है। हृत्पिण्डमें नाड़ोके अन्ध जिस वेगसे रक्त लक्षित होता है, यदनुसार नाड़ोको सवसता या दुर्बलताका ज्ञान होता है पर्याप्त रक्त यदि प्रयत्न वेगसे चालित हो, तो नाड़ी भी घन घन भावात करती है और तब उस नाड़ोको सयन नाड़ो कहते हैं। यदि रक्त शृद्धभावसे चालित हो, तो नाड़ो भी धीरभावसे पाघात करती है और उस समय नाड़ोकी दुर्बल नाड़ो कहते हैं। किन्तु यह दुर्बलता या सवसता बहुत कुछ रक्तके परिमाणके ऊपर निर्भर करती है। सवल नाड़ो साधारणतः शरीरको सुकसाता ज्ञापक है, किन्तु किसी कारणवश यदि हृत्पिण्डका वाम प्रकोष्ठ (left ventricle of the heart) बहुत पुट हो जाय, तो सभी समय नाड़ोकी सवल अवस्था देखी जाती है; यहां तक कि साधारण शक्तिका ज्ञास होनेसे भी नाड़ोकी दुर्बलता लक्षित नहीं होती। नाड़ोको गतिके अवस्थानुसार यह भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारी जाती है। गिरा देवो।

नाड़ोक (सं० त्रि०) नाड़ीय कायतिकैक। १ गात्र-विशेष, पटुपासाय। पर्याय—पटुयाक, नाड़ोगात्र। शुष्ण—रक्तपित्त-आमक, विटम्बो और वातप्रकोपक।

(भाष्य०)

नाड़ीकपालक (सं० पु०) नाड़ीना नाड़ीवस्त्रालाना कलापः समूहो यत्र, कप। सर्वाचीलता, भिङ्गनी नामकी घास।

नाड़ोकृत (सं० क्री०) नाड्या रचनादेन कृतं मत्तप्रकृतं प्राप्यं यत्र। विवाहाद् नाड़ोकृतमूषित मत्तमममूह, नाड़ो-नसत। विवाह देखो।

नाड़िकेन (सं० पु०) नारिकेलः प्रयोदरादित्वात् माधु। नारिकेल, नारियल।

नाड़ीगति (सं० स्त्री०) नाड़ीना गतिः ६-तत्। नाड़ीकी गति हमसे शरीरका शुभाशुभ स्थिर किया जाता है। नाड़ोप्रस्थिति नाड़ोको गति देख कर शारीरिक स्वास्थ्य और अस्वास्थ्यका विवेक कह सकते हैं। नाड़ो देखो।

नाड़ोच (सं० पु०) नाड्या-चोयते वि वाहमकात् च। शाकविशेष, पटुपासाय। पर्याय—केतुक, पितुको, पितु, विश्वरोचन। यह नाड़ोयाक दो प्रकारकी होती है,

कटु, पा घोर मोठा । कटु पा माग रुद्धिनि, क्षमि घोर
कुष्ठगायक तथा मोठा माग मोनन, विटनि, कक घोर
धातुनामक होता है ।

नाडोचक्र (सं० स्त्री०) नाडोचक्रमित्र यन्त्रमख्यानं ।

१ नामित्यस्य स्थित चक्रभेद, इत्येवमेव चतुष्टय नामित्ये-
नं स्थित एक चण्डाकार गोट जिसमें निरुद्ध कर सब
नाडिगो फौजी है । २ रेखाविशेषने नक्षत्रभेदप्रत्येक
चक्रभेद, फलितज्योतिषमें नक्षत्रोंके उन भेदोंको स्थित
करनेवाला कोष्ठ या 'चक्र जिन्हें' नाडो कहते हैं ।

विवाद देखो ।

नाडोचरण (सं० पु०) नाडोवत् चरणो यस्य । पक्षो,
चिह्निका ।

नाडोमह (सं० पु०) नाडोवत् मह्य यस्य । १ का-
कोथा । २ सुनिविशेष, एक सुनिका नाम । ३ वक्र-
विशेष, एक बगलका नाम । ब्रह्माभारतमें इस बगलका
उल्लेख पाया है । यह एक कण्ठपक्षा पुत्र या घोर
हृन्मूत्र सरोवरके किनारे रहता था । यह महाप्राण
या, बकोंका राजा या घोर ब्रह्माका चक्षुस्त्र प्रियगत्र
तथा दीर्घजीवी था । वह राजधर्म नामसे मगधर या
नाडोतरह (सं० पु०) नाडो नावाया तरङ्गः यत् । १
काकोत्त । २ हृन्मूत्र । ३ रुद्धिण्डक ।

नाडोतिष्ठ (सं० पु०) नाडो तिष्ठः । निपातनिष्प, निपासो
गोम । निपातनिष्प देखो ।

नाडोदिष्ट (सं० ति०) नाडोमारी देष्टो यस्य । १ पति-
हय, पत्न्या दुष्टता पतला । (पु०) २ शूरी, शिवका
एक द्वारपाल ।

नाडोचक्र (सं० स्त्री०) नाडोस्थितं चक्रम् । पञ्चादो-
चक्र घोर नयनाडो चक्रस्थित नक्षत्रमनुष्ट, वर-वधूको
मथना देठानेके स्थित चक्रांत चक्रोंमें स्थित नक्षत्र । जिस
नक्षत्रमें मनुष्यका जन्म होता है उस, तथा उससे दशवें,
सोणहवें, पठारहवें, तेईसवें घोर पचीसवें नक्षत्रको नाडो
नक्षत्र या नाडो कहते हैं । जन्मनाडोको पादा, दशम्यो-
को नाम, मोलहर्षको साध्यातित्र, पठारहवेंको समुद्रय,
तेईसवोंको विनास घोर पचीसवोंको मानन कहते हैं ।

नाडोमरीषा (सं० स्त्री०) १ मलिवन्मलित नाडोके
घात प्रतिघात द्वारा शरीरका अवस्थानिर्बन्ध, शरीरके

अनायामका ज्ञान को नाडोको गति द्वारा किया जाता
है । २ एक वैद्यक पद्य ।

नाडोमकाग (सं० पु०) एक भौषज्यपद्य । यहारसेनने
इसमें टोका बनाई है ।

नाडोमण्डप (सं० पु०) विपुबद्धे वा ।

नाडोयन्त्र (सं० स्त्री०) नाडोय मासोय यन्त्रम् । सुश्रु-
तोत्त ग्रन्थोद्धारणार्थं यन्त्रभेद, सुश्रुतके चतुष्टय शस्त्र-
चिकित्सा या चोष्णाङ्का एक योजन । यह दोस
प्रकारका होता है । यह यन्त्र कई कामोंमें आता है ।
इसके एक घोर सुंङ रहता है । यह शरीरको नाडिगो
या स्तोत्रोंमें घुमो हुई योजनो बाहर निकालनेके काम-
में आता है । शिरा, धमनी, मनहार आदि शरीरमें
जितने स्त्रीत पर्याप्त द्वार हैं, उनके सुंङके चतुष्टय पयवा
स्थानविशेषके प्रयोजनानुसार इस यन्त्रको सम्याई घोर
चोड़ाई होती है ।

नाडोमणय (सं० स्त्री०) नाडोमणयः प्राणायामं यन्त्रयं
यन्त्रयाकारं यन्त्रम् । सिद्धान्तशिरोमणिकथित यन्त्रभेद,
कास या समय नियत कारनेका एक यन्त्र, एक प्रकारको
घड़ो । सिद्धान्तशिरोमणिमें इसका पूरा व्योरा दिया
गया है ।

नाडोविषय (सं० पु०) नाडोमारी विषयो यस्य, पति-
हृत्वात् तत्प्रात्य । अतिरुग्ण शूरी, बहुत दुष्टता पतला
शिवके एक चतुश्चरका नाम ।

नाडोदण्ड (सं० पु०) नाडोचक्रान्तो दण्डः । सर्वदा गलद्-
न्यप, वह घाव जिसमें मोतर दो मोतर मनोको तरह
हैद को ज्ञाय घोर उसमेंसे बराबर मवाद (पोष) निकला
करे । साधवशर निदानमें इसका लक्षण इस प्रकार
लिखा है,—

“यः घोष मावमिति वज्रपुण्ड्रेऽस्ते

यो ना लघु” इत्युत्तरमप्राप्तवत् ।

अन्तरं प्रविष्टिं प्रविष्टिं तस्य

स्थानानि पूरैर्विहगानि ततः पृष्टः ॥

वदन्ति प्रायममनात् गतेरिह ॥

नाडोव श्रद्धति सेन गया ह नाडो ।”

(माधवचरित्रान्न)

भावप्रकाशमें इस नाडोवचका विषय इस प्रकार

निगा है,—जो घर मनुष्य पञ्चानामग्रतः पक्षग्रन्थकी पञ्चत जाग कर मवाद (पोव) नर्ने निकालने पोर पदित पाशर-विहारारो ध्यति मभीर भयशा पञ्चग्रन्थक पुयमंयुक्त ग्रन्थकी उपेया कर पूयस्त्राय नही करने, एमका यह मयित पूय (पोव) त्वक्, मांस, मिरा, छातु, मन्त्रि, पयि, कोष्ठ पोर मर्मस्थानको विदारण कर भीतरमें प्रवेग कर जाता है पोर बहुत दूर चला जाता है, इस कारण सर्वदा पोप निजलतो रहतो है। छिद्र मनादि नाड़ीकी तरह प्रवाहित है, इस कारण इसे नाड़ीग्रन्थ कहते हैं।

नाड़ीग्रन्थ पांच प्रकारका है - वातग्र, पित्तग्र, कफग्र, मधुपातग्र पोर श्लेष्मग्र।

वातिक नाड़ीग्रन्थका लक्षण—वातजन्य नाड़ीग्रन्थ कर्कश, क्षुब्ध छिद्रमिश्रित पोर वेदनायुक्त होता है। रातको इससे सफेन पीव बहुत निकलतो है। पित्तजन्य नाड़ीग्रन्थमें पिपासा, ज्वर पोर दाह होता है तथा उभ्रसे दिनेके समय अधिक परिमाणमें पूयस्त्राय होता है।

कफजन्य नाड़ीग्रन्थ शूलजन्य पोर पिच्छुन होता है। इसमें भी पीव अधिक निकलतो है। यह वेदन-हीन पोर कण्डुयुक्त होता है।

त्रिदोषज नाड़ीग्रन्थमें उक्त वातादि तीनों दोषोंके समस्त लक्षण तथा दाह, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, पोर सुषुप्तोप उत्पन्न होता है। यह रोग कालरात्रिकी तरह अत्यन्त भयङ्कर पोर प्राणनाशक है।

श्लेष्मज नाड़ीग्रन्थका लक्षण—विषयगामी श्लेष्म जब त्वक् मांसादिके मध्य प्रविष्ट हो कर अट्टमभावसे रहता है, तब शीघ्र ही नाड़ीग्रन्थ उत्पन्न होता है, इसे श्लेष्मज नाड़ीग्रन्थ कहते हैं। इससे हमेशा वेदनाके साथ मयित रक्तमिश्रित पयश् सफेन उच्छ्वसाव निकलता रहता है।

नाड़ीग्रन्थका समान्य पोर यवसाध्य लक्षण—त्रिदोषज नाड़ीग्रन्थ समान्य पोर मन्यान्व दोषोंने उत्पन्न तथा श्लेष्मज नाड़ीग्रन्थ यवसाध्य है।

नाड़ीग्रन्थी निरीक्षा—वातज नाड़ीग्रन्थमें पहले उगमाह (पुनटिस) दे कर अष्टस्थानकी कीमल गणार्थ; दोहे समस्त नाड़ियोंकी काट डालें। पनन्तर पणामार्गके फलको महीगानि पोष कर सैन्धव नमकके साथ चत-

श्चानकी भर दें पोर ज्वरसे पही बांध दें। दूसरे दिन सने पञ्चमुलीके जाड़े में धो डालें। बाद शिंखाय-तेनका व्यवहार करनेसे ग्रन्थका मोघन, रोपण पोर पूय हो जाना है। इस तेनको प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकार है—तेन ५४ घेर, कल्कायं अटामांपो, हरिद्रा, कटकी, पध, गोत्रिद्धा पोर विष्वम्बुन सब मिना कर एक सेर। जन १६ घेर सबको यथाविधान पाक करनेसे शिंखाय-तेन तैयार हो जाता है।

पित्तज नाड़ीग्रन्थमें दुग्ध पोर छत मंयुक्त छकारिका द्वारा पुनटिस देनेो होता है। बाद ग्रन्थस्थान जब कीमल हो जाय, तब शास्त्र द्वारा नाभी काट डालते हैं। पनन्तर तिल, नामहेशर, दन्तो पोर मध्विद्राकी पच्छी तरह घीम कर चतस्थानकी भर देते पोर पही बांध देते हैं। दूसरे दिन चलादो, गुल्लय पोर भीमके काड़ेसे चतस्थानको साफ करते हैं। बाद उम स्थान पर श्यामा-छतका प्रयोग करनेसे कोष्ठगत नाड़ीग्रन्थ पच्छा हो जाता है। श्यामाछतको प्रस्तुत प्रणाली—छत ५४ घेर, कल्कायं पनन्तमुन, निषोय, त्रिकला, हरिद्रा, लोष पोर कुटज सब मिना कर एक सेर तथा गावका दूध १६ घेर। यथा-नियम पाक करनेसे श्यामाछत प्रस्तुत होता है।

कफज नाड़ीग्रन्थमें पहले कुलधी, चरद, सफेद मरनी, सत्सू पोर विद्वद द्वारा पुनटिस देकर ग्रन्थ स्थानकी मुलायम बनाते हैं। मुलायम हो जाने पर छत स्थानकी नाड़ीकी शूल द्वारा काट डालते हैं। बाद मोम, तिल, चीना, दन्तो, मोराद्रमहो पोर सैन्धव नमकको पोष कर चतस्थानकी भर देते हैं पोर ज्वरसे पही बांध देते हैं। दूसरे दिन कलञ्ज, मोम, जाली, वकवम पादिके रसमें चतस्थानकी धो डालते हैं। बाद श्रिंकायतेनका व्यवहार करनेसे यह कफज नाड़ीग्रन्थ प्रयमित हो जाता है। इसमें सैन्धवाय तेन भी विमेष उपकारी है।

श्रिंकायतेन—तेन ५४ घेर। कल्कायं मर्चिंशा-चार, सैन्धव, दन्तो, चीता, यूषो, मेयान पोर पयात्र जोज सब मिना कर एक सेर; मोमूय १६ घेर। पनन्तर यथाविधान पाक करना होता है।

सैन्धवायतेन—तेन ५४ घेर। कल्कायं सैन्धव, पाकन्द, मिर्च, चीता, मूत्रराज, हरिद्रा पोर दाहहरिद्रा

सब मिला कर एक मेर। इस तैलका प्रयोग करनेसे वातज और कफज माहीद्वय भी चला ही जाता है।

प्रथम माहीद्वय—शरीर द्वारा शरीर बहिर्गत कर प्रत्यक्ष माहीद्वय को घोल निकाल देने का चाहिये। बाद भीम और तिषकी घोल का अधिक परिमाणमें छत और मधुने चतस्थानको भर करके ऊपरसे पछे बांध देने का चाहिये। इसमें कृष्णिकायतैलका प्रयोग करनेसे मध्य कल प्राप्त होता है।

छूट और चक्रपनके दूध तथा दामोदर का प्रयुक्त कर उसका प्रयोग करनेसे मध्यमरीगत माहीद्वय चक्रपन ही शरीरमें ही जाते हैं। चमत्तामसका प्रयोग, इससे और कुछ इन सबका चूर्ण ८ भागा, मधु ४ तोला और गोमूत्र ८ तोला इन सबको एकत्र पाक कर बली बनाते हैं। बाद इसका प्रयोग करनेसे प्रथमोचित होता है और माहीद्वय नष्ट हो जाता है।

मधु और शैत्यको बली बना कर उसे माहीमें प्रयोग करनेसे माहीद्वय नष्ट हो जाता है। दुष्टपनमें की सब तैल कड़ा गया है माहीद्वयमें भी उसी तैलका प्रयोग करनेसे सब प्रगमित हो जाता है। नातिपत्र, पाकपत्रका मूल, गोनालुग, डहरकरपत्रका बीज, दलामूल, मैथुन, गोवर्धन, चौता और यवचार इन सब द्रव्यों की छूटके दूधमें घोल कर बली बनाते हैं। इसका प्रयोग करनेसे माहीद्वय चतिसोय पाराम हो जाता है। शूकरकी विष्टाकी जला कर खाड़ी बनाते हैं। बाद बट्टा, पान्थोज, बरीष्ट, रेशुका, शक्तिमोवीज और तैलकी उसमें मिला कर माहीद्वयमें प्रयोग करनेसे बहुत फायदा होता है।

कपूरके शरम और मिन्तूरके कल्क द्वारा शरीरमें तैल पाक करके प्रयोग करनेसे माहीद्वय दूर हो जाता है।

भस्मातकायतेन, मज्जिकायतेन और मज्जिगुण्डान माहीद्वयमें विषय उपकारो है। शरीरप्रयोग सब प्रकारके मोधन और रोपणादि क्रिया भी माहीद्वयमें कर्तव्य है।

लग, दुर्धन और भयगीन व्यक्तियों की माहीको तदा भस्मायित माहीकी चारखत द्वारा छेदन करना चाहिये। ऐसी हालतमें मध्यप्रयोग करना - विषकुल

निषेध है। एषयो द्वारा शीघ्रको गतिका प्रयुक्तमान कर सुईके छेदमें तामा घिरोते हैं। बाद शीघ्रके एक प्राक्तमाममें उसे चुभो कर बहुत जल्द बाहर निकाल लेते हैं। यदि उस चारखत दोनो प्राक्तमों को एक साथ कस कर बांध देते हैं। यदि उसमें छेद न हो, तो चारके बलावलीको विषे चला करके दूसरी बार चारखत मूत्र प्रविष्ट कर अच्छा तरह बांध देते हैं। अब तक उस प्राक्तममें छेद न हो जाय, तब तक इसी प्रकार करते रहना चाहिये। प्रत्येक चारखतमें छिद्र ही ज्ञान पर उसकी चिकित्सा करने का चाहिये। (भाष्यः चतुर्थः माहीद्वयः) माहीद्वयश्रावणीमें माहीद्वयको बहुत-सी रोपणियां निषेध है।

माहीमाक (मं. पु०) माहीद्वयानः गाकः। माहीक, घट्टा माग।

माहीशुद्धि (मं. स्त्री०) माहीनी शुद्धिः १. तत्। माही-शोधन। इत्योर्गमें इसका विषय निष्ठा है।

माहीशोधयतेन (मं. स्त्री०) तैल शोधयतेन।

माहीस्वरसञ्चार (मं. पु०) माहीस्वरे सञ्चारः ८. तत्।

माहीमेदसे वायुको यक्ष्मद्वय गतिमेद। शरीरद्वय और यक्ष्मद्वयमें इसका विषय विस्तारद्वयमें निष्ठा है।

वामभागस्थित ईशानाङ्गी हो कर सब अधिक शक्ति निकलता है। तब उसे चन्द्रोदय और लव दक्षिणकी ओर पिङ्गलानाङ्गी हो कर निकलता है, तब उसे सूर्योदय कहते हैं अर्थात् वाम नासिका द्वारा अधिक शक्ति निकलने की चन्द्रोदय और दक्षिण नासिका द्वारा निकलने की सूर्योदय कहते हैं। शरीरद्वयमें निष्ठा है, कि यात्रादि पथवा और किसी दूसरे शुभकार्यका फल नासिकाकी ईशानाङ्गी और पिङ्गलानाङ्गीकी गतिसे प्रत्यक्ष जाना जाता है।

यात्राकाल, विवाहसमय, वक्ष्य और मनहार पक्षमें जेके समय तथा चन्द्र शुभकार्यमें चन्द्र शुभ है। उक्त समयमें यदि वामनासामुखमें वायुका सञ्चार अधिक हो, तो वे सब कार्य शुभ होते हैं। विषय, शूल, गुरु, घान, भोजन, मैथुन, ध्वजहार भय और भङ्ग इन सब विषयोंमें सूर्यनाङ्गी प्रसन्न मानो गई है। इस समय दक्षिण नासिकामें वायुका सञ्चार अधिक होनेसे वे सब कार्य फलीभूत होते हैं। (प्रपद्यमः)

मोहन, गान्धिकाय, दिव्योपधि, रसायन, विद्यारम्भ
 चोर सभी गिरकार्य समुद्रोदयमें चर्यात् जब यामनामिका
 द्वारा अधिक वायु निरुद्धे, सब फनोमूल होते हैं। यावा-
 फाममें सब जिस नामिकापुट हो कर अधिक वायु
 निरुद्धे, तब पहले यही घट घामे रख कर चलना
 चाहिये। ऐसा करनेसे कार्यको सिद्ध होती है।

नाडोघट (स० पु०) नाघामेय छोटी यष्ट। १ नाडी-
 मात्राकार, वह जो बहुत पतला हो। २ जिसके एक द्वार-
 पानका नाम।

नाडोद्विष्ट (स० पु०) नाडोमधान द्विष्ट। १ द्विष्ट-
 भेद, एक प्रकारकी होंग या गोंद। पर्याय—पलाशान,
 जम्बुका, रामठी, वंशपत्री, विण्डाहा, सुवीर्या, द्विष्ट-
 नाडिका। गुण—कटु, उष्ण, कफ चोर वातजन्य पोहा-
 नाग्न; विष्ठा, दिवस्य, दोष चोर भानाहरोर-गान्धि-
 कर। (राजनि०) २ एक प्रकारका हृत्त जिसमेंसे एक
 प्रकारकी होंग या गोंद निकलता है। यह गोंद चोपध-
 के काममें पाता है। इस हृत्तकी पत्तियां शटमोगराको
 पत्तियोंमें मिलती जुलती हैं। फूल सफेद चौर फल
 पोखी के टेंडके समान होते हैं।

नाडुदाना (हि० पु०) बैलकी एक जाति जो मैसूरमें
 होती है। इस जातिके बैल बहुत बड़े नहीं होते पर
 सहनशील चोर मजबूत अधिक होते हैं।

नायक (स० स्त्री०) पत्नी शब्दायते इति धन खलु न-
 पायकम्। १ सुशिक्षित निष्कादि, विद्या; २ धातु।
 ३ निष्क।

नायकपरीक्षा (स० स्त्री०) धातु-परीक्षा।

नायकपरीषी (स० पु०) धातुपरीषक, वह जो धातुकी
 परीक्षा करता हो।

नात (हि० पु०) १ नातदार, सम्बन्धी। २ नाता, सम्बन्ध।

नातपूना—हर्षदे प्रदेयके सोसापुर जिलेका एक नगर।

यह पचा० १०° ५१' ४०" उ० चोर देगा० ७५° ४०'
 १६" पू०के मध्य पण्डरपुर शहरमें ४२ मील उत्तर-
 पश्चिम तथा मत्तारासे ६६ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित
 है। यूनाने सोसापुर तक की राजपथ गया है, उसी पर
 यह नगर अवस्थित है। कहते हैं, कि बाह्यलो-राजके
 मन्त्री माणिक-सुन्दरने यह नगर बसाया।

नातह (हि० स्त्री०) पन्था, चोर नहीं तो।

नातवा (फा० वि०) दुर्बल, पागल, चीम, निर्बल।

नाता (हि० पु०) १ कुटुम्बकी घनिष्ठता, आतिमत्तम,
 रिश्ता। २ सम्बन्ध, लगाव।

नाताकत (फा० वि०) जिसे ताकत या धन न हो,
 निर्बल, कमजोर।

नातिदोर्घ (स० वि०) न पति दोर्घ; जो अधिक
 लम्बा न हो।

नातिन (हि० स्त्री०) लड़कीकी लड़की, बेटाकी बेटो।

नातिगीतोण (स० वि०) गीतचरणचन-पति गीतोन।
 अधिक गीतल भी नहीं चोर अधिक चण भी नहीं, जो
 न तो व्यादा ठंटा हो चोर न व्यादा गरम हो।

नातो (हि० पु०) लड़को या लड़केका लड़का, बेटो या
 बेटेका लड़का।

नाते (हि० स्त्री० वि०) १ सम्बन्ध; २ हेतु, धान्ते,
 लिए।

नातेदार (हि० वि०) सम्बन्धी, रिश्तेदार, मगा।

नाव (स० स्त्री०) नम-पुन। बाहुलकात् चत्तनोप
 चालच। १ विविध, चजूषा। २ प्रया, विद्वान्, ज्ञानकार।
 ३ शिव, महादेव।

नाय (स० पु०) नायति ईश्वरोभवतीति नाय ऐगो
 पच। १ ऐक्ययुक्त, प्रभु, स्वामी, अधिपति, मानिक।
 पर्याय—अधिप, ईश, नेता, परिहृष्ट, अधिपू, पति, इन्द्र,
 स्वामी, चार्य, प्रभु, भर्ता, ईश्वर, विभु, ईशिता, इन,
 नायक। २ वह रस्सी जिसे बैल, भैंसे आदिको नाक
 छेद कर उसमें इसलिये डाल देते हैं जिससे शैश्वमें
 रहें। ३ एक प्रकारके मदारी जो नाप पातने चोर
 जचाते हैं।

नाय—१ मरह्येन्द्रनाथके अनुयायी योगियोंको एक उपाधि,
 गोरपयन्त्री माधुषोंकी एक पदवी जो उनके नामोंके
 साथ ही मिली रहती है। २ एक कविका नाम।
 १००० ई०में ये फजलखली पार्कि समामद थे। किमी
 किछोका कहना है 'नायकवि' चोर ये दोनों एक ही
 व्यक्ति थे। नायकवि देखो। ३ माणिकसन्दर्भे एक समा-
 सद्। १०४६ ई०में इनका जन्म हुआ था।

नायकन—नेपालके अन्तर्गत एक नगर। एक समय यहाँ

महामारीका भारी प्रकोप था। बचनेका कोई उपाय न देत पवित्रामियोंने देवराज इन्द्र तथा अन्य देवताओंकी शाराधना की। किन्तु उससे कोई फल न निकला। अन्तमें ये लोग बुद्धकी शरणमें पहुँचे जिन्होंने उन्हें इस भयानक महामारीके फदेसे बचा लिया।

नायकवि—एक प्रसिद्ध कवि। १५८४ ई०में इन्होंने जगन्नाथपूजा किया था। ये 'राम' नामक पुस्तक बना गए हैं। इनकी रची हुई अष्टसुखमयीय कविताएँ बहुत मनोरंजक हैं।

नायकाम (म० पु०) पाययका अनुसन्धान करना।

नायकुमार (म० पु०) एक कविका नाम।

नायता (हि० श्री०) स्वामित्व, प्रभुता।

नायत्व (स० क्री०) नाय भावे त्व। प्रभुत्व, प्रभुता।

नायदार—राजपुतानेके उदयपुर राज्यका एक शहर। यह पचा० २४ ५६' उ० और देश० ७३' ४८' पू० बनास-नदीके किनारे अवस्थित है। 'नायदार' शब्दका अर्थ ईश्वरका द्वार होता है। यहाँ एक छणमूर्ति है और उसीसे ही इसका नाम नायदार पड़ा है।

मधुरा जिसमें हिन्दुओंके जितने छणमन्दिर हैं उनमेंसे नायदारके 'योगाय' अथवा 'नायजी'का मन्दिर ही सबसे प्रसिद्ध है। छणमन्दिरके चतुरिक्त घोर भी अन्य मात देवताओंके मन्दिर हैं।

घोरजिजने जब मधुराकी सब छणमूर्तियोंको तोड़नेका विचार किया, तब सन् १६०१ ई०में उदयपुरके महाराजा राजसिंह योगायजीकी मूर्ति को मधुरासे उदयपुरकी घोर ले कर भूमिधामसे चले। इस यात्रा पर जब रात्रि पहुँचा, तब पहिया कोचकमें धँस गया। लोगोंने कहा, कि योगायजीकी इच्छा इसी स्थान पर रहनेकी है। महाराजाने एक बड़ा मन्दिर बनवा कर मूर्ति यहाँ स्थापित कर दो। यही कान नायदार नामसे प्रसिद्ध है। इसके पासपासके स्थानोंमें ऊँची भी प्राचि-इत्यादि अथवा कौंदीकी बन्द करनेकी प्रथा नहीं है। भिन्न भिन्न देशोंमें हिन्दु-यात्री विशेषतः ब्रह्माचार्यके सम्प्रदायभूय ये स्थान इस तोषमें आया करते हैं।

नायनगर—भागलपुर जिलेके अन्तर्गत एक पत्नीग्राम। यह भागलपुर शहरसे २ मील पश्चिममें अवस्थित है।

ई० चार्ड० रेलवेको यहाँ इसी नामकी एक स्टेशन भी है। यहाँ टवरके पच्छे पच्छे कपड़े तैयार होते हैं जो भागलपुर तथा अन्यत्र देवीमें भेजे जाते हैं। इनके पास ही भागलपुरके टो० एम० सुबनी कालेज पढ़ता है।

नायना (हि० क्रि०) १ वेस, भैसे आदिकी नाक छेद कर उन्हें अग्रमें आनेके लिए रखी जानना, मजेल जानना, नाक छेदना। २ किसी वस्तुकी छेद कर उसमें रखी या तागा जानना। ३ कई वस्तुओं या किसी वस्तुके कई भागोंकी छेद कर रखी या तानेके द्वारा एकमें जोड़ना, मजो करना। ४ महीने रूपमें जोड़ना।

नायमल—एक संस्कृत भाषाज्ञ पण्डित। इन्होंने 'पियाथ-चक्रयुद्धवर्णन' नामक ग्रन्थ बनाया है।

नायविद् (म० वि०) पाययदाता, शरण देनेवाला।

नायविन्दु (म० वि०) पायय देनेवाला अथवा जिसे पायय देनेकी समता हो।

नायवरि (स० पु०) नाय हरति स्थानात् इयानाम्तरं नयति नाय-घ्न इन्। पथ, समेयी।

नायिन् (स० वि०) प्रभुयुक्त, जिसे कोई पायय देनेवाला हो।

नाथरामचौधे—हिन्दुके एक कवि। पायने मस्यत् १८०४-में 'विदकूटगत' नामक एक ग्रन्थ दोहोंमें रचा। आपकी कविता अच्छी होती थी; उदाहरणार्थ कुछ नीचे दिते हैं,—

“विश्रुत बनवास कह, करि लगनको वाप।

आध तरे सब बगदो, नैरे सदा रसनाद ॥

विश्रुत सब कामदा, पापपुत्र हरी देत।

भिन भिन उज्जल अथ मदत, राम भगविरो देत ॥”

नाथोक—एक कविका नाम। संस्कृत 'यदावली' इन्होंने बनाई हुई है।

नाद (म० पु०) नद शब्द भावे घञ्। १ शब्द, पाषाण। २ अनुस्वारवदुपायं अर्द्धवद्भातिवर्षमेद, अनुस्वारके समान उच्चारित होनेवाला वर्ण। इसके पश्चात्-अर्द्ध-अर्द्धमात्रा, कलारागि, सदायि, अनुस्वार, तुरोया, विग्रमाद्यकला घोर वरा हैं। (नीलकण्ठविभा०) ३ अक्षररूप बोधविशेष।

"नदिवदन्त्यदिभवात् नदत्वात् परमेस्वरमात् ।
 व्यतीरकविरुद्धादादन्तमादिभुवमुद्भवः ॥
 मातोविभूतय मीमांस्य स एव विविधो मतः ।
 मियमाभूत् परादिन्दीनवपातमावोद्भवत् ॥
 य एवः श्रुतीप्रत्ययः श्रुत्यो ब्रह्माऽभवत् परम् ॥"

(भागवत)

परमेस्वरके मयिटावन्द्यय विभवसे शक्ति, शक्तिसे नाद और नादसे विस्तृत उत्पन्न हुआ है। विस्तृत हो प्रलय है और इसीकी वीज कहते हैं।

चन्द्रारकोस्तुभके द्वितीय स्तवकमें इस प्रकार लिखा है—

"नामैर्नाम हृदे रमानाऽमाहवः शनर्चकः ।

नदति भद्ररन्ध्रमये सेन नारः प्रकीर्तितः ॥"

(अमरारकोस्तुभ २ स्तवक)

नामिदृशके ऊर्ध्व हृदय-ध्यामसे ब्रह्म रंभान्तमें प्राण-मंशक वायु शब्द उत्पन्न करती है, इसी शब्दको नाद कहते हैं।

सद्गोतदामोदरमें लिखा है—पाकाग्रस्थित अग्निसे मयत् निहता है, यह मयत् नामिके ऊर्ध्वदिगमें सम्यक्-रूपसे उच्चारित हो कर लय सुलभे परिष्कृत होता है, तब उसे नाद कहते हैं। यह नाद तोम प्रकारका है—प्रापिमय, प्रमापिमय और लभयप्रभय। जो देशादिसे उत्पन्न होता है, उसे प्रापिमय। जो गाद वीषासे उत्पन्न होता है, उसे प्रमापिमय और जो वंशादिसे उत्पन्न होता है, उसे लभयप्रभय कहते हैं।

"आहाराग्निमहत्मातो नामैर्हर्ष समुत्पन्नम् ।

मुनेऽग्निविरुद्धादि यः स नाद इतीरितः ॥

स च प्रापिमयोऽप्रापिभरवोऽलमयप्रभयः ॥"

(छन्दोगसामो)

ब्रह्माका जो त्याग कहा गया है, जो ब्रह्मव्यतिरिक्तवाच्य है, लभके मध्य प्राण प्रत्यक्षित है। इस प्राणसे यज्ञिकी उत्पत्ति हुई है। यज्ञि और मादके मंयोगमें नाद उत्पन्न हुआ है। इस नादके बिना गीत, स्वर और रागादि कुछ भी सम्भव नहीं, इसीसे जगत्को नादात्मक माना है। चतुस्र दिन नादके प्राण और मित्र कुछ भी प्राप्त नहीं होता। एकमात्र गाद ही परम्योति है और हरि कथं नारदस्वामी है।

"श्रुत्वा" ब्रह्मणः स्थानं ब्रह्मपत्नियारव यो ब्रह्म ।

तत्प्रत्यये संविद्यतः प्राणः प्राणाद्वह्नि समुद्भवः ॥

बह्निवाहृतद्वीगान्नादः समुद्भवान्ते ॥

न नादेन विना गीतं न नादेन विना स्वरः ।

न नादेन विना रागाद्यसमादायमकं वगत् ॥

न नादेन विना हानं न नादेन विना पिबः ।

नादकृत् पदं उगीर्तिर्नादकृी परं हरिः ॥"

नाद सद्गोतका प्राणव्युत्पन्न है। सद्गोतद्वर्षमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—गीत, नृत्य और वाद्य नादात्मक है। नाद द्वारा सभी वर्ण परिष्कृत होते हैं, वर्णसे पद और पदमें शब्द बना है। यही शब्द सब कोई नव समय व्यवहृत करते हैं। इस प्रकार जगत् नादात्मक है। यह नाद दो प्रकारका है,—पाहत और पनाहृत। इनमेंसे पाहत नादकी सुनिगण उपासना करते हैं। यह गुणवदित मादका ही सुनिगण है। पाहतनाद श्रुति आदिसे उत्पन्न हुआ है। यही नाद धर्मार्थकाममोक्षका एकमात्र साधन है। सरस्वतीके अनुग्रहसे कव्यम और चण्डर नामक नागहयने नाद-विद्या प्राप्त कर महादेवका कुण्डमन्त्र प्राप्त किया था। पर, शिव और शृंग ये सब नाद द्वारा मनुष्ट होते हैं। नाद माहात्म्यकी व्याख्या करनेमें कोई भी समर्थ नहीं है।

सद्गोतद्वर्षमें लिखा है, कि नादस्वामी समुद्रके पर-पारसे सरस्वती पथगत नहीं है। इसी कारण सरस्वती प्राप्त भी मन्त्रनके भयसे चण्डःस्थलमें तुम्ही धारण करते हैं।

"नादादरेस्तु परं पारं न जानाति सरस्वती ।

अथापि मन्त्रनभयास्तुम्बं बहति वधति ॥"

(छन्दोगसामो)

नादोत्पत्तिप्रकार—पाकासे प्रेरित पित्रा देहव्याप्त अग्निकी प्राप्ति करता है। पीछे यह अग्नि ब्रह्म-पत्नियुक्त प्राणकी प्रेरण करती है। यह प्राण अग्नि प्रेरित हो कर क्रमशः ऊर्ध्वपथ पर विचरण करते करते आभिर्मे पदं च कर यथा अग्नि धूम, हृदयमें मूत्र, मन-देगमें पुट, मोर्ध्वदिगमें भपुट और यदनमें अन्तिम ये पात्र

प्रकारक नाद उत्पन्न करते हैं। पर्याप्त चित्त मूय, मूय, पुट, भपुट और कृत्रिम ये पाँच प्रकारके नाद हैं। फिर भी कहा है, कि नकारका नाम प्राण है और दकारको चर्गिन कहते हैं। प्राण और चर्गिनके संयोगसे इसकी उत्पत्ति हुई है, इसीसे इसका नाम नाद पड़ा है।

यह नाद योगिमय है। इसका विषय उद्योग-दोषिकाके ४४ अध्यायमें विवृततत्त्वसे लिखा है। इस नादका अभ्यास कर योगी सुखसाधन करते हैं। जो मय मूढ़ व्यक्ति तत्त्वबोधमें प्रवृत्त है, उसीको यह नादोपासना करने की चाहिए। गोरक्षनाथने ऐसा उपदेश दिया है,—

“अधश्चतस्रोपासना मूढानामपि न प्रभवत्।

शेषं गोरक्षनाथे गोरोगवन्मुपवते ॥”

(इशयोग ० ४६५)

श्रीभाटिनाथने सपादकोटि भी प्रकारका निर्धारण किया है जिनमेंसे यह नादोपासना एक प्रधानतम है।

जो नादोपासना करना चाहते, उन्हें पहले सुभाषन पर स्थित हो गान्धर्वीसुद्धाका भजनप्रारम्भ करना चाहिये और उस समय एक चित्त हो कर भक्त्याह्वय नाद दाहिने कानसे सुनना चाहिये। इस समय त्र्यम्बपुट, नयन-गुल्ल, प्राण और सुषुप्तिरोध करनेको लिखा है। प्रथमतः योगी चार अवस्थाएँ हैं, यथा—चारभ, चट, परिचय और निष्पत्ति। इसकी प्रथमावस्थामें देखें किन्हीं प्रकारका पाघात नहीं होने पर भी विविध ध्वनि सुनी जाती है जिससे भ्रान्त्य प्राप्त होता है।

जब नादका पहले पहल अभ्यास किया जाता है, तब गाना प्रकारके मङ्गल नाद सुने जाते हैं। क्रमशः अभ्यास करते करते यह सूक्ष्मतम होता है। पहले समुद्र गर्जन वा मेघध्वनि, भरी, भर्भर यादि गम्भीर तरङ्ग, मध्यसमयमें मर्दस, गङ्गा, घण्टा-ध्वनि वा गन्ध, भक्त समयमें किङ्किरी, बँस, पीता और भ्रमरध्वनिवत् गन्ध सुना जाता है। इस प्रकार गाना प्रकारकी ध्वनियोंमेंसे जिससे शिष्टविशेष आकर्षित हो, उस नादका स्वर करके उसमें ही चित्तको स्थिर करना चाहिये। चित्तके नादाग्रही होने पर फिर वह विषयमदमें विमोहित नहीं होता, सुतरां योद्धे की समयके मध्य चित्त स्थिर हो जाता है। इस प्रकार निरा एकाग्र हो कर नादका

पशुसन्धान करता है। नादसे चित्त प्रवर्धित होता है और फिर नादमें ही योग हो जाता है।

ध्वनिके घनगर्गत श्रेय और श्रेयके घनगर्गत मन है। क्रमशः मन त्रय विरुद्ध परमपदमें लीन होता है, तब वही निःशब्द पान्नप्र है। ऐसी अवस्थाकी योगकी परमावस्था कहते हैं। सर्वदा इस प्रकार नादानुसन्धान करनेसे पापममूढ नष्ट होता है, चित्त और प्राण निरञ्जनमें लीन रहते हैं। उस समय गङ्गा, दुन्दुभि पादिका कुछ भी गन्ध सुनाई नहीं देता। चित्तादूर हो जाती है, सभी अवस्थाओंका तिरोधान होता है, देह काष्ठकी तरह हो जाती है, योगी मृतवत् हो जाते हैं। ऐसी अवस्था होनेसे ही मुक्ति मिलती है, ऐका ज्ञानना चाहिये। (इशयोग ० ४ ४०)

४ खनामस्यात सुनिर्विण्णः। ये ईश्वर सुनिर्गुण थे। इन्होंने न्यायतत्त्व और योगरहस्य नामक दो ग्रन्थ रचे हैं। दक्षिणप्रदेशमें इनकी जन्मभूमि थी। ५ स्त्रीता। ६ वर्षाधिके उत्तरार्द्धमें एक प्रयत्न। इसमें कण्ठकी गती बहुत अधिक फैला कर और न सह्य, चित्त करके वायु निकालनी पड़ती है। ७ मृदुता।

नादप्र (४० त्रि०) नादात् आरम्भे जन्मः। नादसे जो उत्पन्न हो।

नादता (४० स्त्री०) नादस्य भावः नाद-तत्त्व, टापू। गन्धत्व, गन्धका गुण।

नादनघाट—वर्धमान जिनके कानना मङ्गलमेका एक ग्राम यह स्थान वाचिस्पदके लिए प्रसिद्ध है।

नादना (४० क्रि०) १ शब्द करना, बजना। २ विज्ञाना, गरजना। ३ प्रफुल्लित होना, लङ्घनहाना, लङ्घना।

नादपुराण (४० स्त्री०) उपपुराणमें, एक पुराणका नाम।

नादसुद्धा (४० स्त्री०) सुद्धाभिद, तन्त्रकी एक सुद्धा। इसमें दाहिने हाथकी सुद्धा बाँध कर बाँजूंकी ऊपरकी ओर उठाए रखना पड़ता है।

नादनी (४० स्त्री०) मङ्ग यमक नामक पन्थरकी सोकीर टिकिया। इस पर कुरानकी एक विधि पायत खुदी रहती है और श्रम रोग-वाधा दूर करनेके लिये यमकी तरह पहनते हैं, शीतदिनो। पायतका पारम्भ 'नाद

अर्ध सत्राधि प्राप्त करनेसे पहले इन्होंने तुर्की और रूसों के साथ बहुत युद्ध-विषय करना पड़ा था। उन लोगों ने पारमर्श करने भी पान अधिकार किए थे, उन मन्त्री अपने अपने कर इन्होंने तुर्की में ही साथ (१७१६ ई० में) मन्त्रि स्वायत्त की थी। इसी मान इनके गिर-पुत्रका विरोध हुआ था। येही नादिरने छद्ममें, जो भी पाशाका मन्त्रा हुआ था, यह महज्जमें ही समझा जा सकता है। किन्तु हममें मन्देह नहीं कि वे आन्तरिक भावकी छिपा कर बाहरमें 'राजा' की उपाधि धारण करनेमें समिच्छा प्रकट करने लगे थे। परन्तु उमराव लोग उनके मनके भावकी समझ गए और उन्हें लम्बे 'शाह' मान लिया।

कहा जाता है, कि मोघानके समस्त लखेमें समस्त राज-कर्मचारियों ने मिल कर लखाधिक प्रजाको उप-स्थितिमें लम्बे राजमुकुट पहनानेकी इच्छा प्रकट की थी। पहले तो इन्होंने स्वीकार नहीं किया; पर बादमें जब यह मान्य हुआ कि तमाम फारसमें सुखीमतका प्रचार हो जायगा, तब उन्होंने यन्त्र प्रस्तावकी स्वीकार कर राजमुकुट प्रणय किया। यह घटना ई० सन् १७१६ की २६ फरवरीके सुबह ८ बजते २० मिनट पर हुई थी।

इस प्रकार स्वतन्त्र-मोघानकी पतिक्रम करते हुए नादिर-शाह अपने विरागिन्निमित्त स्याम पर पहुँचे। जब युद्धके निवा देने लक्ष सामनकी रक्षाका दुसरा कोई उपाय नहीं, ऐसा सोच कर पाप बहुत मन से यह-पूर्वक दिग्-जयके लिए निकले। प्रथम ही कन्दहार पर पापकी दृष्टि पड़ी। पक्षी हजार सेनाके साथ आपने कन्दहार परबोध किया। उस समय अवदनिगोने इनकी यथासाध्य सहायता पहुँचाई थी। परन्तु कन्दहार जीतना महज्ज बात न थी। इसी दुविधा में ही वे भी आपकी एक यशं तरु अवरोध कायम रखना पड़ा था और बहुत बार यह नि दूर भी हटना पड़ा था। अन्तमें नगरवासियों के हतोत्साह से (१७१८ ई० में) आपसमर्थन करने पर, उन्हें यशमें लानेके लिए समझमें बहुतोंकी आपने योग्य से मन्त्रिभागमें नियुक्त कर लिया और सबके साथ अच्छा व्यवहार करने लगे।

अन्त समय नादिरशाह अफगानोंके साथ युद्ध कर रहे थे, उस समय आपने भारतके पञ्चोत्तर महमूद-

शाहकी दून दावा कहना सेना कि, "भागे हुए अफगानोंकी भारतमें स्थान न मिलना चाहिये।" परन्तु पारसशाहकी प्रार्थना करनेसे प्राप्त न की। और तो बदा, उनका एक दून भी रास्तेमें अफगानों द्वारा मारा गया। इस तरहका गदित व्यवहार देख कर नादिरशाह मारे क्रोधके पाग-बुझा हो गये। उन्होंने भागनेवाले अफगानोंको भगा कर अपनी और काबुल पर कब्जा कर लिया (१७२० ई० में) और दिल्लीकी तरफ चपसर हुए।

इस समय भारतकी अवस्था ग्रीष्मतीय थी। मुगल-सम्राट् की दुर्बलताके कारण मराठोंका आधिपत्य घटेष्ट रूपमें छिड़की प्राप्त हुआ था। महमूदशाह राज-कार्यसे पराङ्मुख और व्यसनासक्त थे। नादिरशाहकी आगम-नागद्वारा चप भरके लिए भी उनके हृदय-पटलमें छिड़ित न हुई थी। इस नादिरशाह मार्गमें एक छोटी सेनाकी परामर्श कर निर्विघ्नतया सिन्धुनदी तक चपसर हो गये। बहावे नावोंका पुल बना कर पञ्जाबमें पा गये और दिल्लीमें १०० मीलकी दूरी पर पड़ाव डाल दिया।

१७१८ ई० में करनालमें भारतकी सेनाके साथ इनका युद्ध शुरू हुआ। युद्धका परिणाम बदा हुआ, यह महज्ज ही मान्य हो सकता है। बस हजार मुगल-सेना युद्ध-क्षेत्रमें भटाके लिए छो गई। प्रधान सेनापति गान्-ह-दावान मारे गये और पञ्चोत्तर राज-प्रतिनिधि कैद कर लिये गये।

महमूदशाहने जब देखा, कि नादिरशाहके साथ युद्धमें जीतना टेढ़ो और है, तब उन्होंने पारसशाहकी पञ्चोत्तरता स्वीकार कर ली और आस-पासकी उनके पास भिजा तथा वेहेमे पारिषदोंके साथ स्वयं भी नादिर-शाहके समक्ष उपस्थित हुए।

नादिरशाह महमूदशाहके साथ दिल्लीके राजप्रामादमें रहने लगे और उनकी सेनाकी छद्मनि नगरमें माना और प्रजाओंकी रक्षाके लिए नियुक्त किया। दूसरे दिन पञ्च-पाह फैल गई कि नादिरशाह मर गये। यह सुन कर अविश्वस्य स्थितिमें पारस-सेना पर महमा आक्रमण किया और प्रायः मान ली सेनाकी की यमपुरी भिन्न दिया।

नादिरशाह स्वयं उपस्थित हो कर विद्रोह-दमनके लिए लो-जानमे कोशिश करने लगे; पर किसी तरह भी उपद्रव शासन न हुआ। चारों ओरमे उन पर लगातार पत्थर पोर लोगों'को वर्षा होने लगे। नादिरशाहकी मृत्यु करके किमोने एक गोमो छोड़े। सोमग्यवग यह बादशाहको देखमें न लग कर पाखंडवर्षों एक समरायको लगी। इन घटनासे नादिरशाह की तुम्हो हुई क्रोधाग्नि फिरसे प्रभूत चले। वे धैर्य न रख सके। उन्होंने आदेश दिया—“मृतको मार डालो।” वन, फिर बग था; शोषितमिय निहुर से निकलग आवाससहस्रवर्तिता एक तरफसे सबको हत्या करने लगे।

मेमिकों'के हृदयमें प्रतिहि'वाको चम्लि लल रहो थी। सुपुत्रन-निष्ठा पोर पागमनहि अधिकतर प्रवल हो गई थी। नगरमें बाग लगा कर वे नगरवासियों'को चर्यान-निष्ठासे शोषित तरवारिका गिकार मगने लगे। 'नादिर-नामा'में लिखा है, कि इनमे १०००० बादमो मारे गये थे। परन्तु चमलमें इस विप्रवर्गमें १२००००मे भी अधिक बादमो मारे गये थे। सुबहसे ले कर शाम तक यह युद्धम हत्याकाण्ड जारी रहा था।

नादिरशाह इन प्रकारका निहुर आदेश दे कर पाप समुद्रमें जा बैठे थे। ऐसी पथस्यामें उनके सामने जाय, ऐसा साहस किमकी था? परन्तु महम्मदशाह डरते डरते उनके पास पहुँच गये पोर विनीतभावसे उनमे प्रार्थना की, “मैंने अधिकमें'को रक्षा करनी होगी।” नादिरशाहने उनको प्रार्थना स्वीकार कर ली पोर हत्याकाण्ड बन्द करनेके लिए आदेश दिया। आस्था पाते ही सुगन्धित मेवा इस निहुर कार्यमें विलत हुई। इनके बाद नादिरशाहने राजकीयव्य धनरवादि तथा मयूषासन पदव किया पोर जनसाधारणको मृत्युका भय दिया कर उपेष्ट धर्म-मंथन किया। इन तरह'पावने भारतवर्षसे प्रायः ८८ लाख स्वयं दहके किये। इनके निष्ठा से स्वयं सुद्रा, रोम्यमुद्रा, मयिमुद्रा, हाथो, छोड़े पोर कादकार्यपट्ट, मिथिगों'को नाय ने लगे। महम्मदके साथ मयि की, कि सिन्धुनदका पश्चिम पार नादिरशाहके दक्षिणमें रहेगा। इन प्रकार ने मूल-मंगको एक कथाके साथ अपने पुत्रका विवाह कर नादिरशाहने महम्मदकी

दिल्लीके सिंहासन पर बिठाया पोर अपने हाथमे उन्हें स्वासुद्धारसे विभूषित कर राजमुकुट पड़नाया। मोरवर नादिरशाह पञ्चावन दिन दिल्लीमें रहे थे पोर फारसको सोठले समय महम्मदशाहको राजनीति-विषयक नामा विचार दे गये थे।

भारतवर्षमें नोठने पर फारसकी प्रजाते इन्हें देख बड़ा धर्म प्रकट किया था। उनको सामा निष्क्रम न हुई। तीन वर्षके लिए नादिरशाहने कर साक कर दिया। इसके बाद नादिरशाहने सोरा, कुषाव पोर खारिजम राज्य अधिकार किया। पांच वर्षके भीतर इन्होंने पाँच राजाघों'को परान्त किया था। ४

ये सफगानिस्तानियोंके हाथमे निक फारसको मुक्त करके ही चान्त न हुए थे। उत्तरमें प्रकवम नदो पोर पूर्वमें सिन्धुनद तक पावने पारस-राज्यको सोमा विस्तृत को थी। तुर्कियों'ने इनका विषम दिष्टप था। उन्हें दमन करनेके लिए इन्होंने तीन बार युद्धयात्रा की थी। वे ताहरोष पोर यूझे दिन मदीके पास न रह सके; यही इनका महत्त्व था। इनो लिए पन्थ किसी युद्धमें प्रवृत्त होनेके पहले सेजगो तातारी'ने नादिरके भाई इम्राहिमकी हत्या की जो; नादिर उसीको प्रति-हि'मामें प्रवृत्त हुए थे।

नादिरशाह पारसियों'का भी पूरा विभास न कर सकते थे। पोर तो क्या, वे अपने ज्येष्ठ पुत्र रैजाकुनो पर भी अधिकतर सन्दिग्ध रहते थे। कहा जाता है, कि एक दिन नादिरशाह जंगलमें गिराए सेन रहे थे, कि इतनीमें एक गोमो आ कर उनके गरीरमें छुन गई। चमत्त ही यह कार्य किसी गुप्तचर द्वारा हुआ होगा, किन्तु इन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्रको पीछे छोड़ देनेके लिए दृष्ट दिया। समावदोने बहुत कुछ चतुर्ध-विनय किया—समा मांगो, पर पावने एकको भी न सुनो; बल्कि उनका बोडत्य पोर पदव कवधर पड़ने-को अपने ही सो गुना बढ़ गया। नगरमें भरमुटों'के टेर लग गये। शोषितस्त्रीन प्रवाहिन होने लगी। उपाटिन

० महम्मदशहने दो राजा भररुध भीर दुवेन, मुगलारे एक राजा अनुल फैरी, अजिमतके एक राजा एलरई भीर निरीके बादशाह महम्मद।

गल्लपो'को डेरी लग गयो। प्रकाश-माधारण जीवनको घाता छोड़ कर विपणमय को जियो सरह समय बिताने भयो। नगर मन्भूमिमें परिचय हो गयो।

जीवनकी योग्य चरित्रामें शारीरिक, चतुष्टयताके कारण नादिरके रोगकी माता इतनी बढ गई कि पानिरको बढ उम्रशतामें परिचय हो गई। एक दिन कहीं जाते जाते मगना पाय छोड़िसे लतर पड़े पोर से न्यटनके बाहर भागने लगे; किन्तु कुछ देर बाद प्रकाश हो गये। मन्त्रिकके चादरवयव पावने, चप-गानो'को राजकार्यमें तथा मुहमें नियुक्त करनेके निष्पादन किया। इन निरुद्ध चरयाचारोंके कारण प्रकाश इतने बढत नाराज हो गई। उसरायोंके पढयन्त्र १०४० ई०में रविवार तारीख १० मईको रातको उम्होके निरुद्ध-मन्त्रिकी भनीकुली पानि सनके वागमयनमें प्रवेश कर दुर्दान्त नादिरशाहको दुनियामें मर्दाके निष्पाद दिया। ये ही भनीकुली पानि "वादिनशाह" नाम प्रकाश कर मिहामन पर बैठे ये पोर १४६६में नादिर-शाहके तेरह पुत्र-प्रयोगीका प्रायसहार किया था। निम्न १२जाकुनो पानिचा चोदह वर्षका पुत्र शाहदेक वष गथा था।

नादिरशाह (फा० शी०) १ ऐसा अंधेर जैसा नादिरशाहने दिनेमें मनाया था, भारी अंधेर था अन्धकार। २ नादिरशाहके ऐसा, बहुत ही कठोर पोर वष।

नादिर—एक कवि। इनके विपणमें केवल इनना ही पता लगता है, कि १००० हिजरोमें ये भारतवर्षकी पाये थे। दाघिलानेमें निजा है, कि इन नामके तीन कवि थे। १म समरकन्दयामो जो दुमायुके शासनकालमें भारतवर्ष पाये। २य सुन्दारके नादिरों पोर ३य पानकोटके नादिरों।

नादिरों (फा० शी०) १ एक प्रकारकी सदरो या बंडो जो मुगल बादशाहोंके समयमें पढी जाती थी। इनके किनारे पर कुछ काम होता था। इसे कमी कमी विन-पनमें दिया करते थे। २ मन्त्रीके बडा वष पता जो खेनके समस्त निजाल कर पनग रण दिया जाता है।

नादिरद (फा० शी०) शिष्ये रसम, बहुत न ही, न दिनेमान।

नादिरदो (फा० शी०), पदःतयना, जिमोही कुछ न देनेकी प्रवृत्ति।

नादिरद—सन्ना शिष्ये नरनराजुपेत् तातुदमे न मोन पूर्व-दक्षिणमें चरयित एष माथोन पाम। यहाँ बहुतसे मन्दिर हैं पोर पयारपण्ड वा खुदा ईद देवदेविगीरी भी अनेक मूर्तियां दिनेनेमें पातो हैं।

नादिर (म० शी०) नया नादिर या इट तत भयं गा नदो या नद-दक, १ मैथववनपण, मंधा नमज। २ सोधीराष्ट्रन, सरमा। ३ कायन, काम नामकी पाम। ४ धनुषेतम, जनवेत। (वि०) ५ भरोनव्यभो, नदोका। ६ नदीमें छीनेपाना।

नादिर (म० शी०) नदी-दक, ततो डीप, १ धनुषेतम, जनवेत। २ भूमिजम्भूक, मुर्जासुन। ३ मैथवतिना, यैजयती। ४ नागरद, नागकी। ५ जया, पदुदुन। ६ प्यङ्गुठ। ७ पविमय, पंथीयू। पण्य—जय, योपनी, गधिकारिका, जया, जयतो, तकारी, वैजयन्तिना। ८ नागरमुन्ता, नागरमोषा। ९ वागहीकन्द। १० भूम्या मनको, मुर्जापयना। ११ परपुत्रक, पंडोका पद।

नादिर (म० शी०) कायावित्तःगिवनिजमेद, कायीके एक गिवनिजका नाम।

नादिरद (शि० वि०) नादिरद देगो।

नादिरपुर—चहयामका एक प्रधान कन्द।

नादीन—जोधपुरके पन्थार्त देसुही जिमेना एक पाम। यह पन्था २५ २१ ३० पोर देगा ३१ २० ५० के मध्य राजपुताना-मालवा देशके जयामो इटगनमे न मोनको दूरी पर चरयित है। जनमन्था जगमग १५५ है। मझूदकी सोमनाथ-यात्राके समय नादीनके राजा राय नागाने अन्धाम्य राजाप्रोके साथ गिन कर वन्थे रोकनेको कीगिम को यो। यन् महावीरका एक बडा ही मनाहर मन्दिर पोर 'चय नाथनी' नाम-ए एक प्रकारका जगमग है।

जोधपुरमें जोय राजापनि बहुत जमीन दान की थी जिनेमेंसे कुमारपाल प्रदत्त नाममज्जा नाम 'नादीन' है।

नादीन—१ पन्थाके काटका जिनामगत जमीरपुर तव-मोनका एक राज्य। भूपरिमाण ८० वर्गमान है। यहाँके प्रधान राजा संगाथादिक पोते हैं। संगाथादिक जारन

योधबोरवांदने चपनो दो नहृदियाँ रचजित्को स्याह दो ।
इन पर रंजजितने चन्दे नादोनका राजा बना दिया ।
राजा योधबोरने १८४८ ई०में कटोह-विद्रोहके समय
छटिया गवर्नमेण्टका साथ दिया था । इस प्रयुषकारके
बदले गवर्नमेण्टने चन्दे २६२००) रु०को एक जामोर
दो । योधबोरने मरुके प्लासिमें सिवाही-विद्रोहके
समय छटिया गवर्नमेण्टका पलायन-सम्बन्ध कर प्य वीरता
दिखाई थी । १८५८ ई०में जब वे रात्रि० ५मन पर
बैठे, तब छटिया सरकारने इन्हें ६० सो० एच० बाई०-
को उपाधि और टग मनामो तोये दौ ।

२ उल्ल राजका एक नगर । यह पचा० ३१' ४६'
उ० और देगा० ७८' १८' पू० विपागा नदीके बायें
किनारे स्थित है । राजा योधबोरवांदने यह नगर
बनाया । राजा सभारवाँट इस स्थानको बहुत पसन्द
करते थे । उन्होंने उल्ल नगरमें एक मोन दूर नदीके
किनारे चामता नामक स्थानमें एक विश्व राजभवन
निर्माण किया । गहरकी जलमय्या लगभग १४२६ ई०
यहां सायन और रंग चित्रकी वासीरी बनाई जाती है ।
नाथ (स० वि०) लया भवः धंदे टाण । नदीभव,
नदीमें बहनेवाला ।

नाथन (हि० श्री०) चरखेके तकलीमें तामेकी रोकके लिये
लगी हुई एक मोल टिकिया । यह टिकिया पिछे हुई
मिथीमें रुई पाटि छान कर बनाते हैं और जिवटे हुए
तामिने धामि छेद कर पहना देते हैं ।

नाथना (हि० श्री०) १ रस्मो या तर्कीके द्वारा बेल,
घोड़े पादि से सम वस्तु नाथ जोड़ना के बाधना जिसे
चन्दे गोच कर में जाना होता है, जोतना । २ सम्बन्ध
करना, जोड़ना । ३ मूलना, मुदना । ४ पशुहित
करना, ठानना, मुद करना ।

नाथः (हि० पु०) १ यह रस्मो या तर्कीको घड़ी जिवमें
इन या जोड़नेकी रस्म जूझमें बांधो जानो है, नारो ।
२ यह स्थान जहाँ पर धामी मूर, जगमग पादिने
निकान कर फेंका जाता है और जइसे नातिवोन
होता हुआ यह मि० पाईके लिये खेतमें जाता है ।

नाथ (प० प०) १ रोटी, चउती । २ एक प्रकारको
मोटो चमोरो रोटी जो त० दूरमें पकाई जाती है ।

नानक (मुह नामक)—१४६८ ई० (स० १५२६) में
नाहोरको मरुकपुर तहसीलके चमार्गत इरावती नदी-
तोरख तनवन्दी (वर्तमान नाम रायपुर) धाममें इन-
का जन्म हुआ था । इनके समयमें यहनोनदी दीनो-
के चबोखर थे । इनके पिताका नाम था कान्हु । वे
छत्तियीमें सेदिसम्बदायभुक्त थे । इरावती और चन्द्रभागा
नदीके मध्यवर्ती स्थानमें, उस समय जाट और भट्टो
नामक दो जातियोंका काम था जिनमें भट्टो लोग मुसल-
मान-धर्मावलम्बी थे । तनवन्दी धाम उस समय राय-
हुता नामक भट्टजातीय एक शासनकर्ताके अधीन
था । जिस घरमें नानकका जन्म हुआ था, लोग उसे
"नानाकाना" कहते हैं और सब उस स्थानमें उपा-
नमा करते हैं । इसके पास ही एक तालाब है, जिसे
लोग "नालदेरा" कहते हैं । कहा जाता है कि नानक
बचपनमें यहाँ खेला करते थे ।

नानक सिखोंके धर्मप्रवर्तक थे । बचपनमें ही
पाप परिमितभाषो थे ; यहाँ तक कि विमेष चावश-
यताके बिना अपने पहचरामें भी न बीसते थे । पानि-
पेमेंकी खानसा लममें बिलकुल ही न थी ; सब दा
विमय और चिन्ताशोक चवस्थामें रहते थे । ईश्वरको
लगावे धर्ममें पापकी बड़ी चामति थी, धर्मचिन्ताके
विषयमें पापका प्रयाद चतुराग लक्षित होता था ।

कहा जाता है, कि फकीरकी उपामनासे बचने
नानकका जन्म हुआ था और उस फकीरने कहा था,
कि यह नानक कानानारमें छविसे पर एक प्रधान ध्यति
होगा और प्रसिद्धि पावेगा ।

नानक फकीरकी उपामनासे वेदा हुआ है और हमी
लिए लममें पचामाविक विमर्षता पाई जाती है, ऐसा
विचार कर कान्हु अपने पुत्र (नानक)को एक वेदके
घर में गए और लमने पोषकी व्यवस्था करनेके लिए
कहा । परन्तु उस समय ईश्वरानुष्टेज गिय नानकने
चिन्तितको यह बात कही थी कि "जिध जगदीमरने
हम लोको की जीवन, बचप्य और वाङ्मनि दी है,
ओ जगत्का एकमात्र नियन्ता है, उस ईश्वरके विरहमें
ओ कानर है, उसके लिए यह निश्चित कहा जा सकता
है कि पापिच्य पोषधियोके लक्षका कोई भी प्रतीकार

मर्हों की मरणा ।" वेद शिष्टकी पनेमर्दिह बाण-
दास्यको चुन कर हिन्दुन मुण की गया चोर कान-
की समझा दिया कि एकाकी एकानाशम करना हो
नामकके लिए घरम पोषा है ।

मानक की चमने नामक वस्त्र पहन विद्यालयमें
भिजे गय । विद्यालयमें पण्डितजी मरागय जब धर्म-
सम्झी उपदेश देने थे, तब पाप उमे बड़े पापहमे
चुनने में चोर कभी ईगारके विषयमें दिमे प्रश्न किया
करते थे कि गिरक भी पति फटने उनको मोमामा मर्हों
कर मकने थे । मानकने हृदयमें 'एकमेवादितोयम्' यह
विश्वास धचरने की यहमूल की गया था । सयवन-
मुतागिरोनके प्रस्ताने मतमे, मानकने एक सुमनमान
मोमकोके वाम विद्या मोमने घो । ये मोमको तलवस्त्रमें
थो रक्ते में चोर सुमनमान धर्मशास्त्रमें उनका विमोघ
पधितार था ।

मानकके जीवनका अधिकांश समय निर्जन्मयास
चोर धर्मविनाममें व्यतीत हुआ था । मरचरों चोर माधा-
रप मोमों में दूधक, रक्तेके चर्हयमें ये बहुत कोटिपनमें
हैं। समय समय पर घर छोड़ कर गहन कामनमें जा
दिपते थे । कभी कभी यह कामनशम इतना दोष काम-
न्याये होता था, कि माता पिता यह समझ लिया करते
थे कि पुत या तो माग भून गया है, या हिंस्त्रक लसुचों-
के पेटमें चला गया है । परन्तु योही जब विमोघ श्रोज को
जाती थी, तब उन्हें फकीरके वेगमें निधिन-मानसे
भ्रमण करते पाया जाता था ।

मानक जब भी चर्हके दूध, तब पिताने उनका
हिन्दुगाना-मण्डल उपवीत संस्कार करानेके लिए पुगे
हित चोर वसुधाभूषणों की धामस्थित किया । सबसे उप-
स्थित होने पर तपनयनका पूर्वकथा पत्रुष्ठित हुआ ।
बाटमें पुराहितने मानकको उपवीत धारप करनेके
लिए धाटिन दिया । मानकने कहा, "उपवीत धारप
करनेमे मेरो पयसा तनिक भी पचन न होमो ।" इस
विषयमें नकोने दर्शन-मयान बहुत तर्ज-वितर्क किया
चोर माधवों की उनके तर्जमें निहदार हो जाता पड़ा ।
नकोने धर्म-पत्रमें इसका विवरण हिन्दुनरूपसे लिखा
है, जिनका कुछ चम मोचे उद्धृत किया जाता है—

"मनुष्य ईश्वरका नाम लेप कर पापोंको चमने
कनाये । उनके लिए प्रार्थना ही उच्च उपवीत है ।
जिन्होंने एक बार ऐसा उपवीत धारप किया है, वे
ईश्वरके निष्ठ पद चर्हके अधिकांश हैं चोर उन उप-
वीतकी मे कभी तोड़ नहीं मपते ।"

मानकको चमर जब पन्द्रह वर्ष की हुई, तब पिताने
उन्हें दूकानदारों सिधार्नेके धमिपावसे ४०, ५० दे कर
शामा नामक एक मोकरके साथ नमक परोदने भेज
दिया । मानक चमने पिताने कथनानुसार किशो धाममें
नमक खरीदने चन दिए । चमने चमने रास्तेमें उन्हें भूये
फकीरों का एक टन मगर पाया, मानकका हृदय दणधे
पमोज गय । चर्हाने उन चामोम रूपों में ग्राह्यदाय
परोद कर फकीरों की भोजन कराया । इस तरह दूध
बरवाट करते देन मोकरने उन्हें फटकार लगाई । मानक-
ने कहा— "मैंने वह धोज खरीदो है, कि जिनका कम
दूधरे लयमें भोगूँगा । मनुष्यके माधक्य-विक्षय करने-
की चपेसा ईश्वरके साथ क्य-विक्षय करनेमें कहीं
अधिक शाम होता है ।"

मानक घर सोट कर पिताने घरसे एक पेड़की
छालियोंके बीच जा ठिपे । मानने चपों की बरादी-
का दास चुन कर मानकको पीटना शुरू कर दिया ।
पीड़े रायबुनारने चपों तरफमें ४०, ५० दे कर कान-
का क्रोध शांत किया । जिन हचमें मानक द्विप गये
थे, उनका नाम 'मासमाहब' है । पिताने दारा बार बार
मार चाने पर भी नामक चपों दानमीनताको न छोड़
मके । मोका पाते थो घे घरसे चपये वेमे ले कर
दमिर्नों की दान कर दिया करते थे । इनके पिताने किमो
समय चुनसानपुरमें रहने एक दान-पायनकी दूकान
करवा दो थी । किन्तु मानकने दूकानका सामान
फकीरों की बांटना शुरू कर दिया । जहां पावने दूकान
खोली थी, चम स्थानका नाम है 'डाटमाचन' । मानकने
गिरगच चम भी चम स्थानकी तया चमकी बाट-तराङ्ग
चमरेहकी भलि भावमें पूजा किया करते हैं ।

गोमार्तिक द्रवादि की चर्हाने विषयमें मानककी
धर्मानिक सिधितता देख कर पिताने चम चामाका
दूर करनेके धमिपावसे दोसह रूपों की चमामें धारप

विवाह कर दिया। शुद्धासपुर जिलेमें बतानाके भक्त-
गंत मल्लोकाऽरहनेवासे कस्ती-वंशीय मूलाकी कन्या
सुमक्षीके साथ पापका पाणिग्रहण हुआ। परन्तु इसमें
भी उनके पिताकी मन्मत्ता पूरी न हुई। विवाह हो जाने
पर भी नानक अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तिको छोड़ न सके।
नानकी नामक नामरकी एक बहन थी। जयराम
नामक एक हिन्दूके साथ उनकी विवाह हुआ था। ये
जयराम दिल्लीके बादशाह बहमन ओदीके भागीर
नवाब दोस्त था ओदीके अधीन कार्य करते थे। पञ्चाश
में कर्पूरतलाके निकटस्थी 'सुलतानपुर' नामक स्थानमें
दोस्त वाली विद्याल जागीर थी। उक्त नवाबके अधीन
कार्य करनेके परिणामसे नानक जयरामके पास भेजे
गये। नवाबने पाप पर परिग्रहानाकी रक्षाका भार
सौंप दिया। किन्तु पाप इतनी सदाशताके साथ दरिद्री-
की दान करने लगे कि योद्धे की समयमें उक्त परिग्रि-
हानाकी तमाम चीजोंका खातमा हो गया। जो कुछ
थो, योद्धे की समयमें पाप यहाँका काम छोड़ कर
चले गये।

कैलस एके अधीन कार्य करते समय, ३२ वर्षकी
उमरमें पापके प्रथम पुत्र हुआ, जिसका नाम रक्ता
गया श्रीचन्द। इसके चार वर्ष बाद मल्लीदास नामका
दूसरा पुत्र हुआ। मल्लीदास जिस समय विधायक
बना था, उस समय पाप फलोरके वेगमें देग भ्रमणको
निकले थे। मरदाना नामक एक लोवा बजानेवाला,
सहजा (जो कि भक्तमें नानकके उत्तराधिकारी हुए),
बाना और रामदास ये चार व्यक्ति पापके सहचर थे।

ईश्वरकी प्रवृत्तिसे लिए नानक जिन पत्थोंको रचना
करते थे पथवा मिथ्योंको उपदेष्टारूपमें जो कुछ कहते
थे, मरदाना उसे लोवा बजा कर गाथा करते थे। कहा
जाता है, कि पापने धर्मप्रचारके सहस्रसे भारतवर्ष,
पारस्य, काबुल और एशियाके पन्थाय कानोंमें, और
सो कदा महा तक परिचयमय किया था।

नामा स्वामीमें परिश्रमय कर चुकनेके बाद पाप
शुद्धासपुराभासे पन्तर्गत चामनाबाद नामक स्थानमें
जानू नामक उपचरके साथ कुछ दिनों तक रहे।
मरदाना जब परिवारके लोगोंको देखनेके लिये अपने

घर मोटे, तब रायबुहारने नानकके भागमनकी प्रवृ-
त्ति मरदानाकी चपरी दर्शनके लिये आपन की। नानकके
योद्धे दिन बाद तत्पश्चात् धामकी मोटने पर उनके पिता,
माता, प्रभु, चाचा और पन्थाय भागीरमय यहाँ
था कर उन्हें पुनः गृहस्थ बनानेके लिए माना तरकी-
की कोशिशें करने लगे। परन्तु वे विन्दुमात्र भी विचलित
न हुए। उनकी उपदेष्टारूपमें जो बातें कही गयीं, उनके
कुछ चंग भीचे दिष्ट जाते हैं—

१। "बस मेरो मा है, धैर्य मेरा पिता है और सत्य
चचा है। इनकी सहायतासे मैंने मनःस्थिर भीष
मिया है।"

२। "लालू! यह उपदेष्ट सुनो,—जो लोग संसार-
बन्धनसे पावड हैं, वे क्या कभी सुखी हो सकते हैं?"

३। "हे भ्राता! सुखीसता मेरो सहचर है। यथाय
प्रेम पुत्र है; सहिष्णुता मेरो कन्या है। इन लोगोंके
सहवासमें मैं बड़े सुखसे कालपादन कर रहा हूँ।"

४। "सत्यता मेरी विश्वविजयी (जी) है; जित-
न्वितता मेरो दासकन्या है। ये जो मेरी प्रति प्रिय
और भागीर है। ये प्रति सब मेरे साथ रहती है।"

५। "जिस एक यथं पक्षितोय ईश्वरने सुनि बनाया
है, वे ही मेरे प्रभु हैं। जो व्यक्ति उस ईश्वरकी भाव-
समर्पण करके पन्थकी खोज करता है, उसकी वातना
सहमी पड़ती है।"

रायबुहार पापको इस सारगर्भित वक्तृताको सुन
कर तथा पापके पाण्डित्य और चमत्कारिक भावको देख
कर बलवत् प्रसन्न हुए थे। यद्यो कारण था, कि पापकी
तत्पश्चात् धाममें रहनेके लिए उपनि बहानेकी लज्जा
हो थी, परन्तु नानकने उसे लिया नहीं। पापके स्वामिने
योद्धेका राजगार करनेके लिये रुपये दिये, वह भी
पापने न लिए और कहने लगे—"शास्त्रपयका अनुसरण
कर सत्यरूप पत्रका व्यवसाय कीजिये। अपने पुत्रके
लिए सत्यापयका अनुष्ठान कीजिए। इन बातोंको पसार
सपन्थास न समझियेगा। ईश्वरके राज्यमें जानिके लिए
मार्ग प्रस्तुत कीजिए, कारण वही जानिके विरसुख भोग
कर सके है।"

तदनन्तर पाप पुनः देगपटनके लिए निकले थे

घोर वज्रदेव तथा दलाली तिरि भोजियों में परिचय
 किया था। इस तिरि भोजन में समस्त समिद्ध योग्य
 गोपचाराई साथ साथकी भेंट हुई थी। चक्रवर्तिनाम
 भोजन करने समय सरदाणा की गुणवत्ता की गई। तिरि
 दास तत्काल नामक स्थानको मोट पर 'तलवल्लीकी
 तलवल्ली' हुए। इतनेमें रायनुसार घोर जालू
 भी चला दी गई। मरदाणा के पुत्र गोरजादा सायबकी
 साथ में मुक्तानमें तलवल्ली नामक स्थानमें उपस्थित
 हुए। वहाँ कुछ दलालोंमें मरदाणाकी एकदु कर
 भेंट कर लिया। जानकीने अपनी वस्तुनामिके प्रभावसे
 उन्हें सुख द्यर अपने धर्ममें डोलित कर लिया।
 तबसे वे काबुल घोर कन्दहारको गये। कहा
 जाता है, कि मार्गमें राहोंमें जायोंमें धर्म-
 गति एक विमान भूयानकी प्राप्त किया था। परंत
 पर उनके राहोंका विष्ट पटित हो गया था। धर्म भी
 एक स्थान विद्यमान है, लोग उसे 'पञ्चमाहक' करते
 हैं। काबुलमें मोट कर पाप तिरि कुछ दिनों तक अपने
 सिव धामनाबादनिधायी सुखर सामुद्रिक भाग रहे थे।
 इस समय पापके मिथोंको संख्या बहुत बढ़ गई थी।
 सब पापको सिव पुत्र घोर मरदाणांजय समझते थे।
 समस्त परिवर्तनके साथ साथ पापको चक्रवर्ती भी
 बहुत कुछ परिवर्तन हो गया था। सब समाज घोर
 परिवर्तन पर पापकी पहचानी तरफ भ्रष्टा हो चुका
 न थी।

कुछ दिन सामुद्रिक साथ एकत्र पास करनेके बाद,
 उनकी दौड़ कर घोर बानाकी भाग में पाप मुद्राव-
 धना देवनेके सिने मुक्तान चल दिये। वहाँ एकद
 हुए भीगीके समस्त पापने अपने धर्मका सारमर्थ उठा।
 दिनोंके अधीनर इमाहिमजोके करदारोंने पकड़ता
 चुन कर पापके विहव मरदाणा के पास पापेदन पत्र निध
 भेजा। इमाहिम उक्त तत्वादा पा कर कुछ हुए घोर
 नगरकी दिनों पकड़ता चुनया घोर उलका धर्मगत
 भेंट तथा कुरासके मतमें शून्य है, इस चक्रवर्ती धर्म
 जागरूक कर रहा। जानकीने गान मरदाणा के
 रचना पढ़ा था। बादमें मुगलकीय शासनके भार
 पर पात्रमय कर १९२६ ई. में जानकीने इमाहिमकी

प्राप्तिन घोर निहल करने पर नाम वही मुद्रि तिथी।
 धर्म काद साथ मित्रुदेव करने हुए। वहाँ मरदाणा नामक
 गक मिलित मुक्तानमें भाग पापका धर्मगम्यो
 तर्क वितर्क हुआ था। उस समय पाप 'धामा' नामकी
 एक पुत्राक निव रहते थे।

कहा जाता है, कि जानकीने मिहल-भामय किया था
 घोर मिहलनाथ गियनाथ घोर धामाव बहुत-से व्यष्टि
 योंको अपने धर्ममें दाखिल किया था। पाप मिहलमें
 दो वर्ष दाखल रहने पर कर मरदाणाको मोटे थे।

जानकीने इमाहिम-भामय घोर तुलवल्लीनाथके साथ
 साक्षात्के नियममें एक प्रवाद है। तुलवल्लीनाथ धामना
 धर्मभीमी घोर प्रजापोद्भक्त थे। किन्तु जानकीने उपदेग-
 ने वहीमें अपना तमाम रूपवा फकीरों घोर दीन-
 दुःखियोंको दे दिया था तथा प्रजापोद्भक्ता धामाव
 सदाके निव हाड दिया था।

जानकीने अपना गीत जीवन ईशवती नदीके किनारे
 (गुहादि निर्माणपूर्वक) बिताया था। पाप अपने
 परिवारके लक्षों हुए थे। पापने घरमें सब जातिके लोगों-
 को पापय मिलता था। पाप स्वयं फकीरके पैरमें रहने
 हुए भी बहुत-से व्यक्तियों पर प्रभुत्व करते थे। प्रायः
 सभी पापकी धर्मवेष्टा समझ कर सन्तानकी दृष्टिसे
 देखते थे। पापका वर्ष राजाघोंमें किसी प्रकार भी
 कम न था। वहाँ पापने एक प्रतिविमाना लोभी मो,
 जहाँ बहुत-से व्यक्त उत्ति प्रतिपातित होते थे। ईशवतीके
 किनारे सब मो पापका यह निशानभवन विद्यमान है,
 जो कि 'हिरा बाशागनक'के नामसे प्रसिद्ध है।

जानकीने जानकी जिनमें करतारपुर नगर मंदापन
 पर वहाँ एक धर्ममाना चलावायो थी। गिरा लोग उसे
 पवित्र स्थान मानते हैं। इसी स्थानमें १९३० ई. में ०१
 वर्षकी उमरमें पापका देहावनन हुआ था। इस दीर्घ
 समयमें पाप मो महित कार्यमें व्यस्त थे। सोइने
 जेव ४० वर्ष ५ मास ० दिन तक पाप 'मुह' नामसे
 प्रसिद्ध हुए थे। करतारपुरमें मरवादिष्ट-पक्ष पापका
 एक सनाधिगन्धि बनाया गया था। उस जमाने प्रति
 वर्ष जानकीने गुण-दिवसमें बहुतसे लोग 'इन्की' हो कर
 जल करतें थे। ईशवतीके स्नानमें सब मर मन्दिर दूट
 गया है।

किसका बापके पदार्थों के कहने और अन्याय करने के विषय एक मन्दिर में है, जो तीर्थ यात्रियों को दिखाने के लिए है। कहा जाता है, कि इनकी स्तुति के बाद मृतदेह के सकारण सन्तानों हिन्दुओं और मुसलमानों में भावों में समानता पैदा होगी। मुसलमान लोग इनके मुसलमान कहते हैं; कारण यद्यपि वे साठ रुपये मुसलमान धर्म के रखते हैं, तो भी मरणादिको ईश्वर का दान समझते हैं। वे धार्मिकता के विरोधी हैं और ईश्वर के 'एकमेवाद्वितीय' ऐसा विश्वास उनके हृदय में बसता था। इससे इनको मृतदेह की कर्म के लिये मुसलमान लोग बहुरिकर हुए हैं। फिर भी, हिन्दू लोग उन्हें 'गो'वा हिन्दू-उगाधि देते हैं, सुतरां इन लोगों ने उनको मृतदेह की चमत्कार करने का हट्ट बहाल किया। हिन्दू और मुसलमान इन दोनों सम्प्रदायों के मध्य रहनेवालों को सहायता दी। उठो, दोनों पक्षों की तलवार चमकने लगी। बाद कुछ परिणामदर्शी विद्वानों ने यह सिद्धांत किया, कि उक्त देश में जो मस्जिदें गाढ़ी जाय और न चमकें वे भस्मोत्पन्न की जाय—उसे जल में बहा देना ही उत्तम होगा। यह स्थिर कर जब दोनों पक्षों में लोग मृतदेह के पास उपस्थित हुए, तब बापों का विषय था, कि मृतदेह के पावर बखर्क सिद्धांत और कुछ भी उन्हें दिखाने न दिया। उस समय ऐसा मामला पड़ा, कि दोनों पक्षों में किसी एक पक्ष में मृतदेह को बुरा लिया हो। बाद उस रूप में दो पक्ष कर एक ही मुसलमानों के कर्म में गाढ़ दिया और दूसरे पक्ष को हिन्दुओं ने जला डाला।

मानक विचार एवं धर्मवादी हैं। उनका विश्वास था, कि ईश्वर एक है और मनुष्य उन्हें देख नहीं सकता। वे कहते हैं, कि पहले संसार में ईश्वर एक ही विषय सत्यधर्म छट हुआ था और सभी मनुष्य समान थे एक धर्म के। बाद मनुष्यों को मिलावे संसार में भिन्न भिन्न जाति और भिन्न भिन्न धर्मों का उत्पत्ति हुई। वे यह भी कहा करते हैं कि 'मैंने कुरान और पुत्र दोनों पत्र पढ़े हैं, हिन्दू प्रथम सत्यधर्म किमों में भी नहीं है।' ऐसा होने पर भी मानक दोनों धर्मों का बदर करने और अपने धर्मों को उनके मूल में लाने का प्रयत्न करते हैं।

हिन्दू और मुसलमान इन दो सम्प्रदायों के धर्म और समाजगत विरोधमूलक तथा दोनों धर्मों का परस्पर सामंजस्य करना ही इनके जीवनका प्रधान मत था। इस विषय में वे बहुत कुछ उत्साह भी करते हैं। आद्यमान-संस्कार, धर्मों पर चमत्कार और सर्वत्र चिरमान्वित्व करना ही इनके प्रवृत्ति धर्म का मार्ग उपदेश था।

ईश्वर द्वारा धर्म प्रचार के लिये मनुष्यों को पवित्र दोहों का प्रयोग प्रेरण और हिन्दू के अवतारवाद में वे विश्वास करते हैं। किन्तु मनुष्यों के जेमा वे सभी यह नहीं कहते हैं, कि वे मनुष्यों को जो सहा उपदेश या जो सब याज्ञाना देते हैं, उन्हें ईश्वर ने उन्हें कह दिया है। वे यह कह कर जो प्रचार नहीं करते हैं, कि उनमें देवगति हो, या जिस गति में वे कार्य करते हैं, यह सत्य प्रकृति में नहीं हो सकता। उनका कहना था कि, 'मैं भी साधारण मनुष्यों में से एक हूँ और उनके जेमा पावी हूँ'।

'मैं ईश्वर के द्वारा एक फकीर हूँ' ('तू है निर-द्वार, कर्तार, मानक बन्दारा') यह धार्मिक मानक के हृदय का गुणरहस्य था। उनके धर्म का मार्ग था, कि ईश्वर को सर्व-सर्व है, उनमें विश्वास रखना आवश्यक है; वे अयोग्यत्व, युद्धों, चलोत्पत्ति, सर्व-सत्यमान, चमत्कार और चमत्कार हैं। निर्वाणसमर्थ लिये सत्य ईश्वर-मान आवश्यक है, देवत्व सत्यमानुष्यत्व के लक्षण नहीं होता है। कोई धर्मोपदेश (Prophecy) किमों का कुछ उपकार या उपकार नहीं कर सकता। ईश्वर ही हम लोगों के हृदयमण्डल के मूल है। अपना धर्म दूर करने के लिये ईश्वर के ऊपर निर्भर करना ही मानवता का कार्य है। धर्मोपदेशक के लिये ईश्वर के पादों की अनुपस्थिति के प्रथम समझा देने में ही समर्थ है; हमने अपना उनमें अपने कोई चमत्कार नहीं है। मानक पुनर्जन्म पर विश्वास करने और उदा करते हैं कि मनुष्यजन्म पाद के लिये बाका ईश्वरद्वितीय मानिका लोग कर चमत्कार के माध्यम कर रहे हैं।

यद्यपि सत्य को जोड़ने मानक बचपन में ही पिता माता आदि पञ्चनका परिचित कर देना देना मानक के

नामोक्त तब भी नहीं किया। जो सक्ता है कि, जब बावने यह पुस्तक लिखी थी, उस समय इनका नाम इतना ही था नहीं। इसलिए उन्होंने इनके विषयमें कुछ भी नहीं लिखा है।

मरनेके समय जानक महना नामक एक मिथ्या की अपना उत्तराधिकारी बना गए थे। इसका कारण यह था, कि वे पत्यल प्रभुभक्त और ईश्वरविष्णुकी थीं। जानकके उत्तराधिकारिय "गुरु" नामसे पुकारे जाते हैं। गिरा देलो।

ज्ञानपत्नी—मिश्रगुरु जानकने जो नया धर्म बताया था, उसके प्रचारके लिए वे लगाने देगोंमें घूमने और उक्त धर्मकी व्याख्या करके भिख भिखलातिका लोगोंको अपने धर्ममें लाये थे। जो सब मनुष्य उनके प्रवर्तित धर्मोपदेशों द्वारा वे ही ज्ञानपत्नी नामसे प्रसिद्ध हैं।

जानक और गिरा देलो।

ज्ञानकपत्नी—ज्ञानकपत्नीके चलनगत एक प्रकारका संन्यासीवा योगो लभ्यताय। ये लोग मान भागम विभक्त हैं। प्रत्येक भाग्यकी लोग जानककी अपना पाठि गुरु मानते हैं। पश्चिम भागमें ये लोग भित्तुक-श्रेणीके मध्य एक लाख सम्प्रदाय समझे जाते हैं। कागो-धाममें वे गुरु वहा पहनते और विवाह नहीं करते हैं। ज्ञानकपत्नी "पत्य" नामक पुस्तक जो इन लोगोंकी धर्मपुस्तक है। जितु इन सम्प्रदायके सभी संन्यासी समस्त हिन्दुओंके सभी भोगन करते हैं।

ज्ञानकार (का० पु०) एक प्रकारकी भाषा जिसके अनुसार जमींदारकी कुछ जमीनकी मासगुजारी नहीं देने पड़ती। अबधके मयवाँके समथय इस प्रकारकी भाषा बोली जा रही है। ज्ञानकार दो प्रकारका होता है—ज्ञानकार देवी और ज्ञानकार इमाल। यदि किसी गाँवमें कुछ जमीनकी या किसी तपस्वुमें कुछ गाँवकी मासगुजारी मात है और वह भाषा उस घाम या तपस्वुके मास लगे हुए है, तो वह ज्ञानकारदेवी कहलाता है। इस प्रकारकी भाषामें गाँवके हर एक हिन्दु-दारका एक होता है। यदि भाषा किसी घाम पाटलीके नामसे होती है तो उसे ज्ञानकार इमाल कहते हैं। इमाल हिन्दुदारा का एक नहीं होता, पर मयवाँमें यह बहुत काम माना जाता है।

ज्ञानकोन (हि० पु०) एक प्रकारका मठमें रहनेवाला कपड़ा जो चीन देशमें बाहरकी जाता था। पहले पहन इसका दुनना चीनके मानकित नामक नगरमें बन्द हुआ था। वर्तमान समयमें इस प्रकारका कपड़ा यूरोप पादि देशोंमें तेजसे जाता है और इसी नामसे पुकारा जाता है।

ज्ञानवतार (का० पु०) टिकियाके धाकारकी एक गोधी लुगा मिठाई। इसकी प्रसृत प्रपाओ इन प्रकार है—जो और चीनकी मास घुने हुए बावक पाटली टिकिया कोठकी एक बहर पर रखते हैं। फिर बहरकी टिकिया पट्टाकी भरे हुए दो भाषाके बीच इस प्रकार रखते हैं, कि बाँव ऊपर और नीचे दोनों ओरसे लगे। जब टिकिया एक जाता है और उनमेंसे मोटाहट पाने लगती है, तब बहर निकाल ली जाती।

ज्ञानगाम—बम्बई प्रदेशकी रवाकापट्टाके चलनगत एक टाटा शब्द।

ज्ञानपुरा—१ मद्रास प्रदेशके चलनगत तिवेदीकी जिनेका एक तातुक। यह घा० ८° ८' से ८° ३८' व० और देशा० ७०° २४' से ७०° ५५' पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या २०२५२८ तथा भूपरिमाण ७११ वर्गमील है। इसमें दो शहर और २११ घाम लगते हैं। यहाँका राजस्व कुल १६५,००० रु० है। इसमें उत्तर-पूर्व तथा बीचमें बहुतसे तालाब हैं जिनमें पहाड़से पानी गिरता है। दक्षिणमें भी बरसत कुल देवनेमें पाने हैं।

२ उक्त तातुकका एक नदर। यह घा० ८° २८' व० और देशा० ७७° ४०' पू०, तिवेदीकी १८ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या १५८० है। यहाँ येष्टव भाषाओंका एक मन्दिर है।

ज्ञानार—१ युक्त-प्रदेशके बहारईय और गोल्डा जिलेके चलनगत एक तातुकदारो शब्द। यहाँका राजस्व ८ लाख रु० है जिसमें २ लाख रु० गवर्नमेंटकी करछकर दिए जाते हैं। ग्राहकद्वाने १५५ भाँ नामक एक जमानकी बहारईय जिलेकी गुरुकुली माना करनेके लिये लमागन मंजूर कर दिया था और कुल राजस्वका दसवाँ भाग तथा पाँच घाम भी दिए थे। १८४० ई०में राजा मुनवारपत्नी की मरने पर उनको विवदा

विष्णोः शान्तिं विष्णुं वासुदेवो जहते जतो । जहति स
 नृप महादुरात्मा ॥ १० ॥ पादौ ई-० यदाति प्रसन्नकला
 प्रसन्नो दण्डो रक्षते धनमय प्रसन्नये दण्ड शान्त प्रसन्न
 को जता । सत्संगान् शान्ता मुह्यन्ममादौक यो ॥ १८-२
 ई-० विष्णोः शान्तं पर मेते ।

२. एतद्दशमेति वरणाङ्गं त्रिकोणी एव तदधोऽयम् ।
इत्यनेन जलान्तरं यदं पोरं प्रमत्तपुरं ये तौ तत्र परगमे
गामिन्ये । यद्द पत्ता २०' ३८' मे २८' ५४' ८०' पोरं
दिशा ८८' ४' मे ८८' ४८' सु० ४८' ४८' पश्चिम्यति ।
भुवर्गमात्र १०५० वर्गमील पोरं जलमन्त्रा ३२५४८०
६ । इत्यनेन यत्त गदर पोरं १४६ पश्चिम्यति । तथा इत्यनेन
जलान्तरं पोरं जलमन्त्रा ३४५४८० पश्चिम्यति ।

३ अथ मष्टमोक्ता एक मटर। यह पत्रा० २०० ५२
 ४० पोर टि० ८१ ३००, बहाक पोर माट-पेटम
 इत्यय पत्र पत्रात्त है। यहाँको जनम० १००१ है।
 प्रताप है, कि त्रिप्राई मासक एक मेषोने हने बसाया
 था। अगम १५१० ई०में एक पत्रागमने माहजहान्ने
 इस नगरके माघ माघ नार पोर घाम पड़े थे। अन्ते
 ही वसन्तमान मानपाए राज्य बसाया। इसमें पत्रक
 कार्यालय, दो स्कूल पोर एक पत्रागम है।

मनपुरकोशी—तिरहुत जिलेके मुजफ्फरपुरका एक ग्राम ।
यह मुजफ्फरपुरसे पुरो तक जी राम्ना गया है, जहाँ प
चघणित है । यहाँसे मुजफ्फरपुर ३२ मास दूरी है ।
हिमा समथ यहाँगमोदार बहुममादका ग्रामस्थान था ।
मानसिरा (चं० पु०) एक प्रकारका छोटा टापु ।
मानसार् (का० पु०) नद जी रोडियाँ घटा कर बंधता हो ।
मानभर—एक संस्कृत शक्ति । इनके पुत्रका नाम ब्रह्मान
धोर घोषका ग्रामस्थ था । बालकपुत्रके पुत्र ब्रह्मान
विजयोर्मोहोला बनाई है ।

आमस (हि० को०) आमकी माता, अमिता नाम ।
 आममरा (हि० पु०) पति या कोका आम, अमिता
 मयूर ।

शाला (मं० ब्रह्म०) न-नाम, दायिमाः । १. बनेबाय, बनेक
प्रकारे, बहुराजवृक्षे । २. बनेक, बहुरा । ३. ब्रह्मदाय ।
४. दिलाय ।

ਸਮਾਜ-ਵਿਗਿਆਨੀਆਂ ਦੀਆਂ ਧਾਰਨਾਵਾਂ
ਸਮਾਜ ਵਿਗਿਆਨ

शाना—इससे मध्य एक पहाड़ी रास्ता । शक्तिपाथ में
कोई एक इसी राह को कर जाना पड़ता है । इस राह में
समोप 'नागाडा चपरा' नामक एक छोटा पहाड़ गजर
पाता है । यदि इसी राह माना प्रचारित प्रचलित में कर
इसी राह को कर पाते हैं ।

२ एक प्रकारका पेड़ जो विमल्लस्य पोषा नीर अमृत
होता है तथा अधिक मोनमें बिकता है।

३ १८८७ ई० में गुला पठार (माग) में विनाश हुआ था जिसमें एक लाख नाम 'नाना' है। 'नाना' पक्षी 'हनुमान' पण्डितों के द्वारा १०४० गज घोर धोलाई ५०० गज है। मोरमन्त्रादि: द्वाराई लगभग है। यह स्थान प्रत्यक्ष उत्पत्तिमान है। दिनों दिन नई नई चमत्कारों सहचरी मोमा तो बढ़ाती है। यह कि पा-सिकी का पन्थागार, धोड़ुड़का प्रासाद, विनोदारा मन्दिर घोर रोमनकी शिल्पिका मिरता देवता योग्य है। नाना (दि० पु०) १ मातामज, माताका पिता, माता माय। (जि०) २ शोभा करना। ३ कामना, किंजला। ४ प्रविष्ट करना, प्रसन्ना।

જાના (૫૦ પૃ.) પુર્ણાના ।

नानाकन्द (गं० पु०) नाना बहुव्रीहिकम् । यण् । १

पिण्डान् । २ बद्धमूत्रम् । (ति०) ३ बद्धमूत्रप्रातः ।

मानापाठ—१. दूनामें माना नामक को निश्चिन्ता देनी
जानी है, उसमें खराका एक शब्दा । घाटनमें वह
गिरिपथ दो मौनको दूरी पर पवस्थित । वहां सिव और
दुर्गाको प्रतिमूर्त्ति पथर पर खुदा हुई है । इस निश्चि-
न्ताको रश्मि गुहाएं हैं जिनमें रश्मिआभिव्यक्ति खुदा
हुई है । ये सब निर्व्याप्य दृष्टिमें जाना जाता है, कि
सुख मोह योगोंका एक प्रधान स्थान था ।

२. पृथक् मिलित एक पात्र । यहाँ प्रत्येक अणु का एक अणु है जिसमें पात्राभिप्रायों के अन्तर्गत एक मिलित पदार्थ के पदार्थों के । यह मिलित पदार्थों को ताराय पदार्थों कहते हैं, हमने पदार्थ सत्यता है, कि यह पदार्थ है। यहाँ के पदार्थ पदार्थों के पदार्थ हैं ।

नामादिनि (सं० नि०) नामाग्र-यद-निनि । यद-
 याजावादी, जो यनेह याजा स्वीकार करने है । यन-
 ० का मत है, कि याजा ग्रह नहीं है, यनेह है ।

प्रतिपक्षमें एक एक प्रयत्न, भावना है। मांज्यदमर्जने यह मत मोर्मामित हुआ है। इन्हींमें प्रमाण द्वारा यह स्थिर किया है, कि भावना किसी दानतमें एक नहीं हो सकती। मान लिया जाय कि लक्ष, श्रुत्य और करण प्रयात् भावना यदि एक हो, तो एकके जन्ममें समय सबोंका जन्म और एककी मृत्युके समय सबोंकी मृत्यु हो सकती है, लेकिन ऐसा नहीं होता। इन्हीं सब कारणोंमें यह निश्चय है, कि भावना एक नहीं है, बनेक है। यह नानाप्रवाद वेदान्तदर्शनमें खण्डित हुआ है।

साधव देखो।

नानादरवारी—एक राजविद्रोही ब्राह्मण। १८२८ ई० के पारश्वमें कोली लोग दल बांध कर मद्राष्ट्रके नाना प्रान्तोंमें लूट मार मचाया करते थे। अन्त्याय बनेक जातियोंने इस विद्रोहमें भाग दिया था। भातखरी, चिमनाजी यादव और नानादरवारी नामक तीन ब्राह्मण इस विद्रोहके नेता थे।

नानादिदंश (म० पु०) दिगय देमाय, नानादिन्देमाः। बनेक दिक्, और बनेक देग।

नानादासित—काश्यावासी एक महाराष्ट्रीय पण्डित। ये प्रकाशानन्दके मित्र थे। प्रकाशानन्दको वेदान्तसिद्धान्त-सुक्तिशाली आधार पर इन्हींमें एक दोषिका मिथी थी।

नानाभक्ति (म० पु०) काहल मोषादि शब्द।

नानान्द्र (म० पु०) नानान्द्रपण्यम्, विदादित्वात् घञ्। नानान्द्राश्च पण्य, नन्दकी भजति।

नानान्द्रायण (म० पु०) नानान्द्रयन्त्रायण नानाद्वारिता-दित्वात् कण्। नानान्द्राका युवा पण्य।

नानाप्रकार (म० वि०) बहुविध, बनेक प्रकार।

नानाफडनवीस—महाराष्ट्रके एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ। १८६३ ई०में आप पूनाके संस्था माधवरातके कारकून नियुक्त हुए थे। उस समय आपका नाम था बानाजी जगदैन भागु। १८६० ई०में आपकी फडनवीसका वद मिना था।

१८७४ ई०में १८०० ई० तक नाना फडनवीस पूनाके सम्मेलन पर नियुक्त थे। उस समय पूनामें विख्यात पाठ राजनीति-विमार्शक नाम सुननेमें आने थे, जिनमें नाना फडनवीस और हरिपन्थ फडनवीस नाम विशेष

प्रसिद्ध था। रघुनाथराव जिस समय देवरावादेने निजाम बनारस गति रोकनेको चेष्टा कर रहे थे, उस समय नाना फडनवीस और पण्थाण्य सम्मेलनोंने रघुनाथरावका पक्ष छोड़ दिया था। उस समय भारावपरायकी विधवा की गङ्गाबाई गभवती थीं। नाना फडनवीस और हरिपन्थ फडनवीस से कर पूनाके पुरन्दर चले गए। उन लोगोंका यह धर्मिण्य था, कि लक्ष रानोंके गर्भमें पुत्र उत्पन्न होने पर उसे पूनाका राजा बनवेंगे। प्रवाद है, कि गङ्गाबाईके माघ और भी कई गर्भवती श्रियां थीं। ऐसा करनेका चयन यह था, कि जहाजित् रानोंका गर्भ नष्ट हो जाय, तो उनको मलानामेंसे निर्वा-को रानोंका गर्भजात पुत्र बतलाया जा सकता है।

इस समय पूनामें ब्राह्मण समार्योंका प्राधिपत्य विमो-रूपमें था। रघुनाथराव इन ब्राह्मणोंके, पति प्रिय हो गए थे। १८७४ ई०में फडनवीस-गवर्नमेंपट्टेन कर्नल अपटोन (Colonel Upton)को बम्बई-गवर्नमेंपट्टेन और महाराष्ट्र समार्योंके बीच सन्धि स्थापनके लिए भेजा। १८७६ ई० में सन्धि हो गई। यह सन्धि पुरन्दरमें हुई थी। १८७८ ई०में पुनः पूनाके सम्मेलनोंमें परस्पर विवाद उत्पन्न हुआ। नाना फडनवीसके प्रतिष्ठाता सुरोबा फडनवीस विशेष दृष्टताका परिचय देने लगे, जिसमें नाना फडनवीसकी ईर्ष्या प्रबल हो उठी। आप इनको समता-को नष्ट करनेके लिए प्रयत्न करने लगे। परन्तु रघुनाथरावके पक्षके लोगोंने सुरोबाका पक्ष समर्थन किया। गङ्गाबाईकी मृत्युके बाद महाराजराज नाना फडनवीस पर सदेह होने लगा और वे पुनः रघुनाथरावको माधव-वर्त्ता दाननेके प्रस्तावका समर्थन करने लगे।

फडनवीस-गवर्नमेंपट्टेन नाना फडनवीसका अत्यन्त विरोध था। इसीलिए फराबोमिर्षाके माघ उनका महार हो गया था। सुरोबाको पकड़नेके लिये नाना फडनवीसने यष्टि चेष्टा की थी, किन्तु उनका यह प्रयत्न सफल न हुआ। अन्तमें सुवर्ण फडनवीसके महाराज बापू द्वारा सुरोबाको अपने दममें मिला लिया।

इस समय फराबोमिर्षा-पूत सेण्ट लूबो (St. Lubin) पूनाके दरबारमें रहते थे। फडनवीस-गवर्नमेंपट्टेन उनको पत्रलिखितमें आपत्ति की; नाना फडनवीसने उन्हें

धरामागो हो रहे हैं। उनकी तोरा तनवारोंको छोटी-
में चट्टी-सेना नितर-वितर हो रही है। यह देख कर
उत्पत्ति मन ही मन चट्टी-जो पदमंथर होर निर्वर्ण
ममभा होर चट्टी प्रभुको महायन्त्रो उन लोगोंको
भारतमें निजान भगानेका निषय कर लिया।

विदुरमें वा कर चात्रिमउत्ता नानामाहवकी चट्टी-
रेजोके विश्व कठोर मन्त्रा दे कर क्रमशः उत्तेजित
करने लगे। हाथकोसे पक्षे व्यवहारमें नानामाहव
समोहत, ज्ञात होर यहां तक कि चट्टी-जो गार्द-
वर ममभा कर जातकीध होने पर भी, उन्हीं चट्टी-जो-
के विश्व चट्टी धारण करनिका चिन्ता कभी चट्टीमें भी न
की थी। उन्हीं विग्राम वा कि चट्टी-जो के साथ मित्रता
रखनेमें कभी न कभी गायद उनको चामा कलवतो
होगो होर मन्त्र के कि कभी फिर ये पैलकहति पानि-
के उपयुक्त पात्र समझे जायेंगे। इसी चामाके चामाभिन
हो भी चट्टी-जो की मन्त्र रत्नमें प्रभापन ये।

नानामाहवमें पदो बुद्धि के मन पर काम करनेको
गति न भी समता न था। चात्रिमउत्ता होर चामा
मप्यग्य उन्हीं भी ममभा देने के, ये उद्योकी यद्यार्थ
ममभा पैसा हो निजान करनिके होर इच्छा न होने
दुष्ट भी उन्हीं उपदेशानुसार दायेंमें प्रवृत्त हो आजा
करती थी। यह चट्टी-जो विश्व धारणमें उद्योकी होने-
के लिए चात्रिमउत्ता दार्ढ्य द्वारा के नियत प्रोत्साहित
होने लगे। दानपुरके समरक्षेत्रमें यथातोय होर विश्वा-
हियोंके शोषित-व्रतों प्रवित होनेकी बुद्धिमा हुई।
तातिशयोकी नानाके व्यापकनु थे। ये भी सब इनके
मन्त्रादाता ही मने।

दानपुरके चट्टी-जो कार्यकर्ताओं ने अब मिश्रि-
की पचापत्ताका कुछ कुछ प्रभाप वाया, तो पक्षे के
चट्टी चट्टी परिवारकी रक्षाके लिए सुरक्षित स्थान दृष्टि
में। दानपुरके चामागारके दक्षिण-पूर्वमें मौज-
निशानके पास जहाँ विशाल समतलवेध पर चट्टी-जो का
चित्रिचान्यता, यहाँ चामागारके लिए उपयुक्त स्थान
निर्वाचित हुआ होर उन्हीं चट्टी-जो होर मिश्रि की दोवार
पड़ी कर दी गई। समस्त बाद चामागारकी चोर दृष्टि
गई। मजिस्ट्रेट चोर जल्दूर डिमरुडन माहव

प्रमत्तः किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गए। जोड़े चट्टी-जो
नानामाहवकी बात उन्हीं याद आई। नानामाहव
पक्ष तक चट्टी-जो के साथ प्रति विग्रामनका परिचय
देते पाए थे। विग्रामः कनकुर माहवकी यह विग्राम
वा कि ये केवलमात्र नानामाहवकी महायन्त्रो हो
गवर्मेष्टकी सम्पत्तिको रक्षा कर सकते हैं। इस लिए
उन्हीं नानामाहवकी दमन मेधमदित कानपुर
वा कर कोषागारका भार मेनेके निवे चतुरोप किया।

नानामाहव भी महायन्त्रो देनेके निवे प्रतिश्रुत हो
कर हो भी उद्योग सेना होर दो तीर्थ में कर नवायग्य
नामक स्थानमें उद्योगित हुए। १८६७ ई० में २२ मईको
चामागार-रक्षाका भार नानामाहवके हाथ सौंपा गया।

इस जगह मिश्रि-जो के चमकीले कारगजो कुछ
समानोचना करना पावश्यक है। भारतमें सेना-विभाग-
में पहले जो बन्दूके काममें आती थीं, वह युद्ध के समय
अधिक फलदायी न होती थीं। कारण बन्दूकमें बाफ्ट
होर गोली भरनेमें बहुत वक्त लगता था। इसलिये
मार्ड डायरहोके शासनकालमें नये टङ्ककी बन्दूक बन
कर भारतमें आई होर उनके व्यवहारके निर 'टोटा'-
की सृष्टि हुई।

यह 'टोटा' जब सैन्य-विभागमें भेजा गया, तब यह
दकवाह लड़ी कि कि भारतमें हिन्दू होर मुसलमानोंकी
जाति होर धर्म नष्ट करनेके निवे चट्टी-जो इस 'टोटा'
की सृष्टि की है : क्योंकि उन्हीं चट्टी-जो चरवा लगी है।
मईके चमके रस-विभागके एक चट्टी-जो चमके चारोंके
साथ मिश्रि-जो की बातचीत हुई थी, उनका कुछ
सम पहलेमें ही मिश्रि-जो के बोहलका कारण समझमें
वा आयेगा। एक मिश्रि-जो उक्त चमके चारोंके पूछा,—
"बसमर लोग यदि विग्रामवाताह नहों है, तो उन्हीं में
पदना चामास्थान प्राचीनमें क्यों पैर रक्ता है ? ये
विश्व प्रोद्योगने हम लोगोंकी जाति नष्ट करनेकी
कोशिश कर रहे हैं। चमके दानमें हम लोगोंके विश्व
के मा भारो पक्षेय्य किया जा रहा है। मैं जानते हूँ कि
हम लोग तथा 'टोटा' कभी न मेने, इसलिये हम
लोगोंकी जाति नष्ट करनेके लिए ये माध होर चट्टी-जो
हमों मिना कर बड़कीने बाटा भेज रहे हैं।" होर एक

परन्तु आज्ञामुक्ता हो उनको बुझि खोर बन गये, इस प्रकार तत्काल ही आज्ञामुक्ताका प्रयत्न खोर में टाँका विफल न हुई। नाना विधाद्वियोंका प्रहरोपसन्न होना लोभार कर लिया। जून महीनेके प्रथम तीन दिन इसी तरह प्रवृत्ति मन्त्रधाम में होत गये। हृद मेनावति पृथ्वरने सिवाद्वियोंको क्रमशः पूर्वोक्ता पथिकतर उत्त-जिग देव, पथ यात्राट, ताको ही बाहरवाले लिये प-माय पन्थ ममता और यथासाध्य उपदेश देने लगे। परन्तु उनके उपदेशमें कुछ फल न हुआ। देखते देखते उन लोगोंका हृदयनिहित भूसागि प्रथम सिवाकारोंमें ललक उठा।

तारीख ४ जूनको रात्रिको २०० घण्टारोही-इन घण्टे पछन घण्टेजोके विरुद्ध नमो तनवार ले कर पड़ा हुआ। हृद सुषेदार भवानी सिंह उन लोगोंकी रात करकेके लिए पुनः उपदेश देने लगे, परन्तु कुछ फल न हुआ। अन्तिम सिवाद्वियोंने उन पर भी गार किया, जिसमें वे जमोन पर गिर पड़े। सिवाद्वियोंका दल पक्षगण खोर प्रचुर धन ले कर ग-में चले दिया। १ नं० पदाति-दल भी उनके पीछे पीछे चला। दोनों दलोंने एकदम ही घर दिखी चलनेका निश्चय किया। मार्गमें नवावगण पड़ा, पहा, नानासाहब-के लोगोंने नाना लोगोंका यथोचित पादर खोर उनके क-पोंका पतुमोदन किया। परन्तु २२ नं० मेश्वरनके कुछ सिवाही यहा धनागारको खाँके लिये नियुक्त थे। वे व्यापारियोंके वसतुकायमें मन्त्रावता न पहुँचा कर अपने मानिकके सिवाविश्वनाथ, मानिकका पथ पुत्रानेके लिए गोध ही बहुराज कर। दोनों पक्षमें खोर समरानल मन्त्रजित हो उठा। यूरोपीयगण यथावि दूरमें दोनों पक्षका घन्टोंको आवाजें सुन रहे थे, किन्तु तो भी समझा साहस नहीं हुआ कि अपने पक्षकी मन्त्रावताके लिए कुछ मैत्रिक भेजे। अतः थोड़े ही देरमें प्रभुमन्त्र सिवाहीगण तितर-बितर हो गए। फिर गया था। धनागार सुट गया, बन्दीगण छूट गये, राजकीय कामशात और पक्षगण ग-पोंके हथामत हो गया।

इसके बाद सिवाहीमोद बावियों खोर प्रेक्षाद्वियों पर रुपये खोर आगमक हन्नादि लाद कर मुगल-राज-

धानो टिकोको तरफ भयमर हुए। परन्तु २२ खोर २५ नं०को मेनाने पथ तक उन लोगोंका साथ न दिया, इस लिए किमहान उन लोगोंने बागी बहना मन्द कर दिया खोर उक्त दलोंके पास दून भेजा।

इस २२ घण्टारोही खोर २२ पदाति-दल एकदम मित्रित होने पर भी २२ खोर २५ नं०की मेना घण्टेजो-के विरुद्ध सदा मन्त्र धारण करनेके लिए तैयार था इच्छा नहीं थी। उन लोगोंने गारो रात अपने मेना-पतिके साथ कवायद करकेके मैदानमें रह कर ययारोति मेनावतिकी आवाजें पायीं। अन्तमें पथिनायकोंने अपने अपने दलको खाने-पनानेके लिये कुतो दो, प्राचोर्षेटिम स्थानमें पायय से कर उक्त दोनों सिवाद्वियोंके दल सुह-मन्त्रा उतार कर खाना बनाने लगे। इसी समय हृद मेनावति पृथ्वरने पक्षगणताके कारण, भोजन बनाते हुए सिवाद्वियों पर गोत्रे बरमानेके लिए प्रभुमन्त्र दे दो। उक्तोंने गोत्रा कि पथ सिवाही विग्रामयोग्य नहीं रहे। उनको इस पद्धतमेंताकेलिए पक्षरजोकी पीछे पड़ताया पड़ा था। कम-से कम यदि ये दो दल भी पक्षरजोके प्रभुलून होते, तो ग्रायद कामपुरके सिवाही-विद्रोहका रूप ही बदल जाता।

कुछ भी हो, मेनावतिके पाटेगानुसार सिवाद्वियोंकी रत्नमालामें गोले पर गोले था कर गिरने लगे। सिवाही कुछ देर तो किंकरां व्यभिमुद्र रहे, अन्तमें अथ तोपोंका शब्द क्रमशः बढ़ने की मग और उनके मामने अग्निमय गोले था था कर गिरने लगे, तब भी पक्षगण सिवाही लोग जाना-पौना कोट कर भाग गये। इनमेंगे बहुतमें मन्त्रावगण पक्ष कर विद्रोही सिवाद्वियोंमें ला गिने और बहुतमें बर्ही हिय रहे खोर लोगोंको सर्पा मन्द होने पर उन लोगोंने हृद मेनावतिके पास जा कर अपनी विग्रमन्त्राका परिचय दिया, जिसमें मय पक्षरज दंगे रहे।

विद्रोही सिवाद्वियोंका दल इस प्रकारमें सुट होने पर वह टिकोमें मुगल-मन्त्राटके पक्षोम लानेके लिये तैयार हुआ। नानासाहबको सुपुर्द किया हुआ पूर्वोक्त पक्षरज-धनागारका पयॉदि सब दिक्की तरफ भेज दिया गया। पयिगण पक्षरजोके बहादि भूम खोर

करना बहुत पाना है। इसलिये उन्हें पात्रिम-
उन्नाकी मन्त्राकी पात्रिमकी मन्त्राके समान समझ,
मिपाहियों का नायकत्व प्रत्यक्ष किया।

माधारायतः इतिहास-लेखकों की पुस्तकों में वषरुत्त
मत ही देखने में आता है। परन्तु नानामाहबके मन्त्रा-
नातिया टोपीने उनके इस अधिनायकत्व-प्रत्यक्षके विषयमें
अत्यन्त विवरण प्रदान किया है। उनके मतसे, मिपाहो भोगी
ने प्राजिमन्त्राके उपयोगसे नानामाहबको पात्रिम कर,
अपने परिमन्त्राके माध्यम से प्रवृत्त किया था। उनका
कहना है कि त्रैय दम्भके पदातिथी और २५ दम्भके पत्रा-
रोहियों ने धनागारमें आ कर उन्हें और नानामाहबको
आहूत किया था। उनके साथ जितने भी मिपाहो थे, वे
मन्त्रा विद्वानों के मिपाहियों के साथ मिल गये थे। चलनर के
उनको, नानामाहबको तथा उनके मिपाहियों को ले
कर दिल्ली की तरफ चल दिये। कानपुरमें तीन कोस
आने पर जाने पर, नानामाहबके कानपुरमें
उन दिन मन्त्रा तहाँ ठहर गये और दूसरे दिन फिर
दिल्ली को और चल दिये। दूसरे दिन नानामाहबने
दिल्ली जाना कोकार न किया। अन्तमें मिपाहियों ने
उनको अपने साथ कानपुर चल कर युद्ध करने को कहा,
इस पर भी नानामाहब राजी न हुए। तब मिपाहियों ने
नानामाहब और उनको (नातियाको) कैद कर निरा
और कानपुर भेज कर युद्ध किया। पात्रिमकी नाना
माहबकी निताय पत्रिच्छा होने पर भी घटनाक्रमने
तात्त्विक हो कर पन्नाके विरुद्ध युद्ध करने के लिए
उन्हें बाध्य होना पड़ा था।

कुछ भी हो, नानामाहब एक नायकत्व-प्रत्यक्षकी
बाद प्राजिमन्त्राकी मन्त्रावामे आते नानामाहब और
माधारायकी बुद्धा कर मिपाहियों की मन्त्रावामे प्रवृत्त
हुए। मिपाहियों ने उन्हें अपना राजा बना कर घोषणा
कर दी। राजाके नामसे भिन्न भिन्न दम्भके अधिनायक
निर्वाचित हुए और वे अपने दम्भके परिपालनमें व्याप्त
होने लगे। सर्वेदार टीकाविह पन्नाहियों के
सेनापति हुए। जमादार दोनभुनमिह ११ नं० दम्भके
सेनापति चुने गये और सर्वेदार गन्नादीन ३६ नं० दम्भके
अधिनायक हुए। समस्तमान भोग भी इन विद्वानों

मिपाहियों के प्रधान पद थे, किन्तु मन्त्रावामे मन्त्राहोय
माधाराय नाना माहबको प्रतिष्ठित किए किन्तुने अधिनाय-
कत्व प्रत्यक्ष नहीं किया।

ता० ६ जुनके मन्त्रे नाना माहबके दस्तावर-युद्ध
एक पत्र दस्तावरके प्राप्त पत्र था। नानामाहब भोग की
प्राचीनके दित स्थान पर प्राक्कमल करेगी, यह बात लत-
नानेके लिये ही यह पत्र भेजा गया था। पन्नाके भोग
इस खबरको पा कर डगाय हो गये और पन्ना माहबके
साथ सेनापति दस्तावरके प्रादेशानुसार अन्धधारायलम
अन्ति माय ही अपने अपने निर्दिष्ट स्थानमें पहुँच गए
और प्रति युद्धमें मिपाहियों के प्राक्कमलको प्रतीक्षा करने
लगे। सिपाई, बालक और युद्धमन्त्राः ८०० पन्नाके
इस प्राचीनके भीतर समर्थत हुए थे। दोहरने
मिपाहियों को तोपी को आयाज सुनाई दो।
उन लोगों ने मार्गमें बहुतसे पन्नाके मन्त्रा और पन्ना-
में आ कर प्राचीन के लिए। पन्नाके और मिपाहियों में
परस्पर गोले चलने लगे। इस युद्धमें पन्नाके मन्त्रा के मो
दुर्भाग हुए थे, इनका विवरण मिपाहो-विद्वान-इति-
हासके पाठकमात्र जानते हैं। मानक-बालिकाओं के भय-
विह्वल घोषारमें, रोगियों के पार्श्वमाहमें, अन्धियों के पवि-
रम-रोधनप्रतिमें और इत्यादि ऐतिहासिक युद्धों द्वारा
अन्ध अन्धप्रतिमें भोग ही प्राचीनके दित स्थान
अन्धना यमानय का विमान प्रमानसेवके दम्भके परिपल
होगा। २५ जून तक यहाँ शासन रहा। २५ जून को
पन्नाके भोग इत्यादि युद्धमें अपने अपने दुर्भाग्य को बिना
कर रहे थे, कि इनमें प्राचीनके प्राप्त एक कर्मी अन्धप्रति
हुए। यह नानामाहबके मिपाहों के एक पत्र साँझ थी।
पत्रमें लिखा था,—“मन्त्रावामे मिपाहियों की मन्त्रावामे
समोप, माहो शासनको के माध्यमि माय जिनका किन्तु
भी पत्रमें किसी भी तरहका मन्त्रा नहीं है और जो
अन्ध होइने की इच्छा रखते हैं, वे निरापद इत्यादि
जा सकते हैं।”

यह पत्र प्राजिमन्त्राके माध्यम से बिना हुआ था,
परन्तु उन पर दस्तावर किन्तुने भी न था। यह सेना-
पति उस समय नानामाहब और उनके मन्त्राके प्राजिम
उन्नाका मिपाह न करने थे। इस लिये मन्त्रावामे

हो, तो "विवाही सिमेट" गन्त देखो। चत्तमें दिग्विजय-
सिंहके चमकते घे वधान हनेचकके दमभूत हुए।

इसमें कुछ पटने नानासाहबको मातृसाहबके उपनयनमें
मिटुर जाना पड़ा था। यहाँ जा कर रानी सुनारिणी
पाप पैगवाके पट पर बैठे। सभी नवाब नामक एक
सुमलमान धामपुरके गानमन्त्राणि नियुक्त हुए। नाभा-
साहबने राजतिलक धारण पूर्वक बहुत धामोद-पादादः
कुछ समय बिता दिया। उसके बाद चंगरेजीको धाममन
बागों चारों तरफ फेलेने लगे। इस समय नानासाहब
धानपुरके एक सुमलमानकी एक बड़ी भारी सरायमें
एकलुल शान्तिधोके साथ काम करते थे। इस सरायमें
धाम की गद्दाके दिगारे बीबीगद्द नामका एक मकान
था। वहाँ कृतावमिट कन्धियोंको पावह रहता गया
था। फलेशुमें जो चंगरेज पायव-नाभकी धामाने
धामपुरके चंगरेज-पावाममें सा रहे थे, वे भी इस भोजी
गर्भमें पन्ट कर दिये गये थे। इस तरह मन्थीन कोयो-
गद्दमें करीब दो गोमे भी अधिक कान्ति चमकह होनेके
कारण उसने चमकवका हथ धार कर लिया और वह
सामो मिवाहियोंकी लुगमताका परिषय देने लगा।
नानासाहबकी आन्तरिक इच्छान होने पर भी मन्थियोंके
चमकतु ही जानिके भयसे चम्के चंगरेजीकी इस दगामे
रगर्भके लिए पायव होना पड़ा था।

धानपुरके पनन-मपादको चुन कर चंगरेज घष
निधिल ग रह सके; रेशद, एहसेवे ही धानपुरकी रवाभा
ही चुके थे, मेतावति एवेमक भी मधे-मामन ने कर
रेशदकी महावताय चम दिये। १४ जुलाईकी रातका
इस दोनो दमोंमें परस्पर भेंट हो गई। दूसरे दिन ये
भीम कतेपुरमें ४ मीलको दूरी पर बेमिन्दा नामक स्थानके
एकलुल हुए और मेताकी भोजन बनाने रानेका दम
दिया। इसमेंमें एक मोभा था कर वहाँ गया। इसविष
मोम ही वो सुके लिए लेवार होने लगे।

चंगरेजीके बानेकी एवर चुन नानासाहबने मन्थिग-
के साथ परामर्श करके निषय कर दिया कि मेतावति
टोकासिंह रानाकी राजाधने और बाजारद बाहद गया
माहियोंका राज म करेगे। नानासाहब ८ जुलाईकी
१५०० घाटे और मोमन्दा, ५०० ब्रह्मवार और

१५०० एगिवावन्द फोज ने कर दनाहावाद ही और
चमकर होने लगे। टीहामिन्दने मन्थारिहामनका मार
चमक दिया था। इस मोमेने कतेपुर पदच कर चट-
रेको मेता पर मोने छोड़े थे, चम्केमें एक मोना लगे
पाकमन्थने था कर गया था।

मेतावति एवेमरके पधान १४०० मेटिम मेता और
६०० देमो फोज थी। चटरेजीका चट्टके बहुत चट्टो
गों, जिसमें वो ६०० मगका दूरी तक विरल दमने पच-
भेट काने रहि; किन्तु मिवाहियोंकी चट्टके यैमो न
थी, इस निर ये पराजित हो कर इतदान भाग गए।
इस तरह कतेपुरके युद्धमें पराना होनेके बाद मिवाहिया-
मने बहुतने मयुता छोड़ दो, यद्धमें म्यानामरकी भ म
गए और बाको लीय नानासाहबकी मेतामें जा कर
मिन गये। चमिचित मिवाहियाने जानिनामके मयमे
चम्केजित ही कर चट्टरेजीको मार कर जैमा चोहल्य
प्रकट किया था, कतेपुरके युद्धमें जयो होनेके बाद मिचित
और सुमय्य एटिम-मेतावति भी उवने अधिकतर लये
इला दियानेमें कवर न रको। उन लोमोंमें कतेपुर
और लमने मिहटमर्सी म्याम मन्थार चम कर पाय-
जमम्य कर दिये। कतेपुर कम्पगत होने पर चम्केक
कानपुरकी और चमकर होने लगे।

कतेपुरकी पराजयकी खबर सुन कर नानासाहबने
बहुत मेल्यमामलोके साथ चमने भाई धानारावको चट-
रेजीके बहद भेजा। कानपुरने २० मीलकी दूरी पर
पाचोंग नामक स्थानमें उकीने पड़ाव डाना। १४
जुलाईकी मेतावति एवेमरने उकी सामना हुआ। इस
युद्धमें मिवाहियोंने चमका पराक्रम दिखाया था, परन्तु
चट्टरेजीकी वरिष्ठा वरिष्ठा तोपा और मन्थकी
मामने उकी पराक्रम दमर गया। चट्टरेजीकी जात
तो हुई, पर लमने बाद पाटुमदोका पुनवार करने
ममय चट्टरेजीके साथ मिवाहियोंका एक भीषण मय
हुवा। इसमें भी चट्टरेजीकी जात हुई। लमके बाद
मन्थि कानपुरके युद्धमें जयो होने की चट्टरेजीके हटय-
में बाजयने इटिम-नामको मिवाहियोंके मनेको धामा-
का मन्थार हुआ।

इस युद्धमें नानासाहब लये रचभूमिमें उपस्थित थे।

घरने घर छोड़कर गले जा कर विद्रोहियों को वहां से दूर कर दिया। इस समय छोड़ने वाले दो पत्र मिले, जिनमें एक बान्नारायका था। बान्नारायने अपने क्रांतिके अनुयायी प्रकट करते हुए लिखा था कि कानपुरके हत्या-बागडोरके विषयमें वे मिलकुल निर्दोष हैं। दूसरा पत्र गान्नारायका दिया हुआ था, उन्होंने कम्पनीकी शासन प्रणाली पर दोषारोप करने हुए प्रश्न किया था कि—“अंग्रेजों को भारतमें आने और हमें विद्रोहों काहमका क्या अधिकार था?”

इसके उपरान्त, तातिश्याटोशेने मजाराहियों को जाना साहबके पक्षमें पुनः प्रत्यक्षारथ करनेके लिए विशेष चेष्टा की थी और जगदलनहमें सेना इकट्ठी कर गान्ना-साहबके अनुकूल युद्ध करनेकी कोशिश भी की थी; किन्तु वे हातशायी न हो सके। धीरे धीरे निपाहियों को घाया पर घातो क्रिय गया। चारों तरफ अंग्रेजों की घनाका ठहरे लगी। अंग्रेजोंके सौभाग्य गगनमें निर्मलतर भाव धारण किया। चारों ओर शान्ति स्थापित होनेकी सम्भावना हो उठी। १८५८ ई० की १८ वीं अग्रेस्तको तातिश्याटोशेकी कांसी होनेके बाद गान्नासाहबकी भाग्यशस्त्री हमेशाके जिते अन्तर्हित हो गई।

इसके बाद, गान्नासाहबका कोई विश्रामयोग्य संवाद नहीं मिला। बहुत जगह वहाँ से गान्नासाहब एकट्ठे गये और बहुतसे सारे भी गये, परन्तु पक्षमें विशेष अनुसन्धान करने पर समझ हुआ है कि उनमेंसे कोई भी गान्नासाहब नहीं है।

मानि—टाचिपारावकी एक गाछा नदी जो भीमा नदीमें गिरती है।

मानिक—बुद्धलालकी अन्धेराजातिकी एक गाछा।

मानिदा—एक प्रेमीका गान्ना। उत्तर-पश्चिम प्रदेश पर बिहारमें ये लोग वास करते हैं।

मानिशन (हि० पु०) मानोका घर, गाना मानोके रहनेका स्थान।

मानो (हि० प्री०) मातामाँ, माताको माता, माँकी मा। इस शब्दके पार्श्व 'दया' प्रत्यय लगा कर सम्बन्ध-एकत्र विवेचन भी प्रसारित है, जैसे मनिया नाम।

मानुकर (हि० पु०) पत्नीकाट, इनकार, नाहीं।

मानोर—गाथावाद जिनका एक परगना।

मानोली—पुनः जिनके अन्तर्गत एक ग्राम। यह तीन-गांवों ३ मोन उत्तरमें अवस्थित है। यहाँ १ मोन उत्तरमें पहाड़के जंगल बहुतसे गुहाएँ देखनेमें आती हैं।

मानोरहाट—विजुराकी गोमती नदीके किनारे एक नगर।

मान्—राजपूतानेके कोटा राज्यान्तर्गत सादपुर जिनका एक ग्राम। यह पचा० २५' १२" उ० और देगा० ७५' ४८" पू० के मध्य, कोटा नगरमें ३ कोस दूर उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। १८वीं शताब्दीके चारार्धमें यह ग्राम कोटाके भाना कोनदारकी जागीर खदर दिया गया था। प्रबन्धकर्ता जालिमसिंहके समयमें यह अवधि-को चरम मोमा तक पहुँच गया था, किन्तु आजकल इसकी अवगति हो देखी जाती है।

मान्नीयक (सं० स्त्री०) न पत्न्या-विना भयः पत्न्या-क अथवा टिप्पणी, ततः स्वाधे कम्। १ अवगमभावो, शीनहार।

मान् (सं० स्त्री०) गम-इन्द्र उचिता। स्त्री।

मान्दगाव—१ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत मानिक जिनका एक महकूमा।

२ उक्त महकूमैका एक प्रधान नगर। यह मानिक नगरमें ६० मोस उत्तरमें अवस्थित है।

३ मध्य प्रदेशके रायपुर जिल्लाअन्तर्गत एक करद राज्य। यह राज्य ५ परगनामें विभक्त है जिनमेंसे दक्षिण भागका नाम मान्दगाव है। रायपुर-ऊँचीगढ़-रेलवे इस राज्य से होकर गया है। इस विषये यह पक्षो ललत दगाकी प्राप्ति है।

मान्द—१ पमरावतीका एक उद्यान। २ मन्द-कानन।

मान्द—बम्बई प्रदेशके महीकाण्डाके अन्तर्गत एक छोटा राज्य।

मान्दिक (सं० पु०) तोरचहार पर महकूमा विद्वत्पद अर्जित स्थानविशेष।

मान्दिकर (सं० पु०) मान्दों करोतीति कृ० प्रत्यय। नाटकेमें मान्दीयाटक धुवधार।

कथक मानते हैं। कोई कोई उन्हें 'नूरि' यथोक्त कथते हैं। चापुनिश नर को का कहना है, कि मरदान सुनि के पीरम पीर एक नर को कथाने मर्म से उनकी उत्पत्ति है।

नापितशास्त्र (स० स्त्री०) नापितव्य शास्त्र। पीरपट्ट, यह स्थान जहाँ इजामत की जाती हो।

नाफरमाँ (फा० पु०) मुमिनामाका एक भेद जो कुछ भी लापन मिले होता है।

नाफा (फा० पु०) श्रमदंडीय, कलूरोकी येवी जो श्रमों की भाँति होती है।

नाबटान (फा० पु०) यह नामी जिस को घर का गलीज से सा धानी आदि बाहर निकल जाता है।

नाबालिग (फा० वि०) अप्रामादयक, जो पूरा जवान न हुआ हो। कानून में कुछ बातों में मिले २१ वर्ष पीर कुछ के लिए १८ वर्ष से कम अवस्थाका मनुष्य नाबालिग समझा जाता है।

नाबालिगी (फा० स्त्री०) नाबालिग रहनेको अवस्था।

नाबूद (फा० वि०) निष्का अस्तित्व न रहा हो, नष्ट, ध्वस्त।

नाम (स० स्त्री०) नाम-विशेष। आकाशकी आधिका, चन्द्रमाकी दीप्ति।

नाम (स० पु०) सूर्यवंशीय श्रवभेद, सूर्यवंश के एक राजाका नाम।

नाम (हि० स्त्री०) १ नामि, टोटी, धुनी। २ शिखरा एक नाम। ३ चहतीका एक भँवर।

नामक (स० स्त्री०) नाम-वस्तु। वस्तुनिष्ठत्व, वस्तुको, वस्तु।

नामम (स० पु०) १ इहज्जातकोल मन्त्र पीर तत्तद् स्थान भेदस्थान चहभेद द्वारा योगभेद। नाम आदि स्थानों में चहबिम्बके रहनेमें यह योग होता है। इहज्जातकमें इसका विषय विस्तारकमें लिखा है। २ उत्पत्तिविज्ञेय, एक प्रकारका कट्टर। प्रकृतिका अन्वयावृत्ति की उत्पत्ति है। मनुष्यों के पहिनाचरण द्वारा शायमवर्ण के आरप लगाने होता है। देवताओं में मनुष्यों के अश्ववहारे विनाश हो कर मर प्रसारके उत्पत्ती को छति की है। उत्पत्ति तोग प्रसारका है—दिवा, आन्तरीय (नामम)

पीर मोम। यह, नक्षत्र आदिना उत्पत्ति दिव्य पीर मन्त्र-पुर तथा इन्द्रधनु आदि आन्तरीय उत्पत्ति है। किमी किमीका मत है, कि आन्तरीय उत्पत्ति आन्ति द्वारा टव जाता है। किन्तु दिव्य-उत्पत्ति कभी मान नहीं होता।

(इहज्ज० ४६ म०)

नामा—१ पञ्चाय-गवर्नमेण्टके अधीन प्रतद्वनदीतीराय एक देवीय राज्य। यह मला० १०° ८' से १०° ४२' उ० पीर टेगा० ०४१' ५०' से ०१° २४' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ८६६ वर्गमील है। वर्षामान राजवंश मित्रुदेवीय जाटवंश-मन्त्र पुनके प्रथमपुत्र तिलकने उत्पन्न है। तिलकने नामा राज्यमें एक धाम बनाया। भिन्दके राजा भी एक ही वंशके हैं पीर पट्टियाणाके राजा पुनके द्वितीय पुत्र रामने उत्पन्न हुए हैं। प्रायुक्त तोग वंश हो इनो कारण 'पुनकियन' वंश नामसे प्रसिद्ध हैं। पञ्चायके गोरवर्ण्य रथजितुमिह जब यमुना-के उत्तरागमि चयनो गोटी जमानेके क्रममें थे, तब नामा-के राजाने चहरेजोंसे सहायता मांगी थी। तदनुसार १८०८ ई० के मई मासमें एक राज्य छटिया शासनाधीन हुआ। छटिया गवर्नमेण्टके एकान्त धनुराज राजा यमी-धन्मिहको मृत्यु के बाद उनके पुत्र राजा द्वेन्द्रमिह राजमिहाराज पर प्रतिष्ठित हुए। किन्तु विप्लव-युद्धसे समस्त चहरेजोंके विद्रोह हो गए थे, इस कारण छटिया सरकारने उन्हें वार्षिक ५०००० को छति दे कर पट्टात कर दिया पीर उनके लड़के भरपुरसिहको मिहाराज पर बिठाया। ये चहरेजोंके अत्यन्त विग्रहस्त थे पीर सिपाहो-विद्रोहके समय उन्होंने व्याघ्र पीर सेन द्वारा उनकी रासो सहायता पहुँचाई थी। इस कारण धनुराज-गवर्नमेण्टने मन्त्रुट्ट हो कर उन्हें कजहार राज्य प्रदान किया था जिसकी वार्षिक धाय १०६०००, ६०० की थी। पीछे उन्होंने काजपुर जिलेके अन्तर्गत कनोट पीर बहुवाला परगनेके कुछ भूभाग ८५०५००, ६० नक्षर दे कर गवर्नमेण्टसे सहाय किए। १८६१ ई० में उनके मृत्यु हुई। बादमें उनके भाई मगधमिह राजा हुए। उनके कोई सन्तान न थी, इस कारण १८७१ ई० में जब उनका देहावत हुआ, तब १८६० ई० ५ मईकी मृत्युके मर्मानुसार भिन्दके कागोदर होसामिह

जीविका निर्वाह करने लगे। कुछ समय बाद इन्हें भगवद् नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसे माताने 'तुम धृतिप्रोपास हो' ऐसा कहा।

नामाग वैश्यकुमारों का पालनपोषण कर वैश्यत्व ही प्राप्त हुए थे। शत्रुघ्नग्रीव प्रसन्ति के शापसे राजा जन वैश्यत्वको प्राप्त हुए थे, योहि प्रसन्ति प्रसन्न हो कर इनसे कहा था, 'यदि कोई चतुर तुम्हारे कन्याका वनपूर्वक पालनपोषण कर ले, तो तुम फिर चतुर हो सकते हो।' नामागने इस वृत्तान्तसे प्रसन्न हो कर पुनः चतुरत्वको प्राप्त किया था। इनके पुत्र भगवद् नामाधिकांश ठहराये गये थे।

(मार्कण्डेयपु० ११३-११५ प०)

नामागारिण (मं० पु०) वैश्वन्तरसुनि के एक पुत्रका नाम। नामादास (नामाजी)—भक्तमानके रचयिता प्रसिद्ध वैष्णव-कवि। कृष्णदास परवारी वल्लभाचार्य के शिष्य थे। नामादास श्रीके प्रसिद्ध पौर पगरदासके शिष्य थे।

इनका दूसरा नाम था नारायण दास। दाक्षिणात्यमें लगभग १५०० ई०को एक झोमे घर इनका जन्म हुआ था। प्रवाद है, कि ये चात्रम धर्म थे। जिस समय इनको छत्र वाच वर्षको था, उस समय भारी पकान पड़ा था और इनके मातापिता इन्के एक लहलहे छोड़ पाये थे। देवात् उसी समय पगरदास पौर कीन नामक दो वैष्णव इस निराश्रय बालकको ऐसी प्रवस्था दिए निश्चित हो गए। कीनके चपने कामण्डलुमें जल ले कर इनको पाखों पर लिङ्गकर्मसे ही इनके दोनों निमो-जित जैत्र प्रफुल्लित हुए। बाद वे चपनी कुटी पर इन्के नि गये। यद्यप्यस्य इन्के नि पगरदाससे दीक्षा ग्रहण की। अधिक उम्र होने पर, भगवदासके यज्ञसे ही इन्के १०८ वर्ष्य श्रीकोमें 'भक्तमान' नामक साधु-शेखरी प्रकाश की। यह अधूर्व ग्रन्थ कठिन प्रभावासे लिखा हुआ है। इनके शिष्य नारायणदासने (शाङ्खजान्-के १११७कालमें) इसे पुनः सरल कर प्रकाश किया था। किन्तु लक्ष्मणदास इन कठिन पुस्तकको भलीभाँति समझ नहीं सकते थे। शिष्यदासने 'कवित्त' इन्के, कविनायक-निवासो स्थाना की नामक एक शायरसे (१०११ ई०में) 'भक्त-उर्वशी' नामक टीका पौर बाद

१८५४ ई०में तुमसोयम पगरदानाने 'भक्तमानमटीका' नामक ग्रन्थ भक्तमानका उद्गम चतुर्वाद कर प्रकाशित किया। गोडोय वैष्णवोंके निकट भक्तमानका विशेष पाठ्य हुआ। इन पुस्तकके मङ्गलमें उन्के 'इदोद मेहनत करनी पड़ी थी।

नामानेदिण (मं० पु०) वैश्वन्तर सुनि के पुत्र पौर पगरदास-द्वारा एक कवि। (ऐतरेय ब्राह्मण ५।४)

नाभारत (हि० श्री०) वह भीरो जो घोड़ेको नाभिसे नीचे हो। इस प्रकारका घोड़ा ऐसी समझा जाता है।

नाभि (मं० पु०) नक्षत्रे वध्नाति विपचादोमिति नक्षत्रं नक्ष-इय भयान्तादिः (नक्षत्रः वग. ४।१२५) १ सुन्द-नृप, प्रधान राजा। २ वल्लभ, पहिएका मध्यभाग, नाह। ३ चतुर। ४ प्रियप्रतापशाली पौर। ५ गौर। ६ व्यक्ति या वस्तु। ७ महादेव। (पु० श्री०) ८ पाण्डव, छोटी, छोटी। पण्य—नमी, सुन्दरूपो, उदारवर्त्त, सुन्दर, सुशी, सुन्दरविका, सुन्द।

विष्णुके नाभिदेशमें कामजय ब्रह्मा उत्पन्न हुए थे। गर्भस्थ बालकके सानने नामसे नामि निकलती है। नामिमें मणिपुर नामक जटतन पन्न है।

तन्में निवास है, कि नामिदेशमें मणिपुर नामक पन्न है। यह पन्न महाप्रभायुक्त है, मेष पौर विष्णुके समान प्रभायुक्त तथा बहुत तेजोमय है। उस पन्नमें दश पन्न के जिनमें दश के तत्कट्टय पन्न है। महादेव विम-दशके निवे उस पन्नमें परिहित है।

८ धर्मोपदेश पुत्र। भागवतमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—

धर्मोपदेश पौरस पौर पूर्वचित्तके गर्भमें जो पुत्र उत्पन्न हुए। इनमेंसे नामि बड़ा था। धर्मोपदेश की मरुके बाद नामिने मेरुतनया मेरु देवीका पालनपोषण किया। वेहि ये पुत्र ही कामनासे निरुदेवीके साथ पहादपिता की भगवान्के उद्देश्यसे यज्ञ करने लगे। भगवान् इन यज्ञसे नितान्त प्रसन्न हो अनुभूत मूर्तिमें परिवर्त्तित हुए। बालिकग्रन्थ भगवान्को अनुभूत मूर्तिमें प्रयतोर्ष होनेसे नामा प्रकाशने स्वयं करने लगे। बाद नामिने, 'पावके मह्य करने एक पुत्र मिले' यही वर इनमें मिला।

भगवान्ने बालिकोंसे कहा, 'तुमने जो वर माँगा

वक्ष्य, मित्रो'की कटिने मोक्षता भाग । २ नामोगाधोयं,
नाभिको गहराई, नाभिका गहरा । ३ छण्ड, कट । ४
गर्भाण्ड, तु'दोका उभरा च'श ।

नाभ्य (सं० वि०) नामे रिटमिति नाभि-यत् । १ नाभि-
मध्यस्थी । (पु०) २ महादेव, मित्र ।

नामंजूर (का० वि०) पद्योक्त, जो मंजूर न हो, जो
माना न गया हो ।

नाम (सं० पद्य०) नामयतीति नामतेऽनेन वा नम-
विध, वादुसकात् ङ । १ प्रकारः । २ सम्भावना
१ शोध । ४ उद्योग । ५ कुलन । ६ विस्मय ।
७ स्मरण । ८ विरूप । ९ विभक्तिद्वय शब्दको
नाम, लिङ्ग, वा प्रातिपदिक कहते हैं । यह नाम पांच
प्रकारका है—उपाधना, लक्षणा, तद्धितात्म, समासज
और शब्दात्मकरण । १० छण्ड, देवदत्त प्रयुक्ति शब्द ।
जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तिमें प्रयत्न किया जाता है,
वह उस व्यक्तिविषयका नाम है । शास्त्रमें लिखा है,
कि अपना नाम, गुरुका नाम, लक्षणाका नाम, क्ये-
उत्तर और कलत्रका नाम सरते समय भी न लेना चाहिए ।
११ श्लोक ।

नाम (हि० पु०) १ यह शब्द जिसमें किसी वस्तु, व्यक्ति
या समूहका बोध हो, किसी वस्तु या व्यक्तिका निर्देश
करनेवाला शब्द । २ प्रसिद्धि, अच्छा नाम, सुनाम ।

नाम—दक्षिणप्रदेशमें हिन्दू लोग कपासमें जो तिलक वा
चिह्न लगाते हैं, उसे 'नामन' वा 'नाम' कहते हैं ।
क'पटज्जाति भी जो कपासमें तिलोना चिह्न धारण
करती है, वह भी 'नाम' कहलाता है । कोई कोई
माधु कई एक पढ़ी रेखाएँ कपासमें खींचते हैं और
उनके बीच बीचमें हिन्दु वा गोलाकार चिह्न रख देते
हैं । कुछ ऐसे माधु हैं जो चक्राकार, त्रिभुजाकार,
टानके जैसा हस्तपुष्पो, जटुपिण्ड आदि तदा दूसरे
प्रकारका चिह्न धारण करते हैं । इसका स्वयं च'श
भीषेकी और सुना रहता है जिसे तिहनाम वा दक्षिण
नाम कहते हैं । यह तिलकचिह्न विज्ञानका प्रतिफल
स्वरूप है जो तीन रेखाओंमें बना होता है । हमने
मध्यको रेखा मोहित और दोनों बायीं की रेखा स्वत-
न्त्र विमिश्र होती है । यह चिह्न सदादेह लिये जिस

महोक्त । व्यवहार होता है उसका नाम भी 'नाम' है ।
विशेष विवरण पिनकमें देखो ।

नामक (सं० वि०) नाममे प्रसिद्ध, नाम धारण करनेवाला ।
नामकरण (सं० श्लो०) नामा'करण' यत् । संस्कार-
विषय, दण्ड प्रकारके संस्कारोंमें एक ।

इसका विषय स्मृतिमें हम प्रकार लिखा है,—

जातबालकका स्नानपूर्व वा स्नानपूर्व दिनोंमें नामकरण
करना चाहिए । स्नानपूर्व दिनोंमें नामकरणको ही
उत्तम बतलाया है । स्नानपूर्व दिनोंमें यदि नामकरण
न कर सके, तो स्नानपूर्व दिनोंमें कर सकते हैं ।

गर्भाधानमें अष्टांगोद्विज्या तक जितने संस्कार हैं,
उनमेंसे नामकरण प्रथम संस्कार है । जातकर्मके
बाद यह नामकरण करना होता है । समर्थ व्यक्ति
स्नानपूर्व दिनका परिचय कर स्नानपूर्व दिनोंमें नामकरण
नहीं कर सकते । गोमिल-शृङ्गधूमके मतमें जन्मने
स्नानपूर्व दिनोंमें, शतरात्रमें या संवत्सरमें नामकरण
करना होता है । इसके विवा जो दूसरा दूसरा समय
बतलाया गया है, वह केवल प्रथमर्षी व्यक्तिोंके लिये
है न कि समर्थके लिये । समर्थ व्यक्तिोंको सुप्त
समयका कदापि उल्लङ्घन नहीं करना चाहिये । नाम-
करणमें स्नानपूर्व दिन ही मुख्य समय है और स्नानपूर्व
पादि दिन गोच । अत्रि और वैश्यादिके नामकरणका
काल हम प्रकार है । अत्रियोंके लिये तीरथना दिन,
वैश्योंके लिये सोमवर्षा दिन और शूद्रोंके लिये वामर्षा
दिन नामकरणके लिए प्रयुक्त हैं । नामकरण पिताका
ही कर्त्तव्य है । पिता यदि विदेयमें रहे, तो वरणि
गोट कर उन्हें नामकरण करना चाहिये । पिताके
नहीं रहने पर अन्य कोई कुलपति नामकरण कर सकते
हैं । शतपथ-ब्रह्मसूत्रानुसार नामकरण करना होता है ।

गोमिल-शृङ्गधूममें नामकरणप्रधानो हम प्रकार
लिखी है,—

कुमारको शुभवसन पहना कर माता वामभागमें
रुपविष्ट हो पिताके हाथमें लेने दे दे । पोट्टे घमो एत-
देमदे पतिकी परिक्रमा कर वचने सामने खड़ी हो
जाये । पति यथाविधि वेदमन्त्रका पाठ कर पत्नीके हाथ

यहांका घो बहुत चकट होता है और दूसरे दूसरे दिनों में भोजा जाता है।

नामकीर्तन (मं० पु०) ईश्वरके नामका जप या उच्चारण, भगवान्का भजन।

नामधाम (मं० पु०) नाम और धाम।

नामघाट (नं० वि०) नामघटक्रांति पङ्क-पङ्क। १ नाम घाटक। भावे घञ्। (पु०) २ नामघटण।

नामघाटम् (मं० पद्य०) नाम-घट-चमुत्। नामधारण कर।

नामजद (फा० वि०) १ जिनका नाम किसी बातके लिये लिखित कर लिया गया हो या चुन लिया गया हो। २ प्रसिद्ध, मशहूर।

नामदार (फा० वि०) प्रसिद्ध, नामो।

नामदार खाँ—बैतारके पन्नागत हलीचपुरका एक ग्रामनक्षत्रा, मन्नावत् खाँके पुत्र। पिताके मरने पर ये हलीचपुरके शासनकर्त्ता हुए। उन्होंने अपनी बुद्धिके बलसे हलीचपुरमें प्रायः दो लाख रुपये सम्पत्तिकी एक लागीर पाई थी। पीछे नवाबकी उपाधि धारण कर १८३३ ई०में इनका देशान्ता हुआ। बादमें उनके लड़के इमादिस खाँ उनके पद पर अभिषिक्त हुए।

नामदेव—एक देवमन्त्र, नामदेवजीके दोहिये। इनकी कथा भक्तमालमें इस प्रकार लिखी है। ये लष्करके उपासक थे, इससे इनमें आस्थावस्थाने की लष्करमें सभी भक्ति थी। नामदेव कुछ दिनोंके लिए बाहर गए और अपने दोहिये नामदेवसे लष्करकी प्रतिमाकी प्रति दिन दूध चढ़ानेके लिए कहते गए। नामदेवने मूर्तिके पीते दूध रखा और दोमैकी प्रादोषा की। जब मूर्ति ने दूध न पिया, तब नामदेव पावनहत्या करने पर उद्यत हुए। इस पर लष्कर भगवान्ने प्रकट हो कर उनके हाथसे दूध ले कर पी लिया। नामदेव जब मोट कर आए, तब उन्हें यह व्यापार देव बड़ा शायद हुआ।

धोरे धोरे यह बात बादमाहके जामों तक पहुँची और उन्होंने नामदेवसे जुना कर करामात दिवानेके लिये कहा। किन्तु नामदेवने स्वीकार नहीं किया। एक दिन संयोगवश एक गायका बच्चा मर गया और वह उनके मोरमें बहुत व्याकुल हुई। इस समय राजाने

नामदेवसे कहा, 'यह गाय अपने बच्चेके लिये रोती है, क्या हमसे दुःखमें तुम्हें बड़ा भो दया नहीं आती।' इस पर नामदेवने उस बच्चेकी जिंदा दिया। किसी समय एक बनिघने तुनादान पदमें उन्हें बर्षाटान करनेकी इच्छामें जुनाया। नामदेवने तुनमोके एक पक्षी पर लष्कर नाम लिख कर पतङ्गे पर रख दिया और तत्परिमित मोना देनेकी कहा। बनिघने भण्डारमें जितने धनरख थे, सभी दिए गये, लेकिन वह पतङ्गा नहीं उठा। इस पर लष्करनाम-माहात्मा देख कर यह बनिघा उनसे लष्करनाममें दीक्षित हुआ। एक समय नामदेव रङ्गनाथ ठाकुरके पिछवाड़ेमें बैठ कर हरिकीर्तन कर रहे थे। कहते हैं, कि उस समय रङ्गनाथ-मन्दिरका दरवाजा अभी खोल दिया गया था। भक्तमानमें इस प्रकारकी ध्वनि पड़त घटनाओंका उन्मुख देवनेमें आता है।

नामदेव—महाराष्ट्रीय एक प्रसिद्ध भक्तकवि। इनके पिताका नाम दामासो और माताका नाम गोमाई था। बहुत दिन तक उन्हें कोई सन्तान न होनेके कारण उन्हें निबिडोवा देवके निकट उपासना की थी। कहते हैं, कि दामासो एक दिन सबेर जब गोमा नदीमें स्नान कर घर मोट रहे थे, तब राक्षसें उन्हें बाराह वर्षका लड़का यही नामदेव मिला। घरमें ला कर बहुत धन-पूर्वक ये नामदेवका भरण-पोषण करने लगे। नामदेव ब्रह्म कहा करते थे, कि वे अपनी माता गोमाईकी प्रथम सन्तान हैं। उनसे पिता ज्ञातिके निम्न पदात् दत्त थे। उनकी पत्नीका नाम था रजारी।

बचपनमें ही नामदेव निबिडोवाके मन्दिरमें जा कर उनकी उपासना किया करते थे। ये सामाजिक विषयों पर बिलकुल निरक्षर रहते थे। तुनमोकी भाषा गद्देमें जान कर बात दिन निबिडोवाके प्रधानमें मन्त्र रहते और तानी बजा बजा कर गान करते थे। कहते हैं, कि वर्तमान समयमें निबिडोवाकी प्रथम रत्नके लिए टाक और करतान ले कर जो महोत्सवदा पारम्भ हुई है तथा पण्डितपुरमें निबिडोवाके देवमन्दिरमें पावाड़ और कार्णिक नाममें देवदाम्नेके लिए जो दासो पाया करते हैं, वह नामदेवके समयमें ही पारम्भ हुआ है। उनकी शालू कह हुई, माधम नहीं। पर हाँ, अपने जन्म

कुमारको प्रत्यर्पण करे। बाट होनादिका प्रमुखाय हर नामकरण विधेय है। *

नामकरणप्रदतिके प्रमुखाय इस प्रकार नामकरण करना चाहिए। नामकरणके दिनमें पिता प्रातःकालादि करके विवाह-पद्धतिके प्रमुखाय गौर्वादि योद्धमालका और हृदिश्राव करे। बाट पयोको पचने वामभागमें बिठा कर गिलाफनकमें दो रेश्मा पहित करे और उसमें उज्ज्वल दीप प्रज्वलित कर कुमारके दक्षिण कर्णमें 'ओ प्रमुक देवशर्मा' तथा कन्या होने पर वामकर्णमें 'ओ प्रमुकी देव्यस्मि' कक्ष कर नाम रखे। तदनंतर शान्तिजन द्वारा कुमारको समिपेवन कारके पक्षिद्राव धारण करे। नामकरणमें ऊकारादिवर्णका प्रथम, द्वितीय प्रथमा चतुर्थ-वर्ष नामके पाटिमें और विसर्गान्त ऊवस्वरका चन्तमें रहना विधेय है। इनमेंसे प्रतिष्ठाकामी व्यक्ति को दो चत्वरका और नम्रप्रधानकामी को चार चत्वरका नाम रखना चाहिए। पुरुषके नाममें यदि युक्ताक्षर रहे, तो कोई दर्ज नहीं, किन्तु कन्याके नामके पाटिमें युक्ताक्षर नहीं रहना चाहिए। इनके नामके चन्तमें 'दा' का रहना पच्छा है। जैसे—सुखदा, वसुदा, यमोदा इत्यादि।

पारस्कर-ग्रन्थसूक्तके मतसे पुरुषका नाम तद्वितन्त होना अच्छा नहीं। किन्तु स्त्रीका नाम यदि तद्वितान्त

० "एवाद्दे ह्यद्देवाऽहनि पिता नावकृष्यदिति" श्रुति।

एवाद्दे इति। पुरुषद्वयः, "हनर्दय स्यायोगात्।"

गोमिलः—

"जननाहुरात्रे षुष्टे शतरात्रे संवत्सरे ॥ नामधेय-करणमिति।" (ज्योतिषसूत्र)

"अथ नाम कुर्वति त्रितैव दशमेऽहनि

देवर्षे नरावर्षे हि शर्मनमर्दिष्युतम् ॥

शर्मा देवर्षे रिशय वर्षी श्रुता च भूयसः।

भूमिर्भूयस वै शयस्य दासः धरस्य शरयेत् ॥"

गोमिलः—

प्रमुखाय नमः। अयुःसायै दान्तं यथा यथोदा इत्यादि।

"दबं पुं प्रस्थानं चैत्रं चैत्रारि देवताम्।

सिद्धं सिद्धादिकाराद्यं धीयुर्वै प्रमुखायदेवम् ॥"

(रायवर्महृत् प्रयोगसार)

हो, तो कोई दोष नहीं। यथा—गायत्री, कैशवी इत्यादि।

नामकरणमें ब्राह्मणका धर्म नु और देव, क्षत्रियका धर्म नु और क्षात्रा, वैश्य का भूति और शुभ तथा शूद्र का दास चन्तमें रहे और सर्वत्र पक्षमें 'ओ' शब्द रक्ष सकता है। कालक्रमसे नामकरण संस्कारमें बहुत हीर फेर हो गया है। आजकल जातशान्ति का ग्यारहवें प्रथमा बारहवें दिनमें नामकरण संस्कार प्रायः नहीं देना जाता है। टासिपात्यमें वरं यह नियम बहुत कुछ प्रतिपादित होता है। किन्तु नामधेयप्राप्तिके समयमें ही नामकरण संस्कार होते देवा जाता है।

नामकरणके नियमे निम्नलिखित नवत्र कहे गए हैं, यथा—पश्चिन्नो, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, उत्तर-फल्गुनी, स्वाति, चतुर्षा, उत्तराषाढा, श्रवणा, चनिष्ठा, श्रतमिषा, उत्तरभाद्रपद और ऐश्वरी। जिस लग्ने प्रथम, चतुर्थ, प्रथम और दशम स्थानमें शुभपक्ष रहे, उस लग्ने नामकरण प्रयुक्त है। (ज्योतिषाचार्यः)

नामकर्म (सं. पु.) १ नामकरणसंस्कार। २ जैन-शास्त्रानुसार कर्मका वह भेद जिससे जोष गति और जाति पादि पर्यायोंका प्रभुत्व करता है। 'नामकर्म' २३ प्रकारके माने गये हैं, जैसे नरकगति, तिर्यकगति, ह्योद्विजगति, चतुरिन्द्रियगति, चक्षिर, शुभ, प्रथम स्थावर, सूत्र इत्यादि।

नामकर्म—१ मन्त्राजपदेयके प्रस्तागत विसम जिले का एक तातुक। यह यथा ११° १५' २५' उ० और देश ७०° ५१' से ७०° २०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ०१५ वर्ग मील और जनसंख्या १११८५ है। इसमें दो शहर और ३५६ ग्राम लगते हैं।

२ उत्तर तातुकका एक शहर। यह यथा ११° १४' उ० और देश ७०° १०' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १८४३ है। यहां नामकर्म तातुकके प्रधान कर्मचारी और एक डिपटी कलक्टर रहते हैं। ३०० फुट लंबे पहाड़ पर यह नगर बसा हुआ है। एक समय यह हैदराबादके अधिकारमें था। यहां नामगिरि अश्वन नामको एक प्रसिद्ध मन्दिर है। इसके पिता और भी दो विष्णुमन्दिर हैं। यहां एक हाई स्कूल है।

यहांका घो. बहुत लज्जत होता है और दूसरे दूसरे लोगों में भेजा जाता है।

नामकोत्तम (सं० पु०) दूसरेके नामका जय या उच्चारण, भगवान्का भजन।

नामधाम (सं० पु०) नाम और धाम।

नामदाह (सं० त्रि०) नामघटाति घट-पण् । १ नाम दाहक। भावे घट् । (पु०) २ नामघटण।

नामदाहम् (सं० एवम्) नाम-ग्रह-समुत् । नामधारण कर।

नामजट (का० वि०) १ जिसका नाम किसी बातके लिये निश्चित कर लिया गया हो या चुन लिया गया हो। २ प्रसिद्ध, मशहूर।

नामदार (का० वि०) प्रसिद्ध, नामी।

नामदार ग्रा—बेमारके अस्वास्थ्यको एक मानन-कर्त्ता, सलाहगृहके पुत्र। पिताके मरने पर ये इलाच-पुत्रके आसनकर्त्ता हुए। इन्होंने अपनी बुद्धिके बलसे इलाचपुरमें प्रायः दो लाख रुपये सम्पत्तिकी एक जागोर पाई थी। पीछे नवाबकी उपाधि धारण कर १८२३ ई०में इनका देशान्ता हुआ। बादमें उनके लड़के इलाहम ग्रा उनके पद पर अभिषिक्त हुए।

नामदेव—एक देवभक्त, नामदेवकीके दोहित्र। इनकी कथा भक्तमालमें इस प्रकार लिखी है। ये कृष्णके उपासक थे, इससे इनमें ब्रह्मायस्यासे ही कृष्णमें सबो भक्ति थी। नामदेव कुछ दिनोंके लिए बाहर गए और अपने दोहित्र नामदेवसे कृष्णकी प्रतिमाकी प्रति दिन दूध चढ़ानेके लिए कहते गए। नामदेवने मूर्त्तिके पानी दूध रखा और पोटिनी प्रायःना की। जब मूर्त्ति ने दूध न पिया, तब नामदेव व्याकलता करने पर उद्यत हुए। इस पर कृष्ण भगवान्ने प्रकट हो कर उनके हाथमें दूध से कर पी लिया। नामदेव जब ओट कर आए, तब उन्हें यह व्यापार देव बड़ा आश्चर्य हुआ।

घोरे घोरे यह बात बादशाहके कानों तक पहुँची और उन्होंने नामदेवसे बुला कर करामास दिवसके लिये कहा। किन्तु नामदेवने स्वीकार नहीं किया। एक दिन मंथोमरग एक गायका घटका सर गया और वह उससे गोकर्ण बहुत व्याकुल हुई। इस समय राजाने

नामदेवसे कहा, 'यह गाय अपने बच्चे के लिये रोती है, क्या इसके दुःखमें तुम्हें सरा मो दया नहीं आती।' इस पर नामदेवने उस बछड़ेकी जिन्दा दिया। त्रिमो समय एक बलियोंने तुलादान कर्ममें उन्हें स्पर्शदान करनेकी इच्छामें बुलाया। नामदेवने तुलामोके एक पत्ते पर कृष्ण नाम लिख कर पण्डे पर रख दिया और तत्पुनरिमित मोना देनेको कहा। बलियेके भण्डारमें जितने धनरस थे, सभी दिए गये, सिक्किन यह पण्डा नहीं उठा। इस पर कृष्णनाम-माहात्मा देव कर वह बलिया उनसे कृष्णनाममें दीक्षित हुआ। एक समय नामदेव रत्ननाथ ठाकुरके पिछवाड़ेमें बैठ कर हरिजीन कर रहे थे। कहते हैं, कि उस समय रत्ननाथ-मन्दिरका दरवाजा अभी खोल दिया था। भक्तमानमें इस प्रकार-को घनेक बहुत घटनादीका उन्हें देखनेमें आता है।

नामदेव—महाराष्ट्रये एक प्रसिद्ध भक्तकवि। इनके पिताका नाम दामागोरी और माताका नाम गोनाई था। बहुत दिन तक उन्हें कोई संगान न होनेके कारण उन्होंने बिठोवा देवके निकट उपासना की थी। कहते हैं, कि दामागोरी एक दिन सबेरे जब भीमा नदीमें स्नान कर घर लौट रहे थे, तब रास्तेमें उन्हें बारह वर्षका लड़का यही नामदेव मिला। घरमें ला कर बहुत दम-पूयक से नामदेवका भरण-पोषण करने लगे। नामदेव जय कहकरते थे, कि ये अपनी माता गोनाईकी प्रथम सन्तान है। उनसे पिता जातिके सिद्धि चर्चा हुई थी। उनकी पत्नीका नाम था रत्नाई।

बचपनसे ही नामदेव बिठोवाके मन्दिरमें जा कर उनकी उपासन किया करते थे। ये सांसारिक विषयी पर बिल्कुल विरक्त रहते थे। तुलामोकी मामा मनेमें ठान कर रात दिन बिठोवाके ध्यानमें मग्न रहते और तानी बजा बजा कर गान करते थे। कहते हैं, कि वर्त्तमान समयमें बिठोवाकी प्रसन्न रज्जुके लिए टाक और करतार ले कर जो मन्त्रोत्पदा पारम्प हुई है तथा पण्डरपुरमें बिठोवाके देवमन्दिरमें पापाद और कार्तिक मासमें देवदमनके लिए जो दातो पाया करते हैं, वह नामदेवके समयसे ही पारम्प हुआ है। उनकी ग्यु कब हुई, नाम नही। पर हाँ, अपने उन्मु

नामदेवकी मृत्युके उपलक्षमें इन्होंने जो गाथा बनाई, उसमें अनुमान किया जाता है, कि १६०० ई० तक ये विद्यमान थे। इनके देखो।

इनकी रची हुई कविताएँ अत्यन्त प्राञ्जलभाषामें लिखी हैं और कई जगह व्यङ्ग्योक्ति पूर्ण भी हैं। ये सभी कविताएँ भक्तिपद्यमें लिखी गई हैं। महाराष्ट्रगण आज भी उनके आधारकी दृष्टिसे देखते हैं।

नामदेव नीहारि—जातिविवेक। ये लोग साधारणतः कुवर्गी, कर्जगी, कौड़, मयलमुगु, रानीवैभूर और रण नामक स्थानोंमें रहते हैं। सुतेको नीते रहनेमें रंगाना ही इनको उपश्रौविका है। इन लोगोंकी उपाधि बगाड़, बममें, नदरी और पन्ती है। परिश्रमी होने पर भी ये लोग बड़े अपरिष्कार होते हैं। ये लोग सुता रंगा कर बाजारमें बेचते हैं। कोई-कोई तो स्वयं अपने घरमें ही उन सुतोंसे कपड़ा बुनता है। हिन्दू-पर्वके दिन ये कोई काम काज नहीं करते। ये लोग धार्मिक होते, ब्राह्मणोंकी भक्ति करते और लक्ष्मी देवीको पूज्य करते हैं। पट्टरपुर और गोवर्ण नामक स्थान ही इनके प्रधान तीर्थ हैं। ये लोग अपने शुरुकी नागनाथ कहते हैं जो इनके स्वजातीय होते हैं। धर्मप्रदेश देनेके लिए ये नाना स्थानोंमें पर्यटन करते हैं, भाषमें गिण्य भी रहते हैं। किन्तु वे कभी भी दूसरोंकी अपने धर्ममें नानेकी चेष्टा नहीं करते। इस जातिमें बाल्यविवाह, बहु-विवाह और स्त्रीत्यागकी प्रथा प्रचलित है। किन्तु स्त्रियाँ स्वामोके जीवित रहते दूसरा विवाह नहीं कर सकती हैं। इनकी जातीय-एकता बहुत प्रगल्भ है। सामाजिक भगड़ा पञ्चायतमें तय होता है। जो पञ्चायतके फैसलेकी नहीं मानता, वह जातिसे अलग कर दिया जाता है। ये लोग अपने लड़कोंकी पाठशाला भेजते हैं नहीं, लेकिन वे पठकव्यवसायके सिवा और दूसरा कोई व्यवसाय नहीं करते।

नामदेव सिम्पी—महाराष्ट्रवासी एक अर्धोद्योगी दल। ये लोग प्रसिद्ध पट्टरपुरस्थ विठोबाके उपासक नामदेवकी अचना वादि पुण्य मानते हैं। बम्बई प्रेसिडेन्सीमें प्रायः सब जगह इनका वास है। अहमदनगर जिलेके नामदेव सिम्पीयोंमें साधारणतः पुण्य लोग अपने नामके साथ "मिट" शब्दका प्रयोग करते हैं।

इनकी संश्रुत उपाधि बमसरे, बगड़े, बकरे, बार-बार, बारटेक, बसाले, चोक, डेहर इत्यादि है। एक उपाधिधारी लोगोंमें विवाह गादो नहीं होती। निजाम-राज्यके अन्तर्गत तुलजापुरकी देवी, मासिकके मन्मथ, पूना जिलेके जेठरी नामक स्थानोंके पुण्डरीक और पट्टरपुरके विठोबा इनके उपास्य देवता हैं।

ये लोग प्रधानतः शाण्ड्यय और माहेन्द्र-गोमचारो होते हैं। इनका रंग काला है, गरीरकी गठन देहमेंसे ही ये मजबूत मानस पड़ते हैं। इनकी भाषा मराठी है।

ये लोग साधारणतः समुदा सि सिद्धा लीते हैं, केवल बीचमें कुछ बाल रहने देते हैं। पुण्य सामान्य कोट और चादरका व्यवहार करते हैं तथा स्त्रियाँ बड़िया बड़िया सादो और बालरखा पहनती हैं। इनके पुरोहित मिर पर गढ़ो पढ़ने रहते हैं।

ये लोग अत्यन्त परिश्रमी, परिष्कार, परिच्छेदता-प्रिय, मितश्रयी और धर्मियप्रिय होते हैं। लेकिन लुबा-चोरोंमें ये अव्यल दर्जेके हैं।

सुरेका काम ही इनका पुण्यानुकूलिक व्यवसाय है। कोई-कोई गोकरी तथा मजदूरी करके अपना पेट पालता है। स्त्रियाँ घरकी काम करती हैं और पुण्योंकी बिलाईके काममें मदद भी देती हैं। ये लोग मराठी कुणवियोंकी अपेक्षा जातिमें कुछ हीन हैं। नामदेवकी तरह ये लोग भी येष्वय सम्प्रदायभुक्त हैं। सब कोई गलेमें तुलसीकी माला पहनते हैं और प्रतिवर्ष चापाद तथा कार्तिक मासमें पट्टरपुरस्थ विठोबाके दर्शनके लिये जाते हैं।

ये लोग हिन्दू-पर्वका ही पालन करते हैं और संयम उपवामादि भी किया करते हैं। भविष्यवाणी और जादू-गटके लपर इनकी पुरी श्रद्धा है और भूत भ्रतमें ये लोग विश्वास रखते हैं। बाल्यविवाह, बहुविवाह और विधवा-विवाहकी प्रथा खूब प्रचलित है। ये लोग सत्तामादि मूर्खित होनेके बाद पञ्चमराठिमें पड़ोसियोंकी चांदीकी एक प्रतिमूर्ति बना कर पूजा करते हैं और पान, सुपारी, हल्दी, चन्दन, पाँच प्रकारके फलका नैवेद्य लगाते हैं। लक्ष्मीदेवीकी एक दूसरी प्रतिमूर्ति के मध्य एक तार लुबेह कर उसे नवजात शिशुके गलेमें लटका देने हैं।

मन्थान भूमिष्ठ होनेके बादसे तोन दिन तक मधु घोर रैडोका तेल पानीमें मिला कर छने पिनाते हैं, बोये दिनमें माताका दूध पीने देते हैं। इस समय ये श्लोक १२ दिन तक जगोष मानते हैं। तेरहवें दिनमें पत्नी माताके नामसे राधो घर फूल, पान, दही मिला दूधा घावज घोर छपयोत आदि पूजोपकरण द्वारा धोच गिणा-को पूजा करते हैं। छठी दिन चामीय पट्टोसी या कर बघेका नाम रखते हैं।

बावज दगसे बोल वर्षके भीतर घोर लड़कियां युवती होनेके पहले ब्याही जाती हैं। घर पल्लवामि पहले विवाहका प्रस्ताव करते हैं। विवाहके पहले दिन बरका पिता कन्याको एक माझो, एक कुर्ता घोर एक जोड़ा चांदीका कंगना छपहारदेता है घोर स्त्रजातीय लोगके मामने कन्याके कपालको सिन्दूरसे रंगा कर छपके हाथमें मिट्टाच छपेय करता है। बाद सबको घान सुपारी आदि बाँट कर बरका पिता भोजन करता है। तदनंतर घर घोर कन्याका पिता बरकन्याका जन्मपत्र ले कर गणकके पास जाता है घोर विवाहका शुभ दिन स्थिर करा सेता है। शुभ दिनमें जब कन्याको लवट लग जाती है, तब उस लवटमेंके कुछ पंथ ले कर बरको लगानेके लिए उसके घर भेज दिया जाता है। छठो दिन बरके यज्ञमें रोटी, दान घोर मुद्द एक यानीमें रख कर कन्याके घर भेजा जाता है। बाद साधारण विवाह-प्रथाके अनुसार विवाहकार्य सम्पन्न होता है। विवाहके समय घर घोर कन्याको मामा छेरकर नहीं होती। बरको माता इस दिन कन्याके घर या कर पुत्रवधूका मुलाबकीर्णन करती है घोर उसे चौनी मिश्रित दूध पीनेकी देती है। दूसरे दिन घर, बन्धुबान्धव चपली जातीय प्रपाके चतुमार बाहर टहलने निकलते हैं, साथ साथ बाजा भी बजता है। बाद मोटेने घर घर गरम जलसे गहवाया जाता है घोर मोट पर बिज कर उसे धोच प्रकारके फल तथा चण्याना दूध रानेको दिया जाता है।

ये लोग मृतदाह नहीं करते। इनको जातीय एकता बहुत प्रचल है। सामाजिक रिवाजको सीमांश पञ्चा-यनसे होती है। जो पञ्चायनका नियम पालन नहीं

करता, उसे पय'दण्ड होता है। बार बार नियम भङ्ग करनेसे जातिभ्रुत होता पड़ता है। इनके लड़के विद्या-लय तो जाते हैं, लेकिन चपना जातीय पिताके मित्रा दूसरा कोई पैगा नहीं करते।

धारधारके नामदेवसिम्बो दो भागीमें विभक्त हैं। एक मन्थदायका नाम है 'नामदेवसिम्बो' घोर दूसरेका 'निद्रायत सिम्बो'। इनको धावार व्यवहारमें स्थानभेदने फरक पड़ता है। पूर्वार्ध मन्थदाय चाश्रितमात्मने नवरात पूजाके समय मद घोता घोर मांस घाता है।

श्रीयोज मन्थदायको भाषा कनाड़ी है। पुरुष होनेकी कनेडो पहनते हैं।

पूजाके सिम्बो चनेत भागीमें विभक्त हैं। घर इनका धावार-व्यवहार बहुत कुछ एक दूसरेसे मिलता जुलता है।

नामदादयो (स० छी०) नामः दादशो । व्रतविधेय । यद्य व्रत चणहन नामको शुद्धव्रतीया तिथिको किया जाता है। इस व्रतमें गोरों, कानो, लमा, भद्रा, दुर्गा, कान्ति, सरस्वती, महात्मा, वैष्णवी, लक्ष्मी, गिमा घोर नारायणो इन बारह देवताधोकी पूजा होती है। इस व्रतके करकेसे शिवाय भीमाधवनी होती हैं।

“मोटी काली बना मश दुर्गा कांत वरस्वती ।

मंगवा वैष्णवी लक्ष्मी शिवा नारायणी कमल ॥

नागेश्वरीगामारुच पुर्वांश'क'रुषे कनम् ॥”

(देवीपुगाय)

नामधन (स० पु०) एक नहरनाम । यह राग मझार, शंकराभरण, विवाचन छदे घोर सेदारके योगसे बना माना जाता है।

नामघाई (हि० छी०) धपकीर्ति, निम्ना, बदनानो । नामधातु (स० पु०) नाम पूर्वकी धातुः । सुवत्त नामक प्रकृतिक प्रत्ययान्त धातुभेद । ये सब सुवत्तपद बादके प्रत्यय द्वारा जो धातु म'दा होते हैं, ऐसे नामधातु कहते हैं। यथा—सुवत्तकाम्य, 'पाचनः सुवत्तकृति', सुवत्त इव सुवत्तके लक्षर काम्य प्रत्यय दूधा । यहां पर सुवत्तकाम्य नामधातु है। नामधातुके लक्षर भी धातुवत् सब कार्य रंगि । सुवत्तपदके लक्षर कोरे प्रत्यय दानमें जो नामधातु होता, हो नहीं । निर्दिष्ट कुछ ऐसे सुवत्त

नामदेवकी मृत्युके उपपन्नमें इन्होंने ओ गाथा बनाई, उसमें अनुमान किया जाता है, कि १२०० ई० तक ये विद्यमान थे। इनके देवे।

इनकी रची हुई कविताएँ अत्यन्त प्राञ्जलभाषामें लिखी हैं और कई जगह श्रद्धांति पूर्ण भी हैं। ये सभी कविताएँ भक्तिप्रथममें लिखी गई हैं। महाराष्ट्रगण पात्र भी उन्हें पादरकी दृष्टिसे देखते हैं।

नामदेव नीलारि—जातिविशेष। ये लोग साधारणतः कुवर्नी, कर्जनी, कोढ़, नवलगुगु, रानोवेधूर और रण नामक स्थानोंमें रहते हैं। खुलेकी नीचे रातमें रंगाना की इनको उपशोषिका है। इन लोगोंकी उपाधि बगावू, वसमें, नदरी और पन्नी है। परिश्रमी होने पर भी ये लोग बड़े अपरिष्कार होते हैं। ये लोग सुता रंगा कर बाजारमें बेचते हैं। कोई कोई तो स्वयं अपने घरमें ही सन रातमें कपड़ा बुनता है। हिन्दू-पर्वके दिन ये कोई काम काज नहीं करते। ये लोग धार्मिक होते, ब्राह्मणकी भक्ति करते और उन्होंने पोरोटिर्य करारते हैं। पण्डुरपुर और मोक्ष नामक स्थान ही इनके प्रधान तीर्थ हैं। ये लोग अपने शुरुकी नागनाथ कहते हैं जो इनके स्वजातीय होते हैं। धर्मापदेश देनेके लिए ये नाना स्थानोंमें पर्यटन करते हैं, गायमें गिर्य भी रहते हैं। किन्तु वे कभी भी दूसरेकी अपने धर्ममें मानेकी चेष्टा नहीं करते। हम जातिमें ब्राह्मणविवाह, बहू-विवाह और स्त्रीत्यागकी प्रथा प्रचलित है। किन्तु स्त्रियाँ स्वामीके जीवित रहते दूसरा विवाह नहीं कर सकती हैं। इनकी जातीय-एकता बहुत प्रबल है। सामाजिक भगड़ा पञ्चायतमें तय होता है। जो पञ्चायतके फैसलेकी नहीं मानता, वह जातिमें अपग कर दिया जाता है। ये लोग अपने सड़कीकी पाठशाला भजते हैं नहीं, लेकिन वे पेटकृष्यवसायके निवा और दूसरा कोई व्यवसाय नहीं करते।

नामदेव सिम्पो—महाराष्ट्रवामी एक ऐनीहा दर्जी। ये लोग प्रसिद्ध पण्डुरपुर स्थ विठोबाके उपासक नामदेवकी अपना पादि पुरुष मानते हैं। बम्बई प्रेसिडेंसीमें प्रायः सब जगह इनका वास है। पण्डुरपुर जिलेके नामदेव सिम्पोंमें साधारणतः पुरुष लोग अपने नामके साथ "मिट" शब्दका प्रयोग करते हैं।

इनकी संश्रुत उपाधि बससरे, बगड़े, बहरे, बार-बार, बारटेक, बसामे, चोक, छिपर इत्यादि हैं। एक उपाधिधारी लोगोंमें विवाह गाढो नहीं होती। निजाम-राज्यके अन्तर्गत तुलजापुरकी देवी, नासिकके मन्मथ, पूना जिलेके लेहरी नामक स्थानोंके छत्रोबा और पण्डुरपुरके विठोबा इनके उपास्य देवता हैं।

ये लोग प्रधानतः शाण्डिय और माहेन्द्र-गोखधारी होते हैं। इनका रंग काला है, शरीरको गठन देखनेमें ही ये मजबूत मालूम पड़ते हैं। इनकी भाषा मराठी है।

ये लोग साधारणतः समुदा सि मुँहा लेते हैं, केवल बीसमें कुछ वास रहने देते हैं। पुरुष सामान्य कोट और चादरका व्यवहार करते हैं तथा स्त्रियाँ बड़िया बड़िया साड़ी और चट्टरखा पहनती हैं। इनके पुरोहित मिर पर गढ़ो पहने रहते हैं।

ये लोग अत्यन्त परिश्रमी, परिष्कार, परिच्छेदता-प्रिय, मितश्रयी और अनियमिप्रिय होते हैं। लेकिन गुणा-चोरोमें ये पण्यस दर्जेके हैं।

सुईका काम ही इनका पुरुषाशुक्रमिक व्यवसाय है। कोई कोई मोकरी तथा मजदूरी करके अपना पेट पानता है। स्त्रियाँ घरकी काम करती हैं और पुरुषोंकी विलाईके काममें मदद भी देती हैं। ये लोग मराठी कुपवियोंको अपनेजा जातिमें कुछ होम है। नामदेवकी तरह ये लोग भी वैष्णव सम्प्रदायसुक्त हैं। सब कोई गलेमें तुलसीको माला पहनते हैं और प्रतिवर्ष पावाड़ तथा कार्तिक मासमें पण्डुरपुरस्थ विठोबाके दर्शनके लिये जाते हैं।

ये लोग हिन्दू-पर्वका ही पालन करते हैं और संयम उपवासनादि भी किया करते हैं। भविष्यवाणी और जाहू-गर्के ऊपर इनकी पुरी श्रद्धा है और भूत भेतमें ये लोग विश्वास रखते हैं। वास्तुविवाह, बहूविवाह और विधवा-विवाहकी प्रथा खूब प्रचलित है। ये लोग सन्तानादि भूमिह होनेके बाद पण्डुरपुरादिमें पठोदेवकी चांदीकी एक प्रतिमूर्ति बना कर पूजा करते हैं और दान, सुपारी, हट्टो, चन्दन, पांच प्रकारके फलका भेषज लगाते हैं। उक्त देवीकी एक दूसरी प्रतिमूर्तिके मध्य एक तार डूबेड कर उसे नवकात मिश्रुके गलेमें लटका देते हैं।

मन्त्रान् भूमिष्ठ होनेके बादसे तीन दिन तक मधु घोर रैछीका मेष पानीमें मिला कर उसे पिनाते हैं, चोथे दिनमें माताका दूध पीने देते हैं। इस समय ये लोग १२ दिन तक बमोष मानते हैं। तेरहवें दिनमें पछो माताके नामसे राम्ते पर फूल, पान, ढ़ी मिठा दूधा चाश्रन घोर सपवोत चादि पूजोपकरण द्वारा पांच गिना-को पूजा करते हैं। उसी दिन चामीय पछोसी धा कर बघेका नाम रखते हैं।

बालक दससे बीस वर्षके भीतर घोर सड़कियां पुवतीं होनेके पक्षमें ब्याही जाती हैं। वर वधवान्ने पक्षमें विवाहका प्रस्ताव करते हैं। विवाहके पक्षके दिन वरका पिता कन्याको एक साढ़ो, एक कुर्ता घोर एक जोड़ा चादीका कंगना सपहार देता है घोर खजातोय लोगके सामने कन्याके कपासको मिन्दूरसे रंगा कर उसके हाथमें मिटाव सपष करता है। बाद सधको पान सुपारी चादि बांट कर वरका पिता भोजन करता है। तदनन्तर वर घोर कन्याका पिता वरकन्याका जन्मपत्र ले कर गणकके पास जाता है घोर विवाहका शुभ दिन स्थिर करा लेता है। शुभ दिनमें जब कन्याको कपट मग जाती है, तब उस कपटमेंके कुछ चष ने कर वरकी सगानेके लिए उसके घर भेज दिया जाता है। उसी दिन घरके यज्ञसे रोटी, दान और मुकुट क थावीमें रख कर कन्याके घर भेजा जाता है। बाद साधारण विवाह-प्रथाके अनुसार विवाहकार्य सम्पन्न होता है। विवाहके समय घर घोर कन्याकी माता ड़ेरकर नहीं होती। घरकी माता इस दिन कन्याके घर धा कर पुत्रवपूका मुवावछीकरण करती है घोर उसे चीनी मिश्रित दूध पीनेको देती है। दूसरे दिन वर, बन्धुबान्धव सपनो जातोय प्रपाके अनुसार बाहर टखनमें निकलते हैं, साथ साथ बाजा भी बजता है। बाद मोटने पर वर गरम जलमें गहवावा जाता है घोर मोट पर बिज कर उसे पांच प्रकारके कल तथा चप्याना दूध स्थानेको दिया जाता है।

ये लोग मृतदाह नहीं करते। इनको जातोय बहता बहुत प्रचल है। सामाजिक विवादको सीमाया पक्ष-यतसे होती है। को पद्यायनका नियम चलन नहीं

करता, उसे चप दण्ड होता है। बार बार नियम भङ्ग करनेसे जातिभ्रूत होना पड़ता है। इनके बहुके विद्या-लय तो जाते हैं, लेकिन अपना जातीय पैसाके मित्रा दूसरा कोई पैसा नहीं करते।

धारवारके नामदेवसिम्पो दो भागोंमें विभक्त हैं। एक सम्प्रदायका नाम है 'नामदेवसिम्पो' घोर दूसरेका 'निद्रायन सिम्पो'। इनको धावार व्यवहारमें स्थानभेदमें रुक पड़ता है। पूर्वार्ध सम्प्रदाय चामिनमासमें नवरात्र पूजाके समय मद पोता घोर मान घाता है।

मोक्ष सम्प्रदायको भाषा कनाड़ी है। पुत्र्य भोगको जनेठो पछनते हैं।

पूजाके सिम्पो चनेक भागोंमें विभक्त हैं। पर इनका धाचार-व्यवहार बहुत कुछ एक दूसरेमें मिलता जुलता है।

नामदादगो (सं० खी०) नाम्नः दादगो। व्रतविधि। यह व्रत चगहन मानको सुकृतयोया त्रिपिको किया जाता है। इस व्रतमें गोरों, कान्को, सभा, भद्रा, दुर्गा, कान्ति, सरस्वती, मन्ना, वैष्णवी, लक्ष्मी, मिवा घोर नारायणी इन बारह देवताओंकी पूजा होती है। इस व्रतके करनेसे श्रियां मोक्षायवती होती हैं।

“गोटी काली बमा मन्ना दुर्गा कान्ति सरस्वती।

मंगला वैष्णवी लक्ष्मी विवा नारायणी कन्या।

नामं तुतोसामास्य पूर्वोक्तं लभते फलम् ॥”

(देवीपुगण)

नामधन (सं० पु०) एक महाराम। यह राम मन्धार, मन्धराभरण, विलासन सुदे घोर सेदारिके योगमें बना माना जाता है।

नामधार्दे (हिं० खी०) धपकोर्ति, निम्दा, बदनामो। नामधातु (सं० पु०) नाम पूर्वको धातुः। सुवन् नामक प्रकृतिक प्रत्ययान्त धातुभेद। ये सध सुवन्नाप बाटके प्रत्यय द्वारा लो धातु संज्ञा होते हैं। उसे नामधातु कहते हैं। यथा—पुत्रकाम्य, 'पावनः पुत्रमिच्छति,' पुत्र इस सुवन्तके उत्तर काम्य प्रत्यय दूपा। यहाँ पर पुत्रकाम्य नामधातु है। नामधातुके उत्तर भी धातुवत् मत्र कार्य होते। सुवन्तउदके उत्तर कोई प्रत्यय होनेसे जो नामधातु होना, लो नहीं। निर्दिष्ट कृद धने सुवन्त

निमित्तक प्रत्यय होने हैं जिसको धातुमंशा होती है।

यह धातुमंशक पद ही नामधातु है।

नामधाम (हि० पु०) नाम धोर पता, नाम धाम, पता ठिकाना।

नामधारक (सं० लि०) नाममात्र धरति न तदर्थं करोति धृ-प्-न्। नाममात्रधारक, केवल जिसने नामको धारण करनेवाला, नाममात्रका। श्री मय ब्राह्मण वेद-पाठ पादि अपने कर्म न करते हैं, उन्हें नामधारक कहते हैं।

“अत ऊर्ध्वमु दे विनाः केवलं नामधारकः।

परिवर्तन देव। ये एवमगुणितेभ्यः।

यथा ब्राह्मणो हस्तो यथा चर्ममयो मृगः।

ब्राह्मणारत्नमपीदानीमस्ते नामधारकः ॥”

(पराशर)

येदादि पाठ नहीं करनेवाले ब्राह्मण, काष्ठनिर्मित बन्दी धोर चर्मनिर्मित मृग से तोन केवल नामधारक हैं।

नामधारी (हि० लि०) नामधारण करनेवाला, नाम-वाला, नामक।

नामधेय (सं० स्त्री०) नामैव नामधेय (भागवतनामधेयैवः। वा ५।४।२५) इत्यस्य वार्तिकोक्त्या धेयः।

१ नाम शब्दार्थ, नाम। २ नामकरण। (लि०)

३ नामवाला, नामक।

नामन् (सं० स्त्री०) आयाते अभ्यस्यते यत् सत्, आ-पभ्यासे इति मनिन् (नामन् सीमन् चोममिति । उग् ४।१५०) इति निपातनात् साधुः। १ संज्ञा। वर्णय—आख्या, आह्वान, अभिधान, नामधेय, आह्वान, संचय, व्यपदेश, आह्वय, संज्ञा, गोत्र, अभिव्यक्ति। २ प्रातिपदिकरूप शब्दभेद।

नाम धोर धातु यह दो प्रकारकी प्रकृति है। प्रातिपदिक नाम पदवाच्य है। इसके चार भेद हैं,—दठ, सप्रक, योगरूढ़ धोर योगिक। सहेतयुक्त नाम रुढ़पदवाच्य है धोर दलीकी संज्ञा कहते हैं।

यह मंशा निमित्तकी, पारिभाषिकी धोर योधाधिकी है। यह नाम पंच प्रकारका है—उपाधत्त, छदन्त, तद्धितात्त, समामज धोर शब्दानुकरण। अधिकारिक देखो।

कमिकानमें केवल परमेश्वरका नाम कोत्तन हो मुक्तिनामका प्रधान उपाय है।

“हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव देवतम्।

कलौ नास्तेव नास्तेव मुक्तिरुपमा ॥”

(रिचुपर्व०)

१ उदक, जल, पानी।

नामनामिक (सं० पु०) नाञ्चि नामः नमनः प्रकृता पद्मास्य ठम्। परमेश्वर।

“जितमानसिकनामनामिक” (भारत शास्त्रि० ४० ५०)

नामनिधेय (सं० पु०) नामस्मरण।

नामनिशान (का० पु०) चिह्न, पता, ठिकाना।

नामधोना (हि० पु०) विनय धोर भक्तिपूर्वक नाम स्मरण करनेवाला, नाम स्नेहवाला, अपनेवाला।

नाममात्र (सं० लि०) नाम संज्ञैव मात्रा यस्य। स्वयोर्यहीन, संज्ञामात्रधारी। जो पहले धनी था, पीछे गरीब हो गया है उसे नाममात्र कहते हैं।

“यथा काष्ठमयाः शोका यथादूषमयास्तिष्ठाः।

नामवाशा न विदेहि धनहीनास्तथा नराः ॥”

(पञ्चम्यत्र)

नाममात्रा (सं० स्त्री०) नाञ्चः मात्रा इतत्। कोपभेद।

नाममुद्रा (सं० स्त्री०) नामाक्षरस्य मुद्रा यत्र। चङ्गुली-

यकभेद। चङ्गुलिमें द्युहित नामाक्षर (Monogram)।

नामयज्ञ (सं० पु०) नाम भावेन यज्ञः नामप्रसिद्धये वा

यज्ञः। यज्ञयिमेव, वह यज्ञ जो केवल नाम या धूम-

धामके लिये किया जाय। मैं एक ऐसा यज्ञ जर रहा

हूँ, जो सा कोई दूसरा नहीं कर सकता; इस प्रकार

नामके लिये जो यज्ञ किया जाता है, उसको नाम

यज्ञ है।

“नामप्रथमावितास्तथा धनवान्मदाग्निव्याः।

यज्ञन्ते नामवहीते इन्मेनाग्निपुर्व्वम् ॥”

३ (गीता ११।१०)

मैं दुखीन हूँ, मेरे जैसे दूसरा कोई नहीं है, मैं

दुःखप्राप्तुवान् कहूँगा, दान कहूँगा, भामोद कहूँगा, इस

प्रकार यज्ञानविमोहित धोर परहार यज्ञ, दण्ड, काम,

कीध धोर चतुष्टायपरवश हो कर दण्डके माय धनभिर्पुर्व्व

जो यज्ञ किया जाता है, उसको नाम नामयज्ञ है। जो

यद्य किंसी शब्दके नियमानुसार नहीं होता, केवल धूम-
धाममें दिया जाता है, वह भी नामरूप कहलाता है।

इस प्रकारके यत्नमें कोई फल नहीं मिलता। फलतः
जो यह यत्न करने हैं, वे अपने जो हानमें नरकका दर-
नाशा होन देते हैं। छोटे सत्सुरयोगिमें सनका काय
होता है। आत्मकल्याणजामोंको नामरूप नहीं करना
चाहिये।

नामरूप (सं० पु०) सबसे आधारस्वरूप योगेश्वर वलु-
नररूप परितर्कगीन नामादय या आकार जो इन्द्रियों-
को जान पड़ते हैं तथा उनकी भिन्न भिन्न नाम जो भेद-
ज्ञानके अनुसार रचे जाते हैं।

वेदान्तमें लिखा है, कि एक जो योगेश्वर नित्य तत्त्व
है। जो धनैक रूप दिख ई देते हैं वे वास्तविक नहीं
हैं। वे केवल रूपों या आकारोंके कारण हैं जो इन्द्रियों
तथा मनके संस्कारमात्र हैं। समुद्र पोर तरङ्ग चयवा
सुवर्ण पोर चाभूषण दो पृथक् पृथक् नाम हैं। एको-
त्तरण द्वारा चाका सुवर्ण पोर चाभूषणमें चयवा समुद्र
पौर तरङ्गमें साधारण शुचिभिष्ट एक जो वस्तु देखतो
है। सुवर्ण एक पदार्थ है, पर भिन्न भिन्न चयवर्गों पर
बटलनेवाले आकारोंके जो संस्कार इन्द्रियों द्वारा मन
पर होते हैं उनके कारण सुवर्णको दो कभो कहु, कभो
कहुन, कभो चंगुली पादि कहते हैं। इसी प्रकार जगत्के
जितने दृश्य हैं, सब केवल नामरूपात्मक हैं। उनके
भीतर वस्तुको सत्ता दिखो हुई है। वेदान्तमें सर्वदा
परितर्कगीन नामरूपात्मकद्वय द्वारा जगत्की 'मिथ्या'
पौर 'नामरूपान्' तथा नित्य सत्तत्त्वकी सत्य वा चक्षुष
कहते हैं।

नामर् (का० वि०) १ अनुभूत, स्वीकृत। २ भीक, शरणार्थ,
आश्रय।

नामर् (का० वि०) नामर् देतो।

नामर् (का० वि०) १ अनुभवना, लीजना। २ भोजना,
आश्रयण, आश्रयण ग्रहण।

नामविद् (सं० स्त्री०) नाम व निष्ठा व संपत्ति वा निष्ठान्।
१ मन्त्र पौर निष्ठान्। २ मन्त्रज्ञ विज्ञानेद, श्रीनिष्ठ,
पुंविद् पौर श्रीविद्।

नामसेवा (हिं० पु०) १ नामस्मरण करनेवाला, नाम

सेनेवाला। २ चत्तराधिशारी, मन्त्राति, पारिम, जेमे
नामसेवा रक्षा न पावो-देवा।

नामवर (का० वि०) प्रसिद्ध, मगधुर, नामी।

नामवरी (का० स्त्री०) कीर्ति, प्रसिद्धि, वृद्धता।

नामयोग (सं० वि०) नाम्ना; योगो यस्य, नाम धाम्ना यस्य
योगो यस्यति वा। १ मृत, मरा हुआ। २ जिसका केवल
नाम बाकी रह गया हो, जो न रह गया हो।

नामधंवर (सं० पु०) नामां शब्दभेदानां संसर्गः।
सभी शब्दों का संसर्ग, समिधान।

नाममत्त (हिं० पु०) किसी व्यक्ति या वस्तुका ठीक ठीक
नाम-जयन चाहे यह नाम उसको चबला या सुचने
वस्तुमूल न हो।

नामा (हिं० वि०) १ नामधारी, नामवाला। (पु०)
२ नामदेव मन्त्र।

नामाङ्ग (का० वि०) १ योगीय, आश्रयण, २ चक्षुष,
चक्षुषित।

नामाख्यातिक (सं० पु०) नाम च व्याख्यातश्च तयो-
र्व्याख्यानो यस्य नामाख्यात-ठक्, नामाख्यात प्रतिपादक
शब्दका व्याख्यान यस्य।

नामाह (सं० स्त्री०) नाम नामाचरमेव यदो यस्य।

नामाचर द्वारा बहिन, जिस पर नाम लिखा या
सुदा हो।

नामाहित (सं० पु०) जिन पर नाम लिखा या सुदा हो।

नामादेगम् (सं० चक्षु०) नाम पादित्य नामन् पा-दित्य-
चक्षुम्, नाम जेना वा कहना।

नामानुशासन (सं० स्त्री०) अनुविन्नेन पर्यविमेषवत्तया
प्राप्यतेन अनुशास-कारके म्पुट, शासन अनुशासन।

शब्दसमूहका पर्यविमेष प्राप्त यस्य, समिधान, कोष।

नामापराध (सं० पु०) नाम्ना नामनिवेसे अपराधः नाम्नां
वक्षामात् अपराधो वा। अनुविन्दादिरूप दुरदृष्टजनक
व्यापारविषय।

पञ्चरात्रमें लिखा है, कि मापुषीकी निम्ना, मुदकी
चयवा, युति पौर माध्वनिम्न, हरिनाममें नामधंवा-
कल्पन, देवता, मुद, मातापिता पौर ब्राह्मणोंकी निम्न
तथा वैष्णवोंकी निम्न से सब नामावस्था है। जो तो,
चक्षुष, सुवर्ण, चाको पौर राजाचोंका निम्न करते हैं,

चन्द्रगिरिपालाजी कठपुतली भरोसा बिचामन पर बिठा कर स्वयं राज्य शासन करने लगे। मधुरामें सुप्रसिद्ध महम्मदशमसुल्तानके प्रतिष्ठाया चार्वाणायक वा चार्वाणामने विद्रोहके समय विष्णुनाथको काफी सहायता पहुँचाई थी। अभी वे हो विष्णुनाथके प्रथम मन्त्री पोर प्रधान सेनापति बने। विष्णुनाथने उन्हें "दलवाय" को उपाधिसे भूषित किया। इस समय मधुरा-राज्यमें चारों पोर शांति विराजती थी, नगरको रक्षाके लिये चारों पोर दुर्ग बने थे, मन्दिरादि नगरको गोमा बड़ा रड़े से, हथियायं विधिराजकी तक्ष विस्तृत था, उपरके लिये स्थान स्थान पर खार्द पोर नहर खुदो हुई थी। विष्णुनाथने तख्तीराजकी कह कर विधिराजको बदनमें बल्लभनगर से लिया। इससे कुछ समय बाद चार्वाणाय तिवेको प्रदेशमें बन्दोबस्त करनेके लिये गये। वहाँ पञ्चपाण्डव नामक पराक्रान्त पाँच सामन्तोंने चार्वाणायके विरुद्ध पक्ष धारण किया। विष्णुनाथ सेनापतिको सहायता पहुँचानेके लिये दलबलके साथ स्वयं बहाँ गये। किंव-दन्ति है, कि उन पञ्चपाण्डवोंके बोधप्रभावसे शत्रुको सेना तितर बितर हो गई। इस पर विष्णुनाथने सामन्तोंको मननकार कर कहा, 'शेकड़ों गोहावोंका रक्तपात करनेका क्या प्रयोजन ? चावो, तुम लोग पाँच पोर हम चढ़ेला युद्ध करें। जो परास्त होगा, उसको यह देय छोड़ देना पड़ेगा।' इस पर पञ्चपाण्डव बोले, 'ऐसा नहीं, हममेंसे भी किसी एकको चुन कर युद्ध करो। उसमें हार होनेसे ही हम लोग अपनी हार समझेंगे।' अन्तमें जब विष्णुनाथने उनमेंसे एकको चुनमें सार डाला, तब शेष चार बिना कुछ कहे चुने देय छोड़ कर चले गये। इस प्रकार विष्णुनाथ नायक उस विस्तोर्ण भू-भागके एकद्वय अधिपति हुए। उन्होंने राज्यका सुशासन करनेके लिये ७२ सामन्तोंको ७२ देय शासन करनेके लिये दिये। १५०१ ई०में उनकी मृत्यु हुई। योके उनके पुत्र कुमार-कल्याण राज्याधिकारी हुए।

इस समय चार्वाणामने सुप्रसन्नानोंकी दमन करनेके लिये उत्तराखण्डकी यात्रा की। इस सुप्रसन्नानों पोरहिम दम्बिहि नायक विद्रोही हो उठे। किन्तु शीघ्र ही बिद्रोह शांत किया गया पोर बिद्रोही नायक मारे गए।

उस समय चार्वाणाय हो राज्य मरने मरने गयी थी। उन्होंने कितने ही हितकर कार्य किए तथा अनेक हिन्दू-देवमन्दिर बनवाये।

महाद है, कि कुमार-कल्याणने सिंघम पर धावा मारा। मुझमें सिंघमराज मारे गए पोर सिंघम-राज्य कुमारके हाथ आ गया। कुमार-कल्याणने कण्डिको जीत कर वहाँ अपने मानेको अभिविष्ट किया पोर पाप अपने राज्यको मोट पाये। १५०१ ई०में उनका देहान्त हुआ।

बाद उनके पुत्र कल्याण पोर विष्णुनाथ दोनों मिल कर राज्यशासन तो चलाते लगे, पर वे दोनों चार्वाणाय-के सामने बतौर कठपुतली थे। इस समय 'महाविजयन' नामक एक सामन्तराज विद्रोही हुए थे। किन्तु वे शीघ्र ही परास्त हुए। इसी समय विष्णुनाथको पोर बिद्रोह-रम् दुर्गादि द्वारा सुरक्षित किया गया। १५८५ ई०में कल्याणकी मृत्यु होने पर उनके छोटे पुत्र कल्याण निहण्य पोर विष्णुनाथ राज्याधिकारी हुए। उनके शासनकालमें मधुरा-राज्यकी ग्रीहवि हुई थी। १६०० ई०में प्रसिद्ध चार्वाणाय इस लोकसे चले गये। पनतार विष्णुनाथ पोर निहण्यका भी क्रमशः (१६०२ ई०में) देहान्त हुआ। योके उनके चचा जसुरोदरनाथने बलपूर्वक राज्य ही अपना लिया। किन्तु मान दिग्गके भीतर वे मार डाले गए पोर निहण्यके पुत्र सुरा कल्याण राजमिंशाय पर बैठे।

सुरा-कल्याणने रामनाथके माधोन महबब-मोह गेनु-पतिशेकी पुनः स्वराज्यमें समाया। उनके समय रायट-हि-नविनियमके अधोन जेष्ठ पारोयोग्य मधुरामें प्रथम हो उठे थे। अनेक लोचप्रति ईसाधर्ममें दीक्षित हुईं। ब्रह्मण हर देनी।

१६०८ ई०में तोन पुत्र छोड़ कर सुरा कल्याण पर-लोकको विधारे। इन दोनोंके नाम थे सुरापोरय, तिरुमल पोर कुमारसुरा।

मन्ना-विनयल, मन्ना-विन नामक इतिहासके रचयिता महम्मद गरीबने लिखा है कि उक्त मधुरा-राजके साध साथ उनकी शेकड़ों सन्धियाँ मतो हुई थीं।

मुत्तुपोरयके राजसत्त्वकालमें तख्तीराज साथ युद्ध बिड़ा था। इस समय महम्मदने कुछ सेना आ कर मधुराको

क्षेत्र में गई। 'वीरपूने' अपने राज्याभिषेक के प्रचार में बहुत छेड़छाड़ की थी। उनके समयमें राजधानी विचिनावलीमें थी।

उनकी मृत्युके बाद तिरुमल नायक राजा हुए। वे विचिनावलीमें राजधानी उठा कर पुनः मदुरा में गए। उन्होंने 'महाराजमाधराज श्रीतिरुमल मेवरी नायण पायलुनाद' की उपाधि ग्रहण की थी। उनके समयमें मदुराके बड़े बड़े मन्दिर भी राजमासाद बनाए गए थे। महिपुरके राजाने मदुरा राज्य सीतनेके लिए उनके समयमें सेना भेजी थी। दिण्डियुल नामक स्थानमें देवराय रामपुण्यने विपक्ष सेनाको परास्त कर महिपुर तक उनका पीछा किया था। १६२३ ई०में जीतु-प्रभ-रावटे-हिनविलियस पुनः मदुरा पहुँचे। उनकी समीपस्थिनी वल्लुतामे बहुतोंमें ईसाधर्म प्रवर्ण कर लिया।

कुछ समय बाद रामनाद प्रदेशमें सेतुपति के भाग चमघोर युद्ध हुआ। युद्धमें तिरुमलकी विशेष क्षति हुई। १६५० ई०में विजयनगरके राजा के प्रति उनकी पथरा उड़ाने शुरू। विजयनगरके राजाको यह बात मालूम होने पर उनके तिरुमलके गिरफ्तार युद्ध-व्योपणा कर दी। तिरुमलने तख्तीर और गिच्छीके भागकों से सहायता ली। विजयनगरके राजा गिच्छी पर बढ़ाई करनेके लिए तय्यार हुए। इसी समयवर्षमें सुमलमानोंने तिरुमलकी प्रोक्षणासे विजयनगर पर आक्रमण कर दिया। पीछे वे विजयनगरके दक्षिणोंकी चपले अधिकारमें करने लगे। तिरुमलका भी इस समय मदुरा में जा कर आश्रय लेना पड़ा था। पीछे वे गोसकुण्डाके सुमलमानोंसे साय मिल गये। सुमलमानोंने पा कर मदुरा पर अपनी गोटी जमा की। तिरुमलने किसी प्रकारको छेड़छाड़ किये बिना आत्मसमर्पण किया। तिरुमलको विजयनगरके राजा के दण्डनेके लिये महिपुरके राजाने कई बार तिरुमल पर आक्रमण किया था। अन्तमें १६२८ ई०की मदुरापतिकी ही जीत हुई थी।

सुमलमानों और ईसाई धर्मके ऊपर तिरुमलका बहुत कुछ विषय प्रभुता था। इस कारण प्रायः लोग उनके बहुत परमेश्वर कहते थे और इसीसे उनके

प्राय गये। बाद उनके प्रकृत उत्तराधिकारी कुमार-मुलुने ब्राह्मणोंकी उत्पत्तिनामे विजयनगर पर विराम कर दिया और मुत्तु पट्टाभिर नामक तिरुमलके एक आरज पुत्र सिंहासन पर अभिषिक्त हुए।

पट्टाभिर नाम वीरपूना था। सुमलमानोंके साथसे वचनेके लिये इसीने विचिनावलीको छोड़ देना दिया। फिर सुमलमानोंने तख्तीर और परापर स्थानोंको जीत कर अन्तमें विचिनावलीमें बसा जमाना। किन्तु उनका समीप मन्दिर न था। वीरपूना ही ज्ञात हुई। १६६० ई०में वे इस लोकसे चल गये।

बाद उनके पुत्र श्रीरामनाथ वीरपूना (वीरपूना) मोरह वर्ष की अवस्थामें सिंहासन पर बैठे। पहले मदुराके दुर्ग पर मन्त्रिणीने उन्हें पदच्युत करनेकी चनेक चेटाएँ कीं, किन्तु मदुरापतिकी कधी उमर होने पर भी उन्होंने अपने बुद्धिबलसे दुर्ग की रक्षा की। अन्तमें मित्रा दिया और अपने मामलमार तदा मेन्नायल वचन किया। पदच्युतमन्त्रिणी तख्तीरमें जा कर आश्रय लिया। तिरुमलके भाग वहाँ पहुँच कर श्रीरामनाथने उन्हें दमन किया। इस समय तख्तीराधिपति उनकी पक्षीयता कोकार कर ली। १६६१-६४ ई०में सुमलमानोंने एक दफा और विचिनावली पर आक्रमण किया था। किन्तु इस बार भी निरीह रामनाथने उन्हें दमन कर न सके। १६७३ ई०में अन्तमें पुनः तख्तीर पर बढ़ाई कर दी। इस दफा तख्तीरमें मर्मभेदों विषयान्त नाटकका अभिनय हुआ था। विजयनगर पर भी आक्रमण करने समय मरिचवार मार जाले गये। अन्तमें नामक तख्तीरके मामलकर्ता बनाये गए। १६७३ ई०में श्रीरामनाथने चन्द्रगिरिकी राजकुमारी मन्मथामाया का विवाह किया।

● Noh n's Mutual of Matters Country नामक ग्रन्थमें इस विषयान्त अभिलेखित विवरण मिलते हैं।

मदुरासि सम पर इतना आनन्द हो गए थे, कि अपने भाई सुभाषदादि के ऊपर सब राजकार्य का भार लीज कर पाप सिदिनापनी में रह कर रमणों के साथ आनन्द-मनोमें दिन व्यतीत करने लगे। मन्त्रियों ने पदकादिके साथ पदचमक रख कर उन्हें आधीन राजा होने के लिए प्रयोजित किया। इधर (१२०१ ई० में) गिवाजो के पैमायों के भाई एकीनोने तन्धोर के एक पन्नायिन राजकुमार के साथ मिल कर भाई मदुरा-राज्य पर आक्रमण कर दिया। इस चोर भट्ट के समय भी चोखनाय के लोग ठिकाने न आए। ये रमणों के प्रेम में लपका हो कर सुख में सीत थे। किन्तु जब उनकी सुना, कि अब उनका कोई निपटारा नहीं है, तब तन्धोर के सुमनमानों का निहाल भगाने के लिए आपने पदचमक ले लिया। इस समय महिपुरा राजाने मदुरा जेतने की चेष्टा की। छपर गिवाजो भी दासिपाय पर अधिकार जमाने के लिए प्रभूत सेनाओं को साथ ले चले गए थे। किन्तु उन समय कीनकन नदी में बाढ़ आ गई थी, जिससे बहुतसे देग अलगावित हो गये, यतः वे बहावे में लोट जाने की बाध्य हुए। गिवाजो के अपने जमाने पर सुमनमान लोग चच्छा मोका देव गिवाजो में गिवाजो के सेनापति पर एकाएक दूट पड़े। किन्तु द्वार बन्द हो चुके। इस समय चोखनायने तन्धोर पर चढ़ाई कर दी। मालूम नहीं, वे किस कारणसे गिवाजो पर आक्रमण न कर सिदिनापनी को लोट आए। इस समय महिपुरा राजा मदुरा के पनागत हो दुर्ग पर अधिकार कर भागा ब्यानों में लुटमार मचाते थे। चोखनाय के मन्त्रों गोबिन्दपने भी इसी सुखवसर में चौखलजगसे चोखनाय को कैद कर उनके छोटे भाई सुभा, सिद्धपको राजमिहाराज पर अभिविष्ट किया (१२०० ई० में)।

सुभा सिद्धपने राजा को कर रद्द करने नामक एक सुधनमान को अपना दुर्ग रक्षक बनाया। इस व्यक्ति ने पापमपातकतापूर्वक दुर्ग को अपने अधिकार में कर चोखनाय को छोड़ दिया और उन्हें फिर से राजमिहाराज पर प्रतिष्ठित किया। उसी सुमनमान दुर्गरक्षकने दास्य तब राज्य किया। इस समय महिपुरा राजा, राम-नाथ के मन्त्रवच, महाराष्ट्र पर तन्धोर के सुमनमान

सेनापतिमय मदुरा को बहुत करों के लिए चले गए थे। महिपुरा के सेनापतिने रमान को पराजित किया और मार डाला। यह चोखनाय आपो न तो हो गए, सिद्धि महिपुरा के सेनापति दुर्ग को छेरे हो रहे। उस समय उनकी ओर छोटे सपाय न देन गिवाजो के पुत्र गम्भूजीने सहायता मांगी। गम्भूजी के सेनानायक चसुर मलने पा कर महिपुरा के सेनानायक को परास्त कर कैद किया। चसुरमल के यत्ने महिपुरा विजित करने के लिए लोटा दिए गए। किन्तु चसुर महाराष्ट्र सेनापतिने उन सब देवों में चोखनाय का कुछ भी अधिकार रहने न दिया। इस पर चोखनाय को बहुत दुःख हुआ, इसी चिन्तासे उनके प्राण भी निकल गये। बाद उनके पन्ध्र वर्ष के लड़के कुमार रत्नराज सुभा, बीरप (१२०२ ई० में) राजमिहाराज पर अभिविष्ट हुए। वे बहुत साहसो चोर चोर थे। उनके पनायसे थोड़े ही दिनों के बाद महाराष्ट्र सेनानायक दुर्गावराह छोड़ कर देग को लोट गये। रत्नराजने अपने बाहुयत्नसे एक एक कर मन्त्र नष्ट दुर्गों को अपने अधिकार में कर लिया और महिपुरा की सेनाओं को मदुराराज्य में निहाल भगाया। वे सभी मन्त्रियों पर विजय लब्ध करके चोर स्वयं राजकार्य देखने के लिये देग देग घूमा करते थे। किसीका कुछ दोष या लेने पर वे उसे उचित दण्ड देते थे। साथ साथ कार्यक्रम व्यक्ति को उपयुक्त वारितीयिक भी दिया करते थे। ऐसे राजा इस वर्ग में कोई भी न हुए थे। १२०८ ई० में यमनरोगसे इनको मृत्यु हुई। मरते समय उनकी एक छोटी गर्भवती थी। कुछ दिनों बाद ही उसने एक पुत्र उत्पन्न हुआ। किन्तु पत्नी भी उनके थोड़े ही दिन पञ्चको प्राप्त हुई। यह राजा की माता लक्ष्मीपानने अपने पोत को लेन सहोने की अवस्थामें राज्य अभिविष्ट किया और उसकी मातासिने तब साथ राजकार्य देखने लगी। इस बुद्धिमती रमणों के हृदयमय प्रकाश बहुत सुख रहते थे, चारा चोर माता भी विराजती थी। इन्होंने सिदिनापनीने मदुरा तब को बहुत गढ़ है, उसकी दोनों बगल तरह तरह हल लगवाये चोर चोच चोचमें अधिकार्य भी लोन दिये।

मन्त्रमालने एक विनोद रूप पर दा, कि वे सभी

धर्मावतन्त्रिकों को एक जबरमि देखती थी। हिन्दू की बाहे ईसाई दोनोंका समान यादर करती थी। १६८१ ई०में रामनादके सेतुपतिने बहुत कष्ट दे कर सेतुपुत्रके डिमिटीके प्राथम्य दार किये। इस पर मङ्गलान सेतुपतिने जबर बहुत बिगड़ो। १६८८ ई०में उनकी सेना बिवाहकुम्हो कर बहुत काजने गरी चोर बर्षों परास्त हुई। इस कारण मङ्गलानने त्रिवाहकुम्हो बिद्वद युद्ध-घोषणा कर दी। कोई कहते हैं, कि उस युद्धमें मधुराको जीत हुई यो चोर फिर कोई त्रिवाहकुम्हो राजाको जीत बतलाते हैं। १७०० ई०में तुतकुम्होके पोमन्दाजने नायकराजके निकट सुखा जिज्ञासनेका अधिकार माग किया था। इस समय तञ्जोरके नाय भी दो एक्क बार संधय उपस्थित हुआ था, उस समय मधुरा राज महामि वृष्टोय धर्मपात्रक बुकेट (Bouchet) को मूक खातोर हुई यो। मधुरा सेनापति दनबाय मर्यापने तञ्जोरराज्यको बच्छी तरह मूटा। तञ्जोरके प्रधान मन्त्रीने रिगवत दे कर मधुराके सन्ध-मर्गको बगोभूत कर लिया। १७०१ ई०में मधुरा चोर तञ्जोरने मिल कर महिद्यराज्य पर चढ़ाई कर दी, लेकिन किसीकी हार जीत न हुई। दूसरे वर्ष दन-बाय मर्याप सेतुपतिके साथ युद्धमें परास्त चोर निहल हुए। १७०४-५ ई०में नायक-राजकुमारकी भावामिती जब मूर हुई, तब राजकार्यका कुल भार उन्हीं पर मँपा गया। सुयोग देव करपूत मन्त्रियोंने मङ्गलान पर मिथ्या दीवारीपच किए। उपप्रकृतिके नायकराजने उनकी कूटाभिपन्धि समझि बिना माहकाभीया वितामकोकी कँद कर लिया। कारागारमें मङ्गलानने भूतों रक्ष कर प्रायत्याग किया। दुष्टोंके सम विषयका रसचोके चरितने मिथ्या दीवारीपच करने पर भी मधुराको प्रजा पाज भी उन्हें माताकी तरह भागती है चोर उनकी बुद्धिजाति मान करती है। विजयराजके राजत्वकालमें महाराजप्रायनके समय (१७०८ ई०में) चोर समकें दूगरे वर्ष जो दुर्मिच पड़ा था उसमें प्रजाके कटकी सीमा न थी। यह दुर्मिच लगातार दस वर्ष तक रहा था। १७२० ई०में वदुकीहा-धि मोक्षमान सेतुपतिकी पणोमताका पालिगान करने हुए बिद्रोही हो गए। सेतुपति उनकी दमन करने गए

चोर पाप भी मारी गए। यह रामनादका विंदावन ने कर बहुत बिबाद उठा। रामनादके पणोम मिबलिङ्ग प्रदेश तञ्जोर-राज्यमूल दया चोर मिय चंग परबर्षों ने, पतिने हाथ रखा। १७३१ ई०में विजयराजकी नि-मन्ताग बयस्यमि मृत्यु हुई। उनकी विधवा रामो मोनाची देवीने मधुराका मासनमार पहच किया। उन्हींने यन्त्राद-तिरमयके पुत्रको गोद लिया। सुयोग देव कर यन्त्राद-तिरमयने मधुरा पानेकी सूच कोमिग को। उन्हींने त्रिबिनायकीमें रामोके प्राय म'हार करनेके निच पदयन्त्र रखा था, किन्तु चाया पर पानो फिर गया। १७३६ ई०में सकटरपणी गृहके अधीन मुसलमानोंने मधुरा, तञ्जोर, त्रिवाहकुम्हो पादि राज्यों पर चढ़ाई कर दी। इस समय यन्त्राद-तिरमयने सकटरपणीको रिगवत दे कर बगोभूत कर लिया चोर समकें द्वारा पणनेको राजा घोषित कराया। इस पर रामो; बहुत हर गई चोर प्रभूत पणें द्वारा चांदनाहबको पणो; मुद्रामें कर लिया। यह यन्त्राद-तिरमय त्रिबिनायकोको दोड़ कर मधुराको चोर भाग गए। चांदनाहब भी पण दिव, किन्तु १७३६ ई०में वे फिर त्रिबिनायकीमें पा कर उठ गए। रामो मोनाची सन्धूत रूपमें चांदनाहबके पणोम हो गई। चांदनाहब-ने यन्त्राद-तिरमयके बिद्वद धना भेजो। यन्त्राद युद्धमें परास्त हुए चोर मिगवद प्रदेशको भाग गए। पणो चांदनाहब की मधुराका विंदावन अधिकार कर बैठे। रामो मोनाचीने हुताग हो कर पाजहाया कर काकी। इस प्रकार नायकराजका; मिय हुआ। नायका (हिं० छो०) १ येशाकी मा। २ कुटमो, दूतो। नायकामि (चं० पु०) नायकस्य पथिप; १. तत्पु। त्वप, राजा। नायकी (चं० पु०) एक रागका नाम। नायकोका; दूता (हिं० पु०) एक राग जिसमें सब कोयल-पर मरते हैं। नायकोप्रकार (हिं० पु०) सन्धूत लातिका एक राग। इसमें सब शब्द सर लगते हैं। नाय कोट (नयाकोट)—नेवासेके पन्नामें एक जिला चोर गया। यह काटमण्ड से १० मील दक्षिण-पन्नामें बिस्मय है। नगर एक जिलेके कस्बामास्में रहा हुआ है। यह

होने के साथ यह होने के पहले तक वस्तुमान शब्दों की
बात में दो मराहोटी हैं। एही से। पहाड़ के ऊपर चरवाहा
होने के कारण यहाँ पोर १५ स्थान में यह स्थान बहुत
अच्छा है। मराहोटी का समान वस्त्र समयाद् विमुक्त-मा
है। इसके दो पोर मरी यों तीसरे पोर पहाड़
है। यह स्थान देखते कालिंद तक अत्यन्त चमत्कृत
कर रहता है। इस समय मनेरिया का प्रकोप बहुत
देख जाता है। यहाँ के जङ्गल में तरह तरह के पेड़ पाये
जाते हैं। बाबूतोय, नैवार बादि आदि यहाँ बाम
करते हैं।

भाष्य—कीचोनको उत्तारमनिवासी यह आति जो वस्तु-
मान समय में उत्कृष्ट माने जाती है।

भाष्य—मानिम्—निरूपित के दरमो नामक स्थान में १०
मील उत्तर-पश्चिम में अवस्थित एक ग्राम। इसके पूर्व में
एक पहाड़ है जिसमें १५१८ समान्ती लकी एक
मिणालिपि देखने में आती है।

नायक (हिं० पु०) बैराग्य।

नायक (हिं० स्त्री०) नायिका का काम करनेवाली स्त्री,
आईकी स्त्री।

नायक (च० पु०) १ किमीको चोरने काम करनेवाला,
किमीके कामकी देण-रख करनेवाला, मुनीक, सुत्तार।
२ मजदूर, मजदारी।

नायकी (च० स्त्री०) १ नायिका का काम। २ नायिका
पद।

नायक—१ दासिपत्यकी प्रसिद्ध घोड़ाजाति। नायक देखो।
२ घोड़ा नायक।

नायिका (च० स्त्री०) गयति या गो-वृत्त, टाय, चत-
रत्न। १ दुर्गाप्रति, दुर्गादेवीकी पाठ शक्तियोंका नाम
चतुर्नायिका है। इस चतुर्नायिकाका यदाविधान पूजन
करना होता है।

“उत्तरेष्टानिह-देवता दानता परीक्षयेत्॥

उपवर्गा प्रवर्गाश्च भगवोर्भा अन्तर्नायिकाश्च॥

अन्तर्नायिकाश्च भगवोर्भा अन्तर्नायिकाश्च॥

पञ्चोपरि शृङ्गा शिरसाश्च देवताः॥”

(सप्तमः प्रश्नः ६१ अ०)

जो सुत्तारमका दानमन्त्र की पणवा हिमो काय, नाटक
पाटिमें जिसके चरित्रका वर्णन हो। नायिका तीन
प्रकारकी है—स्रोवा, चरकोवा चोर सामान्यनित।
नायिका सुत्तारमकी आधारभूत है। जो सामान्य
विषयों में अत्यन्त चमत्कृत रहती है उसका नाम स्रोवा है।
यह स्रोवा कि तीन प्रकारकी है—सुधा, मया चोर
प्रगल्भा।

भाष्य—यद्यपि नायिकाका विषय इस प्रकार लिया
है। प्रगल्भा नायिका तीन प्रकारकी है, स्रोवा, मया
चोर साधारण। भाष्यकर्ता जो सब साधारण गुण निवे-
दित हैं, नायिका के भी वे ही सब गुण रहते हैं। इनमें
जो विषय चोर सरलतादिगुणा तथा पतिव्रता चोर
सर्वदा चरित्रार्थ में निरत रहती है, उसे स्रोवा-नायिका
कहते हैं। यह स्रोवा-नायिका सुधा, मया चोर प्रगल्भा-
के भेदों में तीन प्रकारकी है। प्रगल्भातीव-योग्यता,
मदनविकारवती, रतिविषय में प्रतिज्ञा, पति के प्रति
मानविषय में मृदु चोर पावना लज्जावती की सुधा-नायिका
कहते हैं। विधित सुरतगुणा चोर जिसका योग्य तथा
मदन प्रवृत्त हुआ हो, जो वास्तव रूप में प्रगल्भा चोर मध्यम
लज्जावती भी उसे मया कहते हैं। समस्त रतिकार्य में
कुम्भ, कामाख्या, मादुतावत्, प्रगल्भा, भावोक्त चोर
चरित्रगुणों से होने के लिये प्रगल्भा नायिका कहते हैं।
किर मया चोर मोड़ाके, धारा, चोरा चोर धोराधोरा से
तीन भेद किये गये हैं। प्रिय में पर-रतो-समागम के बिना
देह धर्म सहित सादर होय प्रकट करनेवाली स्त्री की
धोरा, प्रत्यक्ष कीय करनेवाली स्त्री को चोरा तथा कुछ
गुण चोर कुछ प्रकट कीय करनेवाली स्त्री को धोराधोरा
कहते हैं। धोरा नायिका देखो।

चरकोवा नायिका मोड़ा चोर लज्जाका यह दो प्रकार-
की है। उत्तवादिमें लिखा, कुलटा चोर लज्जाविहीन-
की मोड़ा नायिका चोर विषय विवाद नहीं हुआ हो,
जो मयावती चोर लज्जावती ही उसे लज्जा कहते हैं।

स्रोवा, लज्जाप्रदता चोर मया होने में उसे सामान्य
नायिका कहते हैं। यह सामान्य नायिका त्रिगुणों में दोष
नहीं रहती चोर न अधिक गुणों चमत्कृत हो रहती है।
यह केवल विषयमात्रका चरकोवा कर बाह्य में केवल

२ सुत्तारमादमन्त्र-विषयक भाष्य, नायिका, चोर, स्त्री

दिखानाती है : विसृष्टाद्य होने पर पुष्टको घरसे बाहर निकाल देती है। तत्पर, घण्टक, मूर्ध, सुखमात्रक, निमनेशन मांगने पर तुरत मिल जाय, निम्नो पोर हृदयकाम ये मय मनुष्य प्रायः इसके दिख कोते है। यह नायिका मदनप्राप्ता पोर कहीं कहीं मयापुराणि कोती है। यह चाहे रत्ना हो या विरहा, हमने रति-मुलभ है। हमने भी फिर ८ भेट कहे गए है, यथा—साधीनभट्टका, सपिता, अभिसारिका, कलहात्मिका, विमलम्बा, प्रीतिभट्टका, वासकसम्पा पोर विरही-लपिता।

कामा रतिके मुखसे पाकट हो कर जिसका माथ परियाग नहीं करना पोर जो विविध विभ्रमागता है उसे स्वाधीनभट्टका कहते है।

प्रिय पश्यमभोगिष्ठित हो कर जिससे पायमें पागमन करे पोर जो ईर्ष्याकषायिता हो उसे सङ्किता-नायिका कहते है। जो मयमयन-वदा हो कर कामको अभिसार करावे या स्वयं अभिसार करे उसे अभिसारिका कहते है। चेत, मकान, भग्न देवालय, दूतीगृह, वन, जलमय, नदी प्रभृतिके तट पोर पञ्चकार स्थान, ये हो पाठ अभिसार करानेके स्थान माने गये है।

जो क्रोधपूर्वक पाटुकार प्रायनायकी परित्याग कर दूसरेमें सलत रहती है उसे कलहात्मिका नायिका कहते है।

प्रिय मन्दोस्थानका निर्देश कर पोछे कम स्थान पर नहीं जाता पोर हम कारण जो विमय पवमानिता कोती है उसे प्रीतिभट्टका-नायिका कहते है।

जो विमये समागत होगा, ऐसा काम पवने समरे तथा घटनको मजाली है उसे तामकसम्पा कहते है।

जिसके प्रियका पाना नियत या सङ्किन किसी कारण-वश यह न पा सका, उस विरहातुराकी कल्लपिता-नायिका कहते है। इत्यादि नामा प्रकार नायिकाके भेद है, विस्तार हो जानेके भयसे कुछ नहीं लिखे गये।

हम अब नायिकोंके पञ्चाईस वर्णन चलहार है। हमने भाव, हाव पोर चेला ये तीन पञ्चन। मोभा, कान्ति, दोमि, माधुर्य, प्रकृता, चोदार्थ पोर चयं ये ० पञ्चभिद है। लीला, विलास, विविक्ति, विमेषाक, विज्जिदिन, माहावित, कुहमित, विभ्रम, कलिन, मट, विह्वल, तपन, मोक्ष, विवेक, कुह्वन, हसित, चकित पोर कैलि ये पञ्चाईस प्रकारके चलहार समापन कहलाने है।

विह्वल, तपन, मोक्ष, विवेक, कुह्वन, हसित, चकित पोर कैलि ये पञ्चाईस प्रकारके चलहार समापन कहलाने है।

निर्विकार चित्तमें प्रथम विविधाज्ञा नाम भाव है। अभिमत नायकको देख कर नायिकाके हृदयमें पड़ने भाव उपस्थित होता है। भूनेत्यादि विचार द्वारा मन्थीमेच्छा प्रकाश पोर यदि पश्य परिमाणमें विकार कथित हो, तो उसे हाव। जिस समय नायिकाके पश्यना विकार कथित हो, उसे चेला। इस पोर दोषनयगतः जो मोन्दर्य है एवं मोहादि द्वारा जो पञ्चभूषण है उसे मोभा कहते है।

मदनवर्धित व्युत्क्रा नाम कामित पोर प्रतिविस्तीर्णा कामिका नाम दोमि है। ममो पवस्थानि मधुरताको समचोयता कहते है। भयगुण का नाम मागकम्भ, भयटा विनयका नाम चोदार्थ पोर पालसाचारहित पश्यना मनोवृत्तिका नाम चयं है। चक्र, पैग, चलहार, प्रेमवाच्य पादि द्वारा प्रियका पशुकरण करनेमें उसे शोभा कहते है। प्रियमन्दोनादिके निचे यान, स्थान-पामन पादिके वैचित्राकरवका नाम विलास, कान्ति-हवि कोती है ऐसी चलहारवका का नाम विविक्ति, पश्यनामवधमतः प्रियवस्तुमें चलादरका नाम विमेषाक, प्रियजनके सङ्गमादि हर्षजनित हाव, पनपुलोदन, भग्न, मान, श्रम, पादिके सङ्क्षिप्तनका नाम विज्जिदिन, प्रिया-यत्नचित्तमे प्रियतमको कया पादिमें कण्ठेकल्पनादिका नाम मोहावित, प्रियतमसे वैय, मान पोर पछादिसे तुल्यमे मर्याक पोर हृत्तादिका जो कम्प कोती है। कमका नाम कुहमित, प्रियतमके पागमन पर पकाममें चलहार धारवका नाम विभ्रम है। सुकुमारता-वमतः पञ्चविवेकको कथित। दोषनकाशमें गर्वकात विकारको मट। दोसने समय मज्जावमतः पश्यनको विह्वल। प्रियविह्वलमें कण्ठविकारचेष्टिको तपन। कामो हर्ष वस्तुको पनमान वतना कर प्रियतमसे पूजन-को मोक्ष। प्रियतमके समीप भूपर्यो चरचरना, प्रियतमके प्रति निरोधक पोर मन्द मन्द रहस्यानयको विवेक। समचीन वस्तु देख कर पश्यनाको कुह्वन। दोषनकादज्ञान निरर्थक हावको हसित। विवेक

दिखाना तो है : विप्लवका होने पर मुख्यको घरसे बाहर निकाल देनेो है। तख्तर, पन्थक, मुख, सुषमाप्रथम, त्रिमये धन भागने पर तुलत मिल जाय, जिन्ही पोर हथकाम ये सब मनुष्य प्रायः इसके विष्य होते हैं। यह भाषिका मदनप्रायः पोर कहीं कहीं मायापुराणियो होती है। यह बाड़े रखा हो वा विरक्षा, इसमें रति-मुलभ है। इसके ओ फिर न भेट कहे गए हैं, यथा—
स्वाधीनभट्टका, खण्डिता, अभिमारिका, कसहानारिता, विषमभा, प्रोषितभट्टका, वासकसजा पोर विरहो-ल्लपिता।

काना रतिके गुणसे पाछट हो कर जिसका माय परिचाग नहो करता पोर ओ विविध विभ्रमामन्ता है उसे स्वाधीनभट्टका कहते हैं।

प्रिय पन्थसम्भोगविहित हो कर जिससे पाछमें पागमन करे पोर ओ ईर्ष्यापायिता हो उसे लुण्ठिता-भाषिका कहते हैं। ओ मन्थयवर्षेदा हो कर कानाकी अभिमार करावे वा स्वयं अभिसर करे उसे अभिसारिका कहते हैं। चेत, मजान, भय देनालय, दूतोयद, वन, मगधान, नदो प्रभृतिके तट पोर पन्थकार स्थान, ये हो पाछ अभिसार कारनिके स्थान माने गये हैं।

ओ क्रोधपूर्वक पाछकार प्रापनायको परित्याग कर दूसरेमें सन्तन रहती है उसे कसहानारिता भाषिका कहते हैं।

प्रिय सहनस्थानका निर्देश कर पोछे उस स्थान पर नहीं जाता पोर इस कारण ओ विषेय अवमानिता होती है उसे प्रोषितभट्टका भाषिका कहते हैं।

ओ प्रियसे समागत योगा, येना जान अपने कमरे तथा बदनको सजाने के उसे वासकसजा कहते हैं। जिसके प्रियका जाना नियय वा सेखिन किसी कारण-वश वह न वा सका, उस विरहातुराको लल्लुठिता-भाषिका कहते हैं। इत्यादि नामा प्रकार भाषिकाके भेद हैं, विस्तार हो जानिके भयसे कुछ नहीं लिखे गये।

इस पद्य भाषिकीके पद्यांश सत्त्वज सत्त्वहार हैं। इसमें भाव, हाव पोर चेना ये तीन पद्यज : शोभा, कान्ति, दोहि, माधुर्य, प्रगल्भता, पोदार्थ पोर चैय ये ७ पद्यकर्म हैं। शोभा, विनाय, विच्छित्ति, विषेयान, किमकिञ्चित्, माहावित, कुहमित, विभ्रम, कनिन, मट,

विह्वल, तगन, मोघ, विषेय, कुह्वन, हमित, चकित पोर इति ये पद्यांश प्रकारसे सप्तहार म्यमायन कहलाते हैं।

निर्विकार चित्तमें प्रथम विक्षिपाका भाव भाव है। प्रथमतः मायकको देख कर भाषिकाके दृष्टयमें पहले भाव उपस्थित होता है। भूनेमादि विकार द्वारा सम्भोगेच्छा प्रकाय पोर यदि पन्थ परिमाणमें विकार ललित हो, तो उसे हाव : जिस समय भाषिकाके पद्यना विकार ललित हो, उसे चेना। दृष्ट पोर पोषनवगतः ओ सोम्य है एवं भोगादि द्वारा ओ पद्यभूषण है उसे शोभा कहते हैं।

मदनवर्द्धन व्युत्पत्ति नाम कागित पोर पतिविश्वोपा कागित नाम टीमि है। समी अवस्थामें सभुराको रमपोयता कहते हैं। भयमृग्य नाम प्रागल्भ्य, प्रवृत्ता विनयका नाम पोदार्थ पोर चालप्राकारहित पवचला मनोवृत्तिका नाम चैय है। पद्म, धेग, पनहार, प्रेमधारा आदि द्वारा प्रियका अनुकरव करनेमें उसे कोला कहते हैं। प्रियमन्दर्गनादिके जिसे यान, स्थान-पासन आदिमें वैचित्र्यकरवका नाम विनाय, कान्ति-हृदि होती है ऐवो पनहाररचना नाम विच्छित्ति, मन्थनगववगतः प्रियवस्तुमें पनदरका नाम विषेयान, प्रियजनके सहमादि हर्षजनित हाव्य, पनपुरोहन, भग, मान, मम, आदिसे चम्पलमका नाम किमकिञ्चित्, प्रिया-यत्तिचरसे प्रियतमको कया आदिमें कर्षकण्डूनाटिका नाम मोहावित, प्रियतममें चैय, यान पोर पद्यादिके पुञ्जसे मन्थक पोर इत्यादिका ओ कर्म होता है। उसका नाम कुहमित, प्रियतमके पागमन पर पन्थानमें पनहार भारवटा नाम विभ्रम है। सुहमारता-वगतः पद्यविषयको ललित : पोषनकागमें मन्थजित विकारको मट : शोभने समय लज्जावमता पद्यजनको विह्वल : प्रियविरहमें कन्दर्पविकारपेटितको तगन, जानो दूर वस्तुको पनज्ञान चतना कर विगतमये वृद्ध-को मोघ्य : प्रियतमके समाप भूषणकी परीक्षण, प्रियतमके प्रति निरोचन पोर मन्दमन्द रचनानायकी विषेय : रमपोय मनु देख कर पोःपुष्टकी कुह्वन : पोषनवकागज्ञान निर्वर्षक हावको हमित : प्रियके

मनोऽपि सदा नारकमे भवदिव्य ही ज्ञानको चकिर
 चोर विहारकाये प्रियतमके माय कोड़ाको देखि कहते
 हैं। नायिकाओं के सब मरकत पलहार हैं। ये
 सब अनुसंगिक मुग्धा चोर कल्याणनायिकाके ज्ञानमे
 चाहिये। यथा—यह नायकके दर्शनमें ही चम्पका जन्म
 कोतो है, मिर बड़ा घर देख नहीं सकती, प्रह्व
 भावमे पचास भवक काम करते वा बहमावमे प्रियतम
 को देखते हैं। प्रियतमके बार बार पूछो ज्ञाने पर
 पयोमुगो की हर मन्द मन्द भावमे उत्तर देतो है, जिसमे
 दूसरा कोई समझी सोलोकी सुन न सके, इस पर भी
 विनये प्रमाण रहती है।

सब प्रकारकी नायिकाके ये सब अनुसंगिक ज्ञानमें
 चाहिये। यथा—ये प्रियतमके पास रहनेमें बहमान
 समझती है, प्रियतमके विभोजनप्रसंग पर बिना चन्दू ता
 दृष्ट नहीं चलती। कोई कोई यथापरिधान चयवा
 र्थमभ्युक्त बहाने हादुम, प्लान चोर नाभि दिखातो
 है, प्रियतमके श्रुतीकी समीभूत चोर चन्दूके प्रति चम्पका
 मन्त्राण करती है। ये सबियोंके निकट प्रियतमका सुख-
 कोचन चोर प्रियको चपला चल दिया करती है। प्रिय-
 तमके भी ज्ञाने पर पाप कोतो है। प्रियके सुख पर
 सुगो चोर दुःख पर दुःखो। प्रियको दूरमें देखनेमें भी
 उत्तरे दृष्टिपर चम्पका, प्रियतमके सामने कामावेश-
 के माय चालाप, प्रियतमकी किसी बात पर हास्य करके
 कर्कशपूयन, विगमन, चोर मोचन, कल्याणवादिकी
 पुष्पन, सबीके कपान पर तिलक, पादाङ्गुल दारा मुमि-
 मिलन, प्रियतमके प्रति मकटाच निरीचक, सकोय
 पथरदर्शन, मुगकी नीचे किये दिये माय वाक्तालाप,
 प्रियतम कहा रहता है, कहाँ कोई बहाना कर बार बार
 जाना, प्रियके कोई वस्तु देने पर उसे चन्दूमें लगा कर
 बार बार निरीचक, प्रिय-ममानमें चलिहटा, विरहमें
 मयिना चोर लगा, प्रियचरित्रमें बहमान, निद्रिता को
 पर चण्डाईपरिवर्तन, मरुटा चमुरक, भय चोर
 मधुरासकचन। इनमें गवोड़ा चम्पका लज्जावती,
 मध्यमा मध्यमजला चोर परकीया नायिका लज्जावती
 कोतो है। नायिकाके ये सभी सब अनुसंगिक सब
 बातके मय है। (चरितरं ३ ४६०)

नायिकापूव (सं० स्त्री०) पूर्वापिधिर। यह चौर
 मय, मध्यम चोर कहते मेदये तीन प्रकारकी है।

प्रथम नायिकापूव—प्रथमच प्रथमके चेतु मोना,
 त्रिकट, प्रथम दो मोना, मध्यम एक मोना, पारद पाप
 मोना इन सबको प्रथम चर भनोमाति योगमें है। माता
 एक मायामे ले कर पाया मोना तक को मकनी है। यह
 पूव चमिठविकारक चोर परकीरोमनामक है।

मध्यम नायिकापूव—पूर्वार्ध चोपथे परिमाणके मुना
 कोनेमें यह नायिकापूव होता है। इसमें जेहन करनेमें
 मात, पिता, कक, बतोंमार, यहवी, काम, म्याम, गुन
 चर, जोडा चोर चाममात पादि रोग जानि रहते है।

हृदवायिकापूव—चितामुल, गिकमा, त्रिकट,
 विह्व, हरिद्रा, भिलावा, यमानो, दिह्व, पचमभन,
 बज्जल, पच, कुट, मोया, चम्प, मयक, ययचार, नायि-
 चार, मोहागा, बनचमानो, पारद चोर मन्त्रविषकी
 मकनी बापर बराबर भाग ले कर चन्दू तरह योगमें
 है। इसको गोली ययादीय मामांमें सेवन करनी
 चाहिये।

नार (सं० स्त्री०) नाराची समुद्र, नर-पच। १ नर-
 समुद्र, समुद्रकी भोड़। २ ययाजात गोवक, तुलका
 लमा दूधा नायका बहका। ३ जन, पानो। ४ यष्टो,
 गीत। (श्रि०) ५ नरगम्यो, समुद्रप्रम्यो। ६ पर-
 माचारम्यो।

नार (सं० स्त्री०) १ घोवा, गरदन, गमा। २ लुनाई-
 की ठरकी, गाल। ३ नासा। ४ बहन मोटा रथा। ५
 तुलकी छोरी जिसे जिणें चाँचरा कहता है चयवा कहें
 कहें धोतोको चुनन बाँधते हैं, नारा, मामा। ६ दूधा
 ओड़नेकी रथो या मलमा। ७ चरनेके दिने ज्ञानेयमें
 योगायोग कृष्ट।

नार—बम्बई प्रदेशमें बड़ोदा राज्यके चम्पामे पेटमर
 मरुभूमिका एक नगर। यह चम्पा २२° २८' उ० चौर
 देगा० ७२° ४५' पू० के मध्य परमणित है। यहाँ चम्पानो
 विद्यालय चोर दो धर्म मानाये हैं।

नारक (सं० पु०) नरक एक प्रकाशितपू। १ नरक।
 २ नरकक प्राची, नरकमें रहनेवाला जीव।

नारिकेल (मं० त्रि०) नरको भोजनयाश्चक्येति नरक-
रतिः । नरकभोगो, नरक भोजनेवासा, नरकमें जाने-योग्य
कर्म करनेवाला ।

नारिकेल (मं० पु०) १ पत्रनारिकेल, एक प्रकारका खोड़ा ।
२ पत्रनारिकेलविहता, किसीको धारा दे कर निराम
करनेवाला पथम मनुष्य ।

नारिकेल (मं० क्षो०) नारिकेल, नारिकेल ।

नारिकेल (मं० क्षो०) नृपातिरिति नृ-मये साक्ष्यकादङ्ग-
धातोर्द्विषः । १ नरार्ज, नारिकेल । २ पिप्पलीरसः । ३
यमज प्राची । ४ विट । ५ फलतुल्यमिव, नारिकेल ।
पर्याय—नारिकेल, सरस, स्वर्गस्थ, ऐरावत, वल्लभाय,
योगारज, योगेश्वर, सरस, गन्धर्व, गन्धर्व, वरिष्ठ ।
इसका गुण—मधुर, कष, रुच, रोचन, वात,
पित्त, क्षय, शूल और अमनासक, वसकर तथा रुचि-
कर है ।

इसके केसरका गुण—पायक, ईश्वरप्रद, वल्लभाय,
वातनाशक और रुचिकर ।

नारिकेली (मं० क्षो०) नारिकेली । नारिकेली ।
नारिकेली । प्रसूत प्रजाती—नारिकेली मन्त्राको चोर्म
तल कर सममें गुहका रस छान देते हैं । पीछे पल हो
जाने पर उसे छतारते हैं । बाद ठंडा हो जाने पर सममें
पहेल दूध मिश्रित करनेसे नारिकेलीरस बनती है ।
इसमें कर्पूरादि छान कर इसे सुगन्धित करते हैं । इसका
गुण विष्टको, वायु और पित्तनाशक तथा गुहका है ।
नारिकेली (मं० क्षो०) १ नारिकेली जातिका एक मन्त्राका
पेड़ । इसमें मोटे सुगन्धित और रसोत्पन्न फल लगते हैं ।
२ नारिकेली हिनकेका-सा रस, मोलापन लिए हुए जल
रंग । (त्रि०) ३ मोलापन लिए हुए जल रंगका ।

विशेष विवरण नारिकेली के हैं ।
नारिकेली—गुजरातमात्रो एक जाति । इस कोनोंका
कहना है, कि जब पञ्चांगनाम १२ वर्ष मलवास रित्त
कर एक वर्ष पञ्चांगनामके लिए बचनेमें दिष्ट हुए थे,
उस समय ठूँड़ निकालनेके उद्देश्यसे कोरकोंन नारों
पौर नारोंके प्रति उपद्रव पारक कर दिया था । इसी
समय कर्ष कोरकोंनो महायत्नाके लिए जगतमें प्रधान
नो-पौर जाति को हिन्दुत्वमें लाए । उस समय

काठो जाति मात येद्विषमें विभक्त हो । यथा—पठनर,
पाण्डवा, नारिकेल, नारा, माधुरिया, कोरिया और
गिरिगुनिया । ये सोम वर्षमान काठो जातिमें
पादिपुरुष हैं । वर्षमान काठो लोग उस मात
सम्प्रदायोंके साथ मन्त्रिपथके उत्पन्न हैं । इनका कहना
है, कि इनके पादिपुरुषोंने कोरकोंनके साथ मिल कर
विशालको गायोंका दूध दिया और कोरकोंनो पराजय-
के बाद चम्पसन्दी किनारे मानव नामक स्थानमें था
कर बस गए । कोरकोंन कहते हैं, कि सूर्यवंशीय राजा
सुतकेतुने जब पयोध्या नगरीसे था कर मानवमें माण्डव-
गढ़ राज्य बनाया, उस समय वे ही उस मात काठो
सम्प्रदायोंको अपने साथ लाए थे । पीछे वे लोग मोरार
देवमें फैल गए और इस जातिके वासके कारण वे मोरार
'काठियावाड़' नामसे प्रसिद्ध हुए । जलमें इन लोगोंने
सुतकेतुने समोप पावगढ़ नामक राज्य स्थापित किया ।
एक वर्ष इस राज्यमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा । पाटगढ़ मन्त्र-
दायक नेता विद्याम अपने सम्प्रदायको तथा चम्पस
काठोजातिको साथ ले बरोड़ा पड़ा पर चले गये । पीछे
विद्याम काठवाड़ नामक स्थानमें था कर पड़ेसे रहने
लगे । इसा-चम्पारदोके राजा धनवान्को पुत्र पैदाबनमी-
ने विद्यामको कन्या रूपान्तरीके रूप पर मोहित हो
उससे विवाह कर लिया और पाप जाति-जातिभुक्त हो
गये । वे सूर्यवंशीय थे, इस कारण सभी काठो लोग
उन्हें अपना प्रधान मानने लगे । जलः वे बरोड़ा पड़ा
पर जा समस्त जातियोंका प्राधान्य ग्रहण कर डोह
नामक स्थानमें निवास पर बैठे । उनके तीन पुत्र
पौर एक जन्मा थे । 'नरको मृगुदे बाद उनके बड़े
कहने वालाको निवासपर अधिकार हुए । एक परमार
राजपूतके साथ उस कन्या माण्डवार्दिका विवाह हुआ ।
यह विवाह सम्पन्न हो जबकि काठो कहमाने लगा ।
बालाकोने काठियोंके पादिम-वासस्थान पावगढ़में
था कर प्रायः ३०० को नाम अपने अधिकारमें कर लिए
पौर पाप राजा बन कर रहने लगे । इस समय
कच्छके एक विभागका राजा नामगन्तो थे जो चार-ग-
कारके मोठावोंके साथ कच्छकोने नैवारिका कर रहे थे ।
उन्होंने बालाकोने कहायता समी । बालाकोने स्वयं

सुविप्रवाहिके कारणे चोविद्या जगन्मूला हो गथा चोर बहुत समय तक ध्वंसायस्थानमें रहा । चनकार मादुन-सुत, बाजसुरमुपु चोर रामसुतने सत्ता स्थानमें पुनः बहुत-से लोगोको ला कर बसाया । साधुजाचरके चोरम चोर भक्तभारियाके गर्भसे भीय, कामय चोर भाग नामक तीन पुत्र तथा घघानी भीमकी बहतेके गर्भसे सुर, वीर, बाघ चोर भीक नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए । कामय चोर भीम मादुनामें, बाघ भैवासांमें, सुर मापुर चोबाहोमें, वीर-मनसा चोर पिदाभीमें तथा भीक चक्रमदमें जा कर रहने लगे थे । सुरके भेनो चोर नाज नामक दो पुत्र थे जो चपने पिताको मृत्यु के बाद १=३६ सम्बत्में (१००८ ई०में) चोबाहोके राजा हुए ।

नारद (सं० पु०) नार० परमात्मविषयकं ज्ञानं ददाति दा-क भयया नार० नरसमूहं द्यति धण्डयति कपटैः न चो-क, वा नार० लभं पित्रभ्यो ददाति दा-क । सनामप्यात सुनिविशेय, एक देवपि । नामनिवृत्ति—

'नारं पानीयमित्युक्तं तद्विदुः प्रहः सवान् ।

ददाति तेन ते नाम नारदति भविष्यति ॥'

(भागवत)

नारका चर्य लभ है, पित्रगणको सर्वदा जस दान देनेके कारण इनका नाम नारद पड़ा है ।

प्रायः सभी पुराणोंमें नारदका जोड़ा बहुत उल्लेख देखनेमें आता है । श्रीमद्भागवतमें इनका विवरण इस प्रकार लिखा है—

एक समय वेदव्यास चपनेको जोन समझ कर बहुत उदास हो बैठे थे । इसी बीचमें नारदमुनि वहां था पहुंचे । वेदव्यासने पाछाटि द्वारा उनका पूजन किया । तब नारदने वेदव्यासमें कहा, 'महाभारतका सर्प' तथा परब्रह्मका लक्षण जानने हुए भी तुम क्यों इस प्रकार उदास बैठे हो ?' इस पर व्यासदेव बोले, 'मैंने मन किमीसे परित्यक्त नहीं होता ।' यह सुन कर नारदने कहा, 'तुमने भगवान् का निर्मल यग वर्णन नहीं किया । इसका कारण तुम्हें ऐसा चबसाट उत्पन्न हुआ है । भगवान् का निर्मल यग वर्णन करनेसे यह चबसाट दूर हो जायगा । मैंने पूर्णलक्ष्मिविषय जाननेमें तुम्हारा यह संशय जाता रहेगा । मैं चपना पूर्व जन्मकालका कहना हूँ, ध्यान दे कर सुनो,—

मैं पूर्णलक्ष्ममें प्रयात् गतजन्ममें किमी मेदविद-ब्राह्मणको एक दामोद्रेक गर्भसे उत्पन्न हुआ था । सर्वो-काममें योगी योग चार मास तक एक माद रहते थे । उस समय मेरी माने उनको सुश्रुताके निवे सुम्नि निवृत्त किया । मैं बानचावय, झोड़ा चोर सोभादिका परिचय कर सर्वदा उनका अनुवर्षी रहता था । यद्यपि अविमदमो होते थे, तो भी मेरे प्रति उनको विवेक लगा रहती थी ।

एक दिन उनको पाछामें मैने उनका जूठा प्रसाद पाया । पानेमें जो मेरे मज्जापदूर हो गये (चित्तकी) छवि हुई चोर उनके धर्ममें मेरी दृष्टि हो गई । वे योग प्रति दिन हरिकथा गान करते थे जिसे सुननेका हमें भी सोभाय प्राप्त होता था । अस्वापूर्वक प्रति दिन हरिकीर्तन सुनते सुनते श्रोकपमें मेरा चमुराग उत्पन्न हो गया । भगवान् के प्रति श्रद्धा होनेमें दो मीरे उत्पन्न ज्ञानका उदय हो पाया । उसी ज्ञानसे प्रपञ्चानोत परब्रह्मरूप आत्मामें चपनी पविद्या द्वारा जो यह स्थान चोर उत्प-देव कथित हुई है उसे जान गया । इस प्रकार गान् चोर वर्षों इन दो परशुधर्मों सायं, प्रातः चोर मध्याह्न-कालको मन्त्रात्मा सुनिधामें हरिका निर्मलयग विगिट-रूपसे सुनते सुनते मेरे मनमें रजस्तोनागिनी दृढभक्ति उत्पन्न हुई । मैं जो इस प्रकार महिमय्य, विनयगुण, निष्पाप, अस्वात्पित चोर संयतेन्द्रिय हो उन श्रवितोकी सेवा सुश्रुता किया करता था, उससे कमलरूप जब वे सर्वविमान पर पर्यटनको निकले, तब दोनवाक्यसे गुप्तसे उन्होंने माघात् भगवत्कथन कथित गुप्त ज्ञानका उपदेश हमें दिया । उस ज्ञान द्वारा मैं छत्रिधंशारादिके विधानबर्तों भगवान् वासुदेवकी माया जानने लगा । अर्वाच्यता पूर्व लक्ष्म परब्रह्ममें जो कर्मवर्ष है, वही आध्यात्मिकादि तापत्रयको मोचक है ।

मेरे विज्ञानोपदेशक विमोके पूर्वदेग जाननेके बाद मैं निराश्रयभाजन रहने लगा । मेरी माता एकपुत्रा थी, साय साय पराधीन भी हो । सुतरां मेरे भरत-पोषकी दृष्टा रहने में, वह सुम्नि पालन करनेमें विमकुल चमय थी । उस समय मेरी चपना सेवक पांच वर्षकी थी ।

मुनिप्रवृत्ति के कारण जोविना जन्मग्रन्थ ही गया और बहुत समय तक भ्रमभावस्थिति रहा। अनन्तर साधुन-सुतु, बानसुरमुतु और राममुतुने सत्त स्थानमें पुनः बहुत-से लोगोंको सा कर बसाया। भावसाधनके पोरस और भक्तारिथिके गर्भमें भीय, कामप और भाग नामक तीन पुत्र तथा घवानी भीमकी बहलके गर्भमें सुर, वीर, भाव और भोक्त नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। कामप और भीम भाटलामें, भाव मिवासामें, सुर साधु, घोषाडोमें, वीर-समस्ता और पिमासीमें तथा भोक्त पञ्चमर्दमें जा कर रहने लगे थे। सुरके भेनो और नाज नामक दो पुत्र थे जो अपने पिताकी मृत्यु के बाद १२३६ संवत्में (१००८ ई०में) घोषाडोके राजा हुए।

मारद (सं० पु०) मार' परमात्मविषयक' ज्ञान' ददाति दा-क चयया मार' नरसमूहं दति खण्डयति कमङ्गेन चो-क, वा मार' कस' पित्रभ्यो ददाति दा-क। खगामप्यात सुनिविशिय, एक देववि'। नामनिक्षिप्त—

“नारं पानीमिदमुक्तं तस्मिन्नुभयः यदा भवान्।

ददाति तेन ते नाम मारदेति निश्चितम् ॥”

(भागवत)

मारका अर्थ जन्म है, पित्रायको भव'दा जन्म दान देनेके कारण इनका नाम मारद पड़ा है।

प्रायः सभी पुराणोंमें मारदका घोड़ा बहुत उत्कृष्ट दिखनेमें आता है। श्रीमहागवतमें इनका विवरण इस प्रकार निम्न है—

एक समय वैदव्यास स्वर्गकी चीज समझ कर बहुत छटाने लगे बैठे थे। इसी बीचमें मारदसुनि वहाँ आ पहुँचे। वैदव्यासने पाषाण द्वारा उनका पूजन किया। तब मारदने वैदव्याससे कहा, “महाभाग! तबसे तब परब्रह्मका स्वरूप जानने हुए भी तुम क्यों इस प्रकार उदास बैठे हो ?” इस पर व्यासदेव बोले, “मित्र! मन किसीमें परित्यक्त नहीं होता।” यह सुन कर मारदने कहा, “तुमने भगवान्का निर्मल यग वर्णन नहीं किया। इसका कारण तुम्हें ऐसा अवसाद उत्पन्न हुआ है। भगवान्का निर्मल यग वर्णन करनेसे यह अवसाद दूर हो जायगा।” मित्र! पूर्वजन्मविषय जाननेमें तुम्हारा यह म'भय जाता रहता। मैं अपना पूर्वजन्मवृत्तान्त कहता हूँ, ध्यान दे कर सुनो,—

मैं पूर्वजन्ममें अर्थात् गतजन्ममें किसी घेतविद-वाद्यपको एक टापीके गर्भमें उत्पन्न हुआ था। अर्थात्-कानमें योगी भोग चार मास तक एक साथ रहते थे। उस समय मेरी माने उनको सुनुवाके विषे सुम्मे निवृत्त किया। मैं धानचापण्य, छोड़ा और सोभादिका परिव्याग कर सब'दा उनका पशुवर्णो रहता था। यद्यपि अविममदार्थी होते थे, तो भी मेरे प्रति उनको विविध लपारहतो थी।

एक दिन उनकी पाशामें मैंने उनका कूँडा प्रसाद खाया। खानेमें ही मेरे मधवाप दूर हो गये। श्वितकी दृष्टि हुई और उनके धर्ममें मेरी क्षति हो गई। वे भोग प्रति दिन हरिकथा गान करते थे जिसे सुननेका हमें भी मोभाय प्राप्त होता था। यहापूर्वक प्रति दिन हरिकीर्तन सुनते सुनते ओल्लखमें मेरा अमुराग उत्पन्न हो गया। भगवान्के प्रति यहा होनेसे ही मेरे उत्पन्न ज्ञानका उदय हो पाया। उसी ज्ञानसे प्रपञ्चातीत परब्रह्मस्वरूप आत्मामें अपने अविद्या द्वारा जो एक स्थान और स्थान-देव कल्पित हुई है उसे जान गया। इस प्रकार मारु और वर्षा इन दो पशुधर्मोंमें मार', मातः और मध्याह्न-कालको महात्मा सुनिवामे हरिका निर्मल यग विमिष्ट-रूपमें सुनते सुनते मेरे मनमें राजसीनोनागिनी इदुभक्ति उत्पन्न हुई। मैं जो इस प्रकार मस्तिष्कस्थ, विनययुक्त, निष्पाप, अद्यात्म और सर्वज्ञेन्द्रिय की उन अद्वितीयकी सेवा सुनुवा किया करता था, उसके फलस्वरूप जब वे वर्षावसान पर पर्यटनकी निकसे, तब दोननाम्नरुद्धे शुभमें सर्वानि साक्षात् भगवत्स्वरूपक कविन गुण ज्ञानका उपदेश हमें दिया। उस ज्ञान द्वारा मैं अष्टदिग्'दारादिके विधानकर्ता भगवान्का सुदेवर्षी माया जानने लगा। सर्वविद्यता पूर्वक रूप परब्रह्ममें जो कर्मावयव है, वही आध्यात्मिकादि तापत्रयकी मरोपध है।

मेरे विज्ञानोपदेयक विमोह दूरदेम जानेके बाद मैं निराश्रयभावमें रहने लगा। मेरी माता पशुपता थी, साथ साथ पराधीना भी थी। दूसरा मेरे भरण-पोषणकी इच्छा रहने भी, वह सुम्मे पालन करनेमें शिक्कन समर्थ थी। उस समय मेरी अवस्था वैद्यन पाँच वर्षकी थी।

रहने थे। उसकी स्त्री क्षामिदीयसे बन्धा थी। दुमिन-
की लव इसकी बाहर आगे, तब उन्होंने ब्रह्मचर्यसे पुत्री
पादम करीनेकी उसे प्रभुमति दी। तदनुसार कलावती
अनुज्ञाता ही काश्यप मारदके निकट पहुँची और उसमें
मन्तानके लिए प्रायश्चा की। उसको बात सुन कर मुनि-
वर रागाश्रित हो बहसि चले देनेकी उद्यत हुए। इसी
समय मेलका सम राद हो कर आ रही थी। उसका
लक्ष्मण देव मुनिका रीतः स्थिति हो गया। कलावती
अनुज्ञाता थी, उसी समय वह वहाँ पहुँची और वीर्य
दा कर घर चली गई। क्षममः उस तीर्थयोगने कला-
वतीसे गर्भसे गन्धर्व उपवर्णने मनुष्य हो कर लक्ष-
प्रवृत्त किया। उस समय देगमें घनावृष्टि थी, इस कारण
उसका नाम रखा गया मारद। यह बालक दूसरे बालकी-
की प्रानदान करता था, जातिस्मर और महाप्रानो
था, इस कारण भी इसका नाम मारद पड़ा। काश्यप-
मारदके वीर्यसे ये उत्पन्न हुए थे, चतुष्टय ये भी मुनिगोत्र
वरसे मारद नामसे प्रसिद्ध हुए थे।

“मनाइष्ट्यवरोधे च कावे शलो वसू ६।

मारे दरो मरुकावे सेनायं मारदाभिः ॥

ददाति मारे शानेच बावकेन्द्राच बावकः ।

जातिस्मरो महाप्रानो सेनायं मारदाभिः ॥”

(ब्रह्मवै. ब्रह्मसं. २१ पं.)

विशेषी इन्हे ब्रह्मपुत्र जान कर विष्णुमन्त्रसे दोषित
किया। यह महाप्रानो मिय गङ्गामें धान कर विष्णु
मन्त्रका जप करने लगा। इस मन्त्रका जप करते करते
एक दिन ध्यानमें इन्होंने विष्णुकी दिभुज सुरभीकला
और चन्दनचर्चित मूर्ति देखी। इस मूर्तिकी देव
कर मारद बहुत प्रसन्न हुए। कुछ कालके बाद जब
वह मूर्ति तिरोहित हो गई, तब ये लोकसे व्याकुल हो
पड़े। इस समय देवबाणी हुई, “जब यह मन्त्र देव
मट होनी, तब तुम मारे दम्य पावोगे।” यद्यप्यस्य
किशोरीयकालमें अपने हृदयमें विष्णुका स्मरण करते
करते मारदने यह शरीर छोड़ दिया। देहावसान होने
पर मारदका शापविमोचन हुआ। जब वे फिर ब्रह्म-
विषयमें लीन हो गये। ब्रह्मज्ञे जब किरसे संसारकी
चटि हो, तब उनमें लक्ष्मणसे ये उत्पन्न हुए।

(“श्वेतेन्दुः ब्रह्मसं. २१।२२ अं.)

वराहपुराणमें लिखा है, कि पूर्व समयमें ये मारद्वन
नामक एक ब्राह्मण थे। उनके प्रधानसे कल्याणरामें से
किर ब्रह्मके पुत्र हुए। ये भगवान्के तृतीय चरितार
थे। इनके मन्त्रक पर जटाभार, परिधान वर्गधोर,
हाथमें ईमटण्ड, कमण्डलु और चतुर्था विविध कण्ठवी
वीणा थी। महाभारतके शम्भुवर्ममें लिखा है, कि
इन्होंने पदने पक्ष ब्रह्मसे कुछ गान सीखा। इन्होंने
दण्डके, स्रष्टा पुत्रीको नाम्ययोगहा उपदेष्टे कर संसार-
न्यायी बना दिया था। मारदने इन्हीं एक सूर्यस्वाय
सोव कर धोष्यको विप्राया था। बुधितिरने यह स्था
धोष्यने प्राप्त किया था।

जिसो समय मारद श्वेतदीपमें गये और वहाँ विष्णुके
निकट भाग्यहा म्रदव जाननेके निवे पापद करने लगे।
विष्णु इन्हें अपने माय ने उद्द ब्राह्मणवेगमें बेलवतो
मदोके किनारे हृदय नावक मगरमें पड़े। उस
मगरमें वीरभद्र नामक एक धनी बैराग रहता था।
विष्णु मारदके माय उसीके घर पतिवि हुए और उसको
परिचर्यामें प्रवृत्त हो, ‘तुम्हें’ धनके पुत्रगोत्रादि और
वर्गव धनवाहनादि होने’ ऐसा कर दिया। चतुस्तार
थे दोनों बहसि भागीरथातटव्य ऐनिकापात्रको जल
दिये। यहाँ एक ब्राह्मण अपने श्वेतमें इन बना रह
थे। उस दिन ये दोनों उसी ब्राह्मणके यहाँ भोजमान
हूए। ब्राह्मणने इनको अच्छी भोज-सुष्ठुया की। किन्तु
आते समय भगवान्ने उसे कहा कि, ‘कभी भी तुम्हारे
श्वेतोमें उत्पति न होगी और न तुम्हें’ कोई पुत्रपक्ष हो
होगा।’ राक्षस मारदने विष्णुसे पूछा, ‘महाशय !
ब्राह्मणोंकी ऐसा माय पापने क्या दिया ?’ इस पर
विष्णुने कहा, ‘यह माय नहीं है, वर है। एक महा-
लीको मर्यावध कर वर्ष भरमें जितना पाप कमाता
है, माह्नलकारी ब्राह्मण एक दिनमें उतना पाप मरुव
करता है। इसी कारण जिससे उसके पुत्र हो कर
पापमन्त्रव न रहे, उसका उपाय विधान में कर पाया।’
चतुस्तार थे दोनों काष्ठकुल देव पार कर किना एक
तालाबके किनारे उपस्थित हुए। वहाँ विष्णुने मारदको
स्नान करने कहा, किन्तु स्नान कर नहीं हो ये शहर
निकसे, श्वेत ही ये परम रमणीया हृदयी कोके

छन्दोहितं यो नारद उच्यते सदाय विधाता ये । नैषधेन
उपयन्तोर्के विधानं च समग्रं नारद देवमभक्तिं हूतं ये ।
इत्यादि प्रायः सभी विषयोंमें नारद विद्यमान है । इनका
स्वभाव कल्प-त्रिपु भी कहा गया है, इसीसे उधरकी
उधर मगानेवाले को "नारद" कह दिया करते हैं । वेदमें
इन्हें एक मन्त्रद्रष्टा ऋषि बताया गया है । कात्यायनकी
सर्वांगुलमिकामें लिखा है, कि ये ऋक्षमंडिताके पत्न
मन्त्रजले १३वें युग और नवम मन्त्रजले १०४वें और
१०५वें युगके ऋषि हैं ।

३ माकडोपस्य पर्यंत विधेय । १ विष्णुमित्रके एक
पुत्रका नाम । ४ प्रजापतिभेद, एक प्रजापतिका नाम ।
५ कश्यपमुनिपुत्रोक्त गन्धर्वभेद, कश्यपमुनिकी स्त्रीसे
उत्पन्न एक गन्धर्व । ६ सोमीय बौद्धोंमेंसे एक ।

नारद—नैपालके दोहाका कहना है, कि पुराणानामें चारा-
पत्नीमें कौमिकवर्गमें नारद नामक एक मनुष्य उत्पन्न
हुए थे । यही 'न्यो' धनकी उमर बढ़ती गई, न्यो-न्यो वे
समझते सगे, कि पंसारके पाससे चालाकनी जावति
किसीमें भी परित्यक्त होनेकी नहीं, इसीसे वे हिमालय-
पर्यंत पर आ कर रहने लगे थे । यहाँमें योगवशसे
उन्होंने भौतिक चटनायकोला साधन करनेकी सोचा
था । किन्तु संप्रिभाज-प्रचालोमें विधेय अभिज्ञता प्राप्त
नहीं कर सकनेके कारण इन्हें स्वयं और मानसिकी
साय से कर सकनेके विचारोंको गए । इन्हेंकी कथा
हिरी नारदके प्रेमपात्रमें कर्म गई थी । वे लोग नारद-
की बुद्ध और हिरीकी बुद्धकी को यशोधरा मानते हैं ।

(महाहरहरवदन)

नारद—पञ्चालके राजघाटी डिलीकी नील भिन्न भिन्न
भद्विर्गोत्र नाम । इनमेंसे पहली गरी रामपुर-बोधावधिसे
हुए दूरमें गङ्गासे निकल कर पुटियाई निकल मूसा नदी
मिलती है और दूसरी मूसा नदीसे निकल कर नाटोके
सम्ब होती हुई पूर्वकी ओर चली गई है । इसकी एक
प्रधान शाखा नारद नाम धारण कर दक्षिणकी ओर बहती
है । दूसरी नारदगदीमें वर्ष भर नाथ जाती पाती है ।

नारदकुण्ड—उन्हावनसिक्त कोला-बोवनविधेय । देह गोत्र-
इनके सविहित सुगल सरोवरके पास है । यहाँ नारदने
स्नान करके प्रतिपादन किया था, इसीसे इसका नाम

नारदकुण्ड पड़ा है । (मधुप्रान, श्रीपुराणवर्णना)
नारदपञ्चरात्र (वं० स्त्री०) नारदकृत पञ्चरात्रमन्त्रभेद ।
इसमें पाँच विषय प्रतिपादित हुए हैं—चर्ममन्त्र, महा-
दान, इत्यादि, स्वाध्याय और योग । यही पाँच प्रकारकी
उपासना है । देवतास्नान-मात्रेणादि द्वारा मन्त्रार्चकी
चर्ममन्त्र, गन्धपुष्पादि द्वारा पूजा करनेकी उपदान,
देवतापूजाको इत्यादि, चर्मांगुलमन्त्रानुवर्क मन्त्रजपको
स्वाध्याय और चर्मांगुलमन्त्रानुवर्क मन्त्रजप, स्तोत्रपाठ,
नामकीर्तन और तत्त्वप्रतिपादक माध्याभ्यासकी प्रयोग
कहते हैं । यही पाँच विषय नारदपञ्चरात्रके प्रधान वर्ण-
नीय विषय हैं ।

नारदपुराण (वं० स्त्री०) महापुराणभेद, चत्वारण महा-
पुराणोंमेंसे एक । महासुनि वेदव्यास इस पुराणके १४
विता हैं । इसमें महाकाटिमें नारदकी मन्त्रोपग करके
कथा कहो है और उपदेश दिया है, इसीसे इसका नाम
नारदपुराण पड़ा है । इस पुराणके प्रतिपाद्य विषय हृद-
यारदीय पुराणके ८६ अध्यायोंमें इस प्रकार लिखे हैं,—
यह पुराण पूर्व और उत्तर दो भागोंमें विभक्त है । इसमें
श्लोकसंख्या २५००० प्रकार है । पूर्वभाग चार पादों-
में विभक्त है, जिनमेंसे प्रथम पादमें सुशोभन-सम्पाद,
सृष्टिका मन्त्रवर्चन और नामा प्रकारकी धर्म-प्रकाश
वर्चित है । द्वितीय पादके मोक्षधर्म-कदममें मोक्षोपाय-
निर्णय, वेदाङ्गव्यय, मनस्सुन कर्तव्य नारदके प्रति
शुक्रोत्पत्तिवचन, महातन्त्रमें पञ्चमगविमोचन, मन्त्र-
शोधन, दोषा, मन्त्रोच्चार, पूजाप्रयोग, कवच, विष्णुके
सहस्रनाम और स्तोत्र, मन्त्र, स्तोत्र, विष्णु, शिव और
शक्ति का समग्र उपाध्याय-वचन ; तृतीयपादमें नारद
और महाकुमार-संवाद, पुराण-वचन-प्रमाण, दानदान-
वचन और चेलादि मायकी प्रतिपत्तिदि निद्रिका प्रत्य-
विस्तार वचन और चतुर्थपादमें सनातन कर्तव्य नारदके
प्रति हृदयास्नान-वचन मन्त्र-कृत्यमें वर्चित है । उत्तर
भागमें एकादशीमन्त्रविष्णु कृत, समिद्ध और मायादा-
का मन्त्राद, ब्रह्माङ्गकी कथा, मोहिनीके उत्पत्ति और
मन्त्राद, मोहिनीके प्रति बहुधा माय और उत्तर, महा-
की पुत्रकथा, गदादाता, कालोमाहात्म्य, पुरुषोत्तम-
माहात्म्य और सेतुवाता तथा अथात्म्य धर्म-वचन ।

सुवपरायं जिममें आसिंह पयतारही कया ६।

•परमिहपुराण देखो ।

२ गरमि'ङ्-इयधारी-विष्णु । तैत्तिरीय ब्राह्मणमें
इसकी गायत्री वम प्रकार लिखी है—

“वन्देनत्वाय विष्णवे दीक्षन्द्वाय श्रीमहि ।

तन्मो नासिद्धिः प्रपोदयात् ॥” (तैत्तिरीय आ० १०।१।७)

३ तन्त्रभेद, एक तन्त्रका नाम ।

નારસિંહ—મોદિગોદેવતામજા વૈશ્વંસુનિગોવ્રજ એક રાજા । જનકે પિતાશ્વ નામ ઓપાત યા ।

(समादिष्ट-१।२२।२३०)

भारमि'ङ—१९वीं शीर १०वीं प्रताप्येमिं विजयनगर
राज्य हकी नामये पुकारा जाता था। उन समयको
मित्री हुई कारको, पोत्तुगोज शीर चङ्गरी पादि
पुस्तकीमिं विजयनगर-राज्यका भारमि'ङ नाम देयनेमिं
पाता है। १९४१ ई०मिं हारसमुद्रके बलानवशके
अधःपतन कोने पर विजयनगरको राजाकोने यह राज्य
बसाया। १४८० ई०मिं विजयनगरका राज्य'ग लव
'विपुल हो गया, तब भरमि'ङ नामक एक तैल
राजकुमार राज्यामिपित्त हुए। १५०८ ई० तक ये
यहां राज्य करते रहे। अन्ते के नाम पर यह राज्य
'भारमि'ङ' नामये प्रसिद्ध हुआ था।

नारसिंहवपुसः (सं० पु०) नरसिंहद्वयी विष्णु ।

नारसिंही (ङि० वि०) नारसिंहमय्यभ्यो ।

भाषा (च० पद्यो०) मरस्य सुनिर्य, मर-घञ्, (तस्येदम्
पा ४।१।२२०) ततश्चाप, । जम, यामो ।

“आपो आरा इति श्रोत्वा आपो ये नरशुनवः ॥”

(मनु० १११०)

इस लोककी टीकामें कुछ महाने 'नारा' शब्दकी
 व्याख्याको जगह ऐसा निपा है, नर-पक्ष, लक्षके बाद
 टाप, करके 'नारा' शब्द हुआ है, पक्ष, प्रत्यय करके
 टाप, न हो कर होय, होता है, यह आधारबन्धि है ।
 यहाँ पर ऐसा होमेसे 'नारा' न हो कर नारी ऐसा पद
 होना चाहिये । किन्तु पद-चोर 'स्मृति'के प्रयोगमें
 विकृतमे एक पक्षमें टाप, हो कर नारा पद-निर्ग हुआ ।

मारा (वि० पु०) १ कुटुम्बपुत्र, मातृ रंगा कृपा पुत्र
जो पुरुषमते दिवताओंको बड़ाया जाता है, मीमी।

२. सुनकी डोरी जिसमें निराला बांधा है वह होती है पयसा
कहीं कहीं धोती की तुलना बांधती है, हजारों, भीषी ।

३ वह स्त्री जो अपने भ्रूमि बंधी रहती है । ४ हटिका
अथ यज्ञिका प्राकृतिक मार्ग, छोटी मटा ।

મારાપ (મં. પુ.) નારે અરમ્મહમાપામતાતિ સમુ-
ષદને હ. (અરુદધિય રાગે । વા ૧૨।૨.૧) ૧ મકમ
પ્રકાર બોદમય વાપ, સહ તોર બો મામ બોદકા હો ।
પર્યાય—પ્રણેહન, બોદનાન ।

त्रिपदायका सर्वाङ्ग मोहदा होता है, समोका नाम माराध है। मरमें पार पड़ गने रहने है पोर माराधमें पाव। ये पांव मरवागमें कुछ मोटे पोर सफे होते हैं। माराधवायका जमाता बहुत कठिन है। २ दुर्दिन, ऐसा दिन जिसमें वादन विरा हो, पं'धु जसे तया हमो प्रकारके पोर सपन्न हो। ३ हृष्टीरिगद, एक वर्ष-हमका नाम। हमके प्रत्येक चरणमें दो नगद पोर पार रगव होते हैं। हमें 'महामानिनी' पोर तारका भी कहते हैं। ४ बोधोम मादापो'का एक हृष्ट।

नारायणतः सः (जी०) १ हस्तापधर्मः, वेदाङ्गं एतत् हस्त
जो घोर्म चातेको अङ्क, चिकला, भटकटैया, बागबिकला,
गुहरका दूध, निसोयको अङ्क पादि पका कर बनाया
जाता है। प्रतिदिन दो तोना भोजन करनेसे लाभ,
गुल्म, श्लेष्मा, उदासता, चर्म, पक्ष पादि रोग प्राते
रहते हैं। इसका चतुर्गुण लघ्वजन, हस्तयुग्म वयागू
धीर जङ्गलोर्मापका मिराया है।

पञ्चादिषु—हस्त एक मेर, कल्पादं चौराका दूध,
दत्तोन्मूल, त्रिकला, त्रिकल, भट्टकट्टेया, त्रिषोध्य, पौनिकी
जगु प्रत्येक १ तोला ४ माया २ रत्नो । व्याहार माया
१ तोला पौनिकी पञ्चादिषु उच्यते । इमं विषय मरनेने
सदामय पञ्चादी को ज्ञाता है ।

३ शहररोगका हृत्तोषधभेद । प्रसृत प्रमाणो—
 हृत ७४ शेर, कष्टार्थ स्नेह, चोतामूल, चंद, विडङ्ग,
 सिक्ता, निमोष, चर्मोष, सिक्कट, वनप्रमाण, हरिद्रा,
 दाहहरिद्रा, दन्तोमूल प्रत्येक दो तोला, गोमूत्र ७१ शेर,
 गृहरक्षा दूध ७ घनः जल ११ शेर । इस हृतका
 हृत्तकारणहृत कहते हैं । इसके भक्षण शरभेद हृत्तः
 भीर आसमात पादि रोग बहुत जल्द नष्ट हो जाते हैं ।

दुपा है, कि नारायण ही पाकाय सत्य है ।

“आत्मन आकारः सम्भवः” (श्रुति) ।

नर आत्मा ततो आत्मानि आकारादीनि नारायि तानि
आदीनि अनेके आकारमाना आत्माने नारायणः” (भाष्य)

जिनसे सभी तत्त्व सत्य हैं और जिनमें फिर मोन
ही जाये, उसीका नाम नारायण है ।

“नारायणात्तानि वस्तूनि नारायणीति सिद्धुं भाः ।

तामेवायमं वक्ष्ये तेन नारायणः स्मृतः ॥” (महाभाष्य)

अथ तत्त्वादिति वा प्रत्ययः ‘यत् प्रत्ययत्यति संविगमिति’
इति श्रुतिः । मनुमें लिखा है—

“आपो नारा इति श्रोत्रा आपो नै नरहूयवः ।

ता यदववायमं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥”

(मनु १।१०)

नर शब्दसे परमात्माका बोध होता है और इसी मरने
सबमें वही जनको सत्य है, इसीमें जनको नारा
कहते हैं । नारा शब्दरूपमें अवस्थित परमात्माका सर्व-
प्रथम अर्थ या अर्थ है, इस कारण शब्दको नारायण
कहते हैं । जो कुछ देखा जाता है या सुना जाता है,
उन सब वस्तुओंके भीतर और बाहर नारायण अवस्थित
है, अर्थात् नारायण जगत्के समस्त वस्तुओंमें सर्वत्र
विद्यमान है ।

“वक्ष्ये किं विग्रहस्तु सर्वं दानते श्रुतेऽपि वा ।

अतर्वैशिष्ट्य तावदेवं ध्याय्य नारायणः सिद्धः ॥”

किसी मन्त्रकारमें भगवान् विष्णु नर नामक ऋषिके
अवस्थित हुए थे, इस कारण भगवान्का नाम नारायण
हुआ है । (अमरटीकामें अर्थ)

“नारय मोक्षं पुण्यमयं जगत्प्रीतिस्तु ।

ततोर्जनं भवेत् यद्यस्मात्तोऽहं नारायणः स्मृतः ॥”

(ब्रह्मसंहिता १०६ अ०)

नार शब्दका अर्थ मोक्ष और पुण्य शब्दका अर्थ
अभिसन्धित ज्ञान है, जिनमें मोक्ष और ज्ञानविषयक
ज्ञान हो, उसे नारायण कहते हैं । और भी लिखा है—

“नारायण इत्यस्यायावयवमं गमनं स्मृतम् ।

एतो हि गमनं तेषां तोऽहं नारायणः स्मृतः ॥”

(ब्रह्मसंहिता १०८ अ०)

पापियोंको नारा कहते हैं, अथवा शब्दका अर्थ समस्त

है, जिनसे पापियों गति हो, उसे नारायण कहते हैं ।

इस प्रकार नारायण शब्दको नामनिर्दिष्ट करने
प्रकारमें लिखा है । विष्णु और जिनके भयसे अर्थ
नहीं लिखा गया । जिनमें यह जगत् और सभी भूत
उत्पन्न होते हैं, अस्तित्व रहते हैं और अन्तमें अन्तमें मोन
ही जाते हैं, यही भगवान् परमेश्वर नारायण हैं । वेदके
मतमें ये प्रथम पुद्गल हैं । (अथर्वब्राह्मण १।१।१।१,
शाङ्ख्यनिरुक्त १।१।१।१)

शब्दवैयर्थ्यके मतमें नारायणको ही मूर्ति है, विभुज
और अर्जुन । वेदके मतमें अर्जुन मूर्ति है और गो-
मोक्षमें विभुज मूर्ति । महात्मनों और भक्तोंके अर्जुन
नारायणको पते हैं तथा महा और तुलसीदासों विभुज
नारायणकी ।

“भीहन्त्येव दिवाक्यो ह्युत्तमश्च अर्जुनः ।

अर्जुनश्च वेदोऽहं गोमोक्षे विभुजः स्वरः ॥

अर्जुनश्च एवमिह महात्मनो वारुण्यः ।

महाश्च तुलसी विश्वेश्वर नारायणमिह ॥”

(ब्रह्मसंहिता १०६ अ०)

नारायणका नामोच्चारण करनेमें सब पाप नष्ट होते
हैं । तोन भी कल्प तक महादितोर्ध्वमें ध्यान करनेमें
जितना फल प्राप्त होता है, एक बार नारायणका नाम
कनेमें ही उतना ही फल मिलता है । नारायण, अर्जुन,
वासुदेव और एवमिह सबका नामोच्चारण करनेमें
मोक्षप्राप्त होता है ।

और ‘नारायण’ यह शब्द उच्चारण करते हैं, उन्हें
नरककी दवा अभी खुलने नहीं पड़ती ।

“नारायणेश्चिदस्तेऽस्मिन् वागमिह वदन्ति नो ।

तथापि नरके भूयाः वनन्तीह विदुर्भुजम् ॥”

(महाभाग)

नारायणकी पूजा करनेमें निश्चयनिश्चित रूपसे ध्यान
करना होता है ।

ध्यान—“अथैव वदन्ति श्रुतं श्रुतं नारायणं

नारायणः परमेश्वरश्चैव विदुः ।

वेदवक्ता वक्ताऽप्युक्तवान् विदुः ।

इतो हि नारायणं वदन्ति नरकः ॥” (अथर्वब्राह्मण)

प्रति दिन नारायणकी पूजा करनेके श्राद्धका अर्थ

गङ्गाधारेने इस उपनिषद्को भाष्य और व्याख्य-
निरिने उसकी टोका प्रथम की। नारायण और
गङ्गाधारेने इस उपनिषद्को टीपिका बनाई है।

नारायण—इस नामके चनेक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम
मिलते हैं जिनमेंसे निम्नलिखित सबके प्रयोग नाम हैं -

१ एक वैदिक गणित । इन्होंने चरित्रटीकाप्रयोग
पाचार-चतुर्दशीपरिमित, कोतुकप्रत्ययप्रयोग, चयन
पद्धति, जोषव्याहप्रयोग, महाप्रत्ययपद्धति, रूपावृत्ति,
द्वन्द्व-प्रविधि, द्विप्रत्ययप्रयोग, छात्रोपाकप्रयोग आदि
ग्रन्थ बनाए हैं।

२ एक ज्योतिषिर्द । इन्होंने चन्द्रकुम्भ, यक्षमाधुर,
चमत्कारचिन्तामणि और छपकी टोका लिखी है।

३ एक विख्यात दार्शनिक, रत्नाकरके पुत्र और
रामेन्द्र-सरस्वतीके शिष्य । ये समस्त पाठ्यग्रन्थ उपनिषद्की
टीपिका बना गये हैं जिनमेंसे चरित्र-शिष्या, चरित्र-शिरा,
चरित्रनाद, चरित्रविन्दु, चरित्रबोध, चरित्रविद्या, चरित्र-
बन्धी, चरित्रिय, चरित्रिय, काठक, चरित्राविवेक, छत्र,
छत्रतापनीय, केनेपित, कैवल्य, कोषोत्तर, चरित्रा,
नवपतिपूर्वतापिनी, गर्भ, नादक, गोपालतापनीय,
गोपीचन्द्रन, चरित्रा, चरित्रा, त्रिजोविन्दु, त्रिजोय,
द्वितीय, चरित्रविन्दु, नादविन्दु, नारसिंह, नारायण,
नीलचन्द्र, नृसिंह, परमेश्वर, विष्णु, प्रथम, प्रथ ।
प्राचाम्बिकोत्तर, प्रत्यविन्दु, प्रत्यविद्या, प्रत्योपनिषद्,
भृगुपञ्ची, महानारायण, महापनिषद्, मायकुम्भ, मुण्डक,
मर्मयोग, योगतत्त्व, योगशिष्या, रामतापनीय, नारद-
पूर्वतापिनी, त्रैतायनर, चक्र, घट, चक्र, चरित्रा, चरित्र
और चरित्र आदि उपनिषद्की टीपिका मिलती हैं । इन
सब टीपिकाओं नारायणके पाण्डित्यका यथेष्ट परिचय है।

४ चरित्राविवेकचरित्राविवेकके रचयिता ।

५ कुमारचरित्र और चरित्रबन्धी 'भावटीपिका'
नामक टीकाकार ।

६ चरित्राविवेकनामकके रचयिता ।

७ चरित्राविवेक नामक जलमेद नामक ग्रन्थके टीकाकार ।

८ चरित्राविवेकके रचयिता ।

९ तत्त्वविद्या नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता ।

१० द्वावतारोपनिषत्त नामके टीपिकाकार ।

११ दिनत्रयमोक्षना नामक ग्रन्थके रचयिता ।

१२ देवोमाहात्म्यके एक टीकाकार ।

१३ धर्मसुबोधिनो नामक ग्रन्थके रचयिता ।

१४ राघवेन्द्रके शिष्य, व्याघ्रप्रभावचरित्रके एक
टीकाकार ।

१५ पद्मोत्तमविद्यामिनी नामक ज्योतिषग्रन्थके रच-
यिता ।

१६ पाषाणशिल्पप्रदीपनामके रचयिता ।

१७ भक्तिभूषणचन्द्रमं चार भक्तिसागर नामक भक्ति-
ग्रन्थके रचयिता ।

१८ गोविन्दपुराणनामो एक मोक्षनामक । ज्यो-
देवकी माहाटीपिकाके आधार पर इन्होंने माहात्म्यो-
पनिषत्की रचना की ।

१९ एक प्रसिद्ध वैद्याकर । इन्होंने महाभाष्य-
प्रदीप-विवरण बनाया है ।

२० नादगोत्रनिषय नामक धर्मशास्त्रके रचयिता ।

२१ तंशिरोग-विषय-तत्त्वके रचयिता ।

२२ विष्णुस्मृति और विष्णुस्मृतिके रचयिता ।

२३ गोविन्दपुराणनामो एक शास्त्रिक । इन्होंने
पाणिनि व्याकरणकी शब्दभूषण नामक टीका लिखी है ।

२४ नादगोत्रनिषयके एक टीकाकार ।

२५ शिष्यगोत्रनामो तत्त्वबोधिनो नामक टीकाकार ।

२६ श्रुतिचरित्रो नामक चरित्रारण्यके रचयिता ।

२७ पाणिनिकल्पवृत्तिके रचयिता ।

२८ कोषप्रयोगके टीकाकार ।

२९ द्वितीयदेवके रचयिता । इन्होंने धनतपस्त्रके
आधार पर एक ग्रन्थ लिखा है ।

३० टागपानके एक ज्योतिषिर्द । इनके विज्ञान
नाम चरित्र और विज्ञाननाम नाम है । इन्होंने
१५०१ ई-में मुद्रतंमार्चण और छपकी टोका तथा
सुमनस्यदेव नामक एक ज्योतिषग्रन्थ लिखा है ।

३१ एक वेदज्ञ गणित । ये छत्राक्षके पुत्र और
श्रीमतिके पुत्र थे । १५०१ ई-में इन्होंने माहात्म्य-
चरित्रग्रन्थ रचा है ।

३२ शिष्यचरित्रके ज्योतिषपरिमितके परिमृष्टनाम
नामक टीकाकार । इनके विज्ञान नाम टीपिका, विज्ञान-

महाराचार्यने इस उपनिषद्को भाष्य और चानन्द-
मिनिं समझी टोका प्रचयन की। नारायण और
महारायणने इस उपनिषद्को टीपिका बनाई है।

नारायण—इस नामके अनेक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम
मिलते हैं जिनमेंसे निम्नलिखित उत्तरेष्वप्येव नाम हैं -

१ एक वैदिक ग्रन्थित। इन्होंने अग्निहोमप्रयोग
पाचार-चतुर्दशीपरिचिह्न, कोतुकप्रमाणप्रयोग, चयन
पद्धति, जीवव्याहप्रयोग, महाब्रह्मपद्धति, ब्रह्मपद्धति,
ब्रह्म-जपविधि, वृद्धिआद्यप्रयोग, व्यासोपासप्रयोग आदि
ग्रन्थ-बनाए हैं।

२ एक ज्योतिर्विद्। इन्होंने अमृतकुण्ड, चहनाचर,
समत्कारविनामपि और समझी टोका लिखी हैं।

३ एक विख्यात दार्शनिक, राजाकारके पुत्र और
रामेन्द्र-सरस्वतीके शिष्य। ये समस्त पाठ्यार्थक उपनिषद्देवीकी
टीपिका बना गये हैं जिनमेंसे अथर्वशिष्य, अथर्वशिष्या,
अमृतनाद, अमृतविन्दु, आत्मबोध, आत्मविद्या, आनन्द
मन्त्र, आनन्द, ऐतरेय, काठक, कात्यायनब्रह्म, छान्द,
छान्दोग्योपनिषद्, केनोपनिषद्, कोषोत्तम, तुरिका,
गणपतिपूर्वतापिनी, गर्भ, गाहक, गोपालतापिनी,
गोपीबन्धन, चण्डिका, जामाल, तेजोविन्दु, तैत्तिरीय,
द्वितीय, ध्यानविन्दु, भादविन्दु, नारविन्द, नारायण,
नीलह्वर, शृङ्ग, परमहंस, विण्ड, प्रदम, प्रथ।
प्राचात्मिहोत्र, ब्रह्मविन्दु, ब्रह्मविद्या, ब्रह्मोपनिषद्,
भृगुवक्त्र, महानारायण, मन्त्रोपनिषद्, माण्डूक्य, सुण्डक,
मैत्रेयो, योगतत्त्व, योगशिखा, रामनामोपनिषद्, नारद-
पूर्वतापिनी, ईशानप्रसर, ब्रह्म, यद्वचक, संन्यास, मन्त्र
और हंस आदि उपनिषद्देवीकी टीपिका मिलती हैं। इन
सब टीपिकाओंमें नारायणके पाण्डित्यका स्पष्ट परिचय है।

४ अन्त्यात्मविनामविद्याग्रन्थके रचयिता।

५ कुमारचन्द्रन और रघुवंशकी 'भावटीपिका'
नामक टीकाकार।

६ गण्डव्याख्यानामनामके रचयिता।

७ ब्रह्मभाष्यरत्न जलमेढ नामक ग्रन्थके टीकाकार।

८ अक्षरार्थके रचयिता।

९ तत्त्वविद्याग्रन्थ नामक ज्योतिर्विदके रचयिता।

१० द्वावनामोपनिषत्तत्त्वके टीपिकाकार।

११ दिनत्रयमोमना नामक इमाशंयन्त्रकार।

१२ देवोमाहात्म्यके एक टीकाकार।

१३ धर्मसुबोधिनो नामक मध्यम्युक्तिके संवहकार।

१४ राघवेन्द्रके शिष्य, ग्यायप्रमाणमन्त्रोके एक
टीकाकार।

१५ यमजोनाविनामिनी नामक ज्योतिर्विदके रच-
यिता।

१६ पाश्चात्याहप्रदीपनामके रचयिता।

१७ भक्तिमूषमन्त्रमं चार भक्तिमानर नामक भक्ति-
ग्रन्थके रचयिता।

१८ गोविन्दपुराणनामो एक मोमानक। सुण्ड-
देवकी भादटीपिकाके आधार पर इन्होंने भादव्यायो-
द्योतको रचना की।

१९ एक प्रसिद्ध वैद्याकरण। इन्होंने महाभाग-
प्रदीप-विवरण बनाया है।

२० माण्डूक्यनिरचय नामक धर्मशास्त्रके संवहकार।

२१ तैत्तिरीय-विनन्द-नक्षत्रके रचयिता।

२२ विष्णुस्मृति और विष्णुशास्त्रके रचयिता।

२३ गोविन्दपुराणनामो एक ग्राह्यिक। इन्होंने
पानिनि व्याकरणकी मध्यमूष नामक टीका लिखी है।

२४ सारदातिलकतन्त्रके एक टीकाकार।

२५ शिवगीताका तात्पर्यबोधिनो नामक टीकाकार।

२६ श्रुतिरश्मिनो नामक पद्महारायणके रचयिता।

२७ पाणिपुस्तकनिरचयिताके रचयिता।

२८ सोमप्रयोगके टीकाकार।

२९ द्वितीयपदेयके रचयिता। इन्होंने धनकचन्द्रके
आधार पर एक ग्रन्थ लिखा है।

३० टावरवामके एक ज्योतिर्विद्। इनके पिताका
नाम चनका और पितामहका नाम हरि था। इन्होंने
१५०१ ई०में मुहम्मदमार्चण्ड और समझी टोका तथा
सुमन्तपदार्थ नामक एक ज्योतिर्विद लिखा है।

३१ एक वेदग्रन्थित। ये छान्दोग्यके पुत्र और
श्रीशक्तिदेव थे। १२०१ ई०में इन्होंने ग्यायप्रमा-
णग्रन्थभाष्य रचा है।

३२ ब्रह्मविमर्शके ज्योतिर्विदके परिमिटग्रन्थ
नामक टीकाकार। इनके पिताका नाम दीप, पितामह-

कृतं च है। नामदाममिन्द्राकी नारायणपूजा वा विष्णुपूजा कहते हैं। कालचन्द्रिका और विष्णुसा देवता।

कोन कोन काम करनेसे नारायणकी प्रीति या प्रसीति होती है, क्रियायोगधारमें समझा विषय इस प्रकार लिखा है—

“बर्धना देन विभेदं मुनिम्” इति वाचते।

श्रीवरच तद् एवमनं ते वचयामि समाहृतः ॥”

(क्रियायोगधार १८ अ०)

विष्णु भगवान् कहते हैं, जिस कर्ममें मैं प्रसव हो सकता है, समझा विषय संचयमें कहता हूँ। सर्व भूतोंमें दया, निरद्वन्द्व, मेरे चहेतसे भक्तिपूर्वक धर्म-कार्यानुष्ठान, यथायं वाक्यकथन, मित्र वस्तु विष्णुके चहेतसे निवेदन, जिसका मान और अपमान एक-सा है और जो मुझे सर्वभूतोंमें विद्यमान मानते हैं, जो परहिंसा-विहीन हैं, जो सब काम शेष विचार कर करते हैं, जो और ब्राह्मणहितैषी, शास्त्रनियम-परिपालयिता, उपकारकी-पाया न रखने हुए दान और मेरे चहेतसे विशादान, यद्यो सब-मेरे, प्रिय हैं। नारायणके प्रसीतिकर कार्य—हिंसा, क्रोध, असत्य, अहङ्कार, लज्जता, परनिन्दा, परवक्तृ, विषयजन, पिता, माता, भ्राता, पत्नी और भगिनीका त्याग, गुरुजनके प्रति कटु-भाषणप्रयोग, गुरुजनके प्रति अवज्ञा, चाहे जिस उपायसे जो दम्पतीके मध्य मनोभङ्गकरव, परद्रव्यहरण, आशम-लेदन, ललायन नटकरव, घामनाश, परस्त्री-देख कर चाकुलता, पापवर्णनकरव, अनाय व्यक्तिका हर्षकरव, विमामघातकता, गोघोषेहन, उपकीर्ति, अश्रयनाश, ब्रह्मा, विष्णु और महेशादिमें ईदबोध, वेदनिन्दा, एका-दशीमें अहङ्कार, परदारामति, पापमन्त्रपादान, मित्रद्रोह, भ्रातृकीनश, दिनको-श्लोमद्वय, रजसना-मन्थोग, नतस्या मन्थोग, अमावस्याको रात्रिमें भोजन, अमा-वस्यामें अमिषभोजन, नैमिषवध और श्लोममन्थोग, वेदवनिन्दा-देख कर नारायणके प्रसीतिकर है।

(क्रियायोगधार १८ अ०)

कानिष्ठापुराणमें अष्टभुज मुनिका ध्यान इस प्रकार है—

“ब्रह्मकृपासाहस्यपरं वदन्तं पश्यम्।

द्विद्वन्द्वकृतवर्मां नवविभोक्तुमनुवचमिह ॥

गङ्गाश्रीद्वन्द्वकृतवर्मां पश्यम्।

श्रीवरचकृतवर्मां पश्यम्।

केयुःकृतवर्मां पश्यम्।

निराकारं कृतवर्मां पश्यम्।

निष्कारं कृतवर्मां पश्यम्।

मन्त्रमन्त्रेण देवेषु विष्णुं मन्त्रमन्त्रेण ॥”

(कानिष्ठापुराण २२ अ०)

तैत्तिरीय पारण्यकमें नारायणको गायत्री है—

“नारायणाय विष्णवे ब्राह्मणे नमः।

तथैव विष्णुः अथोदयात् ॥” (१०।१।१)

ज्ञानपूर्वक वा प्रज्ञानपूर्वक नारायणका नाम मेनेने-मवचम्यन दूर होता है। भागवतमें लिखा है—“काण्ड-कुल देवमें प्रज्ञामिन नामक एक ब्राह्मणने किसी एक दासीके साथ विवाह कर लिया। पत्नः सर्वदा दासीके सम्भर्गसे प्रेरित हो गये और उनके समो सदाचार विनष्ट हुए। कालक्रमसे उनके दृग्-पुत्र उत्पन्न हुए। सबसे छोटे पुत्रका नाम नारायण था। उस पुत्रके प्रति उनकी हृदय हमेशा-आलस्य रहता था। प्रज्ञामिन-सब जब पत्निम काल उपस्थित हुआ, तब पुत्रमृतक भयहर्-रूप धारण कर उनके समीप पाए। प्रज्ञामिनने इसे देख भयसे व्याकुल हो नारायण नामक पुत्रको बुलाया। मरते समय ‘नारायण’ ऐसा नाम सुननेसे जो विष्णुभूमीने यमदूतोंको-निष्क्रम भगाया और उस ब्राह्मणको ने विष्णु लोकमें ले गये। इस प्रज्ञामिनने पापकर्मों की पर भी पुत्रका नाम नारायण-रखा था और सर्वदा उसीका नाम लिया करता था, जिससे जलमें यह वापारित हो विष्णु लोकको प्राप्त हुआ।” (भागवत १।१ अ०)

विष्णु देवता।

२ दुर्गाधनको मैत्राविदेव, दुर्गाधनको एक भेताका नाम। १ धर्मपुत्र अग्निविदेव, धर्मके पुत्र एक अग्नि।

“धर्मस्य वरुणिर्यवन्मते मुनी”

नारायणके वरुण १ वरुणः पश्यम्। (भागवत २।१।१)

४ लक्ष्मणपुत्रके वरुणमार्ग उपनिषद्विदेव। मुनि-कोपनिषद्में इस उपनिषद्का नामोक्त देखनेमें आता है।

महाराष्ट्रायें इस उपनिषद्का माथ पोरा पानन्द-
गिनिने समकी टोका प्रपयन की। नारायण पोरा
महाराष्ट्रमें इस उपनिषद्को होविश बनाई है।

नारायण—इस नामके धनेक संस्कृत धन्यकारोंके नाम
मिलते हैं जिसमेंसे निम्नलिखित सर्वप्रयोग्य नाम हैं -

१ एक वैदिक वस्तुतः इमेति धर्मिणीयप्रयोग
साधार-वस्तुर्धर्मिणीयप्रयोग, कौतुकवस्तुप्रयोग, वयन
प्रयोग, कौतुकवस्तुप्रयोग, महान्वयप्रयोग, वस्तुप्रयोग,
वस्तु-प्रयोग, वस्तु-प्रयोग, वस्तु-प्रयोग, वस्तु-प्रयोग
वस्तु-प्रयोग इति।

२ एक ज्योतिर्विद् । इमानि चतुस्तुम्भ, चङ्गमाद्यः,
चमत्कारिणिनामपि चौरः उभयोः टीका निम्नो ५ ।

१ एक विख्यात टार्गनिङ्ग, राजाकाशे पुत्र पोर
 रामेन्द्र-सरस्वतीके शिष्य । ये ममस्तु पाद्यार्चन उपनिषद्की
 दीपिका बना गये है जिन्होंने चयनं गिरा, चयनं गिरा
 चयनताद, चयनविन्दु, चयनबोध, चयनविद्या, चयन
 ब्रह्मी, पादपिय, पितरिय, काठक, कान्तागिहङ्ग, लण्य,
 छत्तपातनीय, केनेयित, कैवल्य, कोपोलक, सुरिका,
 गणपतिपूर्वतापिनी, गर्भ, माहङ्ग, गोपमतापनीय,
 गोपीचन्दन, शूलिका, शवाग्न, तेजोविन्दु, मैत्रियोय,
 द्वितीय, ध्यानविन्दु, आठविन्दु, नारसिंह, आराधन,
 नीलचन्द्र, तृनिङ्ग, परमहंस, विण्ड, प्रथम, द्वय ।
 प्राच्यनिहोष्ठ, ब्रह्मविन्दु, ब्रह्मविद्या, ब्रह्मोपनिषद्,
 शृगुब्रह्मी, महाभाराधन, मरीचनिपत्, सादृष्ट्य, मुण्डक,
 मैत्रेयो, योगतत्त्व, योगगिरा, शमतापनीय, आठ-
 पूर्वतापिनी, श्रुताग्नर, बल, घटचक्र, मंथान, हंस
 पोर हंस चादि उपनिषद्की दीपिका मिलती हैं । इत-
 नच दीपिकाई आराधनके पाण्डित्यके उपदेष्टव्य हैं ।

४ अध्यात्मविज्ञानमविद्याव्याप्तं वैश्वविद्या ।

५ कुमारमनाथ घोर रघुवंशजी भादशेकर
गामक टोकाकार।

॥ नृपय्यायाममानां वै रक्षयिता ॥

० यज्ञभाष्ये हत जलमेव नामकं जलमेव द्रव्यम् ।

८ अत्यल्पं चैव रक्षयिता ।

८. तन्मदिवाहक नामज प्रदोतिपं अने कर्णिक

१० दशममन्तारोत्पत्तिः कथमिति चेत्तद्विषयः-

११ दिनत्रयमोक्षार्थं नामकं मन्त्रं पश्यन्तः ।

१२ देवीमाहात्म्यके एक टीकाकार ।

११. धर्मकोटिचिन्तो मातृका मन्त्रस्मृतिरिति क'द्वयकारः ।

१४ रात्रवेन्द्रके दिप, व्याघ्रमालकमकरिह । एष
टीकाकार ।

१५ पद्मनोमाविभाजिनी नामक लोहखनिज से
पिटा ।

१६ पापं वयं हि मर्त्यानि मानके न वेत्ता ४

१० मतिभूषणसूत्रम् चारु मन्त्रसूत्रम् चारु मन्त्रसूत्रम् चारु मन्त्रसूत्रम्
पण्यके रचयिता ।

१८ गोविन्दपुरनिवासो एक मन्त्रि-
देवको भाइदोषिकां वापार र-
द्योतको रचना को ।

१८ एक प्रतिष्ठित विद्वान् ।
प्रदीप-विवरण इत्यादि ।

२. मातृशिक्षण, लिंग शिक्षण, आदि विषयों पर शिक्षण।

२१ तं तिर्यङ्मूर्तिं नमस्कृत्य नमोऽर्पयन् ॥

३२ विद्युत् स्तरों पर केंद्रित करने के लिए

२१. श्रीगुरुदेवकी आज्ञा के अनुसार मैंने
प्राप्ति के लिये बहुत प्रयत्न किया है।

28 FEB 1964

३। मित्र-पुत्र-तत्त्व-विज्ञान-सामक-द्वि-पत्र।

११. अतीतं कालं भवति ननु ?

३३. ~~महाराजगिरि~~ = महाराष्ट्र ।

三、三、三、三

[illegible]

विशेष

संविधान, १९५० के अन्तर्गत भारत के नागरिकों के अधिकारों का विवरण

1. 凡在本行開辦之各項業務，均應遵守本行所定之規章制度，並應隨時注意業務之改進，以期提高服務品質。

11

$\frac{1}{2} \left(\frac{1}{2} + \frac{1}{2} \right) = \frac{1}{2}$

६। नाम समानि चोर प्रथिमामह ५१ नाम मटाधर था ।

६१ एक चोतिविद्दुः दादामाईके पुत्र चोर माधवके योग । इन्होंने तानिजुमार-मुषानिधि तग जोरामार मुषानिधियों रचना की है ।

६२ श्रुतिपदके पुत्र । इन्होंने ११५० ई०में पट्टो-गणितकी रचना की है ।

६३ मधवभागे पद्यतिके पुत्र । ये गाढायन-चोत-मूत्रकी प्रथि चोर गाढायन-मूत्रके प्रयाध्यायका भाष्य बना गये हैं ।

६४ माधवलन गोत्रधरके एक टोकाकार । इनके पिताका नाम मण्डूरि रसनाथ था ।

६५ एक प्रसिद्ध टोकाकार । इनके पिताका नाम रसनाथ दीक्षित चोर भ्राताका नाम माधवराज था । इन्होंने उत्तररामचरित, काव्यप्रकाश, माननीमाधव, राधाविनोद, यासवदत्ता, विहगानमञ्जिका, हनुमन्पाठक आदि ग्रन्थोंकी टोका बनाई है । इनके अपेक्षित व्याख्यान नामक उत्तररामचरितको टीका पढ़नेसे जाना जाता है, कि ये युद्धदेव नामक एक व्यक्तिके निकट रहने से चोर १६१० ई०में विद्यमान थे ।

६८ पद्मचन्द्रनायक नामक श्रुतिपदके रच-यिता । इनके पिताका नाम राम था ।

६९ एक संस्कृत नाटककार । इनके पिताका नाम लक्ष्मीधर था । इन्होंने कमलाकण्ठरथ नाटक लिखा है । ये काश्चिदेयके मल्लदेवायणारमें रहते थे ।

७० एक भक्तिग्रन्थके रचयिता । इनके पिताका नाम निम्बभट्ट चोर पितामहका नाम जगदीश था । इन्होंने काशीपति हरिदासके आदेशसे १६०८ ई०में मूल्यानन्द-प्रवचनकी रचना की है ।

७१ गाढायनचोतमूत्रके पद्यतिकार । इन ग्रन्थमें इनकी संभावनीयो लिखी है—मुम्मेरवागे लण्डाथ, तपुस वामन, तपुस आदित्य, तपुस जगदीश, तपुस मोक्षकण्ठ, तपुस भाव, तपुस जगपाद, तपुस आपति चोर श्रौतिके पुत्र यहां नारायण थे ।

७२ चोकारण्यके प्रथिता, हरिभट्टके पुत्र ।

७३ चरितकाशानन नामक मध्वमतप्रतिपादक ग्रन्थके रचयिता ।

७४ चण्णना, कोमक, देवोदयन आदि स्तोत्रोंके एक टोकाकार ।

७५ चण्णमेय मानसजडनिके एक टोकाकार ।

७६ व्यायसुधाके एक टोकाकार ।

७८ मोक्षधर्म नामक धर्मशास्त्र-ग्रंथकार ।

७८ सुन्दरराजके गिण, सुव विद्यानाके एक टोकाकार ।

७८ मेवमज्जति नामक ग्रंथकार ।

७९ एक मासुद्रिक । ये तानिजतन्त्रमासीकी टोका बना गये हैं ।

नारायण—काव्यायनग्रंथके १५ राजा । इन्होंने गुप्तराज घटोत्कच पर चढ़ाई की थी ।

नारायण—१ एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि । ये सुनमित कवितामें शिवराजपुरके चन्देल-राजाओंका इतिहास लिख गये हैं ।

२ एक हिन्दी-कवि । इन्होंने बहुतसो सुन्दर कवि-ताओंकी रचना की । उदाहरणार्थ एक जोषे देते हैं—

“बिधा बाइसे बसाई खोवत जगाई मोरी नीर नंवाई ।

चोह वही परलो चली, बह लगने रोज मने ।

कुं ब कुं ब दुं छत गली, कीन बजावत बैन ॥

कोऊ तो हेरो बताई ॥

बंही हो गंभी लगो, बेचन दिवो लीर ।

मन्दनहरकी लाहली, हरे हवरी पीर ॥

बह दुल लगी न जाई ॥

एक कहे सुनरी लली, छोटी बात लीर ।

बहदेवी मन्मोहना, दैगो चढ़ी से पीर ॥

पर पर करे छत छाई ॥

मोरमुकुट विर पर चरे, मज चाके बनवाव ।

निर्ममो लाल मरी, देखत कर विधाय ॥

हूँ हूँ बही पार ॥

विन जाऊं पाऊं जगमो, दीगो मोह बनवाव ।

हाव नारायण बरन तर, रदू वदा मटाव ॥

बबो देरव देखाई ॥”

नारायणभाष्य—१ एक संस्कृत कवि । कालभोगी-सुनमण्या चोर समके टोकाकार । २ तीर्थप्रवचकाय चोर-हनिनीविजयकाव्यके भावप्रसागके टोकाकार । ३ कपुटदर्पण नामक श्रुतिपद ग्रन्थके रचयिता ।

नारायणकण्ठ—प्रसिद्ध शैवधार्मिक, रामकण्ठके पोत
चौक विद्याकण्ठके पुत्र । इन्होंने श्रीगुरु पौर श्रीगुरुपौर
नामक शैवतन्त्रकी टीका रची है ।

नारायण कर्ण देव—विद्यालतन्त्र नामक वैदान्तिक ग्रन्थ-
कार ।

नारायणकवि—चन्द्रकला नामक संस्कृत नाटककार ।
नारायणचैतन (मं० लो०) नारायणचरण चैतन । गङ्गाप्रवाह-
के चतुर्दश-परिमित दूर पर्यन्त स्थान, गङ्गाके प्रवाहके
चार धाय तककी भूमि ।

"प्रवाहचर्मि" इत्यादि शब्दप्रयोग ।

नर नारायणः स्वामी नारायणो कर्णवयः ॥

(अष्टपुराण)

इस क्षेत्रके स्वामी स्वयं नारायण हैं । इस स्थान पर
हम देना या लेना निषिद्ध है ।

नारायणक्षेत्रमें हीवा, देवपूजा, आर्य, तर्पण, परोप-
कार, स्नानपाठ पौर मोनप्रसन्न करना चाहिए । यहाँ मोचा-
लाप परिवर्जनीय है । (हरद्वैत ७७ अ०)

नारायणगञ्ज—१ बहाल प्रान्तके टाका जिलालगत
एक उपविभाग । यह पचा० २१° ३४' से २४° १५'
उ० तथा देशा० ८०° २०' से ८०° ४८' पू०के मध्य पश्चि-
म्य है । भूविस्तीर्ण ६४१ वर्गमील और लोकसंख्या
प्रायः ६६००१२ है । इसमें एक शहर पौर २१०० ग्राम
संगत हैं ।

२ एक विभागका एक शहर । यह पचा० २१° ३०'
उ० पौर ८०° ३०' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या
लगभग २४४०२ है । टाका शहर यहसे ८ मील दूर
पड़ता है । मीरसुन्दाके समीप कुछ कितने दुर्ग इससे
निकटवर्ती स्थानोंमें पाए भी वर्तमान हैं । यहसे
छाड़ो की दूर पर अदम्य शक्ति नामक मुसलमानोंका तोप-
खाना है । नारायणगञ्ज पटनमक जिले प्रसिद्ध है ।

नारायणगढ़—मैदिनीपुरके पश्चिम एक प्राचीन स्थान ।
यहाँ प्राचीन हिन्दूकीर्ति प्राप्त भी विद्यमान है ।

नारायणगाम—भूमिह्वामक पुत्र । इन्होंने चाम्परायन-
जोन पौर गृह्यसूत्रका भाष्य, चाम्परायन गृह्यकारिकाका
भाष्य, चाम्परायन-सुतकर्मणि पौर श्रौतसूत्रविधि
बनाए हैं ।

नारायण मोर्माई नृपति—प्रकृतेश्वर नामक ज्योतिषके
ग्रन्थकार ।

नारायणगोठ—मिश्ररागविशेष । यह शैवाचारी, गुरु पौर
गोठयोगके उत्पन्न हुआ है । (श्रीगोत्राणः)

नारायणचन्द्र चूड़ामणि—क्षेत्रीय वर्णपद्धतिके एक टीका-
कार ।

नारायणचलवर्त्तो—१ भागवतपुराणके एक विष्णुपाराय-
कार । २ शान्तिवर्त्तमान नामक कर्माचारके ग्रन्थकार ।
३ एक संस्कृत पत्रिकाके रचयिता । ४ पदार्थकोमुदी-
के प्रवृत्ता ।

नारायणचूर्ण (मं० लो०) चूर्णविशेष । प्रसन्न प्रवाणी—
यवानो, हृद्य, धनिया, तिलका, लवंगमोरा, ईश्वरसु-
जीरा, पिप्पलीमूल, चमरगा, कपूर, सहस्रमोरा, त्रिफला,
जम्बूगोरी, चीता, यवसार, माषिचार, पुष्करामूल, कुट्ट,
पल्लवपत्र पौर विहङ्ग इन सब द्रव्योंके बराबर बराबर
भाग, दली ३ भाग पचातु सत्र एक भागका मिश्रण,
निरीय २ भाग, इन्द्रवायु २ भाग, मातला ४ भाग
इन सबके चूर्णको एकत्र कर घुसवानेविशेषमें मेहन
करनेसे निम्नलिखित रोग जाते रहते हैं । यह चूर्ण
उदररोगमें तल्ल दारा, गुदरोगमें बरके काढ़के साथ,
घानस्य वातमें सुआके साथ, वातरोगमें प्रमथाके साथ,
विट्भेदमें दधिपण्डके साथ, चर्मरोगमें दाहिकके काढ़के
साथ पौर अजोर्ध्व रोगमें उष्य जलके साथ पानिये से सब
रोग जाते रहते हैं । भगन्दर, पाण्डू, काग, म्यास, गम-
रोग, हृद्रोग, यक्ष्मी, कुल, पन्निमास्य, क्वर, दंशनप्रस-
विष, मूलविष, गरदोष पौर छत्रिम विषमें यथायोग्य
घुसवानेके साथ मेहन करनेसे विशेष रोगों के रोग विविध
उपकार होता है । (आध्यात्मिक चिकित्साविधि)

पञ्चविध प्रसन्न प्रवाणी—गुलह, विहङ्गमोरा, इन्द्र-
वाय, शिलाई, चीनी, अहिरान, सीड, मिथिल पानेन-
का चूर्ण समान, उतलाशी कुट्टनकी पाण्डा चूर्ण ;
इन्हें एक साथ मिश्रणमें नारायणचूर्ण बनाता है ।
इसका घुसवाना मुक्त पौर आयु है । इससे मेहन करनेमें
रक्तज्वर, शोथ, क्वर, यक्षा, काम, पाण्डू रोग, हिजा
आदि रोग गुरु होते हैं । (भिन्नराग्य-चिकित्साविधि)

नारायणचूर्ण (मं० लो०) हरीशचन्द्र । प्रसन्न प्रवाणी—

का नाम लम्पानि चोरं पितृनामकं नाम मटावरं वा ।

१२ एक ज्योतिर्विन्दुः दद्यान्माईं पुत्रं चोरं माधवम्
देयम् । इन्दीने तानिद्वयम्-सुधाविधिं तथा होराभारं
सुधाविधिर्हो रचना की है ।

१३ लुपिहरे पुत्रः । इन्दीने १३२० ई०में पटो-
गवितकी रचना की है ।

१४ मधवशमी पद्मगतिः पुत्रः । ये माहायन-श्रोत-
मूलकी पद्धति चोर माहायन-मूलके वैवाच्यायका भाष्य
बना गये हैं ।

१५ माधवल्लभ गोक्षप्रवरके एक टोकाकार । इनके
पिताका नाम मण्डूरि रघुनाथ था ।

१६ एक प्रसिद्ध टोकाकार । इनके पिताका नाम
रघुनाथ दक्षिण चोर भ्राताका नाम बाललक्ष्म था ।
इन्दीने चत्तररामचरित, काव्यप्रकाश, मालतीमाधव,
राधाविनोद, वासवदत्ता, विदग्गालम्बिका, हनुमन्पाठक
आदि ग्रन्थोंकी टोका बनाई है । इनके अपेक्षित
व्याख्यान नामक चत्तररामचरितकी टीका पढ़नेसे ज्ञाना
जाता है, कि ये एक-देव नामक एक व्यक्तिः निकट
रहते थे चोर १६३० ई०में विद्यमान थे ।

१७ पद्मचलिनपुत्रानुक्रम नामक ज्योतिर्विन्दुके रच-
यिता । इनके पिताका नाम राम था ।

१८ एक संस्कृत नाटककार । इनके पिताका नाम
लक्ष्मीधर था । इन्दीने कमलाकण्ठरस नाटक लिखा
है । ये काबिदेगके ब्रह्मदेगापहारमें रक्ते थे ।

१९ एक भक्तिग्रन्थके रचयिता । इनके पिताका नाम
लक्ष्मभर चोर पितृनामका नाम जनाईभर था । इन्दीने
कामोपनि हरिदामके आदिग्रन्थ १६०८ ई०में पूर्वाभ्यु-
पगमकी रचना की है ।

२० माहायनश्रोतमूलके पद्धतिहार । इस ग्रन्थमें
इनकी 'संग्रहसी घो' लिखी है—गुप्तेरवासो धनंदांशु,
तत्पुत्रं वामनं, तत्पुत्रं चादित्यं, तत्पुत्रं जलार्दनं, तत्पुत्रं
गोमकण्ठं, तत्पुत्रं भाद्रं, तत्पुत्रं जगन्नाथं, तत्पुत्रं
श्रीपतिके पुत्रं यही नागपद है ।

२१ चो'काशय्यके रचिता, हरिभरके पुत्र ।

२२ चरितकाशयन नामक मध्यमप्रतिपादक
ग्रन्थके रचयिता ।

२३ चो'का, जोलहरे, चो'का

एक टोकाकार ।

२४ चो'का, जोलहरे, चो'का

२५ व्यासपुत्रके एक

२६ मोक्षधर्म नाम

२७ सुन्दरराजके

२८ मेगनपदति

२९ एक मामुद्रि

बना गये हैं ।

नारायण—काव्यः

घटोत्कच पर था

नारायण—१ एक

कवितामें शिष्ट

लिख गये हैं ।

२ एक

तापोंकी रच

लिखिता

चो'का

कु'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

चो'का

मंजन, अगरणदुका, कुट, हवायको, आठामो, घान-
पावि, पञ्चमथा, मधेय, राधा-प्रत्येक-चार चार
तोना। भलोमांसि पाक इस तेनके गरीरमें मन कर
लगामसे सब प्रकारके वायुरोमीको मारिने दोती है तथा
इच्छुन, धर्मगुन, मण्डमाना, वातरक, कामसा,
पाण्डुरोग, पञ्चरी यदि रोग भी जाते रहतेहैं। भगवान्
विष्णुने स्वयं इस तेनको कया अहो है, इसीसे हमका
नाम अगरणवत्तेन पड़ा है।

(गैरउद्वहना० वास्तव्याधि०)

मायायनदत्त—१ मनुक्तिवर्णमनुधत एक मंस्कृत अवि ।
ये चक्रागविदत्तके वित्त। ये । २ ज्ञानागयोत्तमं पठनिके
१ वयित्त ।

गारायचदांस—१ भारतयुद्धविवाद नामक संस्कृत ग्रन्थ
कार । ।

२ हिन्दीके एक कवि । मृत्यु १९१६में इनका जन्म हुआ था । उन्होंने चितोपदेयकी भाषा छन्दोंमें लिखा । मारायणदाम—यक्षवरके शासनकालमें ये टावियात्यक्ष एक प्रसिद्ध राठौर राजा थे । यक्षवरमें यामक गुलीकी इनके साथ लड़नेके लिये भेजा था । युद्धमें इन्हींकी हार हुई थी ।

माहाशयदाम कविराज—१ गीतगीविन्दकी सर्वज्ञसुन्दः
नामकी टीकाके रचयिता । समाप्तधने भगोराममें यह
टीका छद्म की है ।

२ एक ममिह वैद्यक चर्यकार । इनके बनाये हुए
राजवस्त्र नामक द्रव्यगुण, वैद्यक-परिभाषा और
नामोपधरिच्छेद नामक शब्दोंका वैद्यक-समाजमें
मुख्य पाठ है ।

भाष्यप्रदाय मित्र—ये मारायण गोत्र/हो नामधेय मित्र
 हैं। इनके पिताका नाम द्यामप्रदाय। इन्होंने
 मन्त्रवेत्त्या नामक एक ब्रह्म ऋषीतिथयाज्ञाधीन वेत्त्या
 वेदग्रन्थाको रचना की है।

॥ १ ॥
 ॥ २ ॥
 ॥ ३ ॥
 ॥ ४ ॥
 ॥ ५ ॥
 ॥ ६ ॥
 ॥ ७ ॥
 ॥ ८ ॥
 ॥ ९ ॥
 ॥ १० ॥
 ॥ ११ ॥
 ॥ १२ ॥
 ॥ १३ ॥
 ॥ १४ ॥
 ॥ १५ ॥
 ॥ १६ ॥
 ॥ १७ ॥
 ॥ १८ ॥
 ॥ १९ ॥
 ॥ २० ॥
 ॥ २१ ॥
 ॥ २२ ॥
 ॥ २३ ॥
 ॥ २४ ॥
 ॥ २५ ॥
 ॥ २६ ॥
 ॥ २७ ॥
 ॥ २८ ॥
 ॥ २९ ॥
 ॥ ३० ॥
 ॥ ३१ ॥
 ॥ ३२ ॥
 ॥ ३३ ॥
 ॥ ३४ ॥
 ॥ ३५ ॥
 ॥ ३६ ॥
 ॥ ३७ ॥
 ॥ ३८ ॥
 ॥ ३९ ॥
 ॥ ४० ॥
 ॥ ४१ ॥
 ॥ ४२ ॥
 ॥ ४३ ॥
 ॥ ४४ ॥
 ॥ ४५ ॥
 ॥ ४६ ॥
 ॥ ४७ ॥
 ॥ ४८ ॥
 ॥ ४९ ॥
 ॥ ५० ॥
 ॥ ५१ ॥
 ॥ ५२ ॥
 ॥ ५३ ॥
 ॥ ५४ ॥
 ॥ ५५ ॥
 ॥ ५६ ॥
 ॥ ५७ ॥
 ॥ ५८ ॥
 ॥ ५९ ॥
 ॥ ६० ॥
 ॥ ६१ ॥
 ॥ ६२ ॥
 ॥ ६३ ॥
 ॥ ६४ ॥
 ॥ ६५ ॥
 ॥ ६६ ॥
 ॥ ६७ ॥
 ॥ ६८ ॥
 ॥ ६९ ॥
 ॥ ७० ॥
 ॥ ७१ ॥
 ॥ ७२ ॥
 ॥ ७३ ॥
 ॥ ७४ ॥
 ॥ ७५ ॥
 ॥ ७६ ॥
 ॥ ७७ ॥
 ॥ ७८ ॥
 ॥ ७९ ॥
 ॥ ८० ॥
 ॥ ८१ ॥
 ॥ ८२ ॥
 ॥ ८३ ॥
 ॥ ८४ ॥
 ॥ ८५ ॥
 ॥ ८६ ॥
 ॥ ८७ ॥
 ॥ ८८ ॥
 ॥ ८९ ॥
 ॥ ९० ॥
 ॥ ९१ ॥
 ॥ ९२ ॥
 ॥ ९३ ॥
 ॥ ९४ ॥
 ॥ ९५ ॥
 ॥ ९६ ॥
 ॥ ९७ ॥
 ॥ ९८ ॥
 ॥ ९९ ॥
 ॥ १०० ॥

नारायणदेव—एक प्रसिद्ध ब्राह्मण। एतत् त्रिगुणः।

नाम सर्विंद का। नारायण देवको वंशान्धो भक्त
मायाचो। दोर प्रयासाचोमें विभक्त है। कमिया
बनानेमें इनको भूयुषं शक्ति यो। बहुत है, कि एत
रातको इनकोने स्वप्नमें देया कि वंशोपायो जन्म भयं
पा कर यद्य निरुनेन निव जन्मे उन्मादित कर रहे है।
यद्यपि ये बहुत वन्दे मित्रे न थे, तो भी इनको रत्ननाम
कवित्व शक्ति विमोघ परिचय मिलता है।

मारायण धर्माधिकारी—एक स्मासं पण्डित। इन्होंने
जलपकण्ण पीर बन्धान्तकारकोपट्टरवरविधिकी रचना
की है।

नामव्यञ्जित—इमं नामके चनेक संज्ञक चन्मकार
देखनेमें पाते हैं । १ चनेकनामक नामक वेदाङ्गिक
चन्मके रचयिता । २ चन्मोदामके पुत्र । चन्मि भोमनाम-
के कहनेमें भोतगोविन्द बनाया है । ३ भस्वयगोपा
नामक चन्मकार । ४ वाटोकोमुदे नामक ज्योतिषाप्त-
के रचयिता । ५ श्रिहस्तुतिकार । इनके पिताका नाम
जिह्मो था । ६ ज्योतिष्यजितके पुत्र, ज्योतिष्य भोर
वेदाङ्गिकके टोकाकार । ७ विष्णुनाथ पण्डितके पुत्र,
पिटपण्डित-भोमनामके प्रयेता । ८ हिताथशूरिके पुत्र,
इन्मि वासन्तोर्ध्वस्त मदाचाररुगतिको एक टोका
जियो है । जिथोका मत है, कि इनके पिताका नाम
विष्णुनाथ था ।

भासायचरणिताचार्य—१ अक्षमय-गोमदीन चोर विरा-
 लोभके रचयिता । २ विविक्तके पुत्र एक माधवता-
 लम्बो प्रसिद्ध वेदाभिज्ञ । ३ योने समिपद्वारे नामक
 वेदाज्ञ, मध्वविजय नामक मयाचार्यको शिष्या, मन्त्रार्थ
 मन्त्री, विष्णुस्तुति, चं परासायच, परममध्वविजय वा
 परमेश्वरमानिजा नामक कितने चंद्रस्त पश्य प्रदयन
 विधे ई ।

मारायस्परिभाषक—यसोपर नामने प्रसिद्ध । इन्होने
अपने पुस्तक-निर्माणको रचना की है ।

मारावचरण—पातवंगीय मोकडे एक पवित्र राजा ।
जावरावंगीय देवो ।

दासराजब'छ देसूरी ।

नारायणपुर—१ विजयराजान् शिनेके पदार्थों पर परीक्षा
पाया। यह देखियेगे ११ मोन उत्तापद्वारेन पाणि
१। यहाँ कनेके माधोन दोर मिल्न हाय विमिट दिव-

शंभु, तमरायण, कुट, हमायण, श्वतामो, शास्त्र-
पाणि, चामर, मेषध, राजा प्रथम चार चार
तोला। भलोभाति पाठ इस तेनके यरीरमें मज कर
मानेसे सब प्रकारके यादुरोगोंको शांति होती है तथा
हृत्क, धर्मगुण, गन्धमा, वातर, कामता,
पाण्डुरोग, चर्मरोग पादि रोग भी जाते रहते हैं। भगवान्
विष्णुने स्वयं इस तेनको कहा अहो है, इसीसे इसका
नाम नारायणनेत पड़ा है।

(भगवद्गीता ० वातस्थिति ०)

नारायणदत्त—१ सद्गुरुपादसूत्र, एक संस्कृत कवि।
ये चक्रवर्तिनके विना थे। २ जमायकोलगावहनेके
रचयिता।

नारायणदाम—१ भारतपुत्र-विवाह नामक संस्कृत पद्य
कार।

२ हिन्दीके एक कवि। मृत्यु १६१५में इनका जन्म
हुआ था। इनके हितीपदेमकी भावा हन्दीमें लिखा।
नारायणदाम—चक्रवर्तिके शासनकालमें ये दाविवात्यके
एक प्रसिद्ध राठौर राजा थे। चक्रवर्तिने पानक रुकी
इन्के साथ लड़नेके लिये भेजा था। युद्धमें इनकी
हार हुई थी।

नारायणदाम कविराज—१ गीतगीवन्दकी सर्वाङ्गसूत्रः
नामक टीकाके रचयिता। हमानाथने मनोराममें यह
टीका सहित की है।

२ एक प्रसिद्ध वैद्यक चरित्रकार। इनके बनाये हुए
राजवैद्य नामक द्रव्यगुण, वैद्यक-परिभाषा और
मानोपध परिच्छेद नामक चरित्रोंका वैद्यक-समाजमें
गौरव काट है।

नारायणदाम सिंह—ये नारायण गोपात्री नामके प्रसिद्ध
हैं। इनके विनाडा नाम का प्रप्रदान। इनोंने
प्रज्ञापेय नामक एक सहस्र श्लोक्तिपाठ्य और मेषुः
येदकाधारी रचना की है।

नारायणदेव—गजराजि—मो(नारायण नामके प्रसिद्ध।
इन्हें विनाडा नाम प्रप्रदान और मुद्रा नाम करिष
मुद्रोत्तम मित्र था। ये चन्द्रावन्दिना और सहोत-
नारायण नामक रङ्गिनाथ बना गये हैं।

नारायणदेव—एक प्रसिद्ध बङ्गकवि। इनके विनाडा

नाम प्रसिद्ध था। नारायण देवकी वंशावली चन्द्र
शाखाकी और प्रयागाकीमें विभक्त है। मयिना
बनानेमें इनको प्रपूर्व मयि था। एहते है, जि एक
रामकी हन्दीमें एहमें देखा कि वंशोपासी लक्ष्मण
पा कर पद्य लिखनेके लिये एहें सकारित कर रहे हैं।
यद्यपि ये बहुत एहें लिखे म ये, तो भी इनका रचनामें
कविता-महिमा विमोच परिषद भिन्नता है।

नारायण धर्मोपदेशी—एक हमान् पण्डित। इनोंने
मधवकाण्ड और कथावकारकीपद्मरश्मिकी रचना
की है।

नारायणविराज—इस नामके चन्द्रक संस्कृत पद्यकार
देखनेमें पाते हैं। १ एहेंतकामायन नामक वेदांगिक
पद्यके रचयिता। २ लक्ष्मीदामके पुत्र। इनोंने भोमनाम-
के कहनेमें गीतगीवन्द बनाया है। ३ मन्त्रवर्गाया
नामक पद्यकार। ४ वाटोकोमुदी नामक श्यामिनाथ-
के रचयिता। ५ विष्णुसूत्रकार। इनके विनाडा नाम
लिखो था। ६ लक्ष्मणविराजके पुत्र, जयमित्र और
वैद्यवर्मके टीकाकार। ७ विष्णुनाथ पण्डितके पुत्र,
विष्णुपण्डित-भोमनाथके प्रचेता। ८ हिताचरिणके पुत्र,
इन्होंने पानन्दोत्तम महापारम्परिकी एक टीका
लिखी है। विषोका मत है, कि इनके विनाडा नाम
विष्णुनाथ था।

नारायणविराजार्थ—१ चन्द्रमन्त्र-भोमनाथ और विना-
मोमके रचयिता। २ विष्णुनाथके पुत्र एक मधुमनाथ-
नामकी प्रसिद्ध वेदांगिक। इनोंने मयिपण्डरी नामक
वेदान्त, मधुविजय नामक मधुवार्थकी ज्ञानगी, मन्त्रार्थ
मन्त्ररी, विष्णुसूत्र, चन्द्रमन्त्रावध, चन्द्रमधुविजय वा
चन्द्रमधुमन्त्रिका नामक कितने संस्कृत पद्य प्रचलन
किये हैं।

नारायणविराजक—प्रमोदर नामके प्रसिद्ध। इनोंने
चन्द्रपद्म-निन्दपदकी रचना की है।

नारायणवर्मा—प्राक्-मोम गीतके एक प्रसिद्ध राजा।
चक्रवर्तिनके थे।

नारायणवर्मा—१ विष्णुवर्मा नामके चन्द्रमन्त्र एक चन्द्र-
नाम। यह देविलीने ११ भोज उपाधुर्ग के पण्डित
हैं। एहेंतक नामोम और विष्णुनाथ विष्णु वि-
द्वान्

१ वैश्वामित्रकृत तर्कभाषाके एक टीकाकार ।

७ त्रिविधायनियंश नामक ग्रन्थके रचयिता ।

८ एक कवि । ये त्रिपुरदहन, नृत्यवाक्य, वासुकीपति, रामायण-प्रबन्ध और सुभद्राहरण नामक कुछ काव्य लिख गए हैं ।

८ दशकर्मपद्धति और धर्मपद्धति नामक स्मार्त-ग्रन्थकार ।

१० प्रायश्चित्त-संग्रहकार ।

११ नामनिधान नामक कोष और मानवधर्मशास्त्रके भाष्यकार । इनके नामनिधानकोषका रायमुकुन्दने उद्धृत किया है ।

१२ लघुहोमपरतिके रचयिता ।

१३ लघुचन्द्रिका नामक योगशास्त्रकार ।

१४ विधान-वज्र नामक स्मार्त-ग्रन्थके रचयिता ।

१५ वृत्तोज्ज्वल नामक छन्दोपन्य और परोक्षा नामक उसकी टीकाके रचयिता । तारावर्गमें इनका जन्म हुआ था ।

१६ वृत्तावलीकारके एक प्रसिद्ध टीकाकार । १६०२ सन् ११४५ ई०)में यह टीका रची गई थी । इनोंने इस प्रकार अपना परिचय दिया है,—

विद्यामित्रके वंशमें श्रोतागणायका जन्म हुआ । उनके पुत्र अष्टदेव, अष्टदेवके पुत्र गोविन्दभट्ट, गोविन्दभट्टके पुत्र रामेश्वरभट्ट और रामेश्वरभट्टके पुत्र नारायण हुए ।

१० वृत्तपतिवाच्य नामक न्यायग्रन्थके रचयिता ।

१८ संहारभागर नामक धर्मशास्त्रके रचयिता ।

१८ समनक्षत्र नामक वैद्यक ग्रन्थकार ।

२० साधनदीपिकाके रचयिता । ये 'शान्तकुम्भीय मठ'के सिध्य हैं ।

२१ क्षत्रविद्यामणि नामक शोधग्रन्थके रचयिता ।

२२ गोमिलपद्धत्युक्तके एक भाष्यकार । बसुनन्दनने इनका भाषा उद्धृत किया है । इनके विनाह नाम महाबल, विनाहका रामदेव और प्रविनाहदत्त नाम भाग था ।

२३ एक प्रसिद्ध रसार्ण, शर्मेश्वर भट्टके पुत्र और गोविन्द भट्टके पोता । ये १६वीं शताब्दीमें विद्यमान हैं । इनके बनाए हुए पत्तारंजिपत्रों, चक्ररंजिपत्रों,

पञ्चमित्राय, चातुर्वर्ग्यासविधि, चौदशमिमांसेमें टाहदिधिव्या, चाक्रहविधि, उत्तमप्रयोग (नृनाम्या-शामोमर्गविधि), क्षान्तिनियमपत्र, माधुरहत काल-निर्णयकी टीका, कर्मोपदेशसुविचार, गद्याकार्य-मुद्रापद्धति, गद्यावलीप्रयोग, मोक्षप्रवर-नियंश, त्रिवि-नियंश, तुलापुरुषमहादानप्रयोग, सिध्योत्प्रेत, दिग्वा-मुद्रापद्धति, प्रयागप्रेत, प्रयोगरस, मासमोमोक्षा, वद्र-पद्धति, जिह्वादि-प्रतिष्ठाविधि, शार्ङ्गपुष्पविधि, ह्योमर्ग-विधि आदि ग्रन्थ मिलते हैं । इनके पुत्रका नाम शान्त-लघुपद और पोतका नाम दिनकर तथा प्रसिद्ध रसार्ण कमलाकरभट्ट था ।

२४ नारायणभट्ट नामक प्रसिद्ध रत्ननिबन्धकार ।

२५ वैष्णवज्योतिर्मात्रके रचयिता ।

नारायणभट्ट—१ एक वैष्णव । ये हृन्दावनके वृन्दावर्गमें वास करते थे । ये प्रतिदिन वैष्णवोंको भोज्य द्वारा सेवा किया करते थे । एक समय किमी धर्मसे 'रक्त' प्रयागनीय जलिको कहा । इस पर बहुत दुःखित हो कर इनोंने उस धनिकी हृन्दावन और हरिमन्दिमाहात्म्य दिखानेके लिये हृन्दावनमें जो प्रयागनीय दिखता था या और रक्त' समझा कर कहा या इसी स्थान पर अभी तोय' है । (भक्तमाल)

२ क्षामीवासी एक विख्यात पण्डित । औरङ्गजेबने काशीस्थ देवविषय मठ कीर्तिके पक्षमें इनोंने प्रानवापी-के दक्षिणभागमें एक सुन्दर मन्दिरकी प्रतिष्ठा कर उसमें निवर्जित स्थापित किया था ।

(निरर्थक प्रकरण ५० पृष्ठ ८६)

नारायण मिश्र—१ अष्टावन्दनभाष्यकार । २ नारायण मिश्र नामक धर्मशास्त्रकार ।

नारायणभट्ट चारङ्ग—नक्षत्रधरके पुत्र । इनोंने प्रयोगसार या अष्टावन्दनभाष्य और अष्टावन्दनकी रचना की । इनोंने भोजनीका मत उद्धृत किया है ।

नारायणभट्टनी—भारतनारायणभट्ट नामक शङ्कराचार्य-ग्रन्थके रचयिता ।

नारायण मिश्रक—एक प्रसिद्ध वैद्यक ग्रन्थकार । इनके बनाये हुए कर्मसंग्रह, वागप्रवादि-नियंश, वैद्यविद्या-सवि, वैद्यग्रन्थ और वैद्यग्रन्थ आदि ग्रन्थ मिलते हैं ।

पद्मावतीक पवित्रा प्रकट करमे पर, ब्यूटेगमे स्वयं राजाके पास जा कर अपना पवित्राय रुद्र तुनाया। राजाने शास्त्रानुसार माशयन-यनमे पद्मावतीके विवाह ब्यूटेगवासीके साथ कर दिया। राजाके प्राधनानुसार वे दोनों लछी यनमे रहने भगे पोर'रहोने एक सुन्दर प्रसाद भी बनवा दिया। आज भी मे यहाँ ब्रह्माय-ब्यूटेग नामसे पुजित होत है।

पाकागाराजके मरने के कुछ दिनों बाद स्वर्णराज्य के राज्याधिकारी हुए। चतुर्दशवर्षों के राजा के देहांत के बाद और उनके भाई इन्द्रदेव राजा बन बैठे। इनके बंशधरोंने यहां सात पोढ़ी तक राज्य किया। पोढ़ी रामराज नाम के किसी राजाने छत बंशके पन्ध्रवें राजा रिवन्धका परास्त कर राज्य अपना लिया। रामराज के बंशधरोंने यहां ग्यारह पोढ़ी तक शासन किया। चतुर्विंशवर्ष-भर के राजाने अपने धराजित कर राजनिवास पर अपना अधिकार जमा लिया। चतुर्थ काथेन्द्र-भर। दोनगारोंने यह स्थान जीत कर अपने अधिकारों पर लिया। तभीसे यह भूभाग वर्तमान रूपमें आ रहा है। पाककाल दोनगारभूष जमींदार कहलाते हैं।

‘यि भाग चभी कारखेट-नगरमें रहने हैं। पूर्व समगमें
रहने कोई आसीय आराधन्यममें रहने है। यह आशाम
मवल चभी पुराना खोद टट फट गया है।’

कल्याणवाडेट्टे-मन्दिरके विषयकी सुति' तद-
पतिके विषयकी है, किन्तु उसमें कुछ वक्तो है। ओशाम-
सुजगतामण्यो लोग उस विषयको पुत्रा करते हैं। देव-
मेवाके लिये लमोदारीके कुछ धाम दाग दिये गये हैं।
'यो। वेदपाठ शिष्ट' गमने होता है, वंसा पोर कहीं
भी देखनेमें नहीं आता। इनके पास ही पद्मवनों पोर
पालुमाका मन्दिर है। पवाद है, कि वेडेट्टेमण्यो
रङ्गाय ओवलीपुरके विष्णु मेडोको कल्याणाम्ने विवाह
कर नाचापयवनमें था पर इधने मगे हैं।

१३ मन्दिरके पास: कुछ मोड़को दूरी पर चयन्तो-
मरका एक मन्दिर है। यह मन्दिर प्रातः १०
(मध्यम) घण्टाका बना हुआ है। मन्दिरका शास्त्रार्थ
देख कर जो सुभा जाता है।, मन्दिरमें जो यन्त्रासन
लगे हैं, कमल यन्त्रके आना जाता है, कि हजोश ह

राजा जब गदरक वष राख जे कुहे से, तब पर ई-म
वैजुण्ठ मयिधाम नामदेव चमत्कार कर देवे के ललनिवां-
दाये कहत-मी जमेले दुन को पो ।

इस मन्दिरमें प्रायः बारह सौ छुटके पानमें पर
पुर्वाक्ष मरिचासुमरिङ्गोक्ष मन्दिर केमनुमानवठम्
नामक व्यामो विद्यमान है। देवीको मूर्ति चटभुजा
है। एक घट सिङ्कके ऊपर भीरूदया घट गोमकासुर-
को ऊपर है। मूर्ति काष्ठ ८ छुटके दोमो। श्रावण-
मासमें १५ दिन तक देव-हो छुटमें भिक्षा लगता है।

यशकिं पुत्रागो वाप्यय नहो' है, तदर्थेनोप नामक
मेष गुरु है। यो भोग पुत्रा करत समय यद्योयमेन
यहन जेत है। संस्तुत नहो' ज्ञान पर भी यो भोग
मन्योपारण करत है।

नारायणचन्द्र—एक सङ्गशसी वेदाकरण। १९०१ में
१९१६ ई० में भातुरवाकर पोर सागवली नामक संस्कृत
व्याकरणकी रचना की है।

नारायणवर्त्मन (मं० त्रि०) नारायण मयं परं वमं ।
नारायणमय, यं ह नारायणकवच । देवराज चन्द्रन
इष नारायणकवच द्वारा रचित हो कर विपुलाको
परास्त किया था और त्रिनाको हो धूम्र-सम्पत्ति भोग
को यो । इस कवचका विशेष विवरण भागवतमें
होई स्तब्ध २७ अध्यायमें किया है ।

नारायणायना—गौडाक्षिप धर्मपालं महाभक्त्याधिपति ।
पान्थाज्जहं देवो ।

माशयवद्वलि (मं० पु०) माशयवाय माशयवमुद्रित
 देवः शनिः । मृत्युतितादिका प्रायचित्तपञ्चकर्मविधयः
 वद काम ओ पापघोके मर्म पर प्रायचित्त मृत्यु विधा
 जाता ३ ।

दुर्मर्यादा पर्वान्तु अथैव पाणिनीयोर्योऽर्थो भोज्यदेहिह
क्रिया वारंके निधि मारायण पाद पददेनतां ददमेध
ओ वनि दो नातो ई, सधे मारायणवनि हर्त ई ।

तो चर्चकपत्रविषय वाक्यान्तों होनि है, अन्तर्गत चर्चक
वा चर्चकदेहिज क्रिया कृत् भो भवति कोमो । यदि लक्ष्मी
यदि-चर्चकदेहिज क्रिया करनी हो, तो आशयवर्ति
होनी कोमो ही कदापि आशयवर्ति पददेवता न पदार्थ
वर्ति है कर लक्ष्मी चर्चकदेहिज क्रिया की जाती है ।

हृत्तयादि मेघेय चट्टा कर चोर विष्णुकी चम्पूना कर चके' मद्येनै किंच देते हैं। चमत्कार जो, मात वा पांच ब्राह्मणकी निमग्न कर चववास करते हैं चोर रातकी लगने हैं। सुवहकी जिसे विष्णु, ब्रह्मा, यम आदिकी पूजा कर एकीद्वि-विचित्र चतुस्रार आहवहक करते हैं। इस प्रकार मनुष्य काके ब्रह्मा, विष्णु, शिव, यम चोर प्रेतका स्मरण कर विघ्नोकी बिठाते हैं। चमत्कार प्रेतस्थानमें विष्णुका स्मरण कर पावाहनादि छिन्नप्रश्न समाप्त करते हैं चोर ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा यम इन चार देवताओंके सहयोगे चार विष्णु दे कर प्रेतके नाम गोवादि लेते चोर विष्णुके नामसे पांच विष्णु देते हैं। चमत्कार 'मिताय इदं' तिनीटकमुपनिवृत्तों यह पढ़ कर तत्तिनीटक द्वारा ब्राह्मणकी परितोष करते हैं। इसी समय कार्य शेष हो जाता है। (विशेष विवरण चमत्कार भ्रातृत्त परस्परिद्विषयिनि निष्ठा है।)

मिताचारके मतमें—जिनकी मृत्यु भोजके काटनेसे हुई है, उनके निध भो नारायणवलि विधेय है। 'मय' जने स्वयं विधेयः। चमत्कार' यावत् पुराणोक्तविधिना प्रख्यातं नामपूजा विधाय पूर्व' चमत्कार नारायणवलि कृत्वा भोज्ये माग' दद्यात् गाव प्रत्यक्षां। ततः सर्वभोज्य-देहिक' कुर्यात् ।' (मिताचार प्राग्विकतापराय भाष्यम् ०)

जिनकी मृत्यु मयमें हुई है, उनके निधे विधेयता यह है, कि जिन नामकी शुरुप्रवृत्तियोंकी पुराणोक्त विधिसे चतुस्रार चमत्कार वास्तुकी पाटि जागोकी पूजा करनी होती है चोर ब्राह्मणकी भर पेट चोर विधान है। इस प्रकार मय' होताते पर सुख' निर्मित माग चोर मो-दान करके नारायणवलि देते हैं।

शोधानमृत्युमें भो यह मत समर्थित हुआ है। रहु-मन्दनके मतमें मय' मृतोंके निधे नारायणवलि देनी नहीं होती।

जो पिच्छाधिकारो हैं, वे ही नारायणवलि देते हैं। नारायणवलिसे बाद लोग दिन तक चमोच होता है। चमोचके बाद मृतदेहके दाहादिकर्म करने होते हैं।

जो नारायणवलि देने हैं, केवल चमोचकी चमोच मानना पड़ता है। उनके शेष वा चमत्कार जमीनीकी भो चमोच नहीं होता। नारायणवलिसे विवा प्रोत्तमाके

उद्धारका उपाय नहीं। यदि कोई चामत्कारतो हो, तो चमोचकी चमोचियोंको नारायणवलि चमत्कार देनी चाहिये। जिन चामत्कारियोंके सहयोगे नारायणवलि पाटि नहीं होती, उनके चमत्कार चमत्कारभावी है।

(निर्मितगुण ० परिच्छेद)

मिताचाराके प्रायविष्ठाप्यायमें जो चमोचकरके है, उसमें इस नारायणवलिका विशेष विवरण लिखा है। विष्णुपुराणोक्त नारायणवलिना विषय भो मिताचरामें उद्धृत हुआ है। विस्तारके प्रयोग यहाँ चर्चित न लिखा गया। चमत्कारका और शरीरचर देखो।

नारायणवलि—समाकोटुदी नामक ज्योतिःमासाकार। नारायणवलिबिन्दु—एक त्रिभुज के आधार पर, चमत्कारके मुख चोर जटाधरके पोट। इसकी चमत्कारका टीका, मन्दन' मन्दोदिका नामक चमत्कारको टीका चो भविष्योभिनी नामक भविष्योदिकी टीका रची है।

नारायणवलिचर—नरविन्दके मुख, नैषधवलिचरका नामक नैषधोचकाकार।

नारायणवलिचरमुनि—मन्त्राभाष्यक ज्योतिःकार।

नारायणवलिमन्त्र—रामयणके मुख इहानि ११८६ ई०में पठाव' कोटुदी नामक चमत्कारकोटीकाको रचना की है।

नारायणवलि—एक विष्णुतत्त्व निरुद्धिद्वि. मय यावत् देहके मुख चोर शेष चमत्कारके पोट। इसका रचना हुआ शोधा-यनीयश्रीनमस्व नामक एक छन्द मन्दन पांच पादा जाता है। उस पादमें चमिन्दोम, चातुमोद, दमपुच-माच, चरकश्रीमानवि पाटि शोधानमोय चम'काटुका विषय विस्तृतभावसे वर्णित है।

नारायणवलिमन्त्र (म' पु०) शोधिमन्त्रमेद।

नारायणवलिमन्त्र (म' जो०) तोयमेद, एक तोयका नाम।

नारायणवलिमन्त्र—नीचिन्दानन्द चरकश्रीके दिया। इसमें १४८२ ई०में नारायणवलिचरचरिकाको रचना की है।

नारायणवलिमन्त्र—नारायणवलिचरके रचयिता।

नारायणवलिमन्त्र—एक विष्णुतत्त्व नैषधविध। इसमें रचनासे हुए चमिन्दोमिन्दानन्द-कारकपाद, चमिन्दोम-माच-पाद पाटि मन्दन पांच मिश्रित हैं।

नारायणवलिचरचरिका नामक भ्रातृत्त—चमत्कार मय' नामक ज्योतिःनिरुद्धिद्वि।

पूर्वपुत्रांनि जातिःप्राग्वह्यं करोमि पर भी सुधनसामो पाचारका चवमयवम किया था। ये लोग पिछ्छाद नहीं करते थे। मूल्यशिक्षी अजाने नहीं, माहुर देते थे। सभी मज्जानन्दके उपदेशमें कुनबो लोग पुनः प्राद्विध धारादि कार्य करने लगे थे।

सहजानन्दने 'पद्मदावादि' आ कर हम बातका प्रचार किया, कि नाना प्रतिमापूजाका कीर्ति प्रयोजन नहीं, एकमात्र नारायणकी सेवा करनेमें ही सुखिताम होता है। उनसे सुधने बहुत प्रतिमापूजाका निन्दावाद सुन कर ब्राह्मणोंने पेशवाकी यहां उन पर अभियोग चलाया। फलतः बाध्य हो कर सहजानन्दकी पद्मदावादि छोड़ना पड़ा।

वेछे शस्त्रीने 'पद्मदावादि' निकट जितनपुरकी गहड़मान नामक घाममें लया नरियादकी निकटवर्ती दमय घाममें 'महासद' नामक महापुत्रका अनुष्ठान किया था। लखन्यो जितनपुरमें रहते थे, तब इनकी उपदेशमें कितने लोग साधु हो गए थे।

१८८८ सन्वत्की भवनगरराष्ट्रकी चलागत गढ़वा नामक स्थानमें आ कर शस्त्रीने काठिनारदार दादा-एमन काबरकी दीक्षित किया। यहाँ सहजानन्द कुछ काम तक काठिनारदारके भयनमें रहते थे। १८९० श्रुतिधर्ममें यहां इनका गिराव आ सोकार किया। जिनमेंसे १५० राम विद्या 'महायोगी' या चंदासिनी हुई थीं।

वेछे शस्त्रीने अपने प्रधान प्रधान गिराओं को पद्मदावाद, भुज, नरियादकी निकट, बटुतान, जितनपुर, भोजका, सुखिवादि स्थानोंमें भेज कर सज्जनारायणके मन्दिर बनवाए। इनमेंसे पद्मदावादके स्वामी-नारायणका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है।

इसी समयमें सहजानन्दस्वामी नारायण नामके प्रसिद्ध हुए। इस समय इनके साखने पब्लिक गिराये थे। यहाँका विश्वास था, कि स्वामी नारायण श्रेष्ठपदके पवतार हैं। १८९५ ई०की २६वीं मार्चकी छुट्टानपुत्र विदय विवरके साथ इनकी सुताकात हुई। विधायक स्वामी नारायणके विधायमें बहुत भी बर्तते सिख गए हैं।

जब स्वामीकी विधायके बाद मुनाबान करने पड़े थे, उस समय उनके माधवीय भाव चमाराहो हो कर बहुत व्यक्त छगछ पदाति थे। उस समय स्वामीजीके सब बात मज्जि हो गए थे, कटिटा दानो हानोके ऊपर तक पा गए थे। ये हरवत्त विर पर पगड़ी रखा करते थे। उनकी उच्छ्वस कान्ति देख कर विगडकी उनके प्रति विशेष श्रद्धा हो गई थी। एक दिन विगडने जब उनका मन सुनना चाहा था, तब स्वामीजीने कहा था, 'भुवनके घटिकाता ईश्वर एक ही है, दो नहीं। जो उनकी श्रद्धा भवभावमें लिखा करते हैं, उनकी हृदयमें मेरे वास करते हैं। सारा संसार उनकी नियमों पर चल रहा है। मैं उनकी श्रेष्ठपद मानता हूँ। वे ही सत्य हैं। यह जो ह्यनुमति देख रहे हो, यथावत् मैं यह ईश्वरकी मूर्ति नहीं है। उस ईश्वरकी मज्जमें जानेके लिए हम लोग हम कमनोय मूर्ति की पूजा करते हैं। यहाँ ईश्वर मानवके परितापके लिए छुटान, सुनसमान, हिन्दू पादि सभी जातियोंने चरनोके धूप है। अर्थात् साराके लिये इस छगछपदमें भी वे चरनोके हुए थे। ईश्वरके निकट जातिभेद कुछ भी नहीं है। सभी एक जाति होर एक चरनोके हैं। परयोकारता होर धन-लोग महापाप हैं। मैं अपने गिराओंको इस महापापमें बचनका उपदेश देता हूँ। जो बहवा भी महापाप है। सब जोकोमें लया दिखसना ही यह धर्म है।

१८८६ सन्वत् (१८२८ ई०)की गढ़वाघाममें स्वामीजीने काठिनारदारके द्वार पर एक बड़ा मन्दिर बनवाया। उसी वर्ष ज्येष्ठ मासको सत्र दमोको ये स्वर्गघामकी विधाय। गिराओंने उनकी चरनोका पापुका एक मन्दिरमें गूजाके लिए स्थापन की। इसके सिवा स्वामीजीने जहाँ-जहाँ धर्मप्रचार किया था, वहाँ वहाँ उनके दिवोने रमारक रूपक 'बोड़ा'का गिराग किया है।

उनकी मूल्यकाद भी गुजरात होर काठियावाड़के हजारों मनुष्य उनके मतानुवर्ती हुए हैं। इन सब लोगोंको स्वामीय लोगोंने कितने बट्ट भिक्षुने पढ़े हैं, यह बर्तमानता है। कितनीमें तो चरन प्राप्त भी निहावर कर दिने हैं, जो भी स्वामीजीके प्रति अपने बट्टक अधिक विमल न है।

पूर्वपूर्वोंने जाति त्याग नहीं करने पर भी मुसलमानों
प्राचारका प्रयत्न किया था। ये लोग पिछड़ा
नहीं करते थे। मृत्युश्रितिको जमाने नहीं, माह देते
थे। सभी मजहानन्दके उपदेशसे कुनबो लोग मुनः
याह पोर दाहादि कार्य करने लगे हैं।

मजहानन्दने 'पहमदाबादमें' जा कर हम बातका
प्रचार किया, 'कि जाना प्रतिमापूजाका कोई प्रयोजन
नहीं, एकमात्र नारायणकी सेवा करनेसे ही मुक्ति प्राप्त
होता है।' उनके मुखसे यह प्रतिमापूजाका निन्दावाद
शुन कर ब्राह्मणोंने पैगवाकी यहां उन पर अभियोग
चलाया। फलतः प्राप्य हो कर मजहानन्दको पहमदा-
बाद छोड़ना पड़ा।

पैठि इन्हीं 'पहमदाबादके' निकट जितलपुरको
गाहड़मान नामक ग्राममें तथा नरियादके 'निकटवर्ती'
दमथ ग्राममें 'महादह' नामक महायज्ञका अनुष्ठान
किया था। 'जब-ये' जितलपुरमें रहते थे, तब इनके
उपदेशसे कितने लोग साधु हो गए थे।

१८६८ सम्बत्की भयनगरराज्यकी प्रतापत गढ़वा
नामक स्थानमें जा कर इन्हीं काठिनरदार दादा-एमन
नामकी दीक्षित किया। यहाँ मजहानन्द कुछ बाल
तक काठिनरदारके भयनमें रहे थे। १८७० व्यतिथिने यहां
इनका मिथ्यात्व भी स्वीकार किया। जिसमें १९०० सम्-
वत्ति 'महाराजों'का संस्थापिनी हुई थी।

पैठि इन्हीं अपने प्रधान प्रधान मित्रों की पहमदा-
बाद, भुक्त, नरियादके निकट, बड़ताल, जितलपुर,
धोन्का, सुनिये पादि स्थानों में भेज कर सप्तीनारायणके
मन्दिर बनवाए। इनमें से पहमदाबादके स्वामी नारायण-
का मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है।

इसी समयमें मजहानन्दस्वामी नारायण नामसे
प्रसिद्ध हुए। इस समय इनके साधने अधिक मित्रों थे।
पछोंका विचार था, कि स्वामी नारायण योक्षणके प्र-
ताप है। १८२५ ई० की २५वीं मार्चको चट्टानपुरमें
विषय विचारके साथ इनकी मुलाकात हुई। विषयविचार
स्वामी नारायणके विषयमें बहुत-सी बातें लिख गये हैं।

जब स्वामीजी विषयके साथ मुलाकात करने पाये
थे, उस समय उनके साथ बीस-साठ पर्यटकों की
बहुमंस्क समष्टि पदाति थी। उस समय स्वामीजीके
सब बात सकेद हो गये थी, सकेद दाहो कृतोके ऊपर
तक जा गये थे। ये हरबल मिर पर पगड़ी रखा करते
थे। उनकी उल्लस कानि देख कर विगदकी लगे प्रति
विषय थाहा हो गई थी। एक दिन विषयने जब
उनका मत सुनना चाहा था, तब स्वामीजीने कहा था,
'सुननेके खातिर खातिर एक ही है, दो नहीं। जो
उनको यह प्रेम-भावसे विना करते हैं, उनकी इद-
में वे काम करते हैं। सारा संसार उनकी नियमा पर
चल रहा है। मैं उनकी योक्षण मानता हूँ। वे ही
मित्र हैं। यह जो लक्ष्मण की देख रहे हो, यद्यपि वे यह
ईश्वर की मूर्ति नहीं है। उस ईश्वरकी महत्त्वमें जानने
लिए हम लोग हम-कमतोय मूर्ति की पूजा करते हैं।
यही ईश्वर मानवके वरिष्ठापके लिए चूटान, मुसमान,
हिन्दू आदि सभी जातिप्राप्त चकतोके हुए हैं। मन्त्रों
सहारके नियम लक्ष्मणमें भी वे भयनीके हुए हैं।
ईश्वरके निकट जातिभेद कुछ भी नहीं है। सभी एक
जाति और एक बर्णके हैं। परयोकातरता पोर भन-
मोम महापाप है। मैं अपने मित्रों की इस महापापमें
बचनेका उपदेश देता हूँ। जो नइया भी महापाप है।
मैं जो भी देया दिखाना ही यह धर्म है।

१८८६ सम्बत् (१८२८ ई०) की गढ़वाग्राममें स्वामी-
जीने काठिनरदारके द्वार पर एक बड़ा मन्दिर बनवाया।
उसी वर्ष केवल साधकों कुछ हमीको वे स्वर्गधामकी
विधाएँ। मित्रोंने उनको पर्यटकों वादुका उस मन्दिर-
में पूजाके लिए स्थापन कीं। इनके विधा स्वामीजीने
जहाँ मन्त्र प्रचार किया था, वहाँ वहाँ उनके मित्रों-
ने स्मारक स्वरूप 'घोडा'का निर्माण किया है।

उनकी मृत्युके बाद भी गुजरात पोर काठिनरदार-
के ब्राह्मणों मनुष्य उनके मनापूर्वकों हुए हैं। इन सब
लोगोंकी स्थापना लोकोमें कितने बह भिन्न पड़े हैं,
यह यथेताती है। कितनोंने तो अपने प्राय भा-
निवार कर दिये हैं, लोभी स्वामीजीके प्रति अपने
पटल भक्तिसे चिते न दें।

॥५॥ विद्यादेवि वसतिः कुरुवा कर्माणि कर्तव्यवत्तः
 ॥६॥ अहं भवति मे भवति भवति भवति भवति भवति भवति
 ॥७॥ भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति
 ॥८॥ भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति
 ॥९॥ भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति
 ॥१०॥ भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति भवति

बरगो ३०.४.५७ "मियापूर" नामक २३३ टोकी का
 एक गन्नेस घास की ५०० टोकी का घास की टोका निर
 है है । इसमें सिवा ५०० टोकी का घास का घास निर
 माधवे सतमा निर है निर "मन्मथजीवन" नामक एक
 सतमा का घास है निर २३०० टोकी है ।

[illegible]

नारायणायनो—श्रीर्ध्वं हि विष्णुः शिवायामिव । द्वापि नान्यथैव
 गैर्वितीरयामीदृश्याः पालनं कर्तुं हि । एतन्वाक्यमाह,
 किं प्रहाराचार्योऽनेन सह संस्कार इत्यर्थं विधातुं ।
 नारायणायनम् (गं० ली०) नारायणस्य चान्दमम् । तीर्थ-
 भेदे, एतत्तीर्थं वा नाम ।

मः। अथाप्यस्य—मृतिं शायमके मिया । रमणीयमायं कुल
 यदेतद्विद्याविमलम्, भवेत्विद्यारत्नमिदम्, आशुतथा-
 यमोऽस्य धर्मः सन्त्येव यथा यमो वासि वै ।

महाराष्ट्र (मं० स्त्री) महाराष्ट्र राज्य चराम् । विष्णुका
चराम् । दह, दह, दह चो। दह मे दह महाराष्ट्रके
दह है ।

॥ १०८ ॥ (गं. दा.) नारायणाय नमः ।
॥ १०९ ॥

“ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ਦਾਖਲੇ ਸਾਧਨਕ ਬੰਨ੍ਹੇ ਸਾਧਨਕਿ ਕਰੇਪੁਰੀ ॥੧॥

(५१८७०६४)

देवप्रसाद भट्टराज कानूनी मामलें

विषयमें निवास है। कि देवी मन्मथों; जहाँ सबकुछ जान बा
नरनाशकही वाचस्पत्यका है। हम जाहल से साधुओं
बदलायी है। देवी बजावर नामा प्रपन्न परिवारा
है। ३ भाग्यः काम-निहित दस प्रकार है—

“दण्डः देवता इति भाषासमस्तस्यैः ।

अत्रिचो(१२५१२६) सेव ५११२६० (१२५१२६)

(॥ १०० ॥)

यस, निज, कय सोर गुण पादिनि मारायचको मुखा
 के सोर मारायचको यति है, हमोने अहमोको मारायचको
 कहते हैं ।

“नमोऽस्तुते नमोऽस्तुते नमोऽस्तुते ।

તથા દરેક અંગીરણના નેત્ર અપારણી અમર્યા ૫૦

(अथर्ववेद-अथर्वसंहिता-अथर्वश्रौतसूत्र-३० अ०)

१ यथाशक्ती, यथाशक्ती, ४ गङ्गा। २ सुदृढमुनि-
पदां, सुदृढमुनिष्ठा लोका नाम। ३ योऽप्युच्यते। ४ यथाशक्ती
नाम त्रिभिः लब्धभिः सुदृढैः सुदृढैः सुदृढैः सुदृढैः सुदृढैः सुदृढैः
त्रिभिः दियं याः। (पु.) ५ विष्णुमित्रं यत्र पुत्रका
नाम।

नारायणो—मम हृदये मम लोभाय नमस्ते मम
 व्यास । कथं वादाय १० कोपमं दूरा पर प्रथमिन
 ६ । यदा हृदये ममिदं ६ ।

आराधनोत्सव—एक माघीन तन्त्र : तन्त्रधार, आराधनार-
विकास, माघतोषिणी आदि यन्त्रोनि यह तन्त्र यह न
हवा है।

मारायचोम (बं० ति०) मारायचफोट मारायचः ।
 १ मारायचसकथो । (बु०) २ महाभारतका एक
 कथाकाव्य । इसमें भारत की मारायच काव्यिका काव्य
 है । यह विषय आग्निपुराणमें १३०-वें की वर १३८
 पद्योंमें लक्ष किया है । ३ लघुमहाभारत कथनमें है ।

माहाविन्दुवारली—१ पुष्पवन्देय भागक वेदात्मिक
 वन्देय इतिहास । २ अक्षरवर्णमाला पुष्प भागक ।
 माहाविन्दुवारली—द्वितीय भागक वेदात्मिक
 वन्देय इतिहास ।

अथानुसंगिकविचारः । २०

•

आचार्यः (भू० पु०)

४। माधारयतः यद् मारियन ओऽयम् जगत् माधार-
मं विनया है।

५। राजहंस द्विष्यते कोमा कोटा मारियन। इम
प्रकारका मारियनः बहुत कम देया जाता है, लेकिन
इसका स्वाद होता है बहुत मीठा।

६। मारियन पिटुके-यन्त्रक दुग्धम कोमि है। जमोन यदि
पल्लावा समं हो, तो उसमें एक प्रकारका कीड़ा उत्पन्न
होता है। उस कीड़े का मन्दाव सामायुक्त धुमरपर्वका
होता है। ये लकड़ी की घेड़ने से ही होकर प्रवेश करते
हैं और यह भेद कर बाहर निकल पाते हैं। उसमें
यह कीड़े मर जाता है। स्थानविशेषमें ये कीड़े कई
प्रकारके होते हैं। इसमें बचनेकी प्रधान चोपध लक्ष्य
है। उसकी ऊपर लम्बक डालनेसे लम्बक चयवा उसका
जल हलके भीतर प्रवेश करता है जिससे कीड़े बाहर
निकलने लगते हैं चयवा यहाँ मर जाते हैं।

७। इस प्रकारके कपड़े लकीरों की एक प्रकारका मिश्रण
या मँद निकलता है जो देखनेमें स्वच्छ और कुछ काम
मर्षका होता है। मारियनके हिलके और ठंडकसे रंग
तैयार होता है जो कपड़े खादि रंगानेके काममें
पाता है।

८। मारियनसे जो दूध प्राप्त होता है उसे चुने वा
पन्ना रंगके साथ मिला कर यदि उसमें दोबार रंगाई
जाय, तो दोबार बहुत एकमकाने लगते हैं और यह
रंग भी दीर्घकाली होता है।

९। मारियनके हिलकेसे रंगी, गहरे और धोके का रंग
बनता है। कोषोन, मन्दाज, मासादोय, मन्दावर, भिन्द,
चित्रापुर खादि स्थानोंमें मारियनका हिलका सब जगह-
में उत्पन्न होता है। मारियनको यदि बढ़िया रंगी
बनाना चाहें, तो जो मारियन एक वर्षका हुआ है उसे
जहाँ तक हो सके चँपद करी। यदि उससे हिलकेको
स्थानसे दूध (यदि १८ भाग तक) पानेमें सिंगोय रखे। बाद
गुहर खादि दारा लंबे पीटने और धूममें सुखानेसे रंग या
तार से पार हो जाते हैं। इस तारसे कोरणी बनाई जाती
है। यह देखनेमें सुन्दर और सुगन्धकी होती है।
कासादोय खादि स्थानोंमें रंगी मारियनसे रंगी खादि
बनते हैं। लेकिन किसी किसीका कहना है कि इस

प्रकार जो रंगी बनाई जाती है वह दीर्घकाली नहीं
होती।

मन्दावर कपड़न खादि स्थानोंमें मन्दा से पार करनेसे
विशेष जिन मारियनसे घेड़ोंमें हिल कर देने है। उनका
हिलका उत्कृष्ट और मज्जु नहीं होता। भारत भारमें
मन्दाज प्रदेशमें ही सबसे अधिक मारियनको रंगी बनाई
जाती है। १६। रंगी मन्दाजमें मध्यभागमें पहले पहल
युरोपमें मारियनको रंगीनी रंगी हुई थी।

मारियनके पत्तोंमें चटार, परदा और टीकरो खादि
बनते हैं। प्रत्येक पत्तोंके बीचोंमें जो छुपकाका
रहती है, उसमें मन्दाज से प्रयुक्त होती है। किसी किसी
दीपके लोग पत्तोंमें छोटी भावका तिरपाव बनाते हैं।
पत्तियां घाको वाजनमें भी काम पाती हैं।

माधारयतः मारियनसे रंगी, निज, चोमो, मिट्टा, स
और गंधा प्रस्तुत होती है। इसका रंग बहुत काला-
मन्द है। मारियनसे देवी।

कदा मारियन मयकारक, कलम सहोपक और
तेज गुणविशिष्ट माना गया है। सुतरा मारियन सब
समय चोपधमें व्यवहृत होता है। दूध भी चोपधके काम-
में पाता है। इसके लक्ष्मी उत्पत्तिरहित विषयमें किसी
किसी डाक्टरका कहना है, कि मारियन मारियनका लक्ष्मी
वा दूध सुगन्धविशिष्ट, विषासात्मक, मध्यम और विष-
ल्वर तथा मन्दावको पीढ़ाके लिए विरोध उपकारी है।
अधिक पोने पर भी यह कमकीई मुहलम नहीं करता।
किसी किसीमें इसे रक्तपरिष्कारक माना है। मारियन-
को गरी प्रतिहारक, विषय गुणविशिष्ट और, मुखकारक
है। इसका दूध हृष्य ८ कोट प्रतिदिन दो तीन बार कर-
के सेवन करनेमें पक्षमारोग और चातुर्विहृतरीय जाता
रहता है।

इस दूधमें स्नात भी घटित है, यह छोटे छोटे प्रक्षी-
की भी विनाश का सहता है। अधिक दूध, सुगन्धका
काम करता है।

मारियनकी गरी और तेजमें भिन्न भिन्न दूध मिला
कर भिन्न भिन्न प्रकारको चोपध प्रस्तुत करने हैं। प्रक्षीके
गलेके भीतर यदि, घन दूध हो, तो कचे मारियनके
लक्ष्मी यह पक्षी हो जाता है।

४। साधारणतः यह नारियल जो सब जगह बाजार में बिकता है।

५। राजहंस द्विपके से मा छोटा नारियल। इस प्रकारका नारियल बहुत कम देखा जाता है, लेकिन इसका स्वाद होता है बहुत मीठा।

६। नारियल पौधे के सबसे दुर्यत होते हैं। जमीन यदि चम्पल सर्वश को, तो उसमें एक प्रकारका कीड़ा उत्पन्न होता है। उस कीड़ेका मष्टक चामायुक्त घुमरवर्णका होता है। ये सब कीड़े पौधे के नीचे की कर प्रवेश करते हैं और धीरे धीरे कर बाहर निकल आते हैं। चम्पल में यह कीड़ा मर जाता है। स्थानविशेषमें ये कोई कई प्रकारके होते हैं। ७। जलसे जलनेको प्रधान पोषण अवस्था है। इससे ऊपर जलका क्षासनसे जलक पचका उमका जल हृदय भीतर प्रवेश करता है जिससे कोई बाहर निकलने लगते हैं पचका बहो मर जाते हैं।

८। यह हृदय के पचने के ही कारण एक प्रकारका गिराव या मोड़ निकलता है जो देखनेमें स्वच्छ पौर क्लृप्त मान वर्णका होता है। नारियलके द्विपके पौर, डकलसे रंग हो जाता है जो कपड़े पादि रंगानेके काममें आता है।

९। नारियलके जो दूध प्रस्तुत होता है उसे चुने वा पात्र रंगके पात्र मिला कर यदि हमसे दोवार रंगाई जाय, तो दीवार बहुत चकमकाने लगती है और यह रंग भी दीर्घकाली होता है।

१०। नारियलके द्विपके रखी, गरी पौर चोढ़का मात्र बनता है। कोकोन, सम्राज, माघादीप, मन्वार, मिहल, चित्रपुर पादि स्थानोंके नारियलका द्विपका सब जगह में उपलब्ध होता है। नारियलको यदि बढ़िया रखी बनाया जाय, तो जो नारियल एक वर्षका हुआ है उसे जल-नाक हो मके घबह करे। सोले उससे द्विपकेको स्थानमेठने पूरे १८ माघ तक, पानोमें भिगोए रखे। बाद सुहर पादि द्वारा उसे पोतने पौर धूममें सुपानेसे रेंगे या तार से पार हो जाते हैं। इस तारसे कोठरी बनाई जाते हैं। यह देखनेमें सुन्दर पौर सुगन्धकी होती है। माघादीप पादि स्थानोंमें इसी मिट्टीसे रखी पादि बनते हैं। मेक्सिकनियों की कोठा कहना है कि इस

प्रकार की रखी बनाई जाती है यह दोषकायी नहीं होती।

मन्वार उपकृत पादि स्थानोंमें मट से पार करनेसे जिये जिन नारियलके द्विपके में डेट कर देते हैं। उनका द्विपका उपलब्ध पौर बहुत नहीं होता। भारत भरमें सम्राज प्रदेशमें ही सबसे अधिक नारियलको रखी बनाई जाती है। ११। यथाप्रीति मध्यभागमें पक्षी पवन युरोपमें नारियलकी रखी की रखी हुई थी।

नारियलके पक्षीमें चटार्ड, परदा पौर टीडरो पादि बनते हैं। प्रायः पक्षीके बोधमें जो सुष्ममाका रहती है, उससे मध्याह्न को प्रसुत होती है। किसी किसी दीपके लोग पक्षीमें छोटी भावका निराण बनते हैं। पक्षियां घरको लाजमें भी काम आती हैं।

साधारणतः नारियलके रंगो, तेज, कोमो, मिट्टा पौर गराव प्रस्तुत होता है। इसका तेज बहुत ऊँचा मष्ट है। नारियलके देखो।

कथा नारियल मन्वारक, कुल मन्वोचक पौर तेज सुषविमिट माना गया है। सुतरां नारियल सब समय पोषणमें व्यवहृत होता है। दूध भी पोषणके काममें आता है। इससे जलकी उपकारिताके विषयमें किसी किसी छात्रका कहना है, कि उपरिपक्त नारियलका जल वा दूध सुषविमिट, विषासामाष्ट, मन्वपद पौर विलम्बर तथा प्रकाशकी पोढ़के लिए विधेय उपकारी है। अधिक पोने पर भी यह जल कोई नुकसान नहीं करता। किसी किसीने इसे रक्तपरिष्कारक माना है। नारियलकी गरी पुष्टिकारक, छिन्न सुषविमिट पौर सुषकारक है। इसका दूध इसे ८ घण्टा प्रतिदिन दो तीन बार करके सेवन करनेसे यक्ष्मारोग पौर पातुबिलतरोम जाता रहता है।

इस दूधमें खाट भी मयेष्ट है, यह छोटे छोटे बच्चों की भी पिनाया जा सकता है। अधिक दूध, सुषावका काम करता है।

नारियलकी गरी पौर तेजमें भिन्न भिन्न द्रव्य मिला कर निच निच प्रकारकी पोषण प्रस्तुत करने हैं। कहीं कहीं मन्वेड भीतर यदि इन दूध को, तो कभी नारियलके जलसे यह पचका हो जाता है।

बैर बीगो डाक कार चमे डाल लीं। धनकार सममें भुजा
दुधा भारिकेस मध्य पाठ पत्र, कोटि चूर्ण कार पत्र पोर दुध
दो बैर मिश्र कर घोसो पाँचवे पाक करे। वंघोचन,
विहट्ट, मोघा, टारबीगो, तेजपत्र हवायगो, नागबेयर
धनिषा, पोपर, गजपोपर पोर बीरा प्रत्येक का चूर्ण चा-
पत्र से कर इसमें डाल दे पोर भनोभाति हल कर मोचे
उतार लीं। इसको सेवन मात्रा चरितोना है। इससे शूल,
पक्ष पित्त पोर हृद्गो पाटि जानि रहते हैं। यह पोपच
मनपुटिकर, हृद्य पोर उत्तम यात्रोकरण है।

(भैरवगुण-शूकविहार)

भाषप्रकाशमें भारिकेसखण्डकी प्रवृत्त प्रकाशी इस
इस प्रकार लिखी है—

चार पत्र भारिकेसको एक पत्र मध्य-हृत्तमें भुज कर
उत्ते भारिकेसकी जल पोर मध्यहृत्तके साथ पाक करे।
पाक समाप्त हो जाने पर उत्ते उतार ले पोर ठण्डा हो
जाने पर सममें निम्नलिखित चूर्ण डाल दे।

चूर्ण यथा—धनिषा, पोपर, मोघा, टारबीगो पोर
नागबेयर प्रत्येक पाक तोना लीं कर उसका चूर्ण बनाये
पोर सममें डाल दे। इसे धनिके बनावकके धनुवार
एक पत्र चयवा पाप पत्र मात्रामें प्रतिदिन भक्षण करे।
इससे पुष्टयत्न, निद्रा पोर बलको वृद्धि होती है तथा
रक्तपित्त, पित्तविषाद, परिणामशूल पोर ज्वरोम गट्ट को
जानि है।

हृद्यभारिकेसखण्ड-प्रवृत्त-प्रकाशी—भनोभाति दोमा
दुधा एक प्रवृत्त भारिकेस, चर्ब पाकुक बीजसहित
कुषाण्डको एक कुट्टव मध्य-हृत्तमें भुज ली। पीछे
सममें एक पाकुक मध्यहृत्त पोर दो प्रवृत्त बीगो डाल कर
उत्ते पीसो पाँचमें पाक करे। भनोभाति पाक हो जाने
पर उत्ते उतार ले पोर चर ठण्डा हो जाय तब निम्न-
लिखित चूर्ण डाल दे। चूर्ण यथा—कोटी इलायको,
धनिषा, चायना, सेतवापक, मोघा, सुगन्धवास, खल-
खलकी अङ्ग, रक्तचन्दन, क्रिष्णमिषा, बैर, टारबीगो,
तेजपत्र पोर चपूर प्रत्येक चार चार तोषा लीं कर उससे
चूर्णको सममें मिला दे पोर उत्ते एक मशोन बरतनमें
रख दोठे। इसको सेवन-मात्रा एक पत्र है चयवा बीगोके
धनिके-इसको दिने चयवा कर यथामात्रामें क्षात-कालमें

सेवन करावे। इससे निवृत्त कारमेंसे उपश्रित, ज्वर,
पित्त, रक्तपित्त, पक्षि, नागरिक, विगया, टाड, पाण्डु-
बीग, कामला, चय पोर परिणामशूल पारोम्य हो जाता
है। भाषेन कालमें मयवाच, चयबीगोहमासे इसे
बनाया है। यह सर्वप्रसादक, गरीरका उपश्रुतकारक,
यकृतहित पोर पुष्टयत्न, निद्रा तथा वनप्रदायक है।
भारिकेसलेन (४० को०) भारिकेसजनकमय तेन।
भारिकेसलेन तेन। येदुक्तसे समसे इसका गुण—
जाओकरक, गुह, पोषकायका पोषक, वात पोर विष-
नाशक, मृदाघान, घनेर, ज्ञान, काम, यशस, बुद्धि-
लोपमें हितकर पोर जननायक है।

प्रवृत्त प्रकाशी—उत्ते भारिकेसको एकका कर सममें
क्षिप्तको चयन कर दे। समसे बीसमें त्र्यङ्गुल जा
पटाव है उत्ते कटारोसे काटने पर समसे भीतर
एक चर्बका एक चयवाका कठिन पटाव मिलेगा।
इसका नाम भारिकेसको गरीर है। इसी गरीरमें तेन
तैयार होता है। भारतवर्षमें निम्नलिखित सपायमें
भारिकेससे खल पोर चर्बकोन तेन बनाया जाता है।
यहसे भारिकेसकी गरीरकी लक्षमें कुछ जान तब पित्त
कर पीछे उत्ते किसी एक यन्त्र द्वारा पीछ लेते हैं। तब
इसका चय पोषी दूर गरीरको लगे साथ मिला कर
उपश्रुते है। ऐसा करनेसे तेन जलके ऊपर बहने
लगता है। यह तेन बहुत परिष्कार पोर तरल होता
है। बाधारहित भारिकेसको गरीरको घानोयन्त्रमें डाल
कर पीपच क्रिया द्वारा भारिकेसलेन तैयार होता है।

कहीं कहीं भारिकेसको गरीरको घानमें वा धूपमें
भनोभाति सुखा लेते हैं पोर पीछे उत्ते चलोमें दोम कर
तेन तैयार करते हैं। इस प्रकार भिन्न भिन्न स्थानोंमें
भिन्न भिन्न सपायोंमें भारिकेससे तेन निष्कास जाता है।
भारिकेसलेन देयमें भारिकेसका तेन उपरकी चर्बोका
तब गाढ़ा पोर दृढ होता है।

दोमप्रधान देयोंमें भारिकेसलेनका रंग दृढ पोर
जलके समान तरल होता है। जर तब यह मात्रा
रहता है। तब तब इससे दुग्ध निकलतो है, कुछ मात्रा
को जलमें डी बह उप मन्थविमिट हो जाता है।
भारिकेसलेन गरीरों पीछे बहने इसी तेनको काममें जानि

भारिकेनको कोटन बस्ति गुणवत् होती है और लम्बा-
नस्सामें जिसकागज है। उसे भारिकेनको मरी, मुना दूदा
बाबल दोर मरेशने सेमने एक प्रकारका मिट प्रप्य
प्रयुक्त होता है।

भारिकेनका लम्बा रस लकीरे समान व्यवहन
होता है। इस रसको कुछ बाल लक बांध पर चढ़ानेमें
‘‘बका लकीर मया की कर उठ जाता है और जो रस
बच जाता है वह सोमोके जड़े समान मोटा होता है।
यदि लकका भाग बिचकून की जला दिया जाय, तो
उसमें सोमोका मिश्रण पा जाता है। इसी प्रकार भारि-
केनका गुह और भारिकेनको मिश्रो प्रयुक्त होती है।
भारिकेनका दूदा भी बसता है। यामने माग गुगरोने
बदनेमें भारिकेनको मुनाबम मरी खाई जाती है।

आयुर्वेदके मतमें इसका गुण—भारिकेनका जल
मोतल, गेलाक, दुर्गंध, बस्तिमोघन, विटथी, हवा,
पुंज, बलकारी, विपत्तार, विपत्तिय और दाहनामक
माना गया है। पुरातन या ओषं भारिकेन विपत्तार,
भारी, विदाहं और विटथी है। लकीर जलका जल
मोतल, हठगका हिलकारक, दोषन, वीर्यवर्धक और
हलका है। इसमें विपुष्पिका, हवा, परिवागमूल, चरम
विपत्त, चरवि, चय, शक्तिविपत्त, वाताक, वाण्ड, विपत्त और
विपत्तनामक गुण है। इसका व्याह भी बहुत सीका है।
गरीका गुण—कोमल, मोतल, बस्तिमोघक, शुक्ल और
वातविपत्तनामक है। यह भारिकेनका गुण—विपत्त-
विपत्तार, कथ, मयूर और मोतल। भारिकेनको कायन
कषाय, विपत्त, मयूर, पुंज और भारी। कोमल
भारिकेनकी मरी जिनकर और मूत्रदायनामक मानो
गई है। भारिकेनके जलमें जाम गुह जाता है।
इसमें मोतल, हवा, दोषन और शुक्लविपत्त गुण है।
कथा भारिकेनका जल प्रायः निरुपन होता है। विपत्त
जलमें कोमल भारिकेन और उबला जल बहुत फायदा-
मन्द है। भारिकेन हम सोमोका एक प्रकारका बांध है।
यहमो निदिमें भारिकेन बाता निविह बनगाया है, किन्तु
महाहमीके दिन देवीका प्रसाद भारिकेन गां मकने
है। ओ मोहनम यहमोके दिन भारिकेन बाता है
यह गुण होता है। कोमलका बास्तिमें भारिकेनका
जल की कर आदरप करना विधि है।

‘‘भरिकेनकोर’’ और सोमोका विपत्त है।

(विपत्तार)

कामेके बरननेमें यदि भारिकेनका जल रखा जाय,
तो यह मरने समान हो जाता है। इसीसे कथिह
प्रान्तमें भारिकेनका जल लकीरें बाता बाहिये।

‘‘भरिकेनकोरके कथे हवामारे विपत्त’’ मयूर।

वयव्य मागमयव्य मयूरका गुं मिया ह

(वरीमोवन)

भारिकेनमें यमैक प्रकारका बांध प्रयुक्त होता है।
यह भारिकेनको योव कर उभे सो, दूब और गुहके
माग मिश्रणमें कथिह बांध मीयार होता है। यह
बांध मयूर, चिठ्ठा, पादि नामोंसे प्रविह है।
भारिकेनको (मं० वी०) भारिकेनकोहवा घोरी। भारि-
केनके जलसे प्रयुक्त एक प्रकारका बांध-प्रप्य। प्रयुक्त
प्रधानी—भारिकेनको गरीका छोटा छोटा गुह बनाये।
येही उभे मो गुह, सोमो और मयूर-गुहके माग मिश्रण
कर मयूर चमिके कथायमें पाक करें। इस प्रकार जो
नामयो प्रयुक्त होती है उसे भारिकेनकोहवा कहते हैं।
गुण—जिवा, मोतल, चरमका पुटिकाक, गुह, मयूर रस,
शुक्लवर्धक और रसविपत्त बायुनामक।

भारिकेनमयूर (मं० गु०) चोपविपत्तिय, एक प्रकारको
हवा। प्रयुक्त प्रधानी—हवा भारिकेनके मयूरको मिश्रण
पर पाव कर उभे बलासे निबोह जेत है। यह लमनेमें
ह वन में कर बांध पाक योमें उभे भूत जेत है। चरमकर
थार मेर भारिकेनके जलमें बांध मेर सोमो मिश्रण कर
उभे जान लें। इस जलमें भारिकेनको गरीको पाक
करें। पाक मिश्रण को जलमें उभे कथाय में और धनिशं
पोष, मोदा, कंठमोघन, मोरा, कथमोरा प्रत्येक बांध
लोभा। दाहचोमो, निप्रव, हवायरी, मागमेर प्रत्येक
एक माग। इस सबका चूच बना कर उसमें जल
दे। इस चोपके शिवन करनेसे चरमविपत्त, चरवि
चरमोम, शक्तिविपत्त, गुह और बदि दूर हो जाती है।
इसमें पुहयवर्धक हदि भी ओमो है।

हठकारिकेनमयूर। प्रयुक्त प्रधानी—बांध वन भारिकेन-
मयूरको मिश्रण पर बांधो ताह दोह कर उसमेंसे ह वनको
चोम बनाये। येही माग मेर भारिकेनके जलमें हो

नैर धोमो डास कर छमे डाल सै। पनकर सममें भुन
हुवा भारिसेलखण्ड पाठ पन, सोठ धूषं चार पल धोरदूर
दो नैर मिना कर धोमो पाँचमे पाक करै। वंमोचन,
विहट्ट, मोवा, दारधोमो, त्रिपल द्वावधो, नागधेयर
धनिवा, पोवर, गजपोवर धोर ओर प्रत्येक का धूषं चा
पल से कर सममें डाल दे। धोर भनोभाति हल कर मोचे
उतार सै। समको सेवनयाता पढेतोना है। समवे शुन,
पल्लवत धोर ब्रह्म पादि जाते रहते हैं। यह धोवध
मनमुष्टिकर, ह्य धोर उत्तम बाओकरण है।

(भैरवयता - शुभाविहार)

भासप्रकाशमें भारिसेलखण्डकी प्रस्तुत प्रवाकी हल
हल प्रकार लिखी है—

चार पल भारियलकी एक पल गद्य-हलमें भुन कर
छमे भारियलकी लज धोर गद्यहलके साथ पाक करै।
पाक समाप्त हो जाने पर छमे उत्तार से धोर ठट्ठा हो
जाते पर सममें निम्नलिखित धूषं डाल दे।

धूषं यवा—धनिवा, पोवर, मोवा, दारधोमो धोर
नागधेयर प्रत्येक पाध तीसा सै कर समका धूषं बनाये
धोर सममें डाल दे। इमे धनिके बनावकके अनुसार
एक पल पयवा पाध पल मात्रामें प्रतिदिन भक्षण करै।
समवे पुनवत्, निद्रा धोर बनको ठटि होमो है तथा
रक्षित, रक्षित, परिचासगून धोर चयरोम गट हो
जाते हैं।

हहभारिसेलखण्ड-प्रस्तुत-प्रवाकी—भनोभाति धोमो
हुवा एक प्रस्त भारियल, चर्ब पाकुक जोजरहित
कुषाण्डको एक कुक्ष गद्य-हलमें भुन ले। धोके
सममें एक पाकुक गद्यहल धोर दो प्रस्त धोमो डाल कर
छमे धोमो पाँचमें पाक करै। भनोभाति पाक हो जाने
पर छमे उत्तार से धोर नब ठट्ठा हो जाय तब निम्न-
लिखित धूषं डाल दे। धूषं यवा—होटी द्वावधो,
धनिवा, पोवरा, सेतवापक, मोवा, सुगन्धाला, चय-
पयको जट्ट, रक्षयन्त, बिम्बमिय, बैसर, दारधोमो,
त्रिपल धोर कपुर प्रत्येक चार चार तीसा सै कर समके
धूषंको सममें मिना दे धोर छमे एक नवीन बरतनमें
रख होके। हलको सेवन-माता एक पल है पयवा गोमोके
धनि-हलको बिबेचना कर यदायातामें घात-घातमें

सेवन करावे। इससे नेवन करनेसे लाभित, अर,
चित, रक्षित, पक्षि, वातरक, विजावा, दाह, पाण्डू-
रोग, कामना, चय धोर परिचासगून धोरोग हो जाता
है। धाधोन कालमें भगवान् पद्मिनीहृदामने इमे
बनाया है। यह सर्वप्रसादक, योगेका उपपदकारक,
यज्ञरहित धोर पुनवत्, निद्रा तथा बनप्रदायक है।
भारिसेलखण्ड (मं० क्र०) भारिसेलखण्डमभर तेन।
भारियलका तेन। धैर्यसे सममें समका शुन—
बाओकरण, गुह, धोवधातुका धोवध, घात धोर विप-
नायक, मृताधान, प्रमेह, ज्ञान, काम, यवना, बुद्धि-
कोषमें हितकर धोर सननायक है।

प्रस्तुत प्रवाकी—यह भारियलको एकटा कर ननके
लिखके पनन कर दे। समवे धोवधं त्यहाउन जो
पदाय है छमे कटारीमे काटने पर समके भीतर
शुद्ध वर्षका एक प्रकाशका कठिन पदाय मिलेगा।
इमोका नाम भारियलकी गरी है। इमो गरीमे तेन
तैयार होता है। भारतवर्षमें निम्नलिखित लयायमे
भारियलमे चख धोर चर्बकोन तेन बनाया जाता है।
यहमे भारियलकी गरीकी लक्षमें कुछ काम तक विह
कर धोके छमे द्विती एक यन्त्र द्वारा घीस लेते हैं। म-
गन्तर लज धोमो दूर गरीको लजमे माय मिना कर
उहायते हैं। ऐसा करनेमे तेन जलके लवर बहने
लगता है। यह तेन बहुत परिष्कार धोर तरल होता
है। बाधारयतः भारियलकी गरीकी धानेयनमें डाल
कर पियव क्रिया द्वारा भारियलतेन तैयार होता है।

कहीं कहीं भारियलको गरीको पागमें वा धुपमें
भनोभाति सुवा लेते हैं धोर धोके छमे धानोमें धोम चार
तेन तैयार करते हैं। इस प्रकार भिन्न भिन्न स्थानोंमें
भिन्न भिन्न लयायमे भारियलमे तेन निधाना जाता है।
नातिधोतोप देवमें भारियलका तेन लघुप्रको चर्बकी
तरह गाढ़ा धोर दम्य होता है।

धोमप्रधान देवोंमें भारियल-तेनका रंग कुछ और
लक्षमें समान तरल होता है। यह तब तक लज
रहता है, तब तक इससे सुदृढ निष्कल है, कुछ कुपय
हो जानेसे ही वह लघु गन्धमिश्र हो जाता है।
दाहिनायमें धानो घीसके बहने इमो तेनकी लक्षमें लगे

नेर बोमो डाक कर सवे डाल से। पनकार सवमें भुना
दुपा भारिकेन-सस पाठ पन, कोठ चूषं चार पन चोर दू-
दो नेर मिला कर बोमो पांचवे पाक करे। बंयसोचन,
त्रिष्टु, मोपा, दारबोनी, तेजपत्र इत्यादयो, नागडेयर
धनिषा, पोपर, मजपोपर वोर जीरा प्रत्येक का चूषं चा-
पन से कर इसमें डाल दें चोर भयोभाति दस कर मोचे
उतारे से। इसको येवन-भावा चढेतोना है। इससे गुन,
पन्ना पस चोर हस्तो ग पाटि जति रहते हैं। यह पोपध
यनपुटिकर, हृद्य वोर सतम बाओकरप है।

(येवगुवाला गूढाधिहार)

भाषप्रकाशमें भारिकेनसदरकी प्रस्तुत प्रथानी इस
इस प्रकार लिखी है—

चार पन भारियनको एक पन मध्य-एतमें भुन कर
सवे भारियनके जल चोर मध्यएतमें पाय पाक करे।
पाक समाप्त हो जाने पर सवे उतार से चोर ठण्डा हो
जाने पर सवमें निम्नलिखित चूषं डाल दे।

चूषं यवा—धनिषा, पोपर, मोपा, दारबोनी चोर
भागेशर प्रत्येक पाध तोना से कर उसका चूषं बनाये
चोर सवमें डाल दे। इसे धनिषके बनावडके अनुसार
एक पन चयवा पाध पन मात्रा में प्रतिदिन भक्षण करे।
इससे पुनपल, निद्रा चोर बनको हरि होनी है तथा
रक्तपित्त, पच्यपित्त, परिणामगून चोर चयवोग नष्ट हो
जाते हैं।

हृदभारिकेनसदर-प्रस्तुत-प्रथानी—भयोभाति दोषा
दुपा एक प्रसन्न भारियन, जब पाटुक वोजरहित
कुपाणको एक कुट्टव मध्य-एतमें भुन ले। पीछे
सवमें एक पाटुक मध्यएत चोर दो प्रसन्न चोनी डाल कर
सवे धोनी बाधमें पाक करे। भयोभाति पाक हो जाने
पर सवे उतार से चोर अब ठण्डा हो आय तब निम्न-
लिखित चूषं डाल दे। चूषं यवा—कोटी रसायनो,
धनिषा, पोपला, सेतपापक, मोपा, सुम्यथासा, चस-
वसकी जड़, रक्तचन्दन, बिम्बमिश्र, बेंसर, दारबोनी,
तेजपत्र चोर सपुर प्रत्येक चार चार तोना से कर सवे
चूषं को सवमें मिला दे चोर सवे एक मयोन करतमें
रख कोठें। इसको येवन-भावा एक पन है चयवा रोमीके
चनि-बसकी बियं बना कर यथाभावा में प्रातःकालमें

येवन करावे। इससे येवन कासेमें चानविना, ज्वर,
पित्त, रक्तपित्त, चर्दधि, वातरक्त, विषाधा, दाह, पाण्डू-
रोग, कामला, चय चोर परिणामगून चोरीय हो जाता
है। प्राचीन कालमें भगवान् चरित्रोक्तुकारमें इसे
बनाया है। यह सर्वप्रसादक, मरीर का उपचयकारक,
युक्ताईक चोर पुनपल, निद्रा तथा चयप्रदायक है।
भारिकेनतेन (चं० छो०) भारिकेनसदरप्रथानी तेन।
भारियनका तेन। येवसके सवमें इसका गुण—
बाओकरप, शुष्क, पोषधातुका पोपक, वात चोर विप-
नायक, भूवाघान, प्रमेश, श्याम, कास, पदमा, बुद्धि-
लोपमें हितकर चोर सतमायक है।

प्रस्तुत प्रथानी—यह भारियनको दवादा जरा नमके
क्षिप्तके पनन कर दें। सवे येवमें लकाहन जो
पदाय है सवे लटारीमें काटने पर सवे भीतर
युक्त चूषं का एक प्रकाशका कठिन पदाय मिलेगा।
इसका नाम भारियन हो गयो है। इसी मरीमें तेन
तैयार होता है। भारतवर्षमें निम्नलिखित चयवसे
भारियनसे चयव चोर चूषं के तेन बनाया जाता है।
यह भारियनकी मरीको सवमें कुछ काल तक निद
कर पीछे सवे किसी एक यन्त्र द्वारा पीस लेते हैं। त-
त्पश्चात् सव चोनी दूर मरीको जलसे पाय मिला कर
छाशमें हैं। ऐसा करनेमें तेन जलके ऊपर बहने
लगता है। यह तेन बहुत परिष्कार चोर तरल होता
है। माधारयतः भारियनकी मरीको चानोपयमें डाल
कर पीपय क्रिया द्वारा भारियनतेन तैयार होता है।

कहीं कहीं भारियनको मरीको चानमें वा पुर्तमें
भयोभाति सुना जेते हैं चोर पीछे सवे चानोमें दोष कर
तेन तैयार करते हैं। इस प्रकार भिन्न भिन्न स्थानोंमें
भिन्न भिन्न चयवोंमें भारियनसे तेन निजाना प्रात है।
भारियनोत्पत्ति देशमें भारियनका तेन उपरको चर्चका
तरह मातृ चोर दृश्य होता है।

योधप्रधान देवोंमें भारियन-तेनका रंग पुन चोर
जलसे चयान तरल होता है। जब तब यह तरल
रहता है, तब तक इससे सुम्य निष्कलो है, कुछ दुगन्ध
हो ज-मने हो वह उप मध्यमिदित हो जाता है।
राजिवायमें मरीको तिलके बटने चयों तेनको काममें लाते

કે તો જોઈ જઈને ઘડેલી, લિપ્તકાવળે, માનુષ મેલના
કામને મળા કરીને કામ નેકે કામને માનુષ કોના કે
જલ તલ વડુન જાતા; રહના વા. તલ વડુ 'લોચન' ઓ
જામ જાતા કે। મહાસા પેલિયેનો પોર તિલકાદુલમે
નારિયન મેલના માનુષ વડુ જામતા કે। માનુષોર
પોર જાતા-લોચન વડુ મેલ મળી જોતા કે।

મારિફતનામું: નારિકેલાનું મુદત ૨૮૨ કે। પર્ણાવા
નામે દેખા મળા કે, કે નારિકેલા નેમને કિતને જલિન
પોર નારિકેલા જામ મિમે જુવ કે। જોમિરિન જામ રમક
તલ દયાન વડુ કે। રમ નેમનો વામુ દુવામિ મિલા કર
જાતા મકારનો લોચા મુદતુન જાતે કે।

નારિકેલાનો—પાનોન મેલના નારિકેલાવર્ણિત વજ દોર।
જામામિતુલાવર વડુનેમે જાના જાતા કે, કે માનોન
વલિજી મુદતુવ વડુ રમ દોરમે વાતે જાતે વે। યર
દોવ રહા કે। રમ વિવરમે મતમેદ કે। જોઈ જાતે
કે, કે વડુમાન કાવકે નિજક નારિકેલાને મુદતમે વિરો
દુરે મો લોટા લોચનો મતર વાતે કે, વડો નારિકેલા
દોર કે। જિર બોરિ વાનમાન માનલોવકો નારિકેલા
દોર વતજાતે કે। જોનવિજાજલ મુદતુવડુ રમ
દોરમે વડુ વે। વડકે વર્ણમે વાન જોતા કે, કે
મિજલવડુમે (૧૦૦ જ વા. વાડા ૧૦૦ જોન દલિવમે
મ વિવરવ વડુવિત કે। રમ રિવાવમે વડોલક દોના
વાનલો વાવાન નારિકેલાવડુ જાતે જલ મજાતે।
જોઈ જોઈ રમે મુમાતલોવકે દલિવમે વડુવિત
મજાતમે કે।

૧૧૫-૮ ૧૭૬ મજા વડુના કિતિને મુમાતલો
દલિવમે રમ વાવડા વાવિવર જિવા। વાવિવરનારિ
માન વડુવડુ કિતો જામને વડિલ કે મજો, મેલિન
જાતીવ જોમ રમે 'લોટા' વર્ણમે નારિકેલાનો જો
જાતે કે। મુદતુવડુ રમ વડુને વડો નારિકેલાનો
વાવડા જાતા કે।

૧૮૨ ૧૦ મજા રમ દોરડા વિવર વિવરવ મુદત મો
જામ મજા જાતા। વાડે વાવેલકકર જેવર વડેલ
વાવડેલોવ વા વો મુદતુવ માડ વડો રહમે જાતે।
વડે વોર મા જલે વડુ વાવ જાવિન જુવ। દલિવ
વિવર, વડાવિવર, મેલિન, મેલિન, રમ, જાટર, વાડ

વેલન વોર રમ વામ દોર રમે કિતિ દોરમે વડુલેમ
કે। વાવા ૧૧ ૧૦ ૨૦ વોર વો ૮૬ ૧૧ ૧૦ ૧૦
મજા વાવિવર દોર વડુવિવર કે। રમ મજા વોરમે જો
જલે જલે દોર કે જાતે વાવો માન વિવર જામ રહના
કે। વડો નારિકેલા, મુદતુ વોર વડુમાન વડુવાવિવર વેલ
મજા રમ મિલના કે। વિવરિવર વિવરવડા જાવડા કે
કે રમ દોરડા જલેલ નારિકેલા વોર જાતે વડાવ
વાતો કે। જાતા મજાનો વડુલેમ કે, મજાન વડુલેમ
વોટ વર વડુતા કે। વાવિવર મુદતુ વડો જલ વર વોર
દુદુર વાવ: જલે જલે જાતે વેલ વર રહતે કે। વડો
મજા મજા મુદતુવડા જલ રહના રહના। દલિવ વિવર
દોરમે ૮ મોન મજા વોર ૬ મોન વાવડા વડુ વાવડાનો
જલ કે। રમ જલના જામ વિવર રહના વોર રમકે વાવો
વોર નારિકેલાવર વડુવડુ દેવે જાતે કે। વડો નારિકેલા
મજા, 'વિવરમેલ', 'દલ' વાડિ જાતા મકારકે જલેલ
વાવે જાતે કે।

નારિકેલાનું (મં ૭ કો.) નરવોવડેલ। મુદતુન
વડાનો—જાલ વોર દલિવમે મામ નારિકેલાને મજા
મેલવ મજાક મર કર દલ કરતે કે। વાડ જાતેમે
મજા નિજાન જલે જાતેનો મોનો મજાતે કે। રમકા
વડુવાન વડુ જાતે કે। રમ વોરવડે મેલન જાતેમે મજ
મકારકે વાવામાનુસ વિવર જોતે કે।

નારિકેલાનું (મં ૭ કો.) વોવડેલ। મુદતુન વડાનો—
મુદતુ નારિકેલા વડુવકો મિલા વર વોન કર જલેલ
જામ મેતે કે। વાડ વાર મેલકે વડુમા મેલ કર વાવ
મર વોમે વડે વવાતે કે। વડુમા વાવાય નારિકેલા
જામ ૧૨ મેર, માવડા મુવ ૧૨ મેર, વાવમેલ ૧૫ ૩૪
મેર, જોનો ૧૨૪ મેર, મોટ મુવ ૩૨ મેર રમ મજાનો
વડુ માવ વડાતે કે। વામાવ વાવ જો જાતે વર વોરવડે
નિજક, મુદતુવ, મેલવડ, રમાવડો, નારિકેલા વડુવક
૧૮૫, વાવડા, વોર, વાવડા, વડુમાવડ વોર માવડા
વડુવક ૬ મોના, મોનવડાતે વર વાવડ મેર મુદતુ
જાતે દેવે કે। માવડા ૧ મોનાતે ૨ મોના તલ વોર
વડુવાન મુદતુ તવા મુદતુ જાતે કે। રમકે મેલન વડુવે
વડુવડા વોર મજા વડુવકે મુલ જાતે રહતે કે। વડ
વડુવડાવડુવડા, રમાવડ, મજા વડુવડે મુદતુવ,

रक्षित और योग्य चादि रोग नाशक है ।
 (अथ नारिकेल-नामक)
 नारिकेल (मं० फो०) नारिकेलफल, नारियलका पेड़ ।
 नारिकेलोदक (मं० फो०) नारिकेलजल, नारियलका
 पानी ।
 नारियल (हि० पु०) १ नुजूरकी जातिका एक पेड़ जो
 सुमेरुके रूपमें पचास माठ हाथ तक ऊपरको और
 जाता है । विशेष विवरण नारिकेल ग्रन्थमें देखो । २ नारि-
 यलका दूध ।
 नारियलपूर्णमा (हि० फो०) वस्त्रों प्राप्तिका एक
 त्योहार । इसमें लोग नारियल से कर समुद्रमें फेंकते हैं ।
 नारियलो (हि० फो०) १ नारियलका गोपड़ा । २
 नारियलका दूध । ३ नारियलकी ताड़ी ।
 नारी—वर्तमान तिब्बतके उत्तर-पश्चिमप्रदेशों एक
 जनपद । गङ्गामें और कुमायुनके मध्य को कर जो
 ५ गिरिपथ भोटकी ओर गये हैं, उन्हींको प्रान्तसोमामें
 यह जनपद अवस्थित है । भोटदेशवासियोंके राज-
 प्रतिनिधिगण सुगन या तुङ्गक सेनाकी सहायतासे इस
 प्रदेशका शासन करते हैं । यहां तातार छोड़कर
 मणि जाते हैं । यह प्रदेश बहुत ऊँचा और पर्वतार
 है । सिन्धुनदीप्रवाहित पंथ छोड़ कर यहां बहुत
 लोगोंका वास है । तिब्बतों लोग इस स्थानकी नारी-
 ओरपुस और हिमालयवासियों हिमदेश कहते हैं । कहा
 जाता है, कि पूर्व भूमयमें यहां नारी वा स्त्री की शासन
 करती थी ।
 नारी (मं० फो०) नारीय वा धर्म्या, नृ पत्नी (नृ-पुं० ।
 शब्दार्थ इति वाचिनीयमा चम् । ततो स्त्रीम् । शब्द-
 रत्नावली दीर्घ । वा शब्दार्थः स्त्री । पर्याय—शक्ति, स्त्री,
 धवला, दीपा, सोमप्रिया, सधू, प्रतोपदयिनी, कामा,
 वनिता, सहिमा, प्रिया, रामा, लज्जा, लोचिता, लोचिनी,
 लोमा, लोचिता, धनिका, सहजिका, सहजा, शर्वरी,
 सोमोत्त, सिन्दूरतिलका, सुवर्ण । पद्महारके मतसे शिवों प्र-
 मत्तः चार जातिवर्गोंमें विभक्त हैं, यथा—पद्मिनी, चित्रिणी,
 सहिनी और हस्तिनी ।

“पद्मिनी चित्रिणी च हस्तिनी इति त्रयम् ।
 चतुर्थी चतुर्थी त्रयो वीर्य विधेयः ॥”
 (रत्नमञ्जरी)

पद्मिनी शयक नामक पुद्गले, चित्रिणी मन्त्रि, सहिनी
 हयमने और हस्तिनी वज्रने परिगृह्य रक्षती है । ये सब
 श्रियां कामा, तद्वत्, मोड़ा और मुहाड़े भेदमें चार प्रकार-
 की हैं । १५ वर्ष तककी स्त्रीको कामा, १० वर्ष तककी-
 तद्वत्, १० वर्ष तककी मोड़ा और समस्त बादकी स्त्री-
 को मुहाड़ा कहते हैं । रतिविषयमें कामाकी प्राप्तादि, तद्वत्की
 प्राप्तादिरिणी, मोड़ाकी हस्तारिणी और मुहा-
 की मृत्युदायिनी मतनाया है । ब्रह्मवेत्तों पुराणमें यह
 नारी तीन प्रकारकी माने गई है, यथा—माध्वी,
 भोग्या और कुम्भटा । जो परलोकका भय रगता, अपने
 यम और कामको हयगत, सर्वदा कामाकी सेवा करता
 है, उसे माध्वी ; जो भोग्यरगुको प्राप्ति को कर काम-
 को हयने पतिको सेवा करती है, उसे भोग्या कहते हैं ।
 अब तक भोग्यामारीकी परिभाषित वक्ष और पद्महार
 चादि मित्रों, तब तक वह वर्गमें रहती है ।
 कुम्भटा नारी कुम्भारकी जीवी होती है । यह भीमा
 कामाकी कपटरूपमें सेवा करती है, भक्ति का जग-
 भी सममें विद्वत् नहीं रहता । यह सर्वदा कामातुरा हो
 कर नये नये यारोंकी प्राप्ति करता है । इस प्रकारकी
 नारी अपने यारोंके लिए कामा तककी भी मार छाननेमें
 नहीं हिचकती । जो इस नारी पर विद्याम रमने है,
 उनका जीवन निष्फल है । इसका प्रभाव—हृदय पुर-
 धारके ज्ञेया, कार्यनिष्ठके लिए बाधक पद्मतापम, कुरा-
 म्यामें वाक्प विषयतुष्य, महति कुम्भित और परिभाष
 दुर्गम होता है । यह पद्मता मायाविनी और माध्वीमें
 प्रवृत्ता होती है । इसका काम पुद्गले में गुना, पाद-
 दू-१, निष्ठुरता चोपुनो और लक्ष्मण दुःखा परिषद है ।
 जितने प्रकारकी नारियां मतनाई गई हैं, सभी दोषों
 पाकर हैं । इनके माय किमा प्रकारकी छोड़ा वा सुव-
 की मयावना नहीं । इनके माय सभोग करनेमें बहुत-
 यय, परलया प्रीति करनेमें जनवय, कलहमें माननाय,
 सहवासमें दोष नष्ट और विद्याम कामने सर्वनाय होता
 है । अब तक चतुर्थीनादि है, तब ही तक ये पद्मभूत
 रहती हैं ; रोगी, निष्ठुर और दुष्ट होनेमें ये बात तब
 भी करना नहीं चाहती । (ब्रह्म-संहिता ११ मं०)

मनुका मत है, कि नारी यदि दशान्वयमें मत्त-

धीर बंध रेखा यदि दोषं भावनें द्विचमित्र रक्षे, तो वह दोषार्थ समझी जाती है। मित्रों के हाथमें हम रेखा के रहनेमें शुभ और नहीं रहनेमें प्रशुभ होता है। जयते समय जिस स्त्रीके चरणकी लमिहा प्रथवा चनामिका मछीमें गल जाती हो प्रथवा तन नो हृत्पाद्मोंके ऊपर हो कर जाती हो, उन स्त्रीकी कुलटा जानना चाहिए। जिस स्त्रीकी लहाने के लपरो भाग पर दो मोहमय चौर गिरा-निमित्त सांनविण्ड हो, उदर कमसोके लैसा लघूय चौर गुह्रदेग घामावत् हो कर कुछ निम्न हो, वह स्त्री चिरदुःखिनी होती है। यदि घोषादेग सुद्र चौर योनि बड़ी हो, तो समझना चाहिए कि उसका कुलध्वंस होगा।

जिस स्त्रीकी गरदन मोटी चौर पाँचों टेढ़ो तथा विह्वलपक्षी प्रथवा चञ्चल हो, वह प्रत्यक्ष मचण्ड चौर कलहप्रिया होती है। जिस नारोका गण्डदेग छेद चौर कुण्डल लैसा गहरा हो, वह यदि मत्तकी मो तरह रहे, तो भी उसे व्यभिचारिणी समझना चाहिए। जिसके कपाल पर जम्बी रेखा रहे उसका देवरगट होता है। वह रेखा यदि समके छतर पर रहे, तो गण्डरको मृत्यु चौर यदि नितम्बके ऊपर रहे, तो स्त्रामोकी मृत्यु होती है, ऐसा जानना चाहिए। जिसके पक्षके नीचे रोए जलने हो, वह प्रसीमाव्यवतो चौर प्रथमभागिनी होती है। जिसके स्नान रोएमें भरे हो, दोनों कान चौर दान समान न हो, वह स्त्री लोभकर होती है। जिस नारीके दन्तामूलमें लक्ष्यवर्ष मांस रहे, वह चौर्यहृत्ति प्रवर्धन्य करती है चौर दत्ता यदि बड़े बड़े हो, तो स्त्रामोकी मृत्यु होती है। जिस स्त्रीका दन्त शूक, विषम चौर गिरामय हो, वह दरिद्र होती है। जिस स्त्रीके पैरकी चनामिका चौर पशुत पनने समय मछीकी गल जाता हो, समके पतिकी मृत्यु होती है चौर पक्षि आप श्लेष्माचारिणी होगी, ऐसा जानना चाहिए। जिस स्त्रीके चरने समय भुमिकम्प हो, वह शीघ्र पतिभागिनी चौर श्लेष्माचारिणी होती है। जिसके पैरकी लंगसिया पापममें लुकी हो, मल ताम्रवर्ष-के हो, दोनों पैर लघु गिरायुक्त चौर कुमंडलके जैसे समुच्च हो तथा गुह्र मृदभावावत् हो, वह राजस्त्री होती

है। जिस कामिनीके घटनममें रेखा रहे, वह राज-मदियो होगी, ऐसा समझना चाहिए। जिसकी मध्यमाङ्गुलि प्रथम चंगुनिके साथ मिली हो, वह उत्तम उत्तम पदार्थोंका भाग करती है। जिसकी चंगुनिया मध्यो मध्यो हो, वह समको कुलटा। जिसकी छय हो, वह प्रत्यक्ष दरिद्र। जिसकी मध्य रो, वह प्रथम परमाप्तुको चौर जिसको चंगुनि भग्नरूप हो, वह प्रभाता होती है। चंगुनिके बिपटी होनेमें दामो, बिम्बा होनेमें दुःखिनी चौर एक दूसरेमें लुकी रहनेमें पतिकी मृत्यु होती है। जिस नारीके चरणके मल छिन्न, समुच्चत, ताम्रवर्ष, गोमाकार चौर सुहृद्य हो तथा जिसके घट-मलका घटदेग उत्तम हो, वह समकी राजमदियो होती है। जिस नारोका पाँचों देग समान हो, वह सुलक्षणा; जिसका धृग्य हो, वह पुर्मागिनी; उत्तम हो, तो कुलटा चौर यदि दोष हो, तो वह दुःखभागिनी होती है। नारियोंके कटिदेगको परिधि यदि एक हाथकी ही चौर नितम्ब समुच्चत तथा मध्य हो, तो दाम समझा जाता है। नारियोंका नितम्ब यदि चतन, सांन चौर व्यूल हो, तो ऐश्वर्यलाभ चौर यदि विवरीत हो, तो कल भी विवरीत होता है। नामिका लघोर चौर दक्षिणावत् होना मङ्गलदायक है। जिसको नामि घामावत्, अगभीर तथा ठण्ड हो, वह नारो गोमा नहीं देती। नारियोंके स्नानपद यदि चन, गोम, हृत्, क्लृण चौर समान हो, तो प्रमदा चौर है स्नान यदि बिरल तथा लघु हो, तो भी लक्ष्याचकर समझा जाता है।

जिस नारीका दक्षिण स्नान चतन हो, वह पुत्र चौर जिसका वाम स्नान चतन हो, वह गोमाव्ययात्रिनी सुन्दर कन्या प्रथम करती है। जिसके घटोका मूल-देग मूल चौर उपरिभाग क्रमशः लघु हो कर प्रथमाग मूल हो गया हो, वह समकी कचरममें सुखमोय चर पीछे दुःखभागिनी होती है। जिसका पाचितक मृदु, रत्नवर्ष, द्विदरहित, चन्द्रेष्वाभिभूति, घटमत्ता रेखायुक्त चौर मध्यभागमें चतन हो, वह नारो गोमाव्ययात्रिनी होती है। नारियोंके करनल पर चर्मके रेखाओंके रहनेमें विषया, निर्दिष्ट रेखाके नहीं रहनेमें दरिद्रा चौर दरिद्र होनेमें मिदुली होती है। जिस नारीके करनल

નારીદૂષણ (સં० સ્ત્રી०) નારોનાં દૂષણં ૧-તત્ । નારિયો-
ક્તા દોષમેદ । નારિયો'કે નિવે ધોષ કાર્યં પચક્તા દૂષયોય
દેઃ સુધાવાન, દુષ્ટ નયનમયં, વર્તિવિરહ, અમય, દૂનરેકે
ચરમે મોના ધોર રક્તા ।

‘વાનં દુર્નયનૈર્ગઃ યથા વા વિરોદ્ધત’ ।

દ્વાન્ધોદુષણદ્વારણ નારોનાં દૂષણનિ વટ. ૪” (વનુ)

નારીમય (સં० સ્ત્રી०) નારો સ્વરુપે મયટ. । નારીચક્ર, નારો ।

નારીમુગ (સં० પુ०) નારોમુગ પ્રધાનં યત્ર, ઉચ્ચ રત્નમ્ ।
દુષ્ટસંહિતાકે મનુષ્ય સૂમં વિભામયે નૈર્હતત્કા ધોર
એક દેશ ।

નારીયાન (સં० સ્ત્રી०) નારોનાં યાનમ્ । નારિયો'ના
યાન, પશ્યમશ્રુતિ, જનાનો મયારો ધોરું દુષ્ટાટિ ।

નારીટ (સં० સ્ત્રી०) નારોનાં ટટઃ પ્રિયઃ ૧ નારિયો'ના
પ્રિય, જો નારિયો'કે મનમાફિક જો । (સ્ત્રી०) ૨ મલિકા,
અમેજો ।

નારીટ (સં० સ્ત્રી०) નાર્યાં મદાનુકુલે તિહતિ મ્યા-૧,
‘પલમ્ । ગમ્યવંમેદ, એક ગમ્યવં'કા નામ ।

નારકોટ—અર્થે પ્રદેશકે પત્તાગત ગુજરાતકે પાંચમદન
જિલ્લેકે અપોન એક દેશોય રાજ્ય । ખૂગરિમાષ ૧૪૨
વર્ગમીલ છે । યહાં કોનિ ધોર નાયકજી નામક દો
જાતિકે ભોગ રહતે છે । યહાંકા રાજ્ય'ગ કોનિ જાતિ-
કા છે । નાયકજી'ને ધોલો'કે માથ જિન કર કરે ચાર
યહાં ઉપદ્રવ મથાયા યા, અમી યે માતા માથમે રહતે
છે । યહ દેશ હોટે હોટે વણાજો' ધોર નિવિઝ જલ્દજો'ને
વિરા છે । યહાં મુખરિવો ધોર જૂપ'કે મધ સુસાદુ જન
તથા ધ્યાન' પચ પરિમા'અમે મોમા મિલતા છે । યહ
રાજ્ય વહલે નાયકવાહુકે હાથમે યા, કિન્તુ ૧૮૧૦ દે'મે
પ્રભાવિદોષકે કમય નાયકવાહુકે પટ્ટરજો'ને સજાયા
મો યો ધોર રાજ્યકા અર્થક રાજ્ય પટ્ટરજગમમે'ટ-
કો અર્થ'વ કિયા । તમોયે યહ રાજ્ય પટ્ટરજો'કા દેશ-
૧૧મ છે । ૧૮૫૮ ધોર ૧૮૫૮ દે'મે યહાં પુનઃ વજ્રા-
વિદોષ સ્થાપિત દુષા ધોર નાયકજી'ને રાજ્યઆવન-
કો સેટા જો । જલ્દ ધોરા જમ રાજ્યકે મધ એક પ્રધાન
આન છે જહાંકે અધિવાસિ યા અદાર મોનવર નાયક
પામમે રહે છે । યહ રાજ્ય હટિમ-મથમે'ટ દારા

માનિત હોતા છે । ૧૮૨૮ દે'મે પત્તાનુવાર રાજ્યકા
અર્થ'ગ રજા અદાર યા મનમકતા'કો કરકવદ્ય અર્થ'વ
કિયા મયા । યહાં એક ધોવધામય ધોર દેશોય વિધા-
નય છે ।

નારનુદ (સં० સ્ત્રી०) ન પદનુદઃ । અનાદત, જિમકે
શરીર પર કિમી પ્રકારકા ધાવાત ન મગ સકે ।

નાદ (સં० પુ०) ૧ જૂ', ટોન । ૨ એક રોગ । ૩મ
શરીર પર વિચેડતઃ કટિકે માથે જ'વા ટાંગ ચાદિમે
ખુનમિયાં-મો જો જાતો છે ધોર જન ખુનમિયાં'મે ધૂન-વા
નિકલ્તા છે । યદ યન આદ્યમે કોટ હોતા છે જો
વહુતે વહુતે કરે હાથકો મથાદે'કા જો જાતા છે । જલ્
યે કાફે સ્વાચકે તનુજાતમે'કોમે, તથ નાદ યા નહદહા
હોતા છે । જલ્ રક્તકો નિયો'મે હોતે છે, તથ ધોવદ યા
કોન વાચ રોગ હોતા છે । જમ પ્રકારકા રોગ પ્રાયઃ નરમ
દેશો'મે હો હોતા છે ।

નાદકે કાફે કરે પ્રકારકે હોતે છે । વહુતમે કાફે
જો અધારિવોકે શરીરકે મીતર, રક્તમે છે ધોર કુદ તાનાં
ધોર મનુદકે અનમે મો વાવે જાતે છે । વિરકે'કા કાફા
દુધી જાતિકા હોતા છે । યે કાફે યવાવિ પેટકે હે'પુ-
કે અપ્પ હોતે છે પર દનકે શરીરકો મઠન જે'વધો'કો
અવે'કા અધિક વૂન રહતો છે । ૩મે' સુંદ હોના છે,
અન્ય અંતજો હોતો છે, દનમે યો મુંદિ હોતા છે ।

નારય (સં० પુ०) સત્તાજિતુપ મદકારકે એક પુત્રકા
નામ ।

નારોડોદાદામાઈ—૧૮૨૧ દે'કો અર્થે નગામે પારધિક-
વ'અમે દનકા જલ્ દુષા યા । જલ્ યે સેવક પાર અર્થકે
યે, તથ કો દનકે વિનાકો અગધામકો વિપારે । યે પ્રોપ્ત
પ્રિતાકે યોગ્ય પુત્ર યે । અપવનમે કો યે વહુ મુદિમાન
ધોર અતુર નિજમે । યહો કારણ યા કિ દનકે અધા
ધોર માતામે દનકો વિધાએ નિવ કુદ મો યજન કિયા ।
વિધા મોપનકે વિધે યે વહમે વહન અનકિટન અસેત્ર-
મે અર્પો દુવ । યહો નિવ અપવમાય ધોર મુદિમુવકે યે
મોપ જો મિષકો'કે મિદમાથ જન મપ ।

દુધો વાસિજમે દનકા વિધાઆન મેવ દુષા । યેકે
પારેન મોપનકે નિવ દનકો મિનાયન જાને'કો વાનધોન
જોમે મનો, કિન્તુ કિયો કારણકા દનકા નામ દન

गहरको बाहुर एक मित्रा अवस्थित है। १८५० ई. में
यहां युनिवर्सिटी स्थापित हुई है।

मासिक (स० लि०) नक्षत्रोदात्तत्वात् ठञ् । अत्यन्त
नक्षत्रयोप्य, प्रो ह्यस्य मासनेके काचित् हो ।

गार्ग्य (North brook) - माह मयोको धर्मग्रन्थ के बाद
 १८०२ ई. को इसी महर्षि को माह गार्ग्य का गयन र जनम
 और राजप्रतिनिधि को कर भागतयमें पाए। सन समय
 इनकी उम्र ४६ वर्ष की थी। इसके पहले इन्होंने उच्च उच्च
 राजकार्यमें नियुक्त हो कर राजशांति-विषयमें विशेष
 अभिरुचि प्राप्त की थी। कलकत्तेमें पा कर ये अपना
 प्रातः श्रम विषय जानने और जिसके उनका शासनकाल
 शांतिपूर्ण और समृद्धिसम्पन्न हो उसके निचे विशेष
 ध्यान देने लगे।

इस समय मध्य-एशियाके रुषियाको चोर मत्स्य रहता। भारत शासनकर्त्ताओंका एकमात्र कर्त्तव्य हो गया था। रुषियावासी जिस अभिमानसे भारतके मोमान्तकी चोर पा रहे थे, उससे नाथ्यूकगे गान्धिसुख-भोगमें बाधा पहुँचनेकी सम्भावना थी। रुषियाने पोबाको जेल लिया। पोबाके छाने नाथ्यूकगे सहायताके लिए प्रायः ना की, किन्तु वे राजी न हुए। उस समय मध्य एशियाके अधिवासियोंमें समझ लिया कि चक्ररेज लोग रुषियासे डरते हैं, इस समय रुषियावासी यदि पाके, तो चक्ररेजोंमें भारतवर्ष खीन सकता है।

मायें मूक के भासकालक। प्रारम्भ उत्तम शान्तिमय
 न था। उस समय भी माई भिद्ये की गोचनीय श्रृंगु
 जनता के मन में जागदक थी। सोमातसमस्या कमयः
 अतिदुःख धारण करती जा रही थी और उस समय
 दुर्भाग्य के सभी मन्त्र भी मन्त्र धारण जने। किन्तु
 माई मायें मूक इन सब घटपट कष्टों से तनिक भी
 भयभीत या विचलित न हो कर प्रमादविशेष अपने
 कर्त्तव्य पर डटे रहें। वे न तो पाण्डुराश्रय से और
 न धनपैक ध्यानकुल भ्रमणादि द्वारा राश्वका सुख
 की बहाना चाहते थे। उक्त प्रकार से तथा चन्दास धनक
 माइयो दादा लक्ष्मी से छोड़े की दिने के भीतर प्रमा-
 नकुलता चन्दास अपने और खोप लिया था।

हिन्दु मनुष्य क्षितना हो म.सभा म हो जाय.

तो भी वह टैक्सिड कण्डन नहीं कर सकता । १८०१ ई० में पनागुटिह कारखे चोर दुर्मिच पड़ा जिसमे ब्रह्मण चोर विद्या में जाहाकार भव गया । भारतवर्ष में ऐसा बह्मनाकोच स्थान में दुर्मिच के पागन दुःखदायी चोर कुछ भी नहीं है । इसमे एक मो बर्ष पहले भी दुर्मिच पड़ा था, उसमें जाया पादमो भूषा मरे थे । १८११ ई० में लड़ोहा-दुर्मिचको कदा हम समय लोग मने नहीं थे । ऐशे सबस्थानों में फिर दूसरा दुर्मिच उपस्थित ! हम कारखे देखके लोग व्याकुल हो उठे ।

माई मायें बूक पोर मन्थानिक बहानसँ सेफ्टोनेष्ट
गवर्नर सर जार्ज कैथन दीनेनँ मिस कर दुमिंचको
हमन करनेनँ एक भी कमर रडा न रयो । गवर्नेरको
पोरने प्रचुर धान धरोटा गया । पोर कान कान पर
साहाय्यपण्डार भो खोजा गया ; फिर १८७४ ई.में कोर्ना-
को दूसरे दुमिंच सा मामला करना पड़ा । हम मानका
दुमिंच पोर वालों'के कहों बड़ा बढ़ा या । पछ दुमिंच
मई मायें प्रकाशित हुया या । १४ बार गवर्नेरने
२० लाख ५० हजार मनुष्यों की भोजन दिया या जिनमें
२ करोड़ मन भनाज संपन्न किये गये थे ।

रही मरि मासमें सुखचर भी दिवारि देने लगा ।
 थोड़ा पानो पड़ जानेसे पायथान बोया गया निमसे
 लोगांते सममें कुछ पायाका मचार हुआ । समा जगज
 थोड़ा बहुत पाय वोर कैमलिक भाष्य लपज गया ।
 मयंक मिय होतें न होतें दुर्मिच भी चमलित हो गया ।
 साठ नार्यभूतको बिटा वोर परित्रम मायंक हुआ ।
 लकोने चमक्य लोको की पावरापा करके चमक्य वीरि
 वोर चमय सुखसाध किया है । ये दूसरेके जेवा केवल
 देमके पावनकर्ता हो नहीं थे, बल्कि देमके पावनकर्ता
 भी थे ।

ભાઈ ગાયકુળ સિંહના પુત્રરેષાધિપતિ ભારતને સ્વા-
 સત્ત્વને વિશે યજ્ઞયાનું છે, ભોં નહીં, દેવોય શાસ્ત્રાંધે
 પાસરથને પ્રતિ ભો દનકા સિમેય ખ્યાન વા । ૧૮૦૪
 રીંએ દુર્મિજાને સ્થાયે ગમે દમન કરાગેને જાતે જુવ છે,
 સમ સમય ભો છે ગાદકાકાકે પચાસારથી જાતે મુન
 કર વગે સત્ત્વે જાગેને શાચ નહીં પોષ યે । વિશ્વ
 ગાદકાકાકે મનહારદાસને સમ સોર સ્થાપાન વિશ્વા

शामनकर्ता है। समारोह द्वारा लोगों के निराश्रय होने में या पोष्य द्वारा उन्हें सामोपादन करने के लिये ये भारतवर्ष में पाये नहीं हैं। उनमें समग्र में देवा-
में विद्यागिष्ठाको प्युष उचति हुई थी। उनमें गुमा-
मनकी पुरस्कारमें महाशायों विद्योविधाने उन्हें रात्र-
सम्मान प्रदान किया था।

नायंत्य (मं० लि०) राजप्रबन्धोप, राजासे सम्बन्ध
रगुनेयाना।

नामंत (मं० पु०) पियतम्यभ्योप, पूर्वपुरुषके नामसे
उत्पन्न।

नामंद (मं० पु०) १ नामदासभय नापनिद्रमेट, निव-
निद्र जो नामंदा में पाया जाता है। २ नामदासवाहित
जगपटका राजा। (लि०) १ नामदासभयमात्र, जो
नामंदासे उत्पन्न है।

नामं (मं० पु०) पसुभेद, एक पसुरका नाम। इसे
हनुमं मारा था।

नामिन् (मं० लि०) नामंशुक्त, जो बहुत सुलायम की,
जो मशजमें भुक्त मकी।

नामंभ (मं० जो०) मामभेद।

नायं (मं० पु०) १ नरहितकारोका पुत्र। २ नरहित
सम्बन्धोप यत्न।

नायंक (मं० पु०) नारोवामद्विग जोभनं पदं यत्न।
१ नामरद, नारदो। २ नारोका पद।

नायंतिक (मं० पु०) हिराततिक, विद्यायता। यह
समुच्चोका हितकर है पर व्याटमें तिष्ठ है, इसीसे इसका
नाम नायं तिक पड़ा है।

नायंर मनवार पोर तिदवाट्टुट्टेयवागो वरिष्ठ जाति।
कोई तो इसे शूद्र पोर कोटि अविष बननाते है।

तिदवाट्टुट्टे राणा भी इसी जातिमें है, इस कारण
समुद्रमहाराजमें इस जातिसे गिनती पत्रिपमें की गई
है। सभी इसमेंसे बहुतसे मध्यतिरी ब्राह्मणोंका दासत्व
रहीनार करने पर भी पढ़ने से विद्याविधानमें काय करति
है। इनमें एक एक भादवा दसमें ६०० नायं रहते
हैं। आज भी तिदवाट्टुट्टे जातिरपाके लिये नायं-
सेय मिलु है।

ये १८ भाषाओंमें विभक्त हैं,—१ नायंर वा नायक

२ मेयवज, ३ मेनोऊ, ४ मुयिन, ५ पदनायक वा पद-
नायक, ६ मुकुट-नायक (दुर्गारथक), ७ केमप, ८
पनिकर, ९ कियोप, १० सुत, ११ मरे नायंर, १२
वेडाडु, १३ कर्णाडु, १४ इवाटि, १५ निगुनादि, १६
कवाट्टे, १७ मयडिय पोर १८ मनशामन्। व्यापयक
मिदमे फिर भी इनको कहे अविद्या का मर है, यथा—
१ परिपयितर (वे भीम वंशपरम्परासे नगुरोका
दासत्व करने हैं पोर शूद्र कहनाते हैं), २ सर्वावर
(राजाके देहरथक), ३ पत्रिप (पदांत नगुराके
गिविद्यायाहक), ४ पत्रिपुटि (नगुराके दाहकायमें
माहायकायो), ५ बहकटेन (मन्दिनाटके मिदपयुक्तकारो),
६ पसुरप (घर बाटि बननेयाना), ७ पत्रि (नामं-
रात्रके दास), ८ वैतुविदेन (रत्नके कामंकारो) पोर
९ वलकययनेन (नायितिक कार्यायनमें)।

इस जातिको पिशा की सर्वसर्वा है, इसीसे पदनाम
किया जाता है कि इनका नाम नायंर वा नायक पड़ा
है। मज्जा हिन्दूरमपिशाका हृदयभूषण है, किन्तु
बहुमज्जा इस नायंर-रमपोंको है या नहीं, कह नहीं
सकते। लेकिन इनका तो पक्ष है, कि नायं-
सोमनिगोपय प्रजन मध्य होने पर भी, जहां मज्जा
करना गिताला पायायन है, वहां कुछ भी न मज्जाती।
बहु की पायंका विषय है कि राजा, राजपुरुष पदवा
कोई कोई मध्य माय व्यक्तिकर करने इनके यहां
मेहमान होते हैं, तब ये पदना जातिको लीने उनके
पाव जानमें जरा भी नहीं मज्जुहते। क्या यहाँ मध्यता-
का पद है। यहाँ पत्रिपिके पाने पर भी ऐसा हय।
यदि कोई विदेयी देगता, तो वह ऐसे पाराहपा सम-
भना, किन्तु यहाँ इनका सनातन धर्म है।

पुण्योद्भवे पक्षमें नायंरहवाका तानिहमन
वा 'किन्तु' कल्पाम' मन्दार होता है। इस समय
परदार पक्षी तरह मजावा जाता है। इस दिनेमें वज्र-
वायन पामन्त्रिण हो कर पाने हैं, यह पामिनी मर्दो-
को पाहान कर परितःपुत्रक भोजन कराते है पोर
ब्राह्मणोंको कुछ दान देते है। जिसकी लीने, पक्ष्या
है, यह लोको प्रकार मरुं कहती। पत्रिपिके अगह वृष
धूमपामे भोज होता है। यह कल्पामे वेदम एक

धनमे प्रतिपादित होता और मातुनकी शब्देष्टिकिया
और आदिआधिकारी होता है ।

इस जातिमें यह भी एक विशेषता है, कि सुवर्तिया
समुरान नहीं जाते। और न स्वामीके साथ विशेष
संबंध ही रहतो हैं । वे पात्रोयन माहृष्टमें ही रहतो
हैं । उनके गर्भमें जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह मातुनका
उत्तराधिकारी होता है । यद्यपि गर्भमें जब किसी नायरके
भाजा या भांजी लहो रहतो, तब वह उत्तराधिकारि-
विहीन समझा जाता है । उन्हें वे पोषयुक्तों तरह
मानते हैं । ये लोग पोषयमिनो भी पक्षकारण हैं
और उत्तरे गर्भमें जो पुत्र उत्पन्न होता, उसे चरना
उत्तराधिकारी समझते हैं ।

पुत्र को, चाहे कन्या को, सभी गृहस्थामिनोके पधोन
रहते हैं और तारवदधनमे लासित पालित होते हैं ।
पुत्र जब वयोवृद्ध होता है, तब मातुनके उत्तराधिकारकी
हेमियतमें जो कुछ उपार्जन करता, वही उसका निजन्
है, दूसरेके धनमें उसका कुछ भी अधिकार नहीं । कन्याकी
सम्पत्ति भी उसके पविद्यमानमें तारवदधनो को जाती है
और घरमें जो बड़ा रहता है, वही उस सम्पत्तिको देव-
भाज करता है । वह कार्याध्यक्ष माना जाता है, सभी कार्य
वहीके हस्ताक्षर पर होते हैं । किन्तु वह सम्पत्ति दूसरेके
हाथलगा देनेका अवकाश कोई अधिकार नहीं है ।

इन लोगोंमें ऐसी प्रथा रहने पर भी गृहविवाद,
भ्रूषणत्यागि पाप कभी सुननेमें नहीं पाता ।

नायरोका कहना है, कि परपुरामने जब पुष्पाको
निष्पत्ति कर डाला, तब सत्तियसमिधोंने ब्राह्मण-
को नियोग कर सन्तान उत्पादन को बो । सन्तानकी
परपुरामसेव समझ कर यहांके नायर या सत्तियकुलमें
पात्र भी यह प्रथा प्रचलित है ।

सभी इस जातिके लोग चहरेकी विद्यामें सुनिश्चित
की का नामा स्थानोंमें जाने पाते लगे हैं । सुनार सुव-
र्तिया पचना 'तारवद' कुछ दिनके निवे परिश्राम कर
पुत्रदोषकारीका अनुसरण करने हैं । किन्तु इस प्रकार-
की मरणाधिकारी नहीं है । कारण इन लोगोंमें नियम
है कि कोई युवती दक्षिण मननारीकी बीमा 'कोरपू' नदी
पार नहीं कर सकती । कभी कभी टकरा सुव

दोषकारी उक्त नदी पार भी कर जाता है, लेकिन सुव-
र्तिया कभी भी नहीं ।

सन्तानके भूमिष्ठ होने पर ठमका मातुन की जान-
कर्मोदितम्ब्य करता है । नामकापादि तारवदको (पानी
दारा की होते हैं । जानकाजब बारह वर्षका होता है,
तब कहीं कहीं उसका सत्तियोचित मन्त्रार होता है ।
इस समय पूर्वकालमें सभी पक्ष धारण करते थे । सभी
विधिवर्तित पक्षस्वयन करनेके कारण कोई भी पक्ष
नहीं लेता । जिन तारवदके सुवर्तिय हमेगाहे मे निज-
वर्तित करते पा रहे हैं, उन्होंने भविष्यमय इस प्रकार-
की प्रथाका पालन करने हैं ।

नायरसेना महावार मिनो जाती है । दासिवालयें इति-
हासनेवक कर्चन विनकभूमि निवा है, "The Nairs,
or military class, are perhaps not excelled
by any nation on earth in a high spirit of
independence and military honour" *

ये लोग और होने पर भी विशेष लोच आसिके कदा
पक्ष चरानेमें बाज नहीं पाते । यहां नायर-लोचनका
प्रधान दोष है । पक्षधारी नायरके राह चलते समय
जग सन्तान है कि कोई उन्हें पीछे दिवावे । लोच
गृह बेवारी तो उन्हें भूमि देख कर ही जान में कर
मानते हैं । सभी ब्रिटिश सवर्नमेपटके सुगममने और
चहरेको मिलाके प्रभावसे नायरोंका उन्नत स्वभाव बहुत
कुछ दूर की गया है । उस पीढ़ाके नायर लोग भी
उचित होतेमें विवाद करने नहीं पाते ।

जिस समय दासिवालयमें चहरेज और करामोमें
और विवाद बन रहा था, उस समय इनो नायर-लोचने
लोचसे चहरेजकी जान दूरी थी । ऐदरपाने एक
उनेक शर दमन करनेको घेडा को पो, किन्तु एक बार
भी ने हनकाय न हुए ।

इसका पैदभूषा उत्तम पाठ्यर नहीं होता । स्त्री-
पुत्रय दोनों ही मनुष्योंके जैसा पक्षधरिषोमका

* Wilks' Historical Account of India, Vol. 1, p. 170.

† Havelock's Journey through Mysore &c, Vol. II,
p. 44.

‡ Omer's Military Transactions, Vol. 1, p. 107.

बादिउ किनारेका पक्ष व्याप्त यहाँ जावे ठहरतो हो ।
 नावमम् (मं० स्त्री०) नक्षत्र, मम सुखको ।
 नावना (हि० क्रि०) १ भुजाना, मथाना । २ प्रविष्ट
 करना, सुमाना । ३ डानना, फेंकना, गिराना ।
 नावमिक (मं० वि०) नवम्-ठन् । नवम वर्ष्यायुक्त,
 जिसमें नौ हो ।

नावयप्रक्ष (मं० पु०) नवयप्रक्ष्य तत्पनिपादकप्रक्ष्यस्य
 व्याख्यातो घन्त्यः ठन् । १ नवयप्रतिपादक व्याख्यात
 प्रत्ययविशेष ।

नाया (हि० पु०) दक्षिणमें छोनेवाला एक पेड़ । इसको
 मकड़ी बहुत साक, जिसको घोर मजबूत होता है । मैत्र,
 कुसो पादि सजावटके सामान इसके बहुत पच्चे
 बनते हैं ।

नाश (हि० पु०) बहुरूपम जो किसीके नाम निवो हो ।
 नाया (मं० स्त्री०) नाय ।

नायाकिण (फा० वि०) घनमिश्र, घनज्ञान ।

नायिक (मं० पु०) नाया तरनोनि भो-ठन् । कथंधार,
 मन्त्री, महाह ।

जो बाङ्ग, पाल बादि यन्त्रोंकी सहायतासे नदो
 बादिमें नाय चलाता है, उसीका साधारण नाम नायिक
 है । नायिक लोगोंका विद्याभ्युत्थन कर भी नहीं
 करना चाहिये । नदो, बाङ्ग, पादि जलस्रोत को कर
 जानेमें दार्शनिक यन्त्र ही अद्भुत नहीं पहुँचती । सुतरां
 सम समताममनका कोई विमोचनियम-निविष्ट करना
 पावश्यक है । केवल नायिक या महाहके छोड़कर दूर-
 दूरमें घोर बहुदार्शना रहनेमें जो से महज घोर निर्विघ्नता
 पूर्वक जल सहा जलस्रोतोंमें पा जा सकत है । किन्तु
 भासुद्रिक नायिकोंको मिलित, दस घोर बुद्धिमान होना
 पावश्यक है । इस कारण यहाँपर समुद्रमें सतिविधिका
 नियम घोर चलावो बादि नचेंमें दी जाती है ।

चति बाधोन ज्ञानमें भारतवासो घोर दृष्टिवासीके
 पक्षमें पक्ष समुद्रमें जाने पायिका प्रमाण मिलता है ।
 मिश्रशमी पक्ष यज्ञोती महायतासे भारतवर्षमें बाधित
 करने चाहते हैं । पुराकाशोन समुद्रनायिकमें किनो-
 कीय भोग हो विमोचन मिलत है । वे घनमें परिचित
 समी जातिघोरे मध्य समुद्रयानयोग्य-व्यवसाय करने

में । महाकाशायर नामक बन्दर दुबो भ्रममें मरने प्रधान
 बाधितबन्दर समझा जाता था । पक्षमें यज्ञोती घोर एक
 जहाज प्रयुक्त किए । जहाँ जहाजोंकी महायतासे वे
 विदेशमें उग्रमिश्र व्यापन करनेमें समर्थ हुए हैं ।
 किनोकोउ-उग्रमिश्रमें जहाँ जल बहुत समिद्ध था । कर्मज-
 के अधिवासो भोग दुबो घोर घनोनाके पक्षमें उग्र-
 जलस्य जिनमें व्याप्त हैं, यहाँ जहाजकी महायतासे
 बाधित करने हैं । इनके बाद योक्तोम नाय चलाते
 पक्षमें हुए । वे घनमें चार्गा नामक जहाज पर बहुत
 कर कनयिसे उग्रजल सहा मरने भोग जाते हैं, यह बात
 हरएकको विदित है । चार्गाके बाद रोमवासियोंने
 जहाज हमाने घोर, चलातेको विद्या भोग कर
 पक्षमें समुद्रया नामक बन्दर स्थापन किया । इस बन्दरके
 स्थापित होनेसे ही कर्मजका पूर्व मोरव जाता रहा ।
 पक्षमें समुद्रया बन्दर एक समय धनमय घोर बाधित
 विपक्षक सञ्चलिते दुबो भ्रममें सर्वोच गिरा पर पक्ष
 गया था । रोमके अन्तमें बाद कुछ दिनेसे निवेष्टावमें
 नाय चलातेको विद्यामिष्टा घोर परिचालन पादिहा
 पक्षधनम हुआ । योके लोकोपायको जहाज चलातेमें
 विपक्षक पक्ष, निजने । लोकोपाके बाद भूमिमें लोकोने
 समुद्रयाको सञ्चलिते पक्ष सकलता पाई । इस समय
 'हेनरीयट्टबलोम' नामक एक दल यविकने बाधित
 व्यवसायके लिए भारतवर्ष घोर चर्मरिकाके लाना
 यज्ञोने नायिकोंके नाय चलातेके पक्षमें निधम निवि-
 दस किए जो पक्ष भी 'हेनरीयट्टबलोम' भ्रममें पक्ष
 है । उस समयसे ने कर चर्गा मान समय तक नायिक-
 विद्याके विधयमें जो दक्षिण नायित हुए हैं, यद्यपि-
 क्षमने उनका विवक्ष्य विविध करना महज नहीं है ।
 जहाज गठन-प्रचालीको सञ्चलित घोर जहाज, नायिक
 होनेके लिए, पक्षमज्जयाका प्रयत्न घोर जलन जलन
 यज्ञोका बाधितकार होनेसे ही समुद्रमें पक्ष जानेके
 निवेष्टा जो विमोचन सुविधा हुई है, इनमें जहाज भी, नन्द
 नहीं । घाघोनकाममें ही जहाजनेवामे जहाजके पाटा-
 तनके ऊपर बैठ कर बाङ्ग चलाते हैं । बिबो किनो
 जहाजमें दो तीन भी पाटानन रहते हैं । सुतरां जहाज-
 की गति समुद्रके नाममें जहाज निर्भर रहती है । यद्यो

हटिग सरकारकी कर-प्रकार देने पड़ते हैं। यहाँकी प्रधान व्यवसाय, लो, खार और चकोस है।

नालायक (स० वि०) पयोम्य, निक्षया, मूर्ख ।

नानि (स० स्त्री०) नानयतीति नन-ङिष्-इन् । १ नाड़ी, गिरा । २ पद्म-दिका खण्ड, डाँड़ी । ३ शाकभेद, एक प्रकारका माग ।

नानिज (स० पु०) नन एव नानस्त्वङिगीयः, स भोज-
घत्वेनाभ्यास्येति ठन् । १ मद्यिप, भैंसा । (स्त्री०)
नानमन्त्रास्येति । २ पद्म, कमल । नानः कार्यसाधन-
त्वेनाभ्यास्येति ठन् । १ पद्मविशेष, एक प्रकारका
हथियार : धनुर्कक्ष जैसा इसकी भी नलीमें कुछ भर कर
चलाते थे । ४ रत्नगन्धोल । ५ नाड़ोगाक एक
प्रकारका माग । ६ चर्मकपा ।

नालिका (स० स्त्री०) नाला एव, स्वार्थं कन् टापि
पत इत् । १ नाला, छोटी नाल या डंठल । २ नाली ।
३ लुनाहोंकी नली जिसमें वे लपेटा हुआ सूत रखते
हैं । ४ नालितागाक, पटुनामाग । ५ एक प्रकारका
गन्धद्रव्य । ६ चर्मकपा ।

नालिकेर (स० पु०) नारिकेल, लरगौरैक्यात् रस्य लः
लस्य रय । १ नारिकेल, नारियल । इस गण्डका कक्षों
कक्षों क्षोयलिङ्गमें भी व्यवहार होता देखा जाता है ।
नारिकेल देखो । २ कूर्म-दिभागके पम्बिकोणस्थित
देगभेद । (बृहत्सं० १४ अ०)

नालिकेरी (स० स्त्री०) गाकविशेष, एक प्रकारका साग ।

नालिजङ्ग (स० पु०) द्रोणकाक, डोमकोवा ।

नालिता (स० स्त्री०) स्वनामख्यात शाकभेद, एक
प्रकारका पटु, या जिसके कोमल पत्तों का साग होता है ।

नालिनी (स० स्त्री०) नाकके एक छेद पथात् नादनैका
ताम्रिक नाम ।

नालिय (फा० स्त्री०) १ क्रिमिके विरुद्ध प्रभियोग,
फरियाट ।

नाली (स० स्त्री०) नालि यादुलकात् डीप । १ शाक-
कक्ष्मक, कक्ष्मुका माग जिसके डण्डन नलीको तरह
घुमे होते हैं । २ दक्षिणवैधनो, हाथियोंकी कल-
देदनी । ३ पद्म, कमल । ४ घटोयन्त्र, घड़ो । ५ नाड़ो,
रक्त पादि पड़नेकी नली, धमनी । ६ मनःगिला ।

नानी (हि० स्त्री०) १ जन बहनेका पतना माग,
गद्दा जिसमें हो कर जन बहता हो । २ गनीन पाटि
बहनेका मार्ग, मोरी, पननाया । ३ डंड करनेका गद्दा
जिसमेंसे हो कर छाती निकल जाय । ४ बट गद्दो
मकोर जो तनवारके थोचोथोच पूरी मशरौ तन गदि
होतो है । ५ घोड़ेको पीठ पर गद्दा । ६ घेस पाटि
चोपायोंको दबा पिनानेका चोगा, टाका ।

नालोक (स० पु०) नाल्या ननयन्त्यात् कायति गण्डायते
कै-क । १ गर, वाण । मनु वाणका नाम नालोक है ।
यह वाण ननयन्त्या द्वारा फैका जाता है । पर्वतके ऊँचेमें
ऊँचे गह्वरमें और दुर्गयुद्धमें यह वाण काममें लाया जाता
है । (स्त्री०) २ गव्याह । ३ पद्मसूत । न-पलोक-
मिति । ४ मल । ५ मृत्पान ।

नालीकानो (स० स्त्री०) नालीकामन्त्रास्य इति नालीक-
रनि, ङीप् । पद्मसूत ।

नालीघटो (स० स्त्री०) नाङ्गा : दण्डकालस्य रोधनार्थं
घटो डस्य न । दण्डादि चापक घटोभेद, एक प्रकारको
घड़ी जिसमें दण्डादिका पता लग जाता है ।

नालोप (स० पु०) कदम्बक, एक प्रसिद्ध वृक्ष, कदम्ब ।

नालोवण (स० पु०) नालोगती वणः । नाड़ीवण,
नासूर ।

नालुक (स० वि०) १ लग, दुबला । २ जिसके सुगमें
नाल पड़े । (पु०) ३ गन्धभेद, एक गन्धद्रव्य ।

नालीट (हि० वि०) बात कह कर पण्ट जानिनाला,
सुकर जानिनाला, इनकार करनेवाला ।

नाल्यपुंषो (स० स्त्री०) महाशयपुष, एक प्रकारका
पटसन ।

नाय्य (सं० वि०) नलस्यादूर दियादि, महाशयदित्यात् न्य ।
नलके समोपका ।

नाव (हि० स्त्री०) लकड़ो लोहे पादिको बगो हुई
जनके ऊपर तेरने या चलनेवाली मशरौ, जनयान,
किश्ती । विशेष विवरण नौका शब्दमें देयो ।

नावक (फा० पु०) १ एक प्रकारका छोटा वाण, राम
तरङ्गका तोर । २ मधुमस्त्रोका डह ।

नावक (हि० पु०) केवट, माँझी, मज्जाह ।

नाववाट (हि० पु०) नाबोंके डकरनेका घाट, नदी, भीख

पादिने किनारेका यह स्थान वहाँ जावे ठहरावो-हो ।

मावना (मं स्त्री०) मत्स्य, मत्स्य, सुँघो ।

मावना : हिं० क्रि०) १ भुक्ताना, मवाणा । २ प्रविष्ट
करना, घुमाना । ३ डालना, फेंकना, गिराना ।

मावमिक (मं० वि०) नवम्-उत्पत्ति । नवम् संख्यासुत्र,
त्रिमे में जो हो ।

मावयप्रिक (मं० पु०) नवयप्रिक - तत्पतिपादकवयप्रिक
व्याख्यानी पत्नः उत्पत्ति । १ नवयप्रिकतिगदध व्याख्यान
धनविशेष ।

मावा (हिं० पु०) दक्षिणमें डोनेयाना एक पेड़ । इसको
मकड़ी बहुत माक, पिकनी पोर मजबूत होता है । मेर,
हुराओ पादि मजावटके सामान इसके बहुत पछे
बनते हैं ।

मावा (हिं० पु०) यह रश्मि जो किमोके नाम निमी हो ।

मावा (मं० स्त्री०) बाय ।

मावाकिक (फा० वि०) धनमिष्ट, धनज्ञान ।

माविक (मं० पु०) मावा तरलोनि नो-ठम् । कर्षधार,
माँको, मजाह ।

जो हाँड़, दाम पादि यस्तोकी मजावतामे नदो
पादिमें माव चलाता है, उसीका मावाग नाम माविक
है । माविक लोगोका विमान भुज कर भी नहीं
करना चाहिए । नदो, खाँड़, पादि जलस्रोत जो हर
जानिमें दायगित यस्तो) जहरत नहीं पहुँचती । हुरा
उस गतनामनका कोई विमेष नियम निविबद करना
पावयक है । नियम माविक या मजाहके छोड़ा दूर
दूरान पोर बहुतहिता रहनेमें जो वे मजह पोर निनिष्ठा
पूर्वक जल मय जलस्रोतोमें जा ला सकते हैं । किन्तु
मावुद्रिक माविकोकी मिचित, दस पोर मुहिमान होना
पावयक है । इसी कारण यहाँपर मजुद्धमें गतिविधिका
नियम पोर प्रवाणी पादि मजेमें दी जाती है ।

पति माघोन काममें भारतवासी पोर रजितवासीके
पहले पहल मजुद्धमें जाने पानिका प्रमाण मिलना है ।
मिष्टरामो पचमजुद्धको महाप्रतामे भारतवर्षमें बाविष्ण
करने पानेपे । कुरावागोन मजुद्धमाविषमिं विमो
कोप मोव जो निमेष प्रमिद है । वे पचमे परिचित
मो जातिपे मध्य-मजुद्धमाविकोपे-व्यवसाय करने

पे । यहाँका टावर नामक बन्दर हुको भारमें गये प्रधान
बाविष्णवबन्दर समझा जाता था । पहले यहाँने कई एक
जहाज धुन किये । यहाँ जहाजोकी महाप्रतामे ये
विदेपमें उपनिवेश स्थापन करनेमें समर्थ हुए थे ।
किन्तु उपनिवेशमें कहीं न बहुत प्रमिद था । कर्ष-
के पधिसाओ भोग युरो पोर पलायनके पधिम मजु-
द्धन्य जिनमें स्थान है, यहाँ जहाजको महाप्रतामे
बाविष्ण करनेपे । इनके बाद पोखनीय माव चलावेमें
पदसर हुए । वे पचमे पार्गा नामक जहाज पर बहुत
कर कमनिममें उत्कट राक्ष मेवके भीम जाते थे, यह बात
हरवतको विदित है । पार्गाके बाद रोमजानिपेने
जहाज चलाने पोर चलावेकी विद्या मोप कर
पार्गकमिष्ट्या नामक बन्दर स्थापन किया । इस बन्दरके
स्थापन होनेपे ही कर्षेजका पूर्व मोरव जाता रहा ।
पार्गकमिष्ट्या बन्दर एक समय धनगर पोर बाविष्ण
विपयक उत्पत्तिमें हुको भारमें सर्वविध मिष्टर पर पद
गया था । रोमके पचमे बाद कुछ दिनके निवेयुरावेमें
माव-चलावेकी विद्यामिष्ट्या पोर परिचालन पादिहा
पचपदन हुए । रोमके निनीपावाको जहाज चलानेमें
विपय पट्ट, निहसे । निनीपाके बाद भेनिषके कोतोने
मजुद्धमावकी उत्पत्तिमें खूब सकलता पाई । इस समय
'हेनैगिटकलोम' नामक एक टन बहिकनि बाविष्ण
व्यवसायके निष्ट भारतवर्ष पोर पार्गेरिकाके नाम
स्थानोंमें माविकोके माव चलावेके पनेक मिष्टर निवि-
बद किये जो पार्गे भी 'हेनैगिटकलोम' नामके प्रमिद
हैं । उस समयवे मे कर यहाँ मान समय तक माविक-
विद्याके विषयमें जो उत्पत्ति पाविष्ट हुई है, पार्गे-
क्रममें वनका विचार निविबद करना महत्त्वपूर्ण है ।
जहाज मजुद्ध-प्रवाणीको उत्पत्ति पोर जहाज पानि
होनेके निष्ट-पनिषवज्जहाज पचपदन पोर मजुद्धमजुद्ध
यस्तोका बाविष्ण करानेपे जो मजुद्धमें पार्गे प्रादि
निवे जो विमेष सुविधा हुई है, इसमें तथा भी बहुत
नहीं । पार्गेमजुद्धमें हाँड़ चलावेवाके जहाजके जहा-
जके पार्गे के कर हाँड़ चलावेपे । किन्तु विमो
जहाजमें दो तैल ओ पाटानन रहते थे । मजुद्ध जहाज
को गति मजुद्धके नामसे ही जहाज निर्धार रहती थी । पार्गे

पटासनसे बन्दने पानका व्यवहार होने लगा है। जिस पोरमे दवा बनती है, उस पोर पान पोर डाँड़ द्वारा बहुत तेजीसे ये नाय में जाते हैं। फिर वायुशोषकका परिष्कार हो जानेसे दिनों दिन समुद्रयात्रा में विशेष सुविधा होती या रहो है। पूर्वकालमें नाविकोंका जहाज पाननेका काम बहुत असुविधाजनक था। पानी एकसाँत दिग्दर्शनयन्त्रका पावित्र्यकार हो जानेसे वह असुविधा बहुत कुछ जाती रही। पूर्व समयमें नाविकगण टिमकी सूर्यकी पोर पोर रातकी ध्रुवतारा (North Star) की पोर लक्ष्य करके जहाज चलाते थे। कुद्देरा या मेघाच्छन्न वातावरणके दिन वे भूल कर भी जहाज नहीं चलाते थे। दिग्दर्शनयन्त्रकी सृष्टि हो जानेसे पानी सूर्य वा अन्यग्रह उभयपक्ष उदयके पामरे उड़ना नहीं पड़ता है। दिग्दर्शनयन्त्रके हो जानेसे भी उल्लट मानचित्रके प्रभावमें बहुत दिनों तक नौवायताका कोई विशेष सुविधा दीख नहीं पड़ती थी। उस समयका मानचित्र भ्रमने परिपूर्ण था। पोछे मारिनेटर प्रणीत मानचित्रका प्रचार हो जानेसे प्राचीनकालकी जहाज चलायनकी नियमावली पोर शुद्ध बहुत कुछ धदन गई है। अनन्तर नगारियमकी गालिकाके प्रसृत हो जानेसे जहाजचालनोपयोगी सब प्रकारका बड़ा बड़ा बह्वक्ताका विशेष सुभीता हो गया है। सेक्टराण्ट, गीयाडण्ट पोर दिग्दर्शनकी सहायतामें सूर्य पोर अन्यग्रह गहोंकी जगहों तथा चन्द्र पोर दूसरे दूसरे ग्रहोंकी परस्पर दूरीका स्थिर करना अनायास सिद्ध हो गया है। इनके अनायास नाविक नौगीके पास नगारियम-तानिका पोर नौ-पञ्चिका रहती है। सब यन्त्रों पोर मानचित्र आदिकी सहायतासे नाविकगण अपने अपने जहाजका अर्थात् पोर देशांश स्थिर कर लेते हैं तथा जहाज पामे दूरवोचण द्वारा जो बन्दर या अन्तरीप मन्नर पाता है उसकी भी पचरेखा पोर द्राविमा अपना मानचित्र देख कर ठीक करते हैं। मानचित्रमें केवल दूरीका ही काम नहीं लेते, बल्कि समुद्र-पथमें कहाँ पहाड़ है उसे भी मानचित्रमें देव कर उस रासकी कोड़ देते पोर निःशङ्कचित्तसे दूरी राट हो कर जहाज आदि ले जाते हैं। जिससे जहाज कुछ भी

नुकसान नहीं होता। इसके सिवा कितने से सर्गिक व्यापारके प्रति नाविकोंकी लक्ष्य रचना पड़ता है। यद्यपि सामान्य महायन्त्रा की नाविकोंके लिये विशेष कार्यकारी है, नहीं तो साधारण भूत ही जानते ही जहाज टूट फूट जा सकता है, हममें मन्देह नहीं। खोले बन्दके प्रति, समुद्र जलके रंगने प्रति (समुद्र तोरने निकट लक्ष्य जगता रंग मन्नर जनके रंगको) अपने लक्ष्य रहता है। तथा यद्यपि मन्नरागमन प्रति नाविकोंका विशेष लक्ष्य रहता है। गूकान आदि का निष्पन्न करनेके लिये उनके पास हमेशा वेरीगोटर रहता है। इन सब पद्धतियोंका यन्त्रोंकी सहायतासे पानी समुद्रयात्रा बहुत सहज हो गई है।

भारतवर्षी प्राचीनकालमें जिस जहाज पर समुद्रयात्रा करने उसे 'यानपात्र' कहते थे। इस 'यानपात्र'का बहुत लम्बा चौड़ा विवरण है, लेकिन विस्तारके भयसे यहाँ नहीं लिखा गया। चीनवर्षी भी जिस जहाज पर समुद्रमें जाते थे, वह 'यानक' या 'याहू' कहलाता था। नाविकविद्या (मं० स्त्री०) नौका, जहाज आदि चलायनकी विद्या। नाविककी इस विद्यामें विशेष पारदर्शी होना उचित है।

नाविन् (मं० लि०) नौरथयस्य प्राद्यादित्वात् पथे इति। पोताध्यक्ष, नाविक, ऊषधकार, मांफो।

नाथी (मं० स्त्री०) यथोक्त नौका, जहाज प्रभृति।

नाविल (चं० पुं०) उपन्यास।

नाथोपजीवन (चं० पुं०) नाथ उपजीवनमस्य पार्थ प्रलोक्य समाम। नौकाचालनोपजीवि जातिगद, एक प्रकारकी जाति जिमका घंटा गाथ, जहाज आदि चालन है। महाभारतमें इस जातिका उल्लेख देवमेंमें पाया है।

“निषादी मधुरं दूते दार्य नाथोपजीवनम्।”

(भारत भाग १८ अ०)

नाथोपजीवी (चं० पुं०) वह जाति जो नाथ जहाज आदि चला कर अपने जीविकानिर्वाह करता हो।

नाथ (चं० लि०) नाथा-नाथं नो-यत् (नौरथोपजीवि) या शास्त्रे १ नौकागम्य देशादि, नौकाके विना जिसका पार करना कठिन हो। (पुं०) गव्य भाषा: यज. २ नूतनत्व, नयापन। ३ तदवधारण, अज्ञान।

मंय, टंक (मं० स्त्री०) 'नाविस्थितमुदकम्' नावि
'पनिशेषममसि' याधदुदकम् । १ नोकास्थित जल,
नावमेंका पानी । २ 'पनिशेषाया' पानिस्थः पनाद्र
इत्यपि जल । यह जल पोश निषेध है ।

नाग (मं० पुं०) नग-भावे घञ् । १ ध्वंस, निघन, वर-
बादो । २ पदगमन, गायत्र होना । ३ पनायन, भाग
जाना । ४ घनुपलभ्य ।

वस्तुका नाम होता है, हमें मांस्यकारणय स्त्रीकार
नहीं करते । उसका कहना है, कि कारण वस्तुका नाम
नाग है । वस्तु जब कारणमें लीन हो जाता है, तब
उसे नाम कहते हैं । यद्युक्त कारणमें लीन होनेसे उच्चता-
के हेतु उसकी उपस्थिति नहीं होती । 'नागः कारणयः'
(वाचस्पत्य) कारणके नाग नाम है 'यथा' एकीभूत
होनेका नाम सात्वतिक नाम है । कार्य कारणमें लीन
होता है, दूसरी बार उस कारणसे कार्य हुआ करता
है, किन्तु सात्वतिक नाम होनेसे फिर उसमें कार्यस्थिति
नहीं होता ।

नैर्वायिक लोग नामकी ध्वंसाभाव मानते हैं । यह
पमाय निय है ।

ममका विषयोंकी विज्ञा करने करते पुत्रयको
धर्मवि उत्पन्न होता है । इसा पामात्रिये पामिनाय,
पामिनायमें लोभ, लोभसे मोह, मोहसे स्मृतिभंग,
स्मृतिभंगसे बुद्धिनाश और बुद्धिनाशसे विनाश उपदिष्ट
होता है ।

पमत्वापरय, पारदाय, पामत्वापरय, पशोत्तम-
परय यथागुणाधुमार नहीं' वचना, ये सब भाव
हमेंसे बहुत जल्द भुल जायेंगे । यथागुण और
हमको वेदकी गिरा देनेसे भी कुलनाश जाय होता है ।

विनाश होनेका पूर्व लक्षण साध्यपुत्रागमे रस प्रकाश
लिता है,—जब पुत्रय पमने पाजाय-परदायका परि-
त्याग करते हैं, तब देवता भी उन्हें परित्याग करते हैं ।
यस समय नामा उपमने उपस्थित होते हैं । यह उप-
मने लीन प्रकाशका है—दिग्, पासाशीय और मोम ।
पर और' लक्ष्यमपमनित दिव्य उपमने' उपलपान,
दिग्वाह पादि पासाशीय और भूकल्पन, जलागदादिका
होना भीम उपमने है । ये सब उपलपान देखनेसे

पमनका नाम चाहिये, कि नाम पद्वय गया है ।
नागः (मं० स्त्री०) नागपतीति नाग-विच्-इत् । १
ध्वंसक, नाग करनेवाला, वरबाद करनेवाला । २ पद
करनेवाला, माननेवाला । ३ दूर करनेवाला, न रहने
देनेवाला ।

नागशरी (हिं० स्त्री०) नाग करनेवाला ।

नागन (मं० स्त्री०) नागपतीति नाग-विच्-इत् । १ नागक,
नाग करनेवाला । (स्त्री०) २ लक्ष्मिदेव, विनीतन ।

नागशरी (पुं० स्त्री०) काशमोर, हिमालयके किनारे
सर्वत्र, दक्षिणमें नीलगिरि, बङ्गाल, आदिमें तथा भारत-
वर्षमें चौड़े बहुत सब स्थानोंमें मिलनेवाला एक पेड़ ।
यह समोके डोल डोलता होता है । इसमें फल लो
गिननी भवामें होता है । इसकी पत्तियां चमकनारी
पत्तियोंके समान बड़े पर चिकनी और भस्मीनी होती
हैं । इसमें मन्दै फूल लगते हैं, लेकिन फूलोंके रंग
हल्के बैंगनी होते हैं । इसमें फल गोल होते और उनके
गूदेकी बनावट कुछ दानेदार होता है । बाग गूदेके भाग
बीजाधोच चार छोटे कोमोंमें रहते हैं । फलका पश्चि-
काग ज्वंत कठिन गूदा हो जाता है इसमें इसमें कटे
दुप टुकड़े मिलनेके टुकड़ोंके समान ज्ञान पड़ते हैं ।
काशमोरका नामशरी और काशमोर के कटो' पच्छा होता
है और नाग या नाकके नामसे प्रसिद्ध है । नागनाग
गुराव और अमेरिकाके मायः उन सब स्थानोंमें होता
है जहां जल्दो अधिक नहीं पड़ती । वहां इसका जड़ड़ा
पर लक्षणी होती है और उसके जड़के समान बनते हैं ।
पादुकेमें नामपतीकी पच्छादन बतमाया है । यह
धातुहै, अथवा, भारी, रोचक तथा पच्छातनामक
माना गया है । मेन और नामपती एक ही ज्ञानिने
पेड़ हैं ।

नागपती (मं० स्त्री०) नागकर्त्री, नाग करनेवाला ।

नागपान् (मं० स्त्री०) नाग, पानिन्, नागकी प्राय होने-
वाला ।

नागिन् (मं० स्त्री०) विनागिन्, निमका नाम दिया
गया है ।

नागिन् (मं० स्त्री०) नागः पद्वयने नि नाम पति । १ नाग-
विष्ट, नष्ट करनेवाला । २ नागक, नाग करनेवाला ।

नागिर-र-सुसु-एक पारसिक कवि। ये हिजरी पचम
शताब्दीमें बर्तमान थे। ये भावुक कवि और सुमनमान-
धर्मात्मको 'मियांमस्यदाय' थे। मन्नाट, चकवरगाह-
में शासनकालमें इनकी कविता का खूब पाठ होता
था। इनके बनाये हुए यमोंमें फरहद-इ-अहलीरो
उल्लेखीय है।

नागिर-उम्-सुल्त-पोरवान्मदेगंवांमी एक सुजा। जब
बैराम खां कन्दहारमें रहते थे, तब ये खां सादरके वियेय
चतुराश्र थे। इनका पसन्द नाम पीरमहम्मद था। जब
अकबर दिल्लीके सिंहासन पर बैठे, तब ये बैरामको
सहायतामें 'बमोरीके' पद पर प्रतिष्ठित हुए। इसके कुछ
दिन बाद पीरमहम्मदने चकवरराज' हाजी 'कोके विरुद्ध
युद्धवाता को। युद्धमें हाजी खां नौ दो ग्यारह हो गये
इस पर इन्होंने अकबर और देवगोनखारी नामक श्याम
सरकारी राजपूतों मिना लिये और होम्बुके पिताको पकड़
कर उभे 'इन्जामधर्म'में दोषित होनेके लिए चतुरोध
किया। बख्सीहार करने पर पीरमहम्मदने 'उभे मार'
होना और लूटका माग्न अपने हाथ ले कर चकवरके
समीप पहुँचे।

देवको सचारीमें होम्बुकी जन्मभूमि थी। इस युद्धमें
होम्बुकी परास्त कर इन्होंने नागिर-उम्-सुल्तको उपाधि
प्राप्त की। उक्त उपाधिविषे भूषित हो कर ये इन्ने गर्वित
हो गये थे, कि 'अपने एकमात्र 'चार्ययक्षप बैरामको
पथसा करनेसे बाज नहीं आए। अन्तमें ग्रेण्ड महराईके
फारनेसे बैरामने इन्ने मियांनोदुर्गमें बन्द कर रखा।
पोंके इन्ने 'तोय'वाता करनेकी चतुर्मति दो। विद्यानासे
गुजरात जाते समय राहमें इन्ने 'पाधमखो'से परित एक
पत्र मिना। उक्त पत्रके मर्मानुसार ये कुछ काल तक रव-
स्तभमहम्मद रहे। जब इन्होंने सुना कि बैरामखांके चतु-
रारोंने चतुःपा फाटा किया है, तब वे फिर गुर्जरकी ओर
चल दिये। बैरामके इस अवद्वयवहारमें अकबर, ग्राह
बहुत दुःखित और मोघान्वित हुए। पीरमहम्मदको 'अध
मौलूम' हुआ कि बैरामको लाज्जमें और 'अधमान' हुई
है, तब ये पुनः दिल्लीको आये। इस बार मन्नाट, चकवरने
इन्ने 'जो'री उपाधि दी। ८६८ हिजरीमें ये मन्नाटके
पादस्थमें मानवको जानने गये। यहाँ ये 'अपने सचयोगी

पाधमकी' सहायतासे मानवके शासनकर्ता नियुक्त हुए।
८६८ हिजरीमें बाजबहादुरने मानव पर चढ़ाई कर
दी। दोनोंमें घनघोर युद्ध हुआ। बाजबहादुर परास्त
हुए और इन्होंने चतुःपा बोजागदू पवना मिया। पोंके
आन्देय जा कर इन्होंने नुरखानपुरकी राजधानीमें लूट-
मार मचाई और लूटका माग्न ले कर वहाँमें 'अम्मत' हो
गये। राहमें बाजबहादुर इन पर टूट पड़े। ये जान
ले कर भागे, किन्तु भागते समय नर्मदा नदीके जलमें
इनके प्राण मट हुए।

नागिर-उल्-महम्मद-दिल्लीके दामन'गोय राजाघोर्से
नवम राजा। हिजरी ६४४में ६४४ पयवा १२५६में
१२६५ ई० तक इन्होंने शासन किया। ये दिल्लीके
सुलतान 'अलतमम'के सबसे छोटे लड़के थे। ७ १२४६
ई०में इनके भतीजे अलाउद्दीन सुभायुद्धे शुभभावसे मारे
जाने पर ये दिल्लीके सिंहासन पर बैठे। इनका अधिकांश
समय विद्याभ्यासमें व्यतीत होता था। राजकार्य-
परिपालनका भार बलबर्तन राय भोगा गया था।
मन्दनदुर्ग (देवकाको)-जय, राजपूतानेके अन्तर्गत
नरवारराज श्रीचावकुदेवके विरुद्ध युद्ध, चावकुदेवकी
पराजय और नरवारदुर्गका अधिकार, नागौरमें इलउद्दीन
बलबर्तनका विद्रोह ये सब घटनाये इन्नेके शासनकालमें
घटी थीं। १२५६ ई०में जब मीरटके राजपूतगण
विद्रोही हो उठे थे, तब बलबर्तन बहुत मीरटके साथ
उनका हमल किया था। इस समय जङ्गलवाँके मौल
पारखराज हुसामुद्दीनदिल्लीमें एक दूत भजा।

बहुत दिन रोगग्रस्त रह कर अन्तमें १२६५ ई०के
शिवभागमें इनका प्राणान्त हुआ। ये अत्यन्त निरप्ययी
और परियमो-थे। यहाँ तक कि जब पाठान्यामने इनका
मन जाग्र जाता था, तब ये अपने हाथसे कुरान लिखने
बैठ जाते थे। 'अन्यान्य राजाघोर्की तरह इन्नेके पने
नियं वा वेगम न थो'। इनके कियत एध खी थो जो
इनका 'खुदा' पकाली तथा मय्यारचना आदि

• एउफिनयन्, माधमेन, विमरिन और 'रावट' विरुद्ध
आदि ऐतिहासिकोंने इन नागिर-उल्-महम्मदके जन्ममहत्वा और
वक्तव्या है। किन्तु ८५८ ई०मेंगीरी नामक पारसिक
इतिहासमें है अकबरके कवि पुत्र माने गये हैं।

काय किया करती थी। फिर स्थाने जिया है, 'एक दिन सम्राट् के लिये रोटी पकाने समय बेगमका हाथ जल गया। इस समय बेगमने सम्राट् के सामने एक दामोकी सहायता मांगी। इस पर सम्राट् ने पुरे वट् जालेके डरने बेगमका प्रस्ताव नाम छुट्ट कर दिया और साथ उपदेश दिया कि 'सहिष्णुताके साथ अपना कर्त्तव्य कर्म करनेसे पन्तमें ईश्वरका अनुग्रह प्राप्त होता है।' इनकी ऐसी ईश्वरभक्ति और शास्त्रानुवर्तना देख कर ज्ञात होता है, कि इन्होंने अपना सारा जीवन धर्मकर्ममें ही व्यतीत किया था, राजकार्य देखनेका इन्हे कुछ भी पचकाय नहीं मिलता था।

नाथुङ्क (सं० वि०) धर्ममोक्ष, मन्त्र, मष्ट होनेवाला।
नाम्ना (फा० पु०) प्राताकालका पन्थाहार, पनपियाव, कमेया।

नाथ (सं० वि०) मग-एन्। धर्ममोक्ष, नामके योग्य।
नाथिक (सं० वि०) मष्ट द्रव्य सामान्येनाहंति बाह्य-कात् उन्। १ मष्ट द्रव्यार्थ, मष्ट होने योग्य। २ जिसको वस्तु मष्ट हुई हो।

नाथ (सं० वि०) मग विच्छेदन्। नामक, नाम या बरनाद करनेवाला।

नाथ (हि० शब्द०) १ वह द्रव्य जो, नाममें आता जाय, वह कोषज जो नामके चुरकी या चुरो जाय। २ धर्मो।

नामनाटापुर-नामनाके पन्तगत पाटन (मज्झिमवक्कन) प्रदेशके मध्यमूर्ति एक प्राचीन नगर। इसका प्राचीन नाम कीर्त्तिपुर है। कीर्त्तिपुर नामक वरने एक छोटा प्राचीन राज्य था जो पोलि पाटन प्रदेशके पश्चिम हुआ। चन्द्रगिरिपर्यन्तके नीचे यह राज्य अवस्थित है।

इसके प्रथममें इन्द्रायान और दक्षिणमें महाभारत नामक प्रदेश है। नगरके उत्तर हू कोषको पुरी पर काठमण्डू पड़ता है। कीर्त्तिपुर नगर प्राच्यमनीको एक उपनदीके किनारे अवस्थित है। यह सभी भी बड़ा नगर नहीं था। पर है, इसकी अवस्थिति वा दुर्गम वातावरण; निवास के प्राचीन इतिहासमें यह बहुत प्रसिद्ध है। विमा समय पूर्वोक्तागण्यको विपुल सेवा एवं उपलब्धतामें तीस बार परास्त हुई थी। १०१६-६० ई०के सुद्धमें नेवार

योग तीस वर्ष तक मोरपावीका सामना करने रहे; तीस वर्षके बाद नेवारोंने परास्त होने पर भी मोरपावीको दुग घोर वन्ध्याव्य दृष्टव्य स्वाग स्वाग मन्त्रिण। पोलि मध्य पञ्चनगरका मोम टिण्णु कर घोर वन्ध्याव्य बहाला कर वे दुर्गमें प्रविष्ट हुए थे। दुर्गमें प्रवे। कर उन्होंने देवपामिणीको नाम घोर पीठ पट्ट कर डाले थे, तमोमें नगरका प्राचीन नाम कात्तिपुर बदल कर 'नाम-काटामुर' रखा गया। यहाँके प्राचीन दरबार घोर मन्दिष्टादि भव्यावनीय पात भी देखनेमें आते हैं। १५५५ ई०में यहाँ दरगोरी मूर्ति का एक मन्दिर बनवाया गया था जिसका चण्डर सब मन्त्र भी वर्णमाग है। १५१३ ई०का वन। ह्वा मन्त्र का मन्दिर यहाँका रगो विद्यमान है। यहाँ चन्द्रकायावी वरजिन कोने है। यह मन्दिर नेवार मन्त्रमें अवलम्बित है। मन्दिरमें एक प्याममूर्ति विवित है, उसोमें इनका व्याघ्रमेव नाम रखा गया है। १६६५ ई०में गिरिस्ताकेनारने निर्मित मध्यमन्दिर भी उत्तम जाय है। इसमें मोरपके उत्तरी भागमें दक्षिण, बाई बगलमें मन्त्रादिका वन्ध्या-देवी, दाहिनी बगलमें मन्त्रावनीना मन्त्रिदेवी, सरिवाकट्टा वागाकोदेवी, अथामना वागुल्लादेवी, वन्ध्याको बगलमें वन्ध्याकट्टा इन्द्रादेवी और इन्द्राको भी बगलमें मिहाकट्टा मन्त्रावनीमूर्ति पड़ी है। मध्यमूर्ति के उत्तरी भागके मध्यमन्त्र पर मन्त्रमूर्ति, उसके दक्षिणमें मन्त्रावनी घोर उत्तममें वन्ध्या है। इन सब मूर्तिगोकी पटमात्रका करते हैं। नगरके दक्षिणमें चिन्नदेव नामका एक बौद्धमन्दिर है।

नामय (सं० पु०) नामि पदमयं यज्य (मन्त्रावनीति) वा १५१०५ इति मन्त्रो प्रकृतिकथा। चन्द्रिनीकुमार-दय। ये देवतावीमें शूद्र गिने जाते हैं। जहाँ नामय मन्त्रवे चन्द्रिनीकुमारका कोष होता, वहाँ यह मन्त्र दिव्यमना जाता है।

नामना (सं० शब्द०) चन्द्रिनीपन्थ।
नामयान (फा० पु०) १ कर्त्तव्य पन्थका विवित। तो रद्व निश्चयनेके काममें जाता है। २ जया पन्थ। ३ एक प्रकारकी चातिप्रवाही।
नामयानी (फा० वि०) नामयानके रंगका, कर्त्तव्य पन्थके दित्तके रंगका।

नासमर्ग (हि० वि०) निबुद्धि, श्वेच्छक, जिने बुद्धि न हो, जिने समझ न हो ।

नासमर्गा (हि० स्त्री०) मूर्खता, बेवकूफी ।

नासा । मं० स्त्री० । नासने शब्दाद्यन्ते इति नास-य (गुण्य इवः) । वा १।१।०।१। ततटाप, वा नाप्यन्तेऽनया नाम कणि छय, टाप । १ नासिका, नास । गर्भस्थ शिशुको ५ महीनेमें नाक उत्पन्न होती है । नासिका देखो । २ हारोपस्थित दाढ़, हारने लखर लगी हुई नकदी, भंटा । ३ वायव्यपुच्छ, पट्टना । ४ नासार्ग, नाकका हिस्सा, नटना ।

नासागतरोग (मं० पु०) नासागत रोगविशेष, नाकके भीतरका एक प्रकारका रोग । इसका विषय सुप्तुतमें इस प्रकार लिखा है,—

नासारोग ११ प्रकारका है । यथा—पपोनस्य, पुतिनस्य, नासापाक, शोषितवित्त, पुष्यगोणित, चवधु, भ्रंशधु, दोषि, प्रतिग्राह, परिश्रव, नासाशोष, चार प्रकारका चर्म, चार प्रकारका मोक, सात प्रकारका चर्बुद और पांच प्रकारका प्रतिग्राह ।

इन ११ प्रकारके रोगोंका यथावयव लक्षण लिखा जाता है । नासार्गप्ररोध, धूम, पुनः पुनः पचन, छोट-जगन और गन्धरसको चतुष्पलब्धि से सब रोग होनेसे पपोनस रोग समझा जाता है । यह वातघ्नेभज्य प्रतिग्राहके साथ समान लक्षणविशिष्ट है ।

गन्धस्य और शालुमूलमें दोष विद्यते हो कर जब सुप्तु और नासिकामें दुर्गन्ध वायु निकलती है, तब उसे पुतिनस्यरोग कहते हैं ।

नासाग तरल कर्तक मर्मस्थानमें जलवान् पाकके छप्पन्न होनेसे नासापाक रोग समझा जाता है । इस रोगमें घृत और छोट होता है । दोष (पित्त, शोषित और श्लेष्मा) के विद्यते होनेसे शयवा मज्जादेम पाहस-प्रयुक्त नासिकामें रक्तमिश्रित पदार्थ निकलनेसे पूरक रोग होता है ।

नासार्गमें मर्मस्थानके दूषित होनेसे जब नासार्गप्रसे छक्कप्रयुक्त वायु उत्पन्न करती हुई निकलती है, तब उसे चवधुरोग कहते हैं ।

तीक्ष्ण गिरोपिरोचनप्रयोग वा कटुद्रव्यके प्राप्राप,

सूर्यनिरीक्षण यथा सुवादि-हारा तद्व्याप्य नामक मर्मके उद्घाटित होनेसे चवधु (दिवा) होता है, इसमें पित्तताप मूर्खदेशमें मक्षित हो कर गाढ़ विट्पथ मयच-रसविशिष्ट कफ मूर्खदेशमें नाक को कर निकलने लगता है । इसीको चर्बुदरोग कहते हैं ।

नासार्गमें जब धूमको तरह वायु निकलती है और नासार्गप्ररोधको तरह जलने लगता है, तब उसे दोम-रोग कहते हैं ।

उदानवायु जब कफने ठर जाता है और स्वीय-मार्गमें विक्षत रह कर श्वाश्वयकी प्राप्ति करती है, तब उसे नासाप्रतोनाहरोग कहते हैं ।

नासिकामें चर्मज विशेषतः रागको यदि निर्मल असको तरह आस्त्रय निकले, तो वह नासापरिश्चाय-रोग कहलाता है । प्राणरगस्थित श्लेष्मा जब नास-पित्तमें शक्त हो जाय और कटसे श्वाश्वक्रिया हो, तो उसे नासाग्ररोग कहते हैं । प्रतिग्राहादिका विषय पछे लिखा जायगा ।

इसकी विशिष्टा—पुतिनस्यरोगमें नाकोक्षेद, कोक्षेद, यमन और शंसनका प्रयोग करना चाहिए । तीक्ष्णरस-योगमें लघु पच, चप्य भोजन, उष्णोदक पान और चवधुक्त कालमें भूम पान कर्त्तव्य है । हिंशु, विकट, रन्ध्रवय, शिवाटी, सासग, कुटुम, कटफल, कुष्ठ, श्व, रसायनो, विड्ड और करच्छ इन सब द्रव्योंका गोमूत्रके साथ सरभोके तेलमें पाक कर मस्यका प्रयोग करना चाहिए । नासापाकरोगमें नाकके पादर और भीतर पित्त-नासक विधान कर्त्तव्य है । पछे रक्तका भ्रनोभाति साक कर औरतृषके हस्तकेका घांके साथ परिषेचन और प्रसेप देना उचित है ।

पूरकरोगमें नाकोदयको तरह विशिष्टा करनी होती है । यमन कसा कर चयपोहन, तीक्ष्णद्रव्यका भूम पार शोषनो द्रव्यके चूर्णमस्यका प्रयोग करे । लघु, रागमें मूर्खदेशमें श्लेष्मप्रयोग और छिन्धभूम पादि श्लेष्मास्थ वायुगोणीकी हितकर विशिष्टा प्रयोग करे । दोमरोगमें पित्तजन्म रोगके प्रतीकारकी विधिसे चतुशर क्रिया करनी उचित है । प्रतोनाहरोगमें श्लेष्मपान की प्रधान है और छिन्धभूम तदा गिरोपिरोचनका भी प्रयोग

दितकर माना गया है। यकालेन चोर पदार्थ वायुनामक द्रव्य भी इस रोगमें कायदास्य है। जमा खाद्यरोगमें शीघ्र चयनोक्तता आमारोगमें मत्र द्वारा प्रयोग करे चोर देवदाह तथा विमलके साथ मांस चोर हृतधूमका मेवन करावे। आमागोपयोगमें चोर, हृत चोर चतुर्वेकका मत्र मेला हो सर्वोत्कृष्ट है। हृतगन्ध, मांसरसके साथ भोजन, खैरुन्दे चोर खैरिख द्रुम भी प्रयोग्य है। अतिगन्धरोगका निवारण अतिगन्ध रसमें है। (अनुसन्धान २२-२३ अर्थात्)

आमागमरोगमें भी आमारोगका विषय विद्या है जो इस प्रकार है। अनुसन्धे आमागमरोग ३१ प्रकारका प्रकाशित गया है, किन्तु भावप्रकाशके मतसे यह ३४ प्रकारका है।

यथा—रोगम, मृत्तिलस्य, आमापाक, ध्रुवगोविन्द, लघु, अंशु, दोषि, प्रलोभाह, परिखाय, आमागोप, पांच प्रकारका प्रतिपाद्य, सात प्रकारका अनुद, चार प्रकारका अर्ग, चार प्रकारका मोघ चोर चार प्रकारका रसविष।

जिस रोगमें नाक द्रव्य हो आग, कथमे रक्त हो आय तथा शुक्ल वा ककमे क्रिय चोर मन्थाप्रवृत्त हो आय एवं प्रायमें रसका बोध न रहै, उसे दोषम वा चोरोम कहते हैं। यह दोषमरोग रातत्रैमिक प्रतिपाद्यको तरह लक्षणविशिष्ट होता है।

दूधित विष, रक्त चोर ककमे गन्ध चोर तानुमूलक वायु यदि मृत्तिभावायक हो आय तथा सुष चोर माहमे दुर्गन्ध निर्गमे, तो उसे मृत्तिलस्य कहते हैं।

जिस रोगमें प्राय सर्वप्रतिपत्तके लक्षणों कोनेमे नाकमें बहुतमे छोड़ो हो काय चोर रक्त मत्र छोड़ो एक जनिमे दुर्गन्धित पोष निकले, तो उसे आमापाक कहते हैं।

रक्तविषको अधिकांश व्यापक चयन आमागमें अधिमातादिने व्यापक नाकमें रक्तमिश्रित पोष निकले, तो उसे ध्रुवस्य कहते हैं।

आमागमरोगमें मृत्तिलस्य रोगमें चोनेमे नाक हो चोर ककमे बाद प्रतिगन्धद्रव्य वायु निकलने है। इस प्रकार के लक्षणविशिष्टरोगको लघु कहते हैं। शीघ्र वा

कटद्रव्यके प्रतिरिक्त भजन करनेमे या उपहा प्राय भिन्ने विषा मृदे निरोधन करनेमे उपहा द्रव्यादि द्वारा आमागमरोग चोर मृदाहर्म्य चोनेमे चोनेमे चोनेमे चयन (विद्या) उत्पन्न होता है।

ध्रुवस्य मृत्तिलस्य आमागमरोगमात्र चोर विद्या कक जव विषमे ताविष हो कर नाहमे गिरने की तब उसे अंशुद्रव्य कहते हैं।

जिस रोगमें नाकमें भीतर जलन हो चोर ककमे धूम वायु निकले, यह दोषि रोग कहलाता है।

वायुके साथ जक विमलकर जव आमारोगको रक्त कर दे, तब उसे प्रलोभाह रोग कहते हैं।

नाहमे दोष वा रोगमें नाक चयन चयना दोषका खास हो, तो उसे आमाखाय कहते हैं।

आमागमरोगमें जव ध्रुवमे शीघ्र चोर गिरने चयना प्रतिपत्त हो जव चोर गन्ध चोनेमे कट मानुम पड़े, तब उसे आमागोप कहते हैं।

प्रतिपाद्यका विवरण अतिगन्ध रसमें देखो।

उत्तमे दोषमादिने लक्षण जिने वा पुने है। चयन रक्तो विविधाया विषय विद्या जाना है। मन्थाप्रवृत्त गुणता, चयन, नाकमे चयनमात्र, चयनमात्र चोर चयन निरोधन को, तो उसे चयनरोगम कहते हैं। इस चयन दोषमके लक्षणविषय छोटा जव नाक हो कर आमारोगम रोगम को आय चोर चयन चयन तथा छोटाका लक्षण विवरण मानुम पड़े, तब उसे दोषमरोगम मन्थाप्रवृत्त मत्र प्रकारके दोषमरोगमें दधि चोर गुहमे माघ मिर्षन लूके मत्र समय विद्याया कायदास्य है।

चयन, ध्रुवस्य, ककमेद्रव्य, विद्या, दुरागम चोर लघुप्रोहा इस मत्र रोगमें ध्रुव चयनमात्रको चयन रक्तके रक्तमे माघ मेवन करनेमे चयन चोर चयनमात्र चयन जनि रहते हैं।

विद्या, दुरागम, मन्थाप्रवृत्त, चयन, चयन, चयन चोर लघुप्रोहा इस मत्र मन्थाप्रवृत्त चोर दुरागम चोनेमे चयनमात्र, रक्त मत्रके चयने दुरागममात्र गुह मिर्षन चयन चयनमात्रमे मेवन करनेमे चयनमात्र चयन चयन हो जनि है। इस चयनमात्र नाम चोनेमात्रको है।

चयनमात्र, दुरागम, चयन, चयन, चयन

घोर मंत्र्य रक्त चूर्ण द्वारा मित पाक कर मम स्निग्ध
पूतिनामारोग दूर हो जाता है ।

भोमाग्रमृदा योश. हस्तोद्योग, दन्तोद्योग, सिङ्ग
घोर मंत्र्य रक्त के कटक तथा विषयपत्रके रस द्वारा तेज
पाक कर समता सेवन करनेसे भी पूतिनामारोग माल
हो जाता है । एत, गुग्गुलु घोर भोग्य मृदा को जाता है ।
भूय प्रयोग करनेसे चक्षुष घोर भोग्य मृदा को जाता है ।
मोठ, कुट, पोवर, विषयमूल घोर द्राक्षा रक्त मय द्रव्योके
लाघ घोर रक्त द्वारा तेज सा एत पाक कर समता मम
नेमिसे लवण्युरोग दूर हो जाता है । दोमिरोमने नीम
घोर रसाग्रमृदा मम मिला तथा पत्र्य रक्त दे कर दुग्ध घोर
जनका परिये रक्तपूर्वक मृगके जूमे से माय सेवन करना
चाहिये । नामास्त्राग्रोगने दोमो नामाग्रमने चूर्णनय
घोर नाङ्गो द्वारा प्रदेय चक्षुष तथा देवदाक घोर विता
द्वारा तोषा भूम घोर कागमाम हितगरक है ।

(मायव० नासाग्रोगाधि०)

भोयग्रमृदावमोने इस प्रकार लिखा है—मम प्रदर
घोनमोमीने पट्टे निगमिष्टमने चक्षुष, खेक, खेद,
भूम घोर मग्नूपर श्रवण्या करना उचित है । इस रोग-
ने गुद घोर रक्त वला द्वारा मग्नूपर चान्द्रादनय चक्षु
उत्थ, लवणरम घोर रक्तम द्रव्यका भोजन करना चाव-
गत है । पत्रमूल सिङ्ग, दुग्ध, विनामूल, चरोतको, एत,
पुगासनगुद घोर पट्टमृदय से मम घोनमनागक है ।
घोषाद्यचूर्ण, पाठाटितैन श्यामोतेन भी नामाग्रोगने हित-
कर है । नाकमें यदि छमि हो जाय, तो जमिनागक
घोषधको गोमूत्रमें घोल कर नाकमें प्रयोग करे घोर छमि
नागक घोषधको सिङ्ग कर उसमें नाक साफ करे । नामिका
मास्त्रोय चक्षु रोगों को दवाधुमारसे यथाविधि चिकित्सा
करनी चाहिये । पुगासनगुद १०० पल, कावके लिये
वितामूल ५० पल, जन १० मेर, मिय १२१ मेर, गुग्गुलु
५० पल, जन ५० मेर, मिय १२४ मेर ; इस मय द्रव्योको
एक कर समने गुद घोल दे, पोष्टि जान कर चरोतकीका
चूर्ण ८ मेर दे कर पाक करे । पाक पिङ्ग हो जाने पर
समने मोठ, पोवर, मिर्ष, दारवीनी, तेजवरा घोर दना
यधो प्रत्येकका चूर्ण एक एक पल घोर घणघार ४ तोला
जान दे । दूसरे दिन समने १ मेर मधु मिलाये । चमिके

वसका मिचार कर २ सोसेवे ४ तोला तक्ष रम घोषध
मेवजका परिमाय है । इसके सेवन करनेसे नामाग्रोग
पादि जाते रहते हैं । इस घोषधका नाम चितक-चरोत-
को है । (भेदरत्ना० नासाग्रोगाधि०)

नासाय (म० स्त्रो०) नामायाः पयः । नामिनाका
पयभाग, नाकका पयभा भाग ।

नामाक्षिपो (म० स्त्रो०) छिदः भावे क्, नामायां छिप्
छेदो यस्याः, छोप् । पूर्विका पयो, एक प्रकाशकी
विट्टिया जिसको चाँचका दोहरी होना माना जाता है ।
नामाख्वर (म० पु०) यह ख्वर जो नाकके भीतर व्याप्त हो
गठ हो तरफका कोड़ा होनेसे होता है । इस ख्वरमें
निर घोर रीढ़में बड़ा दर्द होता है । नामाख्वर दवा
है ना नङ्गो, यदि जानना हो, तो नामिके मूलमें जायको
कनिठानुलि रच कर लुहाइ, निसे नाक लुनी चाहिये ।
कूते समय यदि पोठ तथा गुदमें दर्द मालूम पड़े, तो
नामाख्वर दवा है, ऐसा जानना चाहिये । जब यह
कोड़ा एक जाय, तब कुछ दूधको नाकके पुटमें घुसेड़
कर चने चारों तरफ घुमाये । ऐसा करनेसे घामके घावान-
से रक्तकीय कट कर दूषित रक्त निकल जायगा घोर दर्द
तथा ख्वर दब जायगा ।

नासादाह (म० स्त्रो०) दारोर्वास्थित काठ, दारके जवर
लगो हुई लकड़ो, भरेटा ।

नासानाह (म० पु०) नामिकारोगमेद, नाकको एक
बोमारो । इसमें वायुके वाय कक मित कर नाकके छिदको
बन्द कर देता है । नासाग्रोग देखो ।

नामान्त्रिक (म० स्त्रि०) नामिका पयना, नाक तक्ष ।

नामापरिशोष (म० पु०) कटुतीक्ष्ण नासाग्रोगमेद ।

नासाग्रोग देखो ।

नासापाक (म० पु०) नासाग्रोगमेद, नाकको एक बोमारो ।
इसमें नाकमें बहुतसो फुंघियां निकलनेके कारण नाक
पक जाती है ।

नासापुट (म० पु०) १ नामिकाका मध्यगततोग, नाकके
भीतर होनेवाला एक रोग । २ नाकका यह समता जो
छिदके किनारे परदेका काम देता है, मयभा ।

नासाबंध (म० पु०) नाकका यह छेद जिसमें नय
पादि पड़ने जाती है ।

नाम'योनि (स० पु०) एक मनुष्य जिनसे प्राप्त करने पर
होयता हो, सोपानिक मनुष्य ।

नामारकपित (स० स्त्री०) पितापितृके कारण नाकसे
रक्तता गिरना । नासागतयोग देखो ।

नामारोग (स० पु०) नाकमें होनेवाला रोग ।

नामागतयोग देखो ।

नामार्गसः (स० स्त्री०) नाकके भीतर जोड़ा का होना ।

नासाग्रर देखो ।

नासासु (स० पु०) १ कटु, फलसुख, कायकर्म । २ जातो-
कर्मसुख ।

नासावयव (स० पु०) नासा तत्त्वयुक्तानां वंग इव सच-
त्वात् । नासावयवस्थित मध्यभाग, नाकके लवर वीच-
कोष गर्ह हुई पतली छडकी, नाकका बाँस ।

नासाविवर (स० स्त्री०) नासाया विवरः । नासिका
विद्र, नाकका छेद ।

नासासंवेदन (स० पु०) संविद्यतेऽनेनेति सं-विद-भ्युट्,
नासायाः संवेदनः । काण्डीरलता, काण्डीरल, चिट्टिया,
बिबड़ो ।

नासाखाव (स० पु०) नामारोगमेद, नाकका एक रोग
जिसमें नाकके मकेट, पोर पोला मवाद निहला करता है ।

नासिक—१ बम्बई प्रदेशके पत्तनगत एक जिला । यह
पक्षा १८° ११' पोर २०° ५१' तथा देशा ७१°
१५ पोर ७५° ५५' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण
५८५० वर्गमील है । इनके उत्तरमें 'ग्राव्हे' जिला,
पूर्वमें निजामराज्य, दक्षिणमें बहमदनगर पोर पश्चिममें
पाना जिला, धर्मपुर पोर सुर्गानांश्व है । जिनके
विशारविभागका सदर नासिकमें ही है । सादा जिला
पश्चिम कोट्ट कर समुद्रतटवर्षे वर्षी ११०० पोर वर्षी
२००० फुट लंबे पर अवस्थित है । इसका पश्चिम
टाङ्ग पोर पूर्वार्ध देश कन्नडाता है । इन पश्चिम पक्षेक
मममय सेर है जो लवियोग्य पोर उत्तरा है । नासिककी
प्रधान नदी तामो को मोदापरा है । इनके पक्षाका
मोदापराको पोर भी कई एक माया नदियां नासिकके
दक्षिणमें पोर तामोको समुद्रतटवर्षे उत्तरमें प्रवाहित हैं ।
यहांके प्रायः सभी वर्षत पूर्व पश्चिममें आरमान है । ईश्वर
सहादि पदाट उत्तर-दक्षिणमें लम्बा है । महासाहूके

साव जिम समय गुरु होता था, इन समय ईसाए ५५
पनेक दुर्ग यहां विद्यमान हैं । ये सब दुर्ग विगत कालके
महाराष्ट्र-गौरवका परिचय देते हैं, यहां पश्चिम पक्षार्ध
प्रायः कुछ भी देखनेमें नहीं पाता । साधारणतः यहांकी
जमीन पयरोनी है । नासिक जिनमें इलाहाबाद की मंथना
परिकल नहीं है । जल्लो जल्लो वीच बाव, भानू, पोर
नाता जातोय दरिद्र देखनेमें पाते हैं ।

दुर्गों गताश्लोके पक्षेने ने कर दुर्गों गताश्लोके
पक्ष तट मोहवर्मावनको पक्षमृषाके तमपर दक्ष जिनमें
के शासनकर्ता या राजा थे । प्राचीन हिन्दुधर्मके
प्राच्य, रामोर, चम्पेस पोर देवगिरिके सादपक्ष-
धार्मिक यहां रहनेका काको प्रमाण मिलता है । सुमन-
मानो शासनकालमें (१२८५में १०५० ई० तक) यह
प्रायः शासनमें देवगिरि (दोनगाबाद) के शासन-
कर्ता, कुलधर्मके शासनिराज, पक्षमदनगरके निजाम-
शाहोपंग पोर पोरशाहके सुप्रीमके अधीन रहा ।
पोके १०५०में १८८८ ई० तक महाराष्ट्रोंने इन पर
अपना पूरा अधिकार अजया । तदनंतर यह इटिंग मय-
मेंपक्षे शासनधीन हुआ । पश्चिमो अधिकार होनेके
साव ही उत्तरीं यहां मो-दवा कर कामो जिससे यहांके
पक्षे सब बागो हो गये । पोके १८१० ई०में भागाभी-
के कर्तृत्वपोन रोदिला, पक्षो पोर मोनाने मिन
कर भारो उपद्रव मरु कर दिया था । यहांके लोग
साधारणतः नासिक शहरमें रहना पक्षधर करते हैं ।
महाराष्ट्र तारार्ध प्रदेशमें जो सब लोग रहते हैं, उनमेंसे
कितने ऐसे हैं जो एक जगह अधिक दिन नहीं रहते ।
प्रायः परिवर्तन कर रहना को इन लोगोंका पक्षधर है ।
क्योंकि यहांकी जमीन हर दूसरे वर्षमें उपज देता है ।
पक्षधरानमें ये लोग बनमें जा कर लकड़ा काटने पोर
उधे बाजारमें जा कर बेचते हैं । इन पक्षधर नहीं
मिलता, तब मदनो, पक्ष पोर पक्षका मूल वा कर
पक्षधर बन करते हैं । पक्षाकी प्रादियांमें भीन, कोलो,
काकुर, बालो पोर काठको मरिह है । इनमेंसे कोलो
लंग मरिह मरिह है पोर काठको मरिह दक्षिण । सुमन-
मान पोर मायाको दुर्गों जगहमें पा कर पक्षी मय मरिह
है । नासिक जिनमें वर्ष भरमें पक्ष एक ही बार

मगती है। शहरा नामक पन्नाज की यहाँका प्रधान भाग्य है। ११८६ में १४०० ई० तक यहाँ की घोर दुर्भिक्ष पड़ा था, उसमें नासिक जिला बहुत क्षतिग्रस्त हो गया था। उस दुर्भिक्षका नाम 'दुर्गादेवी दुर्भिक्ष' था जिसे यहाँके लोग आज तक भी भूने नहीं है। बोध क्षेत्रमें यहाँ प्रायः दुर्भिक्ष हो जाता करता है। १८०२ ई० में यहाँ बहुत भयानक बाढ़ आई गो जिनसे हजारों गो मारा गई थीं और जान गव्यादिका भी विधेय घनित हुआ था। १८०१ (१८०० ई०) का दुर्भिक्ष भी उल्लेख योग्य है।

इसी जिल्लेमें येवला नामक एक स्थान है जहाँ सत घोर रोगमय पच्छे पच्छे कपड़े बनते हैं और बम्बई, पूना, मसारा आदि स्थानोंमें भेजे जाते हैं। नासिकमें तबि, पोतन और चांदोके वस्त्र भी बनते हैं। यमी रेलवेय को जानेके कारण याचिश्यव्यवसायकी विधेय सुविधा हो गई है। जिल्लेमें १० शहर और १५१८ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या पाठ लाखमें अधिक है। शासनकार्य-यो सुविधाके लिये जिला १२ तालुकोंमें विभक्त है। शासनकार्यका कुल भार कलकुर और तोल मरका-रिपोंके हाथ है। कलकुरके अधोल जज और मज-जज हैं। इनके निवा और भी १५ कम चारों के जो विचार-कार्य सम्पादन करते हैं। नासिक जिला दूसरे जिलाओं की अपेक्षा विद्यामें बहुत पीछा पड़ा हुआ है। पर धीरे धीरे लोगोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट होता जा रहा है। आजकल जिल्ले भरमें तोल कोने जगहा स्कूल और बाल विद्यालय हैं। यहाँका जनबाध कुल मिला कर पच्छा है।

२ उल्लेख जिल्लेका एक तालुक। यह पचा० १८° ४८' से २०° ०' उ० और देगा० ०३° २५' से ०१° ३८' पू० के मध्य अवस्थित है। भूवरिमाप ४०० वर्गमील और जन-संख्या करीब एक लाखकी है। इसमें १ शहर और १३३ ग्राम लगते हैं। तालुककी आबादी साठहजार है।

३ नासिक तालुकका एक प्रधान शहर। यह पचा० २०° ४०' और देगा० ०१° ४०' पू०में अवस्थित है। जन-संख्या बोध हजारोंमें अधिक है। पहले यहाँ एकलुट भागन बनता था, अभी यह व्यवसाय कुछ ठीका पड़

गया है। ऐतन और तांबेके व्यवसायके लिये बम्बई प्रदेश भरमें नासिक नगर को मगहर है। यहाँके मूल-पूर्व पैगवाके मूलन और पुशतन राजमन्त्रमें मूलन-घनिटी और कलकुरो आकित स्थापित हुआ है। यह नगर बहुत पछनेमें हिन्दुओंका एक वसित तोय माता जाता है। रामायणवर्षित पञ्चशटीयन भी नासिकक याम हो गोदावरीके दूसरे किनारे अवस्थित है। कहते हैं, कि सूर्यवंशावतंग रामचन्द्र पिताकी आत्मा वालन करकेके लिये जानकी और लक्ष्मणके साथ इसी नासिक नगरमें रहे थे। उसी समय लक्ष्मणने रावणकी बहुत शूर्पनखाके नाख-खान काट डाले थे। यहाँकी गोदा-वरी नदीका हृदय बहुत मनोहर है। बहुत-स्तन हिन्दू-मन्दिर हिन्दू-देवदेवोंको मूर्ति योंके साथ गोदावरी नदी-के दोनों किनारे धवलाकारमें विद्यमान हैं। इन सब देवालयोंमें पञ्चवटीमें जो देवालय है उसमें श्रीराम और सीतादेवोंको मूर्ति प्रतिष्ठित है। १८८२ ई०में रङ्गराय चौदिकरने उस मूर्ति की स्थापना की थी। पञ्चवटीमें रामेश्वरमहादेव नामक एक और मन्दिर है। लोग कहते हैं, कि पैगवा बालाजी बाजोरावके नारायण-राज बहादुर नामक एक प्रतिभ कर्मचारोंने १०५४ ई०में उल्लेख मन्दिरका निर्माण किया है। मानिकके सुन्दर-नारायण नामक मन्दिरमें मन्त्री और नारायणकी प्रति-मूर्ति खोदित है। मन्दिरके सामने रामकृष्ण और अम्बिनिलय तोय भी है। एक दूसरे मन्दिरमें लक्ष्मण मूर्ति विद्यमान है। इसके पन्नाया एक मुकाम सीता-देवीकी प्रतिमूर्ति खोदित है जिसे सीतायुद्ध कहते हैं। इस प्रकार कितने देवदेवियोंके मन्दिरमें स्थान परिपूर्ण है। यहाँ बहुतसी मिथानिधियाँ भी पाई गई हैं। कोदण्डस्थ या विस्रवायन ब्राह्मणोंकी मंस्या भी यहाँ अधिक है। मंस्कृतवर्षाके कारण यह स्थान बहुत मगहर है। कुछ ग्रन्थ अध्यापकोंकी संस्कृत-वपु-प्याठीमें बहुतसे विद्यार्थी विद्याध्ययन करते हैं। यह स्थान बहुत स्वास्थ्यकर है।

नासिकको बहुत प्राचीन मिथानिधियोंमें जो ऐति-हासिक सत्य निरूपण है, यह इस प्रकार है,—

प्रथम गीतमोपुत्र। इनका प्रजन नाम दात बलि था।

इन्हें एक पुत्र थे जिनका नाम था पुष्टमायो नामहि-
पुत्र वा नामिष्ठोपुत्र। यह नामिष्ठो गौतमीपुत्र ही को
माने गये हैं। पूर्वतन प्रयत्नविदों ने लिखा है, कि
पुष्टमायो गौतमीपुत्रके पिता थे, किन्तु पुष्टमायो गौतमी
पुत्रके पिता न ही कर पुत्र होते हैं। इस मिथ्यानिधिमें
गौतमीकी एक राजाकी माता और एक राजाकी पितामही
तथा नामिष्ठोकी केवल एक राजाकी माता बतलाया है।
यतएव इस दोनोंमें गौतमी बड़ी मांगी जाती है। और
भी पन्थान्य मिथ्यानिधिमेंको देख कर डाक्टर मण्डार-
करने बतलाया है, कि पुष्टमायो पिताके राजत्वकालमें
अथर्व विज्ञापन पर बैठे थे। उनके मतमें पुष्टमायो
नामिष्ठके उस चंद्रमें और उनके पिता गौतमीपुत्र
शातकीर्षि अपनी राजधानीमें राज्य करते थे। गौतमीपुत्र
श्रीयश शातकीर्षि नामक एक राजाने इस चंद्रमें जन्म
ग्रहण किया। उनका उत्प्रेष कितनी मिथ्यानिधिमें
देखनेमें आता है। ज्येष्ठ गौतमीपुत्र, "मातवाहन
वंशके यशःप्रतिष्ठाता" ऐसा वर्णित रहनेके कारण
अनुमान किया जाता है, कि पुराचोल पद्मभूषणवंश ही
सातवाहन नामसे प्रसिद्ध था।

गौतमीपुत्र धनकटकके अधिपति वा प्रभु थे
जनरल कनिंहुस इस नगरको छद्मनामोंके दिग्गो
मन्दोत्रप्रदेशके घनांगत गुण्डर जिनमें अवस्थित पुरातन
धरचिकोट बतलाने हैं।

उपरोक्त तीन राजाओंके निवा इस चंद्रके छद्मराज
नामक एक और राजाका नाम मिलता है। उस छद्मराज
और गौतमीपुत्रके मध्यमें पन्थान्य कितने राजाओंने
राज्य किया था।

पुराणमें इन दो राजाओंके मध्य और भी १८ राजाओं-
का नामोल्लेख है। छद्मराज बादिकी राजधानी
नामिकर्म और गौतमीपुत्र बादिकी राजधानी गोवर्धन
नगरमें थे ऐसा अनुमान किया जाता है। विशेषतः
एक मिथ्यानिधिमें लिखा है, कि गौतमीपुत्रने पद्मारात-
वंशका उत्प्रेष कर निज वंशका गोवर्धन स्थापन किया।
यतएव ऐसा बोध होता है, कि छद्मराजके राजत्व
कालमें समय पद्मारातवंशमें ही एक शत्रुपुत्र कहें
उनका पद्मराज हीन लिखा। पीछे गौतमीपुत्रने उनके
हानिसे पद्मराजका उद्धार किया।

एक दूसरी मिथ्यानिधिमें लिखा है, कि वीरसेन नामक
एक बामौर वा गोपवंशीय एक राजा यहां राज्य करने
थे। पुराणमें पद्मभूषणवंशके उत्प्रेषके बाद ही इस
चंद्रके राजाओंके नाम हैं। इसमें बोध होता है, कि
वे समसामयिक राजा थे। बामौर लोग पन्थान्य प्रभाव-
शाली थे, ऐसा जान नहीं सकता। जैवम नामिकराष्ट्रका
यहां चंग उनसे प्राप्तलाभोन था।

दो शताब्दोंमें भारतवर्षके इस चंद्रमें दोहराने
प्रचलित था। यहाँके समय भारतवर्षके नामा गणनीने
बोद्धमिच्छु यहके विरगिम नामक ग्यानमें रहके धीमे
थे। पास पासके लोग उन्हें बधादि दिया करते थे।
प्रधानतः मित्रकर और छत्रक लोग ही बोद्धमार्गमें
थे। पर ही, ब्राह्मणधर्मका भी इस समय प्रचारन
नहीं हुआ था। इस बोद्ध मिथ्यानिधिमें बहुत मन्थानके
साथ ब्राह्मणोंका कथा लिखी है। गौतमीपुत्र 'ब्राह्मण-
रक्षक' नाम भारत कर चंद्रमेंकी बहुत मोरवान्त
वसभने थे। विदेशीय भिक्षु ज्ञातिवर्गोंने ब्राह्मणधर्म और
ज्ञातिविभागके लपर जो पापात पढ़ाया था, उन्हें
गौतमीपुत्रने उत्प्रेष कर डाला था।

नामिक शहरमें १८६६ ई०को भुमिपविर्गो स्थापित
हुई है। यहांका लमबापु बाल्यकर और मनोहर है।
यहां एक हाईस्कूल, दो अस्पताल, दो मध-मन्त्रकी
पद्यानत और एक चिकित्सालय है।

नामिकन्यम (मं० दि०) नामिका धमति मन्थायमाना
करोति नामिका धमन्थय ततो पूर्वपदस्य ज्ञानां मुम्
थ। जो नामके मन्थ करता है।

नामिकन्यम (मं० दि०) नामिका नामास्य कलं धमति
विषमोति पेट् पाने नामिका पेट् पम् ततो पूर्वपदस्य
मुम् थ। नामिका द्वारा जनमानहारक, जो नामके
जन पोना हो।

नामिका (मं० को०) नामने मन्थायने इति नाम-मन्थ-
दुम्, टाप्, टावि-पत दत्तं (पुत्र, पूर्व)। वा ३।१।११)
आविन्द्रिय, नाक। पदार्थ—आय, मन्थवत्, घोष,
नामा, दिव्यो, नामिका, मन्था, मन्थमानो, मन्थवत्
और मन्था।

नामिकाके जिन चंद्रके मन्थ की जाती है, वह

नासिकादि द्विद्वयसमूह है। मुखके ऊपर नासिका का जो चर्म त्वरतमावसे दिवनेमें जाता है, उसका काम विषय गन्धरूपों वायुको शरीरके भीतर लाना है नासिकामें जिनमें प्रकारके यन्त्र हैं उनमेंसे श्रेष्ठात् स्नायु मरने विषेय पावग्रहक है। यह स्नायु सन्तिवर्धक श्रेष्ठात् (Nose) में निकल कर नासिकाभ्यन्तरस्थ पक्षिबिन्दुके मध्य कोठी हुई (Ethmoid bone) उक्त पक्षि चोर पक्ष एक पक्षि (Terminated bone) के विरलत चर्मके मध्य भाग प्रमाणाधीन विभक्त हुई है। इस स्नायुका प्राचयाका मुखमग्न एक पक्ष्यत् स्नायु चर्मके ऊपर पक्ष्यित है। यह चर्म समस्त नासा-स्थलमें सुनकी तरह फैला हुआ है और हमेशा कंकट-रा मरमर रहता है। मिय मिय जीवोंकी प्राचयगति मिय मिय प्रकारकी होती है। कोट चोर पक्ष्यान्त पक्षेक सुद सुद जीवोंकी जो प्राचयगति है, वह माक माक दिवनेमें जाती है। किन्तु जिन यन्त्र द्वारा वे इसका अनुभव करते हैं, वह पात्र भी पक्ष्यत है। उच्चतर जीवोंके मध्य पूर्वोक्त दो प्रकारके पक्ष्यविस्तारमें न्यूना-धियके अनुसार प्राचयगति का व्यतिक्रम दिवनेमें जाता है। पक्ष्यान्त जीवोंके माय तुलनामें मनुष्यकी उक्त दो पक्ष्यियों का विस्तार बहुत कम है। उन सब जीवोंमें जिनमें ऐसे जीव हैं जिनकी उक्त दो पक्ष्यियां मुखके भीतरकी चोर बहुत दूर तक लम्बमान हैं और उन पक्ष्यियों का पतला स्तरमग्न भाग प्रमाणाधीन विभक्त है तथा एक दूसरेमें जुड़ कर बड़े पायतनका हो गया है। लेकिन प्रत्येक विभिन्न प्रकारके जीवोंके मध्य विनेके विषयमें एक प्रकारको संवर्गिक समता देखी जाती है। जैसे, वनमुक्त ननुपक्षि मिय मिय पक्ष्योंकी मध्यका भोमोमति अनुभव कर सकने पर भी शेरद्वयको मध्य-अनुमान-गति पक्षमें कुछ भी देखनेमें नहीं जाती। फिर मानभोजिगव प्रेयोक्त द्रव्यकी मध्यके सिवा अन्य मध्यका अनुभव नहीं कर सकते। जिस जीवके जीवन धारणके निम्ने निम्न द्रव्यकी पावग्रहकता है, उस द्रव्यके पक्ष्यान्त इष्टिधर्म पक्ष्यान्तमें रहने पर भी प्राच्यिन्द्रिय पक्ष्यान्त ही समता पक्षित्व निष्पन्न कर सकती है। मनुष्यगति यद्यपि पक्षेक द्रव्योंकी मध्य अनुभव कर

सकती है, तो भी किसी द्रव्यकी पक्षि संमान्य मध्यकी समकी प्राच्यिन्द्रिय पक्ष्य नहीं कर सकती। मनुष्य चोर पक्ष्यान्त जीवोंके मध्य मध्य-अनुभव-गति की जो इसकी पक्ष्यता देखी जाती है, उसका एकमात्र कारण यह है कि मनुष्य मध्यपक्ष्यगति का पक्षि पक्ष्यान्त नहीं करते। पक्षेरिका चोर पक्ष्यान्त उच्च भागके पक्ष्या-रियांकी प्राचयगति इसमें प्रथम है, कि उनमें पक्ष्यान्त कुशोंकी प्राचयगति की पक्षि पक्ष्यकी प्राचयगति इसकी पक्ष्य नहीं है।

पूर्वोक्त श्रेष्ठात् स्नायु (Olfactory nerves) की मध्य अनुभव गति के मिया यन्त्र का पक्ष्य किसी प्रकारके पक्ष्यनाम करनेकी समता नहीं है। प्राच्यिन्द्रियरम-नेन्द्रियके माय इस प्रकार संमान्य है कि साधारणतः जो इस लोरीकी प्राच्यिन्द्रियका उपयोगी है, वह शरीर-पक्ष्य है और जो प्राच्यिन्द्रियका पक्ष्यिन्द्रिय है, वह शरीरका पक्ष्यवकारक है, इसी प्राच्यिन्द्रिय द्वारा पक्षेक जीवजन्तु पक्ष्या-पक्ष्या वाद्य सुन लेते हैं।

नासिकाय (सं० स्त्री०) नासिकायाः पक्ष्य । नासिकाका पक्ष्यभाग, नासिका पक्ष्यभाग ।

नासिकायाह—नासिका देखो ।

नासिकापुट—नासिकापुट देखो ।

नासिकामल (सं० स्त्री०) नासिकायाः मलम् । नासिकास्थित मल, पीटा, पीटा । पक्ष्यान्त—मिष्टान्न, मिष्टान्न, मिष्टान्न चोर विज्ञान ।

नासिकागन्ध (सं० पु०) नासिका गन्ध, वह पायतन की नासिके द्वारा उत्पन्न हो ।

नासिक (सं० स्त्री०) नासिका पक्ष्य नासिका स्नायु । १ नासिका, नासिका । २ पक्ष्य पक्ष्येन्द्रिय, पक्ष्यिका एक पक्ष्य, नासिका । ३ पक्ष्योक्त पक्ष्यान्त । इस पक्ष्यमें यह गन्ध निम्न वक्ष्यवकारक है । (वि०) ४ नासिका, नासिका उत्पन्न ।

नासिकाक (सं० स्त्री०) नासिकाक पक्ष्य नासिका स्नायु कम् । नासिका, नासिका ।

नासीर (सं० स्त्री०) नासिका गन्ध भावे जिह्वा, नासा गन्धेन ईश्वर गन्धनीति ईश्वर, मनीक । १ मीनागायक के पक्ष्य पक्ष्येन्द्रिय दम यक्ष जयगायक उत्पन्न करते पक्ष्या है,

हकीम ईशका नाम नाष्टर पड़ा है। (वि०) २ भागि चलनेवाला।

नाष्टर (ध० पु०) घाय, कोड़े खादिसे भीतर दूर तक गया हुआ लंबीके डोसा छेद-प्रियसे बराबर समाद निकला करता है और जिसके कारण घाय जल्दी चक्का नहीं होता, नाड़ीमय।

नाष्टि (सं० ध्य०) न-नाष्टि, घटतीति विमक्षिप्रतिद-पमध्यय 'सहसुवेति' नगद्येन समासः। नाष्टिमानता नहीं।

नास्तिक (सं० पु०) नास्ति परलोक ईश्वरीयेति मतिर्यस्य इति ठक् (अस्ति नास्ति रिट्) मतिः। वा ४।४।१०) यथा नास्ति परलोक की यादिकात् ईश्वरी वा इत्यादि वाक्येन कायति श्रद्धायते इति कैल। वायक, ईश्वर-नास्तित्ववादी। जो ईश्वरका नास्तित्व स्वीकार नहीं करते, उन्हें नास्तिक कहते हैं। वेदामासाख्यवादी यदांतु जो वेदका प्रामाण्य स्वीकार नहीं करते, हिन्दूधर्मके मतसे वे भी नास्तिक कहलाते हैं।

“बोद्धवन्त्येव ते शूके हेतुग्राह्यावधारिताः।

स साधुभिर्निर्दिष्टावै नास्तिको वैदित्यरुहः॥”

(शु २।११)

जो सब हिज हेतुमात्र पर्याप्त तर्कविद्याका आधार में हर धर्मके अनुसंधान में और श्रुतिको समान्य करते हैं, वे सब वेदान्तिक नास्तिक पदवाच्य हैं। ऐसे मनुष्योंके साथ यज्ञनयाजनादि प्रतिपत्तिदि किमी शिष्यमें कीर्ति-सम्पर्क नहीं रखना चाहिये। नास्तिक शब्दके पर्याय ये हैं—बाईपत्य, बायाँक और सोकाय निक।

नास्तिक १ प्रकारका है—माध्यमिक, योगाचार, सोत्वान्त्रिक, वैभाषिक, बायाँक और दिगम्बर। बायाँक, बौद्ध और जैनकी ही हिन्दूधर्मकारणक नास्तिक बन जाते हैं।

मास्तिदिदृग्मर्मे नास्तिकके मत व्यक्तमको जगह बौद्धका मत ही व्यक्तित्व हुआ है।

नास्तिकगण जो प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, ईश्वर लम्बीकी स्वीकार करते हैं। प्रत्यक्ष प्रमाणसे प्रतिपत्ति और कीर्ति प्रमाण स्वीकार नहीं करते। ये लोग जो अनुमानसे

विषय और कुछ भी नहीं मानते, वह मांयः समो दग्मो-मि व्युत्पन्न हुआ है।

बायाँकके मतमें—पाप्मा वा परलोक कुछ भी नहीं है। इस मतमें स्वयंभूदेह ही पाप्मा है, देहनाशके साथ ही पाप्माका नाश हुआ करता है। बायाँकने, वेदका प्रमाण स्वीकार करनेकी बात तो दूर रहे, निष्कर्षकी तोर घर कहा है, कि भण्ड, भूत और बाधम इन तीनोंमें निम कब बंदकी रचना की है। बायाँकपक्षमें यज्ञनाम-पक्षी प्रत्यक्ष प्रमाण करे, ईश्वरदि शिष्य भण्ड-वित्त, धर्म-नरकादि भूत-प्रयोग और प्रत्यक्षमादिका शिष्य निष्ठाचारकल्पित है। इसी मतका प्रतिपादन करके बायाँक नास्तिक नामसे परिचित हुए हैं।

बायाँक रंको।

जो ईश्वरका नास्तित्व और बौद्धका प्रमाण स्वीकार नहीं करते वे ही नास्तिक हैं। इस व्युत्पत्तिसे अनुमान बायाँक ही प्रकृत नास्तिक पदवाच्य हैं।

मर्त्यदग्म संभवकारने माध्यमिक, योगाचार, मांसा-निक और वैभाषिक इन चार शिष्योंके बौद्धकी ही नास्तिक बनवाया है। यद्यपि ये भी नास्तिक हैं, या नहीं इनका निश्चय करना कठिन है। जगत्पट है वा पनादि। ईश्वर हैं वा नहीं, बौद्ध लोग इन सब गूढ़ रहस्योंकी पानोपना नहीं करते; इन लोकोका कहना है, कि जो कुछ है, वह प्रत्यक्ष है। यही स्वीकार कर नामककी पानोपनासे ही बौद्धदग्म समान है। इस मतमें जगत्की दुःखमय माना है। दुःखका कारण यदा है, तब यदायमे दुःखका विनाश होता है, वही सब मनुष्योंकी मोक्षमार्ग बौद्धदग्म सम्यक् होता है। किन्तु यदि शेर कर देना जगत् तो मान्य पड़ना है कि बौद्धदग्म पाप्माका पक्षोद्धार करता है। ये लोग प्रत्यक्ष दग्मोंके जेवा धर्म और कर्मफलका स्वीकार करते हैं। धर्म और कर्मका पुनर्जन्मका कारण है। बायाँकके निराम कोने-मि जगत् नहीं होता, बायाँकके रहने में ही जगत् होता। दो लोग पाप्माका ही स्वीकार नहीं करते, लेकिन पुन-जन्म मानते हैं। इसका कारण दिग्दर्शन का पड़ना है। किन्तु पाप्माके नहीं रहने पर भी बायाँकपक्षके

दममें जल जमावदार रह सकता है। हमोंने पाकाका स्नेहार नहीं करने पर भी प्रभावकारक स्नेहार किया जा सकता है। हममें मन्देह नहीं। हमें प्राचीन बौद्धमत जानना चाहिये। वेदान्तदार्शनिक महावाचार्थने बौद्धमत-पुस्तकको जगह दिया है, कि बुद्धदेवके एक होने पर भी उनके गिर्वाँके बुद्धिदोषमें उनका मत अपनेक प्रकारका हो गया है। उनके गिर्वाँमें जिसने ऐसा समझा था, उसने उसी प्रकारका मिथ्यात्व पत्थ पशुत किया। प्रथमतः हममें तोल प्रसारके बाधो देवनेमें पाते हैं। कोई कोई सर्वोदित्ववादी है, कोई केवल विज्ञाना-दित्ववादी है और कोई सर्व गूढवादी। जो सर्वा-दित्ववादी हैं, उनका कहना है, कि सब कुछ है, घट-पटादि वाङ्मयदार्थ भी है, ज्ञानादि अन्तरके पदार्थ भी है, बाहरमें भूत और भौतिक, अन्तरमें विद्या और धैर्य है। द्वितीय दलका कहना है, कि बाहरमें कुछ भी नहीं है, सब कुछ भौतरमें है। जो कुछ भौतर है, सभी बाहरके जैसा प्रतीयमान होता है। तृतीय दल कहता है, कि अन्तरका विज्ञान भी अस्तु है। इनके मतमें भूत और इत्यादि पाहक वस्तुव्यति भौतिक है, भूत, पार्यय, तृतीय, तैजस तथा वायव्य परमाणु-भूतवदभाष्य है, ये यथाक्रमेण स्वर, स्पर्श, रस्य और चक्षुष्य सामान्य हैं। इन सब परमाणुओंमें परस्पर संघातमात्र ही कर परिदृश्यमान वृत्तिव्यादिका उत्पादन किया है। रूप, विज्ञान, वेदना, संज्ञा और संस्कार ये पाँच स्वरूप हैं। ये सब पञ्चांग पदार्थ अन्तर माने जाते हैं। इन जीर्वाका मत है, कि संघातजनक सभी पदार्थ अचेतन हैं। परमाणु भी अचेतन हैं और स्वरूप भी। भोग करता है, मांस करता है और नियम बसाता है, ऐसा कोई स्थिरचेतन नहीं जो उनके प्रभावसे वे सब परमाणु संघटित होते हैं। विज्ञानके विश्व के कोई स्थिर चेतन-प्राप्ता और ईश्वर नहीं मानते। उनका कहना है, कि परमाणु और स्वरूपका कर्ता और पश्यक नहीं है। ये स्वतःप्रवृत्त तथा कार्यमुक्त होते हैं और स्वतःसाधन करते हैं। गौडर-न देखो।

दिग्भ्रमरूप भी नास्तिक माने जाते हैं। वेदान्त-दर्शनमें ये सब मत पण्डित हुए हैं। यहाँ तक कि

वेदेषिकदर्शन कई नामिक (कई नास्तिक) माना गया है।

पाषाण्य दर्शनविद्वानोंमें जलपट्टाट्टिमिन और धेन पाटि नास्तिक हैं। पाषाण्य दर्शन देखो।

नास्तिकता (सं० स्तो०) नास्तिकत्व भावः भावो नस्त्व, ततो टाप्। नास्तिकका धर्म, नास्तिकका भाव, ईश्वर, परमेश्वर पाटिको न माननेको बुद्धि। नास्तिकदर्शन (सं० पु०) नास्तिकताका दर्शन, दर्शन-दोष।

नास्तिक्य (सं० स्तो०) नास्तिक्य भावाः अज्ञ, नास्तिकता, ईश्वर परमेश्वर पाटिमं पवित्रात्।

नास्तिकतद (सं० पु०) सङ्कारतद, पाषाण्य, चामका येह।

नास्तिकता (सं० स्तो०) नास्तिक तत्त्व-टाप्। नास्तिक, पवित्रमानता।

नास्तिक (सं० पु०) पाषाण्य, चामका येह।

नास्तिकवाद (सं० पु०) नास्तिकवादः। नास्तिकोंके वितर्क और पक्ष समर्थनमें वादानुवाद।

नास्त्य (सं० स्त्रि०) नामार्थ-अर्थ शरीराद्यवस्थात् यत्। १ नासात्म्य, नास्तिकसे सत्यत्व। २ नास्तिकतामर्थी, नास्तिकता। (स्तो०) ३ वैयक्तिकताके लक्षणे ईदृशको।

नाह (सं० पु०) नह अर्थमें भावे चक्षुः। १ अर्थन। २ कुल, किनारा। ३ हिरण्य वर्णानेका कम्पा।

नाह (सं० पु०) नाभि, पवित्रेका छेद।

नाहक (सं० स्त्रि० वि०) निप्रयोजन, बेमनस्य, धाव, भिकायदा।

नाहन—१ पञ्चावके पन्तगत एक देवीय राज्यः। २ यंत्र देखो।

१ उक्त राज्यको राजधानी। यह पन्था १० ११ सं० पोर देवा ०० २० पु०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १२५१ है। विपत्ति पदावधि यह ४० मोन दक्षिणमें पड़ता है। भारतीय राजधानियोंमें इस स्थानका हस्त बहुत सुन्दर और अनोख है। यह शहर एक जलसे घेरा हुआ शहर बना हुआ है। कहते हैं, कि राजा चम्पकायने १५२१ ई०में इसे बसाया। निपलबुद्धके समय १८७६ ई०में यह शहर चङ्गीनोके

हुए मना था। युद्ध के समाप्त हो जाने पर यह पुनः समूचे राजाको छोटा दिया गया। शहरमें एक बड़का, कोनी भग्नावशेष, कारागार और पुनिम टैगन है। १८८१ ई०में राजा शमशेरप्रकाश जो० मो० एम० पाई० यहाँ इटालियन टंग पर शमशेरविन नामका एक भवन बना गये हैं।

नाहरूर (हि० धो०) पत्थीकार, इनकार, नहीं नहीं शब्द।

नाहर (हि० पु०) १ सिंहर, मीर। २ वाघ, बाघ इ टेयका फल।

नाहर—हिन्दीके एक कवि। इन्हींमें सं० १०५४के पूर्व बहुतसी कविताओंकी रचना की। इनकी कविता सराहनीय होती थी।

नाहरनाम (हि० पु०) चीकूकी एक बीमारी जिसमें लकड़ा दम फलता है।

नाहद (हि० पु०) नाह नामका रोग, लहदवा।

नाहल (सं० पु०) नाह पर्यंतमित्यादिक नामित प्राच्ययवन ग्रन्थाति आ-क। स्तेष्य जातिविशेष।

नाहरि—१४५० ई०को दिल्लीमें जो मोहियुंश राज्य करता था, उसीकी एक शाखा नाहरिवंश है। इन लोगोंमें सुलेमानगिर और सियु लटोके मध्यवर्ती किन्तु तदा चीतापुर नामक स्थानमें आधीन राज्य संस्थापन किया था। क्रमशः ये लोग देराजातमें ले कर बहुत दूर तक अपना राज्य फैलानेमें समर्थ हुए थे। कालक्रमसे परंतवासी बेलुचिगेई पराक्रममें ये लोग राज्यच्युत किये गये। इन्हीं पराक्रमचकारिणीमें राजा जो नामक एक थे, जिन्होंने अपने नाम पर देराजाओ का नामका एक शहर बसाया था। नाहरि देराजाओंमें १८वीं शताब्दीके प्रारम्भ तक देराजाओ काई दक्षिण पर शासन किया था।

नाहिन पुत्रावा—गावजशमपुरका एक नगर। यहाँ १००१ ई०में चन्द्रनाम कवि प्रादुर्भूत हुए थे। वे मोहके राजा जिमोरीमिंहके समकालीन थे। राजाके नाम पर उन्होंने जिमोरोप्रकाश नामक एक पुस्तक लिखी थी। इसमें मिथा उत्तम कवि अज्ञानमार, खडोलनरहिनी, काव्याभरण, चन्द्रम-सूत मई और पदिकशेष नामक

अनेक हिन्दी पद्य लिख गये हैं। उनकी १२ शात पंजी मध्ये भव कन्दूट अति नामके नाम हैं।

मालोद वेगम—पञ्चनरगाटके प्रधान हमरा मुलाह यनो यकी की चीर कागिम कीकाका जया। कागिमके मरने पर उनको योने पक्षमें मित्रा कुमेनके भाग, पोडे लमके मरने पर सियुवाज मित्रा देमा तायांनके साथ विवाह किया था। ईसाके मरने पर उनके उत्तराधिकारी मित्रा बाँको दोनों वेगमकी बहुत तंग करने लगे। इस पर माता और कया बाँकोका साथ कामेदे लिये यहपक्ष रचने लगे। इसमें वे दोनों पक्षों मई, माता केट कर ले गई और मालोद वेगमने भररवे शासनकर्ताका पायप लिया। बाद वे मईमें पञ्चनरदे वाम टिको मई और मारा विवरय उनके का सुनाया। पञ्चनरवे वेगमके नामो सुनिव यकोका दलरनके साथ उठा पर चढ़ाई करनेके लिये भिज दिया।

सुरिष मली देवो।

मादुय (सं० पु०) मद्रुपव्यापय पुमानिति मद्रुप-इज (मन इज्, पा ४१।८५) मद्रुपके पुत्र, ययागिराज।

मि (सं० यय०) मो-बादुमका हि। उपमर्गविशेष, एक उपमर्ग जिसके लगनेमें मद्रोमें इन चर्चकी विमो यता होती है—१ मंच वां समूह, जेमे, निहरा २ यो-भाय, जेमे, निपतित, ३ भग, ययल, जेमे, निगरीत, ४ पादेश, जेमे, निदेश, ५ निश, ६ कोमल, ७ बमल, ८ यनार्माय, ९ समोय, १० दर्गम, ११ उपराम, १२ पायव जेमे, निगिष्ट, निपुल, निरम, निगल, निगट, निदमल, निहल, निमल, १३ भंमल, १४ यिज, १५ दान, १६ मोय, १७ विद्याय, १८ निपिष।

मि (हि० पु०) निपादभरका मद्रोत।

निघाओ—पञ्चमालीका एक सम्प्रदाय। ये लोग बचु जिममें रहने हैं और अपनेकी पोरके कोटी राजाकीके दिनेय पुत्र निघाजवाके वंशधर मानते हैं। उन कोटी वंशके राजाओंमें ८५१ हिजरीमें भारतवर्ष पर चढ़ाई की थी और कुमायूनकी ओल कर लगे यन्त्री मकानोंके बीच बाँट दिया था।

ईसावी जिन्हा निघाज वंशके हिन्दुमें पड़ा। इनकी वंदावनी पात्र भी सम आनर्ग विदमान है। इनके

शिव बना था। गुहले समाप्त हो जाने पर वह पुनः समरके राजाकी छोटा दिया गया। महरमें एक बहू, लोनी बसन्तान, कारागार घोर पुनिस टेशन है। १८=१ ई०में राजा समरकेका म जो० सी० एम० पार्स० यहाँ इटालियन टंग पर समरकेविज नामका एक भवन बना गये हैं।

नाहर (हि० खो०) चखीकार, इनकार, नहीं नहीं शब्द।

नाहर (हि० पु०) १ सिंह, मीर। २ वाघ, बाघ ३ टैप्ता कुल।

नाहर—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने स० १०१४के पूर्व बहुतसी कविताओंकी रचना की। इनकी कविता सराहनीय होती थी।

नाहरनाम (हि० पु०) छोड़ोकी एक बीमारी जिसमें लकवा दम फैलता है।

नाहर (हि० पु०) नाह नामका रोग, लकवा।

नाहल (स० पु०) नाह' धर्मगिरुरादिक' साति बाधयलेन गृह्याति आ-क। ज्येष्ठ सातिविशेष।

नाहर—१४५० ई०को दिल्लीमें जो लोदिवंश राज्य करता था, उसीकी एक शाखा नाहरवंश है। इन लोगोंने सुलेमानगिरि घोर सिन्धु नदीके मध्यवर्ती किन्तु तदा भीतःपुर नामक स्थानमें स्थायी राज्य संस्थापन किया था। क्रमशः ये लोग देशाजते से कर बहुत बुर तक अपना राज्य के माननेमें समर्थ हुए थे। कालक्रमसे पेशवाजी बेलुचिरीके पञ्चाक्रमसे ये लोग राज्यभूत क्रिये गये। इन्हीं पञ्चाक्रमकारियोंमें गाँगी खान नामक एक थे, जिन्होंने अपने नाम पर देशाजती खान नामका एक नगर बनाया था। नाहरने राजाघोने १८वीं सताब्दीके प्रारम्भ तक देशाजती खाने दक्षिण पर शासन किया था।

नाहिन पुत्रावा—गाहजरापुरका एक नगर। यहाँ १००१ ई०में चन्दनराम कवि प्रादुर्भूत हुए थे। वे मोहने राजा जिगोरीगिहके सभासद थे। राजाके नाम पर उन्होंने जिगोरीगिह नामक एक पुस्तक लिखी थी। इनके सिवा सत्त कवि शङ्करमार, कलोलनरविचो, काव्याभरत, चन्दन-सप्त-मई घोर पवित्रबोध नामक

यनेक हिन्दो पद्य लिख गये हैं। उनमें ११ हात से जो मक्के मक्क लुट्ट ज्वि समझे जाने प।

नाहोद वेगम—चक्रवर्तमाहने प्रधान समरा सुनार चनो खाँकी खो घोर कागिम कोकाका बना। कागिमके मरने पर उनको खोने पहले मिरजा हुसैनके भाय, दोहे उसके मरने पर सिन्धुराज मिरजा ईसा तारान्ने भाय विवाह किया था। ईसाके मरने पर उनके उत्तराधिकारी मिरजा बाँकी दोनों वेगमकी बहुत लंग करने लगे। इस पर माता घोर कन्या बाँकीका नाम करनेके लिये पदव्यय रचने लगी। इसमें वे दोनों पकड़ो गईं, माता कैद कर ली गई घोर नाहोद वेगमने महरके शासनकर्ताका पायव लिया। बाद में यहाँमें चक्रवर्त पास टिका गई घोर सारा विवरण उन्ने कट चुनाया। चक्रवर्तने वेगमके नामो सुनिष चखीका दसवसके साय ठगा पर चढ़ाई करनेके लिये भेज दिया।

सुनिष मठी देखो।

नाहूय (सं० पु०) नहुयव्याप्य' पुमानिनि नहुय-इज. (मन ३५. १ पा ४१। १८५) नहुयके पुत्र, ययातिराज।

नि (सं० अय०) नो-बाहुनकाय हि। उपमर्गविशेष, एक उपमर्ग जिसके लगनेसे शब्दोंमें इन चर्चाकी विशेषता होती है—१ संघ या समूह, जैसे, निहरा २ चर्चा भाय, जैसे, निपतित; ३ श्रम, अत्यन्त, जैसे, निष्ठेहीत; ४ पादेष, जैसे, निदेष; ५ निरय, ६ कोयल; ७ बन्धन; ८ अनामाय; ९ समोय; १० दर्शन; ११ उपरम; १२ पायव जैसे, निविष्टि, निपुण, निबन्ध, निरीत, निरुत, निदयम, निरुत, निरुत। १३ संदय; १४ धीर; १५ दान; १६ सोच; १७ विमोच; १८ निवेध।

नि (हि० पु०) निपादन्तरका सङ्केत।

निपाजो—अफगानोंका एक समुदाय। ये लोग बख्त्रिसेमें रहते हैं घोर अपनेको घोरके लोदी राजाघोके हितोय पुत्र निपात्रखाने बंधन मानते हैं। सत्त लोदी-वंशके राजाघोने ८३३ हिजरीमें भारतवर्ष पर चढ़ाई की थी घोर कुमायूनको जीत कर उसे अपने चपनो मुत्तानो-के बीच बाँट दिया था।

ईसापु जिता निपाज म'भावनो पात्र भी चमू

४ त्रिपुटि वदयन्तो मन्त्राणां विंशतिः १५०० श्लोकी
का नाम ये त्रिपुटिः पश्चिम पक्षे चोर मित्युक्तो
आगे चोर वदयन्ते । इत्यहं पश्चिम नामको एव
चोर वदयन्ते । तौ वृत्तान्त चोर देशान्तानि व्यवसाय
करन्ते ।

निकाय (चं० श्लो०) बन्धु पदार्थ, पक्ष्य चोर बन्धु-
गुण्य पदार्थ ।

निकायप्रज्ञा—मनुष्यनृप पक्ष्याणो चोर तारोप्यन्त-
ज्ज्ञानं श्रोत्रो नामक दो पुद्गाकं पक्ष्या । ये द्विजोत्तर
ज्ज्ञानोत्तरं मनुष्यमनुमते ।

निकायमपुर—नक्षत्र राशिके चलागतं निमोगा त्रिसेका
एक पञ्चोदाम । यद् यथा १६८ च० चोर देया ०५३
३९ पू० मध्य अवस्थित है । पार्श्वपक्षे चोर सम-
न्त-देशनामिणो का यद् प्रधान व्यवसाय स्थान है ।
पक्षिके प्रायः सभी व्यवसायी निष्ठावत मनुष्यावच्छे चला-
गुण्य हैं । इच्छे चारों चोर तरङ्ग तरङ्गका चलाण,
कोमो चोर सुगरो उत्पन्न होता है ।

निरुमिणो—शुभिनी देखो ।

निरुमिणो—शुभिनी देखो ।

निरुमिणो—शुभिनी देखो ।

निरुमिणो—शुभिनी देखो ।

निटो (निटो) चामामके चलागतं एक नदी । यह
थोड़ा त्रिसेके प्राकृत्यवर्तमानामे निश्चल करपूर्व-
को चोर वरावर्तो नदीमें जा मिलो है । आषाढाने
मो इत्यहं विद्यार चार को मज्जमे कम नहीं रहता ।
यद्यपि चमरापुर जालिका एक गोधा राप्ता चला गया
है । तुम्हरे चाम इम नदीके किनारे रहतमानव है ।
निटो (हि० जि०) निटो करना, वदनाम करना,
बुरा कहना ।

निटो (हि० श्लो०) १ चेतके गोर्धके चामको चाम,
यद् यथादि को चलाय् चर ना खाट कर चलाय करनेका
नाम । २ निरुमिणो मन्त्रो ।

निटो (हि० जि०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

पक्षोपचयने दनका नाम है । ये लोग वृत्ता का
चोरीपक्षि यद्यपि शत्रु, वृद्धा करकट चादि शरीर कर
ने कामे चोर चममे काम निश्चल कर चलाय गुणरा
करते हैं । निरुमिणो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

निटो (हि० श्लो०) निटो देखो ।

मनुने इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—मनुज-
ज्ञात, मदाद्याममप्य, धर्मज्ञ, मन्त्रवादी, ऋषिपरिवार,
धनवान् चोर सभ्यास्त मनुष्यके निष्ठ बुद्धिमान् भोग
गच्छन् रथे चोर दमो गच्छित रथनेत्रो निःश्रेयश्चरते
॥ जो मनुष्य जिस प्रकार जिसके हाथ जो द्रव्य रखता
है, वैसे समय उसे उसी प्रकार वही द्रव्य देना चाहिये।
निःश्रेयश्वरके निकट एक बार मांगने को निःश्रेयश्वर
दे देने कोनी, यदि वह न दे, तो विचारकर्त्ताको इसका
विचार करना चाहिये। हमने यदि उपयुक्त माची न
मिले, तो श्यायभीम वयस्क चोर द्रव्यवान् चर द्वारा लून
क्रमसे हिरण्णादि द्रव्य उसी वाक्छिन्न वाम रखवावे।
बाद निःश्रेयश्वरके निकट निःश्रेयश्वर मांगने पर, वह
यदि उस गच्छित द्रव्यको, जिस प्रकार जिस भावसे
दिया गया था, उस प्रकार चोर उसी भावसे मोटा दे,
तो उसे निर्दोष समझना चाहिये। परन्तु वह व्यक्ति
यदि उस द्रव्यको निःश्रेयश्वर न दे, तो राजा उसे पक-
ड़वा मगध के चोर दोनो निःश्रेयश्वर दिनवा देवे। निःश्रेय
चोर उपनिधि गच्छितकारीके रहने समझे मङ्गल वा
भावो उत्तराधिकारीको देना उचित नहीं। कारण
मङ्गल के मर जानने पर, अथवा उसको श्रोत्रद्वारा ही
गच्छितद्रव्य मगध कर देने के लिये ही मगधवान्
रहती है। अतः ऐसे मगधमें उसे देना अच्छा नहीं।
श्वननिःश्रेयश्वरके पुत्रादि उत्तराधिकारियोंके पास, जो
व्यक्ति गच्छित धन मगध में जा कर मगधवान् करे, राजा
वा निःश्रेयश्वरके वस्तुमगध समझे पास चोर भी गच्छित धन
है, ऐसा अनुमोद नहीं कर सकते। यदि वे कर
दे, तो राजाको कष्टमगधराजा परित्याग कर मोलिके
माघ उस धनके पासको सेटा करने चाहिये चोर गच्छित
रक्षाकारीके चरितका विचार कर मागधवाचानसे
कार्यमाधन करना उचित है।

मुद्रादि उपनिधि,—जिसको मुद्राएँ दो गई हैं, उसको
इस मोटा देनेमें गच्छित रक्षाकारी पर कोई दोष मङ्गल
नहीं ला सकता। निःश्रेयश्वर चोरके द्वारा भेजे, अथ
द्वारा मगध हो जाने या पागमें जन जाने पर लपका वह
जिमद्वारा नहीं हो सकता। किन्तु उस द्रव्यमें यदि
वह कुछ है, तो वह लपका दावे परमा का मङ्गल

है। निःश्रेयश्वरके पचमापकारीका चोर जो बिना निःश्रेयश्वर
हो लपका दावा करे उसे वाक्छिन्न गच्छित मगधदि
तया मगधकारके लपका दावा विचार करना चाहिये।
जो निःश्रेयश्वर न करे चोर जो बिना निःश्रेयश्वर लपका
दावा करे, राजा हम दोनोंको सुदृढ-चोरको मगध
मागध दे। पचमापकारी या वच्छित द्रव्यमगधको
धन दण्ड करे। (मनु-८ अ०)

याज्ञवल्क्यमहर्षिनामं इसका विषय इस प्रकार लिखा
है,—कुछ विषय माने न कर जो मगध वस्तु कान्तिदि-
कारिके मगध रख कर दूसरेके पास रानी जानी है, उसीको
निःश्रेयश्वर उपनिधि कहते हैं। जिसके पास जो द्रव्य
रखा जायगा, उसको उसी प्रकार वह द्रव्य मोटा देना
उचित है। वह धन यदि राजा, चोर या दोषोपद्रवने
विनाष्ट हो जाय, तो फिर मोटाना नहीं होता। किन्तु
मगधकारके लपका दावा मांगने पर यदि गच्छित रक्षाकारी
न दे चोर इसके किसी प्रकारके लपका करनेमें वह लप-
का जाय, तो राजाको चाहिये कि लपके मगधके लपका
उसे पचमाप करे। जो मनुष्य पचमाप द्रव्यमें हम
द्वारा लपका करे या वाक्छिन्न दावा पचमाप लाभ
उठावे, राजाको लपका मगधके अनुसार दण्ड देना
चाहिये। उपमोद करनेमें मङ्गलमें मङ्गलके लपका भाग
हिरण्यमगध, वाक्छिन्न करनेमें हमके उपनिधि मगध
मगधे कुल देने कोनी। (याज्ञवल्क्य ४०, १, अ० निष्ठ-४०)

धोरमिदोदधमं निःश्रेयश्वर, उपनिधि चोर मगध हम
तोनोंके पचमाप, लपका निर्दिष्ट दण्ड है। मङ्गलामोके
मगधमें मगध कुल मगध कर जो रक्षा जाय, उसे निःश्रेय
चोर बिना मगधे मङ्गलामोको अनुमतिदिने वा लपके
मङ्गलके हाथ जो रक्षा जाय, उसे मगध लपका मुद्रादि
कर वा मङ्गलमें लपका मगध कर जो रक्षा जाता है, उसे
उपनिधि कहते हैं।

पचमे जो मगध दण्डादि विषय लिखे गये हैं, लपको
हम तोनोंमें भी जानना चाहिये।

“मङ्गलामोके लपका मगध करे।

लपका मगध मगधके लपका मगध करे।

(मगध)

धोरमिदोदधमं इसका विचार विचार लिखा है।
विचारके लपके दावा नहीं दिया गया।

निःसन्देह (स० वि०) १ सन्देह रहित, जिसे या जिसमें कुछ सन्देह न हो । (वि०) २ बिना किसी सन्देह के । इसमें कोई सन्देह नहीं, ठीक है, बेगल ।

निःसन्देह (स० वि०) १ जिसको कुछ सत्ता न हो, जिसमें कुछ समन्वित न हो । २ जिसमें कुछ तथ्य या सार न हो, बिना सत्ताका ।

निःसन्तान (स० वि०) जिसके समान न हो, निपूता या निपुती, लायक ।

निःसन्धि (स० वि०) निर्माप्ति सन्धिर्यत् । १ दृढ़, प्रज्ञात । २ सन्धिरहित, जिसमें कहींसे दरार या छेद न हो । ३ कसा हुआ, मठा हुआ ।

निःसम्पत्ति (स० पु०) निर्माप्ति सम्पत्तो गमनागमन यत् । १ निर्गोच्य, रात । (वि०) २ गमनागमन-परिश्रम, जहाँ या जिसमें जाना जाना न हो, जहाँ या जिसमें प्राप्त्यारम्भ न हो ।

निःसम्बन्ध (स० पु०) निर-सम्बन्धुट् । १ मरच, मोत । २ उपाय, कठिनाईमें निकलनेका रास्ता । ३ दृष्टादि-सुप्त, घरका सुप्त या दरवाजा । ४ निर्वाण । ५ निर्गम, निकलनेका रास्ता, निष्काश ।

निःसार (स० पु०) निर्गतः सागे यस्मात् । १ घाकोट छत्र, महारका पेड़ । २ शोनाकहृत्, मोनावाला । ३ चारो मुक्तिका, चारो मही । (वि०) ४ साररहित, जिसमें कुछ सार न हो, जिसमें कुछ तथ्य न हो । ५ जिसमें कुछ समन्वित न हो ।

निःसारक (स० वि०) रोचक ।

निःसारक (स० स्त्री०) निर-सु-पिप् भवेत्पुट् । १ निःसारक, निष्काशक । २ दृष्टादिका प्रवेशनिर्गमार्थि-पथ, निकलनेका द्वार या मार्ग ।

निःसाध (स० स्त्री०) निर्माप्ति साधो यस्या । कटनो-ष्ठ, कलिका पेड़ ।

निःसाधित (स० वि०) निर-सु-पिप् कर्मणि क् । १ ध्वंशपूर्ण, निष्काश हुआ । पर्याय—ध्वस्त, निष्का-मित । २ सारका अभावयुक्त, जिसमें कुछ भी सार रह न गया हो ।

निःसीमत् (स० वि०) निर्गतः सीमा यस्मात् । १ सीमा-रहित, असीम, जिसको सीमा न हो, बिहट । २ बहुत बड़ा या बहुत अधिक ।

निःसृजि (स० पु०) एक प्रकारका मीठ जिसके दाने छोटे होते हैं और जिसको बालमें टूट्ट या मोमुर नहीं होते । निःसृज (स० वि०) निःसृज्य हुआ ।

निःसृज्य (स० वि०) निर्माप्ति सृज्यो यत् । १ सृज्य गून्ध । सृज्य गून्धका पर्यं प्रीति और सुप्त तैलादि है । २ समहीन, जिसमें रस न हो । ३ तैलविहीन, जिसमें तेल न हो, लो बिना तेलका बना हो ।

निःसृज्यता (स० स्त्री०) स्रेतकण्टकारी, सखेट भट-कटोया ।

निःसृज्य (स० स्त्री०) निर्गतः सृज्यो रमो यस्याः । १ पतलो, लीलो । (वि०) २ अनुसाररहित, जिसमें प्रेम न हो ।

निःसृज्य (स० वि०) निर्माप्ति सृज्यो यत् । सृज्यरहित, जो हिलता झोपता न हो, निश्चल ।

निःसृज्य (स० स्त्री०) निर्गता सृज्यता यस्या । १ धामागून्ध, सृज्यरहित, जिसे जिसो बालको बाधाका न हो । २ निर्वाण, जिसे प्राप्त्यो दृष्टा न हो ।

निःसृज्य (स० पु०) १ खाव । २ चरच, निष्काश ।

निःसृज्य (स० पु०) निर-सु-पिप् । १ चरच, चरच, निष्काश । २ निर्गमन, निष्काश ।

निःखाव (स० पु०) निःसृज्योति निःखा-य । १ भट-रस, भातका माँक । पर्याय—पाषाण, माषर । २ चरच, निष्काश । ३ व्यय, खर्च ।

निःख (स० वि०) निर्माप्ति खं धर्त यत् । धनहीन, दरिद्र, खंसा । इसका मूल्य यों है—

“सुखो भवति न बन्धो नरो मित्रकरी ।

सुखो वाप्यनरो निःखस्य निर्माप्यते ॥”

(मद्रङ्ग)

जिनके दोनो पैर बल्ल, मरु सुगंधार, माण्डूररस्य और मित्राव ही तथा सर्वदा परिष्कृत रहने की चोर पद्धति विरल हो, ऐसे मनुष्य दरिद्र माने जाते हैं ।

निःखभाव (स० वि०) निर्गतः खभावो यस्या । खभाव-गून्ध । कीड़े के समानुसार बहुतसा हो खभावगून्ध है ।

“सुखारिषिष्यकः खभावो खभावो नरो ।

खो निःखस्य तस्य निःखभावस्य रमिता ॥”

इति द्वाविंशतिपादो दशमोऽध्यायः समाप्तः ।
अथैकविंशतिपादो दशमोऽध्यायः समाप्तः ।

ମୁଖ୍ୟମନ୍ତ୍ରୀ ଶ୍ରୀମତୀ ଇନ୍ଦିରା ଗାନ୍ଧୀଙ୍କ ସମ୍ମୁଖରେ ଶ୍ରୀମତୀ
ମନୋଜିତା ଦେବୀ । ଗଭୀର ନିଃସାଧାରଣତା ଶ୍ରୀ ଗଭୀରତା ଶ୍ରୀ
ସଦାଶିବ ଦେବୀ ।

(निर्माण) (क० ति०) । जो चरमा चर्म माधन ज्ञाने
 बाज न हो, जो चरमा मनुष्य निष्ठाभिमता न हो ।
 वे जो चर्म चर्म माधन निर्मित न हो, जो चरमा
 मनुष्य निष्ठाभिमते लिये न हो ।

निःश (मं० चण०) कथन समीपम्. मामीष्यापि पथ-
योभाषः । पदिमापर सभिममोः ।

निष्ठ (मं० दि०) नि-मर्मोपि कृतोति नि-कृत-पण् ।
 यदूह, यामका, यमोदका । योप-यमोप, यामप,
 यविष्ठ, यमोद, यम्याम, यमेश, यम, यमिका, यमयोद,
 यमेश, यम्याम, यम्यव, यमिषा, यम्यव, यमिषा ।

नैट्रिक पर्याप—नजित्, पामात्, पाम्, दोव'स,
पाम्मोक्त, पाव, उपाव, पर्याव, पाम्माव, पाम्म,
पाम्म ।

निकटता (गं० दो०) निवृत्त-तत्त-टाव० । सामोप्य,
ममोपता ।

निवृत्तः (रि० पु०) सामीप्य, निवृत्तः ।

गिहटयतिन् (मं० प्रि०) गिहटे वर्तते कृत-दिनि ।
 नमोपच, निहटव्य, पामशाभा, नष्टोक्तया ।

निष्टवसित्य (मं. स्तो.) निष्टवसित्यो भावः सः ।
निष्टवसि का भावः ।

निर्वाण (मं० वि०) निरुद्धे निवृत्ति स्यात्-क । समीपस्थ,
जी निरुद्धा इति, सामाना । २ सम्यग्मते निमने बहुल
एतद्वद्वि ।

निवृत्तसमर्थीय (स० वि०) निवृत्त समर्थीय, निवृत्त
समर्थीयिण्य, नवदिकी दिव्योदा ।

विद्यायाः (मंत्र विद्या) प्रवर्धन, अध्यापन, समापन,
 श्री गुरुभ्यो नमः ।

निबन्धनाय (नं० १००) निबन्धे पाठ्यमयम् । वदमयना,
प्रतिनिधि ।

^१पुस्तक (५० रु०) भा. विभाग ।

निहमो (दि० प्रो०) डॉ० लाल, बंगलूरु ।

निष्कर्मयोग (मं० ५०) एक मोक्षोपदेश । श्रीदेवदत्त देवो ।
निष्कामा (वि० वि०) १ श्री श्रीरं राम ध्या न की.

શિવને કુદ કરને કરને ન શમે : ૨ જો શિવો કામદા
ન હો, જો શિવો કામને ન પા મટે. શેમવાદ, શા ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तीति याद्वीति नि-लृ-उच्।
१ मनुष्य, मुच्य। २ मार। ३ वायि, टि। ४ माय-

निष्कर्षः । ५ निधिः ।
निष्कर्षः (गो. जी.) निष्कर्षः २. १. निधिः, धारणी

श्रिया । (वि०) २ दीर्घसूत्रो, काटनसूत्रा ।
निर्वाण (म० लो०) निःकृतवा । दीर्घसूत्र, म०

श्री काटने योग्य हो ।
निकर्मा (वि० वि०) श्री काम न रहे, श्री पुत्र हट्योम

धंधा न करे ।
निवर्णन (मं० जी०) निर्माणा अवगणं यत् । १ मन्वि०

पंथ। २ वसनादिमें धविपूत्रय प्रदेय, मगरके बाहर
येभने धपमेता मैदान। २ गृहके बाहर निष्ठास्थिति,

५ प्राज्ञादिका मखिवेगः । (ति०) ६ यमप्रादितः ।

निबन्धक (हि० वि०) दोषाहित, निर्दोष, श्रेष्ठ ।
निबन्धकी (हि० पु०) विष्णु का दशवां अवतार सो

કલિન્દ વનમે જોગા । સન્નિત ચવતાર ।
 ત્રિકલ્પ (૨૦) પાઠે) વલ્લભાત્મ જો સુમિ, કોપલે, મંધર,

मंजिया आदिसे माय मिनी इति यामासे मिमना है।
यामिसे इमे दुज थोर पारिजन करनी वर यह ठोह मादी

श्री गुरुभ्यो नमः । यह गुरु कर्णो धर्मो है श्री
गुरुभ्यो नमः । श्री गुरुभ्यो नमः । श्री गुरुभ्यो नमः ।

મન્ય થયો છે ।
 રમણ માણીવન ૨૩૮ છે । અમે નવાનો જુના દેશ

मं गङ्गे पङ्गे १८५१ ईमें इन भाग्यदायका भगवादा।
इने पाउ कामिहो प्रयागी पात्र भा। हिमोरो यथा।

नरक गन्तव्य नहो । पर धर्म, दण्डभेदद्वयं अतिशुद्ध
महर्षि योग सङ्गि योः प्रोक्तः । नृणां चैकस्मिन्मते सः ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णार्पणं नमः ॥

॥ ज्ञान पर चढ़ाई है । यैसा चढ़तेथे पापुनव चारोंतिरु

विषय जाता है। चर्मगिट चूषको चारको कोरिब
विषयमें समा कर सममें भिन्निंग पाउडर जान देने है।
माट सम दूधको चरित्रन युक्त करके पुनः मोबूदे
रम (milk of lime)में चुको देने है। ऐसा करनेमें जो
चूष मोचे सम जाता है, वह पुन कर माफ हो जाता
है। सम तरल पदार्थमें विषय कोवाण्ट और निम्न
मिमी रहतो है जो चमकियरेटेड-वाइड्राजन नामके
पुष्पारी जाती है। इसमें कोवाण्ट-पाप-नाम देनेमें
कोवाण्ट मोचे सम जाती है। सम समय सममें विषय
निम्न मिमी रहतो है। सम निम्नयुक्त तरल पदार्थ-
में मोबूका रम (milk of lime) देनेमें विषय निम्न
धातु बच जाती है। यह परिष्कृत धातु चांदीको तरह
पमकनी और भुक्तनी तथा मोबूकी तरह गमती है।
११० डिग्री (कार्बिड) तापमें उन्नत करनेमें इसको
पाकपूर्ण प्रतिमानिक कम हो जाती है। माधारण जल
वायुमें इसको कुछ भी घुलने नहीं होता। उन्नत वायु-
में यह पाविड्राजन हो जाती है। लम्बे माप इसे
मिलानेमें यह विनायती (German silver) चांदी
द्वयमें हो जाती है। चतुर्भुजमें माप इसे मिलानेमें
इसमें कुछ कटपल या जाता है। यह धातु संघार,
राजपूना, तथा मिङ्गनीयमें योको बहुत मिलता है।
कम मिलनेमें कारक इनका मुख्य कुछ अधिक जाता है।
इसीमें मोटि मिने बनानेमें काममें यह मोटि जाने
लतो है।

निकलना (हि० जि०) १ निर्गत होना, भीतरमें बाहर
जाना। २ व्यास या चोतमोन बहुत बड़ा चलन होना,
मिमी हुई, लगी हुई या वेगदा धीमेका चलन होना।
३ गमन करना, जाना, गुजरना। ४ चरित्रमय करना,
एक मोचे दूसरी ओर जाना, पार होना। ५
उत्तरोत्तर होना, बिम्बोयको चांदिसे पार होना। ६
प्रादुर्भाव होना, उत्पन्न होना, पैदा होना। ७ पारम्भ
होना, विह्वल। ८ फट होना, प्रकट होना, खुलना।
९ निम्नमें चलन होना, घटने होना। १० उदय होना,
उभे, चम्पना निकलना। ११ उद्घाटन होना, निघन
होना, उद्घाटन जाना। १२ बिम्बो दक कोरको बड़ा
हुना होना। १३ उद्विग्न होना, दिव्यार्ह देना। १४

पारना, विह्वल। १५ बच जाना, चर्मकी बचा जाना।
१६ प्रभावित होना, मित्र होना, भावित होना। १७
चर्मको उठो हुई जानमें चर्मना लम्बया न जाना, बच
कर नहीं जाना। १८ प्राप्त होना, मित्र होना, पारना।
१९ प्रभावित होना, आरो होना। २० लोकोरके द्वयमें
दूर तक जानेवाली बहुत बड़ा विधान होना, उभेवा होना,
जाना होना। २१ बिम्बो प्रत्यया समझाका लोक उत्तर
प्राप्त होना, हन होना। २२ लगातार दूर तक जाने
वाली बिम्बो बहुत बड़ा पारम्भ होना। २३ मुक्त होना,
हुटना, चलन होना। २४ पाविष्कृत होना, नई जान-
का चलन होना। २५ मोरके ऊपर उत्पन्न होना। २६
लगाव न जाना, बिम्बो हो जाना। २७ हुट जाना,
मिट जाना, दूर होना, जाना रहना। २८ प्राप्त होना,
पाया जाना। २९ फट कर चलन होना, उचकना।
३० विभव कितने होने पर कई रजम जिम्मे रहना।
३१ प्रवृत्त हो कर सर्वोपायमें काममें जाना, प्रका-
शित होना। ३२ मोटि केन चांदिका मयारी में कर
चलना चांदि गोपना, मिचित होना। ३३ व्याप्त
होना, मोतना, गुजरना।

निकलवाना (हि० जि०) निकलानेका काम बिम्बो
द्वयमें कराना।

निकष (मं० पु०) निकषति चित्तं कर्त्तुं दिक् यतिं नि
निकषयः। (गोवरधरेण) पृ० १३११८) १ कर्मोटी,
इस पर जोना चांदि परेवा जाना है। २ कर्मोटी पर
चतुर्भुज का काम। ३ चित्तपार पर मान चतुर्भुज
का काम।

निकषय (मं० जो०) निकषय-चतुर्भुज। १ चर्म, चित्त
या चतुर्भुज का काम। २ कर्मोटी पर चतुर्भुज का काम।
३ मान पर चतुर्भुज का काम।

निकषा (मं० जो०) निकषति चित्तं कर्त्तुं दिक् यतिं नि
पथापयः, नगदायः। १ राधवमाना। यह चतुर्भुजों
क्या पार चित्तपारको परो मो। इसमें सममें राधव,
चतुर्भुज, चतुर्भुज और विभवक उत्पन्न हुए हैं।
(चतु०) २ निकट, समीप। ३ प्रकट, मोल। इस मन्त्र
मोम दिनाया विमल होना है।

निकषावक (मं० पु०) निकषायाः पाकशः। निकषायाः
हुत, राधव।

२८ घाम करना, टूट कर पानी, बरामद करना। २८
दूधके यहीमे बचने वस्तु से भेजा। २९ दूर करना,
बटाना, न रहने देना।

निकास (हिं० पुं०) १ निकालनेका काम। २ बहिष्कार,
निराकरण, किसी स्थानसे निकालने जानिका दण्ड।
निकास्य (सं० लि०) निकाल-पाया। चाननीय।
निकास (सं० पुं०) १ प्रकाश। २ समीप।

निकास (सं० पुं०) निःकष-घञ्। समुत्पन्न, कारण।
निकास (हिं० पुं०) १ निकालनेकी क्रिया या भाव।
२ निकालनेकी क्रिया या भाव। ३ निर्मोहका टण्ड, टर्रा,
बमोका, मिमिना। ४ प्रायिका टंग, चामदनीका
राखा, भाव या पायका घृत्। ५ मट्ट या कठिनहिमे
निकालनेकी मुक्ति, बचावका शब्दा, रक्षाका उपाय, सुट-
कारको तद्विरोध। ६ मंगका मूल। ७ छद्म, मूल
स्थान। ८ बाहरका खुला स्थान, मोदान। ९ यह स्थान
जिससे की कर कुछ निकले। १० पाय, चामदनी,
निकासो। ११ दार, दरवाजा।

निकासन (सं० लि०) निकासने की भावनेसे दत्त काम-
काहे-लुट। तुल्य, तरह, समान।

निकासना (हिं० लि०) निकालना देखो।

निकासन (हिं० पुं०) यह कामज जिसमें समाप्त
पौर बचतका विचार समझाया गया है।

निकासो (हिं० स्त्री०) १ निकालनेकी क्रिया या भाव।
२ रचना। ३ मुद्रा। ४ बिलो, खजम। ५ बिलोके
निये मानके खानको, लटके, भातो। ६ वह धन जो
सरकारी मासगुजारी वांट दे कर जमींदारकी बचे,
मुभाका। ७ मासि, पाय, चामदनी।

निकाह (सं० पुं०) मुसलमानों के धर्मके अनुसार किया
हुआ विवाह। इस विवाहके निर्धारणतक नाम
है निकाहनामा। घर, दण्ड और पारम्भिक जो विवाह
उत्सव होता है, उसमें निकाह की प्रधान बात है।
भारतवर्षमें निकाह निजट विवाहमें दिया जाता है
और यह प्रायः निजट जातिधर्म की प्रवृत्ति है।
भारतवर्षमें निकाहमन्त्रे मुसलमानोंमें विवाह विदेश-
का बोध होता है। वात और दासोंकी विवाहबन्धनमें
एक करके समस्त कानूनी जो यह बन्धन उपाय

करके एक दूसरेसे मिना देने है उसीका नाम निकाह
है। दिल्ली निजटवर्षी स्थानोंमें निकाहकी बारात
करते हैं।

निकटिम-पादेनियम—एक दण्डियाधी परिभाषक।
[१०] ई०के पारम्भिक वक्रे वक्रे ये गुजरात देशमें
पधारे; बाट काहे पौर कुलाबा जिलेके बेलमनगर
होते हुए सुवरकी गये। वहाँ नगरकी मोमा देव कर
उन्होंने दण्डिया, कानिबट, मिहल, विदर्भ, बिजय-
नगर, कुजवर्ग और चवरावर जगोंमें वेदक धर्म
किया। चमनार [१६ ई०में भारतभूमिको घाता तय
कर ये दामुज, निराज, जमपावन, ताजिज और
मिजिजनगर होते हुए चमने देवकी मोटे। इन सब
नगरोंके दमन कर उन्हींमें वहाँके वाचिप्य, मावपाय
तथा जलपय दूरोंके विषयमें एक जितान मिली है।
उस जितानमें तत्प्रायशिक काहे, करमुज, दण्डिया,
कानिबट, मिहल, विदर्भ और बिजयनगरका विषय
विजयवर्षसे निविष्ट कर दिया गया है।

निकिजाना (हिं० क्रि०) १ मोच कर धनी धनी चमन
करना। २ चमके वरने पंच या बान मोच कर चमन
करना।

निकिो—मुसलमान जातिको एक उपाधि। ये लोग
महली के व कर चमना मुजारा करते हैं।

निकित्य (सं० स्त्री०) कनिष्ठप्राय, पाण्डा यमाव।

निकुच (सं० पुं०) दृक्, मकुच, बहुच।

निकुचक्री (सं० लि०) निकुचो मकुचो कर्षो यत्, लो
२७ समान। संकुचक्री, जिसके कान संकुचित हैं।

निकुच (सं० पुं०) निकुचोति निःकुच कोटिदे दृक्।
१ परिमाणमेद, एक तोल लो पापी चक्रणके बराबर
और किसी किसीके मतमें ८ तोलके बराबर होती है,
मुद्रका चतुर्दश। २ चम्बुवन, जलधेत।

निकुचन (सं० स्त्री०) निकुचन। १ चक्रशरणागत
दितोबिसेय। (लि०) २ महुचित।

निकुच (सं० पुं०-स्त्री०) निनी की दृष्टिमें प्राप्ते जन्म-
द, प्रतीकदितम् वस्तु। १ लण्ड, दिना स्थान जो
यने हवा और पनी कलाकोसे घिरा हो। २ लण्डमें
वाष्पादित मध्य।

निलतता (मं० स्त्री०) निष्ठट भाषे तनः-टाय् । निष्ठ-
टन, बुराई, पधतता, मोघता ।

निष्ठटन (मं० पु०) बुराई, मन्दता, मोघता ।

निष्ठटप्रवृत्ति (मं० स्त्री०) निष्ठटा प्रवृत्तिः । १ मोघ
प्रवृत्तिः । (वि०) निष्ठटा प्रवृत्तिर्यस्य । २ अमकी
प्रवृत्ति मोघ हो ।

निष्ठटायय (मं० पु०) निष्ठट प्राययः यस्य । मोघायय,
मन्दायय ।

निष्ठेयाय (मं० पु०) निष्ठेय यद्-सुम्, 'वादेय का' इति
यस्य क । गोमयादिना पुनः पुनः रामोत्तरय, गोबरका
याद धार कमा करनेका काम ।

निष्ठेत (मं० पु०) निष्ठेतति निवसत्यस्मिन्निति निष्ठित-
पत्य, । षट्, घर ।

निष्ठेय (मं० स्त्री०) निष्ठेयति निवसत्यस्मिन्निति नि-
ष्ठित्य पथिकानी वदुः । १ षट्, घर । २ पनायुः,
प्याग । ३ जन्मेतम, जननेत ।

निकोचक (मं० पु०) निकोचनि गन्दायने निःकुच-कुम् ।
चट्टोद्वल, टैरा (*Alangium hexapetalum*)

निकोचन (मं० स्त्री०) मद्गुचन ।

निकोचक (मं० पु०) निकोचक प्रयोदयादित्याम् मायुः ।

निकोचन, चट्टोन, टैरा ।

निकोचक (मं० पु०) निःकुच-कुम् । एक वेदिकायाय ।
इसको सवाधि भावजात्य है ।

निकोलसन—बहुदेशके सैनिक विभागमें निगुल एक स्थान
नामा चट्टरेन कामचारो । ये क्रमशः सचिव सीवानका
चतुर्थकम करते हुए सेप्टिमेण्ट-कमलके पद पर पहुँच
गये थे । जब ये पन्नाबके सीवानो विभागमें (Civil
Commissioner) डिप्टी कमिश्नर (Deputy Commis-
sioner) का काम करते थे, उन समय में बहालके अधिका-
रिनीका विशेष आग्रहभाजन बन गये थे । ब्रह्मसंस्थके
चर्मक सहायक महापापीने इस देशके सचिवका अधिकार
या कर बहुतरे अधोन्तक कमचारियोंके प्रति सद्भाव-
वादाय परिचय दिया है । अधोन्तक अधिदोने भी भक्ति
पौर पन्नाबके साथ उनको सहृदयताका प्रतिगोचर किया
है । किन्तु निष्ठकमका चर्मके अधोन्तक कमचारियोंके
प्रति जो सा चाधिरय हो, वे सा बिसोका पाक तक देखने-

में नहीं आया है । उनके सम्मानाय एक ५५ भारतनामा
एके निकोलसनी (The Nicolsoni) पदका 'निष्कार
सिंहो बहो' नामसे पुकारने थे । पन्नाब गवर्मेण्टको
किसी सरकारो कार्यनिवरकोमें (Official report)
एक महाकावे विषयमें निम्नलिखित वाक्य लिखे हैं—
"Nature makes but few such men, and
the Punjab is happy to have had one."
"जनममें ऐसा मनुष्य मिलना दुर्लभ है । पन्नाबाग्यमें
जोभाग्यसे हो ऐसा चमून्त रख गया है ।" १८८८में
१८८२ ई० तक पञ्जाबमें के मात्र जो कुछ हुआ था, उसमें
निकोलसन निगुल थे । दिल्लीनगरको दूसरो बार जब
अधिकारमें मानेको चेठा काँटो है, उसी समय इनका
देहान्त हो गया ।

निकोको दि० कोण्टी—मेजिस, राज्यको एक सम्माना मद्र
मर्यादा । १८८६ ई०में दसम्बननगरमें ये वाचिप
करनेके लिये आये थे । वारसदेशके मन्त्र हो कर मन्-
वार पौर बहुदेश वादि स्थान कोने हुए थे इन्देशको
कोटे थे । उन्होंने स्वयंका स्वाग मुनममानी धर्म पचन
किया था । इस पचराधके वाचिपतमें पोप (Pope
Eugene) में उन्हें चर्म दुपद शरमपुताकाका
कीर्तन करने कहा था । इन ह्योममें इन्हीं मुमरान-
गङ्गातोर मूमि वादि स्थानोंका वाचना सुन्दर पचन
किया है ।

निकोबर—भारत महासागरका एक द्वीप । यह पन्दा-
मनदोयके दक्षिण पड़ता है । इस द्वीपसुखके मन्त्र ८ बड़े
पौर ११ छोटे द्वीप हैं । इनमेंसे निकोवर द्वीपको लम्बाई
१० मील पौर चौड़ाई १२से १४ मील है । इन समस्त
द्वीपोंमेंसे निकोबरी शब्दमें भारतगवर्मेण्टने अज्ञान
बर्धनका अज्ञा स्थानित किया है ।

निकोबर द्वीप माधारयतः कोटे कोटे पहाड़ोंमें परि-
पूर्ण है । यहाँ मारियनके चर्मक हल देवे जाने हैं ।
यहाँके जङ्गलमें एक प्रकारका पेड़ पाया जाता है जिस-
को लकड़ो अज्ञान पौर घर बननेक काममें जाता है ।
माना प्रकारके जल पौर माना प्राणोप पानी इन सब द्वीप-
पुष्पमें लहर आने है । सबको भी कम नहीं मिलने ।

निकोबरवासियोंके साथ असदवासीदोकी पाठति बहुत

२. इकोदे यहा लंघने विभागे पर छोड़ा देयो, धरोहर, रणा दूधा, चमामन रणा दूधा ।

निमुमा (मं० स्त्री०) नि-मुम-क-टाप् । १. माछको । २. घुस्को पत्नी ।

निमुप (मं० पु०) १. किंकर्षे वा दासनेको क्रिया वा भाव । २. चामनेको क्रिया वा भाव । ३. छोड़नेको क्रिया वा भाव । ४. छोड़नेको क्रिया वा भाव । ५. धरोहर, चमामन, दातो ।

निमुपक (मं० पु०) निमुपकरो, किंकर्षेवा ।

निमुपण (मं० स्त्री०) नि-मुप-ण-ट् । १. निमुपकरव, किंकर्षा, डालना । २. छोड़ना, चमामा । ३. चमामा ।

निमुपे (हि० वि०) १. किंकर्षवाला, छोड़नेवाला । धरोहर रक्षनेवाला ।

निमुमा (हि० पु०) निमुम, देको ।

निमुप्य (मं० पु०) नि-मुप-प्य-ट् । निमुपकायो, किंकर्ष-वाला, छोड़नेवाला । २. धरोहर रक्षनेवाला ।

निमुप्य (मं० स्त्री०) नि-मुप-प्य-ट् । निमुपकायो, किंकर्ष-योग्य, छोड़ने लायक ।

निमुगं (हि० पु०) निमुगं देको ।

निमुगो (हि० वि०) निमुगो देको ।

निमुंड (हि० वि०) मध्य, न घोड़ा चपल चपल, घटोक, ठाक, भेमे निर्वाह पायो रात ।

निमुपार (हि० वि०) १. कठोर पिताका, कट्टे दिवहा । २. निहृय, निदय, बेरहम ।

निमुप, (हि० वि०) १. चपली कुचामने कारव कर्षी न टिकनेवाला, निमका कर्षी ठिकाना न गयो, चपल चपल मारा फिरनेवाला । २. निहृय, चानसा, निमसे कोटि काम बाज न हो सके ।

निमुपिडा (मं० स्त्री०) मुकुषोदन्द्, गुलच ।

निमुपन (मं० स्त्री०) नि-मुप-न-ट् । १. गुलच, घोडना । २. गुलच, मरो । ३. माछना ।

निमुपना (हि० स्त्री०) १. निर्मम धोर स्वल्प बोला, भेष डेट कर माज रोना, धुन कर भज बोला । २. रक्षकता गुलता होना ।

निमुपना (हि० स्त्री०) मुकुषोदन्द्, गुलच ।

निमुपरी (हि० स्त्री०) गुलच, घोडा, चपलीका चपल ।

ग्यादगानने पाचारने छो दूध पादिने माघ पत्राया दूधा चय लयवर्धक भोग वदुनसे भोगी के हाथका पा मरने है, पर केमन पाको के संयोगसे पाग पर पत्राई भोगी मरन कम भोगी के हाथकी गाने है ।

निमुप (मं० पु०) १. संख्याविशेष, दम दत्तार करोड़-को संख्या । (हि०) २. दम मरुत कोटि, दम दत्तार करोड़ । निगार पर्वः । ३. वामन, बोना, माटा । निमुपेट (मं० पु०) राक्षसमेवगत राक्षसमेव, राक्षसको भेजाका एक राक्षस ।

निमुपव (हि० वि०) निमुपव, मर, धोर मुक्त मर ।

निमुप (मं० वि०) नि-मुप-ण-ट् । निमुप, ग्यादिन, रणा दूधा, माछा दूधा ।

निमुप (हि० पु०) निमुप देको ।

निमुप (हि० पु०) १. निर्ममधन, स्वल्पता, सजाई । २. दत्तार, माता ।

निमुपना (हि० स्त्री०) १. स्वल्प करना, माज करना, माजना । २. पवित्र करना, पापाहित करना ।

निमुप (हि० पु०) मरुत बनानेका कड़ाह निर्मम धन कर रम उवाला जाता है ।

निमुपिन (हि० वि०) निमुप, निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर ।

निमुपिन (मं० वि०) निमुपिन विमुप निर्मम धोर निर्मम धोर, मरुत, मर, मारा ।

निमुपेट (हि० वि०) १. निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर, निर्मम धोर निर्मम धोर, निर्मम धोर निर्मम धोर । २. निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर, निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर निर्मम धोर ।

निमुपेटा (हि० वि०) निर्मम धोर निर्मम धोर ।

निमुपेटा (हि० स्त्री०) निर्मम धोर निर्मम धोर ।

निमुपेट (हि० पु०) दमने कामने चमनेवाला एक वृद्धो जो रक्षयोग्य समझी जाती है । दमने मरुतमे चपल है, कि चाप लव के शरीरमे भर जामने कारण व्याकुल हो जाता है, मरुत मे चाट सेना है निमुपेटे के चमने चमने जाती है ।

निमुपेटा (हि० स्त्री०) रक्षाई, दुलाई पादि बड़े मरुत कपडुमे नामा चालना ।

निमुप (मं० पु० स्त्री०) निमुपिन चमनेवाला नि-मुप-प-च

ही' ऐसा कर दिया और पगड़्यासको लड़कीमें ढका,
"तुम्हारा एक पुत्र बढ़ा प्रतापी होगा और दूसरा पुत्र बढ़ा
भाई बन्हा होगा।" इनके उपान्त दानवराजने कागो
का कर पचना शरीर १०८ खण्डोंमें काट कर गङ्गामें
झाल दिया। उसके त्रिहार्ममें एक प्रसिद्ध भाट और
२० खण्डोंमें २० सतिथ वीर चक्रमेरमें लपक हुए।
इस भीम सतिथोंमें मोमोयर प्रधान थे। मोमोयरा'न पुत्र
विश्याम दिक्षीयर एमोराज हुए। दूसरे दूसरे खण्डोंमें
किमोमे कभोजमें, किमोमे परिहारमें, किमोमे भ्वायरमें,
किमोमे नागीर खादि म्यामोंमें लपकवह किया। इस
मोमो'के अद्वैतग्यात खाद कवि हवो खंभमे लाहोरमें
लपक हुए थे। (पुमिशान-नायका)

निगमागम (सं० पु०) वेदगाथा।

निगमिन् (सं० पु०) निगम-रति। वेदविद्, जो वेद
ज्ञाति हो।

निर (सं० पु०) नि-र-घञ्। (दरीर, १। ३। १। १०)
१ भोजन। २ एक धराको मोलमें ३३ मोतो चढ़ें,
मो सन मोतिघोंके समूहका नाम निर है।

निर (हिं० वि०) १ मर, मार। (पु०) २ निर देखो।
निरर (सं० पु०) नि-र-घञ्। १ भक्षण, भोजन।
(पु०) २ मला। ३ कोमर्षेण। ३के म्याम पर ल
करनेसे 'निरसन' शब्द भी होगा।

निरा (का० पु०) १ निरोधक, निरासी रखनेवाला।
२ रसक।

निरा (हिं० वि०) निरमें जल न मिमाया गया हो,
खानिस।

निराणा (हिं० लि०) १ निर्या करमा, निवृत्ताना।
२ छुटक, करना, छोट कर धमक धमक करमा वा होगा।
३ काट करना वा होगा।

निरासी (का० पु०) निरीक्षण, देखरेख।

निरमला (हिं० लि०) १ मसेके मोचे समार देमा, पांट
वाला, गटक जाना। २ धा जाना। ३ इपवा धा
धन पया जाना।

निरह (का० पु०) दृष्टि, नजर, निगाह।

निरहना (का० पु०) रसक।

निगहना (का० पु०) रत्ता, देखरेख, रत्ननामो,
चोकनी।

निगाद (सं० पु०) नि-गद-विङ्-घञ्। (नी गानररररररः।
वा ३। १। ३५) निगद, भाषण, कथन।

निगादिन् (सं० लि०) नि-गद-विङ्। यत्ता।

निगार (सं० पु०) नि-र-घञ्। भक्षण, भोजन।

निगार (का० पु०) १ बिज, नडागो, शिवपुटा। २ एक
कारमी राग।

निगाम (सं० पु०) निगार-रत्ता ल। १ भोजन। २
चम्रगलदेम, घोड़के गनेका यह भाग जहाँ पच्छी बांधो
जातो है।

निगाम (का० पु०) १ एक प्रकारका वशाड़ा नाम जो
हिमालयमें पैदा होता है। इसे छोटे रिंगाम भी
कहते हैं। २ पाहुँकी गरदन।

निगामवान् (सं० पु०) निगामोप्यारणं ति, निगाम मनुष्य,
मख व। चम्र, घोड़ा।

निगामिका (सं० स्त्री०) पाठ पछा'को एक यन्त्रति,
इसके प्रत्येक खरचमें जगण, रगण, चौर, लपुगुद होते
हैं। इसे 'प्रमाविका' और 'नागगुरुशि' भी
कहते हैं।

निगामो (हिं० स्त्री०) १ बिजको बनी हुई गमो, निगाम।
२ दूधकी गमो जिसे सु'हमें रख कर धूप बाँवते हैं।
निगाह (का० पु०) १ दृष्टि, नजर। २ ध्यान, विचार,
मनभ। ३ वरच, वरचान। ४ देखनेका क्रिया वा
दृष्ट, बिजयन, नकाई। ५ कयादृष्टि, मेहरबानी।

निगिभ (हिं० वि०) चपला मोदमोय, जिनका बहुत
भोम हो, बहुत म्यारी।

निगु (सं० पु०) निगमने विपनेनेनेति नि गम आहुम-
कात्। १ मन, चमःकरण। २ मन। ३ मूख।
४ मनोष। ५ बिजकर्म।

निगुह—गुहशतके मन्त्रयन्त्रों एक नाम। रणक्षेत्रमें कलह-
भद्र, यन्त्रमें विहान धाम और क्यारमें रहिना धाम
पड़ता है। मात्रा ३५ दर्ने यह धाम कभोजमें बाए हुए
प्रसिद्ध पछेदे। आन्ध्र भद्र पादरर। यन्त्रकी और
क्याय धमोदित कर्त्तव्यगहनके लिखे दान बिदा था।

को यह घटकी तरह चमिष्य है। मन्द इन्द्रियविवय है, यतः यह चमिष्य है। दूसरा कहता है—जाति (जैसे गटार) जब इन्द्रियविवय होने पर भी निरय है, तब मन्द की नहीं। इससे उत्तरमें पहला कहना है—जो कुछ इन्द्रियविवय को यह घटकी तरह मिय है उससे हम कथनमें प्रतिष्ठाको जानि हुई।

(२) प्रतिष्ठाकार नहीं होता है जहाँ प्रतिष्ठाका विरोध उचित होने पर कोई पदमें दृष्टाता और प्रतिदृष्टातमें विरुद्धमें एक ओर मय धर्मका आरोप कहता है। जैसे, एक घाटेमें कहता है—मन्द चमिष्य है, क्योंकि यह घटेके समान इन्द्रियाँका विषय है। दूसरा कहता है—मन्द चमिष्य है, क्योंकि यह जातिके समान इन्द्रियविवय है। इस पर पहला कहता है—यस ओर जाति दोनों इन्द्रियविवय है, पर जाति सर्वगत है और घट सर्वगत नहीं। यतः मन्द सर्वगत न होनेसे घटेके समान चमिष्य है। यहाँ मन्द चमिष्य है यह पहली प्रतिष्ठा थी, मन्द सर्वगत नहीं यह दूसरी प्रतिष्ठा हुई। एक प्रतिष्ठाको साधक दूसरी प्रतिष्ठा नहीं हो सकती, प्रतिष्ठाके साधक हेतु और दृष्टाता होने हैं।

(३) जहाँ प्रतिष्ठा और हेतुका विरोध हो, वहाँ प्रतिष्ठाविरोध होता है। जैसे, जमीने कहा—द्वय ओर शुच दोनों एक मय नहीं है (प्रतिष्ठा), क्योंकि समको उपलब्धि पदार्थके भिन्न नहीं होती। यहाँ प्रतिष्ठा और हेतुमें विरोध है क्योंकि यदि द्वय शुचमें भिन्न है तो यह कथमें भिन्न हुआ।

(४) जहाँ पक्षका निषेध होने पर माना हुआ पक्ष छोड़ दिया उस पक्ष प्रतिष्ठासंन्यास होता है। जैसे, किमीने कहा—इन्द्रियविवय होनेसे मन्द चमिष्य है, दूसरा कहता है जाति इन्द्रियविवय है पर चमिष्य नहीं, इसी प्रकार मन्द भी समझिए। इस तरह पक्षके निषेध होने पर यदि पहला कहने लगे कि क्यों कहना है कि 'मन्द चमिष्य है', तो उसका यह कथन प्रतिष्ठासंन्यास नामक निवृत्तत्वात्कें चमिष्यमें हुआ।

(५) जहाँ चमिष्य कथमें कोई रूप हेतुके निषेध होने पर सममें विनिमय दिपानेकी चेष्टा की जाती है, वहाँ हेतुकार नामका निवृत्तत्वात्कें चमिष्य होता है। जैसे,

किमीने कहा—मन्द चमिष्य है, क्योंकि यह इन्द्रियविवय है। दूसरा कहता है, कि इन्द्रियविवय होनेसे ही मन्द चमिष्य नहीं कहा जा सकता, जात्य जाति भी तो इन्द्रियविवय है, या यह चमिष्य नहीं। इस पर पहला कहता है, कि इन्द्रियविवय होने को हेतु होने दिया है, यदि इस प्रकारका इन्द्रियविवय समझना चाहिये तो जातिमें चमिष्यमें माना जा सकता है। जैसे, 'मन्द' जातिके चमिष्यमें माना जा सकता है, पर जाति फिर जातिमें चमिष्यमें नहीं माने जा सकती। हेतुका यह टाकना हेतुकार कहलाता है।

(६) जहाँ प्रत्यक्ष विषय या चरमें समझ रहे हैं, जहाँ विषय उचित किदा प्रतीत है वहाँ चरकार होता है, जैसे कोई कहे कि मन्द चमिष्य है, क्योंकि यह चमिष्य है। विरोध होने पर यदि यह दूसरा कथन की व्यर्थ है कि वहने लगे जैसे हेतु मन्द 'वि' धातुमें बना है क्योंकि तो उसे चरकार नामक निवृत्तत्वात्कें माना हुआ समझना चाहिये।

(७) जहाँ सर्वथा विना चरमें ही प्रतीति की जाय, वहाँ निषेध होता है। जैसे, कोई कहे कि यह मन्द है प्रत्यक्ष नहीं।

(८) जब पक्षका विरोध होने पर चरमें बचावके लिये कोई ऐसे पदार्थका प्रयोग करने लगे तो चरप्रतिष्ठ न होनेके कारण जन्मी समझमें न पावे चरका बहुत जन्मी जन्मी और चरके चरमें जानमें लगे, तब चरप्रकारों नाम निवृत्तत्वात्कें होता है।

(९) जहाँ बहुतमें पदों या कारणोंका पूर्वपर समझमें चमिष्य न हो, पर ओर बाहर चमिष्य ही, वहाँ चरकार होता है।

(१०) प्रतिष्ठा हेतु यदि चरचमिष्यमें न कहें जायें, यामें कोई उचित पुनर्त्तर कहें न पड़े, वहाँ चरकार कहल होता है।

(११) प्रतिष्ठा यदि चर चरचमिष्यमें जहाँ समझमें कोई चरचमिष्य ही, वहाँ चरचमिष्य निवृत्तत्वात्कें होता है।

(१२) हेतु और पदार्थका जहाँ चरचमिष्यमें चरचमिष्य ही, वहाँ चरचमिष्य नामक निवृत्तत्वात्कें होता है।

[illegible]

पाकारप्रकार चोर शेरिनोर्गोत्रि वक्ष्य कर्म प्रमेद देया जाता है । रिदेर विराम बाजि कर्णमे देयो ।

निघोष (हि० पु०) राजा पयोधके एक मनोरेका नाम । निघ (म० पु०) निघमित निर्भिन्नेव वा दृश्यते आद्यने इति निघन निघानमात् प्राप्ता । (निघे निघिन् । पा १।१।८०) समविष्टार देयं पदाये, वद वदतु निमको कोट्टार एक मो हो ।

निघण्टु (म० पु०) निघण्टु, शूचीयत् । निघण्टिका (म० स्त्री०) एक प्रकारका कन्द, गुमरु । निघण्टु (म० पु०) निघण्टति गोमते इति दोस्रो कुमर्य येन मायुः (यमप्रादयः । उल् १।३८) १ नामसंघट । भेमे, वेधजटा निघण्टु । २ अधिभागनिगोत्र । इममे येदिन शब्दोंका अर्थ निगा है । ३ एकत्रैवाथी पयाय शब्द जिसमें निघट्ट है, उसे निघण्टु कहते हैं । पमारकोय, वैजयन्तो चोर कलायुध आदि यन्त्रोंमें जिस जिस स्थान पर नाम संघट्ट है, उस उस स्थानको भी निघण्टु कहते हैं ।

निघण्टु तीन अर्थोंमें विभक्त है । प्रथम अर्थार्थमें दृष्टिआदि लोक चोर दिव्यजाले दृष्टप्रविशयेके नाम, द्वितीय अर्थार्थमें मनुष्य चोर तदवस्थादि द्रव्यविषय चोर तृतीय अर्थार्थमें मनुष्य तथा उन्मत्त अवस्थादि द्रव्य चोर सत्त्वादि धर्मविषय निश्चय है । यादवने निघण्टुको ओ व्याख्या मिली है, वह निघण्टुके नामसे प्रसिद्ध है । यह निघण्टु, पत्थना प्राचीन है, क्योंकि यादवके पहले भी माहर्षि चोर स्त्रीमहोषी नामक एकके दो व्याख्याकार या निघण्टुकार हो चुके थे । महाभारतमें अणपको निघण्टुका कर्ता निगा है । ४ निघण्टु, शूचीयत् ।

निघण्टुशाल (म० पु०) मरुदक्षिण राजनिघण्टु ।

निघण्टु (हि० वि०) १ जिसका वही घर घट न हो, जिसमें कहीं तिकाता न हो, जो भूमि फिर कर वही पावे कहाँसे दुलकारा या बटाया जाय । २ निर्मल, बेहवा । निघरा (हि० वि०) जिसमें घरघार न हो, निर्गोत्र ।

निघर (म० पु०) निघर भावे वस । अर्थ, विवशा, रहनुमा ।

निघरच (म० स्त्री०) निघरचट्ट । अर्थ, विमला, रहनुमा ।

निघम (म० पु०) यद-भयद निघट्ट-यत्, मतो यमादिनाः (यमगोत्र । पा १।३।१८) पाटार, भोजन ।

निघान (म० पु०) निघन-भावे घन । १ पाहन, महार । २ यमुनात नर । ३ यम नर दास पाय नरका दहन ।

निघानि (म० स्त्री०) निघट्टतेऽस्या निघन इत्य कुपश्च (यति-रति-विरादोति । उल् ३।२३) १ मोट्यानि, मोहमयटण्ड । २ वह कोट्टका नाम जिस पर हथोड़े आदिका पावान बट्टे, निघार ।

निघातो (म० वि०) १ पाषाणकागो, मारनेवाला । २ यध करनेवाला ।

निघातन—१ तुल्यदेवके चोरो निमेको एक तहमीन । यह पला २० ४१ चोर १८ ४२ ४३ तथा देगा ८० १८ चोर ८१ १८ पूर्वके मन्त्र परस्मिन् है । भूषणमात्र १२१० वर्षमोन चोर भोजमन्त्रा लगभग २८१२३ है । इममें १८ पास चोर दो महार कहते हैं । इमके उत्तरमें व्याधीन निघान राज्य, पूर्वमें नागनाका तहमीन, दक्षिणमें विषयन चोर चोतापुर तहमीन तथा पश्चिममें लफ्फोर तहमीन है । चोरो निमेमें यह मन्त्रे वही तहमीन है । त्रिरोनाबाद, घोराबाक, निघामन, चोरोनक चोर जानिदा ये पाँच परगने इमके अन्तर्गत हैं ।

२ चोरो निमेका एक परगना । इमके उत्तरमें चोरोनक है, पूर्वमें घोराबाक, दक्षिणमें भूष चोर पश्चिममें जानिदा है । भरतू नदी इस परगनेमें बहती है ।

निघुट (म० स्त्री०) निघुटतेऽस्मिन्, निघुट भावे न । छट, घोचय ।

निघुष (म० पु०) छुपु मंथये निघुषयन् प्रत्ययेन प्राप्ता (यके निघुषतेऽस्मिन् । अल् १।१।१३) १ पुर । २ वायु । ३ पार । ४ माग । ५ मरार । ६ कर्म ।

निघ (म० वि०) निघट्टते निघट्टते इति निघन घट्टते क । १ पयोध, पाशक, बयोधुव । २ पाहन, पाटन, लपमो । ३ यमनिघन, निर्मल । ४ मुदित, गुहा क्रिया कृपा । (पु०) १ गुणवन्मोय राजा अनाजका पुत्र । २ एक राजा को अनामिकका पुत्र था ।

निघज (म० पु०) दक्षिणापुरके राजा को अमीनतपु-

साकारवकाः चोर शीनिनेतिर्नैव कृत कस्य समेद टेषा
आमा है । निघेव विरान्वादि कल्पये देवो ।

निघोष (हि० पु०) राजा चमोडके एक भतीजेका नाम ।

निघ (सं० पु०) निघमिन् निघमिन्नेव वा चम्यते चायमे
इति निघ्न निघातनात् साधुः । (निघो निघिउम् । वा
१।१।८०) समविदार देव्यं पदार्थं, बह्वस्तु निघञो
चोडाइ एक गो हो ।

निघण्टु (सं० पु०) निघण्टु, सुशोषक ।

निघण्टिका (सं० स्त्री०) एक प्रकारका कण्ट, गुमच ।

निघण्टु (सं० पु०) निघण्टुति जीमते इति दोमो कुपय
येन साधुः (एमकारवच । उ० १।१८) १ नाममंघर ।

जिमे, मैद्यकाटा निघण्टु । २ चमिघागविशेष । इसमें
मैदिक ग्रन्थीका चर्च निघा है । ३ एकान्वेषार्थ
पर्याय शब्द जिसमें निघट्ट है, उमे निघण्टु कहते हैं ।
पमरकोप, वैजयन्तो चोर कलायुध आदि चर्मोंमें जिन
जिम व्यान पर नाम मंघर है, उस उस व्यानको भी
निघण्टु कहते हैं ।

निघण्टु, तीन चर्मोंमें घिसका है । प्रथम चर्मोंमें
एचिआदि ओक चोर दिहकादि द्रव्यविषयोंके नाम,
द्वितीय चर्मोंमें मनुष्य चोर लक्षणादि द्रव्यविषय
चोर लक्षणीय चर्मोंमें मनुष्य तथा चमके चर्मकादि द्रव्य
चोर मरवादि धर्मविषय लिख है । यास्तमें निघण्टुको
जो व्याख्या लिखी है, वह निहत्तके नामसे प्रसिद्ध है ।
यह निघण्टु, पाठना साधन है, क्योंकि याचके पक्षमें
भी जाहपूर्व चोर लोभहोयो नामक इसके दो व्याख्या-
कार या निहत्तकार हो चुके हैं । महाभारतमें कम्पको
निघण्टुका कर्ता लिखा है । ४ निघण्टु, सुशोषक ।

निघण्टुशज (सं० पु०) भरहरिलान राजनिघण्टु ।

निघरष्ट (हि० स्त्री०) १ जिसका कहीं पर पाट न हो,
जिसे कहीं ठिकाना न हो, जो घूम फिर कर कहीं पावे
जहाँमें दुःखकारा या दुःखी जाय । २ निर्मल, बेजया ।

निघरा (हि० वि०) जिसके घरबार न हो, निगोड़ा ।

निघर्व (सं० पु०) निघर्व भाग्य धम । घर्वच, घिघना,
रगड़ना ।

निघर्व (सं० स्त्री०) निघर्वचगुट् । घर्वच, घिघना,
रगड़ना ।

निघम (सं० पु०) घट-भगवि निघट-घट, लमो घमादेः
(फज्जीय । वा ३।३।८५) पादाव, भोजन ।

निघात (सं० पु०) निघ्न-भावे धम । १ पादहन,
महार । २ चतुर्दास स्वर । ३ चण्ण स्वर हाहा चण्ण
स्वरका कलन ।

निघानि (सं० स्त्री०) निघ्नमनेत्या निघ्न-धम कुपय
(चिन्-नि-चिन्नायोनि । उ० ३।१४) १ लोहपाणिना,
लोहमयटण्ड । २ वह लोहेका बाण जिस पर हथोड़े
आदिका पायात पड़े, निहार ।

निघातो (सं० स्त्री०) १ पाषाणकाशे, मारनेवाला । २
वध करनेवाला ।

निघातन—१ युद्धदेवके गैरो त्रिमेको एक लक्षमीन ।
यह चर्चा २०° ४१' चोर २८° ३२' उ० तथा देगा०
८०° १८' चोर ८१° १८' पूर्वमें मय चरमित है ।
भूप्रमाण १२१७ वर्गमील चोर लोहमय्या जलमग
२८१२३ है । इसमें १८६ घाम चोर दो ग्रहर लगते
हैं । इसमें छत्तारमें चाधोन निघान राग्य, पूर्वमें
मानपाड़ा लक्षमीन, दक्षिणमें विमलन चोर गोमापुर
लक्षमीन तथा पश्चिममें मल्होपुर लक्षमीन है । गैरो
त्रिमेमें यह सबमे बड़ी लक्षमीन है । किरीताहाट,
धोराहाड़, निघामन, खीरगढ़ चोर जानिया ये दोष
परगमे दमके समानत हैं ।

२ गैरो त्रिमेका एक परगना । दक्षिण छत्तारमें
खीरगढ़ है, पूर्वमें धोराहाड़, दक्षिणमें भूय चोर पश्चिममें
जानिया है । मरछु नदी इस परगनेमें बहती है ।

निघुट (सं० स्त्री०) निघुपदेन्मेति, निघुप भावे ल ।
हुट घोषण ।

निघुप (सं० पु०) ह्युप मंघर्वे निघुप ह्यु प्रत्ययेन साधुः
(कडे निघुपमिन्नेति । उ० १।१४१) १ पुर । २ बाधु ।
३ धार । ४ मार्ग । ५ मराह । ६ कण ।

निघ (सं० स्त्री०) निघ्नमने निघ्नमने इति निघ्न-धम पमर्दे
क । १ लोभ, पादल, लोभन । २ पादन, पादक,
जलमो । ३ चरमविहन, निघर्व । ४ कुपित, गुना
हिया दुषा । (पु०) ५ घुपर्वे घोष हाहा चमन्तुका
पुष्ट । ६ एक राजा जो चममिन्ना ३५ टा ।

निघञ (सं० पु०) दक्षिणापुरके राजा जो लक्ष्मीनक्षत्र-

आकारप्रकाशः चोर गीतिते निघे वदन् एव प्रमेद देया
जाता है । विरेह विरहण वाचि मन्दये देवो ।

निघोष (हि० पु०) राज्ञा प्रयोक्तृक एक भनीजेका नाम ।
निघ (म० पु०) निघमिन् निर्बन्धित वा दृश्यते प्रायते
इति नि घ्न निघान्नात् प्राप्ता । (निघे निमिजम् । वा
१।१।८०) समविद्याय देव्यं वदायै, वर वदतु तिमको
चोदुहै एव मो चो ।

निघण्टु (म० पु०) निघण्टु, सूचीपत्र ।
निघण्टिका (म० स्त्री०) एक प्रकारका कण्ट, गुल्फ ।
निघण्टु (म० पु०) निघण्टति मोभते इति दोसो कुप्रत्य
येन साधुः (एतादृशवय । कण्ट १।१८) १ नाममंघ्र ।
जेमे, वैद्यकरा निघण्टु । २ चामिधानविशेष । ३ भेमे
मैदित्त मन्दैरा चयै निघा है । ३ एकाग्रबाधो
प्रयोग मण्ड तिममे निघट्टे, जमे निघण्टु कहते है ।
चमरकोच, पौन्यतो चोर हमायुष पादि घण्टोमि तिम
तिम म्यान पर नाम मंघ्र है, कम कम म्यानको भी
निघण्टु कहते है ।

निघण्टु, गीत प्रख्यायोंमि विमल है । प्रथम चध्यायमि
एतिपादि भोक्त चोर दिक्कादि द्रव्यविपरीति नाम,
दितोय चध्यायमि मनुष्य चोर तदवस्थादि द्रव्यविषय
चोरदगीय चध्यायमि मनुष्य तथा उन्नत चयवभादि द्रव्य
चोर मण्वादि धर्मविषय निघट्ट है । याचकने निघण्टुको
ओ व्याख्या निघो है, वर निघट्टके नाममे समिह है ।
यह निघण्टु, चयवता प्राधान है, करोकि याचके वडमे
भो माहपूर्व चोर स्लोन्टोमो नामक हमर दो व्याख्या-
कार या निघट्टकार को बुद्धे थे । महाभाषतमे खगपको
निघण्टुका कर्ता निघा है । ४ निघण्टु, सूचीपत्र ।

निघण्टुराज (म० पु०) नरवरलिख राजनिघण्टु ।
निघरपट (हि० वि०) १ तिमका कर्को घर घट न को,
जिमे कर्को ठिकाना न को, जो घूम फिर कर घटों बाधे
कहामि दुगकारा या दटगया प्रायः २ निघंल, घेरया ।
निघरा (हि० वि०) तिमरं घावर न को, निघोडा ।
निघरं (म० पु०) निघर भागे घन । चयं, विमना,
रघुना ।
निघरं (म० स्त्री०) निघर घण्टु । चयं, विमना,
रघुना ।

निघर (म० पु०) पद-भरने नि-घर-घर, गती घमटिगः
(चमरोव । वा २।५।८८) आहार, भोजन ।

निघान (म० पु०) नि-घन-भावे घन । १ पावनन,
प्रहार । २ अनुदात्त स्वर । ३ पञ्च स्वर दाग वय
स्वरका दहन ।

निघानि (म० स्त्री०) निघमनेनया नि-घन-द्वय कुवञ्च
(मणि-वर्ति-विशालीनि । कण् ५।२४) १ मोहपानिनी,
मोहमयदण्ड । २ वह मोहिका वरञ्च तिम पर हलोहो
पादिका प्राधान वक्के, निहार ।

निघातो (म० लि०) १ प्राधानकागे, मारनेवाला । २
अथ करनेवाला ।

निघातन—१ युवकदेवते चितो तिमको एव तहमीन ।
यद चया २० वर चोर २८ वर तया देवा-
८० १८ चोर ८२ १८ पूजे मय चयमित है ।
भूवरिमाय १२३० वरमीन चोर मोहमंख्या जगमग
२८१२३ है । हमर १८ चोर चोर दो महर लगते
है । हमरें चलायें घायोण मेवाण राज्य, पूर्वमि
जानपादा तहमीन, दलिवरें तिमवण चोर मोतापुर
तहमीन तथा दलिवरें जय्मोचुर तहमीन है । मेरो
तिममें यह लक्षमे वक्को तहमीन है । द्वितीयावाट,
धोराबाङ्ग, निघामन, चितोगड् चोर दानिया ये लोच
चरगमे हमरें चयमते हैं ।

२ चितो तिमका एक चयना । हमरें चलायें
चितोगड् है, पूर्वमि धोराबाङ्ग, दलिवरें भूव चोर दलिवरें
दानिया है । नरयू मदी दन चरगमें वरतो है ।

निघट्ट (म० स्त्री०) निघमनेदेति, नि-घुव भावे ङ ।
भुट, चोपव ।

निघट्ट (म० पु०) घृष्ट मंघरें नि-घुव भुन् प्रत्ययेन साधुः
(घरे निघमिनीनि । कण १।५३) १ चुर । २ साधु ।
३ चर । ४ मार्ग । ५ मराह । ६ जय ।

निघ (म० लि०) निघमने निघट्टने इति नि-घन घमरं
क । १ चयोन, पावनन, चयाम्भूव । २ पावन, पावनन,
जयमो । ३ चयमविमन, निघर । ४ मुदित, गुवा
दिया दृषा । (पु०) ५ चयं चयोन राजा चयान्चका
पुत्र । ६ दह राजा ओ चयमिजका पुत्र का ।

निघज (म० पु०) इतिनाचुर राजा ओ चयमोहण-

निषोदना (हि० लि०) १ मोमो या रसमरो मनुको दवा।
कर या घीन गर समका पानी या रस टपटना, दवा कर
पानी या रस निकालना, गारना। २ क्रिया मनुका वर
भाग निकाल लेना। ३ मयंन हरण कर लेना, निर्धन
कर देना, सब कुछ ले लेना।

निषोम (म० पु०) निषोमने रति पुनः-घञ्। १ पाप्मा-
दन-वत्, जगदने योगर टीकमेका कपडा। २ विपत्ती
का परिधान-वत्, घुंघटा कपडा। पर्याय—निषुम,
उत्तरकट्ट, प्रकटपट। ३ उत्तरीय वस्त्र। ४ वस्त्र,
कपडा। ५ घाघरा, लहंगा।

निषोमक (म० पु०) निषोम रस कायतोनि कौ-क। १
अच्छ, पोस, पंगा। २ सुवाह, चकर। पर्याय—
कुर्यास, मारवाच, कच्छ, ख।

निषोका (हि० वि०) नमित, मोषिको चोर किया हुआ
या मुका हुआ।

निषोई (हि० लि०-वि०) मोषिको चोर।

निच्छवि (म० फी०) तोरभूतिदेय, तिरहुत।

निच्छवि (म० पु०) एक प्रकारके ब्राह्मचरिय, मयचो
कोमि लपच ब्राह्मचरियकी भक्तान।

निछटा (हि० पु०) बर समय या स्थान जिसमें कोई
दूता न हो, निराशा, एकाका।

निहत (हि० वि०) १ लयहीन, बिना हतका। २ बिना
राजविश्वका, बिना राज्यका। ३ चमिर्गमि होन, बिना
चमिर्गका, चमिर्गमि रहित।

निहल (हि० वि०) कष्ट रहित, लयहीन।

निहना (हि० वि०) बिलकुल, एकमात्र, बिना बिना
मटका।

निशान (हि० वि०) १ निपट, पालिश, जिसमें मेल न
हो, बिना मिलावटका। २ बिलकुल, निहलना, निव
भार, एकमात्र, केवल। (लि० वि०) ३ बिलकुल,
एकदम।

निशार (हि० फी०) १ एक लपका या टीटका। हमने
बिमोचो रखाके जिये कुछ द्रव्य या कोई वस्तु लपके नि
दा मारे चमोके लपके हुमा कर दान कर देने या जान
देने है, लज्जन, मारफिरा, लतारा। २ लपका मतलब
है होता है, कि जो देना योग्यको लप लेनेवाले ही

ये योग्य चोर लपके लपके द्रव्य पादि लप कर मांगट
को लाय। ३ लप द्रव्य या वस्तु जो लप हुमा कर दान
को लाय या लपके लो लाय। ४ इनाम, भेन।

निटेट (म० पु०) नि-वि-घञ्। डेटन, कलन।

निषोद (हि० वि०) निषोटी देको।

निषोडी (हि० वि०) १ जिसे रोम या होट न हो। २
निर्दय, निहुर।

नित्र (म० लि०) निषवेन जायने इति नि-जम ड। १ लोच,
पगना, पगया नहीं। पात्रजन इस मन्त्रका प्रयोग
पायः 'का' विमलिके माय होता है, जैसे नित्रका काम।
२ प्रधान, धाम, सुख। ३ यथाय, मया, वास्तविक,
ठीक, सही। (पद्य०) ४ नियत, ठीक ठीक, सटीक। ५
सुदयतः, विमेष करके, धाम कर।

नित्रकर्मन् (म० फी०) मन्त्रों कायं, पगना काम।

नित्रकागे (हि० फी०) १ बंटाईकी फमन। २ लप जमोन
जिनके लगानमें लपके लपके वस्तु हो लो लाय।

नित्रजन (म० लि०) राजन, पगना किया हुआ।

नित्रगम—सहितरुके पनगत बङ्गूर नित्रका एक होता
पडाक। प्रवाद है, कि एक समय यहाँ तुमुल मंदिर
हुवा था।

नित्रगुह—एक मरानो कवि। ११२२से ११५० ई०के
मध्य हमका जन्म हुआ था। ये दक्षिण-भारतके नित्रा-
यत-मन्त्रदायके मन्त्र एक निषयान मायक थे। हमकी
रचित मन्त्रोक्तियोंवाले पुस्तकका नाम एम एम-निह-
मन है। हम हममें राम, राविरी, मर, भान इत्यादि
को लपल चोर म्पादितकाय पादि सुन्दर रूपमें
बर्णित हैं।

नित्रगुहविषयोनी—एक कवि। 'निषेकविमलानि'
नामक पद्य रचोका बनाया हुआ है।

नित्रघात (म० पु०) पाबलोके लोचके लपके लपके
एक।

नित्रघि (म० लि०) नि-जम-वि-लपट। हमममोन,
जो हमका लप करता हो।

नित्रपुति (म० फी०) १ माकडोदित्य लोचके, माह-
लोचकी एक मन्त्रोक्त नाम। (लि०) नित्रा पुतिर्पद्यः।
२ इतिमात्र, इतिवृत्त।

निबोधना (हि० क्रि०) १ तोनो या रसमरो वस्तु को दना
कर या छेद कर लगना मानो या रस टपकना, टपक कर
मानो या रस निकालना, मारना । २ बिबो वस्तुका मार
भाग निहान लेना । ३ सर्वस्व हरण कर लेना, निर्धन
कर देना, सब कुछ ले लेना ।

निबोधन (सं० पु०) निबोधने इति पुल्लिङ्गम् । १ पाच्छ-
दम-मन्त्र, अरुमे मारो टाँवनेका कण्ठा । २ लियों
का परिधान-मन्त्र, घुंघटाका कण्ठा । पर्याय—निबुल,
छापरच्छद, मच्छदपट । ३ छत्तीय वस्त्र । ४ मन्त्र,
कण्ठा । ५ पापना, सङ्गर ।

निबोधन (सं० पु०) निबोधन इति पुल्लिङ्गम् । १
बधुका, पोत, पंगा । २ सदाह, बन्धन । पर्याय—
कुप्या, वारवाच, बधुका ।

निबोधा (हि० वि०) अस्ति, गोचरे को चोर किया हुआ
या छुड़ा हुआ ।

निबोधि (हि० लि० वि०) नीचिने पो ।

निबुद्धि (सं० स्त्री०) तोभूतिदेव, तिरहुत ।

निबुद्धि (सं० पु०) एक प्रकारके ज्ञान्यचरित्र, मन्त्रों
आदि सत्य ज्ञान्यचरित्रों की मन्त्रान ।

निबुद्धा (हि० पु०) यह समय या स्थान जिसमें कोई
दुःख न हो, निराशा, एकान्त ।

निबुद्ध (हि० वि०) १ स्वयंसे, बिना इच्छा । २ बिना
राजविशुद्धता, बिना राज्यका । ३ अविशेषि होन, बिना
अतिशयका, अतिशयि रहित ।

निबुद्ध (हि० वि०) कष्ट रहित, क्षणिक ।

निबुद्धा (हि० वि०) बिलकुल, एकमात्र, बिना बिना
कटका ।

निबुद्ध (हि० वि०) १ निबुद्ध, पालिष, जिसमें भोजन
हो, बिना निवावटका । २ बिलकुल, निबुद्धता, निबु
धन, एकमात्र, केवल । (हि० वि०) ३ बिलकुल
एकदम ।

निबुद्ध (हि० स्त्री०) १ एक सज्जन या टोटका । हमने
जिसकी रक्षा के लिये कुछ द्रव्य या कोई वस्तु समझे ला
या सारे चोरी के लिये गुमा कर दान कर देने या क्षान
दने हैं, उज्जरी, बाराहिया, मारा । हमका मतलब
कर होता है, कि जो देवता मारोको कह देतेवाले हो

वे मारो चोर चोरी के बदले में द्रव्य पादि या कर मंगुद
को जाय । २ वह द्रव्य या वस्तु जो क्षय गुमा कर दान
को जाय या छोड़ दो जाय । ३ हमारा, मेरा ।

निबुद्ध (सं० पु०) निबुद्ध-पत्र । हेतु, कारण ।

निबुद्ध (हि० वि०) गिण्टी देको ।

निबुद्धो (हि० वि०) १ जिसमें वेस या होर न हो । २
निर्दय, निहुर ।

निबुद्ध (सं० वि०) निबुद्धन आयने इति निबुद्धन-पद । १ बांघ,
चरना, पाया मर्दो । बाजकन दम मर्दका प्रयोग
पाया 'का' बिभाजिते साथ होता है, जैसे निबुद्धा काम ।
२ प्रधान, पाम, मुख्य । ३ यथायं, यथा, बाह्यविषय,
ठीक, मर्दो । (पद्य०) ४ निबुद्ध, ठीक ठीक, मर्दो । ५
मुपयत्न, बिरोध करके, पाम कर ।

निबुद्धमन्त्र (सं० स्त्री०) लक्ष्योय कायं, पचना काम ।

निबुद्धारी (हि० स्त्री०) १ बंटाई को पचान । २ वह जसो
जिसके समानमें समे सत्य वस्तु हो सो जाय ।

निबुद्धन (सं० लि०) सज्जन, पचना किया हुआ ।

निबुद्धन—महिषुरके पनागर्त बन्धन जिसका एक छोटा
पटाङ्क । पनाद है, कि एक समय पहा तुमुन मंदारम
हुपा था ।

निबुद्धन—एक मराठी कवि । १६२२ से १६३० ई० से
मध्य तकका कथा हुआ था । ये दक्षिण-भारतके निबुद्ध-
यत-मन्त्रदायके मध्य एक निबुद्धन गायक थे । हमने
रचित मन्त्रोपदेशोप पुस्तकका आज पद्य रचन-निबु-
द्धन है । उस पद्यमें राम, रामिनी, मर, आज इत्यादि
की सत्यता चोर व्यापारिकान पादि सुन्दर रूपसे
बर्णित है ।

निबुद्धनविषयो—एक कवि । 'विदेहविजानवि'
नामक कथ रचोका बनाया हुआ है ।

निबुद्धन (सं० पु०) पावनीके कोषके सत्य सत्यविषय
एक ।

निबुद्धि (सं० लि०) निबुद्ध-वि-विषय । हमनीन,
को हमीना यह बनाया हो ।

निबुद्धि (सं० स्त्री०) १ नाकटोपकित मर्दोके, मन्त्र-
दोषकी एक मर्दोका मन्त्र । (हि०) निबुद्धि-विषय ।
२ बुद्धिमान, बुद्धिमान ।

मानिभावन करनेके लिए उन्होंने १५वीं मार्चको पुनः पट्टेकोने पशुताके विजयनगर कार्यक ३ माघ ६० में कर दिवाकी प्रदत्त मन्त्रको मन्त्र को वापस रखा। पट्टेकोने यथा समय निजामको कर नहीं देने से; इस कारण निजामने पुनः १७८० ई० में हैदराबादीके साथ मित्रता कर ली।

इस समय दारिद्र्यान्तमें टीपू सुलतानका प्रभाव बहुत बढ़ा चढ़ा था। इस कारण १७८८ ई० में निजामने दूत भेज कर उन्हें नियंत्रित किया कि वे पट्टेकोनेके विद्वत् कोई कारबार नहीं कर सकेंगे। टीपू सुलतानने इस पर कुछ भी ध्यान न दिया और वे मुहब्बतिये तैयार हो गये। १७८० ई० में निजाम और पट्टेकोने उनका सामना करनेके लिये अचमर हुए। इस समय नाना कदमबोस भी महाराष्ट्रिय सेनाको साथ ले उनको सहायताके लिये आ पहुँचे। निजामने टीपूको परास्त कर कहावा जिलेकी भीत लिया। इसी वर्ष टीपूने उनसे मिल करके कड़ावाके पन्नावा गुरमजोखा-दुर्ग भी उन्हें दे दिया। बाद निजामने उस दोनों स्थान वस रैमण्ड सावबको पारितोषिकके रूपमें दे दिया; क्योंकि उन्होंने निजामकी घरेलू सहायता की थी। इस पर मन्त्राज साकार बहुत असन्तुष्ट हुई और कड़ावा पर आक्रमण करनेका भय दिवा कर उन्होंने रैमण्डको उस स्थान छोड़ देनेको कहा।

इस समय महाराष्ट्रोंके अन्धकारमें वे दिनों दिन हतोत्साह होने लगे। एक एक करके उन्होंने अधिकारी प्रवेश महाराष्ट्रोंके हाथ सुपुर्द किया। जो कुछ पंथ उनके पास बच रहे, उनके निन्दे से प्रेयशको कर देनेकी साथ हुए।

साधवरायके शास्त्रकाशमें जानूनी भी भले, गोपाल शाय और अन्धकार महाराष्ट्र-सदारीकी सहायसे तथा अपने दोस्त विद्वत्से उत्तेजित की निजाम अपनी पूजाकी लुटनेके लिए अचमर हुए। साधवरायके प्रधान प्रतिनिधि और मन्त्री रघुनाथराय मयभोन को पूजासे भाग गये। निजामअपनी महामें प्रवेश किया और इन्हीं तहस भवस कर ज्ञानमें एक खमर उठा ला रहीं। महामें भेंट कर जब वे गोदावरी नदी पार करके छोड़ी दूर जाने

हुई थे, उस समय रघुनाथरायने अन्धकार मोका देकर उन पर मोना प्रभासा छुड़ कर दिया। इसमें निजामकी प्रायः ७००० अचमर मैन विनष्ट हो गई थी। बादमें दिव्यो तरङ्ग भाग कर सावरणा को। हैदराबादनगरमें उनको राजधानी थी।

पेशवोंने जब निजामने अधिक कर माँगा, तब वे नन पर टूट पड़े और मुहब्बतिये तैयार हो गये। १७८१ ई० में साधोत्रो निम्निकाकी सन्धु होने पर महाराष्ट्र-मन्त्रि नामा कदमबोसको समता और भी बढ़ गई। दोस्तारा निम्निका और सुकोत्रो भीमकर इस समय पुनर्भेद। उन्होंने नानाकी जहाँ तक हो सका, उत्तेजित किया। बाराहे राजा, भीमन्दराय, नाथबोवाङ्ग और अन्धकार महाराष्ट्र सदारीोंने जयको आगा रन्ते हुए नानाकदमबोसका साथ दिया।

निजाम मन्त्राज नदीके किनारे होने हुए विद्वत्में अचमर हुए। अचमदनगरमें ५१ मोल दक्षिण-पूर्व महोदा नामक स्थानमें जब वे पहुँचे, तब हरिपन्न कदमके पुत्र सावरायने उन पर आक्रमण किया और अन्धकार तरङ्ग परास्त किया। १७८५ ई० में इस महोदा मुहब्बतिये महाराष्ट्रोंके परास्त होने पर मुगलनेमाने परास्त-को और वाता की। इस समय महाराष्ट्रोंमें पुनः आन्धकार मय किया। निजामने उन पर अट्टाई करनेके लिए वामन अमीनीकी रैमण्ड सावबके साथ भेज दिया। इधर पठान सरदार नामगति भी निजाम पर हमला कर दिया। सिद्धि पाय की परास्त हो जान से कर भागे।

१७८८ ई० में टीपूके मरनेके बाद औरदुरात्मनगर पट्टेकोनेके हाथ आया। पोट्टे १८०० ई० में पट्टेकोनेके साथ निजामका जो अन्धकार इन्हें उन्हीं पर आने लगे। हुंने जो कि निजामको सहायताके लिये पट्टेकोने भेजाही मन्त्राज बट्टाई ज्ञान और आ जाई राजा उनके राज्य पर अट्टाई करने पट्टेकोने अन्धकार करनेसे आन नहीं पाये। इस अन्धकार सेनाके अन्धकार निन्दे निजामने कड़ावा पाटि करी जिन्हे पट्टेकोनेके हाथ आता दिने।

१८०१ ई० में टीपूके पट्टेकोने निजामको हैदरा-बादमें देहात हुए। पोट्टे उनके बड़े अन्धकार निजाम

निजाम ताबत-खान (स० खि०) चाकमतवादी, जो केवल
उपने मनचा पदचमक करता हो ।

निजामुल (स० ति०) समापमुक्त, निरपमुक्त ।

नज्जरा (स० हो०) निज्जय ख० । निजघन, खनिश,
चपनी सम्पत्ति, चपना धन ।

निज्जा (स० पु०) विवाद, झगड़ा ।

निजामाजन्दनाय—एक संन्यकार । इन्होंने श्रीविद्या-
पूजापदति नामक एक संस्कृत ग्रन्थकी रचना की ।

निजामाजन्द प्रसाद—एक संस्कृत ग्रन्थकार, जिसने
मिथ्य । इनका बनाया हुआ 'महासिद्धपुरसुन्दरीपादुका-
ग्रन्थमोक्षम' नामक ग्रन्थ मिलता है ।

निजाम (स० पु०) १ इन्दोबन्दा, इलाहाबाद । २ हैदराबादके
नवाबोंका पदवीसूचक नाम । आसफ़जाहीयंगके संस्था-
पकने 'निजाम-उल-मुल्क'को उपाधि पाई थी ।

विशेष विवरण निजामशाहमें देखो ।

निजाम पक्षीका—दाक्षिणात्यमें निजाम-राज्यके प्रतिष्ठिता
निजाम-उल-मुल्क-आसफ़ जाहके चतुर्थ पुत्र । वे हैदरा-
बादके सिंहासन पर चतुर्थ निजाम बन कर बैठे ।
पिताकी मृत्युके बाद पैगवाने जब इनके भाई मलायत-
जङ्ग पर आक्रमण किया, तब १०५१ ई०में निजाम
बुरहानपुरसे चङ्गमदनगरकी ओर चला दिये । राहमें
उनकी सेनाने राजनाथ और तेलीगांवधर्मेशी नामक
स्थान लूटा । यहां महाराष्ट्रोंके साथ निजाम-सेनाका
घनघोर युद्ध हुआ । युद्धमें पराजित हो कर निजामने
पूनाके निकट भीमा नदीके तीरवर्ती कोरेगांव नामक
स्थानमें भाग कर अपनी जान बचाई । वे बेरारके
शासनकर्त्ता थे । १०५० ई०में रामचन्द्र-यादोन जब
पैगवा यालाजी बाजीरायकी सेनासे अपनी राजधानी
सिन्दघोरनगरमें नजरबन्द किये गये, तब निजाम-
पक्षीने जा कर उनकी रक्षा की थी । १०५८ ई०में
निजाम दमवसके साथ पक्षीका पक्षीसे और नगरमें लूट
मार मचाने लगे । जानूजी भीमनासे युद्धमें परास्त हो
कर बुरहानपुरमें भाग आये और पुनः उनके विरुद्ध यात्रा
कर युद्धियोगे हुए थे ।

इस समय निजामके सेनापति काबोजङ्गने पैगवासे
कुछ विरामसे कर चङ्गमदनगर-दुर्ग 'वश' होड़ दिया ।

इसी समय निजामके साथ पैगवाचार मुर दिई ।
पैगवाने १०६० ई०में भीमा तीरवर्ती पैदगांव-दुर्ग पर
पचना कक्षा जमावा और चङ्गमदनगरमें १६० गोम
दक्षिण-पूर्व उदयगिरि नामक स्थान पर निजामको
परास्त करके अपने चङ्गमदनगर और दोनताबाद हीन
लिया । १०६१ ई०में पानोपनकी मद्राईमें महाराष्ट्रगण
जब हतबल हो गये, तब निजामने पुनः प्रवरा और
गोदावरी नदीके मध्यस्थान पर निजाम मालुहके
पन्तर्गत हो कर मन्दिरदोलहस नक्षत्र कर डाला ।

जानूजीको परास्त कर निजामने औरताबादकी ओत
लिया और यहाँसे वे औरताबादकी ओर पयमर हुए ।
१०६१ ई०में वे अपनी भाई मलायतकी राज्यपुत्र और
काराबह कर निजामराज्यके सिंहासन पर पधिकृत
हुए । इसके बाद वे इट-इलिया-कम्पनीमें सैन्य-
साहाय्य पानेके लिये चला कम्पनीकी उत्तर सरकारके
चार विभाग देनेके लिये राजी हुए । इस समय
दाक्षिणात्यमें महाराष्ट्र और फरामोनाकी लूनी होत रही
थी । इस कारण पद्मरेज कम्पनीने यह दान सेना
पक्षीकार किया । १०६१ ई०में उन्होंने पुनः जानूजी
भीमनाके विरुद्ध लड़ाई डाल दी । पीछे उन्हें पुनः
पर चढ़ाई कर अपने ध्वंस कर डाला और नगरका
कुछ भाग जला भी दिया । घर लूट कर उनकी अपनी
भाई मलायतका प्राण-नाश किया ।

१०६६ ई०में कम्पनीको दिल्लीनरने उत्तर सरकारके
५ विभागके पधिकारकी मन्द मिनी । अपनी पधिकारकी
जमाये रखनेके लिये कम्पनीने कोण्डवकी-दुर्गमें घेरा
डाला । इसी वर्ष १२ नवम्बरको हैदराबादके माय
निजामकी सन्धि हुई जिसमें यह स्थिर हुआ कि पम्पनीको
वार्षिक ८ लाख रु० मिलनेसे यह निजामपक्षीकी
युद्धके समय सहायता पक्षीचाती रहेगी और यह नरकारी
राज्य पद्मरेजके पधिकारमें रहेगा । इसी साल निजामने
पद्मरेजकी सहायतासे बंगलूर पर (१०६० ई०में)
अपना दमक जमावा और कोलिंगोंका दमन किया ।
निजाम पद्मरेजकी ओर महाराष्ट्रकी सहायतासे और-
पक्षीपर टूट पड़े । पीछे ने पद्मरेजने दम करके और-
पक्षीके साथ मिश्र गये । १०६८ ई०में पद्मरेजके माय

शान्तिस्थापन करनेके लिए उन्होंने इसी मासके पुनः पट्टेजोके समुदायके विजयपुर गाँव के ५ माघ १० में कर दिमीकी प्रदत्त समदको मूल को कायम रखा। पट्टेज पदा समय निजामको कर नहीं देते थे; इस कारण निजामने पुनः १०८० ई०में पट्टेजकोके साथ मित्रता कर ली।

इस समय दारिद्र्यान्वये टोपू सुल्तानका प्रभाव बहुत बढ़ा चढ़ा था। इस कारण १०८८ ई०में निजामने दूत भिज कर उन्हें नियंत्रित किया कि वे पट्टेजोके विरुद्ध कोई कारवाही नहीं कर सकें। टोपू सुल्तानने इस पर हल भी ध्यान न दिया और वे मुहब्बे लिये तैयार हो गये। १०८० ई०में निजाम और पट्टेज उनका सामना करनेके लिये पयसूर हुए। इस समय नाना कदमबोस भी महाराष्ट्र के मेलाको साथ से उनको सहायताके लिये आ पहुँचे। निजामने टोपूको परास्त कर कड़ावा जिलेको जीत लिया। इसी वर्ष टोपूने अपने सेना करके कड़ावाके पलावा गुरमकोट्या-दुर्ग भी उन्हें दे दिया। बाद निजामने उस दोनों स्थान पर रैमण्ड साहबकी कारिगरीके लिये दे दिया; क्योंकि उन्होंने निजामकी पधेठ सहायता की थी। इस पर मन्त्रालयकार बहुत चमत्कृत हुई और कड़ावा पर आक्रमण करनेका भय दिया कर उन्होंने रैमण्डको उस स्थान छोड़ देनेकी कक्षा।

इस समय महाराष्ट्रके चम्पूतानमे वे दिनों दिन इसीसाध कीमे सगी। एक एक करके उनोंने पधिकार प्रदेश महाराष्ट्र के साथ सुपुर्न दिया। जो कुछ चंम उनके पास बच रहे, उनके लिये भी वेगवाकी कर देनेकी याच सुन।

गांधरावके राजत्वकालमें जानूजी भीमसे, गोपालराव और चम्पाय महाराष्ट्र-मराठोंकी सहायसे तथा अपने दोस्त विजय लखोजि की निजाम चली पुनाकी मुटनेके लिए पयसूर हुए। गांधरावके प्रधान सैनिक और मन्त्री रघुनाथराव भवभात ही पुनासे भाग गये। निजामचलीने मरामें प्रवेश किया और इसे मजबूत महल कर हासिलमें एक अगार उठा न रखी। वहीं लोट कर जय से गोदावरी नदी पार करके छोड़ी दूर पानी

बढ़े थे, उस समय रघुनाथरावने चम्पा मोठा टेल उस पर गोला बरसाता दुष्ट कर दिया। इससे निजामके प्रायः ७००० पयसान मेला विनष्ट हो गई और पयसे किसी तरह भाग कर भाचरवा को। ईदगाबादनगरमें उनको राजधानी थी।

धियवाने जब निजामने पधिकार माँगा, तब वे उस पर टूट पड़े और मुहब्बे लिये तैयार हो गये। १०८१ ई०में माधोजी मिश्रियाको मृत्यु होने पर महाराष्ट्र-मन्त्रिम नाना कदमबोसको चमत्ता और भी बढ़ गई। दोस्तारा मिश्रिया और तुकोजी कोनकर इस समय पुनासे थे। उन्होंने नानाका जहाँ तक हो सका, उत्तेजित किया। वाराहे राजा, गोविन्दराव गायकीराव और चम्पाय महाराष्ट्र मराठोंने जयका चामा रखते हुए नानाकदमबोसका साथ दिया।

निजाम मन्त्रालय लोके किमारे होते हुए विदमंभी पयसूर हुए। पयसूरनगरमें ५२ मोन दक्षिण-पूर्व मरुदोहा नामक स्थानमें जब वे पहुँचे, तब हरिण कदमके पुन गांधरावने उन पर आक्रमण किया और चम्पा तरह परास्त किया। १०८२ ई०में इस मरुदोहा मुहब्बे महाराष्ट्रके परास्त होने पर सुसमनेनने परास्ता की और यात्रा की। इस समय महाराष्ट्रने पुनः आक्रमण किया। निजामने उस पर चढ़ाई करनेके लिए पासदू चलीवाकी रैमण्ड गांधर्वके मांस भिज दिया। फिर पठान मराठार भासगानि भी निजाम पर हमला कर दिया। लेकिन पास की परास्त की जान से कर भागे।

१०८८ ई०में टोपूके मरनेके बाद औरंगजेबनगर पट्टेजोके हाथ लग। वैसे १०९० ई०में पट्टेजोके साथ निजामका ओ पधिकार उभरे यह जल लिये; हुई की कि निजामको महापराज लिये पट्टेजोके मिनाकी संका बढ़ाई साथ और जो कोई राजा उनके राज्य पर चढ़ाई करेगी पट्टेज उन्हें दमन करनेसे आन नहीं पावेगी। इस हरित सेनाके लिये निजामने कड़ावा छोड़ कर लिये पट्टेजके साथ भगा दिये। १०९१ ई०में इसी परास्त निजामने का ईदगाबादन देहाल हुआ। वैसे उनके बड़े बड़े

विजयनगर राज्यधिजारी हुए। ४१ वर्ष राज्य कर चुकाने बाद उन्होंने कई बार पञ्चरत्नों और महसूर-राज्य में भाग लिया था। इसमें प्रमुख मान किया जाता है, कि वे चण्डल प्रकृति के थे और कोई कार्य हदतमा नहीं करते थे। पञ्चरत्नों के साथ दोस्ती रखने पर भी वे उन पर विजय नहीं रखते थे।

निजाम उद्दीन—फरगनाई एक सुप्रसिद्ध मोरमुहय। इनके भाई का नाम मसूद्दीन था। दोनों भाई महम्मद बख्ति-यार के पक्ष में 'आमनाश' सेनिकता काम करते थे।

निजामउद्दीन गन्दायाम—१५१० ई० में ये सिन्धु प्रदेश के राजपट्ट पर प्रतिष्ठित हुए। कन्दहार के तुर्क लोग बार बार सिन्धु प्रदेश पर आक्रमण करते थे और इन्हें भय-दुर्ग तथा अपने राज्य का चत्तारंग छोड़ देना पड़ा था। इस प्रकार निरन्तर ही कर १४८२ ई० में इनका देशान्तर हुआ।

निजाम-उद्दीन—कहलूँ नामक था। मद्रास राज्यजिम्मेदारी इनके विश्व सरदार फतेसिंह को मिला था।

पहले इन्होंने मद्रास की पक्षीयता लोकार करवा ली थी। वोडे अपने बोदय के लिए इन्होंने खुद पयासाय किया और अपने भाई कुतबुद्दीन को मद्रास के समीप भेजा। कुतबुद्दीन मद्रास के पास जा कर भाई के प्रतिनिधित्व रूप समारम्भ का की। निजामउद्दीन यह भी स्वीकार किया कि कुतबुद्दीन एक दल सेना ले कर साहोराजका अनुगमन करेंगे। विजयनगर के निधे उन्होंने दो पठान सरदार वासल खाँ और राजीवजी को साहोरा में पावक रखा। अनन्तर मद्रास के एक छाया और घोड़ा पारितोषिक के दे कर कुतबुद्दीन को भेजा दिया। इस प्रकार निजाम-उद्दीन रणजिम्मेदारी पक्षीय कर्तव्य का भोग निर्विघ्नापूर्वक करने लगे।

इसी बीच इनके भाई वासल खाँ, राजीवजी और राजीव खाँ को साहोरा पर इनकी दृष्टि पड़ी और उनमें इन्होंने उसे अपने दायर में कर दो लिया। महम्मद उन तीनों में प्रिय कर दिए इन्हें मार डाला। १५०२ ई० में निजाम उद्दीन के मरने पर उनके भाई कुतबुद्दीन उनके स्थान पर बैठे।

निजामउद्दीन पट्टन, बजाजा—तब इन्होंने पञ्चरत्नों के पारस्यपञ्चके रचयिता, टिराटवासी बजाजा महम्मद सुदीय के पुत्र थे। इनके पिता की वाचश्राव में विधेय मान पड़ाना था। बाबर के मरने के बाद हुमायूँ जब गुजरात जीत रहे थे, उस समय ये उनके सहचर के रूप में आए हुए थे। यहाँ में इन्हें दिल्ली सरकार के पक्षीय मोहरी मिली।

कुछ समय बाद ये पञ्चरत्नों के पक्षीय गुजरात के बखि वा नेमा-अस के पक्ष पर नियुक्त हुए। इसी समय इन्होंने १५८१ ई० को तातो-उ-निजामो या तबकत-उ-पञ्चरत्नों नामक इतिहास की रचना की। इस पुस्तक में १२२८ से १५८४ ई० तक बङ्गाल के पक्षीय राजाओं का वर्णन इतिहास वर्णित है।

ये ऐतिहासिक बदायूँ के बंधु और भाग्यदाता थे। १५८४ ई० में बदायूँ नदी के किनारे इनका प्राणान्त हुआ। इनकी कब्र साहोरा नगर में जो इनका स्थान था उसी में बनाई गई थी।

निजाम-उद्दीन पोलिया, गेह—एक सुसलमान फकीर। ये सकरगञ्ज के गेह फकीर-उद्दीन के मित्र और सैयद अहमद के पुत्र थे। बदायूँ जिले में १२११ ई० को इनका जन्म हुआ था। ये सुसलमान सम्प्रदाय के मध्य विधेय गहाभाजन और विख्यात साधु समझे जाते थे। १२५५ ई० के अन्तिम मास में दिल्ली गलधानी में इनकी मृत्यु हुई। गयासपुर में उनकी कब्र के ऊपर जो स्मृतिस्तम्भ स्थापित है वह सुसलमान-समाज में तोयस्थान समझा जाता है। समय समय पर सुसलमानगण फकीर होने की इच्छा से इस समाधिमन्दिर में आ कर बान करते हैं। आज भी सुसलमानगण सामाजिक देने के लिए पर्व के दिन इस समाधिमन्दिर में आते और समाज पढ़ते हैं।

निजाम उद्दीन, गेह—दिल्लीवासी एक विख्यात सुसलमान फकीर। निजामाबाद में इनका जो समाधिमन्दिर है उसमें पारस्यभाषा में उक्तोर्ब १५११ ई० या ८१८ हिजरी को एक मिश्रान्वित मिलती है।

निजामउद्दीनपुर—तिरहुत के अन्तर्गत एक परगना। इस परगने में ८ जमींदारी लगती हैं। सीतामढ़ी में इनकी सदर बदायूँ है। इसके उत्तर और उत्तर-पूर्व में अम-

हीनी चीर बमका, दक्षिण चीर पश्चिममें मस्जिद बना
दिया गयो बसाहिता है। मोतामज्जेमें मोगल तख्ता
राफा रही परगनेके मन्थ हो कर गया है।

निजाम-उद्दौला, मन्थ—बङ्गालके शासनकर्ता मोरजाह।
पनो धाँडे ल्येउ पुन । ये १८६१ ई०में बङ्गालके
शासनकर्ता हुए थे। इनका पसल नाम मरजुनवाही
हो। इनको माताका नाम मन्विबेगम था। १८६१ ई०में
इनको मृत्यु हुई, पीछे इनके भाई मौकददौलाने बङ्गालका
राज्यभार संभाल लिया।

निजाम-उल्मुल्क बेहरो—एक ब्राह्मण सुतान। ये विजय-
नगरमें चलागत मोदायरी नदीके उत्तरीय किनारे पाठरी
नामक घासमें रहने थे। बचपनमें ही ये दाक्षिणात्यके
बाह्यनीचगोय सुलतान अहमदनगरको सेनामें दन्दो
हुए। पीछे सुलतानके पादशेखे इस्लाम धर्ममें दोषित
हो ये राजपरिवारके कोतदासीके साथ रहने लगे। सुल-
तानके ल्येउ पुनके मिश्रकने इन्होंने परबी चीर कारगी
भाषामें विगीय कापसि साब की। १४६१ ई०में सुलतान
महमदशाह २५ लाख दाक्षिणात्यके सिंहासन पर बैठे, तब
ये एकजत्तारोके पद पर नियुक्त हुए। ये राजाके बाज-
पचीके प्रतिपालक थे, इस कारण लोग इन्हें बेहरो कहा
करते थे। पीछे पीछे ये मैसूरके शासनकर्ता हो गए।
१४८२ ई०में महमदके मरने पर ये सनई पुन महमदके
राज्यभारपरिवाहनके लिए मस्योके पद पर नियुक्त हुए।
इसके कार्यके संतुष्ट हो कर सुलतानने १४८२ ई०में
बोड, अहमदनगर पादि स्थान उन्हें जागीरके रूपमें दिये।
पीछे इन्होंने जागीरका खार्तभार अपने बड़े लड़के
मालिक अहमद पर सौंप दिया और अपनी चमत्ताको
अपनिजह रमनेके लिए मालिक काजो तथा मालिक
सामाज नामक दो भाइयोंको दोमनाबादके शासनकर्ता
हो कर भेज दिये। कि कभी कभी सुलतानके पादशेख तख्ता भी
उलट्टन कर सामने थे। १४८८ ई०में विदर्भ-राजसभामें
ये गुप्तभाषासे मार खाये गए।

विताः मरने पर अहमद भागीच भाषासे परना
जागीरका खर्चासंचाल करने लगे। पीछे १४८० ई०में
सुलतानकी मृत्युको समझा करके अहमदने निजाम-

उल्मुल्क बेहरो नाम धारण कर अपनेको अहमदनगरका
वतन्तमें हुए तत्काल शोषणा कर दी। ये ही मस्जिद
निजामशाहीके मस्जिद कहलाता है। निजामशाही के हो।

निजाम-उल्मुल्क—दिलोवर सुलतान मसूद-उद्दीन अल्-
माविके प्रधान बजोर। १२५ दिवसीमें ये मसूद-को
पादशेख महमदशाह मोतनेको गए चीर लडे लोत कर
दिलोको भागिय पाए। मसूदने लडे कमाल-उद्दीन मह-
मद-ई-पाशु मैदद लुनायकीका उपाधिसे भूषित किया।
सुलतान अहमदशाहके राजसभामें बहावन, सुलतान,
हाली चीर साहोब पादि स्थानोंके शासनकर्ता ब्रह्म
विश्वीको लडे, तब ये लडे कर राजधानीमें मौजूदगी
नामक स्थानमें भाग गये। बचने भी फिर कोन प्रदेशमें
जा कर रहने लगे। यहाँ भा इन्हें पैग न लड़ा चीरभाग
कर ये मालिक इज्जतशाह महमद मन्तारीको मारवा
पड़े। इन्हें मरनेके बाद अन्तमय श्री अम्मा सुलतान
रसिया दिलोके सिंहासन पर बैठे। इस पर ये महमद
मन्तारी, अम्माउद्दीन जाला तथा चीर कुछ लोगके साथ
दिलोहार पर पड़े चीर बहुत लड़म मराने लगे। इस-
कारण दोनों पक्षोंमें कुछ दिनों तक लडे भी गया, इस
युद्धमें रसियाको जीत हुई और लडे पर निरहमद हो कर
दिलोके सिंहासन पर बैठे। इस समय रजिगर्क मस्जिद-
में लडे मरना हो, कि पदि अम्मावडे निजाम पादि
को राजधानीमें बुला कर कैद कर लें, तो निघर है, कि
मसूद-उल्मुल्क बहुत बल हो जायगी। पक्षमें बेवा
हो हुआ भी। निजामदलके अहमदशाहजालो,
मालिक महमदशाह कुली चीर लडे भाई रजिदाके इस
सुषुप्त कोटस्थमें मार खाये गये चीर कुछ कागालीमें
हूँय दिये गये। किन्तु निजाम-उल्मुल्क मरगुर बर-
दारके पादशेख-प्रदेशमें भाग कर भाग बसाई। यहाँ पर
१२३८ ई०में इनका मृत्यु हुई।

निजाम उल्मुल्क आसफजहाँ—दाक्षिणात्यमें निजामशाहके
वतन्तना। इनका पहला नाम आसफुद्दीन था।
इन्हें विना राजकीदगी की विरोधक मसूद-
आसफजहाँके विरोध कियागये थे और उन्होंने मसूद-
आसफ कार्य करते विरोधकविधि नाम की लो
मसूद, अहमदशाहके राजसभामें है

इजायमे सात राजारो मननवद्वारे पद पर नियुक्त हुए।
इसमें कुछ समय बाद ये दाक्षिणात्यके सुवेदारके पद पर
प्रतिष्ठित हुए थे। यही पद इनके अभिषेक-उत्सवमें
निजामराज्यमें प्रतिष्ठाकी स्तुति करना है। हैदरा-
बादमें इनकी राजधानी थी।

दाक्षिणात्यका सुवेदारके पद पर निजाम-उत्तमसूक्त
यहाद्वार फतेहगढ़ की स्थापना का कुलोचन। पश्चिमामने
भर बाये और महाराष्ट्रकी मृतने तथा उनमें चौथे वसुन
करनेको इच्छासे चोराहाबादकी पधनर हुए। यहाँ
पहुँच कर इन्होंने अपने पश्चिमामको मिहिके लिए वहाँ-
के फौजदार और जिलेदारोंको इस विषयमें एक पत्र
लिखा। उन लोगोंके जवाबकार करने पर इन्होंने
१७११ ई०में महाराष्ट्रके साथ लड़ाई ठान दी। लड़ाईमें
पराजित हो कर वे वहाँ से दो प्यार हो गये। इस
समय में मुरादाबादके फौजदार नियुक्त हुए, किन्तु योहो
को समय। चन्द्र इन्हें यह काम छोड़ देना पड़ा था।
कुछ समय बाद ये पाटन और मालवराज्यके सुवेदार
हूए। इस प्रकार अपने उचित कर इन्होंने दाक्षिणात्यमें
अपनी समताको जड़ मजबूत रखनेके लिये १७१० ई०में
'पामोरगढ़' दुर्गकी जीत लिया।

निजामकी इस क्रमिक उत्पत्तिको देख कर पदसुखावा
और दाक्षिणात्यके पमोर उत्तमसूक्त इन्होंने पमोरों नामक
दो सैन्य भाई बहुत ही जल्द उठे और जहाँ तक हो
सका उनकी बुराईमें लग गये। निजामको समताकी उर्वर
करनेके लिये इन्होंने पमोरों परने मेनापति दिलाकर पमोरों
वकी और राजा भीम तथा यजमिन् इन्हें सहायता या कर
निजामके विरुद्ध युद्ध-चोपणा कर दो। इस युद्धमें दिना-
वरको हार हुई और निजाम १७२० ई०में बुरहमपुर
नगर पर अधिकार कर बैठे। इसी युद्धमें दिनावरकी
मृत्यु हुई।

दाक्षिणात्यमें इस प्रकार चक्रवातोंकी चक्रावृत्ति कर
ये और महाबादकी और चल दिये और वहाँ शासनकार्य-
का सुव्यवस्थापन करके दिनोंकी मोटे। राजमें पालन
पकी यानि उन पर शासन कर दिया। युद्धमें शासन-
की ही हार हुई और वे मारे गये। इस प्रकार दाक्षि-
णात्यपुत्रोंकी निजामपद कर ये १७२१ ई०में

अपनी राजधानीमें पहुँचे। यहाँ मन्त्राति इनकी पुत्र
प्रातिर की।

सैन्य दोनो भाईयों के मरने पर १७२१ ई०में मन्त्राति
इन्हें पामनित कर अपना यजोर बनाया और साथ साथ
उत्तमसूक्त के विरुद्ध युद्धोप्य परिकल्पित, एक रात्रि, मणि-
मुक्त/प्रतिष्ठित एक कनकदान तथा बहुमूल्य एक खेरीही
पंगुली दी। इस समय मानव और पद्मदाबादवासी तथा
दाक्षिणात्यके महाराष्ट्रगण विद्रोही हो उठे। उन्हें दमन
करनेके लिये उन्होंने अपने लड़के गाजोउद्दीनको अपने
पद पर प्रतिनिधित्वमें नियुक्त कर दाक्षिणात्य जानेको
इच्छा प्रकट की। इन्होंने मन्त्राति के प्रायश्चात करके पुत्रा
हैदराबादमें नियुक्त गाजिम सुवारिजवा की उद्धारो पद-
की और इमाद-उल-मुल्क सुवारिजवा यहाद्वार बिजवर-
गढ़को स्थापित दिलाई। जो सुवारिज इतने दिनों तक
विजयसे साथ निजामके अधीन कार्य करना था, वह
प्राज्ञ इस प्रकारके मन्त्रालयामने गर्वित हो उठा और
अपनेकी दाक्षिणात्यका सुवेदार मान कर निजामकी
अधीनता उच्छेद करनेके लिये पधनर हुआ।

निजामके मानवकी और यात्रा करने पर उनके गन्तु-
पक्षीय लोग सन्नाह, सङ्घर्षदायक निजाम उनके भुक्तो
मिकायत करके काम भरने लगे। इसका यह फल हुआ,
कि करम-उद्दीनवा नामक एक व्यक्ति यजोर चुने गये।
राजमें जब निजामकी मानव हुआ कि यजोरोपद कोन
कर किसी दूसरेको दे दिया गया है, तब उन्होंने दिनोंकी
पक्षीयतिको पाया छोड़ दाक्षिणात्यमें निजामराज्य
स्थापन करनेका संकल्प किया।

आम्रवर्षमें पहुँचनेके साथ ही निजामने सुवारिजकी
एक पत्र लिखा और निजाम द्वारा वे जो उपलब्ध हुए हैं
उनका भी उल्लेख करते हुए पत्रावृत्ति दिया। सुवारिजने
भी बहुत जगती बातोंमें उन्हें जवाब दिया। दोनोंमें मन्त्राति
झिड़ गई। और महाबादने ४० मील दूर बराक के पलगत
'मज्जर गेनडा' नामक स्थानमें लड़ाई होने लगी। दाउद-
खानापीके भाई यहाद्वारवासी या कर सुवारिजका साथ
दिया। दोनों ही युद्धमें पराजित हुए और सुवारिज
अपुत्र मार डाले गये। यहाद्वार पद्मदाबा नामक
उनका एक पुत्र थापात या कर युद्धमें मार मारा और

महम्मद-गगर-दुर्गमें जा कर पायव निवा । निशामने
चौरदाहादमें देहराबादकी ओर चपपर हो कर हम
बागवतकी चर्च चौर जामोरमें सुग कर दिया । मोट्टि
इसमें हमें भुलायेमें टाल कर दुर्गकी तानों में की
चौर लय दुर्ग पर अधिकार कर बैठे ।

निशाम चपने जामे की कभी भी दिक्कोले मखाट-
मं गते विवहापारी न दृष्ट । दिक्कोले महम्मदगगहमें
यद्यपि चमोरहा पर हमने होन भी निवा था, तो भी
उनको बुराईको चौर हमका तनिक भी ध्यान न था ।
दिक्कोले राजकीय कार्य मंजाना जिस काममें हमोंने
हस्तक्षेप किया था, उसमें तेमुरमंगका मोक्ष सूत्र बद्ध
गया था । हासिनाल्लका मामलमार पहच करने पर
भी दिक्कोले साथ हमका कुछ मो चमदाय न था । मखाट,
महम्मदगगहमें प्रवेश हो कर हमें 'पामक जाह'की
उपाधि हो चौर साथ साथ मसिमुका लया बहुतने जायो
भी दिये । हमका ही नहीं, मखाटने हमें पुनः चप-
मदाबाद राज्यके लुईदारके पद पर नियुक्त किया ।

नादिरगगहमें जब भारत था कर पटक पर अधिकार
जमाया, हम समय निशाम मखाट, महम्मदगगहके
सकील-उम-सुलतान थे । चमोर-उम-उमहा चो दोरानकी
मृत्यु होने पर वे 'मोरचको'के पद पर नियुक्त हुए ।
जब नादिरगगहमें दिक्कोले चौर मुंज केरा, तो निशाम
ना-दोराणकी योगाह पकम कर उनमें मामने का पट्टे से ।
हम समय बुर्जान-उम-लक नामक एक मनुष्यने विनाम-
पातकता कर चौर ईयादरतन को नादिरने जा कहा
कि, 'ना-दोराण केने लपवृक्ष स्थिति चौर कीर्त देपनेमें
नहीं धाता, सुनरा निशाम जो उनमें पदको चाकाया
करता है, वह चम्याय है । यदि हमने भुलायेमें डाल
कर निशाम चौर महम्मदगगह के कर लिये जाय, तो
गंधर्व है कि चाप गंधर्वग जा कहने है ।' उनको
मन्त्रपात्रे सुष्ट हो नादिरगगहमें जब महम्मदकी चपने
बागमान धानका निमन्त्रण किया, तो मखाट, भा
हमलकने साथ बहा पट्टे से गये । नादिरने मखाट में
विमलपुष्टक कहा, 'यद्यपि चपने में कहा हो कोट जाने
हैं चो । जिसने माय मल है, वे चापके साथ रह कर
भी। बागिप परच करे ।' दूसरे दूसरे मन्त्रिकों के चपे

जामे पर नादिरने बुर्जान वरामगगदुमार मखाट, निशाम,
चमोर चो, हमहाक चो, कावेट चो, रिहराज चो चौर
महादिरलीको कोट कर दिया ।

हमने बाद नादिरगगहमें एक दिन विनामपातक
बुर्जानकी बुया कर कहा, 'हमने जो कन्दहारमें हम चाप
करीक मुदा देमक कहा था, जो कहा है, भायो । तीन
दिनके चमर लमा नहीं करनेमें, मन्त्रादे साथ जायने,
याद रहे ।' निशाम-उम-मुल्क भी जमो प्रमद उचित
थे । नादिरने बहुत काममें जा कर दोनोंकी चपने कर,
मयन कहे, चतुर-पुद्गामनि निशामने चपका चमर देता
बुर्जानको विनामपातकताका बदला मनेने लिये चपने
पामारिक साथकी तो दिगा लया चौर हमें बड़ा जड़ा
कर कहा, 'नादिरने बहुत मर्मभेदा मने' कह कर हम
जोनोंका चपमान किया है । चतः चमो नादिरके बायने
मरनेकी चपेया पामहम्या कर प्रागम्यम करना चप
है । हम प्रकार समझा कर दोनोंने बागहम्या करनेका
मंकल्प किया । राहमें जामे ममद दोनाने प्रतिष्ठा की,
कि पर पट्टेनेके साथ ही विष था कर दिहलाम
करेगे । पर पट्टे चर निशामने चपमा चमिनाय पद
किलेमें कह दिया । बाद में एक चरनमें मरकन टाल
कर हमें दो गये चौर चपनेकी एक कपड़ेमें टक कर मो
रहे । बुर्जान यह रहस्य कुछ भी नहीं जान मने चौर पूरे
प्रतिष्ठापुमार लकोने दिव लः कर मापमान किया ।

हरे कीर्त चपने है, कि बुर्जानके बाद निशामकी
कीर्त चपमा न थी । कर नादिरगगह भारतमयमें जा
कर मखाट, महम्मदगगहके साथ भट्ट रहे थे, तो वह
दुर्गमें निशाम चौर बुर्जान दोनों चपलाने थे । चमो मुर्गमें
बुर्जानकी मृत्यु हुई थी । मरिदगगह के ।

नादिरगगहके चपे जामे पर चमोरगगहमें हमका पद
चौर हमहाकचपने पालवाक दावाकी का पद लाया । वे
दोनों मखाट के बड़े विद्वान्त हो चपे । हम कर
निशामने पुनः चपने चतुरता दिव लः चपे ।
जब हमने बागमान पर चपने कर चपलाने हो गये, तो
वे दिक्कोले कोट कर निमन्त्रणमें जा कर चपने लने
चपनेमें मखाटकी मामलमरी दिहल-पारकर
चमोला जा कर चपे पुनः बागमनेमें कोट

निजाम जन मुहम्मद ने अपनी सक्तनीमें राज्यशासनके नियमोंमें बहुत कुछ हेरफेर किया। मराठासैन्ययुद्ध का तीरदारोंमें जो 'बोद' मनुष्य रहते थे, उन्हें इन्होंने बन्द कर दिया और यह नियम लाये कि जो लोग रक्तमय रेतदारावादन राजकीयमें पावेंगे। दूसरे जगह कहीं भी वे लोग रहने नहीं कर सकते। इनके पचास मराठासैन्यदार छोटे छोटे भूमिदार या निरोह प्रजाये जो एकड़ दोड़ (१०) इंचों विस्तरमें 'सरदेगमली' का माल करते थे। उन्हें भी इन्होंने बन्द कर दिया। इस प्रकार इन्होंने बमरि मरदाग, गुमस्ता और राहदारी सभी कार्य ठाट दिये। पड़ने जो मनुष्य राहदारोंका काम करता था, उनमें पधिक और व्यवसायो लोग बहुत तंग रहते थे। निजामने इस प्रथाको सदाके लिये बन्द कर दिया था जिसमें लोग बिना किसी रोक टोकसे मनमाना विधरण कर सकते थे। मरदागमाइकी मृत्युके ३० दिन बाद १०४८ ई०की २२वीं मईकी वे इस भोजमें बैठ गये। सुईपुरनगरमें गाइबुईन-उहीन-गरीबके समाधि स्थिरमें इनकी कब्र बनारि गई थी।

निजामके छः पुत्र थे,—गाजीउद्दीन, नागिरजद, मनाबतजद, निजामउद्दीन, बसमतजद और सुगनउद्दीन।

इन्होंने 'दोयान बामक-निजाम-उल-मुल्क' नामक एक प्रजा किया था। यह राज्य टोपू सुलतानके पुस्तकालयमें रखा गया था।

निजामत—शासनप्रकार का विचारालय।

निजामप्रान्त—मद्रास प्रदेशके कृष्णा जिलान्तर्गत ममुद-तोरस एक बन्दर। यह प्रान्त १५° ५४' ३०" उ० और देशा० ८०° ४२' ३५" पू०के मध्य अवस्थित है। यह स्थान लकनको वादुनके लिये विगोच प्रसिद्ध है। नमकके निवास होने का भी मइन्नेपल्लकी भिजा जाता है। पच्छिमीमें मयमें वहने भारतके पूर्वी किनारे इस बन्दरमें वाणिज्य व्यापार किया। १६११ ई०की २६वीं फगस्तकी उठनेमें यहांसे पल्लद्वय चले मुहम्मदमें भेजा। १६२१ ई०में इस कारगारना भी घोला गया। उत्तर सरकारका पंग वतन कर निजामने इसे फरानोमियोंको दे दिया। निजाम मनाबतजदने १०४८ ई०में यह बन्दर पच्छिमी-की उपय किया। किरस्ता इस बन्दरका उत्तरे कर

गए है। बोसन्दाजीकी मामय-भेदाने यह बन्दर पच्छिमी-की मंदार किया।

निजामपुर—बहामनका एक बन्दर।

निजामबाई—दिओनर बहादुरशाहकी सहियो और मन्दाट-महादुरशाहकी माता।

निजामवाद—पाजमगदना एक गहर। यह पावोन नगर जिलेके सदरमें ८ मील पश्चिममें अवस्थित है। सुगन-मान राजाओंके पहिले यह हिन्दुओंके पक्षिदारमें था। निजामउद्दीन नामक एक सुमनमान फकीरको कब्र यहां देखनेमें पाती है। कब्रके ऊपर पारणभाषामें उल्लेख १५११ ई०को एक मितानिधि है। प्रवाद है, कि वक्त निजामउद्दीनने नगरका नाम 'निजामवाद' पड़ा है।

निजाम मूलकावा, सैयद—एक सुमनमान सेगपति। इनके पिताने किसी मद्रास कन्थाके रूप पर मोहित हो कर उनसे विवाह कर लिया था। उसी मद्रास-कन्थाके गर्भमें मुर्जजा उत्पन्न हुए थे। वे अपने पिताके पत्न्यत्व विधे। मन्दाट-शाहजहानने राजत्वके पहले यहाँमें इन्हींमें पिताके जरिए १ हजारों सेन्त्याव्यवस्था पद पाया था। पिताके मरने पर इन्होंने मूलजाओंको उपधि ग्रहण की।

दाक्षिणात्य प्रदेशमें मन्दाटकी पक्षीय कार्य करते हुए इन्होंने वहाका विशेष नियंत्रण कर दिया था। पीछे ये सप्तनजके फौजदार हुए। मन्दाट-शाहजहानने राजत्वके २४वें वर्षमें इन्हें विहाभोप्रदेशके राजसमे २० लाख रुपये वार्षिक वृत्ति मिलने लगे।

निजामराज्य (देवरावाद)—दक्षिण भारतका एक देसीय राज्य। यह प्रान्त १५° १०' से २०° ४०' उ० और देशा० ०४° ४०' से ८१° १५' पू०के मध्य अवस्थित है। बेरारके माय मिला कर राज्यको पात्रति पयमकीय पशु-भुंज-को है। यह राज्य दक्षिण-पश्चिममें उत्तर पूर्वमें प्रायः ४०५ मील मन्दा और तना की चौड़ा है। इसके उत्तर और उत्तर पूर्वमें मध्यप्रदेश, दक्षिण और दक्षिण-पूर्वमें मन्दास प्रदेशके पन्थागत राज्य, पश्चिम और उत्तर-पश्चिममें बम्बईप्रदेशके पन्थागत राज्य है। बेरारकी पन्था कर सेनेसे पन्थागिट निजामराज्यके पूर्व विभागमें शुमनेन, नल्लोड, महदुवनगर और नगाजक

उत्तर विभागमें सेरदक, दम्दोर, बिदर, यलगुलुम और मिशुरतपट्ट, पश्चिम विभागमें बिदर, नन्दे, नम, दुर्ग, दक्षिण विभागमें रायपुर, निजामाद, बीजापुर और गुमनाग तथा उत्तर-पश्चिम विभागमें बीजाबाद, बीह और पामंदी जिला विद्यमान हैं। इनको राजधानी हैदराबादमें है। मन्दाज प्रदेशके बराबर इस राज्यका क्षेत्रफल ८२८८ वर्ग मील है।

हैदराबादराज्य समुद्रसे किनारेमें प्रायः १२६० फुट ऊँचे पर अवस्थित है।

यहाँ बहुतसे बड़े बड़े पहाड़ हैं। किन्तु किसी पहाड़की ऊँचाई तो २५०० फुट तक चली गई है। गोलकुण्डामें जो दुर्ग वा भेगानिबाध है, वह समुद्र-पृष्ठसे प्रायः २०२४ फुट ऊँचे पर बना हुआ है। ताम्रों नदीकी उपत्यका भूमिका जन-सेवक पश्चिमकी ओर काम्य उपभागमें गिरती है। इसके सिवा और जितने जलके स्रोत हैं वे यही उपभागमें गिरते हैं।

पारी और पर्यंत रहनेके कारण यहाँको जमीन पय होती है। बान्नापाट पर्यंत-श्रीको २०० मील, हज्रादि-श्रीको २५० मील और गाविलनकुश्रीको १२० मील विरलत है। देवगुडा और मदीके समुद्रसम्यल पर तथा मीमोक नदीके तीर-वर्ती उपत्यका प्रदेशमें विरलत कोह और पयारियाकोयनेकी खाज है।

हैदराबादे १०० मील उत्तर-पूर्वमें और भी कोयनेकी खान देवनेमें जाती है।

हैदराबादमें जो सब नदियाँ प्रवाहित हैं उनमेंसे ये सब प्रधान हैं,—गोदावरी, पुर्वा, प्राचहिता बरदा, देवगुडा, कल्या, भीमा और तुलमहा।

जलवायु साधारणतः स्वास्थ्यकर है, जिकेमें जहाँ वायुका प्रकारमय निर्दिष्टा है, वहाँ चतुरोयकी बहुत सिकायत है।

इस राज्यमें अच्छे अच्छे घोड़े, हाथी और ऊँट मिलते हैं। सोदागर भीम बहुत दूर दूर देवने तक यहाँ देखने जाते हैं।

यहाँकी जमीन साधारणतः उर्वरा है, 'जालजमीन' नामक जो एक प्रकारकी लालचर्च निर्मित जमीन देवने में जाती है, वह बरमोदतिरिडे अर्थात् यवने काष्ठन

है। जमीनमें बाद देवने सब मसजद अच्छी जमान मरती है। यहाँ दूरको सेना बहुत दूर तक विस्तृत है। राज्यमें आरियनके चनेक दरार हैं जिनके समये यहाँके लोग ताड़ी तैयार करते हैं। धान्य, गन्ने, तरफ तरफ-की कुदरी, ज्वार, बाजरा, मरनी, जिन, ईँदो, प्याज, कदगुल, गाजर, धनिया, मूली, गोम धान, जाम धान, चादिये सब बहुत यहाँ पृष्ठ उपजाते जाते हैं। मेडिन रुई, भीम और ईशको सेना ही मरने पश्चिम होती है।

रोजनाबादका जाल चतुर दूर दूर देवनेमें भीजा जाता है, बहुतमें मरनेके छोड़े, जाला, मांस, माय और तरफ तरफके मांस मिलते हैं। यहाँ गोबरका माविज्य जोरमें चलता है।

इस राज्यमें ७८ महर और २००१० दाम चलते हैं। मोहनप्या एक करोड़के पश्चिम है जिनमेंसे मुसलमानोंको मर्या मरवे ज्वादा है। वे भीम बर्द मन्दापाय है जिनमेंसे मेष, भैयद, मुगल और पजान प्रचाल हैं। मुसलमानके बाद हिन्दूकी मर्या है। राज्यके दक्षिण-पूर्वमें सैलुग भाषा, दक्षिण-पश्चिम और कल्यानदीके निकटवर्ती स्थानोंमें कन्नड़ो भाषा, उत्तर और पश्चिम प्रदेशमें मराठा भाषा प्रचलित है। इनके सिवा कई एक स्थानोंमें माना प्रकारको मिश्रित भाषा-का व्यवहार होने देवा जाना है।

निजामराज्यमें दूरे, मरनी, जेना, जिम, देवो कपड़ा, जमड़ा, धान्य-पान और जमजान कृष्णादि माविज्यके सिवा जाला स्थानोंमें भीज जाते हैं। बिदर-नगरका सुन्दर चित्रित धान्य-पान, बीजाबाद, कुलवुग बादि स्थानोंका सुन्दरी पादका देवो कपड़ा बहुत मयकर है, दोलतपुर दुर्गके निकटस्थ जालमपुरासमें जो कपड़क कामज बनता है उसका नाम प्यार है।

बराबरके प्राय निजाम-राज्यको प्राचिक पाद काज पार करोड़की है। इसमेंसे तीन चर राजपद निजामके भिन्न भिन्न मासलकर्ताओंके दोर एक चर इटिम मर-दंष्टके काम चोरोदे संवर्धान होता है।

इटिम बरदार जिन स्थानोंको राजपद मयुन बराने है उसमें एक स्थानका चर निजाम बर तो कुछ

इसका हमें गिनामकी मोटा देनी है, यहाँकी राजपूत-
गणपुत्री विधि आधारबनवाये हुए विधीत है। जहाँ
पर भी बदन बचप हीने है। मन्ना वम बममका पाया
पदया वमका मन्ना मन्ना बममका देनी है।

ऐतद्वाच्यं श्रमसंग्रहो यत्र स्वल्पं दृश्यमानं है।
तत्रां शक्तिविद्या नामक एक प्रकारकी मुद्रा बनती है।
यह मुद्रा पाश्चात्य छोटी चीजें घर भी लग्न और मोममें
सजावटी निकाली जा सकती है। पूर्व समयमें हम राजपूत
जाति स्थायी में मिग्न मिग्न पारल्लिका जिन्दा बनता
या और दृश्यमानकी संख्या भी अधिक थी।

तुर्गिनीय पासक जाण लो मुगल-सन्नाट् थोरदा-
जिहने विव्यात सेनापति थे, बहुत दिनों से दिनों राज-
धानीमें रह कर इन्होंने युद्ध थोर राजनीति-विषयमें ससा-
धारण समता दिगमाई हो थोर १०११ ई० में मित्रा-
मल-मुल्ककी सपाधि पा कर ये दाक्षिणात्यके सुदेशर या
शामनकलीने पट पर नियुक्त हुए। इन्होंने समयमें
युद्ध सपाधि इनको यशंगत हो गई है।

इस समय मुगल-राज्यमें अन्तर्दिवाद कम रहा था और महाराष्ट्रगण कई बार इस पर आक्रमण कर चुके थे। अतः आसफ़ज़ाहने अपने व्याधोगतामी घोषणा करनेका अच्छा अवसर देखा। बोले १०४८ ई०में मे व्याधोग राजा बन गए और हैदराबादमें राजधानी बनाई गई। आसफ़ज़ाहने मने पर राज्यपत्रिके निष्पत्तिसे उत्तराधिकारिगण आचममें लड़ने लगे। आसफ़ ने हितोद्ययुक्त आभिरक्षण उत्तरे मने समय राजधानी हैदराबादमें थी। अरुन्ध-मंशद सुननेसे ही इन्होंने धन्यभार पचने कर्ममें लिया। मेरा भी बहुत आसानीसे इनसे अधिक ही गई और इन्होंने यह घोषणा कर दी, कि मने समय विता दफ़े माईकी उत्तराधिकारीसे यचित कर गए हैं। मुत्तफकरजंग आसफ़ज़ाहकी एक विध करवाने उपपन्न हुए थे। कहते हैं, आसफ़ज़ाह मने समय उन्हीको अपना उत्तराधिकारी बना गए थे, अर्थात् हे भी राजा होनेके विषे लोगिय करने मने। ऐसे समयमें अरुन्ध और क्साभीमीने दासिपान्त्वमें अपना अपना प्रभुत्व स्थापन करना चाहा। अरुन्धोंने आभिरक्षणका और क्साभीमीने मुत्तफकरजङ्गका साथ दिया। बोले

जो दिनोंमें भीतर फरासीसी-पक्ष-नारियोंके समी-
 मानिये हो जानेसे वे मुजफ्फरगंजकी ओर कर गये
 गए । इस समय मुजफ्फर नि-गुहार हो गए । पतनः
 नारियरगंजमें लगे' केद कर गिया । किन्तु नारियरगंज
 छोड़ कर दिनेसे पन्धर मील गये । यह मुजफ्फरगंजमें
 पधनेको टाचिपायाका राईदार दीन दिया । मुजफ्फर भी
 बहुत दिन तक उस राईदार भोग करन लगे । एक दिन
 पठानमेवाने उसकी जान ले ली । शस्त्रों से, मुजफ्फर जब
 राजा होनेसे लिये लड़ रहे थे, तब इन्हीं पठानोंमें से उसकी
 यथेष्ट सहायता पहुँचाई गी । किन्तु राजा होनेसे
 बाद मुजफ्फरगंजमें कुछ भी लक्षप्रता न दिगनाई गी
 और न लगे' कुछ पुरस्कार हो दिया । इस पर वे बहुत
 कुपित हुए और इन्हीं' मार डाला । इस समय पुनः
 राज्यमें पराजयता फैल गई । फरासीसियोंने मुजफ्फर-
 गंजके गिरफ्तारकी लपेटा कर नारियरगंजके भाई
 सलाबतगंजकी ओर पर बिठाया । इससे कुछ दिन
 बाद ही पानपञ्जाइके प्रथम पुत्र गाभी-वहीनू राज्य
 पानकी कोशिश करने लगे । किन्तु पक्षमात् उसकी
 श्रेष्ठ्य हो गई और सलाबतगंज ही एकलव्य निजाम हो
 कर फरासीसियोंके मन्त्रवायुमार राज्य करने लगे । इस
 समय फरासीसियों' और पन्धरजों'में जो लड़ाई पा रही
 थी तब और भी बढ़ गई । किन्तु पन्धरजों'पर लड़ाईके
 साहस और समर्थनेपुस्तमें फरासीसी व्यतिथ्यता ही कर
 अपने अपने उपनिवेशोंकी रक्षाके लिये सलाबतों'की
 पधे गये ।

इस समय मन्त्रालयमें पट्टेरीजीके साथ मन्त्रि कार को
 पोर लगे मन्त्रि के समानुसार लगेने क्षराभीमिरीको
 पत्तने राज्यमें गिराव मनाया। १०११ ई०में मन्त्रालय
 पत्तने भारि निजामपत्तने राज्यपत्तन हुए पोर १०१३
 ई०में मार जाले गये। १०१४ ई०में निजाम पत्तने
 साथ पट्टेरीजीको इस मन्त्र पर एक मन्त्रि पट्टेरी, कि निजाम
 पत्तने पट्टेरीजीको मरकार प्रदेग दे देने पोर जदगत
 पत्तने पर एक टय मिला दे कर पट्टेरी निजामको मना-
 यता कोने; किन्तु जब मन्त्रालय पामनकता न होनी,
 तब चार्जिश्न को लाय ह० कर देने। निजाम मा पत्तने
 मिलापोने पट्टेरीजीको मरकता जदगत राजा हुए पोर

मारा २० मिकर निजामने इलाक़ासारी या मयकाशिक
दास मिला दिया। निजामके पास ७१ वही कमाल, ६१५
कोरी बमाल, १११ मोल्दारा, १७०० चामासोरो, १२०००
पदानिक सैन्य और बहुतसंख्यक मिश्रित सैन्य है।

निजामशाहका राजधानी ईदराबादमें है जिनको
परिधि १ मोल्दो कम नहीं होती। यह नगर बाघौर
द्वारा घिरित है। यहाँके प्रायः अधिकांश अधिवासो
माहदी और मुहमिय हैं, ईदराबादके चारों ओर नाना
मिस्माता रहनेके कारण नगरका सामाजिक सुन्दरता
बहुत मनीस है। यहाँको कुलामसजिद सबसे बड़ा
दूर है। गहराके भागे ओर सुन्दर सुन्दर दम्य ओर
मनीस उद्यान विद्यमान हैं। यहाँका कावेज वा
'बार-मिनार' बहुत प्राच्यजनक है। यह मकान
४ प्रकाश गुम्बजके ऊपर दण्डावमान है और नगरको
प्रधान प्रधान ४ महुके इलीफ़ान पर या कर मिली हैं।
यहाँ यह गुदासके काममें या गया है। विशेष विवरण
ईदराबाद लक्ष्मी देखो।

निजाम शक—एक सुनयमान जनवादी (मिस्त्रो)। पटना
नगरके समीप गेरगाहके साथ युद्धमें परास्त हो कर
भागते समय मन्नाट कुमायूँ चौबानदीमें डूब गये थे।
इस समय यह शक नदीमें जल से ला रहा था। इसकी
मजूर मन्नाट पर पड़ी और बुढ़ो दगामें लड़े देत यह
भट उनके पास गया और सहायि लड़े किनारे उठा
लाया। मन्नाट प्राय वा कर उसे अपनी साथ आगे ले
गए और हलप्रता दिगानेके लिये उसे यहाँके सिंहासन
पर बिठा साथ दिनके लिये राजा बनाया। इसी प्राय
दिनके भीतर इसमें अपनी नाम पर समझके मिके लसाये,
पनीरको उपाधि पाई तथा धनुर धनरय दान किये।

निजाम-शाह—दाक्षिणात्यके निजामशाहों राजवंशके प्रति
छाता। ये बागमहीशक राजसमूह निजाम उस
मुल्क-मैहरोके पुत्र थे। इसका पञ्चम नाम यदमदगाह
था। पिताके मरने पर उन्होंने बागमहीशकी पत्नीसता
त्याग कर दो और १४८० ई०को यदमदमरने कापोन-
भावमें अपनीकी राजा बतला कर घोषणा कर दी। उस
समयमें से कर दाक्षिणात्यके निजाम-शाही राजाओंने
१४९१ ई० तक शासन किया। इसमें मरने समय
(१५०८ ई०) तक राज्य किया था।

निजामशाह बागमही—दाक्षिणात्यके बागमहीराजवंशका
एक शासक राजा। १४९१ ई०में जब इसने निता
कुमायूँशाहकी मृत्यु हुई, तब ये दाक्षिणात्यके सिंहासन
पर बैठे। इसको माता विदुगे, माय माय चाना भी
थी। उसीने मन्त्रियोंमें बुढ़ा कर कहा, 'मैंने पुत्रको
उमर पम्पो केवल पात्र मय' की है—यहूँ बचा है। इस
कारण इसकी अभिभावकद्वयमें से राजकाय सत्ताजती
और मन्त्रिपण्डितमें या दूसरे दूसरे स्थानोंमें जहाँ राज्य-
सम्बन्धों विराम प्रकारका विचार होगा, मिला पुत्र नहीं
उपस्थित रहेगा।'

यानक निजाम बनपनने दो उमाही, मेरवी और
पपनी माता तथा दूसरे दूसरे परामर्शदाताओंके निकट
विशेष विनयी थे। उनके पिताके पत्न्याचारमें प्रजा को
बहुत तन्त्र था गई थी, उनके तथा उनकी माताके ऐसे
विनय और प्रजासम्वत्ततामें से मरके सब समुद्र हो गईं।
इस समय राज्यप्रबल दृष्ट करके लिये वाराके शासन-
कर्त्ता महुमुद-गयाम वजोरके पद पर और तैमूरके
शासनकर्त्ता यवाजाजकान् वकील-उस-मन्तनत्त नियुक्त
हुए।

बालक और स्त्री द्वारा परिचालित राज्य सतमा
समतापक नहीं हो सकता, यह सोच कर उसीमा
और तैमूरके हिन्दूराजाओंने निजामके विषय सुधवाता
कर दो और दोनो की विदमके समीप परास्त हुए।
प्रांति मानवराज महुमुद विल्लीने जब बागमही-राज्य
पर चालसय किया, तब यानक निजामने उनके साथ भी
विदमके समीप लड़ाई दान दी। इस बार निजामको
ही हार हुई। बाद रानी पुत्र निजामको मे कर किरीश-
बाद लम्बो गईं और यहाँमें गुजरातमें दून भीत कर
सहायता मांगे। गुजरातके शासनकर्त्ता महुमुदगाहको
सहायतामें मालवराज परास्त हो कर काल्यको भोट
पाये। १४९२ ई०में मानवराज महुमुद विल्लीने
पुनः दोषतावाद कोने हुए, बागमही राज्य पर आया
माया। इस बार मो के पराजित हो बादप मनेको साथ
हुए। इस सब युद्धमें बालक निजाम मय उपस्थित
था। १४९१ ई०को विवाहसममें निजामशाहको महु
हुई।

निजाम-शाही—बाघिबान्नीमें जब बाघको राज्य पचा-
पतनको नाम हुआ, तब उसमें एक छोटे छोटे राज्य
संगठित हुए। इसा बादशाहों, इस कुतुबशाही, इस
निजामशाही, इसा रमादशाही और इसा बरिदशाही
राज्य। इनमें निजामशाही राज्य विजयनगरमें सुलत-
मान धर्मावधनी किंसी ब्राह्मणकालमें १४८० ई०में
स्थापित हुआ। इसको राजधानी बहमदनगरमें थी।
१४०२ ई०में बाराका रमादशाहीराज्य बहमदनगरमें
राज्यभूत हुआ। १४८० ई०में १४१६ ई० तक निजाम
मार्जावशाही राज्य किया था। निजामशाह देखो।

यहां मान बहमदनगरका माघोन नाम था। यहाँत
बागान है। यहाँ बहमदनगर का बाघपोनेनाको माघुच
रूपमें बारात कर लुचरको छोटे थे। योही राजकीय
समता बहम कर उन्होंने यही मरतकके लुचर में तब
बहमदनगर धारण किया और १४८४ ई०में बहमद
लुचरमें राजधानी बसा कर बागको ले गये।

बहमदनगरमें राजाओंमें यह देग भिन्न भिन्न
जिन्नाओं अथवा सरकारोंमें विभक्त हुआ। एक एक
जिन्ना पुनः परगना, करनात, समत, महान और
तालुक तथा कहीं कहीं देग और बाला नाममें विभक्त
हुआ है। तब बहमद हिन्दू कर्मचारियोंको राजा, माघच
और राजको उपाधि मिलती थी तथा जितने ही हिन्दू
सैन्यदलमें नियुक्त होते थे।

बहमदनगरमें द्वितीय राजा बुरहान निजामने
१४०८में १४५१ ई० तक शासन किया।

द्वितीय-निजाम-शाह (१४५१-१४ ई० तक) बहमद-
नगरके तृतीय राजा थे। १४५१ ई०में जब विजयनगरके
राज राजा और ब्राह्मणोंके सभी बादशाहोंने उनका
घोटा किया, तब वे लुचर बसाकर वरना ब्रिटेन थे।
मलाबतु प्रति १४६५में १४८८ ई०में मलय देशमें
विजय लब्ध की थी।

१४८४ ई०में यह बुरहान निजामने मङ्गल बहादुर
जिनको लमर बहुत छोटी थी, बादशाहानमें काबिल
हुआ। एक वर्ष बाद वे मलाबल पर बिठाए गए।
१४०० ई०में बहमदनगर सुलताने बाघलगा। १४००
ई०में माघिब बहमरने सुलतान निजाम (२४)को मङ्गल

सम पर बाघिबान्नी कर विजय समता और बाघिबान्नी
बहमद किया। १४०० १४०१ ई० तक माघिब बहमर
नाममाघिब राजा रहे, योही बहमदनगर राज्य पचमो
बाघिबान्नी को कर दिमोमरने बाघोन को गया। १४११
ई०में सुलतान निजाम बादशाह और निजाम पुनः योही
लमरने पुन मङ्गलमाघल पर बिठाए गए।

निजामशाह—१ पैदराबाद राजाके सुलतानशाह अमी-
नोका एक जिन्ना। यह बहमद बहमर निजाम
बहमता था। बहमद उत्तर माघिब और बहमताबाद,
पूर्व कोमलनगर, दक्षिण मङ्गल और दक्षिणमें माघिब है।
भूगर्भात् १४८८ वर्गमील और लमबन्दा ४४०१६०
है। पूर्व और दक्षिणमें और वर्तमानमें दो दो जंगल
है। यहाँका लममें बड़ी नदी गोदावरी माघिब और
पदोनाबादकी सीमाको निर्धारित करती हुई बह गई
है। इसमें पलाश और कई एक नदियाँ इस जल
को कर बहती हैं।

यहाँ बहुत तरहकी लकड़ों पाई जाती है और यहाँ
घने जङ्गल भी देखनेमें आते हैं। इस जङ्गलमें बाघ,
भालू, बाता, भेड़िया, जङ्गल भूखर, हरिण और नील-
गाय बाघ भी पाई जाती हैं। यहाँकी बाघबहागमें
बाघोंकी अथवा कुछ बहमल रहती है और फिर बहमल-
में बहमल की लकड़ों की जाती है तथा नामा बहमल
बागारोंमें केस जाता है। यहाँ हिन्दूकी भग्ना की मरने
अधिक है और बाघिब अधिक मनुष्य लमगु भावा बोलते
हैं। राजघर माघिब छोड़ बाघ बहमने भी अधिक है।

२ उत्तर जिल्ला एक तालुक। यहाँका भूगर्भात्
४१० वर्गमील और लमबन्दा ८४४८१ है। इसमें
एक बहमर और १०० नाम अमल हैं जिनमें १८ नामीर
हैं। यहाँका बाघ लमलम दीनात्त पलाश बहमर
बहमल है।

३ उत्तर तालुकका एक बहमर। यह पला० १८ ई०
प० और देगा० ८८ ई० पूर्वमें मलय बहमल है। यहाँ
जिल्ला एक बहमल, एक बहमल, बाघलाल और एक
बाघलाल है। यहाँ बहुत तरहके बाघलाल भी देखनेमें
आते हैं। बहमरके दक्षिण-दक्षिणमें एक बहमलके लम
बहमल बहमल बहमल हुआ एक बहमल बाघी बाघी
बहमल बहमल बहमल को गया है।

सन् १००० में जब निजामने दखनगरी की सबकायिद
 का नियम दिया। निजामने पास ८१ बड़ी जमान, ११३
 छोटी जमान, २२१ तोपखान, १४०० पयारीयो, १२०००
 दस्तखि मिय और बहुतकुछ मिलित किया है।

निजामशाहकी राजधानी हैदराबादमें है जिसको
 दरिधि १ मीलमें कम नहीं होती। यह जगह शान्त
 हवा में स्थित है। यहाँके प्रायः चर्चिवाय चर्चिवासी
 गाइयो और बुरजिद है, हैदराबादके जारों और जामा
 निरिमाता रहनेके साथ जगहका सामाजिक सुन्दरता
 बहुत मजबूत है। यहाँकी लुभासमजिद सबसं जगह
 दूर है। गहाड़ें चांगी और सुन्दर सुन्दर दस्य और
 मजोहर उद्यान विद्यमान है। यहाँका जालिम वा
 'पार-मिहार' बहुत पाचपयनक है। यह मकान
 ४ घण्टा सुन्दरके लिये दफ्तरवाला है और जगहका
 प्रधान प्रधान ४ मजुके इन्हीं स्थान पर पाकर मिलते हैं।
 यहाँ यह सुदामने काममें पा गया है। विशेष विवरण
 हैदराबाद छन्दमें देखो।

निजाम शब्द—एक सुमनमान जनवादी (मित्री)। पटना
 नगरके समीप मोरगाढ़के पास सुदामने पशाम्प हो कर
 भागने समय मन्नाट हुमायूँ चौबानदीमें रुक गये थे।
 इस समय यह शब्द गरीमें जन में जार रहा था। इसको
 नजर मन्नाट पर पड़ी और हुगो दमाईं ठाँहें देता यह
 भट उनके पास गया और बहाकि लफें किनारे उठा
 लाया। मन्नाट पाच जा कर उसे अपने साथ चामरे नि
 गए और हजमत दियानेके लिये उसे बहाकि सिंहासन
 पर बिठा साथ दिगंड लिये राजा बनाया। इसी साथ
 दिगंड भीतर इसने अपने नाम पर चमड़ेके मिर्के बसाये,
 चमोरेको लजाधिपति तथा प्रचुर धनरत्न दान किये।

निजाम-शाह—दाक्षिणात्यके निजामशाहो राजवंशके प्रति
 ज्ञाता। ई बादशहोंमेंके राजमन्त्री निजाम उल
 मुल्क-बेहरोके पुत्र थे। इसका जन्म नाम पदमदगाह
 था। पिताके मरने पर इसने बादशाहगरी छोड़ना
 त्याग कर दी और १४८० ई०को पदमदगारमें प्राचीन-
 भाषमें चमरेकी राजा बनना कर घोषणा कर दी। उस
 समयमें ही जरा दाक्षिणात्यके निजाम-शाहो राजवंशमें
 १४११ ई० तक शासन किया। इसने मरने समय
 (१४०८ ई०) तक राज्य किया था।

निजामशाह बादशही—दाक्षिणात्यके बादशही-शासक
 एक शासक था। १४११ ई०में जब इसने जिना
 हुमायूँ गारकी मजु दूर, तब से दाक्षिणात्यके सिंहासन
 पर बैठे। इसको माता विदुली, माय माय चामाह भी
 थीं। उनमें मजिदोसे पुत्रा कर रहा, 'मिरे पुत्रको
 जगह चमोरेके लिये पाच वर्ष की है—बहुत बड़ा है, इस
 कारण इसकी चमिमाबकदमी में राजकार्य चामात्र'को
 और मन्नाटवायकेम या दूमेरे दूमेरे जगामें जहाँ राज्य-
 मन्नाटवाय किमी प्रकारका विचार होगा, मिरा पुत्र बहा
 उपस्थित रहेगा।'

चामक निजाम चमपमने दो जगहों, तिनकी और
 चपनी माता तथा दूमेरे दूमेरे परामगं दाताओंके निजट
 विमेष विनयो थे। उनमें पिताके चामाचारमें प्रजा को
 बहुत तडा पा गई थी, उनमें तथा उनको माताके ऐसे
 नियम और प्रजावल्लतामें वे सबके सब समुद्र हो गईं।
 इस समय राज्यपदके दुरुवर्तनेके लिये बहारके शासन-
 कर्ता मरमुद-गवाम मजोरके पद पर और तैमजके
 माधनकर्ता दवाजाजहान् यकोल-चम-मन्नाटनन्तु निजाम
 हुए।

चामक और चोई द्वारा परिचालित राज्य एतना
 चमतापक नहीं हो सकता, यह मोच कर उड़ीमा
 और तैमजके हिन्दूशासकोंने निजामके विरुद्ध युधदाया
 कर दी और दीमो' की विदमके समोप पशाम्प हुए।
 पीछे मानवाय मरमुद जितनेमें जब बादशही-राज्य
 पर पाकमप किया, तब चामक निजामने उनके साथ भी
 विदमके समोप लड़ाई जग दी। इस बार निजामको
 हो हाई हुई। बाद रानो पुत्र निजामको ने कर जितो-
 बाद चमो गईं और चमरेके गुजरातमें दून मज कर
 महायता मांगी। गुजरातके शासनकर्ता मरमुदगाहको
 महायतामें मानवराज वास्त को कर क्षाण्यको कोट
 पाये। १४१२ ई०में मानवाय मरमुद जितनेमें
 पुनः दोनतापद होने हुए बादशही राज्य पर चामा
 माया। इस बार भी वे पशाम्प को चामप लीनेको साथ
 हुए। इस वर्ष युधमें चामक निजाम राय' पशाम्प
 है। १४११ ई०को विजयनगरमें निजामशाहको मजु
 हुई।

निनाम-गाही—वाणिज्यार्थमेव ब्राह्मणे राज्य पदा-
पतनको प्राप्त हुआ, तब उसमें पाँच छोटे छोटे राज्य
संगठित हुए। १वा पाटिलगाही, २वा कुलगाही, ३वा
निनामगाही, ४वा इमाटगाही और ५वा बरिदगाही
राज्य। इनमें निनामगाही राज्य विजयनगरमें सुमन
मान धर्माचर्यको दिया। ब्राह्मणधर्मात्माने १४८० ई०में
स्थापित हुआ। इसकी राजधानी पद्मनदनगरमें थी।
१५०२ ई०में बाराका इमाटगाहीराज्य पद्मनदनगरके
राज्यभूत हुआ। १४८० ई०में १५१५ ई० तक निनाम
ग्राहीधर्मने राज्य किया था। निनामवाद देखो।

वर्तमान पद्मनदनगरका प्राचीन नाम बाग पर्याप्त
बागान है। यहाँ पद्मनदगाह ब्राह्मणधर्माको अनुसूच
कथने प्राप्त कर लुचरको मोटे है। पीछे राजकीय
समता पक्ष कर बहाने अपने मस्तकके ऊपर शीतलपत्र
चन्द्रातप धारण किया और १५८४ ई०में पद्मनद
लुचरके राजधानी ठेठा कर बागको ले गये।

पद्मनदगाही राजाधर्मोंमें यह देग भिन्न भिन्न
जिलाधर्मों पदवा सरकारोंमें विभक्त हुआ। एक एक
जिला पुनः परगना, करजात, छम्पत, महान और
भासुक तथा कहीं कहीं देग और भाना नामने विभक्त
हुआ है। उस पदवा हिन्दू कर्मचारियोंका राजा, नायब
और रायकी उपाधि मिलती थी तथा कितने ही हिन्दू
सेनाधर्मों नियुक्त होते थे।

पद्मनदगाहें द्वितीय राजा मुहम्मद निनामने
१५०८में १५५१ ई० तक शासन किया।

कुलन-निनाम-गाह (१५५१-६५ ई० तक) पद्मनद-
नगरके तृतीय राजा थे। १५६२ ई०में जब विजयनगरके
राम राजा और बीजापुरके समीर पाटिलगारने लकड़ा
पोका किया, तब वे लुचर पहाड़ पर आ दिये थे।
गुलबर्ग रानि १५६४में १५८८ ई०के मध्य देगकी
विजय उपरि की थी।

१५८४ ई०में २५ बुरहान निनामने लकड़े बहादुर
जिनकी लहर बहुत चौड़ी थी, बाहन्दाधर्मों का राहद
दुप। एक वर्ष बाद के निर्वासन पर बिठाए गए।
१६०० ई०में पद्मनदनगर मुगलोंने हार भगा। १६००-
१६०१ ई०में मालिक पद्मनद सुरक्षा निनाम (२५)को निर्वा-

चन पर पवित्रित कर विजय समता और पाधिरम
मकट दिए। १६००-१६०६ ई० तक मालिक पद्मन
नाममाधर्मों राजा रहे, पीछे पद्मनदनगर राज्य पद्मनो
ग्राहीमता को कर दिमोहरके पधीन हो गया। १६१६
ई०में सुरक्षा निनाम का राहद और निहत हुए। पीछे
उनके पुत्र निर्वासन पर बिठाए गए।

निनामावाद—१ हैदराबाद राहदके मुगलनाबाद कमी-
ग्रीका एक जिला। यह पहले हैदर जिला
कहा जाता था। इसमें लखर नाम्ने और पटोनाबाद,
पूर्व खरीमनगर, दक्षिण मिटक और पश्चिममें नाम्ने है।
भूविभाग ३२८८ वर्गमील और जनसंख्या ४६०१६०
है। पूर्व और पश्चिमकी ओर पर्वतधर्मों दिमो जाता
है। पहाड़ों सबसे बड़ा गटा गोदावरी नाम्ने और
पटोनाबादकी सीमाको निर्धारित करते हैं। यह यह
है। इसमें पलावा भी कई एक गटियाँ इस जिले
को कर जाती हैं।

यहाँ बहुत तरहकी लकड़ों पाई जाती है और पने
पने जङ्गल भी देखनेमें आते हैं। इन जङ्गलोंमें बाघ,
मानू, चीता, भैंसिया, जङ्गल, खरब, हरिण और नील-
गाय पादि भी पाई जाती हैं। यहाँकी पादकृषा समीर
जाड़ेकी पपला कुछ पछा रहती है और फिर वर्षासमु-
में मिलकृष हो पराब हो जाती है तथा माना प्रकारको
बागारियाँ कोल जाती हैं। यहाँ हिन्दूकी संख्या दो सबसे
अधिक है और बाधेमें अधिक समुद्र तैलगा भाग मानने
है। राक्षसनाड़ छोटा लाल बगैरों भी अधिक है।

२ लक जिलेका एक तासुक। यहाँका भूविभाग
५५० वर्गमील और जनसंख्या ८५५८२ है। इसमें
एक गहर और १०० घाम लगते हैं जिनमें ३८ लमीर
है। यहाँका बाघ लगभग दो लाख पचास हजार
हका है।

३ लक तासुकका एक गहर। यह पला १८ ई०
८० और देगा ८८ ई० पूर्वके मध्य पर्वतित है। यहाँ
जिलेका एक पटोना, एक लक, पटोनाय और एक
हाकपर है। यहाँ बहुत तरहके लकवानों भी देखनेमें
आते हैं। यहाँके दक्षिण-पश्चिममें एक पहाड़के लक
रहताय दामना हकाया हुआ एक माला या का पद्मो
किसेके लकमें पर्वतित हो गया है।

नितावादादी—इत्यादिनामो 'नोदकाय' आदि को एक
 दाया। दिव्योत्तरा बलवन्तं पुन आदि उत्तरेण अन्तर्गत
 १०० वर्षं पुन इत्थं बलवन्तं देवदेवे मे जा कर पवित्राचमन
 एकादावाद शुद्धिं च समर्थं नितावादादी, मदीरे, कोलो
 कादिहजाते मे काम्पनीके एक पर निपुण किया।
 मन्त्ररतः नितावादादी चामे रत्नमे काम इम मोक्षीय
 कादादीका नितावादादी नाम पदा है। यथा इममे
 पवित्राचमन विष मन्त्राद्ययुक्त हो कर आमकाहने विष
 को मरे है। आवाय रेयो।

नितामि-नयनादि—एक विद्यात सुमनमान कवि, इमं नि
 मया नामक रत्नमे जयपदक किया था। ये साहि-
 त्वापुराणो नवरत्न नामो राजनमामे रहते थे। इमो मे
 ८१० पद्य बलाये है जिनमे है १ कपुटकट पद्य 'सामना'
 नाममे पण्डित-समाजमे परिचित है। पाको के नाम ये है,
 मयनामन, चमवार, मदीरे-व-मन्त्रमू, सुमरो वयो-
 १०१, इमकाहर चोर गिहका नामा। मोषोक पद्यमे
 १२०० ई० मे लोकनाम चमैकमन्दरके पूर्वदेग-जयता
 विषय निगा है। सुवको वमरो चोर चक्रवाहक नामक
 पद्य-रचनामे इमो १४ निरकर पद्य पांरतापिकमे मिले
 थे। उक्त पद्यो के चमारा इमो मे २००० छोको का
 एक दोषान् निगा था, इमकी मृगुके विषय कुछ मतभेद
 देगा जाता है। कोई कोई इसको मृगु १८०० ई० मे,
 १२०० ई० मे चोर कोई १२०८ ई० मे समझते है।

नित (मं० वि०) नित चो है कि। दक्षिण, जो
 दक्षिण सहित हो।

नितम (मं० वि०) नित-मत्त, मल व। दक्षिण-
 दक्षिण।

नितम (मं० वि०) निपटोपुमिन्तुः नि पट-मन्,
 लोको व। जो निपट करने में दक्ष हो, जो दूसरेको
 कट पट चामे हरकत सेवार हो।

नित (मं० वि०) चम्या, विनाय।

नितर (मं० वि०) १ मदा या चंटाका न रहना,
 भ्रष्ट जाना। २ चमके निटोप समाचित करना,
 दोषमे सुग बनना, हाथ भ्राष्ट कर निहल जाना, मन्त्रादि
 देना। ३ इमो दूरे भ्रष्ट भ्रष्ट जामे न जाना हो जाना।
 ४ मार मरुधे रहित हो जाना, सुख हो जाना।

निभः (मं० वि०) चामे दिव कर देवना, भ्राष्ट
 भ्रष्ट करना, नाक भ्राष्ट करना।

निभेटना (मं० वि०) भ्रष्टना, शीथ कर मोचना।

निभोम (मं० वि०) चामोका एक नाम।

नितर (मं० वि०) जो तन्मात्र न रह गया हो, निपटा
 ओर मर गया हो, जिनमे कुछ दम न हो।

नितम (मं० वि०) नितम-पद्य। उदात्त, मन्त्र।

नितमाच (मं० वि०) नितसे माने पति पद्य, पद्य समा-
 नामः। दिव, मन्त्रादि।

नितो (मं० वि०) टोना, मुद्रना, पुरा, वयो।

नितना (मं० वि०) १ जिनके पाम कोई काम धमा न
 हो, पाको। २ शिकार, पीनोगार। ३ निहमा, जो
 कोई काम धमा न करे।

नितनू (मं० वि०) निहमा, जो कोई काम धमा
 न करे।

निना (मं० वि०) १ पाम समय जय कोई काम धमा
 न हो, पाको यय। २ यय समय जिनमे चामे कोई
 काम धमा या रोगार न हो, यय यय या चामत
 जिनमे कुछ कामधनो न हो, जोविनाका चमाय।

नितर (मं० वि०) निदंय, कूर, जो पयाया कट न समझि,
 जिनमे दूसरेको पोडाका चतुभय न हो।

नितरता (मं० वि०) निदंयता, जदयको कठोरता,
 कूरता।

नितराव (मं० वि०) निदंयता, निर्रादि।

नितो (मं० वि०) १ पुरो जगद, कुजब। २ पुरो दमा,
 पुरा दमि।

नितर (मं० वि०) १ जिनमे पुर न हो, जो न करे, निमंय।
 २ मन्त्रो, दमनावाला। ३ भट, टोड।

नितरपन (मं० वि०) निमंयता, निरर चोमका मात्र।

नितान (मं० वि०) मोक्षदोमे पन्थमपविमन्। पवि-
 दाको गतिविदीय, विद्विदाको एक चाम।

नितान (मं० वि०) १ चमद, सुदा, दिदिन, पदा, निरा
 दूपा। २ चमदहोम, सुदा, मरा दूपा।

नितिरा (मं० वि०) मटर। दयाय—मनोका, निरदो।

नित (मं० वि०) चमदिन, मन्त्र, कादना।

नित (मं० वि०) १ निदिदि, शोभ। २ मरुदा, इमेदा।

नित्यो (मं० स्त्री०) जोरघिमेट, एक प्रकारकी टोबा।
 नितम्ब (मं० पुं०) निम्नतः तन्त्रते पाकाङ्क, चक्षुः कामु
 केरिति नितम्ब-पद, ना नितम्बति पीडयति नापकविष-
 मिति तन्त्र-पद। १ जोरघिमेट, कटिपदाङ्ग, कमर-
 का पिङ्गमा उभया पृष्ठा भाग, चतुर्द। २ कट्य, पंथा।
 ३ जून्, मट, किनारा। ४ पर्वतका कटक, पहाड़का
 टापुर्ग निवासी। ५ कटिमाय, चतुर्द।

नितम्बदेग (मं० पुं०) पद-हेय, पिङ्गमा भाग।
 नितम्बिन् (मं० द्वि०) नितम्ब पदव्ययं इति। नितम्ब-
 युक्त, जिगे धृत्य हो।

नितम्बिनो (मं० स्त्री०) पतिग यतो नितम्बोऽप्यवस्था इति
 नितम्ब-इति स्त्रीपुं। १ वयम् नितम्बविमिष्टा, सुन्दर नित-
 म्बवासी स्त्री, सुन्दर। २ स्त्री, चोरत। (त्रि०) ३
 सुन्दर नितम्बवासी।

नितम्बु (मं० पुं०) चरघिमेट, एक चरघिका नाम।
 नितान् (मं० अद्य०) नितरपुं ततो वसु प्रत्ययः। सर्वदा,
 चलचरत, हमीया।

नितम्ब (मं० स्त्री०) नितरां तन्ने पक्षीभागी यस्मिन्।
 मम दातामके चत्वारं त दातामविषय, सात दातामोर्मेमे
 एक।

नितार्—वामाम प्रदेगके गरीरहाट जिमेकी एक कोटो
 गरी। यह तुतागरिमे निकल कर टलियकी चोर
 गाना गानोर्मे वरमे दुई मैममगि'क जिमेकी हाट
 गरीमे या मिलो है।

नितान्त (मं० द्वि०) नितान्तोति तम-इति तत्, ततो
 दोषः (भगुगगि'रहेति। या १०११५) १ चरघिमेट, बहुत,
 अधिक। २ सर्वथा, विषकृत, पकड़म, निरा, निरट।
 नितराई (हिं० स्त्री०) निर्दयता, क्रूरता, हृदयकी कठो-
 रता।

नित्य (मं० द्वि०) नित्येति भवति नित्यः (अध्वकार १५५।
 या १०११५) १ भूतल, लगातार। उदाहरण—दमरगत,
 चलाता, चलता, चरिता, चरिता, चलचरत, चलचर,
 चलत, चालत, चलचर। २ प्रतिदिनका, रोजका। प्रति-
 दिन मायागुमार को सब कार्य दिवसे जार्न है हमे नित्य
 करते है। ३ चरविष्ट पदव्यय, जिसकी पदव्यय
 निश्चित न हो, जैसे सर्व। सभी सर्व नित्य है। सर्व-

का नित्यत यदि स्त्रीकार न किया जाय, तो चलचर। यह
 साथ रहना सदाय नहीं। मान लिया एक वर्ष उदाहरित
 हुआ, उसी समय उवका धर्म हो गया, उसमे एक मो
 मन्द न निकला। किन्तु सर्व नित्य है, यदि ऐसा
 स्त्रीकार करें, तो स्त्री सर्व विच्छिन्न नहीं होता, यदि
 सर्व-समूहके एकत्र होनेमे मन्दारका कोई व्यापार
 नहीं होता। ४ उत्पत्ति, विनाशविहिन, निरन्तरा कभी
 नाश न हो, निरन्तरावस्था। जिसका जिनो समय (करी)
 प्रकारका परिवर्तन नहीं, वही नित्य है। नित्यानन्द
 पदय ब्रह्म ही एक मात्र नित्य है। ब्रह्मके भिन्न जिनो
 कोनें मत्तर पातो है, वे अनित्य है, यों कहिये कि
 संसार ही अनित्य है। "ब्रह्म नित्यं वस्तु तन्मोक्षः सवि-
 तित्वम्" (वेदान्तशास्त्र)। ब्रह्मके निरा पदय कोई नित्य नहीं
 है। शाय चोर बेरोपिक दगं नके मने परमाणु नित्य
 पदार्थ है। किन्तु विद्वान्मनमें यह मत स्थापित
 हुआ है।

साययव द्रव्यके सभी चरचर निरन्तर करते हैं।
 जहाँ विभागका मय होता या निरन्तरा विभाग चोर हो
 नहीं सकता, वही परमाणु है। यह परमाणु नित्य है,
 विश्वब्रह्माण्ड साययव है। इनकी उत्पत्ति चोर लय है।
 परमाणुगति ही भूत-भौतिक पदार्थोंके उत्पादक है।
 मेधाविहीनका यह मत नितान्त अशान्तिमूलक है, कारण
 परमाणु सभी प्रवृत्तिप्रभाव या निवृत्तिप्रभाव पदव्या
 समयप्रभाव या अनुभवप्रभाव, इन चार प्रकारके
 प्रभावोंमेंसे एक प्रकारके प्रभावविमिष्ट है, यह स्त्रीकार
 करना होता। किन्तु इन चार प्रकारोंमें कोई प्रकार
 प्रभावप्रभाव नहीं है। प्रवृत्तिप्रभाव (वृद्धिकार्यमें
 लक्ष्य) होनेमे प्रलय नहीं हो सकता। निवृत्ति-
 प्रभाव होनेमे घटित नहीं हो सकता। एक चोर प्रवृत्ति
 चोर निवृत्ति दोनों प्रभाव रह नहीं सकते। निवृत्तिप्रभाव
 होनेके भौतिकिक प्रवृत्ति निवृत्ति हो सकती है मही,
 भौतिक लय मनेके समया निमित्त (आम, चरट, ईश-
 वेत्या) नित्य चोर निवृत्ति चरघिमेट है। वृत्त। हमने भी
 नित्य प्रवृत्तिको चोर नित्य निवृत्तिको चरघिमेट हो
 सकते है।

परमाणुमें दमटि है, यह स्त्रीकार कार्यमे हो

अर्धदेग यदि चैन हो जाय, तो नियकर्म' चोर यदि पधोदेगमे रक्तप्राय हो, तो नैमित्तिक कर्म नहीं करना चाहिये। चोरकर्म वा मोचनमे भूमीधार छठमे वा ममन होमेने नित्यकर्म निषिद्ध है। चमोच' होमे पर पयमा कोई वस्तु प्रागे पर नित्यकर्म'का अनुष्ठान नहीं करना चाहिए। जननामोच वा मरणागोच होमे पर निय कर्म वर्जित है। फल मृणादि जो पोषधके निय कथित है, उनके भोजन कर नित्यकर्म' किया जा सकता है; लेकिन पोषधमित्र फलादि वा जलपान कर नित्यकर्म नहीं करना चाहिए। जलोका, गूढपाद, क्षमि तथा गण्डपदादि लीयो'का ज्ञान भूक्त कर वध्ता द्वारा व्यर्ग करनेमे नित्यकर्म'का अधिकार नहीं रहता। गुहनिन्दा करनेमे वा चपने हाथसे ब्राह्मणकी प्रहार करनेमे वा रेतःपात होमेने नित्य कर्मानुष्ठान विधेय नहीं है।

(काविराज ५५ अ०)

सबोके नित्यकर्म' यदि पचमताके कारण पञ्चानि हो', तो भी फलकी निष्पत्ति होती है, पद्यो' काय'को निदि पचम होतो है।

विधिवत् नित्यकर्म'का अनुष्ठान करनेमे, प्रतिदिन जो पाप किया जाता है, वह नष्ट होता है। रतहस्य लोग प्रतिदिन जो पचयज्ञका अनुष्ठान करने हैं, उस पचयज्ञ द्वारा पचयज्ञाहत पाप जाते रहते हैं। इसी कारण हर एककी नित्य कर्म'का करना आवश्यक है।

बेदोक्त नित्यकर्म'के तथा रतातक व्रतके नहीं करने-मे परोक्ष रूपवाक्यद्वारा मार्गदर्श लेना पड़ता है।

"बेदोक्तानि नियमानि कर्मणि समस्ति मे।

रतातकव्रतयोरेव प्राविष्टास्यमोचनम् ॥"

(मनु ११/१०४)

प्रतिदिन जो कार्य किया जाता है, उसे नियकर्म' वा प्राणादिक कर्म' कहते हैं। नियकर्म'में कौन कौन कार्य करना उचित है, वह प्राज्ञिकतत्त्वमे विशदतदर्थसे लिया है। प्रातःकालमे से कर पुनः प्रातःकाल तक जो जो कार्य' अनुष्ठेय है वे दो समर्पित हैं, इसी कारण सगुका प्राज्ञिकतर नाम रखा गया।

पहले प्रातःकालका अनुष्ठान प्राध्यायक है।

"प्रातः सुहसं प्रातः १०१६ कर्म'दिनादुत्तमम् ॥"

(काविराज)

प्रातः सुहसं'में ज्ञान कर देवता, दिन चोर परविरो-का स्मरण करना चाहिये। रात्रिसे पचिम याम पद्यो'मेय चार दण्डको प्रातःसुहसं' कहते हैं। इन समय ज्ञान कर चारो चिन्ताएँ' ज्ञानके पदने सुव्यवस्थित प्रधान प्रधान देवगण, परविरोच चोर चक्र को कुछ प्रातः-स्मरणयोग हैं उनका स्मरण करना कर्तव्य है। उनसे स्मरण करनेसे पित प्रपथ चोर प्रमाणा होता है।

"प्रातः सुहसं'दिनादुत्तमम् ॥"

प्रातः सुहसं'दिनादुत्तमम् ॥

प्रातः सुहसं'दिनादुत्तमम् ॥

प्रातः सुहसं'दिनादुत्तमम् ॥

(काविराज)

प्रातः, विष्णु, महेश्वर, शिव, मंगी, मन्त्र, बुध, हस्तपति, शुक्र, राहु चोर केतु से सभी हस्तरे सुममान करे', सिद्धे विवरण प्रातःस्मरणमे लेनी।

गद्यासे छठ कर विष्णु'लोचन', शीघ्र, पाचमन चोर दत्तात्रेय करके प्रातःपान विधेय है। प्रातःपान यज्ञान कर प्रातःमन्त्रा चोर जो सामिक है उन्हें' होम करना चाहिये। इन सब कार्य'की प्रथम यामाईकता जानना चाहिये।

पौढे द्वितीय यामाईमें धैर्याभ्यास करना होता है। पनकर समिध, कुश चोर पुष्पादि तोड़ना विधेय है। तृतीय यामाईमें पोष्यवर्गके पच'वाधनमें ज्ञान जाना आवश्यक है। माता, पिता, गुरु, चाकोय व्यक्त, दोन-प्रजा, ब्रह्मात्मन, इतिय चोर पत्नीकी निम्नतो पोष्यवर्ग-में को गई है। इसी तृतीय यामाईमें इनके प्रतिपालन-का उपाय करना होता।

चतुर्थ यामाईमें ज्ञान, तप, मन्त्रोपासना, ब्रह्मचर्य चोर देवपूजा विधेय है।

पचम यामाईमें वैष्णवेकादि यज्ञान कर पद्यो' देवता, त्रिचोर मनुष्य तथा कीटादिको पदादिका विभाग कर तह पाप भोजन करना चाहिये।

छठ चोर सप्तम यामाई इतिहास चोर पुष्पादि पदुर्मेमें व्यन्तोत करना चाहिये।

पचम यामाईमें लोचवाश्रमे निचे जो हर पाप' पाचयज्ञक है, उन्हें' करना चाहिये। पौढे पाचयज्ञक

[illegible]

निवासमात्र (अं. १०) समाप्त होई, कुठार पोहोचि
मजुरी काय करी लागू होई. १६ निवासमात्र
होई.

[illegible]

'वाचोऽमरिच' इति (श्रुति)
 'मम' (मं) चोऽ (निश-टाप । १ दिव्योऽमरिचः,
 वाचः । २ अमरिचः तन्मात्रं तिष्ठेत् । ३ अमरि-
 चोऽ । ४ एक अमरिचः ।

गणतन्त्रवाद (मं० पु०) निम्न सर्वथा सघातका अन्-
 तर्गतः अन्तर्गतानाम् । सर्वथा सर्वतोऽपि विद्यमानानाम् ।
 धना अन्तर्गतः सर्वे जिन वार दा जिन निमित्तो पद-
 काय निमित्तो विद्वे अन्तर्गत अन्तर्गतका निमित्तो जे ।

‘इति मया कथितं त्वं शृणु’ इति चेत् ।

अथवा न प्रमाणः सिद्धाति विनिर्णयः
(नमः ॥ १११)

પ્રકારકે જ્ઞાનકા જ્ઞાન નિત્યાનિત્યવશુવિરોધજ્ઞાન છે ।
નિત્યાનિત્યવશુવિરોધજ્ઞાન એ મુમુક્ષોના પ્રધાન
મોયાન છે । જિમ પ્રકાર જનતાઓ મરમોવિકાસે
જનમ્વાનિ જોતો છે અને પ્રકાર અવિચારિણિય જોયકો
મદ્યમે દુઃખમ્વાનિ જોતો છે । યદ દુઃખમ્વાન મિથ્યા છે,
મદ્ય એ ક્ય છે । મુમુક્ષો વદ્યે યદો જ્ઞાન ઇલાજ
કરના હોતા છે । યદ જ્ઞાન જવ દુઃખ જો જાતા છે, તદ
નિત્યાનિત્યવશુવિરોધ ક્યા છે, તેમા જાનના હોમા
વદ્ય નિત્યાનિત્યવશુવિરોધ જ્ઞાન વદ્યમે જ્ઞાન, દમ
વદ્યતિ હોર નિત્યાના દમ જાવ સાધનોમે મત્તવ જોના
વાધિય । દમ મદ્ય સાધનો દારા વિશ નિમ્ન જોતમે
'મિ' યદ જો જ્ઞાન છે તદા હમકા વદ્યમ્વાન જો દુઃખ,
દુઃખિય હોર મદ્ય છે, મધો મ્વાનિમાત છે, દમમે મદ્ય
મદ્યો । જ્ઞાના મિ-જ્ઞાન હોર મિ-જ્ઞાનકા વાનમ્વાન મધો
દમ્ય મદ્ય મિથ્યા મનોત જોત છે । મદ્યમે યદ જ્ઞાન જવ
અવિચાર્ય હોતા છે, તદ વાવમે ખાવ 'વદ્ય' તેમા જ્ઞાન
દુઃખિય, મદ્ય દમ મદ્યકો જ્ઞાન જર મદ્યમે જોન હો
જાતા છે ।

વદ્યજ્ઞાનકે મદ્યમ્વાનકો હોતમે હો તદ્યજ્ઞાન હોના
કે હોર જ્ઞાનમે હો મુકિ હોતો છે । અતદ્ય નિત્યા-
નિત્યવશુવિરોધ હો તદ્યજ્ઞાનકા પ્રધાન સાધન છે ।

વદ્યમે જ્ઞાનમે નિત્યાનિત્યવશુવિરોધ હો, હમોકે નિયે
વિદ્યા કરના વદ્યમાન વિરોધ છે । (વેદાનજ્ઞ)

નિત્યાનિત્યવશુવિરોધ (મં• પુ•) નિત્યવ અનિત્યવ
વદ્ય મધોમે વિરોધ ; નિત્યા હોર અનિત્યા વશુકા
વદ્યમાનમ્વાન વિરોધ, માન હોર વદ્યમાનકા વદ્યમાન-
માનમ્વાનવિરોધ, વદ્યમે નિત્યાવશુમે અનિત્યાવશુ મદ્યો જવ
મદ્યકો, માનમ્વાનમે માન વદ્યમાનમાન મદ્યક મદ્યો ।

નિત્યાનુવદ્ય (મં• તિ•) વદ્યમાનકો, અનિત્યાનુવદ્ય, અનિ-
ત્યાના ।

નિત્યાનિત્યવ (મં• તિ•) નિત્યા અનિત્યાનમાનુ મદ્યકો હોમે
વદ્યમાન ; મોનિવિરોધ, જો હમલ જ્ઞાના હો મોનલ જ્ઞાન
રદ્યે જ્ઞાનમે દુઃખ રજા હોતો રદ્યે હોર મદ્યમાન જ્ઞાન
હોમ સાધન કરે ।

નિત્યામોરવો (મં• કો•) નિત્યા તદ્યમાન પ્રમિદ્યા
મોરવો । મોરવોવિરોધ ।

નિત્યાનિત્ય (મં• પુ•) નિત્ય અનિત્યવ વદ્ય વાન
વદ્યકા વદ્યમાનમ્વાનુદ્ય ।
નિત્યાનિત્યવદ્ય (મં• પુ•) વોધમાનમેટ ।
નિત્યાનિત્યવ (મં• પુ•) વોધમાનમેટ ।
વોધિય મદ્ય, તામ્ય, હોર, વદ્ય, વિદ્ય, મદ્યક, દમ મદ્ય
દુઃખકા મમાન માન હોર હમલ વો મિત્યાન, મદ્યકો વદ્ય
માન હોમ જર હોમ હોર માનમ્વાનુદ્ય મદ્યમે ૨ દિન
તદ્ય હોમ દેતે છે । જાદ મદ્ય મદ્યકો હોમો વદ્યમે
છે । હમકા વશુમાન જ્ઞાન છે । હમલ મોનલ જરમે મદ્ય
પ્રકારકા વદ્યમે જ્ઞાન જાતા છે । (વેદાનજ્ઞ વોધિય)
નિત્યવદ્ય (મં• તિ•) ૧ વોધો વો હોર હોમો વદ્યકો
વોધકા જ્ઞાન હોમા જિમમે જ્ઞાનમે વોધો દુઃખ મોલ વોધિ
મોલે મોલ જાવ હોર જર માક હોમા । ૨ વોધો દુઃખ
મોલકે મોલે મોલ જાનમે જ્ઞાનકા વદ્યમાન હો જાના, વોધો
જ્ઞાન જાના ।
નિત્યાવ (મં• પુ•) ૧ વોધો દુઃખ વોધકે મોલ જાનમે વદ્ય
દુધા માક વોધો । ૨ વોધો જ્ઞાન હોમમે દમલ જ્ઞાનમે
મોલો દુઃખ વોધ ।
નિત્યાવદ્ય (મં• તિ•) ૧ વોધો દુઃખ વશુકો મોલે મોલ
જર વોધો વોધો વદ્યમાન જ્ઞાન, વોધો જ્ઞાન । ૨ વોધો
વો હોર હોમો વદ્યકો વોધકો જ્ઞાન જાના જિમમે જ્ઞાન-
મે વોધો દુઃખ મોલ વોધિ માલે મોલ જાવ, વિશ જર માક
જ્ઞાન ।
નિત્યાવદ્ય (મં• તિ•) નિત્યાવદ્ય દેવો ।
નિત્ય (મં• તિ•) નિત્યક વોધમાનુ જ્ઞાન મોલ । ૧ વિદ્ય ।
(તિ•) ૨ નિત્યક, નિત્યા કરમેજ્ઞાન ।
નિત્ય (મં• પુ•) નિત્યા વિશુકા જ્ઞાન વદ્યમાન હોમ જ્ઞાન
મદ્યમાનમાનુ જ્ઞાન મદ્યમાન સાધુ । ૧ મદ્યમાન । (તિ•)
નિત્યાવિદ્ય દુઃખમેટ । ૨ દુઃખમેજ્ઞાન, જિમે જ્ઞાનકા હોમ
જ્ઞાન હો ।
નિત્યા (મં• પુ•) નિત્યા દમલ ।
નિત્ય (મં• તિ•) નિત્યાવદ્યો નિત્યાવદ્ય વશુમાન ।
નિત્યાવદ્ય, નિત્યાવદ્યમાન ।
નિત્યાવદ્ય (મં• તિ•) નિત્યાવદ્યો નિત્યાવદ્યમાન ।
૧ નિત્યાવદ્ય, નિત્યાવદ્ય । ૨ નિત્યાવદ્ય કરમેજ્ઞાન, જ્ઞાન
નિત્યાવદ્યકામાન ।

पित्तकर रक्तका परिव्याप करमा चाहिये। मरीचर, जट्टी, मनोहर यम, शम्भु, भाग्य, पद्म, चापल, तासकलाध्वजम, गौतमगृध्र, चागर्भ समथ बहुत कम मधुका पहरना, मरुत पोना और छतमुख मधुरद्रव्य पदार्थका खाना निदाघ समथमें शितकर है। रातको मुहुरे साथ दूधपीना फायदामन्द है। मरीचमें शम्भु लगाना और मन्दबागु मन्त्राति म्यान पर प्रसुष्टित कुसुमविकीर्ण श्रव्या पर सोना प्रमत्त है। (सुश्रुत १४ अ०)

४ शतपथीज्ञान पुलस्त्य श्रयिके पुत्र, शतपथीमे उत्पन्न पुलस्त्य श्रयिके एक पुत्रका नाम। (विश्व०)

निदाघकर (मं० पु०) निदाघाऽल्पाः कराः किरणानि यव्य। १ सूर्य। २ चक्रात्प, मदार, पाद।

निदाघकाल (मं० पु०) निदाघ एव कालः, निदाघस्य कालो वा। प्रोक्तस्य तु, गरमोका समय।

निदाघ (मं० ति०) निदोदयः। निरोधः, रोकने-वाला, रोकनेवाला।

निदान (मं० स्त्री०) नि-निघय' दोषतेजैनेति नि-दा कारयेद्युट्। १ पादिकारण। २ कारण। ३ वेष्टदामादि, षष्ठके का बन्धन। निदो हेदे भावे ल्युट्। ४ कारण-स्य। ५ शक्ति। ६ तपःफलप्राप्त, तपके फलको प्राप्त। ७ व्यवधान, दत्त। ८ रोगनिर्णय, रोगमूल्य, रोगको पकसान। पर्याय—रोगमूल्य, पादान, रोगहेतु।

रोग किम कारणमे उत्पन्न होता है, उसका कारण जाननेका नाम निदान है। निदान देव कर रोग निघ य जिया जाता है। माधवहरने चरकादि ग्रन्थमे म'पद कर 'निदान' नामक एक ग्रन्थ लिखा है। वेदके मतमे रोगनिर्णयके लिये पञ्ची प्रमत्त पन्थ है।

सुश्रुतमें निदानका विषय हम प्रकार लिखा है—
सुश्रुतमे धन्यकरिणीमे पूछा था,—हेहृदयस्थित वायु कब विरक्त हो कर कुपित हो जाती है और सेहके मध्य त्रिम त्रिम म्यानमें पापय सेतो है, तब वह वहाँ कोन कोन काम करती है तथा उसमे कोन कोन रोग उत्पन्न होती है, तबपा हमें कहिये। इसके उत्तरमें धन्यकरिने कहा था,—भगवान् कथम्भु हो वायु भागमे प्रविष्ट है। ये भगवत्त्व मर्षागत और निरव है। यही वायु प्रादिदीको उत्पत्ति, स्थिति और विनाशका मूल है। यह मरीचके

दीपोका खासी और मोतीका शला है। यह देखेमे मीघकायकारी और मीघविशरममान है। वायुके कुपित नहीं होनेमे दोषवायु भी समभावमे रहने है, पन्थमे पन्थमे विषयमें प्रवृत्त होने है और वायुका सभी क्रियावि' भी मरुमभावमे हुआ करता है। यह वायु पांच है—प्राच, उदान, समान, अग्न और चगन। ये ही पाँचों वायु मरीचकी रचा करता है। तिम वायुका सुषुप्ति मन्दरव होती है, उसे वायुवायु कहते हैं। प्राच-वायुमे मरीचकी रचा, प्राचप्राच और ग्राग्रा हुआ वह जठरमें जाता है। इसके दूधिम होनेमे विनकी, दमा पादि रोग होते हैं।

ओ वायु जठरको और चलती है, उसे उदानवायु कहते हैं। इस वायुके कुपित होनेमे कर्बके जठरके रोग होते हैं। समानवायु सामान्य और पक्कामधमें काम करती है। यह वायु जठरस्थित पन्थके भाग मिलकर साय हुए पचको पचता है और तन्ममिम हम ममूह हुए जठरमें है। इसके विगृहमे मृन्म, मन्दामि, यतीवार पादि रोग होते हैं। मग्नवायु पावे मरीचमें पुनता है और रबीको मर्षा मर्षावाती है। इसीमे यमीना और रक्त पादि निश्रमता है। इसमे विगृहमे मरीच मरमे क्षीनवाले रोग भी मजते हैं। पचानवायुका स्थान पक्कामय है। इसके द्वारा मज, मूत्र, मूक, पार्श्व, गर्भ, ममय पर वि'थ कर बाहर होता है। इस वायुके कुपित होनेमे शक्ति और मुत्र क्दाभी रोग होते हैं। साम और चगन दोनोंके कुपित होनेमे ममेट पादि रक्तरीम होते हैं। सभी वायुके एक साथ कुपित होनेमे वह देह मेट कर बाहर निहल जाती है।

वायु विविध प्रकारमे कुपित हो कर जठर, अग्निदिग्धमे वायव्य होती है, तब कथमादि रोग, मोह, मृच्छा, जिप्सा, हृदयर पाय पायदेममें विरक्त मपच होती है। पक्कामधमें वायव्य केमेध पक्काम (मा'का मय), अमिग्न, जठरमे मृच्छाजिगरव, पानार और कटिदिग्धमें विरक्त होती है। पंचद्रव्यमे इन्द्रियमामे पापय मेमेमे इन्द्रियवायुका समाव होता है। लक्ष्का पापय मिरमे विरपता, पञ्चपुरव, क्षुधि, लज्ज, का मृदोभमय)

यन् करोति ई, 'तत्त्वमसि' महावाक्य भा व्यपन्न करने ई
 चोर उभका धर्म पादरूपक धर्म करने ई, इसका
 होने पर उक्त तत्त्वज्ञान नहीं होता। फिर यह भी
 देखा जाता है, कि यद्यपि व्यपन्न न किया जाय, तो
 भी तत्त्वज्ञान प्राप्त हो सकता है। याचने पना मगता
 है, कि क्षणिक, यामदेव चादि जन्मग्रामो ये। सुतरां
 व्यपन्नका फल तत्त्वज्ञान या तत्त्वज्ञान व्यपन्नका कार्य है,
 यह बात समन्वित्पदमे वरी कर स्वीकार की जा सकती है ?
 इसमें उत्तरमें कहना पड़े है, कि जिसकी चरित्रमत्ता
 चोर जन्मान्तरीय पाप चादि प्रतिबन्धकमें व्यपन्नफलतत्त्व-
 ज्ञान प्रवृत्त रहता है। प्रतिबन्धकके लय होनेसे ही
 यह उदय हो जाता है। यामदेवादि क्षणिकोंका यही
 वृत्ताया। उनमें पूर्वजन्मके व्यपन्ने इस जन्ममें प्रति-
 बन्धकगुण हो कर तत्त्वज्ञान उत्पन्न किया या, इसी
 कारण इस जन्ममें उक्त व्यपन्न, मनन चोर निदिध्यासन
 करने नहीं पड़े थे। यतएव व्यपन्न हो तत्त्वज्ञानका
 प्रधान कारण है, मनन चोर निदिध्यासन उभके सहकारी
 कारण हैं। 'तत्त्वमसि' महावाक्य व्यपन्न करनेसे, उभके
 धर्ममें जो अविग्रह चोर असम्भवेद्यो चादि घटना
 होती है, यह मनन द्वारा दूर हो जाता है। मनके बाद
 भी यदि स्वप्नद्वये, में प्रपन्न हो अन्य कुछ भी नहीं है,
 इसका अनुभव न हो, तो निदिध्यासनकी आवश्यकता
 होती है। निदिध्यासनमें निदिध्यास कर सकनेसे ही
 यह अनुभव स्थिरतर हो जाता है। यन्माया होनेसे नहीं
 होता। किमो किमो आचार्यका मत है, कि निदिध्यासन
 ही तत्त्वज्ञानका मुख्य कारण है, व्यपन्न चोर मनन
 इसका सहाय है। अथ देखो। १ सज्जानोय प्रत्ययप्रवाह।
 २ अथावस्य बोध।

निदुग्ध—महिषुराक्षके विनामदुग्ध' विभेदे चत्वारिंशत्
 एक दुग्ध-प्राप्तिन पहाड़ चोर उक्त पहाड़के उत्तरको
 चोर अचरित्त एव नाम। यह पहा- १४' ८" उ०
 चोर देगा- ००' ३' पू० मध्य अचरित्त है। पहाड़-
 की ऊँचाई २०२२ फुट है। ८वीं चोर १०वीं मताद्धी-
 के मध्य यह प्रत्ययमंदि जीमन्त सरदारोंके अविहार-
 में था। बाद यह प्रासुह्यके चरित्र जीमन्तसरदारोंके
 हाथ पा गया। तदनंतर १३वीं मताद्धीमें जीमन्तोंके
 चोरीको मार भगाया चोर इस पर चला पूरा अवि-
 कार जमा लिया। बाद चोभिगारोंने यहां आश्रित
 भावसे राजत्व किया। उनका प्रभाव पान भी देखने-
 में जाता है। १०८२ ई०में टीपू सुलतानने यह स्थान
 चले दृष्टनमें कर लिया।

निदेग (मं० पु०) निदिग घञ्, १ गावन। २ आद्या,
 दुग्ध। ३ कदन। ४ सामोय, नाम। ५ भाजन।
 ६ अविरो।

निदेगी (मं० वि०) निदिग निनि। आद्याकारण,
 आद्या करनेवाला।

निदेट्ट (मं० वि०) निदिगनीति निदिग्-घञ्, निदेम-
 कर्ता, इत्युत्प्रेषण।

निर्दोषोक्त—मन्त्राय घदेमर्ग मोहावरी त्रिभेदे तनुकु
 तासुक्के चत्वारिंशत् एक नगर। यह पहा- १५' ४२'
 २८" उ० चोर देगा- ८१' ४२' ४१" पू० मध्य मन्मो-
 वसनमें ६१ मोन उत्तर पूर्व चोर राजमहेश्वरी १०
 मोन दक्षिण-पश्चिममें मोहानरी चोर ज्ञानानंदके मन्त्र
 पर चरित्त है। यहां जीमन्तोक्तके राजाविमलादेने
 १४१० ई०में एक दुग्ध मन्मवाया था।

